

जिनवचनामृतमहोदधिजन्य

धुरंधर सुविहित गीतार्थज्ञ पूर्वाचार्य वचन तरंग बिंदुरूप

श्री मुंबापुरीमध्यें

शा० भीमसिंह माणक नामाख्य श्रावके

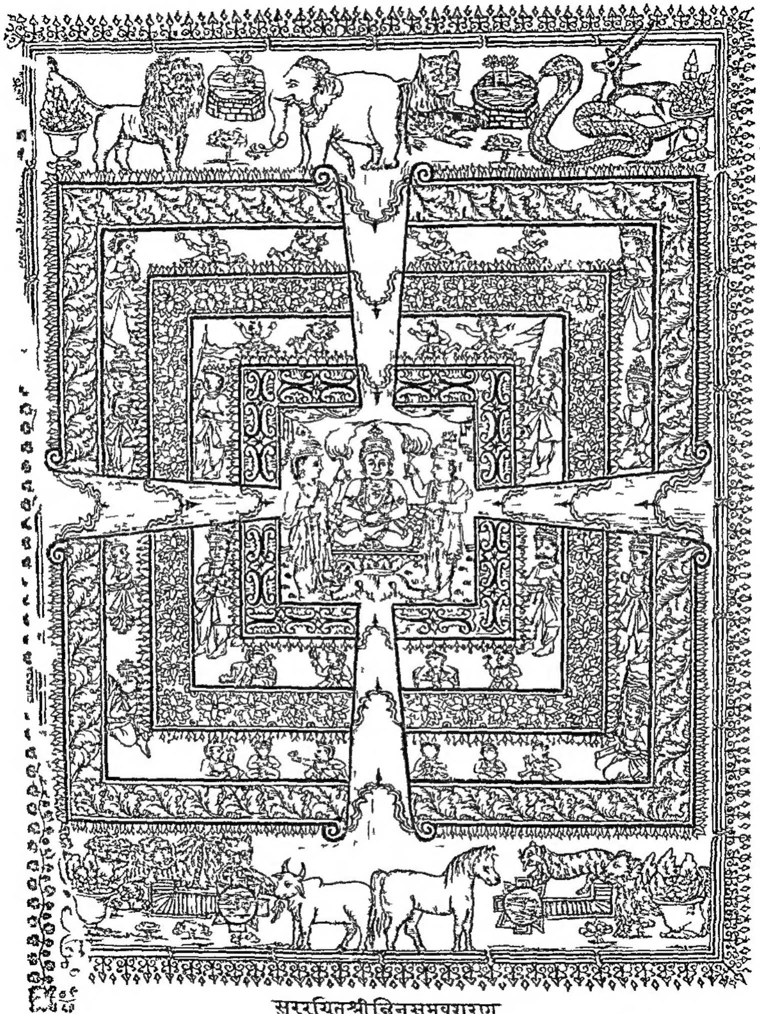
ज्ञान वृद्ध्यर्थे

आ पुस्तक छपावी प्रसिद्ध कर्युं छे.

शके १७९८ संवत् १९३३

पौष शुद्ध १ सोमवार ता०१८ दिजमबर सने १८७६

आ पुस्तकनो सर्वप्रकार सरकारना धाराप्रमाणे हक्क मालके स्वाधीन राख्यो छे



सुररचितश्रीजिनसमवशरण

प्रस्तावना.

आ पंचमकाल समाप्तिना अवसरे छेला दूप्पसहनामा आचार्य थशे. तेमना निर्वाणसुधी जिनधर्मरूप मानससरोवरना साधु, साध्वी, श्रावक तथा श्राविका ए चतुर्विध संघरूप चार आरा खुला रहेवा जोयेछे. एवुं परमेश्वरनु वचन छे. कदाचित कालना प्रबल प्रभावथी कोई समये कोई आरो न्यूनता पाम्या जेवुं थाय तोपण बाकीना चालु रहेला बीजा आराने प्रभावे समय पाम्याथी ते आरो पण सुधरी जाय छे.

आ समयमां पूर्वना समयना करतां घणी न्यूनता थई गएली दीठामां आवेछे. चतुर्विधसंघमां साधु तथा साध्वी तो क्वचितज दीठामां आवेछे अने श्रावक तथा श्राविकाओनुं पण अल्प अस्तित्व छे. तेओनी उपरज धर्मवृद्धि आधार राखे छे. धर्म वृद्धि ज्ञाननी वृद्धिथी थायछे. माटे ज्ञान वृद्धि अवश्य करवी जोयेछे. ज्ञाननी वृद्धि ज्ञानना साधनोनी वृद्धि उपर आधार राखेछे. ज्ञाननां साधनो पूर्वाचार्य कृत ग्रंथोनो जीर्णोद्धार तथा अवलोकन, विद्याभ्यास, उत्सुकता, धर्मप्रीति, अभिरुचि, तथा उद्योग प्रमुख छे.

पूर्वाचार्योकृत ग्रंथोनो जीर्णोद्धार कर्याथी ते समयना पंडितोनुं पाण्डित्य जाणवामां आवेछे; मनुष्योनी धर्मउपर केवी रुचि हती ते जणायछे. भूत कालथी ते आ वर्त्तमान कालसुधी वचगालामां धर्म तथा विद्वत्ता प्रमुखनी केटली अधिक न्यूनता थई छे ते दीठामां आवेछे. पूर्वाचार्यो अति श्रम वेठी विद्याभ्यास करी मोटा मोटा ग्रंथोनी रचना करता हता तेनो हेतु मात्र धर्मवृद्धि अथवा ज्ञानवृद्धि विना बीजो कांई हतो के शु ते वात स्पष्ट देखाई आवेछे. ग्रंथनी रचना कर्यामां केवल परोपकार विना बीजो कांई पण स्वार्थ होयछे के शु ? ते कलाय छे. पूर्व कालना करतां हालना वखतमां विद्याभ्यासनो उद्योग केटलो अधिक अथवा न्यून थयोछे ? ते जणाई आवेछे इत्यादिक बीजा पण घणा हेतुउ दीठामां आवेछे माटे अवश्य प्राचीन ग्रंथोनो जीर्णोद्धार करवो जोयेछे. केमके, ए ज्ञानवृद्धिनुं मुख्य साधन छे. जो पुरातन ग्रंथोनो जीर्णोद्धार नही थाय, तो कालांतरे विछेद थई जवानो संभव छे. अने तेवुं थएलुं हाल दीठामां आवेछे, जुवो के हरिभद्रसूरिए चौद शे ने चुमालीश ग्रंथो कर्या छे, ते बधानो जीर्णोद्धार नही थयाथी तेउमाना केटलाएक ग्रंथोनो हाल पत्तो पण मलतो नथी, एवा बीजा पण अनेक सुविहित आचार्योना करेला ग्रंथोनो शोध मली शकतो नथी तेनुं कारण पण एज छे. ते केटलुं लखिये ! यद्यपि मारुं एम कहेवुं नथी के आज दिवससुधी कोईए ग्रंथोनो जीर्णोद्धार कर्योज नथी, मोटा राजाउ तथा सद्धकारो वगैरे घणा ज्ञान

भंमारा करी गयाछे ते अद्यापि विद्यमान छे; अने तेथीज हाल केटलाएक पुरातन ग्रंथोनुं आपणने दर्शन थायछे. तथापि मात्र दर्शन करवाथीज कांई वळवानुं नथी, पण योग्यरीते उपयोग करवाथी कार्यसिद्धि थवानो संभवछे जेम पूर्व धर्माभिमानी राजा वगेराउए ज्ञान भंमारा करयाछे तेम पाछल थयु नथी ए मोटी दिलगीरीनी वात छे जो एवो चालज पडी गयो होत तो एके ग्रंथ विछेद गयो न होत अने आटली ज्ञाननी न्यूनता पण थई न होत. जुवोके, देरासरनो जीर्णोद्धार करवानो चाल पडी गयोछे तो तेनी सतति विछेद गएली देखाती नथी तेमज ग्रंथोविषे चाल पडवो जोयेछे केमके ग्रंथोनो जीर्णोद्धार तो ज्ञाननी वृद्धिनुं एक मुख्य कारण छे

हालना समयमा ग्रथोनो जीर्णोद्धार करवाना जेवा साधनो मळीआवेछे तेवां आगल कोई वखते पण नहोतां पहेला प्रथम ग्रंथोनो जीर्णोद्धार ताडपत्र उपर थएलो देखायछे, ने त्यार पछी कागळ उपर थयो छे ते अद्यापि सिद्ध छे परतु ते हस्तक्रिया विना यंत्रादिकनी सहायताथी थएलो नथी ने हाल तो मुद्रायंत्रनी अति उत्कृष्ट सहायता मळी आवेछे, तेनो उपयोग करवानुं मूकी दईने आळस करी वेशी रहेशुं तो ग्रंथो केम कायम रहेशे ? हाल विद्याभ्यास करीने नवा नवा ग्रंथोनी रचना करवी तो एक कोरे रही, पण छतीशक्तिये पुरातन ग्रंथोनी रक्षा करवानो यत्न नही करशुं तो आपणेज ज्ञानना विरोधी ठरशुं. केमके जे जेनी रक्षा करे नही ते तेनो विरोधी अथवा अहितकर होयछे. ए साधारण नियम आपणी उपर लागु पडशे

श्रावक भाईयो, पुरातन ग्रंथोनो जीर्णोद्धार करवाथी ते ग्रंथोनुं अवलोकन थशे, प्रयासविना केटलोएक विद्याभ्यास थशे, रस उत्पन्न थईने ज्ञान संपादन करवानी अंत.करणमां उत्कंठा थशे. शुद्ध धर्म उपर प्रीति वधशे, अभिरुचि एटले पुन.पुन ज्ञान मेळववानी इछा थशे, अने उद्योग प्रमुख सर्व ज्ञाननां साधनोनो सहज प्राप्त थशे उद्योग ए सर्व पदार्थ मेळववानुं अथवा वृद्धि करवानुं मुख्य साधन छे, परतु अमस्ता उद्यमथीज काई थई शकतु नथी तेनी साथे द्रव्यनी पण सहायता जोयेछे द्रव्य जे छे ते सर्वोपयोगी पदार्थ छे माटे द्रव्यवान पुरुषोए अवश्य ए काम उपर लक्ष देवो जोयेछे केमके, तेउनी ए फरज छे के, जेम बने तेम ज्ञाननी वृद्धि करवी जोयेछे ते आप्रमाणे – सारा सारा पंडितोनी मारफते प्राचीन ग्रंथो सुधारी लखाववी अथवा छपावीने प्रसिद्ध करवा तेनो भाविक लोकोने अभ्यास करावववो इत्यादिक शास्त्रोमा कह्या प्रमाणे सर्व प्रकारे ज्ञाननी वृद्धि करवी एवा हेतुथीज मे आ ग्रथो छपाववानु काम हाथमा लीधुं छे, परतु कोईनी सहायता विना स्वतंत्र मारी मरजी प्रमाणे हुं ग्रंथो छपावी शकुं एवी मारीपाशे द्रव्यनी शक्ति नही

होवाने लीधे आ 'प्रकरण रत्नाकर' नामनुं मोटुं पुस्तक कहाडवानी आगमज मारा स्व धर्मी नाइयोनी मने मदत लेवी पडीछे सारा नाग्यजोगे योग्य रीते मदत पण मली आवी, तेथी आ पुस्तकनो प्रथम नाग समाप्त करी ते गया जेष्ट मासमां प्रसिद्ध कस्यो अने आ बीजो नाग पण हमणा पूर्ण थयो छे तेथी हुं मने कृतकृत्य समजुं छुं.

आ ग्रंथ प्रसिद्ध करवाने मुख्य मदत करनार शेठ. केशवजी नायकछे.

हरेक पदार्थने सम योग्यतावान वा अधिक योग्यतावान रक्षण करी शकेछे एवुं बहुधा दीगामा आवेछे. जेम ग्रीष्म कृतुना तापथी तप्त थएला पर्वतने मेघज रक्षण करेछे, तेम ज्ञाननुं रक्षण ते उत्तम योग्यतावान पुरुषथीज थई शकेछे. यद्यपि सकल चतुर्विध संघने ज्ञाननी रक्षा करवानो अधिकार छे, तथापि सर्वने तेवुं सामर्थ्य होतुं नथी. माटे योग्यतावानज रक्षण करी शके छे. तेवी योग्यता कोई विरलानेज होय छे, केमके, बाह्य सर्व लक्ष्म्यादि समृद्धि छतां अंतरनेविषे जिन वचन श्रद्धानरूप समृद्धि पण जोये छे. तेमांनी बाह्य समृद्धि तो घणाओने होयछे तेम छतां जिनवचन श्रद्धान होतु नथी तो तेनाथी कोई पण एवुं शुन कृत्य थई शकतुं नथी तेथी बाह्य संपत्ति सहित प्रवचनश्रद्धान पण जोये छे. बाह्य उत्तम संपदा अने अंतर स्वधर्म निष्ठा ए उत्कृष्ट पुण्यानुबंधीपुण्यनुं फल छे तेवुं कोईएकनेज होय छे. एनुं प्रत्यक्ष उदाहरण आ वर्त्तमान द्विशतकरूप काळनेविषे श्रेष्ट केशवजी नायक छे केमके, एवी योग्यतावान बीजो कोई पुरुष हाल दीगामा आवतो नथी एओ बाह्य लक्ष्म्यादि संपत्तियुक्त छतां आंतर धर्म सम्यक्त्व श्रद्धानरूप अत्युत्तम संपत्तिए करीने पण युक्त छे. जेनेविषे पच प्रकृतिरूप अंतराय कर्मनो क्षयोपशम आधुनिक सर्व संघ जनोना कर्त्ताअधिक दीगामां आवेछे, एमना जेवुं आतप नाम कर्म तो कोई नूपने पण कचित् उदय थयलुं दृष्टि गोचर थशे! तेमज आदेय नामकर्म, अंगोपांग नाम कर्म, यशः कीर्त्तिनाम कर्म, प्रमुख शुन प्रकृतिओनुं एमणे एवो तो उत्कृष्टबंध कस्योछे के, तेवो हाल दक्षणनरत्ताईमां कोई बीजानेविषे कचित् दीगामा आवसे एवा पुरुषने शुं अशक्य होय ?, अने कीयुं कार्य करवाने समर्थ न थाय! अर्थात् सर्व कार्य करवाने शक्तिमान छे. पूर्वे थईगएला संप्रति राजा तथा वस्तुपाल तेजपाल अने कुमारपाल प्रमुख मह्त् प्रनाविक पुरुषोनी पठे एमणे पण वर्त्तमान कालानुसार धर्म दीपनार्थे तथा सत्श्रद्धान दर्शनार्थे श्री अर्हद्देवालयो तथा अंजन शलाका प्रमुख उत्तम धर्म कृत्यो कस्यां छे, ते बधाओथी पण अ

त्युत्तम ज्ञानवृद्धिनी उत्कंठा पूर्वक तद्युक्त पुरुषोने अतिशय आश्रय दियेछे; माटे नि श्चये करी एमने पूर्वभूत धर्मे श्रद्धावान कुमारपाल राजा प्रमुखनी पंक्तिमा शासारुं न गणाय किंतु तेमनी तुलना करे तेवाज छे आ लखाणमा कोईए अतिशयोक्ति स मजवी नही, पण निर्पक्षपात बुद्धिथी विचार करी जोवु के, शेठ केशवजी नायक ए सर्व उपमाने योग्य छे के नही! जुवो के अमे अंकित करवाने आरम्भ करेला आ ए क लक्ष सख्याक महत् चतुर्भागात्मक पुस्तकना अंकनीय खर्चनेविषे एवी युक्तियो आश्रय आप्योछे के जेथकी केटलाएक समयोद्धरित पूर्व गीतार्थोए करी रचित प्रकर णोनुं सुखरूप पुन जीर्णोद्धार थई शकशे माटे एमने जेटली उपमादैये तेटली थोडीछे.

रावबहादूर बाबुसाहेब लक्ष्मीपति सिंहजी छत्रपति सिंहजी.

शेठ केशवजी नायकविषे लखता आ प्रसंगे श्रीमद्भ्रुदाबाद निवासी स्वप्रांत भूप समान, लक्ष्म्यादि बाह्य अमित समृद्धि युक्त, उत्तम यश कीर्त्ति नाम कर्मोदयवान, ज्ञान वृद्धयुत्कंठावान अतिशय, प्रतापी, स्वधर्म दीपक, पूर्वोक्त पंक्ति अभिराजनीय, सर्व संघ तिलक भूत तथा श्रावक गुण सहित्यादि अपूर्व कृत्यालंकार भूषित रावबहादुर भूपतिदत्त पदक धारक बाबुसाहेब लक्ष्मीपति सिंहजी छत्रपति सिंहजी पोताना नाम प्रमाणेज योग्यतावान होवाथी अधुना अनुपमेयज छे.

जस्टिस् ऑव् धि पीसाख्य भूपतिदत्त पदक धारक शेठ केशवजी नायक तथा रा वबहादुराख्य भूपतिदत्त पदक धारक शेठ लक्ष्मीपतिसिंहजी छत्रपतिसिंहजी जेवा प्रभा विक धर्म दीपक पुरुषो श्रावक मण्डलनेविषे हमेश उत्पन्नथता रहो, अने आवा ज्ञान वृद्धिरूप धर्मकृत्यो कर्त्ता रहो एवो अमारो अंत करण पूर्वक आशिर्वाद छे

आ ज्ञानवृद्धिक उत्तम कृत्यने सारो आश्रय आपनार प्रभाविक पुरुषोनी पंक्तिमां शोभित, अपेक्षा तथा उपेक्षा रहित, सारासार ग्राहक, परम रहस्यज्ञ, परोपकार म तिमान, करुणा, दया, कृपा तथा शीलादि अनगुण युक्त, श्री वीतरागपद कमल मक रद लालसाय भ्रमरायमान्, महात्मा सदृश मुनी महिमा सागरजी तथा सुमति सागर जी; एमनो अत्यंत प्रार्थना पूर्वक अत्युपकार युक्त नाम स्मरण अत्र गुंफित करुं छुं

श्री मुंबईना श्रावक मंडलमाना श्रेष्ट हरखम नरसिंह, श्रेष्ट घेला भाई पदमसी, श्रेष्ट वर्द्धमान पुनसी, श्रेष्ट भोजराज देसल, एमणे ज्ञान वृद्धि विषयक पोतानी सारी उदारता दर्शावी छे माटे तेमना उपकार पूर्वक हुं नाम गुंफित करुं छुं.

श्रीमक्षुदाबाद निवासी परम ज्ञान प्रसारोद्युक मतिमान स्वज्येष्ट भ्राता तुल्य ल क्ष्मी तथा गुण युक्त नृप दत्तक रायबाहादूर पद धारक बाबुसाहेब धनपति सिंहजी छत्रपति सिंहजी एमने पण पोतानी उत्कृष्ट ज्ञान वृध्धिक कृत्यने सारी उदारता दर्शावी छे तेथी तथा बीजो पण ज्ञान वृध्धिने अर्थे पुस्तक अंकित करवानो हमेश उद्योग चालुं राखेछे तेथी अति सत्कार पूर्वक तथा मान्यता युक्त नामस्मरण गुंथित करुंछुं.

श्री मुंबईना श्रावक मंडलमांना शेठ परवत लधा, शेठ मूलजी देवजी, शेठ जादव जी परवत, सा. भोजराज नरपाल, तथा शेठ कीकाभाई फूलचंद तथा शा. गकरसी देवजी एओए पण यथाश्रध्धान प्रमाणे आ ज्ञानवृध्धिना कृत्यने आश्रय आप्योछे तेथी तेओनुं उपकार सहित नामस्मरण गुंथित करुं छुं.

श्री अहमदावादना श्रावक मंमल माहेला शेठ दलपत भाई भगुभाई, तथा शेठ मयाभाई प्रेमाभाई, एउने ज्ञाननी प्रशस्ति थवानेविषे अति उत्कंठा जोईने मोटा आभार सहित नामस्मरण गुंथित करुं छुं;

श्री साणदवाला शेठ साकलचंद हुकमचद तथा श्री भरूचवाला शेठ अनूपचंद मलु कचद, एओए पोतानी धर्मप्रभावना अधिक दर्शाववाने अर्थे ज्ञाननी वृध्धि थवा सारु जे उत्सुकता बतावी छे ते जोईने मोटा उपकार साथे नामस्मरण गुंथित करुं छुं

श्री कछ मुदराना रहेवाशी शेठ कस्तुरचंद सिंघजी पारेख एमनी अद्भुत धर्म प्रीति, वैराग्यता तथा ज्ञानवृध्धिनी अतिशय चाहना जोईने मोटा आदर पूर्वक आ पुस्तकनी साथे नाम गुंथित करुं छुं.

साधुमंमल मार्गेमार्गित संवेगी साधु वर्य, अति विवेकी, ज्ञान पीयूष बुभुत्सुक जिनप्रवचन श्रवण श्रध्धावान श्रावक जन मन कर्णने परमामृत रहस्य पान करावनार, साधु गुण भूषणालंकृत, ज्ञानवृध्धि कर्त्ता पुरुषरूप वृक्षोने मेघवृष्टि समान अत्युत्कृष्ट साधन भूत, महाराज श्री मूलचंदजी तथा जवेर सागरजीना, नामस्मरण प्रेम पूर्वक गुंथित करुं छुं.

साधु मंमलमां साधु गुण संपन्न, ज्ञानरूप सूर्यना प्रकाशने आवरण करनारा जे नाना प्रकारना संशयो, कुतर्कों, द्वेष, मान, ईर्षा तथा कुसंग प्रमुख वादल समूहरूप घनघटानो सम्यक् प्रकारे विध्वंश करवाने बलवान पवन समान; धर्म तथा धर्मांग ज्ञानादिकनी वृध्धि करवाने पूर्वना अत्युत्तम सुविहित शास्त्रपारग आचार्यादि आर्य जन तुल स्याद्वाद सैलीना जाण बहुधा पंजाबाख्य देश निवाशी संवेगी साधु श्री आत्माराम समान आत्मारामजी एमनुं अति भावपूर्वक नामस्मरण गुंथित करुंछुं.

संवेगी साधु श्री नितीविजयजी महाराज एओनो ज्ञान वृद्धि अर्थे सारो उद्योग होवाथी प्रथम भागनी पठे नामस्मरण गुंथित करुं छुं,

सवेगी साधु साध्य वस्तु साधनोद्युक्त युक्त मतिमान, जिनवचन समुद्रमांथी जलद त ग्रहीत धर्माकाशस्थित जलवृष्टि वत् ज्ञान वृद्धि कर्त्ता, संवेगी साधु शुद्ध सम्यक्त्व दारथ, परम सुविहित सुसाधु मंगल माल ग्रोहीत, ज्ञानादि शुद्ध जिनधर्मागवृद्धि यत्नवान. श्री शांति सागरजी महाराजनुं नामस्मरण गुंथित करुंछुं,

जन वृंद वद्य अचल गच्छाचार्य भट्टारक श्रीविवेक सागर सूरि, एमनुं पूर्वभागनी पठे नाम स्मरण गुंथित करुं छुं,

मनुष्य पुज पूज्य तप गच्छाधिपति भट्टारक श्री धरणेंद्रसूरि, एमनुं नाम स्मरण गुंथित करुं छुं,

श्री हुकमचंद्रजी महाराजनु में प्रथम भागमां नाम स्मरण गुंथन कर्युं ठे तेमज अत्रे पण गुंथित करुं छुं

प्रवचन रहस्य ज्ञाता, कोविद मतिमान, अद्भुत चपल वक्तृत्वशक्तियुक्त, स्वरूपसागरवित् श्रीरूपसागरजीनुं नाम स्मरण गुंथित करुं छुं,

शुद्ध वीतराग परुपित, जिनधर्म विभूति युक्त श्रीअहमदावाद नगर निवाशी सर्वे श्रावक मंगल जन भूप समान अत्यंत लक्ष्मि सपत्तिवान पूर्वज परपरा श्रेणि आगत श्रीमान उत्तम श्रद्धान सद्वर्त्तमान तथा धर्मदीपक श्रेष्ट मयाभाई प्रेमाभाईनुं नामस्मरण पुन. गुंथित करुं छुं.

बीजा पण जे जे सद्बुद्धिमान पुरुषोए धर्म प्रभावना दर्शाववा निमित्ते स्वसामर्थ्यानुसार ज्ञानवृद्धि हेतुथी जे उदारता दर्शावी ठे तेओनां नामस्मरणार्थे पुस्तकना अंतनेविषे गुंथित थशे

क्षमापना

प्रथम भाग मध्ये मतिदोषथी तत्वानुबोध नामनो ग्रंथ जे पृष्ठ ७३१ थी ७५६ सुधीमा भाखवामा आव्युं ठे ते स्थानकवासी रतनचंदनो करेलो ठता लखेली प्रतमां तेवु न जणायाथी भूलथी ठपाई गयो ठे एटला माटे हुं सर्व सुबुद्धिवान वाचको पाशेथी क्षमा मागु छुं के अंकित ग्रथना मुख पृष्टमा सुविहित गीतार्थ रचित ग्रंथो ज भाखवानी मे प्रतिज्ञा करेली ठे तेने कोई दूषण आपशो नही केम के, हरेक

काम नूलथी थाय ते क्षमा करवा योग्य छे ढुंढिया यद्यपि जिनधर्मी नामधरावनारा तो छे पण जाते मूर्खज होय छे तेथी तेउ जिनोक्त मार्गनी विपरीत परुपणा करता दरता नथी एवात सर्व सुज्ञ जनोने सम्मत छे माटे ते मूर्ख होवाथी गीतार्थ कहेवाय नही तेथी ए ग्रंथ अवश्य जैन सैलीथी विपरीतजछे एवुं जाणी त्याग करवा योग्य छे; कोईए सुविहित गीतार्थकृत जाणीने वाचवो नणवो नही ए वात हुं श्री नावनगरमां साधु श्री आत्मारामजी महाराजने मलवा गयो हतो त्यारे तेमणे मारी पाशे कही ए रतनचद थानकवासी साथे आत्मारामजी महाराजनो मलाप थयलो हतो इत्यादिक वहुवातो मे एमना मुखथी सांजलीने तेथी में घणो पश्चात्ताप कर्यो पण पछी थाय शुं? माटे मूलथी मारी प्रतिज्ञामा में नूल कीधी तेनी मुनि श्री आत्मारामजी महाराजना उपकार सहित सर्व सज्जनो पाशेथी क्षमापना मागुं हुं

शा. नीमसिंह माणक.

विनती.

समस्त जैन धर्म रागी, नाना ग्रंथ विचार बुजुत्सुक, जिनवचन पीयूषपान कर्त्ता, शरल चित्तवाला जनोने अति प्रार्थना पूर्वक विनति करुं हुं के, जेम जननी अथवा जनक स्वपुत्रना दोषविषे रंचमात्र विचार न करतां मात्र गुणपुंज ग्रहण करेछे. तेम आ अंकित पुस्तकनेविषे कोईने कांई दोष दृष्टिगोचर थाय तो मक्त उपर रंचमात्र रोष करवो नही केमके, सर्व प्रकारे निर्दोषता एक केवलीविना बीजा कोईनेविषे पण संनवे नही एटला माटेज पूर्वे थई गयला महत् आचार्य प्रमुख श्रुतज्ञान पारग अत्युत्कृष्ट पंमितो पण स्वरचित ग्रंथोमां बुद्धि दोषनेविषे क्षमा मागी गयला दीठामां आवेछे; त्यारे आधुनिक साधारण जननी वात शुं कहेवी? आ पुस्तकनुं शोधन करतां मति दोष अथवा दृष्टिदोष अवश्य दीठामा आवशे; ते जोईने रोष न करतां क्षमा करवी. केमके, वांचता अथवा लखतां नूल थायज छे एवो नियम छे. एविषे जे गर्व करे ते मूर्ख कहेवाय. माटे ए विषे हुं सर्व सत्पुरुषोनो विनय करुंछुं के, आपनी हंसना चंचू जेवी मतिथी सारासार विचार पूर्वक जलरूप दोषनुं निवारण करीने पयरूप गुणनुं ग्रहण करवुं. अने असत् पुरुषोनो पण अधिक विनय करुं हुं के, आपनी काकना चंचू जेवी मतिवडे गुण तजीने दोषनुं ग्रहण करीने ते सुखेथी प्रसिद्ध करवो; तेथी हुं

मोटो उपकार मानीश ? केमके, जो दोष दर्शावनार नही मले तो दोष दीठामां केम आवे? गुणग्राहकनी क्षमारूप अमृत धाराथी यद्यपि गुणनी पुष्टी थायछे, तथापि दोष ग्राहकनी कुमतिरूप कुठार धाराथी बुद्धि छिन्न भिन्न थइने तेने अदोषता करवाविषे घणा प्रयत्नमा प्रवृत्ति थायछे, तेथी तेनो पण उपकार मानवा योग्य छे. माटे सर्व सज्जन तथा दुष्ट पुरुषोनी विनति करुं छुं के, यथा स्वमति अनुसार गुणदोष विचार करीने क्षमादिक करवु

शा० भीमसिंह माणक.

प्रार्थना.

आ पुस्तक वांचनारा अने जणनारा प्रमुख सर्व ज्ञानना रागी अने विवेकी सुज्ञ जनोने अति नम्रतापूर्वक हुं याचना करुंछुं के, आ प्रकरण रत्नाकरमाना कोई प्रकरणमां अंतरवृत्तिजन्य दोषथी, बाह्यदृष्टि दोषथी अथवा अज्ञान प्रक्रियाने लीधे कांई जैननी सैलीथी विपरीतता अथवा सांशयिक दीठामां आवे तो तेविषे कोप न करतां सर्व लखी लईने ते मने मोकलावी देवु, के जेथी ते सुधारीने कोई प्रसंगे विरोधनो परिहार करवामां आवे जेम के, प्रथम भागमां नाखेला उपमितिभवप्रपंचनी कथामां अनुसुंदरने अवधिज्ञान उत्पन्न थया पछी अनंत काल निगोदमा रही आव्यो छतां ते सर्व वात स्मरणमां आवी छे ए सांशयिक उक्ति छे; इत्यादिकनी पछे ज्यां ज्यां दीठामा आवे त्यां त्यांथी लखी लईने जो बने तो तेना विवेचनसुद्धां अथवा एमज मने सूचना करवी एवी हुं तेमनी प्रार्थना करुंछुं, अने एम कस्याथी मोटो उपकार मान्यामां आवशे.

शा० भीमसिंह माणक

॥ श्री ॥

प्रकरणरत्नाकर नामाख्य पुस्तकना बीजाभाग माहेला ग्रंथोनी स्थूल विषयानुक्रमणिका प्रारंभः

श्री जिनस्तोत्र सग्रह, श्री कल्याणसागर सूरिकृत.

विविधविषयिकस्तोत्र, जिनप्रभाचार्यकृत.







॥ अथ श्री मह्मिस्तोत्रप्रारंभ. ॥

मह्मिः पार ते परमजनमाना अपि विनो नवति स्तोतारः समवसृतिजूमो समु दिताः ॥ यदिंशघ्यास्त्वा तज्जिनवृपनजतया स्तवयतो ममाप्येप स्तोत्रे हरनिरप वाद परिकर ॥ १ ॥ स्वरूपं चिद्रूपं किमपि तदरूपं नगवत श्चतूरूपा ब्राह्मी यदि गदितुमीष्टे न नवतः ॥ तत' कस्य स्तुत्यं किमुपममिदं कस्य विपय' पदे त्ववीचीने पतति न मन कस्य न वच. ॥ २ ॥ यद्वा ॥ पदं शैव केचित्परमम नपेक्षाक्षयसुखं स्तुवति त्वां राज्याधिकपदकृते मंदमतय ॥ नवेद्वा तत्वार्थे रतिर तितरां नैव नवत पदे त्ववीचीने पतति न मन कस्य न वच. ॥ ३ ॥ गुणाना मानंत्यादविपयतया वाङ्मनसयो र्न शक्या तत्वज्ञै रपि तव विधातुं स्तुतिरियम् ॥ नवन्नामोच्चारात्पुनरपि ममैतां निजगिर पुनामीत्यर्थेऽस्मिन् पुरमथनबुद्धिर्व्यव सिता ॥ ४ ॥ यद्वा ॥ जटालंकारालंकृतमथ वृपांकं च नगवन् पुनानं विश्वं त्वां प्रथमजिन मत्वा किमु तत ॥ जटां धृत्वा श्रित्वा वृपमहमपि क्ष्मातलमिदं पु नामीत्यर्थेऽस्मिन्पुरमथनबुद्धिर्व्यवसिता ॥ ५ ॥ न कोपस्याटोप स्वरिपुपु न च स्वे प्ववपि तथा प्रशांतिर्नो कांतादिकपरिकर. कश्चिदिति ते ॥ त्रिलोक्यामालोक्याप्यह ह परमां प्रारजरमा विदंतु व्याक्रोशी विदधत ऽहैके जडधियः ॥ ६ ॥ ध्रुव कश्चि त्कर्त्ता निखिलजुवनस्यापि स पुन र्विजुर्नित्यश्चैक. सतनुरतनुर्वा स्ववशत' ॥ स्वयं सिद्धेन्यस्मिंस्तव मतमनाप्तान् हतधिय कुतर्कोयं कश्चिन्मुखरयति मोहाय जगत. ॥ ७ ॥ विगुणैरागाद्यैरपि नवति किं सर्वविदहो विना वा सर्वज्ञं ननु जिन किमाप्तो पि स च किम् ॥ त्वदन्योपि क्वापि त्रिजगति बतासस्वविपये यतोमदास्त्वा प्रत्यमर वर सशेरत इमे ॥ ८ ॥ त्वमेवार्हन् बुद्धो जगति परमेष्ठी च पुरुपो तमोलक्ष्म्या ना स्वान्विबुधगुरुरादीश्वर इति ॥ विनो नानाख्यानि' समविपममार्गेपु चरता नृणामे कोगम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव ॥ ९ ॥ प्रसादात्ते पुत्रा विपयसुखसाम्राज्यमजजन न के वा सेवातस्तव नवनवामृद्धिमगमन् ॥ तृणे स्त्रैणे स्वर्णे दृपदि च सदृक्. पु नरहो न हि स्वात्माराम विपयमृगतृष्णा ज्रमयति ॥ १० ॥ नवन्तत्त्वाद्दक्षातिशय महिमेक्षावगर्सक्षुभ्यद्धकिव्यत्तया रणरणकितात करणत ॥ अधीरप्युद्युक्तोखिलजग दशक्यं स्तवमपि स्तुवन् जिन्हेमि त्वा न खलु ननु धृष्टा मुखरता ॥ ११ ॥ न श स्यौ कस्यास्ता नमिविनमिपत्ती जिनपते त्वदेकस्वामित्वाक्रमकमलसेवासु रसिकौ ॥ प्रसादात्ते विद्याधरपतितति र्यत्सविनय स्वयं तस्थे ताभ्या तव किमनुवृत्तिर्न फल ति ॥ १२ ॥ तदा विद्या' प्राप्य ध्रुवमखिलविद्याधरमहा स्वयं प्राडुर्नाव्य प्रथमम

य वैताढ्यविज्ञुताम् ॥ यदेतौ डुस्साध्यौ सुरनरवराणामनजतां स्थिरायास्त्वद्भक्तेस्त्रि
पुरहर विस्फूर्जितमिदम् ॥ १३ ॥ अथावाप्तैश्वर्यं मदनमदविध्वंसि च महाव्रतित्वं
सर्वज्ञत्वमसमविभूतिश्च परित ॥ शिवासङ्गश्चंग. सततमिति नो कस्य कृतिन स्थि
रायास्त्वद्भक्तेस्त्रिपुरहर विस्फूर्जितमिदम् ॥ १४ ॥ विवाहादौ नेतुर्भुद्दुरुपकृतो विप्र
तिन्नव त्वया पारपर्यागतपरिचयान्मोहचरट ॥ तथा दूर नष्ट क्वचिदपि यथाकेव
लकलाप्रतिष्ठा त्वय्यासीद् ध्रुवमुपचितो मुह्यति खल ॥१५॥ निजर्ध्या स्पर्धाल्लुर्भरत
विज्ञुरासीन्मघवता यदाऽपत्तस्यार्धासनमथ सुखं केवलरमाम् ॥ तदेतस्मिन्सर्व तव
पदविनम्रे समुचित न कस्याप्युन्नत्यै नवति शिरसस्त्वय्यवनति ॥ १६ ॥ निर्नसा
यां पूर्व क्षणमजगणस्त्वा नरतराद् समं चक्रेणाहो तदिह विपयाणा विपमता ॥ यदे
तस्यार्चात्र प्रमितफलदैवाशिवसुखं न कस्याप्युन्नत्यै नवति शिरसस्त्वय्यवनति
॥ १७ ॥ प्रनो त्वत्पुत्रस्यातुलबलवतो बाहुबलिनस्तपस्तीव्रं ताहक् शरदवधिमानाद
पि कृतं ॥ निदान ज्ञानस्य ध्रुवमनवदाश्चर्यमथवा विकारोपि श्लाघ्यो जुवननयनग
व्यसनिन ॥ १८ ॥ न सुत्रामा यत्र प्रनवति विधातापि न विज्ञु स वैकुंठ' कुंव
किमपि न नवश्वानवदलम् ॥ जिगीषु स त्वामप्यपरसुरमहुर्म्मैतिरनूत् स्मर स्म
र्त्तव्यात्मा न हि वशिषु पथ्य परिनव ॥ १९ ॥ प्रयुंजान' स्वामिन्स्वयमखिलशि
टपान्यसुमता कला पुसा स्त्रीणामपि च सकला क्ष्मापतिरपि ॥ कुलाजालीस्तास्ता
न् क्षणमपि नयन् शिक्षणविधौ जगद्रक्षायै त्वं नटसि ननु वामेव विज्ञुता ॥२०॥
प्रनो तैस्तै सारैरणुनिरखिलैश्चामरवरै रुत रूपं सर्वोत्तमसुखगमगुष्ठकमितम् ॥
त्वदगुष्ठस्याग्रे ज्ञुनति किल नागारकइवेत्यनेनैवोन्नेयं धृतमहिमदिव्यं तव वपु
॥२१॥ प्रजा प्राज्यं राज्यं स्थविरजननी स्वस्य तनुजास्तपस्यन्नासत्तावपि च विहरन्वा
हुबलिन ॥ उपेक्षिष्टा आत्तव्रतनृपसहस्राश्च चतुरो विधेयै क्रीडंत्यो न खलु परतत्रा
प्रज्ञुधिय ॥ २२ ॥ यदा नो रत्नाना त्रयमखिलदौर्गत्यहरण निदानं सपत्तेस्त्रिज्ञुवनज
नानामनुदिनम् ॥ नवान् योगक्षेमावपि विरचयन्मन्मथजये त्रयाणा रक्षायै त्रिपुर
हर जागर्त्ति जगताम् ॥ २३ ॥ यथा पूर्वं मुग्धास्तवसडुपदेशायुगलिन. सदा स्वामि
न्नीशाजनिषित सदाचारचतुरा ॥ तथा कस्क संप्रत्यपि न विशदेषु त्वडुदितश्रुतौ श्र
द्धा वध्वा दृढपरिकर कर्मसु जन ॥ २४ ॥ तपस्तीव्रं ब्रह्मव्रतनियमनिष्ठा वहुवि
धा क्रियाकष्टास्पष्टा अपि जिनप डुष्टाशयतया ॥ त्वदाज्ञावज्ञाया नियतमहितायै
व नविनां ध्रुवं कर्त्तु श्रद्धाविधुरमनिचाराय हि मखा ॥ २५ ॥ क्ष्मान्नृन्मुख्या के
नियतमधिमात्रानपि सदा स्वयंस्थान् शास्त्रौघान्नदधतितरां यस्य हृतये ॥ अविघ्नं तं

निघ्नन्समरसमयस्तामसमृगं त्रसंतं ते ऽद्यापि त्यजति न मृगव्याधरभस ॥ २६ ॥ परिभ्राम्य क्लेशार्जितमपि सहस्रेण शरदा मदाश्विड्राजत्वं सपदि मरुदेव्यै तदपि चेत्॥ प्रभो निस्नेहं सा व्रतसमयसर्वावगणनादवैति त्वामद्धा वत वरद मुग्धा युवतय ॥ २७ ॥ महानंदे यद्यप्यसि जिन दवीयस्यपि पदे न रुष्टस्तुष्टश्च त्रिभुवनजनेषु क्वचिदपि ॥ भवन्नाम स्वामिन्स्वमनसि महामंत्रमनिशं तथापि स्मर्तॄणां वरद परमं मंगलमसि ॥ २८ ॥ प्रभो प्राणायामाभ्यसनरसिकत्वान्निजमन. समाधावाधाय खिलविषयतोक्षाणि युगपत् ॥ इतं प्रत्याहृत्य स्थिरनिहितनासाग्रनयना दधत्यंत स्तत्वं किमपि यमिनस्तत्किल भवान्॥२९॥ सुरद्रु खः कुंभस्त्रिदशसुरभिस्त्वं सुरमणि. पिता माता भ्राता विधुरपि सुहृत्त्वं च सुगुरु ॥ परात्मा ब्रह्मापि त्वमसि परमं दैवतमतो न विद्मस्तत्त्वं द्धयमिहहि यत्त्वं न भवसि ॥ ३० ॥ अकाराद्यैर्वर्णै स्त्वयि परिणतान् पंच परमेष्ठिनः स्पष्टं पंचाक्षररचनया नामभिनिगदन् ॥ कलाना दव्यक्तं किमपि परमब्रह्मविषयं समस्तं व्यस्तं त्वा शरणद गृणात्योमिति पदम्॥३१॥ न रागाद्यैर्ग्रस्तो न पुनरनुकंप्यो मदपर कृपालु स्त्वत्तोन्यो न जगति न तेभ्य· पुनरलम्॥ स्वयं तैरस्यार्त्तैः किमितरसुरैश्चेति विमृशन् प्रियायास्मैधाम्ने प्रविहृतनमस्योस्मि भवते ॥ ३२ नमो नासक्ताय क्वचिदपि विरक्ताय च नमो नम. संबुद्धाय प्रशमदमरुद्धाय च नम· ॥ नमः सर्वज्ञाय स्मरणपरतद्धाय च नमोनमः सर्वस्मै ते तदिदमितिशर्वाय च नमः ॥ ३३॥ दलितरजसे शश्वद्विश्वार्चिताय नमोनमः प्रहततमसे श्रीसर्वज्ञाधिपाय नमोनम ॥ जनहितकृते तुभ्यं सत्वाधिकाय नमोनमः प्रमहसि पदे निस्त्रिगुण्ये शिवाय नमोनमः ॥३४॥ कुसुमवटुरिवाहं तव्रुतौ किंचनार्हं कृतिभिरुरसि कवे वा गुणत्वादधार्यम् ॥ जिनवर जिनहर्षोत्कर्षतोकार्पमेव वरद चरणयोस्ते वाक्यपुष्पोपहारं ॥ ३५ ॥ प्रांशुश्रीसोमवंशेऽजनिषत मुनयोमौक्तिकानीव शुद्धास्ते ष्वप्येकावली च प्रगुणगुणवती श्रीमदाचार्यपंक्ति ॥ जीयाद्राज्यं यदूनामिव गुरुजयचशव्हयश्रीमुनी इस्तस्यामप्येष चिंतामणिरुचिररुचिर्नायकः कृष्णदेव· ॥ ३६ ॥ निहितचरमपादं श्रीमहिम्नः स्तवस्य त्रिभुवनमहितस्य श्रीयुगादीश्वरस्य ॥ भ्रमरइव सदा तत्पादपद्मोपजीवी रुचिरमलघुवृत्तै· स्तोत्रमेतद्धधत्त ॥ ३७ ॥ एव शारदसोमसुंदरयश.स्तोमं युगादीश्वर चेतोभूजयचंद्रमौलिभिरभिष्टुत्यान्वहं योगिभि. ॥ ज्ञानं प्राप्य विशालराजसदृशश्ल्हादं समाश्रीयते मुक्त्यं मूर्द्धनि रत्नशेखररमा ब्रह्मैकतेजोमयी ॥ ३८ ॥ इतिश्रीयुगादिदेवमहिम्नः स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

॥ अथ क्षमाकल्याणजीकृत चतुर्विंशतिजिनस्तुतिप्रारंभः ॥

शार्दूल विक्रीडितछंद ॥ अथ ऋषभस्तुति प्रारंभ.॥ सद्भक्त्या नतमौलिनिर्जरवरभ्राजि ष्णुमौलिप्रभा समिश्रारुणदीप्तिशोभिचरणाम्भोज द्वय सर्वदा ॥ सर्वज्ञ पुरुषोत्तम सुच रितो धर्मार्थिनां प्राणिनां भूयाद्भूरिविभूतये मुनिपति श्रीनाभिसूनुर्जिन ॥१॥ सद्बो धोपचिता मदैव दधताप्रौढप्रतापश्रियो येनाज्ञानतमोवितानमखिलं विक्षिप्तमत क्षण ॥ श्रीशत्रुंजयपूर्वशैलशिखरं भास्वानिवोद्भासयन् भव्याम्भोजहित स एष जयतु श्रीमारुदेवप्रभु ॥२॥ योविज्ञानमयो जगत्त्रयगुरुर्यं सर्वलोकाश्रिता सिद्धिर्येन वृता स मस्तजनता यस्मै नतितन्वते॥ यस्मान्मोहमतिर्गता मतिभृतांयस्यैव सेव्यं वचो यस्मि न्विश्वगुणास्तमेव सुतरा वंदे युगादीश्वर॥३॥अथ अजितस्तुति प्रारंभ ॥मालिनीछंद.॥ सकलसुखसमृद्धिर्यस्य पादारविंदे विलसति गुणरक्ता भक्तराजीव नित्यं॥ त्रिभुवनज नमान्य शातमुद्रानिरम्यः स जयति जिनराजस्तुंगतारंगतीर्थे॥१॥प्रभवति किल भव्यो यस्यनिर्वे र्णनेन व्यपगतदुरितोघ. प्राप्तमोदप्रपंच ॥ निजबलजितरागद्वेषविद्वेषिवर्ग तमजितवरगोत्रं तीर्थनाथं नमामि ॥ २ ॥ नरपतिजितशत्रोर्वंशरत्नाकरेंदु सुरपतिय तिमु ख्यैर्नैकिदक्षै समर्च्य ॥ दिनपतिरिव लोकेऽपास्तमोहांधकारो जिनपतिरजितेश· पातुमां पुण्यमूर्त्ति ॥३॥ अथ संभवस्तुति ॥ स्रग्धराछंद ॥ यद्भक्त्या सक्तचित्ता प्रभु रतरभवभ्रांतिमुक्ता मनुष्या. सजाता. साधुभावोल्लसितनिजगुणान्वेषिण सद्यएव॥स श्रीमान्संभवेश प्रशमरसमयोविश्व विश्वोपकर्त्ता सद्भर्त्ता दिव्यदीप्ति परमपदकृते से व्यता भव्यलोका ॥ १ ॥ शुक्लध्यानोदकेनोज्वलमतिशयितस्वभावाभृतेन स्वस्मादा कृत्य वृत्तं शिवपदनिगम कर्मपकप्रपंच॥ नीरध्रं दूरयित्वा प्रकृतिमुपगतोनिर्विकल्पस्वरू प सेव्यस्ताक्ष्यंध्वजोसौ जगति जिनपतिर्वीतराग सदैव॥२॥ वार्द्धौ विद्योतिरत्नप्रकर इव परिभ्राजते सर्वकाले यस्मिन्नि शेषदोषव्यपगमविशदे श्रीजितारेस्तनूजे ॥ दु प्रा पो दुष्टसत्वे स्फुटगुणनिकर शुद्धबुद्धिक्षमादि कल्याणश्रीनिवास स भवतिवद ताऽभ्यर्चनीयो न केषा ॥३॥ अथ अभिनंदनस्तुतिप्रारंभ ॥ द्रुतविलंबितछंद ॥ विश दशारदसोमसमानन कमलकोमलचारुविलोचन ॥ शुचिगुण सुतरामभिनंदन ज य सुनिर्मलताचितभूधन ॥ १ ॥ जगति कांतहरीश्वरलांछितक्रमसरोरुह कामकृपा निधे॥ मम समीहितसिद्धिविधायकं त्वदपर किमपीह न तर्कये ॥ २ ॥ प्रवरसंवर स वरभूपतेस्तनय नीतिविचक्षण ते पदं॥ शरणमस्तु जिनेश निरंतर रुचिरभक्तिसुयुक्तिभृ तो मम ॥ ३ ॥ अथ सुमतिस्तुति प्रारंभ ॥ उपेंद्रवज्राछंद ॥ सुवर्णवर्णो हरिणासव

र्णो मनोवनं मे सुमतिर्वलीयान् ॥गतस्ततो दुष्टकुदृष्टिरागद्विपेंद्र नैव स्थितिरत्र कार्या ॥ १ ॥जिनेश्वरो मेघनरेंद्रस्तनुर्घनोपमो गर्जति मानसे मे॥ अहो गुरुद्वेषहुताशन त्वा म सो शमं नेष्यति सद्यएव ॥ २ ॥इत सुदूरं व्रज दुष्टबुद्धे समं दुरात्मीयपरिच्छदेन ॥ सु बुद्धिनर्त्ता सुमतिर्जिनेशो मनोरम: स्वांतमितो मदीयं ॥ ३ ॥ अथ पद्मस्तुतिप्रारंज. जुजगप्रयातछंद. ॥ उदारप्रजामंडलैर्जासमानः कृतात्यंतदुर्दांतदोषापमानः ॥ सुसी मांगजश्रीपतिर्देवदेव स्सदा मे मुदान्यर्चनीयस्त्वमेव ॥ १ ॥ यदीयं मनःपंकजनित्य मेव त्वयालंकृत ध्येयरूपेण देव ॥ प्रधानस्वरूपं तमेवातिपुण्यं जगन्नाथ जानामि लो के सुधन्यं ॥ २ ॥ अतो धीशपद्मप्रजानंदधाम स्मरामि प्रकामं तवैवाग नाम ॥ मनो वांछितार्थप्रदं योगिगम्यं यथा चक्रवाको रवेर्धाम रम्यं ॥ ३॥ अथ सुपार्श्वजिनस्तुतिप्रा रंज तोटकछंदः ॥ जयवनमनंतगुणैर्निजृत पृथिवीसुतमद्भुतरूपजृतं ॥ निजवीर्य विनिर्जितकर्मबलं सुरकोटिसमाश्रितपत्कमलं ॥ १ ॥ निरुपाधिकनिर्मलसौख्यनि धिं परिवर्जितविश्वदुरंतविधिं जववारिनिधे. परपारमिम परमोज्ज्वलचेतनयोन्मिलितं २॥कलधौतसुवर्णशरीरधर जुनपार्श्वसुपार्श्वजिनप्रवरम् ॥ विनयावनत प्रणमामि सदा हृदयोद्भवजूरितरप्रमुदा ॥ ३ ॥ अथ चंद्रप्रजाजिनस्तुतिप्रारंज ॥ वंशस्थछंदः॥ अनंतकांतिप्रकरेण चारुणा कलाधिपेनाश्रितमात्मसाम्यत ॥ जिनेंद्र चंद्रप्रज देवमुत्त मं जवतमेवात्महित विजावये॥ १ ॥उदारचारित्रनिधे जगत्प्रजो तवाननांजोजविलोक नेन मे ॥ व्यथा समस्तास्तमितोदित सुखं यथा तमिस्त्रादिवमर्कतेजसा ॥ २॥ सदैव संसे वनतत्परे जने जवति सर्वेपि सुरा सुदृष्टय.॥समग्रलोके समचित्तवृत्तिना त्वयैव संजा तमनोनमोस्तु ते ॥ ३॥अथ सुविधिजिनस्तुतिप्रारंज ॥ वसंततिलकाछंद. ॥ विश्वाजिव द्यमकरांकितपादपद्म सुग्रीवजात जिनपुंगव शांतिसद्म॥जव्यात्मतारणपरोत्तमपानपा त्र मा तारयस्व जववारिनिधेर्विरूपात् ॥ १ ॥ नि.शेषदोषविगमोद्भवमोक्षमार्गं ज व्या श्रयंति जवदाश्रयतो मुनींद्र ॥ संसेवित सुरमणिर्बहुधा जनाना किंनाम नोजव ति कामितसिद्धिकारी ॥ २ ॥ विज्ञं कृपारसनिधिं सुविधे स्वयंभूर्मत्वा जवतमिति विज्ञप यामि तावत्॥ देवाधिदेव तव दर्शनवल्लजोद्द शश्वद्भवामि जुवनेश तथा विधेहि ॥ ३॥ अथ शीतलजिनस्तुतिप्रारंज॰॥शार्दूलविक्रीडितछंद॰॥कल्याणांकुरवर्द्धने जलधर सर्वा गिसंपत्कर विश्वव्यापियश.कलापकलित कैवल्यलीलाश्रित ॥ नंदाकुक्षिसमुद्भव दृ ढरथक्षोणीपतेर्नंदनं श्रीमत्सूरतबिंदरे जिनवर वंदे प्रजुं शीतलं॥ १॥ विश्वाज्ञानविशु द्धसिद्धिपदवीहेतुप्रबोध दधद्भव्याना वरजक्तिरक्तमनसा चेत. सुमुल्लासयन् नित्यान दमयप्रसिद्धसमय सद्भूतसौख्याश्रयो दुष्टानिष्टतम.प्रणाशतरणिर्जीयाज्जिनः शीत

ल ॥ १ ॥ सद्भक्त्या त्रिदशेश्वरैः कृतनुतिर्नानाविधगुणालंकृतिः सत्कल्याणसमद्युतिः शुभ
मतिः कल्याणकृत्सद्गतिः ॥ श्रीवत्सांकसमन्वितस्त्रिभुवनत्राणे गृहीतव्रतो भूयाद्भक्ति
भृतां सदेष्टवरदः श्रीशीतलस्तीर्थकृत् ॥ ३ ॥ अथ श्रेयांसजिनस्तुतिप्रारंभः ॥ हरिणी
छंद.॥ चिरपरिचिताऽगाढव्याप्ता सुबुद्धिपराङ्मुखी निजबलपरिस्फूर्त्योदग्रा समग्रतया
मम॥व्यपगतवती दूरं दुष्टा स्वनिष्टकृदृष्टिता अपचितसदा सद्योभूत्वा यदीयसुदृष्टितः १
निरुपमसुखश्रेणीहेतुर्निराकृतदुर्दशा शुचितरगुणग्रामावासो निसर्गमहोज्ज्वला। हृदय
कमले प्रादुर्भूता सुतत्त्वरुचिर्मम विदलितनवभ्रांतिर्यस्याप्यजस्रमनुस्मृते ॥ २॥उपकृ
तिमतिर्दाने दक्षो निरस्तजगद्व्यथः समुचितकृतिर्विज्ञानाद्यप्रकाशितसत्पथः ॥नृपगण
गुरोर्विष्णोर्वंशे प्रभाकरसन्निभः स भवतु मम श्रेयांसेन प्रबोधसमृद्धये॥३॥अथ वासुपू
ज्यस्तुतिप्रारंभः ॥ रथोद्धताछंद ॥ पूर्णचंद्रकमनीयदीधितिं भ्राजमानसुखमद्भुतश्रि
या॥शातदृष्टिमनिरामचेष्टितं शिष्टजंतुपरिवेष्टितं परं॥१॥नष्टदुष्टमतिनिर्थमीश्वरं संस्मर
न्निरिह भूरिनिर्भृनि॥क्षीणमोहसमयादनंतरा प्रापि सत्यपरमात्मरूपता ॥२॥ पार्थिवे
शवसुपूज्यवेश्मनि प्राप्तपुण्यजनुर्षं जगत्प्रभुं ॥वासुपूज्यपरमेष्ठिनं विशं के स्मरंति नहि
त विपश्चितः ॥३॥ अथ विमलजिनस्तुतिप्रारंभः ॥मंदाक्रांताछंदः॥संसारेस्मिन्महतिम
हिमामेयमानंदिरूपं त्वां सर्वज्ञं सकलसुकृतिश्रेणिससेव्यमानं॥ दृष्ट्वा सम्यग्विमलसद
सज्ज्ञानधाम प्रधानं संप्राप्तोहं प्रशमसुखदां संभृतानंदवीचिं॥१॥ येतु स्वामिन् कुमति
विहितस्फारसद्बोधमूढाः सौम्याकारां प्रतिकृतिमपि प्रेक्ष्यते विश्वपूज्या॥द्वेषोद्भूते कलु
षितमनोवृत्तयः स्युः प्रकामं मन्ये तेषां गतशुभदशा का गतिर्भाविनीति॥ २ ॥ श्यामा
सूनो प्रतिदिनमनुस्मृत्य विज्ञानिवाक्यं हित्वानार्यं कुमतिवचनं ये भुवि प्राणभाजः ॥पू
र्णानंदोल्लसितहृदयास्त्वां समाराधयंति श्लाघ्याचाराः प्रकृतिसुभगाः संति धन्यास्त एव
व॥३॥अथ अनंतस्तुतिप्रारंभः ॥ स्रग्विणीछंद ॥यस्य भव्यात्मनो दिव्यचेतोगृहे सर्वदा
ऽनंतचिंतामणिर्द्योतते॥याति दूरेस्वतस्तस्य दुष्टापदो विश्वविज्ञानवित्तं भवेदक्षयं॥१
यस्तु सर्वज्ञरूपं स्वरूपस्थितं वीक्ष्यसद्भावतः सिंहसेनात्मजं॥अद्भुतामोदसंदोहसंपूरि
तोमन्यतेधन्यमात्मीयनेत्रद्वयं ॥२॥ सोपवर्गानुगामिस्वभावोज्ज्वला व्यूढमिथ्यात्ववि
द्रावणे तत्परा बंधुरात्माऽनुभूतिप्रकाशोद्यतां शुद्धसम्यक्त्वसंपत्तिमालंबते ॥ ३ ॥ यु
ग्मं॥ अथ धर्मस्तुतिप्रारंभः ॥ कामक्रीडाछंद ॥ भास्वज्ज्ञानं शुद्धात्मानं धर्मेशानं स
द्ध्यानं शक्त्यायुक्तं दोषोन्मुक्तं तत्त्वासक्तं सद्भक्तः॥शश्वच्छांतं कीर्त्या कांतं ध्वस्तध्वांतं वि
श्रामं क्षिप्तावेगं सत्यादेशं श्रीधर्मेशं वदध्वं॥१॥नि शेषार्थप्रादुष्कर्ता सिद्धेर्भर्ता संसर्ता
दुर्भावानां दूरेहर्ता दीनोद्धर्ता सस्मर्ता॥सद्भक्तेभ्योमुक्तेर्दाता विश्वत्राता निर्वाता स्तुत्यो

नत्या वाचोयुत्या चेतोवृत्त्या ध्येयात्मा॥ २॥सम्यग्दृग्भिः साक्षात्दृष्टोमो ह्यस्पष्टो ना कृष्ट. स्त्रोतोग्रामै. संपज्ज्येष्ट· साधुश्रेष्ट· सत्प्रेष्ट ॥ श्रद्धायुक्तस्वांतैर्जुष्टो नित्यंतुष्टो निर्दुष्ट स्त्याज्यो नैवश्रीवज्रांको नष्टातको नि शंक ॥३॥ युग्म ॥ अथ शांतिजिनस्तुतिप्रारंभ.॥ द्रुतविलंबितछंद· ॥ विपुलनिर्मलकीर्त्तिभरान्वितो जयति निर्जरनाथनमस्कृत ॥ लघु विनिर्जितमोहधराधिपो जगति य. प्रभुशांतिजिनाधिप.॥१॥ विहितशांतसुधारसमज्ज नं निखिलदुर्जयदोपविवर्जित ॥ परमपुण्यवतां भजनीयतां गतमनंतगुणैः सहित सतां ॥२॥तमचिरात्मजमीशमनीश्वरं भविकपद्मविबोधदिनेश्वरं॥ महिमधाम भजामि जग त्रये वरमनुत्तरसिद्धिसमृद्धये॥ ३ ॥ त्रिभिर्विशेषकं ॥ अथ कुंथुजिनस्तुतिप्रारंभ ॥गी तपद्धतिमाह ॥ जयजय कुंथुजिनोत्तमसत्तम तत्वनिधान धर्मजनोज्वलमानसमानस हंससमान ॥ज्ञानाह्लादकमुख्यमहोद्धतकर्मविमुक्त विषमविपयपरिभोगविरक्त शुभाश ययुक्त॥१॥ जयजय विश्वजनीन मुनिव्रजमान्य विशुद्ध चेतन चारुचरित्रपवित्रितलोक विबुद्ध निरुपममेरुमहीधरधीर निरंतरमेव गर्वविवर्जितसर्वसुपर्वविनिर्मितसेव ॥ २ ॥ जयजय सूरनरेश्वर नंदनचंदनकल्प वासक विश्वविभावविनाशक वीतविकल्प॥ नि र्मलकेवलबोधविलोकितलोकालोक प्रादुर्भूतमहोदयनिर्वृतिनित्यविशोक ॥ ३ ॥ अ थारजिनस्तुतिप्रारम्भः ॥ रामगिरिरागेण गीयते ॥ दिव्यगुणधारकं भव्यजनतारकं दुरितमतिवारकं सुकृतिकांत ॥ जिनविषमसायकं सर्वसुखदायकं जगति जिननायकं परमशांत दि० ॥१॥स्वगुणपर्यायसंमीलत व्याहत विगतपरभावपरिणतिमखंडं॥ सर्व संयोगविस्तारपारंगत प्राप्तपरमात्मरूपं प्रचडं॥ २ ॥ दि० ॥ साधुदर्शनवृतं भाविकै प्रस्तुत ॥ प्रातिहार्याष्टकोभासमानं ॥ सततमुक्तिप्रदं सर्वदा पूजित॥शिवमपरसार्वभौ मप्रधानं ॥ ३ ॥ अथ मल्लिस्तुतिप्रारंभ· ॥ कुंभसमुद्भव संपदाकर सगुणवरहेममल्लिजि नोत्तम देव जयजय विश्वपते१ कृत्याकृत्यविवेकिता जिनसमुचिता हे त्वयि जागर्ति जि नेश ज०॥२॥नित्यानंदप्रकाशिका भ्रमनाशिका हे तव शुभदृष्टिरनीश ज०॥३॥शुद्धिनि बंधनसन्निधे सद्गुणनिधे हे वर्जितसर्वविकार ज० ॥ ४ ॥ निजनिरुपाधिकसंपदा शो भित सदा हे निर्मलधर्मधुरीण ॥ ५ ॥१९ ॥अथ मुनिसुव्रतस्तुति प्रारम्भ ॥अथान्या गेयपद्धति ॥ उत्तमचेतनधर्मसमृद्धजगत्पते॥ नित्यानित्यपदार्थनिचयविलसन्मते॥नि जविक्रमजितमोहमहोभटभूपते ॥ श्रीपद्मातनुजात सुजातहरिद्युते ॥१ ॥ श्रीमुनिसु त सुव्रतदेशक सज्जना· कृतसद्गुरुशुभवाक्यसुधारसमज्जनाः हे प्रणमंति भवतमनंतसु खाश्रितं ॥ केवलमुज्वलभावमखंडमनिंदितं ॥ २॥ तेनि.संशयमेव जगत्रयवंदिता ॥ सद्भावेन भवति सुहृद्यानंदिता॥कृत्यं स्वोचितमेव यतः किल कारणं॥जनयति नात्म

विरुद्धमिद्धासाधारण ॥ ३ ॥ अथ नमिजिनस्तुतिप्रारंभ ॥ पचचामरछंद ॥ नमीश निर्मलात्मभूप सत्स्वरूप शाश्वत पराद्धर्यसिद्धिसौधमूर्द्धिसत्स्वभावत स्थित ॥ विधाय मानसाब्जकोशदेशमध्यवर्त्तिन स्मरामि सर्वदा भवतमेव सर्वदर्शिन॥१॥प्रफुल्लकांवलाहन प्रभूततेजसो ध्य ते दिवाकरस्य वा महेश्वरानिदर्शनेन मे॥प्रमादवर्द्धिनी सुदुर्मतिर्निशेव दुर्भगा गता प्रणाशमाशु हत्कजे विनिद्रिता भवत् ॥ २ ॥ निरस्तदोषदुष्टकष्टकार्यमर्थ्यसस्तवो भवे भवे भवत्पदाबुजैकसेवक प्रभो ॥ भवेयमीदृश भृश मदीयचित्तचिंतित तव प्रसादतोभवत्ववध्यमेव सत्वरं॥३॥ अथ नेमिजिनस्तुतिप्रारंभ ॥ उपजातिछंद ॥ विशुद्धविज्ञानभृता वरेण शिवात्मजेन प्रशमाकरेण ॥ येन प्रयासेन विनेव कामं विजित्य विक्रांतवर प्रकाम ॥१॥ विहाय राज्यं चपलस्वभाव राजीमति राजकुमारिका च ॥ गत्वा सलीलं गिरिनारशैलं भेजे व्रतं केवलमुक्तियुक्तं ॥२॥ निशेषयोगीश्वरमौलिरत्नं जिनेंद्रियत्वे विहितप्रयत्नं॥ तमुत्तमानंदनिधानमेक नमामि नेमि विलसद्विवेक ॥३॥ अथ पार्श्वजिनस्तुतिप्रारंभ ॥ पचचामरछंद ॥ भयाम त जिन सदा मुदा प्रमादवर्जित स्वकीयवाग्विलासतोजितोरुमेघगर्जितम् ॥ जगत्प्रकामकामितप्रदानदक्षमक्षत पद दधानमुच्चकैरकेतवोपलक्षित ॥ १ ॥ सतामवद्यभेदकं प्रभूतसपदा पद वलक्षपक्षदक्षजापतीक्ष्णक्षणप्रद ॥ सदैव यस्य दर्शनं विशाविमेदितेनसा॥निर्हत्यशातजातमात्मभक्तिरक्तचेतसा ॥२॥ युग्म॥अवाप्य यत्प्रसादमादित पुरुश्रियो नरा भवति मुक्तिगामिनस्तत प्रभाप्रभास्वरा ॥ भजेयमाश्वसेनिदेवदेवमेवसस्पद तमुच्चमानसेन शुद्धबोधवृद्धिलाभदं ॥ ३ ॥ अथ वीरजिनस्तुतिप्रारंभ ॥ पृथ्वीछंद ॥ वरेण्यगुणवारिधि परमनिर्वृत सर्वदा समस्तकमलानिधि सुरनरेंद्रकोटिश्रित ॥ तथापि गुणवर्जितो विगतभावसौख्यो धन सुमुक्तजनसंगमस्त्वमसि वर्द्धमान प्रभो ॥ १ ॥ जिनेंद्र भवतोद्भुत मुखमुदारबिंबस्थित विकारपरिवर्जितं परमशातमुद्राकित ॥ निरीक्ष्य मुदितेक्षण क्षणमितोस्मि यद्भावना सदैव जगदीश्वरोद्भवत सैव मे सर्वदा ॥ २ ॥ विवेकिजिनवल्लभ समदुरात्मना दुर्लभ दुरतदुरितव्यथाभरनिवारणे तत्पर ॥ तवाग पदपद्मयोर्युगमनिंद्यवीरप्रभो प्रभूतसुखसिद्धये मम चिराय सपद्यता ॥३॥इत्थं चतुर्विंशतिसख्ययैव प्रसिद्धिभाजा वरतीर्थराजां॥श्रीजैनवाक्यानुसृतप्रबंधा वृत्तैरहीना प्रणुतिर्नवीना॥७५॥गणाधिपश्रीजिनलाभसूरिप्रभुप्रसादेनविनिर्मितेय ॥ जिनप्रणीतामृतधर्मसेविक्ष्मादिकल्याणबुधात्मबुध्यै॥ ७६॥युग्म॥यस्या प्रसादात्परिपूर्णभाव भूत सुनिर्विघ्नतया स्तवोय॥ जगत्त्रयीजतुहितैकनिष्ठा वाग्देवता सा जयतादजस्त्र ॥ ७७ ॥ इतिश्रीमच्चतुर्विंशतिजिनस्तुतिः समाप्ता ॥

॥ श्रीसर्वज्ञायनमोनमः ॥

अथश्री मुनिसुंदरसूरिकृत अध्यात्मकल्पद्रुमो बालावबोधसहितः प्रारभ्यते

॥ प्रथम अर्थकर्त्तानुं मंगलाचरण ॥

श्रीशंखेश्वरपार्श्वेशं प्रणताभीष्टदायकं ॥
प्रणमामि परमप्रेम्णा सर्वाभीप्सितसिद्धये॥ १ ॥
सर्वज्ञं सर्वभापाभिः सर्वसंसत्प्रबोधकं ॥
सर्वसत्वहितं वंदे वर्द्धमानजिनेश्वरं ॥ २ ॥
अध्यात्मकल्पद्रुमसंज्ञकस्य शास्त्रस्य संविज्ञहितावहस्य ॥
वार्त्ताभिरप्रौढमतिप्रतुष्टे बालावबोधा विदधे विरक्ति ॥ ३ ॥

हवेग्रंथनेआदि ग्रंथकार प्रथमस्थापनानुं सूत्रकहेछे

अथायंश्रीमान् शांतनामा रसाधिराजः सकलागमादि सुशास्त्रार्णवोपनिषद्भूतसुधारसायमान ऐहिकामुष्मिकानंतानंदसंदोहसाधनतया पारमार्थिकोपदेश्यतया सर्वरससारभूतत्वाच्च शांतरसभावनात्माध्यात्मकल्पद्रुमाभिधानग्रंथांतरग्रंथननिपुणेन पद्यसंदर्भेण भाव्यते ॥

अर्थ ॥ पूर्वेश्री मुनिसुंदरसूरिये त्रिदशतरंगिणी गुर्वावली प्रमुख ग्रंथकीधा ते वारपछी आग्रंथकीधो तेभणीइहां अथशब्दआण्यो तेमाटे अथकहेतां एटलाग्रंथकी अनंतर जेजेनशासननेविषे प्रत्यक्ष शांतनामाजे रसाधिराज रसजे १ शृंगार २ हास्य ३ करुणा ४ रौद्र ५ वीर ६ भयानक ७ बीभत्स ८ अद्भुत ९ शांत एनवमध्येअधिराजके० शिरोमणी तेहुं मुनिसुंदरसूरि पदके०काव्यतेहनो संदर्भजेरचना तेणेकरीने भाव्यतेके० विचारुंछुं एटलेपूर्वेमनमांधर्योछे तेकाव्यबंधे प्रगटकरीकहुंछुं के हेवोछेते रसाधिराज श्रीके० मोक्षरूपिणीलक्ष्मी तेछे फलजेहनुं एहवो वलीकेहेवोछे

आगमजे श्रीजिनेश्वरप्रणीत सिद्धांत तेआदेदेइने सकलजे सुशास्त्रकहेता धर्मशास्त्र तेरूपीउं अर्णवजे समुद्र तेहनुं उपनिपन्नूतके० सारजूत एहवो सुधारसायमानके० अमृतरसतुल्यछे हवेअन्यशृंगारादिक रसतजीने केवलशांतरसनेज शांवास्तेनावचु तेहनोहेतुकहेछे एकतोऐहिकामुष्मिकके० इहलोकसंबंधी अने आमुष्मिकके० परलोकसबंधी जेअनतआनदनो सदोहके० समूह तेनुंसाधनछे तेहेतुयेकरीने वलीबीजोहेतुकहेछे परमार्थिकजे मोक्षार्थी तेहनाजेजाणनार तेहनेउपदेशदेवायोग्यछेएटलेमोक्षार्थीनाउपदेशकजे तीर्थंकर गणधरादिक तेआशांतरसनोज उपदेशकरे तेणेकरीने वलीत्रीजोहेतुकहेछे जेआशांतरसते सर्वरसनेविषे सारजूतछे तेहेतुथकी हवे पद्यसंदर्नकहेवुंछे तेकेहेछे शांतरसजावनास्वरूप अध्यात्मकल्पद्रुम एहवेनामेजेग्रंथविशेष तेहनुं ग्रंथनजेरचना तेहेनेविषे निपुणछे मनइच्छित अध्यात्मज्ञान आपवाने कल्पवृक्षनीपेठेसमर्थ तेमाटेआग्रंथनुंनाम अध्यात्मकल्पद्रुम जाणवु

जयश्रीरांतरारीणां लेने येन प्रशांतित॥
तं श्रीवीरजिनं नत्वा रस शांतो विन्नाव्यते॥१॥

अर्थ ॥ हवेग्रंथनेआदें ग्रंथकर्त्ता मंगलाचरणकहेछे जेणेप्रशांतितके० उत्कृष्टशांतरसथी क्रोध मान माया लोन राग द्वेष ए छए अंतरंगशत्रुछे तेओनेजीतीने जयलक्ष्मीपामीछे एहवाते श्रीवीरजिनप्रते हुंमुनिसुंदरसूरि नमस्कारकरीने शांतनामाजे रस तेने नावुछुं एटले समुचितेष्टदेवताने नमस्कारलक्षण ग्रंथारंजेमंगलिककह्यु॥१॥

सर्वमंगलनिधौ हृदि यस्मिन् संगते निरुपमं सुखमेति॥
मुक्तिशर्म च वशीनवति ज्ञाक् त बुधा नजत शांतरसेऽं॥२॥

अर्थ ॥ हवेशांतरसनुं महात्म्यकहेछे बुधाके० हेविवेकीजनो तमे आ सर्वमांगल्यनुं निधान एहवोजे शांतनामारसाधिराज तेप्रतेनजो केमके एशांतरस जेनाहृदयमांआव्यो तेप्राणी अनुपम सर्वार्थसिध्यादिकनाजेसुख तेप्रतेपामें वलीजे हृदयमांआवेथके जेमोक्षसुखतेपण झाग्के० तत्काल थोडाकालमाज वशथाय ॥ २ ॥

समतैकलीनचित्तो ललनापत्यस्वदेहममतामुक् ॥ विषयकषायाद्यवशः शास्त्रगुणै र्दमितचेतस्कः ॥ ३ ॥ वैराग्यशुद्धधर्मो देवादिसतत्वविद्विरतिधारी॥ संवरवान् शुजवृत्तिः साम्यरहस्य नज शिवार्थिन् ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ हवे साम्योपदेशयोग पुरुपनाविशेपण द्वारेंकरीने ग्रंथकर्त्ता ग्रंथमध्येक हेवाना सोल द्वारकहेछे हेमोक्षार्थिपुरुपतुं साम्यरहस्यजे समतानुंसार तेप्रतेचज तेकहेवोयइनेनज जे एकतो समतासाथे लीनचित्तकरीने एटलेएपहेलुं द्वारपण कह्यु वली बीजुं ललनाजे स्त्रीनीममतामोचन द्वार त्रीजुं अपत्यजे पुत्रादिकसंततिनी ममतामोचन द्वार चोथुं स्वके० धननीममतामोचन द्वार पांचमुं देह तेहनीममतायेंर हितयको एटलेपांचमुं देहममतामोचन द्वार छठुं विपयजे शब्दादिकनोनिग्रहकरवो सातमुं कपायजे क्रोधादिक तेनोनिग्रहकरवो इहां आदिशब्दथी राग द्वेप प्रमादादि क तेहुने अवश्यके० आधीननहीं एहवोथकोरहे तथा शास्त्रजे जैनागम तेहना गुणजे हेयोपादेयादिक तेणेकरीने दम्युंछेचित्तजेणे एटलेशास्त्रगुणते आठमुं द्वार अनेचित्तदमननामे नवमुं द्वार वली वैरागेंकरीने शुद्धनिर्दोपछे धर्मजेहनुं एमांदस मुं वैराग्य द्वार अने इग्यारमुं शुद्धधर्मनामा द्वार तथा देवजेश्रीअरिहंत गुरुजेसु साधु अनेकेवलिप्रणीतधर्म एत्रण तत्वनो जाणथयीने एटले ए देवादिकस्वरूपनाज्ञा नतुं बारमुं द्वार तथा विरतिजे पंचाश्रवतुंविरमण तेहनुंधारकथको एतेरमुंविरति धारी नामा द्वार वली संवरजेसत्तावनभेदें आश्रवनिरोधरूप तेणेकरीसहित तेचउद मुं संवर द्वार अने शुभउत्तम वृत्तिके० आचरणाछेजेहनी एहवोथको तुसाम्यरहस्य नेभज एटलेइहा शुभवृत्तिनामापन्नरमुं द्वारथयुं अनेसोलमुं साम्यरहस्यनामा द्वार एग्रंथमाकहेवानासोल द्वारना नामबेश्लोकेकरीकह्या ॥ ३।४ ॥

इति पोडशाधिकारे शास्त्रोपदेशपदसंग्रहो यथा

चित्तबालक मात्याक्षी रजस्रं भावनौपधी. ॥
यत्त्वां दुर्ध्यानभूता न छलयंति छलान्विपः ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ हवेप्रथम समताना अधिकारंआश्री उपदेशकहेछे हेचित्तरूपीयाबाल क तु सदाय भावनाजे अनित्यादिकबार तथामैत्र्यादिकचार तेरूपणीऔपधीप्रतें छां मीसनही केमकेएभावनाने नछांमवाथी शोगुणथायछे तेकहेछे जेथकीताहराछलना जोनाराजे आर्त्तरौद्रादिदुर्ध्यान तेरूपीआ भूतपिशाचते तुजनेछलकरीशकशेनही॥५

यदिंद्रियार्थैः सकलैः सुखं स्यान्नरेंद्रचक्रित्रिदशाधिपानां ॥
तद्विंदवत्येव पुरोहि साम्यसुधांबुधेस्तेन तमाद्रियस्व ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ हवेएशुभभावना ते समताविना नहोय तेकहेछे सघला इंद्रियार्थजे शब्द रूप रस गंध अनेस्पर्श तेणेकरीने राजाचक्रवर्त्ती अनेत्रिदशाधिपकहेतां इंद्र

तेहनेजेसुखहोय तेसर्वेसुख समतारूपीछुंजे सुधांबुधिकहेतां अमृतसमुद्रछे तेआ गल बिंदुबराबरदेखाय एटलेसंसारिकसुख सघलुंमलीने बिंदुतुल्यछे अनेसमतानुं सुखछेते समुद्रतुल्यछे तेमाटेमोक्षार्थिजीवते समतारूपीआ सुधासमुद्रनेआदरे॥६॥

अदृष्टवैचित्र्यवशाज्जगज्जने विचित्रकर्माशयवाग्विसंस्थुले ॥
उदासवृत्तिस्थितचित्तवृत्तयः सुखं भजते यतय· क्षतार्त्तयः॥ ७ ॥

अर्थ ॥ हवेसमताआदरवानुं फलकहेछे जगतजे त्रिभुवनतेमा जनजे देवमनु ष्यादि तेमध्येयतीजेनिर्ग्रंथ तेजसुखीयाछे तेजगतजनकहेवाछे तेकहेछे अदृष्टजेपूर्वक्रु तकर्म तेहनुविचित्रजे नानारूपपणुं तेहनावशथकी नानाविधकर्मना विपाकथी सं सारीजीवना मननोअभिप्राय तथावचन अनेकायानीचेष्टापण नानाविधछे तेणेकरी व्याकुलछे हवेयतीकहेवाछे उदासवृत्तिजे लाभालाभ सुखदुःख अने प्रियअप्रिय तेने विषेसमानवृत्तिछे तथाजेनी चित्तवृत्ति स्थिरतरहीछे वलीजेनीसर्वेचिंता क्षयपामीछे॥७

विश्वजंतुषु यदि क्षणमेकं साम्यतो भजसि मानस मैत्रीं ॥
तत्सुखं परममत्र परत्राप्यश्नुषे न यदभूत्तव जातु॥ ८ ॥

अर्थ ॥ वलीसमतानुं विशेषफलकहेछे हेचित्त जोतु समतायेकरीने सर्वजीवने विषे एकक्षणमात्रपण मैत्रिता चिन्तवेतो तु पूर्वेसंसारमांभ्रमणकरता कोइवखतपा म्योनथी एवा इहलोक अने परलोकमापण परमउत्कृष्टसुखप्रतेंपामें ॥ ८ ॥

न यस्य मित्रं न च कोपि शत्रु र्निज· परो वापि न कश्चनास्ते ॥
न चेंद्रियार्थेषु रमेत चेत· कषायमुक्तं परम· स योगी ॥ ९ ॥

अर्थ ॥ हवेएसमताने योग्यजीवकोणहोय तेकहेछे जेहनेकोइमित्रनथी तथा कोइशत्रुपणनथी तेमजजेहने पोतानु तथापारकुंकाइनथी वलीजेहनुं चित्त कषाय रहितथको इंद्रियार्थजे शब्दादिविषय तेनेविषे रमेनही तेप्राणीपरमयोगवतहोय एटले ते समतावतजाणवो ॥ ९ ॥

भजस्व मैत्रीं जगदंगिराशिषु प्रमोदमात्मन् गुणिषु त्वशेषत ॥
भवार्तिदीनेषु कृपारसं सदाऽप्युदासवृत्तिं खलु निर्गुणेष्वपि ॥१०॥

अर्थ ॥ हवेसमताआव्याना कारणउपदेशेछे हेजीव जगतना अंगीके० जेजीवते हनीराशिकहेतां समूहनेविषे एटलेसामान्यथकीसर्वजीवनेविषे मैत्रिताप्रत्यें भजस्वके० आदरीने वलीसमस्तप्रकारे जेकोइ ज्ञानादिकगुणयुक्तहोय तेहनेविषे प्रमोदप्रत्येंभजि

अनुमोदनाकर तथाजवके० संसारनी आर्त्तिजेपीडा तेणेकरीदीनके० दुखितप्राणिने विषेकृपारसप्रतेंजज वली निश्चेंनिर्गुण प्राणीनेविषेपण उदासदृत्तिप्रतेजज ॥१०॥

मैत्री परस्मिन् हितधीः समग्रे भवेत्प्रमोदो गुणपक्षपातः ॥
कृपा भवार्त्ते प्रतिकर्त्तुमीहोपेक्षा च माध्यस्थ्यमवार्यदोषे ॥११॥

अर्थ ॥ हवेएमैत्र्यादि चारेभावनानुं स्वरूपकहेछे समस्तपोताथी व्यतिरिक्तजेबीजाजीव तेनेविषेजे हितचिंतववानीबुद्धि तेनेमैत्रीकहिये तथागुणीजे ज्ञानादिकगुणवत तेहनोपक्षपातजे प्रशंसा तेहनेप्रमोदकहिये तथाभवार्थिजे जन्ममरणादिक संसारनादुःख प्रतिकारकरवानीवांछा कोइअज्ञानीजीवने पापथकीनिवर्त्ताववानेअर्थे प्रतिबोधदेवो तेनेकृपाकहिये जेमश्रीवीरस्वामीयें शूलपाणीयक्ष चंमकोशिकसर्पप्रतें अपराधउपरपण कृपाकीधी वलीजेप्राणीअवार्यदोषकहेता वारतांथकापण दोपनेन छांमे तथावारवायोग्यपणनहोय एहवोदोषवंत जेपुरुष तेनेविषे मध्यमभावें रागद्वेषरहितपणे समभावेंरहेवुं तेउपेक्षाभावनाकहियें ॥ ११ ॥

तथाचोक्तं तुर्यषोडशके॥परहितचिंता मैत्री परदुःखनिवारिणी तथा करुणा ॥ परसुखतुष्टिर्मुदिता परदोषोपेक्षणमुपेक्षा ॥ १२ ॥

अर्थ ॥ तेमजवलीकह्युंछे श्रीहरिभद्रसूरिये चोथाषोडशकमध्ये जे परनेहितचिंतववुंतेमैत्री तथापरनादुःखने निवारणकरवानीभावना तेकरुणा अनेपरनुंसुखजे समतादिरूप तेदेखीने संतोषपामवो ते मुदिताके० प्रमोदभावना कहिये अने परनादोष देखी उवेखवुं उदास रहेवुं तेनेउपेक्षाभावना कहियें ॥ १२ ॥

तथाच योगशास्त्रे ॥ माकार्षीत्कोपि पापानि मा चाभूत्कोपि दुःखितः ॥ मुच्यतां जगदप्येषां मतिर्मैत्री निगद्यते ॥ १३ ॥

अर्थ ॥ वलीयोगशास्त्रमध्येपण श्रीहेमचंदसूरियेकह्युंछे के कोइपापमकरो कोइ दुःखीथाओमा तथाजगतसर्वे कर्मथीमुकाओ एवीजेमतितेने मैत्रीकहिये ॥ १३ ॥

अपास्ताशेषदोषाणां वस्तुतत्वावलोकिनां ॥ गुणेषु पक्षपातो यः स प्रमोदः प्रकीर्तितः ॥ १४ ॥

अर्थ ॥ सकलदोषरहित तथा वस्तुतत्वजे स्वभाव अने परभाव तथा द्रव्य गुण पर्यायनाजाण एवाजेगुणवत तथाउपलक्षणथकी सामान्यपणेपण जेगुणवतहोय तेहना गुणनेविषे जेपक्षपात तेनेप्रमोदभावनाकहिये ॥ १४ ॥

दीनेष्वार्त्तेषु भीतेषु याचमानेषु जीवितं ॥ प्रती
कारपरा बुद्धि: कारुण्यमभिधीयते ॥ १५ ॥

अर्थ ॥ वलीदीन असमर्थ अनेआर्त्तपीडावत तथा भयेंकरी आकुल अनेजी वितव्यनेयाचतां एवाप्राणिनेविषेजे प्रतिकारकहेता दुःख निवारवानीबुद्धि राखवी तेने कारुण्यके० करुणाभावना कहियें ॥ १५ ॥

क्रूरकर्मसु निःशंकं देवतागुरुनिंदिषु ॥ आ
त्मशंसिषु योपेक्षा तन्माध्यस्थ्यमुदीरितं ॥१६॥

अर्थ ॥ तथा शंकारहित क्रूरकर्मनाकरनार अने देवगुरुनानिंदक पोतानीप्रशं सानाकरनार एवाअधमपुरुषनेविषेजे उपेक्षा तेमध्यस्थभावनाकहिये ॥ १६ ॥

चेतनेतरगतेष्वखिलेषु स्पर्शरूपरवगंधरसेषु साम्यमे ॥
ति यदा तव चेत: पाणिगं शिवसुखं हि तदात्मन् ॥१७ ॥

अर्थ ॥ हवेवली मूलसूत्रकार समताआदरवाथी मोक्षनी सुलभताकहेछे हेआ त्मन् जेवारे ताहारुंचित्त अखिलके० समग्रचेतनजे अनुक्रमें स्त्री देह स्त्रीकटाक्ष कोकिलनाद कस्तुरी पशुमांसप्रमुख तथाइतरजे अचेतनपदार्थ अनुक्रमें शय्या आभरणघरेणादिक कर्पूर वीणा शर्कराप्रमुख तेसबंधी जेस्पर्श रूप रवके०श ब्द गध रस तेहनेविषेतु साम्यताके० इष्टानिष्टनेविषे समवृत्तिप्रतेंपामशे तेवारेज नि श्चेकरीने मुक्तिसुखतें ताहरेहस्तगतथाशे ॥ १७ ॥

के गुणास्तव यत: स्तुतिमिच्छस्यद्भुत किमकृथा मदवान् यत् ॥
कैर्गता नरकभी: सुकृतैस्ते किं जित पितृपतिर्यदचित ॥ १८ ॥

अर्थ ॥ हवेआत्माजे स्तुतिनेवांछेछे तेनोमदनिवारवाने कहेछे हेआत्माऔदार्य धै र्य गाम्भीर्य दान शील तप भावना उपशमादिक जेगुणछे तेमाहेलाताहरामां क्यागुण छे केजेहने माटेतु स्तुतिकहेता लोकनामुखें पोतानीप्रशंसा करावववाछेछे तथावली तेंशुंसाधुआश्रीने राज्यादिमहर्द्धिकनेप्रतिबोध अथवासर्वशास्त्रप्रवीणता उग्रतप युगप्रधानपणु इत्यादिक अथवाश्रावकआश्रीने जीर्णोद्धार बिंबप्रतिष्ठा संघपतिपणुं अमारपडह इत्यादिक अद्भुतके० आश्चर्यकारी कार्यक्याकीधा केजेनाथी तूं मद वतथायछे तथा कयासुकृतेकरी ताहारीनरकनीबीकगइ अथवापितृपतिजे यम तेछु

तेजिल्यो जेमाटेतुअचितकहेतां निश्चितथकोरहेछे. एटले स्तुतिनीवांछा मदकरवो अने निश्चितरहेवु ए तने युक्तनथी ॥ १७ ॥

गुणस्तवैर्यो गुणिनां परेषा माक्रोशनिंदादिभिरात्मनश्च ॥
मनः समं शीलति मोदतेवा खिद्येत च व्यत्ययतः स वेत्ता॥१८॥

अर्थ ॥ हवेजेवेत्तापणुते शांतरसनुंकारणछे एमकहेछे जेप्राणी परके० अन्यजेगुणवतपुरुषहोय तेनागुणस्तवजे गुणवर्णन अनेआत्मनःकहेतां पोतानाआक्रोशजे गालप्रमुख तथानिंदादिक सांभलीने पोतानुंमन समपरिणामेराखे पण अमर्षधरेनही वलटो मोदतेकहेतां हर्षपामे अनेएमविचारेजे गुणवतना गुणस्तववाजबछे तथा हेआत्मातुं निर्गुणछो माटे निंदानेजयोग्यछो एमप्रमोदधरे तथाव्यत्ययकहेतां उपरकह्याथीविपरीतजे बीजागुणवतपुरुषना आक्रोशके० निंदासांभलीअनेपोतानी प्रशंसादिकसांभलीने खेदपामे जेएएवागुणवतपुरुषनी निंदाकांकरेछे तथामाहारामां तोगुणनथी तेमछतांएशुंकहेछे एमचितवे तेहनेवेत्ताके० ज्ञानीकहिये ॥ १८ ॥

न वेत्सि शत्रून् सुहृदश्च नैव हिताहिते स्वं न परं च जंतो. ॥ दुः
खं द्विषन् वांछसि शर्मचैत न्निदानमूढः कथमाप्स्यसीष्टं॥२०॥

अर्थ ॥हवेयथार्थेने नहीजाणनारजीवनुं मूढपणुंकहेछे हेजीव तुंशत्रूजेरागादिक तथामित्रजेउपशमादिक तेहनेनथीजाणतो तथाहितजेसंवरादिक अने अहितजेआश्रवादिक तथावलीस्वभावजे ज्ञानदर्शनादिक अनेपरभावजे मिथ्यात्वरागादिक तेहने नथीओलखतो वली दुःखजेपरिसहादिक तेहथीउभग्योछे अनेशर्मजे इहलोकतथा परलोकादिकनुंसुख तेनेवाछेछे तेवारे तु एसुखनुं निदानजे कारण तेहनुं तो मूढके० अजाणछो तेमछतां शीरीतेंवांछित पदार्थप्रतेंपामीश एटलेसुखनुंमूल निदानते संयमछे तेविनाइष्टसुखनी प्राप्तिनथाय ॥ २० ॥

कृती हि सर्व परिणामरम्यं विचार्य गृह्णाति चिरस्थितीह ॥
भवांतरेऽनंतसुखाप्तये तदात्मन्किमाचारमिमं जहासि ॥ २१॥

अर्थ ॥ हवेजाणपणानुं फलदेखाडीने उपदेशछे कृतीजेमाह्योपुरुषहोय तेतोसर्ववस्तुमांजे वस्तुपरिणामेरम्य तथासुखदाइहोय अनेचिरस्थितिकहेतां घणोकालरहे एवुंविचारकरीने तेवस्तुनेतेग्रहणकरे तोहेआत्मा भवांतरेअनंतसुख आपवाने समर्थ एवाजेज्ञानादिक चारपदार्थ तेनेतुंकेमत्यजेछे एचारेंवस्तुपरिणामेरम्यछे अने चिरस्थितिछे एटलेघणाकालसुधी रहेएवीछे माटेतेतुजनेत्यजवीघटेनही ॥ २१ ॥

निज· परो वेति कृतो विभागो रागादिभिस्ते त्वरय स्तवात्मन् ॥
चतुर्गतिक्लेशविधानतस्त त्प्रमाणयन्नस्यरिनिर्मित· किं ॥ २२ ॥

अर्थ ॥ हवेआत्मा रागादिकने वशथको पोतानुंअने पारकुंलेखेछे तेआश्रीउपदे शेछे हेआत्मा निजकहेता स्वजन कलत्र पुत्रादिक अथवा परजेशत्रुप्रमुख एवोवि भागजे भेदकरीजाणवो तेभेदसर्वेरागादिकनुं करेलुंछे माटेताहरे जेप्राणीसाथे राग छे तेहनेतु स्वजनकरीजाणेछे अनेजेनाथीद्वेषछे तेनेशत्रुकरीजाणेछे पणतेरागादिक तो चारगतिनाक्लेश कष्टनाकरनार ताराशत्रुछे तोअरिनिर्मितके० तेशत्रुनुंजनीपजा व्युं जेभेद तेने शुंप्रमाणकरेछे एटलेरागद्वेषनावशथी निजपराविभागकरवुतेजूठोछे

अनादिरात्मा न निज· परो वा कस्यापि कश्चिन्न रिपु सुहृद्वा ॥
स्थिरा न देहाकृतयोणवश्च तथापि साम्य किमुपैपि नेपु ॥ २३ ॥

अर्थ ॥ हवेसर्ववस्तुनी अनित्यतादेखाडी आत्मानेसमतानी प्रेरणाकरेछे हेआ त्मा तुंआदिरहितछो अनेकोइनेकोइ पोतानुं तथापारकुनथी वलीकोइनोकोइशत्रु अ नेमित्रपणनथी वलीहेआत्मन् देहजेपुरुष स्त्रीआदिकनुंशरीर तेआकारेंपरिणाम्या एवाअणुकहेतां पुद्गल तेपणस्थिरनथी केमके क्षणक्षणप्रत्यें उपचयके० शुभअशु भादिक अवस्थापामेछे तेमछता हेआत्मा आदेहाकारजे पुद्गलतेनेविषे तुंकेम सा म्यताकहेता रागद्वेषरहिततापणु नथीपामतो हेआत्मा तुतोअनादीछे अनेएदेहाकृती तो अस्थिरछे माटेसमतानेआदर ॥ २३ ॥

यथा विदां लेप्यमया न तत्वा त्सुखाय मातापितृपुत्रदारा· ॥
तथा परेपीह विशीर्णतत्तदा कारमेतद्धि समं समग्र ॥ २४ ॥

अर्थ ॥ वलीएजअर्थ दृढकरेछे आसंसारमाजेम लेपमयकहेता चित्रादिलिखित जे माता पिता पुत्र दारा कलत्रहोय ते तत्वथकी विचारीजोतां विवेकीपुरुषने सुखदाइ नहोय एटलेतेहने देखीविवेकीसुखमानेनही तेम अपरेके० बीजापणजे साक्षातदृश्य मान माता पिता पुत्र कलत्रादिक तेपणतत्वथकी विवेकीने सुखदाइनथाय केम के तेना तेतेआकारनाशथकी ते लिप्यमय जेचित्रितपुतला तथाप्रत्यक्षदृश्यमानजे मातापितादिक तेसर्वसरखाथाय माटेतेनेविषे ममत्वकरवु तेमिथ्याछे ॥ २४ ॥

जानंति कामान्निखिला· ससंज्ञा अर्थं नराः कर्म च केपि धर्मं ॥
जैनं च केचिद्-गुरुदेवशुद्धं केचित् शिवं केपि च केपि साम्यं ॥ २५ ॥

अर्थ ॥ हवेसमताना धरनारप्राणिथोडाहोय तेकहेछे संसारमां समग्रसंज्ञाधारक जीवमात्र तेकामकहेतां शब्दादिकविषयजाणेछे एटले कामनाअर्थी सर्वेजीवछे तेसर्वेमनुष्य अर्थकहेतां धनउपार्जन तथाकर्मकहेतांकाम एवेपदार्थजाणेछे केमके मनुष्यना कामभोगते धननेआधीनछे तेमांवलीकोइकमनुष्यते सामान्यथकी मिथ्यादृष्ट्यादिक धर्मनेजाणेछे वलीतेमांपणकोऽकज जैनधर्मनेजाणेछे वलीतेमापण कोऽकविरलाज शुद्ध अष्टादशदोषरहितदेव तथागुरु सुविहितसुसाधु एवोजैनधर्मजाणेछे वलीतेमापण शिवजेमोक्षार्थ तेहनेतोकोइकज जाणेछे वलीतेमापणसमताना जाणतो कोइकविरलाजछे एटले ए सर्वथीअधिक तेसमताना जाणनेकह्यो ॥ २५॥

स्निह्यंति तावद्धि निजानिजेषु पश्यंति यावन्निजमर्थमेभ्यः ॥
इमां भवेऽत्रापि समीक्ष्य रीतिं स्वार्थे न कः प्रेत्य हिते यतेत ॥२६॥

अर्थ ॥ हवेस्वजनना संबंधते केवलस्वार्थनिष्टितछे तेदेखाडेछे निश्चयथी निजके० पोतानास्त्रीपुत्रादिकतेसहु निजके० पोताना पतितादिक स्वजननेविषेतिहां लगें स्नेह धरे जिहां लगें ते स्वजनथी पोतानुंअर्थ जे भरण पोषणादिक थतुंदेखे तिहांलगें स्नेह धरेछे एम प्रत्यक्षआभवनेविषेपण स्वजनादिकनी एरीतछे तेजोइने प्रेत्यके० परलोकनेविषे हितकारी एवोस्वार्थजे अत्मार्थ संयमादिक तेहनेविषे कोणउद्यमनकरे॥२६॥

स्वप्नेन्द्रजालादिषु यद्वदाप्तैः रोषश्च तोषश्च मुदा पदार्थैः ॥
तथा भवेऽस्मिन् विषये· समस्तैरेवं विभाव्यात्मलयेऽवधेहि॥२७॥

अर्थ ॥ हवेजेरागद्वेषधरवो तेफोगटछे एमदेखाडेछे जेमस्वप्न तथाइन्द्रजालादिक विषे पाम्याजे अशुभ तथा शुभपदार्थ तेणेकरीने रोषकहेताद्वेष अने तोषकहेता हर्षकरवो ते मुधाके० निरर्थकछे एटले जेमस्वप्न इंद्रजालादिकना पदार्थोथी अर्थसिद्धिकाइनथी तेमभवमापण अशुभतथा शुभविषयेकरीने रोषअनेतोषकरवो तेमुधाछे एमविचारीने हेआत्मातु आत्मसमाधिनेविषे अवधेहिके० सावधानरहे ॥ २७ ॥

एष मे जनयिता जननीयं बंधवः पुनरिमे स्वजनाश्च ॥
द्रव्यमेतदिति जातममत्वो नैव पश्यसि कृतांतवशत्वं॥२८॥
नोधनैः परिजनैः स्वजनैर्वा दैवतैः परिचितैरपि मंत्रैः ॥
रक्ष्यतेऽत्र खलु कोपि कृतांतान्नो विभावयसि मूढ किमेवं॥२९॥

अर्थ ॥ हवेबेकाव्यमां जीवने मृत्युनुं आधीनपणुं देखाडेछे हेआत्मा आमाह

रोपिता आमाहरीमाता आस्वजन आइव्य एम ममत्वमां मग्नथयोथकोतु स्वकहे तापोतेज यमनेवशपडयुं नथीदेखतोबतो ॥ २८ ॥ तोहेमूढ एसंसारनेविषे निश्च येकरीने धनतथापरिजन सेवकादिक तथा स्वजन पुत्र कलत्रादिक बलिदेवता त था परिचितकहेता विधिथीउपार्ज्या जेमत्रतेएसर्वमलीनेपण कृतांतजेमृत्यु तेथी कोइप्राणीरखायनही एवुहेमूर्खतु केमविचारतोनथी ॥ २९ ॥

तैर्भवेपि यदहो सुखमिछ स्तस्य साधनतया प्रतिभाते. ॥ मुह्य सि प्रतिकलं विषयेषु प्रीतिमेषि न तु साम्यसतत्वे ॥ ३० ॥

अर्थ ॥ अहोआत्मा जेमाटेतुसंसारमापण तेपूर्वोक्तजेधनादिक तेणेकरीने सु खवाछतो छतो समयसमयविषे विषयमा मोहपामेछे पणतेधनादिक कहेवाछे तेतुज नेसुख साधन तयाके० कारणपणे प्रतिभास्याछे पणतेधनादिक तोसुखनाकार णनथी मात्रतने एमभास्याछे जे ए सुखनासाधनछे तेथी तु समताना सतत्वस्वरू पनेविषे प्रीतिनथीपामतु ॥ ३० ॥

अर्थतोयुग्मं ॥ किं कषाय कलुषं कुरुषे स्व केषु चित्तनु मनोरिधि याऽत्मन् ॥ तेपि ते हि जनकादिकरूपैरिष्टतां दधुरनतभवेषु ॥ ३१ ॥

अर्थ ॥ हवेस्वजनादिकनुं अनेकातिरूपणु देखाडेछे निश्चयथकी हेआत्मा कोइ कप्राणीनेविषे अरिधियाकहेता एमाहाराशत्रुछे एवीबुद्धिकरी पोतानुंमन कषायेकरीक लुषितथुंकरेछे केमके तेप्राणीपण ताहरा पिता मातादिकस्वरूपेंकरीने अनंता भवमा अनंतासगपणोने धरताहवा तेमाटेतेओने केवल शत्रुकरीजाणवु तेमिथ्याछे ॥ ३१ ॥

यांश्च शोचसि गता किमिमेमे स्नेहला इति धिया विधुरात्मा ॥ तैर्भवेषु निहतस्त्वमनंतेष्वेव तेपि निहता भवता च ॥ ३२ ॥

अर्थ ॥ हवे जे स्वजनछे तेजशत्रुछे एवुदेखाडेछे हेआत्मातु एमाहारो स्नेहवत स्वजन किहागयो एवीबुद्धिये विधुरात्माके० दुखेव्याकुलथको मुवागयाजेस्वज नादिक तेप्रत्येशोचेछे एमजेहनो शोककरेछे तेजस्वजनादिके तुजनेअनंताभवनेवि षेहण्योछे वलीतेपण तेहनेअनंताभवनेविषे हण्याछे तेटलामाटे स्वजनबुद्धियेजे स्ने हराखवु तेपणमिथ्याछे ॥ ३२ ॥

त्रातु न शक्या भवदुखतो ये त्वया न ये त्वामपि पातुमीशा ॥ ममत्वमेतेषु दधत् मुधात्मन् पदेपदे किं शुचमेषि मूढ ॥ ३३ ॥

अर्थ ॥ हवेकोइकोइने राखवासमर्थनथी एवुंदेखाडेछे जवके० संसारनाडुःखथकी जेप्राणीने तुं राखीशक्योनही अनेतेपण जवडुःखथीतुजने राखीशक्यानही तो जेजवडुःखथी राखवानेसमर्थनथी तेवारेहेमूर्खआत्मा स्वजनादिकनेविषे मुधाके०फोकटममत्वकरतोथको पगेपगेशुंशोकपामेछे माटेशोकतजीने समतानेभज ॥ ३३ ॥

सचेतनाः पुद्गलपिंडजीवा अर्थाः परे चाणुमयाः द्वयेपि ॥
दधत्यनंतान् परिणामभावान् तत्तेषु कस्त्वर्हति रागरोषौ॥३४॥

अर्थ ॥ हवेजीवना पुद्गलसाथे नानाविध परिणामछे तेकहेछे पुद्गलपिंडके० पुद्गलनो समूहजेदेहलक्षण तेहनेआश्रीनेरह्या एवाजे सचेतनके० चेतनाधारक सर्व जीव अथवा अणुमयाके० पुद्गलमयजे बीजा अचेतन अर्थके० पदार्थ एटलेशरीरधारकजीव अने पुद्गल एबेपण अनंतागमे परिणामभावके० पर्यायप्रत्येधरेछे तोते जीवअनेपुद्गलनेविषे रागअनेरोषकरवाने कोणयोग्य थाय निपुणपुरुषें तेउपर राग रोषकरवो युक्तनथी॥३४॥ इतिश्रीअध्यात्मकल्पद्रुमे साम्योपदेशाख्य प्रथमोधिकार,

---

अथस्त्रिय॰॥ मुह्यसि प्रणयचारुगिरासु प्रीतितः प्रणयिनीषु कृतिन्
किं॥ किं न वेत्सि पततां भववार्धौ तान्नृणां खलु शिलागलबद्धा॥१॥
चर्म्मास्थिमज्जांत्रवसास्त्रमांसामेध्याद्यशुच्यस्थिरपुद्गलानां ॥ स्त्री
देहपिंडाकृतिसंस्थितेषु स्कंधेषु किं पश्यसि रम्यमात्मन् ॥ २ ॥

अर्थ ॥ हवेबीजाअधिकारमां स्त्रीओनोममत्व त्यजवाआश्री उपदेशआपेछे हेकृतिन् प्रणयचारुके० स्नेहेकरीमनोहरछे गिराके० वाणीजेहनी एहवी प्रणयिनीके० स्त्री ओनेविषें प्रेमेकरीने शुंमोहपामेछे पण एमकानथीजाणतोजे भववार्धौके० संसारसमुद्रमां पडतापुरुषनागलामां स्त्रीओते शिलाउबांधेछे ॥ १ ॥ हवेएस्त्रीओना शरीरनुं अपवित्रपणुंकहेछे हेआत्मन् चामडी हाड चरबी आंत्रमां पांसली मेद रुधिर मांस विष्टा तथा आदिशब्दथी मूत्र कफ श्लेष्मादिक एहवाअपवित्र अने अस्थिरके० क्षणविनाशिक जे पुद्गल तेहना स्कंधके० समूहथी बन्यो जेस्त्रीनुंशरीर तेहनी पिंडाकृतिके० सांइ सुघटआकार तेरूपेसंस्थितरह्याछे तेमां शुंतुमनोहरपणुंदेखेछे एटलेएसर्वे अपवित्र अस्थिरपुद्गलनो पिंडछे तेमांकांइसारनथी ॥ २ ॥

विलोक्य दूरस्थममेध्यमल्पं जुगुप्ससे मोटितनासिकस्त्वं ॥
भृतेषु तेनैव विमूढयोषावपुष्षु तत्किं कुरुषेऽभिलाषं ॥ ३ ॥

अर्थ ॥ वलीतेहिजकहेछे हेआत्मन् अल्पके० थोडुकपण अमेध्यके० विष्टादि कदेखीने मोटित्तनासिकाके० नाकमचकोडीनेतुं जुगुप्ससेके० डुगञ्चाकरेछे तोहे मूर्ख विष्टादिकेजनर्या एहवाजे स्त्रिओनाशरीर तेहनेविषे सुं अभिलापकरेछे ॥ ३ ॥

अमेध्यमांसास्रवसात्मकानि नारीशरीराणि निषेवमाणाः ॥

इहाप्यपत्यद्रविणादिचितातापान् परत्रेप्रतिदुर्गतीश्च॥ ४ ॥

अर्थ ॥ हवेएस्त्रीओनाशरीरते इहलोके अने परलोकेपण दुःखदायीछे तेकहेछे अमेध्यजे विष्टादिक ते मांस रुधिर मेद तेथीजबनेला तन्मय एहवाजे स्त्रीओनाश रीर तेहने सेवनाराजेपुरुष तेइहलोकेपण अपत्यके० संतानपुत्रादिक तथा द्रविण के० धनइत्यादिकनी चितानासतापप्रतें पामेछे अने परलोकेपण दुर्गतिप्रतेंपामेछे४

अंगेषु येषु परिमुह्यसि कामिनीनां चेतः प्रसीद विश

च क्षणमंतरेषा ॥ सम्यक् समीक्ष्य विरमाशुचिपिंडके

भ्यस्तेभ्यश्च शुच्यशुचिवस्तुविचारमिच्छत् ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ वलीस्त्रीनादेहनी अपवित्रताकहेछे चित्तनीप्रसन्नतायेंकरीनेजे स्त्रीओनाअं गनेविषे मोहपामेछे तेहनेकहियेंछेये जे तु तेमाएकक्षणमात्र प्रवेशकरी एटलेसूक्ष्मद्द ष्टीयेंकरी तेहतुंसम्यक्प्रकारे स्वरूपविचारीने पवित्र अने अपवित्र एबेवस्तुनावि चारने वांछतुथको होयतो जेजे स्त्रीनाअंगछे तेतेसर्वे अपवित्रतानाज पिंडके० ढग लाछे तेहथीतु विरमके० रागत्यजीने अलगोरहे ॥ ५ ॥

विमुह्यसि स्मेरदृशः सुमुख्या मुखेक्षणादीन्यभिवीक्षमाणः ॥

समीक्षसे नो नरकेषु तेषु मोहोद्भवा भाविकदर्थनास्ताः ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ हवेस्त्रीनाअंगनिरीक्षण तथाजोगनुंफलकहेछे हेआत्मातु सुं सुखीके०च द्रमुखी तथास्मेरके०विकसितछेनेत्रजेहना एहवीस्त्रीओनामुख तथाईक्षणजेनेत्र आ दिशब्दथी स्तन जघादिक तेहनाउपर सरागपणेजोतोथको मोहपामेछे पणजे महादुःखमयनरक तेहनेविषे तथाविध मोहथकी उपनीओ एहवी भाविके० आ गामिककदर्थनाजे महापीडाओ तेप्रतेंतुकेमविचारत्तोनथी ॥ ६ ॥

अमेध्यभस्त्राबहुरंध्रनिर्यन्मलाविलोद्यत्क्रिमिजालकीर्णा ॥

चापल्यमायानृतवंचिका स्त्री संस्कारमोहान्नरकाय भुक्ता॥७॥

अर्थ ॥ वलीतेहिजकहेछे विष्टादिकेभरीथकी भस्त्राके० धमणीसरिखी तथाघ

णारंभजे वारेद्वार तेह्थीनिकलता मलके० विष्टामूत्रश्लेष्मादिक तेणेकरी आविलके० मलिन तथा उद्यतके० उपजता कृमिजे योनीमाह्ला सूक्ष्मजीव तेह्ना जालके० समूह तेणेकरी कीर्णके० व्याप्त वली चपलपणुं तथा कपटाइपणुं अने अनृतके० असत्यवचन तेणेकरी वंचिकाके० पुरुषनेठगनारी एहवीजेस्त्री तेसंस्कार जे जन्मांतरनोसंबंध तेह्नावशथकी अथवा संस्कारजे स्नान तिलक आजरणादिक तेह्थी उपनोजेमोह तेह्नावशेकरी जोगवीथकी नरकायके०नरकनीदेवावालीथाय ७

निर्भूमिर्विषकंदली गतदरी व्याघ्री निराव्हो महाव्या
धिर्मृत्युरकारणश्च ललनाऽनभ्रा च वज्राशनिः ॥ बधु
स्नेहविघातसाहसमृषावादादिसंतापभू: प्रत्यक्षापि च
राक्षसीति विरुदैः ख्याताऽऽगमे त्यज्यतां ॥ ८ ॥

अर्थ ॥ वलीपणस्त्रीनुंज त्यजवुंकहेछे श्रीसिद्धांतमां स्त्रीनेएहवे विरुदेंकरीवखाणीछे तेमाटेस्त्रीनेत्यजवी तेकिहाकिहांविरुदेंत्यजवी तेबिरुदोनानामकहेछे एस्त्रीतेभूमिविना विषनी कंदलीके० नवाअंकुरनीसीखाछे तथा कंदरीजेगुंफाथीरहितथकीपण वाघणसरिखीछे वलीकोइ नामविनापण महारोगरूपछे वली अकारणके० अपथ्य सेवन अजीर्णादिक कारणोविनाज मृत्युके० मरणतुल्यछे वली अभ्रवादलरहितते वज्रसरिखी वीजलीछे अने बंधुके० स्वजननो स्नेह तेह्नो विघातके० नाशकरनारीछे तथा साहसके० अविचारितकार्यनुंकरवुं असत्यबोलवुं वली आदिशब्दथी अदत्त अब्रह्म परिग्रहादिक तेसंबंधी संतापनो भूके० उत्पत्तिनोस्थानकछे वली प्रत्यक्ष साक्षात् राक्षसीपणजाणवी एरीते एसर्वेस्त्रीना एहवा अशुभ विरुदजाणीने विवेकी पुरुषने स्त्रीसंबंधी ममत्वत्यजवु ॥ ८ ॥ इतिश्रीअध्यात्मकल्पद्रुमे स्त्रीममत्वमोचनो नाम तृतीयो ऽधिकार संपूर्ण. ॥

अथापत्याधिकार· ॥ मा भूरपत्यान्यवलोकमानो मुदाकुलो मोहनृपारिणा यत्॥चिक्षिप्सया नारकचारकेऽस्मिन् दृढं निबद्धो निगडैरमीभि·॥१॥

अर्थ ॥ हवेत्रीजाअधिकारे पुत्रादिकनुं ममत्वमुकवाआश्री उपदेशकहेछे तेमां प्रथम संतानउपरे मोहकरवुनही तेकहेछे हेआत्मातुं अपत्यजेपुत्रपुत्रीप्रमुख तेने जोतोथको मुदाके० हर्षआकुलथाइस केमके मोहराजारूप शत्रुये नरकरूपजे चारकके० बंदीखानुं तिहां चिक्षिप्साके० घालवानीइछाये अपत्यरूप निगडके० बिडिये दृढकरीने तुजने बांध्योछे ॥ १ ॥

आजीवित जीव भवांतरेपि वा शल्यान्यपत्यानि न वेत्सि किं हृदि ॥
चलाचलैर्यैर्विविधार्तिदानतोऽनिशं निहन्येत समाधिरात्मन ॥ २ ॥

अर्थ ॥ हवेउपमानंतरेंकरी संताननुं दुखदाइपणुंदेखाडेछे हेआत्मा आभव
मा जावजीवलगें तथा भवांतरे परभवेपण अपत्यजे संतानते शल्यके० शल्यरूप
छे एमतुताहाराहृदयमा केमनथीजाणतो जेस्वल्पायुष्यवत संतानादिक तेशोकरूप
पीडाआपेछे अने दीर्घायुष्यवतजे अपत्यते लग्नादिकद्रव्यव्ययप्रमुख विविधप्रकारनी
पीडाआपेछे तथा भरणपोषणादिकनी चिंता रूपजेआर्त्ति तेहनेउपजावेकरीने अह
र्निशके०निरंतर हेआत्माताहारी समाधी सुस्थताने हन्येतके० हणीछे ॥ २ ॥

कुक्षौ युवत्याः कृमयो विचित्रा अप्यस्रशुक्रप्रभवा भवंति ॥
न तेषु तस्या न हि तत्पतेश्च रागस्ततोऽयं किमपत्यकेषु
॥ ३ ॥ त्राणाशक्तेरापदि संबंधानंत्यतोमिथोऽंगवतां ॥
संदेहाच्चापकृतेर्माऽपत्येषु स्निहो जीव ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ वलीतेदृष्टांतकहेछे स्त्रीनीकुखनेविषे अस्रजेस्त्रीनीयोनीनुंरक्त अने शुक्रजे
पुरुषनुंवीर्य तेहनासयोगथीउपना एहवाकृमीजे बेइंद्रियादिकजीव तेपणविचित्रप्र
कारनाथायछे यदुक्तं इत्थीणजोणिमज्झे हवंतिबेंदियाउ जे जीवा ॥ इक्कोयदोवतिन्निव
लरकपहुत्तं च उक्कोसा ॥ १ ॥ तथासंमूर्छिम अनेगर्भजपचेंद्रीमनुष्यपणथायछे तो
तेस्त्री तथातेनोभर्त्तार तेहुने किनिश्चये स्युके० तेकृमीजीवनेविषे केमरागस्नेहनथीहोतु अ
नेअपत्यजेपुत्रपुत्रादिक तेहनाउपर रागकेमउपजेछे केमके एकजस्थानकनाउपना
तेकृमी अनेअपत्य तेबेहुबराबरछे ॥ ३ ॥ हवे अपत्यथकी काइपणस्वार्थसिद्धिनी
आशाराखवी जूठीछेतेदेखाडेछे हेआत्मातु अपत्यउपर स्नेहकरीसनही शाहेतुमाटेके
आपदाजे मरणरोगादिक आवेथके जेअपत्यते त्राणके० राखवानेसमर्थनथी तथाव
लीपरस्परेप्राणीने संबंधनुं अनित्यछे कारणकेनानाप्रकारना संबंधछे माटे उपकारनो
पणसंदेहछे केमकेजोपुत्रादिकसाथे वैरानुबंधी संबंधहोयतो तेथकी उपकारकेमथा
य श्रेणीकअने कोणीराजानीपरे तेमाटेस्नेहनुं धरवुतेफोकटछे ॥ ४॥ इतिश्रीअध्या
त्मकल्पद्रुमे पुत्रममत्वमोचनाख्यस्तृतीयोऽधिकारसमाप्तः ॥

अथधनाधिकार ॥ या सुखोपकृतिकृत्वधिया त्वं मेलयन्नसि रमा
ममताभाक् ॥ पाप्मनोधिकरणत्वत एता हेतवो ददति संसृतिपातं॥१॥

अर्थ ॥ हवेचोथाअधिकारे धननीममत्वमूकवाआश्री उपदेशआपेछे तिहांपहेलुं धनथी सुखतथाउपकार नथाय तेकहेछे हेजीवतु ममत्वने नजतोथको एममानेछे जे एलक्ष्मी ते मने तथामहाराकुटुंबने सुखकारीथासे तथा दिनादिकनो उपकारकरवा ने कामआवशे एहवीबुद्धियेजे रमाके० लक्ष्मीनेमेलवेछे तेएलक्ष्मीतोकर्मादानादिक सावद्यव्यापारने करवेकरी अधिकरणपणाथकी पाप्मन के० पापनीजहेतुछे तेमाटे संसृतिपातजे संसारमांभ्रमणकरवुं तेप्रतेजआपे एहवीछे तेभणी लक्ष्मीथकी सुख तथा उपकारनीवांछाते फोकटछे ॥ १ ॥

यानि द्विपामप्युपकारकाणि सर्प्पोंदुरादिष्वपि यैर्गतिश्च ॥
शक्या च नापन्मरणामयाद्या हंतुं धनेष्वेषु क एव मोहः॥ २ ॥

अर्थ ॥ हवेधनथकी अनर्थनीपरपराथाय तेकहेछे जेधनते द्विपाके० शत्रुनेपण उपयोगीथाय एटलेधनना संचयकरनारने हणीनेज शत्रुबलवतथाय अनेतेहना धननेज नोगवे वली जेधननेसंच्याथका उंदिरइत्यादिकनीगतिप्राप्तथाय केमके धन नोलोभीजीव धननीमूर्छायेमरीने तेधनउपरे सर्प्प तथा उंदिर इत्यादिकथयी अवत रे वलीजे धनेकरीमरण तथारोगइत्यादिक आपदाओतेपण सुभूमचक्रवर्तिप्रमुखनी परे निवारीशकायनही तोएहवाधननेविषे मोहतेशीकरवी ॥ २ ॥

ममत्वमात्रेण मनःप्रसादः सुखं धनैरल्पकमल्पकालं ॥
आरंभपापैः सुचिरं तु दुःखं स्याद्दुर्गतौ दारुणमित्यवेहि ॥ ३ ॥

अर्थ ॥ हवेएधनथकीसुखथोडुंछे अने दुःखघणुंछे तेकहेछे केमके धनेकरी केव लममत्वना जन्मनोज प्रसादथाय कारणके महारापाशेधनछे एमचिंतवीचिंतवी ने धननोलोभिप्राणी हर्षपामेछे पणतेधनेकरी सुखतो अल्पकाल लेशमात्र थोडा काललगेजहोय पणतेहना अतिनिमित्तक आरंभनापापेकरीने दुर्गतिनेविषे दारु णके० कठिणदुःखहोयज एहवु नवनंदराजाने दृष्टाते अवेहिके० जाण ॥ ३ ॥

द्रव्यस्तवात्मा धनसाधनो न धर्मोपि सारंभतया तिशुद्धः ॥
निःसंगतात्मा त्वतिशुद्धियोगा न्मुक्तिश्रियं यच्छति तद्भवेपि ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ हवेधनविना द्रव्यस्तवरूपधर्मनथाय तेमाटेधनउपार्जवुं एहवुंविचारपण निश्चेथकी जोता अयुक्तछे तेदेखाडेछे धननेसाधिये एहवुद्रव्यस्तवात्माके० द्रव्य स्तवरूप जिनभुवन बिंबप्रतिष्टा दानशालादिक जेधर्मकरणीछे तेपण सारंभके०

द्रव्यारंभसहितपणेकरीने अतिनिर्मलनथी पणमात्रस्वर्गादिकगतिनाहेतुछे माटेतेध र्मनेपण मुक्तिनुंपरंपरा कारणजाणवुंनही अने निःसंगतारूपजे धर्मते अतिशुद्धछे० निर्मलता निरवद्यतानायोगथी तेहिजनवमापण मोक्षरूप लक्ष्मीने आपे ॥ ४ ॥

क्षेत्रवास्तुधनधान्यगवाश्वैर्मेलितैः सनिधिभिस्तनुभाजां ॥
क्लेशपापनरकाभ्यधिकः स्यात् को गुणो यदि न धर्मनियोगः ॥५॥

अर्थ ॥ हवेघणुंपरिग्रहते पापनुंमूलछे तेकहेछे क्षेत्र क्यारडाप्रमुख तथावस्तुते घरप्रमुख धनधान्य गायो अश्वइत्यादिक तथानिधिजे भंडारतेणेसहित एहवोपरि ग्रहमेलवेयकेपण जो एक धर्मनियोगछे० जिनबिंबादिक शातक्षेत्रमा ववरायन ही तो तेवारें तेपरिग्रहथकी क्लेश पाप अने नरक एत्रणविना अन्यधिकछे० व्यति रेकबीजोशोगुणहोय एटले परिग्रहथकी अनुक्रमे कष्ट पाप अने नरक एत्रणवा नाजथाय पणबीजोगुणकोइनथाय ॥ ५ ॥

आरंभैर्भरितो निमज्जति यतः प्राणी भवाम्भोनिधावीहंते कुनृपादयश्च पुरुषा येन छलाद्बाधितुं ॥ चिंताव्याकुलताकृतेश्च हरते यो धर्मकर्मस्मृतिं विज्ञा भूरि परिग्रहं त्यजत तं भोग्यं परैः प्रायशः ॥६॥

अर्थ ॥ हवेपरिग्रहथकी इहलोके तथा परलोके दुःखथायतेकहेछे जेपरिग्रहमे लववाथकी प्राणी आरंभेछे० आरंभेभरायको संसारसमुद्रमाबुडेछे वलीतेपरिग्रहेकरी दुष्टराजा तथाआदिशब्दथी मंत्रीप्रमुख अधिकारीओ अनेचोरादिक तेपुरुषने छले करी बाधितुछे० पीडवानेवांछेछे केमकेबहुधनवंत उपरखोटोपण गुनाहनो आरोप करीनेदमकरे वलीपरिग्रहनी चिंताये व्याकुलताने करवेकरीने धर्मकर्मस्मृतिछे० धर्मकार्यनुं संभालवु तेहनोहरणकरीलिये माटेहेविवेकीजनो एधनते प्रायेबाहुल तायें परनाजभोगमांआवे एटले एकेसच्योहोय अनेबीजोभोगवे एहवोजेए भूरिछे० घणुपरिग्रहतेहने त्यजो ह्यमो यदुक्तं कीटिकासंचितधान्यं मक्षिकासंचितमधु ॥ कृप णैः संचितवित्तं परैरेवोपभुज्यते॥१॥ जेमयोगिये घणाकष्टेकरी सिद्धिनारसनो संग्रह कर्यो अने वलनिपुरमा राकाशेठनाभोगमांआव्यो तेमकोइनुंसंच्युंधन कोइकभोगवे ६

क्षेत्रेषु नो वपसि यत्सदपि स्वमेतद्यातासि तत्परभवे किमिदं गृहीत्वा ॥
तस्यार्जनादिजनिताघचयार्जितात्ते भावी कथं नरकदुःखभराच्च मोक्षः ७

अर्थ ॥ हवेअर्थांतरकहीने सातखेत्रे धनवावखानुं उपदेशकहेछे हेधनवंत जे तु छतुंपोतानुंसछे० धन तेहनेसातक्षेत्रनेविषे नथीवावरतुतो एधननेतुसुं परभवेसा

थेंलेइजनारछे एटलेहमणातोतुं लोजनावशथकी धननेसुमार्ग खरचतोनथी पणते धन परजवेताहरीसाथे नइजआवे वलीतेधनना उपार्जनकरवाथी उपनुंजे अघ के० पापनो चयके० समूह तेथी अर्जितके० उपजाव्यो एहवोजे नरकसंबंधीडःख तेहनो जरके० जारतेहथी मोक्षके० छूटवुंतेकेमथाशे ॥ ७ ॥ इति श्रीअध्यात्मकल्प द्रुमे धनममत्वमोचनोनामचतुर्थाधिकारः समाप्त ॥

अथ देहाधिकार॥पुष्णासि यं देहमघान्यचिंतयं स्तवोपकारं कमयं विधास्यति॥ कर्माणि कुर्वन्निति चितयायतिं जगत्ययं वंचयते हि धूर्त्तराट् ॥१॥

अर्थ ॥ हवेपांचमेअधिकारे शरीरआश्रयी ममत्वमूकवो तेकहेछे तेमांप्रथम पापकरीने देहनुंपोषणकरवुंनही तेकहेछे हेआत्मातु अघके० पापने अणविचारतोथ कोदेहने पुष्णासिके० पोखेछे ते आ देह तुजने सुंउपकारकरशे वली आयतिके० आवताकालनी चिताचितवी हिंसादिककर्मकरतोथकोप्रवर्त्तनारो एहवोजेताहरोदेहते धूर्त्तोनोराजाछे सर्वजगतने वंचयतेके० ठगेछे तोतुपापकरीनेदेहने पुष्टकरेछेपण एदेहतेआखरतुजनेठगसे छेहदेहीजाशे ॥ १ ॥

कारागृहाद्बहुविधाशुचितादिदुःखा न्निर्गंतुमिच्छति जडोपि हि तद्विभिन्नः॥ क्षिप्तस्ततोधिकतरे वपुषि स्वकर्मव्रातेन तद्दृढयितुं यतसे किमात्मन्॥२॥

अर्थ ॥ हवेएशरीरते कारागृहथीपणअधिकछे तेदेखाडेछे हेआत्माजेप्राणी जड के० मूर्खहोय तेपण कारागृहजे बंदीखानुं जेमा बहुविध अशुचिता अपवित्रता आदि शब्दथी क्षुधा तृषा वध बंधनादिडःखहोय एहवाकारागृहने भेदी खात्रादिकपाडीने नीकलवावांछेछे तोतुजने स्वके० पोतानाकर्मने समूहे तेकारागृहथीअधिकुएहवुंजे वपुके० शरीररूपबंदीखानु तेमाघाल्योछे तोएहवाकारागृह सरिखोजे ताहारो देहतेहने दृढकरवानेज सुंउद्यमकरेछे केमके कारागृहनुं बंधनतोथोडुंछे पणदेहनुं बंधनतो जावजीवसुधी तथापरलोकेपणहोय तेमाटेदेहनुंबंधन अधिकजाणवु ॥२॥

चेद्वांछसीदमवितुं परलोकडुःखभीत्या ततो न कुरुषे किमु पुण्यमेव॥शक्यं न रक्षितुमिदं हि न डुःखभीति पुण्यं विना क्षयमुपैति च वज्रिणोपि॥३॥

अर्थ ॥ हवेपरभवनाडुःखथी बीहीतोथको घणुजीववानेअर्थेजे देहनेपोषेछे तेने कहेछे हेआत्माजोतुं आशरीरने परलोकसंबंधीडुःखनाबीकेकरी अवितुके०राखवावांछेछे तोतुपुण्यउपार्जन केमनथीकरतो केमकेपुण्येकरी एशरीरडुःखनाभयथकी राखायनही एमतोकाइनथी एटलेशरीरने डुःखनाभयथी राखवानेपण पुण्यजसमर्थछे

अनेवलीपुण्यविनातु तो वळिजेईंद्र तेहनुंशरीरपण नाशपामेछे तेमाटेजोपरलोके दुःखथीबीहेछेतो तुपुण्यकर ॥ ३ ॥

देहे विमुह्य कुरुषे किमघं न वेत्सि देहस्थ एव भजसे भवदुःखजालं ॥
लोहाश्रितोहि सहते घनघातमग्नि र्बाधा न तेस्य च नभोवदनाश्रयत्वे॥४

अर्थ ॥ हवेजेशरीरनुंजेतुपोषणकरेछे तेशरीरमारह्योथकोज तुदुःखपामेछे एहवुं देखाडेछे किनवेत्सिके० हेआत्मातु देहनेविषे मोहपामिने पापकरेछे अनेतेदेहमा रह्योथकोज भवदुःखना समूहप्रतेपामेछे तेकेमनथीजाणतो एतोनिश्चेंथकी लोह नेआश्रीत मल्युंजेअग्नि तेजेम घणा घणोना प्रहारोनेसहनकरेछे तेमतुजने तथा ए शरीररूप अग्निनेपण भजवत्के० आकाशनीपरे अनाश्रयत्वेके० निरालंबपणुकरेतो बाधाके० पीडानहोय एटलेलोहाश्रित अग्नीनीपरे तुपणदेहाश्रितथको दुःखपामेछे

दुष्टः कर्मविपाकभूपतिवशः कायाव्हयः कर्मकृत् बध्वा कर्मगुणैर्हृषी कचषकैः पीतप्रमादासवं ॥ कृत्वा नारकचारकापदुचितं त्वा प्राप्य चाशु छलं गंतेति स्वहिताय संयमभरं तं वाहयाल्पं ददत् ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ हवेदेहकर्मकरनुं उपमानकहेछे हेआत्मा एदुष्ट निर्दय एहवोदेहनामे क र्मकरके० राजसेवक तेतुजने कर्मरूप घणाबंधनेबांधीने नरकरूप बंदिखाना सर्व धीआपदानो उचितयोगएहवोकरी पछेछलताकीने ग्रताव्लोजतोरहसे एकर्मकरक हेवुछेके कर्मविपाकनामाजेराजा तेहनोवशवर्त्तिछे एटलेकर्मविपाकराजाये एहनेप्रे र्योछे माटेहेजीव ते कृपीकजे इंद्रियतेरूप चषकजे मद्यपाननापात्र तेणेकरी पा चविधप्रमादरूप आश्रवनामामद्य पीधुंछे एहवोजाणीनेतु पोतानाहितनेअर्थे तेकर्म करजे शरीरतेहने थोडुंपणअहार दोषरहितआपीने संयमरूपभारवहरावके जेथ कीताहरा आत्मानी सिद्धिथाय ॥ ५ ॥

यत शुचीन्यप्यशुचीभवंति कृम्याकुलात् काकशुनादिभक्ष्यात् ॥
द्राग्भाविनो भस्मतया ततोऽगात् मांसादिपिंडात्स्वहितं गृहाण॥६॥

अर्थ ॥ हवेएअशुचिदेहथी बीजापदार्थपण अपवित्रथाय तेकहेछे शुचिके० प वित्रजेवस्तु एहवाखीरखांडप्रमुख तेपण एशरीरनासंगथी अपवित्रथाय तेमाटेएश रीरकहेवुछे तेकहेछेकृमिजे उदरप्रमुखनाजीव तेणेकरीआकुलके० व्याप्त तथा का गडा कुतरा इत्यादिकजीवने भक्षवायोग्य अने प्राणगयापछि तत्काल भस्मथयी

राखथनारछे वळी मांसादिकनुंपिंमछे एहवाए असारशरीरथकीतो जे स्वहितके० आत्मानेहितकारकएहवा संयमादिकतेप्रतेलेइने आत्मसाधनकर ॥ ६ ॥

परोपकारोस्ति तपो जपो वा विनश्वरायस्य फलं न देहात् ॥
सन्नाटकादल्पदिनाप्तगेहमृत्पिंममूढः फलमश्नुतेकिं ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ वळीयुक्तिविशेषें देहनुं सफलकरवुंकहेछे जेपुरुषने एविनाशशील एहवुं जेदेह तेथकी परोपकार तथा तप जप प्रमुखनथाय तोतेपुरुष नाडेराखेलुं थोडा दिवससुधिपाम्युं एहवुंजेघर तेसरिखो एमाटीनापिंमरूप देहउपरमूढछतो शोफ लपामें जेमनाडानुंघरते वापरियेतोजशारुं नहिकांजेनाडुंखरचियेते व्यर्थजाय अनेवळी आखरपोतानुंपण तेघरथायनही तेमएदेहनेपण अहारादिकनाडुंआपीने पोष्युंथको तपजपादिकेकरी वावरीये तोजसफलथाय नहिकांनिःफलजाणवुं ॥७॥

मृत्पिंडरूपेण विनश्वरेण जुगुप्सनीयेन गदालयेन ॥
देहेन चेदात्महितं सुसाधं धर्मान्नकिं तद्यतसेऽत्रमूढ ॥ ८ ॥

अर्थ ॥ वळीतेहिजकहेछे जेमाटीनापिंमसरिखुं विनाशीआचारवत तथादुगंछा करवायोग्य अनेरोगनुं आलयके० घर एहवोजेदेह तेणेकरीने धर्मकरवाथी आ त्महितसाधवुं तुजनेसुलनछे तोहेमूर्ख अत्महितसाधवाने केमउद्यमकरतोनथी माटे असारनूतदेहथी सारनूतआत्मानो हितसाधवाने सर्वथाउद्यमकरवुं ॥ ८ ॥

इतिश्री अध्यात्मकल्पद्रुमेदेह ममत्वमोचनानामें पांचमोअधिकारसंपूर्णथयो.

अत्यल्पकल्पितसुखाय किमिंद्रियार्थैस्त्वं मुह्यसि प्रतिपदं प्रचुरप्रमादः॥
एते क्षिपंति गहने नवनीमकक्षे जंतून्न यत्र सुलनाशिवमार्गदृष्टिः ॥१॥

अर्थ॥पूर्वेंकह्युजेदेहनिग्रहकरवुंतेकांइ विपयनीममतामूकवासीवाय थतुंनथी मा टेहवेछठेअधिकारें विषयप्रमाद त्यजवा आश्रयी उपदेशछे तिहां प्रथम इंद्रियार्थेनुं मो हत्यजवुं तेकहेछे हेआत्मातु घणुजप्रमादवतथको पण अतिशयेकरी अल्पके०थो डुंपणकल्पनामात्र जेसुखतेपण परमार्थथीतोदुःखजछे पणतेसुखकरीमान्युं एहवुं जेसुख तेहनाअर्थे प्रतिपदके० गामेगामें इंद्रियार्थजे शब्द रूप रस गंध स्पर्श तेणेक री मुंमुंजायछे एइंद्रियार्थते जंतुके० प्राणीने गहनके० अपार एहवोसंसाररूपजे नी मके० रौद्र कक्षके० अटवीतेमा क्षिपंतीके० घालेछे बलात्कारे तेमां प्रवेशकरावेछे जिहां शिवके० मुक्तिमार्गनुं दृष्टिदर्शनतेजीवने सुलननथी जेमकोइवीजोपण गह नवनहोयतोतेंमांहें शिवके० निरूपद्रव्यमार्गनुं जेदर्शनते दुर्लनहोय तेनीपरेजा

एवुं ॥ १ ॥ इहांप्रमादना पाचप्रकार तथा आठप्रकारनी गाथाकहेछे मज्जं विषय कषाया निद्दाविकहाय पचमीजणिया ॥ एए पच पमाया जिव पाडंति संसारे ॥ १ ॥ तथाआठप्रकार कहेछे पमाउयमुणिदीहिं जणिउं अठभेयउं ॥ अन्नाण संसउ चेव॥ मिछानाण तहेवय॥ १ ॥ रागो दोसो मइभंसो धम्ममिय अणायरो॥ जोगाण दुप्पणि हाण ॥ अठहावज्जियव्वउं ॥ २ ॥

आपातरम्ये परिणामदुःखे सुखे कथं वैषयिके रतोसि ॥ जडो पि कार्यं रचयन् हितार्थी करोति विद्वन् यदुदर्कतर्कं ॥ २ ॥

अर्थ ॥ हवेसंसारिकसुखते प्रथमतोसुखदायीछे पण परिणामेदुःखदायीछे तेकहेछे हेचतुरआत्मातु आपातके० तत्कालमात्रतो रम्यमनोहरछे पणपरिणाम के० विपाककाले महादुःखदाइरूप एहवा विषयसंबंधी सुखमां सुंराच्योछो केमके पोतानाहितने वाछनार एहवोजे जडके० मूर्खप्राणीहोय तेपण कोइकार्यकरेतो उदर्कके० जेआगामिककालनुंफल तेहनुं तर्कके० विचार करीने परिणामे अहितका रीहोयतेने त्यजेछे तोतुचतुरछता परिणामे दुःखदायी एहवाजे विषयादिक तेप्रतें केमआचरेछे एआचरवा तुजने योग्यनथी ॥ २ ॥

यदिंद्रियार्थैरिह शर्मबिंदवद्यदर्णवत्स्व शिवग परत्र च ॥ तयो र्मिथोस्ति प्रतिपक्षता कृतिन् विशेषदृष्ट्यान्यतरद्गृहाण तत् ॥३॥

अर्थ ॥ हवेसंसारिकसुखनी अल्पतादेखाडेछे हेचतुरआत्मा इहलोकनेविषे इं द्रियार्थजे शब्दादिक तेणेकरीने बंध्युजे तुछसुख अनेवलीजे परलोके अर्णवके०स मुद्रसरिखु स्व शिवगंके० देवलोक अनेमुक्तिसबंधीजेसुख तेसुखने मिथ के० मा होमाहे प्रतिपक्षता एटलेशत्रुभावछे केमके जिहांइंद्रियार्थनुंसुखछे तिहांमुक्तिसुख नथी अनेजिहां मुक्तिसुखछेतिहां इंद्रियार्थसुखनथी तेमाटेविशेषदृष्टियेकरी तेबेहुमां जेहनेतुंरुडोजाणे तेहने ग्रहणकर ॥ ३ ॥

भुक्ते कथं नारकतिर्यगादि दुःखानिदेहीत्यवधेहि शास्त्रैः ॥ निवर्त्तते ते विषयेषु तृष्णा बिभेषि पापप्रचयाच्च येन ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ हवेतेहिजविशेषें देखाडेछे हेआत्मा देहवतप्राणी नरकतिर्यंचगतीनादु ख केवाप्रकारेंभोगवेछे एटलुंतु शास्त्रमांथी जोइने अवधेहिके० निश्चयकर तोतुजने निश्चेथकी विषयनेविषे तृष्णानीनिवर्त्तियासे अनेपापना सचवाथकीतुबीहेतोरहिश

गर्भवासनरकादिवेदना पश्यतोनवरतं श्रुतेक्षणैः ॥
नो कषायविषयेषु मानसं श्लिष्यते बुध विचिंतयेति ताः ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ वलीतेहीजकहेछे हेपंमितप्राणी अनवरतंके० निरंतर श्रुतजे शास्त्रतेरूपी ईक्षणके० नेत्रेंकरीनेगर्भावास तथानरक आदिशब्दथी निगोद एकेंद्रियादिक तेसंबंधीवेदनाउप्रतेंजोता थकां ताहरुं मानसके० चित्तते कषाय तथा विषयनेविषें नो श्लिष्यतेके० अशक्तनथाय एहेतुमाटे पूर्वोक्तवेदनाउने सम्यकरीतेंविचारीसतो ताहरुंचित्त विषयकषायथकी किंचितमात्र उद्विग्ननथाय ॥ ५ ॥

वधस्य चोरस्य यथा पशोर्वा संप्राप्यमाणस्य पदं वधस्य ॥
शनैःशनैरेति मृतिः समीपं तथाखिलस्येति कथं प्रमादः ॥ ६॥

अर्थ ॥ वलीमृत्युनयदेखाडी प्रमादत्यजवानुं प्रतिबोधकरेछे जेमवधकरवानेकाढ्या एहवाजे चोरतथा बोकडाप्रमुखजेपशु तेहनेवधनास्थानके लइजतां जेमजेमवधना स्थानकतरफ पगलांनरे तेमतेमथोडेथोडे मृत्युपणनजीकआवे तेहनीपरें सर्वेप्राणीओने थोडेथोडे घडी पहोर दिवस मास वर्षादिकने जावेकरी मृत्युढुकडो आवेछे तेकारणमाटे आत्मानाहितसाधननेविषे विलंबकेमकरियें अर्थात् प्रमादत्यजीने सर्वथाधर्मनेविषे तत्परथावुं ॥ ६ ॥

बिभेपि जंतो यदिदुःखराशे स्तदिंद्रियार्थेषु रतिं कृथा मा ॥
तदुद्भवं नश्यति शर्म यद्राक् नाशे च तस्य ध्रुवमेव दुःखं ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ हवेसुखनो शीघ्रके० तुरतनाशपणुंदेखाडीने जीवनेप्रतिबोधकरेछे हेजीवजोतु दुःखनासमूहथकी बीहेछे तो इंद्रियार्थजे शब्दादितेहनेविषे रतिके०रागकेमकरेछे केमकेइंद्रियार्थथीउपनुंजे शर्मके० सुखतेद्राग्के० उतावलोज नाशपामेछे अनेतेहनानाशपछि दुःखतो ध्रुवके० निश्चल चिरकाललगें निश्चितछे जेमप्रकाशनेअंते अंधकार निश्चेथकीहोय तेमसुखनेअंते दुःखपणनिश्चेथकीजहोय ॥ ७ ॥

मृतः किमु प्रेतपतिर्दुरामया गताः क्षयं किं नरकाश्च मुद्रिताः ॥
ध्रुवाः किमायुर्धनदेहबंधवः सकौतुको यद्विपयैर्विमुह्यसि ॥ ८ ॥

अर्थ ॥ वलीप्रकारांतरेजीवने सुखनाप्रतिबंधकदेखाडेछे हेआत्मा प्रेतपतिजे यममृत्युलक्षण तेसुंमुओ के जतोरह्यो तथादुष्टकारी आमयके० रोग यदुक्तं रोगाणं कोडीउ हवंति पंचेव लक्खअडसठी॥ नवनवइसहस्साइ छचसयाचेव पणयाली

१५६८९५९६४५ खासे सासे जरे दाहे कुछिसूले नगंदरे॥ अरसा अजीर्ण दीहि मुहसूले अरोयए ॥ १ ॥ अछिवेयण कंडु अकणबाधाजलोयरे ॥ कुडे एमाइवा रोगा पीलयति सरीरिण॥ २ ॥एसोलरोग महोटाकह्याछे तेदेहनेआश्रयीजरह्याछे ते सुंक्षयपाम्या तथासातनरक तेहनाबारणातेसुं मुडिताके० टंकाणा बंधथया तथा आयुप धन देह अनेस्वजनजे बंधुतेसुं ध्रुवके० निश्चलशाश्वताछे जेमाटेतुं सकौतु कके० सहर्षवतथको विपयनेविषे मोहपामेछे एटलेमृत्यु रोग अने नरक एत्रण नयतो विद्यमानछे अने आयु धन देह स्वजन एतोअस्थिरछे तोतुसहर्षपणुते शा कारणथीधरेछे तेकाइसमजातुनथी॥ ८ ॥

विमोह्यसे किं विपयप्रमादै र्भ्रमात्सुखस्यायतिडुःखराशे ॥
तद्गर्धमुक्तस्य हि यत्सुखं ते गतोपमं चायतिमुक्तिदं तत् ॥ ९॥

अर्थ॥ हवेविषयसुखते निदानडुःखरूपछे तेकही जीवनेप्रतिबोधेछे हेआत्मातुजने विपयनेप्रमादेंमिलीने निदान डुःखराशीके० डुःखनासमूह तेहने सुखनाभ्रमथकी वि मोह्यसेके० मोहपमाडेछे एटलेडुःखनासमूहनेविषे सुखनीभ्रातिये जेतुंमोहपामेछे तेमात्र विपयप्रमादना वशथकीजपामेछे एनावार्यछे तेमाटे गर्द्धमुक्तके० तृष्णारहि त एहवोथकोतुजने उपशमलक्षणरूप गतोपमके० अनुपमसुखते आयतिके० नि दानमुक्तिनुदातारछे तेमाटे तृष्णारहित निरिहतासुखनेआदर ९ इतिश्रीअध्यात्मकल्प डुमे विपयावशतोपदेश पष्ठोधिकार ॥ ९ ॥

अथ कपाया ॥रे जीव सेहिथ सहिष्यसि च व्यथास्ता स्त्वं
नारकादि पु पराभवभू. कपायै. ॥ मुग्धोदितै. कुवचनादि
भिरप्य त किं क्रोधान्निहसि निजपुण्यधन डुराप ॥ १ ॥

अर्थ ॥ हवेसातमेअधिकारे कपायादिक त्यजवाआश्री उपदेशकरेछे त्यांप्रथम कपायनुफलकहेछे हेजीवतुं कपायजे क्रोधादिकतेनाहेतुथी नरकादिकनेविपे पराभव जेपीडा तेहनो भाजन थको ते माहा डुःसह वेदनाओ सहनकरी अनेवलीपण सहीश तेमाटेमुग्धजे अजाणलोकनाकहेला जे कुवचन गालप्रमुख इत्यादिकतुछकार णोनेवास्ते डुर्लभएवुजेपोतानु पुण्यरूपीधन तेनेक्रोधथीशुहणेछे एटलेअल्पकारण माटे कपायकरीने डुर्लभजेपुण्यरूप धनतेनेहरेछे तेमाटेकपायनकरवु ॥ १ ॥

परानिभूता यदि मानमुक्ति स्ततस्तपोखंडमतः शिवं च ॥
मानादृतिर्दुर्वचनादिभिश्च तपःक्षयस्तन्नरकादिदुःखं ॥ २ ॥
वैरादियात्रेति विचार्य लाभालाभौ कृतिन्नाभवसंभविन्यां ॥
तपोऽथवा मानमवाभिभूताविहास्ति नूनं हि गतिर्द्विधैव॥३॥ युग्मं॥

अर्थ ॥ हवेमानमुकवानु अनेराखवानुं फलकहेछे हेआत्मा परजेअन्यजनतेथी अभिभूतिके० अपमान आक्रोशादिकउपजेथके मानजेअहंकार तेनेमुकीआप जेणे करीअखंमतपथी मोक्षप्राप्तिथाय अनेदुरवचनादिकेकरी जोमानआदरीशतो तपनो क्षयथाय तेतपक्षयथके नरकादिकदुखथाशे तथाआलोकेपण वैर धनहानि मरणा दिकदुखथासे माटेहेनिपुणआत्मा एमपूर्वोक्तप्रकारे मानमुक्याथीलाभछे अनेमान आदर्याथीअलाभछे एवेवातोविचारीने आभवके० एकभवसंबंधिनी अभिभूतिजेपरा भव तेउपजेछतेपण तपनेराख अथवामाननेराख केमकेएकार्यमा बेजउपायछे पण तेमाअभिभूतिनुंतो एकजभवनु दुःखछे अनेमानकर्याथीतो तपक्षयथाशे तेवारे भवो भवेदुखछे तेमाटेमानत्यजीने तपनेराख एवेकाव्यनोअर्थएकछे ॥ २ ॥ ३ ॥

श्रुत्वा कोशान् यो मुदा पूरितः स्यात् लोष्टाद्यैर्यश्चाहतो लोमहर्षी ॥
य प्राणांतेप्यन्यदोपं न पश्यत्येप श्रेयो द्राग् लभेतेव योगी ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ हवेकषायतज्याथी मुक्तिफलछे तेकहेछे जेयोगीसाधु आक्रोश गाल प्रमुख सांभलीने आनंदपामी विचारेजे एगालिनुं अभिधेय मेंअनंतिवार अनुभव्युंछे एमचित वी वलीजेलोह पाषाणादिके हणायोथकोपणजेनुं रोमांचित हर्पितथाय अनेएम चितवेजे आजमाहरे विशेषनिर्जराथइ एमजाणी वलीजेसाधुप्राणांतेपण अन्यना दोष तथाअवगुणनदेखे पणपोतानोजदोषदेखे एहवोजेयोगीश्वर मन वचन अने का याथीशुभयोगवत तेउतावलोज श्रेयजेमोक्ष तेनेपामे ॥ ४ ॥

कोगुणस्तव कदा च कषाये निर्ममे भजसि नित्यमिमान् यत् ॥
किं न पश्यसि च दोषममीषां तापमत्र नरकं च परत्र ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ हवेयुक्तियेंकरी कषायमां गुणनोअभाव देखाडेछे हेआत्मा कषायजेक्रोधा दिक तेएतुजनेकोइवारे कोइपणगुणकर्योछेके जेथकीतुंएकषायने नित्यप्रत्येसेवेछे व लीआलोकेसंताप अनेपरलोके नरकनादुखआपनार एवोजे कषायनोदोष तेनेतुन थीदेखतोसुं जे तुंनिश्चितथको कषायनेसेवेछे॥ ५ ॥

यत्कषायजनितं तव सौख्यं यत्कषायपरिहाणि भवंति ॥
तद्विशेषमथवैतदुदर्कं संविभाव्य भज धीर विशिष्टं ॥ ६ ॥

अर्थ॥वलीप्रकारांतरे कषायत्यजवुं उपदेशेछे हेआत्मा तुजनेकषायथी उपनुंजेसुख अनेकषायना परित्यागथी उपनुंजेसुख एबेनुविशेषजे अधिकपणुं तथा उदर्कके० निदानो विपाकजेफल तेसम्यक प्रकारे विचारीने पछे हेधीरपंडित एमाजेतुजने विशिष्टउत्तमजाणवामांआवे तेनेतुंआदरअंगीकारकर ॥ ६ ॥

सुखेन साध्या तपसा प्रवृत्ति यथातथा नैव तु मानमुक्ति ॥
आद्या न दत्तेपि शिवं परा तु निदर्शनाद्बाहुबलेः प्रदत्ते॥७॥
सम्यग् विचार्येति विहाय मानं रक्षन् दुरापाणि तपांसि यत्नात्॥
मुदा मनीषी सहतेऽभिभूतीः शूरः क्षमायामपिनीचजाति ॥८॥

अर्थ॥हवेतपकरवाथी मानत्यागनी दुष्करता देखाडेछे हेआत्मा जेम तपनीप्रवृत्तितेसुखेसाध्यछे तेममानमुक्तिजे माननुत्यजवु तेसुखेसाध्यनथी तो आद्याके० पहेली कहीजे तपप्रवृत्तितेमुक्तिआपवा समर्थनथी अने बीजीजेमानमुक्ति तेयद्यपिदुःसाध्यछे तोपणते मुक्तिआपवाने समर्थछे बाहुबलनेदृष्टांते जेमबाहुबलने मानमुक्तिविना मात्र तपथकीज केवलज्ञान उपनुंनही अनेमानमुक्युं तेवारे तत्कालज्ञानउपनुं एवुसम्यग् विचारीने मानत्यजीनेयत्ने करीदुर्लभ एहवोजेतप तेनेराखतोथको क्षमानेविषे शूर एवोजे मनीषीके० पंडित ते नीच जननो करेलो अभिभूति जेपराभव तेनेपण मुदा के० हर्षेकरीनेसहेछे ॥ ७ ॥ ८ ॥ एबेकाव्यनोअर्थएकठोछे

पराभिभूत्याल्पिकयापि कुप्यस्यघैरपीमां प्रतिकर्तुमिच्छन् ॥
न वेत्सि तिर्यङ्नरकादिकेषु तास्तैरनंतास्त्वतुला भवित्रीः ॥९॥

अर्थ ॥ वलीएपरिसह सहेवाआश्रीज उपदेशेछे हेआत्मातु थोडीपण परनीकरेलीजे अभिभूति पीडादिक तेणेकरी अभिभूतिना करनारजे पुरुषतेउपर कोपेछे अने वली पापकरीने तेहना प्रतिकारने वांछेछे एटले पूर्वजन्मांतरना पापविपाकथकी पराभवपामेछे अनेवलीतेहनो प्रतिकारपण पापेकरीनेज वांछेछे परंतुतेपापेकरीने तु अभिभूतिजेपीडाओ तेतिर्यंचनरकादिक गतिनेविषे अनंततथाअतुल मोहोटी एवि भवित्रीकहेता पीडाथाशे एवुकांनथीजाणतो ॥ ९ ॥

धत्से कृतिन् यद्यपकारकेषु क्रोधं ततो धेह्यरिषट्क एव ॥
अथोपकारिष्वपि तन्नवार्तिकृत्कर्महन्मित्रबहिर्द्विषत्सु ॥ १० ॥

अर्थ ॥ हवेक्रोधकरवो तेवैरीनेज वियुक्तछे तेकहेछे हेपंमितआत्मा जोतुं अपकारक शत्रुनेविषे क्रोधधरेछेतो तेनेवदलेताहरा अंतरगनाजे क्रोध मान माया लोभ राग अनेद्वेष मलीछशत्रुछे तेहनेविषेज क्रोधधर केमकेएछशत्रुथी वीजोकोइ तुझने वधारेडःखदाइनथी अथवा उपकारक मित्रनेविषे जोतुक्रोधधरतोनथी तेवारेंतुं संसारमां अर्तिकारी एहवाज्ञानावर्णादिक कर्म तेनोहरणकरनाराजे उपसर्गादिकना करनार शत्रु तेनाउपसर्गनेकरवेकरी वाह्यदृष्टियेंतोते ताहराशत्रूछे पणकर्मक्षयकरवामां अनेपरलोकना अनंतसुखनीप्राप्तिकरवामां साह्यकारीथया माटे तत्वदृष्टियें जोता अभ्यंतरपणे तेमित्रनावेज परिणम्या तेथी उपसर्गकारकशत्रुने तत्वदृष्टीये मित्रतुल्य जोइने तेमित्रनेविषे क्रोधनधरवो एभावार्थछे ॥ १० ॥

अधीत्यनुष्ठानतपःशमाद्यान् धर्मान् विचित्रान् विदधत्समायान् ॥
न लप्स्यसे तत्फलमात्मदेहक्लेशाधिकं तांश्च भवांतरेषु ॥ ११ ॥

अर्थ ॥ हवेमायात्यजवा आश्रीउपदेशेछे हेआत्मातु अधीतिके०भणवुं तथाअनुष्टानजे क्रियाआवश्यकादिक तथातपउपशमादिक नानाविधधर्म ते मायाके० कपटसहित करतोथको मात्रतुं पोतानादेहने कष्टजआपेछे पणतेथी व्यतिरिकके० वीजूंफलकांइ भवांतरनेविषे पामीसनही वली भवांतरनेविषे तेधर्मनेपणपामीसनही केमकेमायावीने बोधीपामवीडर्लभहोय ॥ ११ ॥

सुखाय धत्से यदि लोभमात्मनो ज्ञानादिरत्नत्रितये विधेहि तत् ॥
दुःखाय चेदत्र परत्र वा कृतिन् परिग्रहे तद्वहिरांतरेपि च ॥ १२ ॥

अर्थ ॥ हवेलोभत्यजवाआश्री उपदेशकरेछे हेआत्माजोतु पोतानासुखनेअर्थे लोभकरेछे तोज्ञानादिक जे ज्ञानदर्शनअनेचारित्र एत्रणरत्ननेविषे लोभकर वीजाधनधान्यादिक असारवस्तुथी कांहिसुखनथाय माटेहेचतुरआत्मा तुआलोके दुःखनेअर्थे वाह्यथीधनधान्यादिक अने अंतरगथी क्रोधमानादिक परिग्रहनेविषे लोभ करिसनही ॥ १२ ॥

करोपि यत्प्रेत्य हिताय किंचित्कदाचिदल्पं सुकृतं कथंचित् ॥
माजीहरस्तन्मदमत्सराद्यैर्विना च तन्मां नरकातिथिर्भूः ॥ १३ ॥

अर्थ॥हवेजीवने सुकृतराखवाआश्रयी उपदेशछे हेआत्मातु कोइकाले कथंचित् अ

ऐकष्टेकरीने काइएक अल्पके० थोडुंपणसुकृत जेदानादिक तथातपसंयमादिकते प्रेत्यके० परलोकना हितनेअर्थेकरेछे तेसुकृतने मद मत्सर क्रोध लोभादिके करीने हारिसनही अनेवली तेसुकृतविना सातनरकनो अतिथिके० परोणो थइशनही एटले तेसुकृत खोयाथी नरकगतिथशे तेमाटे मदमत्सरादिकने निवारीनेसुकृतराखजे॥१३

पुरापि पापै पतितोसि संसृतौ दधासि रे किं गुणिमत्सरं पुनः ॥
न वेत्सि किं घोरजले निपात्यसे नियंत्र्यसे शृंखलया च सर्वतः ॥१४॥

अर्थ॥वली मत्सरत्यजवाआश्री उपदेशछे हेआत्मातु पूर्वेपण पापेंकरीने संसारमां पडयोछे अनेवलीगुणवंतने विषे शुमत्सरधरेछे एमकांनथीजाणतोजे एमत्सरतोमुजने घोरके० अगाधदु खरूपियुं जेमा जलछे एहवा संसाररूपीया समुद्रमानांखेछे अनेवली ताहरा सर्वांगने निकाचित कर्मरूप सांकलेकरीबांधेछे ॥ १४ ॥

कष्टेन धर्मो लवशो मिलत्ययं क्षयं कषायैर्युगपत्प्रयाति च ॥
अतिप्रयत्नार्जितमर्जुनं ततः किमज्ञ ही हारयसे नभस्वता ॥ १५ ॥

अर्थ॥हवेआत्माने कष्टेंउपार्जितधर्म राखवानो उपदेशकहेछे हेआत्मातुंधर्मनुं एकलवलेशमात्रपण कष्टेंकरीने सचयकर केजेथकीताहरो कषायेकरीने युगपतके०समकाले घणाकालनो संचित करेलुजेक्लेशते एकवारेज क्षयपामे तेमाटेहेमूर्ख घणाउद्यमे उपाज्यैंएहवुं अर्जुनजे सुवर्ण ते वायुएकरीने हाइतिखेदे शुहारी जायछे एटलेसुवर्णरस वायुये हाय्यानीपरे कष्टेंउपार्ज्योजेधर्म तेनेकषायरूपवायुये हरावेछेतेयुक्तनथी ॥१५

शत्रूभवंति सुहृदः कलुषीभवंति धर्मा यशांसि नि
चिता यशसीभवंति॥ स्निह्यंति नैव पितरोपि च बांध
वाश्च लोकद्वयेपि विपदो भविनां कषायैः ॥ १६ ॥

अर्थ ॥हवेकषायथी इयाइयाअवगुणथायछे तेकहेछे ससारीजीवने कषायेंकरीने मित्रतेशत्रूथाय वलीधर्मजे तपदानादिक तेमेलाथाय वलीचिरकालनोसंचेलोयश तेपण अपयशसरखोथाय वलीमातापिता तथा बीजास्वजनादिक तेपणकोइ स्नेह नकरे तेमाटेप्राणीने कषायेकरी आलोके अनेपरलोकेपण आपदाथाय. ॥ १६ ॥

रूपलाभकुलविक्रमविद्या श्रीतपोवितरणप्रभुताद्यैः ॥
किं मदं वहसि वेत्सि न मूढानंतशः स्वभृशलाघवदुःखं ॥१७॥

अर्थ ॥ हवेजीवने मदनिवारवाआश्री उपदेशकहेछे हेआत्मातुं रूप लाभ कुल पराक्रम विद्या लक्ष्मी तप दान ऐश्वर्य तथाआदिशब्दथी जाति परिवार स्त्री मं

दिर इत्यादिकें करीने मद अहंकार शुंवहेछे? हेमूर्खअनंतिवार पोताना अतिशये लाघवपणानुजे दुःख तेकेमनथी विचारतो? तुंपोतेंज अनंतिवार कुरूप जाजरहित हीनकुल निर्बल मूर्ख दरिद्री तपकरवाने अशक्त कृपण दास किंकर एहवो अवतर्यो हतो त्यांपणसर्ववातें हीनपणुं अनुजव्युं तोआजइहां शुंमदकरेछे॥१७॥

विना कषायान्नजवार्त्तिराशि र्नवेन्नवे देव च तेषु सत्सु॥ मूलं
हि संसारतरोः कषायास्तत्तान् विहायैव सुखी नवात्मन्॥१८॥

अर्थ॥ वलीफरीने कषायनुंत्यजवुंज कहेछे. हेआत्मासंसारमां कषाय विना संसार संबंधीनी आर्त्तिनोसमूह होयजनहीं अनेतेकषायेकरी विद्यमानछते नवार्त्तिनीराशि होयज केमके संसाररूपीयां वृक्षनुमूल तेकषायजछे. माटेतेकषायनेछांमीनेसुखीथा. शांतिसुखनेपाम.॥१८॥

समीक्ष्य तिर्यङ्नरकादिवेदनाः श्रुतेक्षणैर्धर्मदुरापतां तथा॥
प्रमोदसे यद्विषयैः सकौतुके स्ततस्तवात्मन् विफलैव चेतना॥१९॥

अर्थ॥ हवेजेविषयने त्यजीशक्तोनथी तेप्राणीने शास्त्रजण्यो तेपणअफलछे ते आश्रीकहेछे हेआत्मा श्रुतजेसिद्धांत तेनेजोवेकरीने तिर्यंच नरक प्रमुखनी वेदनाने तथासर्वज्ञनाषित धर्मनुंदुर्लजपणुंछे एमतेंसम्यक्प्रकारेजाणीने पणजोतु कौतुकसहितथको विषयमांराचेछे तेवारे ताहारो चेतनाजे ज्ञानदृष्टि तेनिरफलछे केमके तुनरकादिकनादुःखने जाणतोछतोपण दुर्लजधर्मपामिने धर्मकरतोनथी॥१९॥

चौरैस्तथा कर्मकरैर्गृहीते दुष्टैः स्वमात्रेप्युपतप्यसे त्वं॥ पुष्टैः
प्रमादैस्तनुन्निश्च पुण्यधनं न किंवेत्स्यसि लुंठ्यमानं॥२०॥

अर्थ॥ हवेधर्मरूपधन तेलुटातुंनथी तेआश्रीजीवने उपदेशकहेछे हेआत्माचोर लोको तथा दुष्टकुलक्षणकर्मकर जेदासादिकतेणे स्वमात्रके० मात्रबाह्यधनने अपहरयाछतां तुपरितापकरेछे पणपोतानापोष्या एवाजेप्रमाद तथा तनुके० शरीर तेणेचोरनीपेठें लुटयुं एहवुंजे ताहरुं पुण्यरूप धन तेसर्वलुंटाइजायछे माटेतेहनी रक्षाकरकेजेथीतु नवांतरेसुखीथाय॥२०॥

मृत्योः कोपि न रक्षितो न जगतो दारिद्र्यमुत्त्रासितं रोगास्तेननृपादिजा न च नियोनिर्णाशिताः षोडश॥ विध्वस्ता नरका न नापि सुखिता धर्मैस्त्रिलोकी सदा तत्कोनाम गुणो मदश्च विजुता का ते स्तुतीछा च का२१

अर्थ ॥ वलीआत्माने गुणरहितपणुदेखाडी मदढांमवा उपदेशकरेछे हेआत्मा जोतें मृत्युनामुखथी कोइप्राणीराख्योनथी तथा जगतजेविश्वतेनुं दारिद्रनाशपमा डयुंनथी वलीसोलेरोगजे कासादिक तथाराजाअने,चोरप्रमुखनानय तेनाशपमाड्या नथी वलीसातजेनरक तेपणनिवार्यानथी तथाधर्मेकरीने त्रिभुवनने सदासुखीकीधुन थी इत्यादिकगुणमाहेलो एकगुणजोताहरामानथी तेवारेताहारोगुणतेम्यो, अनेतेगु णविना मदतेश्यो, तथा विद्वताके० मोहोटाइतेशी, तथास्तुति प्रशंसानीवांछा तेप णशी, एटलेपूर्वोक्त तथाविध कोइगुणजोताहरामाहोयतो मदकरवोपणघटेछे पण तेविना तोजेमदकरवोतेसर्वे निरर्थकछे तेमाटे मदमत्सरादिकत्यजवा ११ इतिश्री अध्यात्मकल्पद्रुमेविषयकपायाद्यवशताधिकार सप्तम संपूर्णम्म. ॥

अथशास्त्राभ्यासोपदेशः॥शिलातलाभे हृदि ते वहंति विशंति सिद्धांत रसा न चांत॥यदत्र नो जीवदयार्द्रता ते न भावनांकूरततिश्च लभ्या॥१॥

अर्थ ॥ हवेआठमेंअधिकारे शास्त्रगुणकेहेछे त्यांप्रथमउपमानेशिक्षातरेचित्तनुक ठिणपणुंदेखाडेछे हेआत्माशिलाना तलियासरखा ताहराहृदयमां सिद्धांतरूपिया रसवहेछे पणतेथीताराअंत.करण लिगारेभेदातोनथी केमकेएहृदयमा जीवदया रूप णीकोमलता तथाभावनाजे अनित्यत्वादिक तेरूपीयाअंकूरनी श्रेणी देखाती न थी कोमलपृथ्वी जेम जलप्रवाहनेयोगें आर्द्रतापामे तथात्या अनेकअंकुरादिप्रगटे तेमआसनसिद्धिकजीवने सिद्धांतनायोगथी हृदयमा कोमलताथाय तथाभावनाप्र मुख शुभपरिणामपणउपजे अनेडुरसिद्धिकजीवने तोए शिलातलनुंदृष्टांतजाणवु.

यस्यागमांभोदरसैर्न धौत प्रमादपंक स कथं शिवेच्छु ॥
रसायनैर्यस्य गदा क्षता नो सुदुर्लभं जीवितमस्य नूनं ॥ २ ॥

अर्थ ॥ हवेउक्तिविशेषेकरी सिद्धांतनुं माहात्म्यकहेछे जेप्राणिने आगमजेसिद्धांत तेरूपीया मेघनेरसेकरी प्रमादरूपीयो पंकजेकचरो तेधोवाणोनथी तेवाप्राणिमुक्ति शुंवाछेछे एटले जेने सिद्धांतजाणवाथीपण प्रमादमटचोनही तेप्राणिपछे श्याथीप्र मादरहितथइ मुक्तिपामशे केमके सिद्धांतथीअधिक बीजोकोइ प्रमाद परिहारनो उपायनथी तेउपरदृष्टांतकहेछे जेपुरुषने रसायनजेपारदादिक तेथीपण रोगक्षयन पाम्यो तेनेजिवतव्य तेयणुजदुर्लभछे एमइहांपणजे सिद्धांतजाणीने प्रमादरहितन थाय तोतेनेमुक्तिपामवी घणीज दुर्लभछे ॥ २ ॥

अधीतिनोर्चादिकृते जिनागमः प्रमादिनो दुर्गतिपापतेर्मुधा ॥
ज्योतिर्विमूढस्य हि दीपपातिनो गुणाय कस्मै शलनस्य चक्षुपी॥३॥
अर्थ ॥ हवेजेपुरुपसिद्धांतनणिनेपण प्रमादवतछे तोतेहनुंभणवुं वृथाछेते कहे छे जेपुरुपप्रमादवत्त सर्वथा दुर्गतिनोपडनार तेअर्चादिके० केवलपूजासत्कारादिक नेजअर्थे सिद्धांतनणे एवोहोयतेहनु नएयुं मुधाके० निष्फलजाणवु तेउपर दृष्टां तकहेछे ज्योतिके० प्रकाशेंकरीनेज मुंकाणोथकोदीवामांजइपडे एवोजे शलनके० पतंग तेहनाचक्षूजेनेत्र तेकेवागुणनाअर्थेहोय एतोउलटाअवगुणकारीजथाय तेमप्र मादिजीवरूपजे पतगते अर्चासत्कारादिक ज्योतिमां मुंकाणोथको दुर्गतिरूप दीप ज्वालामांपडेछे त्यांसिद्धांतरूपचक्षुतेकांईकामनआवे सामोमोहकारीथाय ॥ ३ ॥
मोदंते बहुतर्कतर्कणचणाः केचिज्जयाद्वादिनां काव्यैः केचन कल्पि तार्थघटनैस्तुष्टाः कविख्यातितः ॥ ज्योतिर्नाटकनीतिलक्षणधनुर्वे दादिशास्त्रैःपरे ब्रूम· प्रेत्य हिते तु कर्मणि जडान् कुक्षिंभरीनेव तान्॥४॥
अर्थ ॥ हवेतत्वज्ञानविना घणुंभण्योपण व्यर्थछे तेदेखाडेछे केटलाएकपुरुष घ णातर्कजेप्रमाण प्रमेयादिन्याय तेहनातर्कविचारनेविषे चणके० प्रतिष्ठित एवाछतां प रवादिने जीपवाथकी हर्षपामेछे तथावलीकेटलाक चिंतव्याअर्थनी रचनाएरच्यां एहवेकाव्येंकरीने कवीपणानीप्रसिद्धियकी संतोषपामेछे वलीकेटलाएक ज्योतिप नाट क नीतिके० व्यवहार शास्त्र लक्षणके० सामुद्रिक तथाअश्व गजलक्षणादिक धनुर्वे दके०आयुध अभ्यासनांशास्त्र आदिशब्दथी शकुन गारुडि इत्यादिक शास्त्रेकरीने सं तोषपामेछे पणपरलोकनेविषे हितकारीएवाजे संयमादिककर्मतेहनेविषेजो जडके० अज्ञानछेतोतेसर्वेने अध्यात्मशास्त्रने अनुसारे अमेपेटभरा कहियै छैये एटलेअध्या त्मशास्त्रनेमूकीबीजासर्वेजे पापश्रुतादिशास्त्र तेपेटभराइनाजछे ॥ ४ ॥
किं मोदसे पंडितनाममात्रात् शास्त्रेष्वधीती जनरंजकेपु ॥ तत्किं चनाधीष्व कुरुष्व चाशु न ते भवेद्येन भवाब्धिपातः॥५॥
अर्थ ॥ वलीतेहिजदृढछे हेपंडिततुं जनके० लोकनेरजनना करनार एहवाजे शृंगार नाटककाव्यादिशास्त्र तेहनेविषेप्रवीणथको नाममात्रपंडितपणाथी हर्षपा मेछे एलोकरंजकशास्त्रथी कांइआत्मार्थनीसिद्धिनथी पणतुंशास्त्रनेजाणिने शीघ्रपणे कांइकएहवीकरणीकर केजेणेकरीने तुजनेसंसार समुद्रमां बुमवुंनथाय एटलेजिनाग मनणिने तेहनेअनुसारें संयमआराध ॥ ५ ॥

वंधोऽनिशं वाहनताडनानि क्षुत्तृड्दुरामातपशीतवाताः ॥
निजान्यजातीयभयापमृत्यु दुःखानि तिर्यक्ष्विति दुःसहानि॥३॥

अर्थ ॥ हवेतिर्यंचगतिआश्री दुःखदेखाडेछे अनिशके० नित्यबंधन तथा वाहन के० भारनुउपाडवु तथापराणादिकना प्रहारेकरी ताडन वली क्षुधा तृषा दुरामके० दुष्टरोग आतप तडको तथाटाढय वायुइत्यादिक तथावलीस्वजातीनोभय जेम म हिषने महिषनोभय तथाहस्तिने हस्तिनोभय तथाअन्यजातीयभय ते जेम मृगादि कने व्याघ्रादिकनोभय तथाअपमृत्युजे कुमरण खड्गप्रहारथी तथाआहेडीप्रमुख थी तथाजल दावानल विषमादिकयोगथी क्षुधातृषादिक गाढवेदना आक्रांतपणे अकालमृत्यु इत्यादिकप्रकारे तिर्यंचगतिमा भयकरकठीन दुःखहोयछे ॥ ३ ॥

सुधान्यदास्याभिभवाभ्यसूया भियोतगर्भस्थितदुर्गतीनां ॥
एवं सुरेष्वप्यसुखानि नित्यं कितत्सुखैर्वा परिणामदुःखैः ॥४॥

अर्थ ॥ हवेदेवगतिआश्रीदुःखकहेछे नित्यप्रते मुधाके० फोकट अन्यके० पारकी सेवा करवी केमकेमनुष्यतो धननालोभे तथाआजीविकादिक कारणथी परनीसेवा करे अनेदेवतानेतो तेवोकोइनिमित्तनथी तोपणसदाकाले इंद्रादिकनीसेवाकरवी त थाआभवेवज्रप्रहारादिकनी पीडा अने अभिसूयाके० परस्परे ईर्षा द्वेषादिकभा वलि अंतके० चवनदुंभय केमके सरवार्थसिद्धिना देवतानेपण चवनदुंभयछे तथागर्भा वासनुभय वलीदुर्गतिजे चांमालादिककुलें अथवातिर्यंचनुंअवतारलेवु तेसबंधीभय इत्यादिक प्रकारे देवतानाभवमापण घणाप्रकारे असुखछे तेमाटेपरिणामे दुःखकारी एहवाजे देवतासबंधीसुख तो तेसुखेसुंथाय माटेतेसुखनेपण असुखकरीजाणवा॥४॥

सप्तभीत्यभिभवेष्टविप्लवानिष्टयोगगददुःसुतादिभिः ॥
स्याच्चिरं विरसता नृजन्मनः पुण्यतः सरसतां तदानय ॥५॥

अर्थ ॥ हवेमनुष्यगतिआश्री दुःखकहेछे धुंवके० निश्चेंकरीने सातभीतिजे १ इह लोक २ परलोक ३ आदान ४ आकस्मिक ५ आजीविका ६ मरण ७ अपयश एसातभय तथा अभिभवके० राजा चोर दुर्जनादिकथी पराभव तथा इष्टजे वल्ल भजन स्त्री पुत्रादिकनोवियोग शत्रुप्रमुखनो योगके० संबंध तथा गदके० रोग वली दुःसुतके० कुपुत्र आदिशब्दथी कुभार्याप्रमुख इत्यादिकप्रकारेकरीने मनुष्यजन्मनु पण विरसपणुथाय तेकारणमाटे पुण्येकरीने मनुष्यजन्मनु सुरसपणुकरवु ॥ ५ ॥

इति चतुर्गतिदुःखततीः कृतिन्नतिभयास्त्वमनंतमनेहसं ॥ हृदि
विभाव्य जिनोक्तकृतांततः कुरु तथा न यथास्युरिमास्तव ॥६॥

अर्थ ॥ हवेउपसंहारकहेछे हेपंडितआत्मा एप्रकारे अनंतकालसुधी अतिशय भयनीकरनार एहवीचारगतिसंबंधीजे दुःखनीश्रेणी तेप्रते जिनोक्त श्रीसर्वज्ञप्रणित कृतांतजे सिद्धांत तेथकी हृदयमां विचारीने जेम ए चारगतिना दुःखनीश्रेणीओ तुजने कोइवारे प्राप्तनथाय तेवो उपाय कर ॥ ६ ॥

आत्मन् परस्त्वमसि साहसिकः श्रुताक्षैर्यद्भाविनं चिरचतुर्गतिदुःखराशिं ॥
पश्यन्नपीह न बिभेपि ततो न तस्य विच्छित्तये च यतसे विपरीतकारी॥७॥

अर्थ ॥ हवेआत्मा चारगतीना दुःखजाणतोथकोपण धर्मनेविषे तत्परथातु नथी तेवास्तेपरमअविचारीपणुं देखाडेछे हेआत्मातुं अविचारमांहेमुख्यछो केमके आसंसारमां चिरकाललगें नावीएहवोजे चारगतिनादुःखनोसमूहतेहने श्रुतसिद्धांत रूपनेत्रेकरी देखतोछतोपण बीकपामतोनथी वलीतेदुःखना समूहनोविछेद करवा नेपण उजमालथातुनथी माटेतुं उपरावांकर्मनुंकरनारछो केमके दुःखछेद कर्मकरवानेबदले दुःखवृद्धिकारीकर्मकरेछे॥७॥इतिशास्त्रोपदेशांतरगतचतुर्गत्याधिकारसमाप्त

अथमनः ॥ कुकर्मजालैः कुविकल्पसूत्रजैर्निबध्य गाढं नरकाग्निभिश्चिरं॥
विसारवत्पक्ष्यति जीव हे मनः कैवर्त्तकस्त्वामिति मास्य विश्वसीः ॥१॥

अर्थ ॥ हवेचित्तदमन नामानवनमोद्वार कहेछे तेमांप्रथम आत्माने मनरूपशत्रुनु विश्वासकरवुनिषेधेछे हेजीवतुजने मनरूपी धीवर तेकुविकल्परूप सूत्रेगुथ्या एहवाजे कुकर्मरूपी जालो तेणेकरीगाढोबांधीने नरकरूप अग्नियेकरी मत्स्योनीपरे चिरकाललगे पचावसे जेमधीवरपण मत्स्यने सूत्रनीजाले गाढोबांधीनेपछे अग्नीमांपचावे तेमइहांपण एउपनयजाणवुं माटेतुंताहरामनरूप धीवरनोविश्वासकरीसनही जेम ते मनरुप धीवरनाबनावेला कुकर्मरूपजालमांपडेनही एवीरीतेंवर्त्तजे ॥ १ ॥

चेतोऽर्थये मयि चिरत्नसख प्रसीद किं दुर्विकल्पनिकरैः क्षिपसे भवे मां॥
बद्धांजलिः कुरु कृपां भज सद्विकल्पान् मैत्री कृतार्थय यतोनरकाद्विभेमि२

अर्थ ॥ हवेआत्माबीहितोथको मनरूपमित्रने विनंतीकरेछे हेचिरकालनामित्रतु चेतहैयामाहे हेघणाकालना सहचारीतु महाराउपर प्रसादकरीने एमागा विकल्पने समूहेकरीने मुजने आसंसारमां सुंनमावेछे तुजनेहुं हाथजोमीने कहुंछुं जेतुमहारा

उपर कृपाकरीने शुनविकल्पजे धर्म ध्यानलक्षण तेह्नी नजनाकरी आपणीमैत्री स फलकर केमकेहुं हवे नरकना डुःखथी बीहुंछुं ॥ २ ॥

स्वर्गापवर्गौ नरकं तथांतर्मुहूर्त्तमात्रेण वशावशं यत् ॥
ददाति जंतोः सततं प्रयत्नाद्वशं तदंतःकरणं कुरुष्व ॥ ३ ॥

अर्थ ॥ हवेआत्माने मनवशकरवाआश्री उपदेशआपेछे हेआत्माजे अंतःकरण वशतथा अवशथको जीवने अंतरमुहूर्त्तमात्रमांज स्वर्गमोक्षादिकना सुखप्रतेआपे अनेनरकनी प्राप्तिपणकरावे एटलेमनवशथको जीर्णशेठ तथाप्रश्नचंदराजर्षि इत्यादिकनीपरे स्वर्गमोक्षादिकआपे अने मनअवशथको तंडुलमत्स्यादिकनीपरे अंतरमुहूर्त्तमात्रमां नरकप्रतेआपे तेमाटेलुताह्रश अंतःकरणनेज सर्वथाप्रकारेवशकर ॥३॥

सुखाय डुःखाय च नैव देवा न चापि कालः सुहृदोरयो वा ॥
नवेत्परं मानसमेव जंतोः संसारचक्रभ्रमणैकहेतुः ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ हवेतेह्जिकहेछे जीवने देवता तथा वर्षा शीत ग्रीष्मादिककाल तथा मित्र शत्रुतेकोइपण सुखदायी तथाडुःखदाइनहोय पणएकमन तेह्जिजीवने सुखदायी तथा डुःखदायीहोय हवे तेमनकहेवुछे तेकहेछे संसारसमुद्रमां भ्रमणजे जन्ममरणादिक तेह्नुंएकहेतुछे एवचन संज्ञीपंचेंद्री आश्रीजाणवुं अन्यथा असंज्ञीने मनना अनावे पण संसारमां भ्रमण देखायछे ॥ ४ ॥

वशं मनो यस्य समाहितं स्यात् किं तस्य कार्यं नियमैर्यमैश्च॥
हतं मनो यस्य च डुर्विकल्पैः किं तस्य कार्यं नियमैर्यमैश्च ॥५॥

अर्थ ॥ जेप्राणीनेपोतानुंमन समाधिवंतछतो वशवर्त्तिहोय तेह्ने नियमजे १ शौच २ संतोष ३ स्वाध्याय ४ तप ५ देवताप्रणिधानादिक लक्षण तथायमजे प्राणातिपात विरमणादिक पांचमहाव्रत तेह्नुंसुंकार्यछे केमकेतेतोसर्वे मनवशकरवाना उपायछे अनेजेवारेते मनवशथयुं तेवारेतो ते सर्वगुण प्रथमजआव्या अनेजे प्राणीनुं मन माठाविकल्पेकरी हतप्रहतछे तोतेह्ने नियमयमे करीने पणसुंथवानुंछे जेमछालीना गलाना स्तनथाव्याथी काइ अर्थसिद्धि नथाय तेमज मनवश थयाविना यम नियमादिक पण व्यर्थ जाणवा ॥ ५ ॥

दानश्रुतध्यानतपोर्चनादि वृथा मनोनिग्रहमंतरेण ॥ कषाय
चिंताकुलतोज्झितस्य परो हि योगो मनसोवशत्वं ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ जीवनेएक मनवशथयाविना दानतथा श्रुतसिद्धांतनुंभणवुं तथाध्यान तथा अर्चनजे देवपूजा आदिशब्दथी प्रासाद देवप्रतिष्ठादिक क्रिया तेसर्वदृथाजा णवी पण तेमोक्षफलनी देनारनथाय केमके कषायजेक्रोधादिक तेसंबंधीनीचिंता थकी उपनीजे असाता तेणेकरीरहित एहवुंजेमन तेहनुंवशवर्त्तिपणुं तेहिजपरम योगछे अने तेहिज अष्टांग योगनुं सर्वस्वछे ॥ ६ ॥

जपो न मुक्त्यै न तपोद्विभेदं न संयमो नापि दमो न मौनं ॥
न साधनाद्यं पवनादिकस्य किं त्वेकमंतःकरणं सुदांतं ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ जीवने नवकारादिकनोजप तथा बाह्य अभ्यंतर बेप्रकारनुंतप तथासंयम चारित्र तथा दमजे इंद्रियदमन तथामौनजे वचननुंसंवर तथा पवनादिकनुंसाधन आदिशब्दथी चोरासी योगासनप्रमुख तेकांइमुक्तिना देवावाला थायनही तेवारे तुजने कितुके॰ मुक्तिप्राप्तिनो शोउपायछे तेकहेछे जेणेरुडीरीते पोतानुंअंतःकरणजे मनतेहने वशकर्युं तोतेहिज एकमुक्तिनुं दातार होय ॥ ७ ॥

लब्ध्वापि धर्मं सकलं जिनोदितं सुदुर्लभं पोतनिभं विहाय च ॥
मनःपिशाचग्रहिलीकृतः पतन् भवांबुधौ नायतिदृग्जडो जनः ॥८

अर्थ ॥ जडके॰ हेअज्ञानीप्राणी अतिशयेंकरीपामवुंदुर्लभ प्रवहणसरिखो एह वोएसर्वज्ञप्रणीत संपूर्णधर्म तेप्रतेंपामिने वलीतेहनेछांडिने मनरूपिओ पिशाचके॰ भूततेणेघहेलोकर्योथको संसारसमुद्रमांपडता आयतिदृगके॰ उत्तरकालनो विचार करतोनथी एटलेएमनथी विचारतोजे प्रवहणरूप,धर्मनेछांडी संसारसमुद्रमां जंपापा तखाउंछुं तेथी आगलें हवे महारी शीगति थासे ॥ ८ ॥

सुदुर्जयं ही रिपवत्यदोमनो रिपूकरोत्येव च वाक्तनू अपि ॥
त्रिभिर्हतस्तद्रिपुभिः करोतु किं पदीभवन्दुर्विपदां पदे पदे॥ ९॥

अर्थ ॥ हेआत्माअतिशय दुर्जयएहवुंजे ताहरुंमन तेपोतेंशत्रुपणुं आचरेछे अ नेवली,वचनतथाकायानेपण शत्रुकरेछे मनदुष्टथके वचनतथा कायानाव्यापारपण दुष्टथाय तेकारणमाटे मन वचन तथाकाया एत्रणेशत्रुयें पराभव्यो एहवोतुंपगेंपगें दुष्ट विपदा जे नरकादिक तेहनुं भाजनथातोथको तुसुंकेरे एटलेताहरोकांइचालतुं नथी॥९

रे चित्त वैरि तव किं नु मया ऽपराद्धं यद्दुर्गतौ क्षिपसि मां कुविकल्पजालैः॥जा
नासि मामयमपास्य शिवेस्ति गंता तत्किंन संति तव वासपदं ह्यसंख्याः१०

अर्थ ॥ हेचित्तरूपवैरी में तादृशोशो अपराधकीधोछे केतुमुजने विकल्परूपजालें बांधीने दुर्गतिमानाखेछे जोतुएमजाणतोहोयजे एजीवमुजनेपरिहरीने मुक्तिजनारछे तोपणताहरे वशकरवानास्थानक वलीमहाराशिवाय बीजाअसख्याता संसारीजी वसुंनथी एटले एकहुंजतोरह्यो तोपण ताहरेबीजानीशीखोटछे ॥ १० ॥

पूतिश्रुतिःश्वेव रतोर्विदूरे कुष्टीव संपत्सुदृशामनर्हः ॥
श्वपाकवत्सद्गतिमंदिरेषु नार्हेत्प्रवेशं कुमनोहतोगी ॥ ११ ॥

अर्थ ॥ हवेमननाअवशपणाथकी बहुप्रकारना अवगुणथायछेतेदेखाडेछे दुष्ट मनेकरीसंतापपाम्यो एहवोजेप्राणी तेकुह्याकानना कुतरानीपरें रतिजेनिवृत्तितेहथी वेगळोहोय जेम कीडेखाधो एहवोजे कुतरोते किहांपणक्षणमात्र रतिपामेनहीतेम कुविकल्पचित्तनोधणी तेपणरतिरहितहोय वलीकोढीआनीपरे संपदारूपणीजे सुदृ शाओरूप उत्तमकन्याओ तेहेनेवरवाअयोग्यहोय जेमकोढीआनेकोइपण उत्तमक न्यावरवावाछेनही तेमदुष्टचित्तवतप्राणीने सौभाग्यादिक कोइपणसपदाआश्रयेनही वलीसद्गतिरूपजेमदिर तेहनेविषे श्वपाकके० चडालनीपरे प्रवेशकरवानपामे॥११

तपोजपाद्याः स्वफलाय धर्मा न दुर्विकल्पैर्हतचेतसः स्युः ॥
तत्खाद्यपेयैः सुभृतेपि गेहे क्षुधातृषाभ्यां म्रियते स्वदोषात्॥१२॥

अर्थ ॥ माटेविकल्पेकरी जेहनुंचित्तपीडाएलुंछे एहवाप्राणीने तपजपप्रमुखजेधर्म तेपोतपोताना फलनुंदेवावालोनथाय अने कुविकल्पचित्तनोधणी धर्मक्रियाकरतोथ कोपण मोक्षफलपामेनही तेउपरदृष्टातकहेले जेमकोइ अपुण्यवतप्राणी खानपाना दिके भरेलाघरमांपण पोताना कृपणताद्यादिकदोषथी क्षुधतृष्णायेपीडाय तेमइहा पण कुविकल्पचित्तवतप्राणीते छतेधर्मेपण परभवेसीदाय ॥ १२ ॥

अकृत्रसाध्यं मनसो वशीकृतात् परं च पुण्यं न तु यस्य तद्वशं ॥
स वंचितः पुण्यचयैस्तदुद्भवैः फलैश्च हीहीहतकः करोतु किं॥१३॥

अर्थ ॥ एकेमनना वशकरवाथी वीजुंसर्वपुण्यते सुखेसाध्यछे अनेते मन जेहनेव शनथी तेप्राणी पुण्यनेसमूहें तथातेपुण्यजनितफलेंकरीने वाछितछे तेफोकटछे एट लेमनवशविना पुण्यनी तथापुण्यजन्यक फलनी फोकट आशाराखेछे तेमाटे हीही इतिखेदे एवापडो प्राणी शुंकरे पछे तेहने एके गतिनथी ॥ १३ ॥

अकारणं यस्य सुडुर्विकल्पैर्हतं मनः शास्त्रविदोपि नित्यं॥
घोरैरघैर्निश्चितनारकायुर्मृत्यौ प्रयाता नरके स नूनं ॥ १४ ॥

अर्थ ॥ यद्यपिसिद्धांतनोजणनारछे तथापिजेहनुंमन अकारणके० उपसर्गादिककारणविना पण नित्ये अतिशयेकुविकल्पेंकरी पीमितछे तेपुरुषमहारौड्पापेंकरीने दृढकीधुंछे नरकायुजेणे एहवुंथकोते सर्वथा मुआपछी नरकमांजजशे ॥ १४ ॥

योगस्य हेतुर्मनस॰ समाधिः परं निदानं तपसश्च योगः॥
तपश्च मूलं शिवशर्मवल्या मनःसमाधिं नज तत् कथंचित्॥१५॥

अर्थ ॥ मननीसमाधिजे एकाग्रता तेहिज योगनुंहेतुछे अनेवलीयोगजे अष्टांगलक्षण तेतपनुंपरम उत्कृष्टकारणछे अनेतेतपतो मोक्षसुखरूपणी वेलीनुंमूलछे माटेहेआत्मा जेतेउपाय करीने मननीसमाधिनेआदर केमके मननीसमाधिथी योग अने योगथी तप तथा तपथीमोक्षसुख एमपरपराये सर्वसिद्धिपामे ॥ १५ ॥

स्वाध्याययोगैश्चरणक्रियासु व्यापारणैर्द्वादशनावनानिः ॥
सुधीस्त्रियोगी सदसत्प्रवृत्तिः फलोपयोगैश्च मनो निरुंध्यात् ॥१६॥

अर्थ ॥ हवेमनसमाधिना उपायकहेछे स्वाध्यायजे जिनागमतेहनायोगनुं वहेवुं आंबिलादिक तपविशेष तेणेकरीने तथाचारित्रसंबंधीनी क्रियानेविषे प्रवर्त्तवेकरी वलीअनित्यादिक बारनावनायेकरीने वली त्रियोगीजे मन वचन कायानायोग ते होनी सदसद्प्रवृत्तिके० नलोअने नूंडोव्यापार तेहना फलनुं उपयोगजे विचारणा एटलेत्रियोगना शुनव्यापारनो शो फलछे एहवीविचारणा अने अशुनव्यापारनोशो फलछे एहवाजे उपयोगदेवा इत्यादिक प्रकारेकरी मननेवशकरवुं ॥ १६ ॥

नावनापरिणामेषु सिंहेष्विव मनोवने ॥
सदा जाग्रत्सु दुर्ध्यानसूकरा न विशंत्यपि ॥१७॥

अर्थ ॥ हवेवली एसर्वप्रकारमा पण नावनापरिणामने विशेषदेखाडेछे मनरूपी आवननेविषे सिंहसरिखाजे नावनाना परिणाम तेमांसर्वदासावधानरहेथके डुर्ध्यानजे आर्त्तरौड्ध्यान तेरूपजे सूअरोते प्रवेशपणकरीशकेनही तोतिहां तेसूअरो वासकरवानेतो सर्वथानजपामे ॥ १७ ॥ इति श्रीअध्यात्मकल्पडुमे चित्तदमनाभिधानो नाम नवमोऽधिकार संपूर्ण थयो. ॥ ९ ॥

अथ सामान्यतो वैराग्यधर्मोपदेशः ॥ किं जीव माद्यसि हसस्य
यमीहसेऽर्थान् कामांश्च खेलसि तथा कुतुकैरशंकः ॥ चिद्धि
प्सु घोरनरकावटकोटरे त्वा मभ्यापतल्लघु विभावय मृत्युरक्षः॥१॥

अर्थ ॥ हवेसामान्यथी वैरागोपदेशनामा दसमोअधिकारकहेछे तेमाप्रथमजीवने मरणसबंधीभयदेखाडेछे हेजीवतु मदशानोकरेछे तथासुंहशेछे वली अर्थजेसुवर्णरूपादिक तेहनेसुंवांछेछे तथावली निःशंकछतो कौतुकेकरीने कामजे शब्दादिक विषय तेप्रतेसुंरमेछे तुजनेतो भयंकर नरकरूपजे खाइ तेमांनाखवावाछतो एवो मृत्युरूपजे राक्षस तेउतावलुं तारेसन्मुखआवतु सांभलीने निःशंकरहिशनही॥१॥

आलंबनं तव लवादिकुठारघाताश्छिंदंति जीवितत‍रुं न
हि यावदात्मन् ॥ तावद्यतस्व परिणामहिताय तस्मि
न् छिन्ने हि कः क्वच कथं भविता स्वतंत्रः ॥ २ ॥

अर्थ ॥ हवेआउखुंविद्यमानछते जीवनेधर्मकरवु उपदेशेछे हेआत्मातारहो आलंबनआधारभूत एहवोजे जीवितव्यरूपवृक्ष तेप्रते लवादिकजे लव लेश क्षण घडी मुहूर्त्तप्रमुखकालमान तेरूपीया कुहाडानाघाव ज्यांलगेछेदेनही तेहथीपहेलांज परिणामहितजे निदानहितकारी तपसंयमादिक तेहनेअर्थेउद्यमकर जेथकीताहरो जीवतव्यरुप वृक्षछेद्यापछि फरीतेहने नवपल्लवकरवाने किहांक कोइकप्रकारें पण मन्त्रउपायथासे जेणेकरीतु जीवतव्यरूपतरुने नवपल्लवकरीस एटलेक्षणेक्षणे जीवतव्यरुप वृक्षछेदातुंजायछे तेछेदाइगयापछि फरीसज्जकरवानु कोइउपायनथी तेमाटे आत्महितनेविषे तत्परथावु एहिजश्रेष्टउपायछे ॥ २ ॥

त्वमेव मोग्धा मतिमान् त्वमात्मन्नेष्टाप्यनेष्टा सुखदुःखयोस्त्वं ॥
दाता च भोक्ता च तयोस्त्वमेव तच्चेष्टसे किं न यथाहिताप्ति ॥३॥

अर्थ ॥ हवेसर्वकरणीते आत्मानेआधीनछे एहवुकहिने विशेषेंप्रेरेछे हेआत्मातुं मोग्धाके० मूढतासहितछो अने मतिमान्के० ज्ञातापणतुछो वलीसुखदु वांछक अनेदुःखनुंअवांछकपणतुछो तथासुखअनेदुःखनुंदाता अनेभोक्तापणतुजछो केमके सुखदुःखते स्वकृतकर्मथीजथायछे यदुक्तं श्रीउत्तराध्ययने अप्पानईवेअरणि अप्पामेकूडसामली अप्पाकामदुघाधेणु अप्पामेनंदणवण अप्पाकत्ताविकत्ताय इत्यादिक माटे जेरीतें ताहरीआत्माने हितनीपजे तेमजकानथीकरतो ॥ ३ ॥

कस्ते निरंजन चिरं जनरंजनेन धीमन् गणोस्ति परमार्थदशेति पश्य ॥
तं रंजयाशु चरितैर्विशदैर्भवाब्धौ यस्त्वां पतंतमबलं परिपातुमीष्टे ॥४॥

अर्थ ॥ हवेलोकनेरीजवतोथको आत्मापोतानुं हितकांइकरतोनथी तेआश्रयीउ पदेशछे हेनिरंजन हेनिरलेपआत्मा हेबुद्धिवंत हेहिताहितविवेकनाजाण चिरकाल जावजीवलगें लोकनुंरीजववुं एटलेमलीनवस्त्र धारणकरी बाह्यक्रिया देखाडीने शू न्यचित्ते गामेगामें उपदेशआपीने लोकनुंमनरीजववुं तेथीतुजने शोगुणछे एटलुंत त्वदृष्टे विचारी परमार्थदृष्टीयेजोतां लोकरीजव्याथी आत्माने अर्थसिद्धिकांइनथी तेमाटे लोकरंजनत्यजीने उतावलोथयी विशदके० निर्मलजे चारित्र तपसंयमादिक आचरण तेणेकरीने श्रीवीतराग तथातेमनाजापेलाधर्मनेरीजव जेथकीतुजने अ बलंके० परभवें संबलेंरहित संसारसमुद्रमांपडताथका राखवानेसमर्थथाय केमके संसारमांपडता एकधर्मजआधार आपशे पणलोककोइ आधारआपशेनही ॥४॥

विद्वानहं सकललब्धिरहं नृपोहं दाताहमद्भुतगुणोहमहं गरीयान्॥
इत्याद्यहंकृतिवशात् परितोषमेषि नो वेत्सि किं परभवे लघुतां भवित्री॥५

अर्थ ॥ हवेअहंकारनिवारवा उपदेशछे हेआत्मा हुंपंडितछुं हुंसर्वलब्धीये स हितछुं हुंराजाछुं हुंदातारछुं हुंअद्भुतगुणवतछुं तथाहुंमहोटोछुं इत्यादिकजे पोता नामनकल्पित अहंकार तेहनावशथकी तुं परितोषके० हर्षपामेछे पणजन्मातरें भाविनी एहवीतेपदार्थोनी लघुताप्रते कांविचारतोनथी जेजेपदार्थनेतु आभवमां हुंपदेकरेछे तेतेपदार्थनीतुं परभवेंहीनतापामिस इतिभाव ॥यदुक्तं योगशास्त्रे ॥जाति लाभकुलैश्वर्य बलरूपतप श्रुतैः ॥ कुर्वन् मदं पुनस्तानि हीनानि लभ्यते जन इति ॥५॥

वेत्सि स्वरूपफलसाधनबाधनानि धर्मस्य तं प्रभवसि
स्ववशश्च कर्त्तु॥तस्मिन् यतस्व मतिमन्नधुनेत्यमुत्र
किंचित्त्वया हि नहि सेत्स्यति भोत्स्यते वा ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ हवेआत्माने इहभवेंधर्मकरवानी प्रेरणाकरेछे हेबुद्धिवतप्राणी तुधर्मनुं स्वरूपजे क्षात्यादिकदशविध लक्षण तथाधर्मनुंफलजे मोक्षादिक तथाधर्मनुंसाधन जे मनुष्यजन्म आर्यक्षेत्रादिक तथाधर्मना बाधकजे कुजन्म कुक्षेत्र प्रमाद मिथ्या त्व इत्यादिकसर्वप्रकारने वेत्सिके० जाणेछे अनेवली स्ववशके० पोतानेवशेंथको ध र्मकरवाने समर्थपणछो पणतिर्यंच नारकीनीपरे परवश तथाधर्मकरवाने असमर्थ

नथी तेमाटे आ नवमाज धर्मनेविषे उद्यमकर केमकेफरी परजवेते काइ सीजेनही तथा तुजने तेवा धर्मनु फरीकाइ जाणपणुपण नहीथाशे माटे ॥ ६ ॥

धर्मस्यावसरोस्ति पुद्गलपरावर्त्तैरनंतैस्तथा यात· संप्रति जीव हे प्रस हतो दु·खान्यनंतान्ययम् ॥ स्वल्पाह पुनरेप डुर्लभतमश्चास्मिन् य तस्वाहतो धर्मं कर्त्तुमिमं विना हि नहि त डु खक्षय कार्हिचित् ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ हवेआत्माने धर्मनुंअवसरजणावेछे हेजीवअनताडु ख सहित तुजने अनंते पुद्गलपरावर्त्ते ससारमाभटकता सप्रतिके० हमणा आ नवमा धर्म करवानुअव सरआव्योछे अनतउत्सर्पिणी अने अवसर्पिणी प्रमाण एकपुद्गलपरावर्त्त थाय ते हनुस्वरूप ग्रंथातरथीजाणवु एधर्मनुंअवसरते थोडाजदिवसलगणछे फरीपामवु घ णुडुर्लभछे तेमाटेएअवसरे श्रीजिनोक्तधर्म करवाने उद्यमकर केमके एजिनोक्तधर्म विना ताहरे किवारेपण जन्ममरणादिकना डु खनो क्षयथवानुनथी माटेजोडु ख नुं अतकरवाने वाछतोहोयतो एअवसर पामिने धर्मकरवाने तत्परथा ॥ ७ ॥

गुणस्तुतिर्वांछसि निर्गुणोपि सुखप्रतिष्ठादि विनापि पुण्यं ॥
अष्टांगयोगं च विनापि सिद्धिर्वातूलता कापि न वा तवात्मन् ॥८॥

अर्थ ॥ हवेअयुक्तवाछकपणाथी जीवनुबाहुलापणुदेखाडेछे हेआत्मातुज्ञानदर्शन चारित्रादिकगुणेरहितथकोपण गुणस्तुतिजे पोतानीप्रशसा लोकनामुखथी कीर्त्तिना वरणनने वाछेछे तथापुण्यविनापण सुखने तथा प्रतिष्ठाके० गौरवपणानेवांछेछे व ली अष्टांगजेयोग यम नियम आसन प्राणायाम प्रत्याहार धारणा ध्यान समाधि एआठयोगविना पण सिद्धिअष्टकर्मक्षयलक्षण सिद्धनाआठगुण अथवा सिद्धिते अष्टमहासिद्धि लघिमा वशिता ईशिता प्राकाम्य महिमा अणिमा यत्रकामावसायि ता प्राप्ति तेप्रतेतुवाछेछे माटेहेआत्मा एताहरो बाहुलापणुंते कोइअपूर्वनवुजदेखा यछे केमके कारणनी सामग्रीविनाज कार्य नीपजाववानी अभिलाषाकरेछे ॥ ८ ॥

पदे पदे जीव पराभिभूती· पश्यन् किमीर्ष्यस्यधम परेभ्य· ॥
अपुण्यमात्मानमवैपि किं न तनोपि किंवा न हि पुण्यमेव ॥९॥

अर्थ ॥ हवेबीजानाकरेला अपमानथी जीवईर्षाकरेछे तेआश्रीउपदेशकरेछे हे जीवतु पुण्यरहितपणाथी अधमके० नीचअवस्थापाम्योथकोपण पगेपगे बीजानी करेली जे अभिभूतिके० अपमान आक्रोशादिकते देखीने परेभ्य के० तेलोकउपरे सुं ईर्षाके० क्रोधकरेछे पणपोताना आत्मानेज पुण्यहीन केमजाणतोनथी जेपुण्यर

हितहोय तेहनेतो पगेंपगें पराभवथाय तेमांसुं महोटीवातछे एमकांविचारतोनथी अ थवानिश्रेयी पुण्यजकेमकरतोनथी केजेथकी कोइपराभवनथाय ॥ ९ ॥

किमर्दयन्निर्दयमंगिनो लघून् विचेष्टसे कर्मसु हि प्रमोदतः ॥
यदेकशोप्यन्यकृतार्दन. सहत्यनंतशोप्यंग्ययमर्दनं भवे ॥ १० ॥

अर्थ ॥ हवेआत्माप्रते परनेपीडानुं फलकहेछे हेआत्मातुं निर्दयपणेकरी ताहरा थकी लघुके० निर्बल एहवाजे अंगीके० प्राणी तेहनेपीडतोथको तु प्रमोदत के० हर्षेकरी पापकर्मविषे सुंप्रवर्त्तेछे केमके एकवारपण जेप्राणिये अन्यजीवने पीडाउ पजावीहोय तेप्राणीअनंतिवार संसारमांपीडासहे यडुक्तं तिवयरेउपडंसे सयगुणि उसयसहस्सकोडिगुणा ॥ कोडाकोडिगुणोवाहुज्ज विवागो बहुतरो वा इति ॥१०॥

यथा सर्पमुखस्थोपि भेको जंतूनि भक्षयेत् ॥
तथा मृत्युमुखस्थोपि किमात्मन्नार्दसेऽगिन· ॥ ११ ॥

अर्थ ॥ हवेतेउपर दृष्टांतकहेछे जेम भेकजे मेडको तेसर्पनामुखमां रह्यो अर्द्धग्रसित थको पण जंतुजेन्हाना क्षुद्रजीवतेप्रतेखाय तेम हेआत्मा तुपणमृत्युना मुखमां र ह्योथको पण अन्यप्राणीओने सुंपीडाआपेछे ॥ ११ ॥

आत्मानमल्पैरिह वंचयित्वा प्रकल्पितैर्वा तनुचित्तसौख्यैः ॥
भवाधमे किं जन सागराणि सोढासि ही नारकदु.खराशीन् ॥ १२॥

अर्थ ॥ हवेइहभवें हिंसाजनित अल्पमात्रसुखथी परभवे अनंतादुःख सहेवा पडशे तेकहेछे हेजन हेसंसारीप्राणी प्रकल्पितके० तेताहरी कल्पनामात्रथी दुःख नेज सुखकरीमान्या तेपणवली अल्प तुछ क्षण स्थायी एहवाजे मनवचनकाया संबंधीसुख तेणेकरी इहभवे तुठगायोछतो हाहाइतिखेदे भवजे चारगतिरूपसंसार तेमां अधमजे नरकतेहनेविषें घणाक सागरोपमसुधी नारकीनाजेदुःखसमूह तेसहे वाने सुंतत्परथायछे ए विषय सुखते दुःखजछे पणकल्पनामात्रथी एनेजीवसुख करीमानेछे ॥१२॥ यदाह भर्तृहरि ॥ तृषा शुष्यत्यास्ये पिबति सलिलं स्वादु सुरभि क्षुधार्त. सन् शालीन् कवलयति मांसाज्यकवलान् ॥ प्रदीप्ते रागाग्नौ सुदृढतरमा श्लिष्यति वधूं प्रतीकारो व्याधे· सुखमिति विपर्यस्यति जन ॥ १ ॥

तुरभ्रकाकिणयुदबिंदुकाम्र वणिक्त्रयीशाकटभिक्षुकाद्यै· ॥
निदर्शनैर्हारितमर्त्यजन्मा दुःखी प्रमादैर्बहु शोचितासि ॥ १३ ॥

अर्थ ॥ वलीतेंहिजअर्थ उत्तराध्ययनसूत्रना दृष्टांतेकरी दृढकरेछे हेआत्मातु प्रमादजे मद्यादिकपाच तेनावशथकी मनुष्यअवतारहारीने पछेपरजवेडु खीथोयको उरत्रजेबोकडो कागिणी उदकबिंडु आम्रवातकीराजा वणिकत्रयीजे त्रणव्यापारी शाकटजे गाम्रावाहक जिक्कुकजेराक इत्यादिकोनादृष्टांतेतुपण घणुंशोचनाकरीस॥१३

इहांसंक्षेपथी उरत्रादिकना दृष्टांतलिखेछे तेमांप्रथम उरत्रनुंदृष्टांतकहेछे जेम कोइगाममां कोइकनाघरमध्ये एकबोकडोहतो तेकोइक प्राहुणोआवसे तेवारे एहनुंमास काममांआवशे एमचितवीने तेघरनामाणसो तेबोकडाने अन्नादिकेपोषेछे अनुक्रमेते बोकडो घणुपुष्टशारोथयो हवेतेहनेतेहवोदेखीने एकवाछडो मनमांखेद पाम्योथको क्रोधधरीने दोहतांछेपरत्नुजे पोतानीमातानुंडुध तेहनेधावेनही तेवारे माताये क्रोधनुंकारणपुछेथके कहेवालागो हेमाताजूओने आबोकडो यथेष्ट अन्नादिकखायछे तेथीकहेवो पुष्टथइरह्योछे एहनेपुत्रनीपरेपालेछे नानाप्रकारना अलंकारपहेरावेछे अनेमुजनेतो पोतानीमातानुंडुध तेपणकोइ पीवादेतोनथी तथासुकातृणतेपण वखतउपर पूरामलतानथी एहवुसांभली मातायेकह्यु आउरचिणाइ पया जाइचरसिनंदितं॥सुक्कतिणेहलाठेहि एय दीहाउलरक्ण॥१॥हेवत्स जेमरोगीउ मरवापडयोहोय तेहनेजेकाइ खावामांगे तेआपे तथाफुलनीमाला प्रमुखपहेरावे तेम एबोकडानेपण वध्यमन्नननीपरे शृंगारादिककरेछे पोषेछे पणकोइप्राहुणोआवसे तेवारेपरीक्षाजणासे तेसांभली वत्सछानोरह्यो पछेकोइकदिवसे तेहनेघरेप्राहुणाआव्या तेवारेतेबोकडानेबांधी उचूकरी घणुतडफडतो जीनकाढतो दीनस्वरे आरडतो मृत्युपमाडयो तेहनामांसने खडोखडकरी पचावीने प्राहुणासहितसकुटुंबे घरधणिये नक्षणकीधुं तेवृत्तांतदेखीने वाछडो जयपाम्योथको क्षुल्योतरस्योथकोपण मातानुंडुधपीये नही तेवारेमाताये पुछेथके वत्सबोल्यो हेमातामे बोकडानीएहवी जूंमीअवस्थादीठी तेथीमुजने धाववानीपण वांछायातिनथी एमइहांपणउपनय जोमवो जेमतेबोकडोजीवतव्यनीवांछाये निर्नयपणे यथेष्टपुष्टथातुंथको प्राहुणाआवे मृत्युपाम्यो तेमहेआत्मातुपण प्रमादेपुष्टथको यथाइछायेविचरेछे पणमृत्युआवेथके मनुष्यजन्महारीनरकादिकना दुःखपामि घणुशोचपामीस

हवेबीजुंकागणीनुदृष्टांतकहेछे जेमकोइकराक परदेशेजइ मजूरीकरीने एकहजार सोनैया कमायो पछेपोतानादेश तरफचाल्यो तेवारेरस्तामांखरचीसारु एकरूपकवटावी तेहनी (८०) कागणीसाथेराखी बीजासर्वद्रव्यनी वांसलीनरी सीवीनेराखी एक दिवसे किहांकमार्गमां विश्रामस्थानके एककागणीवीसरी ते सथवारासाथें आगळें

जातांसांनरी तेवारेंरांकेविचार्युंजे एककांगणीनीखोटे ,रखेनेबीजुंरूपक वटाववुंपडे इमचितवी सथवारेमूकी इव्यनीवांसली किहांकगोपवीने तेकांगणीलेवा पाछोव ल्यो आवीनेजूएछेतो कांगणीकोइकलइगयुं अनेपाछोफरीनेजूएतो वांसलीपण को इकलेइगयुं पछेनिराशथयी अतोभ्रष्ट ततोभ्रष्टथको घणुशोच करवालागो जेमतेरां के एककांगणीनालोभथी हजारसोनैयानीवांसली अनेतेकांगणी बेन्हे खोइने घ णाशोचनुभाजनथयो तेमआत्मापणपूर्वे अप्राप्तकामभोगथको बहुमूलचारित्रपा मिने वलतुकांगणीतुल्य कामभोगनीलालसायें चारित्रत्यजीने कामभोगगवेषतोथको कामभोगपणनपामे अनेचारित्रपणनपामे एमउभयभ्रष्टथयोथको तेरांकनीपरें घ णुशोचपामे इहां कागणी ते एक मासानुं चोथोभाग अथवावीसकोमी अथवा एकरूपैयानुं (८०) मुंभागजाणवो.

हवेत्रीजुं उदकाविंदुनुंदृष्टांतकहेछे कोइकवनमां कोइतृपातुरने कोइकदेवतायें क रुणाकरीने क्षीरसमुद्रनेकाठेजइमुक्यो तेमूर्खेतिहांपाणीपीधुंनही अनेदेवतानेकह्युंजे हेस्वामि महारागामनीसीममाकुवछे तेहनेउपकाठे भाजनेअग्रेलंबमान एकजलबिं दुछे तेखरीपडशे माटेमुजनेतिहांमूकोतो बिंदुओपीउं तेसाभली तेहनेमूर्खनिर्भाग्य जाणी देवतायेतिहांमूक्यो देवतापोताने स्थानकेगयो पछेतेबिंदुओपण खरीपडयो तेदेखीतेमूर्ख उभयभ्रष्टथयो थको शोचकरवालागो तेमइहांतृपातुरतेजीवक्षीरसमु इतेचारित्र देवतातेसद्गुरु जलबिंदुआरूप कामभोगनासुख एम उपनयजाणवुं

हवेचोथुंआम्रदृष्टांतकहेछे कोइकराजाने आंबानाफलघणुंज वल्लभहता एकदिव शें घणाआम्रफलनाखावाथकी अजीर्णविशुचिकाथयो पछेवैद्येअनेक औषधेंकरी.घ णीकष्टेनिरोगीकीधो वलतुवैद्येकह्यु हवेजोआम्रफलखासोतो मरणपामसो एमकही सर्वथावार्यो राजायेंपणपोतानादेशमाथी आंबानासर्ववनछेदावीनाख्या हवेकोइक दिवसेराजा आहेडेनिकल्यो तिहांदुष्टअश्वे अपहर्या एहवाप्रधान अनेराजाबेहुजण घणुदूरपंथे किहांकअटवीमाजइपहोता सैन्यसर्वपाछलरह्यु राजाप्रधान बन्नेजण अ श्वथीउतरी आंबानीछायायेबेठा तेआंबानीचेफलपड्याहेरवी राजानेघणादिवसें अ भिलाषथयो प्रधानेघणुवार्यो तोपणतेफलखांधु एटलेतत्काल मृत्युअवस्थातुल्यथ योथको घणुशोचवालागो जेमतेराजा आम्रनास्वादेंलुब्ध्योथको प्रधानेवार्योथकोप ण ते फलखाइ राजा जीव्यत्वनी आशातजीने मरतांमहाशोकपाम्यो तेमइहांपण विपयलुब्धकजीव विपयने परवशथको जिनाज्ञाअणमानतो कामभोगासक्तथयी संयम अने मनुष्यजन्म बेहुहारीने पछे पश्चात्ताप करशे.

हवेपाचमुंवणिकनुं दृष्टांतकहेछे एकवणिकनेत्रणपुत्रहता तेत्रणेनेहजार हजार सौनैया थापणआपीनेकह्युजे एटलाद्रव्यतमेव्यापारकरीने अवधिउपरेआववु हवे तेत्रणेजण नीमे नीमे मूलजेइने जूदेजूदेनगरेचाल्या तेमापहेलोनाइसर्वव्यसनरहित अल्पव्ययकरतो थको व्यापारकरवालागोतेमा घणोकमाणुं अनेवीजो हजारसौनै याकायमराखीने लाजआवेतेवावरे एरीतेते मूलद्रव्यनेराखीरह्यु अनेत्रीजेव्यापारकी धुंनही अनेवेश्यादिकनाव्यसनमा सर्वमूलद्रव्यवावरीनाख्युं अनुक्रमेतेत्रणेजण पो तानाघरेआव्या तेहोनुंव्यतिकरजाणीने त्रीजापुत्रने मूलनीमेंपणनराख्योमाटे पि तायें घरथीबारकाढीमूक्यो लोकमांनिंदनिकथयो दासपणुंपाम्यो जेमतेत्रीजोपुत्र नीमेंमूलनेहारीने निंद्यअवस्थापाम्यो तेमआत्माविषयलुब्धथको पूर्वजन्मपुण्यरूप मूल नीमेहारीने जन्मांतरेदुर्गतिना दुःखपाम्योथको घणुशोचपामेछे

हवेछठो शाकटनु दृष्टांतकहेछे जेमकोइक गामानुवाहक सम विषम मार्गेजाणतो थको पण विषममार्गे गाडानेलेइगयो पछेधुसरूभागेथके शोचकरवामाड्युं तेमइ हांपण जीवपुण्यपापादिक मार्गनेजाणतोथको पण प्रमादना परवशपणाथकी कु मार्गे चालतो कुगतीमापडसे तेवारेशोच पामसे

हवेसातमुं भिक्षुकनु दृष्टांतकहेछे कोइकगामडीआनो रहेवासी पुरुषदालिद्रेंपरा भव्योथको देशांतरेजइ भिक्षामागे पणपुण्यरहितपणाथकी भिक्षानपाम्यो तेवारे फरीपोताना घरतरफचालवानिकल्यो मार्गमाकोइकगामे पाण पाठकपासे एकदेवलछे तेमा रात्रेजइसुतो तेदेवलमाथी एकसिद्धचित्रेलुंकामकुंभहाथमालेइ निकल्यो पछेएक बाजुयेंबेसीरही घडानेकहेवालागो हेकुंभइहामंदिरकर एटलेतिहा मंदिरथयुं एम तिहाशय्यादिक भोगसामग्रीसर्वकीधी पछेस्त्रीसहित रात्रेभोगभोगवी प्रभातेसर्व सं हर्युं तेदेखीने भिक्षुकेचितव्युं जेआजलगणहु फोकट पृथ्वीमाभम्यो हवेजोहुंएसि द्धनेसेवुतो माहरीसर्वआशाफले एमचिंतवीते पाणनीसेवाकरी एकदिवसेते पाणप्र सन्नथइबोल्यो जेतुसुमागेछे तेवारेभिक्षुबोल्युं जेताहरापशायथीहुंपण एहवोभोगपामुं पाणेकह्युतुजने गमेतो एकुंभलेइजा अनेगमेतो एकुंभप्रतिष्टानी विद्यालेइजा ते वारे भिक्षुकबोल्यो जेहेस्वामीविद्यातो कष्टकरीसाधुं तेवारेफले तेमाटेविद्यासिद्धकु भछे तेहिजमने आपो तोकष्टकिधाविनाज भोगसिद्धिपामु पछेतेपाणेघडोआप्यो ह वेतेगामडीओघटलेइने घरेआव्यो घटनेप्रतापे उज्वलघरनीपजावी विविधभोगसामग्री मेलवी पोतानासर्वकुटुंबसहित मनोवांछित विलास भोगववालागो पोताना सज्ज नादिकने खेतीप्रमुख आजीविकाना उपाय सर्वमूकाव्या ढोरप्रमुखचतुष्पद सर्वगो

डीमूक्या एकदिवशे ते ग्रामीणमद्यपाने छाकटोथइने मनमांहर्षधरतो तेविद्याकुंभ खांधाउपरलेइने नाचवालागो मद्यपानना परवशपणाथकी घटपडीने भांगीगयो तेथी विद्याये करेलुं वैभव सर्वमटीगयो पछेग्रामीणकुटुंबसहित आजीविकायें दुःखीथयोथको शोचकरवालागोके हाहाइतिखेदे जोमेघटसिद्धिनी विद्यालीधीहत्ती तोसुखीथात एरीते जेमतेग्रामिकभिक्षु परिभ्रटनकरतां दैववशात् कामकुंभपामिने वलीमद्यपाननी परवशताथकी कुंभभागीनाखीने विद्यानुशोचपाम्यु तेमएजीवपण दुर्लभ जिनधर्म पामिने प्रमादपरवशताथी धर्महारीने कुगतीयेंगयोथको धर्मसा मग्रीविना शोचपामे एसातदृष्टांतना संबंधजाणवा तेमांपहेलापांचदृष्टांततो श्रीउ त्तराध्ययनना सातमां अध्ययनथी तथाछठोदृष्टांत पांचमांअध्ययनथी अने सा तमोदृष्टांत छठाअध्ययनथी लख्युंछे श्लोकमां आद्यशब्दकह्योछे तेथीबीजापण द रिद्रिकुटुंबादिक एहवादृष्टांत घणाछे तेग्रंथातरथी जाणवा

पतंगभृंगेणखगाहिमीनद्विपद्विपारिप्रमुखाः प्रमादैः ॥ शोच्या यथा स्युर्मृतिबंधदुःखैश्चिरायभावी त्वमपीति जंतो ॥ १४ ॥

अर्थ॥हवेवली ग्रंथकार प्रमादीजीवने दृष्टांतेकरी भावीदुःखदेखाडेछे हेआत्मा जेम पतंगीयो तथा भमरो मृग तथा खगके० पारेवाप्रमुखपक्षी तथासर्पअने माछलो तथा हस्तिव्याघ्रइत्यादिक सर्वजीवते प्रमादजे शब्दादिकविषय तेहनावशथकी मरणसंबं धीदुःखेकरीने शोचनीयथायछे तेमांपतंगते नेत्रनाविषयथी दीपशिखायेमोह्योथको मृत्युपामेछे अने भमरोघ्राणेंद्रियनाविषयथकी कमलमध्येमुंझाइमरेछे मृगशब्दविष यथी नादनुमोह्यो पाराधीथकी मरणपामेछे पक्षीशालप्रमुखकणनेलोभे रसनेंद्रियना वशथकी जालमापमेछे सर्पकाननाविषयथी मदुअरनानादनोमोह्यो बंधनपामेछे अने मत्स बडिशनामांसनीलालचे रसनेंद्रियना वशथीमरेछे हस्तिहस्तणीनामोहथी स्प र्शनेंद्रियनावशे बंधनमरणादिपामेछे व्याघ्रपिंजरामांरहेला बोकडानामासनीला लचें रसनेंद्रियनावशेमृत्यु बंधनादिकपामेछे इत्यादिकबीजापण चित्राप्रमुखना दृ ष्टांतजाणवा तेमाटेहेआत्मा तुंपणतेपतंगादिकनीपरे प्रमादनावशथकी चिरकालल गे शोचनीय थाइस. ॥ १४ ॥

पुरापि पापैः पतितोसि दुःखराशौ पुनर्मूढ करोषि तानि ॥ मज्ज न्महापंकिलवारिपूरे शिला निजे मूर्ध्नि गले च धत्से ॥ १५ ॥

अर्थ ॥ हवेप्रमादनुं पापरूपपणुंदेखाडी तेहनोपरिहारकरेछे हेमूर्खतुंपूर्वेपण पा

पेकरीनेजडु खसमूहमांपडयोछे अनेफरीपण तेहिजपापनेकरेछे तेथीतुघणाकदिवस हितजलनापूरमा बुडतोथको पोतानामस्तकनेविषे अने गलानेविषे शिलाधरेछे॥१५

पुन पुनर्जीव तवोपदिश्यते बिभेपि दुःखात् सुखमीहसे चेत् ॥
कुरुष्व तत्किंचन येन वांछितं भवेत्तवास्तेऽवसरोयमेव यत् ॥१६॥

अर्थ ॥ हवेजीवने प्रमादपरिहारनुएहिजअवसरछे तेकहेछे हेजीवतुजने फरीफ रीने उपदेशकहुंछुं केजोतुडु खथीबीहेछे अनेसुखनेवाछेछे तोतुं एवुकाइक सुकृत करके जेथकीताहरुं वाछेलुंसुख तुजनेमिले अनेतेसुकृतकरवानो अवसर एहिजछे इ हाफरीनेउपदेशदीधो माटेपुनरुक्तदोपनही यडुक्तं सज्झायज्झाणतवउ सहेसुउवएस थुईपयाणेसु ॥ सतगुणकित्तणेसु न हुंति पुणरुत्तदोसाउ ॥ १६ ॥

धनांगसौख्यस्वजनानसूनपि त्यज त्यजैकं न च धर्ममार्हतं ॥
भवंति धर्माद्धि भवे भवे र्थिता न्यमून्यमीभि पुनरेप दुर्लभ ॥१७॥

अर्थ॥हवेधर्मनीदुर्लभतादेखाडीने धर्मावसरनेज दृढकरेछे हेजीवतु धनतथाशरीर अनेसुख तथास्वजनकुटुब तथाप्राणजे जीवितव्यपणुं तेसर्वनोत्यागकर पणएकश्रीस र्वज्ञप्रणीतजे धर्म तेहनेकोइवारेपण त्यजीशनही केमकेएथनादिक सर्ववस्तुतेधर्मथकी जतुजनेभवभवनेविषे वाछितमलशे पणधनादिकेकरी जिनोक्तधर्ममलवु दुर्लभछे१७

दु खं यथा बहुविधं सहसेप्यऽकाम· कामं तथा सहसि चेत्करुणादिभावै.॥
अल्पीयसापि तव तेन भवांतरेस्या दात्यंतिकी सकलदु·खनिवृत्तिरेव १८

अर्थ॥हवेआत्माने अकामडु खनासहेवाने बदले सकामडु खसहेवुते भलुंएमकहे छे हेआत्मातुजेम अकामके०इछारहित परवशथको बहुविध दुःख तृपा वध बंधनादि कदु·खप्रतेसहेछे तेमज जोकरुणादिक जेमैत्री प्रमोद कारुण्य माध्यस्थ एपरिणामेकरी ने सकामके० निर्जरानीबुद्धिये दुडु खसहनकरे तो तेवाथोडापणदु खने सहवेकरीने भवातरनेविषे आत्यंतिकीके० पुन प्रादुर्भावेरहित एहवी समस्तदु खनी निवृत्तिते नि श्चयथाय एटले मोक्षपद पामे ॥ १८ ॥

प्रगल्भसे कर्मसु पापकेष्वरे यदाशया शर्म न तद्विनानितं ॥
विभावयस्तच्च विनश्वर द्रुत बिभेपि किं दुर्गतिदु.खतो न हि॥१९॥

अर्थ ॥ हवेधर्मत्यजीने आत्मापापकर्ममां निपुणताकरेछे तेआश्रीकहेछे अरेमू र्खजीवतु सुखनीआस्थायेकरी पापनाउत्पादकजेकर्म तेहनेविषे प्रगल्भसेके० डाहा पणकरेछे पण ते धनस्वजनादिकनासुख तो प्राणितके० जीवतव्यविना भोगवायनही

अने तादृशो जीवतव्यतो शीघ्रके० उतावळुं विनाशशीलछे एवीरीतेजाणतोथकोपण तुं दुर्गतीनादुःखथी केमबीहितोनथी ॥ १९ ॥

कर्माणि रे जीव करोषि तानि यैस्ते भविभ्यो विपदो ह्यनंताः ॥
ताभ्यो भिया तद्दधसे ऽधुना किं संभावितान्योपि भृशाकुलत्वं॥२०॥

अर्थ॥वळीप्रकारांतरेतेहिजकहेछे हेजीवजोतुं तेहवाज हिंसा मृषावादादिककर्म करेछे जेकर्मकरीतुजने अनंतिआपदाओथाशे तेवारेंहमणाजते आपदाओसंभारेथके पण अतिशेंभयेकरीने आकुळताकेमपामेछे जोपापनाफळजाणतोथकोपण तुपापकर्मकरवानेप्रवर्त्तेछे तेवारेवळी नरकादिकनादुःखसांभळीनेसावास्ते भयपामेछे निश्चेंतु जनेतेदुःखभोगवाजपडशे एमांसंशयसुछे एभावार्थछे ॥ २० ॥

ये पालिता वृद्धिमिताः सहैव स्निग्धा भृशस्नेहपदं च ये ते ॥
यमेन तानप्यदयं गृहीतान् ज्ञात्वापि किं न त्वरसे हिताय॥२१॥

अर्थ ॥ वळीजीवने हीतार्थेनेविषेप्रेरेछे हेजीवजेस्वजन मित्रादिक तथापुत्रादिक तेंपाल्यापोष्या तथाजे तुजसाथेंवृद्धिपाम्या महोटाथया वळीतेतादृश अतिशयस्नेह पात्रथया तेहुनेपण यमराजाये निर्दयपणेग्रस्या तेजाणीनेपणतु आत्महितकरवानेके मउजमाळथतुंनथी केमके तेहुनेजो यमेंग्रस्यतो तुंशीरीतेस्थिररहिस एभावार्थ ॥२१॥

यैः क्लिश्यसे त्वं धनबंध्वपत्य यशःप्रभुत्वादिभिराशयस्थैः ॥
कियानिह प्रेत्य च तैर्गुणस्ते साध्यः किमायुश्च विचारयैवं ॥२२॥

अर्थ ॥ हवेजेतुक्लेशसहेछे तेहथीतुजने काइगुणनथी तेकहेछे हेआत्मन्तुं आशयस्थके० केवळकल्पितमात्र एहवाजेधन बंधु स्वजन अपत्यके० संतान तथा यश कीर्त्ति अने प्रभुत्व स्वामिपणुं इत्यादिकनिमित्तेंकरी क्लिश्यसेके० कष्टभोगवेछे ते धनस्वजनादिकेरी तुजनेइहभवे तथा परभवे केटलुंक गुणसाधवुछेएटले ते तुजने सुंगुणकरसे अनेआकषोते केटलुंकछे एमविचारी धनादिकनुं ममत्व करता करतांज आयुष पुरोथइजासे अने भवांतरेकोइपण तादृरेकामेआवसेनही ॥ २२ ॥

किमु मुह्यसि गत्वरैः पृथक् कृपणैर्बंधुवपुःपरिग्रहैः॥ विमृश स्व हितोपयोगिनो ऽवसरेऽस्मिन् परलोकपांथ रे ॥ २३ ॥

अर्थ॥ हेपरलोकेजनार पंथीजीव तु कृपण दीन सरणदेवाने असमर्थ एहवा अने पृथगत्वरके० जूदाजूदाथेराइजासे एहवाजे बंधु स्वजन तथा वपुजेशरीर तथा धनधान्यादिक परिग्रह तेणेकरी सुंमुंजायछे एकोइपण तादृरासाथे आवेनही एभावा

थीछे माटेएधर्मकरवायोग अवसरनेविषे पोतानाहितोपयोगी परलोकना सहायभूत एहवाजे ज्ञानादिकगुण तेहोने चित्तमाराख ॥ २३ ॥

सुखमास्से सुखं शेषे भुङ्क्षे पिबसि खेलसि ॥ न
जाने त्वग्रतः पुण्यैर्विना ते किं भविष्यति ॥ २४ ॥

अर्थ ॥ हवे हमणातुंसुखेविलशेछे पण आगलताहरी सीगतिथासे तेकहेछे हेआत्मातु हमणापूर्वोपार्जित पुण्यफलना उपायथी सुंसुखेबेशीरहेछे तथासुखेभोजनक रेछे सुखेंमद्यादिकपानकरेछे सुखेंद्यूतादिकेरमेछे पणआगल परभवे तुजनेपुण्यविना सुंथवानुछे तेसुंनथीजाणतो एटलेपुण्यविना घणुजदुखीथइस ॥ २४ ॥

शीतातापान्मक्षिकाकत्तृणादि स्पर्शाद्युत्थात्कष्टतोल्पाद्बिभेषि ॥ ता
स्ताश्चैभिः कर्मभि स्वीकरोषि श्वभ्रादीना वेदना धिग् धिय ते॥२५॥

अर्थ ॥ हवेथोडाकष्टथी बीहतोथको घणुकष्टअंगीकारकरेछे तेकहेछे हेआत्मातु टाढथी तापथी तथामाखीप्रमुख तृण भानप्रमुखना स्पर्शादिकथी उपनुंजे अल्प मात्रकष्ट तेथीबीहेछे कायरथायछे अनेएवापापकर्मकरीने श्वभ्रके० नरकादिकना प्र कारनीजे महावेदनाओ तेप्रतेअंगीकारकरेछे तोताहरीबुद्धिने धि कारछे ॥२५॥

क्वचित्कषाये क्वचन प्रमादै कदाग्रहै क्वापि च मत्सराद्यै ॥ आ
त्मानमात्मन् कलुषीकरोषि बिभेषि धिङ् नो नरकादधर्मा ॥२६॥

अर्थ ॥ वलीतेहिजकहेछे हेआत्मातु किहांक परीषहादिकमा कषायेकरीने वली किहाक क्रियानुष्टानादिकनेविषे प्रमादेकरीने वलीकिहाक उपदेशादिकमा कदाग्रहेंक रीने किहाकगुणवतनी अनुमोदनानेविषे मत्सरादिकेकरीने पोतानीआत्माने मलीन करेछे पणतुधर्मरहितथको नरकथीबीहितोनथी माटेतुजने धि कारछे ॥ २६ ॥ इति श्रीअध्यात्मकल्पद्रुमे सामान्यतो वैराग्योपदेशाख्यो दशमोधिकार समाप्त.

अथधर्मशुध्युपदेश ॥ भवेभवापायविनाशनाय तमज्ञधर्म कलुषीकरोषि
किं ॥ प्रमा दमानोपधिमत्सरादिभिर्न मिश्रितं ह्यौषधमामयापहं ॥ १ ॥

अर्थ ॥ हवेधर्मशुद्धिउपदेशनामें इग्यारमो अधिकारकहेछे तिहांप्रथम धर्मनीशु द्धताज थायेछे जेधर्मते भवके० ससारसंबंधी अपायजे जन्ममरणादिक तेहनो वि नाशकरवाने समर्थथाय एहवाधर्मने हेमूर्खआत्मा प्रमादजे मद्यादिक तथामान अहंकार उपधि कपट तथामत्सर इत्यादिकेकरीने सुं मलीनकरेछे हवेतेउपर दृष्टां तकहेछे हियस्मात्के० मिश्रितऔषध आमयापहंनस्यात् एटले विरुद्धद्रव्येंमिश्रित

जे औषध तेकांइरोगनिवारकनहोय अनेतेमजतेऔषधनीपरें धर्मपणजोप्रमादादि के मिश्रितहोयतो संसारना अपायजे दुःखतेनो निवारकनहोय ॥ १ ॥

यतः ॥ शैथिल्यमात्सर्यकदाग्रहक्रुधोनुतापदंभाविधिगौरवाणि च ॥
प्रमादमानौ कुगुरुः कुसंगतिः श्लाघार्थिता वा सुकृते मला इमे ॥२॥

अर्थ ॥ हवेधर्मनेविषे मलसरिखाजेटलादोषछे तेटलापूर्वाचार्यना वचनथीदेखाडे छे सुकृतजेधर्मकार्यतेमां शैथिल्यके० धर्मनेविषे अनादरता मात्सर्यके० गुणवतनेविषे द्वेषनुं करवुं तथाकदाग्रहके० जूगवचननुंहठ क्रुधके० क्रोध वली अनुतापके० सुकृतकरीनेपछे हाइतिखेदेमें फोकटदानदीधुं फोकटतपस्याकीधी इत्यादिकपश्चात्तापनुं करवुं तथादंभके० कपट अने अविधिके० शास्त्रोक्तविधिये रहित क्रियानुंकरवुं तथागौरवके० हुंमहाधार्मिष्ट इत्यादिक महोटाइनुचिंतववु वलीप्रमादजे धर्ममा असावधानपणुं अने मानजेअहंकार वलीकुगुरुजे लोहशिलातुल्य अने कुसंगतिजे कल्हत्रनापी एहवामिथ्यात्वी प्रमुखनोसंग तथा श्लाघार्थिताके० लोकनामुखथी पोतानी कीर्तिनुंवांछवुं एटलाप्रकारेंकरी धर्ममलीनथाय धर्मनुंयथोक्तफलनथाय ॥ २ ॥

यथा तवेष्टा स्वगुणप्रशंसा तथा परेषामिति मत्सरोज्झी ॥
तेषामिमां सतनु यल्लभेथास्तां नेष्टदानादिविनेष्टलाभः ॥३॥

अर्थ ॥ हवेआत्मापोतानागुणनी प्रशंसावांछेछे तेआश्रीउपदेशछे हेआत्माजेमतुजने पोतानागुणनी प्रशंसावल्लभछे तेमपरजे अन्यजन तेहनेपणपोताना गुणनीप्रशंसावल्लभछे एहवुंजाणीने मत्सररहितथको तेअन्यजननी डमाके० गुणनीप्रशंसाप्रतें विस्तारीनेकहे जेमतुंपणतेप्रशंसाप्रतेपामें केमके कोइने वांछितदानदीधाविनापोतानेपण वांछितलाभनथाय एटलेपारकागुणनी प्रशंसाकरीयेंतो पोतेपण प्रशंसनीयथैये

जनेषु गृह्णत्सु गुणान् प्रमोदसे ततो भवित्री गुणरिक्तता तव॥गृह्णत्सु
दोषान् परितप्यसे चरे भवंतु दोषास्त्वयि सुस्थिरास्ततः ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ हवेकेटलाक काव्यनेविषे गुणप्रशंसानीवांछाथकी अवगुणदेखाडेछे हे आत्माजोताहराबुण लोकेग्रहणकरायका तुहर्षपामेछे तोतेहर्षपामवाथी ताहरे गुणनी रिक्तताथासे अनेजोलोके अवगुणबोलतेछते तुं परितापके० खेदपामेछे तो तेखेदपामवाथी ताहराविषे अवगुणते निश्चलपइरहेसे तेमाटे गुणकह्याथी हर्ष अनेदोषकह्याथी खेद एबेहुवाना तुकरीसनही ॥ ४ ॥

प्रमोदसे स्वस्य यथाऽन्यनिर्मितै स्तवैस्तथा चेत्प्रतिपंथिनामपि ॥
विगर्हणै स्वस्य यथोंपतप्यसे तथा रिपूणामपि चेत्ततोसि वित्॥५॥

अर्थ ॥ हेआत्मातु जेमलोकनामुखें पोतानागुण स्तवसांनळीने प्रमोदपामेछे तेम शत्रुनापण गुणस्तवसान्नळीने जोप्रमोदपामें अने पोताने विगर्हणै के० अवर्णवादें करीने जेमपरीतापकरेछे तेमजजो शत्रुनापण अवर्णवाद सांनळीने तुपरीताप करे तेवारे एम जाणियेजे तुज्ञाताछो ॥ ५ ॥

अथवा ॥ स्तवैर्यथा स्वस्य विगर्हणैश्च प्रमोदतापौ नजसे तथा चेत् ॥
इमौ परेषामपि तैश्चतुर्ष्वप्युदासतो वासि ततोऽर्थवेदी ॥६॥ इतिवापाठ॰

अर्थ ॥ वळी पाठांतरेकरी एहिजअर्थकहेछे हेआत्मातुजेम पोतानीस्तुतियेकरी ने तथापोतानेविगर्हणेकरीने प्रमोदतापौंके॰ हर्षअनेशोकप्रतेनजेछे तेमज पोतानी स्तवना तथा निंदा अने परनीस्तवना तथा परनीनिंदा एचारेनेविषेजो उदास ताके॰ मध्यस्थनावनेनजे तेवारेतु अर्थवेदीके॰ परमार्थनुंजाणछो एमजाणिये एकाव्य पहेलाकाव्यनु पाठांतरजाणवु ॥ ६ ॥

नवेन्न कोपि स्तुतिमात्रतो गुणी ख्यात्या न बव्हापि हितं परत्र च ॥
तदिच्छुरीर्ष्यादिन्निरायतिं ततो मुग्धाभिमानग्रहिलो निहंसि किं ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ हेआत्माकेवळ एकळीस्तुतिमात्रथीज कोइगुणवतनथाय अनेवळी जग तमा ख्यातिकीर्तिजोघणीहोय तोपण तेथी काइपरनवनु हितनथाय तेमाटेपरलो के हितनुंवांछक एहवुजेतुते मुधाके॰ फोकट अभिमानेकरी घहेलोथयो थको ईर्षा दिकेकरीने आयतिजे उत्तरकाल तेहने सावास्ते बगाडेछे एटलेईर्षा करवाथी ताहरो परनवनुहित विणसीजायछे इतिनाव ॥ ७ ॥

सृजंति के के न बहिर्मुखा जना प्रमादमात्सर्यकुबोधविप्लुता ॥
दानादिधर्माणि मलीमसान्यमू न्युपेक्षशुद्धं सुकृत चराणवपि ॥ ८ ॥

अर्थ ॥ हवेदानादिककर्मने जे मलीनकरेछे तेहनेकहेछे हेआत्मा प्रमादजे मद्या दिक पांचप्रकारे तथामात्सर्य एटले पारकीसपदानी अदेखाइ तथाकुबोधजे मि थ्यादर्शननुं दृष्टिराग तेणेकरी विप्लुतके॰ पराजव्या एहवा बहिरमुखजे स्वचित्तक ल्पित मार्गनास्थापक कुतीर्थिकलोकते मलीमसके॰ महाआरंभादिके दूषत एह वादानप्रमुख ते धर्मकार्यमा कोणकोणनथीकरता अर्थात्‌मिथ्यात्वीलोकपण सर्वपो

तपोताना मननीरुचियें दानप्रमुख धर्मकार्यकरेछे पण तेप्रमादादिके दूषितथका य थोक्तफलदायकनथाय तेमाटेतेमलीन धर्मकार्य उवेपीने थोडुंपण शुद्धधर्मकर ॥८॥

आच्छादितानि सुकृतानि यथा दधंते सौभाग्यमत्र न तथा प्रकटीकृतानि ॥ व्रीडानताननसरोजसरोजनेत्रा वक्षःस्थलानि कलितानि यथा दुकूलैः ॥ ९ ॥

अर्थ ॥ हवेप्रशंसारहितधर्मनुं विशेषफलदेखाडेछे इहांश्रीजिनशासननेविषे आ छादितके० प्रशंसानेढांक्याथका एटलेजेप्राणी प्रशंसायेरहित थका एहवाजे सुकृत के० धर्मकार्य तेथीजेहवी सुभगतानेपामे तेहवी प्रकटितके० जेसुकृतकरीने लोक आगलें प्रशंसाकरावे ते सुभगतानेनपामे तेहनुंदृष्टांतकहेछे जेम व्रीडाजेलज्जा ते णेकरीने नतके० नमछे आननसरोजके० मुखकमलजेहनुं एहवीजे सरोजनेत्राके० कमलनयना एटले उत्तमस्त्री तेहना वक्षःस्थलजे स्तनमंडलते दुकूलजे वस्त्रतेणेकरी सहितथका जेहवी सुभगताप्रतें पामे तेहवा उघाडाथका सुभगताप्रतेंनपामे ॥९॥

स्तुतैः श्रुतैर्वाप्यपरैर्निरीक्षितै र्गुणास्तवात्मन् सुकृतैर्न कश्च न ॥ फलंति नैव प्रकटीकृतैर्भवो द्रुमा हि मूलैर्निपतंत्यपि लघ ॥१०॥

अर्थ ॥ हेआत्मा ताहरासुकृतजे धर्मकार्य ते अन्यलोके स्तुतके० वखाणेथके तथा अन्यलोके सांभलेंथके तथा अन्यलोकेदेखेथके तेथीतुजने कोइगुणनथी तेउ परदृष्टांतकहेछे जेमभूमीमांहेथी मूलप्रगटकरेछते द्रुमजेवृक्षतेफलेनहीपण उलटाहे ठापडे तेम सुकृतपण कथाडाकस्याथका फलदायक न थाय ॥ १० ॥

तपःक्रियावश्यकदानपूजनैः शिवं न गंता गुणमत्सरी जनः ॥ अपथ्यभोजी न निरामयो भवेद्रसायनैरप्यतुलैर्यदातुरः ॥११॥

अर्थ ॥ हवेगुणवतनुं मत्सरकरवुंनिषेधेछे गुणजेपारका तपसंयमदानादिक तेह नेविषे मत्सरनुंकरनार एहवोजे मनुष्यते तपतथाक्रिया जे आवश्यक दान तथापूजन जे जिनबिंब पुस्तकप्रमुखनीपूजा इत्यादिक सर्वप्रकारेकरीपण मोक्षपामेनही तेउपर दृष्टांतकहेछे जेम आतुरजे रोगीपुरुषते अपथ्यभोजन करतोथको अनोपम महामू ला एहवाजे रसायन पारदादिक औषध तेणेकरी रोगरहितनथाय इहां रोगीतेआ त्मा अने तपप्रमुखते रसायण अनेगुणवतउपर मत्सरते अपथ्यभोजन तथा मुक्ति ते निरोगता जाणवी एउपनयकह्यु ॥ ११ ॥

मंत्रप्रचाररत्नरसायनादि निदर्शनादल्पमपीहि शुद्धं ॥ दाना
र्चनावश्यकपौपधादि महाफलं पुण्यमितोन्यथाऽन्यत् ॥१२॥

अर्थ ॥ वलीप्रकारांतरे तेहिजकहेछे इहांश्रीजिनशासनमा दान देवपूजा आवश्यक पोसहप्रमुखजे पुण्य तेथोडुपण शुद्ध दोपरहितकीधोहोयतो मंत्रजे जांगुलीप्रमुख तथा रत्नजे सूर्यकांत चंद्रकांतादिक तथा रसायनजे पारादिक तेहनीपरे महाफलकारीथाय जेममंत्रथोडाअक्षरनुंहोय तोपण विषप्रहारादिकनेहरी महागुणकरे तथासूर्यकांतादिक रत्नन्हानुंहोयतोपण महाप्रकाशकरे अने रसायणथोडुपण मोटारोगहरे तेमदोषरहितपुण्यजो थोडुंहोयतोपण महाफलदायकथाय अनेतेहथी विपरीतजे अशुद्धपुण्यकार्य तेअन्यथाके० घणुंहोयतोपण अल्पफलदायकथाय॥१२॥

दीपो यथाल्पोपि तमासि हंति लवोपि रोगान् हरते सुधायाः ॥
तृणं दहत्याशु कणोपि चाग्नेर्धर्मस्य लेशोप्यमलस्तथाहः ॥१३॥

अर्थ ॥ जेमदीपक अल्पके० न्हानोहोयतोपण अंधकारटालेछे वलीजेम अमृतनो एकबिंदुमात्रतेपण सर्वरोगनेहरे वलीजेम अग्नीनुएककणीयुमात्रतेपण तृणानेबालीनाखे तेमनिर्मलदोषरहित एहवोधर्मनुं लेशमात्रतेपण पापनेटाले ॥ १३ ॥

भावोपयोगशून्याः कुर्वन्नावश्यकीः क्रियाः सर्वाः ॥
देहक्लेशं लभसे फलमाप्स्यसि नैव पुनरासां ॥ १४ ॥

अर्थ ॥ हवेसर्वक्रियानी सफलताते भावसहितकरवाथीजहोय तेकहेछे हेआत्मातु भावजे श्रद्धा तेहनाउपयोगेकरी शून्यके० रहित एहवासर्वए अवश्यकरवा योग्य जे पडिकमणुं पडिलेहणप्रमुखक्रिया तेप्रते करतोथको पणतेथीकेवल शरीरने क्लेशमात्रउपजाववु तेहिजफलपामेछे पणतेक्रियानुं मुख्यफलजे मोक्षलक्षण तेसर्वथानहीजपामे केमके भावथकी शून्यक्रियाजो घणीकरीतोपण निःफलथाय ॥ १४

इतिश्रीअध्यात्मकल्पद्रुमे धर्मशुध्युपदेशाख्य एकादशोऽधिकार समाप्त ॥ ११ ॥

अथ श्रीदेवगुरुधर्मशुद्धिमधिकृत्य, किंचिदुपदेश ॥
तत्वेषु सर्वेषु गुरु प्रधानं हितार्थधर्मा हि तदुक्तिसाध्या ॥
श्रयंस्तमेवेत्यपरीक्ष्य मूढ धर्मप्रयासान् कुरुषे वृथैव ॥१॥

अर्थ ॥ हवेबारमेंअधिकारे देव गुरु धर्म एत्रणतत्वनीशुद्धिकहेसे तिहांप्रथमतो जो शुद्धगुरुमले तोज शुद्धदेव तथाशुद्धधर्मपामिये तेमाटेप्रथम गुरुतत्वनी शुद्धि कहेछे हेआत्मासर्वतत्वमा मुख्यतत्वते गुरुछे केमके हितार्थके० मोक्षनेअर्थे धर्म

साधवोह्योयतो ते गुरुनावचनथकीसधाय तेमाटेतुं मूढथको परीक्षाकस्याविनाज गुरुने आश्रयतोथको धर्मनेनिमित्तेंजे प्रयासकरेछे तेव्रथाके० फोकटछे ॥ १ ॥

नवी न धर्मैरविधिप्रयुक्तै गमी शिवं येषु गुरुर्न शुद्धः ॥
रोगी हि कल्पो न रसायनैस्तै र्येषां प्रयोक्ता निपगेव मूढ॥२॥

अर्थ ॥ हवेगुरुअशुद्धहोयतोधर्मपण अशुद्धथाय तेकहेछे नवीजे संसारीजीव तेणे अविधियेंकीधाएह्वाजे दानादिकधर्म तेह्थीजीव मोक्षगामीनथाय केमकेजे धर्मनेविषे शुद्धके० निर्दोषपणुं नथी तेधर्मव्रथाछे तेउपरदृष्टांत कहेछे जेमरसायननुं करनार वैद्यते गुणागुणनुं अजाणमूर्खहोयतो रोगीपुरुष ते रसायनेकरी निरोगीन थाय तेमइहांरोगी तेआत्मा औषधतेधर्म मूर्खवैद्य ते कुगुरु जाणवो ॥ २ ॥

समाश्रितस्तारकबुद्धितो यो यस्यास्त्वहो मज्जयिता स एव ॥
ओघं तरीता विषमं कथं स तथैव जंतुः कुगुरोर्नवाब्धिं ॥ ३ ॥

अर्थ ॥ हवेकुगुरुअने कुतारकनुंदृष्टांतकहेछे जेप्राणिये तारकबुद्धियेंकरीने तारकनेआश्रयोछे अनेतेतारकज आश्रीतप्राणीने बुमाडनारहोय तोतेप्राणी विषमदुस्तर एह्वो उघजे समुद्रनापाणीनो प्रवाह तेशीरीतेंतरसे तेमज जेथकी तरवानीआशाराखियें तेह्जि जेवारें बोडे तिवारें समुद्रनुं पारते केमपामिये तेमज कुगुरुथी नवसमुद्रपण जाणवुं केमके जेगुरुप्रतें तारकजाणीने संसारसमुद्र तरवानी आशायें तेह्ने आश्रयियें अनेतेगुरुतो उन्मार्गने देखाडवेकरी आश्रीतप्राणीने संसारसमुद्रमां बोडे तेवारे ते प्राणी संसारसमुद्रनो पारकेमपामे एनावार्थछे ॥ ३ ॥

गजाश्वपोतोक्षरथान् यथेष्टपदाप्तये नद्र निजान् परान् वा ॥
नजंति विज्ञाः सुगुणान् नजैवं शिवाय शुद्धान् गुरुदेवधर्मान् ॥४॥

अर्थ ॥ तेमाटेशुद्धदेवगुरुधर्मने आदरवुंतेकहेछे जेमविज्ञजे निपुणपुरुष तेवांछितस्थानके पहोचवानेअर्थे पोताना अथवापारका हाथी घोडा तथा वाहण उठ बलद रथ तेआपआपणेगुणेसहितसुलक्षणाजोइने आदरे केमकेजो निर्लक्षण वाहन होयतो तेह्थीवांछित स्थानकेपहोचायनही माटेहेसरलप्राणी एरीतेंतुंपण मोक्षस्थानक पामवानेअर्थे शुद्धगुणोपेत एवाजे देव गुरु धर्मतेप्रतेंनज जेथकीमोक्षपदपामे

फला वृथा स्युः कुगुरूपदेशतः कृताहि धर्मार्थमपीह सूद्यमाः ॥
तद्दृष्टिरागं परिमुच्य नद्र हे गुरुं विशुद्धं नज चेद्धिताथ्र्यसि ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ हवेकुगुरुनाउपदेशथीधर्म फलदायकनहोय तेकहेछे इहांश्रीजिनशासनने

विषे कुगुरुनाउपदेशथकी धर्मनेअर्थेपणजे नलाउद्यमकरेलाहोय तेफलदायकनथाय माटेहेनइकजोतु मोक्षफलनोअर्थीहो तोदृष्टिरागगामीने शुद्धरुपकगुरुनेनज ॥५॥

न्यस्ता मुक्तिपथस्य वाहकतया श्रीवीर ये प्राक् त्वयालुं
टाकास्त्वदतेऽभवन् वहुतरास्त्वच्छासन ते कलौ ॥ विभ्रा
णा यतिनाम तत्तनुधिया मुष्णंति पुण्यश्रिय फूत्कुर्म
किमराजके ह्यपि तलारक्षा न किं दस्यवः ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ हवेदृष्टांतेकरी कुगुरुनीदुष्टताकहेछे हेश्रीमहावीर पूर्वेतुमेजे सुधर्मास्वा मिप्रमुख मोक्षमार्गना चलावनारामूक्याहता तेपछे कलियुगमां तुजविना ताहराशा सननेविषे पट्टपरपरा सुविहिताचार्यथी अलगाथइने पोतानाकुमतने प्रवर्त्तावनेकरी ने लूंटाककेव लूटाराथया हवेतेहनुं लूटारापणुंकहेछे जेनणी तेयतिनामधरावताथ का स्वल्पबुद्धिलोक जेकुगुरुनीपरिक्षाकरीसकतानथी तेहोनी पुण्यरूपजे लक्ष्मीतेप्रतें लूंटेछे एहवातेवस्त्रनाषनार कुगुरुनीवाततो अर्थिजीव किहाजइपोकारे केमकेवि शेपज्ञानीविना पोकारकस्यातुं कोइगमनथी एटले अराजककेव राजानेअभावें त लारक्षकजे कोटवाल तेपणचोरनथायसु एटलेराजानहोय तेवारेजे रखवालाहोय तेहिजचोरीकरे तेमइहाराजाते श्रीवीरपरमात्मा तेनोमार्ग प्रवर्त्तकतेसुधर्मादिकगण धर अराजकतेकलिकाल लूंटाकते कुमतना प्रवर्त्तक इत्यादिक उपनयजाणवु ॥६॥

दमाद्यस्य शुद्धिर्गुरुदेवधर्मैं धिंग् दृष्टिरागेण गुणानपेक्षः ॥
अमुत्र शोचिष्यसि तत्फले तु कुपथ्यभोजीव महामयार्त्त ॥७॥

अर्थ ॥ हवेअशुद्धदेवगुरुधर्मपामिने हर्षधरेनहीतेकहेछे हेआत्मातु अशुद्धदेव गुरुधर्मप्रतेंपामवाथकी गुणनीअपेक्षारहितथयोथको दृष्टिरागेकरी हर्षपामेछे तेमा टेतुजने धिक्कारछे पण जेवारे तेहनुंफल उदयआवशे तेवारेतुनरकादिकनेविषे घणो शोचपामिस तेहनुंदृष्टांत कहेछे जेम महारोगीओ पुरुष स्वादना वशथकी कुपथ्य भोजन करीने पछेरोगवधेतिवारें घणु शोचकरे तेमतुपण दृष्टिरागें करी कुगुरुकुदेव कुधर्म सेवीने पछे दुर्गति पामेथके घणुसोचपामिस ॥ ७ ॥

नाम्र सुसिक्तोपि ददाति निंबकः पुष्टा रसैर्वध्यगवी पयो न च ॥
दुःस्थोनृपो नैव सुसेवितः श्रियं धर्मं शिवं वा कुगुरुर्न संश्रितः ॥८॥

अर्थ॥ हवेकुगुरुनीसेवा शुभफलनीदेनारीनथाय तेकहेछे जेमलिंबडोजलीपरे सी च्योथकोपण आंबानुंफलनआपे तथारसजे घीतेलप्रमुख पुष्टकारीवस्तुथकीपणवाज

णीगांयकांइ डुधआपेनही वलीदेशचष्टविषमअवस्थानेपाम्यो जेराजातेने नलीपरेसे व्योथकोपण लक्ष्मीनआपे तेमकुगुरुनेपण सेव्योथको धर्म अथवा मोक्षप्रतेनआपे ए

कुल न जातिः पितरो गणोवा विद्या च बंधुश्च गुरुर्धन वा ॥
हिताय जंतोर्न परं न किंचित् किंत्वादृताः सद्गुरुदेयधर्माः ॥ए॥

अर्थ ॥ हवेसर्वपदार्थथी देवगुरुधर्मअधिकछेते कहेछे जंतुके० जीवने कुलजेइ क्ष्वागकुलप्रमुख तथाजातिजे मातानुंपक्ष पितरके० पितामहप्रमुख तथागणजे स रखासरखामित्रनीटोली तथाविद्याते षर्ङ्गीप्रमुख तथाबंधुजे स्वजन वलीगुरुजे कु लविद्यानुंअध्यापक अने धनतेसुवर्णादिक तथाबीजाजेकांइ देश ग्राम मंदिरप्रमुख तेसर्व हितायके० परलोकना हितनेअर्थेकोइथायनहीपण सतुके० शुद्धएहवा देव गुरुअनेधर्म एत्रणनेआदरवाथकां परलोकनाहितने अर्थेथाय ॥ ए ॥

माता पिता स्वः सुगुरुश्च तत्वात् प्रबोध्य यो योजति शुद्धधर्मे ॥
न तत्समोरिः क्षिपते नवाब्धौ यो धर्मविघ्नादिकृतेश्च जीवं ॥१०॥

अर्थ ॥हवेजेशुद्धधर्ममांजोमे तेपुरुषनीप्रशंसाकरेछे जेपुरुषजेहने तत्वदेखाडी प्र तीबोधपमाडी अनेशुद्धधर्ममांजोडे तेहनेतेहिजपुरुष माता तेहिजपिता तेहिजस्वज न अनेतेहिज गुरुजाणवुं अनेजेजीव हरेकप्राणिने धर्मनुंअंतरायादिक करीने ससा रसमुद्रमांनाखेतो तेसरिखोतेनोकोइ बीजो शत्रुनथी ॥ १० ॥

दाक्षिण्यलज्जे गुरुदेवपूजा पित्रादिभक्तिः सुकृताभिलाषः ॥
परोपकारी व्यवहारशुद्धि र्नृणामिहामुत्र च संपदे स्युः ॥११॥

अर्थ ॥ हवेपुरुषने संपदानाकारण केटलाछे तेकहेछे दाक्षिणताजे अनुकूलता तथालज्जा अनेदेवगुरुनीपूजा तथापितामाता काकोकाकी महोटाभाई इत्यादिकजे कोइ गुरुस्थानकियाहोय तेहनीभक्ति तथापरनेउपकारनुं करवु तथाव्यवहारशुद्धते लहेणादेवामा साचापणुराखवु एटलाप्रकार तेपुरुषने इहलोके अथवापरलोके प ण संपदादेवाना कारणभूतथाय ॥ ११ ॥

जिनेष्वभक्तिर्यमिनामवज्ञा कर्मस्वनौचित्यमधर्मसंग ॥
पित्राद्युपेक्षा परवंचनं च सृजंति पुंसां विपदः समंतात् ॥१२॥

अर्थ ॥ हवेपूर्वोक्तप्रकारेथी विपरीतपणे प्रवर्त्तता प्राणीने आपदाहोय तेकहेछे जिनभक्तिरहितपणुं तथासाधुनीअवगणना अने कर्मजे साधुअने श्रावकनीक्रिया तेहनेविषे अनुचितपणु तथा अधर्मजे धर्मरहित एहवानष्टविष्ट नास्तिकप्रमुख अ

यवाविरुद्धधर्मिते मिथ्यात्वी कुमतिप्रमुख तेहनीमित्राइते विवाद्व्यापार प्रमुखेंकरी परिचयकरवु तथापिताप्रमुखनी अवगणना अनेपरने कुमालेख कुमानामा कुडा माप कुडातोलप्रमुखेंकरीने ठगवु एटलासर्वप्रकारेंकरी पुरुषनेआपदाउपजे ॥१२॥

भक्त्यैव नार्चसि जिनं सुगुरोश्च धर्मं नाकर्णयस्यविरत विरतिर्न धत्से ॥
सार्थं निरर्थमपि च प्रचिनोष्यघानि मूल्येन केन तदमुत्र समीहसे शं॥१३

अर्थ॥ वलीप्रकारातरेकहेछे हेआत्मातु भक्तियेकरी जिनपूजाकरतोनथी अने कदापिपूजेछेतोपण कुलकर्मादिक परवशपणायकी पूजेछे पणभक्तिथीपूजतोनथी तथास द्गुरुपासेथी धर्मसांभलतोनथी तथानिरतर अढारपापस्थानक पन्नरकर्मादान प्रमुखथीसंवरवुंकरवु इत्यादिकविरतीपणुं तेपणनथीआदरतो तथासार्थकके० पोताने अथवाकुटुंबादिकनेअर्थें अनेनिरर्थकके०स्वार्थविनापण अपध्य अनाचरित पापोपदेश हिंसाप्रदान प्रमादाचरित एपांचप्रकारेकरी कारणविना पापनेमेलवेछे तोपरलोके तुं शामूलेंकरी सुखनी वाछाकरेछे इहा मूलरूपते पुण्यजाणवु ॥ १३ ॥

चतुष्पदैः सिंहइव स्वजात्यैर्मिलन्निमास्तारयतीह कश्चित् ॥
सहैव तैर्मज्जति कोपि दुर्गे शृगालवच्चेत्यमिलन् वरं सः॥१४॥

अर्थ ॥ हवेसुगुरुनेसिंहनीउपमा अनेकुगुरुने सीयालनीउपमाकहीने उपदेशेछे पोतानीजातीनाजे चतु पदमृगप्रमुख तेसाथेमल्या सिंहनीपरें एससारमाजे सद्गुरु तेपोतानी जातीना भव्यपचेद्रियसज्ञीमनुष्यइत्यादिकसाथे मल्योयको आश्रीतजीव नेतारे जेमसिंहनिजाश्रितचतु पदने कूपगर्त्तादिकथीतारे तेमसुगुरुपण निजाश्रितभ व्यजीवने ससारसमुद्रथीतारे अनेकुगुरुतेसीयालनीपरे स्वजातीयजे मनुष्यादिक अ नेविजातीयजे चतु पद तेहनेसाथेलेइजइने दुर्गजेनरकप्रमुख वलीदुर्गजे कूपादिकते मावुमाडे तेमाटेजेकुगुरुतेनमल्योथकोजसारो जेमपचाख्यानमां कोइकवनमां बीजा वाघसिंहादिकनुंभयटालवाने अर्थें सर्वचतु पदेमली एकबलवतसिंहने गजाकरी थाप्यो अनेसर्वचतु,पद तेहनीसेवाकरवालागा एकदिवसेतेवनमां अग्नीलागी तेवारे तेसर्वचतु पद सिंहनेसरणेगया तेसर्वनेसिंहेपोताने पुछडेवलगाडी एकफालेकरी को इकमहानदी उतरीपहेलेपार पहोचाड्या वलीकेटलाकदिवसे दावानलमिटयो वन नवपल्लवथयु तेवारेंतेसर्वचतु पदने पाछापोतानेठामे पहोचाड्या एहवोते सिंहनोप राक्रमदेखी कोइकुडुंकिसीयालेंपण केटलाक हीनसत्व निर्भाग्य ससलाप्रमुखजीवने पोतानासेवककीधा वलीकालातरे दवलागो तेवारे सीयाले निजाश्रित सर्वचतु पदने

पुंठडेवलगामी फालनरीनदी उतरवा लागो तेवारे सर्वजीवसहित. पोतेपण अगाधजलमांवुमो इहांसिंहते सुगुरु अनेसीयालते कुगुरु महानदीते दुर्गति अने आश्रितजीवते धर्मार्थी मनुष्य एमउपनयलेवो ॥ १४ ॥

पूर्णे तटाके तृषितः सदैव भृतेपि गेहे क्षुधितः स मूढः ॥ कल्पद्रुमे सत्यपि ही दरिद्रो गुर्वादियोगेपि हि यः प्रमादी ॥१५॥

अर्थ ॥ हवेगुर्वादिकनुं योगछतेप्रमाद करवुंनही तेदृष्टांतदेइनेकहेछे निश्चेंकरीजे प्राणी देवगुरुधर्मनुं योगछतेपण प्रमादवंतथायछे तो हाहाइतिखेदेतेप्राणी भरयातला वेंपण सदाइतरस्योछे वली ते पुरुप सुखडी प्रमुखे भरायका घरमां पण भुख्योछे वली घरमांछते कल्पवृक्षें पण दरिद्रीछे तेमाटे गुर्वादिकनो योगछते प्रमादत्यजीने धर्मसाधनकरवु तेहिजसार्थकछे ॥ १५ ॥

न धर्मचिंता गुरुदेवभक्ति र्येषां न वैराग्यलवोपि चित्ते ॥ तेषां प्रसूक्लेशफलः पशूना मिवोभवः स्यादुदरंभरीणां ॥ १६ ॥

अर्थ ॥हवेप्रकारांतरेतेहिजकहेछे आजमेंशुं धर्मकीधो अनेहवे नित्य प्रत्येंशोधर्म करवानुंछे एहवीजेने विचारणानथी यदुक्तं उत्थायोत्थाय चिंतेयं किमद्य सुकृत कृत॥ आयुष खंडमादाय रविरस्तमयं गत ॥१॥ तथा जेने गुरुअने देवनीभक्तिनथी वली वैरागनुंलेशमात्रपणनथी एहवाजेपेटभराप्राणी तेहोनुंजन्मते पशु श्वान कुतराप्रमुखनीपरे केवल माताने गर्भधारणादिकक्लेश करवामात्रज फलहोय ॥ १६ ॥

न देवकार्ये न च संघकार्ये येषां धनं नश्वरमाशु तेषां ॥ तदर्जनाद्यैर्वृजिनैर्भवांधौ पतिष्यतां किं त्ववलंबनं स्यात् ॥ १७ ॥

अर्थ ॥ हवेप्रकारांतरें सुपात्रेधनवावरवानी सफलतादेखाडेछे जेधनवतप्राणीनुं धन देवकार्यजे प्रासादकरावावा अथवाजीर्णोद्धार बिंबप्रतिष्ठा इत्यादिकनेविषे तथा संघकार्यजे चतुर्विधसंघनुंपोषवुं तथासाधर्मिनीवत्सलताते हीन अने दीनजे साधर्मि कहोयतेनीचिंताकरवी तथा पुस्तकलखववा इत्यादिक कार्योमांउपयोगीनहोय तेप्राणीनुं विनाशशील एहवुंजेधन तेउपार्जनादिकनापापेकरी संसारकूपमांपडताने तेधन सुंकांइ आधारभूतथाय अर्थातकांइनथाय एटलेसुपात्रेंव्ययविना अन्यथाकोइकामेनावे॥१७इति श्रीअध्यात्मकल्पद्रुमेदेवगुरुधर्मशुद्धीनामा द्वादशोधिकारः समाप्तः॥१७॥

ते तीर्णा नववारिधिं मुनिवरास्तेन्यो नमस्कुर्महे येषां नो विषयेषु निगृ
ध्यति मनो नो वा कषायैः प्लुतं ॥ रागद्वेषविमुक् प्रशातकलुषं साम्याप्त
शर्माद्वय नित्य खेलति चात्तसंयमगुणाक्रीडे नजभावना॰ ॥ १ ॥

अर्थ ॥ हवेयतिशिक्षोपदेशनामा तेरमोअधिकारकहेठे तेमाप्रथमयतिनुं स्वरूपक हेठे जेमुनीनुमन विषयमां आसक्तपामतुनथी तथाक्रोधादिककषायमा व्याप्तुं नथी एहवाजेमहानुभाव संसारसमुद्रथीतस्था तेहनेनमस्कारकरियेठेये जेमुनिराज रागद्वेषेरहित थइने कलुषताजे पापाचरणतेहने शातपमाडयोठे वलीसमतायेकरी अ नुपमसुखपाम्योठे एहवुथइने पांचमहाव्रतनी पचवीसनावना तथा अनित्यादिक बारनावनानेनजेठे वलीजिनप्रणीतजे सयमनागुण क्षमादिकरूप उद्याननेविषे खेलेठे एहवुजेहनुंमनहोय तेहनेज तत्वथकी मुनिकहिये एनावार्थठे ॥ १ ॥

स्वाध्यायमादित्ससि नो प्रमादैः शुद्धा न गुप्ती समितीश्च धत्से ॥ त
पोद्विधा नार्जसि देहमोहा दल्पे हि हेतौ दधसे कषायान् ॥२॥ प
रीसहान्नो सहसे न चोप सर्गान्न शीलांगधरोपि वाऽसि॥तन्मोक्षमा
णोपि नवाब्धि पारं मुने कथं यास्यविशेषमात्रात् ॥३॥ युग्मं ॥

अर्थ ॥ हवेसाधुनावेषमात्रथकीज अर्थसिद्धिनथाय तेकहेठे हेमुनितुंप्रमादेक रीसिज्झायध्यानकरवा वाठतोनथी तथाशुद्धनिर्मल मनादिकत्रणगुप्ति अने ईर्यादि कपाचसुमतीने धारणकरतोनथी वलीशरीरनामोहथी बाह्यअभ्यंतर बेप्रकारेतपप ण करतोनथी तथाथोमोपण कषायनुंकारणउपनाथी कषायधरेठे ॥ २ ॥ तथाक्षुधा दिक बावीसपरिसह अने देवता प्रमुखनाकरेला उपसर्ग तेप्रतेनथीसहेतो तथा अ ढारसहस्त्ररूप शीलागरथने पणधरतोनथी अनेकेवल वेषमात्रथीज मोक्षनेवाठेठे प णएरीतेतोतु संसारसमुद्रनोपारकेमपामीस ॥ ३ ॥ एबेकाव्यनोअर्थ एकठेठे.

आजीविकार्थमिह यद्यतिवेषमेव धत्से चरित्रममलं न तु कष्टनीरु ॥ तद्वे
त्सि किं न न बिनेति जगज्जिघृक्षुर्मृत्यु कुतोपि नरकश्च न वेषमात्रात् ४

अर्थ॥वलीतेहिजकहेठे हेसाधुतुआससारमा आजीविकानेअर्थे जे यतिनोवेषध रेठे अनेकष्टकरवाथी बीहितोथको निर्मलनिरतिचार जेचारित्रतेप्रते धरतोनथी तो तेवारे तु एमकानथीजाणतो जे जगतनुंग्रासकरनार एहवोजेमृत्युते कोइथीबीहतोन थी वलीसाधुनोवेषमात्र धस्याथकी तो नरकपणबीहितोनथी एटले मृत्यु अने नरक एबेवाना सर्वथा तुजनेआववानेज पण ताहाराथी डरसेनही इतिनाव ॥ ४ ॥

वेषेण माद्यसि यते चरणं विनात्मन् पूजां च वांछसि जनाद्बहुधोपधिं च॥
मुग्धप्रतारणभवे नरके ऽसि गंता न्यायं बिभर्षि तदजागलकर्तरीयं॥५॥

अर्थ ॥ हेआत्मातुचारित्रविना यतिनेवेषेकरीहर्षपामेछे अनेलोकथकी बहुप्रकारनीपूजा वंदन सत्कारप्रमुख तथाउपधिजे वस्त्रपात्र पुस्तकादिकप्रतेवांछेछे पणपछेतुं एमुग्धलोकने प्रतारणके० कपटक्रियाये ठगाइकरी तेहथीउपार्ज्योजेनरकतिहांजरहीश तेमाटेतुं अजागले कर्तरीना न्यायप्रतेधरेछे जेमकोइ खाटकिये एकबकरीहणवानेअर्थे वधकरवानेस्थानकेआणी कातीयेधारचडावी सज्जकरी तेबकरीनेपासेकातिमूकी एटलामांकोइकामनेअर्थे पोतेघरमांगयो पछवाडेबकरीये पोतानापगेंकरीनेभूमीखोदितेमांकातिदाटी नेविचारछेजे रखेखाटकीआवेतिवारेदेखे एमजाणीतेहनाउपरसुती दैवयोगथी कंठतलेकातीनीधारआवी तेथीगलुदबाइगयु अनेमृत्युपामि तेमहेआत्मातुंपण तेबकरीनीपरें अज्ञानीथइने कातीरूपनरकने ढांकिराखेछे पणतेअवश्यभाविपणाथी उदयआव्याविना रहेसेजनही तेमाटेप्रथमथीज अज्ञानत्यजीने सावधानरहेजे एन्यायग्रंथातरें बीजेप्रकारेंपण लख्युंछे ॥ ५ ॥

जानेऽस्ति संयमतपोभिरमीभिरात्मन्नस्यप्रतिग्रहभरस्य न निष्क्रियोपि ॥
किंदुर्गतौ निपततः शरणं तवास्ते सौख्यं च दास्यति परत्र किमित्यवेहि॥६

अर्थ ॥ हेआत्माएलोकरंजन निमित्तेंजे संयमतथातप तेणेकरीने गृहस्थोपासेंथी अहार औषध वस्त्रपात्रादिकतुंलेवु ते तो संयमतपादिकना समूहतुं बक्रयके० मूलपणनथयुं तेवारेंतुजने दुर्गतिमांपडता शरणतेसुंछे अनेपरलोके सुखतें कोणआपसे तेविचारीजो एतोलोकोनाप्रतिग्रहतुं मूलमात्रपण ताहरुंसुकृतनथी माटेतुजने नरकेपडतां उद्धार अनेपरलोकनेविषे सुखतेशाथकीथासे एभावार्थछे ॥ ६ ॥

किं लोकसत्कृतिनमस्करणार्चनाद्यै रे मुग्ध तुष्यसि विनापि विशुद्धयोगान्
कृंतन् भवाधुपतने तव यत्प्रमादो बोधिद्रुमाश्रयमिमानि करोति पर्शून्॥७

अर्थ ॥ हवेलोकसत्कारादिकदेखी राचवुंनहीतेकहेछे हेमूढआत्मा शुद्धनिर्मलदोषरहित एहवाजे मनवचनकायानायोग तेविनालोकोनो सत्कारजे अभ्युत्थानादिक तथानमस्कारवंदना अर्चना जेनवांगपूजा विलेपनादिक तेणेकरीने शुंहर्षपामेछे केमकेएप्रमादते ताहरेसंसारकूपमां पडतांबोधरूप वृक्षनाआलंबनने छेदवाने एलोकसत्कारते कुहाडारूपछे एटलेताहरोप्रमादरूपवैरीते तुजने संसाररूपकुवामां

नारखवासारुं बोधआलंबनरूपवृक्षने लोकसत्काररूप कुहाडेकरीछेदेछे एटलेहमणा तो सत्कारपामिमनमां हर्षधरेछे पणआगले बोधपामवो दुर्लभथासे ॥ ७ ॥

गुणास्तवाश्रित्य नमंत्यमी जना ददत्युपध्यालयभैक्षशिष्यकान् ॥
विना गुणान् वेषमृषेर्बिभर्षि चेत् त तष्ठकाना तव भाविनी गतिः॥८॥

अर्थ॥हेसाधो धर्मार्थिलोकतो तहारागुणआश्रीने तुजनेनमेछे तथा उपधि वस्त्र पात्रादिक आलय वस्ति भैषज अन्नपानादिक अनेशिष्य तुजनेआपेछे अनेतुजोगुण विनाज मात्र वेषधरेछे तेवारे ताहरीधूर्त्तनी गति थाशे जेमठगारा कृत्रिम नवानवा वेष करीलोकना धनठगीलिये पछेकोइकदिवसें तेहनाविपाकथी वध बंधनादिक पामे तेम ताहरा हवालपण तेहनीपरे थासे ॥ ८ ॥

नाजीविकाप्रणयिनी तनयादिचिंता नो राजभीश्च भगवत्समय च वेत्सि॥ नो राजभीर्धरसि वाऽऽगमपुस्तकानि इत्यपि पाठः॥शुद्धे तथापि चरणे यतसे न भिक्षो तत्ते प्रतिग्रहभरो नरकार्थमेव ॥९॥

अर्थ ॥ हवेसाधुपणानुं सुखदेखाडेछे हेभिक्षुकतेंघरबारपरिग्रहतोमूक्या माटे आजीविका तथापुत्रादिकनी चिंतानथी तेमराजासंबंधीभयपणनथी वलीजिनप्रणीत सिद्धांतपणजाणेछे अथवाजैनसिद्धांतना पुस्तकधरेछे तोपणशुद्धचारित्रनेविषे उद्यमकरतोनथी तेवारेताहरु वस्त्रपात्रादिकनुंलेवु तेहतुंनारतरे नरकनेअर्थजछे ॥९

शास्त्रज्ञोपि दृढव्रतोपि गृहिणीपुत्रादिबंधोज्झितोप्यंगी यद्यतते प्रमादवशगो न प्रेत्य सौख्यश्रिये॥तन्मोहद्विपतस्त्रिलोकजयिन काचित् परा दुष्टता बद्धायुष्कतया स वा नरपशुर्नूनं गमी दुर्गतौ॥१०

अर्थ ॥ हवेछतेयोगेपणजीव धर्मकरतोनथी तेहनाबेकारणदेखाडेछे लौकिकअने लोकोत्तरशास्त्रने जाणतोथको तथा पचमहाव्रतधारीथको तथास्त्रीपुत्रादिकना प्रतिबंधेरहितथको पण जेप्राणीप्रमादवशे पडयोथको परलोकनासुखनी संपदारूप धर्मकार्यनेविषेउद्यम करतोनथी तोतिहां त्रणलोकनुं जीपनारजे मोहरूपशत्रु तेहनीज कोइक अलक्ष्यमहादुष्टताजाणवी अथवाते नररूपपशुबापडो पूर्वेनरकादिकना आयुपना बांधवाथकी दुर्गतिमांज जनारछे एमजाणीयेछेवे ॥ १० ॥

उच्चारयस्यनुदिनं न करोमि सर्वं सावद्यमित्यसकृदेतदथो करोषि ॥
नित्य मृषोक्तिजिनवंचनभारिता तत्सावद्यतो नरकमेव विभावये ते११

अर्थ ॥ हवेयतिनावेषमां नित्येंमृपावादिपणुं देखाडेछे जेयतिबीजा लोकोने ठगवा सारुं हुंसर्वथासावद्यकरुंनही एहवुंकहीनेपछे वारंवार सावद्यकर्म सचितआरंनप्रमुखकरेछे तेमाटेनित्येमृपावादेंकरी जारीथयुं एहवुंजे सावद्यआरंनादिककर्म तेहथी तुजने नरकेजवुंजसंनवेछे जुठुंबोलीने सावद्यकरवाथी निश्चेनरकगतिथाय ॥ ११॥

वेषोपदेशाद्युपधिप्रतारिता ददत्यन्नीष्टान्नृजवो धुना जना· ॥
नुंक्षे च शेषे च सुखं विचेष्टसे नवांतरे ज्ञास्यसि तत्फलं पुन.॥१२॥

अर्थ ॥ वलीतेहिजकहेछे हेसाधुहमणाआनवमांतुं कालामेलाकपडाप्रमुखना वेषे तथालोकरजवाप्रमुखनेअर्थे उपदेशआपी कपटवैरागपोषीने धर्मकथाकहेछे इत्यादिककपटेंकरी जेनोलालोकते तुजने वांछित अन्न पान वस्त्र पात्र वसति सिक्षादिकआपेछे तेथीसुखेखायछे सुखेसुएछे सुखेरमतोफिरेछे पणते सुखनोगव्यातुं फल परनवें नरकादिकनाडुखविना बीजोकांइजाणीसनही ॥ १२ ॥

आजीविकादिविविधार्त्तिनृशानिशार्त्ता· कृछ्रेण केपि महतैव सृजंति धर्मान्
तेन्योपि निर्दय जिघृक्षसि सर्वमिष्टं नो संयमे च यतसे नविता कथं ही१३

अर्थ ॥ वलीप्रकारांतरे तेहिजकहेछे केटलाकश्रावको आजीविकाजे उदरवृत्ति आदिशब्दथी वस्त्र आनरण राजदंम पुत्रादिकविवाह इत्यादिकचितायेकरी सदाकालआकुलथका घणीकष्टेंकरीने धर्मजेदानप्रमुख तेकरेछे अने हेनिर्दयवेपनाधरनार तुंतेवापाशेथीपण अन्नपानादिक सर्ववांछितवस्तु लेवानेवांछेछे अनेसंयममां उद्यमकरतोनथी माटे हाइतिखेदेताहरी तेसीगतीथासे ॥ १३ ॥

आराधितो वा गुणवान् स्वयं तरन् नवाब्धिमस्मानपि तारयिष्यति ॥
श्रयंति ये त्वामिति नूरिनक्तिन्निः फलं तवैषां च किमस्ति निर्गुण ॥१४॥

अर्थ ॥ एगुणवंतछे एसंयमगुणेसहितछे एमहानुनावछे एनेआराध्योथको पोतेसंसारसमुद्रतरेछे तेम आपणनेपण तारसे एहवीबुद्धिये घणीनक्तियेकरी तेप्राणिये तुजनेआश्रयोछे अनेतुतोपोतेनिर्गुणछो माटेतुजने अथवाते आश्रयकरनारने एमांशो फलछे एटलेतुबुडतोथको तेप्राणीनेपण बोडेछे एनावार्थ ॥ १४ ॥

स्वयं प्रमादैर्निपतन् नवांबुधौ कथंस्वनक्तानपि तारयिष्यसि ॥ प्र
तारयन्स्वार्थमृजून् शिवार्थिनः स्वतान्यतश्चैव विलुप्यसेऽहसा॥१५॥

अर्थ ॥ हेमुनितुपोतें प्रमादेंकरीने बुडतोछतो पोतानानक्तजे सेवकलोक तेने शीरीतेंतारीश केमके पोताने अन्नपानादिकमले तेनेअर्थे सरलजे मोक्षार्थिलोक ते

ह्नेवचतोथको तुफरेछे एटलेपोताना प्रमादाचरणथी अनेबीजोलोकने ठगवाथी एवन्नेप्रकारना पापेकरीने तुलोपायछे ॥ १५ ॥

गृह्णासि शय्याहृतिपुस्तकोपधीन् सदा परेभ्यस्तपसस्त्वियं स्थितिः॥
तत्ते प्रमादाभरितात्प्रतिग्रहै ऋणार्णमग्नस्य परत्र का गतिः ॥ १६ ॥

अर्थ ॥ हे वेषना धरनारयति तु लोकोपासेथी शय्या वस्ति अहार तथापुस्तक ज्ञानोपकरण तथाउपधि वस्त्रपात्रादिकजे नित्यलियेछे तेतो तपस्वीलोकनी स्थिति छे परतु तुतो प्रत्यक्षप्रमादमा मग्नथको काइपणतपस्यादिक करतोनथी तेमाटे प्र तिग्रहने निग्रवेकरी नारीथयु एहवुजेप्रमाद तेथकीउपार्ज्युजे लेणो ते लेणानेविषे मग्नथको खुतोछोएहवुछतो ताहरीपरनवे सीअवस्थायासे एटलेप्रथमतु चारित्रले इने प्रमादसेवेछे तेलेणोकरेछे तेवारपछे तपसयमादिकविना लोकोपासेथीशय्यादि क प्रतेलीयेछे तेबीजोलेणो एमएबेप्रकारना लेणामाखूतोथको ताहरीसी अव स्थायासे अर्थात दुष्टअवस्थाज पामीस इतिनाव ॥ १६ ॥

न कापि सिद्धिर्न च तेतिशायि मुने क्रियायोगतपःश्रुतादि ॥ तथा
प्यहंकारकदर्थितस्त्वं ख्यातीच्छया ताम्यसि धिङ् मुधा किं ॥१७॥

अर्थ ॥ हवेतथाविधगुणविना कीर्त्तिनेसुंवाछेछे हेमुनिताहरेविषेकोइ विद्यामंत्रा दिक सिद्धिनथी वलीवादणा खमासमणाप्रमुख उत्कृष्टक्रियानथी तथामनवचन कायाना योगनी शुनप्रवृत्तिनथी तथाबाह्याभ्यंतरतपनथीकरतो तथाश्रुतज्ञान आ दिशब्दथी प्रनाविकपणुं राजाप्रमुखनुं प्रतिबोधवु इत्यादिकगुणतेपणनथी तोपणतुं अहकारे कदर्थितथको ख्यातिजे प्रसिद्धितेह्नी वाछायेकरीने फोकटशोपरीतापकरे छे माटेतुजने धिःकारथाउताहरामा जो कोइ अतिशयगुणहोय तेवारेतो ख्यातिनी वाछापणयुक्तछे अनेतेविनाज प्रख्यातीनेवाछेछे माटेतु धिक्कारवायोग्यछो ॥ १७ ॥

हीनोप्यरे भाग्यगुणैर्मुधात्मन् वांछंस्तवार्चाद्यनवाप्नुवश्च ॥
ईर्ष्यन् परेभ्यो लभसेऽतितापमिहापि यातो कुगतिं परत्र॥१८॥

अर्थ ॥ फरीतेहिजकहेछे अरेनिर्नाग्य नि पुण्यकआत्मातु गुणरहितथको फो कटस्तवनापूजाप्रमुखने वांछतो जोपूजास्तवनानथायतो वलीलोकोउपरक्रोधकरतो थको इहलोकेपण अतिशय तापसतापपामेछे अनेपरलोकेपणदुर्गतियेजइश॥१८॥

गुणैर्विहीनोपि जनानतिस्तुति प्रतिग्रहान् यन्मुदितः प्रतीछसि ॥
लुलायगोश्वोष्ट्रखरादिजन्मभि र्विना ततस्ते भविता न निष्क्रय ॥१९॥

अर्थ ॥ हवेकुगतिमांपडवाविषे उपदेशकरीने प्रतिबोधेछे हेयतिवेषनाधारक तुं गुणरहितथको पणहर्षवंतथयीने लोकथी नमस्कारादिक स्तवना वस्त्रपात्रअन्नादि कलेवावांछेछे तेहथीतुजने लुलायजे पाम्भोपाणीवहेवायोग्य अथवागोजेबलदीओ हल गाडा यंत्र कोल प्रमुख वहेवायोग्य अथवाअश्वते असवारीकरवायोग्य तथा उंट खररासभ अनेकविधभारवहेवायोग्य इत्यादिकअवतार पाम्याविना तेप्रतिग्रहादि कर्तुं मूलनथाय केमकेगुणविनापण लोकोपासेथी प्रतिग्रहादिक कल्पेछे तेहनुंलेणो पाम्भाप्रमुखना अवतारपामि भारवहीनेतूटवुछे एभावार्थ ॥ १९ ॥

गुणेषु नोद्यच्छसि चेन्मुने ततः प्रगीयसे यैरपि वंद्यसेऽर्च्यसे॥जु गुप्सितां प्रेत्य गतिं गतोऽपि तैर्हसिष्यसे चाऽभिभविष्यसेऽपि वा॥२०॥ दानमाननुतिवंदनापरैः मोदसे निकृतिरंजितैर्जनैः ॥ नत्ववैपि सुकृतस्य चेल्लव. कोपि सोपि तव लुंठ्यते हितैः॥२१॥

अर्थ ॥ वलीतेहिजप्रकारांतरेकहेछे हेमुनिजोतुगुणनेविषे उद्यमकरतोनथी ते वारेइहभवेजे तुजने श्रावकादिक गीतभासप्रमुखेकरीगायछे तथावलीद्वादशावर्त्त वां दणायेंकरीवांदेछे सुगंधलेपनादिकेकरीपूजेछे तेतुंपरभवें निंदनीक कुरूप दरिद्रतादि क पाम्याथका तेहिजताहराउपर हससे तथानानाप्रकारनीपीडा उपजावसे एटले ते स्वामिपणे अवतरसे अनेतुदासपणेथाइस तिहां लातो लाठीप्रमुखना प्रहारेकरी तुजनेपीडसे ॥ २० ॥ हेमुनितु कपटक्रियायेकरी लोकरीजवीने तेहोने दानसन्मान स्तवन वंदनानेविषे तत्परदेखीने हर्षपामेछे पण एम नथीजाणतो जे ताहरो लेश मात्रसुकृतछे तेहनेएलोकलुटेछे ॥ २१ ॥

भवेन्नुणी मुग्धकृतैर्नहि स्तवै र्न ख्यातिदानार्चनवंदनादिभिः ॥ वि ना गुणान्नो भवदुःखसंक्षय स्ततो गुणानर्जय किं स्तवादिभिः॥२२

अर्थ॥हवेस्तवनादिकनी वाछामूकीने गुणनुंपोषकरवुतेकहेछे हेमुनितुं विशेषाविशे षनाअजाण एहवामुग्धलोकनीकरेलीजे स्तुतितथाख्याति प्रशंसादिक तेणेकरीगुणव तनथाय वलीगुणजे ज्ञानादिक तेहनीप्राप्तिविना संसारनोविनाश अनेमुक्तिनीप्राप्तिन थाय तेमाटेकेवल गुणनेजउपार्जनकर पणस्तुतिकरावथवाथी कांइअर्थसिद्धिनथी२२

अध्येषि शास्त्रं सदसद्विचित्रा लापादिभिस्ताम्यसि वा समा ये॥येषां जनानामिह रंजनाय भवांतरे ते क मुने क च त्वं॥२३॥

अर्थ ॥ हवेलोकरीजववामाटेतुं शास्त्रभणेछे पणभवांतरेतुकिहां अनेरीजनारलो

कक्रिह्ना तेछेखाडेछे हेमुनितुजे लोकरीजववानिमित्ते सत्के० नलोजिनागम तथा असत्के० विरुद्ध्बौद्धादिकनुशास्त्रते प्रर्तेनणेछे अनेवली कपटसहित नानाप्रकार नाआलापसंलापादिक तेणेकरीने घणुंप्रयासकरेछे पणनवांतरे तेलोककिहागतिमा जशे अनेतु केइगतियेजइश एटलेआनवे जावजीवशुद्धीजे जीव तें रीजव्याहशे तेपरनवेकोइपण ताहरे कामेआवेसेनही ॥ २३ ॥

परिग्रहं त्वं व्यजहाकृहादे स्तात्कि न धर्मोपकृतिछलात्तं ॥
करोपि शय्योपधिपुस्तकादे र्गरोपि नामांतरतोपि हता॥२४॥

अर्थ ॥ हवेपरिग्रहत्यजवा आश्रीउपदेशछे हेमुनितेपूर्वे घरप्रमुखनुपरिग्रहबां डयुं अनेवली धर्मोपकरणने मीसेकरीने शय्या वस्ति उपधि वस्त्र पात्रादिक पुस्त क आदिशब्दथी पाटा चाबखी पोथी बांधणा जपमाला प्रमुखउपकरणनो परिग्रह सुंकरेछे धर्मोपकरणजेकाइ बहुमूलो ममतानावशयकी वधारेराखियेंते परिग्रहजजा णवो केमके० गरके० विप तेहनेनामांतरकह्याथकी एटलेनामफेरवीनाख्याथीप ण हताके० मृत्युकारकहोयज जोविपने साकर अमृत इत्यादिककहियेतोपण खांधु थकु प्राणहरणकरे तेमपरिग्रहने धर्मोपकरण निमित्ते राख्योथकोपण दुर्गतिआपे

परिग्रहात्स्वीकृतधर्मसाधनाभिधानमात्रात्किमु मूढ तुष्यसि ॥
न वेत्सि हेम्नाप्यतिभारिता तरी निमज्जयत्यंगिनमंबुधौ द्रुतं॥२५॥

अर्थ ॥वलीतेहिजकहेछे हेमूर्खसाधोतु स्वीकृतके० प्रमाणकिधुंछे धर्मसाधनके० धर्मोपकरण एहवुनाममात्रजेहतुं एहवोपरिग्रह पाम्याथी सुंहर्षपामेछे हेमूर्खतुन थीजाणतोजे अतिशयभारी एहवोजेसुवर्ण तेणेकरीभरी एहवीतरीजे होडी तेजेम अंगीनके० बेशनारमनुष्यने बोडेछे तेमतुजनेपण धर्मोपकरणनेमीसे मल्योएहवो जे अतिपरिग्रहतेनवसमुद्रमा बोडशे इतिभाव ॥ २५ ॥

येह्कपायकलिकर्मनिबंधभाजनं स्यु पुस्तकादिभिरपीहितधर्मसाधनैः॥
तेपां रसायनवरैरपि सर्पदामयै रार्तात्मना गदहते· सुखकृत्तु कि भवेत्॥२६

अर्थ ॥ जेमुनिये हितके० वाछ्युंछे धर्मनुंसाधनजेथकी एहवाजे पुस्तकादिकते णेकरीनेपण अंहजेपाप तथाकषायजे क्रोधादिक तथा कलिजेकलहतेना करवा थकी कर्मजे ज्ञानावरणियादिक तेनानिकांचितबंधनुभाजनथाय तेहनेबीजोकोइ सुखकार्य निवृत्तिनुकरनारनथाय एटलेजेहनेधर्मोपकरणतेहिज ममत्वनावशथकी परिग्रहपणे परिणम्याछे तोतेहनेअर्थे क्लेशकपायादिकने करवेकरीकर्मवृद्धिकरेछे

तोतेहनेसंतोषते पछे फरीबीजाशाथकीथासे एनावार्थी तेह्नुंदृष्टांतकहेछे जेम रसा यनजे मृगांगपारादिक तेह्नोसेवनकरवाथीज उलटोमांदापड्यो एटलेरसायनथ कीपण जेह्नेरोगवध्यो तोपछेतेह्नारोगनुं निवारकबीजोसुखकारी कोइनथी ॥२६॥

रक्षार्थं खलु संयमस्य गदिता येऽर्था यतीनां जिनै र्वासःपुस्तकपात्रकप्रभृतयो धर्मोपकृत्यात्मकाः ॥ मूर्छन्मोहवशात्त एव कुधिया संसारपाताय धिक् स्वं स्वस्यैव वधाय शस्त्रमधियां यद्वत्प्रयुक्तं भवेत्॥२७

अर्थ ॥ निश्चेकरीनेजे वस्त्रपुस्तकप्रमुख पदार्थतेश्रीजिनेश्वरें साधुनेसंयमनी रक्षानेअर्थे धर्मोपकरण स्वरूपेकह्याछे तोहाहा इतिखेदे तेहिजपदार्थे कुबुद्धिनाधणीने अतिशय मोहनावशथकी उलटासंसारमांबूडावनारनाकारण थइपडेछे तेह्नुंदृष्टांत जेम बुद्धिहीनपुरुषतुं पोतानुं अस्त्रजेखड्गादिक तेविपरीतपणे राख्युंहोय तोपोतानेजवधकारीथाय तेह्नीपरे जाणवु ॥ २७ ॥

संयमोपकरणच्छलात्परान् भारयन् यदसि पुस्तकादिभिः ॥
गोखरोष्ट्रमहिषादिरूपभृत्तच्चिरं त्वमपि भारयिष्यसे॥२८॥

अर्थ ॥ हेमुनितुं जे परप्राणीनारवाह्क पोठी बलद उंटप्रमुखने संयमनाउपकरण नेमीसेकरी पुस्तकादिकनुं भारवहेवरावेछे तेमाटेतेप्राणीतुजनेपण बलद उंट रासभ पाडाप्रमुखना अवतारपाम्यायका चिरकाललगें भारवहेवरावशे ॥ २८ ॥

वस्त्रपात्रतनुपुस्तकादिनः शोभया न खलु संयमस्य सा ॥
आदिमा च ददते भवं परा मुक्तिमाश्रय तदिच्छयैकिका॥२९॥

अर्थ ॥ हवेवस्त्रपात्रादिकथी संयमनीशोभानथीतेकहेछे हेमुनि वस्त्रपात्रतथाशरीर पुस्तकइत्यादिकनी शोभाकीधेयके निश्चेकरी संयमनीशोभानथाय एटलेवस्त्रादिकनीशोभाते सयमने अशोभाकारणीछे तेमांपणवली आदिमके० पहेलीजे वस्त्रादिकनीशोभाते भवभ्रमणजआपे अने परके० बीजीजे संयमनीशोभाते मोक्षजआपे तेमाटेजोसंसारनी वांछाहोयतो वस्त्रादिकनी शोभाआदर अनेजो मुक्तिनीवांछा तुजने होय तो संयमनीशोभाआदर ॥ २९ ॥

वस्त्रपात्रतनुपुस्कादिनः शोभया न खलु संयमस्य सा॥ तां तदत्र परिहाय संयमे किं यते न यतसे शिवार्थ्यपि ॥इतिचोत्तरार्द्धपाठः ॥३०॥

अर्थ ॥ वस्त्रपात्रेति एपाठांतर एश्लोकनुंपूर्वार्द्ध पूर्वेनीपरेजाणवुं अनेउत्तरार्द्धनी

व्याख्याकहेछे तस्मात्कारणात् तेकारणमाटेहेसाधो ते वस्त्रादिकनी शोनागमीने जोमुक्तिनोअर्थीछोतो जिनप्रणीत चारित्रनेविषे केमउद्यमकरतोनथी ॥ ३० ॥

शीतातपाद्यान्नमनागपीह परीषहाश्चेत्क्षमसे विसोढु ॥
कथं ततोनारकगर्भवास दुःखानिसोढासि भवांतरे त्व ॥३१॥

अर्थ ॥ हवेपरीषह सहेवाआश्री उपदेशआपेछे हेमुनिजोतु संयमनेविषे टाढ्तडकाप्रमुख थोडापणपरीषह सहेवानेसमर्थनथी अनेकायरथायछे तोभवांतरेनेविषे नरकतथा गर्भवासनादुःख केम सहीस एटले नरकादिकना दुःखसहेवाथीतो परीषहनादुःखनुं सहेवुंभलुंछे एमजाण ॥ ३१ ॥

मुने न किं नश्वरमस्वदेह मृत्पिंडमेनं सुतपोव्रताद्यैः ॥ निपी
डय भीतीर्भवदुःखराशेः हित्वात्मसाच्छैवसुखं करोषि ॥ ३२ ॥

अर्थ ॥ हवेसाधुने तपप्रमुखनुं उद्यमकरवुंकहेछे हेसाधु एविनाशशील तथा आपणपोतानुंनही एहवोजेदेहरूप माटिनुंपिंड तेहने भलाजिनाज्ञासहित तपव्रतप्रमुखे करी दमीने संसारनादुःखसंबंधी सर्वभयछांडिने मुक्तिसंबंधी सुखते पोतानेवश केमनथीकरतो ॥ ३२ ॥

यदत्र कष्टं चरणस्य पालने परत्र तिर्यङ्नरकेषु यत्पुनः ॥तयोर्मि
थः सप्रतिपक्षता स्थिता विशेषदृष्ट्यान्यतरं जहीहि तत् ॥३३॥

अर्थ ॥ हेसाधुजेइहां श्रीजिनशासनेविषे चारित्रपालवानीकष्टछे अनेपरभवे तिर्यंचनरकादिकनेविषेजे कष्टछे तेबेहुकष्टने परस्परें प्रतिपक्षपणुंरहेछे एटलेजिहां चारित्रकष्टछे तिहांतिर्यंचनरकनु कष्टनथी अनेजिहां तिर्यंचनरकादिकना कष्टछे तिहां चारित्र कष्टनथी तेमाटेविशेषदृष्टिये विचारी तेबेमाथी एककष्टनेमूक ॥ ३३ ॥

शमत्र यद्विदुरिव प्रमादजं परत्र यच्चाब्धिरिव द्युमुक्तिगं ॥ तयोर्मि
थः सप्रतिपक्षता स्थिता विशेषदृष्ट्यान्यतरद्गृहाण तत् ॥३४॥

अर्थ ॥ हवेसुखनुग्रहवुंकहेछे हेसाधोइहां चारित्रमांप्रमादकरवाथीजे सुख ते बिंदुजेटलुंछे अनेसंयमनां पालवाथकीजे देवलोकमुक्तिनासुख तेसमुद्रसरखाछे तेबन्हेसुखने परस्परप्रतिपक्षपणुछे जिहांप्रमादसुखतिहां मुक्तिसुखनथी अने जिहां मुक्तिसुख तिहांप्रमादसुखनथी माटेविशेषेविचारी बेमाथी सारजाणीतेने आदर॥३४॥

अथवा॥नियंत्रणायाचरणेऽत्र तिर्यक् स्त्रीगर्भकुंभीनरकेषु या च ॥
तयोर्मिथः सप्रतिपक्षभावा द्विशेषदृष्ट्याऽन्यतरां गृहाण ॥३५॥

अर्थ ॥ हवेगुरुपारतंत्रआश्रयीकहेछे हेसाधुइहांजिनशासनमां चारित्रनेविषेजे गुरुपारतंत्र्यादिकत्रणप्रकारनो परवशपणुंछे अने तिर्यंचनाअवतारमां तथास्त्रीनागर्भ मां तथा कुंभीतेयणोजसांकडामुखनुंनारकीने उपजवानुंस्थानकतेमां उपनाजेनार कीते खंडोखंडथयी बाहेरनिकले तेहनेविषेजे परवशतापणुछे तेबेहुने परस्परेंप्रति पक्षीपणुछे एटले जिहांचारित्रनी नियंत्रणाहोय तिहांतिर्यंच स्त्रीअने नरकादिकनी नियंत्रणानहोय अनेजिहां तिर्यंचस्त्रीनरकादिकनी नियंत्रणाहोय तिहां चारित्रनी नियंत्रणानहोय माटेविशेषदृष्टियेंविचारीने तेबेमांथी एकनियंत्रणानेआदर ॥३५॥

सहतपोयमसंयमयंत्रणां स्ववशतासहने हि गुणो
महान्॥शिवं गुण इति वा पाठः ॥ परवशस्त्वतिभूरि स
हिष्यसे न च गुणं बहुमाप्स्यसि कं च न ॥ ३६ ॥

अर्थ ॥ हवेपरवशेदुःखसहेवाकरता पोतानावशेंदुःखसहेवुंभलुंछे तेकहेछे हेसा धुतुं चोथप्रमुखतप तथा नियमअभिग्रहादिक ते यम तथासत्तरभेदें संयमसंबंधी एत्रण नियत्रणाछेतेतुंसहनकर केमके एत्रण नियंत्रणाओते पोताने स्वाधीनपणे सहनकरवीछेते महोटो गुणछे तथापाठांतरे एथकी शिवगुणके० मुक्तिरूपीओगुण होय अने जे अतिपरवशपणे एकेंद्रियादिकमां पराधीनथको घणीजनियंत्रणाओ सहीस तिहां अकामनिर्जरासिवाय अधिकुंगुणमात्र काइपणपामीसनहीं॥ ३६ ॥

अणीयसासाम्यनियंत्रणाभुवा मुनेऽत्र कष्टेन चरित्रजेन च॥ यदि
क्षयो दुर्गतिगर्भवासगा सुखावलेस्तत्किमवापि नार्थितं॥ ३७ ॥

अर्थ ॥ वलीप्रकांतरेतेहिजकहेछे हेसाधो आजन्ममां समतारूपनियंत्रणातेसं बंधीकष्ट तथाचारित्रसंबंधीजे अल्पमात्रकष्ट तेणेकरी दुर्गति अने गर्भावाससंबंधी असुखनासमूह क्षयथायछे तोतेथी सुवांछितपणुंतुंनपाम्यो अर्थात्पाम्योज ॥३७॥

त्यज स्पृहां स्वः शिवशर्मलाभे स्वीकृत्य तिर्यड्नरकादि दुःखं ॥
सुखाणुभिश्चेद्विषयादिजातैः संतोष्यते संयमकष्टभीरुः ॥ ३८ ॥

अर्थ ॥ हवेप्रमादवतनें रीसेकरीकहेछे हेसाधुतुजो विषयादिकथीउपनोजे सुख नोलेश तेणेकरी संतोषपामेछे अने संयमनाकष्टथीबीहेछे एरीतेंतो तें तिर्यंच तथा

नरकनुंदुःखकबुलकरीने स्वर्गमोक्षनासुखपामवानी वाछामूकीदीधी एटलेअणुमात्र सुख उपर राच्योथको स्वर्गमोक्षनुं अतुल्यसुखहारेछे एनावार्थछे ॥ ३८ ॥

समग्रचिंतार्तिहतेरिहापि यस्मिन् सुखं स्यात्परम रतानां ॥
परत्र चेंद्रादिमहोदयश्री प्रमाद्यसीहापि कथ चरित्रे ॥३९॥

अर्थ ॥ हवेचारित्रथी इहलोकेतथा परलोकेसुखछे तेकहेछे चारित्रमारक्तथयला एहवाजेनावसाधु तेहने सर्वचिंताना निवारवाथकी इहलोकेपण परमअनुपमसुख होय अनेपरलोकेपण इंद्रादिकनीसंपदा तथा मोक्षनीसंपदाहोय तोहेसाधो एहवुजे चारित्रतेनेविषे रह्योथकोतु शुंप्रमादकरेछे यत देवलोकसमाणोअ परियाउमहेसि णं ॥ रयाणअरयाणंच महाणरयसारिसा ॥ १ ॥ पुन. नच राजभयं नच चोरभयं न च वृत्तिभयं न वियोगभयं॥इह लोकसुखं परलोकहितं श्रमणत्वमिद रमणीयतरं॥२॥

महातपोध्यानपरीषहादि न सत्त्वसाध्य यदि धर्तुमीश ॥ तद्भावना.
किं समितीश्च गुप्ती धत्से शिवार्थिन् न मन.प्रसाध्या· ॥ ४० ॥
अनित्यताद्या भज भावना. सदा यतस्व दुःसाध्यगुणेऽपि संयमे॥जि
घत्सया ते त्वरते ह्ययं यम· श्रयन् प्रमादान्न भवाद्बिभेपि किं॥४१॥

अर्थ॥ हवेजेबहुकष्टकरीशकेनहीतोते सुखसाध्यधर्मकरे तेकहेछे हेसाधु तु पराक्रमवंतपुरुषने साधवायोग्य एहवाजे मासखमणप्रमुख महातप तथा प्राणायामादिक ध्यान तथाक्षुधादिकपरिसह धरवानेसमर्थनथी तोहेमोक्षनावाछक केवलमनेकरीज साधिसकीयेएहवीजे अनित्यादिकभावनातेनुंसेवनकर ॥ ४० ॥ तथावलीप्रकारांतरेकहेछे हेसाधोतुअनित्यताप्रमुख बारभावना ने सदाभज अनेदुःखें साधवायोग्य मूलोत्तरगुणछे जेना एहवासंयमनेविषेपण सुकुमालपणुंछाडीउद्यमकर केमके मृत्युते तुजने ग्रासकरवानीवाछाये उतावलुथायछे दिनदिनप्रतें ढुकडुआवेछे माटेप्रमादसेवतोथकोपण मनेकरीसंसारथकी बीहितोरहेजे ॥ ४१ ॥

हत मनस्ते कुविकल्पजालै र्वचोप्यवद्यैश्च वपु· प्रमादै ॥ लब्धी
श्च सिद्धीश्च तथापि वांछन् मनोरथैरेव हहा हतोसि॥४२॥दग्धं
मनो मे कुविकल्पजालै, र्वचोप्यवद्यैश्च वपु प्रमादै ॥लब्धीश्च सि
द्धीश्च तथापि वाछन् मनोरथै रेव हहा विहन्ये ॥ इतिवापाठ. ॥४३॥

अर्थ ॥ हवेसामग्रीविनापण महोटामहोटा मनोरथकरवा अफलछे तेकहेछे हे

साधुताहरोमनतें मागविकल्पनासमूहें विणसाडयुं अनेवचनपण मृषाभाषणादिक पापेकरीविणसाडयुं वलीशरीरपण प्रमादजेमद्यादिकतेणेकरी विणसाडयुं एरीतें मनवचनकायारूप त्रणगुप्तिविणसाडी तोपण आमोसहीप्रमुखलब्धि तथामंत्रविद्यादिकसिद्धिने वांछेछे माटे हाइतिखेदे मनोरथेंकरीज पीडायछे जेमशाली दुध खांडप्रमुख सामग्रीविनापण कोइमूर्खक्षीरनाभोजननुं मनोरथधरतो अहर्निशविकल्पेंज पीडाय तेमतुपणपीडायछे ॥ ४२ ॥ तथावलीपाठांतरें माहरुंमन कुविकल्पजालेंविणास्युं तथा अवद्यके० मृषाभाषणादिकपापें वचनविणास्युं अनेप्रमादेकरीशरीर विणास्युं तोपण लब्धि अने सिद्धि प्रतें वांछतो थको हाइतिखेदे हुं मनोरथमात्रेंज सुंपीमावंछुं इत्यादिक पहेलाकाव्यनुं पाठांतर काव्यजाणवु ॥ ४३ ॥

मनोवशस्ते सुखदुःखसंगमो मनो मिलेद्यैस्तु तदात्मकं भवेत् ॥
प्रमादचौरैरिति वार्यतां मिलच्छीलांगमित्रैरनुषंजयानिशं ॥ ४४ ॥

अर्थ ॥ हवेमननेसत्तसंगमांजोडवु तेकहेछे हेसाधुताहरे सुखअने दुःखनोजे मिलाप तेमननेवशछे केमकेमनजेहनीसाथेंमिले तेरूपीथाय जेम तैलने जेहवाफूलनो संगमिले तेहवीवासनामयथाय माटेमननेप्रमादरूपचोरसाथेंमलतो वारीने निरंतर शीलांगरथरूपजेमित्र तेनीसाथेंमेलव जेथकीतुजने सर्वथासुखसाथेंज मिलापथाय ॥ ४४

ध्रुवः प्रमादैर्भववारिधौ मुने तव प्रपात. परमत्सरः पुनः॥ गले
न बद्धोरुशिलोपमोस्ति चे त्कथं तदोन्मज्जनमप्यवाप्स्यसि॥४५॥

अर्थ ॥ हवेयुक्तिविशेषेंकरी प्रमादनोपरिहारकहेछे हेसाधुप्रमादनाहेतुयेकरी तुजनेसंसारमापडवुतो निश्चय थकीछे केमकेप्रमाद अनेसंसारने अग्निधुमादिकनीपरें नित्यबंधछे अनेवलीजो गलेबांधिमोटी शिलासरिखुं परप्राणीउपरमत्सरतुजनेछे तेवारे संसारसमुद्रमांथी तरीनिकलवु केमपामिस माटेप्रमादअने मत्सरबेहुत्यज॥४५॥

महर्षय केपि सहंत्युदीर्या प्युग्रातपादीन्यदि निर्जरार्थं ॥
कष्टं प्रसंगागतमप्यणीयोपीछन् शिवं किं सहसे न भिक्षो॥ ४६ ॥

अर्थ ॥ हवेकष्टसहेवाआश्री उपदेशआपेछे केटलाकमहाऋषी तेभद्रबाहुस्वामी दीक्षितचार व्यवहारीपुत्रनीपरें शीतादिक परिसहनासहनारा वली उग्रके० घणोकठिण आतपके० तडकाप्रमुख कष्टने उदरीनेपण निर्जरानेअर्थेंसहेछे तेवारेहे साधुतुं मुक्तिनेतोवांछेछे तेवारें प्रसंगथी उदयआव्युं एहवोस्वल्पमात्र कष्टप्रतेकांनथीसहेतो अनेकष्टसह्याविना मुक्तिकेमपामिस एभावार्थ ॥ ४६ ॥

यो दानमानस्तुतिवंदनादिभि र्न मोदतेऽन्यैर्न तु दुर्मनायते ॥ अला
भलाभादिपरीषहान् जयन् यतिः सतत्वादपरो विडंबकः ॥ ४७ ॥

अर्थ ॥ हवेअसाधुपणा तथा साधुपणानो भेददेखाडेछे जेलाभअलाभादिक प
रिषहनेजीपतोथको ग्रहस्थनुंआप्यो अहारउपधिप्रमुखदान तथासत्कारस्तुतिप्रमु
खमान इत्यादिकेकरी हर्षपामेनही अनेअलाभ अपमान प्रहारादिके दुहवायनही
तेहिजपरमार्थथी यतिजाणवो अने अपरके० बीजाजेदान वदनादिकथी हर्षपामे
तथा अलाभनंदादिकथी दुहवाय तेयतिनावेषे विडंबकके० नटरुपजाणवा ॥४७॥

दधगृहस्थेषु ममत्वबुद्धिं तदीय तप्त्या परितप्यमानः ॥ अ
निर्वृतांतःकरणः सदा स्वै स्तेषां च पापैर्भ्रमिता भवेसि॥४८॥

अर्थ ॥ हवेमनोगुप्तिराखवानेअर्थे यतिये ग्रहस्थनी चिंताकरवीनही तेकहेछे
हेसाधुतुग्रहस्थनेविषे ममत्वनीबुद्धिधरतोथको अनेग्रहस्थनीचिंताये तपतोथको
पोतानापापे तथाग्रहस्थनापापें निरंतरव्याकुलचित्तवंतथको संसारमांभमीस॥४८॥

त्यक्त्वा गृहं स्वं परगेहचिंता तप्तस्य को नाम गुणस्तवर्षे ॥
आजीवि काऽस्ते यतिवेषतोऽत्र सुदुर्गतिः प्रेत्य तु दुर्निवारा ॥४९॥

अर्थ ॥ हेसाधु पोतानुंघरमूकीने वलीपारका श्रावकादिकनाघरनी चिंतायेंकरी
तुजनेशोगुणछे एकघरमूकी घणाघरनीचिंतायें कोइगुणनथी आभवमांतोतुजने यति
वेषनाप्रतापथी आजीविकाचालेछे पणपरभवेतो तुजने अतिशयदुर्गतिदुर्निवारक
एहवा नरकादिकछे पणपरभवें दुर्गतिनोवारनारकोइनथी एभावार्थ ॥ ४९ ॥

कुर्वे न सावद्यमिति प्रतिज्ञां वदन्नकुर्वन्नपि देहमात्रात् ॥ शय्या
दिकृत्येषु नुदन् गृहस्थान् हृदा गिरा वाऽसि कथं मुमुक्षुः ॥ ५० ॥

अर्थ ॥ हनेतुकायामात्रथीसाधुछो पणमनवचनथीसाधुनथी तेकहेछे हेमुक्तिवा
ंछकसर्वदातुं नित्यप्रतें आवश्यककरता सव्वं सावज्जंजोगं पच्चखामि जा जीवाए तिविहं
तिविहेणं मणेणं वायाए काएणं इत्यादिकपाठकहीने हुंसर्वसावद्यकरुंनही एहवीप्र
तिज्ञाकरतोथको तेसावद्यमात्र शरीरथीज अणकरतोथकोथयो पणशय्या जेउपाश्र
यप्रमुख कार्यनेविषे ग्रहस्थनेप्रेरतोथकोछो तो तेमाटमनथी अनेवचनथी मुमुक्षु तेशा
नो एटले मन वचन कायायेंकरी सावद्यमूके तेहनेमुमुक्षु कहियें अनेतुंतोकायामां
त्र सावद्यकरतोनथी पणमनथी सावद्यचिंतवेछे अनेवचनथी सावद्यकर्मप्रेरेछे
तथा वचनथी मुमुक्षुनथी मात्रकायाथीज मुमुक्षुछे एभावार्थ इहांप्रेर

णाते आदेशदेवामात्रजजाणवी बीजीप्रवर्त्तनरूपप्रकरण इत्यादिकप्रेरणीयछे एटले पूर्वेपणश्रावकें एकृतकर्यांछे लाभनुंकारणछे इत्यादिकप्रेरणाकर्यानुंतो साधुनेव्यवहारछेज यथाश्रीरायप्रश्नीयसूत्रे जुत्तमेयंसुरियाभा पुराणमेयंसुरियाभा किवमेयंसुरियाभा करणिज्जमेयंसुरियाभा आइणमेयसुरियाभा अप्रणुनायमेयंसुरियाभा इत्यादिक विधिवाक्यदेखायछे, तेप्रेरणाजाणवी ॥ ५० ॥

कथं ममत्वाय ममत्वतोवा सावद्यमिच्छस्यपि संघलोके ॥ न हेममय्यप्युदरे हि शस्त्री क्षिप्ता क्षिणोति क्षणतोप्यसून् किं॥५१॥

अर्थ ॥ वलीतेहजकहेछे हेसाधोतुं साधुसाध्वी श्रावकश्राविकारूप चतुर्विधसंघमां अमुकागीतार्थनावखतमां आचैत्यकराव्युं एहवीमहोटाइपामवानेअर्थें तथाआ अमारागछनो चैत्यउपाश्रयादिकछे इत्यादिकममत्वथकी शुंसावद्यकर्मवांछेछे संसारीनीपरे सारम्भकार्यसर्वमायेलेइने करवाशुंवांछेछे अथवासंघमां महत्वपामवानेअर्थें तथाममत्वथकीज सावद्यजे-धनप्राप्ति प्रमुखतेशुंवांछेछे जेमाटे सोनानीछुरीपण पेटमांचापीथकी शुंप्राणहरणनथीकरतीके. एटलेसोनानीछुरीपण पेटमामारीथकी प्राणहरेछे तेमसंघनिमित्तपण अविधिये सावद्यकर्मकीधुंते संयमरूपप्राणनेहरेछे५१॥

रंकः कोपि जनाभिभूतिपदवी त्यक्त्वा प्रसादाद्गुरोर्वेषं प्राप्य यतेः कथंचन कियच्छास्त्रं पदं कोपि च ॥ मौखर्यादिवशीकृतर्जुजनतादानार्चनैर्गर्वभाग्आत्मानं गणयन्नरेंद्रमिव धिग्गंता द्रुतं दुर्गतौ ॥५२॥

अर्थ ॥ हवेआत्माने उद्धतपणुंनिवारवा उपदेशछे कोइकपुरुषपूर्वें ग्रहस्थावसताये रांकहोय अनेलोकोने उपहास्यकरवायोग्य निंदाकरवायोग्य विविधप्रकारनी लोकोनीसेवा करवायोग्यहोय पछेगुरुनापशायथी तेअवस्थात्यजी यतिनोवेषपामीतथाघणाकष्टे काइकशास्त्रनुंजणवुंपामी तथातेमावली कोइकआचार्यउपाध्यायादिकपदवीपामिने वाचालपणा प्रमुखकजाये भोलालोकोनेवशकरी तेहनाकरेला जे दानपूजा सत्कारादिक तेणेकरीने अहंकारधरतो थको पोताना आत्माने राजातुल्यगणे पण एमनजाणेजे हुंते शीगणतिमांछुं एसर्व दानपूजादिक जे थायछे तेतो श्रीजिनेश्वरना मार्गने थायछे तेमाटेहाइतिखेदे तेप्राणी उतावळुं दुर्गतिजे नरकादिक तेमांजाशे माटेगर्वनकरवु ॥ ५२ ॥

प्राप्यापि चारित्रमिदं दुरापं स्वदोषजैर्श्चेद्विषयप्रमादैः ॥ भवांबुधौ धिक् पतितासि भिक्षो हतोऽसि दुःखैस्तदनंतकालं॥५३॥

अर्थ ॥ हवेदुर्लभचारित्रपामिने विषयप्रमादत्यजवा तेप्रकारांतरेकहेछे हेनिक्षु दुर्लभएहवुजे चारित्रतेपामिने जोपोतानावाकथीजपना एहवाजे विषयप्रमाद तेणे करीतुससारसमुद्रमापमीश तेवारे ते अनंताकालसुधी चारगतिसबंधीनादुःखेकरीने पीडाइश तेमाटेथि कारछेतुजने जेतुचारित्रनेविषे उजमालथातोनथी ॥ ५३ ॥

कथमपि समवाप्य बोधिरत्नं युगसमिलादिनिदर्शनादुरापं ॥
कुरु कुरु रिपुवश्यतामगच्छन् किमपि हितं लभसे यतोऽर्थितं शं॥५४॥

अर्थ ॥ हवेदृष्टांतसहित बोधनुंदुर्लभपणुंकहेछे हेसाधुतुयुगसमिलादिक दशदृष्टां तेकरी दुर्लभएहवुं समकेतरूपरत्न तेयणेकष्टेपामिने आगलेवक्ष्यमाण विषयादिक शत्रु तेहनुंआधीनपणुंत्यजतुथको काइकआत्मानुंहितजे संयमादिकतेकर जेथकीवां छितसुखपामे चुल्लग पासग धन्ने जूए रयणेय सुमिण चक्केअ ॥चम्मजुगे परमाणु दस दिठंता मणुयलंजे॥१॥एदशदृष्टांतनानामजाणवा ॥ पुवं तेछुज्जजुग अवर ते तस्स हु ज्जसमिलाउ ॥ जुगछिड्डंमि पवेसो इय संसइउ मणुअलंजो ॥१॥ इत्यावश्यके ॥५४॥

द्विषस्त्विमे ते विषयप्रमादा असंवृता मानसदेहवाचः ॥ असं
यमाः सप्तदशापि हास्या दयश्चबिभ्यच्चर नित्यमेभ्यः॥५५॥

अर्थ ॥ हवेनामथकी शत्रुदेखामीने तेथीदूररहेवानो उपदेशआपेछे हेसाधो वि षयजेशब्दादिकपाच तथाप्रमादजे मद्यादिक पाच अने असंवृतकहेतां मोकलामू क्या एवाजे मनवचनकायानायोग तथा प्राणातिपातादिक पांचअव्रत अनेपांचेइ्रि यनुं अणजीतवु तथाक्रोधादिक चारकषायनो अपरिहार अनेमनवचनकाया एत्र णयोगने दुःप्रवर्त्तिवेप्रवर्त्तावबु एसर्वमलीसत्तर असंयमनास्थानक तथावली हास्य रति अरति नय शोक दुगंछा ए हास्यषट्क एटला ताहाराशत्रुछे तेमाटेएथकी सदाकाल बीहीतोथको विचरजे ॥ ५५ ॥

गुरूनवाप्याप्यपहाय गेह मधीत्य शास्त्राण्यपि तत्ववांचि ॥
निर्वाहचिंतादिनराद्यनावे प्यृषे न किं प्रेत्य हिताय यत्नः॥५६॥

अर्थ ॥ हवेसर्वसामग्री मल्याछतापण आत्महितकांनथीकरतो तेकहेछे हेरुषितु घरछांमीने गुरुजेधर्माचार्य तेहनेपामीने तथातत्वप्ररूपक शास्त्रजेसिद्धांत तेभणीने पण तथानिर्वाहजेआजीविका तेहनीचिंता अनेआदिशब्दथी वस्त्रपात्र वसतिप्रमुख नीचिंता अनेराजनय चौरनय इत्यादिकतेहनो नरजेसमूह तथावलीआदिशब्दथी गृह राज देशांतर जलपथ प्रमुखव्यापार तेहनो अनावछतां पण परलोकना हितने

अर्थ कांइयमनर्थीकरतो एटले सकलसामर्थीने योगेपण जोआत्महितनथी साध तो तोपछे घणोज शोचकरीश एनावार्थछे ॥ ७६ ॥

विराधितैः संयमसर्वयोगैः पतिष्यतस्ते जवडुःखराशौ ॥ शास्त्रा णि शिष्योपधिपुस्तकाद्या जक्ताश्च लोकाः शरणाय नालं॥७७॥

अर्थ ॥ हवेसंयमग्रहीने संयमविराधनानकरवी तेकहेछे हेयतितेविराध्या एहवा जे संयमनासर्वयोग एटले मूलगुणउत्तरगुणादिकविराध्यातेहेतुयेकरीने संसारना डुःखसमूहमांपडतातुजने शास्त्रजेआगमादिक तथाशिष्यजे उपधीपुस्तकप्रमुख तथा वलीजक्तलोकजे श्रावकश्राविकादिक तेकोइशरणआपवाने समर्थनहीथाय पण एक संयम मात्रज अविराध्यो थको शरणदाइथाशे ॥ ७७ ॥

यस्य क्षणोपि सुरधामसुखानि पल्यकोटीर्नृणां द्विन वतीं ह्यधिकां ददाति॥ किं हारयस्यधम संयमजीवि तं तत् हा हा प्रमत्त पुनरस्य कुतस्तवाप्तिः ॥ ७८ ॥

अर्थ ॥ हवेसंयमेंजीवितनुं फलदेखाडी प्रमादनोपरिहार उपदेशेछे हेसाधो संय मजीवितनुं क्षणजेमुहूर्त्तमात्र तेपणपुरुषनेनिश्चयथी साधिक बाणोकोडिपल्योपमल गें देवलोकनासुखआपे यडुक्तं प्रतिक्रमणसूत्रवृत्तौ सामाइयंकुणतो समजावसा वउअघडियडुगं ॥ आउसुरेसु बंधइ इत्तिय मित्ताइ पलियाइं ॥१॥ बाणवईकोडीउ लरकगुणसह्रिसहस्सपणवीसं॥ नवसयपणवीसाए सतिहा अडजाग पलियस्स ॥२॥ इति बाणुकरोड ओगणसाठलाख पचीसहजार नवसेपचीश एटलापल्योपम अनेएक पल्योपमना नवजागकरीयें एहवाआठनवमांश अनेतेउपरवली एकनवमाशनो एक तृतीयांश एटलुंदेवायु बेघडीना एकसामाइकथीबंधाय ते आंके करी लिखियेछैये ९२ ५९ २५ ९ २५, ८१ तो हाहाइतिखेदे हेअधमनीचप्राणी तु संयमेजीवितने के महारेछे हेप्रमादवतफरीनेतुजने एसयमनीप्राप्ति क्याथीथाशे ॥ ७८ ॥

नाम्नापि यस्येति जनेऽसि पूज्यः शुद्धात्ततो नेष्टसुखानि कानि॥ त त्संयमेऽस्मिन् यतसे मुमुक्षो ऽनुजूयमानोरुफलेपि किं न ॥७९॥

अर्थ ॥हवे द्वारसमाप्तिना मंगलनेअर्थे सयमनाशुजफल देखाडी शिक्षाकहेछे हे मोक्षार्थीसाधु जेसंयमना केवलनाममात्रथीज एटलेसंयमी एहवुंनाममात्र धराव्या थीज प्रत्यक्ष प्रकारे करी लोकनेविषे तु पूजनीकथयोछो तोशुद्धनिर्मल संयमथी शाशास्वर्गमोक्षादिक वांछितसुखनहोय एटलेसंयमथी अनीष्टसुख होयज तेमाटेप्र

त्यक्तदृश्यमान जेहनुं महाफलअनुभवायछे एहवाए सयमनेविषे तु काउद्यम नथी करतो सर्वथा उद्यमकरवोज युक्तछे ॥५०॥ इति श्री अध्यात्मकल्पद्रुमे यतिशिक्षानियानोनाम त्रयोदशोधिकार सपूर्ण ॥

अथ सामन्यतो यतीन् विशेपधर्मस्थगृहिणश्चाश्रित्य मिथ्यात्वादिसंवरोपदेश ॥ मिथ्यात्वयोगा विरतिप्रमादा नात्मन्सदा संवृणु सौख्य मिच्छन् ॥ असंवृता यद्भवतापमेते सुसवृता मुक्तिरमां च दद्यु ॥ १ ॥

अर्थ॥ हवे यतिने तथासम्यक्तमूलबारवृत्तधारक श्रावकने साधारण मिथ्यात्वाव्रतिकषाय योग निरोधोपदेश तथा सवरोपदेश नामा चौदमो अधिकारकहेछे तिहांप्रथमकर्मबधनाहेतुजे मिथ्यात्वादिक तेहनुंसवरकहेछे हेआत्मातु सुखनेवांछतो होयतोमिथ्यात्वजे अभिग्रहिकादिकपाच तेमाअभिग्रहिक तेपोतानागास्त्रादिकनां ममत्वथी कदाग्रहकरवो तेकुतीर्थिपाखडादिक बीजुंअनाभिग्रहिक ते सर्वे देवा सर्वे गुरुव सर्वे धर्माश्च आराध्या एहवोअभिप्राय जेसामान्यप्राकृतलोकोनोते त्रीजुआभिनिवेशिक ते वस्तुनुं यथास्थित स्वरूपजाणेथके पण कोइदुष्टाभिनिवेशना वशथी पोतानुं मतथापवानेअर्थे गोष्टीमाहिलादिकनीपेरे असत्यरूपणानुंकरवु चोथोसाशयिक ते देवादिकतत्वनेविषे आसाचूके आसाचू एमसंदेहधरवो पाचमु अनाभोगिकते अनाभोगनावशथकी एकेद्रियादिकनेविषे जीवादिकतत्वनुं अणजाणवु ५ एपाचमिथ्यात्व तथा अशुभमनोयोगादिकत्रण अनेअविरतिते प्राणातिपातादिकपाच तथाप्रमाद जे मद्यादिक पाच एचारेनेसदाकाललगे सवरवुकेमके एचारेने अणसंवखाथका ससारनातापप्रत्ये आपे अने सवखाथका मुक्तिरूपिणी लक्ष्मीनेआपे ॥ १ ॥

मन सवृणु हे विद्वन्नसंवृतमना यत॰ ॥
याति तन्दुलमत्स्यो द्राक् सप्तमीं नरकावनी ॥ २ ॥

अर्थ ॥ हवेप्रथमथी मननुंसवरउपदेशोछे हेपंडितआत्मा तुताराममनेसंवर केमके मनने सवरे रहित एवुजे तडुलमत्स्य तेउतावलुं थोडाकालमाज सातमानरकपृथ्वीये जइअवतरे एमत्स्यसमुद्रमाहेला महोटामत्स्योनी आखनीपापणमाहे सूक्ष्मतनिने गर्भे सातमीनरकथीचवीनेअवतरेछे तेमत्स्य तडुलप्रमाणगर्भजथाय पछेतेमहामत्स्यना मुखनाफाडमा पेसतानिकलता एहवाअनेकन्हाना मत्स्यादिकदेखीने तेतडुलमत्स्यएहवुचितवेजे हाहाइतिखेदेजो माहारी आवडीमोहोटी कायाथइहोततो हुंआ सर्वेजीवनाकोलियाकरुं पणएमाथीएकेनेजावानआपु एवुमहादुर्ध्यान चितवतोथको अतर्मुहूर्त्तप्रमाण आयुभोगवीने एकमुहूर्त्तने अतरेवली सातमीनरकपृथ्वीये जइ अ

वत्तरे एरीतेजीवते वचन तथाकायाये अशक्यकोहोयतो पण मात्रएकमननाज अ संवरथकी तडुलमत्स्यनीपेठें डुर्गतिगामीथाय ॥ २ ॥

प्रसन्नचंडराजर्षे र्मनःप्रसरसंवरौ ॥ नरक
स्य शिवस्यापि हेतुभूतौ क्षणादपि ॥ ३ ॥

अर्थ ॥ वलीतेउपरज दृष्टांतकहेछे हेप्राणि मननुंप्रसरजे डुर्ध्याननीप्रवृत्तिअने संवरजे डुर्ध्यानथीनिवृत्ति तेबेहु एकक्षणमात्रमाजेम प्रसन्नचंडराजऋषिनेनरकना अने मुक्तिनापण कारणथया केमकेतेने मनना डुर्ध्यानथी एकक्षणमात्रमां सातमांनरकनुंद लमेलव्युं अने तेजमनना संवरथी एकक्षणमा केवलज्ञानपण उपार्ज्युं ॥ ३ ॥

हवेसंक्षेपथीतेप्रसन्नचंडराजऋषिनोसंबंधलखीयेंछीये क्षितिप्रतिष्ठितपुरमां प्रसन्नचंडराजा राज्यकरताहता अन्यदातिहां श्रीवीरस्वामी समोसऱ्या प्रसन्नचंडराजा सह परिवारें वांदवाआव्यो देशनासांजली वैराग्यपाम्यो पुत्रनेराज्येस्थापी श्रीवीरपासे पोतेदीक्षालीधी अनुक्रमेगीतार्थथयो अन्यदाविहारकरतो राजगृहनगरेंआव्यो तिहांजिनकल्पीनी तुल्यनानेअर्थें स्मशानमां काउसग्गधरीरह्योछे एटलामांश्रीवीरस्वामीराजगृहनगरेसमोसऱ्याछे नगरलोकसर्व जगवतने वांदवाजायछे एटलामांकोइएक बेवणिक तेक्षितिप्रतिष्ठितनगरथीआव्याछे तेमांथीएकवणिक प्रसन्नचंडराजर्षिने जोइनेबोल्यो केधन्यछेआपणाराजानेजे राज्यलक्ष्मीतृणनीमाफकत्यजीने ध्यानाधिरूढथको उग्रतपकरेछे तेसांजलीबीजोवणिकबोल्यो केअहोधि कारछेएनातपने एनुंमुखजोवायोग्यनथी केमकेएबापडाबालकपुत्रने राज्यआपी मूढथइनिकल्यो अनेपाछलतो सीमाडेबीजाराजायेंआवीनेबालकनुंराज्यहरीलेवानगरघेऱ्युंछेनगरतथादेशनालोकसर्व अनाथथयाथका बहुतलपेछे माटेदेशनागसे घणुंअनर्थथाशे तेथीएतेंशुं धर्मआराधेछे ते सांनलीप्रसन्नचंडराजर्षि ध्यानथीचूकीने चिंतववालागो केअहोमुजबेंवा माहारुं राज्यले एवोकोणछे एमरौद्रध्यानमा व्याप्तथइने मनसाथेंज महासंग्रामकरवामाड्यो तेसमयेश्रेणिकराजा श्रीवीरने वांदवाजातांमार्गेमा तेकाउसग्गधरसाधुदेखी जक्तिपूर्वकवांदी तेहनीउग्रतपस्याने अनुमोदतो समोसरणेपहोतो त्याश्रीवीरनेवांदिनेपुछ्युं जेस्वामीएप्रसन्नचंडराजर्षि ध्यानाधिरूढअवस्थामां मेंवांद्यो तेअवस्थाने समयें काल करेतो शीगतिपामें जगवंतेंकह्यु सातमीनरकपामें तेसांजलिश्रेणिकसंभ्रांतथइर ह्यो हवेप्रसन्नचंडराजर्षियें मनथीसंग्रामकरतां सर्वशत्रुहण्या अनेएककोइमहोटा शत्रुनीसाथेयुद्धकरता आयुधसर्वनष्टथयाछे त्यारेजाण्युंजे माथेंलोहनोटोपपहेर्योछे ते लइनेशत्रूनेमारुं एमचिंतवी माथेहाथनाख्यो एटलेमस्तकतत्कालनुं लोचितमुंमदेखी

ने मनमासंवेगपाम्यो पश्चात्तापकरवालाग्यो हाहाआमेंशुडुर्ध्यानचिंतव्युं मिछामिडुक्क डदेवालागो एवामाफरीश्रेणीके वीरनेपुछ्युं हेस्वामीआसमये राजर्षिकालकरेतोशीग तिपामे जगवतेअनुत्तरविमानकह्युं तेसांजलीविस्मितथइने श्रेणिकेपुछ्युं कहोस्वा मी पहेलेप्रश्नेतोतमे नरककह्यो तेएतपस्वीनेकेमसंजवे अनेएकमुहूर्तनेअांतरे अनु त्तरविमानकह्युं तेपणअसमंजस अथवा जातेकरीनेमे अन्यथासांजल्युं तेवारेज गवते यथास्थित सर्ववृत्तातेकरी श्रेणिकनोसंदेह टाल्यो एटलामां देवडुंडुजिनो नादसांजलीने श्रेणीके पुछ्युं हेस्वामि आमहोत्सवक्याथायछे जगवतेकह्युजे प्रस न्नचंद्रराजर्षिने केवलज्ञानउपनुं त्यांदेवता महोत्सवकरेछे एमएप्रसन्नचंद्रराजर्षिने एकमुहूर्त्तनेअंतरे मननोव्यापार नरकहेते अनेमुक्तिहेतेपणथयो ॥

मनोऽप्रवृत्तिमात्रेण ध्यानं नैकेंद्रियादिषु ॥ धर्म्यं
शुक्लमनःस्थैर्यं जाजस्तु ध्यायिनः स्तुमः ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ हवेपवनसाधनादिकथी मननोरोधनिरर्थकछे तेकहेछे केवलमननीअप्र वृत्तिजे मनोव्यापाररहितपणुं तेणेकरीने एकेंद्रियादिकजे एकेंद्रिय बेंद्रिय तेंद्रिय चौ रेंद्रिय असंज्ञिपंचेंद्रिय तेहनेविषेध्यानजे मनोरोध लक्षण तेछुंनथी एटलेपवनसा धनादिक मनोरोधकरवाथी जोध्यानथायतो एकेंद्रियादिकनेविषेथाय केमकेतेहनेस्व जावथीज मननेअजावेकरी मनोव्यापारनीप्रवृत्तिनथी तेथीपवनसाधनादिकतेकोइस माधिलक्षण ध्याननोउपयोगीनथी श्वासरोधादिक क्लिष्टकर्मेथी साहमुं मनआर्तिये व्याकुलथाय पणजेधर्मध्यान अनेशुक्लध्यान तेणेकरीने मननीस्थिरतानेजजे एवाजे ध्याननाकरनार तेनेज स्तवियेछैये एटलेध्यानते तेनुंजप्रमाणछे इतिजाव ॥ ४ ॥

सार्थं निरर्थकं वा यन्मनः सुध्यानयंत्रितं ॥ विरतं
डुर्विकल्पेभ्यः पारगास्तान् स्तुवे यतीन् ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ हवेध्यानेकरी जेहनुंमनसार्थकके०सफलछे अथवानिरर्थकके०निष्फलछे तोपण शुजध्यानेकरियंत्रित एटले साकधूंथकुं डुर्विकल्पजे अशुजकार्यनामनोरथ ते हथीविरम्यूंछेतोतेसदाध्यानजछे एहवाजे संसारनापारगामी साधुतेहने हुंस्तवुंछुं ॥५

वचोऽप्रवृत्तिमात्रेण मौनं के के न बिभ्रते ॥ निर
वद्यं वचो येषां वचोगुप्तास्तु तास्तुवे ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ हवेवचनयोगनुं संवरउपदेशेछे केवलवचननीअप्रवृत्ति एटलेमात्र वच ननेज अणउचरवेकरीने कोणकोणएकेंद्रियादिक तथा पंचेंद्रियमांपण रोगविशे

षथी तथामनुष्यमांपण मुंगावोवडाप्रमुखप्राणी मौनपणानेनथीधरतासुं एटलेतेसर्वेमौ नपणोजधरेछे तोतेथी तेहने वचनगुप्तिवतनकहियें पण जेहनुंवचन निरवद्यके० पाप रहितहोय एटलेवचनबोल्यानी शक्तिछतांपण सर्वथासावद्यवचननबोले तेनेवचनगुप्ति वतकहियें तेवानेडुंस्तवुंछुं पणमात्रमौनपणोज धरवाथी वचनगुप्तिवतनकहियें ॥६॥

निरवद्य वचो ब्रूहि सावद्यवचनैर्यत· ॥ प्रया
ता नरकं घोरं वसुराजादयोद्रुतं ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ हवेदृष्टांतेकरीने सावद्यवचननुं अनिष्टफलदेखाडेछे हेप्राणितु पापरहि तवचनबोल केमके सावद्यवचनेकरीने वसुराजा प्रमुख ते घोररौद्र एहवोजे नरक तेने पाम्यों तेवसुराजानोसंबंध श्रीहेमाचार्यकृत रामचरित्रमांथी विस्तारेजोइलेवो ए मजाणी असत्यवचन सावद्यवचननो परिहारकरवो ॥ ७ ॥

इहामुत्र च वैराय दुर्वाचो नरकाय च ॥ अग्निद
ग्धा प्ररोहंति दुर्वाग्दग्धा पुनर्नहि ॥ ८ ॥

अर्थ ॥ वलीतेहिजकहेछे जेदुर्वचनो तेआभवमा अनेपरभवमांपण वैरकारीथा य अनेवलीनरकदाइपणथाय जेमाटेअग्नियेकरीदाधाजेवृक्षादिक तेफरीनवपल्लवथा य पण दुर्वचननादाधाजेमनुष्य तेनवपल्लवनथाय एटलेस्नेहांकुर तेनेप्रगटेनही केम के दुरवचनथी उपनोजे वैरभाव तेजन्मांतरेपणनमटे इतिभाव ॥ ८ ॥

अतएव जिना दीक्षा कालादाकेवलोभवं ॥ अव
द्यादिभिया ब्रूयु ज्ञानत्रयभृतोपि न ॥ ९ ॥

अर्थ॥ एटलामाटे दीक्षालीधापछे केवलज्ञानउपजेंतिहांलगे जिनजेतीर्थंकरदेव तेमति श्रुत अवधि एत्रणज्ञानना धारकछतांपण अवद्यजेपाप तथाआदिशब्दथी वचनते ध्यानविघातादिकछे एमजाणी तेहनाभयथी बोलेनही यद्यपि भगवतने छ द्मस्थपणे मनपर्यवज्ञाननी सत्ताहोय तथा पिइहात्रणज्ञानना धारककह्या तेजाणि येंछेयेंजे मनपर्यवज्ञाननुंतो मात्र मननो पर्यायजाणवानुंज साम्यर्थछे तेमाटेआ चार्ये इहाकह्युनही अनेउपाध्यायश्री रत्नचंद्रगणिकृत एजग्रंथनी टीकामांपण एम जलख्युंछे वलीविशेषबुद्धिवंतेविचारवु ॥ ९ ॥

कृपया संवृणु स्वांग कूर्म ज्ञाननिदर्शनात् ॥ सं
वृतासंवृतांगा यत् सुखदुःखान्यवाप्नुयु ॥ १० ॥

अर्थ ॥ हवेकायसंवरकहेछे हेप्राणि तुकरुणायेंकरीने कांचवानादृष्टांतनानि

दर्शनयकी पोतानीकायानेसंवर केमके कायानासंवरवत अने असंवरवतते अनुक्रमे सुखअनेडु खपामे एटलेकायाना संवरवततेसुखपामे अनेअसंवरवतते डु खपामे जे मवेकाचवाहता तेमांथीएकेपोताना अगसंवरयातो पापीशीयालथीमृत्युनपाम्यो अ ने वीजेपोतानाअगसंवरयानही तो पापीशीयालथी अकालमृत्युपाम्यो एदृष्टांत सवि स्तरपणे श्रीज्ञातासूत्रना चोथाअध्येनथी जाणवु ॥ १० ॥

कायस्तंनान्न के के स्यु स्तरुस्तंनादयो यत ॥ शि
वहेतु क्रिया येषां कायस्तांस्तु स्तुवे यतीन् ॥ ११ ॥

अर्थ ॥ केवलकायने स्थिरतामात्रथीतोतरुजे वृक्ष तथा अचेतनजे स्तनादिक ते कोणकोणसवरवतनथी अर्थातजेकोइ कायव्यापारना असमर्थछे तेसर्वेकायसंवरव तजछे पणजेहनीक्रियाजे कायव्यापार तेमोक्षनेअर्थेहोय तेहने कायगुप्तिवत कहियें छैयें जेकायव्यापारने छतेसामर्थ्य पण अशुनकायव्यापारने रुंधे अनेशुनक्रियानो खप करे तेहने कायगुप्तिवतकहिये इतिनाव ॥ ११ ॥

श्रुतिसंयममात्रेण शब्दान्कान् के त्यजति न ॥
इष्टानिष्टेषु चैतेषु रागद्वेषौ त्यजन्मुनिः ॥ १२ ॥

अर्थ॥हवेपंचेंडियनुं संवरकहेछे तेमाप्रथम श्रोत्रेंडियआश्री कहेछे केवलकानना व्यापारना निरोधयकीज कोणकोणएकेंडिय बेंडिय तेंडिय चोरेंडिय तथापचेंडियति र्यंच अनेमनुष्यमध्येपण बेहेराप्रमुखजे श्रोत्रेंडियेविकल होय तेशब्दनाविषयने नथी त्यजतासु अर्थातत्यजेजछे पणजेवारेइष्टजे मृदंगादिवाजित्र तथास्त्रीकोयलप्रमुखना शब्द अनेअनिष्टजे खर तथाघूक प्रमुखनाशब्द नेविषे रागअनेद्वेषत्यजे तेवारेमुनिथाय

चक्षु संवरमात्रात्के रूपालोकास्त्यजति न ॥
इष्टानिष्टेषु चैतेषु रागद्वेषौ त्यजन्मुनि ॥ १३ ॥

अर्थ ॥ केवलनेत्रव्यापारनेज तजवायकी कोणकोण एकेंडिय बेंडिय तेंडिय त था अंध मनुष्यादिक तेदृष्टिविषयने नथीत्यजतासुं अर्थातत्यजेजछे पणइष्टजे स्त्रीनां कटाक्ष नाटकप्रमुख तथाअनिष्टजे अमेध्य बीनत्सप्रमुख एवाजेदृष्टिनाविषय तेह नेविषे राग अने द्वेषने त्यजे तेवारे ते मुनिथाय ॥ १३ ॥

घ्राणसंयममात्रेण गंधान् कान् के त्यजंति न ॥
इष्टानिष्टेषु चैतेषु रागद्वेषौ त्यजन्मुनिः ॥ १४ ॥

अर्थ ॥ केवलनाकना व्यापाररहितपणाथी कोणकोण शुनाशुनगंधने एकेंडिय

बेंद्रियादिक तथाबीजापण घ्राणेंद्रिये विकलथयेला प्राणि नथीत्यजतां अर्थात्त्य जेजछे पणइष्टजे फुलप्रमुख अनेअनिष्टजे अमेध्यादिक एवाजेगंध तेहनेविषे राग अने द्वेषत्यजे तेवारें तेमुनिथाय ॥ १४ ॥

जिव्हासंयममात्रेण रसान्कान्के त्यजंति न ॥
मनसा त्यज तानिष्टान् यदीछसि तपःफलं ॥ १५ ॥

अर्थ ॥ केवलजिव्हाना संवरमात्रथीज कोणकोणशुभाशुभ रसने पृथ्वीकायादिक एकेंद्रिय तथाबीजापण जावरसनेंद्रियथी विकलथयेलाप्राणी ते नथीत्यजतासुं अर्थात्त्यजेजछे पणहेआत्माजो तु तपनुंफलवांछेछे तो तेजेइष्टवांछित मधुरादिकरस तेने मनसाकहेतां मनोयोगपूर्वक समता परिणामेकरीनेत्यज ॥ १५ ॥

त्वच संयममात्रेण स्पर्शान् कान्के त्यजंति न ॥
इष्टानिष्टेषु चैतेषु रागद्वेषौ त्यजन्मुनिः ॥ १६ ॥

अर्थ ॥ केवलत्वचाजे स्पर्शनेंद्रिय तेहनो संयमजे स्पर्शज्ञानना नलेवानी शून्यता तेणेकरीने कोणकोणप्राणी शुभाशुभस्पर्शने नथीत्यजता अर्थात्त्यजेजछे यद्यपि एकेंद्रियादिक सर्वजीवने स्पर्शनुं विषयछोयछे तथापिकुष्टादिक रोगनावशथकी त्वचानीबहिरिंनाधणीने स्पर्शनुंज्ञाननजहोय एनावछे पणइष्टजेस्त्रीस्पर्शादिक तथा अनिष्टजे ताप शीत मांस मसा प्रमुखनेविषे राग द्वेषनेत्यजे तेवारेजमुनिथाय॥१६

वस्तिसंयममात्रेण ब्रह्म के के न बिभ्रते ॥
मनःसंयमतो धेहि धीर चेत्तत्फलार्थ्यसि॥ १७ ॥

अर्थ ॥ हवेवलीस्पर्शनेंद्रियमा विशेषकहेछे वस्तिके० मूत्राशय एटलेगुह्येंद्रिय ते नासंवरमात्रथीज ब्रह्मचर्यधारणनथीकरता सुं एटले नारकी समूर्छिमपंचेंद्रिय प्रमुख तथा पुरुषरूपनपुंसक अने स्त्रीरूपनपुंसक इत्यादिक कोणकोणप्राणी मैथुननोअश क्तिथी शीलधारणनथीकरता एटलेतेसर्व ब्रह्मचर्यव्रतजछे पणपरिणामविना असक्ति थीपालवुं तेनिष्फलछे माटेहेधीरआत्मा जो तुब्रह्मव्रतनाफलनो अर्थीहोयतो मनने संवरेकरीने छतीशक्ते ब्रह्मव्रतधारणकर ॥ १७ ॥

विषयेंद्रियसंयोगा भावात्के के न संयताः ॥ राग
द्वेषमनोयोगाभावाद्येतु स्तवीमि तान् ॥ १८ ॥

अर्थ ॥ हवेसामान्यथी सर्वइंद्रियादिक तेहनोसंयोगजे एकत्रमलवुंते हनाअभा वथी कोणकोणसंवरवतनहोय एटलेविषयनोयोग मल्याविनासर्वेसंवरवतजछे पण

जेमहापुरुपछे ते तो विषयादिकनो योगछतांपण रागद्वेष अने मनयोगना अनावथी एटलेजेमनथकी रागद्वेपरहितपणे संवरवतछे तेओनेहुंस्तवुंछुं ॥ १८ ॥

कपायान् संवृणु प्राज्ञ नरक यदसंचरात्॥
महातपस्विनोप्यापु करटोत्करटादय.॥१९॥

अर्थ ॥ एमइंद्रियआश्रित संवरकहीने हवेकपायआश्रितकहेछे प्राज्ञके० हेवि वेकीप्राणी कपायजे क्रोधादिक तेनुतुसवरकर केमकेएकपायना असंवरथकी करम अने उक्करम प्रमुख महातपस्वी महानुजाव तेपणनरकनेपाम्या एकरड अनेउक्करड वे ब्राह्मणमासीयाइ जाइहता ते वैराग्यथकी दीक्षालइ उग्रतपकरी अन्यदाकुणालान गरिये कोटनाथरनालामा चोमासुंरह्या तिहानगरना जलप्रवाहनेपूरे साधुरखेतणा इजाय एमजाणीदेवताये कुणालानगरीउपर वरसादर्यनाव्यो कुणालाशिवायबीजे सर्वत्रवर्पादवरस्यु केटलेक दहाडे तेवातजाणी नगरलोके ताडनातर्जनाकरी तेसाधु नेकाढ्या तेवारे क्रोधशेखर करम्बोल्यो वर्पमेघकुणलाया तेवारे उकरमबोल्यो दि नानि दश पंच च वलीकरमबोल्यो मुशलप्रमाणधारानि वलीउकरमबोल्यो यथारात्रौ तथा दिवा तेवचनथी अहोरात्रमुशलधाराये कुणालानगरीउपर मेघवूठो तेहथीकु णालानगरी लोकसहिततणाइगइ महाअनर्थथयो तेवारपछें त्रीजेवर्षे साकेतपूरे ते पापनेअणआलोवेढते करमअनेउक्करडवेमरीने सातमीनरके कालनामा नरकावास मां बत्रीससागरोपमनेआयुपे नारकीपणे अवतस्या एमजाणी कपायनोसवरकरवो.

यस्यास्ति किंचिन्न तपोयमादि ब्रूयात् स य त्तत्तुदतां परान् वा॥ य
स्यास्तिकष्टाप्तमिदं तु किं न तद्भ्रंशजी· संवृणुते स योगान् ॥२०॥

अर्थ॥हवेवलीमनोयोगादिकनो संवरकहेछे जेप्राणिनेकाइ तपसयमादिकनथी अ विरतिछे तेप्राणिजेमतेम असबंधबोले तथाअन्यजीवनेपीडाकरे एटले अव्रती जेजेअ रुत्यकरे तेतेघटेछे पणविरतिवतप्राणितो एतपसयमादिक घणुजकष्टेप्राप्तिथायछे ए मजाणी तद्भ्रंशजी के० रखेमहारोतपसयमनो विनाशथाय एमबीहीतोथको मनोयो गादिकने केमनसंवरे एटलेविरतिवतने सर्वथासंवरकरवुज एजावार्थछे ॥ २० ॥

भवेत्समग्रेष्वपि संवरेपु पर निदान शिवसपदा य ॥ त्यजन्
कपायादिजडुर्विकल्पान् कुर्यान्मन संवरमिद्धधीस्त ॥ २१ ॥

अर्थ ॥ हवेवलीमननासंवरनु आधिक्यतापणुकहेछे जेमननो संवरछे ते बीजा जेटला संवरछे तेसर्वमा मोक्षसंपदानुं परमकारणछे ते माटे विशेपबुद्धिवत

पुरुषतो कषायादिकथीउपनाजे कुविकल्पते त्यजतोथको मननोसंवरकरे एटले मु क्तिनुं मुख्यकारणजाणीने विवेकीपुरुषे प्रथममननुं संवरकरवुं इतिन्नावः ॥ २१ ॥

तदेवमात्मा कृतसंवरः स्यात् निःसंगतान्नाक् सततं सुखेन॥
निःसंगन्नावादथ संवरस्तद्द्वयं शिवार्थी युगपन्नजेत ॥२२॥

अर्थ॥ह्वे ए अधिकारनो उपसंहारकहेछे तेमाटे एमपूर्वोप्रकारें कृतसंवरके० संव रवंतजे आत्मा तेसदाकाले सुखेकरीने निःसंगपणानेन्नजे अथवा वली निःसंगपणाथी संवरथाय एटले एबेहुनो अन्योन्यकार्यकारण न्नावजाणवो केमके कोइकनेनिःसंग पणाथी संवरआवे अनेकोइनेसंवरथी निःसंगतापणुंआवे माटेमोक्षार्थीपुरुष तेसंव र अनेनिःसंगता एबेनेसमकालेसेवे ॥ २२ ॥ इति श्रीअध्यात्मकल्पद्रुमे मिथ्यात्वादि संवरोपदेशाख्य श्चतुर्दशोअधिकार समाप्त ॥ १४ ॥

अथ शुन्नवृत्तिशिक्षोपदेशः॥आवश्यकेष्वातनु यत्नमाप्तो दितेषु शुद्धेषु त मोपहेषु ॥ न हंत्यन्नुक्तं हि न चाप्यशुद्धं वैद्योक्तमप्यौषधमामयापदं॥१॥

अर्थ ॥ह्वेशुन्नप्रवृत्तिशिक्षा एह्वेनामे पन्नरमोअधिकारकहेछे एअधिकारमा य तियोग्यशिक्षा यतीनेजाणवी अनेश्रावकयोग्यशिक्षा श्रावकनेजाणवी इहांप्रथम आ वश्यक करवायोग्यजाणीने आवश्यकआश्रयी उपदेशकहेछे हेसाधु तथा हेश्रावक तु पापनानिवारक अनेसर्वज्ञनाषित एवांजेशुद्धनिर्मल आवश्यक सामायिकादिक तथाअवश्यकरणीय पोसह उपवास आलोयणादिक तेह्नेविषेउद्यमकर तेनाउपर दृष्टांतकहेछे जेम वैद्यनुकह्युजेऔषध तेनखाधुंथकु तथाअशुद्धजेकाचुं हरितालप्रमुख तेखाधुंथकुंपण रोगनिवारक नथाय तेम सर्वज्ञनाषित आवश्यकजाणीनेपण तेह नीक्रियानकरीये अथवाअशुद्धक्रियाकरिये तोतेह्थीकर्मक्षयनथाय तेमाटेदोषरहित शुद्धक्रियायेकरी आवश्यकादिकनो उद्यमकरवो एउपनयछे इहांप्रसंगथी सामायिकना दोषलखियेछेये १ वस्त्रेतथान्नुजायेकरीने पलांठीबाधे २ आसनआघुपाछुफेरवे ३ चपलपणेसर्वदिशायेजोवे ४ गृहसंबंधीसावद्यकर्मकरे ५ नितीस्थंनादिकेओठंगीबे से ६ अंगोपांगमोडे ७ आलसमोडे तथाधर्मकार्येआलसकरे ८ हाथपगेकरकडा व जाडे ९ शरीरनोमेलउतारे १० खाजिखणे ११ विसामणकरावे १२ निद्राकरे ए बारदोषकायथकीजाणवा तथा १ कुवचन कोइनुंमर्मनिंदादिकबोले २ सहसात्कारे अविचार्युंबोले ३ आर्तिमयविसंस्थलवचनबोले ४ आपछंदेबोले ५ सूत्रनणतो अ

थवानवकारगुणतो वचनसंक्षेपकरे ६ कलहविवादकरे ७ राजकथादिकविकथाकरे ८ हास्यनावचनकहे ए सपदारहितसूत्रनणे १० जावाआववानाआदेश आपे एद शदोपवचनथीजाणवा वली १ निर्विवेकीमनेकरे २ यशकीर्तिनीवांबायेकरे ३ धनला ननेअर्थेकरे ४ गर्वथीकरे ५ नयथीकरे ६ धनपुत्रादिनेअर्थेनियाणुंकरे ७ सामायि कनाफलनो संदेहकरे ८ रीसधरीसामायिककरे ए विनयरहितसामायिककरे १० नक्तिरहितसामायिककरे एदशदोपमनथीउपजे एम मन वचन अने कायाना मलीने बत्रीशदोषसामायिकनात्यजवा तथावांदणाना ३२ दोष अने काउसग्गना १ए दो ष ते नाष्यादिक ग्रंथथी जाणीने त्यजवा ॥ १ ॥

तपांसि तन्याद्विविधानि नित्यं मुखे कटून्यायतिसुंदराणि ॥ वि
घ्नंति तान्येव कुकर्मराशिं रसायनानीव डुरामयान् यत् ॥२॥

अर्थ ॥ हवेतपप्रवृत्तिआश्रयीउपदेशेठे मुखके० प्रथमकरतीवेलायेतो उखतृषादि कसहेवांपडे तेमाटे कडवाछे पण आयतिके० उत्तरकाले सुखनाकरनार एहवाजेवि विधप्रकारना छठ अठम दशमादिक तप तेनित्येकरवां केमकेतेतपज कर्मनासमूहने निवारेछे तेउपरदृष्टांतकहेछे जेमरसायन पारो हरिताल सुवर्णादिक औषधिओ तेहिज ज्वरअनेक्षयादिक डुष्टरोगोनेनिवारे तेम इहांपण उपनयजेवु ॥ २ ॥

विशुद्धशीलांगसहस्रधारी नवानिशं निर्मितयोगसिद्धिः ॥
सहोपसर्गास्तनुनिर्ममः सन् नजस्व गुप्तीः समितीश्च सम्यक् ॥३॥

अर्थ ॥ हवेतपकरनार प्रायेशीलवतजोइये तेमाटेशीलआश्रयीउपदेशेछे हेसाधु तुविशुद्धनिर्मलएवाजे अढारसहस्र शीलांगरथतेने धरतोथको नित्ये निर्मित योग सिद्धिके० निपजावीछे अष्टांगयोगनीसिद्धिजेणे अथवायोगजे मनोयोगादिक तेह ना ॥ प्रणिधानना निवारवारूप समाधिनी सिद्धिकर एटलेशीलांगधरतोथको मनव चनकायाना योगवशकर एनावार्थछे वलीछेहनेविषे ममत्वरहितथको देवादिकनाक रेला उपसर्ग तेनेसहनकर अनेपांचसमिति तथात्रणगुप्ती तेहनेनज ॥ ३ ॥

स्वाध्याययोगेषु दधस्व यत्नं मध्यस्थवृत्त्यानुसरागमार्थान् ॥
अगारवो नैक्षमटात्रिपादी हेतौ विशुद्धे वशितेंद्रियौघः ॥४॥

अर्थ ॥ हवेशीलवतने मनस्थिरकरवानिमित्त जेसिद्धांतादिकनुं स्वाध्याय नणवुं

नणाववुं तेहतुं योगजे मनवचनकायायेकरी नित्यअन्यास करवानेविषे उद्यमकरे वलीआगमनाजे अर्थ तेमध्यस्थवृत्तिये कदाग्रहरहितपणे अनुसरे एटले कदाग्रहें करीने जिनवचननाअर्थनी परुपणाजूठीनकरे वली अगारवके० रुद्धिगारव रसगारव सातागारव तेणेरहितथकुं अनेविशुद्धिनिर्मलहेतुजे मोक्षसाधन तेहनेविषे विषादरहितथकुं एटलेशुद्धक्रियाकरतां अविपिन्नचित्तथकुं अनेवलीवशकीधोछे इंद्रियनोसमूहजेणे एहवुथकुं नैक्षेजेउंचनीचकुल शुद्धमानआहारतेहनी गवेषणाकरे ॥४

ददस्व धर्मार्थितयैव धर्म्यान् सदोपदेशान् स्वपरादिसाम्यात् ॥
जगद्धितैषी नवभिश्च कल्पै ग्रामे कुले वा विहराप्रमत्तः ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ हवेसझायनुंफलते शुनउपदेशछे तेमाटेशुनोपदेशआश्रीकहेछे हेसाधो तुं पोताना अनेपारकानेविषे समानपणे उपदेशकर एटले आमाहारोनक्तछे दाताछे धनाढयछे एहवानेधर्मकहुं अथवा आ मिथ्यात्वी रुपणदरिद्रीछे एहवानेउपदेशको णकहे इत्यादिककल्पना त्यजी केवलधर्मार्थीपणेकरीनेज पण आहारवस्त्रादिकने अर्थेनही एप्रकारे नित्यधर्मसंबंधीयाजे उपदेशते कहेतोरहे अनेवली सर्वसंसारीजीवने हितवाछतोथको नवकल्पेकरीने ग्रामनगरादिकनेविषे शुन उपदेशकरतोरहे तथाविहारकरवानी अशक्ते कुलके० ग्रामनगरादिकनो एकप्रदेशतेनेविषे प्रमादरहितथकुं विहारकर इहांकल्पते मागसिरप्रमुख आठमास जेऋतुबद्धकाल तेहनाआठकल्प अनेश्रावणादिक चारमास चोमासना तेनोएककल्प एरीते सर्वमलीने नवकल्प जाणवा

कृताकृतं स्वस्य तपोजपादि शक्तीरशक्ती सुकृतेतरे च॥ सदा
समीक्षस्व हृदाऽथ साध्ये यतस्व हेयं त्यज चाव्ययार्थी ॥६॥

अर्थ ॥ हवेशुनोपदेशनाकहेनारने कृत्याकृत्यनोविचारजोइये तेमाटेतेआश्रयीकहे छे हेसाधु तथाहेश्रावक तुपोतानुं तप जप प्रमुखजेकर्म ते कृत्याकृत्यकहेतां एटलुंमेंकीधुं एटलुंमेनथीकीधुं एहवुंविवेचन तथाशक्ति अनेअशक्ति तथापोतानुंसुकृत अनेदुःकृत एटलावाना पोतानामनसाथेंसदायविचारीने तेवारपछे मोक्षार्थीथकुं साध्यजे साधवायोग्य तपोनुष्टानादिक तेहनेविषेउद्यमकर अनेवली हेयकहेतां त्यजवायोग्य जेविषयकषायादिक तेहनेत्यज सत्पुरुषनें चित्तरूपिणीनूमिनेविषे गुरुपदेश तेबीज वृद्धिरूपहोय पछेतेमा विचाररूप जलनासिंचवाथी सुकृतरूपवृक्ष विस्तारपामेतेमाटे मोक्षार्थियें हेयउपादेयज्ञेयना विचारपूर्वक धर्मोद्यमकरवो ॥ ६ ॥

परस्य पीमापरिवर्जनात्ते त्रिधा त्रियोग्यप्यमला सदाऽस्तु ॥
साम्यैकलीनं गतडुर्विकल्पं मनोवचश्चाप्यनघप्रवृत्ति ॥ ७ ॥

अर्थ॥ हवेजेविचारवतहोयते त्रियोगीनिर्मलजोइये तेमाटेतेआश्रयीकहेछे हेआत्मात्रियोगीजे मनवचनकायाना त्रणेयोगतेणेकरी सदाऽनिर्मलथा एटलेसर्वेजीवउपरे हितबुद्धिराखीने मनवचनकायानायोग निर्मलकर एनावार्थछे केमके परनेपीडा वर्जवाथकी काययोगतो निर्मलथयोज अनेतेकाययोगनी निर्मलताथी मनपणसमतायेलीन अनेडुर्विकल्परहितथाय तथावचनपण पापव्यवहाररहितथाय इहांआचार्ये काययोग सुगमछे माटे जुदोकरीने नकह्यो ॥ ७ ॥

मैत्री प्रमोदं करुणा च सम्यक् मध्यस्थतांचानय साम्यमात्मन् ॥
सद्भावनास्वात्मलय प्रयत्नात् कृताविराम रमयस्व चेत ॥ ८॥

अर्थ ॥ हवेएत्रियोगीनेनिर्मलताते मैत्र्यादिनावनाथीथाय तेमाटेतेकहेछे हेआत्मातु मैत्रीतथाप्रमोद तथाकारुण्य अनेमध्यस्थता ए चारनावना तेआत्मानेविषे आण अनेवलीतेनावनायेकरी सम्यक्प्रकारे समताआण वली प्रयत्नात्के० पंमितवीर्यफोरववाथी चित्तने आत्मलयके० ध्यानलीन अनेध्यानथी अविछिन्न एहवु थयुं थकु शुननावनाजे अनित्यादिक तेहनेविषेरमाड ॥ ८ ॥

कुर्यान्न कुत्रापि ममत्वनावं न च प्रनो रत्यरती कषायान् ॥ इहापि सौख्यं लनसेप्यनीहो ह्यनुत्तरामर्त्यसुखाननमात्मन् ॥ ९ ॥

अर्थ ॥ हवेएनावनाओते ममत्वनात्यागथीहोय तेमाटेतेआश्रयीकहेछे हेसमर्थ आत्मा जोतुकोइवस्तुनेविषे ममत्वनकरे अनेवली रति अरति अनेकषाय नकरे एहवोतु वाछनारहितथको रहेतो आनवेज अनुत्तरविमानवासी देवतानाजेवु सुखपामे केमके अनुत्तरवासी देवतामां स्वामिसेवकनो व्यवहारनथी तेमाटे ससारिक सुख जोता अनुत्तरविमाननो सुखते सर्वोत्कृष्टजाणवु ॥ ९ ॥

इति यतिवरशिक्षां योऽवधार्य व्रतस्थश्चरणकरणयोगानेकचित्तः श्रयेत ॥ सपदि नवमहाब्धिक्लेशराशि स तीर्त्वा विलसति शिवसौख्यानंत्यसायुज्यमाप्य ॥१०॥

अर्थ ॥ हवेअधिकारनो उपसंहारकहेछे एप्रकारे यतिवरजे नलासाधु उपलक्

णथी नलाश्रावकपणलेवा तेसंबंधीनीजेशिक्षा तेनेचित्तमांधरीने एकाग्रचित्तथकुं चरणकरणयोगजे चरणसित्तरी अनेकरणसित्तरीनागुण तेनेजेसेवे तेसाधु तथा ते श्रावक शीघ्रके० उतावळुं क्लेशदुःखना समूहरूपजे संसारमहासमुद्र तेथकीतरीने मोक्षसुखनुं अनंतपणुं तेहनुं सायुज्यके० जेसहचारीपणुं तेपामीने वलीमोक्षनाअविनाशीसुखनीपरे पोतेपणल्यां अविनाशीनावपामी विलसतिके० सर्वदासुखनेअनुनवे ॥१०॥ इति श्रीअध्यात्मकल्पद्रुमेऽशुनप्रवृत्तिशिक्षोपदेशाख्य· पंचदशोऽधिकारसमाप्त·

अथ ग्रंथोपसंहाराय साम्यसर्वस्वं ॥ एवं सदान्या
सवशेन सात्म्यं नयस्व साम्यं परमार्थवेदिन् ॥ यतः
करस्थाः शिवसंपदस्ते नवंति सद्यो नवनीतिनेतुः ॥ १॥

अर्थ ॥ हवेग्रंथनाउपसंहारनेअर्थे साम्यसर्वस्वनामें सोलमोअधिकारकहेछे हेपरमार्थनाजाण विवेकीपुरुष तुंएमपूर्वोक्तप्रकारे अन्यासवशेकरीने साम्यजेसमता तेहने सात्म्यकहेतां आत्मासाथे ऐक्यपमाड जेसमताथी नवनीतजे संसारसंबंधीनय तेहनेनेदवावांछतो एवोजेतु तेतुजने मोक्षनी संपदाओ ते तत्कालमात्र करस्था कहेतां हस्तप्राप्तथाय ॥ १ ॥

त्वमेव दुःखं नरकस्त्वमेव त्वमेव शर्मापि शिवं त्वमेव ॥ त्व
मेव कर्माणि मनस्त्वमेव जहीह्यवज्ञा मवधेहि चात्मन् ॥२॥

अर्थ ॥ हवेआत्माने अविद्यानोपरिहार अनेसमतानुंधरवु कहेछे हेआत्मातुंदुःखनेकारणे प्रवर्त्यो माटे दुःखतेतुजछे एमआगलपण सगलीवस्तुनुं आत्माजकारणरूपजाणवु वलीनरकनुंकारणतेपणतुजछे वलीसुखपणतुंछे अनेमुक्तिपणतुंछे वलीकर्मपणतुंछे अने मनोव्यापारना प्रकाशकपणाथी मनपणतुंछे तेकारणमाटे अवज्ञाजेधर्मकार्यनेविषे अनादरकरवो एटलेहमणा धर्मनथीथातो तोपछेकरीश इत्यादिक कल्पना त्यजीने अवधेहिकहेतां धर्मकार्यनेविषे सावधानरहे ॥ २ ॥

निःसंगतामेहि सदा तदात्मन्नर्थेष्वशेष्वपि साम्यनावात् ॥
अवेहि विद्वन्ममतैव मूलं शुचां सुखानां समतैव चेति ॥ ३॥

अर्थ ॥ हवेसर्वत्रपणे निःसंगपणानुं प्राध्यान्यपणुंकहेछे हेआत्मा तेकारणमाटे सकलपदार्थनेविषे समतानावथी सदाय निःसंगपणाने पाम अनेवली हेनिपुणप्राणि

सकलशोकनुंमूल ते ममताजछे अनेसकलसुखनुंमूलते समताजछे एहवु जाणीने म मताने त्यज अने समताने आदर इतिनाव ॥ ३ ॥

स्त्रीषु धूलिषु निजे च परे वा सपदि प्रसरदापदि चात्मन् ॥ त
त्त्वमेहि समतां ममतामुक् येन शाश्वतसुखाद्वयमेषि ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ जेनि संगताले ममत्वसुकवाथीजथायछे तेमाटेममतात्यजवानुं उपदेशे छे हेआत्मा ते पूर्वोक्तकारणथी तुममतारहितथको स्त्रीनेविषे अनेधूलिनेविषे वली स्वजननेविषे अनेपरशत्रूनेविषे तथा वलि सपत्तिनेविषे अने विस्तारपामतीआपदाने विषे समतानेपामवेकरीने सरखोपरिणामराखजे एटलेमोक्षसुखनोनोक्ताथाइश ॥४

तमेव सेवस्व गुरुं प्रयत्ना दधीष्व शास्त्राण्यपि तानि विद्वन् ॥ न दे
वतत्वं परिनावयात्मन् येभ्यो नवेत्साम्यसुधोपनोग. ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ हवेसमतातेज सकलपदार्थनो सारकरीनेउपदेशेछे हेविद्वन् हेआत्मन् तुउद्यमकरीने तेहिजगुरुनेसेव अनेगुरुसेवनाकरीनेशास्त्रपण तेहिजनण तथाशास्त्र नणीने तत्वरहस्यपण तेजचित्तमांचितव केजेगुरुथी अनेशास्त्रथी तथाजेतत्वथी सम तारूपीयुं जेअमृत तेनोउपनोग आस्वादपामे एटलेजेजेपदार्थनेतु समतानुकारणजा णे तेतेपदार्थनुंस्वरूपकर केमकेबीजासर्वपदार्थ तेनिरर्थकछे ॥ ५ ॥

समग्रसच्छास्त्रमहार्णवेन्य· समुद्धृत· साम्यसुधारसोऽयं ॥ निपी
यता हे विबुधा लनेध्व मिहापि मुक्ते· सुखवर्णिकां यत् ॥६॥

अर्थ ॥ हवेआचार्यग्रंथने उपसहरतो ग्रथनीउपादेयतादेखाडेछे हेपंडितजनो तमेसमग्र नलाजे धर्मशास्त्र तेरूपीयो जेमहासमुद्र तेहथीउधर्युंजे एसमतारूपियुं सुधारसके० अमृतरसतेप्रत्ये तुमें पीयताकहेतां आदरसहितसानलो तथानणो जे थी तमेआलोकेपण मुक्तिनासुखनी वर्णिकाकहेता वानगीनेपामो केमकेसमतारस मय जीवते आलोकेपण मुक्तिसुखने अनुनवेछे ॥ ६ ॥

शांतरसनावनात्मा मुनिसुंदरसूरिनि कृतो ग्रंथ ॥
ब्रह्मस्पृहया ध्येय स्वपरहितोध्यात्मकल्पतरुरेप: ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ हवेग्रंथनेछेडे आचार्यपोतानुंनाम अनेग्रथनुंनाम जणाववाकहेछे स्व परहितकहेता ग्रंथकर्त्ताने तथापरजेश्रोताप्रमुख एबेहुनेहितकारी एवोजेआध्यात्मकल्पद्रुम...

त्मकल्पद्रुमनामेग्रंथ तेतपगच्छाधिराज श्रीमुनिसुंदरसूरियेंकीधो ते एग्रंथ पंमितें ब्रह्मजेज्ञान तेह्नी वाछाये नणवुं अथवा ब्रह्मजे मुक्ति तेह्नीवांछायें चिंतववुं ॥ ७ ॥

इममिति मतिमानधीत्य चित्ते रमयति यो विरमत्ययं नवाझाक्॥स च नियतमतो रमेत चास्मिन् सह नववैरिजयश्रिया शिवश्रीः॥८॥

अर्थ ॥ ह्वेफलोपदर्शन द्वारे मंगलगर्भित उपसंहार वाक्यकहेठे जेमतिवत पुरुष अध्यात्मकल्पद्रुमनामे ग्रंथनेनणि पोताना चित्तनेविषेरमाडे रात्रदिवसचितवे तेपुरुष संसारथकी थोडाकालमां विरक्तथाय अनेवलीएह्नाज चितनथी तेपुरुषनेविषे संसाररूपीया शत्रुनीजे जयलक्ष्मी तेणेसहित शिवश्रीजेमोक्षलक्ष्मी तेमा रमिके॰आश्रयीनेरहे एटलेतेसंसाररूप शत्रुनेजीतीने मोक्षरूपलक्ष्मीपामे. इतिअध्यात्मकल्पद्रुमे साम्यसर्वस्वनामा षोडशोधिकार समाप्त.॥ १६ ॥

ए श्रीअध्यात्मकल्पद्रुमनामे ग्रंथनो बालावबोधार्थ उपाध्यायश्री रत्नचंद्रगणिकृत तथाउपाध्यायश्री विद्यासागरगणिकृत एबेटीकाजोइने में महारीबुद्धिने अनुसारे मुज सरखा स्वल्पबुद्धिवत प्राणिना उपकारने अर्थे लेशमात्र लख्योछे तेमां अनाजोगथी तथाअज्ञानथी तथाभ्रांतिथी जेकांइसूत्रना तथाटीकाना अनुसारथी ओछुंअधकुं अयुक्त लखाणुंहोय तेह्नुं मिछामीडुक्कडं अथवाकिहांएक सुगमपणानेअर्थे किहांएक साहचर्यथी किहांएकरूढिथी जेकांइ विभक्ति वचन लिंग कारक अन्वय प्रमुखनो विपर्यास कीधो होय तेअपराध बहुश्रुत गीतार्थखमवो तथा उपकारबुद्धे अशुद्ध टालिने शुद्धकरवुं.

अथ प्रशस्तिः॥ श्रीमत्तपगणगगनां गणनासनतरुणतरणिनिभ ॥श्रीराजविजयसूरिर्बनूव नुवि नूरि वितानयशा ॥ १ ॥ योत्याक्षीद्बिनव घनं सुविहितानुष्टानबद्धादरो लोकं कोकमिव प्रबोधमनयद्भोनिश्च गोस्वामिवत् ॥हित्वादीकिटदर्पमुज्वलपटाश्चक्रे विशेषोज्वलान् यो वाचाजितमालवेश्वरसितछत्रप्रनावोज्वल ॥२॥ रत्नत्रयप्रथितसंयमनृत्तदीय पट्टेश्वरत्नविजयाह्वयसुरिरासीत् ॥ येन प्रशांतरजसा प्रशमार्णवेन रत्नाकरायितमनल्पगुणौघरत्नैः ॥ ३ ॥ तस्यान्वये निखिलनूतलगीतकीर्त्तिः श्रीहीररत्न इतिसूरिवरो विरेजे ॥ स्वर्गं गतोप्यखिलनक्तसमीहितानि योद्यापि पूरयति नव्य इवामरडुः ॥४॥ तत्पट्टनूषणमणिर्जयरत्नसूरिः सर्वाग्रणीर्गुणिषु नूरिगुणाश्रयोऽनूत् ॥ श्रीनावरत्न इति नावविदां वरेण्य स्तत्पट्टनृज्जयति संप्रति सूरिराजः ॥५॥ श्रीहीररत्नसूरे

सकलशोकनुंमूल ते ममताजछे अनेसकलसुखनुंमूलते समताजछे एहवु जाणीने म
मताने त्यज अने समताने आदर इतिनाव. ॥ ३ ॥

स्त्रीषु धूलिषु निजे च परे वा संपदि प्रसरदापदि चात्मन् ॥ त
त्त्वमेहि समता ममतामुक् येन शाश्वतसुखाद्वयमेषि ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ जेनि समताते ममत्वमुकवाथीजथायछे तेमाटेममतात्यजवानु उपदेश
छे हेआत्मा ते पूर्वोक्तकारणथी तुममतारहितथको स्त्रीनेविषे अनेधूलिनेविषे वली
स्वजननेविषे अनेपरशत्रूनेविषे तथा वलि संपत्तिनेविषे अने विस्तारपामतीआपदाने
विषे समतानेपामवेकरीने सरखोपरिणामराखजे एटलेमोक्षसुखनोनोक्ताथाइश ॥४

तमेव सेवस्व गुरुं प्रयत्ना दधीष्व शास्त्राण्यपि तानि विद्वन् ॥ न दे
वतत्वं परिभावयात्मन् येभ्यो भवेत्साम्यसुधोपभोगः ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ हवेसमतातेज सकलपदार्थनो सारकरीनेउपदेशछे हेविद्वन् हेआत्मन्
तुंउद्यमकरीने तेहिजगुरुनेसेव अनेगुरुसेवनाकरीनेशास्त्रपण तेहिजभण तथाशास्त्र
भणीने तत्वरहस्यपण तेजचित्तमांचितव केजेगुरुथी अनेशास्त्रथी तथाजेतत्वथी सम
तारूपीयुं जेअमृत तेनोउपनोग आस्वादपामे एटलेजेजेपदार्थनेतु समतानुंकारणजा
णे तेतेपदार्थनुस्वरूपकर केमकेबीजासर्वपदार्थ तेनिरर्थकछे ॥ ५ ॥

समग्रसच्छास्त्रमहार्णवेभ्य समुद्धृत· साम्यसुधारसोऽयं ॥ निपी
यता हे विबुधा लभध्व मिहापि मुक्ते सुखवर्णिका यत् ॥६॥

अर्थ ॥ हवेआचार्यग्रंथने उपसंहरतो ग्रंथनीउपादेयतादेखाडेछे हेपंडितजनो
तमेसमग्र भलाजे धर्मशास्त्र तेरूपीयो जेमहासमुद्र तेहथीउधर्युंजे एसमतारूपियुं
सुधारसके० अमृतरसतेप्रत्ये तुमे पीयतांकहेतां आदरसहितसांजलो तथाभणो जे
थी तमेआलोकेपण मुक्तिनासुखनी वर्णिकाकहेता वानगीनेपामो केमकेसमतारस
मय जीवते आलोकेपण मुक्तिसुखने अनुनवेछे ॥ ६ ॥

शांतरसभावनात्मा मुनिसुंदरसूरिभि· कृतो ग्रंथ ॥
ब्रह्मस्पृहया ध्येय स्वपरहितोध्यात्मकल्पतरुरेषः ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ हवेग्रंथनेछेडे आचार्यपोतानुंनाम अनेग्रंथनुंनाम जणाववाकहेछे स्व
परहितकहेतां ग्रंथकर्त्ताने तथापरजेश्रोताप्रमुख एबेहुनेहितकारी एवोजेआअध्या

त्मकल्पद्रुमनामेग्रंथ तेतपगच्छाधिराज श्रीमुनिसुंदरसूरियेंकीधो ते एग्रंथ पंमिते अ ध्यात्मजेज्ञान तेहनी वांछाये नणवुं अथवा ब्रह्मजे मुक्ति तेहनीवांछायें चितववुं ॥ ७ ॥

इममिति मतिमानधीत्य चित्ते रमयति यो विरमत्ययं नवाडाक्॥स च नियतमतो रमेत चास्मिन् सह नववैरिजयश्रिया शिवश्रीः॥८॥

अर्थ ॥ हवेफलोपदर्शन द्वारें मंगलगर्नित उपसंहार वाक्यकहेछे जेमतिवंत पुरुष अध्यात्मकल्पद्रुमनामे ग्रंथनेनणि पोताना चित्तनेविषेरमाडे रात्रदिवसचितवे तेपुरुष संसारथकी थोडाकालमां विरक्तथाय अनेवलीएहनाज चितनथी तेपुरुषनेविषे संसाररूपीया शत्रुनीजे जयलक्ष्मी तेणेसहित शिवश्रीजेमोक्षलक्ष्मी तेमां रमिके॰ आश्रयीनेरहे एटलेतेसंसाररूप शत्रुनेजीतीने मोक्षरूपलक्ष्मीपामे इतिअध्यात्मकल्पद्रुमे साम्यसर्वस्वनामा षोडशोधिकार. समाप्तः ॥ १६ ॥

ए श्रीअध्यात्मकल्पद्रुमनामे ग्रंथनो बालावबोधार्थे उपाध्यायश्री रत्नचंद्रगणिकृत तथाउपाध्यायश्री विद्यासागरगणिकृत एबेटीकाजोइने में मह्मारीबुद्धिने अनुसारें मुज सरखा स्वल्पबुद्धिवंत प्राणिना उपकारने अर्थे लेशमात्र लख्योछे तेमां अनानोगथी तथाअज्ञानथी तथान्नांतिथी जेकांइसूत्रना तथाटीकाना अनुसारथी ओछुंअधकुं अयुक्त लखाणुंहोय तेहनुं मिछामीडुक्कडं अथवाकिहांएक सुगमपणानेअर्थे किहांएक साहचर्यथी किहांएकरूढिथी जेकांइ विनक्ति वचन लिंग कारक अन्वय प्रमुखनो विपर्यास कीधो होय तेअपराध बहुश्रुत गीतार्थेखमवो तथा उपकारबुद्धे अशुद्ध टालिने शुद्धकरवुं.

अथ प्रशस्तिः॥ श्रीमत्तपगणगगनां गणनासनतरुणतरणिनिन्न ॥श्रीराजविजयसूरिर्बनूव नुवि नूरि वितानयशाः ॥ १ ॥ योत्याक्षीद्विनव घनं सुविहितानुष्टानबद्धादरो लोकं कोकमिव प्रबोधमनयज्ञोनिश्च गोस्वामिवत् ॥छित्वादीकिटदर्पमुज्वलपटांश्चक्रे विशेषोज्वलान् यो वाचाजितमालवेश्वरसित छत्रप्रनावोज्वलः ॥२॥ रत्नत्रयप्रथितसंयमनूत्तदीय पट्टेश्वरत्नविजयाव्हयसुरिरासीत् ॥ येन प्रशांतरजसा प्रशमार्णवेन रत्नाकरायितमनल्पगुणौघरत्नैः ॥ ३ ॥ तस्यान्वये निखिलनूतलगीतकीर्तिः श्रीहीररत्न इतिसूरिवरो विरेजे ॥ स्वर्गं गतोप्यखिलनक्तसमीहितानि योद्यापि पूरयति नव्य इवामरडुः ॥४॥ तत्पट्टनूषणमणिर्जयरत्नसूरिः सर्वाग्रणीर्गुणिषु नूरिगुणाश्रयोऽनूत् ॥ श्रीनावरत्न इति नावविदा वरेण्य स्तत्पट्टनृज्जयति संप्रति सूरिराजः ॥५॥ श्रीहीररत्नसूरे

मुख्या शिष्या सुनिर्मलाभिख्या ॥ श्रीलब्धिरत्नविबुधाः शास्त्रार्णवपारदृश्वानः ॥६॥ श्रीसिद्धिरत्ननाम्ना पाठकवर्यास्तदन्वये तदनु ॥ श्रीहर्षरत्नवाचक, वरा वरीयोगुणैर्वे द्याः ॥ ७ ॥ लक्ष्मीरत्नगणीशा आसन् ङुर्वाढिदनुजलक्ष्मीशा ॥ श्रीज्ञानरत्नगणयस्त दाश्रवा साप्रतं जयंतु चिरं ॥८॥ तच्चरणकमलसेवा भृंगस्तत्संगसमयपतरग ॥ सुविहि तकल्याणविमल गणिवरविहितार्थिनीनुन्नः ॥ ९ ॥ बालावबोधवार्त्ता मध्यात्मसुरद्रु माख्यशास्त्रस्य ॥ मुनिहंसरत्न एता मतनोत्तनुबुद्धिसत्वहिता ॥१०॥ शोध्यं सुतत्वविद्भिर्ग्रंथो ऽयं धीयतैः प्रवाच्यमानश्च॥ सद्भावसपदाढ्यै राचङार्के चिरं जयतात्॥११॥

इति श्रीमुनिसुंदरसूरिकृतअध्यात्म
कल्पद्रुमो बालावबोधसहित संपूर्ण

॥ अथ श्री सीतलनाथाष्टक ॥

वृषनतुल्यगति वृषदं सदा व्यजितदर्प्यकदर्प्यकभेदक ॥ अमितशानवनीतिविवर्जित जिनमहं प्रणमामि सुशीतलं ॥ १ ॥ दृढरथाख्यकुनागनिनंदन सुमतिधाम विचक्ष णपुगवं ॥ नविविनिर्जितपद्मप्रभ वर जिनमहं० ॥ २ ॥ यमसुपार्श्वविभूषितविग्रहं विशदचंद्रप्रभाननबंधुरं ॥ सुविधिरंजितभव्यजनव्रज जिन० ॥ ३ ॥ विबुधमोदकशि तलवाग्भर सकलश्रेयसिकामकुटोपम॥ सुवसुपूज्यपद शिवदायक जिन०॥ ४ ॥ विमलनीरजपत्रविलोचनं गृहमनंतगुणस्य कृपापर ॥ सदयधर्म्मप्रवृत्ति प्ररूपक ॥ जिन० ॥ ५ ॥ जगति शांतिवितानविधायक धृतशम किल कुंथ्यमनिंदितं ॥ विगतदो षमर नविनौमिच ॥ जिन०॥६॥युगकपायजयप्रतिमल्लकं कनकवर्णधर मुनिसुव्रतं॥ नमत दानवमानवराजितं ॥ जिन० ॥ ७ ॥ विततधर्म्मरथांगकनेमिकं निखिलविष्टप पार्श्वमदूषण ॥ सबलमोहविनाशनवीरक ॥ जिन० ॥ ८॥ इति स्तुत श्रीजिनशीत लाख्य स्थित पुरे रायधनाभिधाने ॥ श्रीवीरचंद्रस्य मलूकचंद नाम्ना विनेयेन वशां श्रिये स्तात् ॥ ९ ॥ इति श्रीमच्छीतलनाथाख्यदशमतीर्थाधिपतेरष्टकं समाप्तम् ॥

॥ अथ श्री कल्याणसागरसूरिकृत माणिक्यस्वामिस्तवनप्रारंभः ॥

नम सिद्धेभ्यः॥स्रग्धराछंद ॥स्वामी माणिक्यपूर्वस्त्रिभुवनतिलकश्चिंतितश्रीसुराद्रिस्त्रैलोक्योद्योतकर्ता प्रथिततरयशा श्चित्ररुन्नाममंत्रः ॥ श्रीमन्नीनाभिनूपान्वयगगनरविर्मंजुकल्याणकांती राष्ट्रे सद्दक्षिणाख्ये निरुपममहिमा ख्यातिकारिप्रतापः ॥ १ ॥ द्रुतविलंबितछंद.॥ प्रवरधर्मधनार्पणकामगौ रमृतवाग्गुणरंजितनागर.॥रिपुसमूहनिवारणलंपटो वृषभचिन्हितपादकुशेशयः॥ २॥ हरिणीछंदः॥ भुनमतिकरश्चंद्रादित्याधिको नरभास्वर स्त्रिभुवनमणि र्विश्वाधारो धरेश्वरकीर्तितः ॥ उपशमरसासक्तस्तांतोप्यनंतचतुष्टयी गुणमणिखनिर्नष्टारिष्टामयाधिजराव्यथः ॥ ३ ॥ पंचचामरछंदः ॥ अखर्वदेहराजितो यतीश्वरो घृणाप्रशीतमानसः कलाधर ॥ अनेकलब्धिमंडितो कृपाकरः शिवाब्धिवृद्धिचंद्रमा नतासुरः ॥ ४ ॥ भुजंगप्रयातछंदः ॥ प्रभुर्माहदेवश्चिदाल्हादलीनः सदाचारलीलाविलासातिशाली ॥ महामोहमातंगपंचास्यकल्पो हितार्थी कलाशिल्पविज्ञानभावी ॥ ५ ॥ मालिनीछंदः॥ जलधिनिभगनीर. सारसारंगघोषो जितविषयविकारो ज्ञानबुद्धिप्रदाता॥ खलसमिरणदाकुर्देवदेवाधिराज समवसरणशोभासिंधुपूरौघमेघः ॥६॥ नाराचछंद ॥ श्वेतातपत्रचामरैर्युक्तो मनोज्ञपुभजै ॥ भव्यांगिराशिवर्द्धितो धर्मार्थमोक्षसाधक ॥ ७ ॥ आर्याछंद.॥ देवैर्ध्येयो विमल सुंदरवशो नृपूत्तरारमापि ॥ मान्य सतामजस्रं सदोदयो वरातिशयधर ॥८॥ गीतिछंदः ॥ त्रैलोक्यावासविभु. समस्तगुणरत्नकलितसाधुमनाः ॥ एनस्तमोनिशेशः सुश्लोकैर्धवलिताश आशाद ॥ ९ ॥ नगस्वरुपिणीछंद ॥ सदार्थमार्गदेशको प्यमेयभाग्यधारक ॥ प्रभूतसत्वपालको विवेकनीतिकारक ॥१०॥ माणवकछंद॥ दुःखहरो नाकिनुत स्त्यक्तमहादोषभरः ॥ पारगतस्तीर्थकर शीलशाली ज्ञानधन. ॥११॥ तोटकछंद.॥ कमलाननमोहितसभ्यजन समयार्थनिरूपणरम्यसुधी ॥ नृशिलीमुखखेलनतामरसः पुरुषोत्तमपुण्यनिधिर्वरद ॥ १२ ॥ मणिमध्यछंद.॥ लक्षणपंक्तया सारतनु र्निर्जितमायालोभकलि ॥ आद्दतसाध्वाचाररति. सादरदेवाधीशपति. ॥ १३ ॥ चंपकमालाछंद.॥ केवलयुग्मालोकितलोका लोकविभागः संयमिसेव्य.॥ इंद्रियवाणाभेदितचेता श्चंपकमालामंडितगात्र.॥१४॥ हंसीछंद॥ प्राप्तानंदो भुवनमुकुट स्तीर्थस्वामी विस्तृतनयन ॥ सश्रीकात्मा सुकृतनिलयो योगींद्रो वै विजितकपट. ॥ १५ ॥ शालिनीछंद ॥ आदेयाख्यो मुक्तिजस्फारसौख्यो विश्वोत्तंसो दुष्टकर्मारिहंता ॥ चक्रेश्वर्याराधितो गोमुखेशः कांताकारश्चोसधर्माधिकारः ॥१६॥ केकीरवछंद.॥जगतीशपूज्यो जयताद्धि

नेश कुशलार्यवल्लीततिवारिधारः ॥ विशदावदातावलिचित्तनामा नववार्द्धिपोत कुलपाकनाथ ॥१७॥ कुलक॥इन्द्रवज्राछंद ॥एव मया संस्तुत आदिदेवो भूयात् सदा संघगणस्य भूत्यै ॥ क्षेमकरो विश्वजगत्सुदीप कल्याणमांगल्यकलापकोश ॥ १८ ॥

॥ अथ सूर्यपुरीयश्रीसंभवजिनस्तवनप्रारंभ ॥

वसततिलकाछंद ॥ काम नमोऽस्तु सततं जिनसंभवाय चन्द्राननाय कमलामललोचनाय ॥ देहप्रभास्थगितलोकचमत्कराय दुर्ध्यानपादपविभेदनसिंधुराय ॥ १ ॥ देवै स्तुताय भवसागरपारगाय कीर्तिप्रसूनसुरभीकृतविष्टपाय ॥ सन्मूर्तिकांतिततिरजितमानवाय सेनागकुक्षिवरशुक्तिकमौक्तिकाय ॥ २ ॥ अब्जोपमाय जिनशासनदीपकाय सव्यस्विवृंदरमनोरममंडनाय ॥ भव्याब्जकाननविभासनभास्कराय नानार्थदानहरिचंदनसन्निभाय॥३॥आदेयनामकलिताय शुभाशयाय सिध्यंगनामिलनलादरलोलुपाय ॥ राद्धांतहार्दकथनोत्तरकोविदाय तेज प्रभावयशसामवनीश्वराय ॥ ४ ॥ अज्ञानमोहभयसंज्वरभेषजाय सौभाग्यभाग्यगुणरत्नकरंडकाय ॥ अष्टापदाभतनुवर्णविराजिताय निर्लोभहंसरतिखेलनमानसाय ॥५॥ आव्हानमंत्रविनिवारितपातकाय कल्याणसागरतरंगकलाधराय ॥ दुष्टारिचक्रलवणांबुधरोपमाय वाचासुधाश्रवणहर्षितनागगाय॥ ६ ॥ सद्धर्ममार्गविधिदेशनदेशिकाय दु खौघवारणमृगेन्द्रपराक्रमाय॥ लोकातिशायिमहिमाचलभूषणाय गधर्वलंछनसुशोभितपत्कजाय॥७॥ सस्यायवृद्धिकरणाय जितेन्द्रियाय शुद्धान्वयोन्नतिकराय रूपालयाय॥मिथ्यात्वतापशशिचंदनपादपाय दुष्कर्मवायुभुजगाय नरार्चिताय॥८॥ संकल्पकल्पनविवर्जितमानसाय गांभीर्यधैर्यमणिसंभवरोहणाय ॥सज्ज्ञानबुद्धिवरदाय गुणाकराय कौशल्यवल्लिपरिवर्द्धनमंडपाय ॥ ९ ॥ इन्द्रवज्राछंद ॥ स्तोत्रं चतुर्थ्यंतविभक्तिसयुत ध्यायंति ये संभवदेवरागिण ॥ तिष्ठंति तद्धाम्नि शुभा समृद्धय कल्याणसंपादनकामधेनव ॥ १० ॥ शार्दूलविक्रीडितछंद ॥ लक्ष्मीकेलिगृह सदावलिनतं श्रीसंभवाख्यं जिन सन्मार्तंडपुरामजाचलवरोत्सेपे भवाब्धौ तटं॥ देवाधीशनरेशभोपपटले संसेवित कामद मुक्तिस्त्रीसुखरंगलोभमनिशं सेवे मुदा सिद्धये॥ ११॥

॥ अथ श्रीसुविधिजिनस्तवनप्रारंभः ॥

द्रुतविलंबितछंद ॥ सुविधिनाथजिनं नयनामृतं सुविधिनाथजिनं महिमालयं॥ सुविधिनाथजिनं नररंजनं सुविधिनाथजिनं वरकेवलं ॥ १ ॥ सुविधिनाथजिनं कमलाकरं सुविधिनाथजिनं भवदं पर ॥ सुविधिनाथजिनं द्युतिकीर्तिदं सुविधिनाथजिनं

सुविधिप्रदं ॥ २ ॥ सुविधिनाथजिनं रजतछविं सुविधिनाथजिनं जडतापहं ॥ सुवि धिनाथजिनं मकरांकितसुविधिनाथजिनं जगदंचितं ॥ ३ ॥ सुविधिनाथजिनं रजतां हित सुविधिनाथजिनं परमेश्वर ॥ सुविधिनाथजिनं श्रुतसूरिणं सुविधिनाथजिनं शि वपारगं ॥ ४ ॥ सुविधिनाथजिनं शुजदर्शनं सुविधिनाथजिनं जनतानत ॥सुविधिना थजिन वरद विद्धं सुविधिनाथजिनं नमितासुर ॥ ५ ॥ अनुष्टप्छंद ॥ सितेतरपुरा धीशः सुविधिर्नवमो जिन· ॥ संघस्य सुखदो नूयात् कल्याणसूरिणा स्तुत· ॥६॥

॥ अथ श्रीशांतिनाथजिनस्तवनप्रारंभः ॥

डुतविलंबितछंद ॥सकलदेवनरेश्वरवंदितं विबुधमानवसंस्तुतपूजितं॥कमललोचनरंजि तनागरनविकपालकतामसनास्कर ॥१॥ निखिलवांछितदानसुरागमं विदितशास्त्रविचा रनयागमं॥कठिनकर्मदवानलनीरदं परमशांतिरदामृतशांतिदं॥२॥विविधलक्षणरंजित संचर सुविधिमार्गप्रकाशनतत्परं॥चपलमत्तमतंगजगामिनं कमलकोमलमांसलपाणि नं॥३॥ दलितदंनमहाधृतिविग्रहं विहितमोहमहाबलिनिग्रहं॥ दृढपरीषहवायुज्ञजंग मं किल शुजंयुमनीप्सितमागमं ॥ ४ ॥ नविचकोरसुखाय कलानिधिं विनयधैर्यगुणो त्करशेवधिं ॥ मुनिपडंन्हिनिवासकुशेशयं विधुसुधामधुसारतराशयं ॥ ५ ॥ कुसुमस न्निनदंतविराजित सुनगनाग्यसुखाकरशोनित ॥ निजत्तुजाबलसाधितराष्ट्रकं जित विपक्षगण नतराजकं ॥ ६ ॥ कुशलकेलिविलासनुवं परं विशदकीर्त्तिविकाशिदिगंत र॥कुमतसिंधुरसिंधुरवैरिणं सुमतिकामितसक्ततिकारणं ॥७॥ वरसुवर्णसवर्णसुवर्णकं जितहृपीकमधर्मनिवारक ॥ हरिणसेवितपादकजं जिनं हितकर स्तुतनिर्जरसज्ज नं ॥ ८ ॥ प्रवरवार्षिकदानगुणैर्वर हृतदरिद्रपर परमेश्वर ॥ समधरीकृतमेरुसुरडुमं· प्रचुरसर्वगुणादधिकोत्तमं· ॥ ९ ॥ विकटडुर्जयमन्मथशंकर जनकलापिघनं विगतां तर ॥ लपननिर्जितचडमसं नृशं विगतदोषकलिं च महोजसं ॥ १० ॥ अशिवविघ्न घनाघनमारुतं विषयतापवश जनतामत ॥ शिववधूपरिरंजणलोलुपं विमलकेवलि साधुकुलाधिप ॥ ११ ॥ नजत शांतिजिनं तु शिवकरं कुशलसागरवृद्धिकलाधर ॥अ तुलरूपवशीकृतमानव प्रणतसादरकिन्नरदानवं ॥ १२ ॥ द्वादशनि· कुलकम् ॥ मा लिनीछंद.॥त्तुवननलिननानो· शांतिदेवस्य नर्त्तुर्नवजलनिधिसेतो डुःखदारिद्र्यहर्त्तु·॥ निजहृदयविशुद्ध्या स्तोत्रमेतत्पठति प्रतिदिनमपि ये ते संपद प्राप्नुवंति॥१३॥

॥ अथ श्रीशांतिजिनस्तवनप्रारंभः ॥

स्रग्धराछंदः ॥ दद्याच्छ्रीशांतिदेवो वरकनकतनुः सारसौख्यानि शश्वद्भक्तानां नक्ति

राचछंदः ॥ कारुण्यरंगरंजिते कार्पण्यदोषवर्जिते ॥ देवाधिपेऽचिरासुते लोकोपकारक मेते ॥ १६ ॥ इति सप्तमीविभक्तिकाव्यत्रिकं ॥ वंशस्थछंदः ॥ स्वकीयवंशांबरभास्कर प्रभो विशालगंगाजलशुभ्रकीर्त्ते ॥ अपारसंसारभयाच्च सत्वरं कृपापरस्त्वं परिरक्ष सेवकान् ॥ १७ ॥ इति संबोधनविभक्तिकाव्यमेकं ॥ मंदाक्रांताछंदः ॥ कल्याणोक्तं कुशलजननं सर्वसंघस्य नित्यं नानावृत्तैः प्रकलितमिदं स्तोत्रमेतत्त्रिकालं॥भुक्त्वाऽऽज स्यं भणति मनुजो भाविनाभावितात्मा गेहे लक्ष्मीर्भवति दृढता तस्य दीर्घायुष श्च ॥ १८ ॥ शार्दूलविक्रीडितछंदः ॥ कल्याणोदधिवर्द्धनं कलिहरं कौशल्यमालास्पदं सौभाग्यौघकरं विभक्तिकलितं कार्यैर्विभिन्नैः परं ॥ श्रीशांतेः स्तवनं पठंति भविनः सत्पुण्यपण्यालयास्तेषां धाम्नि शुभे निवासमतुलाः कुर्वंति संपत्तयः ॥ १९ ॥

॥ अथ श्रीअंतरिक्षपार्श्वस्तवनप्रारंभः ॥

इंद्रवज्राछंद.॥विश्वेश्वरं विश्वजनेशपूज्यं सर्वार्थनिष्पादनकामकुंभं॥ प्रख्यातिमंतं महिमौघलक्ष्म्या पार्श्वं भजे संस्थितमंतरिक्षे ॥१॥ कल्याणमालागृहमंगिदेव विद्या धराधीशनुतांह्रिपद्मं ॥ सर्वत्र राष्ट्रेषु विशालकीर्त्तिं पार्श्वं०॥२॥ रोगाधिचिंताखिलसमू हतापभंपज्यमाचारविचारसारं ॥ सन्नीलरत्नप्रविभूषितांगं पार्श्वं०॥३॥ संसारसिंधौ वरयानपात्रं मुक्त्यंगनासक्तहृदं शरण्यं ॥ वामांगजातं जगतीप्रदीपं पार्श्वं० ॥ ४ ॥ श्री पार्श्वयक्षाधिपमद्वितीयं श्रीशालिनं सेरपुरावतंसं ॥ वाचासुधाकर्षितसभ्यलोकं पा र्श्वं० ॥ ५ ॥ त्रैलोक्यकोटीरमनाथनाथं दारिद्र्यवाताद्रिमनंतशक्तिं ॥ शास्त्रार्थनैपु ण्यनिधिं दयालुं पार्श्वं० ॥६॥ पद्मावतीसेवितपादयुग्मं मंहोभरध्वांतदिनेशमाशु ॥ लावण्यसौभाग्ययशोभिराढ्यं पार्श्वं० ॥ ७ ॥ ज्ञानादिधर्माभरणं वरेण्यं सद्बोधदाना दिकमार्गपांथं आनंदवल्लीततिवारिधारं पार्श्वं० ॥ ८ ॥ कलश ॥ स्रग्धराछंदः इत्थं ये देववंद्यं विविधसुखकरं चांतरिक्षाख्यपार्श्वं नित्यं ध्यायंति भक्त्या हृदयरति युजो भाग्यवंतो नरोपि ॥लक्ष्मीस्तेषां निकाय्ये वसति दृढतया सर्वदा कामकर्त्री क ल्याणश्रेणिकर्त्तुर्भुवि विदिततरा सर्वसंपत्तिकांता ॥९॥

॥ अथ श्रीगौडिकपार्श्वाष्टकप्रारंभः ॥

शार्दूलविक्रीडितछंद.॥वामेयं मरुदेशभूपणतरं श्रीपार्श्वयक्षार्चितं कल्याणावलिवल्लि सिंचनघनं श्रीइक्ष्वाकुवंशोद्भवं॥आराद्दूरसमागतैर्नरवरैः संसेवितं नित्यशः श्रीमत्त्रीकर गौडिकाभिधधरं पार्श्वं सुपार्श्वं भजे॥१॥नानासाधुजनौघपंकजवने मार्त्तंडबिंबायितं वि घ्नव्यूहनिवारकं कलियुगे आसप्रतापालयं॥ विश्वस्यां प्रथितावदाननिकरं निर्दोषपुण्यो

ज्वलं श्रीमल्लीं०॥२॥संपल्लेयिसुदानकामकलशं त्रैलोक्यचिंतामणिं सद्वाचामृतरंजितामरनर सद्धर्म्मबोधप्रदं ॥ सौभाग्याद्भुतकांतकीर्त्तियशसा संपूरिताशांतरं श्रीमल्लीं० ॥३॥ मार्गे चांतरभीतिवारिनिचिते क्षेमंकरं सर्वदा दारिद्र्यादिनिपातनात्तकुलिशं चिंतानिरोगापदं ॥ दुःखत्रासमीरणौघभुजगं नागाकमल्लोमयं श्रीमल्लीं०॥ ४ ॥ कारुण्याचितचारुचित्तकमलं सत्वेषु संसारिषु सद्ध्यादिगुणैरलंकृततनुं लावण्यलीलास्पदं ॥ संसारार्णवपीतवारिधिसमं मुक्त्यंगनावल्लभं श्रीमल्लीं० ॥ ५ ॥ त्रैलोक्ये तिलकायितं निरुपमं भव्यैर्भजि पूजितं दुष्टानां निजसत्वदर्शनपरं क्षिप्रं सतां कामदं ॥ नाम्ना ध्वस्तसमस्तवैरिनिचयं राद्धांतनिर्देशकं श्रीमल्लीं० ॥ ६ ॥ भूयिष्ठामलभक्तिशक्तिकलितैर्देवैश्चतुर्द्धा नतं सर्वाशाकरणैककल्पफलदं सर्वांगिचूडामणिं ॥ शिष्टानं तचतुष्टयीवरतरं श्रीमेरुतुंगं जिनं श्रीमल्लीं० ॥ ७ ॥ स्फाराकारनिराजितांगमतुलं सद्वर्णहेमाकरं विश्वव्यापितरं प्रवाससदनं गंभीरतासागरं ॥ भासोद्योतितविश्वविश्वमवनौ कल्याणसिंधौ विधुं श्रीमल्लीं० ॥ ८ ॥ अथनि कुलक ॥ अनुष्टुप्छंद ॥ भिन्नमाले सदाश्रेष्ठे गुणवद्भव्दभूपिते॥पुष्पमालेऽतरानिख्ये नेकवीहारसंयुते ॥ ९ ॥ श्रीमत पार्श्वनाथस्य स्तवनं जगतोऽवनं॥कल्याणसागराधीशै सूरिभी रचितं मुदा॥१०॥ ॥स्रग्धराछंद ॥ध्येयं श्रीपार्श्वदेवं भजत किल जना गोभिकग्रामराजं शश्वत्सर्वार्थसिद्ध्यै विहितशुभहितं विष्टपे चैत्रपूर्वे॥सानंदोल्लाससलष्टा कुशलगविबुधाः सर्वलोके विशिष्टानिर्दोषाचारपुष्टा जिनपपतिषु रता आत्मकल्याणतुष्टाः ॥ ११ ॥

॥ अथ श्रीगोभीपार्श्वनाथस्तवनप्रारंभ ॥

मालिनीछंद ॥जयति जगति चंद्र पार्श्वनामा जिनेंद्रो विकचकमलदृष्ट्या नंदितामर्त्यमर्त्यः ॥ अकलितमहिमाधस्तीर्णसंसारसिंधुर्भुजगकलितपादः पुण्यपीयूषपुष्टः ॥१ स्रग्धराछंद ॥ श्रीपार्श्वं गोडिकाख्यं भजत भविगणा कल्पवृक्षं सुगोत्रं नानादेशेषु लब्धातिशयमहिततताव्यूहवारं सुमूर्त्तिं॥श्रीमंतं नीलरत्नाधिकतरवपुषं स्फारलावण्यशालं मोदान्भोराशिकुंभोद्भवममरनुतं पार्श्वयक्षार्चितांह्रिं ॥ २ ॥ पंचचामरछंद ॥नमंति पार्श्वमंगिनो नरालसा धृतातपत्रचामरैः सुरैः स्तुतं ॥ अनंतशक्तिमालिनं गतामयं विवेकरत्नरोहणं दयाकरं ॥३॥ वसंततिलकाछंद ॥ करीकृतं व्रतमनुत्तरमंगिनेत्रा दत्वा ऽब्दमुं येन वरवार्षिकदानराशिं॥ वामोद्भवेन मुनिनायकनायकेन कल्याणकेलिनिलयेन शुभाशयेन ॥ ४ ॥ द्रुतविलंबितछंद ॥ मम नमोस्त्वतवते परमात्मने भगवते शिवशर्म्मविधायिने ॥ अमितशौर्य्यतिरस्कृतमेरवे शुभदशेरकमंडलमौलये॥५॥ हरि

णीछंद॰॥ अमृतरसताधिक्यात्नीष्टान्नरोत्तमसंगताद्भुवनसुजगात्पार्श्वोत्निख्याद्विनश्यति पातक ॥ प्रसरति च वै कीर्त्तिर्दिक्षु प्रसूनवदुज्वला प्रनवति पुन॰ शीघ्रं जीञाजयो न्नतिवर्द्धनं ॥६॥ शार्दूलविक्रीडितछंद॰ ॥ आकृत्या नरदेवदेवमनुपां संतुष्टिकर्तुस्सदा चेतोवल्लनकामसार्थददतः कर्मारिहर्तुर्भृशं ॥ आनंदौघसर प्रवृद्धिकरणे पानीयदा तुर्मुदा पार्श्वस्यास्ति नति॰ समृद्धिजननी कल्याणविस्तारिणी ॥७॥ तोटकछंद ॥ नरल क्षणनूपितवह्युपुरे सुखनीरजरंजितविश्वजने ॥ श्रुतदेशनदर्शितधर्मपथे जिननेतरि ति ष्ठति नाग्यरमा ॥८॥ भुजगप्रयातछंद॰ ॥ सुराधीशचक्रैः स्तुत ज्ञानसिंधो जगन्नाथ नेत॰ कृपालोकबंधो ॥ विन्नो पाहि मां सर्वदा नक्तिनाजं स्मरं त चिर त्वत्पदांनोजभृंगं ॥ ९ ॥ शार्दूलविक्रीडतछंद ॥ स्तोत्रं पार्श्वजिनेश्वरस्य सतत ये प्राणिनो ना वतः सद्बुध्यापि पठंति ह्यमनलस्तेषां गृहे संपदः ॥ स्युर्नित्यं स्थिरनावशोन नतरां धर्म्मार्थनिष्पादिका॰ कल्याणार्णवसूरिनिर्विरचितं मांगल्यमालाकरं ॥१०॥ शिखरिणीछंद॰॥ सदा धार्यं चित्ते स्तवनमनवद्यं नयहरं नरैर्नूनं सिद्ध्यै कुशलवन राजी घननिनं ॥ अवंध्यं नक्तानां जिनगुणरतानां स्मृतिमतां समेषां नव्यानां प्रमु दकरणं कामितकर ॥ ११ ॥

॥ अथ श्रीदादापार्श्वनाथस्तवनप्रारंनः ॥

॥ इंद्रवज्राछंद ॥ कल्याणगेहं गुणरत्नराज सद्देहकांत्याजितनीलरत्नं ॥ स्तोष्ये मुदाशंकरमगिवद्यं दादाभिधं श्रीवरपार्श्वनाथं ॥ १ ॥ सद्धर्मलीनाशयमाशु विघ्नं कर्म्माष्टदावानलवारिधारं ॥ संसारपाथोनिधिकर्णधार दादा० ॥ २ ॥ आचारव ल्लीततिवृद्धिनीरं सत्कीर्त्तिपुष्पद्रुतवासिताशं ॥ नानार्थराद्धांतविचारदक्षं दाद० ॥ ॥ ३ ॥ वैराग्यरंगार्पितचारुचित्तं सद्बोधिदातारमनीहसेव्यं ॥ नागेंद्रसंसेवि तपादपद्मं दादा० ॥ ४ ॥ त्रैलोक्यचूडामणिमृद्धिशोन सौनाग्यनाग्यावलिपूर्ण देहं ॥ नव्याघराजीवदिनेशमेक ॥ दादा० ॥ ५ ॥ सर्वांगिनेतारमनीष्टवाच विश्वे श्वर रंजितसन्यलोकं ॥ लोकार्त्तिचितानयदुःखवार दादा० ॥६॥ ह्यारुति कृतजरा धिदोष नरामरेंद्र स्तुतमर्त्यसंघं ॥ सन्नागचिन्हं कुशलार्थकार दादा० ॥७॥ सर्वत्र वि ख्याततरप्रतापं कारुण्यसत्रं नुवि शिष्टगोत्रं ॥ अज्ञानमिथ्यात्वतमिस्रदीपं दादा० ॥ ८ ॥ अथनि कुलकं ॥ शार्दूलविक्रीडितछंद॰ ॥ श्रीमद्बीवटपद्रनद्रनगरे शृंगार हारोपमं कल्याणांबुजनानुवद्भमसमं वामांगजातं परं ॥ दादाख्यं जिनपार्श्वदेवमन घं ध्यायंति ये नित्यशस्तेषां धाम्नि रमा निवासमनिशं कुर्वंति कल्याणतः ॥ ९ ॥

॥ अथ श्रीकलिकुंडपार्श्वाष्टकप्रारंभः ॥

॥ विबुधादिराजैर्नतपादपद्मं बहुभाग्यसौभाग्यलतौघमेघं ॥ कमठोपसर्गाचल धैर्यभित्तिं कलिकुंडपार्श्वं सुचिरं भजेऽहं ॥ १ ॥ कमलाप्रदाने हरिचंदनाभं सपयोधिदेशाद्भुतलब्धकीर्त्तिं ॥ रुचिराकृतौ रंजितविश्वविश्वं कलिकुंड० ॥ २ ॥ महिमावदातोत्तमनाममंत्रं समतानिरामं कमलाभिनेत्रं ॥ अभिलापदं सिद्धि विभासयंत्रं कलि० ॥ ३ ॥ दुरिताधकारारुणसन्निकाशं करुणाशयं दुःखवने षु दावं ॥ नरदेवपूज्यं सुखदं सुमूर्त्तिं कलि० ॥ ४ ॥ कनकादिदातारमनंतशक्तिं वरनीलरत्नाधिकदेहवर्णं ॥ शिवशर्मराजं जनताभिवंद्यं कलि० ॥ ५ ॥ अनघं सदा सद्गुणकेलिपालं शुभलक्षणालंकृतवर्यगात्रं ॥ कुलभूषणं शत्रुतृणौघदात्रं कलि० ॥ ६ ॥ जगतीश्वरं कर्मविमुक्तसंगं विषमायुधालभ्रमनस्वरूपं ॥ धरणेंद्रपार्श्वार्चित पादयुग्मं कलि० ॥ ७ ॥ शुभसिंधुवृद्धौ शशिनं वरेण्यं वचसा सुधाभेन सहर्षसन्यं ॥ श्रुतसूरिणं पुण्यविराजमानं कलि० ॥ ८ ॥ अष्टभि कुलकं ॥ इंद्रवज्राछंद ॥ एवं स्तुतं श्रीकलिकुंडपार्श्वं कल्याणनाम्ना मयका नितांतं ॥ ये प्राणिनः स्तोत्रमिदं पठंति तद्धाम्नि लक्ष्मीर्विलसत्यवश्यं ॥ ९ ॥

॥ अथ श्रीरावणपार्श्वाष्टकप्रारंभः ॥

॥ इंद्रवज्राछंद ॥ देवाधिदेवं कृतपार्श्वसेवं नागाधिराजेन नतांह्रिपद्मं ॥ पद्मावतीसंस्तुतनामधेयं सेवे सदा रावणपार्श्वनाथं ॥ १ ॥ आनंदकंदोदय वृद्धिमेघं मेघध्वनिध्वानविशेषराजं ॥ जितारिवृंदं विगताधिमोहं सेवे० ॥ २ ॥ वामागजातं कुलनंदिकारं ध्वस्तोपसर्गोत्कटदुष्टरोगं ॥ प्रख्यातिमंतं भुवने प्रभावे सेवे० ॥ ३ ॥ सन्नीलमाला हसितेंद्रनीलं सत्कांतकांत्या रमणीयरूपं ॥ प्राबील्यनानातिशयं प्रधानं सेवे० ॥ ४ ॥ संभीतिहर्त्तारमनंतसौख्यं विश्वेश्वरं द्योतितविश्व लोकं ॥ पद्मार्थदाने सुररत्नवृद्धं सेवे० ॥ ५ ॥ अज्ञानमिथ्यात्वतमिस्रभानुं भामं मलालंकृतमौलिपृष्ठं ॥ वाणीसुधामोदितसज्यसंघं सेवे० ॥६॥ कौशल्यमांगल्यनिवासगेहं पूर्णीकृताभीष्टपदार्थराशिं त्रैलोक्यदीपं वरसिद्धिराजं सेवे० ॥ ७ ॥ संसार रत्नाकरयानपात्रं निःशेषदोषोज्झितधर्ममार्गं ॥ आदेयसौभाग्ययशः सुपात्रं सेवे० ॥८॥ अष्टभि कुलकं ॥ मालिनीछंद ॥ अलवरपुररत्नं रावणं पार्श्वदेवं प्रणतभुवनसमुद्रं कामदं देवदेवं ॥ अमितगुणनिधाना ये नरं संस्तुवंति जगति विदितसारा भाग्यवंतो भवंति ॥ ९ ॥

॥ अथ श्री गोडीपुरपार्श्वजिनस्तवनप्रारंभः ॥

रागेणगीयते॥ गौडिपुरप्रभुपार्श्वममंदं दर्शनदर्शनपरमानंदं नमितसुरासुरवृंदं॥१॥ श्रीजिनशासनचारुशृंगार अंतरंगरिपुवृक्षकुगार सकलजगदाधार॥२॥ निरुपमरूपविराजितदेह विदलितनानाजनसंदेहं अमितगुणधनगेहं॥३॥ दुरितकाननभेदनदात्रं रुचिरलक्षणविभूषितगात्रं वारितकुमतकुपात्रं ॥४॥ अनघजिनवरगोत्रसुगोत्रं कामकुंभमणिनिर्जरगोत्रं सयमदृढतागोत्रं ॥५॥ भेदितभवभयमरणारिष्टं प्रकटितमहिमातिशयवरिष्टं जगदैश्वर्यगरिष्टं ॥६॥ विहिताखिलभविजनकल्याणं पाजितयथाख्यातकल्याण दत्तमार्गणकल्याण ॥ ७ ॥ आधिबंधवधगदहर्तारं वांछितकुशलसौख्यकर्तारं भुवनत्रयभर्तारं ॥ ८ ॥ विकटकष्टनिवारणशूरं आगमनयप्रकाशनसूरं भारतीगंगापूरं ॥ ९ ॥ धृतिकीर्तिबुद्धिलक्ष्मीगणविश्व केवलयुगलालोकितविश्व प्राप्तजनेप्सितविश्व ॥ १० ॥ सेवकमनोभीष्टदातार रंजितदेवनरनेतारं अनुभूतकुलत्रातारं ॥ ११ ॥ इंद्रनीलमणिवर्णसुवर्णं निखिलदेशविख्यातसुवर्णं वाक्सुधासारसुवर्णं ॥ १२ ॥ मुक्तिरमीमतिनीसंगमलुब्ध चचलविषयसुखसंगालुब्ध कर्मपराविप्रलुब्धं ॥१३॥ वंदितामरमौलिकुटीर विषमकषायदवानलनीर उत्कटपरीषहधीर ॥१४॥ अंचलगणनीरधिसारंगं कीर्तिलतावर्द्धनसारंगं दुर्ज्ञानशलभसारंगं ॥ १५ ॥ वदेऽनंतचतुष्टयराजं पूजितसुरपतिमानवराज प्रवरतीर्थाधिराज ॥१६॥ षोडशभिः कुलकं॥ शिवतातिपार्श्वं वरदवरपार्श्वं मोहतमिस्रसवितार नागराजराजं त्रिभुवनपूज्य लंघभवोदधिपार ॥ शुभसागरनित्यप्रथितगरिमाण ये ध्यायंति विभुं मुदा लक्ष्मीस्तान् समुपैति सत्वरमतुला सर्वार्थसिद्धिप्रदा ॥ १७ ॥

॥ अथ श्रीपार्श्वजिनस्तवनप्रारंभः ॥

तोटकछंदः ॥ भविकाबुजभासनभानुनिभं भवतापसमावनवारिधरं ॥ रचितागमशास्त्रविचारनयं जय मंगलकीर्तियशोनिचयं ॥ १ ॥ कमलामलकेलिगृहं विमलं लसदाशयमुज्झितसतमसं ॥ शुभसागरवर्द्धनषड्मसं सकलामरपूजितपादकजं ॥२॥ विकटोत्कटकर्म्ममृगेभरिपु खगनागनरेश्वरदेवनतं ॥ तरसा जितमोहरिपुं विभयं यमसंवरसंहितसाधुहितं ॥ ३ ॥ शुभलक्षणलक्षितहस्तयुगं गजराजगतिं गतविघ्नरुजं ॥ जडतामयभेषजमीशवरं दशनद्युतिद्योतितचारुमुखं ॥४॥ कनकाचलधीरमभीष्टतरं रसनारसरंजितसर्वसभं ॥भुवनत्रयमंडलमोघतरं रुचिराकृतिमोहितदेवजनं ॥५॥ अरिहंतमनुत्तरतीर्थकरं रचितं वरबुद्धिधनं जिनपं ॥पुरुषोत्तममस्मरमर्थनिधिं धृ

तिकातिनिकेतनमभिनुत ॥६॥ निजवशवर्त्तसकमार्तिहर खनिर्जितमेघनद शिवद॥ वधितं जुवि विश्वजनीनतम नतजूतगण जितलोजनटं ॥ ७ ॥ शरणाश्रितपालकमु क्तिपदं वधत वरशांतरस नवम ॥ मदसेइमणिप्रजदेहधर धरणेइनिषेवितपार्श्वयुगं ॥८॥ श्रमम नुतपार्श्वजिन सततं तपसा हतसिद्धमनतबलं ॥ ललनाजनसंगविरक्त मलं मलवर्जितमुत्तरसौख्यधर ॥९॥नवनि कुलक॥ सुरराजखेचरनागपुरदरधरणिरा जसुसेवितं श्रीपार्श्वजिनेश्वर नमितसुरेश्वरपद्मावतीसस्तुत॥ येऽनतजत्तया विशुद्धश क्त्या संस्तुवति जिनं मुदा श्रुजसागरपवनाब्जविकरमासमेत ते लजंति सुख सदा॥१०॥

॥ अथ श्रीमहुरपार्श्वाष्टकप्रारम्भ ॥

द्रुतविलंबितछंद ॥ विबुधमानवमानसनंदन विजवदानविधौ हरिचंदन ॥ नि खिलसन्यजनै कृतवदनं जजत पार्श्वजिनं महुरानिध ॥ १ ॥ युगलकौशिकसा म्यतराशयं जुवनजानुनिवासघनाश्रयं ॥ विषयवारणकेसरिसन्निजं जजत० ॥२॥ अरुणकोटिविजाधिकजास्वर कुमुदबाधवशुभ्रतरानन ॥ वरगजीरगुणोत्तमसागर जजत० ॥३॥ जविकपद्मविजासनजास्कर जगति जावप्रकाशनदीपक ॥ नयनपाटव पावनतत्रक जजत० ॥४॥ रचितकामववारिदसचयरखिलधैर्यसमन्वितचेतसं॥ विकट कर्मसमीरणजोगिन जजत० ॥ ५ ॥ कमठनिर्म्मितपाशुकदबके स्थिरतरोत्कटजाव विराजित ॥ जगति दुर्जनसर्पविषापह जजत० ॥६॥ प्रशमजूषणजूषणजूधन सुजग जाग्यगुणावलिमदिर ॥ धवलकीर्तियशोवरधासित जजत० ॥ ७ ॥ सकलसघसमीहि तक ृक निचितविघ्नपराजवर्त्तक ॥ अतिशयाद्भुतचारुचरित्रक जजत० ॥ ८ ॥ हरि णीछंद ॥ महुरजिनप नित्यं वदे शिवोदधिवर्द्धन शशिनमनिशं किएवध्वाते दिनेश महोदय ॥ स्तवनजणने चिताल्हादे रुतादरसेवकेविविधधनद विश्वे विश्वे जिनेश नतानने ॥९॥ द्रुतविलंबितछंद ॥ महुरपार्श्वजिनेश्वरसंस्तव पठति य. सुधियोपसि नित्यश ॥ वसति तस्य गृहे कमला ऽखिला स्थिरतरासुमतां वरदायिनी ॥ १० ॥

॥ अथ सत्यपुरीय श्रीमहावीरस्तवनप्रारम्भ ॥

द्रुतविलंबितछंद ॥ त्वमसि सद्गुणनदनमदरस्त्वमसिमेरुलतावलिमंमप ॥ त्वमसि खेचरनाकिनरस्तुतस्त्वमसि रूपवशीकृतविष्टप ॥ १ ॥ त्वमसि योगिजनौ घशिरोमणिस्त्वमसि कांतिविकाशितदिग्गण. ॥ त्वमसि जाषितरजितनागर स्त्वम सि सिद्धिवशारतिमोहित ॥ २ ॥ त्वमसि जड़्कर करुणालयस्त्वमसि जक्तचकोर निशाकर ॥ त्वमसि दर्शनदर्पितमानवस्त्वमसि संसृतिसागरपोतक ॥ ३ ॥ त्वमसि मोहमहीरुहमुद्गरस्त्वमसि धर्मधनो धनकामद ॥ त्वमसि सशयवायुजुजंगम

त्वमसि दर्शितजीवदयापथ. ॥ ४ ॥ त्वमसि धारितशीलविभूषणस्त्वमसि कामितदामसुरद्रुम ॥ त्वमसि देवनराधिपवंदितस्त्वमसि जाड्यतमिस्त्रननोमणिः ॥ ५ ॥ त्वमसि कर्मवनावनिपावकस्त्वमसि सेवकपूजितपंकजः ॥ त्वमसि जन्मजरामृतिवारणस्त्वमसि शाश्वतमोक्षपदस्थितः ॥ ६ ॥ त्वमसि मंजुलसत्कुलदीपकस्त्वमसि सर्वपदार्थविशारद ॥ त्वमसि लोकनतो नतवत्सल स्त्वमसि देवशिलीमुखपुष्कर. ॥ ७ ॥ त्वमसि नाथमनोहरलक्षणस्त्वमसि समतजीवगण सदा ॥ त्वमसि संवरमार्गविधायकस्त्वमसि दानगुणाल्पितकल्पक ॥ ८ ॥ त्वमसि चित्रकरातिशयांचितस्त्वमसि सूरिततीश्वरसेवित ॥ त्वमसि दुःखिजनावनतत्परस्त्वमसि हारनिन· क्षितिमंडले ॥ ९ ॥ त्वमसि शिष्टनरामरसंगतस्त्वमसि लोकचमत्कृतनिर्मम ॥ त्वमसि केवलिसाधुनतो मुदा त्वमसि कुग्रहदोषनिवारकः ॥ १० ॥ त्वमसि सद्रतनाकरनूपोपमस्त्वमसि वीतमदो विशदाशय ॥ त्वमसि तीर्थपते रुचिराव्हयस्त्वमसि गुप्तिपवित्रितमानसः ॥ ११ ॥ त्वमसि बुद्धिपराजितगीपति स्त्वमसि हाटकसन्निभविग्रह ॥ त्वमसि भाग्यविनाशनिकेतनस्त्वमसिलोभमहीधरवज्रक ॥ १२ ॥ त्वमसि सप्तनयार्णवतारकस्त्वमसि दुर्घटसत्यनयाध्वगः ॥ त्वमसि सम्मदसंततिकारकस्त्वमसि सिद्धिकरो वरदायक ॥१३॥ त्वमसि विश्वजगज्जनवल्लभस्त्वमसि रक्षितभूतकदंबक ॥ त्वमसि दुर्जनदुस्थहरोनिशं त्वमसि विस्तृतलोचनरंजक ॥१४॥ त्वमसि विश्वपति· श्रितबांधवस्त्वमसि वक्रतिरस्कृतचंद्रमा ॥ त्वमसि वैरिसमुद्रघटोद्भवस्त्वमसि तीर्थकर प्रतिबोधद· ॥ १५ ॥ त्वमसि भव्यशिखंडिबलाहकस्त्वमसि बंधुरमूर्तिधरोऽजर· ॥ त्वमसि सर्वविदुर्विगतातुरस्त्वमसि संयममंडनमंडित ॥ १६ ॥ त्वमसि शातरसाश्रितचेतनस्त्वमसि पौरुषनिर्जितकार्मणः ॥ त्वमसि दुर्लभबोधिनिबंधनस्त्वमसि कामदुघाधिकदानद· ॥ १७ ॥ त्वमसि संचितपुण्यनिधि परस्त्वमसि विघ्नसरीसृपगारुडः ॥ त्वमसि शुभ्रयशोभरमंदिरस्त्वमसि संघजयोन्नतिदर्पदः ॥ १८ ॥ त्वमसि सत्वहितो मतिवर्द्धनस्त्वमसि धर्मसरोजसर सम ॥ त्वमसि चक्रिनतो भविशेखरस्त्वमसि पारगत. परमेश्वरः ॥ १९ ॥ त्वमसि सत्यपुरामलभूषणस्त्वमसि सश्रितपादमृगाधिप· ॥ त्वमसि केवलयुग्मविराजितस्त्वमसि वीरजिनो जिननायक· ॥ २० ॥ त्वमसि शासनपोतनियामकस्त्वमसि साधुदयालुलनामकः॥त्वमसि सौख्यकरस्त्रिशलांगजस्त्वमसि विश्वगुरु· शुभसागर ॥ २१॥ हरिणीछंद ॥ जयति सततं वीर· गभुर्नवदधिपारगो जगति तिलक पापध्वांते गभस्तिरनुत्तरः ॥ कुशलनिलयस्तीर्थस्वा

तिकातिनिकेतनमगिनुत ॥६॥ निजवशवत्तसकमार्तिहर रवनिर्जितमेघनदं शिवद॥ दयितं नुवि विश्वजनीनतम नतनूतगण जितलोनजटं ॥ ७ ॥ शरणाश्रितपालकसु क्तिपदं दधत वरगातरस नवम ॥ महसेड्मणिप्रनदेहधर धरणेड्निषेवितपार्श्वयुग ॥८॥ अमम नुतपार्श्वजिन सततं तपसा हतसिद्धमनतबलं ॥ ललनाजनसगविरक्त मलं मलवर्जितमुत्तरसौख्यधर ॥९॥नवनि॰ कुलक॥ सुरराजखेचरनागपुरदरधरणिरा जसुसेवित श्रीपार्श्वजिनेश्वर नमितसुरेश्वरपद्मावतीसंस्तुत॥ येऽनंतनत्तया विशुद्धश क्त्या सस्तुवति जिन सुदा ध्रुनसागरपठनाद्भविकरमासमेत ते लनंति सुखं सदा॥१०॥

॥ अथ श्रीमद्गुरपार्श्वाष्टकप्रारंन्न ॥

द्रुतविलंवितछंद ॥ विबुधमानवमानसनदन विनवदानविधौ हरिचंदनं ॥ नि खिलसन्यजनै रुतवदन नजत पार्श्वजिनं मद्गुरानिध ॥ १ ॥ युगलकौशिकसा म्यतराशय नुवननानुनिवासघनाश्रय ॥ विपयिवारणकेसरिसन्निनं नजत० ॥२॥ अरुणकोटिविनाधिकनास्वर कुमुदबाधवशुभ्रतराननं ॥ वरगनीरगुणोत्तमसागर नजत० ॥३॥ नविकपद्मविनासननास्कर जगति नावप्रकाशनदीपकं ॥ नयनपाटव पावनतत्रक नजत० ॥४॥ रचितकामठवारिदसचयैरखिलधैर्यसमन्वितचेतस॥ विकट कर्मसमीरणनोगिन नजत० ॥ ५ ॥ कमठनिर्मितपाशुकदवकै स्थिरतरोत्कटनाव विराजित ॥ जगति डुर्जनसर्पविषापह नजत० ॥६॥ प्रशमनूषणनूषणनूघन सुनग नाग्यगुणावलिमदिर ॥ धवलकीर्तियशोबरघासित नजत० ॥ ७ ॥ सकलसघसमीहि तक र्तृकं निचितविन्नपराजवहर्तृक ॥ अतिशयाद्भुतचारुचरित्रकं नजत० ॥ ८ ॥ हरि णीछंद ॥ मद्गुरजिनप नित्य वदे शिवोदधिवर्द्धन शशिनमनिशं किल्बिषध्वांते दिनेश महोदयं ॥ स्तवननणने चिताल्हादे कृतादरसेवकेविविधधनदं विश्वे विश्वे जिनेश नताननं ॥९॥ द्रुतविलंबितछद॰ ॥ मद्गुरपार्श्वजिनेश्वरसस्तव पठति य॰ सुधियोपसि नित्यश॰॥ वसति तस्य गृहे कमला ऽखिला स्थिरतरासुमता वरदायिनी ॥ १० ॥

॥ अथ सत्यपुरीय श्रीमहावीरस्तवनप्रारम्न॰ ॥

द्रुतविलंबितछंद ॥ त्वमसि सद्गुणनदनमदरस्त्वमसिमेरुलतावलिमंमप ॥ त्वमसि खेचरनाकिनरस्तुतस्त्वमसि रूपवशीकृतविष्टप ॥ १ ॥ त्वमसि योगिजनौ वशिरोमणिस्त्वमसि कांतिविकाशितदिग्गण॰ ॥ त्वमसि नाषितरजितनागर स्त्वम सि सिद्धिवशारतिमोहित ॥ २ ॥ त्वमसि नइकर॰ करुणालयस्त्वमसि नक्तचकोर निशाकर ॥ त्वमसि दर्शनदर्पितमानवस्त्वमसि संसृतिसागरपोतक ॥ ३ ॥ त्वमसि मोहमहीरुहमुंजरस्त्वमसि धर्मधनो धनकामद ॥ त्वमसि सशयवायुभुजगम

त्वमसि दर्शितजीवदयापथः ॥ ४ ॥ त्वमसि धारितशीलविभूषणस्त्वमसि कामितदामसुरद्रुम ॥ त्वमसि देवनराधिपवंदितस्त्वमसि जाड्यतमिस्रनभोमणि. ॥ ५ ॥ त्वमसि कर्मवनावनिपावकस्त्वमसि सेवकपूजितपंकज ॥ त्वमसि जन्मजरामृतिवारणस्त्वमसि शाश्वतमोक्षपदस्थितः ॥ ६ ॥ त्वमसि मंजुलसत्कुलदीपकस्त्वमसि सर्वपदार्थविशारद. ॥ त्वमसि लोकनतो नतवत्सल स्त्वमसि देवगिलीमुखपुष्करः ॥ ७ ॥ त्वमसि नाथमनोहरलक्षणस्त्वमसि संमतजीवगण सदा ॥ त्वमसि संवरमार्गविधायकस्त्वमसि दानगुणाल्पितकल्पक· ॥ ८ ॥ त्वमसि चित्रकरातिशयांचितस्त्वमसि सूरिततीश्वरसेवित ॥ त्वमसि दुःखिजनावनतत्परस्त्वमसि हारनिभ. क्षितिमंडले ॥ ९ ॥ त्वमसि शिष्टनरामरसंगतस्त्वमसि लोकचमत्कृतनिर्मम ॥ त्वमसि केवलिसाधुनतो मुदा त्वमसि कुग्रहदोषनिवारक· ॥ १० ॥ त्वमसि सद्व्रतभारवृषोपमस्त्वमसि वीतमदो विशदाशय ॥ त्वमसि तीर्थपते रुचिराढ्यस्त्वमसि शुसिपविभ्रितमानस. ॥ ११ ॥ त्वमसि बुद्धिपराजितगीःपति स्त्वमसि हाटकसन्निभविग्रह· ॥ त्वमसि भाग्यविनाशनिकेतनस्त्वमसिलोभमहीधरवज्रक· ॥ १२ ॥ त्वमसि सप्तनयार्णवतारकस्त्वमसि दुर्घटसत्यनयाध्वग ॥ त्वमसि सम्मदसंततिकारकस्त्वमसि सिद्धिकरो वरदायक.॥१३॥ त्वमसि विश्वजगज्जनवत्सलस्त्वमसि रक्षितभूतकदंबक ॥ त्वमसि दुर्नयदुस्थहरोनिशं त्वमसि विस्तृतलोचनरंजकः ॥१४॥ त्वमसि विश्वपति. श्रितबाधवस्त्वमसि वक्रतिरस्कृतचंद्रमा ॥ त्वमसि वैरिसमुद्रघटोद्भवस्त्वमसि तीर्थकरः प्रतिबोधद· ॥ १५ ॥ त्वमसि भव्यशिखंडिबलाहकस्त्वमसि बंधुरमूर्तिधरोऽजर ॥ त्वमसि सर्वविदुर्विगतातुरस्त्वमसि संयममंडनमंडित ॥ १६ ॥ त्वमसि शांतरसाश्रितचेतनस्त्वमसि पौरुषनिर्जितकार्मण· ॥ त्वमसि दुर्लभबोधिनिबंधनस्त्वमसि कामदुघाधिकदानद· ॥ १७ ॥ त्वमसि संचितपुण्यनिधि· परस्त्वमसि विघ्नसरीसृपगारुड. ॥ त्वमसि शुभ्रयशोभरमंदिरस्त्वमसि संघजयोन्नतिहर्षद ॥ १८ ॥ त्वमसि सत्वहितो मतिवर्द्धनस्त्वमसि धर्मसरोजसर सम ॥ त्वमसि चक्रिनतो भविशेखरस्त्वमसि पारगत परमेश्वर ॥ १९ ॥ त्वमसि सत्यपुरामलभूषणस्त्वमसि सश्रितपादमृगाधिप· ॥ त्वमसि केवलयुग्मविराजितस्त्वमसि वीरजिनो जिननायक· ॥ २० ॥ त्वमसि शासनपोतनियामकस्त्वमसि साधुदयाकुलनामक ॥त्वमसि सौख्यकरस्त्रिशलांगजस्त्वमसि विश्वगुरु गुणसागरः॥ २१॥ हरिणीछंदः॥ जयति सततं वीरः शंभुर्भवोदधिपारगो जगति तिलकः पापध्वांते गभस्तिरनुत्तरः ॥ कुशलनिलयस्तीर्थस्वा

मी सुरासुरसंस्तुतो विदितमहिमा विश्वे विश्वेश्वरार्चितपत्कज.॥२२॥ वशस्थछंद॥
कुलावतंसं यतिधर्म्मदेशकं कलविकापारगमगिपालकं ॥ नवीमि वीर मतिद हिता
वहं मनोर्थसपादनकामकुंभक ॥ २३ ॥ भुजंगप्रयातछंदः ॥ प्रभु देववद्यं जिन वि
श्वनाथं जगच्चारुचूडामणि वीरनाथं ॥ स्तुवेऽहं जितारिं नतस्वर्गिनाथं सदा शांति
कारं नरेंद्राधिनाथं ॥ २४ ॥ स्त्रग्धराछंद ॥ श्रीराज वीरदेव प्रणतसुरमणिं देवमर्त्या
धिराजं कल्याणांभोधिवृद्धौ विमलशशधर भाग्यसौभाग्यकार ॥ ये भव्या संस्तुव
ति प्रतिदिनमनघं चारुभक्त्या त्रिसध्य प्रख्याति ते लभते त्रिभुवनविदिता कीर्तिप्रा
ग्भारकर्त्री ॥ २५ ॥ तुभ्यं नम समयधर्म्मनिवेदकाय तुभ्यं नमस्त्रिभुवनेश्वरशेख
राय ॥ तुभ्य नम. सुरनरामरसेविताय तुभ्य नमो जिनजनार्चितपत्कजाय ॥१॥ तु
भ्य नमोऽखिलपते हरिचंदनाय तुभ्य नमो वरकुलांबरभास्कराय॥तुभ्यं नम प्रणतदे
वनराधिपाय तुभ्यं नम प्रवररूपमनोहराय ॥ २ ॥ तुभ्य नमो हरिणनायकनाय
काय तुभ्यं नमो यतितितिप्रतिपालकाय ॥ तुभ्यं नमो विकचनीरजलोचनाय तुभ्यं
नमस्तनितनादविराजिताय ॥ ३ ॥ तुभ्यं नम कुशलमार्गविधायकाय तुभ्यं नमोवि
कटकष्टनिषेधकाय ॥ तुभ्यं नमो दुरितरोगचिकित्सकाय तुभ्यं नमस्त्रिजगतो हृदि
भूषणाय ॥ ४ ॥ तुभ्यं नमो दलितमोहतमोभराय तुभ्यं नम कनकसन्निभभूघना
य ॥ तुभ्यं नमोप्यखिलसद्गुणमंदिराय तुभ्य नमो मुखकलादिऽतचंद्रिकाय ॥ ५ ॥
तुभ्य नमोऽतिशयराजिविभूषिताय तुभ्य नम कुमतितापसुभंजनाय ॥ तुभ्य न
मो मुखपयोधिवहित्रकाय तुभ्यं नमो विगतकैतवमत्सराय ॥ ६॥ तुभ्यं नमो विदि
तभव्यजनाशयाय तुभ्यं नमो निखिलसंशयवारकाय ॥ तुभ्यं नम प्रथितकीर्त्तिय
शोन्विताय तुभ्य नमो जितहृषीकमुनीश्वराय ॥ ७ ॥ तुभ्य नमोप्रमितपुण्यनिर्मि
ताय तुभ्यं नम सकलवाङ्मयपारगाय ॥ तुभ्यं नमो नविकचातकनीरदाय तुभ्यं
नमश्चरणवैभवदायकाय ॥-८ ॥कुलकम् ॥ वीराष्टक पठति य सततं त्रिसंध्य स्य
क्त्वा सदा प्रबलमीहजडं प्रमाद ॥ तस्यास्ति मक्षु कुरुते कमला निवास कल्याणसा
गर भुवामसतामभीष्टं ॥ ९ ॥

॥ अथ श्रीलोडणपार्श्वनाथस्तवनप्रारंभ ॥

श्रीकर कष्टहर्तारं विधिवादप्रकाशकं ॥ धिया तर्जितवागीश परमात्मानमन्वहं ॥१॥
क्षमागारं कृपापात्रं गताधिव्याधिदूषण ॥ लेके तु सर्वकार्येषु श्रीप्रदं दलितामयं॥२॥
धनधान्यकरं लोके रमाकेलिपदं पर ॥ ममतामदमानौघमूर्खतादोषवर्जितं ॥ ३ ॥
आर्त्तिसंतापभेत्तारं सूरिश्रेणिशिरोमणिं ॥ रिपुसारगसारग मगिनाथनिषेवितं ॥ ४ ॥

तेजसां मंदिर रम्यं वारिताशेषडुर्जनं ॥ निःसीमं सर्वगोत्राणां श्रीमंतं गुणसागर ॥ ५ ॥ कथिताचारमार्गौघं कल्याणकमले विधुं ॥ प्रणताशेषदेवेशं शासनं कांतन्नूषनं ॥ ६ ॥ गदितागमसंदोह रसनामृतसुंदर ॥ सूराधिकप्रतापाग्निं रिक्थद दमितेंद्रियं ॥ ७ ॥ नागेंद्रविबुधे सेव्यं लोकानां शांतिकारकं॥ जडताया विलेत्तारं नयनाल्हादकारणं ॥८॥ पालकं सर्वसत्वाना पार्श्वयक्षेण पूजितं ॥ नाकिमानववद्यांन्द्रिं नाथ नाथं जगत्प्रन्नुं ॥ ए ॥ क्रियासंततिनेतार त्रासितानेकदोपकं ॥ कृतांतार्थविचारङ्गं तारतारुण्यराजितं ॥ १०॥ संसारसागरे पोतं घस्मराधिविवर्जितं ॥ सर्वज्ञं मेघगंन्नीर हितं विश्वस्य सर्वदा ॥ ११ ॥ तेजोनिधिं मुदा पार्श्वं नवीमि लोमणाजिधं ॥ कल्याणसागराख्येन संस्तुतं ह्यादिमाक्षरैं. ॥ १२ ॥ द्वादशनि. कुलक ॥ श्रीमल्लोडण पार्श्वनाथमवनौ विख्यातगोत्रानिधिं ये नव्या वरन्नावन्नक्तिसहिता. पूजति सौख्यार्थिन ॥ ते सत्वा सुखमानकीर्त्तिकलिता कल्याणतुगा परा जायते नुवने प्रतापरुचिरा आदेयवाचः सदा ॥ १३ ॥

॥ अथ श्रीसेरीशपार्श्वाष्टकप्रारंन्नः ॥

कामौघकर्त्तारमशेषदेवाधीशैस्सदार्चितपादपद्मं ॥ कल्याणकारं वरनीलवर्णं सेरीशपार्श्वं नुथ लोडणाख्यं ॥ १ ॥ सत्पुण्यवल्लीवनवारिधारं निःशेषन्नव्यावलिपूरिताशं ॥ त्रैलोक्यछत्रं नुवनाधिनाथं सेरी० ॥२॥ सारंगवाणीजितचित्तदार्ढ्यं सारंगगंन्नीरनिनादकांतं ॥ सारंगसारांबकयुग्मराजं सेरी० ॥३॥ विश्वेषु सत्वेषु कृपानिधानं सम्यक्त्वरत्नान्नरणांकितांगं ॥ दुःखागपर्शुं दलितारिवर्गं सेरी० ॥४॥ अपारसंसारसमुद्र पोतं सर्वज्ञमाचारपवित्रवंशं॥राध्दांतशास्त्रार्थरहस्यदक्षं सेरी०॥५॥ वाणीरसानंदितविश्वविश्व तीर्थंकरं नागपुरेशपूज्यं ॥ सर्वत्र विख्यातयशोन्निरामं सेरी० ॥६॥ तेजोनिधिं कामितकामकुंन्नं सौजन्यसौहार्दविलासपात्रं ॥ कल्याणसूर्यादिवितानहेतु सेरी० ॥ ॥ ७ ॥ आदित्यचंद्राधिकदेहन्नासं सत्प्रातिहार्याष्टकराजिराज ॥ स्फाराकृतां मोहितदेवदेव सेरी० ॥८॥ कलशः ॥ एव कल्याणवद्य त्रिनुवनतिलकं लोडणाह्वं सुपार्श्वं कृत्वैकाग्र्यं स्वचित्ते नवसफलकृते ज्ञानसपत्तिसिध्द्यै॥नित्यं ध्यायंति नव्याजिनसमयरता शुन्नलेश्यान्निरामास्तेषां ह्यर्थप्रकामं नवति च सदने मञ्जुपद्मानिवास ॥ ए ॥

॥ अथ श्रीसंन्नवनाथाष्टकप्रारंन्न ॥

लावण्यगेहं कनकहेमवर्णं ह्यश्वोत्सिन सुदरवाहचिन्हं ॥ लक्ष्मीकलापार्णवधिष्ण्यनाथं देवैर्नतं सन्नवनाथमीडे ॥ १ ॥ ज्येनांगज दारुणकर्मशत्रौ वीर वर पूतचरित्रशोन्नं ॥ क्षेमास्पदं सद्गुणरत्नखानिं देवै० ॥२॥ इक्ष्वाकुवंशं वरतिग्मरश्मि

राकेंडुवक्त्रं गतवक्रमाद्यं ॥ अज्ञानवैश्वानरशांतिनीरं देवै० ॥ ३ ॥ डुःखोदधौ पीत समुद्रमिद्धं ॥ सत्प्रातिहार्याष्टकराजिराज ॥ क्षमानिधिं विस्तृतपुण्यमूर्त्तिं ॥ देवै० ॥ ४ ॥ नव्यैर्मुदा सेवितपादपद्मं सज्ञानवज्राहतमोहभूधर ॥ संसारदावाकुल मर्त्यमेघ देवै०॥५॥सत्कीर्त्तिपात्रं डुरितारिसेव्य जगज्जनानंदकर शरण्यं ॥ कारुण्यसयुक्तपवित्रचित्तं देवै० ॥६॥ कुंदार्द्धदंतं कजलोचनं वै वपुः श्रियातर्जितसूर्यकांति ॥ पापांधकारे ऽमलदीपक नं देवै० ॥ ७ ॥ प्रसादनात्तत्परसेवकस्येप्सितार्थदाने सुरदेववृक्षं ॥ सुखैरनेकैर्युतचारुदेहं देवै० ॥८॥ कलश ॥ इत्यष्टकं श्रीजिनसंजवस्य पठंति ये मज्जुनावयुक्त्या॥तेषां गृहे पुण्यनिधाननव्या कल्याणकाराश्च नवंति ऋद्ध्य ॥ए॥इति श्रीमज्जिननायकस्य श्रीसूर्यपुरनूषणस्य श्रीसंजवनाथस्याष्टकं संपूर्णं॥

॥ अथ श्रीसूक्तमुक्तावली प्रारंज.॥

मालिनी छंद ॥ सकलसुकृतवल्लीवृंदजीमूतमालां निजमनसि निधाय श्रीजिनेंद्रस्य मूर्त्तिं ॥ ललितवचनलीलालोकनापानिबद्धैरिह कतिपयपद्यैः सूक्तमालां तनोमि ॥ १ ॥ अथक्रमसंग्रहकाव्यं ॥ शार्दूलविक्रीडितछंद ॥ तत्त्वज्ञानमनुष्यसज्जनगुणान्यायप्रतिज्ञाक्षमा चित्ताद्यं च कुलं विवेकविनयो विद्योपकारोद्यमा ॥ दानक्रोधदयादितोरविषया साक्षात्प्रमादस्तथा साधुश्रावकधर्मवर्गविषये ज्ञेया प्रसंगाह्यमी ॥ २ ॥ अथदेवतत्त्वविषे मालिनीछंद ॥ सकल करमवारी मोक्षमार्गाधिकारी ॥ त्रिजुवनउपगारी केवलज्ञानधारी ॥ नविजन नित सेवो देव ए नक्तिनावे ॥ इहिज जिन नजतां सर्व संपत्ति आवे ॥ ३ ॥ जिनवरपदसेवा सर्वसंपत्तिदाई ॥ निशिदिन सुखदाई कल्पवल्ली सहाई ॥ नमि विनमि लहीजे सर्व विद्या वडाई ॥ कृषन जिनह सेवा साधतां तेह पाई ॥ ४ ॥ अथगुरुविषे ॥ स्वपरसमयजाणे धर्मवाणी वखाणे ॥ परम गुरुकह्याथी तत्त्व नीशंक माणे॥ नविककज विकाशे नानुज्यूं तेज नासे ॥ इहज गुरु नजो जे शुद्धमार्ग प्रकाशे ॥ ५ ॥ सुगुरुवचनसंगे निस्तरेजीवरंगे ॥ निरमल नर थाए जेम गंगाप्रसंगे ॥ सुणिय सुगुरु केशी॥ वाणि रायप्रदेशी ॥ लहि सुरनव वासी जे हसे मोक्षवासी ॥ ६ ॥ अथधर्मविषे ॥ जलनिधि जलवेला चंद्रथी जेम वाधे ॥ सकल विनवलीला धर्मथी तेम साधे ॥ मनुअ जनमकेरो सार ते धर्म जाणी ॥ नजिनजि नवि नावे धर्म ते सौख्य खाणी ॥७॥ इह धरम पसाये विक्रमे सत्य साध्यो ॥ इह धरम पसाये शालिनो साक वाध्यो ॥ जस नर गज वाजी मृत्तिकाना जिकेई ॥ रणसमय थया ते जीव साचा तिकेई ॥ ॥ ८ ॥ अथज्ञानविषे ॥ तन धन ठकुराई सर्व ए जीवनेहे ॥ पण इक डुहिलूं

ज्ञान संसारमां छे ॥ नवजलनिधि तारे सर्व जे दुःख वारे ॥ निजपरहित हेते ज्ञान ते का न धारे ॥ ए ॥ यवऋपि इक गाथा बोधयी जै निवाख्यो ॥ इक पदथि चिलातीपुत्र संसार वाख्यो ॥ श्रुतजणत सुज्ञानी मास तुंबादि थावे ॥ श्रुतथि अन य हाथे रोहिण्यो चोर नावे ॥ १०॥ अथमनुष्यजन्मविषे. ॥ जवजलनिधि जमंतां कोइ वेला विशेषे ॥ मनुजजनम लाधो दुल्लहो रत्न लेखे ॥ सफल कर सुधर्मा ज न्म ते धर्मयोगे ॥ परजवसुख जेथी मोक्षलक्ष्मी प्रजोगे ॥ ११ ॥ मनुजजनम पा मी आलसे जे गमेछे ॥ शशिनृपतिपरे ते शोचनाथी जमेछे ॥ दुलह दश कथा यूं मानुखोजन्म ए छे.॥ जिनधरम विशेषे जोडता सार्थ ते छे ॥ १२ ॥ अथसज्ज्ञान विषेः ॥ सदयमन सदाई दुःखिया जे सहाई ॥ परहित मतिदाई जास वाणी मि ठाई ॥ गुणकरि गहराई मेरुज्यू धीरताई॥ सुजनजन सदाई तेह आनंददाई ॥१३॥ जइ दुरजन लोके दूहव्या दोष देई ॥ मनमलिन न थाए सज्जना तेह तेई ॥ दुप दजनकपुत्री अंजना कष्टयोगे ॥ कनकजिम कशोटी ते तिसी शील जोगे ॥ १४ ॥ अथगुणविषे ॥ गुणगहि गुण जेमा ते बहू मान पावे ॥ नर सुरनिगुणे ज्यूं फूल शीशे चढावे ॥ गुणकरि बहु माने लोक ज्यूं चड्माने ॥अति कृश जिम माने पू र्णने त्यूं न माने ॥ १५ ॥ मलयगिरि कडे जे जबुलिंबादि सोई ॥ मलयजतरु संगे चदना तेइ होई ॥ इम लहिय वडाज्यूं कीजिये संग रगे ॥ गजशिरचडि बेठी ज्यूं अजा सिंहसंगे ॥ १६ ॥ अथन्यायविषे ॥ जग सुजस सुवासे न्यायलछी उपासे॥ व्यसन दुरित नासे न्यायथी लोक वासे ॥ इम हृदय विमासी न्याय अंगी करी जे॥अनय परिहरीजे विश्वने वश्य कीजे ॥ १७ ॥ पशु पण तस सेवे न्यायथी जे न चूके ॥ अनयपथ चले जे जाइ ते तास मूके ॥ कपिकुल मिलि सेव्यो रामने सील नामी ॥ अनयकरि तज्यो ज्यूं जाइए लंकस्वामी ॥१८॥ हय गय न सहाई युद्ध कीर्त्ति सदाई ॥ रिपुविजय वधाई न्याय ते धर्मदाई॥ धरमनय धरे जे ते सुखे वैरि जीपे ॥ धरमनय विहूणा तेहने वैरि कोपे ॥ १९ ॥ धरमनय पसाये पांमवा पंच तेई ॥ करि युधे जय पाम्या राज्यलीला लहेई ॥ धरमनय विहूणा कौरवा गर्व माता रणसमय विगूता पांमवा तेह जीत्या ॥ २० ॥ अथप्रतिज्ञाविषे ॥ शुन अशुन जिकांई आदर्खु जे निवाहे ॥ रवि पण तस जोवा व्योम जाणी वगाहे ॥ करिगहन तिवाहे तास निस्संत आपे ॥ मलिन तनु पखाले सिंधुमां सूर आपे ॥ २१ ॥ पुरुषरयणं मोटा जे गणीजे धराये ॥ जिण जिम प डिवज्यूं ते न छांडे पराये ॥ गिरिश विष धख्यो जे ते न अद्यापि नाख्यो ॥ दुर

गति नर लेई विक्रमादित्य राख्यो ॥ २२ ॥ अथ उपशमविषे ॥ उपशम हित
कारी सर्वदा लोकमांही ॥ उपशम धर प्राणी ए समो सौख्य नांही ॥ तप ज
प सुर सेवा सर्व जे आदरे छे ॥ उपशमविण जे ते वारि मथा करे छे ॥ २३ ॥
उपशम रस लीणां जास चित्ते विराजी ॥ किम नर नव केरी रिद्धिमा तेह रा
जी ॥ गज मुनिवर जेहा धन्य ते ज्ञान गेहा ॥ तपकरि कृश देहा शांति पीयू
प मेहा ॥२४॥ अथ त्रिकरणशुद्धिविषे ॥ जग जन सुखदाई चित्त एवु सदाई ॥
मुखे अति मधुराई साच वाचा सुहाई ॥ वपु परहित हेते त्रण्य ए शुद्ध जेने
॥ तप जप व्रत सेवा तीर्थ ते सर्व तेने ॥ २५ ॥ मण वच तनु त्रणे गंगज्यूं
शुद्ध जेने ॥ निज घर निवसतां निर्जरा धर्म तेने ॥ जिम त्रिकरण शुद्धे डीप
दी अंब वाव्यो ॥ घर सफल फलंतो शील धर्मे सुहाव्यो ॥ २६ ॥ अथ कुलविषे
सहज गुण वशे ज्यूं शंखमां श्वेतताई ॥ अमृत मधुरताई चंद्रमां शीतलाई
कुवलय सुरजाई इक्षुमां ज्यूं मिठाई ॥ कुलज मनुजकेरी त्यूं सुनावे नलाई ॥
॥२७ ॥ जिण घर वर विद्या जो हुवे तो न ऋद्धि ॥ जिण घर डुय लाजे तो
न सौजन्य वृद्धि ॥ सुकुल जनम योगे ते त्रणे जो लहीजे ॥ अनय कुमर ज्यूं
तो जन्म साफल्य कीजे ॥ २८ ॥ अथ विवेकविषे ॥ हृदय घर विवेके प्राणि
जो दीप वासे ॥ सकल नव तणो तो मोह अधार नाशे ॥ परम धरम वस्तु त
त्व प्रत्यक्ष नासे ॥ करम नर पतंगा स्वाग तेने विधसे ॥ २९ ॥ विकल नर
कहीजे जे विवेके विहीना ॥ सकल गुण नथा जे ते विवेके विलीना ॥ जिम सुम
ति पुरोधा भूमि गेहे वसते ॥ उगति कुगति कीधी जे विवेके उगंते ॥ ३० ॥
अथ विनय विषे ॥ निशिविण शशि सोहे ज्यूं न शोले कलाई ॥ विनयविण
न सोहे त्यूं न विद्या वमाई ॥ विनयवहि सदाई जेह विद्या सहाई ॥ विनय
विण न कांई लोकमा अक्षताई ॥ ३१ ॥ विनय गुण वहीजे जेहथी श्री वरीजे ॥
सुर नर पति लीला जेह हेलां लहीजे ॥ पर तणय शरीरे पेशवा जे सुविद्या ॥
विनय गुणथि लाधी विक्रमे तेह विद्या ॥ ३२ ॥ अथ विद्याविषे ॥ अगम म
ति प्रयुंज्ये विद्यर्ये कोन गजे ॥ रिपु दल बल भंजे विद्यये विश्व रजे ॥ धनथि
अखय विद्या सीख एणे तमासे ॥ गुरुमुख भणि विद्या दीपका जेम नासे
॥ ३३ ॥ सुर नर सुप्रसत्ते विद्यर्ये वैरि नाशे ॥ जगि सुजस सुवासे जेह वि
द्या अपासे ॥ जिणकरि नृप रज्यो भोज वाणे मयूरे ॥ जिणकरि कुमारिंदो
रीजव्यो हेम सूरे ॥ ३४ ॥अथउपकारविषेः॥ तन धन तरुणाई आयु ए चचला छे॥

परहित करि छे जे तादृश ए समे छे ॥ जब जनम जरा जां लागशे कव साई ॥ कहि न तिण समे तो कोण थाशे सहाई ॥ ३७ ॥ नहि तरु फल खावे ना नदी नीर पीवे ॥ जस धन परअर्थे सो नले जीव जीवे ॥ नल करण नरिंदा विक्रमा राम जेवा ॥ परहित करवा जे उद्यमी दक्ष तेवा ॥३६॥ ॥अथ उद्यमविषे ॥ रयण निहितरी ने उद्यमे लब्धि आणे ॥ गुरु जगति हरीने उद्यमे शास्त्र जाणे ॥ डुख समय सहाई उद्यमे छे नलाई ॥ अति अलस तजीने उद्यमे लाग जाई ॥ ३७ ॥ नृपशिर निपतंती वीज जात्कारकारी ॥ उद्यम करि सुबुद्धी मंत्रिए ते निवारी ॥ तिम निज सुतकेरी आवती डुर्दशाने ॥ उद्यम करि निवारी ज्ञानगर्ने प्रधाने ॥ ३८ ॥ अथ दानविषे ॥ थिर नहि धन राख्यो तेम नाख्यो न जाए ॥ इणि पर धन जोतां एव गत्या जणाए ॥ इह सुगुण सुपात्रे जेह दे नक्ति नावे ॥ निधि जिम धन आगे साथ तेहीज आवे ॥ ३९ ॥ नल बलि हरिचंदा नोज जे जे गवाए ॥ प्रह समय सदा ते दानकेरे पसाए ॥ इम हृदय विमासी सर्वथा दान दीजे ॥ धन सफल करीजे जन्मनो लाहु लीजे ॥ ४० ॥ अथ शीलविषे ॥ अशुन करम घाले शील शोना दिखाले ॥ गुणगण अजुआले आपदा सर्व टाले ॥ तस नर बहु जीवी रूप लावण्य देई ॥ परनव शिव होई शील पाले जिकेई ॥ ४१ ॥ इण जग जिनदास श्रेष्ठ शीले सुहायो ॥ तिम निरमल शीले शील गंगेव गायो ॥ कलि करण नरिंदा ए समां छे जिकोई ॥ परनव शिव पामे शील पाले तिकोई ॥ ४२ ॥ अथ तपविषे ॥ तरणि किरणथी ज्यूं सर्व अंधार जाए ॥ तपकरि तपथी त्यूं डुख ते दूर थाए ॥ वलि मलिन थयूं जे कर्मचमाल तीरे ॥ किम तनु न पखाले ते तपस्यर्ण नीरे ॥ ४३ ॥ तपविण नवि थाए नाश डु कर्म केरो ॥ तपविण न टले जे जन्म संसार फेरो ॥ तप बलि लहि लब्धी गोतमे नंदिखेणे ॥ तप बलि वपु कीधुं विष्णु वैक्रीय जेणे ॥४४॥ अथ नावविषे ॥ मनविण मिलवो ज्यूं चाववो दंतहीणे ॥ गुरुविण नणवो ज्यूं जीमवो ज्यूं अलूणे ॥ जसविण बहु जीवी जीव ते ज्यूं न सोहे ॥ तिम धरम न सोहे नावना जो न होहे ॥ ४५ ॥ नरत नृप इलाची जीरणश्रेष्ठि नावे ॥ वलि वलकल चीरी केवल ज्ञान पावे ॥ बलनद हरिणो जे पंचमे स्वर्ग जाए ॥ इहज गुण पसाये तास निस्तार थाए ॥ ४६ ॥ अथ क्रोधविषे ॥ तृण दहन दहंतो वस्तु ज्यूं सर्व बाले ॥ गुण करण नरी त्यूं क्रोध काया प्रजाले ॥ प्रसम जलद धारा वन्हि ते क्रोध वारो ॥ तप जप व्रत सेवा प्रीतिवल्ली वधारो. ॥ ४७ ॥

धरणि परशुरामे क्रोधि निक्षत्रि कीधी ॥ धरणि सुभुमराये क्रोधि निर्ब्रह्मि साधी ॥ नरकगति सहायी क्रोध ए दुःख दाई ॥ वरज वरज भाई प्रीति दे जे वधाई ॥ ४८ ॥ अथ मानविषे ॥ विनय वनतणी जे मूल शाखा विमोडे ॥ सुगुण कनककेरी शृंखलाबंध तोडे ॥ अनमद करि दोडे मान ते मत्त हाथी ॥ निजवश करि ले जे अन्यथा दूर एथी ॥ ४९ ॥ विपद विष समो ए मान ते सर्प जाणो मनुज विकल होवे एण मंके जडाणो ॥ इह न परिहस्यो जो मान दुर्योधने तो ॥ निज कुल विणसाडयो मानने जे वहतो ॥ ५० ॥ अथ मायाविषे ॥ निठुरपणु निवारी हीयडे हेज धारी ॥ परिहर छल माया जे असंतोषकारी ॥ मधुर मधुर बोले तोहि विश्वास नाणे ॥ अहि गिलण प्रमाणे मायिने लोक जाणे ॥ ५१ ॥ म कर म कर माया दंभ दोषद्रु छाया ॥ नरय तिरिय केरा जन्म दे जेह माया ॥ बलि नृप छलवाने विष्णु माया वहंता ॥ लघुयपण लह्यूं जे वामनारूप लेता ॥ ५२ ॥ अथ लोभविषे ॥ सुण वयण सयाणे चित्तमा लोभ माणे ॥ सकल व्यसनकेरो मार्ग ए लोभ जाणे ॥ इक खिण पण एने संग रंगे म लागे ॥ नव नव दुख दे ए लोभने दूर त्यागे ॥ ५३ ॥ कनकगिरि कराया लोभथी नंदराये ॥ निज अरथ न आया ते हुआ देवताये ॥ सयल निधि लही जे स्वाय ते विश्व कीजे ॥ मन तनह वरीजे लोभ तृष्णा न कीजे ॥ ५४ ॥ अथ दयाविषे ॥ सुकृत कलप वेली लब्धि विद्या सहेली ॥ विरतिरमण केली शांति राजा महेली ॥ सकल गुण नलेरी जे दया जीव केरी ॥ निज हृदय धरी ते साधिए मुक्ति सेरी ॥ ५५ ॥ निज सरण परेवो शेनथी जेण राख्यो ॥ पट दशम जिने ते ए दया धर्म दाख्यो ॥ तिह हृदय धरीने जो दया धर्म कीजे ॥ नवजलधि तरीजे दुःख दूरे करीजे ॥ ५६ ॥ अथ सत्यविषे ॥ गरल अमृत वाणी साचथी अग्नि पाणी ॥ सूरज सम अहिराणी साच विश्वास खाणी ॥ सुपसन सुर कीजे साचथी ते तरीजे ॥ त्रिण अलिक तजीजे साचवाणी वदीजे ॥ ५७ ॥ जग अपजश वाधे कूडवाणी वदंतां ॥ वसु नृपति कुगत्ये साख कूडी भरता ॥ असत वचन वारी साचने चित्त धारी ॥ वद वचन विचारी जे सदा सौख्यकारी ॥ ५८ ॥ अथ चोरीविषे ॥ पर धन अपहारे स्वार्थपें चोर हारे ॥ कुल अजस वधारे बंध घातादि धारे ॥ पर धन तिण हेते सर्प ज्यूं दूर वारी ॥ जग जन हितकारी होय संतोष धारी ॥ ५९ ॥ निशिदिन नर पामे जेहथी दुःख कोडी ॥ तज तज धन चोरी कष्टनी जेह ओरी ॥ पर विभव हरतो रोहिणी चोर रंगे ॥ इह अभय कुमारे ते ग्रह्यो बुद्धि संगे ॥ ६० ॥

अथ कुशीलविषे ॥ अयश पमह वागे लोकमां लीह लागे ॥ दुरजन बहु जागे जे कुले लाज लागे ॥ सजन पण विरागे मां रमे एण रागे ॥ परतिय रस रागे दो पनी कोडि जागे ॥ ६१ ॥ परतिय रसरागे नाश लंकेश पायो ॥ परतिय रस त्या गे शील गंगेव गायो ॥ द्रुपद जनक पुत्री विश्व विश्वे विदीती॥ सुर नर मिलि सेवी शीलने जे धरंती ॥ ६२ ॥ अथ परिग्रहविषे ॥ शशिउदय वधे ज्यूं सिंधु वेला नलेरी॥ धनकरि मन लाए तेम वाधे घणेरी ॥ दुरित नरग सेरी तूं करे ए परेरी ॥ ममकर अधि केरी प्रीति ए अर्थकेरी॥ ६३ ॥ मनुज जनम हारे ॥ दुःखनी कोडि धारे ॥ परिग्र ह ममता ए स्वर्गना सौख्य वारे ॥ अधिक धरणि लेवा धातकी खंम केरी ॥ सुनुम कुगति पामी चक्रिराये घणेरी ॥ ६४ ॥ अथ संतोषविषे ॥ सकल सुख नराए विश्व तावश्य थाए ॥ नवजलधि तराए दुःख दूरे पलाए ॥ निज जनम सुधारे आपदा दूर वारे ॥ निज धरम वधारे जेह संतोष धारे ॥ ६५ ॥ सकल सुखतणो ते सार सतोप जाणे ॥ कनक रमणिकेरी जेह इछा न आणे ॥ रजनि कपिल बांध्यो स्व र्णनी लोलताए ॥ भमर कमल बांध्यो ते असंतोषताए॥ ६६ ॥ अथ विषयविषे ॥ शिवपद यदि वांछे जेह आनंद दाई ॥ विषसम विषया तो छांमि दे दुःखदाई ॥ मधुर अमृत धारा दूधनी जो लहीजे ॥ अति विरस सदा तो कांजिका संग्रही जे ॥ ६७ ॥ विषय विकल ताणी कीचके भीम नार्या ॥ दशमुख अपहारी जा नकी रामनार्या ॥ रति धरि रहनेमी क्रीडवा नेमि नार्या ॥ जिण विषय न वर्ज्या तेह जाणो अनार्या ॥ ६८ ॥ अथ इंद्रियविषे ॥ गज मगर पतंगा जेह भृंगा कुरं गा ॥ इक इक विषयार्थे ते लहे दुःख चगा ॥ जस परवश पावे तेहनुं शूं कही जे ॥ इम हृदय विमासी इंद्रि पांचे दमीजे ॥ ६९ ॥ विषय वन चरतां इंद्रि जे ऊंटडा ए ॥ निज वश नवि राखे तेह दे दुःखडा ए॥अवश करण मृत्यू ज्यूं अगुप्तें द्रि पामे ॥ स्ववश सुख लह्या ज्यूं कुर्म गुप्तींद्रि नामे ॥ ७० ॥ अथ प्रमादवि षे ॥ सहु मन सुख वांछे दुःखने को न वांछे॥ नहि धरम विना ते सौख्य ए संपजे छे ॥ इह सुधरम पामी का प्रमादे गमीजे ॥ अति अलश तजीने उद्यमे धर्म की जे ॥ ७१ ॥ इह दिवश गया जे तेह पाछा न आवे ॥ धरम समय आले कां प्र मादे गमावे ॥ धरम नवि करे जे आयु आले वहावे ॥ शशि नृपतिपरे त्युं सोच ना अंत पावे ॥ ७२ ॥ अथ साधुधर्मविषे ॥ शार्दूल विक्रीडितछंद ॥ जे पंच व्रत मेरु भार निवहे, निःसंग रंगे रहे ॥ पंचाचार धरे प्रमाद न करे, जे दुःपरिस्सा सहे ॥ पांचे इंद्रि तुरगमा वश करे, मोक्षार्थीने संग्रहे ॥ एवो दुष्कर साधु धर्म धन ते, जे

ज्यूं ग्रहे त्यूं वहे ॥ ७३ ॥ मालिनीछंद ॥ मयण सरव मोमी कामिनी संग तोमी॥ तजिय कनक कोडी मुक्तिसूं प्रीति जोडी ॥ नव नव जय वामी शुद्ध चारित्र पामी ॥ इह जग शिवगामी ते नमो जबु स्वामी ॥ ७४ ॥ अथ श्रावकधर्म विषे ॥ शार्दूलविक्रीडितछंद ॥ जे सम्यक्त लही सदा व्रत धरे, सर्वज्ञ सेवा करे ॥ संध्या वश्यक आदरे गुरु भजे, दानादि धर्माचरे ॥ नित्ये सद्गुरु सेवना मनधरे एवो जिनाधीशरे ॥ भाख्यो श्रावकधर्म दोय दशधा, जे आदरे ते तरे ॥ ७५ ॥ मालिनीछंद ॥ निशिदिन जिनकेरी जे करे शुद्ध सेवा ॥ अणु व्रत धरि जे ते काम आनंद देवा ॥ चरम जिन वखाणे जे सुधर्मे सुवास्या ॥ समकित सतवंता श्रावका ते प्रसस्या ॥ ७६ ॥ इम अरथ रसाला जे रची सूक्तमाला ॥ धरम नृपति बाला मालिनी छंद शाला ॥ धरम मति धरता ए इहा पुण्य वाध्यो ॥ प्रथम धरम केरो सार ए वर्ग साध्यो ॥ ७७ ॥ इति श्रीमत्सूक्त मुक्तावल्या धर्मवर्ग प्रथम समाप्त ॥ १ ॥

॥ अथ अर्थवर्ग प्रारंभ ॥

उपेंद्रवज्राछंद ॥ अथार्थवर्गे हितचिंतन श्रीमितपचार्थ्यस्य महीशसेवा ॥ खलादिमैत्री व्यसनादि चैव, मिहावधार्या कतिचित्प्रसंगा ॥ १ ॥ अथ अर्थ विषे मालिनी छंद ॥ अरथ अरजि जेणे स्वापते विश्व होवे ॥ जिण विण गुण विद्या रूपने कोण जोवे ॥ अभिनव सुखकेरो सार ए अर्थ जाणी ॥ सकल धरम एथी साधिए चित्त आणी ॥ २ ॥ अरथ विण कवन्नो जेह वेश्याइ नाख्यो ॥ अरथ विण वसिष्टे राम जातो उवेख्यो ॥ सुकृत सुजस कारी अर्थ ते ए उपार्जो ॥ कुवणज उपजंतो अर्थ ते दूर वर्जो ॥ ३ ॥ अथ हित चिंतनविषे ॥ परहित करवा जे चित्त उच्छाह धारे ॥ परकृत हितहीये जे न कांई विसारे ॥ प्रति हित परथी ते जे न वांछे कदाई ॥ पुरुष रयण सोई वंदिए सो सदाई ॥४॥ निज दुख न गणीने पारकूं दुख वारे ॥ तिहतणि बलिहारे जाइए कोडि वारे ॥ जिम विपभर जेणे मंक पीडा सहीने ॥ विषधर जिनवीरे बूझव्यो ते वहीने ॥ ५ ॥ अथ लक्ष्मीविषे ॥हरि सुत रति रंगे जे रमे रात सारी ॥ शिवतनय कुमारो ब्रह्म पुत्री कुमारी ॥ हितकरि दृगलीला जेहने लछि जोवे ॥ सकल सुख लहे सो सोहि विख्यात होवे ॥ ६ ॥ लखमि वलि यशोदा नंदने विश्व मोहे ॥ लखमि विण विरूपी सङ्घ भिक्षू न सोहे ॥ लखमि लहिय शाके जे शिलादित्य नाख्यो ॥ लखमि लहिय शाके विक्रमे विश्व रख्यो ॥ ७ ॥ अथ कृपणविषे ॥ कण

कृण जिम संचे कीटिका धान्यकेरो ॥ मधुकर मधु संचे नोगवे को अनेरो ॥ ति
म धन कृपणकेरो नोपकारे दिवाये ॥ इमहि विलय जाए अन्यथा अन्य खाए ॥
८ ॥ कृपण पणु धरंतां जे नवे नंद राया ॥ कनक गिरि कराया ते तिहां अर्थ
नाया ॥ इम मनन करतां डुःख वासे वसीजे ॥ कृपण पणु तजीजे मेघज्यूं दा
न दीजे ॥ ए ॥ अथ याचनविषे ॥ निरमल गुण राजी त्या लगे लोक राजी ॥
तव लग कहि जीजी त्या लगे प्रीति जाजी ॥ सुजन जन सनेही त्यां लगे मि
त्र तेही ॥ मुख थकि न कहीजे ज्या लगे देहि देही ॥ १० ॥ जइ वडपण वाले
मागजे तो न कांई ॥ लहु पण जिण होवे केम कीजे तिकाई ॥ जिम लघु थइ सोनें
वीरथी दान लीधूं ॥ हरि बल नृप आगे वामना रूप कीधूं ॥ ११ ॥ अथ नि
र्धनविषे ॥ धनविण निज बंधू तेहने दूर छंडे ॥ धनविण गृह नार्या तेह सेवा न
मंडे ॥ निरजल सरजेवो देह निर्जीव जेवो ॥ निरधन तृण जेवो लोकमे ते गणे
वो ॥ १२ ॥ सरवर जिम सोहे नीर पूरे नरायो ॥ धन करि नर सोहे तेम नीते
उपायो ॥ धनकरिय सुहतो माघ जे जाण दूतो ॥ धनविण पग सूजी तेह दीठो मर
तो ॥ १३ ॥ अथ राज सेवाविषे ॥ सुजनसुं हित कीजे डुर्जना सीख दीजे ॥ जग
जन वश कीजे चित्त वांछा वरीजे ॥ निज गुण प्रगटीजे विश्वना कार्य कीजे ॥ प्रजु
सम विचरीजे जो प्रजूसेव कीजे ॥ १४ ॥ नगतिकरि वडानी सेव कीजे जिकाई
॥ अधिक फल न आपे कर्मथी ते तिकाई ॥ जलधि तरिय लंका सीत संदेस
लावे ॥ हनुमत करमे ते राम कछोट पावे ॥ १५ ॥ अथ खलताविषे ॥ रस विर
स नजे ज्यूं अंब निंब प्रसंगे ॥ खल मिलण हुवे त्यूं अंतरग प्रसंगे ॥ सुण सु
ण ससनेही जाणि ले रीति जेही ॥ खल जन निसनेही तेहशूं प्रीति केही ॥१६
मगर जल वसंतो ते कपीराय दीठो ॥ मधुर फल चखावी ते कस्यो मित्र मीठो
॥ कपि कलिज नखेवा मत्स्य खेली खलाई ॥ जलमहि कपि बुद्धी छांमि वे ते नला
ई ॥ १७ ॥ अथ अविश्वाशविषे ॥ उपजाति छंद ॥ विश्वासिसाथे न छले रमीजे ॥ न
वैरि विश्वास कदापि कीजे ॥ जो चित्त ए धीर गुणे धरीजे ॥ तो लछि लीला ज
गमां वरीजे॥१८॥ इंद्रवज्राछंद॥ चाणायके ज्यूं निज काज साख्यो ॥ जे राज नागी नृप
तेह माख्यो ॥ जो घूअडे काक विश्वास कीधो ॥ तो वायसे घूकने दाह दीधो ॥१ए॥
अथ मैत्रीविषे ॥ मालिनीछंद ॥ करि कनक सरीसी साधु मैत्री सदाई ॥ घसि कसि
तप वेधे जास वाणी सवाई ॥ अहव करहि मैत्री चंद्रमा सिंधु जेही ॥ घट घट
वध वाधे सारखा बे सनेही ॥ २० ॥ इह सहज सनेहे जे वधे मित्रताई ॥ रवि प

रि न चले ते काजज्यूं बंधुताई ॥ हरि हलधर मैत्री कृष्णने जे हमासे ॥ हलधर निज खंधे ले फिरयो जीवि आसे ॥२१॥ अथ व्यसन विषे ॥ नलिन मलिन शोभा सां झथी जेम थाए ॥ इह कुवसनथी त्यूं संपदा कीर्त्ति जाए ॥ कुविसन तिण हेते सर्वथा दूर कीजे ॥ जनम सफल कीजे कीर्त्ति कांता वरीजे ॥ २२ ॥ अथ द्यूतविषे ॥ द्रुतविलंबित छंद ॥ सुगुरु देव जिहा नवि लेखवे॥धनविणा सहुए जिण खेलवे ॥ भव भवे भमवूं जिण कुवटें ॥ कहिनि कोण रमे तिण जूवटें ॥ २३ ॥ अथमांस भक्षण विषे ॥ उपजातिछंद ॥ जे मांस लुब्धा नर ते न होवे॥ते राक्षसा मानुषरूप सोवे ॥अथ चोरीविषे ॥ जे लोकमां नर्गे निवास करी॥ निवारीए ते परद्रव्यचोरी ॥ २४ ॥ अथ मद्यविषे ॥ भुयंगप्रयातछंद ॥ सुरापानथी चित्त सभ्रांत थाये॥ गले लाज गंभीरता शील जाये ॥ जिहां ज्ञान विज्ञान सूझे न बूझे ॥ इश्यूं मद्य जाणी न पीजे न दीजे ॥ ॥२५॥ अथ वेश्याविषे ॥ कहो कोण वेश्या तणो अग सेवे ॥ जिणे अर्थनी लाजनी हाणि होवे ॥ जिणे कोश सिंहा गुफाये निवासी ॥ रह्यो साधु ने पालग्यो कंबलासी ॥२६॥ अथ खेटकविषे ॥ छंद ॥ मृगयाने तज जीव घात जे ॥ सघले जीव दया सदा भजे ॥ मृगयाथी दुख जे लह्या नवा ॥ हरि रामादि नरेंद्र जे हुवा ॥ २७ ॥ परस्त्रीविषे चौपाईछंद ॥ स्वर्ग सौख्यतणि जो मन आशा ॥ छाडे तो परनारि विलासा ॥ जेण एण निज जन्म दुखए ॥ सर्वथा न परलोक सूखए ॥ २८ ॥ अथ ए विषयोना उदाहरणो ॥ शार्दूलविक्रीडितछंद ॥ जूवा खेलण पांडवा वन भम्या, मद्ये बली द्वारिका ॥ मांसे श्रेणिक नारकी दुख लह्या, बांध्या नरे चोरिका ॥ आखेटे दशरत्थपुत्र विरही, केवन्न वेश्या घरे ॥ लंकास्वामि परत्रिया रस रमे, जे ए तजे ते तरे ॥२९॥ अथ कीर्त्तिविषे ॥मालिनी छंद ॥ दिशिदिशि पसरंती चद्रमा ज्योति जेसी ॥ श्रवण सुणत लागे जाण मीठी सुधासी ॥ निशिदिन जनगाये रामराजिंद जेवी ॥ इणि कलि बहु पुण्ये पामिये कीर्त्ति एवी ॥३०॥ अथ प्रधानविषे ॥सकल व्यसन वारे स्वामिसूं भक्तिधारे॥ स्वपरहित वधारे राज्यना काज सारे ॥ अनय नय विचारे क्रुरता दूर वारे॥ निजसुत जिम धारे राज्य लक्ष्मी वधारे ॥ ३१ ॥ अथ कलाविषे ॥ चतुर कर कलानो संग्रहो सौख्यकारी ॥ इण गुण जिण लाधी डोण संपत्ति सारी ॥ त्रिपुर विजय कर्त्ता जे कलाने प्रसंगे ॥ हिमकर मनरंगे ले धरयो उत्तमांगे ॥३२॥ अथ मूर्खताविषे. ॥ वचन रस न भेदे मूर्ख वार्त्ता न वेदे ॥ तस कुवचन खेदे तेहने सीख जे दे॥ नृपशिर रज नाखी जेण मूर्खे वहीने ॥ हित कहत हणीज्यु वानरे सुग्रहीने ॥३३॥ अथ लज्जाविषे. ॥ निज

वचन निवाहे लाज ग्युंराज्य वाले ॥ व्रत नय कुलरीते मातज्यूं लाज पाले ॥ सकल गुण सुहावे लाजथी नावदेवे ॥ व्रत नियम लह्यो जे नाइ लज्जा प्रनावे ॥३४॥ शालिनी छंद ॥ एवा जे जे रूयडा नाव राजे ॥ एणेविश्वे अर्थथी तेह छाजे ॥ एवुं जाणी सार ए सौख्य केरो ॥ तें धीरा जे अर्थ अर्जे नलेरो ॥ ३५ ॥ इतिश्री सूक्तमुक्तावल्यां अर्थवर्गो द्वितीय. समाप्त॰ ॥ २ ॥

॥ अथ कामवर्ग प्रारंभः ॥

उपजाति छंद॰॥ आद्या कियंत. किल कामवर्गे कामो नृनार्यो गुणदोषनाज. ॥ सुलक्षणे योगवियोगयुक्ते समातृपितृप्रमुखा प्रसंगा ॥ १ ॥ अथ कामविषे ॥ कंदर्प पंचानन तेज आगे ॥ कुरंग जेवा जगजीव नागे ॥ स्त्रीशस्त्र लेई जग जे वदीता ॥ तिएण देवा जनवृंद जीता ॥ २ ॥ मालिनी छंद. ॥ मनमथ जगमाहे डुर्जेयी जे अयापी ॥ त्रिभुवन सुरराजी जासशस्त्रे सतापी ॥ जलज विधि उपासे वा ह्लिजा विष्णु सेवे ॥ हर हिम गिरिजाने जेण अर्धांग देवे ॥ ३ ॥ शार्दूलविक्रीडित छंद. ॥ भिल्लीनाव चल्यो महेश उमया, जे काम रागे करी ॥ पुत्री देखि चल्यो चतुर्मुख हरी, आहेरिका आदरी ॥ ईंद्र गोतमनी त्रिया विलसिने. संजोग ते ओलव्या ॥ कामे एम महंत देव जग जे, ते जोलव्या रोलव्या ॥ ४ ॥ मालिनी छंद. ॥ नल नृपद वदंती देखि चारित्र चाले ॥ अरह नरहनेमी ते तपस्या विटाले ॥ चरम जिन मुनी ते चिल्लणारूप मोहे ॥ मयण सर व्यथाना एह उन्माद सोहे ॥ ५ ॥ अथ गुणदोषोद्भावनविषे ॥ रथोद्धताछंद. ॥ उत्तमा पण नरा न संनवे ॥ मध्यमा तिम न योषिता हुवे ॥ एह उत्तमिक मध्यमी पणो ॥ बेहुमाहि गुणदोषनो गिणो ॥६॥ तत्र पुरुषगुणा यथा ॥ शार्दूलविक्रीडितछंद ॥ जे नित्ये गुण वृंद ले परतणा, दोषां न जे दाखवे ॥ जे विश्वे उपगारिने उपकरे, वाणीसुधा जे लवे ॥ पूरा पूनिम चद जेम सुगुणा, जे धीर मेरुसमा॥उमा जेह गंनीर सायर जिस्या, ते मानवा उत्तमा ॥७ ॥ अनुष्टुप् छंदः॥रूप सौभाग्य संपन्ना॰ सत्वादिगुणशोभना ॥ ते लोके विरला धीराः श्रीराम सदृशा नरा॰ ॥ ८ ॥ अथ पुरुष दोषा यथा ॥ शार्दूलविक्रीडितछंद॰ ॥ लंकासामि हरति राम तजि जे, शीलातणी एवकी ॥ स्त्रीवेची हरिचंद पांडव नृपे, कृष्णा न राखी सकी ॥ रात्रे छांमि निज स्त्रिया नल नृपे, ए दोष मोटा जणी॥ जोवो उत्तम मांहि दोष गणना. का वात बीजातणी ॥ ९ ॥ अथ स्त्रीगुणा यथा ॥ उपजातिछंद॰ ॥ सुसील आले प्रिय चित्त चाले ॥ जे शील पाले गृह चित्त टाले ॥ दाना

दि जेणे गृहधर्म होई ॥ ते गेहि नित्ये घरलछि सोई ॥ १० ॥ अथ स्त्रीदोषा यथा ॥ उपजातिछंद ॥ नर्त्ती हण्यो जे पति मारकाये ॥ नाख्यो नदीमां शुक मालिकायें ॥ सुदर्शनश्रेष्टि सुशील राख्यो ॥ ने आल देई अनयाय दाख्यो ॥ ११ ॥ वसततिलका छंद ॥ मार्यो प्रदेशि सुरिकाति विषयावलीए ॥ राजा यशोधर हण्यो नयनावलीए ॥ दुःखी कर्यो ससुर नूपुर पंडिताए ॥ दोषी त्रिया इम जणी इण दोषताए ॥ १२ ॥ अथ सुलक्षणी स्त्रीविषे --शार्दूलविक्रीडितछंद ॥ रुडी रूपवती सुशील सुगुणी, लावण्य अंगे लसे ॥ लज्जालु प्रियवादिनी प्रियतणे, चित्ते सदा जे वसे ॥ लीला यौवन उल्लसे उरवसी, जाणे नृलोके वशी ॥ एवी पुण्यतणे पसाय लहिये, रामे रमा सारशी ॥१३॥ उपजातिछंद ॥ सीता सुभद्रा नलराय राणी ॥ जे द्रोपदी शीलवती वखाणी ॥ जे एहवी शीलगुणे समाणी ॥ सुलक्षणा ते जगमाही जाणी ॥१४॥ अथसयोगविषे ॥ मालिनी छंद. प्रियसखि प्रिययोगे उल्लसे नेत्र रगे ॥ हसित मुख शशीज्यु सर्व रोमाच अंगे ॥ कुच इक मुज वैरी नम्रता जे न दाखे ॥ प्रिय मिलण समे जे अंतरो तेह राखे ॥ १५ ॥ अथ वियोगविषे दिन वरस समाणे रैणि कल्पात जाणे ॥ हिम रज कदली जे तेह ज्वाला प्रमाणे ॥ शशिरसिकरसो जे सूरसो सोइ लागे ॥ प्रिय विरह प्रियाने दुःख शूं शूं न जागे ॥१६॥ अथ माताविषे॥ इद्रवज्राछंद ॥ जे मातनो बोल कदा न लोपे ॥ जे विश्वमा सूरज जेम ओपे ॥ ज्या धर्म चर्या बहुधा परीखी ॥ त्या मातपूजा सहुमां सरीखी ॥१७॥ जे मात मोहे जिन एम कीधो ॥ गर्भे वसता व्रत नेम लीधो ॥ जे मातनदा वयणे प्रबुद्धो ॥ शीला तपते अरहन्न सीधो॥१८॥अथपिताविषे ॥ जे बाल नावे सुतने रमाडे ॥ विद्या भणावे सरस जमाडे॥ते तातनो प्रत्युपकार एही॥ जे तेहनी भक्ति हिये वहेही ॥ १९ ॥ मालिनीछंद ॥ निषध सगर राया जे हरीचद्र चद्रा ॥ तिम दशरथ राया जे प्रसन्ना मुनिद्रा ॥ मनक जनक जेते पुत्रने मोह नाख्या ॥ स्वसुत हित करीते तेहना काज साख्या ॥२०॥ अथ पुत्रविषे ॥स्वागताछंद मात तातपद पकज सेवा ॥ जे करे तस सुपुत्र कहेवा॥जेह कीर्त्ति कुललाज वधारे ॥ सूर्य जेम जगि तेज सधारे॥ २१ ॥ शालिनीछंद ॥ गंगापुत्रे विश्वमां कीर्ति रोपी ॥ आज्ञा जेणे तातकेरी न लोपी ॥ ते धन्या जे अजनापुत्र जेवा ॥ जेणे कीधी जानकी नाथ सेवा ॥ २२ ॥तोटकछंद ॥ इम काम विलास उलास तए ॥ रसरीति हदे अनुभावतए ॥ जिमचदन अंग विलेप तए ॥ हिय होय सदा सुख संपतए ॥ २३ ॥ इति श्रीसूक्त मुक्तावल्या काम वर्गस्तृतीय समाप्त ॥

अथ मोक्षवर्ग प्रारंभः

उपजातिछंदः ॥ ग्राह्या कियंतः किल मोक्षवर्गे कर्मक्षमासंयमभावनाद्याः ॥ विवेकनिर्वेदनिजप्रबोधा इत्येवमेते प्रवरप्रसंगाः ॥ १ ॥ मोक्षार्थविषे मालिनीछंदः ॥ इह भव सुख हेते के प्रवर्ते भलेरा ॥ परभव सुखहेते जे प्रवर्ते अनेरा ॥ अवर अरथ छंमी मुक्ति पंथा अराधे ॥ परम पुरुष सोई जेह मोक्षार्थ साधे ॥ २ ॥ तजिय भरत केरी जेण छे खंड भूमी ॥ शिवपथ जिण साध्यो सोलमे सांति सामी ॥ गजमुनि सुप्रसिद्धा जेम प्रत्येक बुद्धा ॥ अवर अर्थ छंडी धन्य ते मोक्ष लुब्धा ॥ ३ ॥ अथ कर्मविषे ॥ करम नृपति कोपे डुःख आपे घणेरा ॥ नरय तिरय केरा जन्म जन्मे अनेरा ॥ शुभ परिणति होवे जीवने कर्म तेवे ॥ सुरनरपतिकेरी संपदा सोइ देवे ॥ ४ ॥ करम शशि कलंकी कर्म भिक्षू पिनाकी ॥ करम बलि नरेंद्रे प्रार्थना विष्णुरांकी ॥ करम वश विधाता इंद्र सूर्यादि होई ॥ सबल करम सोई, कर्म जेवो न कोई ॥ ५ ॥ अथ क्षमाविषे ॥डुरित भर निवारे जे क्षमा कर्म वारे ॥ सकल तप सधारे पुन्य लक्ष्मी वधारे ॥ श्रुत सकल अराधे जे क्षमा मोक्ष साधे ॥ जिण निज गुण वाधे ते क्षमा कां न साधे ॥ ६ ॥ सुगति लहि खिमाए खंधसूरीस सीसा ॥ सुगति दृढ प्रहारे कूरगडू मुनीसा ॥ गज मुनिस खिमाए मुक्ति पंथा अराधे ॥ तिम सुगति खिमाए साधु मैतार्य साधे ॥ ७ ॥ अथ संयमविषे स्वागता छंद ॥ पूर्व कर्म सवि संयम वारे ॥ जन्म वारिनिधि पार उतारे ॥ तेह संयम न केम धरीजे ॥ जेण मुक्ति रमणी वश कीजे ॥ ८ ॥ तुंग शैल बलदेव सुहायो ॥ जेण सिंह मृग बोध बतायो ॥ तेम संयम लहीय अरायो ॥ जेण पंचम सुरालय पायो ॥ ९ ॥ अथ द्वादश भावनाविषे ॥तत्र प्रथम अनित्य भावना ॥मालिनी छंद॥धणकण तनु जीवी वीज झात्कार जेवी ॥ सुजन तरुण मैत्री स्वप्न जेवी गणेवी ॥ अहमत ममताए मूढता कांइ माचे ॥ अथिर अरथ जाणी एणशूं कोण राचे ॥ १० ॥ धरणि तरु गिरिंदा देखिए भाव जेई ॥ सुर धनुष परे ते भंगुरा भाव तेई ॥ इम हृदय विमासी कारमी देह छाया ॥ तजिय भरतराया चित्त योगे लगाया ॥ ११ ॥ द्वितीय असरण भावना ॥ परम पुरुष जेवा संहर्या जे कृताते ॥ अवर सरण केनुं लीजिये तेह अंते ॥ प्रिय सुहृद कुटंबा पाश वेगा झिकोई ॥ मरण समय राखे जीवने ते न कोई ॥ १२ ॥ सुर गण नर कोडी जे करे जास सेवा ॥ मरण भय न छूटा तेह ईशादि देवा ॥ जगत जन हर्ता एम जाणी अनाथी ॥ व्रत ग्रहिय विछूटो जेह संसारमाथी ॥ १३ ॥ तृतीय संसार भावना ॥ शार्दूलविक्रीडितछंदः ॥

तिर्यंचादि निगोद नारकितणी, जे योनि योनी रह्यां ॥ जीवे दु:ख अनेक दुर्गतितणा, कर्मप्रभावे लह्या ॥ या संयोग वियोग रोग बहुधा, या जन्म जन्मे दुखी ॥ ते ससार असार जाणि इह्वो, जे ए तजे सो सुखी ॥ १४ ॥ इंद्रवज्रा छंद ॥ जे हीन ते उत्तम जाति जाए ॥ जे उच्च ते मध्यम जाति थाए ॥ ज्यूं मोक्षमेतार्य मुनींद्र जाए ॥ त्यूं मंगु सूरी पुरयक्ष थाए ॥ १५ ॥ चतुर्थ एकत्वभावना पुण्ये अकेलो जिव स्वर्ग जाए ॥ पापे अकेलो जिव नर्क जाए ॥ ए जीव जा आव करे अकेलो ॥ ए जाणिने ते ममता महेलो ॥१६॥ उपजाति छंद ॥ ए एकलो जीव कुटंब योगे ॥ सुखी दुखी ते तस विप्रयोगे ॥ स्त्री हाथ देखी वलयो अकेलो ॥ नमी प्रबोध्यो तिणथी वहेलो ॥१७॥ पंचम अन्यत्वभावना ॥ जो आपणो देहज एन होई ॥ तो अन्यको आपण मित्त कोई ॥ जे सर्व ते अन्य इहा भणीजे ॥ केहो तिहा हर्ष विषाद कीजे ॥ १८ ॥ देहादि जे जीवथकी अनेरा ॥ श्यो दुःख कीजे तस नासकेरां ॥ ते जाणिने वाघणिने प्रबोधी ॥ सुकोसले स्वांगन सारकीधी ॥१९॥ अथ अशुचिभावना ॥ काया महा एह अशूचिताई ॥ जिहां नवद्वार वहे सदाई ॥ कस्तूरिकर्पूर सुद्रव्य सोई ॥ ते काय सयोग मलीन होई ॥२०॥ अशूचि देही नर नारि केरी ॥ म राच जे ए मलमूत्र सेरी॥ए कारमी देह असार देखी॥चतुर्थ चक्रिय पण ते उवेखी ॥२१॥सप्तमी आश्रवभावना॥मालिनीछंद ॥ इह अविरति मिथ्या योग पापादि साधे ॥ ष्ण उण भव जीवा आश्रवे कर्म बाधे ॥ करम जनक जेने आश्रवा जे न रुंधे ॥ समर समय आत्मा सवरी सो प्रबुद्धे ॥२२॥ इंद्रवज्राछंद ॥जेकुंडरीके व्रतछांडि दीधुं ॥भाईतणू तेवलि राज्य लीधुं॥तेदु:ख पाम्या नरके घणेरा॥तेहेतु एआश्रव दोपकेरा॥२३ अष्टमी सवरभावनाजे सर्वथाआश्रवने निरुंधे॥ तेसंवरी संवरभाव साधे ॥ ते भाववदो गुरुवज्र स्वामी॥जेणे त्रिया कंचन कोडिवामी ॥२४॥ नवमी निर्जरा भावना ॥ मालिनी छंद ॥दुयदस तपभेदे कर्म ए निर्जराए॥उत्तपति थिति नाशे लोक भावा भराए॥दुरलभ जग बोधीदुर्लभा धर्मबुद्धी॥भव हरणि विभावो भावना एह शुद्धी॥२५॥उपजातिछंद ॥ बे निर्जरा काम सकाम तेही॥ अकाम जे ते मरुदेवि जेही ॥ ते ज्ञानथी कर्मह निर्जरीजे ॥ दृढ प्रहारी परि तो तरीजे ॥२६॥ दशमी लोकभावना॥ मालिनी छंद ॥ जिम पुरुष विलोये ए अधो लोक तेवो ॥ तिरिय पण विराजे थाल स्योवृत्त जेवो ॥ उरध मुरज जेवो लोकनाले प्रकास्यो ॥ तिमज भवन भानू केवली ज्ञान भास्यो ॥ २७ ॥ एकादश बोधिदुर्लभभावना ॥ स्वागता छंद ॥ बोधि बीज लहि जेह अराधे ॥ ते इलासुत परे शिव साधे ॥ धर्मभावन लही नवि भावो ॥ राय

संप्रति परे सुख पावो ॥ २८ ॥ अथ रागविषे ॥ इंद्रवज्रा छंद ॥ रागे म राचे नव बंध जाणी॥जे जाण ते राग वशे अनाणी॥गौरी तणे राग महेस रागी॥अर्धांग देवा निजबुद्धि जागी ॥ २९ ॥ अथ द्वेषविषे ॥ रे जीव विद्वेष मने म आणे ॥ विद्वेष संसार निदान जाणे ॥ सासू नणदे मिलि कूड कीधूं ॥ जूवं सुनद्दा शिर आल दीधूं ॥३०॥ अथ संतोशविषे ॥ वसंततिलका छंदः ॥ संतोष तृप्त जनने सुख होय जेवुं ॥ ते द्रव्य लुब्ध जनने सुख नाहि तेवुं॥ संतोषवत जनने सहु लोक सेवे ॥ राजेंद्र रक सरिखा करि जेह जोवे ॥३१॥ अथ विवेकविषे॥ उपजाति छंदः ॥ जो जेह चित्ते सुविवेक नासे ॥ तो मोह अंधार विकार नाशे ॥ विवेक विज्ञानतणे प्रमाणे ॥ जीवादि जे वस्तु स्वनाव जाणे ॥ ३२ ॥ इंद्रवज्रा छंद. ॥ बाला पणे संयम योग धारी ॥ वर्षाऋतें काचलि जेण तारी ॥ श्रीवीरकेरो अयमत्त तेई ॥ सुज्ञान पाम्यो सुविवेक लेई ॥ ३३ ॥ अथ निर्वेदविषे॥शार्दूलविक्रीडितछंदः॥जे बंधूजन कर्म बंधन जिसा, नोगा जुजगा गिणे ॥ जाणंतो विषसारिखी विषयता, संसारता ते हणे ॥ जे संसारह रागहेतु जनने, संसार नावा हुवे ॥ नावो तेह विरागवत जनने, वैराग्यता दाखवे ॥ ३४ ॥ वसंततिलकाछंद ॥ निर्वेद ते प्रबल डुर्जर बंदिखाणो ॥ जे छोडवा मनधरे बुध तेह जाणो॥ निर्वेदथी तजिय राज विवेक लीधो ॥योगींद्र नर्तृहरि संयम योग लीधो ॥३५॥ अथ आत्मबोधविषे॥ए मोहनींद तजि केवल बोध हेते॥ ते ध्यान शुद्ध हृदि नावनि एक चित्ते ॥ ज्यूं निःप्रपंच निज ज्योति स्वरूप पावे॥ निर्बोध जे अखय मोक्ष सुखार्थ आवे ॥ ३६ ॥ मालिनी छंदः॥ नवि विषयतणा जे चचला सौख्य जाणी ॥ प्रियतम प्रिय योगा नंगुरा चित्त आणी॥ करमदल खपेई केवल ज्ञान लेई ॥ धन धन नर तेई मोक्ष साधे जिकेई ॥ ३७ ॥ इति मोक्षवर्गे चतुर्थः समाप्तः ॥

उपजाति वृत्तं ॥ इत्येवमुक्ता किल सूक्तमाला विनूषिता वर्गचतुष्टयेन ॥ तनोतु शोना मधिकं जनानां कंठस्थिता मौक्तिकमालिकेव ॥ १ ॥ शार्दूलविक्रीडितं वृत्तं ॥ आसीत्सद्गुणसिंधुपार्वणशशी श्रीमत्तपागछप सूरिः श्रीविजयप्रनानिधगुरुर्बुध्या जित स्वर्गुरु ॥ तत्पट्टोदयनूधरो विजयते नास्वानिवोद्यत्प्रन सूरिश्रीविजयादिरत्नसुगुरुर्विद्वज्ज्ञानानंदनूः ॥ २ ॥ आर्यावृत्तं ॥ विख्यातास्तद्राज्ये, प्राज्ञाः श्रीशांतिविमलनामान ॥ तत्सोदरा बनूवुः प्राज्ञाः श्रीकनकविमलाव्हा ॥३॥ तेषामुनौ विनेयौ विद्वान् कल्याणविमल इत्याव्ह ॥तत्सोदरो द्वितीय केसरविमलानिधो ऽवरजः ॥४॥ तेन चतुर्भि र्वर्गैं, रचिता नाषानिबद्धरुचिरेयं ॥ सूक्तानामिह माला, मनोविनोदाय

वालाना ॥ ५॥ वेदेंद्रियर्षि चद्र, प्रमिते श्रीविक्रमाह्वते वर्षे ॥ अग्रंथि सूक्तमाला केसर विमलेन विबुधेन ॥ ६ ॥ इति श्रीसूक्तमुक्तावली सपूर्ण.

॥ श्री शंखेश्वरपार्श्वनाथाय नमः ॥

अथ

श्री विनयविजयजी उपाध्यायकृत शांतसुधारस ग्रंथ अर्थसहित प्रारंभ.

शार्दूलविक्रीडितछंद. ॥ नीरंध्रे भवकानने परिगलत्पंचाश्र
वांभोधरे नानाकर्मलतावितानगहने मोहांधकारोध्दुरे ॥
भ्रांतानामिह देहिनां स्थिरकृते कारुण्यपुण्यात्मभिस्तीर्थे
शैः प्रथितास्सुधारसकिरो रम्या गिर पांतु व ॥ १ ॥

अर्थ ॥ प्रथमग्रंथकर्त्ता ग्रथनेआदें श्रीतीर्थंकरदेवनी वाणीनी स्तुतिकरी मंगलाचरणकरेछे हेभव्यो जेमां कोइछिद्रनथी एटलेनिकलवानो बारणोनथी वलीजेमां समस्तप्रकारे पांचआश्रवरूप मेघ वरसीरह्याछे तथानानाप्रकारना ज्ञानावरणीयादिक कर्मोनीप्रकृतिरूप वेलियेकरीव्याप्त अनेमोहरूप अंधकारेकरीयुक्त एहवोआसंसाररूपवन तेमांफिरनाराजे प्राणीओ तेने स्थिरकरवानेअर्थे करुणायेंकरीपवित्रछे अंत करणजेहनो एहवा चतुर्विधसंघरूप तीर्थनाईश्वरजे श्रीतीर्थंकरदेव तेणेउपदेसेली अमृतरसने वरसती एहवीरमणीयजेवाणी ते तमारु रक्षणकरो ॥ १ ॥

द्रुतविलंबितं वृत्तत्रयं॥स्फुरति चेतसि भावनया विना न वि
दुषामपि शांतसुधारस ॥ न च सुखं कृशमप्यमुना विना
जगति मोहविषादविषाकुले ॥ २ ॥ यदि भवभ्रमखेदप
राङ्मुखं यदि च चित्तमनंतसुखोन्मुख ॥ शृणुत तत्सुधि
य शुभभावनामृतरसं मम शांतसुधारसं ॥ ३ ॥ सुम
नसो मनसि श्रुतपावना निदधतां द्व्यधिका दश भावना॥
यदिह रोहति मोहतिरोहिताद्भुतगतिर्विदिता समतालता॥४॥

अर्थ ॥ हवेजेशांतसुधारसते भावनाओविना स्फुरतोनथी तेकहेछे विद्वानलोको

ना अंतःकरणमांपण शांतिरूपअमृतनोरस तेनावविना स्फुरतोनथी अने मोह तथा खेद तद्रूपविषेंकरीव्याप्त एहवोजेजगत तेमां शांतसुधारसविना किंचित्मात्र थोमोपणसुखनथी ॥ २॥ माटेआशांतसुधारसनामा ग्रंथमांजलवानो उपदेशकरेछे हेबुद्धिमंतो जोतमारुंमन संसारभ्रमणकरवाना खेदेंकरी पराङ्मुख उपरांठूं थयोहोय अनेजेमां अनंतसुखछे एहवोजेमोक्ष तेनासुखपामवानेविषे सन्मुखथयो होय तोजेमां मनोहरभावनानो रसभरेलोछे एवोमारो आशांतसुधारसनामा ग्रंथसांभलो ॥ ३ ॥ हवे भावनाथी समताप्रगटथायतेकहेछे हेपंमितजनो आसंसारमा जेनुंश्रवणमात्रकरवाथीज पवित्रतानेकरनारी एहवीबारभावनाछे तो तेने धारणकरनारो जेजीव तेनाहृदयमां मोहजेअज्ञान तेने आछादितकरनारी अनेजेहनी अद्भुतगतिछे एहवी प्रख्यात समतारूप वेलीप्रगटथशे ॥ ४ ॥

रथोद्धतावृत्तं॥आर्तरौद्रपरिणामपावक प्लुष्टभावुकविवेकसौष्ठवे॥
मानसे विषयलोलुपात्मना क्व प्ररोहतितमां समांकुरः ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ हवेसमतापामवाने जे अयोग्यहोयतेकहेछे जेनुंमन पांचेंद्रियना त्रेवीस विषयोनेविषे लोलुपछे एहवाप्राणीओने आर्त्त रौद्रध्यानेकरीने उत्पन्नथयेली एह वीजे मावपरिणामरूप अग्नि तेणेकरीने भावनाना रसनेविषे जे चतुरपुरुषोछे तेना विचाररूप रूडापणुं जेमांथीबलीगयुंछे एहवाप्राणीओना मनमा समतानोअंकुर किहांथी उत्पन्नथाय अर्थातनजथाय ॥ ५ ॥

वसंततिलकावृत्तं॥यस्याशयं श्रुतकृतातिशयं विवेकपी
यूपवर्परमणीयरमं श्रयंते ॥ सद्भावना सुरलता नहि
तस्य दूरे लोकोत्तरप्रशमसौख्यफलप्रसूतिः ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ हवेसमतापामवाने योग्यहोयतेकहेछे सिद्धांतश्रवणादिकेकरीने अत्यंतपणे संपूर्णभरेला वृद्धिपामेला तथा विवेकरूप अमृतवृष्टीनी रमणीयजेक्रीडा तेणेकरीने रम्यके० मनोहर शोभायमान एहवाजेनां अंतःकरणछे तेवांअंतःकरणोमा सद्भावनाओ श्रयंतेके० प्रवेशकरेछे तेथीतेपुरुषने लोकोत्तरजे प्रशमके० शांतरसनासुख अर्थात्मोक्षसुख तेनाफलने प्रसवनारी एहवीजे सुरलताके० कल्पलता ते दूरनथी अर्थात् तेहने मोक्षदूरनथी ॥ ६ ॥

अनुष्टुब्वृत्तद्वयं॥ अनित्यताशरणते नवमेकत्वमन्यता ॥ अशौच माश्रवं चात्मन् संवरं परिभावय ॥७॥ कर्मणो निर्जरां धर्मं सुकृतां लोकपद्धति ॥ बोधिदुर्लभतामेता भावयन्मुच्यसे भवात् ॥ ८ ॥

अर्थ ॥ हवेबे श्लोकेकरी आग्रंथमांभाववानी बारभावनाओनां नामकहेछे १ अनित्यभावना २ अशरणभावना ३ संसारभावना ४ एकत्वभावना ५ अन्यत्वभावना ६ अशुचिभावना ७ आश्रवभावना ८ संवरभावना॥हेआत्मातु एभावनाओनो विचारकर ॥ ७ ॥ ९ कर्मनिर्जराभावना १० धर्मभावना ११ रूडाप्रकारनो लोकस्वरूप भावना १२ बोधिदुर्लभ भावना॥हेआत्मातु एबारभावनाओ नो विचारकरतोथको संसारथकीमुक्तथइस ॥ ८ ॥

पुष्पिताग्रावृत्तं ॥ वपुरवपुरिदं विदभ्रलीलापरिचितमप्यतिभंगुरं नराणां ॥ तदतिभिदुरयौवनाविनीत भवति कथं विदुषां महोदयाय ॥ ९ ॥

अर्थ ॥ हवेप्रथमअनित्यभावना भावतां शरीरनुं अनित्यपणुंदेखाडेछे हेविद्वन्जन आजगतमां अभ्रलीलानीपरे क्षणभंगुर अनेजेहनो जयकरवो अत्यंतकठीणछे एहवो तरुणअवस्थायेकरी उन्मत्त मदनजे कामदेव तेनाजेहवु सुंदर एहवुं जे मनुष्योनुंशरीरते विद्वान्जे पंडितलोक तेनापण महोटा उदयकरवानुं कारण शीरीतेंथाय अपितुनहीजथाय ॥ ९ ॥

शार्दूलविक्रीडितं वृत्तद्वयं॥ आयुर्वायुतरत्तरंगतरलं लग्नापदः सपदः सर्वेपीद्रियगोचराश्च चटुला संध्याभ्ररागादिवत्॥ मित्रस्त्रीस्वजनादिसंगमसुखं स्वप्नेंद्रजालोपमं तत्किं वस्तुभवे भवेदिह मुदामालंबनं यत्सतां ॥ १० ॥ प्रातर्भ्रातरिहाव दातरुचयो ये चेतनाचेतना दृष्टा विश्वमन प्रमोदविदुरा भावा स्वत: सुंदराः॥तास्तत्रैव दिने विपाकविरसात् हा नश्यत: पश्यतश्चेत प्रेतहतं जहाति न भवप्रेमानुबंधं मम॥११॥

अर्थ ॥ हवेबेकाव्येंकरी संसारनो अनित्यपणुंदेखाडेछे हेप्राणी आसंसारमां वायरेंकरी चचलथयला एहवाजे पाणीनातरंग तेहनीपरे आयुपपणचचलछे वली विचित्रप्रकारनी संपत्तिओछे तेपण विपत्तियेंकरीयुक्तछे अने समस्त रूपरसादिकजे

विषयछे ते संध्याकालना आकाशजेवासुंदरछे एटले संध्याना अभ्ररागनीपरें सुंदर तोछे पण अभ्ररागनीपरे थोडीवारपछि विनाशशीलछे तथा मित्र स्त्री स्वजन इत्या दिकोनोजे समागम तेणेकरीने थयेलुंजेसुख तेस्वप्नसरीखुं किंवाइंद्रजालसरखुंछे ते वारें आसंसारमां सत्पुरुषोने आश्रयकरवायोग्य कइवस्तुछेवारुं, अर्थात्कोइजनथी सर्वविनाशशील अनित्यछे इतिभाव ॥ १० ॥ वली प्रातके० हेभाई आजगतमां जे प्रभातसमये स्वछकांतिवान तथा अत्यंतपणे जगतने आनंद आपनारा अने स्वतासुंदरजे चेतनपदार्थ अने अचेतनपदार्थना भावदीठाहोय तेपदार्थोंनो काल परिपाक थयाथी तेहिजदिवसें शोभायेकरी हीन थईजायछे अने नाशपामेछे ए हवापदार्थोंने जोनारो एहवो महारुं हृतके० नष्टथयलुं जे अंतःकरण ते संसार संबंधने मूकतुंनथी ए कहेवी महोटी खेदनीवातछे ॥ ११ ॥

॥ प्रथमभावनाष्टकं रामगिरिरागेण गीयते ॥

मूढ मुह्यसि मुधा ॥ मूढ मुह्यसि मुधा ॥ ध्रुवपदं ॥ विभव
मनुचिंत्य हृदि सपरिवारं ॥ कुशशिरसि नीरमिव गलद
निलकंपितं ॥ विनय जानीहि जीवितमसारं ॥ मू०॥ १ ॥

अर्थ ॥ हवेवलीविशेषे अनित्यभावना भावतोथको संसारनुं अनित्यपणुं देखाडे छे हेमूर्खशिष्य तुं परिवारसहित पोतानीसंपत्तिनुं चिंतनकरीने शुंव्यर्थमोहपामेछे वायुये हलाव्योथको कंपायमानथयीने गलीजनारो एहवो दर्भनाअग्रभागे रहेना रोजे पाणीनुं बिंदुओ तेनीपरे हेविनय आ तहारुंजीवितव्य असारछे एमजाण एरीतें विनयविजयजीउपाध्याय पोतेपोताने प्रतिबोधकरतो बीजानेपण उपदेशकरेछे॥१॥

पश्य भंगुरमिदं विषयसुखसौहृदं पश्यतामेव नश्यति सहासं ॥
एतदनुहरति संसाररूपं रयाज्ज्वलज्जलदबालिकारुचिविलासं॥मू०॥२

अर्थ ॥ वलीहेमित्रतुं जो के आविषयसुखते क्षणभंगुरछे जेमकोई हाथताळीदेई ने हसतांहसतांज नाशीजायछे तेनीपरें विषयसुखपण जोतांजोतांज नहता एह वाथईजायछे वली आ संसारनुं स्वरूपते वेगेकरीने जनारी एहवीजे वीजली तेना जबुकानी कांतीनुं अनुकरण करेछे एटले एसंसारनुं स्वरूपते वीजलीनीपरें चंचलछे॥२

हंत हतयौवनं पुछमिव शौवनं ॥ कुटिलमति तदपि लघु दृष्टनष्टं ॥ तेन बत परवशापरवशा हतधियः॥ कटुकमिह किं न कलयंति कष्टम्॥मू०॥३

अर्थ ॥ आ एकमह्णेटी खेदनीवातछे के ज्ञुष्टतारुण्यपणुंते कुत्तरानी पुछडीसरिखो वांको अने जेह्ने जोतावारज तुरतनहीएवोथईजायछे अर्थात् नाशपामीजायछे एह्वा तारुण्यपणाने परवशाके० पराधीनथयला हृतधियके० नष्टबुद्धिवतजे पुरुषोछे ते ससारमां परवशाके० स्त्रीओ ते कष्टकारी कडवाफलनीआपनारीछे एह्वुं जाणतानथी माटे बतइतिखेदे एपणएकमह्णेटुं खेदनोज कारणछे ॥ ३ ॥

यदपि पिण्याकतामंगमिदमुपगतं ॥ जुवनडुर्जयजरापीतसारं ॥ तदपि गतलज्जमुज्ज्ञतिमनो नांगिना वितथमतिकुथितमन्मथविकारं॥मू०॥४॥

अर्थ ॥ जोपण त्रणेलोकना प्राणीओ जेने जीतवाने अत्यंतअसमर्थ एह्वीजे जराअवस्था तेणेकरीने जेपुरुषनुं सारके० सत्वपणुं जतुरह्युछे एटले जरायेकरी शरीरक्षीणथईगयुछे एह्वु एशरीर डुर्बल थयु होय तोपण निर्लज्जप्राणीओनां मन निष्फल बुद्धिथी उत्पन्नथयला कामविकारने मूकतानथी ॥ ४ ॥

सुखमनुत्तरसुरावधि यदतिमेडुरं॥कालतस्तदपि कलयति विरामं॥ कतरदितरत्तदा वस्तु सांसारिकं॥स्थिरतरं जवति चिंतय निकामं ॥मू०५

अर्थ ॥ जुओके पाचअनुत्तरविमाननां घणाज पुष्टकारीसुखछे तेनीपण मर्यादा छे ते पणकालेकरी मर्यादापुरीथयाथी विरामपामेछे तो पाच अनुत्तरविमान करता एवी बीजीकईवस्तुछे जेससारमां वधारेस्थिरीजूतथसे एवातनो तु मह्णेटोविचारकर५

यैः समं क्रीमिता ये च जृशमीमिता यैः सहाकृष्महि प्रीतिवादं॥तान् जनान्वीक्ष्य वत जस्मजूयगतान्निर्विशंकाः स्म इति धिक्प्रमादं॥मू०६

अर्थ ॥ जेनीसाथे आपणे हरहमेस रमता खेलता क्रीमाकरता तथा जेनीआपणे अत्यत स्तुतिकरता अने जेनीसाथे आपणेप्रीतीयेकरी बोलताहता तेहिजप्राणीने जस्मजूत थईगयला देखीने पण जोअमे निशंक रहियेछैये तो बतइतिखेदे एवोजे अमारो प्रमाद तेप्रसादने धि कारहोजो ॥ ६ ॥

असकृदुन्मिष्य निमिषंति सिधूर्मिवच्चेतनाचेतनाः सर्वजावाः ॥ इंद्रजालोपमाः स्वजनधनसंगमास्तेषु रज्यंति मूढस्वजावाः ॥ मू० ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ जेम समुद्रना कल्लोल वारवार उत्पन्नथयीने नाशपामेछे तेमज जगतमां स्थावर अने जंगमपदार्थोना जावछे एमजाणवुं अने जगतमा द्रव्यादिकनो जेस बंधछे तेसर्व इंद्रजाल सरिखोछे तो एह्वा पदार्थोउपर हेमूर्खप्राणीतु शूंरीजपामेछे७

कवलयन्नविरतं जंगमाजंगम जगदहो नैव तृप्यति कृतांतः ॥ मुखग तान् खादतस्तस्य करतलगतैर्न कथमुपलप्स्यतेऽस्माभिरंत ॥ मू०॥८॥

अर्थ ॥ वली स्थावर अने जंगमात्मक जगतने निरंतर भक्षणकरनारो एह्वोजे कृतांतके० यमते तृप्तथातोनथी एमहोटोआश्चर्यछे तोमुखमां आव्याप्राणीनो भक्षणकरनारोजे कालतेनाजहाथमां रहेनारा अमेछैये ते अमारोमृत्यु केवीरीतेनथाय॥८॥

नित्यमेकं चिदानंदमयमात्मनोरूपमभिरूप्यसुखमनुभवेयं ॥ प्रशमरसनवसुधापानविनयोत्सवो भवतु सततं सतामिह भवेऽयं ॥ ९ ॥ इतिमहोपाध्यायश्रीकीर्तिविजयगणिशिष्योपाध्यायश्रीविनयविजयगणिविरचिते शांतसुधारसगेयकाव्ये अनित्यभावनाविभावनो नाम प्रथम. प्रकाश. ॥

अर्थ ॥ तेमाटे नित्य एकचिदानंदमय जे महारोआत्मा तेहनुं स्वरूपजोईने सुखनो अनुभव हुंकरीश इहा विनयविजयजी उपाध्यायकहेछेके आ मनुष्यभवमां शांतिरसरूपजे नूतनअमृत तेहनेपानकरवानो उत्साह सत्पुरुषोने निरंतरहोजो ॥९ इतिश्रीमन्महोपाध्याय श्रीकीर्त्तिविजयगणिशिष्योपाध्याय श्रीविनयविजयगणिविरचिते शांतसुधारसेगेयकाव्ये अनित्यभावनाविभावनोनाम प्रथम.प्रकाश ॥

शार्दूलविक्रीडितं वृत्तं॥ये षट्खंडमहीमहीनतरसा निर्जित्य बभ्राजिरे ये च स्वर्गभुजो भुजोर्जितमदा मेदुर्मुदामेदुरा. ॥ तेपि क्रूरकृतांतवक्रदनैर्निर्दल्यमाना हठादत्राणा· शरणाय हा दश दिश· प्रेक्षंत दीनानना· ॥ १ ॥

अर्थ ॥ हवेबीजी अशरणभावना भावेछे आसंसारमां मृत्युआवेथकेकोईने कोईनुं शरणनथी एमदेखाडेछे हाइतिखेदे जेपुरुष महोटापराक्रमेकरी छखंडपृथवी जीति शोभानेपाम्या एह्वा चक्रवर्त्ती तथा जेहर्षेकरीपुष्टथयला अने जेहनी भुजाओमां उत्कृष्टबलछे एटले स्वर्गनासुखभोगवीने आनंदपाम्याछे एह्वा देवताओ नेपण जेवारे क्रूरहृदयवंत जे यम तेपोताना मुखमांलेई दातोनाबलात्कारेंकरी भक्षणकरे तेवारे तेअशरण थयाथका दीनमुखकरी कोईनुंशरणलेवानेअर्थे दशे दिशाये जुएछे तोपणतेने कालनादातमांथी मूकाववाने कोई समर्थनथाय ॥ १ ॥

स्वागतावृत्तं ॥ तावदेव मदविभ्रममाली तावदेव गुणगौरवशाली ॥ यावदक्षमकृतांतकटाक्षैर्नेक्षितो विशरणो नरकीट ॥ २ ॥

अर्थ ॥ माटेजेनो रक्षणकरनार कोईनथी एहवो एमनुष्यरूपीओ कीटजेकीडो ते हनेजिहांसुधि सहनकरवाने दुर्जन एहवोजेकाल तेणे पोताना कटाक्षेंकरी जोयुंन थी तिहांसुधी मदजे अहंकार तेनाविलासेकरी शोनेछे अने तिहांसुधीज गुणोनो गौरवपणु धारणकरेछे ॥ २ ॥

शिखरिणीवृत्त ॥ प्रतापैर्व्यापन्नं गलितमथ तेजोन्निरुदितैर्गत धैर्योद्योगैः श्लथितमथ पुष्टेन वपुषा॥प्रवृत्त तद्द्रव्यग्रहणविषये बांधवजनैर्जने कीनाशेन प्रसन्नमुपनीते निजवशं ॥ ३ ॥

अर्थ ॥ पण जेप्राणीने जेवारे यमराजाये पोताने स्वाधीनकस्यो तेवारे तेप्राणी नो प्रतापपण नाशपाम्यो अने उदितथयलुजेतेज हतु तेपणगलीगयु तथा धैर्य अ ने उद्योग पण जतुरह्यु वली शरीरपुष्टहतो तेपण शिथिलथईगयु अनेतेपुरुषतुं एकठुं करेलुं द्रव्य लेवाने अर्थं बांधवजन जे नाईओ प्रमुख हता ते प्रवर्त्तथया ॥ ३ ॥

द्वीतीयनावनाष्टक मारुणीरागेण गीयते

स्वजनजनो बहुधा हितकामं प्रीतिरसैरन्निरामं॥मरणदशावशमुपगत वंतं रक्षति कोपि न सत ॥१॥ विनय विधीयतां रे श्रीजिनधर्म शरणं॥ अनुसंधीयतां रे शुचितरचरणस्मरणं ॥ वि० ॥ १ ॥ ध्रुवपदं ॥

अर्थ ॥ फिरि सम्यक्दृष्टीजीवे विशेषेंकरी अशरणनावनाने आवीरीते नाववीते कहेछे जेपोताना स्वजनलोकछे तेघणुज हितनावाछक तथा प्रीतिनारारुखनार इत्या दिकरीते घणाप्रकारें रूडाछे पणतेसर्व स्वार्थनिमित्तेजाणवा ए तात्पर्यछे परतु हेस त्पुरुषो जेवारे जीव मरणअवस्था पामवाने तैयारथयो तेवारेतेनुं संरक्षण करना र कोईनथी ॥ १ ॥ तेमाटेग्रंथनाकर्त्ता श्रीविनयविजयजी उपाध्यायकहेछे के हेवि नय तु श्रीजिनधर्मनुं शरणकर अने पवित्र एहवुजे चारित्रतेनुं स्मरणकर ॥ १ ॥

तुरगरथेन्ननराद्यतिकलित दधतं बलमस्खलितं ॥ हर ति यमो नरपतिमपि दीनं मैनिकइव लघुमीनं ॥ वि० ॥ ३ ॥

अर्थ ॥ घोडा रथ हाथी पायदल एचतुरगणी सेनायेकरीयुक्त तथा पोतेंपण अस्खलित बलने धारणकरनारो एटलेकोईकाले खलनापामेनही एहवो महापरा क्रमवत राजा तेनेपण जेरीतें मैनिकके० माछलानोमारनार जटवेईने लघुमी नके० न्हाना दीनमाछलाओने पकडीलियेछे तेरीते यम पकडीलियेछे॥ ३ ॥

प्रविशति वज्रमये यदि सदने तृणमथ घटयति वदने ॥
तदपि न मुंचति हतसमवर्ती निर्दयपौरुषनर्ती ॥ वि० ॥ ४ ॥

अर्थ॥जो वज्रमय एटले वज्रनाज परमाणुये बनावेला घरमांप्रवेशकरे अथवा मुखमां तृणपत्राधारणकरे परंतु निर्दय अने पराक्रमेंकरी नाचनारो तथाजेहनी सर्वनेविषे समानघातकरवानीजवृत्तिछे एहवोजेयम ते तेनेपण मूकतोनथी ॥४॥

विद्यामंत्रमहौषधिसेवा सृजतु वशीकृतदेवां ॥ रसतु
रसायनमुपचयकरणं तदपि न मुंचति मरणं॥ वि० ॥ ५॥

अर्थ ॥ हेप्राणी जो देवतानुंसाधनकरी पोतानेस्वाधीनकरो अथवा महोटीम होटी विद्याओ साधनकरो मंत्रसाधनकरो तथा महोटी औषधिओसाधी शरीरपु ष्टी करवानेअर्थे आरोगो तोपण मरण मूकतुंनथी ॥ ५ ॥

वपुषि चिरं निरुणद्धि समीरं पतति जलधिपरतीरं ॥ शिर
सि गिरेरधिरोहति तरसा तदपि स जीर्यति जरसा॥वि०॥६॥

अर्थ ॥हेनव्यो जो समाधीचडावी शरीरने घणाकालसुधी वायुनोरोधकरो अथ वा समुद्रने पहेलाकाठे जईबेशो अथवा बलात्कारें पर्वतनाशिखरउपर चडीबेशो तोपण जराअवस्थाथी क्षीणथवु ते काईबंधथतुनथी ॥ ६ ॥

सृजतीमसितशिरोरुहललितं मनुजशिरोवलिपलितं ॥ को
विदधानां नूधनमरसं प्रनवति रोद्धुं जरसं ॥ वि० ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ कालाकेशोंकरीने घणोजसुंदर एहवो मनुष्यनो कालोमस्तक तेने सपेतप णानी करनारी तथा शरीरना मांसनोनाशकरनारी खोखरासरीखोकरी नशोनसने जूदी करीदेखाडनारी पृथवीउपर मेघसमान शरीरतेने शुष्ककरीनाखनारी एहवीजरा अवस्था जेवारे प्राणीने आवशे तेवारें तेनोरोधकरवाने कोण सहायनूतथसे अ र्थात् कोईपण वृद्धावस्थानो रोधकरवाने समर्थनथाय ॥ ७ ॥

उद्यत उग्ररुजा जनकायः कः स्यात्तत्र सहायः ॥ एकोऽ
नुनवति विधुरुपरागं विनजति कोपि न नागं ॥ वि० ॥ ८ ॥

अर्थ ॥ हेआत्मा जेवखतें ताहरुंशरीर उग्ररोगेकरी व्याप्तथाशे तेवखतें तुजने कोणसहायथाशे ! जुओ जेमचंद्रमा एकलोपोतेज राहुना ग्रहणनी पीडानोगवेछे प

रतु नक्षत्र अथवा ताराकोईपण तेनाडुःखमांविनागलेतानथी तेम तुजनेपण जेवारे रोगादिक डुःखप्राप्तथशे तेवारे तादृशेकोईपण संबंधी तेडु खमांविनागलेनारनथी॥५

शरणमेकमनुसर चतुरंगं परिहर ममतासंग ॥ विनय रचय शिव सौख्यनिधानं शांतसुधारसपानं ॥ वि० ॥ए॥ इति श्रीशांतिसुधारस गेयकाव्ये अशरणभावनाविभावनो नाम द्वितीय. प्रकाश· ॥

अर्थ ॥ माटे दान शील तप अने भाव एचार अग जेहनाछे एहवाएक धर्मनुंज तु शरणकर अने ममत्वनो सग परिहर हेविनय तु शिवसुखनो निधान एहवो जे शातसुधारस तेनुंपानकर ॥ ए ॥ इति श्री शातसुधारसगेयकाव्ये अशरणत्वभावना विभावनोनाम द्वितीय प्रकाश ॥

शिखरिणीवृत्तत्रयं ॥ इतो लोभ क्षोभ जनयति डुरंतो दवइवो ल्लसल्लाभांभोभि कथमपि न शक्य· शमयितु ॥ इतस्तृष्णाऽक्षा णां तुदति मृगतृष्णेव विफला कथं स्वस्थै· स्थेयं विविधभयभी मे भववने ॥ १ ॥ गलत्येका चिंता भवति पुनरन्या तदधिका मनोवाक्काये हा विकृतिरतिरोपात्तरजसः ॥ विपद्गर्तावर्ते झटिति पतयालो· प्रतिपदं न जतो. संसारे भवति कथमप्यार्तिविरति ॥ ॥ २ ॥ सहित्वा संतापानशुचिजननीकुक्षिकुहरे ततो जन्म प्राप्य प्रचुरतरकष्टक्रमहत ॥ सुखाभासैर्यावत्स्पृशति कथमप्यर्तिवि रतिं जरा तावत्कायं कवलयति मृत्यो. सहचरी ॥ ३ ॥

॥ हवे त्रीजी संसारभावना भावेछे आ संसारमा डुरतके० घणोमहोटो जेहनो अतनथी अनेदावानल सरिखो अर्थात् वनअग्नीसरखो एहवोजेलोभ तेनेकोईपणरी तें उदयनेपामनारो जे लोभरूप अंभोभि के० उदकते शातकरी शक्तोनथी पणउलटो क्षोभने उत्पन्नकरेछे वलीइहा संसारमा मृगतृष्णा जेवीरीतेविफलछे तेवीरीतेइद्रियोनी तृष्णा प्रेरणाकरेछे तेपणविफलछे तोएहवा अनेकप्रकारना नानाविधभयेकरी बिहा मणा ससाररूप अरण्यमा शीरीतें स्वस्थपणे रहिशकिये ॥ १ ॥ आसंसारमा एक चितामटिजायछे तोफरी तेकरतांपण अधिक बीजीचिताआवी उत्पन्नथायछे वली म न वचन अने कायानाव्यापारेकरी विकारथायछे तथाअत्यंतक्रोधना योगेकरी रजो गुणने पामवापणुंप्राप्तथायछे एरीतेंससारमां विपत्तिरूप खाईनापाणीनी भमरीमां

पगलेपगले पडनारा प्राणीओने कोईवारेदुःखनो अंतआवतोनथी ॥२॥ वली पहे लातो अपवित्रमाताना उदरनेविषे नानाप्रकारना उदरसंबंधी संतापोने सहनकर तो कष्टनीपरपरायेंकरी तामनतर्जनायेयुक्तथको रहेछे अने जन्मपाम्यापछे जेटलामां सुखानास करवानेअर्थे कोइपणपोताने थतीपीमाओ दूरकरेछे परंतु एटलामातो मृ त्युनी सहचारिणी एहवीजे जराअवस्था ते आवीने प्राणीनादेहनो ग्रासकरेछे ते वारें संसारमां सुखतेसुंछे अर्थात् कांईजनथी ॥ ३ ॥

उपजातिवृत्तं ॥ विभ्रांतचित्तो बत बंभ्रमीति पक्षीव रुद्धस्तनु पंजरेऽगी ॥ नुन्नो नियत्याऽतनुकर्मतंतुसंदानितः सन्निहितां तकौतुः ॥ ४ ॥ अनुष्टुब्वृत्तं ॥ अनंतान् पुजलावर्ताननंतानं तरूपभृत् ॥ अनंतशो भ्रमत्येव जीवोऽनादिन्नवार्णवे ॥५॥

अर्थ ॥ प्रारब्धें प्रेरणाकरेलो महोटाकर्मरूप ततुयेकरी बांधेलो काळरूप बिल्ला डानीपासे बेठेलो एहवोप्राणी बतइतिखेदे शरीररूप पिंजरामां पक्षीनीपरें रुंध्योथ को भ्रांतिवंत चित्तेकरीफिरेछे ॥ ४ ॥ एरीतेअनंतानंत शरीरोनोधारणकरनारो एजी वअनंतीवार अनादिकालनो संसारसमुद्रमा अनंता पुजलपरावर्त्तरूप पाणीनी भ्र मरीमा प्रतिक्रमण करतोथको फिरेछे ॥ ५ ॥

॥ तृतीयन्नावनाष्टक केदारारागेण गीयते शांतसुधारसकुंमेमां एदेशी ॥

कलय संसारमतिदारुणं जन्ममरणादिन्नयन्नीत रे ॥ मो हरिपुणेह सगलग्रहं प्रतिपदं विपदमुपनीत रे ॥ क०॥ १ ॥

अर्थ ॥ वलीविशेषप्रकारे संसारन्नावनान्नावतो संसारनीबीकदेखाडेछे मोहरूप शत्रुयें गलोथोदेइने पकडयुंछे तेणेकरी पगले पगले विपत्तीनेपामेला अरेजीव आ ससारते जन्ममरणादिकना न्नयेकरी अत्यंतन्नयंकरछे एवुं तु जाण ॥ १ ॥

स्वजनतनयादिपरिचयगुणैरिह मुधा बध्यसे मूढरे ॥ प्रति पद नवनवै रनुन्नवै· परिन्नवै रसकृदुपगूढ रे ॥ क० ॥ २ ॥

अर्थ ॥ हेमूर्खआत्मातु स्वजन अने पुत्र इत्यादिकोनां परिचयगुणेकरीने शुंआ संसारमां व्यर्थबंधायछे वली पगलेपगले नवानवा अनुन्नवेकरी अने नवानवा परा न्नवेकरी वारवारतु आलिंगितछो एटले युक्तछो ॥ २ ॥

घटयसि कचन मदमुन्नतेः क्वचिदहो हीनतादीन रे ॥ प्र-
तिभव रूपमपरापर वहसि वत कर्मणाधीन रे ॥क० ॥ ३ ॥

अर्थ ॥ हेआत्मातु किहांकतो राजलक्ष्मीप्रमुख सपत्तीनामदने धारणकरेछे वलीकिहाकतो हीनतापामी रांकजेवो भीखारीथई दीनतापणाने धारणकरेछे ए वाआश्चर्य हेजीवतु कर्माधीनथको जन्मजन्मप्रते अपरअपरके० नवानवाज रूपध रेछे कोईभवेभीखारी कोईभवेराजा कोईभवेतिर्यंच कोईभवेनारकी वलीएकभवमापण राजारकपणुप्रमुख अनेकरूपधारणकरेछे ए केहेवो महोटो खेदनोहेतुछे ॥ ३ ॥

जातु शैशवदशापरवशो ॥ जातु तारुण्यमदमत्त रे ॥ जातु
डुर्जयजराजर्जरो ॥ जातु पितृपतिकरायत्तरे ॥क०॥ ४ ॥

अर्थ ॥ अरेजीवतु एकजभवमापण कोईकवारेंतो बालकअवस्थाने आधीनर हेछे अने कोईकवारेतो तारुण्यअवस्थाना मदेकरी उन्मत्तथायछे वलीकोईकवारे डुर्जय जरा अवस्थाये करी डुःखवतथायछे अनेकोईकवारे यमराजाना हाथमां सप डाईजायछे एहवी अवस्थाओने पामेछे ॥ ४ ॥

व्रजति तनयोपि ननु जनकतां ॥ तनयता व्रजति पुनरेप रे ॥ भाव
यन् विकृतिमिति भवगते ॥ स्त्यजतमां नृभवशुभशेप रे॥क०॥५ ॥

अर्थ ॥ हेआत्मा आससारमा कोईभवमांतो दीकरोते बापथायछे फरीकोईक भवमा बापतेदीकरो थायछे एहवी संसारी पुरुषोनी गतिओनी फजेतीजोईने मनु ष्यजन्ममां जेना पुण्यशेपरह्याछे एहवो तु आससारने मूकीआप ॥ ५ ॥

यत्र डुःखार्तिगददवलवैरनुदिन दह्यसे जीव रे॥ हंत
तत्रैव रज्यसि चिरं मोहमदिरामदक्षीव रे ॥ क०॥ ६ ॥

अर्थ ॥ अरेजीव आससारमा डुःख तथा आरतिजेचिंता अने रोगरूप दावान लेकरीने तु नित्यनित्यप्रते दाजेछे तोपणमोहरूप मदिराना मदेकरी उन्मत्तथईने तेमां जघणाकालसुधी अनुरक्तथायछे माटेवतइतिखेदे मोहनाफंदेज जीवडु खीथायछे॥६

दर्शयन् किमपि सुखवैभवं ॥ सहरंस्तदथ सहसैव रे ॥ विप्र
लंभयति शिशुमिव जन ॥ कालबटुको ऽयमत्रैव रे ॥क०॥७॥

अर्थ ॥ अरेजीव जेमकोइलघुबालकने ठगवासारुं कोइकचीजतेनाहाथमां आ पीपाछी लीनवीलइयें तेम हंतइतिखेदे आजगतमां कालरूपीओ बटुकके० धोर ते

तुजने कांइकसुख ऐश्वर्यादिक देखाडीने अकस्मात् तेसुखने जाणेनजहता तेवा करीनाखेछे एम छोकराने छगवानी रीते कालरूपबटुक लोकोने छगेछे ॥ ७ ॥

सकल संसारजयजेदकं ॥ जिनवचो मनसि निवधान रे ॥
विनय परिण मय निःश्रेयसं ॥ विहितशमरससुधापान रे ॥८॥
इति श्री शांतसुधारस गेयकाव्ये संसारजावना विजावनो
नाम तृतीयः प्रकाश· ॥

अर्थ ॥ तेमाटे अरेविनयतु शांतिसुधारसनुंपानकरी समस्तसंसारिकजयना नाशकरनार एह्वा जिन श्री वीतरागनावचनने मनमांधारणकर अने मोक्षपाम एरीतें विनयविजयजीउपाध्याय पोतेजपोताना आत्मानेसीखामण आपेछे ॥ इतिश्रीशांतसुधारसगेयकाव्ये संसारजावना विजावनोनाम तृतीय.प्रकाश· ॥ ३ ॥

स्वागतावृत्तं॥एक एव जगवानयमात्मा ज्ञानदर्शनतरंगसरंगः ॥
सर्वमन्यडुपकल्पितमेतत् व्याकुलीकरणमेव ममत्वम् ॥ १ ॥

अर्थ॥ हवेचोथी एकत्वजावना जावेछे एकज जगवानते आत्माछे अने ज्ञानदर्शन तथा चारित्ररूप तरगेकरीने सरगके० विलासीछे पणते आत्मासिवाय बीजाजे कांई कल्पितपुजलादिकछे तेसर्व ममतास्पदमांज व्याकुलकरनाराछे ॥ १ ॥

प्रबोधतावृत्तत्रयं॥अबुधैः परजावलालसालसदज्ञानदशा
वशात्मजिः॥ परवस्तुषु हा स्वकीयता विषयावेशवशाद्वि
कल्प्यते ॥ २ ॥ कृतिनां दयितेति चिंतनं परदारेषु यथा
विपत्तये॥विविधार्त्तिजयावहं तथा परजावेषु ममत्वजावनं॥
३ ॥अधुना परजावसंवृतिं हर चेत· परितोवगुंठितं॥ क्षण
मात्मविचारचंदनद्रुमवातोर्मिरसाः स्पृशंतु मां ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ परवस्तुउपर रहेलीअत्यंतउल्लाना योगेकरी उपनीजे अज्ञानअवस्थानी आधीनता तेजेना अंत करणमां व्यापीछे एह्वामूर्खोने जे परकीयवस्तुउपर स्वकीयपणुंकल्पेछे तेमात्र शब्द रूप रसादिकविषयोना आवेशेकरीजकल्प्योजायछे ए एक महोटुं खेदनुंकारणछे ॥ २ ॥ पुण्यवानपुरुषे परस्त्रीने पोतानीस्त्रीकरी चिंतवनकरवु तेजेमविपत्तीनुं कारणथायछे तेमज परकीयवस्तुउपर जे ममत्वकरवु तेपण नानाप्रकारनीपीमानुं अने अनेकप्रकारना जयनुं कारणथायछे ॥ ३ ॥ माटेहेआ

त्मा हवे चारेबाजुयेविंटेली परवस्तुनी संवृति जे आछादन तेनेतूंदूरकर अने आत्मवि चाररूप चंदनवृक्ष उपरना वायुनीलहेरीनुंजे रस तेनुंएकक्षणमात्र स्पर्शकर ॥४॥

अनुष्टुब्वृत्त ॥ एकतां समतोपेतामेनामात्मन् वि
भावय ॥ लभस्व परमानंदसंपदं नमिराजवत् ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ अरेजीव आसमतायेकरीयुक्त एहवुजे एकत्वपणुं तेने तु पोताना आत्मामां विचारीजोईशतो नेमिराजरूपीनाजेवी परमानंद संपदानेपामिश ॥ ५ ॥

॥ चतुर्थभावनाष्टकं परजीयारागेणगीयते ॥

विनय चिंतय वस्तुतत्व जगति निजमिह कस्यकिं ॥ भवति
मतिरिति यस्य हृदये दुरितमुदयति तस्य किं ॥ वि० ॥ १ ॥
एक उत्पद्यते तनुमानेक एव विपद्यते ॥ एक एव हि
कर्म चिनुते ॥ सैकक· फलमश्नुते ॥ वि० ॥ २ ॥

अर्थ ॥ हवेवलीविशेषे एकत्वभावनाभावेछे इहाश्री विनयविजयजी उपाध्याय पोतेज पोतानीआत्माने उपदेशेछे के हेविनय तु वस्तुतत्वजे आत्मज्ञान तेनुं चिंतवनके० विचारकर आजगतमा कोइनोस्वकीयपणुछेकेशुं एहवीबुद्धि जेनाहृदयमां उत्पन्नथायछे तेप्राणीने दुरितपापादिक उदयपामेछेसुं अपितुतेने पापोदयपामतुज नथी ॥ १ ॥ हेआत्मा ताहरोजीव एकलोज उपजेछे एकलोज मरणपामेछे एक लोज कर्मनेबांधेछे अने तेबंधायला कर्मोनाफलनेपण एकलोज भोगवेछे ॥ २ ॥

यस्य यावान्परपरिग्रह ॥ विविधममताबंध ॥ जलधि
विनिर्हितपोतयुक्त्या पतति तावद सावधः ॥ वि० ॥ ३ ॥
स्वस्वभाव मद्यमुदिते भुवि विलुप्य विचेष्टते ॥ दृश्यता प
परभावघटनात्पतति विलुठति जृंभते ॥ वि० ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ जिहांसुधी जेप्राणीनेमाथे परपरिग्रहउपर नानाप्रकारनी जे ममत्व त द्रूपभारपडयोछे तिहांसुधी तो पथराप्रमुख वजनदारवस्तुयेभरेलो जिहाज जेम समुद्रनातलियामा जइबेसेछे तेम तेप्राणीपण संसाररूप समुद्रना तलियामां पडेलोजाणवुं ॥ ३ ॥ जेम मदेकरी उन्मत्तथयलो पुरुष स्वकीयस्वभाव एटले मूल स्वभावने लोपी जमीनउपरपमी चेष्टाकरेछे तेमज परवस्तुनी घटनायेकरी उन्मत्तथयलो पुरुष संसाररूप जमिनमापडेछे लोटेछे अने जभायमान थयोथकोरहेछे ॥ ४ ॥

पश्य कांचनमित्तरपुजलमिलितमंचति कां दशां ॥ केवलस्य तु तस्य रूपं विदितमेव नवादृशां ॥वि० ॥५॥ एवमात्मनि कर्मवशतो नवति रूपमनेकधा॥कर्म मलरहिते तु नगवति नासते कांचनविधा॥वि०॥६॥

अर्थ ॥ जेमसुवर्णमां बीजाधातुनी मिश्रतायवाथी विपरीतदशानेपामेछे अने तेसुवर्णना शुद्धस्वरूपनीतो हेजीव तहाराजेवाने खबरजछे ॥ ५ ॥ तेमजआत्मा नेविषे कर्मरूप अन्यधातुना वशेंकरी नानाप्रकारना रूपथायछे पणकर्ममलरहित शुद्धज्ञानस्वरूपी आत्मातो सुवर्णसरखो देदीप्यमानजासेछे ॥ ६ ॥

ज्ञानदर्शनचरणपर्यवपरिवृतः परमेश्वरः ॥ एक एवानुनवसदने स रमतामविनश्वरः॥वि०॥७॥इति रुचिरसमतामृतरस क्षणमुदितमास्वादय मुदा॥विनय विषयातीतसुखरसरतिरुदंचतु ते सदा॥वि०॥८॥इतिश्री शांतसुधारसगेयकाव्ये एकत्वनावनाविनावनोनाम चतुर्थः प्रकाशः

अर्थ॥तेआत्मा ज्ञान दर्शनअने चारित्रना पर्यायेकरीयुक्त एहवो अविनाशीजे एकपरमेश्वर तेमहारा अनुनवगृहमां रम्यमाणथजो॥७॥माटेहेआत्मा प्रसन्नथयलो एहवो अतिसुंदर समतारूप अमृतरस तेनोएकक्षणमात्र पण संतोषेंकरी आस्वादनकर अने हे विनय सर्वकाल विषयसुखथी अतीत एटलेजूदा एहवाजे शांतिसुख रस तेनाउपर ताहरेप्रीतिहोजो॥८॥ इ०शातसुधारसगेयकाव्येएकत्वनावनाविनावनोनामचतुर्थ प्रकाश

उपजातिवृत्तं ॥ परः प्रविष्टः कुरुते विनाश लोकोक्तिरेषा न मृषेति मन्ये॥ निर्विश्यकर्माणुनिरस्य किं किं ज्ञानात्मनो नो समपादि कष्टं ॥ १ ॥

अर्थ॥ हवे पाचमी अन्यत्वनावना नावतोथको श्रीविनयविजयजी उपाध्यायकहेछे एकनाघरमा बीजायेंप्रवेशकस्यो एटले पहेलानोनाशकरेछे एहवु लोकोनुं बोलवु मने खोटुंलागतुनथी केमके महारोआत्मा ज्ञानस्वरूपीछे तेमां कर्मरूप परमाणुये प्रवेशकरीने आत्माने कोणकोण कष्टोनथीआपी अर्थात् सर्वकष्टोआपीजछे ॥ १ ॥

स्वागतावृत्तम्॥खिद्यसे ननु किमन्यकथार्तः सर्वदेव ममतापरतंत्रः॥ चिंतयस्यनुपमान्कथमात्मन्नात्मनो गुणमणीन्न कदापि ॥ २ ॥

अर्थ ॥ अरेजीवतु सर्वकाल ममताने स्वाधीनथई अन्यजे पुजलादिक तेनीजगोष्टीये पीडितथको कांखेदपामेछे अने जेहनीकोइउपमाजनथी एवा तारी आत्माना गुणरुपजे मणीरत्न तेनुंकोइवारेपण चिंतन केमकरतोनथी एकेटलुं अयुक्तछे २॥

शार्दूलविक्रीडितं वृत्तद्वयम् ॥ यस्मै त्वं यतसे बिभेषि च यतो यत्रा
निशं मोदसे यद्यच्छोचसि यदिच्छसि हृदा यत्प्राप्य पेप्रीयसे ॥
स्निग्धो येषु निजस्वभावममलं निर्लोठ्य लालप्यसे तत्सर्वं पर
कीयमेव भगवन्नात्मन्न किंचित्तव ॥ ३ ॥ दुष्टाः कष्टकदर्थना क
ति न ताः सोढास्त्वया संसृतौ तिर्यङ्नारकयोनिषु प्रतिहतच्छिन्नो
विभिन्नो मुहुः ॥ सर्वं तत्परकीयदुर्विलसितं विस्मृत्य तेष्वेव हा
रज्यन्मुह्यसि मूढ तानुपचरन्नात्मन् न किं लज्जसे ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ हेआत्मातुं जेनेवास्ते घणीयत्नकरेछे अने जेनाथकी घणोबीहितोरहेछे तथा जेथकी सर्वकाल आनंदपामेछे वली जेनाअर्थेघणुंशोचकरेछे अथवा जेनेतुं ताहराहृदयमां हरहमेस इच्छेछे वली जेनादेखवाथी अत्यतप्रीतिपामेछे जेनेविषे तुं घणुंस्नेहराखी पोतानानिर्मल ज्ञानादिक स्वभावनो नाशकरी लालनपालनकरेछे इत्यादिकक्रियाते सर्वपरकीयजछे पण हेआत्मस्वरूपी भगवन् एमास्वकीय ताहरोकां इनथी ॥ ३ ॥ अरेजीवतुंपूर्वोक्तप्रकारेकरतोथको आसंसारमां तिर्यंच अने नारकीनी योनीमां अत्यतदुष्ट एहवी अनेककदर्थनाओ तेंनोगवीनथीकेशुं अपितु भोगवीलोछे ज केमके मुहुके० वारवार नरकादिकयोनीओमां हणाणुं छेदाणुं भेदाणुं एहवीएह वी तहारी अवस्थाओथइ तोपणहेमूर्ख तेसर्व परकीय एटले स्वरुपविना पुद्गलनासंग थी दुर्विलासथया तेनेविस्मृतकरी फरितेनाउपरज प्रेमधरीने मोहपामेछे अनेतेहनुं ज सेवनकरतोथको केमलज्जातोनथी माटे हाइतिखेदे एपणमहोटो खेदनीजवातछे

अनुष्टुब्वृत्त ॥ ज्ञानदर्शनचारित्रकेतनाचेतना विना ॥
सर्वमन्यद्विनिश्चित्य यतस्व स्वहिताप्तये ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ हेआत्मातुं ज्ञान दर्शन अने चारित्रनी आश्रयभूतजे चेतना तेविना बीजाजे विभाविक पदार्थोछे तेसर्वने निश्चयथकी तहाराथी अन्यके० जूदाजाणीने पोताना हितने अर्थेयत्नकर ॥ ५ ॥

॥ पंचमभावनाष्टक श्रीरागेण गीयते ॥ तुज्झगुणपारनहिसुअणोएदेशी ॥
विनय निभालय निजभवनं तनुधनसुतसदनस्वजनादिषु किं नि
जमिह कुगतेरवनं ॥वि०॥१॥ येन सहाश्रयसे ऽतिविमोहादिदमहमि
त्यविभेदं तदपि शरीरं नियतमधीरं त्यजति भवंत धृतखेदं॥वि०२॥

अर्थ॥हवेविशेषे अन्यत्वभावनाभावता श्रीविनयविजयजी उपाध्याय पोतानेउप देशकरेछे के हेविनय तुतहारापोताना आत्मारूपघरने जो अने आसंसारमां शरीर द्रव्य पुत्र घर स्वजनादिकमा कोणतुजने दुर्गतिथी रक्षण करवालोछे अर्थात्कोइज नथी एटलेतु स्वजनादिकनेअर्थे माठाकर्मकरेछे तेकर्मनायोगथी जेवारें नरकादिक दुर्गतिमांजइस तेवारे तहारोहाथपकडीने तुजने कोइदुर्गतिथी वारीराखशेनही॥१॥ बीजातोदूररह्या पणजेनीसाथे तुं अत्यंतमोहनावशथकी ऐकपणुंकरेछे एहवुंजे शरीरतेपण निश्चयथीअधीरोछे सेवट खेदकरावी तुजने मूकीचाल्योजसे अथवा खेद नोकरनारतुंछो एहवा तुजनेमूकी चाल्योजसे ॥ २ ॥

जन्मनि जन्मनि विविधपरिग्रहमुपचिनुषे च कुटुंबं॥ तेषु भवं तं परभवगमने नानुसरति कृशमपि सुंबं ॥ वि० ॥३॥ त्यज ममतापरितापनिदानं ॥ परपरिचयपरिणामं ॥ भज निस्संगत या विशदीकृतमनुभवसुखरसमभिरामं ॥ वि० ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ हेप्राणीतु जन्म जन्मने विषे विविधप्रकारना परिग्रहने संपादनकरेछे तेमज नानाप्रकारना कुटुंबने संपादनकरेछे परंतु जन्मातरेजाता ते पूर्वोक्तपरिग्रह मांथी एकटोकडो पण ताहरीसाथेंआवतोनथी ॥ ३ ॥ माटे ममत्तानायोगेंकरी अ त्यंततीव्रतापनुं मुख्यकारण एवो परकीयवस्तुनो परिणाम तेनोत्यागकर अने नि:संग त्वपणेकरी स्वच्छथयलु आल्हादनोकरनार एहवुंजेअनुभवसुख तेनुंसेवनकर ॥ ४॥

पथि पथि विविधपथैः पथिकैः सह कुरुते कः प्रतिबंधं ॥ निजनिजकर्मवशैः स्वजनैः सह किं कुरुषे ममताबंधं॥वि०॥५॥ प्रणयविहीने दधदभिषंगं ॥ सहते बहुसंतापं ॥ त्वयि निः प्रणये पुद्गलनिचये वहसि मुधा ममतातापं ॥ वि० ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ जेमपंथीमाणसने जूदेजूदेस्थानके मार्गमार्गमा वाटाळुजोकतुं मिलाप थतोजायछे पणते वाटमार्गुनीसाथे कोइप्रतिबंधकरत्तोनथी तेमजपोतपोताना कर्म नेवशें आवीमल्या एहवावाटमार्गुतुल्य जे तारास्वजनलोक तेनीसाथेतु ममत्वनो प्रतिबंधकांकरेछे ॥५॥ जेमकोइ स्नेहशून्यपदार्थहोय अथवामनुष्यहोय तेनाउपर स्नेहधरनाराप्राणी बहुसंतापने सहनकरेछे तेमज तुंपण ताहाराउपर निस्नेही ए हवोजे पुद्गलनोसमुदाय एटलेपोतानुंशरीर तेपणपुद्गलछे अनेजेस्वजनादिक शरीरी

जीवछे तेपणपुजलजछे तथा नववियपरिग्रह तेपणपुजलछे एह्वापुजलना समुदायउप र व्यर्थ ममता रूप ताप धारण करीने संताप सहन करेछे ॥ ६ ॥

त्यज सयोगं नियतवियोगं ॥ कुरु निर्मलमवधानं ॥ नहिविद धान कथमपि तृप्यसि॥मृगतृष्णाघनरसपानं ॥वि०॥७॥ भज जिनपतिमसहायसहायं ॥ शिवगतिसुगमोपाय ॥ पिव गद शमनं परिहृतवमनं॥शांतसुधारसमनपायं ॥ वि० ॥ ८ ॥

इ०शांतसुधारसगेय काव्ये अन्यत्वभावनाविभावनो नाम पंचमः प्रकाशः

अर्थ ॥ माटेनिश्चयेकरी जेहनो वियोगथवानोछे एह्वापुजलादिकसाथे जे तें स योगकर्युंछे तेनोत्यागकर अनेनिर्मल एह्वोजेपोतानो शुध्धात्मभावतेनेविषे अवधान के० स्वस्थपइ एकाग्रपणेलक्षराख केमकेकोइपणप्राणी मृगतृष्णारूप जलनुंपानक रीने कदापिकालें तृप्तथवानोनथी तेमतुपण परवस्तुउपर ममत्वराखी कोइकालें आत्मरतिमां तृप्तिपामनारनथी ॥ ७ ॥ माटेरेआत्मा तु असहायने सहायनाकर नार एटलेअशरणने शरणभूत एह्वातीर्थंकरदेव तेनुंसेवनकर अनेनिरदोष मोक्ष गतिमांजवातु जे सुगमोपाय अथवा जेमाथी परिहृतके० नाशपाम्युछे वमनके० मोक्षनासुखनो वमवापणु वली गदशमनके० ससाररूप रोगनो समावनार एह्वो जे शातनामा सुधारसके० अमृतरस तेनो पिवके० पानकर ॥ ८ ॥ इतिश्रीशांतसु धारसगेयकाव्ये अन्यत्वभावनाविभावनो नाम पचम प्रकाश

शार्दूलविक्रीडित वृत्त ॥ सच्छिद्रो मदिराघट परिगलत्तल्लेश संगाशुचिः शुच्या मृद्यमृदा वहिः स वहुशो धौतोऽपि गंगो दकैः ॥ नाधत्ते शुचिता यथा तनुभृतां कायो निकायो महावी भत्सास्थिपुरीषमूत्ररजसां नायं तथा शुद्ध्यति ॥ १ ॥

अर्थ ॥ ह्वेछठी अशुचि भावना भावेछे जेम मदिरा गालवानुंयंत्र जारीनीमाफ क छिद्रेंकरी सहितथायछे तेछिद्रोमाथी मदिरागलावेछे तेथी तेछिद्रोमा मदिराना कणिआनुं अंशरहीजायछे तेलेशमात्र पण मदिरानासगेकरीने अपवित्रथयलु एह्वोजे मदिराना भाजननो छिद्र तेनेपवित्रकरवाने अर्थे बाहिरथी माटीसाथे गसी ने पछे गंगानदीना पाणीयेंकरी घणावखत धोइधोइने साफकरवामांग्यें तोपणते मदिरागालवाना छिद्रो कोइवारें पवित्र थायनही तेमज मनुष्यनो अत्यंत बीभत्स

डुगंछाकरवायोग्य हाड रक्त मल मूत्रनोस्थानकरूप शरीर तेने माटीयेंगसवाथी अथवा गंगादिकनापाणीये नवराव्याथी पणपूर्वोक्त दृष्टांतेकोइवारे शुद्धथातुंनथी१

मंदाक्रांतावृत्तं॥स्नायं स्नायं पुनरपि पुनः स्नांति शुद्धाभिरद्भि र्वा रं वारं बत मलतनुं चंदनैरर्चयंते॥ मूढात्मानो वय मपमलाः प्री तिमित्याश्रयंते नो शुद्ध्यंते कथमवकरः शक्यते शोद्धुमेवं ॥ २ ॥

अर्थ ॥ माटेजगतमां जेनुंअंतःकरण मूढथयुंछे एह्वालोक स्नानकरीने वारंवार शरीरशुद्धि करवानेअर्थे फरिपण स्नानकरेछे तथा वारवार मलनास्थानकरूप शरीरने चदनेकरीचर्चेछे अने अमेंनिर्मलथया एवुंकहीने प्रीतिकरेछे पण एम नथी जाणताजे एशरीर तो किवारेपण शुद्धथातुंनथी केमके खात्रनुं उकरडो तेकोइरीते शुद्ध थायकेसुं अर्थात्नजथाय ॥ २ ॥

शार्दूलविक्रीडितं वृत्तं ॥ कर्पूरादिभिरर्चितोपि लशुनो नो गाहते सौरभं नाजन्मोपकृतोपि हंत पिशुनः सौजन्यमालंबते ॥ देहोप्येष तथा जहाति न नृणां स्वाभाविकीं विस्रतां नाभ्यक्तोपि विभूपितोपि बहुधा पुष्टोपि विश्वस्यते॥ ३॥

अर्थ ॥ जेमलसणमां कर्पूरादिकपदार्थोंनो भेलकस्रो तोपण लसणकांइ सुगंधीवत थायनही तथा जन्मपर्यंत उपकारकस्योहोय तोपण डुर्जनपुरुष कांइ सौजन्यताने धारणकरतोनथी तो हंतइतिखेदे आमनुष्यनुंशरीर तेपण स्वभावसिद्ध डुर्गंधने मूकतुंनथी आशरीरने विविधप्रकारनासुगंधीतेलेंकरीमसल्यो अनेवस्त्रालंकारेकरी भूपितकस्रो तथा खवरावी पीवरावीने अत्यंतपुष्टकस्रो तोपण विश्वासनोपात्र थायनही एटले एशरीर हवेसारुंथयुं एह्वोविश्वास कदापिआवेनही ॥ ३ ॥

उपेंद्रवज्रावृत्तं ॥ यदीयसंसर्गमवाप्य सद्यो भवेच्छुचीनामशुचित्वमुच्चैः॥अमेध्ययोनेर्वपुषोस्य शौचसंकल्पमोहोयमहो महीयान्॥४॥

अर्थ ॥ शरीरनोसंबंधपामिने पवित्रपदार्थोंने पण अपवित्रतापणुं आवेछे केमके आशरीरने उत्तमजातिना चंदनादिके मर्दनकरो तो तेचंदनादिक थोडीजवारमा पोतानुं सुगंधतापणुंमूकीने डुर्गंधतानेधारणकरेछे तेमज उत्तमप्रकारनाभोजन खवराव्याथी तेपण तुरत नरगमय थयीजायछे एवो आ अपवित्रवस्तुने उत्पत्तिनुंकारण जेशरीर तेनेपवित्रपणुं करवाना संकल्पनो मोहराखवुं एमहोटोआश्चर्यकारीछे४

स्वागतावृत्तं॥इत्यवेत्य शुचिवादमतथ्यं पथ्यमेव जगदेकपवित्रं ॥
शोधनं सकलदोषमलानां धर्ममेव हृदये निदधीथा॰ ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ एरीते शरीरने पवित्रकरवानोवाद खोटोजाणीने जगतमां एकपवित्र पथ्य तो समस्तदोषरूपमलनो शोधक एह्वोजेधर्म तेहनेहृदयमाधरो ॥ ५ ॥

॥ षष्टभावनाष्टकं आसावरीरागेण गीयते कागारेतनुचुनिचुनिजावे एदेशी. ॥

भावय रे वपुरिदमतिमलिनं विनय विबोधय मानसनलिनं॥
पावनमनुचिंतय विभुमेकं॥परममहोमयमुदितविवेकं॥भा०॥१॥
दम्पतिरेतोरुधिरविवर्त्ते किं शुभमिह मलकश्मलगर्त्ते॥ भृशम
पि पिहित॰ स्रवति विरूपं को बहुमनुतेऽ वस्करकूपं ॥भा०॥२॥

अर्थ ॥ हवेविनयविजयजी उपाध्याय पोतेंपोताने उपदेशकरतो अशुचिपणुं भावेछे हेविनय आशरीरनेतु घणुजमलीनजाणीने पोतानुंमनरूपकमल प्रफुल्लित कर वलीजे परमतेजस्वी अनेजेनायकी उत्तमविचार उत्पन्नथाय एह्वो एकपवित्र परमात्मानु चितवनकर ॥ १ ॥ स्त्रीनोरक्त अने पुरुषनो रेत तेनापरिणाम स्वरूपथी उत्पन्नथयु एह्वु मलमयजे कश्मलके० चीखलतेनी गर्त्ताके० खाड रूप आ शरीर तेमासुसारुंछे जोआशरीरने अत्यंतढांकीराख्युं तोपणतेमाथी विरूपप णे मातोडुर्गंधज स्रवेछे तोएवाकचराना कूवाने कोणरुडोकरी माननारछे अर्थात् कोइपण उकरडारूप कचरायेंकरी भरेला कूवाने बहुमानसेनही ॥ २ ॥

भजति सचन्द्रं शुचि तांबूलं ॥ कर्तुं मुखमारुतमनुकूलं ॥तिष्ठ
ति सुरभि कियंतं कालं॥मुखमसुगंधि जुगुप्सितलालं॥ भा०
॥३॥असुरभिगंधवहोंतरचारी॥आवरितुं शक्यो न विकारी॥
वपुरूपं जिघ्रसि वारंवारं॥हसति बुधस्तव शौचाचारं ॥भा०४॥

अर्थ ॥ सुंदरतांबूलमां कर्पूरप्रमुखनाखीने मुखसंबंधीवायु अनुकूलकरवानेअर्थें खायछे परंतु निंदाकरवायोग्य अनेघणीज दुगंछाकरवायोग्यछे लालजेनी वली अप वित्रजेनोगंध एह्वा तद्दारामुखनी सुगंधीते केटलोक वखततरहसे ॥३॥ शरीरमांचाल नारो विविधप्रकारना विकारेकरीसहित असुरभिगंधनो वहेनारो जे ताहरामुखनो वा युतेने ढांकीमूकवाने तुंसमर्थथयोनही तोताहराअंगने सुगंधीपदार्थोंनो लेपकरी वार वार तेहनो सुवासलियेछे ए तारो पवित्रतानो आचारजोइने पंडितलोकोहसेछे ॥४॥

द्वादश नव रंध्राणि निकामं॥ गलदशुचीनि न यांति विरामं॥
यत्र वपुषि तत्कलयसि पूतं॥मन्ये तव नूतनमाकूतं॥जा०॥५॥
अशितमुपस्करसंस्कृतमन्नं जगति जुगुप्सां जनयति हन्नं॥ पुं
सवनं धैनवमपि लीढं नवति विगर्हितमति जनमीढं॥जा०॥६॥

अर्थ ॥ अतिशयेकरी जेमांथी रात्रदिवस अपवित्रवस्तुश्रवेछे पणकोइवारें विरामपामतिनथी एहवास्त्रीना बारछिद्र अने पुरुषनानवछिद्र तेछिद्रेकरीसहित एहवा शरीरने तुंपवित्रपणेजाणेछे माटेए ताहरोकोइ नवोज आचारजणायछे ॥ ५ ॥ नानाप्रकारे वगारप्रमुखना संस्कारेकरी संस्कृतकरेलुं पचावेलुं एहवुंजे अन्न तेपण आ शरीरमा आरोग्याथकी हन्नके० विष्टारूपथइजायछे तेणेकरी जगतमां जुगुप्सा के० डुगञ्जाउत्पन्नकरेछे वली आशरीरने वीर्यनीवृद्धिकरनारुं गायनुंदुध प्राशनकरीने फरीतेपुरुषें मूत्रितकर्योथको तेपणअत्यंत निंदाकरवायोग्य थइपडेछे ॥ ६ ॥

केवलमलमयपुद्गलनिचये अशुचीकृतशुचिनोजनसिचये ॥ वपुषि विचिंतय परमिहसारं शिवसाधनसामर्थ्यमुदारं॥ जा०॥७॥
येन विराजितमिदमतिपुण्यं तच्चिंतय चेतननैपुण्यं॥विशदागममधिगम्य निपानं विरचय शांतसुधारसपानं ॥ जा०॥८॥इतिश्री शांतसुधारसगेयकाव्ये अशौचनावनाविनावनोनाम षष्ठ· प्रकाशः

अर्थ ॥ माटे केवलमलरूप पुद्गलनोसमूह अने पवित्रनोजनने अपवित्रपणु आपनार एहवाशरीरमां मात्रएक मोक्षसाधन करवानुजे सामर्थ्यछे एहिजमहोटो सार नूतजाण ॥ ७ ॥ मोक्षसाधनेकरी नूपित्तकर्योथको ए शरीरपवित्रथायछे तेचेतनानीज चातुर्यताजाणवी पणजेमा निर्मलसिद्धांतरूप जलमिलेछे एहवो जलस्थान कजोइने शातसुधारसनोपानकर ॥ ८ ॥ इतिश्री शातसुधारसगेयकाव्ये अशुचिनावनाविनावनोनाम षष्ट प्रकाश·

नुजंगप्रयातं वृत्तं॥यथा सर्वतो निर्झरै रापतद्भिः प्रपूर्येत सद्यः पयोभिस्तटाक.॥तथैवाश्रवैः कर्मभिः संनृतांगी नवेद्याकुलश्चंचलः पकिलश्च ॥१॥

अर्थ ॥ हवेसातमी आश्रवनावना नावेछे जेम सर्वबाजुथी पमता पाणीना निजरणायेकरी तत्कालतलाव नराइजायछे पछे पाणीनातरगेकरी चचलथायछे ते

मज कादववधेछे इत्यादिके व्याकुलथायछे तेम आश्रवेंकरीयुक्तप्राणी कर्मरूपपाणी थी जरपूरथई व्याकुल अने चचलथको पापरूपकादवे सहितथायछे ॥ १ ॥

शार्दूलविक्रीडितं वृत्तं ॥ यावत्किंचिदिवानुभूय तरसा कर्मेह निर्जीर्यते तावच्चाश्रवशत्रवोऽनुसमयं सिंचंति भूयोपि तत् ॥ हा कष्ट कथमाश्रवप्रतिभटाः शक्या निरोद्धुं मया संसारादतिभीषणान्मम हहा मुक्तिः कथं भाविनी ॥ २ ॥

अर्थ ॥ ते जेटलामा अनुभवलेइने बलात्कारेकरी महारा आत्मामांथी काइकक र्मने हुं शुष्ककरुंछुं तेटलामावली आश्रवरूपशत्रु समयसमयप्रते कर्मोंने फरी सी चनकरेछे माटे हाइतिखेदे मने एवु कहणलागेछे के हुं आश्रवरूपशत्रुने केवीरीते जीतिशकुं अने एरीतेतो अत्यतभयकर संसारथकी महारोछूटको पण सीरीतेथसे॥२॥

प्रहर्पणीवृत्त॥ मिथ्यात्वाविरतिकपाययोगसंज्ञाश्चत्वारः सुकृतिभिराश्रवाः प्रदिष्टाः ॥ कर्माणि प्रतिसमय स्फुटैरमीभिर्बध्नंतो भ्रमवशतो भ्रमति जीवा ॥ ३ ॥

अर्थ ॥ पुण्यवतपुरुषोए १ मिथ्यात्व २ अव्रति ३ कषाय ४ योग एचारनाम ना चारआश्रवकह्याछे ते समयसमयप्रते एचारआश्रवना योगेकरी कर्मोंने बांध नारा जीवो ते भ्रमेकरी चारगतिरूप संसारमाभमेछे ॥ ३ ॥

रथोद्धतावृत्तं॥ इंद्रियाव्रतकपाययोगजा पंच पच चतुरन्वितास्त्र य ॥ पचविंशतिरसक्रिया इति नेत्रवेदपरिसंख्यया ऽप्यमी॥४॥

अर्थ ॥ पाचइंद्रियो तथा प्राणातिपातादिक पाचअव्रत अने क्रोधादिक चारक षाय वली मनादिक त्रणयोग तथा कायिकादिक पचीस असत्क्रिया एरीते सर्व मलीने आश्रव बेतालीस प्रकारनुंछे ॥ ४ ॥

इंद्रवज्रावृत्तं॥ इत्याश्रवाणामधिगम्य तत्वं निश्चित्य सत्व श्रुतिसन्निधा नात्॥एपा निरोधे विगलद्विरोधे सर्वात्मना द्राग् यतितव्यमात्मन्॥५

अर्थ ॥ एहवुं आश्रवनु तत्वजाणीने निश्चयथकी ... नि ... एटले आगम सिद्धांतरूप शास्त्रनुं छतापणुं तेजेनाथकी वि... शत्रुनो निरोधकरवा विषे हेआत्मातु तुरत यत्नकर ॥

सप्तमभावनाष्टकं धनाश्रीरागेण गीयते ॥ चोलीमारेहंसारेविषयनराचियें एदेशी ॥

परिहरणीया रे सुकृतिभिराश्रवा हृदि शमतामवधाय॥प्रभवं
त्येते रे भृशमुच्छृंखला विभुगुणविभववधाय ॥ परि० ॥ १ ॥
कुगुरुनियुक्ता रे कुमतिपरिप्लुता ॥ शिवपुरपथमपहाय
प्रयतंतेऽमी रे क्रियया डुष्टया प्रत्युत शिवविरहाय ॥ परि०॥२॥

अर्थ ॥ सुकृतवतपुरुषे हृदयमां समताधारणकरी आश्रवनोपरिहारकरवो अरे जीव आ लोखंडना शांकलनीपरें बाधीराखनारो जे आश्रव ते विभुजे परमात्मा तेनाशुणरूप ऐश्वर्यतानो नाशकरवाने समर्थथायछे ॥ १ ॥ कुगुरुयेकरेलीप्रेरणा अने कुमतियेकरी युक्तथयला हेडुष्टजीव तुं कायिकाधिक डुष्टक्रियाउंमां प्रवर्त्तवे करी मोक्षपुरीयें जवानो मार्गमूकीने उलटोमोक्षमार्गनो नाशकरवानुंज यत्नकरेछे॥२॥

अविरतचित्ता रे विषयवशीकृता विषहंते विततानि ॥ इह
परलोके रे कर्मविपाकजान्यविरलडुःखशतानि ॥ परि०॥ ३ ॥
करिझपमधुपा रे शलभमृगादयो विषयविनोदरसेन ॥ हंत
लभंते रे विविधा वेदना बत परिणतिविरसेन ॥ परि० ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ जेनाचित्तमां वैराग्यनथी एहवा विषयने पराधीनथयलाप्राणी इहलोके तथा परलोकेपण निरंतरपणे कर्मनापरिणामोथी उत्पन्नथयलां शेकमाडुःखोनुं सहनकरेछे ॥ ३ ॥ हस्ति मत्स्य भ्रमर पतग अने मृग एवा पाचजातना प्राणीओ अनुक्रमेस्पर्श रस गध रूप शब्द ए एकेकाविषयना विनोदरसेकरी नानाप्रकारनी वेदनाओने एविषयोना परिणाम जे विरस एटले मावरस तेणेकरीपामेछे ए महो टुःखेदनुं कारणछे ॥ ४ ॥

उदितकषाया रे विषयवशीकृता यांति महानरकेषु परिव
र्त्तते रे नियतमनंतशो जन्मजरामरकेषु ॥ परि० ॥ ५ ॥
मनसा वाचा रे वपुषा चंचला डुर्जयडुरितभरेण ॥ उपलि
प्यंते रे तत आश्रवजये यततां कृतमपरेण ॥ परि० ॥६ ॥

अर्थ ॥ जेने क्रोधादिक कषाय उदयमांआव्याछे तेप्राणीओ पाचइंद्रिओना विषयोने स्वाधीनथयलाछे तेणेकरी महोटा नरकमा जायछे अने अनंतिवार जन्म जरामरणकरेछे ॥५॥ आश्रवेकरी चचल थयला प्राणी मन वचन अने कायाना

योगे डुर्जय एहवुंजेपाप तेणेकरी युक्तथायछे माटे चतुरपुरुषे आश्रवने जीतवानुं प्रयत्नकरवु अने नवा कर्म बांधवानही ॥ ६ ॥

शुद्धायोगा रे यदपि यतात्मनां स्रवते शुभकर्माणि ॥ कांचन निगडांस्तान्यपि जानीयात् हतनिर्वृतिशर्माणि ॥ परि० ॥ ७ ॥ मोदस्वैव रे साश्रवपाप्मना रोधे धियमाधाय ॥ शांतसुधारसपानमनारतं विनय विधाय विधाय ॥ ८ ॥ इतिश्री शांतसुधारस गेयकाव्ये आश्रवभावनाविभावनोनाम सप्तमः प्रकाश

अर्थ ॥ जेणेपोतानुं मनस्वाधीनकर्युं तेनाशुद्धयोगजेछे ते शुद्धयोग जोपण शुभकर्मोनेज स्रवेछे एटले शुभकर्मोनीज प्राप्तिकरावेछे परतु तेकर्मोपण मोक्षसुख ना नाशकरवाने शोनानीबेडीसरखा जाणवा ॥७॥ माटे विनयविजयजी उपाध्याय पोते पोतानेकहेछे के अरेविनय आवाप्रकारेकरी आश्रवसहित जेपाप तेनोनि रोधकरवा उपर बुद्धिराखी वारवार शातिसुधारसनो पानकरीकरीने आनदपाम॥८॥ इतिश्रीशातसुधारस गेयकाव्ये आश्रवभावनाविभावनो नाम सप्तम प्रकाश

स्वागतावृत्तद्वय ॥ येन येन य इहाश्रवरोध. संभवेन्नियतमौपयिकेन ॥ आद्रियस्व विनयोद्यतचेतास्तत्तदांतरदृशा परिभाव्य ॥ १ ॥ संयमेन विपयाविरतत्वे दर्शनेन वितथाभिनिवेशा॥ध्यानमार्तमथ रौद्रमजस्त्र चेतस· स्थिरतया च निरुध्या·॥२॥

अर्थ ॥ हवेआठमी सवरभावनाभावेछे अरेविनय आजगतमा जे जे उपायेंकरी निश्चयथी आश्रवनोरोध थतोहोय ते ते उपाय ताहरी अंतरदृष्टियेजोइ तेनेविषे चित्त लगामीने तेनेस्वीकारकर ॥ १ ॥ एटले संयमेकरीने विषयउपर वैरागकर सम्यक्त्व दर्शनेकरीने अभिनिवेशके० मिथ्यात्वनो आग्रहमूकीआप अने चित्तना स्थिरपरिणाम पणे करीने आर्त्त तथा रौद्र ए बे ध्याननु निरतर रुधनकर ॥ २ ॥

शालिनीवृत्तं ॥ क्रोध क्षांत्या मार्दवेनाभिमानं हन्या मायामार्जवेनोज्ज्वलेन॥लोभ वारांराशिरौद्रं निरुध्या सतोषेण प्रांशुना सेतुनेव॥३॥

अर्थ ॥ क्षमायेकरी क्रोधनो जयकर मार्दवेकरी अभिमाननो जयकर सरलपणे करी मायाजेकपट तेने हणीनाख वलीसमुद्रजेवो डुष्कर जे लोभ तेहनो उचो सेतु सरिखोजे सतोष तेणेकरी रोधकर ॥ ३ ॥

स्वागतावृत्तं॥ गुप्तिभिस्तिसृभिरेवमजय्यान् त्रीन् विजित्य तरसाऽधमयोगान् ॥ साधुसंवरपथे प्रयतेथा लप्स्यसे हितमनीहितमिद्ध ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ एमज मनगुप्ति वचनगुप्ति अने कायगुप्ति एत्रण गुप्तियेकरीने जे जीतवाने घणाजकठीन निंदनीक एहवा त्रण डुष्टयोग्य तेने जीती रूडासंवर मार्गनेविषे यत्नकर एटले प्रकाशवंत देदीप्यमान अने कोइकाले विनाशने न पामनारा एहवा जे हितार्थ तेने पामीस अर्थात् मोक्षसुखने पामीस ॥ ४ ॥

मंदाक्रांतावृत्तं ॥ एवं रुद्धेष्वमलहृदयैराश्रवेष्वाप्तवाक्यश्रद्धाचंचत्सितपटपटुः सुप्रतिष्ठानशाली ॥ शुद्धैर्योगैर्जवनपवनैः प्रेरितो जीवपोतः स्रोतस्तीर्त्वा भवजलनिधेर्याति निर्वाणपुर्या ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ एवाप्रकारेंकरी स्वछहृदयवत पुरुषें आश्रवनो रोधकरवो पछे आप्तके० पोतानाहितवांछक तीर्थंकरादिक पुरुषोना वाक्योउपर जेश्रद्धारावी तेजाणीये वाहणनेविषे एकसुंदर अनेउज्वल वावटोचडाव्यो एहवो नूतनपीठबंध थयो थको शुद्धमनोयोग शुद्धवचनयोग शुद्धकाययोग एत्रणयोग तेहिज जाणिये कोइक वेगवानवायरो तेणेकरी प्रख्योथको जीवरूपीओ जहाज तेसंसारसमुद्रनो प्रवाहतरीने तुरत मोक्षरूप नगरिये जइपहोचेछे ॥ ५ ॥

॥ अष्टमभावनाष्टकं नटरागेण गीयते महावीरमेरो लालन एदेशी ॥

शृणु शिवसुखसाधनसदुपायं सदुपायं रे सदुपायं॥ शृणु शिवसुखसाधनसदुपायं ॥ ज्ञानादिकपावनरत्नत्रयपरमाराधनमनपायं ॥ शृ० ॥१ ॥ ॥ विषयविकारमपाकुरु दूरं क्रोधं मानं सहमायं॥ लोभं रिपुंच विजित्य सहेलं॥ भज संयमगुणमकषायं॥ शृ० ॥२॥

अर्थ ॥ हे विनय तुं मोक्षसाधननो रूडोउपाय सांभल एकतो निर्दोषपवित्र ज्ञानादिक रत्नत्रयनुं आराधनकर बीजो पांचेइंद्रियोना विषयसंबंधीजे विकारोछे तेहनेदूरकर त्रीजोमायासहित क्रोध मान अनेलोभरूप शत्रुओनी.हेलनाकरी सहेजमां श्रमबिना एचारेकषायने हलकटजेवा जाणी जीतीजेइने कषायथी शून्यथयलो एहवोजे संयमरूप गुण तेनुंसेवनकर ॥ २ ॥

उपशमरसमनुशीलय मनसा रोषदहनजलदप्राय ॥ कलय
विरागं धृतपरभागं हृदि विनयं नाय नायं ॥ शृ० ॥ ३ ॥
आर्तं रौद्र ध्यान मार्जय ॥ दह विकल्परचनानायं ॥
यदियमरुद्धा मानसवीथी॥ तत्वविद. पंथा नाय ॥शृ० ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ क्रोधरूपअग्नीने शमाववा मेघनीपरे शांतिनोकरनार एह्वोजे उपशम रस तेहने तु मनमा धारणकर हे विनय हृदयमां धारणकरेलोजे परपुंजलादिक संबंधी भाग तेहने तद्वाराहृदयमाथी नीलानीलाके० काढीकाढीने अत्यत गुणवा नजे वैराग्य तेने धारणकर वली आर्त्तध्यान अनेरौद्रध्यानने धारणकरीसनही॥३॥ तथा संकल्प विकल्पनीजेजालछे तेने बाली भस्मकरीनाख कारणके मनो योगना मार्गने रुंधी न राखवो एवोकाइ तत्व वेत्तानो मार्गनथी तत्ववेत्ता पुरुष नेतो मनोयोग मोकलो राखवुज नही ॥ ४ ॥

संयमयोगैरवहितमानसशुद्ध्या चरितार्थयकाय ॥ नानामत
रुचिगहने भुवने निश्चिनु शुद्धपथं नायं ॥ शृ०॥५॥ ब्रह्म
व्रतमंगीकुरु विमल बिभ्राण गुणसमवायं ॥ उदित
गुरुवदनादुपदेशं संगृह्याण शुचिमिव रायं ॥ शृ० ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ सयमनायोगथी थयलीजेमननीशुद्धि तेणेकरीने काइपण कृतार्थकर नानाप्रकारनी रुचिसहीत विचित्रप्रकारना मतेकरी गहन एटलेव्याप्त एह्वो आज गतमा नयरूप शुद्धमार्ग एटले स्याद्वाद शैलीरूपजे जैनमार्ग तेनोशोधकर ॥ ५॥ वली गुणना समुदायने धरनार अत्यंतनिर्मल एह्वाब्रह्मचर्यव्रत ने स्वीकारकर अने गुरुयेकरलाउपदेशने जेरीतें शुद्धद्रव्यनो सग्रहकरिये तेरीतेंसंग्रहकर ॥६ ॥

संयमवाङ्मयकुसुमरसैरति सुरभय निजमध्यवसायं ॥ चेतन
मुपलक्षय कृतलक्षणज्ञानचरणगुणपर्यायं ॥ शृ० ॥ ७ ॥ वदन
मलंकुरु पावनरसनं जिनचरितं गाय गायं ॥ सविनय शांतिसु
धारसमेनं चिरं नद पायं पाय ॥ शृ० ॥ ८ ॥ इति श्रीशांतसुधा
रसगेयकाव्ये संवरभावनाविभावनो नाम अष्टम प्रकाश

अर्थ ॥ सयमना प्रतिपादन करनारा एह्वा परमेश्वरनी वाणीमय जेपुष्प ते पुष्पोना रसनीसुगधी पोताना अध्यवसायनेअत्यंतपणेकर अने ज्ञानादिक गुणपर्या

स्वरूप लक्षणनो करनारुं एहवोजे तह्मारुं चैतनछे तेने तु ओलख ॥ ७ ॥ पवित्र अने जलारसेकरी सहित एहवु परमेश्वरनाचरित्रोनुं गायन करीकरीने पोताना मुखने अलंकृतके० शोभितकर (भूषितकर) वली विनयसहित आ शांतिसुधारसनो पान करी करीने घणाकाल सुधी आनंद मग्नमां रहे ॥ इतिश्री शांतिसुधारस गेयकाव्ये संवरभावनाविभावनो नाम अष्टम. प्रकाश. ॥

इडवज्राटृत्तं॥यन्निर्जरा द्वादशधा निरुक्ता तत् द्वादशानां तपसां विभेदात्॥ हेतुप्रभेदादिह कार्यभेदः स्वातंत्र्यतस्त्वेकविधैव सा स्यात् ॥१॥

अर्थ ॥ हवे निर्जरा भावनाभावेछे निर्जराजे बारप्रकारनी कहीछे तेबारप्रकारना तपने भेदेंकरीथाय इहां कारणनेभेदें कार्यनो भेदथाय तेणेकरी बारप्रकार कहेवाय नहीकां स्वतंत्रपणेतो निर्जरा एकप्रकारनीजछे ॥ १ ॥

अनुष्टव्टृत्तद्वयं॥काष्ठोपलादिरूपाणां निदानानां विभेदतः॥वन्हिर्यथैकरूपोपि पृथग्रूपो विवक्ष्यते॥२॥ निर्जरापि द्वादशधा तपोभेदैस्तथोदिता॥ कर्मनिर्जरा णात्मा तु सैकरूपैव वस्तुतः ॥ ३ ॥

अर्थ ॥जेम कारणरूप काष्ठ अने पाखाणना जूदाजूदा भेदछे तेनाभेदेंकरी यद्यपि अग्निएकरूपछे तथापि भिन्नभिन्नरूप देखायछे एटले आ अमुक काष्टनीअग्नि अथवा आ अमुक पाखाणनी अग्नि इत्यादिक अग्निना भेदकहेवायछे ॥ २ ॥ तेमज तपनाभेदेकरी निर्जरा बारप्रकारनीकहीछे पण वस्तुतत्वें विचारतां कर्मनिर्जरा स्वरूप जे छे तेतो एक रूपजछे ॥ ३ ॥

उपेंद्रवज्राटृत्तं॥ निकाचितानामपि कर्मणां यद्गरीयसां भूधरदुर्धराणां॥ विभेदने वज्रमिवातितीव्रं नमोस्तु तस्मै तपसेऽद्भुताय ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ पर्वतजेवा दुर्धर एहवा महोटा निकाचितकर्मोनो भेदकरवाविषे वज्रनी परें अत्यंततीव्र एहवुअद्भुतजे तप तेने मह्यारो नमस्कार होजो ॥ ४ ॥

उपजातिटृत्तं ॥ किमुच्यते सत्तपसः प्रभावः कठोरकर्मार्जितकिल्बिषोपि ॥ दृढप्रहारीव निहत्य पापं यतो ऽपवर्गं लभतेऽचिरेण॥५॥ यथा सुवर्णस्यशुचि स्वरूपं दीप्तः कृशानुः प्रकटीकरोति ॥ तथात्मनः कर्मरजो निहत्य ज्योतिस्तपस्तद्विशदीकरोति ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ तपना रूडाप्रभावनुं केटलुं वखाण करिये जेटलुं वखाणकरिये तेटलुं

थोमुंजछे केमके दृढप्रहारी जेवा पुरुषोए महोटा कगेर कर्मं करीने अत्यंत पापोनो संपादान कर्युंहतो तेपण तपस्याना प्रभावे समस्त पापोनो नाशकरीने थोडाज काळमा मोक्ष प्रतें पाम्या ॥ ५ ॥ जेम प्रदीप्तअग्नि सुवर्णनु पवित्रस्वरूप प्रगटकरेछे तेमज तपजेछे तेपण आत्मामांथी कर्मरूप रजनो नाशकरीने साक्षात् आत्मानुं ज्योतिस्वरूप प्रगटकरेछे ॥ ६ ॥

स्रग्धरावृत्तं॥ बाह्येनाभ्यंतरेण प्रथितबहुभिदा जीयते येन
शत्रुश्रेणी बाह्यांतरंगा भरतनृपतिवत् भावलब्धद्रढिम्ना॥
यस्मात्प्रादुर्भवेयु प्रकटितविभवा लब्धय ःसिद्धयश्च वं
दे स्वर्गापवर्गार्पणपटु सततं तत्तपो विश्ववंद्य ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ जेना बाह्य अने अभ्यंतर भेदेकरी घणाभेद प्रख्यातछे एहवा तपना उपर विशेषभावना योगेंकरी जेहने दृढपणु लब्धके० प्राप्तथयतो ते तपेकरी दुस मनादिक बाह्यशत्रु अने रागादिक अंतरग शत्रु तेनीजे श्रेणीके० पंक्ति तेने भरत राजानीपरे जीतीजवायछे वली जेतपथकी ऐश्वर्यताने प्रगटकरनारी अव्वावीसल ब्धीओ अने आवसिद्धिओ प्रगटथायछे तथा जे स्वर्ग अने मोक्षना सुखआपवामा कुशल वलीजगतने पूजवायोग्य एहवोजेतप तेहनेहुं निरंतर नमस्कारकरुंछु ॥ ७ ॥ अथनवमभावनाष्टक सारगरागेण गीयते ॥ जिणदरायसरण तिहारे आयोएदेशी॥

विभावय विनय तपोमहिमानं॥ ध्रुवपद ॥ बहुभवसंचितदु
ष्कृतममुना ॥ लभते लघुलघिमानं ॥ वि० ॥ १ ॥ याति
घनापि घनाघनपटली ॥ खरपवनेन विराम॥ भजति त
था तपसा दुरिताली ॥ क्षणभंगुरपरिणामं वि० ॥ २ ॥

अर्थ ॥ विनयविजयजी पोताने उपदेशकरेछेके अरेविनय तु तपनामहिमानी भावनाकर जेनायोगथकी घणाभवनुं संचितकरेलु पाप तुरतज हलकापणुपामे छे ॥ १ ॥जेम तीक्ष्णवायुये करी महोटी महोटी मेघनीपक्तिओ नाशपामेछे तेमज तपेंकरीने महोटीमहोटी पापनीपक्तिओ एक क्षणमात्रमा नष्टथइजायछे ॥ २ ॥

वांछितमाकर्षति दूरादपि रिपुमपि व्रजति वयस्यं॥ तप इदमाश्र
य निर्मलभावादागमपरमरहस्य॥३॥अनशनमूनोदरता वृत्तिह्रा
सं रसपरिहारं भज सांलीन्य कायक्लेशं तप इति बाह्यमुदार॥४॥

अर्थ ॥ वळी जे वांछितार्थ घणुंदूरहोय तेनेपण नजीकआणीआपेछे तथाशत्रु नेपण मित्रकरेछे एह्वाएतपने शास्त्रनुं परमरहस्य जाणीने निर्मलभावे आदर ॥ ॥ ३ ॥ तेतपनाबारभेदछे १ अनशन २ ऊनोदरी ३ वृत्तिन्हास एटले वृत्तिसंक्षेप ॥ रसपरिहार ५ संलीनता एटले इंद्रियोनोरोधवु एकांतेंबेसवुं ६ कायक्लेश एछप्रकारनुं महोटुं बाह्यतपछे तेनुं तु सेवनकर ॥ ४ ॥

प्रायश्चित्तं वैयावृत्यं स्वाध्यायं विनयं च ॥ कायोत्सर्गं शुभध्यानं आभ्यंतरमिदमंच॥वि०॥५॥शमयति ताप गमयति पाप रमयति मानसहंसं॥हरति विमोहं दूरारोहं तप इति विगताशंसं ॥वि०॥६॥

अर्थ ॥ १ प्रायश्चित्त २ वेयावच्च ३ स्वाध्याय ४ विनय ५ कायोत्सर्ग ६ शुभ ध्यान एछप्रकारना आभ्यंतर तपछे तेनेसेव ॥ ५ ॥ एतप अनेकप्रकारना संसारी कतापनी शांतिकरेछे अनेपापनोनाशकरेछे तथा मनरूपहंसने रमाडेछे वळी नि संशयपणे आजगतमां दुःखोनेदूरकरवा असमर्थ एह्वोजे मोहतेनो नाशकरेछे ॥६॥

संयमकमलाकार्मणमुज्वलशिवसुखसत्यंकार चिंतितचिंतामणिमाराधय तप इह वारं वारं ॥वि०॥७॥ कर्मगदौषधमिदमिदमस्य च जिनपति मतमनुपानं॥विनय समाचर सौख्यनिधानं शांतिसुधारसपानं॥वि०॥८
इतिश्रीशांतसुधारसगेयकाव्ये निर्जराभावनाविभावनोनामनवमःप्रकाशः

अर्थ ॥ वळीएतपते चारित्ररूप लक्ष्मीने वशकरवानी विद्याछे तथा सुंदर मोक्षना सुखआपवाने विशारदछे वळी चिंतितार्थ देवाने चिंतामणीरत्नसरखोछे एह्वा तपने आजगतमां हेविनय तु वारंवार अंगीकारकर ॥ ७ ॥ हेविनय कर्मरूप रोगनु औषध अने तीर्थंकरोनो जे मत तेछे अनुपानजेह्नुं तथा समस्त सुखनुं निधान एह्वोजे शांतसुधारस तेनुंतुपानकर ॥ ८ ॥ इतिश्रीशांतसुधारस गेयकाव्ये निर्जराभावनाविभावनो नाम नवमः प्रकाशः

उपजातिवृत्तं ॥ दानं च शीलं च तपश्च भावो धर्मश्चतुर्धा जिनबांधवेन॥निरूपितो यो जगतां हिताय स मानसे मे रमतामजस्त्रं॥१॥

अर्थ ॥ हवेदशमी धर्मभावना भावेछे तीर्थंकरदेवें लोकहितार्थे दानशील तप अने भाव एरीतें चारप्रकारनो धर्मकह्योछे तेधर्ममारामनमां सर्वकालरहो ॥ १ ॥

इंडवज्रावृत्त त्रयं॥सत्यक्षमामार्दवशौचसंगत्यागार्जवब्रह्मविमुक्तियु
क्तः॥ यः संयम· किंच ततोपगूढश्चारित्रधर्मो दशधायमुक्त ॥ २ ॥ य
स्य प्रजावादिह पुष्पदंतौ विश्वोपकाराय सदोदये ते॥ ग्रीष्मोष्मजी
ष्मामुदितस्तमिलान् काले समावासयत्ति क्षिति च ॥ ३ ॥ उल्लो
लकल्लोलकलाविलासैर्नाप्लावयत्यंबुनिधि क्षितिं यत् ॥ न
घ्नति यत् व्याघ्रमरुद्दवाद्या धर्मस्य सर्वोप्यनुजाव एप. ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ १ सत्य २ क्षमा ३ मार्दव ४ शौच ५ तपधर्म ६ संगत्याग ७ब्रह्मचर्य ८ विशेषप्रकारें मुक्तिएटले निर्लोभतापणुं ए संयम १० आकिंचनता तेणेकरीयुक्त ए रीते दसप्रकारनुं चारित्रधर्म कह्युछे ॥ २ ॥ जे धर्मनापसायेकरी जगतमां चंद्रसूर्य पण सर्वप्राणीमात्रने उपकारकरवाने अर्थे नित्यउदयपणुं पामेछे वलीग्रीष्मऋतुमा नी अत्यंत तप्तथयली जमीनने वर्षाऋतुमा मेघ वर्षादकरीने ठंमिकरेछे ॥ ३ ॥ तथा समुद्रपोताना महोटाकल्लोलेंकरी पृथ्वीनेबुडावतोनथी अने व्याघ्र तथा दावानल अने पवन इत्यादिकोकोइने मारतानथी एप्रतापसर्व धर्मनोजछे ॥ ४ ॥

शार्दूलविक्रीडितं वृत्तद्वयं ॥ यस्मिन्नेव पिता हिताय यतते
भ्राता च माता सुत सैन्यं दैन्यमुपैति चापचपल यत्रा
फल दौर्बल ॥ तस्मिन्कष्टदशाविपाकसमये धर्मस्तु संवर्मि
त सज्ज सज्जन एप सर्वजगतस्त्राणाय बद्धोद्यम ॥ ५ ॥
त्रैलोक्यं सचराचरं विजयते यस्य प्रसादादिद योत्रामु
त्र हितावहस्तनुजृतां सर्वार्थसिद्धिप्रद ॥ येनानर्थकदर्थ
ना निजमह·स्सामर्थ्यतो व्यर्थिता तस्मै कारुणिकाय ध
र्मविभवे जक्तिप्रणामोऽस्तु मे ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ जेवखत पोतानाहितनेअर्थें बाप जाइ माता पुत्र अत्यंतउद्योगकरेछे तेपण धर्मनोजप्रतापजाणवो अनेवली धनुष्यनायोगेकरी चपलथयलो जे सैन्यके० लशकर तेपण दैन्यके० दीनपणाने पामेछे तथा जेवखतपोतानी भुजाओनुंबल निष्फलथायछे एवी कष्टअवस्थाना परिणामकालें-पण सज्जनएह्वुजे आधर्मरूप मित्रते पोतानाअंगमां बख्तरजेवुथइ जाएे एक धर्मरूप बख्तरज पहेर्युहोयनी एट

ले आंगमां वख्तरपहेरया नीपरेंथयीने सर्वजगतना रक्षणार्थे उद्योगकरेछे ॥ ५ ॥ वली जेहनापसायथकी स्थावर अने जंगमसहित जगत शोनेछे तथा जे श्रालोकें प्राणीओने हितकरवाने योग्यथयीने सर्वअर्थनी सिद्धताने पमाडेछे जेणेपोताना तेजस्वीसामर्थ्यकरी पापरूपविटंबनानो नाशकरीनारव्युछे एह्वो जे दयावंत धर्मरूप प्रभु तेने मह्वारो नमस्कार होजो ॥ ६ ॥

मंदाक्रांतावृत्तं ॥ प्राज्यं राज्यं सुभगदयिता नंदनानंदनानां रम्यं रूपं सरसकविता चातुरी सुस्वरत्वं ॥ नीरोगत्वं गुणपरिचयः सज्जनत्वं सुबुद्धि किंतु ब्रूमः फलपरिणतिं धर्मकल्पद्रुमस्य ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ महोटुंराज्य सुंदरस्त्री पुत्र पुत्रीओ रमणीकरूप घणीज सरस कविता करवानी चतुराइ सुस्वरपणुं आरोग्यतापणुं गुणोनोपरिचय तथासज्जनपणुं अने रूडीबुद्धि एसर्वेवाना ते धर्मरूप कल्पवृक्षना फलछे ॥ ७ ॥

॥ अथ दशमभावनाष्टकं वसंतरागेण गीयते नवितुमेवढोरेहीरविजयसूरिराया एदेशी॥

पालय पालय रे पालय मां जिनधर्म ॥ मंगलकमलाकेलिनिकेतन करुणाकेतन धीर ॥ शिवसुखसाधन भवभयबाधन जगदाधार गभीर ॥ पा० ॥१॥ सिंचति पयसा जलधरपटली भूतलममृतमयेन ॥ सूर्याचंद्रमसावुदयेते तव महिमातिशयेन ॥ पा० ॥ २ ॥

अर्थ ॥ हे जैनधर्म तु मह्वारुंरक्षणकर मह्वारुं रक्षणकर तु मांगलिकरूप लक्ष्मीनुं क्रीडागृहछो वलीकरुणानो स्थानकछो तथा मोक्षसुखनुं साधनछो अने संसारना समस्तभयनो नाशकरनारछो तेमज जगतना जीवोने आश्रयभूतछो अनेअतिगंभीरछो ॥ १ ॥ जे मेघनो समूहते पृथ्वीतलने अमृत सरखा पाणीये करीने सिंचन करेछे अने चंद्र सूर्य जे नित्य उगेछे तेसर्वे ताह्वरोज महिमाछे ॥ २ ॥

निरालंबमियमसदाधारा तिष्ठति वसुधा येन॥तं विश्वस्थितिमूलस्तंभं तं सेवे विनयेन॥पा०॥३॥ दानशीलशुभभावतपोमुखचरितार्थीकृतलोक ॥ शरणस्मरणकृतामिह भविनां दूरीकृतभयशोक ॥पा० ४॥

अर्थ ॥ निरालंब पृथ्वीनेकोइ आधार नहता जेनाआधारथकी रहेछे एह्वो जगतनीस्थितीनो मूलस्तंभ जे धर्म तेने हुं नित्यप्रते विनय एटले भक्तिये करी सेवुछुं॥३॥ दान शील शुभभाव अने तप एचारप्रकारेकरी लोकोने चारित्रार्थनो करनारो अने

जे प्राणी आ जगतमा ए धर्मनो स्मरण करेछे तथा आश्रय करेछे ते प्राणीना नय तथा शोकने दूर करनारो एह्वो ए धर्मछे ॥ ४ ॥

क्षमासत्यसंतोषदयादिकसुन्नगसकलपरिवारः ॥ देवासुरनरपूजित शासन कृतबहुन्नवपरिहार ॥पा०॥५॥बधुरबंधुजनस्य दिवानिशमस हायस्य सहाय ॥भ्राम्यति न्नीमे न्नवगह्नेंगी त्वा बांधवमपहाय॥पा०६
अर्थ ॥ जेनो क्षमा सत्य संतोष दया आदेदेइने समस्तपरिवार सुंदरछे वली देवता दैत्य अने मनुष्योए जेनी आज्ञामान्यकरीछे तथा अनेक जन्म जरा मरण नो परिहार करनारो ते ए धर्मजछे ॥५॥ वलीहे धर्मतु जेनेकोइ नाइनथी तेनोना इ तथा जेनेकोइ सहायनथी तेने रात्रदिवस सहायनो करनार बांधव रूपछो तेम छता बांधवरूप तुजने मूकीने प्राणीओ संसाररूप अरण्यमां फिरेछे॥ ६ ॥

ढंगति गह्नं जलति कृशानुःस्थलति जलधिरचिरेण॥तव कृपयाऽखिल कामितसिद्धिर्बहुना किंतु परेण ॥पा०॥७॥ इह यह्नसि सुखमुदितदशांगं प्रेत्येंडादिपदानि॥क्रमतोज्ञानादीनि च वितरसि निःश्रेयससुखदानि॥८
अर्थ॥हे धर्मरुपमित्र तह्रारीकृपाथकी आरण्य ते मह्रोटा नगर जेवो थाय तथा अग्निते पाणीसरखीथाय अने समुद्रते स्थल सरखो तुरतथइजायछे वधारे शुं कहुं तह्रारी कृपाथकी प्राणीमात्रना सर्व मनोरथ पूर्णथायछे ॥ ७ ॥ आलोकमा जेना अगनेविषे दयारूप धर्म उदयआव्योछे तो तेने इह्रापण पूर्वोक्तप्रकारे सुखआपेछे अने परन्नवे इंद्रादिक देवताओनी पदवीआपेछे वली क्रमेकरी मोक्षसुखने आप नारा एह्वा ज्ञानादिक गुणआपेछे ॥ ८ ॥

सर्वतत्रनवनीतसनातन सिद्धिसदनसोपान ॥ जय जय वि नयवतां प्रतिलवितशांतसुधारसपान ॥ पा० ॥ ए ॥ इतिशांत सुधारस गेयकाव्ये धर्मन्नावनाविन्नावनो नाम दशम प्रकाशः
अर्थ ॥ सर्वशास्त्रोमा नवनीत एटले माखणजेवो सारनूत अने सनातनके० शा श्वत तथा सिद्धिरूपगृह्नो सोपान एटले निसरणीरूप अने जे विनयवंत शिष्यो ने शांतिसुधारसनुं पान करावेछे एह्वोजे धर्म ते जयपामो जयपामो ॥ ए ॥
इतिश्री शांतसुधारस गेयकाव्ये धर्मन्नावनाविन्नावनो नाम दशम प्रकाश

मालिनी वृत्तं ॥ सप्ताधोधो विस्तृता याः पृथिव्यश्छत्राकाराः संति रत्नप्रना द्याः ॥ तान्निः पूर्णो योस्त्यधोलोक एतौ पादौ यस्य व्यायतौ सप्तरज्जुः॥१

अर्थ ॥ हवे इग्यारमी लोकस्वरूप नावनानावेछे सातअधोअधो एटले एकबी जाने नीचेनीचे विस्तीर्ण छत्राकारे रत्नप्रनादिक सातपृथ्वीओछे, तेणेकरी परिपूर्ण एवा अधोलोकरूप सातरज्जुप्रमाणे जेना मह्रोटाबेपगछे ॥ १ ॥

तिर्यग्लोको विस्तृतो रज्जुमेकां पूर्णो द्वीपैरर्णवांतैरसख्यैः ॥ यस्य ज्योतिश्चक्रकांचीकलापं मध्ये कार्श्यं श्रीविचित्रं कटित्र ॥ २ ॥

अर्थ ॥ अने एक रज्जु प्रमाण विस्तारवंत असंख्याता द्वीपसमुद्रेकरी व्याप्त एह वो तिर्यग्लोकमां कृशपणानी शोनायेकरी युक्तछे वली ज्योतिष चक्ररूप कांचीकलापाये युक्त जेवुं सुंदर कणदोरोछे ॥ २ ॥

लोकोऽथोर्ध्वं ब्रह्मलोके द्युलोके यस्य व्याप्तौ कूर्परौ पंच रज्जू ॥ लोकस्यांतो विस्तृतो रज्जुमेकां सिद्धज्योतिश्चित्रको यस्य मौलिः ॥ ३ ॥

अर्थ ॥ जेनो ऊर्ध्वलोके ब्रह्मनामा देवलोक पांचरज्जुप्रमाणे व्याप्त ते कोपरा सरखो कूरपरछे अने जेनुं लोकनेअंते एकरज्जुविस्तारपणे जे सिद्धशिला तेमस्तकछे॥३

यो वैशाखस्थानकस्थायिपादः श्रोणीदेशे न्यस्तहस्तद्वयश्च ॥ कालेऽनादौ, शश्वदूर्ध्वंदमत्वाद्बिभ्राणोपि श्रांतमुद्रामखिन्नः ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ जेना मथनकरवाना दंडने स्थानकेपगछे एटले छासमथन करवाना दंमनी परे जेना पगपसरेलाछे जेणे पोतानी कटीउपर बेहाथ राखेलाछे एहवोथको अनादिकालनुं निरंतर ऊर्ध्वदमपणे जितेंद्रियथको शांतमुद्रा धरीरह्योछे पण खिन्ननथी॥४

सोयं ज्ञेयः पूरुषो लोकनामा षड्द्रव्यात्माऽकृत्रिमोनाद्यनंत ॥ धर्माधर्माकाशकालात्मसंज्ञै र्द्रव्यैः पूर्णः सर्वतः पुद्गलैश्च॥ ५ ॥

अर्थ ॥ षटद्रव्यरूप जेना आत्मानुं स्वरूपछे जेनेकोइये कर्योनथी जेनो जन्म अथवा मृत्युथयोनथी वली धर्म अधर्म आकाश काल जीव अने पुद्गल एपांचद्रव्यकरी सर्वस्थले परिपूर्ण एवो आ चउदराज लोकनामा पुरुषजाणवो ॥ ५ ॥

रंगस्थानं पुद्गलानां नटानां नानारूपैर्नृत्यतामात्मनां च ॥ कालोद्योगस्वस्वनावादिनावैः कर्मातोद्यैर्नर्तितानां नियत्या ॥ ६॥

अर्थ ॥ वली जे काल उद्योग स्वस्वनावादिकनावे कर्मरूपवाजित्रें नियतियेक

री नानाप्रकारना रूपेकरी नचावेला जीवोनुं अने नाचनारोजे पुद्गलरूप नाटकी ओ तेनुं रंगस्थान एटले रंगमंडपछे एवो एचउदराज लोकनामा पुरुषछे ॥ ६ ॥

एवं लोको ज्ञाव्यमानो विविक्त्या विज्ञाना स्यान्मानसस्थैर्यहेतु ॥
स्थैर्यं प्राप्ते मानसे चात्मनीना सुप्राप्यैवा ऽध्यात्मसौख्यप्रसूति ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ एरीतेलोकने विवक्त एटले जूदोजूदो स्पष्टपणे ज्ञाव्यो थको विज्ञानीपुरुषो नामनने स्थिरकरवानो कारण तेहीजथायछे जेवारें मनस्थिरथयो तेवारें आत्माने हितकरनारी अध्यात्मिक सुखनी प्राप्तिसुलन्नथायछे ॥ ७ ॥ सप्तनिर्मालिनीवृत्तैः कुलकं ॥ अथ एकादशज्ञावनाष्टक काफीरागेणगीयते आजसखीमनमोहनो ॥ एदेशी

विनय विज्ञावय शाश्वतं ॥ हृदि लोकाकाशं ॥ सकलचराचरधा रणे परिणमदवकाशं ॥ वि० ॥ १ ॥ लसदलोकपरिवेष्टितं गणनाति गमान ॥ पंचज्ञिरपि धर्मादिज्ञि सुघटितसीमानं ॥ वि० ॥ २ ॥

अर्थ ॥ विनयविजयजी उपाध्याय पोताने समजावेछेजे अरेविनय शाश्वतो चिरकाल रहेनारो एहवो लोकाकाशतु ताहरा हृदयमां धारणकर जेमा समस्त स्थावर अनेजंगमपदार्थोने धरवाविषे पूर्णअवकाशछे ॥ १ ॥ वलीशोज्ञायमान अ लोकेकरी वेष्टितके० विंटयुंछे तथा जे गणनाके० परिमाण मूकीने रह्योछे केमके असंख्यातो लोकाकाशछे माटे, वली जेनीसीमाधर्मादिक पांचद्रव्येंकरी सुघटितके० रूडीरचनाये करी रचितछे एहवो ए चउदराज लोकनामा पुरुषछे ॥ २ ॥

समवघातसमये जिनै परिपूरितदेहं ॥ असुमदणुकविविधक्रिया गुणगौरवगेह ॥ वि० ॥ ३ ॥ एकरूपमपि पुद्गलै कृतविविधविवर्तं ॥ काचनशैलशिखरोन्नतं कचिदवनतगर्तं ॥ वि० ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ वली लोकनामा पुरुषनेविषे श्रीतीर्थंकरदेव समुद्घातना समये पोतानी आत्माना प्रदेशेकरीने चउदेराजलोकना समस्तज्ञाग परिपूर्णकरेछे तथा असुमत्के० प्राणी अने अणुके० परमाणु तेमनी नानाप्रकारनी जेक्रिया अनेगुण तेनागौरवप णानुं स्थानकजाणवु ॥ ३ ॥ वली ए लोकाकाश पुरुषमा यद्यपि रूपने धारणकर नारुं एक पुद्गलद्रव्यछे तेणे नानाप्रकारना करेला एहवा किहाक मेरूना शिखरप्र माणेउंचा सुवर्णमयपर्वतोछे वलीकिहाकतो गर्ता एटले खाडाओछे ॥ ४ ॥

क्वचन तविपमणिमंदिरैरुदितोदितरूपं ॥ घोरतिमिरनरकादिभिः क्वचनातिविरूपं ॥ वि० ॥ ५ ॥ क्वचिदुत्सवमयमुज्वलं जयमंगल नादं ॥ क्वचिदमंदहाहारवं ॥ पृथुशोकविपादं ॥ वि० ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ वली किहांक तो देवताओना जुवन तेनी सूर्यकांत मणीरत्ननी शोनायें करी सुंदररूप पणाना उदयने पाम्योछे एटले उदितोदित रुपनेपाम्योछे वली किहांक नयंकर अंधकार अने नरकादिके अत्यंत विरूप एटले मागारूप पणाने पाम्योछे ॥ ५ ॥ वली किहाकतो उत्सवमयछे एटले उज्वल जयमंगलना वाजित्रना नादेंकरी युक्तछे तथा किहाकतो अत्यतशोक अने खेदे करीयुक्त जेमांथी महोटो हाहाकार शब्द निकलीरह्योछे एहवु पुजल इव्यछे ॥ ६ ॥

वहुपरिचितमनंतशो निखिलैरपिसत्वैः जन्ममरणपरिवर्तिभिः कृतमुक्तममत्वैः ॥ वि० ७॥ इहपर्यटनपराङ्मुखाः ॥ प्रणमत नगवंतं ॥ शांतसुधारसपानतो धृतविनयमवंतं ॥ ८ ॥ इतिश्रीशांतसुधारसगेयकाव्ये लोकस्वरूपनावनाविनावनो नामैकादशः प्रकाशः

अर्थ ॥ वली लोकमां पुजलनो स्वरूप विशेषें कहेछे जेने जन्म मरणाना योगें करी फिरनारा प्राणी पूर्वपूर्व ममत्वनी परंपरायेकरी अनंति अनंतिवार [illegible] क्योछे अनेजेनुं सर्वप्राणीओए अनतिवार घणुंपरिचित कर्युंछे एहवुए पुजल इव्यछे॥ ७ ॥ माटे हेजीव तुजो आलोकरूप पुरुषमां फिरवानेविषे पराङ्मुख [illegible] होय तो शातिसुधारसना पानेकरी विनय धारण करनाराओनुं रक्षण करना वाला जे नगवत परमात्मा तेने नमस्कारकर ॥८ ॥ इतिश्री शांतसुधारस गेयकाव्ये लोकस्वरूपनावनाविनावनो नाम एकादश प्रकाश

मंदाक्रांतावृत्तं॥यस्माद्विस्मापयितसुमनःस्वर्गसंपद्विलासप्राप्तोल्लासाः पुनरपि जनिः सत्कुले नूरिनोगे॥ ब्रह्माद्वैतप्रगुणपदवीप्रापकं निःसपत्न तदुष्प्रापं नृशमुरुधियः सेव्यतां वोधिरत्नं॥ १ ॥

अर्थ ॥ हवेवारमी वोधिडर्लन नावनानावेछे जेनाथकी देवताओपण विस्मयपामे एहवो स्वर्गसंपत्तिनो विलास पामीने जीव आनंद पामता पायछे वलीजेनाथकी अनेकप्रकारना अत्यंत नोगेंकरी युक्त एहवा कुलमां पुनःपुनः ज

नमथायछे तथा परपराये अद्वैत ब्रह्मपदवी पमाडवामां जेनेकोइशत्रुनथी जेनीप्राप्ति पामवी अत्यंतकठीणछे एहवुजे बोधरूपरत्न तेनोहेबुद्धिमतो तमेसेवनकरो ॥ १ ॥

भुजंगप्रयातवृत्तत्रयं॥अनादौ निगोदांधकूपे स्थितानामजस्रं जनुर्मृत्युदुःखार्दितानां॥परीणामशुद्धिः कुतस्तादृशी स्याद्यया हंत तस्माद्विनिर्यांति जीवाः ॥ २ ॥ततो निर्गतानामपि स्थावरत्वं त्रसत्वं पुनर्दुर्लभं देहभाजां ॥ त्रसत्वेपि पंचाक्षपर्याप्तसंज्ञिस्थिरायुष्कवत्वं दुर्लभं मानुषत्वं ॥३॥ तदेतन्मनुष्यत्वमाप्यापि मूढो महामोहमिथ्यात्वमायोपगूढः॥ भ्रमन्दूरमग्नो भवागाधगर्ते पुनः क्व प्रपद्येत तद्बोधिरत्नं॥ ४ ॥

अर्थ ॥ पण अनादि कालना निगोदरूप अंधकार तद्रूप कुवामां रहेनारा निरंतर जन्म मरणना दुःखेंकरी पीडायला प्राणीओने तेवी परिणामशुद्धि केमथाय केमके जेथकी महोटा आनंदे सहित जीव निगोद रूप अंधकार कुवामांथी बाहेरपडेछे ॥ २ ॥ ते निगोदमांथी नीकलीने पण स्थावरमां उपजवुथाय केमके प्राणीने त्रसपणुं पामवुंतो दुर्लभछे वली त्रसपणामां पण पंचेंद्रियपणुं पामवु दुर्लभछे तेमां वलीपर्याप्तिपणु पामवु दूर्लभछे तेमांपण संज्ञी पचेंद्रियपणु दीर्घायु अने मनुष्यपणुं पामवुंतो परमदुर्लभछे ॥३॥महामोह मिथ्यात्व तथा माया एणेकरी युक्तथको मूर्खप्राणी आ मनुष्यपणुं पामीने ससाररूप अगाध खाडामां फिरतो फिरतो बुडयोथको रहेछे तेप्राणीने बोधिरत्न फरीने शीरीतें प्राप्तथसे ॥ ४ ॥

शिखरिणीवृत्तं॥विभिन्नाः पंथानः प्रतिपदमनल्पाश्च मतिनः कुयुक्तिव्यासंगैर्निजनिजमतोल्लासरसिकाः ॥ न देवाः सान्निध्यं विदधति न वा कोप्यरसिकस्तदेवं कालेऽस्मिन् य इह दृढधर्मा स सुकृती॥ ५ ॥

अर्थ ॥ धर्मोना भिन्नभिन्न मार्ग अने भिन्नभिन्न स्थानके कुयुक्तिना व्यासगें एटले अभ्यासे करीने पोतपोताना मतना उदयविषेरसिक एहवा घणामतवाला आ कालमाछे अनेजो देवतानेपूछवाजइयेतो देव काइ कोइपासे आवतोनथी एमजएहवो अतिशयवालोपण कोइनथीके जेने पूछि निर्णय करीये तो एवा आ दुष्करकालमा जेप्राणी धर्मउपर दृढता राखेछे तेज प्राणी पुण्यवान जाणवो॥ ५ ॥

शार्दूलविक्रीडितवृत्तं॥ यावद्देहमिदं गदैर्न मृदितं नोवा जराजर्जरं याव त्वक्षकदंबकं स्वविषयज्ञानावगाहक्षमं॥ यावच्चायुरभंगुरं निजहिते ता वहुधैर्यत्यतां कासारे स्फुटिते जले प्रचलिते पालिः कथं वध्यते ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ जिहांसुधी आशरीर रोगाक्रांत थयोनथी तेमज जिहांसुधी आशरीर जरायेकरी जर्जरीभूतथयोनथी तथा जिहांसुधी आ पांचेंद्रियनो समूह पोतपोताना विषयो लेवाने समर्थछे अने जिहांसुधी आयुष्य क्षीणथयुंनथी तिहांसुधी हेजीव तुं पोताना कल्याणविषे यत्नकर केमके तलोफुटीने पाणी बाहेर नीकली जसे तोपछे पालते केवी बांधीस ॥ ६ ॥

अनुष्टुब्वृत्तं ॥ विविधोपद्रवं देहमायुश्च क्षणभंगुरं ॥
कामालंब्य धृतिं मूढैः स्वश्रेयसि विलंब्यते ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ आशरीर नानाप्रकारना उपद्रवेंकरी युक्तछे आयुष क्षणभंगुरछे एमछतां कोणमूर्ख तेनाउपर संतोष राखी पोताना कल्याणथवाना कार्यमां विलंब करे॥७

॥द्वादशभावनाष्टकं धनश्रीरागेणगीयते॥ हीचेरेहीचेरेपीआहिंडोलडेएदेशी॥

बुध्यतां बुध्यतां बोधिरतिदुर्लभा ॥ जलधिजलपतितसुररत्नयुक्त्या सम्यगाराध्यतां स्वहितमिह साध्यतां ॥ बाध्यताम धरगतिरात्मशक्त्या ॥ बु० ॥ १ ॥ चक्रिभोज्यादिरिव नरभवो दुर्लभो भ्राम्यतां घोरसंसारकक्षे ॥ बहुनिगोदादिकायस्थितिव्यायते ॥ मोहमिथ्यात्वमुखचोरलक्षे ॥ बु० ॥ २ ॥

अर्थ ॥ जेम समुद्रनापाणीमा पडीगयलुं चिंतामणीरत्न पाछोहाथमां आववु अतिदुर्लभछे तेम बोधिपामवीपण अतिदुर्लभछे माटेरूडीरीते बोधिनुं आराधनकरी पोतानुं हितसाधवुं अनेपोतानी शक्तीयेकरी दुर्गतिनो बाधकरवो ॥ १ ॥ घणी निगोदादिक कायस्थितिये करी विशाल अने मोह मिथ्यात्वप्रमुख लाखोगमे चोरटाये युक्त एहवो आ घोर संसाररूप अरण्यमां फिरनारा जीवोने चक्रवर्त्तिना भोजन सरखो मनुष्य जन्म पामवो दुर्लभछे ॥ २ ॥

लब्ध इह नरभवो ऽनार्यदेशेषु यः स भवति प्रत्युतानर्थकारी ॥ जीवहिंसादिपापाश्रवव्यसनिनां माघवत्यादिमार्गानुसारी ॥ बु० ॥ ३ ॥

आर्यदेशस्पृशामपि सुकुलजन्मना॥ दुर्लना विविदिषा धर्मतत्वे ॥ र तपरिग्रहनयाहारसंज्ञार्तिनि हंत मग्न जगद्दुःस्थितत्वे ॥ बु० ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ जो आ जगतमा प्राणी अनार्यदेशमा मनुष्यनव पाम्योतो उलटो अन र्थनुं कारणथायछे केमके जीवहिंसादिक पापाश्रवना व्यसनवाळा जीवोतो माघव ति जे सातमी नरकादिकछे तेना मार्गनुं कारण थायछे ॥ ३ ॥ रूडाकुळमां जन्म पामेलो होय अनेवळी आर्यदेशमा रहेनार होय तेनेपण धर्मतत्व जाणवानी इछा थवीदुर्लनछे कारणके रतके० मैथुन परिग्रह नय अने अहार ए चार नामना दु स्थितपणामा सर्वजगत बूमोपडयोछे ॥ ४ ॥

विविदिषायामपि श्रवणमतिदुर्लनं धर्मशास्त्रस्य गुरुसन्निधाने ॥ वित थविकथादितत्तद्रसावेशतो विविधविक्षेपमलिनेऽवधाने ॥ बु० ॥ ॥ ५ ॥ धर्ममाकर्ण्य संबुध्य तत्रोद्यम कुर्वतो वैरिवर्गोऽतरंग.राग द्वेषश्रमालस्यनिद्रादिको बाधते निहतसुकृतप्रसंग ॥ बु० ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ कदाचकोइने धर्मतत्व जाणवानी इछाहोय अने गुरुसंनिध वेगेहोय तोपण वृथा विकथारसना आवेशथी नानाप्रकारना विक्षेपेकरी जोतेनुंअंत करण मलीन थयुंहोयतो धर्मशास्त्रोनुं श्रवण दुर्लनहोय ॥ ५ ॥ वळी जेप्राणी धर्मने सानळी धर्मनेपाम्यो अने धर्मनेविषे उद्योगपण करवावेगो तेवा प्राणीनेपण पुण्य रूप प्रसंगना नाशकरनारा जे रागद्वेष श्रम आलस निद्रा इत्यादिक अंतरग शत्रु नो समूहछे तेपीडाकरेछे तेथीतेने धर्मपामवु दुर्लनथायछे ॥ ६ ॥

चतुरशीतावहो योनिलक्षेष्विय क्व त्वया कर्णिता धर्मवार्ता ॥ प्राय शो जगति जनता मिथो विवदते ऋद्धिरससातगुरुगौरवार्ता॥बु०॥७॥

एवमतिदुर्लनात्प्राप्य दुर्लनतम वोधिरत्न सकलगुणनिधानं॥कुरु गुरु प्राज्यविनयप्रसादोदित ॥ शातरससरसपीयूषपान ॥ बु० ॥ ८॥

इ० शातसुधारसगेयकाव्ये वोधिनावनाविनावनो नामद्वादश प्रकाश

अर्थ ॥ माटे अहोइति आश्चर्य हेजीव चोरासीलक्ष जीवा योनीमां किहां पण ते धर्मनीवात सानळी हसेके अर्थात् नहीज सानळी हसे केमके घणुकरीने आ जगतमा ऋद्धिगारव रसगारव सातागारव एत्रण महोटा गारवेकरी पीडायला लोकोतो परस्पर एकबीजा साथे वादकरेछे पणधर्मनी वातोसांनळी धर्ममार्गे प्रव

नेतानयी ॥७॥ एम अतिदुर्लन वस्तु करता पण विशेष दुर्लन अने समस्त गुणनुं निधानएवु जे बोधिरत्न ते पामीने गुरुनो अत्यंत विनयकस्यो तेणेकरीने प्राप्तथयुं एहवु जे शांतसुधारस रूप नलोअमृत तेनु तु पानकर एमांकर्त्तायें पोतानुंनाम पणसुचव्युं ॥ ८ ॥ इतिश्री शांतसुधारस गेयकाव्ये बोधिन्नावनाविन्नावनोनाम द्वादश.प्रकाश. एरीते अनित्यादिक बारन्नावनाओनो अधिकार संपूर्णथयो ॥

अनुष्टुब्वृत्तं ॥ सद्धर्मध्यानसंध्यानहेतव. श्रीजिनेश्वरै. ॥ मैत्रीप्रन्नृतयः प्रोक्ताश्चतस्रो न्नावनाः पराः ॥ १ ॥ तथाहुः॥मैत्रीप्रमोदकारुण्यमाध्यस्थ्यानि नियोजयेत् ॥ धर्मध्यानमुपस्कर्तुं तद्धि तस्य रसायनं ॥ २ ॥

अर्थ ॥ हवे मैत्र्यादिक चारन्नावनाओ न्नावेछे श्रीतीर्थंकरदेवे सत्यधर्मध्याननी धाराना हेतुनूत मैत्रीआदेदेइने बीजी चारन्नावनाओ कहीछे ॥१॥ तेश्रीतीर्थंकरदेवे कहीछे तेमज न्नाविये छैये १ मैत्री २ प्रमोद ३ कारुण्य अने ४ माध्यस्थ्य एचारन्नावनाते धर्मध्यानना नूपणार्थे एटले धर्मध्याननी शोनानेअर्थे योजना करीयकी व्यावनारने चारन्नावनायुक्त जे धर्म ते रसायन (औषधी) तुल्य थायछे ॥ २ ॥

उपजातिवृत्तं॥मैत्री परेषां हितचिंतनं यत् न्नवेत्प्रमोदो गुणपक्षपात.॥ कारुण्यमार्त्तांगिरुजां जिहीर्षेत्युपेक्षणं दुष्टधियामुपेक्षा ॥ ३ ॥ सर्वत्र मैत्रीमुपकल्पयात्मन् चित्यो जगत्यत्र न कोपि शत्रु. ॥ कियद्दिन स्थायिनि जीविते ऽस्मिन् किं खिद्यते वैरिधिया परस्मिन् ॥ ४ ॥ सर्वेप्यमी बंधुतया ऽनुन्नूताः सहस्रशोऽस्मिन्न्नवता न्नवाब्धौ ॥ जीवास्ततो बंधव एव सर्वे न कोपि ते शत्रुरिति प्रतीहि ॥ ५ ॥ सर्वे पितृभ्रातृपितृव्यमातृपुत्रांगजास्त्रीन्नगिनीस्नुषात्व ॥ जीवा. प्रपन्नावहुशस्तदेतत्कुटुंबमेवेति परो न कश्चित् ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ जे बीजानाहितनुं चिंतनकरवु ते मैत्रीन्नावना जाणवी गुणीनो पक्षपातकरवु ते प्रमोदन्नावना जाणवी दुःखीप्राणीना दुःख दुरकरवानी इच्छाराखवी ते कारुण्यन्नावना दुष्टबुद्धीवंत प्राणीउपर उपेक्षाकरवी ते उपेक्षणन्नावना ॥ ३ ॥ हेआत्मातु सर्वत्र मैत्रीतापणुंकर एटले आजगतमा कोइपण महारो शत्रुछे एहवो तु ताहरा मनमा बीजकुन लावीसनही केमके थोडादिवस रहेनारो अल्पमात्र ताहरो जीवतव्यपणुछे तेमा बीजाउपर शत्रुबुद्धि राखीने सुं वृथा खिन्नथायछे ॥ ४ ॥

हेजीव आसंसारसमुद्रमा ए समस्तप्राणीसाथे हजारोवखत ते नाइपणो अनुन व्यो तेमाटे एसर्वे ताहरा नाइओजछे पण कोइ तहारो शत्रुनथी एवीरीते तुजाण ॥ ५ ॥ सर्वजीवो मात्र, ससारमा माता पिता बधु काको पुत्र पुत्री स्त्री, बहेन ठोकरानीस्त्री इत्यादिकरीते ताहरीसाथे श्रोकडो वखत सगपण करीचुकाछे तेमाटे एसर्व ताहारो कुटुंबजछे पण एमाकोइ परकीयनथी एमविचारी सर्वजतु उपर मैत्रिता पणु आदर ॥ ६ ॥

इंद्रवज्रावृत्तद्वय॥ एकेंडियाद्या अपि हंत जीवा॰ पंचेंडियत्वाद्यधिगत्य सम्यक् ॥बोधिं समाराध्य कदा लजते नूयो नवभ्रांतिनिया विरामं॥ ७ ॥या रागरोषादिरुजो जनानां शाम्यतु वाक्काय मनोडुहस्ता ॥सर्वेप्युदासीनरसंरसतु सर्वत्र सर्वे सुखिनोनवंतु॥८॥

अर्थ ॥ फिरी हेजीव तु एवो विचारकर के आ ससारमां जे एकेंड्रियादिक जीवोछे तेपण रुडाप्रकारे पचेंड्रियादिकपणु पामीने ज्ञानाराधनाकरी कोइकालेंपण ससारमा नमवारूप नयनुं अंतकरसे एवुजाणीने तेजीवोनी साथे पण मित्रता कर ॥ ७ ॥ वलीजे प्राणीओने रागद्वेषादिरूप पीडा मन वचन कायाना छुनयोगनो द्रोहकरेछे तेसर्वप्राणी उदाशीनतापणुं पामीने सर्वलोक सुखीथाओ एवोमैत्रीपणु तु सर्वजीवो उपर राख ॥ ८ ॥

॥ अथ त्रयोदशनावनाष्टक देशाखरागेणगीयते रेजीवजिनधर्मकीजिये एदेशी ॥

विनय विचितय मित्रतां ॥ त्रिजगति जनतासु ॥ कर्मविचित्रतया गति विविधा गमितासु ॥वि० ॥ १ ॥ सर्वेते प्रियबांधवा नहि रिपुरिह कोपि ॥ माकुरु कलिकलुप मनो निजसुकृतविलोपि ॥ विन० ॥२॥

अर्थ ॥ हेविनय आ त्रणलोकमा कर्मनी विचित्रतायेकरी नानाप्रकारनी तिर्यचादिक गतिओने पामेलाप्राणी जे छे तेसर्वप्राणीमात्रना समूहउपर तु मित्रतानाव राख केमके एसर्व ताहरा परमप्रिय बाधवजछे पण एमाकोइ तहारोशत्रु नथी माटे फोकट मनने क्लेशेकरी कलुपता मकर कारणके क्रोधजेछे ते तहारा पोतानाज पुण्यनो नाशकरनारोछे ॥ १ ॥ २ ॥ ए बेकाव्यनो अर्थएकछे॰

यदि कोपं कुरुते परो निजकर्मवशेन ॥ अपि नवता किं नूयते हृदि रोषवशेन ॥ वि० ॥३॥ अनुचितमिह कलह सतां ॥ त्यज समरसमीन ॥ नज विवेककलहंसता॥ गुणपरिचयपीन॥वि०॥४॥

अर्थ ॥ माटे जो बीजोकोइ पोताना कर्माधीनपणाथकी ताहराउपर क्रोधकरे छे तो तुपण तहाराहृदयमा तेनाउपर क्रोध शावास्ते करेछे ॥ ३ ॥ अरेजीवतु समतारूप पाणीना तलावनुं मत्सथइने सत्पुरुषोने अयोग्य एहवुजे कलह तेनेमूकीआप अनेगुणोनो परिचय करवाने पुष्टकारी एहवोजे विवेकरूप सरोवर तेमां रमण करवाने हंस जेवो था ॥ ४ ॥

शत्रुजना: सुखिन समे मत्सरमपहाय ॥ संतु गंतुमनसोप्यमी शिवसौख्यगृहाय॥वि०॥५॥सकृदपि यदि समतालवं हृदयेन लिहति ॥ विदितरसास्तत इह रतिं स्वत एव वहंति ॥ वि० ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ हेजीवतुं समस्त शत्रुलोकोनी मंमलीउपर मत्सरताभावनो त्यागकरीने परमसुखीथा अने मोक्षरूप सुखना घरने जाणवाने ताहरुं मनकर ॥ ५ ॥ जोएकवारपण समताना लवनुं ताहरा हृदयमां आस्वादन करीस तो रसज्ञथइने सम्यकउपर पोतानी मेलेज प्रीतिकरीस ॥ ६ ॥

किमुत कुमतमदमूर्छितां दुरितेषु पतंति जिनवचनानि कथंह दान रसाडपयंति॥वि०॥७॥ परमात्मनि विमलात्मनां परिणम्य वसंतु ॥विनय समामृतपानतो जनता विलसंतु॥वि०॥८॥इतिश्रीशांतसुधारसगेयकाव्ये मैत्रीभावनाविभावनोनाम त्रयोदश: प्रकाश:

अर्थ ॥ हे जीवतु शावास्ते कुमतायेंकरी मूर्छितथइने नरकमांपडेछे अने शांतरसथीज भरेला श्रीतीर्थंकरदेवना वचनोनुं केम संरक्षण करतोनथी ॥ ७ ॥ निर्मलअत करणवाला जीवोनामन परमात्माना स्वरूपनेविपेज परिणत थइ रहो अने लोकोनासमूह ते समतारूपी अमृतना पानेकरी विनयनो विलासपामो॥८॥ इतिश्री शातसुधारस गेयकाव्ये मैत्रीभावनाविभावनो नाम त्रयोदश प्रकाश.

स्रग्धरावृत्तं॥धन्यास्ते वीतरागा. क्षपकपथगतिक्षीणकर्मोपरागास्त्रैलोक्ये गंधनागाः सहजसमुदितज्ञानजाग्रद्विरागाः॥अध्यारुह्यात्मशुध्या सकलशशिकलानिर्मलध्यानधारामारान्मुक्ते प्रपन्नाः कृतसुकृतशतोपार्जितार्हत्यलक्ष्मी ॥१॥तेषां कर्मक्षयोत्थैरतनुगुणगणै निर्मलात्मस्वभावैर्गायं

गाय पुनीमस्तवनपरिणतेरष्टवर्णारपदानि ॥धन्यां मन्ये र
सज्ञां जगति ज्ञवतस्तोत्रवाणीरसज्ञामज्ञां मन्ये तदन्या
वितथजनकथाकार्यमौखर्यमग्ना ॥ २ ॥ निर्ग्रंथास्तेपि ध
न्या गिरिगहनगुहागव्हरांतर्निविष्टा धर्मध्यानावधाना
समरससुहिता पक्षमासोपवासा. ॥ येन्येपि ज्ञानवंत
श्रुतविततधियो दत्तधर्मोपदेशा: शांता दांता जिताक्षा
जगति जिनपते शासनं ज्ञासयंति ॥ ३ ॥ दानं शीलं
तपो ये विदधति गृहिणो ज्ञावनां ज्ञावयंति धर्मं धन्या
श्चतुर्धा श्रुतसमुपचितश्रद्धया राधयंति ॥ साध्व्य श्राध्य
श्च धन्या श्रुतविदशधिया शीलमुद्भावयंत्यस्ता न्सर्वान्
मुक्तगर्वा प्रतिदिनमसकृद्भाग्यज्ञाज: स्तुवंति ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ हवे प्रमोद ज्ञावना ज्ञावेले क्षपकश्रेणीना मार्गमा प्रवेशकरवाने कर्म रूपमलने जेणे क्षीणकर्युंले अने त्रणलोकमां गंधहस्तिसरखा स्वस्वज्ञावमा रमण करनारा सहजउदयने पामेला केवलज्ञानेकरी जागृतथयुंले वैराग्यजेहनु एहवा श्रीवीतराग एटले तीर्थंकरनेधन्यले केमके जे आत्मशुद्धिकरीने पूर्ण . चंद्रकलास रिखी निर्मल जे ध्यानधारा तद्रूप अनंतपुण्यना समूहेकरी संपादनकरेली तीर्थं करनीलक्ष्मी तेनुं आराधनकरी मुक्तिनेप्राप्तथायले ॥ १ ॥ श्रीविनयविजयजी उपा ध्यायकहेले के हु ते तीर्थंकरोना कर्मक्षयथकी उत्पन्नथयाजे घणा गुणना समूह तेनी स्तुतिकरवाविषे जेहना परिणामहोयले एवा आत्माना निर्मलस्वज्ञावे सहित तीर्थंकरनी स्तुति करीकरीने वरणना आवस्थानकोप्रतें पवित्रकरुंलुं अने आ जग तमा तीर्थंकरोनी स्तुतिना रसने जाणनारी जिव्हाने धन्यमानुलुं तेविना बीजीजे निष्फल लोकवार्ता अने कार्योना वाचालपणामा वर्त्तनारी जिव्हाने मूर्खतुल्य मानुलु ॥ २ ॥ वली पर्वतमा अरण्यमा गुफागुहिरमा निवासकरीने धर्मध्यान उ पर एकाग्रचित्त राखनारा तथा सम्यक्तरूप रसेकरी संतुष्टथयला वली पक्ष मास विगेरेना उपवास करनारा एहवा जे निर्ग्रंथसाधु तेनेपण धन्यले तथा वली बी जाजे ज्ञानीपुरुषो शास्त्रउपर पसरेली बुद्धियेकरी धर्मोपदेशआपेले अने शांतगुणी दांतगुणी जितेंद्रिय एहवा महापुरुष जे जगतमा प्रवर्त्ततायका श्री तीर्थंकरदेवना

शासनने प्रकाशितकरेछे तेनेपण धन्यछे ॥ ३ ॥ वलीजे गृहस्थावासमां रह्याथका पण सुपात्रने दानआपेछे शीलपालेछे तपकरेछे भावनाओ भावेछे तथा चारप्रकारे करी धर्मध्यानने आराधेछे अने पुष्टश्रद्धाये शास्त्रनु आराधन करेछे तेनेपण धन्यछे वलीजे साध्वी तथा श्राविकाओ शास्त्रथकी स्वच्छयपली बुद्धिये शीलपालेछे तेनेपण धन्यछे एरीतें हे भाग्यवत भव्यपुरुषो तमे सर्वथा गर्वमूकीने ए पूर्वोक्त समस्त उत्तमपुरुषोनी नित्यप्रते निरत्तर स्तुतिकरो के जेथकी तमारुं कल्याणथाय॥४॥

उपजातिवृत्तं॥ मिथ्यादृशामप्युपकारसारं संतोपसत्यादिगुणप्रसारं ॥ वदान्यतावैनयकप्रकारं मार्गानुसारीत्यनुमोदयामः ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ ए पूर्वोक्त सम्यक् दृष्टी जीवनी स्तुति करवी ते तो श्रेष्ठजछे परतु अमे मिथ्यादृष्टीनो पण उत्तम उपकार जाणीयेछैये कारणके जो तेमनो संतोष सत्यादिक गुणनो प्रसार तथा दातारपणुं अने विनयना प्रकार एटलावाना मार्गानुसारीछे तो एहवोजाणीने तेनीपण अनुमोदना करियेंछे ॥ ५ ॥

स्त्रग्धरावृत्तं ॥ जिव्हे प्रव्हीभव त्वं सुकृतिसुचरितोच्चारणे सुप्रसन्ना भूयास्तामन्यकीर्तिश्रुतिरसिकतया मऽद्य कर्णौ सुकर्णौ ॥ वीक्ष्यान्यप्रौढलक्ष्मीं द्रुतमुपचिनुतं लोचने रोचनत्वं संसारेऽस्मिन्नसारे फलमिति भवतां जन्मनो मुख्यमेव ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ हेजीवो जो तमे सरलछो अने पुण्यवान पुरुषोना पुण्यनो उच्चार करवाने प्रसन्नछो एटले आज अमारा कान बीजा पुण्यवान पुरुषोनी कीर्त्ति श्रवणना रसिकपणे करी सुकर्णरहो अने बीजानी प्रौढ ऐश्वर्यताजोइने अमारी चक्षु प्रकाशपणाने धारणकरो एह्वा जो तमारा विचारछे तो आ संसारमा एज तमारा जन्म सफल पणानो मुख्य फलछे ॥ ६ ॥

उपजातिवृत्तं ॥ प्रमोदमासाद्य गुणैः परेषां येषां मति सज्जति साम्यसिंधौ ॥ देदीप्यते तेषु मनःप्रसादे गुणास्तथैते विशदीभवंति॥७॥

अर्थ ॥ बीजाना गुणो सांभली सतोषपामिने जेनीबुद्धि समतारसरूप समुद्रमां संलग्नथायछे तेप्राणीना मननो प्रसाद देदीप्यमान थायछे तेमज तेना पोताना गुण पण सर्व स्वच्छ थायछे ॥ ७ ॥

॥ अथ चतुर्दश भावनाष्टकं टोडीरागेणगीयते ऋषनकीमेरेमनजगतिवशीरीएदेशी ॥

विनय विभावय गुणपरितोषं ॥ ध्रुवपदं ॥ निजसुकृता
प्तवरेषु परेषु ॥ परिहर दूरं मत्सरदोषं ॥ वि० ॥ १ ॥

अर्थ ॥ हेविनय तुं गुणीपुरुषनागुण उपर संतोष करवु मनमाभाव अने पोताना पुण्यप्राप्तिनावस्वते बीजाउपर मत्सरकरवापणाना दोषने दूरकर ॥ १ ॥

दिष्ट्याय वितरति बहुदानं वरमयमिह लभते बहुमानं ॥ किमिति
न विमृशसि परपरभागं ॥ यद्विभजसि तत्सुकृतविभागं वि०॥ २॥

अर्थ ॥ अमुक मनुष्य अत्यंत दानआपेछे एबहु कल्याणकारक कामकरेछे अथवा असुकपुरुष असुकस्थानके बहुमानपामेछे एपणघणुजरूंछे एहवो रूडोविचार तुं केमकरतोनथी ठेकाणेठेकाणे लोकोना गुणोत्कर्ष करवा एहिज सुकृत विभागछे २

येषां मन इह विगतविकारं ॥ ये विदधति भुवि जगदुपकारं ॥
तेषां वयमुचिताचरितानां ॥ नाम जपामो वारंवारं ॥ ३ ॥

अर्थ ॥ आ जगतमां जेना मननेविषे कोइप्रकारनो विकारनथी एटले निर्विकारीछता पृथ्वीनेविषे लोकोनो उपकारकरेछे एहवा पवित्र सदाचारी पुरुषोना नाम अमें वारवार जपियेछैये ॥ ३ ॥

अहह तितिक्षागुणमसमानं ॥ पश्यत भगवति मुक्तिनिदानं॥ येन
रुषा सह लसदभिमानं ॥ झटिति विघटते कर्मवितानं ॥वि० ॥४॥

अर्थ ॥ जेनीबराबरी करवाने कोई समर्थनथी एहवो मुक्तिनुं कारणजे क्षमा गुण ते श्रीतीर्थंकरदेव नोजूओ के जेणेकरी क्रोधसहित अभिमानेकरी शोभनारो एहवोजे कर्मनो समूह ते तुरत नाशपामेछे ॥ ४ ॥

अदधु. केचन शीलमुदारं ॥ गृहिणोपि परिहृतपरदारं ॥ यश इह
सप्रत्यपि शुचि तेषां ॥ विलसति फलिताफलसहकारं ॥ वि०॥५॥

अर्थ ॥ जेगृहस्थो परस्त्रीनुं त्यागकरी महोटुं शीलव्रतपाळेछे ते हमणापण आ जगतमा पवित्र यशें फलीभूत थयाथका सफल आंबाना वृक्षसरिखाशोभेछे ॥५॥

या वनिता अपि यशसा साकं कुलयुगलं विदधति सुपताकं॥
तासां सुचरितसंचितराकं ॥ दर्शनमपि कृतसुकृतविपाकं॥वि०॥६॥

अर्थ ॥ वळीजे स्त्रीओपण शील पाळीने पोताना मावित्र तथा ससरा बन्ने कु

लोने यशनी सुपताकके० ध्वजाकरेठे एवीस्त्रीओनो पुण्य परिपाके करी प्राप्तथ येलुं जेदर्शन ते पण पुण्यरूप धननुंज संपादकछे ॥ ६ ॥

तात्विकसात्विकसुजनवतंसाः ॥ केचन युक्तिविवेचनहंसाः ॥ अलम कृपत किल भुवनाभोगं ॥ स्मरणमनीषां कृतशुभयोगं ॥वि०॥ ७ ॥

अर्थ ॥ खरेखरा सत्वगुणने धारणकरनारा सज्जनलोकोना मस्तकना भूषणस मान अने जेम हंस दूध तथापाणीनो विवेचनकरेछे तेनीपरें युक्तियेकरी विवेचन नाकरनारा एह्वा जे सर्वोत्कृष्टप्राणीछे ते आ त्रणेभुवनने शोभायमान करवाने तत्परछे तो तेवापुरुषोनुं स्मरणकरवुं ते पण शुभयोगनो करनारथाय ॥ ७ ॥

इति परगुणपरिभावनसारं ॥ सफलय सततं निजमवतारं ॥ कुरु सुविहितगुणनिधिगुणगानं॥विरचय शांतसुधारसपानं॥वि०॥८॥ इति श्री शांतसुधारसगेयकाव्ये प्रमोदभावनाविभावनोनामचतुर्दशः प्रकाश·

अर्थ ॥ हे आत्मा एपूर्वोक्तरीते परनागुणनो विचार करवुं एहिज जेमां सार छे एवु आ तहारो पोतानो अवतार तेने तुं निरंतर परनागुणो स्मरणकरीने सफ लकर तथा शुद्धगुणोना निधि एह्वाजे मनुष्यो तेना गुणोनुं गायनकर अने शां तसुधारसनुं पानकर ॥ ८ ॥ इतिश्री शांतसुधारसगेयकाव्ये प्रमोदभावना वि भावनो नाम चतुर्दशः प्रकाश· ॥

मालिनीवृत्तं॥ प्रथममशनपानप्राप्तिवांछाविहस्ता स्तदनु वस नवेश्मालंकृतिव्यग्रचित्ता ॥ परिणयनमपत्यावाप्तिमिष्टेंद्रि यार्थान्सततमभिलपतंः स्वस्थतां क्वास्नुतीरन् ॥ १ ॥

अर्थ ॥ हवे कारुण्यभावना भावेछे प्रथमतो अशनपान प्राप्तिकरवानी इछा ये व्याकुलथयला तदनतर वस्त्र घर अलंकार इत्यादिकोनी प्राप्ति करवाने विषे जे मनुचित्त व्यग्रथयुंछे तेवारपछि लग्नकरवानी इछा तेपछि पुत्रपुत्री प्राप्त करवानी इछा अने इंद्रियार्थजे पाचइंद्रियोना त्रेवीस विषयोतेप्रते इछनार एह्वाजे संसार वासी जीवो तेकेवीरीते स्वस्थ थाय ॥ १ ॥

शिखरिणीवृत्तं ॥ उपायानां लक्षैः कथमपि समासाद्य विभवं भवा भ्यासात्तत्र ध्रुवमिति निबध्नाति हृदयं॥ अथाकस्मादस्मिन्विकिर ति रजः क्रुरहृदयो रिपु र्वा रोगो वा भयमुत जरा मृत्युरथवा॥२॥

अर्थ ॥ हे प्राणी तुथ्रा जगतमां लक्षावधि उपायोकरीने कोइपणरीते ऐश्वर्य ता मेलवी जन्मोजन्मना अभ्यासेंकरी तेहनाउपरज मनने स्थिर राखेले पण एना उपरतो एथीअनतर जे अकस्मातिक क्रूर हृदयवत शत्रु किवा रोगप्राप्ति भय जरा अथवा मृत्यु एटलावाना धुलनाखेले ॥ २ ॥

स्त्रग्धरावृत्त ॥ स्पर्धंते केपि केचिद्दधति हृदि मिथो मत्सरं
क्रोधदग्धा युध्यते केरुप्यद्दा धनयुवतिपशुक्षेत्रपद्मादिहेतो॰॥
केचिल्लोभाल्लभंते विपदमनुपद दूरदेशानटंत॰ ॥ कि कुर्म
कि वदामो नृशमरतिशतैर्व्याकुल विश्वमेतत् ॥ ३ ॥

अर्थ ॥ कोइ क्रोधेकरी दग्धथयायका द्वेषकरेले कोइ परस्पर हृदयमां मत्सर धरेले केटलाक कोइना रुंध्यानछता स्वछदपणे द्रव्य स्त्री पशु खेत्र गाम इत्यादिको ने वास्ते लडेले वली कोइक लोभेकरी विपत्तिये भोगित थयायका दूर देशांतरोमां रटन करीकरीने व्यामूढथायले तो हवे सुं करिये अने सुं बोलिये आ जगत तो अत्यत शोकडा दुःखेकरी व्याकुलले ॥ ३ ॥

उपजातिवृत्तत्रय ॥ स्वयं खनंत स्वकरेण गर्तान्मध्ये स्वयं तत्र य
था पतंति ॥ तथा ततो निष्क्रमण तु दूरे ऽधोद प्रपाताद्विरमति
नैव ॥ ४ ॥ प्रकल्पयन्नास्तिकतादिवादमिद प्रमाद परिशीलयंत
॥ मग्ना निगोदादिपु दोपदग्धा दुरंतदुःखानि हहा सहते ॥ ५ ॥
शृण्वंति ये नैव हितोपदेश न धर्मलेशं मनसा स्पृशंति ॥ रुज॰
कथंकारमथापनेयास्तेपामुपायस्त्वयमेक एव ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ प्राणीपोते पोतानेहाथे खाडोखोदीने तेमा एवीरीते पडेलेके फरीकोइ प्रकारे तेमाथी नीकलवुतो दूररह्यु परतु उलटो नीचेनीचे जइपडवु तेनुं किवारे अंतज आवनार नथी एटलो उडोखाडो खोदेले ॥ ४ ॥ जे नास्तिकादिक वादक ल्पीने प्रमादनो अभ्यासकरनारा दोपेकरी दग्धथयीने निगोदादिकमा बुमारह्या थका जेनोअत घणुंजमाटो एहवा महा क्लेशकारी दुःखोने सोसेले तो हाहा इतिखे दे एवात केटली खेदभरेलीले ॥ ५ ॥ जेप्राणीहितोपदेश सांभलतोनथी अने धर्म लेश्याने तो मनेकरीपण स्पर्शे करतोनथी तेप्राणीना दुःखो सीरीते दूरकरीये तेनो आ एकज उपायले तेआगलना श्लोकमा कहेले ॥ ६ ॥

अनुष्टुब्वृत्त ॥ परदुःखप्रतीकारमेवं ध्यायंति ये हृदि ॥
लभंते निर्विकारं ते सुखमायतिसुंदरं ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ जेप्राणी पूर्वोक्तप्रकारे बीजाना दुःखोनो प्रतीकार हृदयमां धरेछे तेणे करी जेना परिणाम सुंदरथायछे तेने निर्विकारी सुख प्राप्तथाय ॥ ७ ॥

॥ पंचदशभावनाष्टकं रामकुलीरागेण गीयते ॥ हमारो अंबरदेहुमुरारी एदेशी ॥

सुजना भजत मुदा भगवंतं सुजनाभजत मुदा भगवंतं ॥ ध्रुवपदं ॥
शरणागतजनमिह निष्कारणकरुणावंतमवंतंरे ॥ सुज० ॥ १ ॥

अर्थ ॥ हेसज्जनो आ जगतमां कारणविना दयाना पालनारा अने जे पोताने शरणे आव्यो तेनीरक्षाना करनारा जे भगवतछे तेने तुमे हर्षकरी भजो ॥ १ ॥

क्षणमुपधाय मनः स्थिरतायां पिबत जिनागमसारं ॥ का
पथघटनाविकृतविचारं त्यजत कृतांतमसारं रे ॥ सुज० ॥२॥

अर्थ ॥ एकक्षणमात्र पोतानो मनस्थिरकरी जैनागमना सारनुं पानकरो अने जे कृत्योमा कुत्सित मार्गनी घटनाये करी आपणो विवेक विकारवत थायछे एवा असार निंदनिक कृत्यनो त्यागकरो ॥ २ ॥

परिहरणीयो गुरुरविवेकी भ्रमयति यो मतिमंदं॥ सुगुरुवच
सकृदपि परिपीतं प्रथयति परमानंदं रे ॥ सुज० ॥ ३ ॥

अर्थ॥अविचारितगुरुनो संगमूको केमके जे गुरुओ मंदबुद्धिवत पुरुषोने भ्रांति सहित करेछे अने सुगुरुना वचनो जो एक वखत सांभल्या तोपणपरमानंद उत्पन्नकरेछे ३

कुमततमोभरमीलितनयनं किमु पृच्छत पंथानं ॥ दधिबुध्या
नर जलमंथन्यां किमु निदधत मंथानं रे ॥ सुज० ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ कुमतरूपी अंधारेकरी जेनी आखोढकांइ गयलीछे तेवाप्राणीने मोक्षमार्गनो रस्तोसुं पूछवु हेलोको तमे दहीनी बुद्धिये पाणीनेविषे मथनिकाने केम नाखोछो केमके ए पाणीमाथी कांइ माखण निकलवानुं नथी ॥ ४ ॥

अनिरुद्धं मन एव जनानां ॥ जनयति विविधातंकं ॥ सप
दि सुखानि तदेव विधत्ते॥ आत्माराममशंकं रे ॥ सुज०॥५॥

अर्थ ॥ पोतानुंमन पोताने स्वाधीन न राख्यो छता तेहिज पोताने नानाप्रकार

नाडु खो उत्पन्नकरेछे अने तेह्जि मनपोताने स्वाधीन राख्योछता आत्मारामने निशकपणे विविध प्रकारना सुखआपेछे ॥ ५ ॥

परिहरताश्रवविकथागौरव मदनमनादिवयस्य ॥ क्रियतां सांवरसाप्तपदीन ॥ ध्रुवमिदमेव रहस्यम् रे॥ सुज० ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ हे सज्जनो तमे आश्रव अने विकथानुंजे गौरवपणु तथा अनादिकालनुं मित्रजे कामदेव तेनी साथे मित्रतानो त्याग नाव करीने संवररूप सन्मित्रकरो ए ह्जि एक गुप्त तत्वछे ॥ ६ ॥

सह्यत इह् कि नवकांतारे ॥ गदनिकुरंबमपारं ॥ अनुस रताहितजगडपकार जिनपतिमगदंकार रे ॥ सुज० ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ हेजीव आ ससाररूप अरण्यमा रागद्वेषादिक अपाररोगना समूहने तु सोसेछे तेनो त्यागकरी ने जगतना उपकार करनार अने ससारीजीवोने राग द्वेष मद मत्सर इत्यादिक रोगोनो निवारणकरी निरोगताना आपनार एह्वा श्री तीर्थंकरदेवरूप औषधनी सेवनाकर ॥ ७ ॥

शृणुतैकं विनयोदितवचनं नियतायतिह्तिरचनं ॥ रचयत सुकृत सुखशतसंधान शांतसुधारसपानं रे ॥सुज०॥८॥ इति श्रीशातसु धारसगेयकाव्ये कारुण्यनावनाविनावनो नाम पचदश. प्रकाश ॥

अर्थ ॥ माटेहे नव्यो विनयविजयजीना कहेला अथवा विनयेकरीने कहेला आ ग्रंथमांहेला वाक्यो तेने एक नियमे करी एटले तदाकार वृत्तिये करी बराबर ध्यानराखीने सानलो ए वचनो सानलवाथी उत्तरफलनी प्राप्तिथवाना कालनेविषे ह्ति रजनना करनाराछे एह्वुजाणीने ए वाक्यो ते एकनियमथी सांनलो॥८॥ इति श्रीशातसुधारस गेयकाव्ये कारुण्यनावनाविनावनो नाम पचदश प्रकाश. ॥

पंचापि शालिनीवृत्तानि॥श्रांता यस्मिन् विश्रम सश्रयंते रुग्णा प्री ति यत्समासाद्य सद्य ॥ लभ्यं रागद्वेषविद्वेषिरोधादौदासीन्य सर्व दा तत्प्रियं न ॥१॥लोके लोका निन्ननिन्नस्वरूपा निन्नैर्निन्नै कर्म निर्मर्मनिन्नि ॥रम्यारम्यैश्चेष्टितै कस्यकस्य तद्विद्भिस्तूयते रुष्यते वा॥ २ ॥ मिथ्याशासन्वीरतीर्थेश्वरेण रोद्धुं शेके न स्वशिष्यो जमा लि ॥ अन्य कोवा रोत्स्यते केन पापात्तस्मादौदासीन्यमेवात्मनी

नं ॥ ३ ॥ अर्हंतोपि प्राज्यशक्तिस्पृशः किं धर्मोद्योगं कारयेयु' प्र
सह्य ॥ दद्युः शुद्धं कितु धर्मोपदेशं यत्कुर्वाणा दुस्तरं निस्तरंति॥४
तस्मादौदासीन्यपीयूषसारं वारंवारं हंत संतो लिहंतु ॥ आनंदा
नामुत्तरंगत्तरंगैर्जीवद्भिर्यद्भुज्यते मुक्तिसौख्यं ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ हवे सोलमी माध्यस्थ भावना भावेछे जेमकोइप्राणीने थाकचडेलो होयते प्राणी विश्रांतिनास्थानके विश्रांतिलेछे तेमज उदासीनता जेछेते संसार रूप अरण्यमां भ्रमणकरनारा प्राणीने विश्रांतिलेवानुं स्थानकछे अने जेनेजोइ रोगीपुरुष तत्काल प्रीतिवतथायछे एटले गमेतेवा रोगेकरी पीडितहोय तथापि जेने उदासीनता पणुं प्राप्तथयुं तो तेने ते रोगनी व्याधि कांइपण जाणवामां न आवता उलटो हर्षवधेछे वली जेनीप्राप्ति राग अने द्वेषरूप शत्रुनो रोधकरवाथी थायछे एहवीजे उदासीनता ते अमोने सर्वकाल प्रियछे ॥ १ ॥ आजगतमांना लोको अंतरना आशयेकरी मर्मनाभेदे भिन्नभिन्न कर्मेकरी अने रम्यारम्य व्या पारेकरी भिन्नभिन्न स्वरूपवंतछे पण बधाप्राणीनी एकप्रकृति तो नथीज तिवारें हवे विद्वानपुरुषे केनीकेनी रम्यारम्य चेष्टा उपर संतुष्टथावुं किंवा रुष्टथावुं अर्था त् विद्वान पुरुषेतो सर्वप्राणी उपर संतुष्ट अथवा रुष्टनथता समदृष्टीज राखवी भलीछे ॥ २ ॥ जूओकेश्री वीरभगवान पोते तीर्थंकर छता मिथ्यासहित बोलना रो पोतानो शिष्य जमाली तेने रुधीशक्यानही तो बीजो कोण कोइने पण पाप थकी रुंधीराखनारछे माटे उदासीनपणुं राखवुंतेहीज आत्मानुं हितकारीछे एम जाणवु ॥ ३ ॥ जूओके श्रीतीर्थंकरदेव अत्यंत शक्तिना धरनारहता तथापिते कोइने बलात्कारेकरी धर्मोद्योग करवाने प्रवर्तावताहता केसुं ते तो जेणेकरी भ व्यपुरुषो दुस्तर संसार समुद्रमांथी तरी पारपामे एहवो केवल शुद्धधर्मनोज उपदेश मात्र आपताहता ॥ ४ ॥ तेकारणे हेसत्पुरुषो तमेवारवार हर्षसहित औदासीन्य तारूप सारभूत अमृतनो आस्वादनकरो के जेथकी जीव आनंदना वहेनारा मो जायेकरी सहित मोक्षसुख भोगवे ॥ ५ ॥

॥ षोडशभावनाष्टकं प्रभातिरागेण गीयते ॥ आदरजीवक्षमागुणआदर ॥ एदेशी

अनुभव विनय सदासुखमनुभव ॥ औदासीन्यमुदारं रे ॥ कु
शलसमागममागमसारं ॥ कामितफलमंदारं रे ॥ अनु० ॥ १ ॥

नाङ खो उत्पन्नकरेछे अने तेह्जि मनपोताने स्वाधीन राख्योछता आत्मारामने निशंकपणे विविध प्रकारना सुखआपेछे ॥ ५ ॥

परिहरताश्रवविकथागौरव मदनमनादिवयस्य ॥ क्रियता सांवरसाप्तपदीन ॥ ध्रुवमिदमेव रहस्यम् रे॥ सुज० ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ हे सज्जनो तमे आश्रव अने विकथानुंजे गौरवपणु तथा अनादिकालनुं मित्रजे कामदेव तेनी साथे मित्रतानो त्याग नाव करीने सवररूप सन्मित्रकरो ए ह्जि एक गुप्त तत्वछे ॥ ६ ॥

सह्यत इह कि नवकांतारे ॥ गदनिकुरंबमपारं ॥ अनुस रताहितजगडुपकारं जिनपतिमगदंकारं रे ॥ सुज० ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ हेजीव आ संसाररूप अरण्यमां रागद्वेषादिक अपाररोगना समूहने तु सोसेछे तेनो त्यागकरी ने जगतना उपकार करनार अने ससारीजीवोने राग द्वेष मद मत्सर इत्यादिक रोगोनो निवारणकरी निरोगताना आपनार एहवा श्री तीर्थंकरदेवरूप औषधनी सेवनाकर ॥ ७ ॥

शृणुतैक विनयोदितवचनं नियतायतिहितरचनं ॥ रचयत सुकृत सुखशतसंधान शांतसुधारसपान रे ॥सुज०॥८॥ इति श्रीशातसु धारसगेयकाव्ये कारुण्यभावनाविभावनो नाम पंचदश प्रकाश.॥

अर्थ ॥ माटेहे भव्यो विनयविजयजीना कहेला अथवा विनयेकरीने कहेला आ ग्रंथमांहेला वाक्यो तेने एक नियमे करी एटले तदाकार वृत्तिये करी बरावर ध्यानराखीने सांभलो ए वचनो सांभलवाथी उत्तरफलनी प्राप्तिथवाना कालनेविषे हित रजनना करनाराछे एहवुजाणीने ए वाक्यो ते एकनियमथी सांभलो॥८॥ इति श्रीशातसुधारस गेयकाव्ये कारुण्यभावनाविभावनो नाम पचदश प्रकाशः ॥

पचापि शालिनीवृत्तानि॥श्राता यस्मिन् विश्रम सश्रयंते रुग्णाः प्रीति यत्समासाद्य सद्य॥ लभ्यं रागद्वेषविद्वेषिरोधादौदासीन्य सर्वदा तत्प्रिय न ॥१॥लोके लोका भिन्नभिन्नस्वरूपा भिन्नैर्भिन्नैः कर्मभिर्मर्मभिद्भि ॥रम्यारम्यैश्चेष्टितै कस्य कस्य तद्विद्वद्भिस्तूयते रुष्यते वा॥ २ ॥ मिथ्याशंसन्वीरतीर्थेश्वरेण रोद्धुं शेके न स्वशिष्यो जमालि. ॥ अन्य· कोवा रोत्स्यते केन पापात्तस्मादौदासीन्यमेवात्मनी

नं ॥ ३ ॥ अर्हंतोपि प्राज्यशक्तिस्पृशः किं धर्मोद्योगं कारयेयुः प्र
सह्य ॥ दद्युः शुद्धं किंतु धर्मोपदेशं यत्कुर्वाणा दुस्तरं निस्तरंति॥४
तस्मादौदासीन्यपीयूषसारं वारंवारं हंत संतो लिहंतु ॥ आनंदा
नामुत्तरंगत्तरंगैर्जीवद्भिर्यद्भुज्यते मुक्तिसौख्यं ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ हवे सोलमी माध्यस्थ भावना भावेछे जेमकोइप्राणीने थाकचडेलो होयते प्राणी विश्रांतिनास्थानके विश्रांतिलेछे तेमज उदासीनता जेछेते संसार रूप अरण्यमां भ्रमणकरनारा प्राणीने विश्रांतिलेवानुं स्थानकछे अने जेनेजोइ रोगीपुरुष तत्काल प्रीतिवतथायछे एटले गमेतेवा रोगेकरी पीडितहोय तथापि जेने उदासीनता पणुं प्राप्तथयुं तो तेने ते रोगनी व्याधि कांइपण जाणवामां न आवता उलटो हर्षवधेछे वली जेनीप्राप्ति राग अने द्वेषरूप शत्रुनो रोधकरवाथी थायछे एहवीजे उदासीनता ते अमोने सर्वकाल प्रियछे ॥ १ ॥ आजगतमांना लोको अंतरना आशयेकरी मर्मनाभेदे भिन्नभिन्न कर्मकरी अने रम्यारम्य व्या पारेकरी भिन्नभिन्न स्वरूपवतछे पण बधाप्राणीनी एकप्रकृति तो नथीज तिवारे हवे विद्वानपुरुषे केनीकेनी रम्यारम्य चेष्टा उपर संतुष्टथावु किंवा रुष्टथावु अर्था त् विद्वान पुरुषेतो सर्वप्राणी उपर संतुष्ट अथवा रुष्टनथता समदृष्टीज राखवी भलीछे ॥ २ ॥ जूओकेश्री वीरभगवान पोते तीर्थंकर छता मिथ्यासहित बोलना रो पोतानो शिष्य जमाली तेने रुधीशक्यानही तो बीजो कोण कोइने पण पाप थकी रुंधीराखनारछे माटे उदासीनपणुं राखवुतेहीज आत्मानुं हितकारीछे एम जाणवुं ॥ ३ ॥ जूओके श्रीतीर्थंकरदेव अत्यंत शक्तिना धरनारहता तथापिते कोइने बलात्कारेकरी धर्मोद्योग करवाने प्रवर्तावताहता केसुं ते तो जेणेकरी भ व्यपुरुषो दुस्तर संसारसमुद्रमाथी तरी पारपामे एहवो केवल शुद्धधर्मनोज उपदेश मात्र आपताहता ॥ ४ ॥ तेकारणे हेसत्पुरुषो तमेवारवार हर्षसहित औदासीन्य तारूप सारभूत अमृतनो आस्वादनकरो के जेथकी जीव आनंदना वहेनारा मो जायेकरी सहित मोक्षसुख भोगवे ॥ ५ ॥

॥ षोडशभावनाष्टकं प्रभातिरागेण गीयते ॥ आदरजीवक्षमागुणआदर ॥ एदेशी

अनुभव विनय सदासुखमनुभव ॥ औदासीन्यमुदारं रे ॥ कु
शलसमागममागमसारं ॥ कामितफलमंदारं रे ॥ अनु० ॥ १ ॥

परिहर परचिंतापरिवारं ॥ चिंतय निजमविकारं रे ॥ वदति को पि चिनोति करीरं ॥ चिनुतेऽन्यः सहकार रे ॥ अनु० ॥ २ ॥

अर्थ ॥ वली विशेषप्रकारे माध्यस्थपणुं नावेछे हे विनयतु सर्वकाल सुखनो अनुनवकर जेम वांछित पदार्थो आपवामा कल्पवृक्षमुख्यछे तेम वांछित मोक्षसुखनी पमाडनारी अने सर्वशास्त्रोमा महोटी सारजूत एहवीजे उदासीनता तेनुंज तुसेवनकर ॥ १ ॥ अरेजीव तु बीजा विकारीपदार्थोनी चितवनानो करावनारोजे ताहरो परिवार तेनोत्यागकर अने पोताना अविकारि स्वरूपनुं चिंतनकर ॥ २ ॥

योपि न सहते हितमुपदेशं ॥ तदुपरि माकुरु कोपं रे ॥ निष्फलया किं परजनतप्त्या ॥ कुरुषे निजसुखलोपं रे ॥ अनु० ३॥ सूत्रमपास्य जडा नाषंते ॥ केचन मतमुत्सूत्रं रे ॥ किंकुर्मस्ते परिहृतपयसो यदि पीयंते मूत्रं रे ॥ अनु० ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ जोपणकोइ हितकारी उपदेश सांजलतो नथी तोपण तेनाउपर क्रोधकरीसनही निष्फल लोकोउपर संतापकरी पोताना सुखनो लोपकाकरेछे ॥ ३ ॥ केटलाक मूर्ख सूत्र त्यजीने बोलेछे केटलाक उत्सूत्र नाषणकरेछे एवीरीतना बोलनारा जोनिर्मलपाणीने मूकी लघुनीतनुं पान करवालागा तोतेने अमेसुंकरिये ॥ ४ ॥

पश्यति किं न मन परिणामं निजनिजगत्यनुसार रे॥ येन जनेन यथा नवितव्यं तद्भवता दुर्वारं रे ॥ अनु० ॥ ५ ॥ रमय हृदा हृदयंगमसमतां ॥ संवृणु मायाजालं रे ॥ वृथा वहसि पुजलपरवशतामायु परिमितकालं रे॥अनु०॥ ६ ॥

अर्थ ॥ हेजीव पोतपोतानी गत्यनुसारे सर्वजीवोनामननो परिणाम जूदोजूदो छे तेतु केमजोतोनथी केमके जेप्राणीने जेवी नवितव्यताछे तेना मननो परिणाम पण तेहवोजछे तो ते तहाराथी दुर्वारछे एटले तहाराथी वारीशकाय तेमनथी॥५॥ माटे हृदयने आनंद आपनारीएवीजे समतातेने मनमा धारणकरी आनंदनेपाम अने मायाजालने त्यागकर व्यर्थ पुजलने परवश काथायछे केमके तहारोआयुप परिमितकालछे एटले प्रमाणसहितछे तेनेत्रूटतां वारलागसेनही ॥ ६ ॥

अनुपमतीर्थमिदं स्मर चेतनमंतस्थितमभिरामंरे॥ चिरंजीव विशदपरिणामं ॥ लनसे सुखमविरामं रे ॥ अनु० ॥७॥ परब्रह्मपरि

णामनिदानं ॥ स्फुटकेवलविज्ञानं रे ॥ विरचय विनय विवेचित ज्ञानं ॥ शांतसुधारसपानं रे ॥ अनु० ॥८ ॥ इतिश्री शांतसुधारस गेयकाव्ये माध्यस्थ्यभावनाविभावनो नाम षोडशः प्रकाशः॥

अर्थ ॥ हेभव्यो तमे मनमां रहेनारुं आनंदनुं कारण एहवु अनोपम सदा लीनपणारूप तीर्थनुं स्मरणकरो अने जे कोइकालेपण विराम पामतानथी एहवा मोक्षसुखपामि चिरकाल स्वरूपपरिणामेरहो ॥ ७ ॥ अने परब्रह्मतारूप परिणामोनुं जे निदान तद्रूप विज्ञानने जे प्रगटकरेछे एहवुं विवेचननुंकरनारुंजेमा ज्ञान छे एहवा शांतसुधारसनुं पान ते हे विनयतु निरतरकर ॥ ८ ॥ इति श्रीशांतसुधारस गेयकाव्येमाध्यस्थ्यभावना विभावनोनाम षोडश प्रकाश ॥

स्रग्धरावृत्तद्वयं ॥ एवं सद्भावनाभिः सुरभितहृदयाः संशयातीतगीतोन्नीतस्फीतात्मतत्वास्त्वरितमपसरन्मोहनिद्राममत्वाः ॥ गत्वा सत्वा ममत्वातिशयमनुपमां चक्रिशक्राधिकानां सौख्यानां मंक्षु लक्ष्मी परिचितविनयाः स्फारकीर्तिं श्रयंते ॥ १ ॥ दुर्ध्यानप्रेतपीडा प्रभवति न मनाक् काचिदद्वंद्वसौख्यस्फातिः प्रीणाति चित्तं प्रसरति परित सौख्यसौहित्यसिंधुः ॥ क्षीयंते रागरोषप्रभृतिरिपुभटाः सिद्धिसाम्राज्यलक्ष्मीः स्याद्वश्या यन्महिम्ना विनयशुचिधियो भावनास्ताः श्रयध्वं ॥ २ ॥

अर्थ ॥ हवे श्रीविनयविजयजी उपाध्याय आग्रंथ समाप्तकरीने उपदेशरूप पोताना आभिप्रायनुं कथनकरेछे आवीरीतें पूर्वोक्तप्रकारे सद्भावनाओनी सुगंधिये जेनाहृदयमा संशयरहित गायनकरवाथी तार्किककरघुछे स्पष्ट आत्मतत्वजेणे अने जेना मोह निद्रा अने ममत्व तुरत नाशपाम्या छे एवाप्राणी ममतानुं अतिशयपणुं मूकीने चक्रवर्त्ति तथा इंद्रादिकोनासुखोथकी पण अधिक एवा विनयधरनारा अनुपम सुखोनी पुष्कल कीर्त्तिवत्त लक्ष्मीने पामेछे ॥ १ ॥ जेहना महिमायेकरी दुर्ध्यानरूप प्रेतनीपीडा लगारमात्रपण थातीनथी पण कोइएक अपूर्व अद्वंद्व सौख्यनी वृद्धिथायछे अने चित्तप्रीतिवतथायछे अने आत्माने चारे बाजुथी सौख्य तृप्तिनी नदीपसरेछे वली रागद्वेषरूपशत्रु क्षीणथइजायछे सिद्धिरूप साम्राज्यलक्ष्मी

वशथायछे एह्वीजे नावनाओ तेने हे नव्य लोको तमारी विनयेंकरी पवित्रबुद्धिथइबता ते नावनाओनुं आश्रयकरो ॥ २ ॥

पथ्यावृत्त ॥ श्रीहीरविजयसूरीश्वरशिष्यौ सोदरावनूतां द्वौ ॥ श्रीसोमविजयवाचकवाचकवरकीर्तिविजयाख्यौ॥३॥

अर्थ ॥ श्रीहीरविजय सूरीश्वरना शिष्यबेनाइह्ता तेमा एक सोमविजयवाचक अने वीजा कीर्त्तिविजयवाचक ॥ ३ ॥

गीतिद्वयं ॥ तत्र च कीर्तिविजयवाचकशिष्योपाध्यायविनयविजयेन॥शांतसुधारसनामा संदृष्टो नावनाप्रबोधो ऽयं॥४ शिखिनयनसिंधुशशिमितवर्षे हर्षेण गंधपुरनगरे ॥ श्रीविजयप्रनसूरिप्रसादतो यत्न एप सफलो ऽनूत् ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ तेमां कीर्त्तिविजय वाचकना शिष्य श्रीविनयविजयजी उपाध्याय तेणे आ शांतसुधारस नामा नावनानो प्रबोधकर्यो ॥ ४ ॥ आ प्रयत्न संवत सतरसोने त्रेवीसना वर्ष श्रीगांधार नगरमा श्रीविजयप्रनसूरिना प्रसादथकी हर्षसहित सफलथयु ॥ ५ ॥

उपजातिवृत्तं ॥ यथा विधुः पोडशनिः कलानिः संपूर्णतामेत्य जगत्पुनीते॥ग्रंथस्तथा पोडशनिः प्रकाशैरयं समग्रे शिवमातनोतु॥ ६ ॥

अर्थ ॥ जेम चंद्रमा सोलेकलाये पूर्णतापामी जगतने पवित्रकरेछे तेम आ ग्रंथपण सोलकलारूप सोलप्रकाशेकरी जगतनुं कल्याणकरोएवो महारोआशीर्वादछे ६

इंद्रवज्रावृत्त ॥ यावज्जगत्येप सहस्रनानु पीयूपनानुश्च सदोदयेते ॥ तावत्सतामेतदपि प्रमोद ज्योति स्फुरद्वाङ्मयमातनोतु॥७॥

अर्थ ॥ जेकालपर्यंत जगतमा चंद्रसूर्य उगेछे तिहांसुधी जेमाप्रकाशमान वाणीमयरूप ज्योतिछे एह्वो आ शास्त्र ते सत्पुरुषोने आनंद आपो ॥ ७ ॥

इति श्रीमन्महोपाध्याय श्री कीर्त्तिविजयगणिशिष्योपाध्याय श्री विनयविजयगणिविरचिते शांतसुधारसग्रंथे षोडश प्रकाशोऽर्थसहित समाप्तिमगमत्

॥ अथ श्रीजिनप्रनसूरिकृतचतुर्विंशतिजिनस्तवनं ॥

पात्वादिदेवो दशकल्पवृक्ता यस्मादधीत्येहितदानविद्याम् ॥ अपूपुजन् यच्चरणौ नखालिव्याजेन नूनं नवपल्लवै स्वै ॥ १ ॥ गत्या विजित्य द्विरदं स्वसेवां चिन्ह छलाद्धश्चवद्चीकरद्यः ॥ यस्योदये द्व्यसुजा नृणा वो बनूव नूमा नुवि सोऽजितोऽव्यात् ॥ २ ॥ स्वय स निद्याद्भवसंनव व श्रीशंनवो यस्य पितुर्जितारे. ॥ राजाधिराजत्वजुषोपि सेनापतित्वमेवाजिमत बताजूत् ॥ ३ ॥ जातोपि य संवरत स्वयं यदङ्गीजनत् संवरमद्भुत तत् ॥ स कौशकेतुर्जितमीनकेतुर्जितोऽनिनंद्यादनिनंदनो व. ॥ ४ ॥ सुछ्लनं मेघनवस्य यस्य मुक्ताफलस्येव न दर्शनं कैः ॥ चडाव दात सुमति तमार्या सर्वश्रियामाश्रयमाश्रयध्व ॥ ५ ॥ न नेजिवान् वक्रगति कदाचित् नचातिचार सततं च सौम्य ॥ पद्मप्रनः शोणतनुप्रनोपि नव्यश्रिये कोपि धरांगजन्मा ॥ ६ ॥ पृथ्व्यां प्रसूत सुमनोनिरर्च्यः सुपर्णकांतिर्बहुकव्युपास्य. ॥ श्रेय.फलश्रीर्जयताडुदग्रस्कध सुपार्श्वद्रुरपास्तताप ॥ ७ ॥ चन्द्रप्रनोऽव्यात् वपुर शुजालैरालिंगितागीजनता यदीयै ॥ प्रसेननिर्वाणरमाविमुक्तकटाक्षलक्ष्मपितेव नाति ॥ ८ ॥ नावाहवे पुष्पशर विजित्य नश्यध्वजं यो मकर गृहीत्वा ॥ आरोप यल्लक्ष्मपदे ध्रुव स स्वनृत्यतां मे सुविधिर्विधेयात् ॥ ९ ॥ पित्रंगदाहप्रशमेन नाव दाहप्रमाथेपि खलु स्वशक्ति ॥ अजिज्ञपन्ननगतोपि विज्ञान् यस्तं स्तुम शीतलमब्दशीलं ॥ १० ॥ श्रेयान् श्रिये दौहदि मातृरुद्धात् गर्नस्थिते यत्र महार्हतल्पात् ॥ डुर्व्यंतरीडाक् प्रणनाशमोहराजाय पूत्कर्तुमिवाहितोत्थ ॥ ११ ॥ नव्यांगिना यस्य रुचिप्रपंचैरगानि चेतांसि च रजितानि ॥ स वासुपूज्यो जगदेकपूज्य संपूज्यतां निर्जितडुर्जयारि. ॥ १२ ॥ क्ष्मानर धर्तुमशिक्षितांकछलेन सेवां प्रतिपद्य यस्मात् ॥ धत्ते ततस्तं स किलादिकोल कांपिल्यजन्मा विमल. स जीयात् ॥ १३ ॥ अनंतजिन्नतुरनंतसौख्यप्रदोऽस्तु दोस्तनितवैरिवार· ॥ यल्लांछनं श्येनमपि प्रहृष्य विश्वस्य नश्यंत्यघ वर्तिकौघा· ॥ १४ ॥ पापाद्रिनि ह्वजमुदीक्ष्य दीप्रं यल्लक्ष्मणं नक्तिचिकीरुपेत ॥ तत्रंशशाकी मुहुरालुलोके शक्र· स्वपाणि स धिनोतु धर्मः ॥ १५ ॥ अरातिरम्ये प्यनरातिरम्ये सन्नानियोगेऽपि दृढानियोगे ॥ चक्रे स्थिता यस्य सुख जयश्री स पातु व पंचमचक्रवर्ती ॥ १६ ॥ गागं ध्वज यस्य तनौ विलोक्य -तत्प्रेमतो हव्यनुजा ध्रुवं य. ॥ सर्वांगमालिंगिसुवर्णवर्णना सुपूरदंनात्स मुदेऽस्तु कुंथु ॥ १७ ॥ सुदर्शना

ज्ञात इति प्रसह्य छेद व्यधाद्यस्तमस स्वदृत्ते' ॥ पितु क्रम पालयितु किलासौ तान्न कलासौष्टवकक्षिनोर ॥ १८ ॥ यस्य प्रिया नो विहितारिलोपामुद्रा नव गो न पर्पा नदीनं ॥ निस्तारकात्मा नयमालयस्थो नव्य श्रिये कुंभनव. स मल्लि १९ ॥ यस्यागरोचि पटलं समतात्प्रसृत्वर नृगकुलाभिराम ॥ उच्चाटनध्यानमि ास साक्षाद्भावद्विषा नदतु सुव्रतोऽसौ ॥ २० ॥ यल्लोचनस्पर्द्धिविधेर्विदित्वा स्व ापराधं जगदेकनाथ ॥ यो लक्ष्मलक्ष्याच्चरण श्रितो द्राक् नीलोत्पलेनास्तु नम न नूत्यै ॥ २१ ॥ यद्वक्रयोगात्सुभगं विदन् स्व महाशयोत्पन्नतया कृतज्ञ ॥ यं कं ुरःछाकमिषात्सिषेवे तं नेमिमध्येमि बहुप्रकाडं ॥ २२ ॥ यद्देहदीप्ति तुलितेंद्रनील त्ना चिर चारुनिभालयत ॥ नैर्मल्यकोटिं घटयंति दृष्टे शिष्टा अनिष्टं स पिनष्टु ार्श्व ॥ २३ ॥ प्राच्यं विमोच्यास्पदमुद्भवात्प्राक् स्थानांतरे रोपितवान् हरिर्यं ॥ ाचीकसत्सगुणशालिनूयं यस्याघमन्यान्नमतां स वीर ॥ २४ ॥ जयंति गर्भागम न्मदीक्षा ज्ञानापवर्गोत्सववासराणि ॥ जैनानि नाकायितभूतलानि त्रैलोक्य लोकप्रमदप्रदानि ॥२५॥ यदाह्ववांन शिरसाऽभिवद्य सुमेरुरद्धाऽजनि गोत्रमुख्य ॥ ीर्थाधिनाथा प्रथयतु सेवाहेवाकिना ते कुपथप्रमार्थं ॥ २६ ॥ कुवादिवक्राद्विगु हातराभ्र प्रयोगधूकालिरलं निरेतु ॥ यस्मिस्तपत्यस्ततम समूहे श्रीवीरसिद्धातरवि त जीयात् ॥ २७ ॥ व्यामोहनृपालवर विजित्य तस्मादुपात्तं तु सितातपत्रं ॥ य त्या. करे राजति पुण्डरीक सा भारती यच्छतु वांछित व ॥ २८ ॥ इति जिनप्रभस् रिभिरीडिता जिनवराश्चतुरुत्तरविंशति ॥ भरतवर्षभवा भुवनेश्वरा स्वरससिद्धिसु ख वितरतु न ॥ २९ ॥ इति श्रीचतुर्विंशतिजिनस्तवनं समाप्तम् ॥

॥ इति श्रीचतुर्विंशतिजिनस्तवनं समाप्तम् ॥

॥ श्री वीतरागायनमः ॥

॥ अथ श्री आस्तिक तथा नास्तिकनो संवाद प्रारंभ ॥

१ नास्तिक —आ जगत अने तेमांना पदार्थो सर्व शून्यछे, एने ससलाना शींगडां, आकाशनां फूल तथा वांजणीना पुत्र वगैरे जे पदार्थोनी त्रणे कालमां सिद्धता थती नथी, तेवा पदार्थोनी उपमा देवाय कदाच तमे कहेशो के, जेम शशशृंगादिक देखातां नथी, तेम ए पदार्थो पण देखाया न जोइये, तेम तो नथी. जगततो प्रत्यक्ष देखायछे, तेने ए उपमा केम देवाय, प्रत्यक्ष प्रमाणवडे सिद्ध पदार्थने शून्य केम कहेवाय? एनो उत्तर ए के, जे ए पदार्थोने देखे छे, ते भ्रमिष्ट छे. जे पुरुषने भ्रम थयो होय, तेने एकनुं बीजुं भाशे, तेम तमने पण थयुं कहेवाशे तमे ए दृष्टांतोनो मर्म समजी शकता नथी, त्यारे तमारा ध्यानमां सहेज आवे एवो बीजो दृष्टांत कहुं छुं ते सांभलो, आ जगत स्वप्नसमान छे जेम स्वप्न असत्य छे, तेम जगत पण असत्य छे. अने स्वप्नना पदार्थोनी पठे आ जगतना पदार्थो पण असत्य छे. जे देखाय छे ते स्वप्ननी पठे भ्रम मात्र छे, एमां संशय नथी.

आस्तिक—अरे नास्तिक, हुं तने एटलुंज पुछुं छुं के तारा सिद्धातनो कहेनार जीव छे के अजीव छे, एनो उत्तर ताराथी शु देवाशे? जीव अथवा अजीव कह्याविना चालशेज नही. जो तु कहीश के ते भ्रमरूप छे, तो ते एक रीते व्यवहार दृष्टीए योग्य कहेवाशे खरुं, केम के जे पोते भ्रमरूप होय तेने वधुं भ्रमरूप भाशे. जो एम होय तो अमारो कांई वाधो नथी; पण जो तारो सिद्धाती भ्रमरूप ठरशे नही, तो जेवो ठरशे तेवा बीजा पदार्थो पण कबूल करवा पडशे, अने कबूल कर्याविना चालनार नथी, केम के, बीजुं वधुं भ्रमरूप होय अने तारो सिद्धांतीज मात्र अभ्रम होय एम संभवे नही त्यारे एक सिद्धाती ने एक सिद्धांत ए बे पदार्थ मानवा जोइये छे. ए बे पदार्थ जो तु माने, तो जीव अने अजीवपणुं सिद्ध थाय छे के नही! एवी रीते जगतमां पण घटपटादिक जे वस्तु छे ते वस्तुज छे अवस्तु नथी. तेमज घट ते घट छे. ने पट ते पट छे घट पट नथी, ने पट घट नथी. एक पदार्थमां बीजा पदार्थनो अभाव होय छे, पण घट घटपणे भावरूपें छे, ने पट पटपणे भावरूपे छे. इत्यादिक सर्व पदार्थोविषे जाणी लेवु. जे भावरुप होय ते सत्यज होय छे. ए रीते आ जगत भावरुप होवाथी सत्य छे. केम के सर्व वस्तु पोतपोताना रु

पें अनादि सिद्ध छे, अने जेनो अत नथी तेने शशलाना शिगडा प्रमुखनी उपमा देवी ए केवी मूर्खता छे वारु ! माटे ए बोलवु बालकना जेवुं कहेवाय.

जो स्वप्नजेवु जगत मानशो, तो तमारा पोताने मह्रोडे पोते बंधाशो स्वप्न जे छे ते स्वप्नपणे नावरूप छे अने जाग्रतपणे अनावरूप छे, तेम जागृत जे छे ते जागृतपणे नावरूप छे अने स्वप्नपणे अनावरूपछे, पण केवल अनावरूपे कोई पदार्थ कहेवाय नही ज्यारे स्वप्ननावरूप छे त्यारे तेना जेवो जे जगत तमे कहोछो ते केम अनावरूप कहेवाय, अने स्वप्नने जो अनावरूप कहेशो तो देखाय छे केम ? जे अनावरूप ते तो दे खाय नही अने स्वप्न तो रात्रे दीठुं ते रात्रे दीठु कहेवायछे अने दिवसे दीठुं तेदीवसे दी ठुं कहेवायछे, माटे जे वखते स्वप्न देखाय छे ते वखते ते देखावारूपे अने संप्राप्तरूपे स त्य छे अने जागृत असत्य छे तेमज ज्यारे जागृत देखाय छे त्यारे स्वप्न असत्यछे एम नावानावरूप पदार्थ होय ते साद्यंत होय छे वली विशेष एवु समजवु जोइ ये छे के, यद्यपि स्वप्न तो साद्यंत छे पण स्वप्नो जे विकल्प छे ते आद्यंतरहित शा श्वत छे तेमाथी कोईक समये स्वप्न उद्भव थाय छे माटे स्वप्नुं देखवु कोई काले छे तेमज यद्यपि जगतमाना पदार्थोने पलटवापणे उत्पाद व्ययनी अपेक्षाये पर्यायप णे साद्यंत छे तथापि द्रव्यरूपे सदा शाश्वत ध्रुव छे केमके पर्यायपणे धर्म, अधर्म, आकाश, काल, जीव अने पुद्गल ए छए द्रव्य शाश्वत छे, जो पण छेल्ला त्रण द्रव्यना पर्याय अशाश्वत कहेवाय छे, तो पण स्वरुपे द्रव्यपर्याय सदा शाश्वतज छे, तेने असत्य केम कहेवाय ?

अरे नमिष्ट, तमे जीवने मानो छो के नही ? जो ना कहेशो तो आ बोले छे ते कोण छे ? अने जगत असत्य कोण ठरावे छे ? जे पोतेज असत्य होय ते बीजाने शु सत्यासत्य कहेवानोछे ? जे पोतेसत्य होय ते बीजाने सत्य अथवा असत्य कहेवाने समर्थ थाय माटे जीव पदार्थ नथीज एम जो कहेशो तो तमे पोतेज काईक पदार्थ छो ए वात तमाराथी ना कहेवाशे नही अने जगतने असत्य मानो छो तेवारे तमे पोते तो सत्य ठरशोज, केमके जे पोताथी अतिरिक्त वस्तुने असत्य माने ते पोते ते ना जेवो असत्य होतो नथी, किंतु तेनाकरता विपरीत स्वभाववालो सत्य होयछे ते नो आ प्रत्यक्ष दाखलो छे के, जगतने तमे स्वप्नजेवु गणोछो, त्यारे तमे पोते जागृत छो के नही ? केमके तमे पोते जागृत अवस्थामा न हो तो स्वप्नने स्वप्न कहो नही स्वप्नावस्थानो तमे पोते अनुभव करेलो छे, त्यारेज तेनाविषे कथन करी शको छो, ते

मज जगतविषे पण तमे अनुभव करीने कथन करो छो, तेथकी जगतथी जुदा अनुभव कर्त्ता छो माटे जीव छो.

अने जो जीव न होय तो गतागतभाग, भाव, भापा कार्य तथा कारण इत्यादिक विषयोनो अनुभव करवो. पाच इंद्रिओनो निग्रह करवो, त्रणयोगे शरीरनी चालना करवी इत्यादिक चेष्टा करनारो कोण छे? ए चेष्टा चैतन्य शक्तिथी थाय छे एथी चेतना लक्षणवान जीव जाणवो ज्यारे शरीरमाथी चेतना नीकली जाय छे त्यारे चेष्टा थती दीठामां आवती नथी, माटे ते अजीव कहिये एवी रीते जीव अने अजीव ए बन्ने पदार्थ छे एम सिद्ध थाय छे.

सर्व वस्तुना बे प्रकार थाय छे, एक पक्ष्यने बीजो प्रतिपक्ष्य जीव पक्षी छे अने अजीव प्रतिपक्षी छे अथवा अजीव पक्षी छे ने जीव प्रतिपक्षी छे अर्थात् जीव तथा अजीव ए बे पदार्थो सदा शाश्वत अविनाशी छे, एवु केवलीनुं वचन छे, ते अवश्य मान्य करवु जोये. दोहा, खरी शीख ए मानजो, मनमां राखी भाव, सद्दहाण जिन वचननुं, करो धरी चित चाव. १

२ नास्तिक – जीव अने अजीव नही मननारा मूर्ख छे केमके, जीव तो पांच महाभूतोना समेलनथी उत्पन्न थाय छे ज्यारे पांच माहाभूतोनुं प्रथककरण एटले जुडुंथवापणुं थाय छे त्यारे जीवनो नाश थाय छे ए वात साची छे

आस्तिक – पांच महाभूतोथी तो तमारा मतप्रमाणे पांच जुदाजुदा पदार्थोनी उत्पत्ति थाय छे ते आप्रमाणे.– पृथ्वीथी अस्थि, जलथकी रुधिर, अग्निथकी जठराग्नि, वायुथकी श्वासोश्वास अने आकाशथकी शून्यता थाय छे ए बधाथी जीव तो जुदो छे, ते शाथकी उत्पन्न थायछे वारु? चैतन्यने उत्पन्न करवानी शक्ति कया भूतमा छे? चैतन्य कयाभूतना अंसथकी उत्पन्न थयुं? ते कहो. पांचे महाभूत पोते जड छे, ते चैतन्यने केम करी शकशे? माटे ए पाच महाभूतनुं समेलन जीवनी उत्पत्ति करे छे एम तमे कह्यु छे ते पण संभवे नही, केमके, समेलन कोई एवो पदार्थ नथी के जेथी कोई पदार्थ उत्पन्न थई शके माटे जीवनो उत्पन्न करनारो कोई नथी, पण ए तो अनादि पच महाभूतथकी जुदोज छे दोहा, जिनवचनामृत पान करि, पामो अमर स्वरूप, जीव अनादी अनुभवो, ए छे शीख अनूप. २

३ नास्तिक.– सर्व जाणे छे के जीव ते शाश्वत पदार्थ छे, तेनी उत्पत्ति केम संभवे! ज्यारे उत्पत्ति कहेशो त्यारे नाश पण थशे. अने चेतन तो उत्पत्ति त

था नाश रहित छे, तो चेतनलक्षणवत जीवने जूतथी उपनो कहिये ते युक्त नथी केमके पाच महाजूतना असथी तो मात्र शरीरनी उत्पत्ति थाय छे.

आस्तिक:— ए वात पण कल्पित छे. यद्यपि जीवविषे तो तारा सारा विचार ज णाय छे, तथापि जहाशुधी जिनोक्त वचनजन्य ज्ञान नथी थयुं, तहाशुधी सर्वं मिथ्या छे. एक जीवने शाश्वत जाण्यो तेथी शु थयु ! कोई अजाणना मुखथकी नवकार प्रमुख जेवा ताहृश्य अक्षरोनो अचानक उच्चार थाय तेथी शुं तेने तेना फलनी प्राप्ति थाय छे ! तेम तें जीवने शाश्वत जाण्यो तेथी शुं सम्यक्त ज्ञानवान कहेवाशे ! कदी नही अने शरीर पंच महाजूतोथकी उत्पन्न थाय छे, एवु जे ते कह्यु ते असत्य छे. शरीरनी उत्पत्ति तो पुजलथकी थाय छे बीजा सवादमा अस्थ्यादिकनी उत्पत्ति महाजूतथी कही छे ते पण मिथ्याछे, केमके, अस्थि जे छे ते पृथ्वीनो अंश नथी, पण पृथ्वीना जेवा कठण छे, रुधीर छे ते जलनो अस नथी, पण जलनी पठे प्रवाही बिंडुधारा थाय छे, जठराग्नि जे छे ते अग्निनो अश नथी, पण अग्नीनीपठे उस छे, शाश्वोश्वास जे छे ते वायुनो अश नथी, पण वायुनी पठे पुरुपनो विकार छे, आकाश ते आकाश जाजन छे. तेम छता शरीर पचमहाजूतोथकी उत्पन्न थाय छे एम कहेशो तो ए पचमहाजूतोमाना पृथ्वी, अप, तेज अने वायु एना शरीर शाथकी उत्पन्न थाय छे ? ए पृथ्व्यादिकपण जीवरूप छे, अने तेओ शरीर सहित छे. जेम काची माटी सजीवन छे माटेज तेमा वनस्पति उगे छे, अने जे क्षारजूनि अजीव छे तेमा वनस्पति उत्पन्न थती नथी तेमज ए पंच महाजूत ते सर्व सजीव तथा निर्जीव ए बन्ने रूपे छे, माटे जो जगत उपजवाना कारण ए पाच महाजूतने कहेशो तो पाचमहाजूत शाथकी पेदा थया कहेशो ? माटे एनाथी शरीर अथवा जगतनी उत्पत्ति सजवे नही जीव अने जड ए बन्ने पदार्थोथी जगतनी प्रवर्त्ति छे एम जाणवु दोहा, आगम अगम अगाधरुत, ज्ञान लह्यो नर जेह, बेशि वचन जिनकल्पतरु, लहे चाह फल तेह २

४ नास्तिक -- जीव तो ईश्वरना अंशथकी उत्पन्न थायछे एम जणाय छे

आस्तिक -- जो ईश्वरना अंशथकी जीव थाय छे तो ईश्वर पोते अखम्ड रूप छे ते घटघटप्रते खडखंड जावने पामशे ईश्वर निर्लेप छे तो कर्मलेप सहित केमथाय छे ? जन्मरोग जरारोग अने मरणरोग रहित छे ते जन्मादिक सहित केमथाय छे ? निरावरण छे ते सावरण केम थाय छे ? एहवो मूढतो जगतमा कोई नथी जे प्रधानपद मूकी अधमपद आदरे ! माटे परमेश्वरने एवी बुद्धि केम थई जे परमेश्वरपद मूकी

ने जगत वाशी जीव थयो. केमके सर्व मतमतांतर वाला परमपदनी वांछनाये पो तपोताना मार्गनी क्रिया करे छे. पोताना आत्माने निर्लेपपणुं चाहे छे तो स्वमेव ईश्वरपद जन्म जरा मरण रहितपणुं पामीने वली जन्ममरण सहित उपाधिपणुं केमआदरे छे ? माटे ए तमारा वचन विरुद्ध जणाय छे

५ नास्तिकः-- कांई नवी युक्ति कह्राडीने बोले छे. आ बीजाओनी मति तो मारी गई छे माटे गमे तेम बके छे जीवने कोई शाश्वत कहे छे, ने कोई अशाश्वत कहे छे. वगैरे जेना मनमा जेम आवे छे ते तेम मह्रोडेथी बोले छे पण मर्म कोई जाणतो नथी आपणे प्रत्यक्ष अनुभव करेलुं छे ने आखे देखीए छेए के जीव पदार्थ उत्पत्तिवान छे, ने कोईक समये तेनो अत पण थाय छे. स्त्रीपुरुषनो संयोग थयाथी ते ओना रज तथा वीर्यथी मातानां उदरनेविषे शरीररूप एक पिंम बंधाय छे, ने पछी नियमित समये तेमां चेतना शक्ति आवे छे, तेने जीव कहे छे. वली शरीर कांई रोगादिकने वश मरण पामे छे, त्यारे जीव पण तेनी शाथे नाश थाय छे, ए प्रत्यक्ष वात छे. हाथना कांकणने आरीसुं शामारु जोये माटे जीव पदार्थ कोईकाले नवो पेदा थाय छे, तेथीजीवनी आदि छे एम जणाय छे

आस्तिक.— नाई, तु तो वली वधारी दाह्यो देखाय छे ! चेतननी उत्पत्ति तथा नाश संभवे नही. कर्मना वशे जीवने जन्मांतर थाय छे, तेथी नवुं शरीर धारण करे छे, पण जीव नवुं थतुं नथी वली शरीरनो नाश थयाथी जीवनो नाश पण थतो नथी. जीव तो बीजा शरीरने धारण करे छे. तेम छता जो वधारे आग्रह करीश, तो आ मारा प्रश्नो उत्तर आप के, जीव कई वस्तु पलटीने तेमांथी उत्पन्न थाय छे ? अथवा कई वस्तुनो परिणाम छे ? केमके कारण विना कार्यनी उत्पत्ति थाय नही एवो नियम छे, एटलुं समजाव्या छता पण जो नही मानीश, तो तु पोते जीव नथी पण जड छो एवुं ठरशे त्यारे जडनी साथे कोण माथाकूट करे !

६ नास्तिक – कदाच जड वस्तुनो परिणाम जीव अने जीवनो परिणाम जड थाय छे, एम कहीए तो कांई दोष आवे के ? अघटित्तघटनापटीयशी माया छे, तेमा बधु सनवे छे माटे अमे तो एम मानीए छेए के, जड वस्तु बदलीने तेथी जीवनी उत्पत्ति थाय छे

आस्तिकः—नाई, ए तमारुं बोलवु केवल अविचारनुं छे, एम तो कोई अज्ञानी पण माननार नथी जे जड वस्तुथी जीवनी उत्पत्ति थाय, एक स्वनाववाला पदार्थथी बीजा स्वनाववाला पदार्थोनी उत्पत्ति थाय नही एवो नियम छे. जेम के, मा

टीना पिंमथकी पट थाय नही अने ततुना पुजथकी घट थाय नही. तेम अजीवथी जीव उत्पन्न थाय नही अने जीवथी अजीव उत्पन्न थाय नही जे अचेतन होय तेने जड कहे छे अने जे चेतन होय तेने जीव कहे छे ए बन्ने पदार्थ परस्पर स्वभावे अमिलित छे, तेम छता जड वस्तुथकी जीवनी उत्पत्ति कहेवी, एना जेवी बीजी मूर्ख ता कई छे ! शुं कोईक एवो मसालो हशे के जो ते जड वस्तुमा पडे तो तेमाथी चेतन पेदा थाय ? एवी काई चीज तमे शोधी कहाडी होय तो अमने देखमावो नी ! माटे ए अज्ञानरूप अंधारु हृदयमाथी कहाडी नाखो, ने शुद्ध धर्मने अंगीकार करो दोहा शुद्ध धर्म जन जे लहे, ते पामे पद मोक्ष,प्रगट वस्तुने मूकिने, का जन भ्रमे परोक्ष ४

७ नास्तिक — स्वछंदीना जेवी मुखमुद्रा करीने बोलवा लाग्यो के, जीवने कर्म लागे छे के नही ? ए विषे विचार करवो जोइये. अमारा मतप्रमाणे जी वने कर्म लागता नथी.

आस्तिक — तमे तो वली बधाना शिरताज थया जणाओ छो ! पण कर्मविना काई बनतुज नथी, एम मान्याविना चालशे नही कर्मने तो सर्व अंगीकार करे छे,एमां कोई वाधो कहाडे एवु नथी. जो कर्म न होय तो पापपुण्यनु फल थवु न जोइये, ते तो प्रत्यक्ष दीठामा आवे छे, जेणे पाप कर्युं छे ते दुखी छे, ने जेणे पुण्य कर्युं छे ते सुखी छे, वली जो एम होय तो, दान, ध्यान, स्नान त था पूजा प्रमुख जे सत्कर्म छे, ते सर्व मतवालाओ शासारु करे छे ? तमारा क ह्याप्रमाणे तेनुं फल तो कांई थनार नथी, पण ते शुभ कर्म जाणीने लोको आ दरे छे ज्यारे कर्म नथी त्यारे जन्म धारण करवानुं शु प्रयोजन छे ? माटे जो ज न्ममरण तथा सुखदुःख छे, तो कर्म पण होवा जोइये कर्म छे ते जीवने रज रूप छे रागादिकथी बंधाय छे, ने भोगव्यापछी छुटे छे ज्हांलगि कर्म छे त्हांल गि ससारी जीव कहेवाय छे, कर्मोनो क्षय थवाथी मुक्त थयो कहेवाय छे माटे तमारे निश्चय मानवु जोइये छे के जीवने अवश्य कर्म लागे छे दोहा, कर्मथकी आ जीवने, सुख दुःख सघला थाय , कृत्य शुभाशुभ जेहथी, शफल थया कहेवाय

८ नास्तिक --तमे कहो छो के, जीव भवातर थकी आवीने आहि उपजे छे. त्यारे एक भवनी वात बीजा भवमा केम करतो नथी ? जो भवातर होय तो ते नी स्मृति जरूर थवी जोइये, ते तो कोईने पण थती नथी त्यारे भवांतर छे एम शाउपरथी समजाय ?

आस्तिक --आगला भवनी स्मृति थती नथी ते उपरथी भवांतरनो अभाव छे ए

म जाणवुं नही आगला नवनी वात तो रही, पण आ नवमाज मद्यादिक पदा र्थना योगे, गया दिवसनी वात पूछवाथी माणस बराबर कही शकतो नथी जु ओ के, कोई मनुष्य ताडनादिकना योगे मूर्छावान थयो होय, कोई पुरुषे सुरापान कर्युं होय, अथवा निद्रावश थयो होय, त्यारे गया दिवसनी स्मृति रहेती नथी, तेनुं कारण मद्यादिक पदार्थोनुं आवरण छे तेम जीवने ज्ञानावरणी कर्मना उदयथी पूर्व नवना वातनी स्मृति थती नथी. वली जेम आ नवमांज माताना उ दरमां नाना प्रकारना दुःख सहन करेला होय, ते वात जन्म्यापछी काई कही शक तो नथी, तो नवातरनी वात केम कही शके ? माटे नवातरनी वात तो विशेष ज्ञा नीविना बीजो कोई जाणी शकेज नही, एम समजवु दोहा, ज्ञानावरणी कर्मथी न वविस्मृति थइ जाय, विशेष ज्ञानी कहि शके, पूर्व जन्म महिमाय ८

ए नास्तिक.—अनिमानयुक्त मुद्रा करीने बोले छे-तमे एम मानो छो, के जीवने कर्मनो लेप लागे छे ने वली एम पण कहो छो के, जीव वास्तविक स्वरूपे शुद्ध छे त्यारे जे शुद्ध होय तेने लेप केम लागे? माटे जीव शुद्धज छे, तेने कोई कर्मनो लेप लागतो नथी एम मानवु जोइये

आस्तिक —टुंकामांज समाधान करे छे के, यद्यपि जीवनुं वास्तविक स्वरूप शुद्ध छे, तथापि शुनाशुन कर्मने योगे तेने लेप लागे छे, तेथीज जीव बंध कहेवाय छे अने जेने कर्मनो लेप नथी, ते मुक्त कहेवाय छे. मुक्ति तो सिद्धता पाम्याविना संन वेनही अने ज्यांसुधी मुक्तिनो अनाव छे, त्यांसुधी बंधनी कल्पना अवश्य कर वी जोइये ते बंध जीवने अनादि कालथी चाल्यो आवे छे जेम धानने तूस ला गेलाज होय छे तेम जीवने कर्म अने कर्मजन्य शरीर लागेलुंज होय छे जेम धा नने तूस लागवानुं कारण छोतरा होय छे तेम जीवने कर्मबंध लागवानुं का रण मिथ्यात्व तथा रागद्वेषादिक होय छे जेम धान्यमाथी तूस तथा तत्संबंधी छो तरारूप बंध हेतु पदार्थना अनावथी शुद्ध कण देखाय छे, तेम जीवमाथी मि थ्यात्व तथा राग द्वेषादिक कर्मबंध हेतुनो अनाव थयाथी शुद्ध निर्मल थाय छे जेम अनाजनो शुद्ध थयलुं दाणुं उगे नही. तेम जीवपण शुद्ध निर्मल थया थी जन्ममरण पामे नही दोहा, कर्म लेपना योगथी, बंध जीवने होय, कर्म खपे मुक्ती लहे, जन्म मरण नहि कोय. ७

१० नास्तिक —जरा विचारमां पडेला जेवी मुद्राथी बोलवा लागे छे. कर्म पोते तो जड पदार्थ छे. तेओनो जीवनी साथे स्वतंत्र संबंध संनवे नही. कोई पण प्रेरक होवो

जोये. माटे ईश्वरेछाथी जीवने कर्म बंध थाय छे; अने तेज प्रेरक छे एम जाणवु

आस्तिक — लगारेक हास्य करीने बोले छे ईश्वरे पोताना अंशरूप जीवने उत्पन्न कर्या छे तेथी जीव ईश्वरनो अंश कहेवाय, ए उपरथी जीव तथा ईश्वरनो अंशाशीभाव संबंध तमारा कहेवा प्रमाणे ठरे छे जो ईश्वर अश छे एम मानीए,तो ईश्वरना जेवो जीव होवो जोये केमके, अशाअंशीमा भेद होतो नथी तेथी ईश्वरनी पठे जीव पण निर्मळ छे, एम मानवु जोये. त्यारे एवा निर्मळस्वरूपी जीवने कर्म लगाडीने मळसहित करवानुं कारण शुं हतु! आपणे कोई शुध्द वस्तु वापरवाने अर्थे ज्यारे लावीए छैये, त्यारे जहांसुधी बने तहांसुधी तेने मलीन करवा देता नथी, अने स्वछ राखवानो घणो प्रयत्न कर्या करीये छे त्यारे पोताना अंशरुप जीवने जाणी जोईने मेळ लगाडवु ए ईश्वरनेविषे संभवे नही एम तो कोई साधारण मूर्ख मनुष्य पण करे नही, त्यारे ईश्वर ते तेम करे! अने जे पोताना अंगनो तिरस्कार अथवा नाश करे ते आत्मघाती कहेवाय तेम ईश्वरपण आत्मघाती कहेवाशे कदाच तमे एम कहेशो के, ईश्वर पोते पण कर्मकलंकसहित छे त्यारे जे पोते कलकसहित होय, ते बीजानो कलंक शु मटाडी शकवानो हतो! अने ते ईश्वर पण शानो! माटे गमे तेवी मनकल्पना करीने निर्दोषी ईश्वरने दोष लागु करवो ए केटली मूर्खता छे! माटे ईश्वरनी इछाथी कांई पण थतु नथी जे थाय छे ते कर्मथी थाय छे एम जाणवु दोहा, कर्मबंध आ जीवने, ईश्वर इछारूप, कहे एम ते मूर्ख छे, ईश अक्रीय अनूप ८

११ नास्तिक —आ जगतनी जे अद्भुत रचना देखाय छे, तेनो कर्त्ता कोई पण होवो जोये केमके, एवी कृति स्वाभाविक थई शके नही तेम कर्मादिक जड पदार्थोथी पण जगतनी उत्पत्ति संभवे नही माटे जे जगतने उत्पन्न करे छे, तेनेज ईश्वर कहिये, अने एवी लोकवदंता पण छे, के जगत सर्व ईश्वर कृत्य छे

अस्तिक — जगतनो कर्त्ता ईश्वर होय, तो सर्व प्राणीमात्रनु ईश्वर कारण थयु ने सर्व पदार्थो ईश्वरना कार्य [illegible] पिता जेम पुत्रनी उत्पत्ति करे छे तेम ईश्वर सर्व प्राणी मात्रनी उत्प[illegible] त्यारे ईश्वर [illegible]रूप अने सर्व पदार्थो पुत्ररूप मानवा जोये. [illegible] पितानो प्या[illegible] स्वाभाविक सिध्द छे. ते[illegible] [illegible]नो पण सर्वना [illegible]वो जोये [illegible] तो सर्व प्राणीमात्र[illegible] तेम [illegible] नथी [illegible] दुखी, कोई पापी, [illegible] जीवो

नी वर्त्तणुक जुदी जुदी दीठामा आवे छे. एम केम कीधुं छे ? वली जगतना जीवोने प्रवर्त्तावनारो ईश्वर छे, एम पण तमारा कह्या उपरथीज सिद्ध थाय छे त्यारे हिंदुए गायनी पूजा करवी, अने म्लेछे तेनो वध करवो, ए बुद्धि पण ईश्वरे आपी कहेवाशे जो एवी बुद्धि देनारो ईश्वर मानशो नही, तो बीजो कोई मानवो जोइशे केमके तमारा मत प्रमाणे प्रेरणा करनारो कोई जुदोज होय छे, अने जे प्रेरणा करे छे ते ईश्वर छे. त्यारे ते बीजो प्रेरणा करनारो ईश्वर मानवो पडशे ईवी रीते ईश्वरनो ईश्वर तेनो ईश्वर इत्यादिक मानशो तो अनवस्था दोष प्राप्त थशे वली पोते पोताने दुःखी कोई पण करतो नथी सर्व पोताने सुखनी चाहना करे छे. तेमज पोताना संबंधीओविषे पण सुखनी चाहना करे छे तमारा केहेवा प्रमाणे तो जे जीव नरके जाय छे तेपण ईश्वरनो अंश, अने जे स्वर्गे जायछे ते पण ईश्वरनोज अंश छे. एटले सुखी तथा दुःखी थाय ते सर्व ईश्वर पोतेज छे एम ठर्युं ए प्रमाणे ईश्वर पोतेज संसारमा परिभ्रमण करेछे. ते पोताना सेवकनां जन्म मरणादिक दुःख केम टाली शके ! अने जीवोने नरकथी अथवा बीजी कुगतिथी केम बचावी शके ? इत्यादिक विचार करता जगतनो कर्त्ता ईश्वर नथी, किंतु स्वाभाविक सिद्धछे. दोहा, जग कर्त्ता ईश्वर कहे, ते विद्वान न होय, ईश्वरने कर्तव्यनहि, स्वभाव सिद्धज जोय ए

१२ नास्तिक — जगतनी उत्पत्तिकर्त्ता भले ईश्वर न होय, एमां हुं कशो वांधो लेतो नथी पण ईश्वर सर्वव्यापक छे के नही ?

आस्तिक — जो ईश्वर सर्वव्यापक होय, तो जीव शिवाय बीजो कोई पदार्थ ज होवो न जोये. केमके, ईश्वरतो चेतनवत छे, ते सर्वमां व्यापक होय, तो चेतना विना कोई जगा खाली न जोइये, के जे ठेकाणे बीजो पदार्थ रही शके, अने जगतमां तो जीव अजीव पदार्थो जुदा जुदा दीठामा आवे छे एथी स्पष्ट सिद्ध थाय छे के, ईश्वर सर्व व्यापक नथी वली ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र, ए चार वर्ण अनुक्रमे श्रेष्ठता तथा कनिष्ठता केम पाम्या छे ! जेम के, ब्राह्मण सर्वथी श्रेष्ठ, तेनाथी क्षत्रिय कनिष्ट, क्षत्रियथी वैश्य, अने वैश्यथी शूद्र कनिष्ट छे, अने सर्वथी कनिष्ट चमारादिक जाति छे, तेओमां श्रेष्ट कनिष्ठता न थवी जोइये केमके, ईश्वर तो सर्वमां एक अने समान छे, तेमा उत्तम मध्यमता प्रमुख संभवे नही, अने उत्तम मध्यम तो प्रत्यक्ष दीठामां आवे छे वली बीजा पण उदाहरण अनेक छे, जेम के, कोई पुरुष शुभ कृत्य करे छे, ने कोई पुरुष अशुभ कृत्य करे छे,एम न थवु जोइये ईश्वर तो बधामा व्यापक छे, तेथी शुभाशुभ कृत्य शासा

जोये. माटे ईश्वरेछाथी जीवने कर्म बंध थाय छे, अने तेज प्रेरक छे एम जाणवु

आस्तिक.— लगारेक हास्य करीने बोले छे ईश्वरे पोताना अंशरूप जीवने उत्पन्न कर्या छे तेथी जीव ईश्वरनो अंश कहेवाय, ए उपरथी जीव तथा ईश्वरनो अंशांशीभाव संबंध तमारा कहेवा प्रमाणे ठरे छे जो ईश्वर अश छे एम मानीए,तो ईश्वरना जेवो जीव होवो जोये केमके, अशांअंशीमा भेद होतो नथी तेथी ईश्वर नी पठे जीव पण निर्मळ छे, एम मानवु जोये. त्यारे एवा निर्मळस्वरूपी जीवने कर्म लगाडीने मळसहित करवानुं कारण शु हतु ! आपणे कोई शुध्द वस्तु वाप रवाने अर्थे ज्यारे लावीए छैये, त्यारे जहांसुधी बने तहांसुधी तेने मळीन करवा देता नथी, अने स्वछ राखवानो घणो प्रयत्न कर्या करीये छे त्यारे पोताना अश रूप जीवने जाणी जोईने मेल लगाडवुं ए ईश्वरनेविषे संभवे नही एम तो कोई साधारण मूर्ख मनुष्य पण करे नही, त्यारे ईश्वर ते तेम करे ! अने जे पोता ना अंगनो तिरस्कार अथवा नाश करे ते आत्मघाती कहेवाय तेम ईश्वरपण आत्मघाती कहेवाशे कदाच तमे एम कहेशो के, ईश्वर पोते पण कर्मकलंकसहित छे त्यारे जे पोते कलंकसहित होय, ते बीजानो कलंक शु मटाडी शकवानो हतो ! अने ते ईश्वर पण शानो ! माटे गमे तेवी मनकल्पना करीने निर्दोषी ईश्वरने दोष लागु करवो ए केटली मूर्खता छे ! माटे ईश्वरनी इछाथी कांई पण थतु नथी जे थाय छे ते कर्मथी थाय छे एम जाणवु दोहा, कर्मबंध आ जीवने, ईश्वर इछारूप, कहे एम ते मूर्ख छे, ईश अक्रीय अनूप ८

११ नास्तिक —आ जगतनी जे अद्भुत रचना देखाय छे, तेनो कर्त्ता कोई पण होवो जोये केमके, एवी कृति स्वाभाविक थई शके नही तेम कर्मादिक जड पदार्थोथी पण जगतनी उत्पत्ति संभवे नही माटे जे जगतने उत्पन्न करे छे, तेनेज ईश्वर कहिये, अने एवी लोकवदंता पण छे, के जगत सर्व ईश्वर कृत्य छे

अस्तिक — जगतनो कर्त्ता ईश्वर होय, तो सर्व प्राणीमात्रनुं ईश्वर कारण थ युं ने सर्व पदार्थो ईश्वरना कार्य थया पिता जेम पुत्रनी उत्पत्ति करे छे तेम ई श्वर सर्व प्राणी मात्रनी उत्पत्ति करे छे. त्यारे ईश्वर पितारूप अने सर्व पदार्थो पुत्ररूप मानवा जोये पुत्रनी उपर पितानो प्यार होय ए स्वाभाविक सिध्द छे तेम ईश्वर नो पण सर्वनी उपर प्यार होवो जोये जो एम होय तो सर्व प्राणीमात्र सुखी होवा जोये. तेम तो दीठामा आवतु नथी कोई सुखी, कोई दु:खी, कोई पापी, कोई पुण्यवान, कोई नरकगामी, तथा कोई स्वर्गगामी वगेरे सर्व जीवो

नी वर्त्तणुक जुदी जुदी दीठामा आवे छे. एम केम कीधुं छे? वली जगतना जीवोने प्रवर्त्तावनारो ईश्वर छे, एम पण तमारा कह्या उपरथीज सिद्ध थाय छे त्यारे हिंदुए गायनी पूजा करवी, अने म्लेछे तेनो वध करवो, ए बुद्धि पण ईश्वरे आपी कहेवाशे जो एवी बुद्धि देनारो ईश्वर मानशो नही, तो बीजो कोई मानवो जोइशे केमके तमारा मत प्रमाणे प्रेरणा करनारो कोई जुदोज होय छे अने जे प्रेरणा करे छे ते ईश्वर छे त्यारे ते बीजो प्रेरणा करनारो ईश्वर मानवो पडशे. एवी रीते ईश्वरनो ईश्वर तेनो ईश्वर इत्यादिक मानशो तो अनवस्था दोष प्राप्त थशे वली पोते पोताने दुखी कोई पण करतो नथी सर्व पोताने सुखनी चाहना करे छे. तेमज पोताना सबंधीओविषे पण सुखनी चाहना करे छे तमारा केहेवा प्रमाणे तो जे जीव नरके जाय छे तेपण ईश्वरनो अंश, अने जे स्वर्गे जायछे ते पण ईश्वरनोज अंश छे. एटले सुखी तथा दुःखी थाय ते सर्व ईश्वर पोतेज छे एम ठर्युं ए प्रमाणे ईश्वर पोतेज संसारमां परिभ्रमण करेछे ते पोताना सेवकना जन्म मरणादिक दुःख केम टाली शके! अने जीवोने नरकथी अथवा बीजी कुगतिथी केम बचावी शके? इत्यादिक विचार करतां जगतनो कर्त्ता ईश्वर नथी, कितु स्वाभाविक सिद्धछे. दोहा, जग कर्त्ता ईश्वर कहे, ते विद्वान न होय, ईश्वरने कर्त्तव्यनहि, स्वभाव सिद्धज होय ए

१२ नास्तिक— जगतनी उत्पत्तिकर्त्ता भले ईश्वर न होय, एमा हुं कशो वाधो लेतो नथी पण ईश्वर सर्वव्यापक छे के नही?

आस्तिक — जो ईश्वर सर्वव्यापक होय, तो जीव शिवाय बीजो कोई पदार्थ ज होवो न जोये. केमके, ईश्वरतो चेतनवत छे, ते सर्वमा व्यापक होय, तो चेतना विना कोई जगा खाली न जोइये, के जे ठेकाणे बीजो पदार्थ रही शके, अने जगतमां तो जीव अजीव पदार्थो जुदा जुदा दीठामा आवे छे एथी स्पष्ट सिद्ध थाय छे के, ईश्वर सर्व व्यापक नथी. वली ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र, ए चार वर्ण अनुक्रमे श्रेष्ठता तथा कनिष्टता केम पाम्या छे! जेम के, ब्राह्मण सर्वथी श्रेष्ट, तेनाथी क्षत्रिय कनिष्ट, क्षत्रियथी वैश्य, अने वैश्यथी शूद्र कनिष्ट छे, अने सर्वथी कनिष्ट चमारादिक जाति छे, तेओमां श्रेष्ट कनिष्टता न थवी जोइये केमके, ईश्वर तो सर्वमां एक अने समान छे, तेमां उत्तम मध्यमता प्रमुख संभवे नही, अने उत्तम मध्यम तो प्रत्यक्ष दीठामा आवे छे. वली बीजा पण उदाहरण अनेक छे; जेम के, कोई पुरुष शुभ कृत्य करे छे, ने कोई पुरुष अशुभ कृत्य करे छे.एम न थवुं जोइये ईश्वर तो बधामा व्यापक छे, तेथी शुभाशुभ कृत्य शासा

रु करे छे ? ए उपरथी एवो निश्चय थाय छे के, ईश्वर सर्व व्यापक नथी दोहा, व्यापक ईश्वर जे कहे, तेह न जाणे मर्म, नर्म जूठ्या सर्व मत, विना एक जिनधर्म १०

१३ नास्तिक – ईश्वर सर्व व्यापक हो के न हो, तेनी साथे अमारे जरुर नथी, पण आ जगतनो अधिपति ईश्वर छे, अने जगतरूप तेनु ऐश्वर्य छे, तेथीज ईश्वरताने पाम्यो छे जे ऐश्वर्यवाळो होय तेने ईश्वर कहिये

आस्तिक – जगतनुं आधिपत्य लेवानुं ईश्वरने शु कारण हतु ! अने जगतरुप ऐश्वर्य पण तेने शासारु जोइतुं हतु ! शुं जगतनी उत्पत्तिनी पूर्वे ते ऐश्वर्यने पाम्यो न हतो ! ऐश्वर्यविना ईश्वरता संभवे नही ए उपरथी जे जगतनी उत्पत्तिनी पूर्वे अनीश्वर हतो, ते उत्पत्ति करीने ईश्वरताने पाम्यो छे, एवो तमारो आशय जणाय छे नही वारु ! पण ए बधुं खोटुं छे ईश्वरनेविषे एवी कल्पना करवीज नही जोये जुओ के, तमारा कहेवा प्रमाणेज जेम प्रजानी अपेक्षाये राजा कहेवाय छे, अथवा धननी अपेक्षाये धनाढ्य कहेवाय छे, तेम जगतनी अपेक्षाये ईश्वर कहेवाय छे एटले जेवारे जगतने उपजावे तेवारे जगतनु ईश्वर पणु कहिये, एथी जगतनी पूर्वे ईश्वर न हतो एम थयु, अने जेवारे जगतनो प्रलय थाय त्यारे ईश्वरनो पण अभाव थई जवो जोये जो ए वात कबूल करशो तो जे कोई काळमा होय ने कोई काळमा न होय ते क्षणिक कहेवाशे जो क्षणिक मानशो तो बीजा घणा दोष प्राप्त थशे, माटे ईश्वरने जगतनो एवी रीते अधिपति कहेवो ते योग्य नथी दोहा, अधिपति जगनो जे कहे, ईश्वरने मतवादि , ते एकांत कनिष्ट छे, उत्तम अनेक वादि ११

१४ नास्तिक – आटला संवाद थया, तेओमां ईश्वरनु यथार्थ कारणपणुं कोइए कह्यु नथी जगतनी उत्पत्तिनी पूर्वे ईश्वरने एवो संकल्प थयो के, मारु सामर्थ्य प्रगट करुं, ए वात वेदमा कही छे ते आवी रीते - 'एकोहं बहुस्यामि' एटले एक हुं बहु रूपे थाउं. एवा कारणथी जगतनी उत्पत्ति करी छे, तेथी ईश्वरने कारण कह्यो छे

आस्तिक -- पोतानुं सामर्थ्य प्रगट करवानी इछा तो तेने थाय के, जेनेविषे अज्ञान होय ईश्वरतो सर्वज्ञ छे, ते शु पोतानु सामर्थ्य जाणतो नहोतो ! मारामा केटलुं सामर्थ्य छे, एवो जेने संशय होय, ते ईश्वर शानो ! साधारण मनुष्य प्राणी पण पोतानुं सामर्थ्य जाणी शके छे, तो ईश्वर केम न जाणी शके !

માટે એમ કહેવું તે મૂર્ખતા છે. દોહા, નિજ સમર્થને જાણવા, કર્યું ઈશ જગ એહ, કારણ વાદી જે કહે, શતમૂરખ છે તેહઃ १२

१५ નાસ્તિક·-- ઈશ્વરે પોતાનું સામર્થ્ય બતાવવા સારુ જગતની ઉત્પત્તિ કરી છે, એમ જાણવું જોઈયે.

આસ્તિક·-- કોને બતાવવા સારુ જગતની ઉત્પત્તિ કરી છે? જીવ અને જડ પ પાર્થો તો ઈશ્વરેજ ઉત્પન્ન કર્યા છે, એમ તમે કહો છો. ત્યારે બીજો કોણ જગતની પૂર્વે હતો કે, જેને દેખાડવા સારુ ઈશ્વરે આ જગતની ઉત્પત્તિ કરી છે! માટે એ વાત પણ અસત્ય છે. દોહા, બીજાને દેખાડવા, પોતાનું સામર્થ્ય, જગ ઉપજા વ્યું ઈશ્વરે, એમ કહે તે વ્યર્થ. १३

१६ નાસ્તિક --જેમ માણસ સવારમાં ઉઠી વસ્ત્રાદિક પહેરીને આરીસામાં પોતાનું સ્વરૂપ દેખે છે, તે સારું દેખાય તો આનંદિત થાય છે, તેમ ઈશ્વર પણ પોતે પોતાનું સ્વરૂપ જોવાસારુ આ જગતરૂપ શૃંગાર કરી પોતાનું રૂપ વિસ્તારીને દેખે છે, એમ જાણવું જોઈયે.

આસ્તિક.--માણસ પોતાનુ રૂપ આરીસામાં જુવે છે, તેનું કારણ એ કે, મારું રૂપ સારું દેખાશે નહી, તો લોકો હાશી કરશે, અથવા કોઈ ખોડ કાહાડશે, તેમ ઈશ્વરે બીજા કોના નયથી પોતાના રૂપનો વિસ્તાર કર્યો છે? ઈશ્વરના જેવો બીજો ઈશ્વર કોઈ છે નહી; ત્યારે જોનારો કોણ! માટે એ વાત પણ જૂઠી છે દોહા, પોતે જોવા આપને, રચ્યો જગત આ ઈશ, કોના નયથી તે કહો, મતવાદી તજિ રીશ १४

१७ નાસ્તિક --' એક એવહિ ભૂતાત્મા, ભૂતે ભૂતે વ્યવસ્થિત , એકધા બહુધા ચેવ, દૃશ્યંતે જલ ચંદ્રવત્' એવી રીતે આત્મા એક છતાં સર્વ પ્રાણીમાત્રમાં જુદો જુદો દી ઠામાં આવે છે, જેમ ચંદ્રમા એક છતાં અનેક જલસ્થાનકોમા પ્રતિબિંબ રૂપે જુદો જુદો દીઠામાં આવે છે, તેમ ઈશ્વર એકજ છે પણ ઘટ ઘટમા જુદો જુદો દેખાય છે એટલે ઈશ્વર બિંબ છે ને સર્વ જીવ પ્રતિબિંબ છે, એમ જાણવું

આસ્તિકઃ-- જેમ એક ચંદ્રમાના અનેક પ્રતિબિંબો હોય છે, તે જેવો ચંદ્રમાં હોય તેવા દેખાય છે. તથા કાચના ભુવનમા એક મનુષ્ય છતાં અનેક પ્રતિબિંબ રૂપે દીઠામા આવે છે. તેમાં મૂલ આકૃતિથી. જુદી આકૃતિ દેખાતી નથી જેમકે, બીજથી તે પૂર્ણિમાસુધી જેમ જેવી ચંદ્રમાની આકૃતિ હોય, તેવો પ્રતિબિંબ દેખાય છે, તથા કાંચ ભુવનમાં મનુષ્યની જેવી આકૃતિ હોય તેવીજ તાદૃશ્ય દે ખાય છે. કાણો હોય તો કાણો દેખાય, આંધલો હોય તો આંધલો દેખાય; વગેરે

बिंबना जेवोज प्रतिबिंब देखाय छे तेम ईश्वर सर्व प्राणीओमां सरखो देखातो नथी कोई सुखी, कोई दुःखी, कोई पापी, कोई पुण्यवान वगेरे अनेक प्रकारे देखाय छे. त्यारे ईश्वरना प्रतिबिंब केम संभवे? जे प्रतिबिंब होय, ते बिंबना जेवोज होय छे? तेम तो ए नथी वली जेम चंद्रमानो उदय थता प्रतिबिंब पण तेज वखते उत्पन्न थाय छे अने चंद्रमा अस्त थयाथी प्रतिबिंब पण मटी जाय छे तेम ईश्वर अने जीवोनेविषे थतु नथी ईश्वर उत्पत्ति नाश रहित छे, तेम जीव पण होवा जोये ईश्वर जेम अक्रिय छे, तेम जीव पण कर्मविना होवा जोये. जेवो बिंब तेवा प्रतिबिंब होवा जोये तेम तो ईश्वर अने जीव नथी, माटे चंद्रबिंबनो दृष्टांत सर्वथा असत्य छे, केमके सर्व जीव पोताना कर्मोदयथी उत्तम मध्यम पणुं पामेछे दोहा, बिंब अने प्रतिबिंबता, ईश्वर जीव प्रमान, चंद्र बिंबवत ए नही, तेथी सत्य न जान. १५

१८ नास्तिक – जीव वर्णादिके करी सहित छे, एम मानवुं जोये

आस्तिक.– जीव वर्णादिके करी रहित छे, अने चेतन लक्षणवत छे, अने कालु, रातु, नीलु, पीलु, तथा धोलुं ए पांच वर्ण, सुगंधि तथा दुर्गंध ए बे गंध, तीखुं, कडवु, कशायलुं, खाटुं तथा मीठुं ए पांच रस, शीत, उष्ण, स्निग्ध, लूखुं, करकश, मृदु, गुरु, तथा लघु ए आठ फरस, अने परिमंडल, व्रत, त्रयाश, चउरस तथा आयतन ए संस्थान प्रमुख सर्व जड पदार्थना गुण छे, ते चैतन्यमा नथी चेतननो आकार शरीरने आश्रये छे जेम पाणीनो आकार जलाशयथी जणाय छे तेम चेतननो आकार पुद्गलथी जणाय छे

१९ नास्तिक.– जीव कर्मोने केम ग्रहण करतो हशे वारु?

आस्तिक – जेम वस्त्रना तंतु ते वस्त्रना अंश छे, तेम जीवना प्रदेश ते जीवना अंश छे; जेम वस्त्रांतर्गत तंतुना सूक्ष्म तंतु छे तेम जीवना पर्यायछे जेम वस्त्रनो वरण तेम जीवनु सद्लक्षण छे जेम वस्त्रने मेल लागवानुं कारण, तेमजीवने मिथ्यात्वादिक हेतुये रागद्वेष आश्रवे कर्मरुप मेल लागवानु कारण छे जेम वस्त्रनो मल टालनार धोबी तेम पोताना अंतरनो मल टालनार आत्मा पोते छे जेम वस्त्रने साबुये करी मल टले छे, तेम जीवने शुभध्यानेकरी कर्मरूप मल टले छे. जेम वस्त्रने अग्नि, तेम जीवने तपस्या छे इत्यादिक कारणथी कर्मनो क्षय थाय छे. जे जीव कर्म सहित होय तेने कर्म लागे, पण कर्मरहित होय, तेने नवा कर्म लागे नही जेम सूत्रकातनारी नाडी काते, तेमाथी थोडी बाकी रहे, त्यारे तेनी साथे बीजी वलगा

छे, पण पहेली होयज नही, तो तेनीसाथे बीजो संबंध साथी करे! तेम जीव पण अनादिनो कर्मसहित छे, अनादि जीवनुं एहवुंज स्वरूप चाल्युं आवे छे, माटे जहांसुधी कर्म सहित छे तहांसुधी नवा कर्म पण ग्रहण करे छे, पण प्रथमथी अमुक वखतेज जीव नवां कर्म ग्रहण करी कर्ममल सहित थयो, एवी आदि नथी.

२० नास्तिक.--जीवने कर्म क्यारे लागां छे? कर्म लागवानी कोई पण आद्य जोये जे पदार्थनो अंत थतो होय, तेनी आदि पण होवी जोये. ज्ञाने करी कर्मोनो अंत थाय छे एम तमेज कहो छो. त्यारे आद्य पण कबुल करवी पडशे, ते आदिनो समय कह्यो छेखशो? केम के, जीव प्रथम निर्मल होय तोज तेने कर्मरूप मल लाग्यो कहेवाय.

आस्तिक --ए वचन दूषण सहित छे केमके, जीव प्रथम ज्यारे निर्मल हतो त्यारे तेने कर्म लागवाना परिणाम केम थया? जे निर्मल होय ते पोताने मल सहित थवानी इच्छा करे नही तेम छता जीवे कर्मोनी वांछा केम करी? माटे जीव अनादिनो कर्म सहित छे. जीवनेविषे कर्म स्वभावे अनादिसिद्ध छे. दोहा, आदि जीव निर्मल हतो, पछि वलग्यां छे कर्म, एम कहे ते ना लहे, जिन वचनोनो मर्म. १६

२१ नास्तिकः--सर्वमां व्यापक आत्मा एक छे, अने शरीरो जुदां जुदां छे, एम मानवु जोइये.

आस्तिक --जो बधामां आत्मा एक होय तो माता, पिता, स्त्री, पुरुष, भाई, बेन, पुत्र, राजा, प्रजा, चोर, साहुकार, चमाल, क्षत्रिय, उंच, नीच, नरक, देवता, पुण्यवान, तथा पापी इत्यादिक भिन्न भिन्न केम देखाय छे? सर्वमा आत्मा एक होवाथी तेज देखायु जोइये, अने एके कीधेलुं पाप सर्वने लागवुं जोइये, तेमज एके कीधेला पुण्यना सर्व भागीदार थवा जोइये, एकना मुक्त थयाथी सर्व मुक्त थवा जोइये, प्रत्येक माणसनुं जुडुं जुडुं अनुष्ठान निष्फल थवुं जोइये, तेम तो थतु नथी जे करे छे ते भोगवे छे; ए कहेवत प्रमाणे बधा आत्मा भिन्न भिन्न देखाय छे. माटे सर्वमा एक आत्मा व्यापकपणुं कहेवु ते समीचीन नथी, एम जाणवुं दोहा, आत्म सर्वमां एक छे, भिन्न भिन्न आ देह; एम कहे एकात मत, असत कहीजे तेह १७

२२ नास्तिक --सर्व कार्य अने अकार्य ईश्वरनी इच्छारूप छे, अने ईश्वरनी इच्छाथीज सर्व थाय छे, एम जाणवुं जोइये.

आस्तिक --जो एम होय, तो जन्म धारण करवामां मातापितानुं शुं काम छे ? अने विष खाधाथी मरण थाय छे, तेमा विषनुं सु वाक छे? तेमज जो जनथी क्षुधानी निवृत्ति, पाणीथी तृषानी निवृत्ति, अग्निथी शीतनिवृत्ति, व ली तापथी खेदोत्पत्ति, वर्षाथी धान्योत्पत्ति, द्वेषथी वैरोत्पत्ति, नम्रताथी स्नेहो त्पत्ति, चोरी कस्याथी ताडन, यारी थकी निर्लज्ज, पापथकी नरक, पुण्यथकी स्वर्ग, इत्यादि सर्व कारणो अने कार्यो व्यर्थ थशे अने सर्व वस्तुओ स्वगुण रहित कहेवी जोइशे. राग करनारो स्नेही नही, तेम द्वेष करनारो वैरी नही कहेवाशे उ पकार प्रति उपकार करवानी काई जरूर रहेशे नही अने पाप पुण्य फलरहित थशे. केम के, सर्व कार्य करवानु मूल कारण एक ईश्वर इछा थई, माटे सर्व ईश्व र इछारूप छे, एम कहेवु ते समीचीन नथी तमारा कहेवा प्रमाणे पुण्य पापनुं कर्त्ता पण ईश्वर अने जोक्ता पण ईश्वर थयो दोहा, ईश्वर इछारूप आ, कृत्य स र्व जगमांहि, एम कहे शुणता टले, सारासार न कांहि १ए

२३ नास्तिक -- आत्मा पच जूतो थकी थयो छे, ए वात असत्य नथी, किंतु साची छे, एवुं अमने जणाय छे

आस्तिक - जूत शब्दनो अर्थ त्रणे कालमां अस्तित्व थाय छे एटले जे छे छे ने छे, तेने जूत कहिये जूतनो तो कोई काले छेद थतो नथी, माटे ए अस्तित्वरूप जूतनो अश तो सजवे नही, तेम आकाशादिक पंच महाजूतनो अंश पण कही शकाय नही वली पाच जूतना अंशे करी शरीरनी उत्पत्ति थाय छे, त्यारे ज्ञान अने चेतना कहा अंशथी उत्पन्न थया ? माटे जूत शब्द ए भ्रमजाल छे अने चिदानंद ज्ञानरूप आत्मा तो शाश्वत छे ते कोई समये जूनो तथा नवो थतो नथी ते जीव पूर्वोपार्जित कर्मे करी शरीर बाधे छे ते जम पुद्गलनु ग्रहण छे. तेमा जूतनुं काई प्रयोजन नथी, जूत केवी वस्तु छे ? जीव छे के जड छे ? रूपी छे के अरूपी छे ? ईश्वराश्रित छे के नवा प्रगट थाय छे ? छता रूप छे के सयोगे थाय छे ? ए विषे काई विचार करी शकातो नथी, माटे जूत ए शब्दज व्यर्थ छे ते नाथी जीवनी उत्पत्ति केम मनाय ! दोहा, जीव ऊपजे जूतथी, ए मत छे भ्रम रूप, जीव चिदानंद सत्य छे, अनादि जाव अनूप १ए

२४ नास्तिक --तमारा कह्या प्रमाणे जीवने जवांतर थाय छे. जवनी प्राप्ति क र्मानुसार छे जेवा कर्मो कस्या होय तेवा जवनी प्राप्ति थाय छे शुज कर्मनुं फल सारो जव छे, अने अशुज कर्मनुं फल नरशो जव छे ते वात सत्य छे, परतु को

ई जीवने एक खंडमां शरीर मूकीने बीजा खंममां बीजुं शरीर धारण करवु पके तो एटलो दूर जतां तेने केटलो वखत लागतो हशे ! अने कोई जीवने एक श रीर मूकी तरत तेज गाममा उपजवु होय, तेने कांई दूर जवुं पडतु नथी, तेथी काई वधारे वखत लागतो नही हशे, पण जेने दूर जवु पडतुं हशे तेने रस्तामा चालता वधारे वखत लागतो हशे नी !

आस्तिक — नजीक अथवा दूर नवांतर करवामां वधारे वखत लागतो नथी, समरखोज वखत लागे छे. जेम घाणी, रहेंटीओ अथवा चारणुं इत्यादिक ज्यारे फरे छे, त्यारें तेओना माहेला तथा बाहेरना नागने फरतां समरखोज वखत लागे छे यद्यपि अंदरनो क्षेत्र थोडो होय छे, ने बाहेरनो घणो होय छे, तथापि फरतां वखतमां वधघट थती नथी. वली जेम दीपकने शलगावीए ते क्षणमांज प्रकाश करेछे वचमां कांई अंतर पडतो नथी, तेम जे वखते एक नव मूके के लागलोज बीजो नव पामे छे; तेमां लगार पण अवकाश रहेतो नथी ते नव पछी दूर देश धारण करवो होय, के नजीक देशमा धारण करवो होय, गमे त्यां नव धारण कर वांवामां वखतनो वार फेर थतो नथी

२५ नास्तिक—जीवने कर्म केवी रीते लागे छे.

आस्तिक—आत्माना शुनाशुन परिणामथी जीवने कर्म लागे छे जो शुन परिणाम होय, तो सारा कर्म लागे छे, अने अशुन परिणाम होय, तो नरशा कर्म लागे छे. अने तेना फल पण तेवां थाय छे. कर्मने कांई ज्ञान नथी, जे आ जीवे पाप कर्युं माटे हुं एने पापरूप कर्म थई लागुं.

२६ नास्तिक—कर्म तो जड छे. तेथी तेओमां ज्ञान शक्ति नथी त्यारे जीवे नर शां अथवा सारा कर्मो कयाथी पाप अथवा पुण्यरूप परिणाम केम थाय छे ? ए परिणाम तो ज्ञानविना थाय नही. तेथी एवुं जणाय छे के कर्म लागवामा ईश्वर हेतु छे. कर्म करवापणुं जीवने छे; ने तेनुं फल देवु ईश्वरने छे

आस्तिक—कर्म लागवामां ईश्वरनुं कांई काम नथी. कर्मोनो एवो स्वनावज छे के परिणामने पामवुं. जेम कोई पुरुष विषमिश्रित नोजन करे, ते मरण पामे छे मरवु ए विषनो परिणाम छे, पण विष जम पदार्थ होवाथी तेने एवुं ज्ञान नथी के मने जे खाय छे, ते मरीजायछे; तेम छतां तेथी तेवो परिणाम थायछे के नही ! वली जेम कोई पुरुष मिष्टान्न नोजन करे, तेथी पुष्ट थाय छे पण ते नोजन एम नथी जाणतु के, माराथकी आ शरीरनी पुष्टी थाय छे. तेम छतां तेनो परिणाम

तेवो थाय छे एतो एनो स्वनाव छे तेम शुनाशुन कर्मोने यद्यपि ज्ञान नथी, तोपण तेओनो एवो स्वनावज छे, के फलरूपे पोते परिणामने पामवु कर्मो नो एवो स्वनावज छे के शुन करवाथी पुण्यकर्म बंधाईने उत्तम गतिनी प्राप्ति थाय छे, तेमज अशुनविषे पण जाणी लेवु एवो कर्मोनो अनंत कालनो स्वनाव छे. वली जेम चमक पाषाण लोहने पोतानी तरफ खेंची लिये छे, तेनुं चमकने कांई पण ज्ञान नथी, के हुं लोहनुं आकर्षण करूंछुं, परतु ते क्रिया स्वानाविक थाय छे तेम जीव शुनाशुन परिणामना उपयोगे शुनाशुन कर्म आकर्षण करी आ त्मापणे लोलीनूत करे छे, एवो अनादि कालनो स्वनावज छे. एमां ईश्वरनुं कांई काम नथी

१७ नास्तिक – जीव एवो कोई पदार्थज नथी, बधु शून्यज छे. त्यारे शुनाशुन कर्मो ते कोने लागवाना हता ! ए बधो नर्म छे. जीव कोई छेज नही

आस्तिक – नाई, तूं पाको बुद्धिनो देखाय छे. जीवनेज उराडी नाख्यो एटले बधी खटपट चूकी गई के नही वारु ! अरे मूढमति विचार तो कर, के जो शरीरमा जीव न होय, तो शरीरनी चेष्टा केम थई शके ? शरीर तो जम छे, तेमा चेतन शक्ति न होय तो क्रिया केम थाय ? जो आत्मा न होय तो आ शरीर, हाथ, पग, कान, नाक, जीन, आख, मन, बुद्धि, धन, धान्य, राज्य, तथा संपत्ति प्रमुख सर्व पोताथी जुदा पदार्थोमां शरीर मारुं छे, धन मारुं छे, वगैरे एवो बोलनार कोण छे ! मारुं छे, एवुं कहेनार पदार्थथी जुदो होय छे एम तो कोई पण कहे तो नथी के हुं शरीर छुं, हुं मन छुं वगैरे, माटे शरीरादिक सर्व वस्तुनो निन्न व्य वहार होवाथी जीव छे एवु वरे छे शरीरमाथी जीव नीकली गया पछी विचार करवुं, बोलवु, तथा चालवु वगैरे कांई पण क्रिया थई शकती नथी तेथी शरीर थकी जीव जुदो कोईक छे एम नकी जाणजे वली शरीरमा ज्यारे जीव छे त्यारे बोले छे, ने घट पटादिक पदार्थोमां जीव नथी त्यारे बोलता नथी. तेथी जीवद्र व्य ते शरीर थकी निन्न छे एवुं शिद्ध थयु तेने छेज नही एम तु केम माने छे ? जो जीव न होय तो व्यवहार केम चाले ? माटे जीव अवश्य छे एम जाणवु

१८ नास्तिक – जीव समय समयनेविषे नवो थाय छे हमेश एक जीव रहे तो नथी

आस्तिक – ए वात तदन जूठी छे जीवत्व नवु कोई समये थतुज नथी जीवना पर्याय द्रव्य, क्षेत्र, काल, नाव, तथा उदय नावाश्रित तो जुदा जुदा

होय छे, पण जीवपणुं नवुं होतुं नथी. जीव समय समय प्रत्ये जो नवो थतो होय, तो बाळपणनी वात यौवनावस्थामां सांभळवी न जोये. तथा गत समयनुं सांभळेलुं, दीठेलुं, भोगवेलुं, लीधेलु, तथा दीधेलुं प्रमुख कांई पण स्मरणमां आव्युं न जोये. तेनी स्मृति तो थाय छे. तेथी जीव तेहिज छे. जो जीव नवो थतो होय तो एक जीवनुं करेलुं कार्य बीजो जीव केम जाणी शके? ए तो प्रसिद्ध वात छे तेथी जीव द्रव्य सदा सरखुं छे, एमां कोई काळे पण फेर पडतो नथी, एम जाणवुं.

२९ नास्तिक.— जीव जे नाना प्रकारनां कर्मों करे छे, तेओनो करावनार ईश्वर छे ईश्वरनी प्रेरणा विना जीव थकी कर्म थाय नही, एम जाणवुं

आस्तिक.— जो जीवने कर्म ईश्वर करावतो होय, तो कर्मनो कर्त्ताज ईश्वर ठरशे, केमके जे क्रीयानो प्रेरक होय छे, तेज कर्त्ता होय छे. जो ईश्वर कर्त्ता ठेरावशुं तो जे कर्त्ता होय छे, तेज भोक्ता होय छे ए रीतथी ईश्वरने भोक्तापणुं पण आवशे भोक्ता ईश्वर थयाथी पापपुण्य ईश्वरनेज लागे छे, एम मानवुं पडशे जेम कोई पुरुष पोताना हाथमा खड्ग लईने बीजाने मारे. तेनुं पाप खडगने लागतु नथी, पण ते खडगना मारनारने लागे छे. तेम पुरुषे कीधेलुं पाप पण ईश्वरने लागनार छे कर्मनो करनार तो खडगना जेवो छे; तेने कर्म लागवा न जोईए. तेथी कर्म ईश्वरने लागे छे एम सिद्ध थयु. एम माननारने एटलुंज पूछवुं जोये के, कर्मनो कर्त्ता तु नथी, तेम कर्मनो भोक्ता पण तूं नथी, कर्त्ता भोक्ता ईश्वर छे त्यारे सर्व मनुष्यो पोतपोताना मत प्रमाणे क्रिया करवानी बुद्धि केम करेछे? मद्य माशनो त्याग, अने स्नान, संध्या, स्तोत्र, तप, जप, वगैरे शासारु करेछे? पोताने काई पाप प्रमुख लाग्युहोय तो तेनुं निवारण शासारु करे छे? अकार्य शासारु करता नथी? पाप थकी शासारुं बीहेछे! कर्त्ता शो भोक्ता एम शासारुं कहे छे? पोते करे छे, ते भोगवे छे, तेम छता वळी कहे छे के हे प्रभु, मारा पाप टाळो पण एम नथी कहेतो के प्रभु तमारा पाप टाळो. जे चोरी करे तेने दंड थाय ने जे छेद करे तेना प्राण जाय अने हिंसा करे ते अवश्य नरक गामी थाय. वगैरे ए सर्व व्यर्थ मानवा जोइशे. माटे कर्त्ता जीव छे ईश्वर नथी एम मानवु जोये

३० नास्तिक.— अमे मान्य करेलुं ईश्वर सर्वज्ञ छे एम जाणवु अने शास्त्रोमा पण "सर्वज्ञो ईश्वर." एवा घणा वाक्यो दीठामा आवे छे, माटे ईश्वर बधुं जाणे छे.

आस्तिक—यद्यपि तमे कहोछो के ईश्वर सर्वज्ञ छे, ए वात सत्य छे तथापि ते सर्वज्ञतानी रीत काईक जूदीज छे जे तमे मानो छो ते ईश्वर सर्वज्ञ नथी. अमे एटलुंज पूछीए छैए के, ज्यारे ईश्वर सर्वज्ञ छे, त्यारे पोताने डुःख देनारा रावणादिकने तेणे शा सारु उत्पन्न कर्या! ज्यारे ए राक्षसोनी उत्पत्ति पोते कीधी त्यारे पोतानेज युद्ध करवु पड्युं ए उपरथीज विचार करो के जो ईश्वर सर्व जाणतो होय, तो एवी भूल केम करे? जो एम कहिये, के राक्षसादिक प्राणीओ ईश्वर थकी अजाणमा उत्पन्न थया जणाय छे, तो ईश्वरनेविषे अज्ञानरूप दूषण प्राप्त थशे अने जो एम कहीशु के जाणी जोईने उत्पन्न कर्या छे, तो ईश्वरना भक्तने पण संग्राम उचित नथी, तो ईश्वरने ते केम संग्राम कार्य उचित थयो? माटे एम कहेवु तदन असमंजस छे

३१ नास्तिक—ईश्वर ज्यारे जगतनो संहार करेछे, त्यारे पोते प्रागवमनां पांदडापर पहोढे छे, अने ज्यारे जगतनी उत्पत्ति करवानो समय होय, त्यारे जागृत थाय छे, ए वात तो साची छे के नी?

आस्तिक—ए वात ते वली जूठी होय! पण हु तमने पूछुं छु के ते प्रागवड अधर आकाशमा रहे छे के, पृथ्वी उपर होय छे? तेमा अधर रहे छे, एम तो तमे कबूल करशो नही, केम के तमे वली एम पण मानो छो के, बधुं जलमय थई जाय छे, ने तेनी उपर मात्र प्रागवड देखाय छे, त्यारे पृथ्वी पण कबूल करवी पडशे जो पाणी, पृथ्वी, तथा प्रागवड ए बधा पदार्थ महा प्रलय थया पछी पण रहे छे, त्यारे संहार ते शानो कर्यो कहेवाय? जो एम होय तो सर्व पदार्थो शाश्वत थया एम जणाय छे फरी ज्यारे ईश्वरे सृष्टि उत्पन्न करी, ते पहेला कह्या प्रमाणे पाच महा भूत तथा, प्रागवड हतो त्यारे नवु ते शु कीधुं ए वगेरे विचार कर्याथी एम जणाय छे के, ए बधा गपाटा छे जेना मनमा जेम आव्युं, तेणे तेम शास्त्रोमा लखी नाख्युं जणाय छे

३२ नास्तिक—ब्रह्मा, विष्णु, अने महेश ए त्रणे सर्वज्ञ ईश्वर छे, एम अमे मानिये छैये

आस्तिक—तमे गमे तेम मानो तेमां अमारुं शु गयु! अमे तो जेम हशे तेम मानशु तमे कह्या ते त्रणे जो सर्वज्ञ होय तो अज्ञानने केम अंगीकार करे! जुवो के, महादेवे पोताना पुत्र गणेशनुं माथुं कापी नाख्युं तेनी खबर पोताने केम न पडी? रावण सीतानुं हरण करी गयो ते वखते राम सर्वज्ञ हता

पशु, पक्षी, तथा वृक्ष प्रमुखने केम पूजतो हतो? अने ब्रह्मा पासेथी राक्षसो वेद केम चोरी लई गया? ए रीते ब्रह्मा, विष्णु अने शिव अज्ञानी ठरे छे. एवा अज्ञानी तेने ईश्वर केम कहिये?

३३ नास्तिक –सर्व योनिओमां मनुष्य योनि उत्तम छे एवुं शास्त्रोमां कह्युं छे ते सत्य छे. अने वली अनुभव सिद्ध पण छे.

आस्तिक –ना कोणे कह्युं छे? मनुष्य योनि तो उत्तमज छे. परतु तमे तेम अंत.करण पूर्वक मानता नथी देखाता. महोडाथीज मात्र कहो छो. केम के तमारे तो एथकी पण बीजी उत्तम योनिओ मानवी जोइये छे. जे योनिने ईश्वरे अंगीकार करी छे, ते योनि तमारे पण सर्वोत्कृष्ट मानवी जोइये मछ, कछ, तथा वराह, प्रमुख योनिओमां ईश्वरे अवतार लीधो छे, ते योनिओ मनुष्य योनिकरतां उत्तम मानवी जोइये जो मनुष्य योनिज उत्तम होय तो ईश्वर पोते बीजी योनि केम धारण करे? माटे तमारा बोलवा प्रमाणे तो मनुष्य योनि करता वराहादिक योनि उत्तम जणाय छे. ईश्वर ज्यारे पशुमां अवतार लिये छे, त्यारे पशुमुखी, पशुवाही, तथा पशुरूपी होय छे. तेने देव मानवो ते अयोग्य छे आहार, अग्नि, आयुध, असवारी, तथा आवाश ए पाच पदार्थ ईश्वरना भक्तने पण त्याग करवा कह्युं छे, तो ईश्वर पोते तेनुं केम ग्रहण करे? माटे वराहादि योनि धारण करनारो ईश्वर मानो, तो मनुष्य योनि करता ते योनि उत्तम कहेवी जोइशे, जो तेम नही कहेशो तो ईश्वरने अपमान लागशे

३४ नास्तिक –शरीरनो त्याग करीने जीव परलोके गया पछीपाछो आ लोकमा केम आवतो नथी? जे छे तेने तो आव्युं जोइये

आस्तिक –आ संसारनो संबंध मटी गया पछी जीवनुं फरी आववु थतु नथी, तेनुं कारण कर्म छे जीवनुं आववुं जवुं कर्माधीन छे ज्यां कर्म लई जाय त्या जीव जाय छे. अने जे जे भव पामे छे ते ते भवना कार्य करे छे आ भवमा पण हमेश एक रीत रेहेती नथी जेम के बालपणानी प्रीति होय ते कोई काले मटी जाय छे घणा काल लक्ष्मीनो सबंध छता कोई काले तूटी जाय छे त्यारे दारिद्र आवे छे कोई कर्मना योगे प्राणी बंदीखानामां पडे, ते वारे तेनो अत्यत स्नेही होय ते पण पासे आवतो नथी. कोई पुरुष एक स्त्रीउपर बीजी करे त्यारे प्रथम स्त्रीनी उपर प्रीति रहेती नथी, अने पूर्वनो संबंध पण तूटी गया जेवु थाय छे. तो पूर्व जन्मना संबंध ते केम याद आवे? ज्ञानावरणी कर्मना यो

गे बीजा भवनु स्मरण पण थतु नथी ए विषयने मलती प्रदेशी राजा अने केशी गुरुनी प्रश्नोत्तररूप चर्चा छे ते कहुं छुं

प्रदेशी राजा — मारो अधर्मी दादो नरकमां गयो छे, ते तमारा मतप्रमाणे त्यांथी आवीने मने अधर्म करतो वारे त्यारे हुं मानुं, के वात साची छे

केशी गुरु — तारी स्त्रीनी साथे कोई पुरुषने कामभोग करतो तने दीठामां आवे, ने ते तारा हाथमा आव्या पछी ते तारी वीनती करे के, मने थोडीक वार रजा आपो, तो हुं मारा कुटंबने कही आवु के, कामभोग करवाथी आवु दुःख थाय छे तो ते वात कबूल करीने तेने तू रजा आपीश ?

राजा — ना तेने एक क्षण पण छुटो मूकु नही.

गुरु — तेमज तारो दादो पण पापकर्मी, गुनेहगार थई, नरकमा गया पछी, परमाधामी तेने केम मूके ? तेथी ते आवी शके नही

राजा — मारी दादी स्वेच्छाचारी थई, जैनधर्मने अंगीकार करीने स्वर्गे गई, ते पाछी केम कहेवा आवी नही, ने आवे तो तेने शुं हरकत छे ?

गुरु — कोई पुरुष स्नानकरी, कुंकुम तथा धूप प्रमुख लई देवनी पूजा करवा जेतो होय, तेने कोई चाण्डाल संडासमा जवाने कहे तो ते त्यां जाय के ? एवी कदी इच्छा पण करे ?

राजा — ना ते एवा खराब स्थले केम जाय ? कदी पण जाय नही

गुरु — तेम तारी दादी स्वर्गलोकमा गई छे, ते सेतखाना तुल्य आ मनुष्य लोकमा केम आवे ! आ लोकमा आववानी इच्छा पण थाय नही

राजा — एक चोरे चोरी करी, तेनो इन्साफ करीने तेने लोढानी कोठीमा घाली दीधो तेनु मुख बंध करीने उपर सारी रीते कलई करावी ,तेमा पवन पण प्रवेश करी शके नही एवु कर्युं पछी ते चोर कोठीमा मरी गयो. तेनो जीव ते कोठीना क्या रस्तेथी नीकली गयो ? तेमा तो कोई छिद्र दीठामा आव्यो नही हवे जीव ते केम मनाय ?

गुरु — मोटी शाळामा एक पुरुषने भेरी सहित घालीने तेने चोतरफ बंध करी लीधी होय, तेमा ते भेरी वगाडवाथी तेनो अवाज बाहार शब्दजाय छे ते छिद्रविना बाहार केम आवे छे ? तेम जीव पण छिद्रविना बाहार निकली जाय छे

राजा — एक चोरना कटका करी एक कुंभमा मे भरी राख्या हता तेनु महोडुं उपरथी सारी रीते बांधी लीधुं हतु, के जेमा पवन पण प्रवेश करी शके नही ते

केटलाक काल पछी उघाडी जोयुं, तो तेमां अनेक कृम पडेला देखायां. ते छिद्र विना क्यांथी आव्यां ?

गुरु – अग्निमां लोहनो गोलो नाख्यो होय तेमां छिद्रविना अग्नि केम प्रवेश करेछे! जे वस्तु अग्निमा नाखीए तेमां छिद्र नहोय, तो पण अग्नि प्रवेश करे छे तेम जीवनो प्रवेश थवामां छिद्रनुं कांई काम नथी

राजाः— एक चोरने में ते जीवतो हतो त्यारे तोल्यो, अने मरी गया पछी पण तोल्यो; त्यारे जीव नीकली गयो छता भारमा कांई फेर पड्यो नही तेनुं शु कारण होवु जोये ?

गुरु – जेम खाली मशक तथा पवनथी भरेली मशक तोली जोतां वजनमा फेरफार थतो नथी तेम जीव वायुरूप होवाथी ते शरीरमांथी नीकली गया पछी कांइ तोलमां फेर पडतो नथी

राजा – बालक अने यौवनना शरीरमां फेर छे पण जीवमा कांई फेर नथी. बन्ने वाणी सरखी बोले छे ने तेनुं शब्द पणे कानमा सरखी रीते स्वर जाय छे, तेम छतां उपयोग सरखो केम थतो नथी ? युवान जे क्रिया करी शके छे ते बालकथी थती नथी तेनुं कारण शुं ते कहो.

गुरु – जेम जूनुं धनुष्य होय तेथी बाणनो उपयोग जुदी रीते थाय छे ने नवु धनुष्य होय तो तेथी बाणनो उपयोग जुदी रीते थाय छे, धनुष्यमा फेर होवाथी बाणनी क्रियामां फेर पडे छे. तेम बालक अने युवानना शरीरमां फेर होवाथी जीवनी क्रिया सरखी थाय नही एटले बल वीर्य प्रमुखमा पण फेर फारथाय छे.

राजा.—युवान अने वृद्ध माणशना शरीरमा जीव सरखो छतां युवाननी पठे वृद्ध केम भार उपाडी शकतो नथी ?

गुरु —जेम कावडवडे भार उपाडनारो पुरुष सारी नवी कावड होय तो वधारे भार उपाडी शके छे, ने जूनी कावड होय तो कांईक थोडो भार उपाडी शके छे. तेम जीव तो तेज छे पण युवान शरीर होय तो वधारे भार उपाडी शके, ने वृद्ध शरीर थाय तो थोडो भार उपाडी शके छे.

राजा.—एक चोरने मारीने तेना अनेक खंड कीधा, पण जीव तथा जीवना रहेवानुं ठेकाणु दीठामा आव्युं नही, माटे जीव कोई छेज नही.

गुरु —जेम काष्टमा अग्नि रह्यो छे, तेम शरीरमा जीव रह्यो छे, ते देखाय केम ? जो काष्टमां अग्नि देखाय तो शरीरमां जीव देखाय काठीआरो हमेश लाकडा

कापे छे पण तेने अग्नि कोई वखते पण दीठामां आवती नथी. ने ते अग्निनुं र हेवानुं ठेकाणुं पण दीठामा आवतुं नथी तेम जाणी लेवुं

राजा –मने प्रत्यक्ष जीव देखाडी आपो के जेथी हु जीवने जाणुं

गुरु –तमे बादर वायु कायना जीवने जोई शकशो के? तेने पण जोई शक शो नही तो जे अरूपी जीव छे तेने केम जोई शकशो?

राजा.–हाथीमा अने कीडीमा जीव केम सरखो होय छे?

गुरु –हाथीनुं तथा कीडीनुं शरीर महोटुं नानुं छे, पण जीवमां अधिक न्यून ता नथी जीव बन्नेमां सरखो छे

राजा – लोकमां जीव अने जड एक क्षेत्र अवगाही निरतरपणे निराबाध केम रह्या छे?

गुरु – जेम दूधनी नरेली कडाईमा साकर, एलची, अने केशर नाखी होय ते केम समाई जाय छे? दूधसुधां चारे वस्तु एक क्षेत्र अवगाही निरतरपणे केम रहे छे? एकज ठेकाणे चारे वस्तु अभिन्न नावे रहेली छे 'एना वर्ण, गंध, रस, फरश निरतर निराबाधपणे छे. तेम जीव अने जड जगतमा निरतर एक क्षेत्र अवगाही निराबाधपणे रह्या छे

३५ नास्तिक – सर्व लोकमा जीव नरपूर छे त्यारे देखाता केम नथी?

आस्तिक – जेम सूक्ष्म जीव सर्वत्र पूर्ण छे ते ज्यारे दिवशे तडको पडे त्यारे घरमाना कोई छिद्र द्वाराये थोडोएक तडको घरमां आवे छे. ते तडका तरफ जोतां केटला एक परमाणु जेवा दीठामा आवे छे, ते बधा सूक्ष्म जीवो छे ते छायमा मा तडको आवे त्यारे उडता देखाय छे, बीजी रीते देखाता नथी तेम जीव अ ने जड सर्व लोकमा नरपूर छता छद्मस्थने देखाय नही, किंतु केवल ज्ञानरूप आ तपना योगे देखायछे अर्थात् केवल ज्ञानीज जाणी शकेछे

३६ नास्तिक – चंद्र, सूर्य, छाया, आतप, माता, पिता, स्वर्ग, नरक, जीव, जड, घट, पट, स्तंभ, तथा कुंभ प्रमुख सर्व भ्रममात्र छे, वस्तुरूप कंईजनथी

आस्तिक – जेम अंधकारमा आकाशनेविषे कोई पुरुष चाल्यो जाय, ते निरा बाधपणे जई शके छे, पण वचमा जो भित आवीजाय तो आगल चलातु नथी ने ते कार्यमा अपराबाधक थायछे. ए प्रत्यक्ष भ्रम के सत्यछे? तथा कोई कोईने मारे, कूटे, दानदिये, ए वस्तु गत्ये सत्यछे, असत्य अने भ्रमजाल तो स्वप्न अने संकल्पने कहिये

३४ नास्तिक.—सर्व जगतमा एकज ईश्वर छे. ईश्वर विना बीजुं कांई नथी, एम जाणवुं जोये.

आस्तिक — जो सर्व जगतमां एक ईश्वर होय, तो दाननो देनार पण ईश्वर, अने लेनार पण ईश्वर कहिये. लेनार अने देनारमां कांई भेद थयो नही ईश्वरे पोते पोतानी पासेथी दान लिधुं त्यारे दान दीधानुं पुण्य कोने थयुं ? एथी दान तथा पुण्य व्यर्थ गयां. वली मारनार पण ईश्वर ने मरनार पण ईश्वर कहेवो जोये, तो ईश्वरे ईश्वरने मार्यो तेनुं पाप कोने लाग्युं ? धणी पण ईश्वर ने चोर पण ईश्वर, तो ईश्वरनो माल ईश्वरे चोर्यो कहेवाय, त्यारे चोरीनी तपास शासारु करवी जोयेछे ? पुण्ये करी स्वर्गमां गयो ते पण ईश्वर, तथा पापे करी नरकमां गयो ते पण ईश्वर, त्यारे स्वर्गमां पुण्यवान जाय अने नरकमां पापी जाय, एम कहेवुं व्यर्थ छे. ए उपरथी तमारुं बोलवु असंभवित छे जगतमां एकज ईश्वर छे एम जे कहेवुं ते असत्य छे घटघटप्रत्ये जीव जुदा जुदा छे, अने तेओनी करणी पण जुदी जुदी जाणवी.

३५ नास्तिक.—घट पटादिक सर्व पदार्थोमां ईश्वर एकज छे. एम जाणवुं जोये.

आस्तिक — जो सर्वमां एक ईश्वर होय तो जात, कुल, राजा, तथा चडालनी भिन्नता कही न जोये, कोई श्रेष्ट तथा नष्ट कहेवाय नही एक पुण्य करे तेनुं फल सर्वने थवुं जोये, तेमज कोईएक पाप करे तेनुं फल पण सर्वने थवु जोये एके भोजन कर्याथी सर्वनी तृप्ति थवी जोये, एक नरकगामी थयाथी सगला नरके जवाजोये, एक स्वर्गगामी थयाथी सर्व स्वर्गमां जवा जोये, एकनो भोग सर्वने भोगव्यो जोये, कर्म जुदा जुदां भोगववां न जोये; तेम तो देखातु नथी, जे करे ते भोगवे एवुं स्पष्ट देखाय छे त्यारे सर्वमा एक ईश्वर केम कहेवाय ? माटे एम कहेवुं ते समीचीन नथी; बधा जीव जुदा जुदा छे, एम कहेवुं योग्य छे.

३६ नास्तिक.—स्वर्ग, नरक, पुण्य, पाप, चन्द्र, सूर्य, नदी, समुद्र, द्वीप, नर, नारी, नगर, ग्राम, तथा माता, पिता इत्यादिक चोराशी लक्ष जीवयोनि प्रमुख सर्व असत्य छे; एओमां सत्य पदार्थ कोई नथी.

आस्तिक —सर्व पदार्थ सत्य छे. जलनी बुंद पण असत्य कहेवाय नही, तो स्वर्गादिक पदार्थो केम असत्य कहेवाय ? जे वस्तु थाय त्यारे थई कहेवायछे,

अने वणशे त्यारे नाश थई कहेवायछे. ए प्रत्यक्ष प्रमाणे सिद्ध छे, ते मूढ पण जाणे छे तो हे नास्तिक तूं केम जाणतो नथी!

४० नास्तिक —जगत ईश्वर रचित छे

आस्तिक —जो जगत ईश्वरकृत होय, तो जेटला ईश्वरना नक्त छे, ते बधा सुखी होवा जोये, तेम तो दीठामा आवतु नथी. हिंदु तथा मुसलमान बधा सुखी तथा दुःखी देखायछे, तेने पण पूछिये तेवारे एम कहे जे सहु पोतपोतानी करणी प्रमाणे पामेछे, एम कहीछूटे, त्यारे तमारा कहेवा प्रमाणे तो सुख तथा दुःखनो देनार कर्मविना कोई बीजो होवो जोये तेनो तो विचार थई शके नहीं, माटे हे मूर्खबुद्धि आ जगतनो कोई करता नथी, ए तो स्वनाव सिद्ध छे अने जीव जेवी करणी करे, ते प्रमाणे सुख तथा दुःख नोगवेछे

४१ नास्तिक —सुख दुःखनो देनारो ईश्वर छे, एम मानवु जोये.

आस्तिक —सुखदुःखनो कर्त्ता आपणो आत्मा छे, तेज सुखदुःखनो नोक्ता जाणवो माटे सुखदुःखनो देनारो बीजो कोई समजवो नहीं

४२ नास्तिक —(प्रत्यक्ष प्रमाण वादी) पुण्यथकी सारुं थायछे, ने पाप थकी नरछुं थायछे, ते अमने प्रत्यक्ष दृष्टिए देखाडो तो मानीए

आस्तिक —पुण्यपाप तो सूक्ष्म पुद्गल समूहरूपछे जेम शब्दना पुद्गल कानप्रत्ये आवेत्यारे शब्दनुंज्ञान थायछे, माटे ते सत्य छे पण आवता देखाता नथी तेम सुगंध, दुर्गंध प्रमुखना पुद्गल इंद्रियो प्रत्ये आवता देखाता नथी, पण तेनु ज्ञान थायछे, तेथी अनुमान प्रमाण वडे जणाय छे के ए सत्य छे तथा शरीरमा वायु अने गरमी प्रमुख जे थायछे, ते रोगना उदयथी जाणवामा आवेछे, पण प्रत्यक्ष दीठामा आवतांनथी तेम पुण्य तथा पाप पण फल नोगव्याथकी जाणवामा आवेछे तेओना पुद्गल छद्मस्थ दृष्टिए आवे नहीं

४३ नास्तिक —बाल्यावस्था तथा तरुणावस्थामा जीव सरखो छे तो ते बन्ने अवस्थामा विज्ञान, विद्या, नाषा, तथा पराक्रम सरखा केम नथी देखाता ?

आस्तिक —जेम वृक्षना बीमा अनेक वृक्ष, फल, फूल प्रमुख रहेला छे, परंतु जेवा साधनो मलेछे, तेवी उन्नवताने पामेछे. जेम के, क्षेत्रनी नूमि सारी होय ने पाणीनी पण बराबर साह्यता होय, तो कृषि फलरूप धान्यनी उत्पत्ति सारी थायछे तेम सारा साधनोवडे जेम जेम शरीरनी वृद्धि थती जाय, तेम तेम नाषा पण प्रौढताने पामती जायछे, पण अवस्थांतर थयाथी बुद्धि बाहेरथी आवती नथी किंतु

शरीरनी पठे बुद्धिनुं अवस्थांतर थायछे सर्व आत्मगुण आत्माने विषे सदा न्याज छे. पण योग्य समयमां उद्भव मात्र थायछे काई बाहेरथी नवा आवता नथी जेम मयूरना शरीरमा अनेक रंग रहेलाछे, पण समय पामे प्रगट थायछे. तेम बाल्यावस्थामा पण सर्व गुण सत्नावे छे, परतु जेवी रीते पुरुष बलवान छ तां धनुष्यविना बाण चलाववामा समर्थ थाय नही, गलोला, गोफण, तथा खड्ग प्रमुख बधा शस्त्र तेओना उपकरणथी उपयोगी थायछे, ते विना थाय नही, तेम जीव पण शरीरोपकरण अवस्थारूप सामग्री थकी सर्व कार्य साधी शकेछे. चेतनमा कांई फेर नथी, चेतन सदासर्वदा सरखुंज छे.

४४ नास्तिकः—जगत सर्व ईश्वरकृत होवाथी सर्व पदार्थमां तथा सर्व जीवमा ईश्वरनी कला छे

आस्तिकः—जो एम होय तो घट, पट, स्तंन, कुंन, शास्त्र तथा नाषा इत्यादिक अनेक वस्तुनुं ज्ञान कोई एक जीवने छे, ने कोईएक जीवने नथी जे जीवने ज्ञेय पदार्थनुं ज्ञान छे, तेने तो हे मूढमति, तुं ईश्वरनो अश मानेछे, त्यारे श्वान, शूकर, रासन, माजर, व्याघ्र, प्रमुख श्वापद चोंपद जीवोने घटादिक पदार्थोनुं ज्ञान नथी तेथी तेओमां शुं ईश्वरनो अंश नथी? तमे तो जीवमात्रने ईश्वरनो अंश मानो छो तेने बाध आवशे जे ईश्वरनो अंश होय ते अज्ञानी केम होय? एथी जगतनो कर्त्ता ईश्वर अविवेकी ठरेछे अने सर्वमा ईश्वरनी कला छे, ए बोलवु पण असत्य छे, केमके जो एम होय तो सर्व सरखा ज्ञानी होवा जोये तेम तो देखातु नथी, माटे ए वात पण मिथ्या छे. तेम सर्व जीव ईश्वरना अशरूप छे, एम जे तमे मानो छो, ते पण अज्ञानी होवाने लीधे मानोछो माटे संनवे नही

४५ नास्तिक.— ईश्वर नक्तवत्सल छे, अने स्वेछाथी जन्मधारण करेछे

आस्तिक—जो एम होय, तो नक्तोने शरीर मूकतां वेदना केम थाय छे? अने स्वजनादिकना कोलाहल शब्दो सानलीने नक्तने वत्सलनावकारी आयुष्यवृद्धि केम नथी करतो? मरणादिक क्रिया तो सर्व ईश्वरना स्वाधीन छे. ए आदि विचार करतां तमारुं बोलवुं बधुं पोकल छे जीव तो कर्मने आधीन छे जेम कफ लीधेलो प्राणी तेनी लहेरने स्वाधीन थई जायछे, तेम जीवविषे पण जाणी लेवु जन्ममरण पण कर्माधीन छे, तेने जे धारण करे ते ईश्वर शानो! ते तो संसारीज कहेवाय. ईश्वर तो कर्मथी मुक्त होयछे, माटे तमारुं बोलवु बधुं व्यर्थछे.

४६ नास्तिक—आ पंच महाभूतोथी उत्पन्न थएलुं जे विश्व, ते महा प्रलयना

समये पोताना कारण पंच महाभूतोमां लीन थशे, ने पच महाभूतो ईश्वरमां लीन थशे

आस्तिक.–जो एम होय तो ईश्वर जड मिश्रित थाय अने ते समल तथा निर्मल ए बे अवस्थावालो कहेवाशे. त्यारे केवल ज्योतिस्वरूपपणुं क्यां गयुं? जे पच महाभूतोथकी जगतनी उत्पत्ति थई कहोछो ते तो सदा शाश्वत छे ते ओमां पृथ्वी, आप, तेज तथा वायु, ए चारे भूतो पोतपोतानी क्रिया करेछे, केम के, वनस्पति अने जगम त्रसनी उत्पत्ति करेछे ते क्रियाविना थाय नही एवी रीते तो जीवनी छ खान शाश्वत सदा काल छे, त्यारे प्रलय ते शानो थयो? जो एम कहेशो, के पंच महाभूतो जगत विनिर्मित क्रिया करता नथी, त्यारे तो ते भूतद्रव्यरूप कथन मात्रज ठरशे अने हरेक वस्तु पोतपोताना गुणविना रहे नही एवो नियम छे वली जो कहेशो के भूत तो अनत कालना छे त्यारे तो संसार पण अनत कालनो ठरशे तेनी उत्पत्ति तथा प्रलय केम कहेवाय? ए तो जेम छे तेम छे वली ईश्वर मनसा वाचा कर्मणा करि रहित छे, अने एक थी अनेक थाउं एवी मननी इच्छा थई त्यारे जगतनी उत्पत्ति करी ए बे वाक्यो नो परस्पर विरोध छे, केम के, प्रथम वाक्यप्रमाणे ईश्वर इच्छारहित ठरे छे, ने बीजा वाक्यमा इच्छासहित कहो छो, एवो पूर्वापर वचनविरोध होवाथी तमारुं बोलवु सर्वे असमीचीन छे.

४७ नास्तिक – सर्वे वस्तुनो ईश्वर अधिष्ठान छे ईश्वरनी इच्छाथी कृत तथा अकृत सर्वे थायछे

आस्तिक – जो एमछे तो घट ते पट केम थतो नथी? पण तेम थाय नही, केमके, घटनु कारण मृत्तिकानु पिंम छे, तेमाथी घटज थायछे पण पटादि कार्य नथी थता. तेमज पटनुं कारण ततु छे, तेथकी पटज थायछे, पण घटादि क बीजा कार्यनी उत्पत्ति थायनही जो एम थतु न होय तो कारणथी कार्य थायछे, ए प्रवृत्ति मिथ्या थाय. माटे ईश्वरना अधिष्ठितपणातले ईश्वरनी इच्छाथी कृत तथा अकृत सर्वे थायछे ए तमारुं कहेवुं सर्वे व्यर्थ छे.

४८ नास्तिक – जीवने भवांतर थाय छे खरुं, पण वेदनो भेद थतो नथी पुरुप वेद ते स्त्री वेद न थाय, स्त्रीवेद ते पुरुपवेद न थाय, तेम स्त्री तथा पुरुप ते नपुसक वेद न थाय; अने नपुसकवेद ते पुरुप तथा स्त्री वेद न थाय. एम जाणवु जोये

आस्तिक –पुद्गलना परिणामनो नियम नथी एना पुन पुन रूपांतर थया क

रेछे. मात्र अवस्तुपणुं पामता नथी, वस्तुपणे गमे ते रूपे थई जायछे जेम नेंस ना शिंगमांथी केल थायछे, काशथकी सेरडी थायछे, माखीना डिंगारथकी कद लीनी नाजी थायछे, एवी रीते कर्मना परिणामे गत्यंतर थायछे आगामिक नव नेविषे कायवेद पलटाईने ते नवा नवरूपे परिणमेछे जेम सोनीना योगे सुव र्ण नाना प्रकारना आकाररूपे परिणामने पामेछे तेम जीव कर्मना योगे नाना विध गतिओ पामेछे. ते तो रह्यु, आ नवमां पण एकसरखी स्थिति रहेती न थी. जेम के, राजा ते रंक थई जायछे, ने, रक ते राजा बनी जायछे, सुखी ते दुः खी, तथा दुःखी ते सुखवान थईजायछे इत्यादिक आ नवमां पण पर्याय पलटाई जायछे, तो नवांतरमा केम एकरूपे रहे ? कर्मना बंध सादि छे, माटे जेवो कर्म नो उदय तेवा फलनी प्राप्ति थायछे, एविषे कोई नियम थई शके नही. गमे ते वेद बदली ने गमे ते वेद कर्मना योगे थायछे एम जाणवु.

४९ नास्तिक —एम कह्यु छे के ब्रह्माना मुखमांथी ब्राह्मणो उत्पन्न थया, नुज थकी क्षत्रिय थया, तथा जंघा थकी वैश्य थया, माटे ए त्रणे वर्ण उत्तम छे, अ ने पादथकी शूद्र उत्पन्न थया माटे अधम छे, एम जाणवु

आस्तिक.— ए वात संनवित नथी. जुवो के, बबराना वृक्षमां पेड, डाल, तथा पत्रनेविषे सरखां फल लागेछे. ते सर्व फलोनुं रूप सरखुं होयछे, तथा ते ओमां रस पण सरखोज होयछे. तेओमां कोई प्रकारे उत्तम तथा अधमता क हेवाय नही तेमज ब्रह्माना शरीर थकी उत्पन्न थया जे चार वर्ण, ते सर्व चेतन रूप होवाथी सर्व जीव सरखा जाणवा. उत्तम मध्यम वगैरे सर्व लौकिक कार्य थकी कहेवायछे पण चेतनपणे तो सर्व सरखा छे. एना उपर एक दृष्टांत कहुं छुं. चारे वर्णना मनुष्य एक तलावने कांठे बेशीने पाणी पिये छे, तेथी कोई वट लतो नथी पण ते तलावमाथी पाणी नरीने पोतपोताना वासणोमां लीधा पछी हलका वर्णना वासणनुं पाणी ऊंचा वरणवालो माणस पीए तो वटले छे. फरी चारे वर्णना नरेला पाणीना वासणो मानुं पाणी ते तलावमा नाखीने पी तां कोई वटलतु नथी तेनुं कारण शुं ? माटे पाणीमां वटलवापणुं नथी ने वा सण तो सर्वना सरखा छे. माटे वटलवुं ए मननी मानीता छे, अने एवी लोक म र्यादा छे ज्या सुधी मननो मिथ्यानाव छे, त्यां सुधी निन्न पणुं छे एम जाणवु

५० नास्तिक.— समदृष्टीने विषे मिथ्यानाव होतो नथी, तेम छतां ते निन्न नाव केम राखेछे ?

समये पोताना कारण पंच महाभूतोमां लीन थशे, ने पंच महाभूतो ईश्वरमा लीन थशे

आस्तिक.–जो एम होय तो ईश्वर जड मिश्रित थाय अने ते समल तथा निर्मल ए बे अवस्थावालो कहेवाशे. त्यारे केवल ज्योतिस्वरुपपणुं क्या गयुं ? जे पच महाभूतोथकी जगतनी उत्पत्ति थई कहोछो ते तो सदा शाश्वत छे. ते ओमां पृथ्वी, आप, तेज तथा वायु, ए चारे भूतो पोतपोतानी क्रिया करेछे, केम के, वनस्पति अने जगम त्रसनी उत्पत्ति करेछे ते क्रियाविना थाय नही एवी रीते तो जीवनी छ खान शाश्वत सदा काल छे, त्यारे प्रलय ते शानो थयो ? जो एम कहेशो, के पंच महाभूतो जगत विनिर्मित क्रिया करता नथी, त्यारे तो ते भूतद्रव्यरूप कथन मात्रज ठरशे अने हरेक वस्तु पोतपोताना गुणविना रहे नही एवो नियम छे वली जो कहेशो के भूत तो अनंत कालना छे त्यारे तो संसार पण अनत कालनो ठरशे तेनी उत्पत्ति तथा प्रलय केम कहेवाय ? ए तो जेम छे तेम छे वली ईश्वर मनसा वाचा कर्मणा करि रहित छे, अने एक थी अनेक थाउं एवी मननी इछा थई त्यारे जगतनी उत्पत्ति करी ए बे वाक्यो नो परस्पर विरोध छे, केम के, प्रथम वाक्यप्रमाणे ईश्वर इछारहित ठरे छे, ने बीजा वाक्यमा इछासहित कहो छो, एवो पूर्वापर वचनविरोध होवाथी तमारुं बोलवु सर्व असमीचीन छे.

४३ नास्तिक – सर्व वस्तुनो ईश्वर अधिष्ठान छे ईश्वरनी इछाथी कृत तथा अकृत सर्व थायछे

आस्तिक – जो एमछे तो घट ते पट केम थतो नथी ? पण तेम थाय नही, केमके, घटनुं कारण मृत्तिकानु पिंम छे, तेमाथी घटज थायछे पण पटादि कार्य नथी थता तेमज पटनु कारण ततु छे, तेथकी पटज थायछे, पण घटादिक बीजा कार्यनी उत्पत्ति थायनही जो एम थतु न होय तो कारणथी कार्य थायछे, ए प्रवृत्ति मिथ्या थाय. माटे ईश्वरना अधिष्ठितपणातले ईश्वरनी इछाथी कृत तथा अकृत सर्व थायछे ए तमारुं कहेवु सर्व व्यर्थ छे.

४४ नास्तिक – जीवने भवातर थाय छे खरुं, पण वेदनो छेद थतो नथी पुरुष वेद ते स्त्री वेद न थाय, स्त्रीवेद ते पुरुषवेद न थाय, तेम स्त्री तथा पुरुष ते नपुसक वेद न थाय, अने नपुसकवेद ते पुरुष तथा स्त्री वेद न थाय. एम जाणवु जोये

आस्तिक –पुद्गलना परिणामनो नियम नथी. एना पुन पुन रुपातर थया क

रेछे. मात्र अवस्तुपणुं पामता नथी, वस्तुपणे गमे ते रूपे थई जायछे जेम नेंस ना शिंगमांथी केल थायछे; काशथकी सेरडी थायछे, मारवीना हिंगारथकी कद लीनी नाजी थायछे, एवी रीते कर्मना परिणामे गत्यंतर थायछे आगामिक नव नेविषे कायवेद पलटाईने ते नवा नवरूपे परिणमेछे. जेम सोनीना योगे सुव र्ण नाना प्रकारना आकाररूपे परिणामने पामेछे तेम जीव कर्मना योगे नाना विध गतिओ पामेछे ते तो रह्यु, आ नवमां पण एकसरखी स्थिति रहेती न थी. जेम के, राजा ते रक थई जायछे, ने, रक ते राजा बनी जायछे, सुखी ते छ. खी, तथा छ खी ते सुखवान थई जायछे इत्यादिक आ नवमां पण पर्याय पलटाई जायछे, तो नवांतरमां केम एकरूपे रहे ? कर्मना वंध सादि छे, माटे जेवो कर्म नो उदय तेवा फलनी प्राप्ति थायछे, एविषे कोई नियम थई शके नही. गमे ते वेद बदली ने गमे ते वेद कर्मना योगे थायछे एम जाणवु.

४ए नास्तिक:—एम कह्यु छे के ब्रह्माना मुखमांथी ब्राह्मणो उत्पन्न थया, नुज थकी क्षत्रिय थया, तथा जघा थकी वैश्य थया, माटे ए त्रणे वर्ण उत्तम छे, अ ने पादथकी शूद्र उत्पन्न थया माटे अधम छे, एम जाणवु.

आस्तिक – ए वात संनवित नथी जुवो के, उबराना वृक्षमां पेड, डाल, तथा पत्रनेविषे सरखां फल लागेछे. ते सर्व फलोनुं रूप सरखु होयछे, तथा ते ओमां रस पण सरखोज होयछे. तेओमां कोई प्रकारे उत्तम तथा अधमता क हेवाय नही तेमज ब्रह्माना शरीर थकी उत्पन्न थया जे चार वर्ण, ते सर्व चेतन रूप होवाथी सर्व जीव सरखा जाणवा उत्तम मध्यम वगेरे सर्व लौकिक कार्य थकी कहेवायछे. पण चेतनपणे तो सर्व सरखा छे. एना उपर एक दृष्टांत कहुं छुं चारे वर्णना मनुष्य एक तलावने कांठे बेशीने पाणी पिये छे, तेथी कोई वट लतो नथी पण ते तलावमांथी पाणी नरीने पोतपोताना वासणोमां लीधा पछी हलका वर्णना वासणनुं पाणी उंचा वरणवालो माणस पीए तो वटले छे. फरी चारे वर्णना नरेला पाणीना वासणो मानुं पाणी ते तलावमां नाखीने पी ता कोई वटलतु नथी तेनुं कारण शुं ? माटे पाणीमा वटलवापणुं नथी ने वा सण तो सर्वनां सरखा छे माटे वटलवुं ए मननी मानीता छे, अने एवी लोक म र्यादा छे. ज्या सुधी मननो मिथ्यानाव छे, त्यां सुधी निन्न पणुं छे एम जाणवुं.

५० नास्तिक – समदृष्टीने विषे मिथ्यानाव होतो नथी, तेम छतां ते निन्न नाव केम राखेछे ?

आस्तिक.—लोक मर्यादा लोपवी नही ए नीति छे तेनो लोप करवो नही. जे कार्यनी जगत निंदा करे ते कार्य करवो नही एवु श्रेष्टोनुं वचन छे तेनो पण लोप करवो नही तेथीज समदृष्टि पण तेवु आचरण करे छे पण मनथकी सम दृष्टिने काइ नथी

५१ नास्तिक.— सर्व कार्यनो कर्ता ईश्वर छे, एम मानवु जोये के नही ?

आस्तिक — एम मानवु नही जोये ए वचन प्रलाप छे ईश्वरविषे कर्तृत्व होयज नही घट, पट, कृषि, सथाम, खान, पान, दान, मान, स्नान, तप क्रिया, विनय तथा व्यावच इत्यादिक सर्व पदार्थोना कारण काल, स्वभाव, नियत, पूर्वकृत कर्म, तथा पराक्रम ए पाच छे जेम के, ततुना पुजमांथी पटनी उत्पत्ति थवानो जे समय ते काल समजवो, ततुना पुजने पटनी उत्पत्ति करवानीजे योग्यता ते स्वभाव जाणवो, ततुना पुजमांथी पटनी उत्पत्तिनु जे निमित्त थवु ते पूर्व कर्म समजवु, अने ततुना पुजमाथी पटनी उत्पत्ति करवानो जे उद्यम करवो ते पराक्रम जाणवो, ए पाचमाथी एक ओछुं होय तो वस्तुनी उत्पत्ति थई शके नही ए पाचना समुदायथी घटपटादिक सर्व कार्योनी उत्पत्ति थायछे, एशुद्ध मत जाणवु

५२ नास्तिक — जो कुछ होता है, सो अल्लाहुतालाके हुकमसे होता है, और किसीका किया कुछ होता नही, यही बात रास्त है

आस्तिक — जो ऐसे होवै, तो अल्लाहुतालाने पैदा किये हुये, इमामे हसन औ हुसन, काफिरोंके हातसे कैसे मारे गये ? वे तो खुदाके प्यारे बंदे थे, तिनकूं काफिरोने मारे, ये बडी अजायबकी बात है तिनकूं बचानेके वास्ते खुदा ना कौवत था ? इमाम किसीके गुनेहगारभी नही थे, वे क्यूं मारे गये ? इसवास्ते जो होता है, सो तकदीरसे होता है जो जैसा करता है, सो तैसा पावता है, तामे अल्लाहुतालाका कुछ वास्ता नही है यही बात रास्त है.

५३ नास्तिक — अल्लाहुतालाने इमामोका दिल देखनेके वास्ते आजाव दियाथा

आस्तिक — आजाव दिये शिवाय तिनोके दिलकी बात खुदा नही जाणता था ! जो कहोगे की नही जाणताथा, तो खुदामे खुदापना क्या रहा ! खुदा तो सब जानता है, ऐसे तुमारे कुरानेशरीफमे कहा है एसै होके भी इमामोकू मारनेकी दयानत जो काफरोने करीथी सो खुदा जानके भी कैसे चुप रहा ! इसवास्ते ये बात भी गलत है

५४ नास्तिकः– आदमी मरगये बाद जीकूं फिरस्त लेजाते है ये बात तो सच है की नही ?

आस्तिक – इस बातकू कौन झूठ कहता है ? लेकीन समजमें कुछ फरक है. तुम कहेते हो की कीयामततक जीकूं एक ठिकानेमें रखते है, पीछे खुदाके पाश ले जाके इन्साफ करवाते है, ऐसे नही होवै है. लेकीन उसीवख्त जी अपनी त गदीरके लिये अछा या बुरा फल पावता है. तुमभी सुख, दुःख, भेहेस्त औ दोज क तो मानते हो ! सो जैसी जीने करनी करी होवै तेसी गति उसकु मलती है.

५५ नास्तिक – अल्लाहुतालाने ऐसे फरमाया है की जो किसीकूं इजा देता है सो मारने लायक है.

आस्तिक.– कबू मावाप छोकरेकूं इजा देते है, औ कबु छोकरा मावापकूं इजा देता है, कबू पीर मुर्षिदकूं इजा देता है, औ कबू मुर्षिद पीरकूं इजा देता है; कबू नोकर खाविदकूं इजा देता है, कबू खाविद नोकरकूं इजा देताहै, ऐसे खुदाकी खलकतमें जहांतक जी है, वे सब इजा देनेवाले होनेसे जो सब मारने लायक हो वै तो खैर महिर कैसे रहेगी ! औ रहम करने लायक कोई भी नही रहेगा और इमामोकूं जब काफरोने इजा दी, तब तिनोकूं कायके वास्ते इमामोने मारे नही इस वास्ते जो होवै है सो तगदिरसे होवे एसे जानना चाहिये.

५६ नास्तिक.–मांसाआहारी पापिष्ट कहे छे. आ दुनीआमां जलचर, स्थलचर, तथा खेचर प्रमुख जे नाना प्रकारना जीव छे, तेओने बेशक मारी नाखवा, अने तेओनुं मांस भक्षण करवुं. एम अमने साहेबे फरमाव्युं छे, ते प्रमाणे करवामां शुं गुनाह तथा पाप छे ?

आस्तिक.–तमारा कह्या प्रमाणे जीवने मारवुं ए खुदानो हुकम छे, ते कोई ए फेरववो जोये नही. जो फेरवीए तो गुनेहगार ठरीए, एम सिद्ध थायछे, त्यारे कोई वाघ अथवा सिंह प्रमुख मनुष्यनो आहार करनार जीव, तमने मारवा आवेछे, तेथी डरीने तमे केम नाशी जाओछो ? अने ते प्राणीने नाना प्रकारना ह थीआर वगैरेनी सहायता वडे केम मारवा तैयार थाओछो ? अने जो ते जीव तमारा दावमा आवी जाए तो केम मारीनाखो छो ? जेम खुदाए तमने जीव मा रवाने फरमाव्युं छे तेम तेओने पण मनुष्य मारवाने फरमाव्युं छे ! ते प्रमाणे तेओ पोतानुं कृत्य करेछे; तेओने मारवु लायक नथी. जो तेओने मारवानुं त मने लायक दीशतु होय, तो जे जीवोने तमे मारोछो, तेओए अथवा तेओने वा

स्ते कोई बीजा प्राणीए तमने मारवु पण नालायक नथी; लायकज छे माटे जेम वाघ वगेरे प्राणीओ जीव घातक होवाथी मारवा योग्य छे. तेम तमे पण जी व घातक होवाथी मारवा योग्य छो एम तमारे कबूल करवु जोइशे जो कबूल नही करशो, तो खुदाना गुनेहगार ठरशो माटे हे महामदीयन मुसलमीनो वगेरे, जीव मारवामा खुदानोहुकम होयज नही जो एम होय तो खुदा रहम विनानो ठ रे खुदा तो रहमदिल छे, एवु तमारा रसूलिल्लाए कुरानेशरीफमां फरमाव्युं छे तेने बाध आवशे. ए उपरथी एवु जणाय छे के, कोई एक पुरुषने कोई कारणने ली धे अचानक मासनो आहार मली गयाथी, तेने तेनो स्वाद लागो तेथी, व्यसन पडी गयुं, ने पछी लोकापवादलारु खुदाए फरमाव्युं छे, एम कहीने बचारा खुदाने हिंसक ठेरव्यो जणाय छे. तेमा केटलो गुनाह छे ! एनो विचारतो करो ! ते प्राणीओने मार वाने खुदा फरमावे त्यारे बीजी अन्नादिक वस्तुओ पेदा शावास्ते करे ? ए उपरथी साफ जणायछे के, अन्नादिक वस्तु खावायोग्य छे, पण मास खावायोग्य नथी ते म छतां जे जीनना स्वादने अर्थे खायछे ते राक्षसतुल्य जाणवा

वली मुसलमीन प्रमुखने बीजु युक्तिथी समजावे छे के, तमारा किताबोमां आ बने पाक वस्तु कहीछे, अने पिशावने नापाक वस्तु कहीछे, पाक वस्तुथी जे पे दाश थायछे, ते पाक कहेवायछे, अने नापाक वस्तुथी जे पेदाश थायछे ते नापाक कहेवायछे जेम के, अन्न वगेरे पदार्थों जे पाणी थी पेदा थायछे, ते पाक छे अने पिशावथी जे कीटकादिक पेदा थायछे, ते नापाक छे एवु तमे पण मानो छो परतु तेम चालता नथी. केमके मांसाहार करो छो जुओके प्राणिमात्र पिशावनी पेदाश छे ते पिशाव ज्यारे नापाक त्यारे तेथी पेदा थयेला प्राणीओ केम पाक होय ! ते ओना मासने तमे पाक मानो छो, ए केटली बेवकूफी छे वारु ! जो मासने पाक मा नशो तो पिशावने नापाक कहेवाशे नही, ने जो पिशावने नापाक मानशो तो मांस ने पाक मानशो नही जेवु कारण तेवो कार्य एवो दुनीयामा नियम छे ज्यारे पि शाव जेवो मास छे, त्यारे तेनो आहार करवाथी दोजकमा गयाविना केम रहेशो! एनो पाको विचार करीने मास भक्षण मूकी द्यो, अने पाक पाणीनी पेदाश अन्न फल, तथा फूल वगेरे अनेक स्वादिष्ट पदार्थोनो आहार करोने ! परतु तमे मानशो नही केमके एतो जन्मनी आदत पडीगई छे कह्यु छे के, तहाड जाए रुए ने आद त जाय मुए, तेम तमारी आदत हमणा जनार नथी, पण याद राखजो के किया मतने दहाडे जबाब देवो पडशे त्यारे आखो, फाटीने पडोला थशे हो !

५७ नास्तिक.— याज्ञिक नास्तिको प्रश्न करे छे के, यज्ञनेविषे होम करवासारु जीवने मारवुं योग्य छे. केमके ए कृत्य शास्त्रविहित छे; माटे एमां पाप नथी, पण पुण्य छे. यज्ञनेअर्थे जे जीव मरे छे. ते स्वर्गमां जायछे, माटे ते केम न करवु ?

आस्तिक.— यज्ञादिकने अर्थे जे जीवनी हिंसा करवी ते योग्य नथी. केमके, हिंसानो परिणाम ते पुण्य होयज नही, किंतु पाप होयछे एवो नियम छे जे शास्त्रोमां पशु होमवानुं कह्यु छे, ते शास्त्र नही पण कुशास्त्र छे अने तेनी रचना करनारा मनुष्य नही पण मनुष्यरूपे राक्षस छे एम निश्चय जाणवुं. जे पापने पुण्य माने तेना करतां बीजो पापी कोण! यज्ञमा होमायलुं जीव जो स्वर्गमां जतुं होय तो यज्ञ करनारा तथा करावनारा पोते होमाईने केम स्वर्गमां जता नथी! पोते एम करता नथी तेथीज जणाय छे के, ए कल्पित वचन छे; यज्ञमां पश्वादिकनो होम शिव, ब्रह्मा, अने विष्णु आदिक देवताओने अर्थे करेछे अने तेनो बली भोग ते देवताओ लियेछे. ए वात जो साची होय, तो ते देवताओ मांसाहारी ठरशे देवताओने जो मांस भक्षण करवानी आदत होय, तो तेओ मनुष्यना हाथे शासारु लीये! शुं तेओ पोते आहारने अर्थे मांस मेलवी शकता नथी? तेओ तो मोटा सामर्थ्यवान कहेवायछे ते सामर्थ्य केम फोरवता नथी! जे जीवना मांसनो बलिदान तेओने आपेछे, ते जीवोनी उत्पत्ति पण तेओ पोतेज करेछे, एम तमे मानो छो पोते जीवोने उत्पन्न करी तेने मनुष्यना हाथे मरावीने तेनो बलिदान पोते लेवो ए शुं देवताओने योग्य छे! एम तो कोई साधारण माणस पण करे नही, ते कृत्य देवताओने केम संभवे? जो ते देवताओने मांस भक्षण करवानी होंस होय, तो पोताने माटे जुदीज जातना कोई जीव विनाना एवाज स्वादवाला पदार्थनी उत्पत्ति करी, ते पदार्थनो आहार करवाने शुं हरकत छे? माटे ए वधी वात मनकल्पित छे, उत्तम देवताओनेविषे एवी कल्पना करवी योग्य नथी जो ए वात तमारा कह्या प्रमाणे साची होय, तो ते उत्तम देव नही, पण अधम कहेवाय याज्ञिक लोको होमादिकने अर्थे जीवघात करी, तेनो बलिदान दीधाथी पोताने भक्त समजे छे पण एहवुं भक्तनुं लक्षण होय नही; देवभक्तनुं अंत:करण शुद्ध होयछे. तेमां मलिन वासना उत्पन्न थायज नही. जो मलिन वासनावालाने भक्त कहिये, तो अभक्त कोने कहीशु! माटे एवु हिंसारूप कृत्य करनारने भक्त मानवो नही, पण अभक्त मानवो. अने ते निश्चय नरकगामी छे, एमा रचमात्र संशय आणवो नही.

५८ नास्तिक — कोइ वेदधर्मी प्रश्न करे छे के, तमारा जैनमतमां जीवना स्वरूपा दिकनेविषे केवीरीते वर्णन करेलुंछे ? तेने उत्तर दिये छे के, सर्वज्ञ केवलीए आवी रीते कह्यु छे —सर्व लोकनेविषे धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय आकाशास्तिकाय, काल, जीवा स्तिकाय तथा पुद्गलास्तिकाय ए छ द्रव्य भरपूर छे ए छए द्रव्य पोतपोताना गुण तथा पर्याये करी पूर्ण छे. सदा भावरूप छे जगतनी स्थिति जेम वर्त्तमान कालमां छे, ते मज भूत कालमां हती, अने भविष्य कालमां पण एवी रीतेज जाणवी ते मध्ये जीव अने पुद्गल अनंत काल लोलुपभूत छे एटले जेम क्षीर तथा पाणी अने मृत्तिका तथा धातुनुं मिश्रण थयाथी एक रूप बनी जाय छे तेम जीव तथा पु द्गलोपण एकरूपे रहे छे समय समयने विषे नवां कर्म जीवबांधे छे अने समय स मयने विषे पूर्व कर्म निर्जरीने छूटी पण जाय छे कर्मोनी उत्पत्ति तथा नाशमा ईश्वरनुं कांइ कारण पणु नथी ईश्वर तो अकर्त्ता छे, तेने विषे कर्त्ता पणुं कल्पाय नही माटे ईश्वर कोईनुं कारण नथी. काल, स्वभाव, नियत, पूर्व कर्म, तथा पु रुषाकार ए पाच कारणो उत्पत्तिना कह्यां छे एणे करीनेज पुण्य पाप जन्य स्व र्ग नरकने विषे गमनागमन थाय छे अने दंभकमा जे नरक, तिर्यंच, मनुष्य त था देवतानी चोवीश गतिओ कही छे ते प्रमाणे भवपरपराने पामेछे अने पो ताना उपार्जेला शुभाशुभ कर्म भोगवे छे ते ते भवने विषे ज्ञानावरणादिक आ ठ कर्मने अनुसारे वर्त्ते छे. जेम माटीनी भरेली तूंबी जलमा नाखीए तो ते मा टीना भारने लीधे डूबी जाय छे पछी जेम जेम ते माटी, तेमाथी ओछी थती जा य तेम तेम ते तूबी उपर आवती जाय छे ज्यारे बधी माटी नीकली जाय त्यारे पा णीनी उपर तरती रहे छे पण पाणीथी उपर जाय नही तेवी रीते जीव पाप कर्मथी लेपायो थको अधोगतिने पामे छे पछी जेम जेम ते कर्मनी न्यूनता थती जाय तेम तेम ते ऊर्ध्व गतिने पामतो जाय छे, ज्यारे बधा कर्मानो नाश थ ई जाय छे त्यारे ते जीव लोकाग्रने विषे प्राप्त थाय छे, पण तेनी उपर अलोक मां गमन करतो नथी, जेवी रीते तुबी जलना योगे उची आवे छे, तेम जीव ध र्मास्तिकायना योगे लोकांत रूप ऊर्ध्व गति पामेछे.

वादी आशका करे छे के, मनुष्य शाना बलथी सात राज लोक सुधी ऊर्ध्व ग मन करे छे ? जीव तो चौदमे गुणगाणे अयोगी थाय छे. एनो उत्तर दिये छे के, जेम धनुष्यथी जे बाण छूटे छे ते पूर्व जोरना बलथी चालेछे तेने वचमा बीजो को ई चलावनारो जोई तो नथी, ज्यारे धनुष्यमाथी बाण छूटे छे, ते क्षणने विषेज नि

यमित ठेकाणे पहोंतो एम समजवुं. ए विषय उपर बीजा पण त्रण दृष्टांतो छे कुंभकारनो चक्र, अग्निनो धूमाडो, तथा एरंडीओ ए चार दृष्टात वडे जाणी लेवु

५९ नास्तिक —कर्मक्षय थया पछी जीव अलोकनेविषे केम जतो नथी? जो जायतो वचमां तेने कोण रोकनारो छे?

आस्तिक.—चलन शक्तिने सहाय आपनारुं जे धर्मास्तिकाय द्रव्य, तेनुं त्यां आलंबन नथी. धर्मास्तिकाय द्रव्य लोक प्रमाणेज छे ते थकी अधिक नथी. तेथी अलोकमा जवाने जीव तथा पुद्गलनी गति थती नथी.

६० नास्तिक—कर्मोनो क्षय करीने सिद्धावस्थाने पामेलां जे सिद्ध जीवो ते सिद्धक्षेत्रे समश्रेणीए जायछे पण स्थानातरनेविषे जता नथी तेनुं कारण शु?

आस्तिक—ते समयनेविषे कोई प्रेरक नथी प्रेरणाविना चक्रभ्रमण थाय नही, तेथी सिद्धना जीवो समश्रेणीए सिद्धसिला उपर जायछे

६१ नास्तिक—सिद्धने शरीरनो अभाव थायछे. त्यारे अवगाहना केम कही छे?

आस्तिक—जेम ढाळातुं वासण बनाववाने अर्थे प्रथम तेना जेवो मेणनो आकार करवो पडेछे तेमा ते रस ओत्याथी ते धातुनो तेवो आकार थायछे ते वासण मेणथी छूटूं कर्या पछी पण मेणनो आकार थायछे कदाच मेण गाळी नाखीए तो पण ते आकारपणुं जतु नथी, केमके वासणनो आकार जे कायम रहेछे. ते पण ते मेणना आकार जेवोज छे, तेथी आकारपणुं कायम रहेछे तेम जीव जे शरीराकारे थयोछे. ते शरीरनो अभाव थया पछी पण सिद्ध पुरुषनो आत्मा ते शरीरनी अवगाहनारूपे रहेछे. एटले आउखाने अंते जेवो सिद्धना शरीरनो आकार रहेछे. तेवोज जीवना प्रदेशोनो अरूपी आकार रहेछे.

६२ नास्तिक—जेम जलमा जल मले ते एकरूपे थई जायछे भिन्नता देखाती नथी, तेम अनंत सिद्ध एकरूपे थई रहेछे के चेतन द्रव्यपणुं जुदुं जुदुं छे

आस्तिकः— ज्यारे जलना बिंदुओ मलीने एक जलनो पिंड थाय, त्यारे एक ज जल कहेवायछे. पण ज्यारे जलना बिंदु जुदा जुदा होय त्यारे बिंदु कहेवायछे. एक जल कहेवाय नही तेम सिद्ध पणे सर्व एकज छे, परतु चेतन द्रव्ये करी सर्व भिन्न भिन्न छे. ते उपर दृष्टांत, जेम अनेक शीपीओथकी उत्पन्न थएला अनेक मोतीओ जुदा जुदा होयछे, तेओमांना केटलाएक लईने एक मोटो ढगलो करिये. ने पछी तेओ विषे विचार करिये के ए ढगलामां एकता अनेकता शुं छे? तो तरत जणाशे के ते मोतीओ उज्वलता गुणरुपे सर्व एक छे पण

आकाररूपे सर्वे जुदा छे तेम सिद्धो सर्वे सिद्धतारूपे तो एक छे पण चेतन द्रव्य रूपे जुदा छे, एविषे धान्यना पुज वगैरे घणा दृष्टांतो छे तेथी विचारी लेवु वळी सर्वे सिद्धोनु सिद्धरूपपणु एक सरखुं होवाथी जाति वाचकपणे तेओ एकज कहेवाय, पण द्रव्यपणे अनंता कहेवायछे, माटेज जगतमा एवी वदंता छे के, "प्रभु एकमां अनेक छे, अने अनेकमां एक छे" कोई सिद्धमा मोटा नाहनाप णुं नथी, सर्वे समान छे. मोटामां मोटापणु तेनी पोतानी अपेक्षा ए नथी थतुं पण बीजा नाहनानी अपेक्षा ए थायछे, मोटो पोताना स्वरूपे करी शुं मोटापणु पामेछे, जो मोटो कहेशु तो कोई काळे नाहानो थवानो संभव थशे! अने नहा नो थयाथी स्वरूपमां अपूर्णता थशे, माटे सिद्ध बधा सरखा छे एम जाणवु अने सिद्ध भगवना कर्मना अंश सर्वे क्षय थई गयाथी पुनरपि जगतमां आगमन थतु नथी जेम भुंजेला अनाजना दाणाने पृथवीमा वावीए तो ते उगे नही, तेम सिद्ध पणपाछा ससारी जीव थाय नही केमके संसारमा आववु कर्म विना थतु नथी.

६३ नास्तिक – ईश्वर पृथ्वीनो भार उतारवाने अर्थे अवतार धारण करेछे ए वात सत्य छे के मिथ्या?

आस्तिक – ईश्वरने तो कोई शत्रु मित्र भाव नथी. तेम छता दानवने मार वासारु तथा देवताओने निर्भय सुखी करवासारु अवतार धारण करे तो दानव शत्रु अने देवता मित्र ठर्या के नी! जेने शत्रु मित्र भाव होय तो ते ईश्वर शानो! अने दानवोने प्रथम उत्पन्न शासारु कर्या के जेओने मारवासारु पो ताने माताना उदरमा आवी नाना प्रकारनी वेदनाओ सहन करी सग्रामादिक आपत्ति वेठवी पडी! वळी दानव अने देवताओनो ईश्वर तो एकज छे, सर्वेमा तेज ईश्वरनी कळा छे तेम छता दानवनी उत्पत्ति करी तेथी ईश्वरमा अज्ञानपणु आवशे ससारमा त्रण प्रकारना जीव होय छे एक धर्मी, बीजा पापी, त्रीजा महापापी जे कोईने मारे नही ते धर्मी कहेवायछे जे बीजा जीवने मारे ते पापी कहेवायछे ने जे पोताना जीवनो घात करे ते महापापी कहेवायछे. ईश्वरे देव तथा दानव वगेरेनी उत्पत्ति करी तेमा पोते अशरूपे प्रवेश कर्यो छतां तेओने मार्याथी आत्मघाती ठरशे ने तेम ठर्याथी महापापी कहेवाशे

६४ नास्तिक – स्नाने करीने शुद्ध थवु ए मुक्तिनुं अग छे

आस्तिक – पेटमा रोग होय ने शरीरनी बाहेर लेप लगाडीए तो ते रोग कदी मटे नही तेम आत्माना कर्म विकार ते शरीर शुचिथी कोई काळे जाय नही ए

उपर दृष्टांत कहुं हुं जेम कोई मोटी हवेलीमां बालक मूतर्यो होय ते शुद्ध करवा ने जेटली भूमि बगडी होय तेटलीज धोवी जाइये तेम शरीररूप हवेली कर्मे करी मलीन थई होय तेटलीज तपसाये करी शुद्ध करवी. पण आखा शरीरने स्नान, मज्जन, स्वच्छ वस्त्रादिक, तथा सुगंध्यादिक करवानुं कांई काम नथी, स्नान तो सोल शृगारमानो प्रथम शृंगार छे ते सर्व शृगारनो त्याग करे त्यारे ब्रह्मचारी कहेवाय. कर्म निर्जराने अर्थे मुनिने ब्रह्मचर्य व्रत पालवो कह्यो तेथी पण स्नान करवुं नही एवुं सिद्ध थाय छे.

६५ नास्तिक—यह दुनिया सब खुदाने पैदा करी है.

आस्तिक—यह दुनिया सब खुदाकी करी होवै तो जो खुदाका बंदा हरवखत खुदाकी बंदगी करै, कुरान वाचै, नमाज करे, औ रोजा रखै, तिसीकुं दुनीयांकी नियामते जैसेकी आल औलाद औ पैसा वगैरा मिलना चाहिये, औ हिंदु व गैरा सब फकीरके माफक होना चाहिये तैसे तो नही होता है दूसरे भी अ छी सल्तीनत वाले आंखोके सामने मौजुद है. इस वास्ते ये बात रास्त नही है जो होवै है सो सब तकदीरसे होवै है

६६ नास्तिक – आ ससार रामे उत्पन्न कर्यो छे.

आस्तिक – जो आ जगत रामनुं उपजावेलुं होय तो जेओ हमेश रामनी भ क्ति करेछे. पुराण वाचेछे वदना करेछे तथा एकादशी आदिक व्रत राखेछे तेओने सर्व द्रव्यादिक संपत्ति मलवी जोये बीजाओने विपत्ति होवी जोये. ते म तो दीवामा आवतुं नथी बीजा मुसलमानादिक पण महा सपत्तिवान दीठ मां आवे छे तेथी बधुं कर्माधीन छे.

६७ नास्तिक – अगदान (कन्यादान) दीधाथी पुण्य थाय छे. केमके. स्त्रीपु रुष हलीमली मैथुन क्रियाना सुखने पामे छे. तेनुं फल दानदेनाराने थायछे

आस्तिक—भाई, तारा जेवो पूर्वपक्षी तो एके मल्यो नथी तें तो आडो आंक वाल्यो. पण भाई, मैथुन क्रिया तो सर्व थकी अशुद्ध छे; यवन लोको पण इमाम ना दशरानी क्रिया करेछे, त्यारे मैथुन सेव्याना वस्त्र पहेरीने करता नथी केमके ते वस्त्रने तेओ नापाक कहेछे तेमज हिंदुओ देवपूजामा, व्रतने दिवसे तथा तीर्थयात्रामा मैथुननो त्याग करेछे. जे मुमुक्षु (मुक्तिनी इच्छा करतो होय) तेणे प्रथम मैथुननो त्याग करवो ए कृत्य नरकनो हेतु होवाथी सर्वथा निंदनीक छे

इति श्री आस्तिक नास्तिकनो संवाद संक्षिप्त रूपे समाप्त

॥ ॐ श्री जिनाय नम ॥

अथ श्रीयशोविजयजी उपाध्यायकृत सम्यक्तना सडसठ बोलनी सज्झाय प्रारंभः॥

॥ दोहा ॥ ॥ सुकृत वल्लिकादंबिनी। समरी सरसति मात ॥ समकित सड सठ बोलनी। कहिशूं मधुरी वात ॥ १ ॥ समकित दायक गुरुतणो। पच्चुवयार न थाय ॥ भव कोडाकोडे करी। करता सर्व उपाय ॥ २ ॥ दानादिक किरिया न दिये। समकित विण शिवशर्म ॥ तेमाटे समकित वडूं। जाणो प्रवचन मर्म ॥३॥ दर्शन मोह विनाशथी। जे निर्मल गुणगण ॥ ते निश्चय समकित कह्यो। तेहना ए अहिगण ॥ ४ ॥ ॥ ढाल॥ देइ देइ दरसण आपणूं, एदेशी॥ ॥ चउ सद्दहणा तिलिग छे। दशविध विनय विचारोरे ॥ त्रिण शुद्धि पण दूषण। आठ प्रभाविक धारोरे॥५॥त्रूटक॥प्रभाविक अड पंच भूषण। पच लक्षण जाणिये॥ षट् जयणा षट् आगार भावन। छविहा मन आणिये ॥ ५ ॥ षट ठाण समकित तणा सडसठ। भेद एह उदार ए ॥ एहनो तत्व विचार करता। लहीजे भवपार ए ॥६॥ ढाल ॥ चउ विह सद्दहणा तिहां। जीवादिक परमत्थोरे॥ प्रवचनमा जे भाषिया। लीजे ते नो अत्थोरे ॥ ७ ॥ त्रूटक ॥ तेहनो अर्थ विचार करिये। प्रथम सद्दहणा खरी ॥ बीजी सद्दहणा तेहना जे। जाण मुनिगुण जवहरी ॥ सवेग रग तरग झीले। मार्ग शुद्ध कहे बुधा ॥ तेहनी सेवा कीजिये जिम। पीजिये समता सुधा ॥ ८ ॥ ढाल ॥ सम केत जेणे ग्रह्यो वमिऊ। निन्हव ने अहछंदारे ॥ पासत्थाने कुशीलिया ते। वेष विडंबक मदारे ॥ ९ ॥ त्रूटक ॥ मदा अनाणी दूर छंडो। त्रीजी सद्दहणा ग्रही ॥ परद र्शनीनो सग तजिये। चोथी सद्दहणा कही ॥ हीणातणो जे सग न तजे। तेहनो गुण नवि रहे ॥ ज्यूं जलधि जलमा भल्यू गंगा। नीर लूणपणू लहे॥१०॥ ॥ ढाल ॥ कपूर होवे अति ऊजलू रे, एदेशी ॥ ॥ त्रण लिग समकित तणारे। पहिलो श्रुतअभिलाष ॥ जेहथि श्रोता रस लहेरे। जेवो साकर द्राखरे। प्राणी, धरिये समकित रंग। जिम लहिये सुख अभंग रे। प्राणी, टेक ॥ ११ ॥ तरुण सुखी स्त्री परिवखोरे चतुर सुणे सुरगीत॥ तेहथि रागे अति घणो रे। धर्म सुण्यानी री त रे। प्राणी० ॥ १२ ॥ भूख्यो अटवी ऊतख्यो रे। जिम द्विज घेवर चग ॥ इछे तिम जे धर्मने रे। तेहिज बीजूं लिग रे। प्राणी० ॥ १३ ॥ वैयावच्च गुरु देवनूं

रे । त्रीजुं लिंग उदार ॥ विद्या साधक तणि परे रे । आलस नविय लगार रे । प्राणी० ॥१४॥ ॥ढाल॥ प्रथम गोवालातणे नवेजी, ए देशी॥ ॥अरिहंत ते जि न विचरता जी ॥ कर्म खपी हुआ सिद्ध ॥ चेइय जिण पडिमा कही जी । सूत्र सिद्धांत प्रसिद्ध । चतुर नर, समजो विनय प्रकार । जिम लहिये समकित सार। चतुर० ॥ १५ ॥ धर्म खिमादिक नाखेओ जी। साधु तेहना गेह॥ आचारय आ चारना जी । दायक नायक जेह । चतुर० ॥ १६ ॥ उपाध्याय ते शिष्यने जी। सूत्र नणावण हार ॥ प्रवचन सघ वखाणिये जी । दरसण समकित सार । च तुर० ॥ १७ ॥ नगति बाह्य प्रतिपत्तिथी जी । हृदय प्रेम बहुमान ॥ गुण थुति अवगुण ढांकवा जी। आशातननी हाण । चतुर० ॥ १८ ॥ पांच नेद ए दश त णो जी। विनय करे अनुकूल ॥ सींचे तेह सुधा रसें जी। धर्म वृक्षनूं मूल । चतुर०॥ ॥१९॥ ढाल॥ ॥धोबीडा तूं धोए मननूं धोतीयू रे॥ ॥एदेशी॥ ॥त्रण शुद्धि सम किततणी रे । तिहाँ पहिली मन शुद्धि रे ॥ श्री जिनने जिनमत विना रे । कूड स कल ए बुद्धि रे॥ चतुर विचारो चित्तमां रे। टेक ॥ २० ॥ जिन नगते जे नवि थयुं रे । तेवीजाथि नवि थाय रे॥ एवु जे मुख नाखिये रे। ते वचन शुद्धि कहिवाय रे। च तुर० ॥ २१॥छेद्यो नेद्यो वेदना रे । जे सहतो अनेक प्रकाररे॥जिण विण पर सुर नवि नमे रे। तेहनी काया शुद्ध उदाररे। चतुर० ॥२२॥ ॥ढाल॥ मुनि जन मारगनी, ए देशी ॥ ॥ समकित दूपण परिहरो । तेमां पहिली छे शंका रे ॥ ते जिन वचन मां मत करो ॥ जेहने समनृप रंका रे । समकित दूपण परि हरो ॥ टेक ॥ २३॥ कंखा कुमतनी वांछना । बीजूं दूपण तजिये ॥ पामी सुरतरु परगडो । किमबाकल नजिये॥ समकित०॥ २४ ॥ संशय धर्मना फलतणो । वितिगिच्छा नामे ॥ त्रीजूं दूपण परिहरो । निज शुन परिणामे ॥ समकित० ॥ २५ ॥ मिथ्यामति गुण वर्णनो । टालो चोथो दोष॥ उन्मारगि थुणता हुवे । उनमारग पोष॥समकित० ॥ २६ ॥ पांचमो दोप मिथ्यामती । परिचय नवि कीजे ॥ इम शुन मति अरविंदनी । न ली वासना लीजे ॥ समकित० ॥ २७ ॥ ॥ ढाल ॥ नोलिडा हंसारे विपय न रा चीये, ए देशी ॥ आठ प्रनाविक प्रवचनना कह्या । पावयणी धुरि जाण ॥ व र्तमान श्रुतना जे अर्थनो । पार लहे गुण खाण ॥ धन धन शासन मंडन मु निवरा । टेक० ॥ २८ ॥ धर्म कथी ते बीजो जाणिये । नंदिखेण परि जेह ॥ नि ज उपदेशेरे रंजे लोकने । नंजे हृदय संदेह। धन धन० ॥२९॥ वादी त्रीजोरे त र्क निपुण नण्यो । मल्लवादी परि जेह ॥ राजद्वारेरे जयकमला वरे । गाजंतो जिम

मेह । धन धन० ॥ ३० ॥ जद्रबाहु परि जेह निमित्त कहे । परमत जीपण काज ॥ तेह निमित्तीरे चोथो जाणिये । श्री जिनशासन राज । धन धन० ॥ ३१ ॥ तप गुण ऊपर रोपे धर्मने । गोपे नवि जिन आण ॥ आश्रव लोपेरे नविकोपे कदा । पचम तपसी जाण । धन धन० ॥ ३२ ॥ छगो विद्यारे मंत्र तणो बलि । जिम श्रीवयर मुणिंद ॥ सिद्ध सातमोरे अंजन योगथी । जिम कालिक मुनि चद । धन धन० ॥ ३३ ॥ काव्य सुधारस मधुर अर्थ जखा । धर्म हेतु करि जेह ॥ सिद्धसेन परि नरपति रीझवे । अष्ठम वर कवि तेह । धन धन० ॥ ३४ ॥ जव नवि होवे प्रजाविक एहवा । तव विधि पूरव अनेक ॥ जात्रा पूजादिक करणी करे । तेह प्रजाविक छेक । धन धन० ॥ ३५ ॥ढाल॥ सतीय सुनझानी । ए देशी ॥ ॥ सोहे समकित जेहथी । सखि जिम आजरणे देह ॥ जूपण पाच ते मन वस्या । सखी मन वस्या । तेमां नहीं संदेह । मुज समकित रग अचल होयो । टेक० ॥ ३६ ॥ पहिलुं कुशलपणुं तिहा । सखी वदन ने पच्चखाण ॥ किरियानो विधि अति घणो । सखी आचरे तेह सुजाण । मुज० ॥ ३७ ॥ बीजूं तीरथ सेवना । सखी तीरथ तारे जेह ॥ ते गीतारथ मुनिवरा । सखी तेहस् कीजे नेह । मुज० ॥ ३८ ॥ जगति करे गुरु देवनी । सखी त्रीजूं जूपण होय ॥ किणहि चलाव्यो नवि चले । सखि चोथु जूषण जोय । मुज० ॥ ३९ ॥ जिनशासन अनुमोदना । सखी जेहथी बहु जन हुंत ॥ कीजे तेह प्रजावना । सखी पाच जूपणनी खंत । मुज० ॥ ४० ॥ ॥ ढाल ॥ इम नवि कीजे हो, ए देशी ॥ ॥ लक्षण पाच कह्यां समकित तणा । धुर उपशम अनुकूल । सुगुण नर ॥ अपराधी सू पण नवि चितथकी । चितविये प्रतिकूल । सुगुण नर । श्री जिनजाषित वचन विचारिये । टेक० ॥ ४१ ॥ सुरनर सुख जे दुःख करि लेखवे । वछे शिवसुख एक ॥ सु० ॥ बीजूं लक्षण ते अंगीकरे । सार संवेग सुटेक । सु० । श्रीजिन० ॥ ४२ ॥ नारक चारक समजव ऊजग्यो । तारक जाणिने धर्म । सु० ॥ चाहे निकलवु निर्वेद ते । त्रीजूं लक्षण मर्म । सु० । श्री जिन० ॥ ४३ ॥ दुव्ययकी दुखियानी जे दया । धर्महीणानी जाव । सु० ॥ चोथुं लक्षण अनुकपा कही । निज शकते मनल्याव । सु० श्रीजिन० ४४ ॥ जे जिन जाख्युं ते नहि अन्यथा । एहवो जे दृढ रग । सु० ते आस्तिकता लक्षण पाचमु । करे कुमतिनो ए जग । सु० । श्रीजिन० ॥ ४५ ॥ ॥ ढाल ॥ जिन जिन प्रति वदन दिसे, ए देशी ॥ पर तीर्थी परना सुर तेणे । चैत्य ग्रह्यां वलि जेह ॥ वदन प्रमुख तिहा नवि करवु । ते जयणा षट जेय रे ।

नविका, समकित यतना कीजे । टेक० ॥ ४६ ॥ वदन ते कर जोडन कहिये । न मन ते शीस नमाडे । दान इष्ट अन्नादिक देवूं । गौरव नगति देखाडेरे । नवि का० ॥ ४७ ॥ अनुप्रदान ते तेहने कहिये । वार वार जे दान॥ दोष कुपात्रे पात्र मतिये । नहि अनुकंपा मान रे । नविका० ॥ ४८ ॥ अण बोलावे जेह ना खवूं । ते कहिये आलाप ॥ वार वार आलाप जे करवो । ते कहिये संलाप रे । नविका० ॥४९॥ ए जयणाथी समकित दीपे । वलि दीपे व्यवहार ॥ एमां पण कारणथी जयणा । तेना अनेक प्रकार रे । नविका० ॥ ५० ॥ ढाल ॥ ललना नीदेशी ॥ शुद्ध धरमथी नवि चले । अति दृढ गुण आधार ललना ॥ तो पण जे नवि तेहवा । तेहने एह आगार । ललना ॥ ५१ ॥ बोल्युं तेहवु पालिये । दंति दंत सम बोल । ललना ॥ सज्जनना डुर्जन तणा । कछप कोटिने तोल। ल लना॥बो०॥५२॥राजा नगरादिक धणी । तस शासन अनियोग। ललना। तेहथी कार्त्तिकनी परे। नहि मिथ्यात संयोग। ललना ॥बो०॥५३॥मेलो जननो घण कह्यो। बल चोरादिक जाण । ललना ॥ पेत्रपालादिक देवता । तातादिक गुरु गाण । ल लना॥बो०॥५४॥वृत्ति डुर्जन आजिविका । ते नीखण कंतार । ललना ॥ ते हेते दू पण नही । करता अन्य आचार । ललना ॥बो०॥५५॥ढाल॥राग मल्हार॥ नाविजे रे समकित जेहथी रूअडूं॥ते नावनारे नावो मनकरि परवडूं॥ जो समकित रे ताजूं साजूं मूल रे ॥ तो व्रत तरु रे दीये शिवपद अनुकूल रे॥५६॥त्रूटक॥ अनुकूल मू ल रसाल समकित । तेहविण मति अंध रे ॥ जे करे किरिया गर्व नरिया । तेह फूवो धंध रे॥ ए प्रथम नावना गुणो रूअडी। सुणो बीजी नावना ॥ बारणूं समकि त धर्मपुरनुं। एहवीते पावना॥५७॥ढाल॥त्रीजी नावना रे समकित पीठ जो दृढ स ही॥ तो मोटो रे धर्म प्रासाद डगे नही ॥ पाइये खोटे रे मोटो मंमाण न शोनी ये ॥ तेह कारण रे समकितसूं चित थोनीयें ॥५८॥त्रूटक॥थोनीये चित नित एम नावी । चोथी नावना नाविये ॥ समकित निधान समस्त गुणनुं । एहवुं मन ला विये ॥ तेह विण छूटा रत्न सरिखा । मूल उत्तर गुण सवे ॥ किम रहे ताके जेह हरवा । चोर जोर नवे नवे ॥५९॥ढाल॥ नावो पंचमी रे नावना सम दम सार रे पृथवी परे रे समकित तस आधार रे ॥ छठी नावना रे नाजन समकित जो मि ले॥ श्रुत शीलनो रे तो रस तेहमा नवि ढले॥६०॥त्रूटक॥नवि ढले समकित नाव ना रस । अमियसम संवरतणो ॥ षट नावना ए कही एहमां। करो आदर अ ति घणो ॥ इम नावता परमार्थ जलनिधि । होइ नित्तु कल्लोल ए ॥ घन पवन

पुण्य प्रमाण प्रगटे। चिदानद कल्लोल ए॥६१॥ढाल॥जे मुनिवेष सके नवी छंडी ए देशी॥ छरे जिहा समकित ते थानक। तेहना षट विध कहिये रे॥ तिहा पहिलुं थानक क छे चेतन। लक्षण आतम लहिये रे॥ खीर नीर परे पुग्गल मिश्रित। पण एहथी छे अलगो रे॥ अनुभव हंस चच जो लागे। तो नवि दीसे वलगो रे॥६२॥ बीजूं थानक नित्य आतमा। जे अनुभूत संभारे रे॥ बालकने स्तन पान वासना। पूरव भव अनुसारे रे॥ देव मनुज नरकादिक तेहना। छे अनित्य पर्याय रे॥ द्रव्यथकी अविचलित अखंडित। निज गुण आतमराय रे॥ ६३॥ त्रीजूं थानक चेतन कर्त्ता। कर्मतणे छे योगे रे॥ कुंभकार जिम कुंभतणो जे। दण्डादिक संयोगे रे॥ निश्चयथी निज गुणनो कर्त्ता। अनुपचरित व्यवहारे रे॥ द्रव्य कर्मनो नगरादिकनो। ते उपचार प्रकारे रे॥ ६४॥ चोथूं थानक छे ते भोक्ता। पुण्य पाप फल केरो रे॥ व्यवहारे निश्चय नय दृष्टे। भुंजे निज गुण नेरो रे॥ पंचम थानक छे परम पद। अचल अनंत सुख वासो रे॥ आधि व्याधि तन मनथी लहिये। तसु अभावे सुख खासो रे॥ ६५॥ छठुं थानक मोक्षतणू छे। संयम ज्ञान उपायो रे॥ जोसहिजे लहिये तो सघले। कारण नि फलथायो रे॥ कहे ज्ञान नय ज्ञानज साचूं। ते विण झूठीकिरिया रे॥ न लहे रूपूं रूपूं जाणी। सीप भणी जे फिरियारे॥ ६६॥ कहे किरियानय किरियाविण जे। ज्ञान तेह सूं करशो रे॥जल पेसी कर पद न हलावे। तारू ते किम तरसे रे॥ दूषण भूषण छे इहा बहुला। नय एकेकने वादे रे॥ सिद्धांति ते बेहु नय साधे। ज्ञानवंत अप्रमादे रे॥ ६७॥ इणि परे सडसठ बोल विचारी। जे समकित आराहे रे॥ राग द्वेष टाली मन वाली। ते समसुख अवगाहे रे॥ जेहनो मन समकितमा निश्चल। कोइ नही तस तोले रे॥ श्री नय विजय विबुध पय सेवक। वाचक जस इम बोले रे॥ ६८॥

॥ इति श्री सम्यक्त सडसठबोल सज्झाय समाप्त

ॐ श्री जिनाय नम

अथ श्री शृंगारवैराग्यतरंगिणीप्रारंभः

संस्कृतटीकाना कर्त्ता आरंभमां मंगलाचरण करेछे.

उपजातिवृत्तं ॥ श्रीपार्श्वनाथं प्रणिपत्य भक्त्या पुरि
स्थितं श्रीफलवर्द्धिकायां ॥ शृंगारवैराग्यतरंगिणी या
व्याख्याननाव्या क्रियते मया सा ॥ १ ॥

अर्थ — श्रीफलवर्द्धिकानामनी पुरीनेविषे स्थित श्रीपार्श्वनाथ भगवानने भक्तिवडे प्रणाम करीने शृंगारवैराग्यतरंगिणी नदीनी नाविकारूप व्याख्या हुं करुंछुं.

अवतरण—श्रीसोमप्रभाचार्य, वैराग्यनी वासनावडे शृंगारने दूषित करनार छता आ शृंगारवैराग्यतरंगणी नामनो ग्रंथ करवानी कामनाएकरी स्त्रीनुं रूप निंदा करवा योग्य छे एवु प्रतिपादन करेछे ॥ १ ॥

शार्दूलविक्रीडितंवृत्तम् ॥ धर्मारामदवाग्निधूमलहरीलावण्य
लीलाजुष स्तन्वंग्या यमितान्विलोक्य तदहो बालान्किमु
त्कठसे ॥ व्यालान् दर्शनतोपि मुक्तिनगरप्रस्थानविघ्नक्र
मान् मत्वा दूरममून् विमुंच कुशल यद्यात्मनो वांछसि ॥ २॥

अर्थ —अहो ! आ धर्मरूप वननेविषे दवाग्निना धुमाडानी पक्तिना जेवा श्यामवर्णवाला, सूक्ष्मअंगयुक्त शरीरवाली स्त्रीओना बांधेला जे वालो छे, तेने जोईने तू केम आनंदने पामेछे ? जो तूं पोतानुं सारुं थवानी इच्छा करतो हो तो, जेना दर्शनेकरी मुक्तिरूप नगरीना मार्गमां विघ्न थायछे, एवा वालोने व्याल (सर्प) रूप मानीने दूरथी त्याग कर एणेकरी वैराग्यरस दर्शावीने शृंगारने दूषित कर्योछे, जेम सर्प लांबा अने काला होयछे, तेमज स्त्रीना वाल पण लांबा अने काला होवाथी, तेओनुं सादृश्यपणुं कह्युछे, जेम सर्पने जोतांज आपणे दूर नाशी जैये छैये, तेम ते वालोने जोताज तेओनो तिरस्कार करवो जोइये शकुनशास्त्रमां कह्युछे के, कोई बाहेर गाम कामे जतो होय ते वखते जो मार्गमां साप मले तो ते काममां विघ्न पडतां ते कार्यनी सिद्धि थाय नही, तेमज

मुक्तिरूप नगरीना मार्गमा स्त्रीना वालरूप सर्प जो आडे आवे एटले
मोह उत्पन्न थाय तो मोटो विघ्न थायछे, माटे ए सर्वथा त्याग करव
छे उपर कह्यु के, स्त्रीओना बाधेला वालने व्यालरूप जाण, ए ठेकाणे व
मत्कार राख्यो छे के, वालशब्दमा यकार मल्याथी व्यालशब्द थायछे,
लने व्याल कहेवुं योग्य छे एने श्लेषालंकार कहेछे

आ वृत्तमा, सर्प चालती वखते जेम वांकोचूको थई जायछे, तेम स्
श विटडीआला होय तेने कविलोको श्रेष्ठ कहेछे. अने जेम सर्पनो रंग
कालो होयछे, तेम स्त्रीना अति काला रगवाला वाल होय, तो ते श्रेष्ठ
छे. एवी रीते वालनी जे श्रेष्ठता छे, ते विषयक शृंगार रस दर्शाव्योछे,
म मार्गमा सर्प आमो आवे तो कार्यसिद्धि थाय नही; तेम गुणस्थानक
णी चडतां पुरुषने वचमां स्त्रीना केशनो मोह उत्पन्न थयो तो तेथी श्रेणं
हनी सिद्धि थती नथी, एवी रीते वालनी जे निर्भर्त्सना कीधीछे ते विषय
ग्य रस दर्शाव्योछे. ॥ १ ॥

ये केशा ललिताः सरोरुहदृशा चारित्रचंद्रप्रभाभ्रंशां
भोदसहोदरास्तव सखे चेतश्चमत्कारिणः ॥ क्लेशान्मू
र्तिमतोऽवगम्य नियतं दूरेण तानुत्सृजेर्नोचेत् कष्टपरंप
रापरिचितः शोच्यां दशामेष्यसि ॥ २ ॥

अर्थ — हे सखा, कमलपत्रना जेवां नेत्रोवाली स्त्रीना देदीप्यमान के
रित्ररूप चन्द्रनी ज्योतिनो नाश करवाविषे मेघजेवा छे, अने जे तारा अंत
चमत्कार उत्पन्न करेछे, तेओ मूर्तिमान चक्षुरिंद्रियगम्य क्लेश छे एम
जाणीने दूर नाखी दे जो एओनो तु त्याग करीश नही, तो तु कष्टपरंपरा
थयोथको शोक करवायोग्य अवस्थाने पामीश. आ श्लोकमा स्त्रीना केशने
सादृश्य कह्युछे, ते आवी रीते "लसित" ए शब्द मूलमा छे, एनो अर्थ
करी सित केहेता युक्त, केशशब्दनो क्लेश शब्द थायछे

आ वृत्तमा, मेघना वर्णनी साथे स्त्रीना केशनी बराबरी करीछे जे
काशने विषे मेघ अति शोभायमान दीगमा आवेछे, तेम स्त्रीना मस्तके
केश अति ललित एटले देदीप्यमान दीगमां आवेछे स्त्रीनां केश जे चलक
य ते श्रेष्ठ कहेवायछे ए मुख्य केशनी श्रेष्ठतानो विषय कहेतां अंतरगत

धारण करनारी स्त्रीनां नेत्रोने कमलपत्र जेवां कह्यांछे, ए बधो शृंगार रस जाणवो. अने स्त्रीना एवा केश जोईने पुरुषना अंत करणमां मदनादि विकाररूप चमत्कार उत्पन्न थायछे, माटे ते क्लेशरूप कह्याछे, केमके, कामादि विकारो क्लेशरूप कह्याछे, क्लेशो अंतरना विषय होवाथी चक्षुना विषय नथी, तेओएज जाणे केशरूप मूर्त्ति धारण करी होय नी! एवी उत्प्रेक्षा थायछे. ए कारणथी स्त्रीना देदीप्यमान केशने क्लेशरूप जाणीने तेनो तु त्याग कर, एवडे वैराग्य रस दर्शाव्योछे.॥२॥

वसंततिलकावृत्तम्॥ ये शुद्धबोधशशिखंडनराहुचंद्राश्चित्तं
हरंति तव वक्रकचा दृशांग्या ॥ ते निश्चितं सुकृतमर्त्य
विवेकदेहनिर्दारणे ननु नवक्रकचाः स्फुरंति ॥ ३ ॥

अर्थ – हे पुरुष, निर्मल ज्ञानरूप चंद्रनुं ग्रासन करवाविषे, स्त्रीना वांका केश, राहु जेवा क्रूर छे. ते तारा अंत करणमां चमत्कार उत्पन्न करेछे. अर्थात् राहु जेम चंद्रनो ग्रास करेछे, तेम ए वांका केश तारा ज्ञाननो नाश करनारा छे. अने ते जाणे सुकृतरूप मनुष्यना विवेकरूप देहनुं विदारण करवाने नवी कर्वत ज होयनी! ए उत्प्रेक्षा छे. एमा "वक्र कच" एटले वाका केश ते "नवक्रकच" एटले नवी करवतना जेवा छे. एमकह्याथी श्लेषरूप चमत्कार जाणवो.

आ वृत्तमां, स्त्रीना वाका केश होय ते श्रेष्ट कह्याछे स्त्रीना वक्रकेश पुरुषना मनने मोहित करेछे, एथीज अंत करणमां चमत्कार उत्पन्न करेछे एम कह्युं छे, माटे ए शृंगार रस छे; अने स्त्रीना वाका केशनुं दर्शन थतांज पुरुषनुं मन विव्हल थायछे, देहनी पण शुद्धि रहेती नथी, अने ज्ञाननो नाश थई जायछे तेथी तेओने राहुरूप कह्याछे. तेमज विवेकरूप शरीरने कापवाने नवी कर्वत जेवा कह्याछे, एवा जाणीने तेओनो तु त्याग कर. ए वैराग्य रस जाणवो. ॥३॥

उपजातिवृत्तम्॥अलंकृतं कुंतलभारमस्या विलोक्य लोक कुरुते
प्रमोदम्॥वैराग्यवीरच्छिदुरं स्फुरंत ममुं न किं पश्यसि कुंतभारम्॥४॥

अर्थ.—हे पुरुष, पुष्पादिकेकरी गूंथेला स्त्रीना बांधेला केशोनो समूह एटले आंबोडो जोईने लोक आनंदने पामेछे, परंतु ए वैराग्यरूप वीरनुं छेदन करणारुं प्रास नामक दुःसह शस्त्र छे एम तुं कां जोतो नथी? अर्थात् स्त्रीना अलंकृत "कुंतलभार" एटले जे शणगारीने बांधेला केश छे, ते कुंतभार एटले प्रास नाम

क शस्त्रज छे एम जाणवु. आ ठेकाणे अल एटले लकाररहित, कृत एटले करे लो, जे कुतलनार शब्द, तेनो कुतनार एवो शब्द थाय, ते योग्य छे

आ वृत्तमा, पुष्पादिकेकरी शृंगारेलो स्त्रीना केशोनो अबोमो पुरुषने एवो रम णीय लागेछे के, ते जोईने वैराग्यवान पुरुषनो वैराग्य पण मगी जायछे, एवी श्रेष्टता कहीछे, ते शृगाररस छे अने ते डुःखे करीने पण सहन न थाय एवा प्रास नामक शस्त्ररूप छता वैराग्यनो नाशकरनारो छे, माटे तेनो त्याग कर, ए वैराग्य रस छे ॥ ४ ॥

वसततिलकावृत्तम् ॥ कस्तूरिकातिलकितं तुलिताष्टमीडु
चित्ते विचितयसि सौख्यनिमित्तमेकम् ॥ वामभ्रुवां यदलिकं
तदहो अलीकमित्याख्ययैव परया प्रवदंति रूपम् ॥५॥

अर्थ—हे पुरुष, जेमा कस्तूरीनो तिलक कस्योछे, तेथी अष्टमीना चड जेवी जेनी सुंदर भ्रुकुटी देखाय छे, ते अद्वितीय सौख्यनुं कारण छे, एवु तु अंत करण मां चितन करेछे, ते व्यर्थ छे अहो इत्याश्चर्ये! ते स्त्रीओनुं अलिक एटले जे ल लाट छे, तेने पडित लोको अलीक एटले मिथ्या कहेछे अर्थात् अलिक एवा बे रूप ललाट वाचक छे, तेओमाना पहेला रूपने बीजा रूपे करी जाण, एटले ल लाटने मिथ्या जाण, ए पण श्लेषज छे

आ वृत्तमा, अष्टमीनो चड अर्धगोलाकार छता बन्ने खूणाए सरखो देखायछे, तेना वचमा श्याम वर्णना चादलाना जेवु देखायछे, तेथी ते अति शोभित लागेछे, तेम स्त्रीनुं पण वाकु ललाट छतां तेमा कस्तूरीनो तिलक कस्यो होय, तो अति म नोहर देखायछे, ते जोईने पुरुषना मननेविषे घणो आनद थायछे, ते शृगाररस छे अने ए जे कस्तूरीना तिलक सहित स्त्रीनुं ललाट अति शोभायमान देखायछे, तेमां काई अर्थ नथी, किंतु व्यर्थ छे, माटे तेनो त्याग करवो ए वैराग्यरस छे ॥५॥

उपजातिवृत्तम् ॥ न भ्रूरियं पंकजलोचनायाश्चकास्ति शृंगाररसैकपात्रम् ॥ भ्रूः किलसौ साधुतरा प्रसूते निबधनं मोहविषद्रुमस्य ॥६॥

अर्थ.—हे पुरुष, कमलपत्रना जेवा लोचनवाली स्त्रीनी शोभायमान भ्रुकुटी छे, ते जाण शृगाररसनुं एक पात्रज छे, ते अतिशय श्रेष्ट भूमि छे, केमके, एथकी मोह रूपविषना वृक्षनो प्रादुर्भाव उत्पन्न थायछे, अर्थात् भ्रू एटले भ्रुकुटी, ते साधुतरा

चू एटले चूमि थायछे, एम कह्यु, तेमा आवी रीते श्लेप छेः- सा एटले प्रसिद्ध, धुतरा एटले रेफरहित एवो, चू शब्द चूमिवाचक शब्द थयो ते योग्य छे.

आ वृत्तमां, स्त्रीनी जे शोभायमान भ्रुकुटि, तेने शृंगार रसना पात्ररूपे कही छे; केमके, एने जोताज पुरुपने मोह उत्पन्न थायछे, माटे ए शृंगार रस छे, अने ए भ्रुकुटि नथी पण मोहरूप विपना वृक्षने उत्पन्न करनारी सारी चूमि छे, एम कहेवाथी वैराग्य रस जाणवो. ॥ ६ ॥

मालिनीवृत्तम् ॥ नवकुवलयदामश्यामलान् दृष्टिपातान् कृत
परमदनाशान् विक्षिपत्यायताक्षी॥ इति वहसि मुदं किं मोह
राजप्रयुक्तान् प्रशमभटवधार्थं विद्धमूष्टिपातान् ॥ ७ ॥

अर्थ.– हे पुरुप, विस्तीर्ण नेत्रोवाली स्त्रीना कुवलयनी माला जेवा श्यामवर्णवाला, अन्यमदना नाश करनारा जे कटाक्ष, ते मारा उपर नाखेछे, एम जाणीने तूं शालारु हर्पित थायछे ? अरे, ए जे दृष्टिपात (कटाक्ष) छे ते प्रशम रूप शूरवीरनो वध करवा सारु मोह राजाए प्रेरणा करेला ऋष्टिपात एटले तलवारना पात (घा) छे, एम जाण; अंही दृष्टिपातनो ऋष्टिपात आवी रीते थयो छेः– दृष्टिपात शब्दनुं विशेपण मूलमा " कृतपरमदनाशान् " छे, एनो श्लेप करी आवो अर्थ थाय छेः– कृत एटले कर्यो, परम एटले अत्यंत, दनाश एटले दकारनो नाश थयाथी ऋष्टिपात शब्द थाय छे ते योग्य छे

आ वृत्तमां, विस्तीर्ण नेत्रोवाली स्त्री कही छे, एथी स्त्रीना विशाल नेत्रोने कवीओए उत्तम कह्या छे, एम जाणवु, एवा विशाल नेत्रोना जे कटाक्ष, ते कुवलयनी माला जेवा, अने अन्य मदना नाश करनारा कह्या छे, एटले जे पुरुप उपर कुवलयनी मालाना जेवा कटाक्ष पडे ते पुरुप बीजा गमे तेवा मदवालो होय तो पण तरत ते स्त्रीनी उपर मोहित थईने तेना किंकर जेवो थई रहेछे, अने ते पोतानी उपर स्त्रीना कटाक्ष पडया जोइने अति आनंदित थायछे, माटे ए शृंगार रस छे, अने एवो लुब्ध थएलो पुरुप मोहरूप राजाने वश थयो थको ड खी थायछे, केमके, नेत्रकटाक्षरूप तलवारना घाएकरी तेना प्रशमरूप शूरवीरपणानो वध थायछे. तेनो तु त्याग कर, ए वैराग्य रस छे. ॥ ७ ॥

शार्दूलविक्रीडित वृत्तम् ॥ तस्या. कोपपदं यदाननमहोरा
त्रं स्मरन्नात्मनः संतापं वितनोपि काननमहो ज्ञाला स

खे तत्यजेः ॥ एतस्मिन् वमता मनोभवमहासर्पेण दष्टः पुमान् कार्याकार्यविवेकशून्यहृदय· कस्को न संजायते॥८॥

अर्थ –हे सखा, कोपनुं स्थान जे स्त्रीनुं आनन एटले मुख, तेनुं रात्रदिवस स्मरण करीने तूं पोताने संताप करीले छे, अहो इति खेदे ! ते आनन नथी पण कानन एटले वन छे; एम जाणीने मूकी दे, केमके, ए वनमा रहेनारो जे कामरूप सर्प, ते जे पुरुषने दश करेछे, ते पुरुषनो हृदय कार्याकार्य विवेकथी शून्य थई जायछे, एवो कोण छे, के जे त्यक्त विवेकशून्य न थाय! किंतु सर्व थायज छे. सामान्य सर्पनाविषे करीने मूर्छित थएलो पुरुष पण शून्य हृदयवालो थई जायछे, तो जेने सर्पे दश कर्यो होय तेनु शुं कहेवुं ! अहीं कोपपद आनन कानन छे, एम कह्युछे, तेथी कोपपद एटले ककार छे उपपद एटले समीपपद जेनो एवो आनन शब्द कानन शब्द थाय छे ते योग्य छे, एश्लेष छे.

आ वृत्तमां, स्त्रीनुं मुख कोपायमान कह्यु छे तेनुं कारण ए के, स्त्रीनी मुखमुद्रा यत्किंचित् कोपायमान पुरुषने दीठामां आवे तो तेने कामविकार उत्पन्न थायछे अथवा कोई कारणने लीधे स्त्रीने रीश आवीने पुरुषने पोतानी मुखमुद्रा कोपायमान करी देखाडयाथी तेने प्रीति उत्पन्न थायछे, अने विविध प्रकारे तेने समज्याव्यानी आतुरताने लीधे कामविकार उत्पन्न थायछे ते अहीं शृंगाररस जाणवो, अने स्त्रीना मुखने वन जेवु कह्यु छे, ने तेमा कामरूप सर्प रहे छे ते दश करीने पुरुषना हृदयने शून्य करे छे एटले सारासार विवेकरहित करे छे, अर्थात् मृतकतुल्य करे छे, तेथी तेनो तु त्याग कर ए वैराग्यरस जाणवो ॥ ८ ॥

उपजातिवृत्तम् ॥ साकारमालोक्य मुखं तरुण्य किं मुग्धबुद्धे मुदमादधासि॥इद हि चित्तभ्रमनाटकस्य विचक्षणैरामुखमाचचक्षे ॥९॥

अर्थ.– हेरूडीबुद्धिवान पुरुष, तरुण स्त्रीनुं साकार एटले सुंदर मुख जोईने तु शासारु आनंदित थायछे ! ए मुखने विद्वान पुरुष निश्चये करी चित्त भ्रमरूप नाटकनुं आमुख एटले आरंभ कहेछे अहीं साकार एटले आकार सहित जे मुख होय ते आमुख छे, ते योग्य छे

आ वृत्तमा, तरुण स्त्रीनु सुंदर मुख कह्यु छे, तेनुं कारण ए के मुखनी सुंदरता तारुण्यपणामा होयछे ते गमे तेवी सारीबुद्धिवाला पुरुषनी बुद्धिने विभ्रम करे छे एटले मोहित करेछे. ए शृंगार रस छे. अने तरुण स्त्रीनुं मुख चित्तविभ्रमरूप

नाटकनो आद्यारंभ छे एटले स्त्रीनुं मुख जोईने मोहनो आरंभ थाय छे. जेम नाटकनो आद्यारंभ सूत्रधार अने नटीप्रमुखना गायनद्वारा थायछे, ते जोनारा पुरुषना चित्तने मोह उत्पन्न करेछे. तेम ए पण जाणवुं. तेनो तु त्याग कर ए वैराग्य रस छे. ॥ ९ ॥

वसंततिलकावृत्तम् ॥ कामज्वरातुरमते तव सर्वदाऽऽस्यं वा
मभ्रुवां यदि कथंचिदवाप्तुमिच्छा ॥ यत्नं विनाप्यखिलज
न्मपरंपरासु तज्जातमेव भवतो ननु सर्वदास्यम् ॥ १० ॥

अर्थ – हे कामरूपज्वरथी पीडायमान थएली मतिवाला पुरुष, जो सर्वदा एटले सर्व काल सुंदर भ्रुकुटिवाली स्त्रीनुं आस्य एटले मुख, कोई पण प्रकारेकरि तने प्राप्त थवानी इच्छा होय, तो निश्चयेकरि यत्नशिवाय संपूर्ण जन्मपरंपराने विषे सर्वदास्य एटले सर्वनुं दासपणुं तने थयलुंज छे, एम जाणवुं. आश्लोकमां बे ठेकाणे " सर्वदास्य " ए शब्द आवेलो छे ते बन्नेनो अर्थ भिन्न भिन्न थाय छे. तेथी अहिं यमक जाणवो.

आ वृत्तमा, सुंदर भ्रुकुटीवालुं स्त्रीनुं मुख कह्यु छे, एथी जे स्त्रीनी भ्रुकुटि सारी होय, ते सुरूप दीठामा आवेछे तेनुं मुख कामी पुरुषने अति प्रिय लागेछे. अने तेने जोताज कामीपुरुषनी मति कामज्वरथी पीडायमान थायछे, एज इहां शृंगार रस छे अने एवा स्त्रीना मुखनी प्राप्तिनी इच्छा जे पुरुष करेछे ते जन्मो जन्मने विषे पराधीन रहेछे. माटे तेनो तूं त्याग कर ए वैराग्य रस जाणवो.॥१०॥

शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥ तस्याः साधुरदं विलोक्य वद
नं यः संश्रयत्यंजसा मुक्त्वा मुक्तिपथं हहा प्रविशति भ्रां
त्या स दुर्गं वनम् ॥ तत्रात्यंतमचारुबद्धवसतिर्येनात्र रा
गादिभिश्चोरैर्धर्मधनापहारकरणात्कष्ट न किं प्राप्यते॥११॥

अर्थः– ते स्त्रीनुं " साधु रदं " एटले सारा दांतवालुं वदनं एटले मुख जोइने जे पुरुष वेगे करी तेनो आश्रय करेछे, एटले तेमा लुब्ध थायछे ते पुरुष, हा हा इति खेदे! मुक्तिमार्गने मूकीने, वसतिने अरम्य करीने दुःखेकरि पण गमन न थाय एवा वनने विषे भ्रांतिए करि प्रवेश करेछे ते वन मर्यादारहित छे, तेमां गमन करनारा पुरुषनुं धर्मरूप धन रागादिक चोरो हरण करी जाय छे तेथी शुं कष्टनी प्राप्ति थती नथी? अहिं साधुरदं वदन जे छे ते वन छे ए

म कह्यु छे. ते आम.– साधुरदं ए शब्दनो पदछेद करिये तो साधु· अद ए वे पद जुदा थायछे एमाना अदं पदथकी दकार रहितपणुं थायछे, एम वदननु वन थायछे, ते योग्य छे

आ वृत्तमा, सारा दातवाली स्त्रीनुं मुख जोताज पुरुषनुं मन लुब्ध थई जायछे मुक्तिनो मार्ग जे धर्मध्यानादिक तेने ते मूकी दे छे जेने वसति सारी लागती नथी, मदनने वश थयो थको वनादिक एकात स्थलमां ते स्त्रीसहित अथवा स्त्रीना आगमननी इछावान थयो थको वास करेछे, अने तेथी महाकष्ट सहन करेछे, एवो स्त्रीना मुख दर्शननो जे प्रजाव ते अहिं शृगार रस छे अने स्त्रीना मुखरूप जे वन तेमा जे पुरुष प्रवेश करेछे तेनुं धर्मरूप धन रागादिक चोर लूंटी लिये छे. माटे तेमां लुब्ध थवुं नही ए अहि वैराग्य रस छे ॥ ११ ॥

पृथ्वीवृत्तम् ॥ यियाससि जवोदधेर्यदितटं तदेणीदृशामहीनमधरं धरं परिहरे पर दूरत· ॥ इहास्फुलनतोऽन्यथाविशदवासनानौस्तव व्रजिष्यति विशीर्णतां न जविता ततो वांछितम् ॥ १२ ॥

अर्थ –हे पुरुष, जो तु आ संसार समुद्रनो पार लेवानी इछा करतो हो, तो हरिणी जेवा नेत्रोवाली स्त्रीओना अहीन एटले अमृतादिवडे परिपूर्ण, अधर एटले ओष्ठरूप धर एटले पर्वत जे छे तेने तु दूर नाखी दे –ते जो तु नही मूकीश तो ते पर्वतना सघट्टनना योगे तारी निर्मल वासनारूप नौका जागी जशे · तेथी ·तारु इछेलुं पार पडशे नही जेम समुद्रमा पर्वतना लागवाथी वहाण जागी जाय तो जवा आववादिक इष्टसिद्धि थती नथी ते प्रमाणे तु पण आ जव समुद्रने पहेले पार पहोची शकीश नही. अही अहीन अधर जे छे ते धर एटले पर्वतज छे, एम कह्यु छे, ते आम – जे अहीन एटले अकारे करि हीन एटले रहित अधर शब्द ते धर शब्द थाय छे, ते योग्य छे.

आ वृत्तमा, स्त्रीना नेत्रोने हरिणीना नेत्रोनी बराबरी करीछे, एटले हरिणीना नेत्रो अति विशाल अने सुशोजित होयछे तेम स्त्रीना नेत्रो पण अति विशाल तथा सुशोजित होवाथी पुरुषनुं मन खेची लियेछे, तथा जे कामी पुरुष छे तेने स्त्रीना अधरामृतनेविषे घणी प्रीति होयछे, माटे अमृतेकरी पूर्ण अधर कह्यां छे, ते शृगार रस छे. अने ते अधर छे ते पर्वतज छे,, केमके, जे पुरुष ते अधरनेविषे लुब्ध थायछे ते संसारथी छूटी शकतो नथी ए वैराग्य रस छे. ॥ १२ ॥

शिखरिणीवृत्तम् ॥ न भातीदं भ्रातः स्फुरदरुणरत्नौघकिरणप्रता
नं तन्वंग्यास्तरलतरलं कुंडलयुगम् ॥ इदं दुग्धं पुंसामिह विरहसं
योगदशयोर्ज्वलच्छोकानंगज्वलनयुगिदं कुंडयुगलम् ॥ १३ ॥

अर्थ.— हे भाई, देदीप्यमान रक्तवर्ण रत्नोनो किरणसमूह छे जेनाविषे, तथा "तरल तरलं" एटले जे अत्यंत चचल छे. एवा कृशांगी एटले पातला आंगवाली स्त्री ना जे "कुंमलयुगं" एटले जे बे कानना कुंमल छे ते शोजता नथी, किंतु विरहदशा अने संयोगदशामा शोक तथा कामाग्निएकरी युक्तछे एटले विरहावस्थामां शोकावि र्जाव, तथा स्त्रीपुरुषनी संयोगावस्थामा कामाग्निनो आविर्जाव थायछे अने आ ससारनेविषे पुरुषना शांतिरूप दूधने बालवावाला ए कुमयुगल एटले बे कुंमछे एम जाण अहीं कुंमलयुग ते कुंमयुगल थाय छे ते आवी रीते —कुंमलयुग शब्दनुं वि शेषण तरलतरलं एवुं छे एनो श्लेषार्थ आम छे — तरलतर एटले चचल छे ल एटले लकार जेमां एवो जे कुमलयुग शब्द, तेमांनो लकार कहाडी नाखिये तो कुमयुग शब्द थायछे, अने युग शब्द थया पछी तेना अंतमा लकार जोडीये तो कुंमयुगल शब्द थायछे. ते योग्य छे.

आ वृत्तमा, स्त्रीना काननेविषे देदीप्यमान रत्नजडित जे बे कुंमल होयछे, ते स्त्रीना रूपमां अति वृद्धि करेछे अने चचल होवाथी अति सुशोजित देखायछे. तेमा पण कृशांगी एटले पातला आगवाली स्त्रीने अति शोजेछे ए शृंगार छे अ ने ए जे बे कुंमल छे ते शोजाकारक नथी पण विरहदशा तथा संयोगदशामा शो क तथा कामाग्निना उत्पन्न करनारा छे, ए पुरुषनी शांतिरूप दूधनो नाश करना रा छे तेथी कुंडरूप छे, तेनो तूं त्याग कर. ए वैराग्य रस छे ॥ १३ ॥

अनुष्टुब्वृत्तम् ॥ ताडंकं सस्पृहं तस्याः पश्यन् मूढः परे
जवे ॥ नरो नरकपालेभ्यस्ताडं कं न सहिष्यते ॥ १४ ॥

अर्थ — हे मूर्ख पुरुष, ते स्त्रीनुं साजिलाष "तामंक" एटले कर्णजूषण अव लोकन करता आगल आवनाग जवमध्ये नरक पालन करनारा अधम परमाधा मी पुरुषोनी पाशेथी "कताडं" एटले कोण आघात सहन करनार नथी? अ पितु सर्व आघात सहन करशो. अही "ताडकं" ए शब्द बे वार आव्योछे, तेओ नो अर्थ जिन्न जिन्न छे ए यमकालंकार छे

आ वृत्तमां, स्त्रीना कानना कुम्ल जोताज पुरुपने एवी अभिलापा थायछे के ए कुम्लेकरी शोभायमान स्त्री मने प्राप्त थाय तो सारुं ए शृंगार रस छे, अने अभिलापाए करी स्त्रीना कुंडलोने जे पुरुप जुवे छे ते आवता नवमा नरकना पालन करनारा परमाधामी देवताओनी मार खायछे, माटे एनो त्याग करवो ए वैराग्य रस छे. ॥ १४ ॥

वसंततिलकावृत्तम् ॥ सारं गलं यमरविंदविलोचनाना
मालोक्य चेतसि मुदं कलयंति मूढा ॥ हा निश्चितं रचि
तमुक्तिपुरप्रवेशव्यापेधमर्गलममुं न विचारयंति ॥ १५ ॥

अर्थ -- हे मूढ, कमलना जेवा नेत्रोवाली स्त्रीओनो जे सार एटले श्रेष्ट, गल एटले कव अवलोकन करीने पुरुपो अंत करणमा हर्ष पामेछे. परतु हा इति खेदे ! ए जे गल छे ते मुक्तिनगरीमा प्रवेश करवानेविपे प्रतिबंध करनार होवाथी अर्गल छे, एवो विचार करता नथी अहीं सार एटले अरसहित गल शब्द ते अर्गल शब्द थायछे ते योग्य छे

आ वृत्तमा, स्त्रीना कठनी श्रेष्टता कहीछे जो स्त्रीनो कव सारो होय तो तेने जोताज पुरुप आनदित थायछे, अर्थात् कामनी इच्छा उत्पन्न थायछे, ते अहीं शृंगार रस छे, अने एवा अभिलापी पुरुपोनो मुक्तिरूप नगरीमां प्रवेश थतो नथी. माटे तेनो त्याग करवो ए वैराग्य रस छे. ॥ १५ ॥

शिखरिणीवृत्तम् ॥ अल प्राप्य स्पर्शं कुचकलशयो पंकजदृशां
परां प्रीतिं भ्रात कलयसि सुधामग्नइव किम्॥अवस्कंदं धर्मक्षितिप
पकटके दातुमनसा प्रयुक्तं जानीया कलुपवरटेन स्पशमिम्॥१६॥

अर्थ – हे भ्रात, जेना कमलना पत्र जेवा नेत्र छे, एवी स्त्रीओना स्तनरूप जे कुंभ छे, तेने अलं एटले अत्यत स्पर्श पामीने अमृतमा मग्न थई जनाराना जेवो जे तु ते शुं उत्कृष्ट प्रीतिने पामेछे ? ए स्पर्श, धर्मरूप राजानी सैन्यने प्रहार करवानुं छे जेना मनमा, एवा कलुप एटले पापरूप नीले मोकलेलो स्पश एटले जासूद छे, एम तु जाण. अहीं अलं स्पर्श जे छे ते स्पश छे, एम कह्यु रेफ अने लकार एकज होयछे, एवो नियम छे माटे अलं एटले जेमां रेफ नथी एवो स्पर्श शब्द जे छे ते स्पश शब्द थायछे ते योग्य छे.

आ वृत्तमां, स्त्रीना स्तननी उत्कृष्टता कहीछे, एटले पुरुषने स्त्रीना स्तननो स्प र्श थताज अमृतनेविषे मग्न थई गएला पुरुषनी पठे आनंद उत्पन्न थायछे, ए शृंगार रस छे, अने ए स्तन जे छे ते धर्मनो नाश करवाने अर्थे पापनो एक बा नो जासूद छे, माटे तेनो तु त्याग कर ए वैराग्य रस छे ॥ १६ ॥

वसततिलकावृत्तम् ॥ पीनोन्नतं स्तनतटं मृगलोचनाया आ
लोकसे नरहितं यदपूर्वमेतत् ॥ मोहांधकारनिकरक्षय
कारणस्य विद्धास्तदस्ततटमेव विवेकभानो. ॥ १७ ॥

अर्थ.– मृगना जेवां लोचनवाली स्त्रीनां जे पुष्ट अने उन्नत स्तनतट एटले बे स्तनो छे, ते नरहित एटले पुरुषने हितकारक जासेछे, अने अपूर्व एटले प्र तिक्षण पुरुषने चमत्कार उत्पन्न करे छे, तेनुं तु अवलोकन करेछे, पण ते मोह रूप अंधकारनो क्षय करवानुं कारण विवेकरूप सूर्यना अस्ततट छे अर्थात् ए थकी ज्ञानरूप सूर्यनो अस्त थायछे आ पद्यमा स्तनतट जे छे तेने तु अस्ततट जाण एम कह्यु, केमके, नरहितं अने अपूर्व ए बे स्तनतटना विशेषणो छे, तेओ माथी आवो अर्थ निकले छे – नरहित एटले नकारेकरी रहित अने अपूर्व एटले जेनी आद्यमां अकार छे, एम कह्याथी स्तनतटनो अस्ततट शब्द थायछे ते योग्य छे

आ वृत्तमां, मृगना जेवां लोचनवाली स्त्रीना मांसथी भरेला अने उंचा रहेला जे बे स्तन छे, ते पुरुषने अति सुख करनारा लागेछे, अने पुरुषना मनमा कामवि कार उत्पन्न करेछे माटे ए शृंगार रस छे. अने एज स्तनोनुं विलोकन करनारा पुरु षोनो विवेकनाश थई जायछे, एटले कामविव्हल थयो थको तेने कांई सूजतू न थी तेथी एनो त्याग कर ए वैराग्य रस छे ॥ १७ ॥

शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥कंदर्पद्विपकुंभचारुणि कुचद्वंद्वे मृ
गाक्ष्या मया न्यस्तो हस्त इति प्रमोदमदिरामाद्यन्मना मा
स्मभू ॥ किलाजन्म यदर्जितं बहुविधामभ्यस्य कष्टक्रियां
हस्तोऽयं सुकृतस्य तस्य सहसाऽदायीति संचिंतये ॥१८॥

अर्थ ॥ हे सखा, कामरूप हस्तिना गंडस्थल जेवा मनोज्ञ जे मृगाक्षी स्त्रीना बे स्तन छे, तेनेविषे में हस्तस्थापन कर्या छे, एम जाणीने हर्षरूप मदिराएकरी मदो न्मत्त अंतःकरणवालो तु नही था केमके, नाना प्रकारनी तपोनुष्ठानादिरूप जे क ष्टसाध्य क्रिया छे, तेनो अभ्यास करीने जन्मेकरी संपादन करेला जे सुकृत एटले

आ वृत्तमा, स्त्रीना कानना कुंमल जोताज पुरुपने एवी अभिलाषा थायछे के ए कुमलेकरी शोभायमान स्त्री मने प्राप्त थाय तो सारुं ए शृंगार रस छे, अने अभिलाषाए करी स्त्रीना कुंडलोने जे पुरुष जुवे छे ते आवता भवमा नरकना पालन करनारा परमाधामी देवताओनी मार खायछे, माटे एनो त्याग करवो ए वैराग्य रस छे. ॥ १४ ॥

वसततिलकावृत्तम् ॥ सारं गलं यमरविदविलोचनाना
मालोक्य चेतसि मुद कलयंति मूढा ॥ हा निश्चितं रचि
तमुक्तिपुरप्रवेशाव्यापेधमर्गलममुं न विचारयंति ॥ १५ ॥

अर्थ -- हे मूढ, कमलना जेवा नेत्रोवाली स्त्रीओनो जे सार एटले श्रेष्ट, गल एटले कव अवलोकन करीने पुरुषो अंत करणमा हर्ष पामेछे. परंतु हा इति खेदे ! ए जे गल छे ते मुक्तिनगरीमा प्रवेश करवानेविषे प्रतिबंध करनार होवाथी अर्गल छे, एवो विचार करता नथी अहीं सार एटले अरसहित गल शब्द ते अर्गल शब्द थायछे ते योग्य छे

आ वृत्तमा, स्त्रीना कवनी श्रेष्टता कहीछे. जो स्त्रीनो कव सारो होय तो तेने जोताज पुरुष आनंदित थायछे, अर्थात् कामनी इच्छा उत्पन्न थायछे, ते अही शृंगार रस छे, अने एवा अभिलाषी पुरुषोनो मुक्तिरूप नगरीमा प्रवेश थतो नथी माटे तेनो त्याग करवो ए वैराग्य रस छे. ॥ १५ ॥

शिखरिणीवृत्तम् ॥ अलं प्राप्य स्पर्शं कुचकलशयो पंकजदृशा
परां प्रीतिं भ्रात· कलयसि सुधामग्नइव किम्॥अवस्कंदं धर्मक्षितिप
पकटके दातुमनसा प्रयुक्तं जानीया· कलुपवरटेन स्पशमिम्॥१६॥

अर्थ -- हे भ्रात, जेना कमलना पत्र जेवा नेत्र छे, एवी स्त्रीओना स्तनरूप जे कुंभ छे, तेने अलं एटले अत्यंत स्पर्श पामीने अमृतमा मग्न थई जनाराना जेवो जे तु ते शु उत्कृष्ट प्रीतिने पामेछे ? ए स्पर्श, धर्मरूप राजानी सैन्यने प्रहार करवानु छे जेना मनमा, एवा कलुप एटले पापरूप भीले मोकलेलो स्पश एटले जासूद छे, एम तु जाण· अही अलं स्पर्श जे छे ते स्पश छे, एम कह्यु रेफ अने लकार एकज होयछे, एवो नियम छे. माटे अलं एटले जेमां रेफ नथी एवो स्पर्श शब्द जे छे ते स्पश शब्द थायछे ते योग्य छे

आ वृत्तमां, स्त्रीना स्तननी उत्कृष्टता कहीछे, एटले पुरुषने स्त्रीना स्तननो स्पर्शी थताज अमृतनेविषे मग्न थई गएला पुरुषनी पठे आनंद उत्पन्न थायछे, ए शृंगार रस छे, अने ए स्तन जे छे ते धर्मनो नाश करवाने अर्थे पापनो एक ढगनो जास्त छे, माटे तेनो तु त्याग कर ए वैराग्य रस छे ॥ १६ ॥

वसततिलकावृत्तम् ॥ पीनोन्नतं स्तनतटं मृगलोचनाया आ
लोकसे नरहितं यदपूर्वमेतत् ॥ मोहांधकारनिकरक्षय
कारणस्य विद्यास्तदस्ततटमेव विवेकभानो ॥ १७ ॥

अर्थ.— मृगना जेवां लोचनवाली स्त्रीना जे पुष्ट अने उन्नत स्तनतट एटले बे स्तनो छे, ते नरहित एटले पुरुषने हितकारक जासेछे, अने अपूर्व एटले प्रतिक्षण पुरुषने चमत्कार उत्पन्न करे छे, तेनु तु अवलोकन करेछे, पण ते मोहरूप अंधकारनो क्षय करवानुं कारण विवेकरूप सूर्यना अस्ततट छे. अर्थात् ए थकी ज्ञानरूप सूर्यनो अस्त थायछे आ पद्यमा स्तनतट जे छे तेने तु अस्ततट जाण एम कह्यु, केमके, नरहित अने अपूर्व ए बे स्तनतटनां विशेषणो छे, तेओ माथी आवो अर्थ निकले छे — नरहित एटले नकारेकरी रहित अने अपूर्व एटले जेनी आद्यमां अकार छे, एम कर्याथी स्तनतटनो अस्ततट शब्द थायछे ते योग्य छे.

आ वृत्तमा, मृगना जेवां लोचनवाली स्त्रीना मासथी भरेला अने उंचा रहेला जे बे स्तन छे, ते पुरुषने अति सुख करनारा लागेछे, अने पुरुषना मनमा कामविकार उत्पन्न करेछे माटे ए शृंगार रस छे अने एज स्तनोलुं विलोकन करनारा पुरुषोनो विवेकनाश थई जायछे, एटले कामविह्वल थयो थको तेने काई सूजतूं नथी तेथी एनो त्याग कर ए वैराग्य रस छे. ॥ १७ ॥

शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥कंदर्पद्विपकुंभचारुणि कुचद्वंद्वे मृ
गाक्ष्या मया न्यस्तो हस्त इति प्रमोदमदिरामाद्यन्मना मा
स्मभूः ॥ किलाजन्म यदर्जितं बहुविधामभ्यस्य कष्टक्रियां
हस्तोऽयं सुकृतस्य तस्य सहसाऽदायीति संचितये॥१८॥

अर्थ ॥ हे सखा, कामरूप हस्तिना गंडस्थल जेवा मनोज्ञ जे मृगाक्षी स्त्रीना बे स्तन छे, तेनेविषे में हस्तस्थापन कर्यां छे, एम जाणीने हर्षरूप मदिराएकरी मदोन्मत्त अंत करणवालो तु नही था केमके, नाना प्रकारनी तपोनुष्ठानादिरूप जे कष्टसाध्य क्रिया छे, तेनो अभ्यास करीने जन्मेकरी संपादन करेला जे सुकृत एटले

पुरुष, तेने ते आडुं हाथ दीधुछे. जेमके, कोई बाहेरथी आवनारा पुरुषने हस्ताग्र दानसंज्ञाएकरी निषेध करे, तेम कुचद्वंद्वनेविषे हस्तप्रदानेकरीने सुरुतनो तें निषेध कर्योछे एवो जे तु ते मनमा विचार कर आ पद्यमा स्तन उपर हाथ राख्युं अने सुरुतने हाथ दीधुं एज चमत्कार छे

आ वृत्तमा, कामरूप हस्ती कह्योछे ने तेना गंडस्थलरूप स्त्रीना बे स्तन कह्याछे ते ज्यारे पुरुष हाथनेविषे ग्रहण करेछे त्यारे मदनातुर थयोथको महाहर्षने पामेछे, ए शृंगार रस छे, अने नाना प्रकारे कष्ट करीने संपादन करेला सुरुतनो निषेध करेछे, माटे तेनो त्यागकर ए वैराग्य रस छे ॥ १८ ॥

इंद्रवंशावृत्तम्॥ कंठोपकंठे लुलित विलावयेर्भुजं युवत्या भुजगं गराजितम् ॥ एतस्य संस्पर्शवशादपि क्षणाद शेषचैतन्यमुपैति संक्षयम् ॥ १९ ॥

अर्थ.—कंठनी पाशे वळेला गर एटले विषे करीने अजित एवा जे तरुण स्त्रीना भुज एटले बाहु, ते भुजग एटले सर्पज छे, एम तु जाण ए सर्पना स्पर्शमात्रेकरी संपूर्णचैतन्य क्षणमात्रमा नाशने पामेछे जेम सर्पना स्पर्शेकरी चैतन्यनो नाश थायछे, तेमज तरुण स्त्रीना भुजस्पर्शथी चैतन्यनाश थायछे भुजनो भुजग आवी रीते थायछे —भुज शब्दनुं विशेषण गराजित छे, तेनो अर्थ गकार अक्षरेकरी राजित एटले युक्तथयाथी भुजग शब्द थायछे, ते युक्त छे

आ वृत्तमा, कंठनी पाशे वाका वळेला स्त्रीना बे हाथ पुरुषने अडकतांज पुरुष अति मोहित थयोथको पोताना शरीरनी शुद्धि पण रहेती नथी ए शृंगार रस छे, अने ए बे स्त्रीना हाथ छे ते साक्षात सर्परूप छे, केमके, एनो स्पर्श थयाथी पुरुष बेशुद्ध थई जायछे, माटे तेनो तु त्याग कर ए वैराग्य रस छे ॥१९॥

उपजातिवृत्तम्॥ कंठावसक्ते कुपिते नवाहौ वर वह्निः प्राणहरे प्रमोदः ॥ विध्वस्तधर्मांतरजीविते नु स्त्रैणे न वाहौ विदुषा स युक्तः २०

अर्थ—बाह्य प्राणनो नाश करनारो क्रोधायमान जे नवाहौ एटले नवीन सर्प, ते पुरुषना गळामा संलग्न थाय ते सारु, परतु धर्मरूप अभ्यंतर जीवित नाश करनारा जे स्त्रीसबंधी वाहौ एटले भुज, ते पुरुषना गळामा संलग्न थयाथी जे हर्ष थायछे, ते पंडित पुरुषने योग्य नथी, केमके, सर्प, कंठसंलग्न छता बाह्य प्राणनो नाश करेछे, पण स्त्रीओना जे बाहु छे, ते कंठसंलग्न थयाथी अंतर प्राण

नो नाश करेछे , माटे स्त्रीए पोताना हाथथी करेलुं आलिंगन सर्प करता पण अधिक दुःख देनारुं छे. आ श्लोकमां नवाहौ शब्द बे वखत आव्योछे तेनो अर्थ जुदो छे

आ वृत्तमां, स्त्री ज्यारे पोतानी भुजावडे पुरुषने आलिंगन करेछे, त्यारे पुरुष पोताना प्राणनी पण परवा राखतो नथी, एवो कामातुर थायछे , ए शृंगाररसछे. अने सर्प गळामां वाळी प्राण लिये ते सारुं, पण स्त्रीनुं आलिंगन भलु नही; केमके, तेथी माठा कर्म बंधाईने अंतरात्मानो नाश थायछे माटे तेनो त्याग करवो उचित छे ए वैराग्यरस छे ॥ २० ॥

इंद्रवंशावृत्तम् ॥ कोयं विवेकस्तव यन्नतभ्रुवां दोपावगूढ प्रमदं विगाहसे ॥ यतः स्मरातंकपरीतचेतसां किं सुंदरासुंदरयोर्विवेचनं ॥२१॥

अर्थ — हे साधो, आ तारो कयो विवेक छे के, नम्र छे भ्रुकुटि जेओनी एवी स्त्रीना दोपावगूढ एटले भुजाए आलिंगित थयो थको तूं उत्कृष्ट मदने पामेछे ? केमके, कामरूप रोगेकरीने जेना अंत करण व्याप्त थयाछे, एवा पुरुषने सारा तथा नरसानुं विवेचन थतुं नथी जेम अपस्मारादि (मरी) रोगवाला पुरुषने शुभाशुभ ज्ञान होतु नथी, तेम तने पण थयुंछे. अथवा तारो विवेक दोपावगूढ एटले दोपेकरीने युक्त छे एवो अर्थ पण थायछे, माटे ए तारो केवो विवेक छे एम कहेवुं योग्यज छे.

आ वृत्तमां, पुरुषने स्त्रीए आलिगन कर्युंछतां, ते गमे तेवो विवेकी होय तो पण ते एक कोरे रहीने कामातुर थयोथको हर्षित थायछे , ए शृंगार रस छे, अने स्त्रीना आलिगनथी पुरुषना विवेकनो नाश थायछे, अने अंत करणमां अविवेक आवेछे, माटे तेनो तुं त्याग कर ए वैराग्य रस छे ॥ २१ ॥

वसंततिलकावृत्तम् ॥ हंहो विलोक्य परमंगदमंगनाना
मानंदमुद्वहसि किं मदनांधबुद्धे ॥ सत्यं विवेकनिधनैं
कनिमित्तमेतत् मेधाविनो हि परमं गदमुद्गृणंति ॥ २२ ॥

अर्थ.— हे कामेकरी अंधबुद्धिवाला पुरुष, स्त्रीओना परमंगद एटले उत्कृष्ट बाजूबंध जोईने शु आनंद करेछे ? पंडित लोको जे छे ते ए बाजूबंधने ज्ञाननोनाश करनारो परम एटले उत्कृष्ट गद एटले रोग कहेछे, ते सत्य छे. केमके, जेम रोग जीवना नाशनो हेतु छे, तेम स्त्रीनो बाहुभूपण पण ज्ञानना नाशनो हेतु छे ए पद्यमा परमगदं ए बे वखत आव्योछे, तेनो अर्थ जुदो जुदो छे, एवो यमकरूप चमत्कार छे.

आ वृत्तमां, स्त्रीना बाहुनुं भूषण जे बाजूबंध छे, ते पुरुषना मनने एवो मोहित करी लियेछे के पुरुष कामाध थयोथको महाहर्षने पामेछे ए शृंगार रस छे, अने ए जे बाजूबंध छे ते आनंद करनारो नथी, पण जीवनो नाश करनारो मोटो रोग छे, एम जाणीने तेनो तू त्याग कर ए वैराग्य रस छे ॥ २२ ॥

अय जनो वलयन्नरं विलोकते मृगीदृशामधिभुजवल्लि बालिश ॥
न बुध्यते सुकृतचमूं जिगीषत समुद्यतं बलन्नरमेनमेनस. ॥२३॥

अर्थ – अयं एटले आ प्रत्यक्ष मूर्ख जन जे छे, ते हरिणाक्षी स्त्रीओना भुज लतानेविषे वलयन्नर एटले जे ककणसमूह छे ते जुवेछे परतु ए वलय जे छे ते सुकृत जे शीलादिक, तेओने जीतवानी इच्छावालो एवो पापनो सावधानीभूत बलन्नर एटले सेनासमूह छे, एम जाण आ पद्यमा वलयन्नर जे छे, ते बलन्नर छे एम कह्युछे, बकार अने वकारनु ऐक्यछे वलयन्नर शब्दनुं विशेषण अय ए शब्द छे. एनो अर्थ अ रहित यं थायछे, तेथी वलयन्नर शब्द, बलन्नर थयो ते योग्य छे.

आ वृत्तमां, स्त्रीओना हाथमा जे ककण होयछे, तेने जोईने जे मूर्ख जन छे ते आनदने पामेछे, ए शृंगार रस छे, अने ए जे ककणनो समूह छे, ते शीलादिक नो नाश करनारो छे, माटे तेनो तु त्याग कर ए वैराग्य रस छे ॥ २३ ॥

वसंततिलकावृत्तम् ॥ ये दृक्पथे तव पतति नितंबिनीनां
कांता करा जडिमपल्लवनप्रवीणा ॥नो वेत्सि तान् किमपव
र्गपुरप्रयाणप्रत्यूहकारणतया करकानवश्यम् ॥ २४ ॥

अर्थ – हे जडताना प्रकटीकरण करवाविषे निपुण पुरुष, नितंबिनी स्त्रीओना कांत एटले मनोज्ञ कर एटले हाथ तारी दृष्टिरूप मार्गमा आवेछे, तेओने मोक्षरूप नगरी प्रते जता करक एटले करानी पेठे विघ्न करनारा केम जाणतो नथी ! बाहेर जता जो मार्गमा करानी वृष्टि थाय तो इच्छेला कार्यनी सिद्धि थाय नही, एवु शकुनशास्त्रमा कह्युछे आ पद्यमा स्त्रीना कर जे छे ते करकज एम कह्यु छे. ते आवी रीते –करशब्दनुं विशेषण कात शब्द छे, एनो अर्थ क छे जेना अंतनेविषे एवो थायछे, अर्थात् कर शब्दना अते ककार राखिये तो करक थाय ते योग्य छे

आ वृत्तमा, जडतानु प्रकटीकरण करवाविषे स्त्रीना हाथ निपुण छे, एटले स्त्रीना हाथवती पुरुषने स्पर्शादि थताज ते गमे तेवो धर्मादिकनेविषे सावध होय तो

पण दिग्मूढ एटले कामने वश थई जाय छे, ने तेमां ते पोताने परमानंद माने छे; ए शृंगार रस छे. अने स्त्रीना करस्पर्शादिकेकरी स्तब्ध बनी गएला पुरुषने मोक्षनो मार्ग जे धर्म, ते सूजतो नथी, माटे तेनो तुं त्याग कर ए वैराग्य रस छे.

उपजातिवृत्तम् ॥ नीव्याप्तमस्या हरिणेक्षणाया यंवीक्ष्य हारं हृदि हृ
र्पमेपि ॥ विवेकपंकेरुहकाननस्य तमेव नीहारमुदाहरंति ॥ २५ ॥

अर्थ --नीवी एटले वस्त्र, तेनी गांठ पर्यंत हरिणाक्षी स्त्रीनो जे लंबायमान हार, तेने जोईने तूं पोताना मनमां आनंदने पामेछे, ते हारने पंमितलोक, ज्ञानरूप कमलना वनने नीहार एटले हिम कहेछे. जेम हिम, कमलना वनने नाश करनारो छे, तेम स्त्रीना हृदय उपरनो जे हार ते ज्ञानने नाश करनारो छे आ पद्यमा हारने नीहार कह्योछे, ते आमः--हारशब्दनुं विशेषण नीव्याप्त छे. एनो अर्थ आ छे --नीशब्देकरी व्याप्त एटले जे युक्त हारशब्द ते नीहारशब्द थायछे ते योग्य छे.

आ वृत्तमां, स्त्रीना हृदयनो जे लांबो हार ते जोताज पुरुषने अति आनंद उत्पन्न थायछे, ए शृंगाररस छे, अने ते हार जे छे ते ज्ञानरूप कमलना वनने बालवामां हिम जेवो छे, एटले ते हारमा लुब्ध थएला पुरुषनुं ज्ञान नाश थई जाय छे, माटे तेनो तूं त्याग कर ए वैराग्य रस छे ॥ २५ ॥

वंशस्थवृत्तम् ॥ विलोक्य किं सुंदरमंगनोदरं करोपि मोहं मदनज्वरा
तुर॥नो ईक्षसे दुर्गतिपातसंभवं भवांतरे भाविनमंगनोदरम् ॥ २६ ॥

अर्थ --कामज्वरवडे पीडाने पामेला हे पुरुष, सुंदर अंगना एटले स्त्रीनुं उदर जोईने तूं का मोहने पामेछे? अंग एटले हे पुरुष, ए उदर नथी पण जन्मांतरने विषे अने नरकने विषे पडवाथी उत्पन्न थनारा जे दर एटले भय, तेज छे, एवो कां विचार करतो नथी? आ पद्यमा अंगनोदर ए पद बे वखत छे, तेओनो पद विभागेकरी भिन्न अर्थ छे, ते अहिं यमकरूप चमत्कार जाणवो.

आ वृत्तमां, स्त्रीनुं उदर जोई पुरुष मोहने पामीने कामज्वरनी पीडाने पामेछे ए शृंगाररसछे, अने ए उदर नथी पण जन्मांतर तथा नरकमां थनारो भय छे, एम जाणीने तेनो तूं त्याग कर ए वैराग्य रस छे. ॥ २६ ॥

वसंततिलकावृत्तम् ॥ स्फूर्जन्मनोभवभुजंगमपाशनाभी नाभी
कुरंगकदृशां दृशि यस्य लग्ना ॥ नाभीमयं जगदशेषमुदी
क्षतेऽसौ यो यत्र रज्यति स तन्मयमेव पश्येत् ॥ २७ ॥

अर्थ – देदीप्यमान कामरूप सर्पनुं पाशनाजी एटले रहेवानुं स्थान जे हरिणाक्षी स्त्रीओनी नाजी एटले अवयवविशेष, तेनेविषे जे पुरुषनी दृष्टि लग्न एटले लागेलीछे, ते पुरुष अनीमय एटले निर्नय अवलोकन करतो नथी, जे पुरुष जे ठेकाणे अनुरक्त थायछे ते पुरुष संपूर्ण तद्रूप थायछे आ पद्यमा दृष्टि संलग्न नाजी, नाजीमय सपूर्ण जुएछे ए शब्दश्लेष चमत्कारछे

आ वृत्तमा, स्त्रीनी जे नाजि छे ते कामने रहेवानु स्थान छे, एटले ते नाजिने जो तांज पुरुषने कामविकार उत्पन्न थायछे, ए शृंगार छे, अने जे पुरुष ए नाजिनेविषे आसक्त थायछे, ते अनेक जयने पामेछे, माटे एनो तु त्याग कर, ए वैराग्य छे॥२७॥

उपेन्द्रवज्रावृत्तम् ॥ जडोपयुक्तं जघनं मृगाक्ष्याः समीक्ष्य किं तोषपरं तनोषि ॥ अमुं विशुद्धाध्यवसायहंसप्रवासहेतुं घनमेव विद्या ॥२८॥

अर्थ – हे सखा, जड एटले मूर्ख, तेओने उपयुक्त एटले योग्य एवा हरिणाक्षी स्त्रीना जे जघन एटले जांघ, जोईने तु का आनद पामेछे ? ए जघन जे छे ते निर्मल चित्ताभिप्रायरूप हसना प्रवास ने कारण नूत घन एटले मेघ छे, एम तु जाण अर्थात् ज्यारे वर्षा पडेछे त्यारे हस पोतानु स्थान मूकीने मानससरोवर उपर जायछे एप्रसिद्ध छे तेम मनुष्यनी दृष्टिने विषे स्त्रीनी जघा आवेछे, त्यारे चित्तना निर्मल अभिप्राय मटी जायछे आ पद्यमा जडोपयुक्त जघन जे छे ते घन छे, एम कह्युं छे, डकार अने लकारनु सावर्ण्य होवाथी जडोपयुक्त शब्दनो जलोपयुक्त शब्द करवो एटले डकारना लोप सहित जे जघन ते घन थायछे, ते योग्यछे ॥ २८ ॥

आ वृत्तमा, स्त्रीनी जाघ मूर्ख कामी पुरुषोने अति प्रिय लागे छे ने ते तेमां लुब्ध होयछे ए शृंगार रस छे, अने निर्मल चित्तना अभिप्रायनो नाश करेछे, अर्थात् स्त्रीनी जघा निरख्याथी पुरुषनुं चित्त मलिन थायछे, माटे त्याग करवा योग्य छे ए वैराग्य रस छे ॥ २८ ॥

उपजातिवृत्तम् ॥ नितंबमुल्लासितत‍ापनोद दिदृक्षसे यत्कमलेक्षणानाम्॥सर्वात्मनाऽत्यतकटु विदित्वा त निबमेव त्यज दूरतोपि ॥ २९ ॥

अर्थ – सतापनी प्रेरणा करनारा कमलनयना स्त्रीना जे नितब, एटले कटिनो पाछलो जाग, जोवानी तु इछा करेछे, ते नितब, पत्र, पुष्प तथा फल इत्यादिना समूहेकरी अत्यत कडुवा झाडना जेवा छे, एम जाणीने दूर नाखी दे अर्था

तु निंबनुं झाड सर्व प्रकारे कडवु होयछे, तेम स्त्रीना नितंब सर्व प्रकारे ग्लानि करवा योग्य छे, तेनो तु त्याग कर. आ पद्यमां उल्लसित तापनो देनार जे नितंब ते निंबवृक्षज छे, एम कह्युं, ते आम –उल्लसित एटले विकसित छे तकारनो अप नोद एटले नाश जेने विषे, एवो नितब शब्द निंबशब्द थायछे ते योग्य छे

आ वृत्तमा, कमलना जेवा नेत्रोवाली स्त्रीना जे बे नितंब छे, ते संतापनी प्रेरणा करनाराछे, एटले स्त्रीनी कटिनो पाछलो भाग जोयाथी अत्यंत मदन विकार उत्पन्न थायछे, ते इच्छा पूर्ण न थयाथी तेना मनमां संताप थायछे, एवो ते नितंबोनो जे प्रभाव छे, ते शृंगार रस छे. अने स्त्रीओना नितंब निंबडाना झाडजेवा कडवा छे, माटे एनो तु त्याग कर, ए वैराग्य रस छे. ॥ २९ ॥

शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम्॥नूनं नूपुरमेतदायतदृशो रागादि
विद्वेषिणां क्रीडार्थं पुरमित्यवेत्य न दृशाप्यालोकनीयं क्व
चित्॥ येनास्मिन् मुखमात्रचंगिमगुणैराकृष्य तैरुल्बणै
र्बद्धस्य प्रसभं चिरादपि सखे मुक्तिर्भवित्री न ते ॥ ३० ॥

अर्थ.– हे सखा. नूनं एटले निश्चयेकरी विशालनेत्रोवाली स्त्रीओनां जे आ नूपुर एटले चरणभूषण, रागादिशत्रुने क्रीडा करवानुं पुर एटले नगर छे, एम जाणीने क्यारे पण नजरेकरी जोईश नही जेने पोतानु सारुं थवानी इच्छा होय, तेणे क्यारे पण शत्रुनु नगर जोवुं नही केमके, ए नगर प्रसिद्ध, उदार, तथा मुख्यत्वे श्रेष्ठ गुणे आकर्षण करी बलात्कारेकरी तने बांधीलेशे, तेथी फरी तू छूटी शकनार नथी अर्थात् ते नूपुरमा जो तु आसक्त थशे तो, फसाई पडशे, आ पद्यमा स्त्रीओना नूपुरने शत्रुनुं नगर कह्युंछे, ते आम –नूपुरशब्दनुं विशेषण जे नून छे,तेनो अर्थ न शब्देकरि ऊन एटले जे रहित छे, एवु नूपुर छे,एम जाणवुं.

आ वृत्तमां' स्त्रीओना पगना नूपुर पुरुषना मननुं हरण करी लिएछे ए शृंगाररस छे; अने ते नूपुर शत्रुनुं नगर छे एम जाणीने तेनो त्याग करवो, ए वैराग्य रस छे. ३०

उपजाति वृत्तम्॥यास्त्रीतिनाम्ना बिभृते शमादौ शस्त्री प्रबुद्धैरवबुध्यतां सा ॥ एनां पुरस्कृत्य जगत्यनंगभटो यतः पुण्यभटं भिनत्ति ॥ ३१ ॥

अर्थ –जे स्त्री एवु नाम तु अंत करणमा धारण करेछे, ते शमादौ एटले उपशमादि धर्म कर्मने विषे शस्त्री एटले एक आयुधविशेष छे, एम सुजाण पुरुषोए जा

एवुं आ संसारनेविषे कामरूप योद्धो, ए स्त्रीरूप शस्त्रीने आगळ करीने धर्मरूपयोद्धानुं छेदन करेछे जेम सग्रामनेविषे एक मोटो योद्धो, पोताना शस्त्रेकरीने प्रतियोद्धानु छेदन करेछे, तेम कामरूप योद्धो स्त्रीरूप शस्त्रीए करी धर्मरुप योद्धानुं छेदन करेछे आ पद्यमा स्त्रीने शस्त्री कहीछे, ते आम –या स्त्री शमादौ बिभृते, एटले जे स्त्री प्रथम शकार धारेछे, अर्थात् स्त्रीशब्दनी आद्ये शकार आव्याथी शस्त्री शब्द थायछे ते योग्य छे

आ वृत्तमा, प्रसिद्ध शृंगाररस नथी, परतु स्त्रीनी निर्भर्त्सना द्वारा वैराग्यांतरगत शृंगारनी पण सूचना करीछे ॥ ३१ ॥

वसततिलकावृत्तम् ॥ येयं वधूरवसिता हृदये प्रमोदसंपा
दनव्यतिकरैकनिबंधनं ते ॥ सा दुर्गदुर्गतिपथेन जगन्नि
नीपोर्धूरेव मन्मथरथस्य विभावनीया ॥ ३२ ॥

अर्थ – हे पुरुष, ताराहृदयनेविषे हर्षसमूह उत्पादन करवानुं कारण जे वधू एटले स्त्री, अवसिता एटले आवीने रहीछे, ते स्त्रीने तु जे हृदयने हर्ष उत्पन्न करनारी मानेछे, ते वधू, अत्यंत दुर्गम नरकना मार्गेकरी लेई जवाविषे इच्छा करनारा कामरथनी धू एटले धुरी छे, एम तु जाण अर्थात् ए स्त्री नथी, किंतु नरकना मार्गेकरी ससारनेविषे लईजनारो जे कामरथ, तेनी धुरी छे. आ पद्यमा वधू कामरथनी धुरी छे, एम कह्यु, मूलमा वधू शब्दनुं विशेषण अवसिता शब्द छे, एनो अर्थ वकारेकरि सित एटले रहित थयाथी वधू शब्दनो धू शब्द थायछे ते योग्य छे

आ वृत्तमा, स्त्रीने हर्षसमूह उत्पादन करनारी, अने पुरुषना मननेविषे रमण करनारी कहीछे, ए शृंगार रस छे, अने ए वधू नथी पण कामदेवना रथनी धुरी छे, एम जाणीने तु त्याग कर, ए वैराग्य रस छे. ॥ ३२ ॥

मंदाक्रांतावृत्तम् ॥ प्रीतिं तन्वत्यनलसदृशो यास्तरुण्य
स्तवैता देहद्युत्या कनकनिभया द्योतिताशा विवेकिन् ॥
सत्य तासामनलसदृशां सयमारामराज्या मान्यू पा
र्श्वेष्यसि यदि शिवावाप्तये बद्धबुद्धि ॥ ३३ ॥

अर्थ – हे विवेकवान् पुरुष, जेनी अनलस एटले आलस्य रहित दृष्टि छे, अने

जेनी सुवर्णना जेवी शरीरनी कांतीए दिशाओ प्रकाशित करीछे, एवी तरुण स्त्रीओ तने हर्ष उत्पन्न करेछे, ते अनलसदृश एटले अग्निना जेवी स्त्रीओनी सत्ता संयम एटले चारित्ररूप वनपरपराविषे छे, एम जाण अर्थात् जेम अग्निसंपर्केंकरी वन दग्ध थायछे, तेम स्त्रीसंपर्केंकरी चारित्र दग्ध थायछे जो मोक्षप्राप्तिनी बुद्धि तने थई होय, तो स्त्रीओनी समीप पण जतो नही, आ पद्यमा अनलसदृश पद बे वार आव्योछे, तेनो अर्थ नोखो नोखो छे, ए चमत्कार जाणवो

आ वृत्तमां, चचलदृष्टिवाली स्त्रीना शरीरनो वर्ण सोना जेवो होय, तो पुरुषना मनमां अति आनंद उत्पन्न करेछे. ए शृंगार रस छे, अने स्त्री अग्नि जेवी छे, ते संयमादिक वनपरपराने बाली नस्म करनारी छे, माटे एनो तु त्याग कर, ए वैराग्य रस छे ॥ ३३ ॥

मालिनीवृत्तम ॥ क इह विषयनोगं पुण्यकर्मायशून्यं स्पृहयति विषनोग नावयेस्तत्वतस्त्वम् ॥ स्मरति न करणीयं मूर्छितो येन जंतु: पतति कुगतिगर्ते नेक्षते मोक्षमार्गम् ॥ ३४ ॥

अर्थ.– आ संसारनेविषे कयो पुरुष पुण्यकर्मनो आय एटले लान, एणेकरी शून्य एटले रहित जे विषय नोग एटले पांच इंद्रियना सुखनी इछा करेछे, केमके ए जे विषयनोग छे, ते विषनोग एटले विषनक्षण छे, जे विषयनोगना योगे मोहने पामेलो प्राणी, स्मरण करवायोग्य ते करतो नथी, तेथी नरकरूप खाडामां पडेछे ते फरी मोक्षमार्गने पामतो नथी, जेम विष खानारा पुरुषने स्मरणादि रहेतां नथी, तेम विषयोपनोग करनाराने पण स्मरणादिक रहेता नथी. आ पद्यमां विषय नोग जे छे ते विषनोग छे, एम कह्यु, ते आम – विषयोपनोगी पदनु यशून्यं ए विशेषण छे, एनो अर्थ यकारेकरी शून्य एटले रहित थायछे, एम यकाररहित जे विषयनोग ते विषनोग छे, ते योग्य छे.

आ वृत्तमा, पाचे विषयोनो तिरस्कार कर्यो छे, तेओनु मूल कारण स्त्री विषय सुख शास्त्रोमा कह्युछे, ते आश्लोकमा यद्यपि प्रगट कह्यु नथी तथापि अर्थात् सिद्ध थायछे, तेथी ए शृंगार रस छे, अने विषयनोगने विषनोग कह्याछे ए वैराग्य रस छे ॥ ३४ ॥

उपजातिवृत्तम् ॥ सखे सुखं वैषयिकं यदेतदानासते तन्नरकांतमंत: ॥ सत्य तडुत्सर्पदघप्रवंधनिवंधनत्वान्नरकातमेव ॥ ३५ ॥

अर्थ — हे सखा, आ जे विषयसुख छे ते तारा अंत करणमा कांत एटले मनोहर लागेछे, ते सत्य छे, मिथ्या नथी, परतु विस्तारने पामनारी जे पाप परपरा, तेनु ए कारण छे, माटे जेनो अत नरक छे, एटले नरकने देनारा छे, एम जाण आ पद्यमां प्रथमना नर कात ए बे शब्द भिन्न छे, अने पाछलना नरकांत ए बे पद एकसरखा छे, ए काव्यचमत्कार जाणवो

आ वृत्तमा, विषयसुख जे छे, ते पुरुषना मनने घणा सारा लागेछे, एम कह्यु छे, ते शृंगार रस छे , अने ए विषयसुखथी पापपरपरा विस्तारने पामेछे, माटे त्याग करवा योग्य छे ए वैराग्य रस छे ॥ ३५ ॥

शिखरिणीवृत्तम् ॥ स्मरक्रीडावाप्यां वदनकमले पद्मलदृशा दृढाऽसक्तिर्येपामधरमधुपानं विदधताम् ॥ अदूरस्था वधव्यसनघटना क्लेशमहती विदग्धानां तेपामिह मधुकराणामिव नृणाम् ॥ ३६ ॥

अर्थ — कामनी क्रीडारूप जे वापी एटले कुवो छे, तेनेविषे स्त्रीना अधरोष्ठरूप मधुपुष्परस पान करणारा जे पुरुष छे, जेओनी स्त्रीना मुखकमलनेविषे दृढ आसक्ति छे, एवा मोह पामनारा जे पुरुष छे, तेओने आ स्त्रीना मुख कमलनेविषे भमरानी पठे क्लेशोकरी ङ्ड सह एवा बंधनोए व्यसन घटना एटले कष्टरचना समीपवर्त्तिनी छे , जेम मधुपान करनारा भमराओनी कमलोनेविषे दृढाशक्ति बंधने करी कष्ट देनारी छे, तेम अधररसपान करनारा पुरुषोने स्त्रीना मुख कमलनेविषे दृढ जे आसक्ति ते प्रेमबंधनेकरी कष्ट देनारी छे

आ वृत्तमा, स्त्रीनो अधरामृत भमराओनी पठे पुरुषोने अति प्रेम उत्पन्न करनारो छे, ए शृंगार रस छे, अने तेथी ते भमरानी पठे बंधनने पामेछे, माटे त्याग करवा योग्य छे, ए वैराग्य रस छे ॥ ३६ ॥

सखे संतोपांभ पिव चपलतामुत्सृज निजा शमारामे कामं विरचय रुचि चित्तहरिण ॥ हरंत्येता तृष्णा न युवतिनितंबस्थलभुवो विमुक्ता नीरागैर्विपमशरसंपातविपमा ॥ ३७ ॥

अर्थ — हे सखा, आ चित्त हरिणना जेवो छे, केमके, जेम हरिण अतिचचल होयछे, तेम चित्त पण महाचचल होयछे , माटे मृग अने चित्तनुं सादृश्यत्व कह्युछे , एवी चपलताने त्याग करीने सतोपरूप जलनुं पान कर , अने अत्यत शमरूप वननी प्रीति कर. आ जे युवती एटले तरुण स्त्रीओ छे, तेओना नितंब एटले

जे केडनी पाछलनो भाग छे, ते स्थलभूमिना जेवो छे, त्यां तारी तृषा मटनार न थी. ए स्थलभूमि केवी छे, नीर एटले पाणी अने अग एटले वृक्ष, एणेकरी रहि त छे. जल अथवा वृक्षनी छायावडे तृषा निवारण थायछे, ए बन्नेमांनो कोई ए स्थलभूमिने विषे नथी. अने ए भूमिनेविषे व्याध्यादिक दुष्ट पुरुष बाण नाखेछे, ते बाणथी घणो संताप पामीने तारुं मरण थशे; पण तृषा मटवानी नथी. व ली ते नितंब भूमि केवी छे? के रागरहित पुरुषोए जेनो त्याग कर्योछे, अने वि षमशर जे कामदेव, तेना बाणना संपातना योगे विह्वमणी छे. माटे युवतीना नितंबनी इछा तु नही कर. एवो चित्त प्रत्ये उपदेश छे.

आ वृत्तमा, स्त्रीना नितंबनुं वर्णन कर्युं छे, ए शृंगाररस छे; अने ते स्थलभूमि नी पठे चित्तरूप भ्रमरने पीडा करेछे, ए वैराग्यरस छे. ॥ ३१ ॥

शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥ चेतश्चापलमाकलय्य कुटिलाका
रां कुरंगीदृशो दृष्ट्वा कुंतलराजिमंजनघनश्यामां किमुत्ता
म्यसि ॥ धर्मध्यानमहानिधानमधुना स्वीकर्त्तुकामस्य मे
प्रत्यूहार्थमुपस्थितेयमुरगश्रेणीति संचितये ॥ ३८ ॥

अर्थः– हे चित्त, कुटिल एटले वक्र आकारवाला मेघना जेवा काला अथवा काजलना जेवा अत्यंत श्यामवर्ण, जे हरिणाक्षी स्त्रीना केशनी पंक्ति छे. तेने जोई ने तु शासारु व्याकुल थायछे? ए स्त्रीना केशनी पंक्ति जे छे ते धर्मचितनरूप म हानिधान स्वीकार करनारो तु तेने सांप्रत कालनेविषे विघ्न करवासारू तैयार थई छे. एवी उरगश्रेणि एटले सर्पपंक्ति छे, एम जाण. कोई कार्य करवासारू उद्युक्त पुरुषने सर्पदर्शन निषिद्ध छे, अने निधान ग्रहणना समये तो अत्यंत अनिष्ट छे माटे स्त्रीकेशपंक्तिरूप सर्पिणीनुं दर्शन तु नही कर. केमके, एम कर्याथी धर्म चितनरूप निधानना ग्रहण समये तने विघ्न आवशे नही.

आ वृत्तमां, स्त्रीना केशनी पंक्तिने सर्पपंक्ति कहीछे. अने तेनी श्यामताने मे घनी तथा काजलनी उपमा दीधीछे, ए शृंगाररस छे, अने ते सर्पनी पठे विघ्नकारी होवाथी सर्वथा त्याग करवा योग्य छे, ए वैराग्यरस छे. ॥ ३८ ॥

यातुं यद्यनुरुच्यते शिवपुरी रामानितंबस्थली मुंचेर्दूरमिमामनं
गकलभक्रीडाविहारोचिताम् ॥ नोचेद्यौवनचंडवातविततव्यामो
हधूलीकणक्षाम्यद्दष्टिरदृष्टशाश्वतपथः प्राप्तोसि जन्माटवीम् ॥३९॥

आ हार शोभे छे, ते हार नथी, किंतु नाभिरूप रंध्रनेविषे रहेनारो जे कामरूप सर्प, तेणे मूकेलुं आ मनोहर निर्मोकपट्ट एटले कंचुक दीठामा आवेछे, तेज आ ठेकाणुं मूकीने बीजे ठेकाणे नागी जवानी सूचना करेछे सर्पनु कंचुक भयनो हेतु छे, माटे नाभीरूप जे कामरूप सर्पने रहेवानुं राफडु, अने आ हाररूप सर्पनुं कंचुक छे, एम जाणीने नाशी जवु योग्य छे

आ वृत्तमां, स्त्रीओना कंठना हारनी शोभा कहीछे, तथा नाभिनु वर्णन करेलु छे, ए शृंगाररस छे, अने ए बन्ने दुःखना साधन होवाथी त्याग करवा योग्य छे ए वैराग्यरस छे ॥ ४३ ॥

वसततिलका वृत्तम् ॥ यः कामकामलविलुप्तविवेकचक्षु
स्वर्गापवर्गपुरमार्गमवीक्षमाणः ॥ ज्ञानांजनं प्रति निरा
दरतामुपैति भ्रातः पतिष्यति स भीमभवांधकूपे ॥ ४४ ॥

अर्थ — जे पुरुषना विवेकरूप चक्षु कामरूप कामल एटले नेत्र रोगेकरी ग्रस्त छे, ते स्वर्ग अने अपवर्ग एटले मोक्षरूप नगरनो मार्ग जोई शकतो नथी, एमछता जे पुरुष ज्ञानरूप अंजननो आदर करतो नथी, ते पुरुष भयंकर संसाररूप अंधकूपमा पडेछे, जेम कमलाना रोगेकरीने जेना नेत्रो ग्रस्त थयला होय, ते जो आंखोनेविषे अंजन नाखवानो अनादर करे तो अंध कूपमा पडी जाय, तेम ज्ञानांजननो जे निरादर करेछे, ते आ संसाररूप आंधला कूवामा पडेछे

आ वृत्तमा, कामने नेत्र रोगना जेवो कह्योछे, एटले जेने कामलो प्रमुख नेत्ररोग थायछे, ते कांई जोई शकतो नथी, तेम कामरूप नेत्र रोगना योगे पुरुष निर्लज्ज थायछे, एवी कामनी महिमा छे, ते शृंगाररस छे, अने कामांध पुरुष आ संसाररूप आंधला कूवामा पडेछे, माटे त्याग करवायोग्य छे, ए वैराग्यरस छे ॥४४॥

शिखरिणी वृत्तम् ॥ भवारण्यं मुक्त्वा यदि जिगमिषुर्मुक्तिनगरीं त
दानीं माकार्षीर्विषयविषवृक्षेषु वसतिम् ॥ यतश्छायाप्येषां प्रथय
ति महामोहमचिरादयं जंतुर्यस्मात्पदमपि न गंतुं प्रभवति ॥४५॥

अर्थ — हे पुरुष, जो तु भवाटवीने मूकीने मुक्ति नगरीप्रते जावानी इच्छा करतो हो, तो विषयरूप विषवृक्षनेविषे वसति नही कर केमके, आ वृक्षनी छाया पण महामोहना विस्तारने पमाडेछे ए विषयवृक्षनी छायानो स्पर्श पण मो

ह्कारक छे. ए कारण माटे आ प्राणी एक पगलुं पण चालवाने समर्थ थतो नथी. जेम वननेविषे विषवृक्षनी नीचे बेठेलो पुरुष, मत्त थयेलो होयछे, ते वखते ते वन मूकीने नगरमा जवानी इछा करे तो एक पगलुं, पण नाखी शकातु नथी. माटे मोक्षनी इछा करनारा पुरुषे विषयसेवन करवानी बुद्धि करवी नही.

आ वृत्तमां, विषयना सेवन थकी पुरुष कामांध थई जाय छे, एम कह्युंछे ते शृंगाररस छे, अने ते सर्वथा त्याग करवा योग्य छे एम कह्युछे ते वैराग्यरस छे.

उपजातिवृत्तम्॥सोमप्रभाचार्यमभा च यन्न पुंसां तमःपंकमपाकरोति॥
तदप्यमुष्मिन्नुपदेशलेशे निशम्यमानेऽनिशमेति नाशम् ॥ ४६ ॥

इति श्रीशतार्थवृत्तिकारश्रीसोमप्रभाचार्यविरचिता
शृंगारवैराग्यतरंगिणी समाप्ता.

अर्थ.—सोमप्रभा एटलेचंद्रकांति, अने अर्यमभा एटले सूर्यकांति जे मनुष्योनो तम पंक एटले अज्ञानांधकारसमूह दूर करता नथी, ते पण आ अल्प उपदेश श्रवण कर्यो छता नाशने पामेछे, अर्थात् चंद्रकांति तथा सूर्यकांति अज्ञानरूप अंधकारनो नाश करवाने समर्थ थती नथी, अने आ उपदेश अंतरनो अंधकार मटाडवाने समर्थ छे. एथी आ उपदेश अति उत्कृष्ट छे आ पद्यमा ग्रंथकर्त्ताए पोतानुं सोमप्रभाचार्य एवुं नाम चातुर्य करी गोपन करेलुंछे, ते ज्ञाताओए जाणी लेवु. ॥ ४६ ॥

आ ग्रंथनुं नाम ग्रंथकर्त्ताए शृंगारवैराग्यतरंगिणी राख्युंछे, एनोअर्थ शृंगार अने वैराग्यरूप तरंगोवाली नदी, एवो थायछे ते नदीना बन्ने प्रकार नंदलाल नामना टीकाकर्त्ताए स्पष्टरीते दर्शाव्या छे, तेनोज भाव लईने आ अमे अर्थ कर्यो छे. ग्रंथना अंतमां टीकाकर्त्ताए त्रण श्लोक राख्या छे ते आप्रमाणे.—

संवत्सरद्विपमुनींडुमितस्य मासे मार्गे त्रयोदशमिते दिवसे भृगौ च॥ स्वल्पा तरी विरचिता सुखबोधिकाख्या श्लेषौघयुक्तरततरंगिणिकासुशास्त्रे ॥ १ ॥ आगारानाम्नि नगरे नंदलालेन धीमता ॥ दानविशालशिष्यानुरोधेन कृपया गुरो. ॥२॥ युग्मम् ॥ सोमप्रभाचार्यकृतिं सुदुर्गमां विवृण्वता स्वल्पधिया मयाऽत्र यत् ॥ न्यूनाधिकोटंकनमल्पबुद्धितः कृतं विशोध्यं कृतिभिः कृपालुभिः ॥ ३ ॥

इति श्रीशृंगारवैराग्यतरंगिणीभाषांतर समाप्तं

॥ अथ श्रीवीरस्तवनप्रारंभ· ॥

स्व श्रेयससरसीरुह, सूरं श्रीवीर ऋषिवर सेव ॥ सविशेषदर्परसवश, सुरासुर व्यूहसेव्याऽन्हिं ॥ १ ॥ अश्वोवलीयससर ,शोपसदस्राणुराश्रय· सहसां ॥ संसार लालसां वो, चूयाल्लवशो वशी वीर· ॥ २ ॥ विपयाशीविपवीश्वर, हिंसारस सरसवा रिरुहशिशिर ॥ विश्वस्य रोपशावैर, संहाररवे शिवाय स्या ॥-३ ॥ आशंसव· शि वश्री,विलासलीला विहाय सुरयोषा ॥ यं शिश्रियु स्वरीशा श्रीवीर श्रेयसेऽसौ व ॥ ४ ॥ दरहासहंसशशिहा,रहारियशसो शिवैपिसंश्रययो ॥ ईहे वरिवस्यायै, वीरेशस्यान्हिसारसयो ॥ ५ ॥ शीलसरोवरलहरी, विहारशिशिरा असंवरीयो व ॥ वीरस्य व्याहारा, न्हियासुरशरीरशौर्यहरा ॥ ६ ॥ उरुसंशयशैलस्वरु, ररिहा वीराऽह यो वरवृपास ॥ अवसेयाह्नौत्य वा, वर्षारुहवारिवाहरव ॥ ७ ॥ सरलाशया सुशी ला, रिरसव· श्रायसश्रिया सह ये ॥ येषां श्रीवीरेश्वर,सेवारस एव हर्षाय ॥ ८ ॥ वीर शिवालयसरसी, वरलावर सर्वविषयविह्नास्य॥ सवरसारसवासर, सर्वेषां लोलवीप्यहृ षं ॥ ए ॥ शीलश्रियो विवाहावसरे विश्वाश्रयो रसावलये ॥ आवर्ष वसुवर्षी, वि शा विशालैरयैरासी ॥ १० ॥ आशसे सहसाहं, वासवसेवार्ह शिवरसाल हरे ॥ रु हविश्रसावसाय, व्यवसायायासविरहवर ॥ ११ ॥ अहरुपयोविशरारु,श्रीसर्वस्व हि शशिसरोरुहयो ॥ अगरारुस्वास्यश्री,लास्यविलासैर्विलोलयसि ॥ १२ ॥ संसा रसलिलराशे , शोपे ऋपिरौर्वशेयश्व वीर ॥ सर्वाशालासियशो,राशिरहिंसारह शा ला ॥ १३ ॥ उरसिशयालु श्रेय ,श्रिया असवरसरोरुहशीव ॥ रायाल्लयं शि वावह, रसाविहार स्वसेवायां ॥ १४ ॥ सदानिक ॥ अविपह्यशिर शूलं, विश्व लिहो विपयवैरिवारस्य ॥ व्याहरसि वृपरहस्य, शस्याय शरीरिविसराय ॥ १५ ॥ शैश व एव सुसार , स्वरक्षार्यशिरोविलोलसेव्यान्हे ॥ सहरसि हेलयाहं , सिंहइव वशेश्वर सहसा ॥ १६ ॥ शिशिरांशुशिशिरलेश्यं,रार्यव्यवहारलालसैररुषै ॥ सश्रीयसे ऋ षीशै,रीर्ष्याविह्नीलवासिवरै ॥ १७ ॥ लालसय स्वसेवारसशीले विशि शिवावलौ वी र ॥ अविरलविषयहलाहल, लहरीसंहारसुशिरीष ॥ १८ ॥ अवसी वशयसि सौवै, र्व्याहाररसै सुरासुराहिविशा ॥ यै सह रसालयाऽहा,सि हारहूरारसानरस ॥ १९॥ रैहारिशरीरश्री , सुरासुरावार्यवीर्यशाली य· ॥ संवरवैरियश शशि, राहुरशेषश्रियां वास· ॥ २० ॥ वरिवस्य सूरिवरै ,विंहाय आशारसाविहारियशा ॥ अंहोऽसुरवश

हरि, सुरशैलशिलाविशालोराः ॥ २१ ॥ शुश्रूषुशिष्यविसर,श्रव.सुहृर्परसवर्षिसंरा वः ॥ अविलयवार्यैश्वर्य, श्रीयोपाश्लेषरसविवश ॥२२॥ सैपोऽसहायवीर , शिवा रिवाराहवेष्वसुसहेतु ॥ विश्वस्य सुरोर्वीरुह, आयुष्य श्रेयसां वीर ॥ २३ ॥ संसारो रुविपालय, वारिविशोषोर्विहव्यवाहो वः ॥ अव्याच्छीलाऽलससुर, विलयाद्वावाऽविषय शील ॥ २४ ॥ पंचभि. कुलकं ॥ अन्हियोऽलसस्य शिष्या,वयवलवस्याऽयविरहवि रसस्य ॥ श्रीवीर वीरयरया,छेश्या अश्रेयसीरस्य ॥ २५ ॥ य. पंचवर्गपरिहारमनो ज्ञमेतच्चेतश्चमत्कृतिकर गुणकीर्तनं ते ॥ जिव्हाग्रवर्ति वितनोति विपश्चितानां श्री वीरभाग्ययुजि न प्रभवति तस्मिन् ॥ २६ ॥ इति पंचवर्गपरिहारेण श्रीजिनप्रभसू रिकृतश्रीवीरस्तवनं समाप्तम् ॥

॥ अथ श्रीगौतमस्तवनं ॥

श्रीमंतं मगधेषु गौर्वर इति ग्रामोभिरामोऽस्ति यस्तत्रोत्पन्नमसन्नचित्तमनिशं श्री वीरसेवाविधौ ॥ ज्योतिःसंश्रयगौतमान्वयवियत्प्रद्योतनद्योमणिं तापोत्तीर्णसुव र्णवर्णवपुषं भक्त्येद्रभूतिं स्तुवे ॥ १ ॥ के नाम नाभगुरुभाग्यसृष्ट्यै दृष्ट्यै सुराणां स्पृहयंति संतः ॥ निमेषविघ्नोज्झितमाननेंदुज्योत्स्ना मनोहृत्य तवापिबद्या ॥ २ ॥ निर्जित्य नूनं निजरूपलक्ष्म्यात् णीकृत. पंचशरस्त्वया स. ॥ इत्थं न चेत्तर्हि कुतस्त्रिने त्रनेत्रानलस्तं सहसा ददाह ॥३॥ पीत्वा गिरं ते गलितामृतेच्छा सुराश्चिर चक्रुरभो ज्यमिंदुं ॥ सुधाह्रदे,तत्र मुनीश मन्ये लक्ष्मछलात् शैवलमीक्ष्यतेऽत ॥ ४ ॥ सौ भाग्यभग्यापि समाविदाने प्रत्येति लोक. कथमेतदज्ञ ॥ यत्त्वां समग्राअपि लब्धिकां ता समालिलिंगु समकालमेव ॥ ५ ॥ त्वत्पादपीठे विलुठत्यमर्त्यास्तिरोहभूत्या किल कल्पवृक्षाः ॥ तैरप्यमाहत तवोपमानोपमेयभाव कथमस्तु वस्तु ॥ ६ ॥ पदो नखाली तव रोहिणीयं मुदे न कस्याद्भुतकृच्चरित्रा ॥ वदारुपुसां वभेदुरत.प्रविष्टवि वोपि शिवाय यस्या ॥ ७ ॥ यत्केवलज्ञानमविद्यमानमथात्मनि स्वातिपदामदा स्त्वं ॥ लोकोत्तरत्वे ननु तावकाना दिङ्मात्रमेतच्चरिताद्भुतानां ॥ ८ ॥ भवद्गुणानां स्तुतयो गुणज्ञैर्विधीयमाना विबुधाधिपाद्यैः ॥ स्तुत्यांतरस्तोत्रकथागणस्य समाप्त ये वृत्करणीभवति ॥ ९ ॥ न रागवान्नो भजसेतिचार नालंबसे वक्रगतिं कदाचित् ॥ पुरस्कृते नोपि घनाघनाशी तथापि पृथ्वीतनयोसि रूढः ॥ १० ॥ प्रभो महावीर मुपास्य सम्यक् त्वयार्जितं यत्त्रकलारहस्यं ॥ गृहे यतिलेप्यनिरूपरत्नत्रयीजुषा कीर्तिरतानि तेन ॥ ११ ॥ त्वद्वाणिमाधुर्यजिता पलाय्य सितोपला काचघटीं विवे

श-॥ तत्रापि नीतिं दधती शलाकाव्याजेन जयाद् तृणं तु वक्रे॥ १२ ॥ श्रीवीरसेया रसलालसत्वात् तद्बाधिनीं केवलबोधलक्ष्मीं ॥ अप्यायतामादरिणीं वरीतुं तृणाय मत्वा त्वमिव त्वमस्था ॥ १३ ॥ अपोढपंके कविनिर्निपेव्ये निरस्तताये बहु जगजाले ॥ विनो नवद्वाड्मुखगागपूरे ध्रुर्वादिपूगास्तृणवत्तरति ॥ १४ ॥ राकामये दिग्वलये समतात् यश.शशांकेन कृते भुव ते ॥ कुहूध्वनि केवलमेव कव्देशं पिकाना शरणीचकार ॥ १५ ॥ जगत्रयोज्ञासि यशस्तवेतत् क स्पर्द्धता सार्द्धमनेन च ह ॥ यस्यापरार्द्धेपि तृणस्य नैव प्रनाप्रनावो लजतेऽवकाशं ॥ १६ ॥ छत्रैंद्रुपश्चादिषु रूढिमात्रं त्वन्नाम्नि तु श्रीर्वसतीति मुष्टि ॥ कुतोन्यथा तत्क्रपदीक्षिताना पुर पुरो नृत्यति नित्यमृद्धि ॥ १७ ॥ वसुनूतिसुतोपि कौतुक वसुनूतेर्जनक प्रणेमुषां ॥ जगवन्ननवोपि वर्तसे कथमंगीरुतसर्वमगल ॥ १८ ॥ नाथ करोषि वृपमीश गणाधिपोपि धत्से सदा स यमपाशमपि प्रचेता ॥ श्रीदोपि स्त्रितयमालयवासकेलिस्त्व पावकोपि हरसे हरहेतिपात ॥ १९ ॥ यत्तपत्यपि कलौ जिनप्रनाचार्यमत्रमनुशीलतां स्फुरेत् ॥ हेतुताऽत्र खलु तत्वदेकताध्यानपारमितयैव गृह्यते ॥ २० ॥ मयैव दुर्दैव शमयितुमलं नूम्नमहिमा सुतस्त्व लेशेन श्रुतरथधुरा गौतमगुरो ॥ कुरूद्योत क्लीवद्दिनपतिसुधा गौतमसिमे प्रनो विद्यामंत्र प्रनव नवतो गौतम नम ॥ २१ ॥ इति श्रीगौतमस्तवनं समाप्तम् ॥

॥ अथ नेमिस्तवनं क्रियागुप्तं ॥

श्रीहरिकुलहीराकर, वज्रमणिर्वज्रपाणिना प्रणत ॥ त्वमवद्यमुक्त नेमे, प्रणमुषां शेमुषीमच्छना ॥ १ ॥ अवद्य ॥ मयि प्रसादप्रवण कृपानिधे विधेहि शैवेय निज मनस्तथा ॥ यथा जगन्नाथ मधुव्रत व्रतं नवे नवे तारकपादपद्मयो ॥ २ ॥ नवे ॥ नयेन नेमे यदुवशमौक्तिक श्रियानिवासस्तव पादपंकज ॥ दुःखोर्मिसघट्टविघट्टितात्मना तेनातिगनीरतमे नवाबुधौ ॥ ३ ॥ श्राति ॥ दुर्नयार्णवमहातरीनिना स्यात्पदोपहितवस्तुविस्तरा ॥ पातकानि नवदीरितागिराऽजंतु जातशिवदानलालसा ॥ ४ ॥ अजतु ॥ प्रेंखन्नखश्रेणिमयूखलेखा निर्वासिताशावलयांधकार ॥ अवार्यसौदर्यविलास गेऽह्न तवाध्रियुग्म शरण प्रपद्ये ॥ ५ ॥ गे ॥ यस्त्वया ऋजुपथ सता मतो देवखडितकुतीर्थिकवर्ग ॥ तं प्रपद्य निरवद्यमुद्यता नेदयति ननु मुक्तिपुरी द्राक् ॥ ६ ॥ ऊदे ॥ वरिवस्याविधौ यस्ते सद्विवेकविनाकृत ॥ तस्यानिमुखमीक्षंते न जातु सुखसपद ॥ ७ ॥ असत् ॥ कर्मकक्षावलीपावक तावकं दुर्नयाहकृतित्रासनं शासन ॥ ये प्रपन्ना गुणस्नेहिनो देहिनस्ते सुराराध्यद्ध खानि सुश्रिया ॥ ८ ॥ असु ॥ विनवराज्यकलासुरराजतावरमणीरमणीनिरलं मम ॥ हृदि पदाबुरुहस्मरणं चते गिरि च तथ्यगुणस्तव

नं तव. ॥ ९ ॥ चते ॥ जगज्जनश्रवणपुटामृतछटां तमोपहां सुललिततरा गपेशलां ॥ उदीरयन् गिरमिलदेशनावनावरा गतामयसुखसंपदां सतां ॥ ॥ १० ॥ अराः ॥ नव्यान् नवत्रमणजीरुकचित्तवृत्तीन् सद्देशनाजिरजितस्त्वमुरुप्र जाव. ॥ दोषासमागमनिमीलितमब्जखंडमाश्वासयेन्न किमुरश्मिनिरंशुमाली॥११॥ श्राव. ॥ जूत्याजिजूतपुरुहूतपुराजिरामता कुर्वंति संततमहोत्सवजाजमुर्वरां ॥ स्त्रंदनंदथुमयानि महाद्भुतानि ते कल्याणकानि जुवनेश विजाव्य चेतसा ॥ १२॥ श्रयानि ॥ जास्वया त्रमरविज्रमवर्णो हे मुनींद्र वपुषि प्रचरिष्णुः ॥ पापशात्रवनिब ईणकृत्ध्यानसंततिरिवाश्रितमूर्तिः ॥ १३ ॥ कहे ॥ दुर्वोधं मे सपदि पदकीजूत वास्तो. पते सद्भृंगश्रेणीकुवलयवनश्यामलछायकाय ॥ श्राकांमाराज्जुवनजयिनि र्यस्य ते ब्रह्मवर्म स्वैः कादंबैर्न खलु मदनः स्प्रष्टुमप्यक्रमीष्ट ॥ १४ ॥ श्य ॥ जाझंजो दनिनादयादवकुलश्रीकवपीठीलुठन् मुक्ताहारमहारथं रतिपतिं निर्जित्य जनाजिरे ॥ कीर्त्तिं कैरवकोमलामधिगत त्वामेव देव प्रजुं श्रीमन्नेमिजिनेंद्रचंद्र शरणं जीरुर्ज वारातित ॥ १५ ॥ एमि ॥ सेवाहेवाकिनः स्युस्तव पदयुगले येऽत्र जक्तिप्रयुक्तास्तेषां देवा. सदा पिप्रति हृतविपद संपदः सुप्रसन्नाः ॥ चिंतारत्नं प्रयत्नात् करतलकलि तं कुर्वतां सर्वकालं कालं नेतर्नराणामटति सुघटता नो मनोराज्यसिद्धि ॥ १६ ॥पि प्रति ॥ जवताऽऽरि जयोद्धुरैर्यश प्रसरैः शुक्लतया जगत्रयं ॥ जिनसिद्धिरिति प्रसिद्धिजा क् सुखसाम्राज्यमयी महापुरी ॥ १७ ॥ श्रारि ॥ अवगछतरां स्वसेवकं मां जगवन् यां च शिवस्य वर्तिनीं त्वं ॥ करुणार्द्रमनाः कुरु प्रसाद मयि तस्याः सपदि प्रकाश नेन ॥ १८ ॥ अवक् ॥ मरकतकमनीयकांतिकाय त्वमजिनतेंद्र किरीटघट्टितांघ्हे ॥ चिरमिन मम चचरीकचर्या हृदय कुशेशयकोशमन्वजस्रं ॥ १९ ॥ अय ॥ निखिलज गतां गोप्ता शुद्धक्रियास्तवसूत्रणादिति कृतनुति सानंदं श्रीजिनप्रजसूरीजि ॥ जव तु जवता जेतुं जूयो जवत्रमसंजव जयमजयदो जीमः श्रीमच्छिवातनय प्रजुः ॥२०॥ इति श्रीनेमिजिनस्तवनं क्रियागुप्तं समाप्तम् ॥

॥ अथ श्रीवर्द्धमानस्तवनप्रारंजः ॥

कंसारिक्रमनिर्यदापगाधाराशुद्धविराट्छदछवि ॥ छंदोजिर्विविधैरधीरधी स्तोष्येऽहं चरमं जिनेश्वरं ॥ १ ॥ त्रैलोक्यनेतस्तव डुर्नयालीनिर्नाशनं शासनमाश्रितो य ॥ त स्येंद्रवज्रायुधमाविरस्ति दु कर्मशैलेंद्रजिदाविधाने ॥ २॥ किमेकमाश्चर्यकर न ते यत् पुर्पंधयोप्यैश्र विशेषविज्ञ ॥ स्यकोपजातिभ्रमणाजिलापस्त्वदंगसौगंध्यमनुप्रयाति ॥ ३ ॥ य. सृजत्यजरं सौरजतारैरबुजैस्तव पदांबुजपूजां ॥ प्रेत्य तस्य दिवि देवमृ

गाह्य' स्वागतानि निगदंति सराग ॥ ४ ॥ वाजिवारणरथोद्धताजटैरुद्भटा सुजग जोगजंगिजृत् ॥ राज्यऋद्धिरुपनन्नमीति तं नंनमीति तव यः पदौ मुदा ॥ ५ ॥ नाकिनिकायकरप्रहताना संप्रसरन् गगने मरुजानां ॥ जन्ममहे तव कस्य न जज्ञे दत्तमदो धकधोंकृतिनाद ॥ ६ ॥ ये जक्त्याऽत्तभ्रमरविलसिता जङ्गु. पादांबुरुहि तव विजो॥ तै. श्रेय श्रीमेधुरमधुररसास्वादो सादात् समजनि कृतिजि ॥ ७ ॥ तत्त्वातत्वारोपलोपप्रवीणा प्रव्हप्राणित्राणसंस्थाधुरीणा ॥ आज्ञा धत्ते मौलिना जव्यजतुश्रेणि श्रद्धाशालिनी तावकीना ॥ ८ ॥ वसुधाम सुधामयवक्त्र विधो तव जाषित माद्रियते जुवि य ॥ स सुखानि सुखानिरिवोग्रमणीन् बिजृते परितोऽटककीर्तिजर ॥ ९ ॥ स्रग्विणी कुडलभ्राजिगल्लस्थला तारहारद्युतिद्योतिवक्षस्तटा ॥ राजिराखंमलानामखडादरा पादपीठे लुठत्तावके पावके ॥ १० ॥ क्षणादेव तेषां शिव श्रीजुजगप्रयात विहाँद शुनं कर्म पुसा ॥ जवन्नाममन्त्रस्य वर्णानुपूर्वी रसज्ञाग्रवर्तिस्फुरापादिता यै ॥ ११ ॥ द्रुतविलंबितमध्यरवध्वनद् विविधतूर्यमनेकमणीमयं ॥ कुसुमवर्षचितं तव देशनावनितलं कइवेत्य न मोदते ॥ १२ ॥ मुकुरोज्वले गणजृतां हृदये प्रमिताक्षरापि बत वाक् जवत ॥ अनियत्तया प्रतिपफाज जिनध्वनितोऽर्थतश्च जगदर्च्यधिया ॥ १३ ॥ जगत्प्रजो जक्तिजरादनुद्दिजा द्विजातिवशाद पहृत्य कृत्यवित् ॥ नरेंद्रवशस्थमचीकरच्छचीपतिर्जवतं हरिनैगमेषिणा ॥१४॥ वाचां ते निखिलनयाविरोधिनीना डुर्बोधद्रुमदलने कुठारिकाणां ॥ माहात्म्यं जुवनमन प्रहर्षिणीनां निर्वक्तुं कइव यथावदस्तु शक्त. ॥ १५ ॥ सिद्धार्थराजकुलनंदनपारिजात न भ्राम्यति क तव कीर्तिरपारिजात ॥ वर्णेन डुग्धमधुरेण मतोजनागसिंहोद्धता स्थिरतया सुमनोजनाऽग ॥ १६ ॥ अति महति जवोर्मीमालिनीह भ्रमतो जननमरणवीच्या धातदोदूयमाना ॥ कथमपि पृथुपुण्या. प्राणिन प्राप्नुवति प्रवहणमिव केचिच्छासन तावकीनं ॥ १७ ॥ लवणिमतर्जितस्मरपुरध्रिरूपदर्पा घटितकटाक्षलक्षशरविद्धकामिमर्मा ॥ कनकमणीमयाजरणरश्मिरजितागी व्यजयत वाणिनी न जवत समाधिमुद्रा ॥ १८ ॥ प्रबोधं जव्यांजोरुहवनमधीशाधिगमयन् हरन् मोहध्वांत परसमयतारा कवलयन् ॥ निविष्ट सिंहासन्यजममलजामंडलयुतो जवानाजातिस्मोदयशिखरिणीव द्युतिपति' ॥ १९ ॥ अमितदमितस्त्रोतो मायतुरगमसगमत्रिदशहरणीनेत्रो नेत्रत्रिजागविलोकितै ॥ तव जिन मन. शेके कर्तुं मनागपि न स्वसाच्चलयितुमलं किं हेमाद्रिं युगांतमहाबला ॥ २० ॥ दारिद्र्यापत्परिजवजनुर्विस्रसामृत्युडु खरार्ता के के न तव वलव देवसेवा प्रपन्ना. ॥ किं स्याद्रोग

प्रशमनपटोरौषधस्योपयुक्तौ मंदाक्रांता जगति जनता ऊु सद्देनामयेन ॥ २१ ॥ श रडुदितनिशाकरांशुप्रना जैत्रकीर्तिछटाधवलितनिखिलत्रिलोकीतलं श्रद्धयोपासलते ॥ सरजसविनमत्सुराधीशचूडामणिज्योतिषामरुणितपदपीठभूर्मिनिरेष्यछविस्त्वां प्रजो ॥ २२ ॥ बिभ्राणो नरवविक्रियां नयकरीं धूतोल्लसछालधीरौडं शब्दम नीचकै. प्रकटयन् नूयोवनीकाहत ॥ लक्ष्मया नृतकोप्यवाप्य नृपतां मांसादर वर्धयन् धत्तेऽनेकपराजिदर्पदलने शार्दूलविक्रीडितं ॥ २३ ॥ विद्यामंत्रैर्नै कार्यं सुर तरुनिरलं वित्तेन च मृतं पर्याप्तं राज्यलक्ष्म्या कृतममरतया ह्यास्तां सुवदना ॥ स्फू र्जत्वेका तु नक्तिस्त्वयि मम मनसि ध्वस्ताखिलमला कैवल्यश्रीर्यया स्यात् करतलनिल या साऽन्हाय नगवन् ॥ २४ ॥ श्रीवीरः सर्वदिक्कैः कनकरुचितनूरोचिरुद्दीप्रदीपैर्मंग ल्यः सोस्तु दीपोत्सव इव जगदानंदसंदर्नकंदः ॥ सूक्तिर्जैनप्रनीयं मृडुविशदपदा स्रग्ध राधीयमाना नव्यानां नव्यनूत्यै नवतु नवतुदे नावनानाविताना ॥ २५ ॥ इति श्रीवर्द्धमान स्तवनं समाप्तम् ॥

॥ ॐ पादाग्रः ७ ॥ व विंशतिजिनस्तवनं ॥

कनककांतिधनु. शतपंचकरेरिष्ठं स्मिांकितदेहमुपास्महे ॥ रतिपतेर्जयिनं प्रथ मं जिनं नृवृषनं वृषनं वृषनांऽस्त ॥ १ ॥ द्विरदलांछित वांछितदायक क्रमलुठत्त्रि दशासुरनायक॥ स्तुतिपर पुरुषो नवति क्षिता वजित राजितरा जितराग ते॥२॥तुरग लांछनसंनव संनवत्यहरिदं जिन यत्र रसादहं ॥ हृदि दधे नणितीर्गुणनूरुहां शमहिता महितामहि तावकी. ॥ ३ ॥ नवमहार्णवनिस्तरणेछया त्वमनिनंदन देव निषेव्यसे ॥ व्रतनृतां कुरुते स्मरनिग्रहप्रसनया सनया सनयात्मना ॥ ४ ॥ त्रिभुवनामितकामितपूरणे सुरतरोरुपमामतिगामुकौ ॥ तव विनो नजते नवत· क्रमावसुमते सुमते सुमतेर्देव ॥ ५ ॥ धरनृपात्मज पद्म जिनेश्वर त्वयि कृतप्रण यः क्रियते पतिः ॥ रजसत· प्रथितार्थिदरिद्र तोपरमया रमया रमयान्वितः ॥६॥ प्रभुसुपार्श्व जगत्रितयाङ्गनुः पवित्तकाशिपुरीकवीलक्षण ॥ सुकृतिनः कृतिनश्चरितं वि डु.शुनवतो नवतो नवतोदनं ॥ ७ ॥ कुनयकाननभंजनकुंजराः शशिरुचे महसेन सुत प्रनो ॥ निखिलजीवनिकायहितोक्तिनिः शुनवदा नवदा नवदागमा ॥ ८ ॥ युधि विजित्य मनोनवमग्रहीन्मकरमंकमिषादृध्वजंमस्य य· ॥ स्तुतजना सविधिं कुद्दशां सुरस्तुतमसतमसं तमसंस्तुतं ॥ ९ ॥ दृढरथांगजशीतल शीतलद्युतिकलावि मला तव नारती ॥ मनसि कस्य न हर्षसनाथतां जिन ततान ततानततायिनी ॥ १० ॥

जयति गंडकलक्ष्मतनुर्जिनः शशिमुखोंबुजदृक् दशमोत्तरः ॥ कनकदीप्तिरमर्पितहीर कस्तवरदो वरदो वरदोर्युगं ॥ ११ ॥ भुजमयी वसुपूज्यसुत प्रभो भुवननेत्रमहो महि षांकिता ॥ तव तनुर्वितनोतु सुखं सतामरुचिरं रुचिरं रुचिरंजिता ॥ १२ ॥ सकलस त्वसरोजविकासने रविरुचिर्विमल त्रिजगत्पते ॥ अपि शमं नयते तव गीर्जिनामृत रसा तरसा तरसा तृषं ॥ १३ ॥ निजयशोभरनिन्हुतजान्हवीजलवलक्षिमकीर्तिरनं तजित् ॥ दिशतु वः कुमतासुरनिग्रहे नृशमनं शमनं शमनश्वरः ॥ १४ ॥ नवनयं तव धर्म धुनोतु वाक्श्रुतिपथाऽतिथितां गमिता सती ॥ किमु करोति न पित्तरजं शम वरसिता रसिता रसिताञ्जुषा ॥ १५ ॥ जयति शांतिजिनः स्म जगंति या भटचमूर्युधि मोहमहीपते ॥ रणकथामपि भक्तिभरेण ते ससहसा सहसा सहसाऽमुचत् ॥ १६ ॥ अवति कुंथुजिनाधिपराज्यमाहिमवत स्त्वयि चक्रहताहितं ॥ त्रिदिवतोऽभ्य धिका जनि कृद्धिर्निर्घनरसा नरसानरसारकि ॥ १७ ॥ जगदधीश सुदर्शन भूमिपान्वयपय सरिदीश निशामणे ॥ प्रणिदधेऽतिपदो विशदव्रता वनरतानरता नरतावकान् ॥ १८ ॥ हृदि नरस्तवमल्लिजिनस्मरन्नपि हि मूर्तिमुपैति मांदर्तलं ॥ निशमयन् समताकरु णाचिता किमुदिता मुदिता मुदितादर ॥ १९ ॥ अ सुव्रत कच्छपलांछनो जनरुचि र्हरिवशविभूषण ॥ शिवसुखाय तपःपरशुश्रियो भक्तिवनो भवनो भवनोधियां ॥ २० ॥ विरतिवर्म तटाहतिकुंठितस्मरशर शरर्णाक्रियतेऽत्रभवता ॥ गुणगणस्य नमिर्बुधवर्ह णव्रजनभा जनभाजनं भावनक् ॥ २१ ॥ अनुमितं खलु नेमिविभो भवभ्रमणतो मयका यदि यच्चिर ॥ महितपादभवान् भवत कृपाजवनमानवमा वनमालिना ॥ २२ ॥ कमठशासन पार्श्वशिवकरे रमतएव मनो प्रियधर्मणा ॥ अपि कृतीर्ष्यज नेन दुरात्मना तव मतेऽवमतेऽवमतेजसः ॥ २३ ॥ त्रिजगदीक्षण केसरिलक्षण क्ष णमपि प्रभुवीर मनोगिरौ ॥ गुणगणान् मम मास्म विरज्यतामुदयिता दयितादयि तावकान् ॥ २४ ॥ च्युतिजनुर्व्रत केवलनिर्वृतिक्षणदिनाददता मुदमार्हता ॥ व्यरचि यैरुपयत्रिदशैर्दृशां नवसुधा वसुधा वसुधामभिः ॥ २५ ॥ इति जिनप्रभवोमयकांऽति मक्रमगतैर्यमकाऽवयवैर्नुता ॥ बलममी वितरतु धुरिस्थिताः शुभवता भवतां भवतां तिभित् ॥ २६ ॥ सदुपदेशकर प्रसरद्भिताऽखिलतमस्कतया तपनोपमा ॥ ददतु तीर्थ कृतो मम निर्ममा शमरमा मरमाऽमरमानिता ॥ २७ ॥ जयति दुर्नयपंकजिनीवने हिमततिर्मतिकैरवकौमुदी ॥ शमयितु तिमिराणि जते महावृजिनभाजि न भाजिनभार ती ॥ २८ ॥ करकृताम्रफला घृणती जिनप्रभवतीर्थमिभारिमधिश्रिता ॥ हरतु हेमरु चिः सुदृशा सुखव्युपरमं परमं परमंबिका ॥ २९ ॥ इति चतुर्विंशतिजिनस्तवनं समाप्तं ॥

अथ श्रीमहावीरस्तवनप्रारंभ.

परात्क्रमेणेव पराजितोऽयं सिंह सिषेवे धृतलक्ष्मदंभ. ॥ सुखानि व खानिरयं र माणा द्वैमातुरस्तीर्थकर. करोतु ॥ १ ॥ सप्ताश्वतेजाः करसप्तकोच्च कर्मैधसप्ता तिरसप्तनीति ॥ प्रणीतवान् सप्तशती नयानां वीर. श्रिये व्यजितसप्ततत्वः ॥ २ ॥ शक्रानत प्राणतकल्पपुष्पोत्तरात्वमाषाढवलक्षपष्ट्या ॥ देवाधिदेव द्विजदारदेवा नंदोदरेऽभूर्विहितावतार ॥ ३ ॥ इयस्य नंथादसिता त्रयोदशी द्युशीत्यहानंत तरमीशितस्तत ॥ सुरेशसेनापतिदेशिताध्वना क्षात्रं कुलं यत्र पवित्रित त्वया ॥ ४ ॥ प्रभूतनूतिद्युभवभुवा भवक्षतुर्मेदे नोऽजनि हेजिन ध्रुवम् ॥ जगत्रयीजंतु षु हर्षवर्षिणी निरूढरूढिर्मदनत्रयोदशी ॥ ५ ॥ त्वया स्वदेहद्युतिसंविभागसंभावि त हेम सुवर्णमासीत् ॥ तारतु हीनं त्वदनुग्रहेण डुर्वर्णमित्यापदवर्णवादं ॥ ६ ॥ बाल्ये विबोधाय हरे. सुराद्रि. पादाग्रनुन्नस्तव यच्चकंपे ॥ चित्रीयता त्वत्तरसा रसात न्मूर्धानमाधूनयतिस्म नूनं ॥ ७ ॥ बभूव भाग्यातिशयप्रभावात् गुरुस्तवापि त्रिजग द्गुरोर्य ॥ युक्त्यैव त मेरुगिरेर्गरिष्ठं सिद्धार्थमप्यार्यगणा गृणंति ॥ ८ ॥ कथं गु णः प्रासयश पताका नारीषु नास्तु त्रिशलाशलाका ॥ यत्कुक्षिशुक्तौ विमल सुवृ त्तो मौक्तिक्यभूस्त्वं गुणयुक्तिहृद्य. ॥ ९ ॥ दिवि प्रवृद्धं सुरमीश मुष्टिघातेन य द्वाम नतामनैषी. ॥ गर्वाद्रिखर्वीकरणश्रमं तु चकर्ष तीर्थेश्वर शैशवेन तत् ॥ १० ॥ मो क्षं गमी य खलु तद्भवेपि गंतु कथ सोर्हति लेखशालां ॥ इतीव शक्रोऽपलज्ञाप पित्रोरनौचित्ति ते विनयेन धीमान् ॥ ११ ॥ व्याकुर्वतस्ते हरये यदागमं संगृह्य बु ध्या कतिचित् गिरां भवान् ॥ अध्यापको यद्विदधे तदुच्चकैरैंद्रं भुवि व्याकरणं प्र थामगात् ॥ १२ ॥ यस्या न कस्योदितमुक्तिमार्गमार्गस्य कला दशमी शमीश ॥ प्रा ज्यं प्रभो यत्र विसृज्य राज्य श्रमण्यसाम्राज्यमुपायथास्त्व ॥ १३ ॥ शिवालये प्रो ज्झितविग्रहं यत् त्वत्पादमूले चमर निलीनं ॥ जभारिदंभोलियम. प्रचडो नस्प्र ष्टुमाप्यैष्ट किमत्र चित्रं ॥ १४ ॥ न बाधितु जातु दधु समर्थतां मुनींद्र धातोरि व नान्ववर्त्तिषु ॥ समाधिरूढां प्रकृतार्थसंपदं तवोपसर्गा व्यशिषंस्तु केवलं ॥ १५ ॥ न कौशिके रागमुपासनापरे करोषि रोषं स्म न चमकौशिके ॥ अहो उदासीनत यैव निर्जिता चमूस्त्वया डुर्विषहापि कर्मणां ॥ १६ ॥ निर्बर्हितुर्गा सुर भर्तुरुद्यतस्तथा तया यो डुरचेष्टत त्वयि ॥ बहिः कृत. स्वर्गिसमाजसंगमा

त् ससंगम म्यान्नकथं जनंगम ॥ १७ ॥ एकाग्रपञ्चत्रिशतावसाने श्रीवीरत्ती रे ऋजुवालिकाया ॥ तवोदगात् केवलऋद्धिरस्ताऽपराधराधस्य शुचौ दशम्या ॥ १८ ॥ एकाक्रमाद्दुर्मुनय कथं मामितीव कोपात् त्वदुपर्यशोक ॥ अदीदृशत् षट्पदगर्भपुष्पव्याजस्फुरत्तारकदृक्सहस्रं ॥ १९ ॥ सुरैर्विकीर्णास्तव देशनावना वभु' प्रसूनप्रकरा· समतत ॥ नयश्लथीभूतकरात्परिच्युता शराऽवानंगभटस्य कौसुमा ॥ २० ॥ स्फुटीभवन्मालककौशिकीमुखप्रशस्तरागस्तवसंस्तवोचित ॥ प्रविश्य दिव्य श्रवणाध्वनि ध्वनिर्मुदे न केषा रजयन् मृगानपि ॥ २१ ॥ स्थातुं चलच्चामरयुग्मकैतवात् त्वदीयदंतद्युतिजान्हवीजले ॥ ध्रुव त्वदास्याब्जवासिभारती युग्मे उपेतां कलहंसदपती ॥ २२ ॥ स्थैर्यं हृत यद्भवता शिशुत्वे तद्याचनाय स्फुटमेष मेरु ॥ स्वयसमागादिति तुंगहेमसिंहासने ते करवति तर्क ॥ २३ ॥ हतु क्षमो हं तम एकमेव तद्देहि मेसर्वतमोपहत्व ॥ इतीव विज्ञापयितु सिषेवे भामडलच्छद्मधरो रविस्त्वा ॥ २४ ॥ दूराद्धराजन्मनिदे भवजी सुधासपीत्थे त्रिजगज्जनौघं ॥ नूनं नदन् संसदि देवदेवैर्दिव्याहतो डुंडुभिराजुहाव ॥ २५ ॥ भेदं प्रमाणातरदर्शितं सन्नमंस्यते सर्वे इतीव पुला ॥ सितातपत्रत्रितयच्छलेन रत्नत्रयं दर्शयतिस्म साक्षात् ॥ २६ ॥ सुपर्वसचारितहेमपकजापदेशतश्चंक्रमणक्षणे किल ॥ गतस्पृहस्यापि गुणैर्वशवदा पदोस्तले ते निधयो नवालुठन् ॥ २७ ॥ त्रैलोक्यसंयुक्तनिरकुशश्रिप्राकाररेखात्रयवेष्टितांगं ॥ नैक्षत धन्या कतिनाम रक्षायंत्रोपम त्वा सुमनोर्चनीय ॥ २८ ॥ त्वत्प्रातिहार्यश्रियमित्यवेक्ष्य चेतो न यस्येश चमच्चकार ॥ स केवली चेन्न तदा ऽस्तु तस्य नरब्रुवस्याजननिर्जगत्या ॥ २९ ॥ अनिद्यविद्यावदनेन्दुदर्पणा गणाधिपास्ते यदसूत्रयन् श्रुत ॥ गिरस्तवैव त्रिपदीसुधाकिर सतां मन स्वप्रथितेन गौरव ॥ ३० ॥ अशेषभावापरिणाममञ्जुलं विचित्रसदेहविघातवत्कलं ॥ स्तवे वचस्ते नयनिर्विरोधता विधायि संबोधविधौ निबंधनं ॥ ३१ ॥ तप्त्वा तप पष्ठमपास्तभव्यलोकार्तिक कार्तिकदर्शरात्रौ ॥ अपापमापु पदमीश पापा पुर्यां द्वियुग्सप्ततिवत्सरायु ॥ ३२ ॥ स्वे यत्र बुधे सति फल्गुनीषु जाले स्मरोऽनून्मृतकल्पमानी तद्विश्ववद्योत्तरफल्गुनीषु बभूव कल्याणकपचक ते ॥ ३३ ॥ भुवनाधिपतेरनंतया भवत· स्वातिगतेऽत्र भाधिपे ॥ उदयाद्युचित घनाघनोदकयोगान्नवमौक्तिकश्रिया ॥ ३४ ॥ ज्ञातेक्ष्वाकुकुलप्रदीप भगवन् वदारुवृदारकश्रेणीरत्नकिरीटकांतिलहरीसंस्नाप्यमानान्ह्ये ॥ मोहोर्वीपतिगर्वपर्वतभिदि व्याधामधामश्रियामश्रांतं जिनसिंहसूरिमहित श्रीवीर तुभ्यं नम ॥३५॥ इतिस्तुतिपरायणे त्रिजगदेकचूडामणे प्रसीद

परमेश्वर स्वरसन्नक्तिनम्रे मयि ॥ नवेन्मम नवेनवे नवडुपासनावासना जिनप्रनवसं विदा वरद पूर्णमेतावता ॥३६॥ इति पंचकल्याणिकमयं श्रीमहावीरस्तवनं समाप्तम्॥

॥ अथ श्रीमंत्रस्तवनप्रारंन्नः ॥

स्व श्रियं श्रीमदर्हंत. सिद्धा. सिद्धिपुरीपदं ॥ आचार्या पंचधाऽऽचार वाचका वाचना वरा ॥ १ ॥ साधव. सिद्धिसाहाय्यं वितन्वतु विवेकिना ॥ मगलानां च सर्वेषा माद्यं नवति मगलं ॥ २ ॥ अर्हमित्यक्षर माया बीज च प्रणवाक्षर ॥ एन नानास्व रूपं च ध्येयं ध्यायंति योगिन ॥ ३ ॥ हृत्पद्मषोडशदलस्थापिन षोडशाक्षर ॥ पर मेष्ठिस्तुतेर्बीज ध्यायेदक्षरदं मुदा ॥ ४ ॥ मंत्राणामादिमं मंत्रं तत्रं विघ्नौघनिग्रहे ॥ ये स्मरति सदैवेनं ते नवति जिनप्रना ॥ ५ ॥ इति श्रीजिनप्रनविरचितं मंत्रस्तवनं समाप्तम् ॥

॥ अथ श्रीवर्द्धमानस्तवनप्रारंन्नः ॥

श्रीवर्द्धमान सुखवृद्धयेऽस्तु यश.प्रतापैरनिवर्द्धमान. ॥ सिद्धायिका रक्षति यस्य तीर्थे विघ्नौघत संततमेव देवी ॥ १ ॥ जिनेंद्र नेंद्रा अपि तावकीनां स्तोतुं गुणान् शक्तिजुषस्तथापि ॥ पयटीरितस्तान् कतिचिन्नवीमि नाक्ष. स्वमात्रां विविनक्ति वीर ॥ २ ॥ नयाध्वनं पोथ कृतैकमत्यैरश्रांतमेकातहितोपदेशैः ॥ करैरिवोलसद्युतिना तमिस्रास्त्वया तानां नवनीर्निराति ॥ ३ ॥ प्रणीयतेऽस्माद्भुतरत्नचित्रे स मं विमानैस्त्रिदशागमेन ॥ कल्याणकैर्नूवलयं त्वदीयैस्त्रिविष्टपान्यूनमनूनऋद्धि ॥ ४ ॥ नवतमीशं नजतोऽनुजातु ५ खान्यलं कानि च नापि तापै ॥ पाणिस्थचिंतामणिमंग नाज का निर्वृति. पीडयितु शशाक ॥ ५ ॥ सूर्यप्रना मोहतम समूहव्यापादने संशयव र्जिदात्री ॥ त्वद्देशनावाग् जयति त्रिलोकीलोकस्य कर्णामृतवृष्टितुल्या ॥ ६ ॥ रिपून् विजित्यांतरगानगाधवीर्येण सत्ज्ञानरमा निवेश्य ॥ कस्यैकार्पीरिन मुक्तिपुर्या. सा म्राज्यमज्यानि सुखोत्करेण ॥ ७ ॥ निस्सेव पीयूषद्युजा जनस्य मथ्नाति मिथ्यात्व विषोर्मिपूर ॥ तव प्रना नेत्रपुटैर्निपीता कृतस्थितिर्वष्मणि नि कलंके ॥ ८ ॥ वृत्ताष्ट कायक्षरनामधेयैस्तदंत्यवर्णाहितनामकेऽन्हि ॥ इयं स्तुतिर्वीरजिनस्य दृष्टा करोतु क ल्याणमनुत्तर व. ॥ ९ ॥ इति जिनप्रनसूरिकृत श्रीवर्द्धमानस्तवन समाप्तम् ॥

॥ अथ श्रीपार्श्वस्तवनप्रारंन्नः ॥

पार्श्वं प्रनुं शश्वदकोपमानं दकोपमानं नववन्हिशांतौ ॥ आराधतां दत्तनिरतरा र्यं निरतरार्यं पदमाशुमीडे ॥ १ ॥ वीक्ष्य जगन्नेत्र महान यत्र महानयत्रस्य तवांह्रि

युग्मं ॥ पुण्य स एवाऽवसरोऽमराली सरो मरालीव निपेवते यत् ॥ २ ॥ प्रणेमुपां
पूर्णसमस्तकामं समस्तकाम सकृदप्यधीश ॥ नवतमानम्य विमानमाया विमानमा
या प्रनवो नवति ॥ ३ ॥ नयाढयमुद्यज्ञमनगमाल मनंगमालक्षितसर्वनाव ॥ कैर्नाम
म धीमद्भिरमानि शातं रमानिशात न वचस्त्वदीय ॥ ४ ॥ नित्य प्रमादेनविना शि
ताम विनाशितामगलमगनाजा ॥ त्वन्नाम धन्य स्मरतीश सार रतीशसारगभृंगेड्
नादं ॥ ५ ॥ नृत्योपि योत्राऽवृजिनप्रनावे जिनप्रनावैकरसस्त्वयि स्यात् ॥ सरुपवा
न्नीरगजाश्वसेने गजाश्वसेनेश्वरतामुपैति ॥ ६ ॥ नूयान्नमो नीलतमालकाय तमाल
कायप्रन तुन्यमेव ॥ नवास्त्वदन्य कतमोऽविता न तमोवितर्जवार्तवित्तुरोऽर्क एव ॥ ७ ॥
त्वद्भक्तकृत्येष्वविरामवामे विराम वामेय मयि प्रसीद॥नव्यान् तस्तव पातु जिन प्रनोऽयं
जिनप्रनो यं विदधे यतीड्ः ॥ ८ ॥ इति जिनप्रनसूरिविरचितं श्री ॥ श्रीपार्श्वस्तवनं समाप्तम्॥

॥ अथ श्रीपार्श्वनाथस्तवनप्रारंन· ॥

श्रीपार्श्वपादानतनागराज प्रोत्सर्पदेन कफनागराज ॥ सतां मेदं हताऽसत्परिणामरागं
त्वा सस्तुम स्थैर्यगुणाऽमराऽगं ॥ १ ॥ ये मर्त्यदेवासुरमाननीयं दोषं पश्यति ते श्रीन
रमाननीय ॥ सद्यस्त्रिलोकीतिलकाऽमितानि सिध्यंति तेपां किल ॥ कामितानि ॥ २ ॥
दृशोर्द्वयं पद्मदलानुकारं नाशिश्रयत्ते कमलानुकाऽर ॥ कुतो लोक्यसंयुं त्वन्नतिदीक्षितेपु स
र्वैश्रिया प्रेम तदीक्षितेषु ॥ ३ ॥ अन्यर्हितं नव्यकदंबकाना हर्षे त्वा रूपांञ्जसदवकाना ॥
सेवति ये त्वा विधिवन्ननते निर्वाणसौख्यं बुधवन्नन ते ॥ ४ ॥ ॥ स्ततेरहत्यपनायिका
नि वैपु श्रिया ते सुरनायिकानि ॥ नाह्मोनि चेत परनावलीं दिनत्तुमचिंत्यविस्तारि शु
नावलीन ॥ ५ ॥ प्रनो तवाऽस्तस्मरराजमाने नखांशुजालेन मन वेराजमाने ॥ क्रमांबु
जे लक्ष्मिगृहे रसेनशक्रार्चनीय स्तुमहे रसेन ॥ ६ ॥ आकांक्षितां बहुविध जनतानि
रामाऽस्पष्टामहोदयपुरी ध्रुवतानिरामा ॥ अप्यध्वरश्रुतितप श तपस्वनादृते न पुसाऽऽ
प्यते जिन तव स्तवनादृतेन ॥ ७ ॥ इत्थं फणींड् सततश्रितपापा र्श्वनाऽथ स्त्री वा स्तव
पवति यस्तव पार्श्वनाथ ॥ तस्मै स्पृहामवृजिनप्रनवाय नव्या लोऽनुकुर्वी विनतिं सुमन.स
मवायनव्या ॥ ८ ॥ इति जिनप्रनसूरिविरचितं श्रीपार्श्वनाथस्तवन समाप्तम् ॥

॥ अथ श्रीनंदीश्वरकल्पप्रारंन· ॥

योग

आराध्य श्रीजिनाधीशान् सुराधीशार्चितक्रमान् ॥ कल्प नंदीश्वर द्वीपस्यावच्मि वि
श्वपावनं ॥ १ ॥ अस्ति नंदीश्वरोनाम्नाऽष्टमोद्वीपो द्युसंनिन· ॥ याम तत्परिक्षेपिणा नं
दीश्वरेणांनोधिना युत ॥ २ ॥ एतद्वलयविष्कंने लक्षाशीतिश्चतु योजना

नां त्रिषष्टिश्च कोट्य· कोटीशतं तथा ॥ ३ ॥ असौ विविधविन्यासोद्यानवान् देव भोगभू ॥ जिनेंद्रपूजासंसक्तसुरसंपातसुंदरः ॥ ४ ॥ अस्य मध्यप्रदेशे तु क्रमात् पूर्वादिदिक्षु च ॥ अंजनवर्णाश्चत्वारस्तिष्ठंत्यंजनपर्वता ॥ ५ ॥ दशयोजनसहस्रा तिरिक्तविस्तृतास्तले ॥ सहस्रयोजनाश्चार्ध्वे क्षुद्रमेरूच्चयाश्च ते ॥ ६ ॥ तत्र प्राक् देवरमणो नित्योद्योतश्च दक्षिण· ॥ स्वयंप्रभः प्रतीच्यस्तु रमणीय उदक्स्थित· ॥७॥ शतयोजनायतानि तदर्धं विस्तृतानि च ॥ द्विसप्ततियोजनोच्चान्यर्हच्चैत्यानि तेषु च ॥ ॥ ८ ॥ पृथक् द्वाराणि चत्वार्युच्चानि षोडश योजनी ॥ प्रवेशे योजनान्यष्ट विस्ता रेप्यष्ट तेषु तु ॥ ९ ॥ तानि देवासुरनागसुपर्णानां दिवौकसा ॥ समाश्रयादेव तेषां नामनिर्विश्रुतानि च ॥ १० ॥ षोडशयोजनायामा स्तावन्मात्राश्च विस्तृता ॥ अष्ट योजनकोत्सेधास्तन्मध्ये मणिपीठिका· ॥ ११ ॥ सर्वरत्नमया देवछंदकाः पीठिकोप रि ॥ पीठिकाभ्योऽधिकायामोच्छ्रयभाजस्तु तेषु च ॥ १२ ॥ ऋषभा वर्द्धमाना च त था चन्द्राननापि च ॥ वारिषेणाचेति नाम्ना पर्यंकासनसंस्थिता ॥ १३ ॥ रत्नमयोयु ता· स्वस्वपरिवारेण हारिणा ॥ शाश्वतार्हत्प्रतिमा· प्रत्येकमष्टोत्तरं शतं ॥ १४ ॥ द्वे द्वे नागभूतकुंडभृत् प्रतिमे पृथक् पृथक् ॥ प्रतिमानां पृष्ठतस्तु छत्रभृत् प्रतिमैकिका ॥ १५ ॥ तेषु धूपघटीदामघंटाष्टमंगलध्वजा· ॥ छत्रतोरणचंगेर्यः पटलान्यास नानि च ॥ १६ ॥ षोडश पूर्णकलशादीन्यलंकरणानि च ॥ सुवर्णरुचिररजो वालु कास्तत्र भूमय ॥ १७ ॥ आयतनप्रमाणेन रुचिरा मुखमंडपाः ॥ प्रेक्षार्थमंडपा अक्षवाटिकामणिपीठिका· ॥ १८ ॥ रम्याश्च स्तूपप्रतिमाश्चैत्यवृक्षाश्च सुंदरा· ॥ इं द्रध्वजा· पुष्करिण्यो दिव्या संति यथाक्रम ॥ १९ ॥ प्रतिमाः षोडश चतुर्द्वारस्तू पेषु सर्वत· ॥ गत चतुर्विंशमेव ता साष्टशततद्युताः ॥ २० ॥ प्रत्येकमंजनाद्रीणां ककुब्सु चतसृष्वपि ॥ गते लक्षे योजनानां निर्मत्स्यस्वच्छवारयः ॥ २१ ॥ सहस्र योजनो द्वेधा विष्कंभे लक्षयोजना· ॥ पुष्करिण्यः संति तासां क्रमान्नामानि षो डश ॥ २२ ॥ नंदिषेणा चाप्यमोघा गोस्तूपाऽथ सुदर्शना ॥ तथा नंदोत्तरानंदा सु नंदा नंदिवर्धना ॥ २३ ॥ भद्रा विशाला कुमुदा पुंडरीकिणिका तथा ॥ विजया वै जयंती च जयंती चापराजिता ॥ २४ ॥ प्रत्येकं योजनं पंच पंचशत्या परत्रच ॥ यो जनानां पंचशतिं यावद्विस्तारभांजि तु ॥ २५ ॥ लक्षयोजनदीर्घाणि महो द्यानानि तानि तु ॥ अशोकसप्तच्छदक चूत चंपकसंज्ञया ॥ २६ ॥ मध्ये पु ष्करिणीनां च स्फटिकाः पल्यमूर्तयः ॥ ललामवो द्युद्यानादिचिन्हा दधिमुखाद्र य· ॥ २७ ॥ चतु·षष्टिसहस्रोच्चा· सहस्रं चावगाहिनः ॥ सहस्राणि दशा

धस्ताडुपरिष्टाच्च विस्तृता· ॥ २० ॥ अंतरे पुष्करिणीनां द्वौ द्वौ रतिकराचलौ ॥ ततो नवतिद्वात्रिंशदेते रतिकराचला. ॥ २९ ॥ शैलेषु दधिमुखेषु तथा रतिकराद्रिषु ॥ तत्राश्वतार्हच्चैत्यानि सत्यंजनगिरिष्विव ॥ ३० ॥ चत्वारो द्वीपविदिक्षु तथा रतिकराचला ॥ दशयोजनसहस्रायामविष्कंभशालिन ॥ ३१ ॥ योजनाना सहस्रं तु यावडूयशोभिता ॥ सर्वरत्नमयादिव्या झल्लर्याकारधारिण ॥ ३२ ॥ तत्र द्वयो रतिकराचलयोर्दक्षिणस्थयो. ॥ शक्रस्येशानस्य पुनरुत्तरस्थितयो पृथक् ॥३३॥ अष्टानां महादेवीना राजधान्योऽष्टदिक्षु ता ॥ लक्षाबाधा लक्षमाना जिनायतनभूषिता ॥ ३४ ॥ सुजाता सौमनसा चार्चिमाली च प्रभाकरा ॥ पद्मा शिवा तथा शुच्यंजने भूतावतंसिका ॥ ३५ ॥ गोस्तूपासुदर्शने अप्यमलाप्सरसौ तथा ॥ रोहिणी नवमी चाथ रत्ना रत्नोच्चयापि च ॥ ३६ ॥ सर्वरत्नसंचया च सुवसुर्वसुमित्रिका ॥ वसुभागादि च वसुधरानंदोत्तरे अपि ॥ ३७ ॥ नंदोत्तरकुरुर्देवकुरु कृष्णा ततोपि च ॥ कृष्णराजी रामरामा रक्षिता प्राक् क्रमादमू ३० ॥ सर्वर्द्धयस्तासु देवा कुर्वते सपरिच्छदा ॥ चैत्येष्वष्टाह्निकापुण्यतिथिषु श्रीमदर्हता ॥ ३९ ॥ प्राच्येंऽजनगिरौ शक्र कुरुतेऽष्टाह्निकोत्सव ॥ प्रतिमानां शाश्वतीना चतुर्द्वारे जिनालये ॥४०॥ तस्य चाद्रेश्चतुर्दिक्स्थमहावापीवितर्दिषु ॥ स्फाटिकेषु दधिमुखपरितेषु चतुर्ष्वपि ॥ ४१ ॥ चैत्येष्वर्हत्प्रतिमाना शाश्वतीना यथाविधि ॥ चत्वार शक्रदिग्पाला कुर्वते ष्टाह्निकोत्सव ॥४२॥ ईशानेद्रस्त्वौत्तराहेंऽजनाद्रौ विदधाति त ॥ तल्लोकपालास्तद्वापीदध्यास्यादिषु कुर्वते ॥ ४३ ॥ चमरेद्रो दाक्षिणात्येऽजनाद्रावुत्सव सृजेत् ॥ तद्वाप्यंतर्दधिमुखेष्वस्य दिग्पतय पुन ॥ ४४ ॥ पश्चिमेऽजनशैलेतु बलीद्र कुरुते मह ॥ तद्दिग्पालास्तु तद्वाप्यंतर्गदधिमुखाद्रिषु ॥ ४५ ॥ वर्षद्वीपदिनारब्धानुपवासान् कुहूतिथौ ॥ कुर्वन्नंदीश्वरोपास्त्यै श्रायसी श्रियमाश्रयेत् ॥ ४६ ॥ भक्त्या चैत्यानि वदारुस्तत्स्तोत्रस्तुतिपाठभाक् ॥ नंदीश्वरमुपासीनोऽनुपर्वाहस्तरेत्तरा ॥ ४७ ॥ प्राय पूर्वाचार्य ग्रथितैरेवायमाचित श्लोकै ॥ श्रीनंदीश्वरकल्पो लिखित इति श्रीजिनप्रभाचार्यैं ॥ ४० ॥ इति श्रीजिनप्रभाचार्यविरचितनदीश्वरकल्प समाप्त ॥

॥ अथ श्रीशारदास्तवनप्रारंभ· ॥

वाग्देवते भक्तिमतां स्वशक्तिकलापवित्रासितविग्रहा मे ॥ बोधं विशुद्धं भवती विधत्ता कलापवित्रासितविग्रहा मे ॥१॥ अर्कप्रवीणाकलहंसपत्राक्रांतस्मरेणानमतां निहंतु ॥ अकप्रवीणा कलहसपत्रा सरस्वती शश्वदपोहताद्व ॥ २ ॥ ब्राह्मी विजे

पीठ विनिद्रकुंदप्रनावदाता घनगर्जितस्य ॥ स्वरेण जैत्री क्रतुना स्वकीयप्रना वदाता घनगर्जितस्य ॥ ३ ॥ मुक्ताक्षमालालसदौपधीशाऽनिशुज्वला नाति करे त्व दीये ॥ मुक्ताक्षमाला लसदौपधीशा यां प्रेक्ष्य नेजे मुनयोपि हर्ष ॥ ४ ॥ ज्ञानं प्रदातु प्रवणा ममातिशया लुनाना नवपातकानि ॥ त्वं नेमुपां नारति, पुंडरीक शयालुनानान्नवपातकानि ॥ ५ ॥ प्रौढप्रनावा समपुस्तके न ध्याता सि येनांबि विरा जिह्स्ता ॥ प्रौढप्रनावा समपुस्तकेन विद्या सुधापूरमदूरडु:खा ॥ ६ ॥ तुन्यं प्र णाम क्रियते नयेन मरालयेन प्रमदेन मात ॥ कीर्तिप्रतापा नुवि तन्य नम्रमरालयेन प्रमदेन मात ॥ ७ ॥ रुच्यारविंदभ्रमदं करोति वेलं यदीयोर्चति तेऽन्हियुग्म ॥ रु च्या रवि दन्नमदं करोति स स्वस्य गोष्ठी विड्षां प्रविश्य ॥ ८ ॥ पादप्रसादात्तव रू पसंपत् लेखान्निरामोदितमानवेश ॥ नवेन्नर सूक्तिनिरव चित्रोल्लेखानिरासीदि तमानवेशः ॥ ९ ॥ सितांशुका ते नयनानिरामा मूर्ति समाराध्य नवेन्मनुष्य ॥ सितांशुकांते नयनान्निरामांधकारसूर्यः क्षितिपावतस ॥ १० ॥ येन स्थित त्वामनु सर्वतीर्थ्यै सनाजिता मानतमस्तकेन ॥ डुर्वादिनां निर्दलित नरेंद्रसनाजितामानत मस्तकेन ॥ ११ ॥ सर्वज्ञ वक्रवरतामरसाकलीनामाली भ्रनी प्रणयमंथरया दृशे व ॥ सर्वज्ञवक्रवरतामरसाकलीना प्रीणातु विश्रुतयशा श्रुतदेवता न ॥ १२ ॥ क्षतस्तुतिर्निविडनक्तिजमल्लष्टकैर्गुंफैर्गिरामिति गिरामधिदेवता सा ॥ वालोऽनुकंप्य इ ति रोपयतु प्रसादस्मेरां दृशं मयि जिनप्रनसूरिवर्ण्ये ॥ १३ ॥ इति श्रीजिनप्रनसूरि कृतश्रीशारदास्तवनं समाप्तम् ॥

॥ अथ श्रीजिनसिंहसूरिस्तवनप्रारंन ॥

प्रन्नुः प्रदद्यान्मुनिपक्षिपंक्तेर्नागारिरागोपचिति सदान ॥ समुद्वहन् श्रीजिनसिंह सूरिर्नागारिरागोपचिति सदा न ॥ १ ॥ कल्याण गोत्राधितमोहरेणों चमानिलेन स्थिरतागुणेन ॥ कल्याणगोत्रायि तमोहरेणौन्नत्यं त्वयैवार्हतशासनस्य ॥ २ ॥ स्वा मिन् मनोन्वेति न ते मृगाक्षी मनोजवाना चतुरगमानां ॥ वोयेन नृक्षीर्णे कुलं गजा ना मनोजवानां च तुरगमानां ॥ ३ ॥ कदर्पकातारविनावसूना प्राप्ते त्वयीशान्यमृ र्पि तप श्री ॥ कंदर्पकातारविनावसूनां निधिर्गुणानां नुवि यत्त्वमेव ॥ ४ ॥ ज गज्जनांनोजवने गुणौघवक्रारविंदं नविना कृतोह ॥ वदे त्वदीयं सकलोरुपस्य व क्रारविंदं नविनाकृतोहं ॥५॥ सर्वे कषायानलमेघवारिमोहाय सूक्तं शृणु त विजेतु ॥ स र्वे कषायानलमेघवारिहृत्तं स्मर श्रीजिनसिंहसूरे ॥ ६ ॥ मुदे न कस्यास्तु धुरि स्थि

ता ते सरस्वती कुड्वशीकराणा ॥ माधुर्यशैत्याज्ञयिनी तरिर्नी सरस्वती कुड्वशीक
राणा ॥ ७ ॥ सदोदिताबोधमपूरुषा अप्यानविताबागमृत श्रवोन्यां ॥ सदोदिताबो
धमपूरुषा अप्युपाशमस्तेन मुनीषु तेषां ॥ ८ ॥ व्यामोह्वाणासुरदर्पमाथ पद्मावरो
दीर्णतमोवितान ॥ त्वमेधि सन्मंत्रजपान्निराद्ध पद्मावरो दीर्णतमोवितान ॥ ९ ॥
योगेन धीरोचित माननीय श्रियस्तवोचे शशिनोपमानं ॥ योगेनधीरोचित माननीय
प्रख्यातमूर्खं तमुदाहराम ॥ १० ॥ स्मराशुगानां हृदि मेगिममर्माविधामरेशास्त्र निधेहि
तानि ॥ तत्वानि सूरीड् मदान्हिचेदविधाऽमरेशाऽस्त्रनिधे हितानि ॥ ११ ॥ जिनप्र
भाचार्यमनासमानावबोधमव्या कविमात्मशिष्यं ॥ जिनप्रभा चार्यमनासमाना प्र
भो स्फुरत्वस्य तव प्रसादात् ॥ १२ ॥ श्रीमज्जिनेश्वरयतीश्वरपादपद्मशृंगारभृंगकरणि
जिनसिंहसूरि ॥ इत्थं स्तुतोस्तु॰ यमकै शमकैरवेभुरानंदकदजनदुर्लजितो नतानां
॥ १३ ॥ इति श्रीजिनप्रभसूरिकृतयमकस्तवकितश्रीजिनसिंहसूरिस्तवनं समाप्तं ॥

॥ अथ श्रीपंचनमस्कृतिस्तवनप्रारंभ ॥

प्रतिष्ठित तम पारे पारेवाग्वर्त्मवैभव ॥ प्रपंच वेदस पंच नमस्कारमनिष्ठुम॰
॥ १ ॥ अहो पंचनमस्कार कोप्युदारो जगत्सु य॰ ॥ सपदोऽष्टौ स्वयं धत्ते दत्तेऽनता
स्तु ता॰ सता ॥ २ ॥ दत्तेऽनुकूलएवान्यो भुक्तिमात्रमपि प्रभु ॥ एष पंच नमस्कार॰ प्रा
तिलोम्येपि मुक्तिद॰ ॥ ३ ॥ नमस्कारनरेन्द्रस्य किमपि प्राभव स्तुम ॥ यदीयफूत्कृतेना
पि विद्रवति द्विष क्षणात् ॥ ४ ॥ सिद्धयोप्यणिमाद्यास्ता नमस्कारमधिष्ठिता ॥
अष्टापष्टयक्षरात्मापि यदसो प्रणवेऽविशत् ॥ ५ ॥ शिरःकादिधियाधीरै स्वांगदेशनि
वेशिता ॥ नमस्कृतेर्नवपदी कटरे वज्रपंजर ॥ ६ ॥ वर्ण्यता श्रीनमस्कारान् कार्मण
किमतोधिकं ॥ यत्संप्रयोगत पांशुरपि सवनयेज्जगत् ॥ ७ ॥ नमस्कार नुम सिद्धं
यत्पदस्पर्शपूतया ॥ पद्माभ्द्रादितसर्वांग शांतिमासादयेऽऽवरी ॥ ८ ॥ नववर्णी नम
स्कृत्या कृती प्रतिपदं जपन् ॥ विधत्ते विविधानिघ्नविघ्नावग्रहनिग्रह ॥ ९ ॥ कर्णिका
ष्टदलाढ्ये हृत्पुंडरीके निवेश्य य ॥ ध्यायेत्पंच नमस्कार संसार स तरेत्तरां ॥ १० ॥ अष्टौ
कोष्टे पदेष्वस्य वर्णानालिख्य तावत ॥ कुड्यादावर्चयन् सम्यगेति शांतेर्निशांतता
॥ ११ ॥ आयाक्षराण्यपीष्टार्थसिध्यै स्यु परमेष्ठिना ॥ बिन्दुरप्यामृत किं न नाशयेद्विषवि
क्रिया ॥ १२ ॥ करांगुलीषु विन्यस्यार्हदादीन् ध्यानमानयन् ॥ प्रत्यूहपन्नगव्यूहव्यपोहे
वैनतेयति ॥ १३ ॥ गुरून् पंच क्रमात् ध्यायन् मुद्रया परमेष्ठिना ॥ गूढप्ररूढ मचिरात्
कर्मग्रंथि विमोचयेत् ॥ १४ ॥ षोडशाक्षरगान् अध्यापरम॰ परमेष्ठिन॰ ॥ प्राणी प्रणि

दधानोप्यौपवस्तुफलमेधते ॥ १५ ॥ विद्युज्जलाग्निनृपालव्यालचौरारिमारिज ॥ नयं वचयते पच नमस्कारस्य संस्मरन् ॥ १६ ॥ आराध्य विधिवत्पंच नमस्कारमु दारधीः ॥ लक्षजापेन पापेन मुक्तमार्हत्यमश्नुते ॥ १७ ॥ ऐहिक फलमीप्सूनामष्ट कर्मप्रसाधिनी ॥ मुक्त्यर्थिनां च स्यादेषैवाष्टकर्मनिषेधिनी ॥ १८ ॥ विपदामभि चारस्योपादानस्याखिलश्रिया ॥ स्मर्ता नमस्कृते. स्वर्गिवर्गेण वरिवस्यते ॥ १९ ॥ चतुर्दशानां पूर्वाणामेषैवोपनिषत्परा ॥ आद्या सकलविद्यानां बीजाना प्रकृति परा ॥ २० ॥ इयं पथ्योदनं पथ्यं परलोकाध्वयायिना ॥ परमास्त्रं नृणां मोहराज युद्धाय सज्जतां ॥ २१ ॥ प्राणी प्राणप्रयाणस्य क्षणे ध्यायन्नमस्क्रियां ॥ लभते सु गतिं नैकान् पाप्मन. कृतपूर्व्यपि ॥ २२ ॥ नमस्कृति कृपावित्तै श्रोत्रयो भ्राजृती कृता ॥ स्वीकृत्य पुण्यसध्र्यंचस्तिर्यंचोपि ययुर्दिव ॥ २३ ॥ त्रिदंडिनं निगृह्याऽसिय ष्टिना श्रेष्ठिनंदन· ॥ नमस्कारस्य महसाऽसाधय त्स्वर्णपूरुषं ॥ २४ ॥ स्मृत्वा पंच नमस्कारं प्रविष्टायास्तमोगृहं ॥ घटन्यस्तो महासत्या पन्नग पुष्पमाल्यभूत् ॥२५॥ नमस्कारेण सबोध्य मातुलिंगवनामर ॥ प्राणत्राण स्वपरयोर्व्यधत्त श्राद्धपुंगव ॥ २६ ॥ यच्छ्रुता हुंडिक प्रापत् सुकुल चडपिंगल ॥ इतस्तादृक् गुणस्फीति सुदर्श न सुदर्शने ॥ २७ ॥ एष माता पिता स्वामी गुरुर्नेत्रं भिषक् सखा ॥ प्राणत्राण गतिर्दीप. शांति पुष्टिर्महन्मह· ॥ २८ ॥ निधय संनिधौ कामधेनुरप्यनुगामिका ॥ भूभृतो भृतकास्तस्य यस्य नैष हृदो हिरुक् ॥२९॥ नास्येयत्तां प्रभावाणा क्रमवर्ति तया गिरा ॥ मितायुष्टाश्च सर्वोपि न्यक्षेण भणितु क्षम ॥ ३० ॥ सर्वावस्थोचित सर्वश्रुतसार सनातनं ॥ परमेष्ठिमहामंत्रं भक्तितत्रमुपास्महे ॥ ३१ ॥ उच्चैर्योजन लक्षमानविदितो विभ्रत्सुवर्णात्मतां भव्यानंदनभद्रशालमहिमा रोचिष्णुचूलाचि त ॥ अस्तु श्रीजिनगेहभास्वररुचिस्थानं लसन्निर्जर सोय व· परमेष्ठिपंचकनम स्कार सुमेरु श्रिये ॥ ३२ ॥ साम्नायावयवां जिनप्रभगुरुर्या सत्रयामासिवान् दि व्या पचनमस्कृतिस्तुतिमिमामानदनंदन्मना. ॥ यस्यैषाचति कंठसीमनि सदा मुक्ता लताविभ्रम त मुंचत्यचिरेण विघ्ननिचया. श्लिष्यति च श्रीभरा ॥ ३३ ॥ इति श्रीपचनमस्कृतिस्तवनं समाप्तम् ॥

॥ अथ श्रीवीरस्तवनप्रारंभः ॥

श्रीवर्द्धमान परिपूरितनम्रकाम चामीकरप्रभ जिनप्रभसूरिरेतं ॥ सोसूत्र्यते त व जगज्जनदर्पदर्पदीपोत्सवस्तवलव यमकावदात ॥ १ ॥ श्रितास्त्वा कमलाद

र्म्य कल्पपाद पयोज ये ॥ करौ तान् प्रति विश्वैककल्पपादपयोजये ॥ २ ॥ क स्ते नति न मद्दोग्रसिंधुरारातिलक्ष्मणे ॥ एके च तुल्यचित्ताय सिंधुरारातिलक्ष्मणे ॥ ३ ॥ द्विखेश देह दर्गे त्वां शिवर्गकार्त्तिके विद ॥ नान्यतीर्थ्या यत्र लुप्ता शिवशका र्त्तिकेविद ॥ ४ ॥ रुद्धान्यपवर्णानामादान दीपालिका सता ॥ कोटि परा यत्र तेऽन्न दानदी पालिका सता ॥ ५ ॥ कुदृशा शुश्रुवे तेऽन्यदेशनाशितदर्पका ॥ धन्यैरेवेश वैरा ग्यदेशनाशितदर्पका ॥ ६ ॥ त्वन्मुक्त्याऽसीत्तमो हंतु तरसा दक्ष पावनी ॥ पू पापा पापपद्माऽदपेतरसादक्षपाऽवनी ॥ ७ ॥ त्वत्सेवायां हृषीकेभहस्तिपाऽलस्यहीनता ॥ कैर्न नाम तदा राज्ञो हस्तिपालस्य हीनता ॥ ८ ॥ दधाना ऽघोरगेपूक्तस्वातिरेकाविराज ता ॥ कुक्षेषु जात त्वन्मोक्षो स्वातिरेका विराजता ॥ ९ ॥ त्वन्निर्याणेन करण ना गसङ्गमरजयत् ॥ एनासि भगवन् क ना नागसंङ्गमरजायत् ॥ १० ॥ मूर्छागत स्येंद्रियार्थममता विषपानत ॥ नाथोपचर्या कुर्यास्त्व मम ताविपपानत. ॥ ११ ॥ तावक या पिबत्युच्चै रमायाननसारस ॥ दृष्टिर्विंदति सोरस्य रमाया न न सारसं ॥ १२ ॥ स्तूयासमन्वहमह भवत पृथिव्या सिद्धार्थनंदनयशोभिमतं समस्या ॥ सिद्धार्थनंदनयशोभि मत समस्या. सर्वश्रिया जिन निज हृदि रोप्यता मे ॥ १३ ॥ इतिश्री जिनप्रभसूरिविरचितश्रीवीरस्तवनं समाप्तम् ॥

॥ अथ श्रीआदिजिनादिस्तवनप्रारंभ ॥

प्रणम्यादिजिन प्राणी मरुदेवागजायते ॥ हरणे पापरेणूना मरुदेवा ग जायते ॥ १ ॥ गर्वमदवमब्जावमाननम्यप्रभोरुण ॥ सौंदर्येणाजितस्वैर माननस्य प्रभोरु ण ॥ २ ॥ मोहस्यानापतत्त्राण शभवेश मिता रये ॥ यस्मै विश्व नमश्चक्रे श भवे शमितारये ॥ ३ ॥ मुदे ऽभिनंदन सूतो राजसवरदेहत ॥ यत्पादाब्जे नृणा भाव राजस वरदे हत ॥ ४ ॥ दु स्थाना सुमते दौस्थ्यं साध्वसागदवालन ॥ ध्यायस्त्वा च स नीरोग साध्वसागद वालन ॥ ५ ॥ क पद्मप्रभ शक्तीस्ते प्रभावद मिता हिता ॥ सख्यातुमीष्टे चद्रार्कप्रभावदमिता हि ता ॥ ६ ॥ मोहराज सुपार्श्व त्व नुतमायामलोलुप ॥ भक्तौ तेऽत कोस्तु विद्वानुतमायामलोलुप ॥ ७ ॥ तव चद्रप्रभोत्पन्नमहसे नक्रमेनत ॥ न सेवाविरहं सोढुं महसेनक्षमे नत ॥८॥ मयि विभ्रत्तनुं चद्रभावलक्ष्मप्रभोदया ॥ तन्यास्त्व सुविधे सर्वभावलक्ष्म प्रभो दया ॥ ९ ॥ शीतलासुं श्रियोधाम्ना रविकल्पमनामया ॥ त्वा प्रत्यात्मा कृतो भतेरवि कल्पमना मया ॥ १० ॥ त्वन्मते रमते श्रेयन् कमलायतनेत्र या ॥ सा धीप्रिया मेऽस्तु रुत कमलायतनेत्रया ॥ ११ ॥ वासुपूज्य सविज्ञास्त बंधूकारुण्ययोगत ॥

शरण त्वक्रमौ विश्ववंधूकारुण्ययोगत ॥ १२ ॥ श्रेयस शरण नव्य त्व गच्छ विमलंरुते ॥ त्वदि देहि च नक्त्यादिकृत्व गच्छविमलंरुते ॥ १३ ॥ यःख्यातस्त्रि जगत्यार्थ सदानुतनयोऽनिशं ॥ हंत्वकंवन्मोहमयीं सदानुतनयोनिशं ॥ १४ ॥ त्वत्पादाब्जेऽलिनो हर्षाद मलं पटतां पदं ॥ शांते मोहं जिन मन्ये दमलंपटता पदं ॥ १५ ॥ सुश्रीकुंथु प्रतिप्रह्वा यमलार्जन भंजना ॥ यास्ताविंडेरागगेपयम लार्जनभंजना ॥ १६ ॥ सोढुं समर्था नूदस्य नतमामवनिर्बलं ॥ सोरत्वमर्हच्च क्रीडनत मामव निर्बलं ॥ १७ ॥ शक्तिं नवाब्धेरुद्धर्तुं मतिमल्लीनदेहिन. ॥ पुण्य धात्तर्जने नक्तिमेतिमल्लीन देहि न ॥ १८ ॥ यस्या विलासास्त्रैलोक्य पद्मानंदनना नव ॥ मा तु सुव्रत सा शक्या पद्मानंदनना न व ॥१९॥ यत्र नान्हिद्यी ते वा न मे रुचिरकोमला ॥ तत्र राजेप्यनीताना नमेरुचिरकोमला ॥ २० ॥ नेमे नमस्ते दोपक्ष रंजन प्रनविस्रवे ॥ कर्मासुग्वधायोच्चैरजनप्रनविस्रवे ॥ २१ ॥ तापाग्नौ जुहुवे पार्श्व नवता पंचसायक. ॥ श्रितोऽतस्त्वं जनो मोहनवतापं च सायक ॥ २२ ॥ नाऽलुन्य कामसौख्याय लोकनेतरणीयसा ॥ तेन वीर जगत्कर्मालोकने त रणीयसे ॥ २३ ॥ तवार्हन् पंचकल्याणी दया लोकामदायिन ॥ पायास्त्रिजगते दत्तो दयालो कामदायिन ॥ २४ ॥ त्रातु जीववीथा संविदक्षा मानव तामिता ॥ जिने न्द्रा पातु करुणा दक्षा मानवतामिता ॥ २५ ॥ यदाराध्यति गीर्वाणव्रजाऽनयदशा सनं ॥ तत् प्रक्षा शरण नक्ता व्रजानयदशासनं ॥ २६ ॥ यस्या नेशजिरा जन्या सुत रामघवासना ॥ हंत्वापदः सुसंघम्यास्तुतरा मघवासना ॥२७॥ लक्ष्म्याकृष्टिकरं जिनेन्द्र मनर्थं नद्रावलीमंदिर वंदे तस्य गिर नतभ्रमतम. सूर्यं धिया कारण ॥ सार्वीयप्रथित प्रनावमखिलारिष्टौघहानिप्रद दंनव्यालसृणि वरेण्यसमय रगंगुण बोधिदं ॥ २८ ॥ इति श्रीयमकयुक्त आदिजिनादिस्तवनं संपूर्णम् ॥

॥ अथ श्रीपार्श्वप्रातिहार्यस्तवनप्रारंभ ॥

त्वां विनुत्य महिमश्रियामहं पन्नगाकमठदर्पकोषिण ॥ स्वा पुनामि किमपीनर द्विताापन्नगा कमठदर्पकोषिण ॥ १ ॥ कोनुरज्यति देवनौकसि नागशोकतरुणा वि नासिते ॥ रत्नहेमरुचिनि द्वितोल्लसन्नागशोकतरुणाविनासिते ॥ २ ॥ देहदीधिति तिरस्कृतो दयसारमा सुमनस सदानवा ॥ देशना नुवि किरति ते स्फुरत्सौरमा. सुमनसः सदानवा ॥ ३ ॥ तादृश श्रवणतस्तवोत्तमा कारकाय वरदेशनाध्वने ॥ प्रस्थित. कइव पाप्मना निराकारकायवरदेशनाध्वने ॥ ४ ॥ नाकिनायकयुगेन सादर चामरैर्विपदनाग वीज्यसे ॥ त्व न कैर्नवसुखायमुक्तये चामरैर्विपदनागवीज्यसे ॥ ५ ॥

वीक्षितुर्नयनयोर्निराकृता शसजासुरमणीपजावत. ॥ आतनोति कृतसिद्विष्टर शस नासुर मणीपजावत ॥ ६ ॥ इष्टरर्पयति कीर्तिशुभ्रिता शातजावजयमर्यमोहद ॥ दीप्यमानमनुमौलि तावक शातजावजयमर्यमोहद ॥ ७ ॥ व्योम्नि गर्जि निनद पु रस्तवामानवैरिमुदिरो महर्षिजि. ॥ कैर्न डुंडुनिरव श्रुतस्तनौ मानवैरिमुदि रोमहर्षि नि ॥ ८ ॥ ग्रेमुषीषु कुपथानि मौक्तिकन्यास हृद्यरुचितानि चायितु ॥ त्रीणि ते जिन शितोस्रवारण न्यासहृद्यरुचितानिचायितु ॥ ९ ॥ प्रातिहार्यमहिमाजयस्तव श्रीजिनप्रज वितिः स्तुतो मया ॥ पार्श्वकामितफलाय कल्पतां कल्पपादप इवेप नेमुषा ॥ १० ॥ इति जिनप्रजसूरिकृतश्रीपार्श्वप्रातिहार्यस्तवन सपूर्णम् ॥

॥ अथ श्रीकल्याणपचकस्तवनप्रारंभ ॥

निजिपलोकायित नूतल श्रिया नयन्मुद नैरयिकानपि क्षण ॥ त्रिलोकलोकस्य रते प्रपचक जिनेड् कल्याणकपचकं स्तुम ॥ १ ॥ निवेदित प्रीतिपरं पुरदरश्चतुर्द श स्वप्नविनावितोदय ॥ महानिधानागम चारुरर्हता तनोतु गर्भावतरोत्सव शिव ॥ २ ॥ कुकुप्कुमारीकृतसूतिसस्क्रिय सुपर्वसपादितमज्जनक्षण ॥ सृजतमुद्योतम यं जगत्रय जन्तुमेह संस्तुमहे नवद्वहं ॥३॥ सुरोपनीतै परिवत्सर धनैर्यथानिजा र्थं परितोषितार्थिने ॥ जिनाधिपाना निखिलागिरक्षिणे नमस्तपस्याप्रतिपत्तिपर्वणे ॥ ४ ॥ अमर्त्यनिर्वर्तितदेशनाऽवनीकृताद्भुत कैवलवेजवोद्भव ॥ अमदनादीरवपू रिताबर करोतु जैन. शुजनाजन जन ॥ ५ ॥ पुरदरक्रंदितसभ्रमभ्रमत्सुरौघमालि गितमुक्तिवल्लभ ॥ जिनस्य निर्वाणदिन दिगंतरस्फुरत्तम सत्तमशर्मणेऽस्तु न ॥ ६ महर्षयो नूतनवद्भविप्यताममुत्र कल्याणकपचकेऽर्हता ॥ विना विवेहान् दश कर्मनू मिषु स्मरति मासर्क्षतिथीन् सनातनान् ॥ ७ ॥ इत्याहतस्त्रिभुवनप्रनुसत्क पचक त्राणवज्रकवच हृदि यो बिजर्त्ति ॥ शस्त्राणि ते जिततराण्यपि मोहराज सौजाग्य जाग्ययुजि न प्रजवति तस्मिन् ॥ ८ ॥ इति श्रीकल्याणपचकस्तवन समाप्तम् ॥

॥ अथ लक्षणप्रयोगमयश्रीवीरस्तवनप्रारंभ ॥

निस्तीर्णविस्तीर्णजवार्णव झेरुत्कर्णमाकर्णितवर्णवाद ॥ सुपर्णमहोहि दमे सु पर्ण श्रीपर्णवर्ण विनुवामि वीर ॥१॥ यैर्व्याप्यता प्राप्यत तावकीनं क्रमाबुज नाथ नमस्करोते ॥ ससारचक्रभ्रमणानिःशस्य गणस्य ते वृत्करण गृणति ॥२॥ तुल्येपि ने त्रामृतवर्षिनावे कलंकपंकच्युतिसंयुतिन्या ॥ प्रधानशिष्टं वदन त्वदीय मन्यामहे ऽन्वाचयशिष्टमिंदु ॥ ३ ॥ दिगोरिव त्वत्प्रणतस्य सख्या पूर्वा प्रवृत्तिर्न कुतीर्थिका

नां ॥ विनो बहुव्रीहिसमासवत्त्वमन्यार्थे एवोपदधासि वृत्ति ॥ ४ ॥ विनक्तिमुक्तं पुरु
पैरसंख्यै. समाश्रितं धातुविकारहीनं ॥ अपूर्वमेतत्कटकृत्यनिष्ठाप्रधानमाख्यात
मिन त्वदीय ॥ ५ ॥ यस्मिन्न संधिर्न च वर्णलोपो न संस्तुतिर्विग्रहकारकाणां ॥
नवा विकल्प क्वचन प्रयोगेष्वहो नव व्याकरणं तवेदं ॥ ६ ॥ ध्यात्वा हृदा त्वा फ
लमेति नव्यो दृष्टापि साक्षान्न कृतीलनव्य. ॥ तत्सत्यमेतद्बहिरगतो यत् स्यादंतरं
गोत्रविधिर्बलीयान् ॥ ७ ॥ एतावतैव प्रतिनाति विश्वविलक्षण वीर नवच्चरित्रं ॥
नालेन युष्मत्पदसंप्रयोगेप्यलंनि लोकस्य यडुत्तमत्वं ॥ ८ ॥ एकत्र धातावुपस
र्गपंचकप्रयोग इष्ट. कविनिर्निरंतर ॥ त्वध्यानधातावुपसर्गविंशति सुर प्रयोक्ता न
कथं कुलक्षण ॥ ९ ॥ प्रनो महच्चित्रमिदं कदंबके कुतीर्थिकाणामपि कर्म धारये॥
यन्मोहराजप्रधनेषु पुंवद्भावो न कश्चित् परिपोस्फुरीति ॥१०॥ शुद्धयोर्वरद नावकर्म
णोर्दर्शयन् विकरणस्थिति पदे॥निर्विनक्ति समुदाहरन् पदं साधुलक्षणविचक्षणो न
वान्॥११॥अनुपघातिनमेव किलागमं प्रणिगदंति जिनेश्वर शाब्दिका ॥असुमतामुपघा
तकर स्पृशत् कथमिवागमतां स कृत परे ॥१२॥योपादानं नश्यत पापपूगस्यासि व्या
प्यं वदतेवासिवाना॥आधार श्रीसंपदा संप्रदानं त्रैलोक्यस्य स्तोत्ररत्नोपदायाः ॥१३॥
वेडावद्य. करणमुशतां मोहवार्धि तरीतु कर्ता नातेर्हिरदरदनच्छेदशोनिर्यशोनि ॥
नव्यानां यस्त्वमसि सुपथप्रस्थितो हेतुकर्ता तस्मै तुभ्यं जिन मम शिरो नम्रताकम्रम
स्तु ॥ १४ ॥ अंतस्थास्तव शासनस्य यशसां कुंदावदातत्विषां गच्छंते भुवि संप्र
सारणविधौ मर्त्या न तत्कौतुकं ॥ यत्ते नित्यमनामिनोपि कुगुरौ डुर्वृत्तदेवेषु च भ्रा
जते गुणवृद्धिनाजनतया भ्रमस्तदत्यद्भुतं ॥ १५ ॥ तात भ्रातरिदं नपुंसकमपि स्वांतं
मदीयं नवन्माहात्म्यस्तुतिसुंदरी प्रणयत पाणौ करोत्वेकदा ॥ तत्संश्लेषसुखानु
नाववशत' क्लैब्य विधूय क्षणात् तत्रोत्पादयिता ऽथ शाश्वतचिदानंदाह्वयं नदनं
॥ १६ ॥ इत्थंकारमिनारि लक्षणनर. सल्लक्षणप्रक्रियाचित्रं स्तोत्रमिदं विदंनहृदयो
जिव्हाग्रजाग्रत्समं ॥ कुर्वाण' स्मरबाणकुंवनकलानिष्णाततानर्तकी नाट्याचार्य
जिनप्रनेंद्र पदवीसाम्राज्यमासादयेत् ॥ १७ ॥ इति श्रीजिनप्रन विरचितलक्षणप्र
योगमयश्रीवीरस्तवनं समाप्तम् ॥

॥ अथ श्रीवीतरागस्तवनप्रारंभ' ॥

जयंति पादा जिननायकस्य दोषापहा ध्वस्ततमोविकारा ॥ रवेरिवाश्चर्यमतापका
श्च न कौशिकक्लेशकरा खराश्च ॥ १ ॥ वाग्ज्ञानपूजानिरपायरूपाश्चत्वार एतेऽतिशया
स्तवैव ॥ देवाधिदेवत्वमनिष्पुवतश्चतु कषायक्षतये तु नाथ ॥ २ ॥ शुद्धप्रयोगस्तवसं

स्तवेन कृतार्थतामेति कृती कृतीश ॥ न वाच्यतां याति कदापि लोके यथा यथार्थस्तव काव्यकर्ता ॥ ३ ॥ त्वमेव चेच्चेतसि जागरूको जतोरसि श्रीजिनराजमल्ल ॥ नवेन्न किं सत्त्रिजगन्महल्ल प्रपात्यते किं नहि मोहमल्ल ॥४॥ त्वमेव देवस्त्रिविधेन येषां जगत्त्रयीवद्यपदो हि पादे ॥ धात्री पवित्रीक्रियते किमत्रचित्रं तदीयैस्त्रिजगत्पवित्रे ॥ ५ ॥ उपाधियोगान्महतो लघुत्वं लघोरपि प्राज्यगुरुत्वमेव॥आदर्शके देव यथा द्विपस्य प्रदीपदीप्तौ तु तनूकृत स्यात् ॥६॥ कश्चिद्गुणाना हि लवोपि लोके यो दृश्यते सोपि विनो प्रभाव ॥ अहेतकल्याणनिधेर्जिनेन्द्र पयोविना पल्लविता नवृक्ष ॥ ७ ॥ नात पर देव जडत्वमत प्रत्यक्षलक्षोपि नवान्नबुध ॥ सर्वज्ञताप्यस्ति विनो न चान्या त्वमेव देवो विदितो यदीह ॥ ८ ॥ विदति सर्वेप्यपरानधीशान् नतान्नतास्ते प्रवदंति सर्वान् ॥ जगज्जगन्नाथ यथास्थित हि त्व वेत्सिहि त्वातु न वेत्ति चित्रं ॥ ९ ॥ बहि स्थितं वेत्ति परस्वरुप न स्वस्थितं देव तव स्वरूपं॥ चक्षुर्यथा पश्यति बाह्यरुपं नचात्मरुप तु कदापि लोके ॥ १० ॥ सदात्मविज्ञानविहीनधीभिर्न ज्ञायते नाथ विनो स्वरुप ॥ स्वशीर्षपश्चात्प्रविभागसम्यङ् निरीक्षणे कोपि न बाह्यहेतु. ॥ ११ ॥ मध्यस्थभावोपि जिन त्वयीह गुणक्षते स्याद्गुणिनो नितातं॥ यथाऽगुणप्रत्यय एपधातो. कर्मण्यथो कोऽत्र विचारहेतु ॥ १२ ॥ त्वद्भक्तिभावोप्ययथार्थ एव भवन्प्रणीतार्थ विपर्ययेण ॥ विधीयते सर्वहितोपसर्गवर्गेण धात्वर्थइवान्यथा हि ॥ १३ ॥ दोदूयते य स्वयमेव रागद्वेषादिलुंटाकनटैर्यथेष्ट ॥ सस्तूयते सोपि हि देवबुध्या हहा महामोहविजृंभितं तत् ॥ १४ ॥ अचिंत्यमाहात्म्यनिधिं प्रसन्नं जगच्छरण्य जगतोपि पूज्यं ॥ त्वमेव देव प्रविवेत्सि हि त्वा प्रकाशतेऽन्येन किमु प्रदीप ॥ १५ ॥ किमस्तिनास्तिति विवेकपक्षा रागादिपक्षक्षतिलब्धदक्षा ॥ ये श्रीजगन्नाथ जिनप्रभस्ते त्वामेव देव जिनमाश्रयति ॥ १६ ॥ इति श्रीवीतरागस्तवन समाप्तम् ॥

॥ अथ श्रीचंद्रप्रभस्वामिस्तवनप्रारंभ. ॥

देवैर्य स्तुपवे तुष्टं सोमलाञ्छितविग्रह ॥ दयाच्चंद्रप्रभ प्रीतिं सोमलाञ्छितविग्रह ॥ १ ॥ येषां पूजानिधि कर्माजनहृत्कमलालय ॥ ते जिना पातु वोभव्यजनहृत्कमलालय ॥ २ ॥ कुतीर्थिसार्थेन दुरासद भोज्ञानिरजन ॥ श्रुत सेवेत मोहाग्निसद्भो ज्ञानिरंजन ॥३॥ पातु गीर्वा कृताविद्योपरमा कमलासना ॥ यत् प्रभो वा जनैर्लेभे परमा कमलासना ॥ ॥ ॥ इति श्रीचंद्रप्रभस्वामिस्तवनं समाप्तम् ॥

॥ अथ श्रीरुषनदेवस्तवनप्रारंजः ॥

संस्कृतजापा.

निरवधिरुचिरज्ञानं दोपत्रयविजयिनं सतां ध्येयम् ॥ जगदवबोधनिबधनमादि जिनेंद्रं नवीमि मुदा ॥ १ ॥ कस्तवमिति द्विपोलं वदितु परितो गुणान् गुरुनिजो पि ॥ चुलुकै प्रमिमासति वा कश्व जलं वरमनीरनिधे ॥ २ ॥ तदपि त्वज्ञक्तिजर प्रतरलितो वच्मि तावकगुणाणुं ॥ चापलजुन्नो स्फुटमपि लपन् शिशुर्वा निरपवा द ॥ ३ ॥ ज्ञानप्रदीपजमिव स्निग्धांजनमुपदिर्त चरणलक्ष्म्या ॥ सध्यानदृगंजि ताय चिकुरचयस्ते स यो रुरुचे ॥ ४ ॥

प्राकृतजापा.

तमकलिए सप्पखयमो,र मोरउक्काहुते किलिम्मंति ॥ तुह सासणापिधं जे कुण ति विविहे तव किलेसो ॥ ५ ॥ तज्जिय कल्लाणसिरि, पिंडे वकल्लाणसिरिविलासगि हं ॥ तुह वदे देहमहं विलसिरमोहपि ह्यमोहं ॥ ६ ॥ युग्म ॥ तुह मुहरजासयला, रविदलछी मरट्टफुसणेण ॥ जं विजितु हिमरस्सी नियकंती निवहसुहडेहिं ॥ ७ ॥ असई तमज्जि नवजर सुसिरिडं पहू ससंकोसो ॥ डुग्गं खुर इय घणपरि,हिंदंजउं परनिसेहृहा ॥ ८ ॥

मागधी जापा.

तुह शुस्तिदेवनाव, स्तं गदपञ्ञे शमयपधमचञ्ञें ॥ ते थिए कुमदलश्कशव,शि मिश्चादिस्टी पददि जवे ॥ ९ ॥ तमवय्पवय्यिदमिधं, आचिस्किद शुस्टु मोस्कपुजम ग्गं ॥ काला चिस्टामि हगे, हलिशजले पिस्किडं धञ्ञे ॥ १० ॥ केलीहलाहशुणहं, हलिञ्ञकशवस्टलायि किलणाह ॥ तुह अपुलजवत्तिलसं, वदामु हगे शलीलाह ॥ ११ ॥ संयणिदधञ्ञकमले, ये पश्कालिदमहदपंकमले ॥ धिदपजमहिमशलूवे, ययड जव शे शदा कोहे ॥ १२ ॥

पैशाची जापा.

विबुधान राचिअानत, अनञ्ञ सामञ्ञ वुञ्ञ तिसपञ्ञं ॥ रंतून हितपके मे, कतसि द्धीकुतुबिनी पनय ॥ १३ ॥ जत्तिजरातो दूरे चिट्ठति यो तुह रमिय्यतेनेन ॥ कसटजरे चरणसुधा विहितसिनातो न सो जोति ॥ १४ ॥ युम्हातिसेवि तेदे अपुरवसुरपात वे सतय्येव॥कीरतिनो येन रती स कथं वपते सुकतबीजं॥१५॥ नत्थून तुरितरिपुनो जवव तिट्ठे तुमं मिमलरूपा॥ विलसिर पमतल्लीजल, परकालितका इवापगता॥१६॥

चूलिका पैशाची

काव सिनेहफलिता तुह वतन सेवते लमा अनखं॥हानून फकुरकुनं पोमं सक लंकमपि च विधुं ॥ १७ ॥ चलथलमंटलपटिमा चिकुराली शोफते तवसयुके ॥ चल नसिरितितसथेनू चरनायल तच्च नव तुवा ॥ १८ ॥ तुब्बंसकिलितटे फुल,ति मवख नालिव्व मंचुकचलाची ॥ गतरुचकपोलतलरुचि,फासुर सोतामिनीतामा ॥ १९ ॥ लि सफसुमक्कानाविल चनपरिह्नि संखनीरवाहखटा ॥ पथस फुवि सवकला नयनी ती तंसिया तुमए ॥ २० ॥

शौरसेनी.

कुमद मकय्यनिदाण ताऽध नवमाणविक्कदे नगव ॥ चिदाविदाव नय्ये, व नो दि यावाणनाध इमा ॥ २१ ॥ करुय अलं हरिपदवि करुय अलं वा महत्त विस यसुहे ॥ खलु लह्यि अपुरवपद पणइजण पाविदूण खलु ॥ २२ ॥ दक्षाड वि रागमिदो पय्यत्तं णेग वत्तरक्कोण ॥ नवरि तुह नत्तिपधि माजिणरायं फुरड हि दयम्मि ॥ २३ ॥ युग्मम् ॥ हीमाणहे नवादो चकिदोह अम्मदे यदिद्दावो ॥ ण ता यध तायध म ससेवगं सामिक्का तत्तो ॥ २४ ॥

॥ समसंस्कृतम् ॥

हेमसरोरुहनासं कलिमलकमलालिमथहिमनास ॥ नवनयधूलिमहाबल ना नेय नवतमनिवदे ॥ २५ ॥ तव चरणोनयजलरुह पालीसेवापरायणादेव ॥ विद ति नरालिगणा वरसिद्धिरमामरवलय ॥२६॥ महिमधर तमसमहिम, विमल वरधी सरोरुहेविमल ॥ समयदयारससुगम चरण सेवे तवासुगम ॥ २७ ॥ तव नामधेय चिताबन्धरसा भुवि नरावली धत्ते ॥ संरुद्धारिनिरामरन, दरमालिंगकेलिरसं ॥२८॥

॥ अपभ्रंशभाषा ॥

तउ रेहइ अलिसामलि बिंदुउरावलि भुयपिह्नि ॥ निज्झियरिउबलमृणे डुगं सुहडन असिलह्नि ॥ २९ ॥ हुड मिटिह विसहजह्नि, यावहुहिय जणववहार ॥ पइ कायहि मुणियह, सुफरुसप्पिय करणपयार ॥३०॥ तास्व महानवजलहिज, लिनरु निवडइ डुडुरुत्ति ॥ जास्वन पास्विय तुध्र प,डुसारुणनावकडत्ति ॥ ३१ ॥ सुकटु कह तिद्ध ता सुय, इ कहत सुसनजउजम्मु ॥ दिविदिवि जीवाजुन कर,दि पइं वुत्त उजिणधम्मु ॥३२॥ च्रवे हि कुतित्थियज, वयणू अवरुप्प रयइ विरुद्धु॥तं नेरसिवपमिय त, इ जि देवु प्रमाणेहि सुरिद्धु ॥ ३३ ॥ इकासि तेहा नाव वि,णु डुडुपणमिय तुह पाय ॥ मुंजि क्क

हि ता सुर रहइं करिविणु डुक्कविघाय॥३४॥ मज्ञ कहंतिहु नावरि,ड टडवड तण उद वेक्कू ॥ सामिय सद्दलतेउ,बु डुनहु चपइ परचक्कू ॥ ३५॥ जुत्तिवि किरिय नाणहरि, घ यंमण मनसुद्धि जुगग्गि ॥ कुकुनपहुवइ सिवनय, रि तुह सासणरहिलग्गि ॥३६॥ परि कवि तुह तणु नूडहि,कंचणकांति रवन्न ॥ वियसहि महणयणुल्लम, तामइ नवडुह तिन्न ॥ ३७ ॥

नुत्तरपद्यस्याद्यंह्रौ संस्कृतं १ समसंस्कृतं २ प्राकृतं ३ द्वितीये पैशाची चूलिका पैशाचिके ॥ तार्तीयिके मागधीशौरसेन्यौ ॥ तुर्ये अपभ्रंश ॥

नायालीह्यमंदयामयमलं नासं धरत पर राकालि पवलोतयं अखचयातत्तं क मालाचितं ॥ धीलं लोअमहं ददावह्कलं ळिन्नाह्मायालदं नाथा नीवृदिरेसि वदउं पइं लाणड सीसुल्लइं ॥ ३८ ॥

॥ कविनामगर्भचक्रं ॥

तं प्राप्तो रुचिशुद्धयोगरनसोन्मीलत्प्रतोपान्वितं शस्त· सौष्ठवनभ्रमोहरवन· कंकं जहत्तब्दवि ॥ रुच्या भास्करतिग्मसिद्धिरमणीसक्तभावः पर रता ज्ञानरमाशमास्त रुपमे तन्याः सुविर्यां चिर ॥ ३९ ॥ जगति विदितवान् यस्त्वत्कमाज्ञास्वरूपं तव शु चिपदभाव संस्तवादध्यवस्य ॥ रचयति निजकंगलंक्रियां स्तोत्रमेतद्भवति नवकरीणा सिंहसौनीष्टलक्ष्मी· ॥ ४० ॥ इति श्रीजिनप्रभसूरिविरचित अष्टभाषात्मकं श्रीऋषभ देवस्तवनं समाप्तम् ॥

॥ अथ श्रीमहावीरस्तवनं ॥

चित्रैः स्तोष्ये जिनं वीर चित्रकृच्चरितं मुदा ॥
प्रतिलोमानुलोमाद्यैः खड्गाद्यैश्चातिचारुभिः ॥ १ ॥

॥ प्रतिलोमानुलोमपाद ॥

वदे ऽमंददमं देवं यशमाय यमाशय· ॥ नायेनाघघनायेना पाकृता ममता कृपा २

॥ अनुलोमप्रतिलोम ॥

दासतां तव भागारा नचेयाय मतामस॥ समतामययाचेनरागाभावततां सदा॥३॥

॥ अर्द्धप्रतिलोमानुलोम ॥

वरदानवरादित्व त्वदिरावनदारव ॥ याज्यदेव नयान्यास सन्याय नवदेज्यया॥४॥

॥ अर्द्धभ्रम ॥

श्रीद वीर विरेजत्व दमिताक्ष गताशुभ ॥ वीताक्षमारजितारे रक्ष मा सदरगविप

॥ मुरजबध ॥

गीरतारजतारङ्ग्ऐ धीरता स्थिरतारसा ॥सारतारश्रुतावध्या सुरता जन तावकी६

॥ गोमूत्रिका ॥

ये पश्यंति तवेहास्यारविंदं नक्तिबंधुरा ॥न पतंति नवे शस्यास्ते विदो नगवन्नरा॥७॥

॥ सर्वतोन्नड ॥

नमासररसामान मारिताक्क्तारिमा॥साता म या यामतासा रक्ष्याममयाक्र७

॥ रथपदं ॥

तिर्यङ्नरसुराकीर्णा नासते ननते सना ॥
त्वन्माहात्म्यात् कृताश्चर्यं याश्रिता ततता श्रिया ॥ ए ॥

॥ द्यक्षरपाद ॥

रैगोरांगोरुगीर्गंगा गौरीगुरुररोगरुक् ॥ गोरगा गाररोगारि रैरिरो रैगुरुं गिरि ॥ १०॥

॥ एकाक्षरपाद ॥

लाललालोललीलालं ततताततिताततें ॥ ममाममाममसुमा ननानेनोननानन॥११॥

॥ एकाक्षर श्लोक ॥

कार्कंकि काककर्कांक केकाकोककेकिक ॥
ककाकुककोकैक ककु कौकोककाकक ॥ १२ ॥

॥ असयोग ॥

मरुनूमौ तपक्लाविव चारुसरोवर ॥
कृत सुकृतहीनानां सुजनं तव शासनं ॥ १३ ॥ युग्म ॥

॥ द्वाभ्यां खड्गसंदानितकं ॥

सारणि पुण्यवण्याया न्यायमौक्तिकशुक्तिका ॥ कामधेनुर्नयविदां बंधोल्लासन लालसा ॥ १४ ॥ सार स्याद्वादमुद्रायास्त्रिपदी नवतोऽजसा ॥ सा मेऽस्तु हृदि कांतेका खिन्नेन रहितेन सा ॥ १५ ॥

॥ मुसलं ॥

श्रीसिद्धार्थकुलव्योमदिवाकर निरंजन ॥
कक्लतेकांतवा मतं तीर्थंकर तवाश्रिता ॥ १६ ॥

॥ त्रिशूलं ॥

शुक्ता या त्वयि नव्याली धन्या धत्तेस्म चेतसा ॥
सामता तामसाकाममकासारगसागरं ॥ १७ ॥

॥ हलं ॥

त्रिशलाकुक्षिपाथोजराजहंस जगद्विनो ॥
भोगास्तृणमिव त्यक्तास्त्वयामुक्ति दिदृक्षया ॥ १८ ॥

॥ धनु ॥

सुरासुर नमस्तुभ्यं नमस्यति जिनोत्तम ॥
मन:प्रसादसंदर्भदलिता शुभवासना ॥ १९ ॥

॥ शर ॥

कथं कर्तुं जनो मोहव्यपोहमहदक्षम ॥
मनसा सादर यस्त्वां न स्तौति तिमिरापहं ॥ २० ॥

॥ शक्ति ॥

बाल्यो मरुशिरःकंपसंपत्प्रथितविक्रम ॥
मनोजानोकहव्याल मम स्वामी नवानव ॥ २१ ॥

॥ अष्ट दलकमलं ॥

मानितार्यक्रमामार रमामाकंद माधवः ॥
वधमार्गे ममाकास सकामाधी॰ प्रतानि मा ॥ २२ ॥

॥ षोडशदल कमलं ॥

वनभ्या न धनस्वान ध्यानमौन कनध्न ॥
ज्ञानस्थान जिनश्रीनघनमेनस्खन स्व न॰ ॥ २३ ॥

॥ स्तुत्यनामगर्भं बीजपूरं ॥

जय हेमवपु॰श्रीक जगन्मोहापहारक ॥
जराह्विीन सिंहाक जन्मनीरधि नाविक ॥ २४ ॥

॥ हरा ॥

तुभ्यं नमोस्तुजनयस्थितिकाय भीतिवन्यासुपावक सुरस्तुत वीर नेतः ॥
विद्यालतावपुलमंडपहेमरूप कल्याणधीकरणदक्ष नतेदमीन ॥ २५ ॥

॥ कविकाव्यनामांक चक्रं. ॥

नम्राकल्यपथो जिनेश्वरवरो नव्याब्जमित्रः क्रियादिष्टं तत्वविगानदोषरहितैः सूक्तैः श्रवस्तर्पण जन्माचिंत्यसुखप्रद सुरचितारिष्टक्षयो व. सदा दाता शोननवादिधी क जलदं यामेक्षणः संविदा ॥ २६ ॥

॥ चामरबधः ॥

श्रीमद्धाम समग्रविग्रह मया चित्रस्तवेनामुना नूतस्त्वं पुरुहूतपूजित विनो सद्यः प्रसृद्येधिमे ॥ ख्यातज्ञातकुलावतंस सकलत्रैलोक्यक्लृप्तातर स्फारक्रूरतरज्वरस्मरन र संरब्धरक्षारत. ॥ २७ ॥ इति श्रीमहावीरस्तवनं समाप्तम् ॥

॥ अथ श्रीजीरापल्लिपार्श्वस्तवनं ॥

जीरिकापुरपति सदैवत दैवत परमह स्तुवे जिन ॥ यस्य नाम जगतो वशंकर शंकर जपति मंत्रवज्जन ॥ १ ॥ नाथ तत्तव मुखेंडुदर्शन दर्शन च नयनामृतं स्तुवे ॥ येन मेडुरिततापहारिणा हारिणा लसति पुण्यवारिधि ॥ २ ॥ विश्वविस्तृत महाप्रनाव ते नावतेज इह मातिनो युगे ॥ उन्नते दिनकरे हि नासुरे नासुरेश्वरपुरस्य किं नवेत् ॥ ३ ॥ अर्बुदस्य नवता व्यनावि या नावियात्रिकजनेष्वनीतिद ॥ पश्यतोहरनृतापि सारसा सारसाधुनिचिता नवत्तरा ॥ ४ ॥ ग्राममात्रमपिजीरपल्लिका पल्लिकाननसहोदरीव या ॥ त्वत्पदस्थितिबलेन साधुना साधुनायकपुरीवना सते ॥ ५ ॥ त्वां नमत्यशिववार्धितारक तारककणसुमैः प्रपूज्य य ॥ प्राप्य चिन्मयमनेनसं पद संपदं स समुपैति शाश्वती ॥ ६ ॥ त्वत्पुर प्रकुरुते प्रनावना नावना जिन निधाय यो हृदि ॥ निश्चित स लनते न डुर्गती डुर्गतीर्णनवसागर प्रनो ॥७॥ यो दधाति हृदि तेंऽन्हिपंकज पंकज मलमध करोति स. ॥ तद्भयेपि न नवति पार्श्वत पार्श्वतस्यतु नवोद्भवभ्रमा.॥८॥त्वत्स्मृतेरपि जना निरामया रामया चरमया निरामया ॥ योगिनूषण नवति नूषिता नूषिता किल सुधाशनाइव ॥९॥ त्वत्पदप्रणतिलालसादर सादर दधति जातुनाध्वनिं ॥ यत्र याति ननु नानुनानवो नानवोदय नमस्तु तत्र किं ॥१०॥ अंतरंगरिपवोऽकृपापरा पापराशिहर पीमयंति मां ॥ सत्यपि त्वयि विनो कृपालये पालयेश शरणागतं तत ॥ ११ ॥ त्वन्मय जगति यस्य मानस मानसयमनतस्य डुर्द्धरा ॥ तस्करानलपय करेणवो रेणवो जिन नवति तत्क्षणात् ॥ १२ ॥ देवशाखिमणिधेनुदेवता देव तावदिह वाछितप्रदा ॥ यावदेव तव धामनामज नाम जंतुमनसि प्रदीव्यति ॥१३॥ ज्ञानिन जगदिन निरंजनं

रंजनं त्रिजगतः पुरातनं ॥ त्वां स्मरामि सकलंच निष्कलं निष्कलंकमचलं महाव लं ॥१४॥ इत्थं यः प्रयतः स्तवीति सततं श्रीजीरपल्लीपुरीवासं पार्श्वजिनप्रभुं प्रकटित प्रौढप्रतापोदयं ॥ सोवश्यं सुजगं नविष्णुरधिकं धर्मार्थकामामृतश्रीभि र्भीभिरिव स्वयं गुणगणाश्लिष्टाभिराश्लिष्यते ॥१५॥ इति श्रीजीरापल्लीपार्श्वस्तवनं समाप्तम्॥

॥ अथ श्रीफलवर्द्धिजिनपार्श्वस्तवनं ॥

सयलाहिवाहि ।लहर, समूहसंहरणचंडपवमाणं ॥ फलवद्धिपासनाहं संथुणि मो फणय इठफलं ॥ १ ॥ विहुयासं विहुयासं, विहुयासं पत्तमभिथुणति तुमं ॥ अम यरया अमयरया, अमयरया णुगइखमवयण ॥ २ ॥ समणाणं समणाणं, समणा णं लंघिउं फुरइ सत्ती ॥ विणयाण विणयाण, विणयाणदणनयाहि मुदे ॥ ३ ॥ अ हिरन्ना अहिरन्ना, अहिरन्ना विणियमंति कयपूया ॥ सव्वाही सव्वाही, सव्वाहीणा तुह य नत्ता ॥ ४ ॥ गयवाहा गयवाहा, गयवाहा अरहियापइपसन्ने ॥ परमहिया परमहिया, परमहिया सह न हुंति नरा ॥ ५ ॥ सहवणा सहवणा, सहवणामयरि क हवंति जणा ॥ सुहयगया सुहयगया, सुहयगया तुह पसाएण ॥ ६ ॥ कणयाउ कणयाउ, कणयाउ रक्खसी तुमं भवण ॥ नइवओ नइवओ, नइवओ रिद्धिसिरिया णं ॥ ७ ॥ नाएण नाएण, नाएणं चियति लोहसुहउलि ॥ नयराई नयराई, नयरा ई सुगुणपोराण ॥ ८ ॥ फलवद्धी फलवद्धी, फलवद्धी दाइणा तुमे विहिया ॥ सन्न यरी सन्नयरी, सन्नयरीणतयाइजया ॥ ९ ॥ समणाली समणाली, समणाली णं तहागमे धन्ना ॥ चरणरया चरणरया, चरणरया नाइचत्तसिरी ॥१०॥ निहप्पहस्स निह, प्पहस्स, निहप्पहस्स मोहदले ॥ रयणायर रयणायर, रयणायर गुहिर तुश्च नमो ॥ ११ ॥ इत्थं थुउंति सिरिपास जगन्निवास सिंगारहारफलवद्धिपुरीसिरीए ॥ बुद्धीयराकयजिणप्पहसूरिवाणी यूयत्नमे वियर अंतररोगमुक्कं ॥ १२ ॥

॥ इति श्रीफलवर्द्धिपार्श्वनाथस्तवनं समाप्तम् ॥

॥ अथ श्रीचंद्रप्रभस्वामिस्तवनं ॥

॥ संस्कृतं ॥

नमो महसेननरेंद्रतनूज जगज्जनलोचनभृंगसरोज ॥ शरन्नवसोमसमद्युतिकाय दयामय तुभ्यमनंतसुखाय ॥ १ ॥ सुखीकृतसादरसेवकलक्ष विनिर्जितदुर्जयभाव विपक्ष ॥ सुरासुरवृंदनमस्कृत नंद महोदय कल्पमहीरुहकंद ॥ २ ॥

॥ प्राकृतं ॥

जय निरसिय तिहुयणजंतु भंति जय मोहमहीरुहदलनदंति ॥ जयकुंदक

लियसमदंतयंति जयजय चंदप्पहवदकंति ॥ ३ ॥ जय पणयपाणिगणकप्परु रक जय जगडिय अपयमकसयपरक ॥ जय निम्मलकेवलनाणगेह, जयजयजिणिद अप्पडिमदेह ॥ ४ ॥

॥ शौरसेनी ॥

विगदडहदेड मोहारिकेदूदयं दलिदगुरुडुरिदमध विहिदकुमदरकयं ॥
नाधतं नमदिजोसदटनदवत्सलंलहदिनिचदि गतिं सोढद निम्मलं ॥ ५ ॥

॥ मागधी ॥

असुलसुलविसलनलनाय सेविवपदे नमिल जय जतुतुदि दिन्नसिवपुलपदे ॥
चलनपुलनिलद ससालिसलसीलुदे, देहि मह्सामितसालि सासदपदे॥ ६॥

॥ पैशाचिकं ॥

तलिताखिलतोसतया सतनं मदनानलनीलमनानगुणं ॥
नलिनारुणपाततलंनमते जिननो ध्धतं सशिव लनते ॥ ७ ॥

॥ चूलिका पैशाचिकं ॥

कलनालिकनातुलतप्पहलं चलनीकल चालुपशप्पसलं ॥
ललनाचनकीतकुनलुचिल चिनलावमहसमलामिचिलं ॥ ८ ॥

॥ अपभ्रंश ॥

सालयसुक्ख निहाणुनाहनदिठ्ठो जेहि तउं पुन्नविहूणवजाणु निफलजम्मु तिहं नरपसुह ॥ ९ ॥ निम्मल तुह मुहचडजे पढुपिक्खुइ पसरिसिउं इयनिरुवमआणडु तिह मुनिसामी विप्फुरइ ॥ १० ॥

॥ अथ समसंस्कृत ॥

हारिहारहरहासकुंदसुंदरदेहानय केवलकमलाकेलिनिलय मंजुलगुणगणमय॥ कमलारुणकरचरणचरणजरधरणधवल बलसिद्धिरमणिसंगमविलासलालसमलम वदल ॥ ११ ॥ नवनवदवजलवाहविमलमगलकुलमदिर वामकामकरिकेलिहरण हरिवरगुणबंधुर ॥ मदरगिरीगुरुसारसबलकलिजूरुहकुंजर देहिमहोदयमेव देव मम केवलिकुंजर ॥ १२ ॥ इति जगदजिनदन जनहदि चदन चदप्रभ जिनचद्रवर॥ षड्भाषानिष्टुत मम मगलयुतसिद्धिसुखानि विभो वितर ॥ १३ ॥

इति श्रीजिनप्रभसूरिकृतचद्रप्रभस्वामिसक्त षड्भाषास्तवनं संपूर्णम् ॥

॥ अथ श्रीवर्द्धमाननिर्वाणकल्याणकस्तवनप्रारंभः ॥

श्रीसिद्धार्थनरेशवंशकमलाशृंगारचूडामणेर्भव्यानां दुरपोहमोहतिमिरप्रोल्लासने ऽहर्मणे ॥ कुर्वे किंचन कांचनोज्ज्वलरुचेर्निर्वाणकल्याणकस्तोत्रं गोत्रभिदर्चनीयचरणांभोजस्य वीरप्रभो ॥ १ ॥ प्राप्य देव शरदांद्विसप्तति शीतगौ पवनदेवतर्क्षगे ॥ तामुपायत रसेन कार्तिकाऽमावसीनिशि शिवश्रियं भवान् ॥ २ ॥ हस्तिपालकनृपालपालिता पूर्व पूरयतु मन्मनःशुचा ॥ यत्र दर्शइव चंद्रमा भवानस्तमाप भवताप हा पुनः ॥३॥ ऊर्जदर्शनिशि दर्शितर्द्धयस्तत्रपुर्यखिलवर्णजाः प्रजाः॥ त्वन्महोदयमहीतयाऽधुनाऽप्युत्सवं विदधतेऽनुवत्सर ॥ ४ ॥ येध्वंनिस्तव पपे श्रवःपुटैः षोडशप्रहरदेशनाविधौ ॥ तान्निवेश्य धुरि धन्यताजुषां रेखया न खलु लुप्यतेऽन्यतः ॥५॥ पुण्यपापफलपाकवर्णनामध्यमध्ययनपंक्तियुक्शतं ॥ व्याकृथाः स्फुटमष्टपद्कृतिव्याकृतीश्च परिषत्पुरस्तदा ॥६॥ जीवति त्वयि जिनेंद्रभूतिना त्वत्प्रणामविधिभंगभीरुणा ॥ नून मेष्यत न देव केवलज्ञानसंपदनुरागभागपि ॥ ७ ॥ यद्विधेयमुपदिश्य गौतमं प्रैषि भक्तिभृदपि त्वयाऽन्यतः ॥ रोगिणः कटुकभैषजपानवन्न्यायसेऽस्य चकृपे गुणाय तत् ॥ ८ ॥ त्वद्विहद्भववतरत्सुरावली या न देहमणिभूषणांशुभिः ॥ सा कुहूरजनिरस्ततामसा पूर्णिमानिशमुपाहसद्ध्रुवं ॥९॥ निर्वृते त्वयि विलोक्य विष्टपं ध्वांतपूरपरिपूरितोदरं ॥ रोदयंत इव रोदसी प्रतिश्रुद्भरेण रुरुदुः पुरंदराः ॥१०॥ वन्हिवायुजलदैश्च रैः सुरैस्तैलपर्णिकहृतांगसंस्कृते॥भूतिमात्रमपि भूतिधाम ते ऽपरस्पृशन् बत न तान् रजोऽस्पृशत् ॥११॥ भक्तितो महितुमीशवासवास्तावकीनहनुसंग्रहं व्यधुः ॥नूनमक्षविजयाय तावकानुग्रहेण हनुमत्वमिच्छव ॥१२॥ कुग्रहा न तव जातु शासनं वीर बाधितुमलंनविप्लव ॥ एकक स खलु भस्मकग्रहो बाधते भवदुपेक्षितस्तदा॥१३॥ जग्मुषि त्वयि शिव नराधिपास्तत्क्षणं गृहमणीनबोधयन् ॥ ये बभुः कुनयकाननप्लुषस्त्वत्प्रतापशिखिनः कणा इव ॥१४॥ यन्न कश्चन मुनिस्त्वया समं युक्तिमैयरितरैर्जनैरिव ॥ दुःषमासमयभाविलिंगिनां व्यंजितेन गुरुनिर्व्यपेक्षिता ॥ १५ ॥ प्रस्थिते त्वयि शिवाय तत्क्षणं संमुमूर्छुरधिपृथ्वि कुंथवः ॥ क्षुद्रजीववहुलामतः परं सूचयंतइव भाविनीं महीं ॥१६॥ यत्र यत्र चरणौ त्वयार्पितौ तत्तदास्पदमगादमापतां ॥ एकया पुनरपापया पुरापापयाऽजनि सुरोक्तिनामतः॥ १७ ॥ यत्र मुक्तिमगमः शमद्रुमावाप पापमुहिनार्कतापतत् ॥ प्रीतिभीति तरुकुंजभंजने नाग नागकरणं करोतु नः १८ ॥ यः पठत्यशठधीस्तव वीरस्तोत्रमेतदवधानसमेतः ॥ तत्रभावरिपुरा

जि रयश्रीनाजि न प्रनवति प्रबलापि ॥ १९ ॥ इति श्रीवर्धमाननिर्वाणकल्याण कस्तवनं समाप्तम् ॥

॥ अथ श्रीअरिनाथस्तवनप्रारंन्नः ॥

जय शरदशकलदशह्यवदन जय हृतजगदसद्नमदमदन ॥ जय नतशमगतश मनजकदन जयन्नगवदरपरमपदसदन ॥ १ ॥ गतमलकमलसकलकरचरण जननमरणन्नवन्नयन्नरह्रण ॥ रचय चरणरसनशबलस्वन मनवमसनवमररसरम वचन ॥ २ ॥ नवरचनरतदशशतनयन नयवनजलदजलजदलनयन ॥ फलद कलकलयजयकरयजन नमदशमपह्रशममनन्नजन ॥ ३ ॥ अमरफलदपदह्र पदकमल गजकरसरलसबलकरयमल ॥ जनयसनयमतनतजनसकल मतफ लमपमलकलमलमकल ॥ ४ ॥ नयमयवचनपवनसमवमत परमतजलदपट लमनसमत ॥ शमदमयमसमररसरमसमय न्नवपतनजन्नयमज मम शमय ॥ ५ ॥ घनरवकनकशकजघनवरन्न मदकलकरणकलनजयशरन्न ॥ शरणदचरणनरकदर शमन सदयमदघमफलयगजगमन ॥ ६ ॥ नतशतमखतमखलजनमदर ग मयपरमपदमन्नयदसदर ॥ नवनवन्नववनन्नवदशमगम शकलनगजकलगलदन वगम ॥ ७ ॥ तमचयमपनयतपमह्तपन परसमयजरजह्रपदजपन ॥ समज नदमनकमनगजकरट दलनसवलतमह्तमदचरट ॥ ८ ॥ मदनयनगमशरणन रशरण गतरणसदवतरणवरकरण ॥ परसह्चरसमरसजगदवन समवसरण रमदह्मह्नवन ॥ ९ ॥ सततमचरचरजगदवगमक मननजनकथनतरतमशम क ॥ परपदनगरगमनरणरणक मफलदशमसफलयपथन्नणक ॥ १० ॥ रसन्नर लसदनलसनमदमन न्नवनपवनचरनरयतसमर ॥ दलयबह्लमलमरवरवशत मतरतनरशतगतपरवशत ॥ ११ ॥ कपटशकटजलशयसमनवक जनमवगमय समयरसमवक ॥ गदगजरणफणधरदकदह्न धनह्रमरकजदरह्रमह्न ॥ १२ ॥ समतसतमह्परमतकलस गणधरगणधरशमरसकलस ॥ न्नवदन्नवदपदलयलस दवम वनमवनमयसह्नमह्नवम ॥ १३ ॥ एव श्रीअरतीर्थराज तव यो ऽ क र्मरोगच्छिदा काम केवलवर्णसंस्तवसुधास्वादं विधत्ते सुधी ॥ श्रेयो वा न जरामर त्वपदवीसौख्यानि बाह्यंतरा मित्राली जयसुंदर स नियतं शिश्रीयते मानव ॥१४॥ इति केवलाक्षरमयं श्रीअरनाथस्तवन संपूर्ण ॥

॥ श्रीवीतरागाय नमः ॥

॥ अथ श्रीयशोविजयजी उपाध्यायकृत अध्यात्ममतपरीक्षाप्रारंभ ॥

॥ आर्या वृत्तं ॥ पणमिय पासजिणंदं, वंदिअ सिरिविजयदेवसूरिंदं ॥अज्झप्पमयपरिक्ख, जहबोहमिमं करिस्सामि ॥ १ ॥

व्याख्या.– सर्व कल्याणनी सिद्धिने अर्थे, श्रीपार्श्वनाथने प्रणाम करीने, तथा संप्रति विजयमान तपागच्छाधिराज जे श्रीविजयदेवसूरी तेमनी वंदना करीने, पोताना बोधने अनुसारे, आ अध्यात्ममतपरीक्षानामनुं प्रकरण हुं करुं छुं

उपोद्घातः– कोई आशंका करे के, शुद्ध तत्त्वनो जे अंगीकार तेने अध्यात्म कहेछे. तेमां कोई विवाद नथी, त्यारे परीक्षा ते शानी करवी ? जे वस्तुमां संदेह पडे तेनी परीक्षा कराय छे, निस्संदेह वस्तुनी शी परीक्षा ! माटे आ अध्यात्ममत परीक्षानामनुं प्रकरण करवानुं कांई प्रयोजन दीगमां आवतु नथी तेने कहेछे ॥१॥

अज्झप्पं णामाई, चउव्विहं चउविहा य तव्वंता ॥
तत्थ इमे अहुत्तिय, णामेणज्झप्पिआ णेआ ॥ २ ॥

व्याख्या.– अध्यात्मना चार प्रकार छे. एक नामअध्यात्म, बीजो स्थापनाअध्यात्म, त्रीजो द्रव्यअध्यात्म अने चोथो भावअध्यात्म चेतन तथा अचेतन ए बेमांनी कोई पण वस्तुनुं अध्यात्म एवु नाम राखेलुं होय ते नामअध्यात्म, अध्यात्मवंत यतिना आकारनुं चित्र कहाडयूं होय ते स्थापनाअध्यात्म, अने जेथकी भावअध्यात्म उत्पन्न थाय, जेवा के, प्रतिमादर्शन, सद्गुरुसेवा, अने अध्यात्मशास्त्राभ्यास ए त्रणे भावाध्यात्मना कारण छे, माटे ते द्रव्याध्यात्म, तथा आत्माना जे शुद्ध परिणामते भाव अध्यात्म कहिये तेम अध्यात्मीना पण पूर्वोक्त रीते चार प्रकार छे तेओमां इहां जेओना मतनो विचार कर्त्तव्य छे, ते नामअध्यात्मवत छे. तेओना मतनी आशंकानुं निवारण करवुं, ते आ ग्रंथनुं प्रयोजन छे.॥२॥

उ०.– पूर्वोक्त चार प्रकारना अध्यात्ममानो भावअध्यात्म मोक्षनुं कारण छे. माटे तेनुं विशेषेकरी स्वरूप कहेछे.–

जा खलु सद्दावसिक्षा, किरिआ अप्पाणमेव अहिगिव ॥
भणइ परमज्झप्पं, सा दंसण नाण चरणमुा ॥ ३ ॥

व्या० – जहांथुधी कषाय तथा इंद्रियने वश थयोथको संसारनेविषे आत्मा

फरे छे, तहांसुधी आत्मानेविषे कर्मनो अधिकार छे, स्वत आत्मानो अधिकार नथी. केमके, आत्मस्वनावनुं आछादन थएलु छे जेम मलद्रव्यना योगे सुवर्ण नु आछादन थई जायछे, तेथी तेनो स्वनाव प्रगट थई शकतो नथी तेम कर्मना योगे आत्मानुं आछादन थई जायछे, तेथी तेनो ज्ञान, विज्ञान, तथा अमूर्त्तत्वा दि स्वनाव प्रगट थई शकतो नथी अने नामकर्म ते आत्मस्वनावने पलटावीने नर, तिर्यच, नारकी, तथा देवताप्रमुखना पर्यायरूप पोताना स्वनावने प्रगटकरे छे जेम तीव्र अग्निमा सुवर्णने नाख्याथी ते मल ज्यारे बली जाय त्यारे सुवर्ण नो शुद्धतादिस्वनाव प्रगट थायछे तेम शुनपरिणाम पूर्वक तपश्चर्याप्रमुख थ की ज्यारे कर्मोनो क्षय थई जायछे, त्यारे आत्मानो ज्ञानादिरूप स्वनाव प्रगट थायछे एटले कर्मनो अधिकार टलीने स्वत आत्मानो अधिकार प्रवर्त्ते छे, ए अधिकारनी जे क्रिया तेने नावअध्यात्म कहिये ते आत्म ज्ञानरूप एक वस्तु हो वाथी बोधरूप छे माटे ज्ञान कहिये, तेमज रुचिरूप होवाथी सम्यक्त दर्शन क हिये, तथा प्राणातिपातादिक आश्रवनिरोधरूप होवाथी चारित्र कहिये यत "आ त्मानमात्मनोवेत्ति, मोहत्यागाद्यआत्मनि॥ तदेव तस्य चारित्रं, तज्ज्ञानं तच्च दर्शनं"

उ० कोइ आशका करे के, नावाध्यात्म तथा शुद्धोपयोग ए बे शब्दोनो अर्थ एक छे जेम उपाधिरहित स्फटिकनो निर्मल स्वनाव छे तेम परद्रव्यसंगरहि त जीवनो निर्मल स्वनाव छे तेनेज शुद्धोपयोग कहेछे. अने एनेज चारित्र कहेछे परद्रव्यसगे जीवनो जे मलिन स्वनाव थायछे, तेने अशुद्धोपयोग कहेछे एना बे नेद छे—एक शुनोपयोग बीजो अशुनोपयोग देव गुरु तथा धर्मादिक उ पर जे प्रशस्त राग होयछे, तेने शुनोपयोग कहेछे जेम राता फूलना सगथकी स्फटिकनो रातो रंग थायछे, तेम जाणवु. अने जे अप्रशस्त राग तथा द्वेष होय छे, तेने अशुनोपयोग कहेछे जेम काला फूलना संगथकी स्फटिकनो कालो रग थायछे, तेम जाणवु ए बन्ने मूल स्वनावने ढाकी लियेछे, तेथी अशुद्धोपयोग कहेछे एनेज शुद्धोपयोगरूप चारित्रना छेद कहेछे. एना आयतन परद्रव्य छे त्यारे श्वेताम्बरनेविषे चउद उपकरणरूप परद्रव्यनो संग छता अध्यात्म केम प्रग ट थाय? तेने उत्तर कहे छे. ॥ ३ ॥

एविना रागद्दोसो, अप्पपरसेहि किंचि पडिकूलं ॥
परदव्व उवगरणं, किंपुण देहुव धम्मठं ॥ ४ ॥

व्या० मात्र रागद्वेषविना बीजूं कोई पण परद्रव्य ते शुद्धोपयोगरूप अध्यात्म ने प्रतिकूल नथी एम जो अंगीकार नही करशो तो लोकमां सर्वत्र धर्मास्तिका यादिक परद्रव्य नखा छे, ते बधां प्रतिकूल कहेवाशे. तेम तो संनवे नही, माटे शुद्धोपयोगरूप अध्यात्मने राग द्वेषज प्रतिकूल छे, एविनाबीजुं कोई परद्रव्य प्र तिकूल नथी एम जाणवुं जो एम कहेशो के परिग्रहीत परद्रव्य अध्या त्मनुं विरोधीज छे, पण अपरिग्रहीत परद्रव्य अध्यात्मनुं विरोधी नथी त्यारे श रीर रूपद्रव्य परिग्रहीत उतां केम अध्यात्म उत्पन्न थायछे? जो एम कहेशो के, शरीर धर्मनुं कारण छे तेथी अध्यात्मनो विरोधी नथी त्यारे धर्मोपकरण पण धर्मनां साधन होवाथी अध्यात्मना विरोधी थाय नही ए सामान्यपणे उत्तर कह्यु

उ० कोई एवी आशंका करे के ज्यांशुधी उपधि होय. त्या शुधी सर्वथा अ ध्यात्मनी सिद्धि थाय नही तेनुं मत दूषित करेछे — ॥ ४ ॥

उवधिसहिओ ण सिज्झइ, सतुसा जह तंडुला न सिज्झंति ॥
इय वयणं पक्खित्तं, दूरे दिठंतवेसम्मा ॥ ५ ॥

व्या०:—उपधिसहित जीव सिद्धताने पामे नही. जेम तूससहित चोखो सीझे नही, तेम जाणवु. जेम चोखाने तूस दोषरूप छे, तेम उपधि जीवने दोषरूप छे. एवु वचन अमरचद नामना दिगंवरनुं जुडुंज नाख्युं छे, माटे ए दृष्टांत स मीचीन नथी केमके, चोखाने तूसरूप दोष ते स्वरूपथकी छे, अने जीवने उ पधिरूप दोष स्वरूपथकी नथी जीवने उपधिरूप दोष जो स्वरूपथी होय, तो क्षपकश्रेणीए चढेला यतिना स्कधउपर वस्त्र नाखिये तो तेने केवलज्ञान उत्पन्नथवु न जोये अने तूससहित वस्तु सीझे नही ए पण सर्वथा संनवित नथी. केमके, मुग प्रमुख तूससहित सीझता दीठामा आवेछे माटे ए पण एकात नथी, अनेकात छे

उ० — परवादी जे दोष उपधिनेविषे कहेछे, ते दोष शरीरनेविषे पण संनवे छे; ते देखडावे छे.— ॥ ५ ॥

जा उवगरणे मुछा, आरंभो वा असंजमो तस्स ॥
तह परदव्वम्मि रई, सा किण्ण तुहं सरीरेवि ॥ ६ ॥

व्या०.— जो एम कहेशो के, उपधि राख्याथी मूर्छा थायछे त्यारे शरीरउपर केम मूर्छा थती नथी. उपधिनी मूर्छा तो शरीर मूर्छानिमित्त छे. तेथी शरीरने

अधिक मूर्छा संजवे एनुं समाधान जो आवी रीते करिये के, मूर्छाना बे जेद
छे – एक मारुं मारुं एवो ममत्वपरिणाम, अने बीजो पामेली वस्तुउपर अवि
योगनो अध्यवसाय; ए आर्त्तध्याननो जेद छे. तेओमांनी पहेली जे शरीरविषे
ममत्वपरिणामरूप मूर्छा कहीछे, ते तो सम्यक्दृष्टिने पण थाय नही, केमके,
ते ज्ञानी छे अने ममत्वपरिणाम तो अज्ञाननिमित्त छे एथीज सम्यक्दृष्टि
विषयादिकनुं सेवन करतो छता पण तेने परमार्थथी विषयसेवनरहित कह्यो छे,
त्यारे यतिनेविषे ते शु कहेवु! अर्थात् यति तो सर्वथा विषयसेवनरहित छे
अने बीजी आर्त्तध्यानरूप जे मूर्छा छे ते धर्मध्यानना प्रजावेकरी शरीरविषे था
य नही. एज समाधान उपकरणनेविषे पण जाणी लेवु जो एम कहेशो के,
उपकरण राख्याथी तेना ग्रहण तथा त्यागथी आरंज थायछे., ए वात पण अस
जवित छे केमके, आरंज तो शरीरना करचरणादिनी क्रिया कयाथी पण थाय
छे. जो कहेशो के शरीरना करचरणादिकनी क्रिया जयणाएकरी थायछे तो जय
णाएकरी धर्मोपकरण लेता तथा मूकता पण आरंज थतु नथी जो एम कहे
शो के, धर्मोपकरणथकी शुद्धात्मपरिणाम जंगरूप हिंसा थायछे त्यारे शरीरथ
की केम हिंसा थती नथी? ज्यारे मूर्छाविना शरीरथकी हिंसानो संजव थतो न
थी, त्यारे मूर्छाविना धर्मोपकरणनो पण संजव केम थशे! जो एम कहेशोके,
धर्मोपकरणथकी परद्रव्यनेविषे रति होवाथी आत्मद्रव्यमा रति थती नथी
त्यारे शरीरथकी पण द्रव्यरति केम नथाय? किंतु थवीज जोइये एनो विचार करो
उ० – परद्रव्यरतिने बे विकल्पेकरी दूषित करेछे – ॥ ६ ॥

तह परदव्वम्मि रई, परिणामो रक्कणाणुबंधो वा ॥
इहओ तणु सममुवहि, पासंतो किं ण लज्जेसि ॥ ७ ॥

व्या० – परद्रव्यरति ते शु काययोगना परिणामरूप छे के, संरक्षणानुबंधी
रौद्रध्यानरुप छे? जो प्रथम काययोग परिणाम कहेशो तो शुजकाययोगे दोष
केम लागे? अर्थात् एम तो संजवे नही अने जो संरक्षणानुबंधी रौद्रध्यानरू
प कहेशो तो ते पण संजवशे नही केमके, चोरादिकथकी सर्व प्रकारे जे वस्त्रा
दिकनुं बचाववुं, तेने संरक्षण कहेछे, ने तेनुं जे निरंतर चिंतन करवु, तेने अनुबं
ध कहेछे एवु रौद्रध्याननो जेद जो उपधिथकी थाय तो शरीरथकी पण थवु
जोइये केमके, सर्प, चोर, तथा कटकप्रमुख थकी शरीरनी रक्षा करवाना अ

ध्यवसाय पण घणानेविषे दीवामां आवेछे. एने तो रौद्रध्यान कहेता नथी! जो एम कहेशो के, यतिने शरीरनेविषे राग नथी होतो, तेम छतां सर्पादिकथी शरीरनी रक्षा तो धर्मसाधनने अर्थे करेछे. तेथी तेना अध्यवसाय अशुन्न होता नथीः एम पण संज्ञवे नही! केमके, यतिने शरीरनी पठे धर्मोपकरणउपर पण राग होतो नथी. तेम छतां तेनी रक्षा पण धर्मसाधनने अर्थे करेछे एवी रीते शरीरना जेवांज धर्मोपकरण छरेछे. तेम छतां तेओनी उत्थापना करतां तमने शरम थती नथी!

उ०.— कोई आशंका करे के, उपकरण जे छे ते ध्यानना विरोधी छे केमके, तेओना प्रतिलेखनादि बाह्यव्यापारना योगे अंतर आत्मतत्वनेविषे चित्त एकाग्रतारूपध्यानमां विघ्न थायछे. एम कहेनाराने उत्तर दिये छे. ॥ ७ ॥

जो किर जयणापुव्वो, वावारो सोण जाण पडिवक्खो॥
सोचेव होइ जाणं, जुगवं मण वयण कायाणं ॥ ८ ॥

व्या०.— आवश्यक पडिलेहणाप्रमुख जे जयणाएकरी व्यापार थायछे ते पण ध्याननो विरोधी होवोजोये, एने तो कोई विरोधी कहेतो नथी किंतु एतो एक कालाश्रित मन, वचन, तथा कायासंबंधी ध्यानरूप होयछे जेमके, शुन्नयोगे करीमन एकाग्र होयछे, एनेज मन संबंधी ध्यान कहेछे, निरवद्य वचन बोलायछे, अने सावद्य वचननो त्याग थायछे, एनेज वचनसंबंधी ध्यान कहेछे, अने शुन्नयोगनेविषे यत्नेकरी कायानी दृढता थायछे, एने कायसंबंधी ध्यान कहेछे जो तमे एम कहेशो के, न्नगवते एकसमयनेविषे बे क्रियानो निषेध कह्योछे; तेम छतां एकसमयाश्रित मन, वचन तथा काया संबंधी ध्यान केम संन्नवे? एनो उत्तर आमछे — न्नगवते जे एकसमयनेविषे बे क्रियानो निषेध कह्योछे ते न्निन्न विषयविषे छे, एक विषयविषे निषेध नथी कह्यो जेमके, वांदणाना आवर्त्तननेविषे त्रण योगनी क्रिया एकज समयनेविषे थायछे यत "न्निन्नविषये णिसिद्धं, किरिया डुगमेगयाए एगम्मि, जोग तिगस्स विन्नंगिय, सुत्ते किरिया जउ न्नणिया"

उ०.— कोई आशंका करे के, ध्यान जे छे ते योगनो परिणाम नथी के जेनी प्रवृत्ति बाह्य व्यापार करतां थाय. जो योगना परिणामरूप ध्यान होय, तो लेश्या अने ध्यान एक कहेवाय. एओमा काई न्यूनाधिकता होय नही तेम तो नथी देखातुं. लेश्याओनुं रूप पण जुडुंछे, ने ध्याननुं रूप पण शास्त्रोमां जुडुं कह्युंछे. वली जो योगपरिणामरूप ध्यान होय तो चौदमे अयोगिकेवल गुण

स्थानके शुक्लध्याननो संन्नव केम थाय ? ए तो योगनी परिणतिरूप नथी. केम के, ध्यानतो आत्मस्वन्नाव समवस्थानरूप छे. अने तेनी उत्पत्ति आवीरीते था यछे — सुखनी तृष्णाएकरी मोहनीयकर्मने वश थयो थको जीव परद्रव्यनेविषे प्र वृत्ति करेछे, ज्यारे मोहनीयकर्मनी न्यूनता थायछे, त्यारे परद्रव्यनेविषे प्रवृत्ति यती नथी. एमथयाथी विषयनेविषे वैराग्य थाय छे केमके, विषयनेविषे जे रा ग होय छे, ते विषय प्राप्तिपूर्वक होयछे अने रागना अन्नावे वैराग्य होयछे. वैरा ग्ययकी मननो रोध थायछे केमके, मननी प्रवृत्ति विषयविना यती नथी जेम तृणरहित स्थानकनेविषे पडेली अग्नि पोतानी मेलेज नाशने पामेछे तेम विषय विना मन पोतानी मेलेज स्थिरताने पामेछे मननो निरोध थयाथी चचलता मटी जायछे अने पछी मन एकाग्र थईने आत्मानेविषे प्रवृत्त थायछे ए आत्मस्वन्नाव ने ध्यान कहेछे यत "जो खविदमोहकलुसो, विषयविरत्तो मणेण संन्निता, समवछिदो सहावे, सो अप्पाणे दवदिजा दा." इति प्रवचनसारे. एवु सह चेतन स्वन्नावरूप जे ध्यान ते, बाह्य व्यापार करता, तथा परद्रव्य अधिकरण क्रियाछतां केम प्रगट थाय ? एनो निर्णय करेछे ॥ ८ ॥

जाए तिकरण पयत्तो, ए सहावो तेण जेण सिद्धस्स ॥
इह एठाणविन्नागो, कह सुक्कझाणन्नेआणं ॥ ए ॥

व्या० मन वचन तथा कायारूप त्रिकरण एटले त्रण योगनो प्रयत्न कस्याथी ध्याननी सिद्धि थाय छे, माटे योगपरिणामरूप ध्यान छे, परतु उपयोगरूपज ध्यान नथी. अने लेश्या पण योगपरिणामरूप छे तेथी योगपरिणामपणे तो ध्यान तथा लेश्या ए बन्ने सरखा छे, परतु बन्नेना लक्षणो जुदा जुदांछे. लेश्या जे छे ते योगनो चलाचल परिणाम छे, अने ध्यान जे छे ते योगनो निश्चल परिणा म छे अयोगीने यद्यपि करणव्यापार नथी, तथापि छता मन वचन तथा काया ना निरोधरूप प्रयत्न करे छे ते प्रयत्ने करीने जे त्रणे योगनो निरोध थाय छे, ते नेज ध्यान कहेछे अने आही जो आत्मस्वन्नाव समवस्थानरूप ध्यान लइये तो सिद्धने पण ध्याननुं कर्तृत्व थशे शास्त्रोमा तो सिद्धनेविषे ध्यानप्रभृति सर्वे क्रि यानो अन्नाव कह्योछे जो एम कहिये के, सिद्धने व्यावहारिक ध्यान तो नथी, पण आत्मस्वन्नावरूप नैश्चयिक ध्यान तो छे जो एम होय तो योगनो निरोध कस्या विना पूर्वकोटिपर्यंत केवलीने ध्याननो निषेध केम कस्योछे ? आत्मस्वन्नाव सम

वस्थान तो केवलीने सर्वथकी अधिक छे. ए कारण माटे अयोगीने तो योगनिरोधरूप ध्यान छे, अने छद्मस्थने करणना दृढव्यापाररूप ध्यानछे. एवी रीते शुभ योगेकरी प्रवर्त्तनीय जे ध्यान, तेमां वाद विवाद शानो होय !

उ० कोई आशंका करे के, जो उपकरण होय तो राग पण होय, माटे उपकरण सर्वथा त्याग करवा योग्य छे, तेम जो न करिये तो उत्सर्गमार्ग केम रहे? एप्रश्नने उत्तर दिये छे.— ॥ ९ ॥

जा खलु सरागचरिआ, साविय उस्सग्गमग्गसंलग्गं ॥
मोत्तुं अववायपयं, अइप्पसंगी परविसेसो ॥ १० ॥

व्या० जे स्थिविरकल्परूप सरागचर्या कहेतां सरागमार्ग छे. ते पण उत्सर्गमार्गने लागेलोज छे. अर्थात् अपवाद मार्ग अने उत्सर्ग मार्ग निकट संबंधी छे यद्यपि स्थिविरकल्पी पण अपवादनो तो त्याग करेछे, तथापि कोई कारणने लीधे तेने ग्रहण पण करवु जोयेछे अने जिनकल्पी तो कदापि अपवादनुं ग्रहण करेज नही. एवी रीते स्थिविरकल्पी तथा जिनकल्पीना अपवाद तथा उत्सर्गमार्गमा अल्प अंतराय छे एटले अपवादमार्ग थकी उत्सर्गमार्गनी कांईक उत्कृष्टता छे, तेथीज बे भेद थयाछे. अने जिनकल्पनी अपेक्षाए स्थिविर कल्प कह्योछे. तेमज उत्सर्गमार्गनीअपेक्षाए अपवाद मार्ग कह्यो छे. जो उत्सर्ग मार्ग थकी कांईक न्यूनता वालो अपवाद मार्ग, तथा अपवादमार्गथी कांईक अधिकतावालो उत्सर्ग न कहेशु तो चौदमां गुणस्थानकना अंतना समयसुधी उत्सर्गमार्गनो संभव थशे नही केमके सर्वोत्कृष्ट संवर तिहांज छे. माटे जे ठेकाणे जे मार्ग उत्कृष्ट कह्यो होय ते ठेकाणे तेज उत्सर्गमार्ग छे. जेमके स्थिविरकल्पनेविषे चौद उपकरणज उत्कृष्ट होवाथी ते उत्सर्ग मार्ग छे. ॥ १० ॥

उ० मूल गाथावडे पूर्वपक्षी आशंका करे छे.—

णणु वज्झंगं साहण, मववाउ अंतरंगमुस्सग्गो ॥ जा पुण सराग
चरिया, समुच्चिया णेव सिद्धाए ॥११॥ पडिसेवणो, पुणासो, अववा
उ फुडो अणायारो ॥ ता वज्झाई गंथो, णो उस्सग्गो ण अववाउ॥१२॥

व्या०— परद्रव्यमात्रनी जे निवृत्ति, एटले परद्रव्यनो कांई पण परिग्रह रह्यो न होय, मात्र आत्मद्रव्यनोज प्रतिबंध होय, तेज संयमनुं अंतरंग कारण छे;

एने उत्सर्गमार्ग कहेछे एवी सामग्रीनी प्राप्तिविना शुद्धोपयोगभूमिकाए चढी शकातु नथी, त्यारे तेनी साह्यता करनारी जे उपधि होय तेनुं धारण करवुं तेने अपवाद कहेछे ते उपधि बंधनो हेतु नथी, माटे निषेध नथी कही केमके, ए उपधि संयमरहित पुरुषना उपयोगमा आवती नथी किंतु संयतीनेज उपयोगी छे अने मूर्छानो हेतु थती नथी यत " अप्पडिकुट्ठं उवहिं, अपच्छणिज्जं असंजदजणेहिं, मुच्छादिजणणरहिदं, गेह्णदुसमणोयजदि विअप्पंते. " ते उपधि आ छे – एक तो यथाजातलिंग पुद्गल, एटले जेवो माताना उदरमांथी नीकल्यो होय तेवो आकार धारण करवो, बीजो वचनपुद्गल, एटले जेथी शुद्धात्मतत्वनो बोध थायछे, तेनुं ग्रहण करवु, त्रीजुं गुर्वादिक विनयरूप मनना पुद्गलनुं धारण करवु, अने चोथुं सूत्राध्ययनना पुद्गलने धारण करवुं. यत " उवयरणं जिणमग्गे, लिंगं जह जादरूवमिदि भणिदं, गुरुवयणंपि अ विणओ, सुत्तज्झयणं च पन्नत्तं " एवो जे अपवादमार्ग तेने सरागचर्या कहेछे अर्थात् शुद्धोपयोगनी न्यूनताने लीधे अपवादमार्ग कहेवाय छे. पण जे वस्तु प्रतिषिद्ध एटले सेवन करवा योग्य न होयने तेनु जे सेवन करवु तेने अपवाद कहता नथी तेने तो प्रगट अनाचारज कहेछे. तेमछता संयतीने वस्त्रादिक सेवन करवायोग्य नथी केमके, ए अनाचार छे माटे ए सर्व परिग्रहनो त्याग करवो जोये वस्त्रादिक परिग्रहनुं जे ग्रहण करवु ते उत्सर्ग पण नथी ने अपवाद पण नथी, किंतु अनाचार छे, ते केम करवो? एहवु जे कहेछे तेने उत्तर आपी तेनो समाधान करेछे –॥११॥१२॥

उवकुणइ जह सरीरं, सुद्धुवओगं तहेवमुवगरणं ॥
जम्हा तउ मुणीणं, सुए अणेगे गुणा भणिआ ॥ १३ ॥

व्या० –जेम शरीर परद्रव्य छता शुद्धोपयोगनुं साह्यकारिछे ; तेथी परिग्रह कहेवाय नही तेमउपकरण पण शुद्धोपयोगनां साह्यकारी होवाथी परिग्रह कहेवाय नही केमके, ए वात, सिद्धांतोनेविषे पण' धर्मोपकरणना अनेक गुण कह्याछे तेथी सिद्ध थायछे जेमके, रात्रीये चउकाले काल ग्रहलेता वस्त्रे करी यतीने शीतनी पीडाटले छे. ने जो वस्त्र न होय तो शीतनी पीडाने लीधे अग्निना ताप प्रमुखनी चिंतना थाय तेथी आर्तध्यान उत्पन्न थायछे वस्त्रेकरी सचित्त पृथिवी, धूंहरी ओस, वृष्टि, तथा हिरमज प्रमुखनी रक्षा थायछे ने जो वस्त्र न होय अने उघाडु शरीर होय, तो शरीरनी गरमीनी वाफथकी ते जीवोने दुःख उत्पन्न थायछे

संपातिमरजरेणु प्रमार्जवाने अर्थे मुहपत्ती राखवी, लेवादेवा प्रमुखनी क्रियाए पू र्वे प्रमार्जवाने अर्थे तथा जैनलिंगने अर्थे ठंगो राखवो. तथा पुरुष वेदनीयोद यादिक वर्जने अर्थे चोलपट राखवो. इत्यादिक वस्त्रना गुण कह्याछे अनाभोगे लीधेलां जे ससक्त गोरसादिक, ते पात्रेंकरीने विधिए परठाई शकायछे. पात्रवि ना हाथमाज लीधा होय तो योग्य ठेकाणे केम परठवी शकाय? तथा हाथमा सरस वस्तु लीयाथी-तेनो बिंदु जो नीचे पडे, तो तेथकी कीडीओप्रमुख अनेक ज तुओनी विराधना थाय. गृहस्थ भाजनने अर्थे उपभोगेपण पश्चात्कर्मादिक दोष उपजे, अने जो पात्र होय तो तेणे करी ग्लान अथवा दुर्बलने पथ्यादिक लाव वाने अर्थे उपयोगी होवाथी उपकार थायछे. अलब्धिवंत तथा लब्धिवंत अस मर्थ तथा समर्थ प्राहुणाने वास्तव्य पात्र होय तो अन्नपानादिकने आपणी उप कार करे. अन्यथा केम करे? इत्यादिक वस्त्र तथा पात्रनेविषे अनेक गुणजाणी शरीरनी परे धर्महेतु होवाथी तेमां परिग्रहपणानी आशंका करवी नही ॥१३॥

उ – उपहासयुक्त पूर्वपक्षीनी मूल गाथा वडे आशंका करे छे –

जइ उवहिभारगहणं, इंछ दुभाणवज्जणणिमित्तं ॥
तो सेयं थीगहणं, मेहुणसण्णाणिरोहट्ठं ॥ १४ ॥

व्या० – शीत तथा तापप्रमुखनी पीडाए करी आर्त्तध्यान उपजे नही, ते सा रुं तमे एटलो बधो उपधिनो भार वेठो छो; त्यारे मैथुन सज्ञानिमित्त आर्त्तध्यान नो त्याग करवासारु एक स्त्रीनो परिग्रह पण शासारुं राखता नथी? ज्यारे जी र्णादिक वस्त्र राखवाथी मूर्छा थती नथी, त्यारे अंगचंग थएली तथा कुरूप स्त्री राखवाथी मूर्छा केम थाय? ॥ १४ ॥

उ०.– ए आशंकानो उत्तर दियेछे –

एयं वि हूसगाणं, वयणं मयणंधवयणमिव मोहा ॥
असुह समोवहासो, देहाहाराइगहणेवि ॥ १५ ॥

व्या०.– तमारुं बोलवुं भाड (मस्करा) ना जेवु भासेछे. जेम होलीना दाहा डामां कामी पुरुषो गमे तेम बक्या करेछे. अने कामने वश थया थका लाज उप जावे एवां वचनो बोल्या करे छे. तेम तमे पण मिथ्यात्वना परवशेकरी अज्ञानने लीधे मस्करीना वचन बोलो छो. ते वचनोथी अमने तो काई थवानुं नथी, पण तमे पोते तेवा देखाई आवो छो. केमके, तमे पोते पण भूखनी पीडा टालवासारुं

होय ते स्थापनाद्वेष कहेवाय द्रव्यद्वेषना बे प्रकारछे.—एक कर्मद्रव्यद्वेष, बीजो नोकर्मद्रव्यद्वेष. एमाना कर्मद्रव्यद्वेपना चार प्रकार छे—एक योग, बीजो बध्यमान, त्रीजो बद्ध अने चोथो उदीरणाप्राप्त. जे मोहनीयकर्मना पुद्गल बंध परिणामने अभिमुख थया होय ते योगकर्मद्रव्यद्वेष कहेवाय, जे मोहनीयकर्मना पुद्गल बंधक्रियाना परिणामने पाम्या होय ते बध्यमानकर्मद्रव्यद्वेप कहेवाय, जे मोहनीयकर्मना पुद्गल बंधपरिणामनी निष्टाने पाम्या होय ते बद्धकर्मद्रव्यद्वेपकहेवाय, अने जे मोहनीयकर्मना पुद्गल उदयने पाम्या होय ते उदीरणाप्राप्तकर्मद्रव्यद्वेप कहेवायछे तेम नोकर्मद्रव्यद्वेपना बे प्रकार छे—एक विश्रसा, बीजो प्रयोग जे संध्याराग प्रमुख देखाय छे, ते विश्रसानोकर्मद्रव्यद्वेष कहेवाय, तथा जे वस्त्रादिकनेविषे कुसुंभादिक राग देखायछे ते प्रयोगनो कर्मद्रव्यद्वेष कहेवाय छे अने भावद्वेपना पण बे प्रकार छे—एक उदयप्राप्त, बीजो परिणाम मोहनीयकर्मनो जे उदय थाय ते उदयप्राप्तभावद्वेप कहेवाय, अने मोहनीयकर्मपरिणामने पामे ते परिणामभावद्वेप कहेवायछे

हवे नयेकरी रागद्वेषनुंविवरण करे छे—संग्रह नयनी रीतिए क्रोध तथा मान ए बन्ने अप्रीतिनो परिणाम होवाथी द्वेष कहेवायछे, अने माया तथा लोभ ए बन्ने प्रीतिनो परिणाम होवाथी राग कहेवायछे व्यवहारनयनी रीतिए मायानी योजना परना उपघातने अर्थे थायछे माटे त्रीजी माया पण द्वेपज कहेवाय अने न्यायोपात्त द्रव्यप्रमुखनेविषे जे लोभ थायछे ते राग कहेवायछे परंतु अन्यायोपार्जित द्रव्यादिकनेविषे जे लोभ थायछे ते राग कहेवाय नही केम के, एथी कषायादिकनी उत्पत्ति थायछे ऋजुसूत्रनयनी रीतिए क्रोध जे छे ते अप्रीतिनोज परिणाम होवाथी एकांत द्वेप कहेवायछे बाकीना त्रण जे मान, माया ने लोभ ते एकांत द्वेप कहेवाय नही किंतु अनेकांत कहेवाय; केम के, मान ज्यारे स्वोत्कर्ष परिणामरूप होय छे त्यारे राग कहेवायछे, अने ज्यारे परनिंदापरिणामरूप होयछे त्यारे द्वेप कहेवायछे तेमज माया तथा लोभ पण ज्यारे पूर्व परिणामरूप होय छे त्यारे राग कहेवाय छे, अने ज्यारे परद्रोह परिणामरूप होयछे त्यारे द्वेष कहेवायछे. अने शब्दनयनी रीतिए क्रोध तथा लोभ ए बे कषायरुप होवाथी एमांना मान तथा माया अप्रीतिना परिणामरूपे थईने ज्यारे क्रोधमा आवीने मली जाय त्यारे ते द्वेप कहेवायछे, अने प्रीतिना परिणामरूपे थईने ज्यारे लोभमां आवी मली जाय त्यारे राग कहेवायछे ॥२१॥

परदव्वंमि पवित्ती, ण मोहजाणिया व मोहजाणावा ॥
जोगकयाहु पवित्ती, फलकंखा रागदोसकया ॥ २२ ॥

व्या०.– परद्रव्यनेविषे जे प्रवृत्ति थाय छे तेनुं निश्चयथी मोह कारण नथी केमके, प्रवृत्ति तो मन वचन तथा काय योगथी थायछे, अने फलनी इछा राग द्वेषथी थायछे. माटे फलनी इछाविना यतिजो धर्मोपकरण धारण करे तो तेथी अयोग्य शुं थयुं कहेवाय ? केमके, फलनी इछाविना राग तथा द्वेष थता नथी.॥२२॥

वछाइणेवगंथो, मुणीण मुछ विणेव गहणाउ ॥ तह
देहपालणछा, जह आहाला तुह वि इछो ॥ २३ ॥

व्या०.– यतिने वस्त्रादिकनो ग्रंथ थतो नथी केमके, मात्र शरीरनी रक्षा करवालारु ग्रहण करेछे. तेमा मूर्छा रचमात्र पण होती नथी जेम शरीरनी रक्षाने अर्थे यति निरवद्य आहारनुं ग्रहण करेछे पण तेमां मूर्छा होती नथी. तेम धर्मोपकरणोविषे पण जाणी लेवु. ॥ २३ ॥

जह देहपालणछा, जुत्ताहारो विराहगो ण मुणी ॥
जह जुत्तवछपत्ता, विराहगो णेव णिद्दिछो ॥ २४ ॥

व्या०.– जेम शरीरनुं पालन करवाने अर्थे निरवद्य आहार लेतां यतिने विराधक कह्यो नथी तेम निरवद्य वस्त्र पात्र राख्याथी पणविराधक न कहेवाय किंतु आराधकज कहेवाय. कोई एम कहे के, शुद्धोपयोग जे छे ते प्रदीप जेवो छे, अने नोजन तथा शरीर संचलन जे छे ते तेलपूरण तथा वाटसंचार जेवो छे एतो योग्य छे पण उपधि अयोग्य छे. एवुं अमरचदनुं बोलवु असमीचीन छे. केमके, धर्मोपकरण धारण करवां ते प्रदीपने निर्वातस्थले राखवा जेवां छे. माटे योग्यछे

अणसण सहावजोगा, जह असणं अणसणं तिजुत्त
मिणं ॥ जुत्तं तह वछाई, सहावउ तप्परिणयस्स ॥ २५ ॥

व्या०.– जेम सर्व नोजननी तृष्णायकी रहित छता अंतरग आत्मस्वनावनी नावना करतां तेना उपष्टंनने अर्थे आहारनु जे ग्रहण करवुं ते परमार्थे अनाहार ज कहेवाय. यत "जस्स अणेसणमप्पा, तंपि तओ तप्पडिछगसमणा, अण णिरकमणे सण, मधतेसमणाअणाहारा." इति प्रवचनसारे. तेमज सकल परि

मूर्छारहित छतां आत्मस्वजावनी जावना करतां तेना उपष्टंजने अर्थे वस्त्रादिक राखता पण परमार्थे वस्त्रादिकरहित कहेवाय. ते युक्तज छे ॥ २५ ॥

एवच सचेलाणं, कहउ सुत्तं जवे अचेलत्तं ॥ इअ
पजणतस्स तुहं, को णिअघररक्कणो वाउ ॥ २६ ॥

व्या० — एवीरीते सूत्रमा कहेलु जे सचेल यतिने अचेलपणुं ते केम संजवे, एम कहेतां तमने पोतानुं संजालता कठण थई पडशे केमके, तमारा शास्त्रमा ज यतीने आहार करता अनाहारी कह्याछे त्यारे मूर्छारहित सचेलने पण अचेल कहेतां शु अघटित थाय ! ॥ २६ ॥

जइ चेल जोगमेत्ता, ण जिया चेलय परीसहो सा
हू ॥ जुजंतो अजिअ खुहा, परीसहो तो तुमंपत्तो ॥ २७॥

व्या० — जो एम कहेशो के वस्त्र वापरवाथी अचेल परीसह जीताय नही त्यारे आहार करवाथी क्षुधापरीसह केम जीताय ! जो एम कहेशो के, तीव्र क्षुधा लागी होय तोपण यतीए अनेषणी आहार लेवो नही. किंतु जो शुद्ध आहार मळे तोज आत्माने उपग्रह करवो एवीरीते क्षुधापरीसह जीतायछे तेमज शीतादिक वडे घणी वेदना थती होय तोपण यतिए सदोष वस्त्र लेवुं नही, किंतु निर्दोष वस्त्र मळे तोज आत्माने उपग्रह करवु, एवीरीते अचेलपरीसह पण जीतायछे एम निश्चयथी अचेलपणु जाणवु ॥ २७ ॥

उ० व्यवहारथी अचेलपणुं दर्शावे छे.—

जह जलमवगाहंतो, जणई चेलरहिउ सचेलोवि ॥
तहवछोजुण कुछिय, चेलावि अचेलया साहू ॥ २८ ॥

व्या० — जेम कोई माणस पोतीउं पहेरीने तलावप्रमुखना पाणीमा स्नान करवासारु पेशे ते पोतिउं छता लोकमां नग्न कहेवाय तेम यति जीर्णवस्त्रने धारण करे ते अचेलज कहेवाय ॥ २८ ॥

उवयारेण अचेला, सेसमुणी सबहा जिणंदाय ॥
खंधाउ देवदूसं, चवइ तउ चेव आरज्ज ॥ २९ ॥

व्या० — तीर्थंकर विना बीजा यति उपचारे अचेला कहेवाय केमके, तेउ वस्त्र छतां पण अवस्त्र गणेछे जेम कोटी धनवान छतां तेनो अजिमान न होय

तो ते निर्धन जेवोज होय छे. एम सचेल साधुविषे पण जाणी लेवुं सर्वथा अचेल तो ज्यारे स्कंध उपरथी देवदुष्य वस्त्र पडे त्यारे तीर्थंकर कहेवायछे. ॥२९॥

एएण जइ अचेला, जिणंद जिणकप्पिआइआ सुमु
णी॥ ता एसोच्चिय मग्गो, णासोत्ति पराकयं वयणं॥३०॥

व्या० — एणेकरी; जिनतीर्थंकर तथा जिनकल्पिप्रमुख अचेलाछे, तेथी एज मार्ग उत्तमछे; अने स्थिविरकल्पनो मार्ग उत्तम नथी, एम कहेनारानुं निराकरण कर्युं. कारणके, जे जिनकल्पीछे ते पण एकांते अचेला नथी. केमके, जे जिनकल्पीने पात्रनी लब्धि होय, हाथ छिद्ररहित थया होय; किंतु वस्त्रनी लब्धि न होय ते ओमांना कोइएकने रजोहरण, मुहपति, तथा एक कल्पक ए त्रण उपधि होय छे; कोइकने रजोहरण, मुहपति, तथा वे कल्पक मली चार उपधि होयछे, कोइकने रजोहरण, मुहपति तथा त्रण कल्पक मली पांच उपधि होयछे; जेने वस्त्रनी लब्धि होय, किंतु पात्रनी लब्धि न होय तेने सप्तविध पात्रनिर्योग, रजोहरण, तथा मुहपती मली नव उपधि होयछे, जेने वन्ने लब्धिमांनी एके लब्धि न होय तेओमांना कोइकने सात पात्रा, रजोहरण, मुहपती तथा एक कल्पक मली दश उपधि होयछे, कोइकने सात पात्रा, रजोहरण, मुहपति तथा वे कल्पक मली अग्यार उपधि होयछे, अने कोइकने सात पात्रा, रजोहरण, मुहपति, तथा त्रण कल्पक मली बार उपधि होय अर्थात् पोतानी शक्तिने अनुसारे उपधि होयछे. अने जेने वन्ने लब्धीओ होय तेने पण रजोहरण तथा मुहपति ए वे उपधि तो निश्चयथी होयछे एवो नियमछे. ॥ ३० ॥

जिणकम्मेव य कम्मं, जइ कायव्वं तउ तुहं इहयं ॥
उवएस सिस्स दिक्खा, गुरुवयणाईहि किं कज्जं ॥ ३१ ॥

व्या०.— जो तमे कहेशो के, जे कार्य जिनेश्वरे नथी कर्युं ते अमारे पण करवुं नथी! त्यारे धर्मोपदेश, शिष्य, दीक्षा, तथा गुरुवचनादिकनुं तमारे शुं उपयोग छे! जेम भगवते ज्ञान उपना पछी धर्मोपदेश दीधो छे, किंतु केवलज्ञाननी पूर्वे कोईने उपदेश कर्यो नथी, तेम तमारे पण केवलज्ञान उत्पन्न थाय त्यारेज उपदेश करवो जोये. तेनी पूर्वे कांई पण धर्मोपदेश प्रमुख करवु जोईये नही वारु !!! ॥३१॥

णिरतिसयाणं कप्पो, थेराणहिउ छिउ अ तहेव ॥
पडिवज्जउ जिणकप्पं, पंचहि तुलणाइ जुत्तो तो॥ ३२ ॥

व्या०.– जे साधु लब्धिरहित होय, तेने स्थिविरकल्प मार्गज हितकारी छे. ते समये जिनकल्प त्याग करवा योग्य छे ज्यारे आत्मज्ञान थाय त्यारे जिनकल्प आदरवो परतु असमर्थ छता उत्कृष्ट मार्गनो जे आदर करवो ते केवल आर्त्तध्याननो हेतु थायछे यत "अकालो त्सुक्यस्य तत्वत आर्त्तध्यानरूपत्वात् धर्मविदो" ॥३२॥

वेज्जुवदिठं जसह, मिव जिणकहिय हिअं तउ मग्गं ॥ सेवं
तो होइ सुही, इहरा विवरीअफलभागी ॥ ३३ ॥

व्या० – माटे भगवते कहेला मार्गने जे भजे ते सुखी थाय; अने भगवते जेम कर्युं छे तेम जे करवा मांडे ते विपरीत फलने लायक थाय. जेम रोगी वैदे कहेली औषधी जो सेवे, तो रोगरहित थाय पण वैदना कह्या प्रमाणे न करे तो अपथ्य सेवन करतो छतां जेम अकाले नाश पामे तेम ए पण जाणी लेवुं ॥३३॥

अणगूहितो सत्ति, भुजंतोवि जह णो चयइ मग्गं॥
अणगूहितो सत्ति, तह उवगरणं धरतोवि ॥ ३४ ॥

व्या० – सकल आत्मशक्तिने फोरवनारो यति संयमादिकने अर्थे, जेम आहार करतो छता जिनमार्गनो त्याग करतो नथी, तेम स्वाध्यायादिकने अर्थेपण ते यतिए धर्मोपकरणनो त्याग करवो नही. यत "तिहि ठाणेहि वत्थधरेज्जा, तं जहा, हरियत्तिअं, डुगछवत्तिअ परीसहवत्तिअं" इति लज्जा अथवा डुगंछा मटाडवाने तथा सयमने अर्थे वस्त्र धारण करवा जोये जो वस्त्र न होय ने नग्न होय तो लज्जाथाय, अने सयम पले नही, जो वस्त्र न होयतो लोक निंदा करे के, ए धर्म सारो नथी केमके जेमा साधु उघाडा फरेछे ते टालवाने अर्थे वस्त्र धारण करवा, जो वस्त्र न होय तो टाढ तथा तापप्रमुख लागे तेथी चारित्रभगरूप आर्त्तध्यान उत्पन्न थाय ते मटाडवाने अर्थे वस्त्र धारण करवा एम कारणीक वस्त्र होवाथी अमे साहसवत छतां केम धारण करिये; एम जो कहेशो तो आहार पण कारणीक कह्यु छतां तेपण तमारे करवो न जोये. यत. "छहिं ठाणेहि समणे णिग्गथे आहार माहारे माणेइ कमइ तं वेयण वेयावच्चे इरियठाए असंयमठ्ठए तह पाण वत्तिआए छठं पुण धम्मचिंताए" इत्यादि कारणने लीधे यति आहार करे तेथी आज्ञानुं अतिक्रमण थाय नही. तेना कारण आछे – क्षुधानी वेदनाने मटाडवाने अर्थे, वेयावच्च करवाने अर्थे ईर्याशोधवाने अर्थे, संयम पालवाने अर्थे प्राणधारवाने अर्थे, तथा स्वाध्या

यप्रमुख धर्मचिंताने अर्थे साधु आहार करे छे. पण बल तथा रूपादिकने अर्थे करतो नथी, तेमज वस्त्र पण कारणने लीधे धारण करे छे तेनो त्याग करवानुं कारण शुं! आहार लेवो अने वस्त्र मूकवा! एम करवाने तमारो शुं अभिप्राय छे ते जाणतु नथी ॥ ३४ ॥

अविजिय हिरिकुछाणं जइ नूणं संजमेण अहिगारो ॥
ता कह अजिय डुगंछ तसाणं तछ अहिगारो ॥ ३५ ॥

व्या० — जो एम कहेशो के जेणे लाज तथा डुगंछा प्रमुख जीत्यां न होय तेने चारित्रनो अधिकार नथी त्यारे जेणे क्षुधा तथा तृषा जीत्यां न होय तेने चारित्रनो अधिकार केम कहेवाय? ज्यारे क्षुधा तथा तृषा मूलगुणना घातक नथी त्यारे लज्जा तथा डुगंछा पण मूल गुणघातक केम कहेवाय? माटे अहीं तमारे अभिनिवेशविना बीजू कांई कारण दीठामा आवतुं नथी ॥ ३५ ॥

अह हिरि कुछा हिसया हिरि कुछ सहाव जावणो णोचेत् ॥
एहा डुहाहि ताकह तय जाव सहाव संबुद्धी ॥ ३६ ॥

व्या० — जो कहेशो के, यतिने लज्जा तथा डुगंछ होय तो तेथी विपरीत जे अलज्जा तथा अडुगंछारूप आत्मस्वजावनी जावना ते न थाय. त्यारे क्षुधा तथा तृषा बतां तेथकी विपरित जे अक्षुधा तथा अतृषारूप आत्मस्वजावनी जावना ते यतिने केम थाय! माटे शांत दांत प्रमुख श्रेष्ट गुणयुक्त जे यति छे, तेनुं मन शुद्ध होयछे तेनाबलथी आत्मस्वजावजावना टलती नथी ए समाधान आहार अने उपकरण ए बन्नेनेविषे लागु पडेछे ॥ ३६ ॥

उस्सग्गववायाणं मित्तीए अहण जोअणं डुठं ॥ उ
स्सग्गववायाणं मित्तीइ तहेव उवगरणं ॥ ३७ ॥

व्या० — जो एम कहेशो के, उत्सर्ग तथा अपवाद ए बन्ने मार्गनेविषे सापेक्षताएकरी जोजन करवु ते अयोग्य कहेवाय नही; त्यारे सापेक्षताएकरी उपकरण धारण करवामां शु अयोग्यता छे? ॥ ३७ ॥

ए पसुवगरणेणं पच्चरकाणस्स दवउ जंगो ॥ इयकप्प
णावि विहवा जोवणमिव णिप्फला एआ ॥ ३८ ॥

व्या० – जो एम कहेशो के, उपकरण जे ने ते नावथी तो मूर्गारहित ने पण द्रव्यथकी परिग्रहरूप ने. तेथी पच्चखाणनो नंग थायने. केमके द्रव्य, क्षेत्र, काल तथा नाव ए चार प्रकारे जे पच्चरकाण ने तेमानो प्रथम द्रव्यपच्चरकाण उपकरण उतां संनवे नही एवी जे अध्यात्मनी कल्पना ने ते विधवायौवननी पठे निष्फल ने केमके, द्रव्यादिक चार प्रकारे सर्व मूर्गानो जे त्याग करवो तेज सिद्धांतोनो परमार्थ ने. एम जो न मानीए तो शरीर पण द्रव्यपरिग्रह ने, तेनो त्याग केम थाय ! अने पच्चरकाणना जे चार प्रकार कह्या ने ते तो सर्व नाव पच्चखाणनो विस्तार ने, एम जाणवु. यत " अपरिग्गहिआसुत्ते, तिजाय मुछा परिग्गहोनिमउ, सवदवेसु एसा, कायवा सुत्तसप्नावो," इति विशेषावश्यके. ॥३८॥

सिद्धंत सिद्धधरणं उवगरण त मुणीण सुहकरणं ॥
अह होइ पावहरणं इय अम्हं विंति आयरिया ॥३ए॥

व्या० – एवीरीते सिद्धांतनेविषे उपकरण धारण करवानुं कह्यु ने, ते जयणाएकरी राख्याथी यतिने सुखकारक थाय ने, तथा पापनुं हरण करेने एम उत्तराध्ययन बृहद्वृत्तिप्रमुखनेविषे अमारा पूर्वाचार्ये कह्यु ने, ते अवश्य मान्य करवु जोये ॥३ए॥

पुछा दिअंबराणं केवलमअप्पिआण उवहासो ॥
अम्हाणं पुण दूहइ दोह्न विवहि आरवावारो ॥ ४० ॥

व्या० – आग्रंथनेविषे दिगंबरीओए जे प्रश्न कर्या ने, तथा अध्यात्मीओए जे हासीनां वचनो कह्यांने, ए बन्नेनो अमारे प्रतिकार करवानो अधिकार ने. एवीरीते धर्मोपकरण तथा नावअध्यात्म ए बन्नेनुं पोतपोतामां अविरोधपणुं बताव्युं ॥४०॥

उ०.– अध्यात्मनी प्राप्ति केम थाय ते कहेने –

पंच समिउ तिगुत्तो सुविहिय ववहार किरिअ परिकम्मो ॥ पावइ परमअप्पं साहू विजिइदिअप्पसरो ॥ ४१ ॥

व्या०– जेपांच समिति तथात्रणगुप्तिए करि सहित होय, आलय, विहार, नापा, तथा विनयप्रमुख विविधप्रकारे क्रिया पालतो होय; तथा इंड्यिो जीति होय, ते साधुने उत्कृष्ट अध्यात्मनी प्राप्ति थाय ने ॥ ४१ ॥

लुंपइ वर्ण किरिय जो खलु आहच्च नाव कहणेण ॥
सोहणइ बोहिवीअं नुम्मग्गपरूवणं कानं ॥ ४२ ॥

व्या०.— कोई एम कहे के, व्यवहाररूप बाह्य क्रियाथी अर्थ सिद्ध थाय एवो नियम नथी; केमके, क्रिया कर्याविना जरत चक्रवर्त्तिने काच जुवनमां अनित्य जावना जावतां केवल ज्ञान उत्पन्न थयुं अने बाह्य क्रिया करतां रौद्र ध्यानना योगे प्रसन्नचंद्रे अशुज प्रकृति बाधि लीधी माटे व्यवहार क्रिया करवी नही, किंतु निश्चय क्रियानो अंगीकार करवो. एम कहेनारा उन्मार्गेनी प्ररूपणा करीने पोताना बोधबीजनो नाश करेछे. माटे ते वचन मान्य करवां नही केमके, जरतादिकनुं स्वरूप कदाचित्त जावमां कहेवाय एटले एवु कदाचितज बनेछे, पण नियमथी एमज थायछे एवुं कोईनाथी कहेवाय नही. अने व्यवहार पंथमां तो व्यवहारक्रियाविना निश्चय क्रिया संजवेज नही अने ए कारण माटे एक निश्चय अंगीकार करिने क्रिया मूकी देवी नही किंतु बन्ने अवश्य करवी. ॥ ४२ ॥

सवं सहावसज्जं णिच्छं पउपरकयं च ववहारा ॥ ए
गंते मिच्छंत उजय णयमयं पुण वयाणं ॥ ४३ ॥

व्या०.— निश्चयनयनी रीतिए सर्व वस्तु स्वजावे उत्पन्न थायछे, विशिष्ट वस्तु परिणामने स्वजाव कहेछे. ज्यारे बीजने अंकुरपणे उत्पन्न थवानो परिणाम थायछे, त्यारे बीजपर्याय टलीने अंकुरपर्याय उत्पन्न थायछे. पण तेने बीजा कारणनी अपेक्षा होती नथी. अहीं कोई आशंका करे के, जो बीजा कारणनी अपेक्षा न होय तो कोठामां पडेला बीजनो केम अंकुररूपे परिणाम थतो नथी? एनो जवाबः— कोठामा पडेला बीजने अंकुररूप परिणाम थवानां बीजां कारणो जोयेछे, माटे व्यवहारनय पण अंगीकार करवो जोये छे. तेने सामग्री कहेछे, ते सामग्री मल्याविना बीजनो अंकुररूपे परिणाम थाय नही. कितु सामग्रीना योगे ते परिणाम थाय छे. कोई आशंका करे के जो सामग्रीथीज कार्यनी उत्पत्ति थती होय तो तेने परिणाम एवुं नाम राखवानुं कारण शुं? किंतु सामग्रीथकी कार्यनी उत्पत्ति थायछे, एवो अंगीकार करवो जोइये. एनो जवाब के, सामग्रीथी कार्यनी उत्पत्ति थायछे एम मानिये तो व्यवहारनय सिद्ध थाय पण निश्चयनय उमी जाय तेथी एकांतपणुं थाय ते मिथ्यात्व कहेवाय. माटे बन्ने नयनुं मत प्रमाणजूत मानवुं. जो एकलो निश्चय नय अंगीकार करिये ने व्यवहारनय अंगीकार नही करिये तो सामग्री थकी परिणामविशेषनी उत्पत्ति मनाय नही, अने एकज वस्तु कारण तथा अकारण ए बन्ने जावे कहेवाशे त्यारे

अकारण वस्तुथी परिणामरूप कार्यनी उत्पत्तिनो संजव केम थशे. कार्यनी उत्पत्ति तो कारणथी थायछे पण अकारणथी थाय नही, इत्यादिक सूक्ष्म विचार करवाथी बन्ने पक्ष अंगीकार करवा योग्य छे एवुं सहज जणाई आवशे ॥ ४३ ॥

अप्नंतर बज्झाणं बलिज्जाबलितणंति जइ बुद्धि ॥ नणु कयरं अबलत्तं वेचित्तंवा विवेसम्म ॥ ४४ ॥ णिप्पत्तीव फलंठ अणिचय जोगो फलेण वा सिद्धं ॥ पढमे समसावग्गी वि ति ए वावार वेसम्मं ॥ ४५ ॥ तति ए दोण विसमया सलुच पक्खो पुणो असिद्धोत्ति ॥ तेण समावेक्खाणं दोण्ह विसमयत्ति वह्नुठिई ॥ ४६ ॥

व्या० — कोई कहे के, कर्मरूप अतरग हेतु जे छे ते बलवान छे. अने उद्यमादिरूप बाह्यहेतु जे छे, तेनिर्बल छे एम कहेनारा नयवादीने एम पूछवु के, कर्मरूप अतरग हेतु केवी रीते बलवान छे ? जो कहेशो के एक जातनो उद्यम करनारा पुरुषोने कर्मनी विचित्रताने लीधे सुखदुःखनी अधिक न्यूनता दीशेछे, तेथी कर्मरूप अतर हेतुनुं बल सिद्ध थायछे तो ते कर्म शाथी थया छे ? एनो विचार करवाथी पूर्वनवना उद्यमथी थयाछेएम ठरशे एथी उद्यमनी विचित्रताने लीधेज कर्मनी विचित्रता छे ॥४४॥जो कहेशो के, सुखना कारण छता पण अशातावेदनीयकर्मना उदये जीवने दुःख ऊपजेछे, ए कर्मनु बलवतपणु जाणवु, अहीं दृष्टात ए के, जेम कोइक मनुष्यने दूधना पानथी पण दुःख थायछे. ए वचनपण समर्थ नथी अहीं पण नवातरना उद्यमनी अपेक्षा छे, केमके, दुग्धपानादिके करी पण पित्तादिकना योगे तिक्तरसादिकनुं उद्बोधन थयाथी दुःख ऊपजेछे. ॥४५॥ जो कहेशो के, कर्म पोताना जोगने अर्थे बाह्य कारणने लियेछे, ते बल छे तो जन्मातरनोउद्यम जन्मातरना फलजोगने अर्थे, अतराले कारण कर्मादिक कारण उत्पन्न करेछे एम पण कहेवाई शकायछे जो कहेशो के, कचित् बाह्यकारणविना कार्यनी उत्पत्ति थायछे, पण अंतरगकारणविना कोइ कार्यनी उत्पत्ति थायज नही, ए बलजाणवुंतो एम पण संजवे नही, केमके, साक्षात् अथवा बाह्यकारणथीज कार्यनी उत्पत्ति थायछे, ते विना कार्य थायज नही किंबहुना कालादिक बाह्य कारणविना कोई कार्यनी उत्पत्तिज थती नथी माटे परमार्थताए बाह्य तथा अतरग ए बन्नेकारण सरखांज छे ए वस्तुस्थिति कहेता बे नयने अनुरोधे प्रमाणमार्ग छे ॥ ४६ ॥

अ० निश्चयनयनुं मत कहे छे —

णिच्छिय उसकहंचिय सव्वं णो परकयं हवइ वत्थुं ॥
परिणामा बंभत्ता णयवंभं दाण हरणाई ॥ ४७ ॥

व्या०— निश्चयनयथी सर्व वस्तु आत्मपरिणामथी उत्पन्न थायछे ; परंतु परथी परवस्तुनी उत्पत्ति थती नथी केवल पुण्य पापकर्मना विपाकने अवसरे पासे आवेला जे अंगना सर्पादिक बाह्य अर्थ ते निमित्त मात्र छे तेने व्यवहार वश मूढ जीव कारण करी माने छे. व्यवहारवादी कहेछे के, ज्यारे परकारणत्व नथी, त्यारे साधुने दान दीधाथी शुभफल अने परद्रव्यनुं हरण कर्याथी अशुभ फल केम थायछे ? निश्चयवादी समाधान करे छे के, निर्दोष आहार साधुने देतां ते देनराना जे शुभ परिणाम होयछे, तेथी शुभफल थायछे, परतु अन्नादिक पुद्गलरूप होवाथी, तेथी फल थतु नथी. केमके, पुद्गल द्रव्यथकी पुद्गल परिणाम थाय छे , परतु आत्मपरिणाम नथी थतो. तेमज परद्रव्यनुं हरण कर्याथी जे अशुभ फल थायछे, ते पण आत्माना अशुभ परिणामे करी थाय छे, परतु द्रव्यरूप पुद्गल थकी नथी थतु. ॥ ४७ ॥

अ०.— निश्चय थकी दान पण आत्मपरिणामरूपछे, पुद्गल परिणामरूप नथी एम कहेछेः—

दिंतो वहरंतो वा णय किंचि परस्स देइ अवहरई ॥
देइ सुहं परिणामं हरइ वत्तं अप्पणोचेव ॥ ४८ ॥

व्या०.— निश्चयथकी तो साधुने निर्दोष आहार देता तथा परद्रव्यनुं हरण करतां ते दान देनार तथा द्रव्य हरण करनारनेविषे कांई देवुं, तथा लेवुं वस्तुज नथी. कोई कोईने दान देतो नथी, तथा कोई कोईनुं द्रव्य हरण करतो नथी. साधुने आहारादिकनुं दान देता देनारो पोते पोतानेज परानुग्रह बुद्धिरूप शुभपरिणाम दियेछे, तथा परनुं द्रव्य हरण करतां ते हरण करनारो जीव घात बुद्धिए करी पोतेज पोताना शुभ परिणामनुं हरण करेछे. परतु परनेविषे कांई देवुं लेवुं संभवे नही ॥ ४८ ॥

णय धम्माव सुहं वा परस्स देयं णाया विहरणिज्जं ॥
कयणासा कयभोग, प्पसुहा दोसा फुमाइ हरा ॥ ४९ ॥

व्या० — जो परआत्मा परने देतो होय तो पोतानो धर्म तथा पोतानुं सुख बीजाने देवाई शकाय छे , अने जो परनो आत्मा परनुं हरण करतो होय तो

बीजानो धर्म तथा बीजानुं सुख पोते लेवाई शकायछे ए बन्ने पक्षमा कृतनाश अने अकृतागम दोष प्राप्त थायछे ;- केमके, जो पोतानो धर्म तथा पोतानुं सुख बीजाने देवाई शकातु होय तो पोते करेला कृतनो नाश थई गयो कहेवाय, अने लेनारने अकृतनो आगम थयो कहेवाय केमके, तेने नकरेलो धर्म तथा तेनुं फल जे सुख, तेनी प्राप्ति थायछे, तथा करेलो अधर्म तथा तेहना फलनो नाश थायछे, ते कृतनाश कहेवाय छे तेमज बीजानो धर्म तथा बीजानुं सुख पोताथकी लेवाई शकातु होय तो तेणे करेला कृतनो नाश थई गयो कहेवाय, अने पोताने अकृतनो आगम थयो कहेवाय, केमके, पोताने नही करेलो धर्म तथा तेना फलनी प्राप्ति थायछे, तथा करेलो अधर्म तथा तेना फलनो नाश थायछे, ते कृतनाश कहेवाय छे ॥ ४९ ॥

भत्ताइ पोग्गलाणवि एवं दाण हरणाइ होइ जीवस्स ॥
जइ तं संचिय हुज्जा तो दिज्जा वा अवहरिज्जा ॥ ५० ॥

व्या०—भक्तप्रमुख पुद्गलनुं देवु तथा लेवु जीवनेविषे थाय नही, केमके, जे वस्तु पोतानी होय तेनुं देवुं तथा लेवुं थायछे, परनी वस्तुनुं लेवु देवुं थतु नथी, ने परवस्तुनुं लेवुं देवु तो प्रत्यक्ष करिये छैये ते केम बने? ज्यारे पुद्गल द्रव्य आपणुं नथी त्यारे लेवु देवु केम कराय छे? ॥ ५० ॥

जोगवसेणुवणीआ इठाणिठा य पोग्गला जेहु ॥
अप्पाणे जीवाउ जीवो अण्णो अतोहिंतो ॥ ५१ ॥

व्या० – नामकर्मना परिणाम जे मन वचन तथा कायना योग छे, तेना वशे पुद्गलनुं ग्रहण थायछे, जेम के, सुगंध तथा दुर्गंधनुं ग्रहण करतां काय योगना वशेकरी पुद्गलनु ग्रहण थायछे ; ते आत्मतत्वना ज्ञानथकी जीवने रागद्वेषना कारण थायछे, पण ते आत्माथकी अन्य छे अने आत्मा तेथकी अन्य छे केमके, पुद्गल ग्रहण गुण छे, अने आत्मा उपयोग गुण छे. ॥ ५१ ॥

तम्हास परिविभागो पोग्गलदव्वंमि णत्थि णिच्छयउ॥
भोगाभोगविसेसो ववहाराचेव सपरस्सं ॥ ५२ ॥

व्या० – माटे निश्चयनयथकी एटलो विशेष छे के, जे आपणने भोग आवेछे, तेमांनु न्यायोपार्जित वित्त होय ते आपणुं, ने जे परने भोग आवे ते परनुं जाणवुं.॥५२

पुस्सपयडीए उदये भोगो भोगांतरायं विलएणं ॥ ज
इ णिअचित्तेणंचिअ, तो भोगो किण कि विणाणं ॥ ५३॥

व्या० — सातावेदनीयप्रमुख पुण्यप्रकृतीना उदयथी भोगांतरायकर्मनो विलय थया पछी पण जो जीवने भोग थता होय तो कृपणने पण भोगनी प्राप्ति थवी जोइये, तेम तो नथी थतु, केमके, कृपणने पण लाभांतरायकर्मना क्षयोपशमथकी द्रव्यनी प्राप्ति तो थायछे, परंतु भोगांतराय कर्मना वशथी भोगवी शकतो नथी. माटे जे आपणने भोगवायोग्य होय ते स्वद्रव्य कहेवाय, ने बीजुं बधुं परद्रव्य छे एम जाणवुं एवी रीते व्यवहार नयना मते पण एकांत नथी, माटे ए सर्व पुद्गल द्रव्यने परकरी जाणवुं जोइये ॥ ५३ ॥

अ० आ सर्व पुद्गल द्रव्य परकीय छे एम जे जाणे नही तेने आत्मस्वभावनी प्राप्ति न थाय ते कहे छे.

जो परदव्वमि पुणो करेइ मूढो ममत्त संकप्पो ॥ सो
कहआय सहायं गिद्धो विसएसु उवलहई ॥ ५४ ॥

व्या०— व्यवहारमूढ जीव परद्रव्यनी उपर ममत्वसंकल्प करेछे, ते विषय लोलुप थयो थको आत्मस्वभावने पामतो नथी केमके, शरीरादिकनेविषे 'हुं मातेलो छुं, हुं दूबलो छुं, हु गोरो छुं तथा हुं कालो छुं' इत्यादिक अहंकार जीवने उत्पन्न थायछे, तथा 'मारुं शरीर, मारुं कुटुंब, इत्यादिक ममकार उत्पन्न थायछे, तेथी विषयोनेविषे दृढप्रवृत्ति थायछे, अने विषयना अभ्यासे तेओनेविषे दृढ भाव थायछे, एवी परंपराए करी अज्ञाननी वृद्धि थई गयाथी आत्मज्ञान केम थाय !॥५४॥

णाहं होमि परेसिं ण मे परे णत्थि मज्झमिहकिंची ॥
इय अप्पभावणाए रागदोसा विलज्जंति ॥ ५५ ॥

व्या० — हुं बीजा कोईनो संबंधी नथी, तेम मारो कोई बीजो संबंधी नथी, आ जगतनेविषे मारुं कांई नथी, केमके, परद्रव्यनुं अस्तित्व भिन्न छे, अने मारा आत्मद्रव्यनुं अस्तित्व भिन्न छे, शरीर कुटुंबादिक कर्मना योगे संयोग लक्षण भावछे, तेमां मारुं कांई लागतुं वलगतु नथी, केमके, तेओनो वियोग पण थायछे, जेनो कोई काले संयोग तथा कोई काले वियोग थतो होय ते पोतानुं द्रव्य कहेवाय नही जेनो कोई काले वियोग थाय नही ते पोतानुं द्रव्य कहेवाय छे, एवो तो आत्मस्

नाव छे, जेनो आत्माथी वियोग थतो नथी, जेम ज्ञान दर्शननादिक स्वनावोनुं कोई काले आत्माथी वियोग थतो नथी. एवी रीते शास्त्रोक्तमर्यादाए करी आत्मनावना कखाथी राग द्वेषनो नाश थाय छे ॥ ५५ ॥

तो परिणामाउच्चिय बंधो मोरको व णिछयणयस्स ॥
णेगंतिया अणच्चं तिया पुणो बाहिरो जोगो ॥ ५६ ॥

व्या० —माटे जीवने बंध अथवामोक्ष निश्चयनयथी आत्मपरिणामथीज थाय छे अज्ञानरूप परिणामथकी बंध थायछे, अने आत्मज्ञानरूप परिणामथी मोक्ष थायछे. जेम हिमथकी थएली जे शीतनी वेदना ते अग्निना तापथकी निवृत्त थाय छे, तेम आत्माना अज्ञानथकी थएलो जे कर्मबंध, ते आत्मज्ञानथकी निवृत्त थायछे केमके, एम सिद्धांतोमा पण कह्यु छे के, तपथकी जुर्जीर्ण कर्मनो क्षय थायछे ते पण ज्ञानना संयोगथीज फल थायछे केमके, अज्ञानी कोमाकोडी वर्षेकरी जे कर्मनो क्षय करे, ते कर्मनो क्षय ज्ञानी एक उच्छ्वासमां करेछे बाह्य योग प्राणातिपातादिक, तथा क्रियानुष्ठानादिक एकांतिक नथी, तेम आत्यंतिक पण नथी केमके, बाह्य हिंसाविना मनना क्लिष्ट परिणामे करी, तंडुलमत्स्य, सातमी नरक पृथ्वीनेविषे उत्पन्न थायछे अने अप्रमत्त यतिने जयणाए चालतां अनानोगे जीवघातथी पण ते प्रत्ययिक कर्मनो बंध थतो नथी. तथाविध क्रियानुष्ठानविना पण केवल ज्ञान उत्पन्न थाय छे ने अनव्य जीव यतीने लिंगे उत्कृष्ट बाह्य क्रिया पाले छे तेना बले ते नवमा ग्रैवेयकसुधी जायछे. तो पण शुद्ध परिणामविना संसारनो पार पामता नथी ॥५६॥

सिद्धी णिछयउच्चिय दोह्न संजोगउ अवेयत्तं ॥ क
छइ कछइ दोह्नवि उवउगो तुल्लवंचेव ॥ ५७ ॥

व्या० — संसारपार गमन सिद्धलक्षण निश्चय क्रियाथीज थायछेः एमां पण आटली विशेषता छे के, घणाने व्यवहारथकीज निश्चय आवेछे अने कोइक नरतादिकने पूर्व चारित्राभ्यासेकरी तथा नव्यत्वना परिपाकेकरी सहजे पण थायछे. कपणुं कहेतां योग्यपणु ते निश्चय तथा व्यवहार ए बन्नेना संयोग थकीज थायछे. एविषे सिद्धांतमा चार नांगा कह्या छे. पहेलो जे रूपुं सारुं नही ने छाप पण सारीनही, तेनी परे ए नांगो चरकपरिव्राजकप्रमुखनेविषे छे. केमके, ते रूपाना

जेवो शुद्ध परिणाम नथी, तथा छापना जेवो वेष पण नथी माटे तेओना अर्थ नी सिद्धि थती नथी, ने ते वंदन करवायोग्य पण नथी बीजो रूपुं खोटुं, होय ने छाप खरी होय ए नांगो, पासत्था, उसन्ना, प्रमुखनेविषे थाय छे, प्रमुख श ब्देकरी दिगंबरादिक पण लेवा केमके, तेओने रूपाना जेवो शुद्ध परिणाम नथी मात्र छापनी पठे वेष तेवो छे पण परिणामविना तेओना अर्थनी सिद्धि थती नथी वेष तेवोछे माटे ज्हांसुधी दोष जाण्या न होय त्हांसुधी वंदना करवायोग्यछे, पर तु दोष जाण्या पछी जो वंदना करिये तो मोहा दोष लागे. यत "जह वेल बगलिं गं, जाणं तस्स एमउ धुव दोसो, णिद्दंधसत्तिणाऊ, ए वंदमाणे धुवदोसो" इत्या वश्यके. एनो अर्थ – जेम कोइ नाडे यतिनो वेष लीधो होय तेने जाणीने वंदन क रतां निश्चयेकरी दोष लागेछे तिम निद्धंधस जाणी वेष मात्र जोइने वंदना करतां ध्रुव दोष लागे त्रीजो रूपुं चोखुं होय पण छाप खरी न होय ए नांगो प्रत्येक बुधने लागु थायछे. केमके, तेओ अन्यलिंगे पण होय तथापि तेओने रूपानी पठे नावचारि त्रतो छे, तेथी पोताना आत्मानो अर्थ तो सिद्ध करेछे, परतु साधुना पथ्यविना वंदन करवा योग्य नथी चोथो नांगो रूपुं पण चोखुं तथा छाप पण चोखी होय तेनी पठे सर्व शुद्ध जाणवु जे महानुनाव आलय विहारादिक सर्व शुद्ध. यतिनी समाचारी पाले, अने विशुद्ध चारित्रवंत होय, एने रूपानी पठे शुद्ध परिणाम छे, तेथी आत्मानो अर्थ सिद्ध करेछे, तथा साधुनुं पथ्य छे, माटे वंदवा योग्य तथा पूजवायोग्य पण छे. एवीरीते एवा ठेकाणे शुद्ध परिणामरूप निश्चय बलवंत छे साधु वेषादिरूप उपचरिता सद्भुत व्यवहार ते निर्बलछे. तथाकोईक ठेकाणे व्यवहार अने निश्चय ए बन्नेनो सरखो उपयोग छे. अहीं ज्ञान अने क्रियानुं उदाहरण लेवु ज्ञाननयनी रीतिए आम कह्यु छे के, ज्ञानविना क्रियामात्रथी फलनी सिद्धि थती नथी केमके, मिथ्याज्ञानेकरी सीपनेविषे रूपानी बुद्धि प्रवर्त्ते छे ने तेनी प्राप्ति तो थती नथी माटे मिथ्याज्ञानजन्य जे क्रिया, तेथी फलनी प्राप्ति थती नथी, किंतु सत्यज्ञानजन्यक्रियाथी फलनी प्राप्ति थायछे. परतु क्रिया तो ज्ञानेकरीनेज थायछे, तेमां मिथ्याज्ञानजन्यक्रि या निष्फल थायछे ने सत्य ज्ञानजन्यक्रिया सफल थायछे, एवीरीते क्रियानुं कारण ज्ञान होवाथी प्रधान छे. अने ज्ञाननुं कार्य क्रिया होवाथी अप्रधान छे, ते मज क्रियानयनी अपेक्षाए एम कहुंछे – ज्ञानजन्यक्रियाए करीने संपादन क रेलुं जे फल, ते कोई कारणने लीधे क्षीण थई जाय तो ते पाछुं क्रियाथी प्राप्त थायछे, माटे क्रिया प्रधान छे. अने ज्ञान अप्रधान छे. जुवो के, ज्ञानवान छता

क्रिया न करे तो ते ज्ञानमात्रथकी फलनी प्राप्ति थती नथी. अहीं दृष्टांतो कहे छे — जेम कोई पुरुषने मार्गनुं ज्ञान सारी पठे होय, पण जो चलनक्रिया न करे तो वांछित नगर प्रत्ये पहोची शके नही, जेम कोई पुरुषने नृत्यकलानुं सारुं ज्ञान होय पण जो नृत्य अभिनय क्रिया न करे तो जोनारा लोकनुं मनरजन करी शके नही, तथा तेने काई द्रव्यनी प्राप्ति थाय नही तथा जेम कोई पुरुष तरी जाणतो होय एटले जलतरणज्ञानवान होय, पण जो हस्तपादचलनरूपक्रिया न करेतो इच्छितस्थले न पोहोचता वच्चेज बूडी मरे, एवी रीते ज्ञाननय तथा क्रियानयनो परस्पर विवाद छे, तेने एककोरे मूकीने मात्र साराशनो विचार जो कर्यो होय तो परमार्थदृष्टिए फलसिद्धिने विषे बन्ने समान बलवत छे. केमके, शैलेशीअवस्थानेविषे केवलज्ञानरूप ज्ञान, तथा संवररूप क्रिया ए बन्ने योगथी मुक्ति थायछे पण ए बन्नेमांनुं कोई एक न होय तो मुक्ति थाय नही, ए प्रमाण पक्ष छे ॥ ५७ ॥

अ० निश्चयनयनी अपेक्षाए कहेछे —

तुल्लत्तमवेक्काए णियमासमुदाय जोगमहि गिव्व ॥
किरिआ विसस्सए पुण नाणाउ सुए जउ नणिअं ॥५८॥
जम्हा दंसण नाणं संपुन्नफलं न दिति पत्तेअं ॥ चा
रित्तजुआ दितिहु विसस्सए तेण चारित्तं ॥ ५९ ॥

व्या० — यद्यपि कार्य करवानी अपेक्षाए ज्ञान अने क्रिया ए बन्नेनुं सरखुं बलछे, तथापि ज्ञान करता क्रियाने आटली विशेषता छे — ज्यारे शुद्धक्रिया होयछे त्यारे षष्ठादिगुणस्थानके नियमे शुद्धज्ञान होयछे. पण ज्यारे शुद्धज्ञान होय, त्यारे शुद्धक्रियानो नियम नथी केमके, चतुर्थगुणस्थानके सम्यक्तना प्रतापे करी शुद्ध ज्ञान तो होयछे, परतु अविरति होवाने लीधे शुद्धक्रिया होती नथी एविषे आवश्यक निर्युक्तिमा कह्युछे के, जेमाटे दर्शन तथा ज्ञान ए प्रत्येके सपूर्ण फल दई शकता नथी, पण ज्यारे चारित्रनेविषे एकठा मलेछे. त्यारे संपूर्ण फल दियेछे तेमाटे दर्शन तथा ज्ञान करतां चारित्रश्रेष्ठ छे ॥ ५८ ॥ ५९ ॥

एवं ववहाराउ बलवंतो णिछउ नणेयव्वो ॥ एग
मयं ववहारो सव्वमयं णिछउ वत्ति ॥ ६० ॥

व्या० — एवी रीते व्यवहारथकी निश्चयनुं बल अधिक कह्युं तथा आवीरीते पण निश्चयनी विशेषता छे — जे एकनयनुं मत ते व्यवहार, अने सर्वनयनुं मत

ते निश्चय कहिये, यथा भूतपदार्थनुं जे कथन ते निश्चयनय कहेवाय छे, ने ए भूता र्थनय पण कहेवायछे, निश्चयनयनो विषय, भाव जे छे ते सर्व समान छे. यत "सव्वणया भावमिछंति" इति विशेषावश्यके ॥ ६० ॥

अ० एवुंनिश्चयनयनुंमत सांभलीने सिंहावलोकनन्याये व्यवहारवादी बोले छे –

अहिआ जइ तुह किरिआ अहिआ नाणं वि तस्स हेउत्ति ॥
कारणगुणाणुरूवा कज्जगुणाणेव विवरीआ ॥ ६१ ॥

व्या०.– पूर्वे कहेली रीतिए ज्यारे तुं क्रियाने अधिक माने छे, त्यारे ज्ञानने पण अधिक मानवुं जोयेछे. केमके, ज्ञान क्रियानुं कारण छे कारणना गुण जेवाज कार्यना गुण होयछे, तेथी विपरीत होता नथी जेमाटे ज्ञान क्रियानुं कारण छे, तेमाटे तेना गुणे करीने क्रियाने कार्य पणानी प्रधानता छे, तेथी ज्ञान अत्यंत प्रधान छे, जो कहेशोके, मोक्षरूप कार्य क्रियाथकी थायछे. माटे क्रिया अधिक छे , तो तेम पण संभवे नही. केमके, ज्यारे क्रिया ज्ञाननुं कार्य छे. त्यारे क्रियानुं कार्य जे मोक्ष, तेपण परंपराए ज्ञाननुंज कार्य जाणवु यत. "दासेण मे खरो कीउ, दासोवि मे खरोवि मे" एटले मारा दासे खर वेचातो लीधो, ते दास पण मारो अने खर पण मारो छे; एम सिद्धांतोक्तन्यायथी जाणी लेवु ॥ ६१ ॥

अह जह सव्व णयमयं व णिच्छिउ इगमयं च ववहारो ॥
सोसा सयलादेसा विगलादेसा कहं होऊ ॥ ६२ ॥

व्या० पूर्वे कह्या प्रमाणे निश्चयनय जे छे ते सर्व नयनुं मत छे, जो एम होय तो ते सर्व भांगानुं ग्रहण करनार सकलादेश प्रमाणरूप मानवो जोइशे. त्यारे ते नयरूप विकलादेश केम मानशो? ॥ ६२ ॥

अ० एवीरीते व्यवहार तथा निश्चय ए बन्नेनय परस्पर वाद करता जोईने मध्यस्थपणे प्रमाणवादी कहेछे –

मुक्खामुक्खविभागो इछामेत्तेण णत्थि एगंतो ॥ जइ
अत्थि तो विणाणे चरणं सारोत्ति तं मुक्खं ॥ ६३ ॥

व्या० व्यवहार तथा निश्चय एबन्ने नयोना मुख्य तथा अमुख्य ए वे विभाग पोतपोतानी इछाए थई शकेछे, कोईक गुणने लईने निश्चयनी मुख्यता कहेवायछे, अने कोईक गुणने लईने व्यवहारनी मुख्यता कहेवायछे. परतु एओनेविषे एकातपणुं संभ

वे नही, किंतु अनेकांतपणुं संनवेछे. केम के, निश्चय तथा व्यवहारना मुख्य तथा अमुख्य विनाग स्वनाविकधर्मरूप नथी, किंतु आपेक्षिक छे जेम आमलक बदरनी अपेक्षाए दीर्घ कहेवाय, अने घटादिकनी अपेक्षाए न्हस्व कहेवायछे. तेम ए बन्ने नयो एक बीजानी अपेक्षाए मुख्य तथा अमुख्य कहेवायछे, एम छता पण जो व्यवहारनयवादी पोताना मतनुं मुख्यपणुं प्रकाशवानु मानी न वाळे तो तेणे वली आ युक्तियेकरीने पोताना मननु समाधान करी लेवु जोये के व्यवहारनुं जे मुख्यपणुं छे ते मात्र कहेवानुं छे, अने निश्चयनुं मुख्यपणुं तो कार्यनो उपयोगी छे, केम के, सामायक आदिदईने चौद पूर्वपर्यंत ज्ञाननुं सार ते चारित्र कह्यु छे, यत "सामाइअमाईअं, सुअनाण जाव बिंदुसाराउ, तस्स वि सारो चरण, स्सारो चरणस्स निव्वाण" इति आवश्यके ॥ ६३ ॥

सव्वणयमयत्तं पुण सव्वेसि सम्मउ जउ विसउ ॥
णयणिच्छयस्स तेण सयल दिसत्त मेगस्स ॥ ६४ ॥

व्या० निश्चयनयने सर्वनयमय पणुं जे पूर्वे कह्यु ते सर्वनय सम्मत अ र्थी मानेछे तेमाटे कह्यु एम जाणवाथी एकला निश्चयनयने सर्वनयसमूहरूप प्रमाणात्मक सकल देशपणुं पण दोषनु करनार थशे नही. ॥ ६४ ॥

जेणं सयला देसो अन्नेय वित्तीइ णिच्छयाधीणो ॥
तेणेव सोपमाणं ण पमाणं होइ ववहारो ॥ ६५ ॥

व्या०: जिहा एक धर्मनी धाराए सर्व धर्म जे सकलादेशनेविषे प्रतिपादन कराय छे, तिहा अस्तित्वादिक एक धर्मनी साथे बीजा सकल धर्मोनु अनेदपणुं जे जाणवुं ते निश्चयनयने आयत छे, एवी अपेक्षाएकरी निश्चयनयने प्रमाण कह्योछे, अने व्यवहारनयने अप्रमाण कह्योछे, परतु एकात निश्चयनय प्रमाण कह्यो नथी ॥६५॥

जम णुवयारोवि चल कासइ णेगतिअं हवे तंपि ॥ एग
स्स मुक्खन्नावे णियमा अवरोवयारोत्ति ॥ ६६ ॥

व्या० कोई एम कहेछे के निश्चयनय परमार्थग्राहीछे तेमा कोई उपचार न ही होवाथी ते बलवानछे, अने व्यवहार नय परमार्थग्राही नथी, तेमां घणा उपचार होवाथी ते निर्बलछे, एपण एकात नथी, केमके, बन्नेनय वस्तुग्राही छे, व्यवहारनय अंशग्राही छे, तेमां ज्यारे निश्चयनयनी मुख्यता विवक्षिए त्यारेनिश्च

थनय पण उपचारसहित थायछे, इहां कोई विशेषता नथी, यत· "अर्पितानर्पितसिद्धे तत्वार्थे" शब्देकरी नयनी प्रधानतानी जे विवक्षा करवी ते अर्पित कहिये, अने नयांतरनी अपेक्षाए तेनी अप्रधानतानी जे विवक्षा करवी ते अनर्पित कहिये, एवन्ने प्रकारनी विवक्षाथी जे पदार्थनी सिद्धि थायछे, ते तत्वार्थसिद्धि कहेवायछे ॥ ६६ ॥

णिच्छयणयस्स विसयं नावंचिय जे पमाण माढंसु ॥
तेसिं विणेव हेउं कज्जुप्पत्तीइ कामेरा ॥ ६७ ॥

व्या०: कोईक आम मानेछे के, निश्चयनयनो विषय जे नाव छे तेज प्रमाण छे, तो ते नावनो हेतु इव्य छे, इव्यविना नावनी उत्पत्ति थाय नही जो इव्यविना नावनी उत्पत्ति अंगीकार करीये तो मर्यादा रहे नही अने कारणविना कार्यनी उत्पत्ति थती नथी एवो नियम छे तेनो नंग थशे। जो एम कहेशो के, इव्य क्रिया संसारमां अनंतवार प्राप्त थएली छे, माटे ते अप्रधान छे, तो नाव पण अप्रशस्त अनंतवार प्राप्त थएलो छे ते केम प्रधान कहेवाय ? जो कहेशो के, शुद्ध नाव अपूर्व छे, तो शुद्ध इव्य पण अपूर्वज छे, ते शासारु नही मानवुं जोये ! ॥६७॥

खाउवसमिगनावे सुद्दो हेऊ सुदस्स खइअस्स ॥ त
प्नावेण कया पुण किरिआ तप्नाववुड्ढि करी ॥ ६८ ॥

व्या०: क्षायोपशमिक नावे कीधेली जे क्रिया तेज क्षायोपशमिक नावनीवृद्धि करनारी छे; माटे शुद्धनावथी क्रिया अवश्य करवी योग्य छे, अने तेम न कर्याथी नावनी हाणी थई जाय ॥ ६८ ॥

धिइ सद्धा सुह विविइस विसत्ती तत्त धम्म जोणित्ती॥
तल्लद्धधम्मनावा वड्ढइ नावत्तणं तत्तो ॥ ६९ ॥
एवं पवड्ढनावो कमेण गुणठाणसिढिमारुहिय ॥
पक्खीणघाइकम्मो कयकिच्चो केवली होइ ॥ ७० ॥

व्या०· धृति, श्रद्धा, शुश्रूषा, विविदिषा, तथा विज्ञप्ति ए पाच पदार्थ धर्मनां कारण छे, एविषे पतंजलिप्रमुख ग्रंथोमा पण कहेलुं छे, उद्वेगादिनो त्याग करीने चित्त स्वस्थ करवु ते धृति कहिये, चित्त स्वस्थ थयाथी मार्गानुसारिणी रुचि उत्पन्न थाय छे ते श्रद्धा कहिये , मार्गानुसारिणी बुद्धि थयाथी क्षायोपशम नाव

उत्पन्न थायछे, त्यारे जेम सर्प बाहेर आमो तिडो चाले पण ज्यारे राफडांमां पे सेछे त्यारे पाधरो थई जायछे तेम श्रवणादिकनेविषे बुद्धिनी जे सरलता थवी ते शुश्रूषा कहिये, श्रवणादिक कर्याथी जेम जेम बुद्धि शुद्ध थती जायछे, तेम तेम आत्मतत्वचितननी उत्पत्ति थती जायछे ते विविदिशा कहिये, आत्मतत्वचितनथकी शुश्रूषा जे छे ते श्रवणादिगुणरूप थायछे, तेविना ते आजासमात्र कहेवाय; पण गुण कहेवाय नही, आत्मतत्वचितन वडे श्रवणादिक गुण उत्पन्न थयाथी सम्यक्तनी उत्पत्ति थायछे, ते सम्यक्तना पाच लिंग शम, सवेग, निर्वेद, अनुकंपा, तथा आस्तिक्यता, एवो आत्मानो जे शुज परिणाम तेने परमतनेविषे विज्ञप्ति कहेछे, आत्माना शुजपरिणामथी धर्मनो जाव उत्पन्न थायछे, तेणेकरी जावांतरनी वृद्धि थायछे, एम उत्तरोत्तर, जाववृद्धिकरी अविरति देशविरत्यादिक गुणस्थान श्रेणीचढी घातीकर्मनो क्षयकरी कृतकृत्य केवलीथाय एनो सारी रीते विचार करी जुवो एटले सहज जणाई आवेछे ॥ ६ए॥ ७० ॥

अ० एवु युक्तिपूर्वक वचन सांजलीने पीडितकर्ण थयो थको परवादी बोल्यो —

नणु जय सो कयकिच्चो अगारसदोसविरहिउ देवो ॥
ता बुहतह्ना जावा जुज्जइ कम्मा कवलजोजी ॥ ७१ ॥

व्या० देव तो अढारदोपरहित छे, अने कृतकृत्य छे, ए सर्व मान्यछे. ने तमे पण जो एमज मानता होतो तेने कवलाहार करनारो केम कहोछो? कवलाहार अंगीकार कर्याथी क्षुधा तृषा पण अंगीकार करवा जोईशे। केम के, क्षुधा तृषाविना कवलाहार संजवे नही जो क्षुधा तृषाने पण अंगीकार करशो तो परमेश्वरने अढारदोषरहित केम कही शकशो? केम के, क्षुधा अने तृषा ए बे दोप तो कवलाहारना ग्रहणथी सिद्ध थायछे त्यारे शु केवली सोलदोपरहित छे, जो एम मानशो तो आगमवचननो अपमान थशे यत "क्षुत्पिपासा जरातंक, जन्मांतकजयस्मया ॥ न रागद्वेषमोहाश्च, यस्याप्त स प्रकीर्त्यते." इति दिगंबरग्रंथांतरगत उपासकाध्ययने क्षुधा, तृषा, जरा, क्षय, जन्म, यम, इहलोकादिजय, अहंकार, राग, द्वेप, मोह, चिंता, अरति, निद्रा, विस्मय, विषाद, स्वेद, तथा खेद, ए अढार दोष केवलीने नथी एम कह्युछे तेओमाना क्षुधा तथा तृषा ए बे दोष छता कृतकृत्यता केम संजवे? माटे केवलीने जो कवलाहारी कहो तो बे दोष अंगीकार करो ॥ ७१ ॥

अ० ए आशंकानो उत्तर कहे छेः--

तो सक्खावुत्तु जे छुहतण्हाइ जिणस्स किरदोसो ॥ जइ
तं दूसेज गुणं साहावियमप्पणो किं वि ॥ ७२ ॥
दूसइ अवावाहं इय जइ तुह सम्मओ तयं दोसो ॥
मणुयत्त णं वि दोसो ता सिद्धत्तस्स दूसणओ ॥ ७३ ॥

व्या० क्षुधा अने तृषा ए बे दोष अढार दोषमां गणीने, कृतकृत्य जे केवली तेनेविषे ते बे दोषनो ते जे अभाव कह्यो, ते वचन ताराज मतानुयायिमां कहेता शोभाप्रद छे, परतु पंडितोनी पर्षदामां शोभाने पामे नही, किंतु मूल्यविना ना कहेवाय. केमके, क्षुधा अने तृषा ए बन्ने दोषमां त्यारे गणी शकाय, के ज्यारे कोई स्वाभाविकआत्माना गुणने दूषण लागतु होय; तेम तो कांई थतु नथी, केमके, ए भाव वेदनीयकर्मना करेला छे; ते केवलज्ञानने दूषित करी न शके. केमके, केवलज्ञानने दूषण करनार ज्ञानावरणीय कर्म छे तेम केवलदर्शनने दूषित करनारुं दर्शनावरणीय कर्म छे; तेम सम्यक्चारित्रने दूषित करी शके नही केमके, सम्यक्चारित्रने दूषित करनारुं मोहनीयकर्म छे. तेमज दानादिक पांच लब्धिने पण दूषित करी शके नही, केमके, लब्धिओने दूषित करनारुं अंतराय कर्म छे ए कारण माटे क्षुधा अने तृषा ए बे दोष कहेवाय नही अहिं कोई आशंका करशे के जेम क्षुधा तथा तृषावमे छद्मस्थने ईर्या समिति श्रुताभ्यासादिकनो भंग दीठामां आवेछे, तेम केवलीने पण चारित्रज्ञानमां प्रतिबंधरूप शा सारू न थाय? एनो उत्तर आ छे· यद्यपि क्षुधा तथा तृषा ए बे बहिरिंद्रिय वृत्तिनी ग्लानि करवाने लीधे एकेंद्रिय ज्ञानादिकना विरोधी थायछे. तथापि अतींद्रिय ज्ञाननो घात करी शकता नथी, कोई एवी आशंका करे के, जीवनो अव्याबाध गुण छे. एटले निराकुलत्वरूप जे जीव, तेने दूषित करनारी क्षुधा तथा तृषा छे. केमके, ते आकुलता परिणामरूप छे. जे आकुलतानी क्षुधावमे निवृत्ति थायछे, तेक्षुधानी परिणामक छे. ने क्षुधा तेनो परिणाम छे, अने जे आकुलतानी तृषावडे निवृत्ति थायछे, ते तृषानो परिणामक छे. ने तृषा तेनो परिणाम छे. तेने एम कहेवुं के, केवलीनो सिद्धत्व गुण छे, तेने दूषित करनारुं मनुष्यपणुं पण दोषरूप केम न कहेवाय? इत्यादिक विचार करी पोतानी कल्पना मूकीने घातिकर्मना करेला अढार दोष जेवी रीते पूर्वाचार्यें कह्याछे, तेवी रीतेज मानवा

जोइयेछे, यत "अंतराया दानलाभ, वीर्यभोगोपभोगगा. ॥ हासोरत्यरती भीति, जुगुप्सा शोक एव च ॥ १ ॥ कामोमिथ्यात्वमज्ञानं, निद्रा चाविरतिस्तथा ॥ रागोद्वेषश्च नो दोषा, तेषामष्टादशाप्यमी ॥ २ ॥" ज्ञानगुणनो घात करनारुं अज्ञान, दर्शनगुणनो घात करनारी निद्रा, सम्यक्तगुणनो घात करनारुं मिथ्यात्व, चारित्रगुणनो घात करनारां हास्य, रति, अरति, भय शोक, दुगंछा, काम, अविरति, राग, तथा द्वेष, अने दानादि लब्धिरूपवीर्यगुणना घात करनारा दानांतराय, लाभांतराय, भोगांतराय, उपभोगांतराय, तथा वीर्यांतराय, ए अढारदोष घातिकर्मना कह्याछे, परतु केवलीने घातीकर्मोनो क्षय थई जायछे, माटे ते निर्दोष कहेवायछे तेम छतां क्षुधा अने तृषाने अढारदोषोमां जे गणेछे ते युक्तायुक्त विचार नकरतां केवल स्वमततुं पोषण करेछे, ॥ ७२ ॥ ७३ ॥

अह जइ जिणस्स खइअं सुक्ख दुक्खं विरुज्झए तेणं ॥
तो सामण्णाभावे विसेसजुत्ता कहं सत्ता ॥ ७४ ॥

व्या०– कोई आशंका करे के, जेम केवलीने क्षायिक ज्ञानादिक छे, तेम क्षायिक सुख पण छे, तिहां दुःखनो लेश पण नथी, तो क्षुधा तृषा केमलागेछे? ॥७४॥

तो वेयणिज्जकम्मं उदयप्पत्तं कहं हवे तस्स ॥ एय
सोपदेसउदउ समयम्मि विवाग भणणाउ ॥ ७५ ॥

व्या० – उपली आशंकानु उत्तर दियेछे के, केवलीने जो क्षायक सुख मानता होतो सिद्धांतनेविषे केवलीने वेदनीयकर्मनो उदय कह्योछे ते शासारु न मानवो! अर्थात् मानवो जोईशे जेम ज्ञानावरणीयकर्मनो उदय छतां क्षायिक ज्ञान थतु नथी, तेम वेदनीयकर्मनो उदय छतां क्षायिक सुख पण थतु नथी, कोई शंका करेके, केवलीने एवा वेदनीयकर्मनो उदय होयछे के, जेना प्रदेश आत्मप्रदेशनी साथे मलेछे, ते स्थिति प्रमाणे रहीने क्षीण थई जायछे. परतु केवलीने तेनी आकुलता थती नथी एनु उत्तर ए के, यद्यपि एवो प्रदेशोदय अमने पण मान्य छे, तो केवलीने क्षायिक सुख संभवे नही तेम छतां अभ्युच्चयताथी अमारे कहेवु जोयेछे के, केवलीने वेदनीयकर्मनो प्रदेशोदय छेज नही किंतु सिद्धांतोमां विपाकोदय कह्योछे ॥ ७५ ॥

आवस्सयणिज्जत्ती पयडिपसङ्गोदउव्वएसेणं ॥ ण
जइ ता सुहायाउ असुहपडिवक्खवयणेणं ॥ ७६ ॥

व्या०.– आवश्यक निर्युक्तिनेविषे प्रकृतिनो प्रशस्त उदय कह्यो छे, तथा दिगंबरना प्रवचनसारनामक ग्रंथमां पण " पुण्णफला अरिहंता " इत्यादिक वचनो कह्याछे, एवी रीते असुखना प्रतिपक्ष वचनथी केवलीने सुखनो विपाक छे. ॥७६॥

अ० कोई आशंका करे के, जे कारण माटे सुखविपाक छे, तेथीज दुःखविपाक नथी ? तेनुं समाधान करेछे. ॥ ७६ ॥

तत्तवसुत्तभणिआ एकारसहा परीसहा य जिणे ॥ तेह
वि छुहतह्नाइ, खइअस्स सुहस्स पडिकूल ॥ ७७ ॥

व्या०.– अमारा श्रीभगवतीसूत्रनेविषे केवलीने अग्यार परीसह कह्याछे. तद्यथा " एकविहबंधगस्सणं भंते सजोगि भवत्थ केवलिस्स कइ परीसहा पण्णत्ता ? गोयमा, एकारस परीसहा पण्णत्ता, णव पुणवेए तित्ते " तथा वेद्भने " एकादश जिने " एवीरीते श्रीतत्वार्थसूत्रमां अग्यार परीसह कह्याछे ; एणेकरी केवलीने क्षुधा तथातृषा प्राप्त थईछतां क्षायिक सुखनी हानि थती नथी एवु ठरेछे अहीं उक्त " एकादशजिने ' ए सूत्रनो अर्थ केटलाएक पोतानुं मत पोषण करवाना हेतुथी एवुं करेछे के " एकेनाधिकानदश " एटले एकअधिक दश न थाय; अर्थात् अग्यार परीसह नही ए अपव्याख्यान जाणवुं, केमके, एवो समास संभवे नही. वली केटलाएक सर्वार्थसिद्धिप्रमुख " नसंति " एवु बाहेरथी वाक्य लियेछे, तेतो जाणे पोतानुं उत्सूत्रभाषणज प्रगट करतो होयनी ! परतु तेओए आवो विचार करवो जोये के, परीसहनास्वामी चिंताना अधिकारनेविषे प्रसिद्ध छतां तेनो अभाव केम थशे ! जे धनरहित होय ते धननो स्वामी कहेवाय नही वली केटलाएकं आवीरीते व्याख्यान करेछे के, केवलीने वेदनीयकर्म होवाथी कारण कार्योपचारेकरीने अग्यार परीसह कह्याछे ए व्याख्यान पण नदीमां बूडता घासनो आश्रय लेवाजेवु छे, केमके, स्वामित्वचिंताए उपचार संभवे नही, जो उपचार मानिये तो छता मोहनीयकर्मना होवाथी उपशांत मोहगुणस्थानकनेविषे पण बावीस परीसह कह्या जोईशे, ए प्रकारे करी सूत्रना घणा अपव्याख्यानोनो त्याग करीने परमार्थनो विचार करवो जोये. ॥ ७७ ॥

अस्साय वेयणिज्जं छुहतह्नाईण कारणं जाण ॥ पज्ज
त्तिसतित्तउदय जलिअंतरजलणदित्ताणं ॥ ७८ ॥

व्या० – आहार पर्याप्तिनामकर्म तथा असाता वेदनीयकर्म ए बन्नेना उदय

जोइयेछे, यत "अंतराया दानलाभ, वीर्यभोगोपभोगगा ॥ हासोरत्यरती भीति, र्जुगुप्सा शोक एव च ॥ १ ॥ कामोमिथ्यात्वमज्ञानं, निद्रा चाविरतिस्तथा ॥ रागोद्वेषश्च नो दोषा, केषामष्टादशाप्यमी ॥ २ ॥" ज्ञानगुणनो घात करनारुं अज्ञान, दर्शनगुणनो घात करनारी निद्रा, सम्यक्तगुणनो घात करनारुं मिथ्यात्व, चारित्रगुणनो घात करनारां हास्य, रति, अरति, भय शोक, डुगछा, काम, अविरति, राग, तथा द्वेष, अने दानादि लब्धिरूपवीर्यगुणना घात करनारा दानातराय, लाभातराय, भोगातराय, उपभोगातराय, तथा वीर्यातराय, ए अढारदोष घातिकर्मना कह्याछे, परतु केवलीने घातीकर्मोनो क्षय थई जायछे, माटे ते निर्दोष कहेवायछे तेम छता क्षुधा अने तृषाने अढारदोषोमां जे गणेछे ते युक्तायुक्त विचार नकरतां केवल स्वमततुं पोषण करेछे, ॥ ७२ ॥ ७३ ॥

अह जइ जिणस्स खइअ सुक्खं डुक्ख विरुप्नए तेणं॥
तो सामस्साभावे विसेसजुत्ता कहं सत्ता ॥ ७४ ॥

व्या०- कोई आशंका करे के, जेम केवलीने क्षायिक ज्ञानादिक छे, तेम क्षायिक सुख पण छे, तिहा डु खनो लेश पण नथी, तो क्षुधा तृषा केमलागेछे ? ॥७४॥

तो वेयणिज्जकम्मं उदयप्पत्तं कहं हवे तस्स ॥ णय
सोपदेसउदउ समयम्मि विवाग भणणाउ ॥ ७५ ॥

व्या० - उपली आशकानुं उत्तर दियेछे के, केवलीने जो क्षायक सुख मानता होतो सिद्धातनेविषे केवलीने वेदनीयकर्मनो उदय कह्योछे ते शासारु न मानवो ! अर्थात् मानवो जोईशे जेम ज्ञानावरणीयकर्मनो उदय छता क्षायिक ज्ञान थतु नथी, तेम वेदनीयकर्मनो उदय छता क्षायिक सुख पण थतु नथी, कोई शंका करेके, केवलीने एवा वेदनीयकर्मनो उदय होयछे के, जेना प्रदेश आत्मप्रदेशनी साथे मलेछे, ते स्थिति प्रमाणे रहीने क्षीण थई जायछे परतु केवलीने तेनी आकुलता थती नथी एनु उत्तर ए के, यद्यपि एवो प्रदेशोदय अमने पण मान्य छे, तो केवलीने क्षायिक सुख संभवे नही तेम छता अभ्युच्चयताथी अमारे कहेवु जोयेछे के, केवलीने वेदनीयकर्मनो प्रदेशोदय छेज नही. किंतु सिद्धांतोमा विपाकोदय कह्योछे. ॥ ७५ ॥

आवस्सयणिज्जत्ती पयडिपसत्थोदउवएसेणं ॥ ण
जइ ता सुहायाउ असुहपडिवक्खवयणेणं ॥ ७६ ॥

व्या०.— आवश्यक निर्युक्तिनेविषे प्रकृतिनो प्रशस्त उदय कह्यो छे, तथा दिगंबरना प्रवचनसारनामक ग्रंथमां पण " पुराफला अरिहंता " इत्यादिक वचनो कह्यांछे, एवी रीते असुखना प्रतिपक्ष वचनथी केवलीने सुखनो विपाक छे. ॥७६॥

अ० कोई आशंका करे के, जे कारण मांटे सुखविपाक छे, तेथीज दुःखविपाक नथी ? तेनुं समाधान करेछे. ॥ ७६ ॥

तत्तह्सुत्तनणिआ एकारसहा परीसहा य जिणे ॥ तेह
वि नुहतल्हाइ खइअस्स सुहस्स पडिकूलं ॥ ७७ ॥

व्या०.— अमारा श्रीनगवतीसूत्रनेविषे केवलीने अग्यार परीसह कह्यांछे तद्यथा " एकविहबंधगस्सणं नंते सजोगि नवब केवलिस्स कइ परीसहा पसत्ता ? गोयमा, एकारस परीसहा पसत्ता, एव पुणवेण तित्ते ' तथा वळी " एकादश जिने " एवीरीते श्रीतत्वार्थसूत्रमां अग्यार परीसह कह्यांछे ; एणेकरी केवलीने क्षुधा तथातृषा प्राप्त थईछतां क्षायिक सुखनी हानि थती नथी एवु ठरेछे अहीं उक्त " एकादशजिने ' ए सूत्रनो अर्थ केटलाएक पोतानुं मत पोषण करवाना हेतुथी एवु करेछे के " एकेनाधिकानदश " एटले एकअधिक दश न थाय, अर्थात् अग्यार परीसह नही. ए अपव्याख्यान जाणवुं, केमके, एवो समास संनवे नही वळी केटलाएक सर्वार्थसिद्धिप्रमुख " नसंति ' एवु बाहेरथी वाक्य लियेछे, तेतो जाणे पोतानुं उत्सूत्रनापणज प्रगट करतो होयनी ! परतु तेओए आवो विचार करवो जोये के, परीसहनास्वामी चिताना अधिकारनेविषे प्रसिद्ध छतां तेनो अनाव केम थशे ! जे धनरहित होय ते धननो स्वामी कहेवाय नही वळी केटलाएक आवीरीते व्याख्यान करेछे के, केवलीने वेदनीयकर्म होवाथी कारण कार्योपचारेकरीने अग्यार परीसह कह्यांछे ए व्याख्यान पण नदीमां बूडता घासनो आश्रय लेवाजेवु छे, केमके, स्वामित्वचिताए उपचार संनवे नही, जो उपचार मानिये तो छता मोहनीयकर्मना होवाथी उपशात मोहगुणस्थानकनेविषे पण बावीस परीसह कह्या जोईशे, ए प्रकारे करी सूत्रना घणा अपव्याख्यानोनो त्याग करीने परमार्थनो विचार करवो जोये. ॥ ७७ ॥

अस्साय वेयणिज्जं नुहतल्हाईण कारणं जाण ॥ पज्ज
त्तिसतिजुदय जलिअंतरजलणदित्ताणं ॥ ७८ ॥

व्या०.— आहार पर्याप्तिनामकर्म तथा असाता वेदनीयकर्म ए बन्नेना उदय

थी प्रज्वलित थएलो जे जठराग्नि, तेणे करीने जीवने क्षुधा तथा तृषा लागेछे, ते बधां कारण केवलीनेविषे छतां छे तेने क्षुधा तथा तृषा केम न लागे? तेकहो ॥७८॥

अ० वादी आशंका करेछे:—

णणु छुह तह्णा तह्णा मोहुदउ पत्तियारिरंसव ॥
जमुइ अणा तह्णा असहुक्क तयम्हंति ॥ ७९ ॥

व्या० — क्षुधा तथा तृषा ए मैथुननी इच्छानी पठे तृष्णारूप होवाथी ते मोहनीयकर्मथकी उत्पन्न थायछे माटे केवलीनेविषे ए संभवे नही केमके, केवली ए तो मोहनीयकर्मनो प्रथमज नाश कर्योछे एनो उत्तर आवीरीते छे — तृष्णा अने दुःखमा घणी भिन्नता छे, तृष्णानेज दुःख कहेवाय नही. परंतु संसारीने तृष्णाथकी दुःखनी उत्पत्ति थायछे ॥ ७९ ॥

अ० तृष्णा उत्पन्न थवानो प्रकार कहेछे —

मोहाभिणिवेसेणं चउहि वि उमकोठयाइ हेऊहि ॥
पगरिस पत्तातह्णा जायइ आहारसण्णत्ति ॥ ८० ॥

व्या०— मोहनीय कर्म अभिनिवेशे चार कारणथी आहारसंज्ञा उत्पन्न थायछे ते उत्कर्ष पाम्याने लीधे तृष्णा कहेवायछे ते चार प्रकार श्रीठाणांगमा कह्याछे, यत "चउहि ठाणेहि आहारसण्णा समुप्पज्जइ, उमकोठयाए, छुहावेयणिज्जस्सण कम्मस्स उदएणं, मतीए, तदट्ठोवउगेण, ' एनो अर्थ — चार कारणेकरी आहारसंज्ञा उत्पन्न थायछे. कोठोखाली थयाथी, क्षुधावेदनीयकर्मना उदयथी, आहारादिकनी कथानुं श्रवण कर्याथी, तथा वारंवार आहारनो उपयोग कर्याथी आहारसंज्ञा उत्पन्न थायछे अर्थात् ए चार कारण मल्याथी मोहनीय कर्मना बले आहारसंज्ञा उत्पन्न थायछे अतएव गोमठ सारटीकाप्रमुखनेविषे पण आहारसंज्ञा आहाराभिलाषरूप कहीछे. ते तृष्णारूप होवाथी यतिने ए विना अशनपानादिकनेविषे प्रवृत्ति छे ते कहेछे — ॥ ८० ॥

असणाइम्मि पवित्ती एत्तोच्चिय त विणा सुसाहूण ॥ एज
हुत्त विहविहाणो अइआरो हंदि णिद्दिठो ॥ ८१ ॥

व्या० ए हेतुथीज यतिने पण आहारसंज्ञाविना अशनादिकनेविषे प्रवृत्तिछे केम के, विधि पालतां यतिने अतिचार कह्या नथी, अने आहारसंज्ञा तो अति

चारमां छे माटे जे एम कहेछे के आहारसंज्ञाविना यतीए आहार करवो नही तेने आचारमां पण अतिचार कह्या छे ॥ ८१ ॥

एयं विणा एन्नुत्ती मेहुणसण्णं विणा जह अबंन्नं ॥ ण
य वयणं पि परेसि एएण पराकयं णेअं ॥ ८२ ॥

व्या० जेम मैथुनसंज्ञाविना अब्रह्मचर्य न थाय, तेम आहारसंज्ञाविना केव लीने भुक्ति थाय नही एवा परवादीना वचननुं आवीरीते निराकरण कर्युं छे.— जेम यतिए आहारसंज्ञाविना आहार करवो उचित छे, तेम केवलीनेविषे पण मानी लेवुं जोईये. ॥ ८२ ॥

एहु साहु चिय पवित्ती णेवय सुपसत्थझाणहेउत्ति ॥ आ
हारोत्र अबंन्नं असह तह होइ णिद्दोसं ॥ ८३ ॥

व्या० आहार अवर्जनीय होवाथी उचित छे, तथा छद्मस्थ यतीने प्रशस्त ध्याननुं कारण छे. माटे आहारसंज्ञाविना केवलीने आहार लेवो संभवे छे. अने मैथुन वर्जनीय होवाथी अनुचित छे, तथा दुर्ध्याननुं कारण छे माटे मैथुना दिक अनुचितप्रवृत्ति अप्रशस्त रागद्वेषविना केवलीने थाय नही एवा अर्थनो विचार करीने तेनुं ग्रहण करवु जोये. ॥ ८३ ॥

आहारचिंतणुब्भव मेयं आहारसण्णमासज्ज ॥
वुड्ढइ अट्टझाणं इग लोन्नेण मूढाणं ॥ ८४ ॥

व्या० आहारना चिंतनथकी जे आहारसंज्ञा उत्पन्न थायछे, तेनेविषे मोहित थयला मूढजीवने जो ते आहाररूपइष्टवस्तुनी प्राप्ति न थाय तो ते वस्तु क्यारे प्राप्त थशे एवा चिंतनरूप आर्त्तध्यान करेछे. परन्तु ते अभिलाषा मटती नथी ८४

तत्तो माणसदुक्खं लहइ जिउ कंदणाइ कुव्वंतो ॥
लहुं वि इट्ठविसयं रईइ चिंतेइ अवियोगं ॥ ८५ ॥

व्या० त्यार पछी पूर्वोक्त रीतिए जो तेने आहारादिक इष्टवस्तुनी प्राप्ति न थाय तो ते जीव क्षुद्वेदनीयना उदयथी प्रज्वलित थएला जठरानलना योगे श रीरदुःख पामेछे अने पछी क्रंदन रोदनादिक करवाथी अरतिमोहनीयकर्मना उदयने लीधे गाढ चित्तोपतापरूप मानसदुःख पामेछे. कदाच पुण्यप्रकृतिना परिपाके इष्टवस्तुनी प्राप्ति थाय तो पण रतिमोहनीयकर्मना उदयथी ते वस्तु

ना अवियोगनी इच्छा कर्याकरे, तेणे करी ते वस्तु उपर गाढानुरागेकरी आर्त्त ध्याननां वश थयो थको जीव दुःखज पामे छे, माटे मोहमूढ जे जीव छे तेने परमार्थथकी कदी पण सुख नथी ॥ ८५ ॥

तो मोहणिज्जखयत्ते तप्पवडुक्खाणुवंधि विलएणं ॥
जहई सुहं सवह्न चएणो पुण बुह चइत्ते ॥ ८६ ॥

व्या० – मोहनीयकर्मना क्षयथी जीवने आहार करवानी रति तथा अरति उत्पन्न थायछे, ने मोहनीयकर्मना उदयथी जीवने मानस दुःख उत्पन्न थायछे ते दुःख केवलीने मटी जायछे, पण असातावेदनीयकर्मना उदयथी केवलीने जे क्षुधा तृषा लागेछे, तेनो ते त्याग करी शके नही ॥ ८६ ॥

घाईव वेयणीअं इय जइ मोहं विणा ण डुक्कयरं ॥
पयडं पडिरूवाउ ता अप्पाउ विपयडीउ ॥ ८७ ॥

व्या० – पूर्वपक्षी कहेछे के, वेदनीयकर्म घाती कर्मना जेवुंछे, माटे, मोहनीय कर्मविना ते दुःखदायक थाय नही उक्तंच " घादीववेदणीय, मोहस्सुदएण घाददे जीव," इति कर्मकांडे तेनु समाधान आमछे – जो तमारा कह्या प्रमाणे होय तो असातावेदनीयनी पठे केवलीने बीजी प्रकृतिओ पण मोहनीय कर्मवि ना पोताना कार्यनी करनारी होवी जोये अने तमे वेदनीयकर्मनीसाथे घातीकर्मनी तुल्यना केवीरीते करोछो ? घातीआना रसना जेवो तेनो रस होयछे एम सरखा पणुं करोछो, के स्वकार्य करवानेविषे घातीआनी अपेक्षापणुं कल्पोछो, के अ थवा दोषनुं हेतुपणुं कहोछो, ? जो कहेशोके घातीआना रसना जेवो रस होवो जोये तो अघातीकर्म प्रकृति घातीना जेवी होवी जोये केमके, ज्यारे अघातीनी प्रकृति सर्व घातिनी प्रकृतिनी साथे वेईये त्यारे ते सर्व घातिनीप्रकृतिनो विपाक देखाडे, तथा ज्यारे देश घातिनीनो विपाक देखाडे, अने एकली वेईये त्यारे मा त्र ते एकलो पोतानोज विपाक देखाडेछे ; माटे पक्ष संभवतो नथी जो कहेशो के, स्वकार्य करवानेविषे घातीआनी अपेक्षा होवी जोयेछे, तो नामकर्म पण पू र्वे मोहनीयकर्मनी अपेक्षा करतु हतुं जेम केवलीने मोहविना आपणु कार्य करेछे, तेम वेदनीय कर्म पण मोहनीयकर्मनी अपेक्षाविना कार्य करेछे माटे बीजो पक्ष पण संभवे नही जो कहेशो के वेदनीयकर्मथी दोष लागेछे, तो ते

पण मनाय नही, केमके, क्षुधा अने तृषानेविषे दोषपणानुं पूर्वेज खंडन कर्युं छे, एवीरीते स्वबुद्धिएकरी सारी पठे विचार करीने जुवो ॥ ७४ ॥

अणुकूलं पडिकूलं च वेयणं लक्कणं सुहदुहाणं ॥ ण
हु एसो एगंतो अपमत्तजईसु तयभावा ॥ ७७ ॥

व्या०: औदयिक सुख छता अनुकूलत्व वेदन थायछे, ते रागरूप छे अने औदयिक दुःख छता प्रतिकूलत्व वेदन थायछे, ते द्वेषरूप छे, माटे केवलीने औदयिक सुख तथा दुःख ए बन्ने होता नथी, किंतु क्षायिक सुखज होयछे. एम केटलाएक कहेछे, ते योग्य नथी. केम के, जेम अप्रमत्तयतीने औदयिक सुख तथा दुःख ए बन्ने होयछे. पण राग तथा द्वेष ए बे होता नथी, तेम केवलीने विषे पण जाणी लेवु एमा एकांतपणुं न मानवुं ॥ ७७ ॥

अध्रुवाण सुहदुहाणं भोगो भोगेण कम्मबंधो य ॥
णहु एसो एगंतो अपमत्तजईसु तयभावा ॥ ७ए ॥

व्या०. सुख तथा दुःख ए बन्ने पदार्थ शाश्वत नथी, किंतु अशाश्वत छे. ते ओनो एवो नियम छे के, अवश्य भोगने दियेछे. कह्युछे के, "नाभुक्तं क्षीयते कर्म" इत्यादि अने भोगथकी कर्मबंध थायछे. ए कारण माटे केवलीनेविषे ते संभवे नही केमके, सुख तथा दुःख ए बन्ने पदार्थो अध्रुव छे. एम केटलाएक कहेछे, ते पण योग्य नथी केमके, सुख तथा दुःख अध्रुव छतां अप्रमत्तयतीने होयछे, तो पण तेनाथी कर्मबंध थतो नथी, तेम केवलीविषे पण जाणवुं जोइये अही पण एकात नथी ॥ ७ए ॥

अन्नाणजं तु दुक्क नाणावरणक्कएण खयमेइ ॥
तत्तो सुहमकलंकिय केवलनाणा पुहभूयं ॥ ए० ॥

व्या०— ज्यारे हरेक पदार्थनो सूक्ष्म अर्थ जाण्यामां आवतो नथी, त्यारे जीवने महादुःख उत्पन्न थायछे. केमके, यथार्थवस्तु जाणवानी इच्छा प्रमाणे जाण्यामा न आवे तो तेथी जीवने आकूलता थायछे तेज दुःख जाणवुं. ए दुःख वस्तुनो सूक्ष्म अर्थ न जाण्याथकी थायछे, माटे अज्ञानरूपज छे. अज्ञान ज्ञानावरणीयकर्मना क्षयथी नाश थाय छे, ते दुःखनोज नाश जाणवो केवलीने ज्ञानावरणीयकर्मनो क्षय थई जवाथी दुःखरूप अज्ञाननो लेश पण

रह्यो नथी अने केवल ज्ञाननो उदय थयोछे ते सर्व सुखरूप छे ते सुख केवलज्ञानथकी पृथक्नूत नथी केमके, केवल ज्ञान जे छे ते स्वनावना प्रतिघातरहित होवाथी अनाकूलतारूप छे, त्या आकुलता छेज नही, ज्यारे आकुलता नथी त्यारे तज्जन्य जे दुःख ते क्याथी होय ! अने दुःख नथी त्यारे परम सुखज छे एवी रीते "ज केवलित्तिनाणं, त सोक्क परण सचसोचेव ॥ खेदो तस्स नणीदो, जम्हाघादीखयं जादा" ए प्रवचनसारना वचन असनवित छे तोपण आटलो विशेष छे -- केवल ज्ञान क्षायिकसुखप्रक्रिया सनवे नही, केमके, क्षायिक सुख तो वेदनीयकर्मनाक्षयथकीज उत्पन्न थायछे ॥ ए० ॥

णय सुक्कं डुक्क वा देहगयं इंदिउप्नवं सव्व ॥ अन्नाण मोह कज्जे पमाणसिद्धेउ सकोए ॥ ए१ ॥

व्या० दिगंबर एम कहेछे —के शरीरगत सुख दुःख सर्वइंद्रियथकी उत्पन्न थाय छे केम के, छद्मस्थने जे सुख तथा दुःख उत्पन्न थायछे ते एवी रीतेज थायछे प्रथम परोक्षज्ञानना कारणथी इंद्रियोनी उपर मैत्री प्रवर्त्ते छे, इंद्रियोनी मैत्री थकी विषयोनेविषे तृष्णा उत्पन्न थायछे जेम अग्निथी तापेलो लोहनो गोलो होयछे, तेम विषयोनी तृष्णाएकरी इंद्रियो तप्त होयछे ते महाव्याधिस्थानीय छे अने तृष्णा टालवाने अर्थे विषयनुं सेवन थायछे, ते व्याधीना औषधस्थानीय छे ते यद्यपि व्यवहार दृष्टिए तो सुख कहेवायछे, तथापि परमार्थताए दुःखरूप छे. उक्तंच "पप्पाइठे विसए, फासेहिं समास देस हावेण, परिणममाणोअप्पा, सयमेव सुह णयवदिरेहोत्ति" इति प्रवचनसारे. ए कारण माटे देहगत सुख ऐंद्रियक छे. तेमज दुःखपण ऐंद्रियक छे एवा ऐंद्रियक विषयोना द्वेषथी दुःख ऊपजेछे. माटे देहगत सुख तथा दुःख केवलीनेविषे नथी तेथीज केवली अतींद्रिय थया छे उक्तंच "सोक्कंवा पुण डुक्कं, केवलनाणिस्स नत्थि देहगय, जम्हा अदिदिअत्त, जाव तम्हा डुत्तंणेयति" इति प्रवचनसारे एनुं समाधान करेछे —देहगत सर्व सुख तथा दुःख इंद्रियाधीन नथी केम के, इंद्रियोनी पराधीनताथी जे अज्ञान तथा मोहथकी सुख तथा दुःख उत्पन्न थायछे, तेओनेज इंद्रियोनी अपेक्षाछे, परतु अप्रमत्तयत्तीने जे मानस सुख थायछे, तथा सातादिककर्मना उदयथी क्षुधादिक दोष उत्पन्न थायछे, तेमा इंद्रियोनी अपेक्षानो नियम नथी, जो एम न मानिये ने इंद्रियाधीनज सुख तथा दुःख मानीये तो रतिमोहनीयकर्म तथा अरति

मोहनीयकर्मनुं नामांतरज वेदनीयकर्मना उदयथी असाता वेदनीय कर्म थाय छे एम ठरशे त्यारे वेदनीयकर्म जुदु कहेवाशे नही जो वेदनीयकर्म मोहनीयसाथे मानीये तो सातज कर्म ठरशे आठ कर्मनो संभव थशे नही. एम करता सर्व जैन प्रकृतिनो उच्छेद थशे वली देहगत सुख जो केवलीने न मानीये तो तीर्थंकरनाम कर्मनो विपाक केम संभवे! जो एम कहिये के तीर्थंकरनामकर्म जीव विपाकी छे, माटे तेथी जीवगत सुखतो उपजेछे. परंतु देहगत क्षुधादिक दुःख संभवे नही. तो जेम सुखने पण देहनी अपेक्षा छे, तेम दुःखने पण देहनी अपेक्षा छे, माटे देहगतज मानवा योग्यछे, इत्यादिक सूक्ष्मविचार करी मध्यस्थबुद्धिये न्याय करो. ॥९१॥

एत्तोच्चिअ बहु दुःख, खएण तेसिं छुहाइवेयणियं ॥
णिंबरस लवुब पए अप्पंति भणंति समय विऊ ॥ ९२ ॥

व्या० केवलीने अज्ञानादि जघन्य घणां दुःख मटीगयां छे, मात्र एक क्षुधावेदनीय रह्यु छे, ते पण घातीकर्मनी साथे मलेला जेवो पोतानो विपाक देखाडे छे केम के, केवलीने पुण्यप्रकृतिनो विपाक प्रबल छे. यतः "अस्सायमाइआओ, जाविअ असुहा हवति पयडीउ, णिबुरस णिबुवपणु ण हुंति ता असुह यातस्स." ए आवश्यकगाथामां तीर्थंकरने असाता प्रकृति दुःखदायिनी थती नथी. जेम दूधना घडामा निंबना रसनो बिंदु नाख्याथी कटुता थाय नही, एम श्रीभद्रबाहु स्वामीए कह्यु छे, जेम तेने प्रबल पुण्यपराभव करेछे. परतु तेथी क्षुधादिक उपजे नही एम न जाणवु, एवो भाव जणायछे. पछी विशेषार्थ तो बहुश्रुत जाणे ॥९२॥

णय तं कवलाजोग्गं वेयणियं अगणिमंदयाभावा ॥
णाय दद्धरज्जुकप्पं वेअणिअं हंदि सुअसिद्धं ॥ ९३ ॥

व्या०.– केवलीनुं वेदनीयकर्म कवलाहार योग्य थाय नही एम न कहेवुं. केमके, केवलीने अग्निमंदपणुं नथी आहारपर्याप्तनामकर्मनो उदय अने वेदनीयकर्मनो उदय होवाने लीधे उदराग्नि प्रज्वलित थायछे. ए बन्ने कारणो होवाथी केवलीने वेदनीय कर्म कवलाहारयोग्य थायछे जो कोई कहेशे के, वेदनीय कर्म दोरडीना जेवुं छे, तेथी केवलीने व्याबाध करीशके नही. तेने आवो जवाब देवो के, ए वचन प्रघोषनुं छे, शास्त्रनुं नथी. केमके, श्रीसुयगडांगनी टीकामा आम कह्युंछे के, "यद्यपि दग्धरज्जुस्थानकत्वमुच्यते वेदनीयस्य तदप्यना

गमिकमयुक्तिसंगतं वागमेहत्यंतोदय' सातंस्य केवलिन्यभिधीयते. शुक्तिरपि घातिकर्मक्षयादज्ञानादयस्तस्या अनूवन् वेदनीयोज्ञवाया क्षुध' किमायात येनासौ न ज्ञवति न तपोछायातपयोरिव सहानवस्थानलक्षणो विरोधो नापिजावाजावयोरिव परस्परपरिहारेण लक्षणकश्चिद्विरोधोस्तीति सातासातयोश्चांतर्मुहूर्त्तपरिवर्त्तमानतया यथा सातोदय एवमसातोदयोपीति अनंतवीर्यत्वं सत्यपि शरीरबलापचयकृद्वेदनीयोज्ञवा पीडा च जवत्येव नचाहारग्रहणे किंचित्क्षीयते. केवल महोपुरुषिकामात्रमेवेति पंचाशीतिर्जरद्वस्त्रप्राया शेयासयोगिनि "

एवुं जे गुणस्थानकक्रमारोहमा कह्युछे, ते तो थोडी स्थितिनी अपेक्षाए जाणवुं, पण रसनी अपेक्षाए न जाणवुं केमके, सत्तानी प्रकृति तो एवी कहीछे, पण उदयनी प्रकृति एवी कही नथी उलटो तीर्थंकरनामप्रमुखनो प्रबल उदयज कह्योछे. एम जाणीने "अतएव दग्धरज्जुकल्पेन जवोपग्राहिकल्पेनापि सता केवलिनोपि न मुक्तिमासादयेयु. " ए आवश्यकबृहद्वृत्तिनुं वचन छे, ते जोईने पण व्यामोह करवो नही तेटला माटेज इहां पण स्थितिनी अपेक्षाएज केवलीने कर्म दोरडीना जेवा कह्यांछे. "अतएव जवोपग्राहित्वात्पग्राहित्वविशेषण" कह्यांछे. एवुं अमने प्रतिजासेछे वली विशेष गीतार्थनेविषे जेम पूर्वापरविरोध न थाय, तेम विचारवुं केटला एक प्रमेयकमलमार्त्तंडना अभिप्रायने अनुसरीने आवीरीते कहेछे के, अपूर्वकरणगुणठाणाए पापप्रकृतिनो रस कह्योछे, माटे केवलीने तथाविध सातोदय थाय नही मोहसापेक्षप्रकृति थाय तेनो मोहना घातथी अवश्य घात थायछे अन्यथा पराघातनामकर्मना उदयथी केवली परहननादिक केम न करे ! ए बोलवुं पण कुराग्रहनुं जाणवुं, केमके, जेम रसनो घात थायछे, तेम स्थितिनो पण घात थायछे माटे जो रस ओछो थतो होय तो स्थिति पण ओछी थवी जोये जेम बध्यमानकर्मनी स्थिति घटी जायछे तेम बध्यमान कर्मनो रस पण घटी जायछे, एज समाधानछे तथा पराघातनामकर्मनुं फल केवलीने थायजछे, अने परहनन तो मोहविना थाय नही केटलाएक एम कहेछे के वेदनीय कर्म केवलीनेविषे हतवीर्य छे, माटे तेनेविषे क्षुधादिक परीसह उपचाररूप छे एम जे केवलीनेविषे कहेछे तेणे श्वेतांबरनी प्रक्रिया जाणी नथी, एम जाणवुं केटलाएक कहेछे के, केवलीनेविषे उदीरणाविना प्रचुर पुजल आवता नथी, माटे असातावेदनीयोदय बली दोरडीना जेवोज छे. एबोलवुं पण अविचाररूप छे केमके, एवीरीते तो सातावेदनीयोदय पण मंद होवो जोये. इत्यादिक

मतनो विचार करतां वास्तविक अर्थ सहज देखाई आवशे. माटे सूक्ष्म दृष्टिवडे ते अर्थनुं शोधन करो ॥ ए३ ॥

णय केवलनाणाई बुहाईपडिबंधगं जिणंदस्स ॥
दाहस्सिव मंताई इय जुत्तं तंतजुत्तीए ॥ ए४ ॥

व्या०:– जेम दाहना प्रतिबंधक मंत्रादिक छे, तेम क्षुधादिकनुं प्रतिबंधक केवलज्ञान छे. ए वचन पण शास्त्रानुसार नथी. केमके, जेम हाथनेविषे मंत्रेलो अग्नि राख्यो छतां हाथ बलतो नथी एवुं प्रत्यक्ष दीगमां आवेछे, तेथीज मन्त्रादिक जे छे ते दाहना प्रतिबंधक छे, एवी कल्पना करायछे, तेम जो केवलीनेविषे वेदनीयादिक कर्मोदयरूप कारण छतां क्षुधादिक नजय उत्पन्न थतां नथी एम जो सम्मतशास्त्रमां कह्यु होय तो एवी कल्पना थई शके, तेविना बोलवु व्यर्थ छे; माटे शास्त्रनी युक्तिए जिमपूर्वे कह्यु छे तेम आदरवुं योग्य छे. ॥ ए४ ॥

खिज्जइ बलं बुहाए णय तं जुज्जइ अणंतविरिआणं ॥
इय नुत्तुं पिण सुत्तुं बलविरियाणं जउ नेर्न ॥ ए५ ॥

व्या०.– केवलीने जो नूख लागती होय तो बलनी हाणी थाय. ते तो तेनेविषे संनवे नही केमके, वीर्यांतरायकर्मना क्षयने लीधे केवली अनंतवीर्यवत्त छे. ए वचन पण अयोग्य छे. केमके, बल अने वीर्यमां नेद छे. शरीरनो जे पराक्रम ते बल कहेवायछे, अने अंतरग जे शक्तिविशेष ते वीर्य कहेवायछे. तेम छतां क्षुधाएकरी शरीरनुं बल घटेछे, एविषे अमे ना कहेता नथी ए योगप्रत्यय छे; योग जे छे ते शरीरनामकर्मपरिणतिविशेषरूप छे अने नामकर्म तो नगवंतनेविषे क्षीण थयुं नथी. ॥ ए५ ॥ अ० पूर्वपक्षी आशका करेछे.–

बंधो परपरिणामा सो पुण नाणा ण वीयमोहाणं ॥ जो
गकया पिहु किरिया तो तेसिं होइ णिबीआ ॥ ए६ ॥

व्या०.– ग्रहण तथा मोचनादिक परपरिणामथी जीवने कर्मबंध थायछे ते परिणाम वीतरागने ज्ञानना प्रतापे थाय नही उक्तंच " गेह्णदि णेव ण मुंचदि, ण पर परिणमदि केवली नगव; पेछदि समतदोसो, जाणदि सव्वं निरवसेसं " इति प्रवचनसारे केवलीने तो योगनी क्रिया पण नथी, त्यारे नोजननी शी कथा अर्थात् केवलीनेविषे नोजन पण संनवे नही जो नोजनक्रिया केवलीनेविषे मा

निये तो तेथी योगक्रिया सिद्ध थशे ते तो केवलीनेविषे संनवे नही. जुवो के, स्थाननिषद्या, विहार, तथा धर्मोपदेशादिकक्रिया पण केवलीने थती नथी, त्यारे नोजनक्रिया ते केम थाय! जो कहेशो के, स्थाननिषद्या, विहार, तथा धर्मोपदेशादिकक्रिया केवलीने प्रत्यक्ष विद्यमान उता ना केम कहेवाय? तो ते क्रिया यद्यपि ठे, तथापि प्रयत्नपूर्वक नथी. केमके, प्रयत्न रागद्वेष विना थतु न थी. तेतो केवलीनेविषे नथी, माटे ए क्रिया स्वनावसिद्ध ठे जेम आकाशनेविषे वादला समयविशेषे स्वनावेज संचार करेठे, रहेठे, गर्जना करेठे, तथा वर्षा करेठे तेम केवलीने पण स्थाननिषद्या, विहार तथा धर्मोपदेशादिक स्वनावेज थायठे उक्तंच "ठाणणिसेक्क विहारो, धम्मुवदेसो अणियदिणा तेसिं, अरिहंताण का ले, मायाचारोव्व इत्तीण" इति प्रवचनसारे. अतएव केवलीने जे औदयिकी क्रि या ठे, तेनेविषे मोह नही होवाने लीधे परद्व्य परिणामना विरहथी क्षायिकीज जाणवी. यत "पुस्सफला अरिहता, तेसिं किरिया पुणोहि औदयिगी; मोहादिहे विरहिया, तम्हा साखाइ गतिमदत्ति" ॥ ए६ ॥

अ० एवी पूर्वपक्षीनी आशंकानु उत्तर आपेठे –

जोगं विणावि किरिआ उवज्जइ कह ण तस्सोवि ॥
तुल्लं किरिवेचित्तं तह तुल्ल मवुद्धिपुवत्त ॥ ए७ ॥

व्या० – केवलीनेविषे स्थाननिषद्यादिक्रिया जो स्वनावेज थती होय तो प्रय त्न निरर्थक थाय एम तो काइ दीठामा आवतु नथी प्रयत्न सार्थकज होयठे. केमके, प्रयत्नविना चेष्टा थतीज नथी माटे केवलीनेविषे प्रयत्ननो संनव थायठे, मात्र स्वानाविकतानोज उपयोग करवो नही जो कहेशो के, केवलीनेविषे प्रयत्न जन्य चेष्टा नथी किंतु तेथी विलक्षण ठे अर्थात् केवलीनी चेष्टा प्रयत्नविनाज थायठे तो जेम चेष्टा विलक्षण ठे, तेमज प्रयत्न पण शासारू विलक्षण न मानि ये? अने जेम विलक्षण चेष्टा मोहविना थायठे, तेम विलक्षण प्रयत्न पण मोह विना थवुं जोये जो कहेशो के, केवलीनी चेष्टा मन पूर्वक नथी, तो ते प्रमाणे प्रयत्न पण मन.पूर्वक नथी एम शासारू न मानो एवीरीते सर्व ठेकाणे सरखुं स माधान जाणी लेवु ॥ ए७ ॥

एवं सहावचाणी कह जुत्ता जेणि तेसि वयजोगो ॥
हेऊ दव सुअस्सा वज्जणं कम्मखवणाय ॥ ए८ ॥

व्या०·–पूर्वे कहेला हेतुए करीज दिगंबरो कहेछे के, केवलीने राग नथी होतो तेथी तेनेविषे वचनव्यापार संभवे नही. तेम छतां जे वचनव्यापार थायछे ते स्वभावेंज मस्तकमांथी ध्वनि नीकळे छे एम जाणवो, पण अक्षररूप वाणी संभवे नही. ए शंका पण अयुक्त छे. केमके, केवलीने केवलस्थनी पूर्वे जेवीरीते वचन योग हतो, तेमज केवलज्ञान थया पछी पण जाणवो अने केवलीने रागविना पण क्रियानु सामर्थ्य छतां अक्षररूप वाणी केम न संभवे ? कोई आशंका करेके, केवली कृतकृत्य छे त्यारे ते उपदेश शासारू करेछे ? तेनुं समाधान ए के तीर्थंकरनामकर्मनो विपाक एवीरीतेज भोगवायछे तेथीज केवली उपदेश करेछे. ए केवलीनो स्वभावज छे जो कहेशो के, केवली पदेकरी एकांते कृतकृत्यछे ? तो तेम पण न समजवु. यत णेगंतेण कयत्थो, जेणे दिन्नं जिणंदणामंसे, तदवंझ फलं तस्स य खवणो वाउ अमवेजउ, इति विशेषावश्यके जो कहेशो के, परोपकारनी इछाविना उपदेश देवो संभवे नही, अने इछा तेज राग कहेवायछे अने रागतो वीतरागनेविषे संभवे नही. एवो व्यामोह पण न करवो. केमके एवी इछा ते कृपा कहेवाय छे, पण तेने राग न समजवु. ॥ ९८ ॥

णय वयणपयत्तेणं खेअस्सोदीरणं जिणंदस्स ॥ इह
रा सुहस्स पावइ तं णय वा अस्सुपयमीणं ॥ ९९ ॥

व्या०ः– जो कहेशो के, वचन बोलवाना प्रयत्नेकरी जीवने खेद थयानी उदीरणा थायछे. तो ते संभवे नही केमके, मनुष्यना आवखामा साताअसाता वेदनीयकर्मनी उदीरणा प्रमादपरवशेकरीनेज होयछे, प्रमादविना बीजां कारणो छतां उदीरणा थाय नही जो एम नकहिये अने बीजा कारणोथी उदीरणा थाय छे एम कहिये ; तो काययोगनेविषे सातावेदनीयनी उदीरणा, पण तेने केम थाय ? केमके, उदीरणानुं तो आवु लक्षण कह्युछे.– जे स्थितिना दलिक, उदयावलिकाथी बाहेर वर्त्तेछे, तेने कषायसहित योगनामना वीर्यकरी आकर्षण करीने ते उदयावलिकानेविषे जे प्रक्षेपन करवुं, ते उदीरणा कहेवायछे. ॥ ९९ ॥

णय तं विरिअविरहियं जायइ अपवत्तणव्व करणंति ॥
केवलसहावपरकं सुगयस्स मयमणुमयं जाण ॥ १०० ॥

व्या०ः– जो कहेशो के ते उदीरणा वीर्यविना थायछे, तो ते संभवे नही केमके, उदीरणा जेछे ते अपवर्त्तनानी परीकरण विशेषछे. एटले स्थानांतर करावबा

नुं कारण छे, अने कारण जेछे-ते प्रयत्नरूप छे, एम नमानतां जो केवल स्वजाव वाद मानिये तो बोद्धनुं मत अनुमत थाय, माटे प्रयत्न पण अंगीकार करवुजोये.

खेउं एाईरिज्जइ केवलजोगेहिं तो विणु पमायं ॥ उद्ग्र
दयहेउपन्नवो दीसइ पुण सो वि तत्तुल्लो ॥ १०१ ॥

व्या०:– केवली योग प्रमादविना खेद उदीरतो नथी, परंतु उदयना हेतु ते ह्यां उदीरणासरखा दीठामां आवेछे, तेथी खेद जेछे ते उदीरितना जेवो जणायछे पण परमार्थताए ते उदीरणा कहेवाय नही ॥ १०१ ॥

नुत्तीइ सुहपत्ती तं पुण जोगाउदीरियं हुज्जा ॥ एसा
परजुत्तिलया एएण पकंपिआ ऐआ ॥ १०२ ॥

व्या० – जुक्ति कहेतां जे कवलाहारछे· तेणेकरी केवलीने जे सुख उत्पन्न थायछे, ते योगथी उदीर्युं, अने केवलीने तो योगनी उदीरणा संजवे नही केमके, तेने वेदनीयनी उदीरणा होती नथी माटे केवलीने कवलाहार संजवे नही. एवी जे परयुक्तिरूप वेली ते आवीरीते कपाई गईछे. के प्रमादविना उदीरणा थायज नही एम निश्चये जाणवु ॥ १०२ ॥

णय डुप्पणिहाणं पिछु, केवलजोगाण होइ नुत्तीए ॥
तं रागदोसकय, ते पुण तेसिं विलीणत्ति ॥ १०३ ॥
इय सत्तमाइ फासग, कोडिन्नाईण कवलनोईए ॥ ऐवय
डुप्पणिहाण, सुप्पणिहाणस्स माहप्पा ॥ १०४ ॥

व्या०.– आहारेकरी केवलीना योगने दु.प्रणिधान थाय नही. केमके, योगदु प्रणिधान ते रागद्वेषवडे थायछे ते रागद्वेष तो केवलीनेविषे नथी अत्तएव सप्तमादि गुणगणे चडेला जे कोडिन्नादिमहर्षि, तेओने आहार करतां पण दु प्रणिधान योग नथी थत्तो विधिएकरि आहार करता तेओने आत्मलीनताना माहात्म्यथी प्रमाद यतो नथी किंतु अप्रमादज रहेछे सातमा गुणगणानेविषे नवा व्यापारनो आरंज यतो नथी पण पूर्वे आरंजेला व्यापारनी निष्टा होयछे· जेम देवताना आउखाना बंधनो आरंज यतो नथी. पण छठे गुणगणे बाधवा मांड्यो जे देवतानो आउखो, ते बांधता थका पण सातमे गुणगणे बंधायछे. माटे नवा आर

नना अनिप्रायेज "इत्येतस्मिन् गुणस्थानानि संख्यावश्यानि षट्" एवुं गुणस्थान क्रमारोहनेविषे कह्युंछे. ते संनवितछे. ॥ १०३ ॥ १०४ ॥

हेऊ पमत्तयाए आहारकहव णेव आहारो ॥ होऊ
जइ णइआरो असहती एव तेणावि ॥ १०५ ॥

व्या० – आहारनी कथा करता साधु प्रमत्त थायछे. त्यारे आहार करतां केम प्रमत्त न थाय? एवु प्रनावे कहेछे ते अयुक्त जाणवुं. केमके, आहारकथा प्रमादनुं कारण नथी. तेम छतां जो बन्ने सरखा कहिये तो जेम आहारकथा करतां अतिचार थायछे तेम आहार करतां पण यतीने अतिचार थवो जोये॥१०५॥

णिद्दाविए एण हेउ नुत्ती सहयारमेत्त ओत्तीए ॥ जेण
सुए णिद्दिठा पयडी सा दंसणावरणी ॥ १०६ ॥

व्या०:– जो केवली आहार करतो होय तो तेने निद्रा होवी जोइये. एम जे कहेछे ते पण अप्रमाण जाणवुं. केमके, निद्रानुं कारण आहार नथी. आहार तो मात्र निद्रानो सहचारी छे. सिद्धांतोनेविषे निद्राने दर्शनावरणीयकर्मनी प्रकृति कहीछे. केमके, आहार करतां पण केवलीने दर्शनावरणीयकर्मनो अनाव छे. माटे केवलीने निद्रा होती नथी. ॥ १०६ ॥

णय तस्स थोवयाए जेण अणुण्णा तउ तउ डुवो ॥
णिद्दव डुहयाजं णिद्दाई पसंगउ तस्स ॥ १०७ ॥

व्या०.– शास्त्रोमां कह्यु छे के थोडो आहार करवो, माटे आहार डुष्ट छे, एम कहेवु पण अयोग्य छे, केमके, घणो आहार करवाथी दर्शनावरणीयकर्मना विपाकनो उदय थायछे. एटला माटे घणो आहार करवो डुष्ट कह्योछे. पण स्वनावे आहार डुष्ट नथी ॥ १०७ ॥

आहारो ण पमाउ नन्नइ अववाइजत्तिकाऊणं ॥
अववाया वोत्तीणा वीयनयाणं जिणाण जउ ॥१०८॥

व्या० – आहार अपवादमार्गने प्रतिबंध करनारो होवाथी प्रमादरूप छे, एम नकहेवुं. केमके, वीतनय तीर्थंकरने कोई अपवाद नथी. अपवाद तो जे उत्सर्गमार्ग करी शके नही, अने चारित्रना त्यागथी बीहे, तेने छे. जिनने तो ते नहोय. ए केवल पोतानी कल्पना नथी, केमके, धर्मबिंडुनेविषे निरपेक्ष्यतिधर्मना अधिकारे अपवादत्यागसूत्र कह्युछे, ए गीतार्थे यथा सूत्र विचारवो ॥१०८॥

पत्तं ममत्तहेऊ जुत्तं वोत्तुं पुणो ण देहुव ॥ इहराणी
ममन्नावो जिणाण कह पाणिपत्ताणं ॥ १०ए ॥

व्या०.– आहार करनारने पात्र राखवा जोइये, ते पात्रतो ममत्वनुं कारण छे एम कहेवुं नही केमके, पात्र तो शरीरनी पठे धर्मसाधन छे जो एम न मानिये ने ममत्वनुं कारण मानिये तो तीर्थंकरप्रमुख जे पाणिपात्री छे तेओनेविषे निर्ममत्वपणुं केम संनवे? जो कहेशो के, बाह्य पात्र ममत्वनुं कारण छे, तो ते पण असमीचीन छे. केमके, जेटलुं पुजल इव्य छे ते सर्व आत्माथी बाह्य छे, माटे शुं ते ममत्वनुं कारण थाय? ॥ १०ए ॥

जाणं तवोवघाउं आहारेणंति ते मई मिच्छा ॥
जाणं सेलेसीए तवो अ णिविसस्स तेसिंति ॥ ११० ॥

व्या०.– जो कहेशो के, आहारेकरी केवलीना ध्यान तथा तपनो व्याघात थाय, माटे आहार लेवो अयोग्य छे. तो एवुं जे तारी मतिमां नासे छे ते पण मिथ्या छे. केमके, ध्यान तो शैलेशीये छे पण पूर्वे उत्कर्षताथी देशोउणी पूर्वकोडी सुधी नथी अने विशेषेकरी केवलीने कोई तप पण नथी गणांगनेविषे केवलीने जे अणुत्तर तप कह्युछे, ते पण शैलेश्यावस्थानाव ध्यानरूप कह्यु छे. अने सोमिलना प्रश्नना अधिकारे श्रीनगवतीमां "किं नंते जत्ता सोमिला, जमे तव णियम संयम सश्चाय सञ्चाणवस्सयमाईसु जोएसु जयणा" एवुं कह्यु छे तेहा पण तपनुं फल छे. तेमाटे उपचारे तप कह्यु छे. ॥ ११० ॥

उरालियदेहस्स य ठिई अवुड्ढीय णो विणाहारं ॥
तेणं पिअ केवलिणो कवलाहारित्तणं जुत्तं ॥ १११ ॥

व्या०.– औदारिकशरीरनी स्थिति, तथा तेनी वृद्धि आहारविना थती नथी माटे केवलीने कवलाहार युक्त छे ॥ १११ ॥

परमोरालिअदेहो केवलिणं नणु हवेज्ज मोहखए ॥
रुहिराइधाउरहिउ तेअमउ अप्पपडलुवो ॥ ११२ ॥

व्या०.–पूर्वपक्षी शका करेछे के, मोहनीयकर्मना क्षयथी केवलीने परमौदारिक शरीर थायछे. ते रुधिरादिक सप्तधातुरहित परम पवित्र होयछे. नोडल

ना पडलनी पठे केवल तेजमय होयछे. एवा शरीरने कवलाहारनीअपेक्षा नथी॥ ११२

अ० उपली आशंकानुं समाधान करेछेः—

संघयणणामपगइउ केवलिदेहस्स धाउरहियत्ते ॥
पोग्गलविवागिणी कह अतारिसे पोग्गले होऊ ॥ ११३ ॥

व्या०·— केवलीनुं शरीर जो सप्तधातुरहित कहिये तो तेने वज्रऋषभनाराच संघयण नामकर्म प्रकृतिनो उदय केम थाय. केमके, ते प्रकृति तो पुद्गल विपाकनी छे. ते अस्थि पुद्गलने विषेज विपाक देखाडे छे जो दृढ संस्थानमात्र पुद्गलनेविषे ते विपाकने देखाडती होय तो देवताने पण वज्रऋषभनाराच संघयण कहेवु जोये. ११३

मोहविलएण नाणं णामुदयाचेव तस्स पारम्मं ॥
तो वण्णाइविसेसो तं होऊण धाउरहियत्तं ॥ ११४ ॥

व्या०.— मोहनीयकर्मना विलयथी केवलीने केवल ज्ञान उपजे छे. पण शरीरनेविषे कांई विशेषपणुं थतु नथी शरीरनामकर्मना उदयथीज शरीरनेविषे विशेषता थायछे. माटे केवलीना शरीरनेविषे पुण्यप्रकृतिना माहात्म्यथी वर्णगति सारसत्वादिकनी विशेषता युक्तज छे. परंतु धातुरहितपणुं थाय नही. अतएव शास्त्रोनेविषे कह्युछे के, " संघयणरूव सण्ठा, ण वन्नगइ सारसत्त ऊसासा, एमा ऽणुत्तराइं, हवंति णामोदया तस्स " एम छतां जे केवलीना शरीरनेविषे अस्थ्यादि पुद्गल पलटीने अन्यविषेज पुद्गल उत्पन्न थायछे एवी कल्पना करवी ते दृष्टिविपरीत होवाथी अयोग्य छे. केमके, पुण्यप्रकृतिनो उदय थयाथी तथा विध लब्धिवडे शरीरवर्णादिकविशेष दृढ होयछे. एम जाणवु. ॥ ११४ ॥

ओरालिपत्तणेणं तह परमोरालिअंवि केवलिणो ॥
कवलाहारावेक्खं ठिइं च वुड्ढिं च पाउणई ॥ ११५ ॥

व्या०ः— तीर्थकरनुं शरीर जो परमौदारिक होय तो पण तेने कवलाहार सापेक्षज स्थिति तथा वृद्धिनो अनुभव थाय. केमके सामान्यपणे औदारिकशरीरनेविषे एवो नियम म्ह्योछे के, आहारविना शरीरनी स्थिति होयज नही.॥११५

णय मइनाणपसत्ती, कवलाहारेण होइ केवलिणो ॥
पुप्फाईअं विसयं, अस्स ह्याणाइ गिह्लिज्जा ॥ ११६ ॥

व्याः— जो केवली आहार करे तो तेना आस्वादथी रसनानुं मतिज्ञान थाय

नही; जो एम मानिये तो समवरणभूमिकानेविषे गूढणप्रमाण फूल पाथरेला होवाथी, तेना परिमलथी घ्राणेंद्रियनुं मतिज्ञान केम न थाय? आस्वाद विना तृप्ति थाय नही, एम पण न कहेवु केमके, रतिरूप तृप्ति थती न होय तो ते अमारे पण इष्ट छे परतु क्षुधानाशरूप तृप्ति तो आहारविना थायज नही ॥११६॥

इरिआ वहिआ किरिआ, कवलाहारेण जइ ण केवलिणो ॥
गमणाइणा विनहवे, सा किं तुह पाण पिहियत्ति ॥ ११७ ॥

व्या० जो कहेशो के, केवलीने कवलाहार करतां इरिआवहिकी क्रिया लागेछे. तो गमनागमनादिक क्रियाए करी केवलीने इरिआवहिआ क्रिया केम न लागे? माटे जेम केवलीने गमनादिक क्रिया छे, तेम भोजन क्रिया पण जाणवी, एवुं प्रथमज कह्यु छे ॥ ११७ ॥

णय परुवयारहाणी तेण सया जोग्गसमयणियएण ॥
णय वाहिसमुप्पत्ती हिअमिअआहारगहणाउ ॥ ११८ ॥

व्या०.-- केवली जो कवलाहार करे तो धर्मोपदेशमा अतराय पडे, तेथी परोपकारनी हानि थाय, एम कहेवु न जोइये केमके, ते तृतीयप्रहरनेविषे मुहूर्त्त मात्र नियतसमयेज आहार करेछे तेथी बाकीनो सर्व काल उपदेशने अर्थे रहे छे जो कहेशो के, केवली आहार करेतो शूलादिक व्याधि उत्पन्न थवानो संभव थाय, तो ए कल्पना पण व्यर्थ छे केमके, ते सारी रीते जाणीने अभिष्वगपरिणामरहित हित मिताहारज करे छे माटे तेनेविषे शूलादिकनो संभव थाय नही अने एथी तेनेविषे रागनी कल्पना पण थाय नही ॥ ११८ ॥

ण पुरीसाइ डुगंछिय मेसिं णिहट्ठू मोहवीआणं ॥
अइसय उय परेसिं विवित्तदेसेविहाणाय ॥ ११९ ॥

व्या० – जो कहेशो के, केवली आहार करे तो तेथी वडिनीत प्रमुख करवुं जोइये, तेतो डुगछानुं कारण छे, एम पण कहेवु नही केमके, डुगंछानुं मूल मोहनीय कर्म छे तेनुं तो प्रथमज उन्मूलन करेलुं छे अने तीर्थंकरनो एवो अतिशय छे के, तेनां आहार तथा निहारनी विधिने कोई देखी शके नही ए कारण माटे बीजाने पण डुगंछा उत्पन्न थाय नही वली सामान्य केवली एकाते निहार करेछे तेथी पण बीजा कोईने डुगंछा उत्पन्न थाय नही पूर्वपक्षी कहेछे के, तीर्थंकरने पूर्वे पण निहार होय नही तो पछी ते केम संभवे? यत "तिछय

रा तष्यियरो, हलधर चक्कीय वासुदेवाय; मणुआए नोगनूमी, आहारो एाहि एी हारो " ए तो कोई अपूर्व मतछे केमके, शास्त्रोनेविषे एवो कोई अतिशय कह्यो नथी, तेम एवी उदराग्नि पण नथी के जेथी निहारनो अनाव थाय तेम ठता जो ए वातसाची मानिये तो नस्मकव्याधिनी पठे ते दोषरूप थशे खल रसीकृत आहार मात्र जो नस्म थाय तो पूर्वे केम न थाय? माटे ते केवल आप रुचिमात्र छे ॥ ११ए ॥

जो पुण नुत्तिअनावो केवलिणो अइसउत्ति जंपेई ॥
सो वायामित्तेणं साहेऊ सुह खउ पुप्फं ॥ १२० ॥

व्या०:– जो कहेशो के, केवलीने जे नुक्तिनो अनाव छे ते अतिशय जाणवो तो एम कह्याथी तमे पोते पोताना वचने अठतीवस्तुने ठती करो ठो त्यारे आकाशना पुष्प पण छे एम कहेशो तो कोण ना कहेनारो छे! पण ए वचनो सप्रमाण न कहेवाय ॥ १२० ॥

एवं कवलाहारो जुत्तीइ समत्थिउ जिणवराणं ॥
पुव्वायरिएहिं जहा तहेव लेसेण उवइठो ॥ १२१ ॥

व्या०:– एम जे प्रकारे पूर्वाचार्य केवलीने विषे कवलाहारनी समर्थना करी छे ते प्रकारेज आ ठेकाणे अमे लेशमात्र कह्युछे ॥ १२१ ॥

तेणं केवलनाणी कयकिच्चो चेव कवलनोईणं ॥
नाणाईण गुणाणं पमिघायानावउ सिद्धो ॥ १२२ ॥

व्या०– माटे केवली कवलाहार करता ठतां पण कृतकृत्यज छे केमके, ज्ञान दर्शन चारित्र तथा वीर्यगुणनो स्वनावपराहृत्ति एटले पाठल हटवारूप प्रतिघात नथी ज्ञानादिक गुण संपूर्ण सिद्धज होयछे. माटे ते सर्वथा कृतकृत्य तो सिद्धज छे एम कहेवु जोइये तथापि ज्ञानादिगुणचतुष्टयनी विशुद्धताने लीधे केवलीने देश कृतकृत्य कहेता पण काई विरोध आवे नही ॥ १२२ ॥

नाणस्स विसुद्धीए अप्पा एगंतउ ण संसुद्धो ॥
जम्हा नाणं अप्पा अप्पा नाणं तअसं वा ॥ १२३ ॥

व्या०– जो कहेशो के, आत्मा ज्ञानरूप छे तेथी ज्ञाननी एकांत शुद्धताने लीधे आत्मा पण एकात शुद्ध थाय छे. एम न कहेवु. केमके, ज्ञान ते आत्म

रूपज होयछे. केमके, आत्माविना ज्ञाननुं रहेवुं नथी अने आत्मा जे छे ते ज्ञानस्वरूप पण होयछे ने तदन्यस्वरूप पण होयछे, ए हेतुथी केवली ज्ञानादिगुणने स्वभावेकरी शुद्ध पण छे. अने अव्याबाधादिगुणना स्वभावे अशुद्ध पण छे. एम जाणवु. ॥ १२३ ॥

एव परमप्पत्तं नाणाइडवारगं मुणेअव ॥
सवह परमप्पत्त सिद्धाणं चेव संसिद्धं ॥ १२४ ॥

व्या०.- एवी रीते केवलीने परमात्मापणुं ज्ञानादिकगुणेकरी देशथीज जाणवुं, सर्वथा परमात्मा ते सिद्धज कहेवाय माटे आठ दोषना विरहथी आठ गुण तेनेज प्रगट थायछे आत्मा त्रण प्रकारनो होयछे एक बाह्यात्मा, बीजो अंतरात्मा, अने त्रीजो परमात्मा, आत्मबुद्धियकी जे कायादिकनुं ग्रहण थायछे, ते बाह्यात्मा कहिये शरीरादिकनो अधिष्ठायक जे चेतन ते अंतरात्मा कहिये, अने जे सर्व उपाधिरहित शुद्ध आनंदमय होय ते परमात्मा कहिये यत· "आत्मधिया समुपात्तकायादि कीर्त्यते अत्र बहिरात्मा कायादेशमधिष्ठायको नवत्यतरात्मा तु चिद्रूपानदमयो नि शेषोपाधिविर्वर्जित शुद्ध अप्रत्यक्षोनतगुण परमात्माकीर्तितस्तदज्ञैरिति योगशास्त्रे " केटलाएक एम कहेछे के, जे मिथ्यात्वादि परिणामवान होय ते बाह्यात्मा कहिये, जे सम्यक्तादि परिणामवान होय ते अंतरात्मा कहिये, अने जे केवल ज्ञाननिधान होय ते परमात्मा कहिये. मिथ्यात्वादि त्रण गुणठाणा सुधी बाह्यात्मा कहेवायछे, अविरतिसम्यग्दृष्टिनामना चोथा गुणठाणाथी लईने क्षीणमोहनामना बारमा गुणठाणासुधी अंतरात्मा कहेवायछे, माटे मिथ्यादृष्टिने पण निश्चयथी सम्यग्दर्शन तथा केवल ज्ञान छे ते शक्तिएकरी अंतरात्मता तथा परमात्मताने पामेछे केमके, अविरतिसम्यग्दृष्ट्यादिकने पण निश्चयथी केवल ज्ञान छे अने बाह्यात्मा ते भूतपूर्वनये करी कहेवायछे केमके. तेने मिथ्यादर्शन पर्याय पूर्वे थयाछे. जेम मधुथी भरेला घटमाथी मधु कहाडी लीधा पछी पण मधुघट कहेवायछे. ते न्याय अहि पण जाणवो व्यक्ते परमात्माते बाह्यात्मा तथा अतरात्मा पूर्वभूतनयथी कहेवाय छे. केमके, तेने मिथ्यादर्शन तथा सम्यक्दृष्ट्यादि ए बन्ने पर्याय पूर्वे थयाछे ॥ १२४

तस्स य सद्दावसिद्धा, किरिआ गुण करण जोग अद्दिगिव ॥
कम्मुगुणी आविहवे, जुंजणकरण तु अहिगिच्च ॥ १२५ ॥

व्या० – ते केवलीने गुणकरण आश्री स्वभावसिद्ध क्रिया होयछे. तेने केवली ज्ञानादि गुणपर्याय उपजता आत्माथी अन्यकर्मादिकारणनी अपेक्षा नथी कालस्वभावादिके तेना कारणपणे सर्व आत्मातरभूत छे मनोवाक्कायरूप युंजना कारण आश्रीने केवलीने कर्मोपनीतक्रिया पण थायछे. माटे ते अंशेकरी केवल स्वभावसिद्ध क्रियाज नथी ॥ १२५ ॥

अह सो सेलेसीए, झाणानलदड्डसयलकम्ममलो ॥
कणगंव सवह च्चिय, लद्धसहावो हवइ सिद्धो ॥ १२६ ॥

व्या० – हवे केवली जे छे ते, शैलेसीअवस्थानेविषे शुक्लध्यानरूप अग्निएकरी सर्वकर्मरूपमलने दग्ध करीने अग्निएकरी निर्मल किधेला सुवर्णनी परे सर्वथा लब्धस्वभाव थईने सिद्धत्वपर्यायनो भजनार थायछे ॥ १२६ ॥

तस्स वर नाण दंसण, वर सुह सम्मत्त चरण निच्चठिई ॥
अवगाहणा अणंता, मुत्ताणं थई अविरियं च ॥ १२७ ॥

व्या० – ज्ञानावरणीयादिक आठकर्मथी जीवने अज्ञानादिक दोष होयछे ते नाश पाम्यापछी सिद्धने आ आठ गुण प्राप्त थायछे – पहेलो ज्ञानावरणीयकर्मना क्षयथी अनंत केवलज्ञान उत्पन्न थायछे, बीजो दर्शनावरणीयकर्मना क्षयथी अनंत केवलदर्शन उत्पन्न थायछे, त्रीजो वेदनीयकर्मना क्षयथी क्षायिक सम्यक्त उत्पन्न थायछे, चोथो चारित्रमोहनीयकर्मना क्षयथी क्षायिक चारित्र उत्पन्न थायछे, पांचमो आयु कर्मना क्षयथी अक्षय स्थिति उत्पन्न थायछे, छट्ठो नामकर्म तथा गोत्रकर्म ए बन्नेनो क्षय थयाथी एक सिद्धावगाहक स्थाननेविषे क्षीरशर्करानी परे अनंत सिद्धावगाहना उत्पन्न थायछे, अहीं मोहनीयकर्मना क्षयथी बे गुण उत्पन्न थायछे एम कह्यु, तथा नाम अने गोत्र ए बे कर्मना क्षयथी एक ज गुण उत्पन्न थायछे एम कह्युछे, ए ठेकाणे स्वपरिभाषाज शरण छे ॥ १२७ ॥

थिरयावग्गहणाउ, पत्तेअं नामगोत्तकम्मखए ॥
चरणंविअ मोहखए, इअ अठ गुणत्ति विंति परे ॥ १२८ ॥

व्या०.– केटलाएक मोहनीयकर्मना क्षयथी एकज चारित्रगुणमानेछे, तथा नामकर्मना क्षयथी आत्मप्रदेशस्थिरतारूप गुण कहेछे, तेमज गोत्रकर्मना

क्षयथी अवगाहना गुण मानेछे ॥ १२८ ॥ अ० जे आचार्य सिद्धने चारित्र गुण नथी मानता, ते सूत्रनुं अवलंबन करीने पूर्व पक्ष करेछे –

णणु सिद्धंते सिद्धो, णो चारित्ती अ णो अचारित्ती ॥
भणिउ ववहारणया, णिछउ होई चारित्ती ॥ १२९॥

व्या०.– "सिद्धे णो चारित्ती णो अचारित्ती" ए सूत्रनेविषे सिद्धने चारित्री नो अचारित्री कह्योछे, एवु वचन तो चारित्र न होय तो संभवे, जेम भव्यत्व न ही होवाथी भव्यत्वने ठेकाणे अभव्यत्व कहेवायछे, तेम छता सिद्धना गुणोमां चारित्रनी गणना केम कीधीछे ? ॥१२९॥ अ० कोईएक ए सूत्रनुं समाधान करेछे –

णणु इह देसणिसेहे,णो सद्दो तेण तस्स देसस्स ॥
अह्णु णिसेहो किरिया,रूवस्स ण सत्तिरूवस्स ॥ १३० ॥

व्या०.– "णो चारित्री णो अचारित्री" ए वाक्यमाना "नो" शब्दथी देश नो निषेध थायछे एटले चारित्र बे प्रकारनुं होय छे, एक क्रियारूप ने बीजो परिणामरूप छे तेओमानां क्रियारूपचारित्रनो सिद्धनेविषे निषेध छे , परतु शक्तिरूप चारित्रनो निषेध नथी , एम जाणवु ॥ १३० ॥ अ० केवलीनेविषे क्रियारूप चारित्र छे, परतु शक्तिरूप चारित्र नथी एम कहेवु नही ते कहेछे –

जइ किरियारूवं चिअ, चारित्त णेव णायपरिणामो ॥
तो किरियारूव चिअ, सम्मत्तं णायपरिणामो ॥ १३१ ॥

व्या०.– जे प्रेक्षोत्प्रेक्षादिक्रियाछे, ते चारित्र कहिये , अने तदुपयोगरूप चारित्र ते भावचारित्र कहिये, भावचारित्र ज्ञानरूपज छे. त्यारे निशंकताद्याचाररूप जे क्रिया , तेज सम्यक्त कहिये, अने श्रद्धानपरिणाम ते ज्ञान कहिये, एम निर्णय करता ज्ञान तथा दर्शननो भेद थाय नही, ज्यारे आत्मगुणरूप सम्यक्त छे त्यारे चारित्र पण आत्मगुणरूप केम न कहिये ! अतएव मरुदेवादिकने बाह्याचारविना पण चारित्र संभवेछे ॥१३१॥ अ० "इह भविए भंते, चरित्ते परभविए चरित्ते, तदुभयभविए चरित्ते गोयमा, इह भविए चरित्ते, णो परभविए चरित्ते णो तदुभयभविए चरित्ते" एवा भगवती सूत्रना वचनोए करी चारित्र भवानुगामी कह्युछे माटे मोक्षनेविषे चारित्र संभवे नही, एम जे कहेछे, तेनुं समाधान आवीरीते छे –

जं पुण तं इह नविअं, तं किरियारूपमेव णेयवं ॥
अहवा नवो ण मुक्को, णो तम्मि नवे इअं अहवा ॥ १३२ ॥

व्या·— जे चारित्र इह नविक कह्युछे, ते क्रियारूप जाणवुं ; अने बीजुं जे मोहनीयकर्मना क्षयथी उत्पन्न थायछे ते चारित्र मोक्षनेविषे होयछे, तेनी अमे पण ना कहेता नथी, अथवा मोक्षना नवमां विवक्षा करी नथी माटे इह नविक चारित्र कह्युछे, अथवा मोक्षनेविषे चारित्र तो छे, परतु कर्मनिर्जरारूप प्रयोजन तिहां नथी, तेथीज इह नविक कह्युछे ॥ १३२ ॥

णय मोरकसुहे लद्धे, तयणुट्ठाणस्स हंदि वेफल्लं ॥
तक्कारणस्स इहरा, नाणस्स वि होइ वेफल्लं ॥ १३३ ॥

व्या० चारित्रनुं फल मोक्ष छे, ते पाम्या पछी चारित्र रहेतु नथी एम कहेवुं नही अन्यथा ज्ञाननुं फल विरति छे, ते पाम्या पछी चारित्र रहेतुं नथी, एम कहेवुं नही; अन्यथा ज्ञाननुं फल विरति छे, ते पाम्या पछी ज्ञानपण संनवे नही. ज्यारे सिद्धने ज्ञाननुं फल निश्चयथी लोकालोकप्रकाशरूप छे, त्यारे चारित्रनुं फल पण निश्चयथी शुद्धात्मस्वनावानुनवलक्षण शासारू न होय. ॥ १३३ ॥

णेव पइसानंगो, अहियावहि पूरणंमि चरणस्स ॥
सावा किरियारूवे, सुअकरणे जं करेमित्ति ॥ १३४ ॥

व्या० सिद्धने जो चारित्र मानिये तो यावज्जीवतानी प्रतिज्ञानो नंग थशे. एम पण न कहेवुं. केमके, ओछा काले प्रतिज्ञानो नंग थाय छे; पण अधिक काले प्रतिज्ञानो नंग न थाय. अथवा ते प्रतिज्ञा क्रियारूपचारित्रनीयज जाणवी. केमके, " करेमि नते " एसूत्र श्रुतकरणार्थी कह्युछे ते श्रुतकरण धुंजनाकरणरूप चारित्रज अवलंबीने प्रवर्ते छे गुणरूप चारित्र ते आत्मस्वरूप छे मोहविरहथी तेनो आविर्नाव मात्र थायछे. ॥ १३४ ॥

अह चरण मनुट्ठाणं, तं ण सरीरं विणत्ति जड बुद्धी ॥
तेण विणा नाणाई, ता तस्स हेऊअं पत्त ॥ १३५ ॥

व्या० जो चारित्र अनुष्ठानरूपछे, ते शरीरविना सिद्धनेविषे संनवे नही. एम जो कहिये तो शरीरविना ज्ञानादिक पण सिद्धनेविषे केम संनवे ! पूर्वावस्थामां शरीरथी उत्पन्न थएला ज्ञानादिकना नाशना कारणविना सिद्धने ध्रुव कहियेछे. ॥१३५॥

किरिया फलत्तदयिगी, खइअं चरणं वि दोह्न मह नेत्त॥
सातेए वज्ञचरणं, वज्ञंतरियं तु परिणामा ॥ १३६ ॥

व्या० बीजूं क्रिया छे ते शरीरनामकर्मना उदयथी छे, शरीरविना क्रिया थाय नही. शरीरवमे चारित्ररूप क्रिया थायछे ते बाह्यचारित्र कहेवायछे एवा बाह्यचारित्ररूप शुद्ध जैनसमाचारीरूप क्रियानुं सेवन करीने अनव्य जीव पण नवमा ग्रैवयकसुधी जायछे, एवो बाह्य चारित्रनो महिमाछे अने केवलीने तो क्षायिक चारित्र कह्युछे माटे ते बाह्यचारित्र कहेवाय नही; किंतु ते शुद्ध आत्मपरिणामरूप होवाथी ए अंतरग चारित्रज कहेवाय ॥ १३६ ॥

आया खलु सामाइय, आया सामाइअस्स अठोत्ति ॥
तेणेव इमं सुत्तं, नासइ तं आयपरिणामं ॥ १३७ ॥

व्या० " आया सामाईए आया सामाइअस्स अठे " ए सूत्र पण चारित्रने आत्मपरिणामरूपज कहेछे परतु बाह्यक्रियारूप नथी कहेता ॥ १३७ ॥

एय खइअं विचरित्तं, जोगिणिरोहेण तं विलयमेई ॥
असह विहल पत्तो, विरहो चारित्तमोहस्स ॥ १३८ ॥

व्या० केवलीने जे क्षायिक चारित्र उत्पन्न थायछे, ते ज्यारे योगनो निरोध करीने मोक्षनेविषे गमन करेछे, तेना प्रथमसमयमा नाश थायछे एम कहेवुं नही. केमके, क्षायिकनावनो नाश थतोज नथी जो एम न मानिये अने क्षायिकनावनो नाश मानिये तो चारित्रमोहनीयकर्मनो नाश कहेवाशे नही तेम छतां वलेकरी नाश अगीकार करशु तो पण ते निरर्थक थशे केमके, चारित्रमोहनीयकर्मना नाशथी क्षायिक नावतो उत्पन्न थयोनही त्यारे ए नाशपणुं शु कामनुं? जेम ज्ञानावरणीयकर्मना नाशनुं फल केवल ज्ञान छे, तेम चारित्रमोहनीय कर्मना नाशनुं फल यथाख्यात चारित्र छे ते जो सिद्धनेविषे न होय, तो मोहनीयनो नाश निष्फल कहेवाशे ॥ १३८ ॥

तेणं सुद्धवत्तगे, चरणं नाणाउ दसणं वन्नं ॥
कारणकज्जविनागा, सततमिय किं न सिद्धेसु ॥ १३९ ॥

व्या० ते कारण माटे शुद्धोपयोगरूप चारित्र यद्यपि उपयोगरूपताज्ञानथी अन्यथा छे, तथापि तेओमा कारणकार्यनावनेद छे ज्ञान चारित्रनुं कारण

छे, तेम चारित्र ज्ञाननुं कारण छे; जेम सम्यक्त तथा ज्ञानना विषयोमां भेद न थी, अर्थात् बन्नेनो एकज विषय छे, तथापि तत्वरोचकरूप ते ज्ञान कहेवायछे, तथा तत्वरुचिरूप ते सम्यक्त कहेवायछे एवो बन्नेनो भेद छे तेम ज्ञान अने चारित्रनो पण भेद जाणवो तेमज ज्ञानावरणीयादिक कर्मोनो भेद पण संभवे छे एवी रीते ज्ञानथी अन्य चारित्र उपयोगरूपने ज्ञानथी अनन्य अनेकांतस्वरूप सिद्धनेविषे केम न थाय ॥ १३९ ॥ अ० ए प्रमाणे सिद्धनेविषे चारित्रनी समर्थना करी, ते उपर सिद्धांतपक्षने अवलंबीने पूर्वपक्षी समाधान करेछे.

एह समाहाणविही, जो मूलगुणेसु हुज्ज थिरभावे ॥
सो परिणामा किरिआ, जुंजणकरणं पडिच्छंतो ॥ १४० ॥

व्या० मूलगुणनेविषे जे स्थिर भावरूप छे, तेज चारित्र क्रियारूप कहेवुं. केमके, ते मनोवाक्काययोगरूप युजनाकरणनी अपेक्षा करेछे कोई पूछे के, एम कह्याथी वीर्यरूप चारित्र थाय. ते संभवे नही जेम ज्ञानाचारादिकथी ज्ञानादिक अन्य छे, तेम चारित्राचारथी चारित्र पण अन्यज संभवे तेने एम कहेवु के, जो एम कहिये तो वीर्याचारथी वीर्य पण कां अन्य न कहिये! जो कहेशो के, योगरूप चारित्र होय तो ते उपशमिक भावे केम थाय! केमके' योग ते नामकर्मना उदयिकभावे वर्त्तेछे उपशमिक भाव तो मोहविना अन्य कर्मनो थायज नही. एम पण न कहेवुं, केमके, योगपरिणामविशेष पण चारित्रमोहनीयकर्मना उपशमादिकनी नियमेंकरी अपेक्षा करेछे ते उपशमादिक भावेज कहिये, केमके, प्रधाननी अपेक्षाए व्यवहार होयछे अतएव इंद्रियपर्याप्ति उदय जघन्य पण इंद्रियप्रधाननी अपेक्षाए शास्त्रमां क्षायोपशामिक कहेवायछे.॥१४०

असह वक्कजडाणं, चंमाणं चंमरुद्दपभईणं ॥
वेणसिया चारित्तं, सुद्धवओगोत्ति काऊणं ॥ १४१ ॥

व्या० जो योगस्थैर्यरूप चारित्र न कहिये, अने शुद्धोपयोगरूप चारित्र कहिये, तो वक्र जमने चारित्र केम संभवे ? केमके, तेने तथाविध माया ते अशुभोपयोगरूप छे' अने ते तो शुद्धोपयोगनो भेद छे, तथा क्रोधमोहनीयकर्मना परवशे जे चमरुद्राचार्यादिक सहजे कोपनशील छे, तेने पण चारित्र केम संभवे? केमके, तेने पण अशुभोपयोग छे. [मूलगुणनेविषे योगस्थैर्य ते तेने पण संभवे. जेम वज्र अग्निएकरी ऊष्ण थाय, तो पण वज्रपणुं मूके नही. जे

म यथाविध कषायथी अस्थिरता पण कषायपरिणति प्रमादरूप तेने थयो, तो पण योगस्थैर्यनो घात थाय नही. जो योगक्रियारूप चारित्र कहिये तो ते मरुदेवादिकने केम संनवे? एवो संदेह पण न करवो केमके, मरुदेवादिकने पण संसारनिवृत्तिरूप मनोयोगपरिणतियुक्त छे उक्तंच "नगवद्दर्शनानंद, योगस्थैर्यमुपेयुषी, केवलज्ञानमम्लान, माससाद तथैव सा" इति योगशास्त्र वृत्तौ ॥१४१॥

चरणं जइ उवजंगो, जिणाण ता हुति तिन्नि उवजंगो ॥
दोसु अ अंतप्पावे, तं तिअस्स पकप्पणा मोहा ॥१४२॥

व्या० जो शुद्धोपयोगरूप चारित्र कहिये, तो केवलीने आ त्रण उपयोग होवा जोइये. ज्ञानोपयोग, दर्शनोपयोग, तथा चारित्रोपयोग इम सामान्यथी पण तेर उपयोग थवा जोइये. अने शास्त्रोनेविषे तो बार उपयोग कह्याछे ज्ञान तथा दर्शनमांज चारित्र नेलिये तो त्रीजु कयु चारित्र कहीशु जे कहिये ते प्रयासमात्र थाय. जो साकारोपयोग चारित्र नेलिए तो साकारोपयोगना आठ नेद पण सनवे उपयोगरूप चारित्र मान्याथी इत्यादिक अनेक दूषण थाय ॥१४२॥

उ० जो वीर्यरूप चारित्र कहिये तो पण शैलेशी अवस्थानेविषे ते केम सनवे! केमके, ते समयनेविषे प्रवृत्तिरूप वीर्य नथी एम जे कहेछे, तेनु समाधान करेछे.

सेलेसीए जत्तो, णिवित्तिरूवो सचेव थिरनावो ॥
णय सो सिद्धाणं पिय, जं तेसि वीरिअ णत्थि ॥ १४३ ॥

व्या० शैलेशीअवस्थानेविषे यद्यपि रूप यत्न नथी, तथापि योगनिरोधथी निवृत्तिरूप यत्न छेज, तेज परम स्थिरनावरूप चारित्र छे, ते स्थिरनाव सिद्धने नथी, केमके तेनो वीर्य नथी, माटे चारित्रने दानादिक पांच लब्धिए क्षायिक नाव सादिसात कह्याछे, तथा सूत्रमा पण सिद्ध अवीर्य कह्याछे ॥ १४३ ॥

उ० जो चारित्र क्रियारूप कहिये, तो अक्रिया मोक्षकारण कही केम संनवे? यत "साण नते अकिरिआ कि फला, गोयमा, सिद्धगमणपज्जवसाणफला पन्नत्ता" एहवु जे कहेछे, तेनुं समाधान करेछे —

अंते अ अंतकिरिआ, सेलेसी अकिरियत्ति एगठा ॥
नाणकिरिआहि मोस्को, एत्तो चिअ जुज्जए एवं ॥१४४॥

व्या० अंतक्रिया, शैलेशी तथा अक्रिया ए सर्व शब्द एकार्थक कह्या छे अत क्रिया एटले सकलकर्मध्वसरूप छेवुं प्रयोजन; जेथी कोई अन्य क्रिया बाकी रहे

नही ते; शैलेश एटले मेरुपर्वत, तेनी पठे जे निश्चल अवस्था ते शैलेशी कहेवाय, अने जे अवस्थानेविषे प्रवृत्तिरूपक्रिया न होय ते अक्रिया कहेवायछे. अतएव "ज्ञानक्रियाभ्यां मोक्ष" ए वचन युक्त छे. केमके, सर्व संवररूपक्रिया अक्रिया रूपज छे ॥ १४४ ॥ उ० कोइ आशंका करेछे

णणु जोग निरोहेणं, चारित्तं सासयं पर होऊ ॥
असुह तेण ण मोक्खो, उन्नव काले असंतेणं ॥ १४५ ॥

व्या० परमार्थताथी चारित्रनो प्रतिपक्षी यद्यपि चारित्रमोहनीयकर्म छे, तथापि जेम चोरनी साथे रहेनारो अचोर पण कलंकित थायछे, तेम मोहना सहचारथी योग पण चारित्रना विरोधी छे. माटे योगना निरोधेकरी परम यथाख्यातचारित्र शैलेशीने चरमसमये ऊपजे ते शाश्वतचारित्र सिद्धने पण होयछे जो ते चारित्र ते समयनेविषे उत्पन्न थईने आगल मोक्ष थवाना समये नाश पामतु होय तो ते उत्पन्न थवानुं प्रयोजन शुं? तथा जो कार्यना समये कारण न होय तो कार्यनी उत्पत्तिपण केम थाय? ॥ १४५ ॥

केई बिंति मुणीणं, सहावसमवठिई हवे चरणं ॥
तं लद्धसहावाणं, सिद्धाण सासयं जुत्तं ॥ १४६ ॥

व्या० केटलाएक कहेछे के, पूर्वोक्त दोषने लीधे शुद्धोपयोगरूप चारित्र थाय नही. स्वनावसमवस्थानरूप चारित्र होयछे ते आत्मस्वनाव अविरत्यादि दशाए आछादन करी लीधु छे ज्यारे चारित्रमोहनीयकर्मनो विलय थायछे, त्यारे ते आत्मस्वनाव प्रगटेछे. ते लब्धस्वनाव सिद्धने शाश्वतरूप चारित्र युक्त छे. ॥१४६॥

उ० ए कहेला परमतनुं समाधान करेछे —

चरणरिउणो ण जोगा, अहसमाएण सवसंवरए ॥
सिद्धे तम्मि सहावे, समवठाणंति सिद्धंतो ॥ १४७ ॥

व्या० जो एम कहिये के, योगचारित्रना विरोधी छे, तेथी योगनो निरोध कर्या थकी परम चारित्र ऊपजे छे. ए कहेवु योग्य नथी. केमके जो सहचारथी योग चारित्रना विरोधी थाय, तो दर्शनना पण विरोधी थवा जोये तेम तो न कहेवाय ज्यारे शैलेशीअवस्थानेविषे सर्व संवर कहेवाय छे, त्यारे तेज समयनेविषे सकल कर्मनिर्जरा कारण चारित्र छे, एवा अनिप्राये स्वनावसमवस्थानरूप चारित्र पणसिद्धने कहेवुं जोये के जो योगपरिणामथीनिन्नस्वनाववान चारित्र सिद्धहोय ॥१४७॥

उज्जुसुएण भणणं, सेलेसीचरमसमय भाविति ॥
अनसमउ च्चिय जहो, हेऊ हेऊस्स कज्जम्मि ॥ १४८ ॥

व्या० एम जे कह्युछे के, शैलेसीना छेला समयनेविषे चारित्र उपजेछे, ते रुजु सूत्रनयनामते रुणपर्याय अंगुरछे तथा कारणनो अंत्यसमयज कार्यनो हेतु छे ए अभिप्रायेकरी मोहना क्षयथीज सादिसात क्षायिकभावरूप बीजुं चारित्र उपजे छे. ॥ १४८ ॥

णय चरणमोहबंधो, सिद्धाण अ चरणाण संताणं ॥
अविरय पच्चउ सो अडप्पसंगो हवे इहरा ॥ १४९ ॥

व्या० सिद्धने चारित्र नहीं होय तो तेने चारित्रमोहनीयकर्मनो बंध थवो जोये, माटे एम न केहेवु केमके विरति अने अविरति ए बे स्वतंत्र परिणाम छे ॥ १४९॥

जंच जिअलक्खण ते उवइठ तत्थ लक्खणं लिंग ॥
तेण विणा सो जुज्जइ धूमेण विणा हुआ सुव्व ॥ १५० ॥

व्या० "नाणं च दंसणं चेव, चरित्तं च तवो तहा, वीरिअं उवउगो य, एयं जीअस्स लक्खणं" एवीरीते श्रीउत्तराध्ययनसूत्रनी गाथाएकरी जीवनुं लक्षण चारित्र कह्युछे माटे ते सिद्धने पण होवु जोये एम कहेवु नहीं केमके चारित्र जे छे ते उपयोगनी पठे यावत् द्रव्यभावि लक्षण नथी आंहीं लक्षणशब्दनो अर्थ लिंग जाणवो जेम धूम अग्निनो लिंग छे तेम चारित्र जीवनो लिंग कह्युछे जेम धूमविना अग्नि तप्त लोहनेविषे होयछे, तेम चारित्रविना जीवपण होयछे, एमां काई विरोध नथी, अतएव अंतरंग लक्षण कहीने बाह्य लक्षण कहेवाने अर्थे उपर कहेली गाथा उत्तराध्ययनबृहद्वृत्तिनेविषे अवतरण करेली छे ॥ १५० ॥

णय णिछयस्स नाणे अभेयवित्ती कहं चरणविरहे ॥
संतं चिअ पभिवज्जइ फलेण ज सोय सत वि ॥ १५१ ॥

व्या० जो सिद्धनेविषे चारित्र न होय तो ज्ञानमां चारित्रनी अभेद वृत्ति केम संभवे? केमके, सकलादेशे छतांज सर्व धर्म एक धर्मवाचक शब्दे बोले एवी आशंका पण न करवी, केमके, ते समयमां चारित्र नथी तो पण चारित्रनुं फल छे. माटे चारित्र छे एम मनायछे, ए नयना मते चारित्रना फलविना छते चारित्र पण असतु माने ॥ १५१ ॥

णवि आयाचरणं चिअ आया सामाइयंति वयणेणं ॥
दवियाया नयणाए चरणाया सवथोकुत्ति ॥ १५२ ॥

व्या० "आया समाईए, आया सामाईअस्स अठे" ए सूत्रनेविषे आत्मपर्यायरूप जे चारित्रछे, ते इव्यार्थिक नयना आदेशे आत्मरूप कह्युछे, माटे ते चारित्र यावत् इव्यनावी आत्मस्वनावरूप न जाणवुं केमके, इव्यात्मा, ते नजनाए चारित्रात्मा कह्युछे. तथाहि "जस्स दविआया तस्स चरिताया नयणाएत्ति" एवी रीते नगवतीसूत्रमां कह्युछे; तथा आत्माना जे आठ नेद कह्या छे, तेओमां चारित्रात्माने सर्वस्तोक कह्युछे, माटे आत्मा तेज चारित्र एम न कहेवुं ॥ १५२ ॥

एत्तो च्चिय सिद्धाणं, खइअम्मि नाणदंसणगाहणं ॥
सम्मत्तजाइगहणं, वदूण दोसा ण संकंती ॥१५३ ॥

व्या० वली सिद्धनेविषे चारित्र नथी, ते माटेज सिद्धने क्षाइकनावमां ज्ञान तथा दर्शन ए बेज कह्याछे जो कोई कहेशे के, सम्यक्तसमान चारित्रछे. तेथी सम्यक्तना ग्रहणथी चारित्रनुं पण ग्रहण थायछे एम कहेवु नही. केमके, शुद्धोपयोगरूप चारित्रनो पूर्वेज निषेध कर्योछे अने योगस्थैर्यरूप तेहनीज व्यवस्थापना करीछे ॥ १५३ ॥

अम्हं णाभिणिवेसा, सिद्धाणं अ चरणस्स पक्कम्मि ॥
तह वि नणिमो रतीइ, जं जिणमयमन्न हाकाउं ॥१५४॥

व्या० सिद्धने चारित्र नथी, ए पक्षमां यद्यपि अमने अनिनिवेश नथी, तथापि आटलु व्यवस्थापन आटलालारू करिये छैये के, श्रीवीतरागनां वचन अन्यथा न थाय ॥ १५४ ॥ अ० एवी रीते सिद्धने चारित्र नथी, एवी समर्थना करी, त्यारे सिद्धना गुणोमा चारित्रनी गणना केम करीछे ? एवा पूर्वपक्षनुं समाधान करेछे –

जइवि जइमो सिद्धंतो, इठं केसिंवि तहवि सूरीणं ॥
सिद्धाणं चारित्तं, तेसिमए तं मए मिहिअं ॥ १५५ ॥

व्या० यद्यपि सिद्धने चारित्र नथी; एवो सिद्धांत छे, तथापि केटलाएक आचार्यो चारित्र मानेछे, यत "अन्येतु दानादिलब्धिपंचकं चारित्रं च सिद्धस्यापीछंति, तदावरणस्य तत्राप्यनावात्, आचरणानावेपि च तदऽसत्वे क्षीणमोहादि ष्वपि तद सत्व प्रसगात्॥ततस्तन्मते नचारित्रनावना सिद्धावस्थायामपि सद्भावेनापर्यवसितत्वादकस्मिन् द्वितीयनंग एव क्षायिको नावो न शेषेषु त्रिष्वपि" इति विशेषावश्यक

टीकायां " ए आचार्यना मतेकरी अमे सिद्धना गुणोमा चारित्रनी गणना करीछे. ए मत जे छे ते पूर्वमतथी विरुद्ध छे माटे अप्रमाणजछे एम कहेवुं नही केमके, अविछिन्नपरंपराए आवेलां जे ए बे मत, ते अनतिशय पुरुषथकी निवारण थाय नही जो कहेशो के, एक एकनी युक्तिनी समर्थना करता प्रत्येकमां दोष आवशे, एवो विचार पण न करवो केमके, जिनवचनऊपर अरुचि थयाविना सम्यक्तनो भ्रंश थतो नथी ॥ १५५ ॥

तेसिं सव्वा किरिआ, सहावसिद्धा पणछ कम्माणं ॥
छह्णंपि कारगाणं, एगछेजं समावेसो ॥ १५६ ॥

व्या० ते सिद्धने सर्व क्रिया स्वभावसिद्ध छे, एक पण विभाव क्रियानथी केमके, कर्मरहित सिद्धने छ कारक एक अर्थे विश्रांति पामेछे. ते कहेछे – कथंचित ज्ञानथी अन्यथा अत्माज्ञप्तिक्रिया स्वतत्रपणे करेछे माटे आत्मा जे छे तेज कर्त्ता छे, ए पहेलुं कर्त्तानामा कारक ज्ञप्तिक्रिया स्वतत्र आत्मानेविषे प्राप्यमाण छे, माटे तेज आत्मरूप कर्म छे, ए बीजुं कर्मनामा कारक जेणे करीने ज्ञानस्वभावथी तथा ज्ञप्तिस्वभावे आत्मा क्रिया करे छे, तेज आत्मरूप करण होवाथी आत्माज कर्त्ता छे एम जाणवु ए त्रीजुं करणनामा कारक जे स्वानुफलवेद्यने अर्थे आत्मा ज्ञप्तिक्रिया करेछे, तेज आत्मरूप संप्रदान छे, ए चोथुं संप्रदाननामा कारक जे पूर्वज्ञेयाकारने विश्लेषे उत्तरज्ञेयाकारमिश्रित ज्ञानस्वभाव आत्मा भजेछे, तेज आत्मस्वभावरूप अपादान छे ए पाचमुं अपादाननामा कारक तथा जे ज्ञानरूपगुणनुं भाजन जे आत्मानामे द्रव्य तेज आधार छे एम जाणवु, ए छहुं आधारनामा कारक कह्यु ए ज्ञान आश्री छ कारक कह्या, एमज सर्व बीजा धर्मो आश्री जाणी लेवु ॥ ५५६ ॥

ते पुण पनरस भेआ, तित्थातित्थाय सिद्धभेएणं ॥
तछ इथीणं सिद्धिं, ण खमइ खवणो अभिणिवेसी ॥ १५७ ॥

व्या० ते सिद्धना पदर भेद कह्याछे, यत तीर्थसिद्ध, अतीर्थसिद्ध, तीर्थंकरसिद्ध, अतीर्थंकरसिद्ध, स्वयंबुद्धिसिद्ध, प्रत्येकबुद्धिसिद्ध, बुद्धबोधितसिद्ध, स्त्रीलिंगसिद्ध, पुरुषलिंगसिद्ध, नपुसकलिंगसिद्ध, स्वलिंगसिद्ध, अन्यलिंगसिद्ध, गृहलिंगसिद्ध, एकसिद्ध, तथा अनेकसिद्ध हवे एनो अर्थ करेछे तीर्थ एटले जे चतुर्विध संघ, अथवा प्रथम गणधर उत्पन्न थया पछी जे सिद्ध थया ते तीर्थसिद्ध, तीर्थनी उत्प

त्ति थया पहेला अथवा तीर्थनो विछेद थया पछी जे सिद्ध थया ते अतीर्थसिद्ध, तीर्थंकरपदवी जोगवीने जे सिद्ध थया ते तीर्थंकरसिद्ध, सामान्य केवली छतां जे सिद्ध थया ते अतीर्थंकरसिद्ध, बाह्य कारण दीगाविना जे पोतेज जातिस्मरणा दिकथी प्रतिबोध पामीने सिद्ध थया ते स्वयंबुद्धिसिद्ध, प्रत्येक बाह्य कारण वृ षनादि देखी प्रतिबोध पामीने जे सिद्ध थयाछे ते प्रत्येकबुद्धिसिद्ध, बुद्धजे गुर्वादिकथकी बोध पामीने सिद्ध थया ते बुद्धबोधितसिद्ध स्त्रीलिंगना त्रण प्रकार छे. वेद, शरीरनिवृत्ति, तथा पथ्य, ए त्रणमां अत्रे शरीरनिवृत्तिनो अधि कार लेवो वेद तथा पथ्यनो अधिकार नथी केमके, ए बे प्रकार मोक्षना अंग नथी माटे शरीरेकरी वर्त्तमान छतां जे सिद्ध थया ते स्त्रीलिंगसिद्ध; पुरुष शरीरे करी वर्त्तमान छतां जे सिद्ध थया ते पुरुषलिंगसिद्ध, नपुसकलिंगे करी वर्त्तमान छता जे सिद्ध थया ते नपुंसकलिंगसिद्ध; रजोहरणादिकस्वलिंगनेविषे व्यवस्थि त छता जे सिद्ध थया ते स्वलिंगसिद्ध, परिव्राजकादिक चार अन्यलिंगनेविषे जे सिद्ध थया ते परलिंगसिद्ध, गृहस्थलिंगनेविषे वर्त्तमान छता जे सिद्ध थया ते गृ हस्थलिंगसिद्ध, जे एकला सिद्ध थया ते एकसिद्ध, अने जे अनेकनी साथे सिद्ध थाय ते अनेकसिद्ध कहेवायछे. ए पंदर जेदमाना स्त्रीलिंगसिद्धने अभिनिवेशने वश थया थका दिगंबरीओ मानता नथी ॥ १५७ ॥

तस्सम्मयथीसिद्धा, जे पुविं चेव खीणथीवेआ ॥
एवं पुरिस णपुंसा, थी पज्जाएण णो सिद्धी ॥१५८॥
चरणविरहेण हीण, तणेण पाव पयडीण बाहुल्ला ॥
मणपगरिसविरहाउ, संघयणाजावउ चेव ॥ १५९ ॥

व्या० ते दिगंबरीओनुं आवुं मत छे के, स्त्रीलिंगसिद्ध तो कहिये के जो पूर्वे स्त्रीवेदनो क्षय करी अने पछी बन्ने वेदनो क्षय करी सिद्ध थतां होय, तेमज न पुसकसिद्ध पण तो मानिये के जो प्रथम नपुसकवेदनो तथा पछी बन्ने वेदनो क्षय करी सिद्ध थता होय, शरीरे करितो पुरुषज सिद्ध थायछे; परन्तु स्त्रीना प र्याये करी सिद्धताने पमातु नथी केमके स्त्रीने चारित्र होतु नथी चारित्र जे छे ते शुद्धोपयोगरूप आचेलक्यमूलगुणमयछे, अने स्त्रीतो अचेलक थायज नही. त था पुरुष थकी स्त्रीहीन होवाथी पण तेने सिद्धतानो संजव नथी नपुसकत्व तथा स्त्रीत्व महापापे करीने अर्जायछे, एम पापप्रकृतिनी बाहुल्यताने लीधे पण स्त्रीने

मुक्ति थाय नही तथा जेम स्त्रीने सातमी नरक पृथवीए जवायोग्य तीव्र अशुन मनपरिणाम थता नथी, तेम मुक्ति पामवायोग्य तीव्र शुनमनपरिणाम पण स्त्रीने थता नथी. माटे स्त्री सिद्ध थायज नही अने सातमी नरकपृथ्विए स्त्रीथी जवातु नथी, माटे तेने वज्ररूपनजनाराच संघयण नही होवाथी पण स्त्रीने मुक्तिनो संनव नथी ॥ १५८ ॥ १५९ ॥

एवी दिगंबरीओनी युक्तिने ग्रंथकर्त्ता दूषण दियेछे –

तमिच्छा वेयखउ, सरीरणिवत्ति णियमणियउत्ति ॥
चरणविरहाइआ पुण, सवे तुह होइओ सिद्धा ॥ १६० ॥

व्या० दिगंबरीओ स्त्रीसिद्धादिकना प्रसिद्ध अर्थने मूकीने जे अन्य अर्थ करेछे ते संनवित नथी केमके, जेने स्त्रीवेदादिकनो पूर्वेज क्षय छे, एवा नपुसकादिक शरीरेकरी वर्त्तता श्रेणी करे तेनेविषे छे, माटे “ वीसणपुसगवेया ” इत्यादिक स्व शास्त्रवचन समर्थवाने अर्थे ए कल्पना केवल कदाग्रहरूप जणायछे, जो एम कहिये के, उदीर्ण वेदनोज पूर्वे क्षय करवो तो तेनेविषे पण शास्त्रोक्त व्यवस्था संनवे नही शास्त्रोमां तो एम कह्युछे के, जो पुरुष श्रेणिनो आरंन करे तो तेणे पूर्वे नपुसकवेदनो क्षय करवो, पछी स्त्रीवेदनो, पछी हास्यादिक छ प्रकृतिनो, अने पछी पुरुषवेदना त्रण खंम करी तेमाना बे खंमनो एकवार क्षय करवो, अने त्रीजो खंम संज्वलन क्रोध मान खपाववो जो स्त्रीए क्षपकश्रेणिनो आरंन करवो होय तो तेणे पूर्वे नपुसक वेदनो क्षय करवो, पछी पुरुष वेदनो, पछी हास्यादिक छ प्रकृतिनो अने छेवट स्त्रीवेदनो क्षय करवो जोये अने जो नपुसके क्षपकश्रेणीनो आरंन करवो होय तो तेणे पूर्वे स्त्रीवेदनो क्षय करवो, पछी पुरुषवेदनो, पछी हास्यादिक छ प्रकृतिनो, अने सरसेवटे नपुसकवेदनो क्षय करवो जोये इत्यादिक रीति जाणी लेवी ॥ १६० ॥

अ० स्त्रीलिंगे सिद्ध थवातु नथी, तेमां चारित्रविरहादिक जे हेतु कह्याछे, ते असिद्धछे, एम कहेछे –

णेगंति यमिछीण, डुछत्तं संजमो चिया लज्जा ॥
तासि चरित्तविरहे, चाउवणो कह संघो ॥ १६१ ॥

व्या० स्त्रीने चारित्र न होय तेमां कारण शु छे ? स्त्रीनेविषे जे दुःशीलादिक दोष होयछे ते एकांत नथी, केमके, परमशीलवान जे सुशीलसादिक श्राविकाउ थई छे ते

उनी भगवते पोते प्रशंसा करीछे वली स्त्री जेम केटलाएक पुरुष दुष्टछे तेम पण महारंभ महापरिग्रही देखायछे, माटे स्त्रीनुं दुष्टत्व कांई एकांते नथी जो कहेशो के. स्त्रीने लज्जा मटती नथी, माटे चारित्र थाय नही, एम पण न कहेवुं ; केमके, नग्नताज चारित्रांग नथी, विधिए करीने धर्मोपकरणोनुं धारण करतां चारित्रनो भंग थतो नथी जो कहेशो के, स्त्रीनुं शरीर हिंसायतन छे, माटे तेने हिंसा नथी, ए क हेवु पण असत्यपणानुं छे केमके, अशक्यपरिहारस्थलनेविषे हिंसा थाय नही प्रमा दना योगे हिंसा थाय छे, प्रमादनुं जे व्यपरोपण तेज हिंसा कहिये. वली जो स्त्रीने-चारित्र न मानिये तो चार प्रकारनो संघ केम संभवे? जो वेषधारिणी श्रा विकाज साध्वी कहिये तो चारित्र जाण्याविना जे वेषधारण करवुं ए तो मोटी विटंबना कहेवाय! जो कहेशो के, चारित्रलेश स्त्रीने थाय छे, तो तेमा अमे प ण ना कहेता नथी, पण जो कहेशो के, स्त्रीने चारित्र मोक्षनुं कारण थाय नही तो ते कदाग्रह मात्र जाणवुं. केमके, अध्यवसायविशेषेकरी पुरुषनी पठे स्त्रीने पण चारित्रनो उत्कर्ष होयछे, एमां कांई विरोधता नथी ॥ १६१ ॥

हीणत्तं पुण माणं, लद्धिनइड्ढि बलं च अहिगिच्च ॥
णो पडिकूलमसिद्धं, तिरियणसारम्मि संतम्मि ॥ १६२ ॥

व्या० स्त्रीने जे पुरुषथी हीनपणुं कह्युछे, ते जो विशिष्ट पूर्वज्ञाननी अपेक्षा ए कहिये तो ते प्रतिकूल नथी, किंतु अनुकूलज छे केमके, तथाविध ज्ञानविना पण गुरुपरतंत्रताए माषतुषादिक चारित्रना पालणार थयाछे. जो लब्धिनी अपे क्षाए कहिये तो पण प्रतिकूल नथी, किंतु अनुकूलज छे, केमके, तथाविध लब्धि विना पण मानुष्यादिक कृतकृत्य थयाछे, जो ऋद्धिनी अपेक्षाए कहिये तो पण प्रतिकूल नथी किंतु अनुकूलज छे अन्यथा तीर्थंकरादिकनी अपेक्षाए अमहर्द्धिक गणधरादिक छे, तेने मुक्तिनो संभव केम थाय? स्त्री पुरुषने अवद्य छे, माटे ते चारित्र ऋद्धिए करी हीन होवी जोये, एवी आशंका पण न करवी, अन्यथा शि ष्यादिक आचार्यादिकने अवद्य छे, तेपण चारित्रऋद्धिए करी हीन होवा जोये, जो बलनी अपेक्षा कहिये तो तेपण प्रतिकूल नथी, किंतु अनुकूलज छे, केमके, स्त्री करतां निर्बल जे पंगुप्रमुख ते पण अध्यवसायविशेषे मुक्ति पामेछे, जो कहेशो के, हीनबलने विशिष्टादिरूप चारित्र केम थाय! एमपण न कहेवु, केमके, चारि त्र ते यथाशक्ति आचरणारूप छे, माटे ते स्त्रीने पण संभवे छे, उक्तंच “ वादिवि

कुर्वणत्वादिलब्धिविरहे श्रुते कनीयसि च जिनकल्पमन पर्ययविरहेपि न सिद्ध विरहोस्ती " एएेकरी अनुपस्थाप्यपाराचितक प्रायचित्तना अनुपदेशथी स्त्रीने प ए हीनपणुंछे, ए असंबद्ध जाणवु, केमके, योग्यतानी अपेक्षाए शास्त्रनेविषे वि चित्रतपनो उपदेश छे उक्तंच " सवरनिर्जरारूपो बहुप्रकारस्तपोविधिशास्त्रे योगचिकित्साविधिरिव कंस्यापि कथंचिदुपकारीति " ॥ १६२ ॥

पावाणं पयडीणं थीणिवत्तीइ बंधजणणीणं ॥
सम्मत्तेणेव पए णो तासि पावबहुलत्तं ॥ १६३ ॥

व्या० स्त्रीने जे पापनी बाहुल्यता कहीछे, ते वचन पण मिथ्याछे, केमके, जे वारे स्त्रीपणुं बाध्युं छे, तेवारे यद्यपि बहुल पापप्रकृति मिथ्यात्वादिरूप ते छे, तथापि ते प्रकृति जेवारे तथाभव्यत्वने परिपाके सम्यक्त गुण पामीने क्षय करेछे तेवारे स्त्रीने पापनी बाहुल्यता नथी जहांसुधी स्त्रीशरीर होय, तहांसुधी जो तेना बंधकारण मिथ्यात्वादिक रहे तो स्त्रीए सम्यक्त पण न पाम्युं जोये जो कहेशो के, पुरुषथी तीव्र काम पण अध्यवसाय छे, माटे नपुंसकनी पठे स्त्री मुक्ति पामे नही, एम पण न कहेवु केमके, तीव्र काम पण अध्यवसाय विशेष पामे छे; माटे ते मुक्तिनेविषे विघ्नकारक नही होवाथी ए हेतु अप्रयोजक जाणवो अन्यथा स्त्री मुक्ति पामे. केमके, ते नपुंसकथी हीनकामछे, माटे तेने पुरुषनी पठे जाण वी ए हेतु पण अत्रे लागु थायछे ॥ १६३ ॥

णय तासि मण विरिच्चं असुह च सुहं विणेव उक्किट्टं ॥
तारिसणियमाभावा तेण हुत्तं चरमहेऊवि ॥ १६४ ॥

व्या० जो कहेशोके, जेम सातमी नरक पृथवीए जवायोग्य स्त्रीने अशुभ म नोवीर्य नथी, माटे तेने मुक्तिनेविषे जवानो पण तथाविध मनोवीर्य थाय नही. एम कहेवु नही. केमके, एवो नियम नथी, के, जेटलो अधोगति जवानो अध्यव साय थाय तेटलोज ऊर्ध्वगति जवानो अध्यवसाय थाय. केमके, भुजपरी सर्प बीजी पृथ्वीसुधी उत्कर्षथी अधोगतिए जायछे, पक्षी त्रीजी पृथवीसुधी जायछे चतुष्पद चोथी पृथवीसुधी जायछे. उरग पांचमी पृथ्वीसुधी जायछे स्त्री छठी नरक पृथ्वीसुधी जायछे, पुरुष अने मत्स्य सातमी नरक पृथ्वीसुधी जायछे, ए स्त्री तथा पुरुषविना बीजा पूर्वोक्त सर्वे प्राणीओ उत्कर्षथी सहस्रार आठमां देवलोकसुधी उर्ध्वगमन करेछे एवी रीते यद्यपि स्त्री सातमी नरक

पृथ्वीसुधी जती नथी, तथापि तेने मोक्षसुखनी प्राप्ति थायछे एमां कोई विरोध नथी. केटलाएक कहेछे के, अधोगतिने परमोत्कर्ष होयछे, ते एकांतलाथी संभवे नही. केमके, जेवी कारणनी उत्कर्षता होय, तेवीज कार्यनी उत्कर्षता कहेवा यछे; एवो नियमछे परतु एथी अन्य कोइ नियम नथी स्त्रीनेविषे जो युद्धादिक महारंभरूप कारणनो संभव होय, तो सातमी नरक पृथ्वीसुधी जवाय, तेवुं कोई कारण नही होवाने लीधे स्त्रीथकी त्यांसुधी जवातु नथी, किंतु छठीसुधीज जवायछे, अने पुरुष तथा मत्स्यनेविषे तेवां कारण होवाथी तेओथी सातमी नरक पृथ्वीसुधी जवायछे एवी रीते अधोगतिनेविषे जवासारु पुरुष अने स्त्रीना कारणोनी विलक्षणता होवाथी सरखु गमन थतु नथी. परतु ऊर्ध्वगतिनेविषे जवासारू बन्नेनां कारणो सरखां होवाथी सरखुं गमन थवानो अवश्य संभव छे जेम पुरुषनेविषे शीलादिक गुणरूप ऊर्ध्वगमनना कारण होयछे तेम स्त्रीनेविषे पण होयछे ए हेतुथीज स्त्रीने वज्रऋषभनाराचसंघयणनो संभव छे एम न मानवामा कोई युक्ति नथी ए प्रकारे स्त्रीना निर्वाणना निरोधनेविषे दिगबरीओना हेतुनो निषेध कर्यो, हवे स्त्रीनो निर्वाण थवामा अनुमान कहेछे —हरेक वस्तुना अनुमानमा पक्ष, साध्य, हेतु तथा दृष्टांत ए चार प्रकार होयछे. एटले ए चार पदार्थोए करी सिद्ध थएली वस्तुने अनुमित कहेछे, अने एचार पदार्थोए करी सिद्ध थवा योग्य वस्तने अनुमेय कहेछे जेम के, अग्नियुक्त पर्वत सिद्ध करवो होय, ते अनुमेय कहेवायछे, अने एज पक्ष कहेवायछे अनुमान करती वखते "पर्वतम्पक्षीकृत्य, वन्हिमत्वंसाध्यते, धूमत्वात् इतिहेतु, पाकगृहवत्, यत्रयत्रधूमः तत्रतत्र वन्हि" पर्वतनो पक्ष करीने तेने अग्नियुक्त सिद्ध करेछे, एमां हेतु पर्वतउपर नीकलतु धूमाडुं छे, जेम रसोई करवाना गृहमां अग्नि होवाथी धूमाडुं नीकलेछे, केमके, ज्यां ज्या धूमाडुं होय त्यां त्या अग्नि होयछे, ए दृष्टांत छे. तेम "काचित्स्त्रीव्यक्तिं पक्षीकृत्य, मोक्षाविकलकारणता साध्यते, दीक्षाधिकारत्वात्, पुरुषवत्, येये दीक्षाधिकारिण ते ते मोक्षाविकलकारिण." कोईएक स्त्रीनी व्यक्तीने पक्ष्य करीने तेने मोक्षना अविकलकारणवत्त सिद्ध करेछे; एमा दीक्षानो अधिकार हेतु छे, अने पुरुषजातिनी पठे ए दृष्टांत छे. केमके जे जे दीक्षानो अधिकारी होय ते ते मोक्षना अविकलकारणवत होयछे. ॥ १६४ ॥

कीवस्स कप्पिअस्स व इत्थीए कप्पिआइ सिद्धी वि ॥ ण
विणा विसिठ चरिअ तासि तु विसिठकम्मखउ ॥१६५॥
पावं तह इत्थित्तं णय पुण्णफलाण केवलीण हवे ॥ परमा
सुइभूआण णय परमोरालिउ देहो ॥ १६६ ॥

व्या० कोई आशंका करे के, जेम जातिनपुंसकने मुक्ति थाय नही, तेम स्त्रीने पण मुक्ति थती नथी एम छतां जो कहेशो के, जेम कृत्रिमनपुंसकने मुक्ति थायछे तेम विद्याप्रयोगादिकेकरी युक्त स्त्रीने मुक्ति थायछे; तो तेम पण न संभवे, के मके, स्त्रीने विशिष्टक्रियानुष्ठान होतुं नथी, विशिष्टक्रियानुष्ठानविना विशिष्टकर्मे नो क्षय थाय नही अने विशिष्ट कर्मनो क्षय थयाविना मुक्ति थती नथी. तथा स्त्रीपणुं जे छे ते पापप्रकृतिरूप नदीनुं जरणुं छे, ते पुण्यरूप सुरतरुना केवलज्ञा नरूपफलने सेवन करनारा केवलीनेविषे केम संभवे? अर्थात् पापप्रकृतिरूपस्त्री ने केवल ज्ञान संभवे नही तथा स्त्री परम अशुचि छे तेने परमोदारिक शरीर पण संभवे नही केवलीनुं शरीर तो परमोदारिक होयछे तेवुं तो स्त्रीनुं शरीर कहेवाय नही, माटे स्त्रीने केवल ज्ञान केम संभवे? ॥ १६५ ॥ १६६ ॥

अ० ए आशंकाने युक्तिवडे दूषित करेछे —

एथ मयुत्त जम्हा विचित्तभावा विचित्तकम्मखउ ॥ ण
य इत्थित्तं पाव जिणाण पाए ण्ण छित्ति ॥ १६७ ॥

व्या० स्त्रीने क्रियाविशिष्टविना विशिष्ट निर्जरा न थाय, एम जे वादिए कह्यु ते अयुक्त छे केमके, भावविशेषे फलविशेषछे क्रियाविशेषविना भावविशेष न थाय, एमा एकांतता नथी केमके, जो शक्तिनो निग्रह करीने क्रिया करिये तो ज भावनी हानि थायछे, अन्यथा भावनी हानि थती नथी तथास्त्री पणुं पा परूप छे, एमा पण एकांतता नथी, केमके, सम्यक्त्वना बलथी मिथ्यात्वादिक पाप नो क्षय थायछे एम पूर्वेकही आव्या छैये घणुंकरीने तीर्थंकरनेविषे स्त्रीपणुं न थी होतुं, एटले बहुधा स्त्री तीर्थंकर थती दीठामा आवती नथी तेथी स्त्रीपणुं पाप रूप छे एम जो कहिये तो विप्रत्वादिक पण तेवाज कहेवा जोये केमके, बहु धा तीर्थंकरनेविषे विप्रत्वादिकनो पण अभाव होयछे, अर्थात् घणुंकरीने क्षत्रि यादिक तीर्थंकर थएला दीठामा आवेछे तेथी शु विप्रादिकने मोक्षनो संभव न

। अने परमौदारिक शरीरनो तो पूर्वेज निषेध कस्योछे, माटे ते होय के न होय री शासारू चर्चा करवी ! ॥ १६७ ॥

इय इत्थीणं सिद्धी सिद्धा सिद्धंतमूलजुत्तीहिं ॥ ईअं
असद्दहंता चिक्कणकम्मा मुणेअवा ॥ १६८ ॥

व्या० एवी रीते सिद्धातमूलयुक्तिउंए करीने स्त्रीने मुक्ति थायछे एवुं सिद्ध कर्युं न छता जे हठेकरीने ए अर्थनी सद्दहणा करता नथी, ते चिकणा कर्मवाला णवा एवा प्रकारे स्त्रीनेविषे मुक्तिनी व्यवस्थापन कस्याथी सिद्धना पंदर भेदनी वस्था थई तेथी सप्रसंग सर्व सिद्धनुं स्वरूप कह्यु सिद्धस्वरूपना वर्णनथी परम ावाध्यात्मनुं निरूपण थयुं अने भावाध्यात्मना निरूपणथी ग्रंथार्थ पूर्ण थयो १६८

अ० हवे ग्रंथार्थनुं परम रहस्य कहेछे.–

इयं परमरहस्सं एसो अप्पकणगकसवट्टो ॥ एसा
य परा आणा संयमजोगेसु जो जत्तो ॥ १६९ ॥

व्या० संयमयोगनो जे उद्यम करवो, तेज सर्व शास्त्रना नयविस्तार जाणवानुं ल छे; अने एज परम रहस्यभूत छे. यत· "सवेसिं पिण याणं, बहुविहवत्तव णि सामित्ता, त सवणयविसुद्धं, ज चरणगुणठ्ठिउ साहू" इत्यावश्यकादौ तथा ाश्रवो भवहेतु स्यात् संवरो मोक्षकारणं; इतीयमार्हती मुष्टि,रन्यदस्याप्रपंचनम्, नो अर्थ – प्राणातिपातादिक जे आश्रव छे, ते संसारनुं कारणछे प्राणातिपा ादिकथकी विरमवारूप जे संवर ते मोक्षनुं कारण छे, ए परमार्थने विस्तारेकरी ाणवासारुज सर्व शास्त्र छे माटे जेणे ए अर्थ जाण्यो छे ते परमार्थताथी सर्व ास्त्रज्ञ छे एम जाणवु अतएव उपशम विवेक संवर ए पदनो अर्थ जाणीने चि ातीपुत्रे निजअर्थ साध्यो तथा संयमयोगनो जे उद्यम करवो तेज अध्यात्मरूप ोनानी कसोटी छे, जेम कसोटीए करी सोनानी परीक्षा थायछे, तेम क्रियानुष्ठाने री अध्यात्मनी परीक्षा थायछे. ते अध्यात्मेकरी जे विशुद्धि थायछे, ते बाह्यका णनुं आलस्य करे नही. यत "संयमयोगेसु सया, जे पुण सत्त विरिआ विसी ंति; कहते विसुद्धचरणा, बाहिरकरणालसा हुंति." इत्यावश्यके तथा एज श्री वीतरागनी परमआज्ञा छे के, संयमयोगनेविषे यत्न करवो जेणे ए यत्न क ्यो, तेणे चैत्य कुल गणादिक सर्वनुं कार्य कर्युं, एम जाणवु. यत. "चेइअ कुल ण सघे, आयरिआणं च पवयणसुए अ; सवेसु वि तेण कयं, तव संयमसुज्जमत्तो

अ० कोईक कहेछे के, ज्यां सुधी जीवने नव्यत्वनो संदेह होय त्यांसुधी चारि
विषे ते केम प्रवृत्ते ? केमके, अनव्य अनेक क्रियाकरे तेथी तेने कष्टमात्र थाय
तु परमार्थथी तेने कोई फलनी प्राप्ति थती नथी, एवुं समाधान करेछे –

आसन्नसिद्धिआणं जीवाणं लरकणं इम चेव ॥
तेण ए पवित्तिरोहो नवानवत्तसंकाए॥ १७० ॥

व्या० जे जीव थोडा नवे मुक्ति पामनार होय तेनुं एज लक्षणछे के, ते विष
विषे वैराग्य धारण करीने धर्ममां प्रवृत्ते यत "आसन्नकालनवसि,द्धिअस्स
वस्स लरकण इणमो, विसयसुहेसु ण रज्जइ, सव्वत्थामेण उज्जमई" इत्युपदेशमा
या माटे चारित्रनेविषें प्रवृत्ति थाय, त्यारे जीवे पोताने आसन्नसिद्धकपणुं जा
कहेवाय, पछी ते नव्यानव्यत्वनी शंकाएकरी शुनप्रवृत्तिनो बाधक केम थाय ?
तु साधकज थाय. अने हुं नव्यछुं के अनव्यछु ? एवी जेने शंका उत्पन्न थायछे,
जीव निश्चये करीने नव्यज जाणवो यत "अनव्यस्यहि नव्य नव्यत्वशंकाया
नावादित्याचारांगटीकायां." ए आशंका तो उलटी चारित्रप्रवृत्तिनो अंग छे,
टे तेथी काइ बाधा थती नथी ॥ १७० ॥

अ० केटलाएक परवादी एम कहेछे के, मोक्षोपायनेविषे प्रवृत्ति वैराग्यथीज
ायछे, ते वैराग्य अजुक्तनोगनेविषे लनवेछे, माटे नोगनोगव्या पछी तेनो त्याग
रीने जो योगमां प्रवृत्ति करिये तो ते सुखथी थई शकेछे, एम कहेनाराने शिक्षा
अर्थे कहेछे –

जो पुण नोए नोत्तुं इछोइ ततो अ संयमं काउ ॥ ज
लणम्मि पजलित्ता इछइ पछा सणिजाउ ॥ १७१ ॥

व्या० जे पुरुष नोग नागवीने पछी संयम पालवानी इछा करेछे, ते इछा प्र
म अग्निमां पमी बलीने पछी शीतलता पामवानी पठे छे केमके, नोग नोग
ाथी तेनी इछा मटती नथी, किंतु अधिक थायछे यत "नजातु काम का
ाना, मुपनोगेन शाम्यति, हविषा कृष्णवर्त्मेव, पुनरेव प्रवर्द्धते" जे सुख जी
नोगवेछे, ते सुख यद्यपि अनंतवार नोगवाई गया छे, तथापि मोहनीयक
ाना दोषने लीधे एम नासेछे के, मे ए सुख पूर्वे कोई समयनेविषे नोगव्या नथी
त "पत्ता य कामनोगा, कालमणंतं इह स उवनोगो, अपुव्वं पिव मन्नई, त
ुविय जीवो मणे सुरकं" इत्युपदेशमालायां. ॥ १७१ ॥

० वली जोगनेविषे प्रवृत्ति करवां एवो ...
ाय ; ते योग्य छे. केमके, जोग स्थिर नथी किंतु ...
ावतां आयुष्यनो अंत आवी जाय तो ...
जोगववानेविषे प्रवृत्ति थतां ...
ममात्र संशय नथी. माटे जे ... ते ...
नी अजिलाषा करता नथी. ...

कोवा जिअवीसासो विहुअया ...

सजो णिरुज्जमो जइ जगजिउ ...

ा० हे जीव, तने जीवितव्यनो जो विश्वास ...
ले फात्कार कृणजगुर छे. ...
, तेम जीवितव्य ...
वीजी कृणमा नाश थतां ...
सुधी जो तु धर्मकार्य करीश तो ...
० कोई कहेशे के, जो जीव ...
थएलो होय ते चारित्र ...

देहवल जइ ण ...

तिसिउ पत्ताजावे ...

ा० जो रोगादिक ...
रीने योग धारण करवो ...
वानुं पात्र न होय ...
याविध ...
योगमार्गनेविषे ...
० जे पुरुष ...
र नरोमां ...

...

ुसा
ा वेष
अजीव
ाहदाण
ा पण ते
रइआणं,
थतां गृही
मेलव्याविं
प्राप्ति न थ
ाय. तेना क
७७ ॥
ण प
७८ ॥
ानेविषेज अव
ाय, तेणे सर्व प
अ० एक आत्म
ाहेवे.
अन्नो
७९ ॥
त्य होयछे, प
ने महाफलदाई
प्रथम पोताना
जाने प्रतिबोध
ावु. ॥ १७९॥
ापणुंज सारुं छे,
कहेछे

व्या० जे पुरुष एवी शोचना करे के, हमणा मारामां बल नथी, माटे आगल धर्माचरण करीश अथवा हमणा मारो अवसर नथी, माटे आगल जतां धर्माचरण करीश. एम जाणीने आलस करी बेशी रहे ते अकृतपुण्य थका आगल घणी प्रार्थना कस्याथी पण पुण्यविना सुखने पामे नही, त्यारे घणो शोच करेछे जेम कोइ निर्धन पुरुष प्रथम आलस करीने धन अर्जवानो उद्यमन करे ने पछी गली इच्छा करीने धनविना दुःखने पामेछे त्यारे पोताना आत्मानेविषे घणोज शोच करेछे माटे प्राप्त थएलो धर्म मूकीने आगल धर्मप्रार्थना करीये तो गली प्रार्थना कहेवाय. यत "लद्धिल्लिअ च बोहिं, अकिरतो णागयगपछितो, आणदाइं बोहिं, लझसि कयरेण मुल्लेण" ॥ १७४ ॥ १७५ ॥ अ० कोई कहेशे के, पापनी निंदायीज पाप टलेछे, त्यारे विशेष अनुष्टान करवानुं कारण शुं? एविषे कहेछे —

जो पाव गरहतो तं चेव णिसेवए पुणो पावं ॥ तस्स
गरहा वि मिछा अतहकारो हि मिछत्तं ॥ १७६ ॥

व्या० जे पाप करी मिछामि डुक्कडं दईने फरी पाप करे तेनी पापनिंदा मिथ्या छे केमके, जेवु बोलिए तेवुं जो पालिए नही तो तेज मिथ्यात्व छे यत "जो जह वायण कुणई, मिछदिठी तउहुको अन्नो, वहुइ अमिछत्तं, परस्स संकं जणे माणे" इत्युपदेशमालायां हवे मिछामि डुक्कड ए शब्दनो अर्थ कहेछे —मि कहेता कायाथी तथा नावथी मृडु थइ, छा कहेता असंयमरूप दोषनु अछादन करीने, मि कहेता चारित्रनी मर्यादामा रह्यो थको, डु कहेता डुकृत कार्यनो करनार जे आत्मा तेने हुं निंदुं, क कहेता मे जे पाप कस्याछे, तेनुं ड कहेता उपशम पामीने उल्लंघन करुंछु एवो अर्थ जाणीने मिछामि डुक्कडं दीधा पछी फरी पाप न करवु, ते पापनी साची निंदा कहेवायछे. तेम न करता पछी जे पाप करवु तेथी तो उलटुं माया मृषावादादि पाप लागेछे यत "ज डुक्कडंति मिछा । त चेव णिसेवए पुणो पाव, पच्चरकमुसावाई, मायानिवडी पसगोअ" इति ॥ १७६ ॥

अ० ए कारण माटे चारित्र लईने जो ते सारा नावथी पालिए तोज तेथी महाफलनी प्राप्ति थायछे, अन्यथा आजीविकाने अर्थे चारित्र लीधा करता गृहस्थधर्मज सारो छे एम कहेछे

चुअधम्माउ मुणिणो सुठुअरं किर सुसावगत्त पि ॥ प
डिअ पि फलं सेय तरुपडणाउ णचंपि ॥ १७७ ॥

व्या० वेषधारी चारित्ररहित जे सु श्रावक छे, ते अरिहंतनी पूजा करे, सुसाधुनी सेवा करे, ब्रह्मचारीपणुं पाळे, इत्यादिक धर्माचरण करेछे, अने जे चारित्र वेषधारी होय ते गृही धर्म तथा यतिधर्म ए बन्नेथी भ्रष्ट थायछे उक्तंच "छज्जीवणिकायदया, विवज्जिउणेव दिक्खिउ ण गिही, जइधम्माउ चुक्को, चुक्कइ गिहदाणधम्माउ, इत्युपदेशमालायां वेषधारी चारित्रियाने मूलगुणविना तपथी पण तेवु फल थतुं नथी. उक्तंच "महव्वय अणुव्वयाइ, छडेउं जो तव चरइअण्णं, सो अन्नाणी मूढो, नावाबुड्डो मुणेअव्वो." माटे केवल वेषधारी करतां गृहीधर्म सारो छे. दृष्टांत – फलनी अभिलाषाथी वृक्ष उपर चढी, फल मेलव्याविना पडी न जतां ते फल मेलवाई शकाय तो सारुं, पण जो फलनी प्राप्ति न थतां नीचे पडी जवाय तो उलटुं शरीरने लागे तेथी दुःखनी प्राप्ति थाय तेना करतां वृक्षनी नीचे बेसीनेज पडेलुं फल ग्रहण करिये ते सारुं ॥ १७७ ॥

संयमयोगे अप्पु, छिअस्स संचत्तवज्झजोगस्स ॥ ए प
रेण किंचि कज्जं आयसहावेण चिठस्स ॥ १७८ ॥

व्या० संयमना योगे जे आनंद थायछे ते केवल आत्मस्वभावनेविषेज अवस्थित छे तेने परनुं शुं काम छे ! माटे जेने चारित्त परिणम्युं होय, तेणे सर्व परप्रतिबंध मूकीने आत्मद्रव्यमात्रना प्रतिबंधे प्रवर्तवुं ॥ १७८ ॥ अ० एक आत्मद्रव्यमात्रनेविषे प्रवर्त्याथी बीजाने उपदेश केम देवाशे, एविषे कहेछे.

संविग्गो गीयत्थो बोहेउ परंपराइ करुणाए ॥ अन्नो
पुण तुसणीउ पुव बोहेउ अप्पाणं ॥ १७९ ॥

व्या० जे महानुभावी संवेगी गीतार्थ होयछे, ते पोते तो कृतकृत्य होयछे, परतु बीजानी उपर परम करुणाए करीने तेने प्रतिबोध करे तो तेथीते महाफलदाई छे. परतु जे एवो न होय तेणे बीजाने उपदेश करवानुं मांकीवालीने प्रथम पोताना आत्मानेज बोध करवो जोयेछे. जे पोते प्रतिबोध पाम्या विना बीजाने प्रतिबोध करेछे ते केवल नाटकीआनी पठे नाटक करी देखाडनारोछे एम जाणवुं. ॥ १७९॥

अ० एवी रीते ज्यारे परप्रतिबंध सारो नथी, किंतु एकाकीपणुंज सारुं छे, माटे गछ पण प्रतिबंधरूपज छे, एम जे जाणेछे तेनो संदेह मटाडवाने अर्थे कहेछे

दव्वेण जो अणेगो गछे सो भावउ हवे एगो ॥ एगागी
गीउच्चिय कयाइ दव्वेअ भावेअ ॥ १८० ॥

व्या० गछमां छतां इव्यथी जे अनेकता थायछे, तेज नावथी एकता थायछे अन्यथा गुर्वाज्ञादिक अंकुशविना चित्तरूप हस्ति संसाररूप वनमां फरतां एकत्व नावनारूप वेलीनुं उन्मूलन करी नाखे. अतएव नगवते "एकस्स अत्थि धम्मो" इत्यादिक प्रबंधे करी एकाकी विहारनो निषेध कर्योछे श्रीदशवैकालिक सूत्रनेविषे पण आम कह्युछे "नया लनिज्जा निउण सयाय गुणाहि अं वा गुणउं समंवा, इक्कोवि पावाइ विवज्जयंतो, विहरेज्ज कामेसु असज्जमाणो आ गाथामा आम कह्युछे के, ज्यारे पोतायकी अधिक गुणवालो अथवा समान गुणवालो मले नही, त्यारे एकाकी विहार करवो, ते गीतार्थ आश्री जाणवुं केमके, ते पापने वर्जीने कामनेविषे असग करेछे माटे तेने एम कह्युछे. अने अगीतार्थ तो गीतार्थनी निश्राविना पाप वर्जी शके नही तेम कामासंगपण वाली शके नही. अतएव "गीयत्थो अ विहारो, बीउ गीयत्थ मीसिउ नणिउ॥ इत्तो तइय विहारो, नाणुन्नाउं जिणवरेहिं" ए गाथामा खुलीरीते अगीतार्थने एकाकी विहारनो निषेध कर्योछे माटे गछमा रही, गुरुकुलवास सेवी, श्रुतादिकनो अन्यास करी, अने साधुसग छता पण अतरग निर्लेप रहीने जो अध्यात्मनावना नाविये तो परमानदनी प्राप्ति थायछे ॥ १७० ॥

कि बहुणा इह जह जह रागद्दोसा लहु विलज्जंति ॥ त
ह तह पयट्टिअव्वं एसा आणा जिणदाणं ॥ १७१ ॥

व्या० घणु शु कहिये, जेजे प्रकारे रागद्वेप विलय थाय तेवी रीते प्रवर्तवु. एज श्रीवीतरागदेवनी आज्ञा छे ॥ १७१ ॥

अज्झप्पमयपरिक्खा एसा जुत्तीहि पूरिया जुत्ता॥ सोहि
तु पसायपरा तं गीयत्था विसेस विऊ ॥ १७२ ॥

व्या० आ अध्यात्ममतपरिक्षा युक्तिएकरी पूरी कीधी, तद्रूप जे आ ग्रंथ छे, तेनुं विशेपज्ञ जेगीतार्थ छे ते मजउपर कृपा करीने शोधन करो ए विज्ञापनाछे १७२

शार्दूलविक्रीडित वृत्तं ॥ यस्यासन् गुरवोऽत्र जीतवीजयप्राज्ञा प्रकृष्टाशया भ्राजते सनयानयादि विजयप्राज्ञाश्च विद्याप्रदा ॥ प्रेम्णा यस्यच सद्म पद्म विजयो जात. सुधी सोदर सोय तत्वमिद यशोविजयइत्याख्याभृदाख्यातवान्॥ १ ॥

इति पंडित यशोविजयजी उपाध्यायकृत श्री अध्यात्ममतपरीक्षाग्रंथो बालावबोधसहित समाप्त

ॐ श्रीजिनायनम

अथ श्रीसमयसार नाटक बनारसीदास कृत गुजराती भाषामां अर्थ सहित प्रारंभः

उपोद्घात.

आ ग्रंथनी दिगंबरी बनारसीदासे शुद्ध हिंदुस्थानी भाषामां पद्यात्मक ग्रंथरूप रचना करीछे. ए ग्रंथकर्त्ता पोते महापंडित तथा कवीश्वर होवाथी विविध प्रकारनी छंदरचना करीने तेणे पोतानी श्रेष्ट कृति देखाडी आपीछे पदलालित्यता तथा अर्थ गौरवतादिक जे काव्यना सारा गुण वर्णन कर्याछे, ते आ ग्रंथनी कवितामां सारी रीते दीठामां आवेछे अलंकारवडे कविता सारीरीते भूपित करीछे. आ ग्रथ अध्यात्मिक विषयवालो होवाथी आमां मात्र शांत रसज मुख्यछे पण प्रसंगानुसारे बाकीना रस पण क्वचित दीठामा आवेछे. जोपण आ ग्रंथ उपर कह्या प्रमाणे नन्हवादिकमां गणायला दिगंबरीनो रचेलोछे, तोपण एनो विषय आध्यात्मिक होवाथी ते सर्वने उपयोगीछे, माटे आ पुस्तकमा अमे नाख्योछे. ए ग्रथनी व्याख्या कोई रूपचंदजी नामना पंडिते करीछे, ते पण हिंदुस्थानी भाषामां होवाथी सर्व जनने समज्यामा आवे नही, माटे तेनो आश्रय लईने अमे गुजराती भाषामा व्याख्या करी छे व्याख्या करताए आदिमां मंगलाचरणनो दोहरो कर्योछे ते आप्रमाणे –

दोहा – श्रीजिन वचन समुद्रको, कौलगि होइ बखान; रूपचंद तौहू लिखैं, अपनी मति अनुमान. ॥ १ ॥

अर्थ – व्याख्याकर्त्ता रूपचंदजी कहेछे के, श्री जिनवचनरूप समुद्रनो कहांशुधी व्याख्यान थाय, तोपण हुं मारी मतीने अनुमाने लखी जणावुं ॥ १ ॥

हवे ग्रंथकर्त्ता आरंभमां मंगलाचरणरूप श्रीपार्श्वनाथ स्वामीनी स्तुति करेछे.

कवित्त, इकतीसासर्व ह्स्वाक्षर – करम भरम जग तिमिर हरन खग, उरग लखन पग शिव मग दरसि, निरखत नयन भविक जल बरखत, हरखत अमितभविक जन सरसि; मदन कदन जित परम धरम हित, सुमिरत भगत भग

तसव मरसि, सजल जलद तन मुकुट सपत फन, कमठ दलन जिन नमत बनरसि ॥ १ ॥

अर्थ — जगतमां जे आठ कर्मरूप तिमिर एटले अंधकारछे तेनुं हरण करवाने खग एटले सूर्यरूप छे जेना चरणनेविषे सर्पनुं चिन्ह छे. जे मोक्षना मार्गने देखाडनारा छे जेनेनेत्रे करी निरखता कल्याणरूप जल वर्षेछे, तेणे करी अमित के० प्रमाणविना जव्यलोकरूप सरोवर महा हर्षने पामेछे जेमाटे कामदेवना क्षय करनार छे, अने जेनुं उत्कृष्ट सहज सुखरूप धर्मने अर्थे जक्तजन स्मरण करी रह्याछे तेथी तेनुं सव दरसिके० सात जयरूप जे शीत छे, ते नाशी जायछे. जेनुं शरीर जलसहित मेघना जेवुं नीलवर्ण छे जेना मुकुटनेविषे सात फण छे जेणे कमठ नामे असुरनुं मान जजन कर्युछे एवा जिनके० श्रीपार्श्वनाथ जगवान, तेने बनारसीदास नमस्कार करेछे ॥ १ ॥

फरीथी विशेषे श्री पार्श्वनाथ स्वामीनी स्तुति करेछे.

सर्व लघु स्वरात अक्षर युक्त छप्पय छंद एने चित्रकाव्य पण कहेछे — सकल करम खल दलन, कमठ सठ पवन कनक नग, धवल परम पद रमन, जगत जन अमल कमल खग, पर मत जलधर पवन, सजल घन सम तन समकर, पर अघ रज हर जलद, सकल जन नत जव जय हर, यम दलन नरक पद छय करन, अगम अतट जव जल तरन, वर सबल मदन वन हर दहन, जय जय परम अजय करन ॥ २ ॥

अर्थ — सर्व कर्मरूप खलके० दुष्ट वैरीने दलवा वाला छो कमठ नामना महा मूर्ख असुर तेरूप पवन आगल मेरु पर्वतनी परे अमग छो धवलके० निर्मल सिद्ध स्थानकनेविषे रमनारा छो जगतना लोकोरूपी उज्वल कमलने विकस्वर करवानेअर्थे खगके० सूर्य जेवा छो एकात नय वादी जे पर मत, तेरूप मेघने मटाडवाने अर्थे पवनना जेवा छो जल सहित मेघ घटाना जेवो स्याम जेनो शरीर छे समकरके० उपशमना करनार छो परके० शत्रुरूप अगके० पाप रजने हरण करवाने मेघ जेवा छो जेने सकल लोक नमे छे, अर्थात् त्रिभुवन पूज्य छो जन्म मरणरूप जे जव जय तेने हरण करनार छो लोकोना मृत्युने दलवावाला छो जव्य प्राणीओने नरक पदना क्षय करनार छो अगम एटले अथाह अने अतटके० अपार एवो जे ससाररूप समुद्र तेने तरवावाला छो सर्व दोषोमा वरके० प्रधान अने बलवान जे कंदर्पवन, तेने बालवाने हरके० रुद्रना

नेत्रनी अग्नि जेवा हे नगवान तमे जयवंता थाओ. वली तमे परम अनय पद ना करनार ठो, एटले नय-नंजन ठो ॥ १ ॥ आ ठप्पय ठंद वडे परमेश्वरनी महिमानुं वर्णन कर्युं. अने पोतानु काव्य चातुर्य दर्शाव्युं ठे.

आ ग्रंथना कर्त्ता बनारसीदास कहेठे के जेना प्रसादथी परगसेन पिताने घेर मारुं जन्म थयु एवो हुं श्री पार्श्वनाथ नगवाननी स्तुति करुंछुं.

सवैया इकतीसा — जिन्हके वचन उर धारत जुगल नाग, नये धरनिंद पद मावति पलकमें, जाके नाम महिमासो कुधातु कनक करै, पारस पाषान नामी नयो है खलकमें, जिनकी जनमपुरी नामके प्रनाव हम, अपनो स्वरूप लख्यो नानसो नलकमें; तेई प्रनु पारस महारसके दाता अब, दीजे मोहि साता दृग लीलाके ललकमें ॥ २ ॥

अर्थ:— ज्यारे श्री पार्श्वनाथ नगवाननी कुमारावस्थाहती त्यारे कोई एक समये श्री बनारसी नगरीविषे एक तापसीनी साथे अज्ञानतपश्चर्यानी निर्नर्त्सना पूर्वक वाद थयो, ते प्रसंगे ते तापसीनी धूणीमाना लाकडामा नाग ठे एवी रीते श्री पार्श्वनाथ नगवाने कह्यु, ते वातने पेला तापसीए गणकारी नही, तेथी ते लाकडांफोमीने ते नागने बाहेर कहाड्यो पण ते अधबल्यो थयो हतो तेथी तमफडवा लाग्यो, तेना अंतना समयमा श्री पार्श्वनाथ नगवाने तेने "ॐ असीआ उसाय नमः" ए मंत्र संनलाव्यो. ते वचन तेणे सारी रीते हृदयमां धारी लीधुं एटलामा तेना शरीरनी शांति थई गई तेना अंतना सारा परिणामोने लीधे ते धरणेंद्र थयो तेनी स्त्री पद्मावती हती, ए कथा श्री पार्श्वनाथ चरित्रमा प्रसिद्ध ठे ते अद्भुत महिमाने दर्शावतां ठतां ग्रंथकर्त्ता उपमा लकारवडे पारसमणि अने श्री पार्श्वनाथना ए गुणनी सादृश्यता देखाडेठे.—

जेना वचन हृदयनेविषे धारण करीने नाग अने नागणी ए बन्ने पलकमा धरणेंद्र अने पद्मावतीरूपे थया. आंही नाग अने नागणी कहेवाथी दिगंबरीनुं मत जाणवुं श्वेतांबरी तो एक नाग नेज कहेठे वली पार्श्वपाखान खलक एटले डुनियामा प्रसिद्ध ठे एटले पारश मणी नामना पाषाणनुं स्पर्श थतांज लोखंड नामनी कुधातुं सोनुं थायठे. तो ए पाखाणमां एवी महिमां किहाथी उत्पन्न थई? तेनु उत्तर कहेठे:-- पार्श्व एवु नाम श्री पार्श्वनाथने तुल्य ठे. तेनी महिमा थकी एटले मात्र पार्श्व एवु नाम ठे ते नामनीज महिमाथकी ते पार्श्वरूप पाखाणमा एवो गुण थयोठे वली जेनी जन्म पुरीनुं नाम बनारसी नगरी ठे, अने ग्रंथकर्त्ता कहे

छे के, मारुं नाम पण बनारसी हुं पाम्यो ते मात्र नामना प्रभावथी में मारुं आत्मस्वरूप जाणी लीधुं ते केवी रीतें जेम प्रभात समयमां सूर्य पोताना रूपने झलकमां स्वच्छ प्रकाशे छे, तेनीपरे मारुं रूप पण प्रकाशी रह्यु छे ए पण श्री पार्श्वनाथ भगवाननी महिमानो प्रताप छे. तेज श्री पार्श्वनाथ भगवान महा शात रसने देवावाला छे, ते हवे दग लीलाकी ललकमेके० आंख मीचीने उघाडीए अर्थात् एक पलक मात्रनी सत्तामा मुजने आत्म समाधिरूप शाता आपो एथी निवृत्ति सुखनी सूचना करी छे. ॥ ३ ॥

सिद्ध भगवाननी स्तुति करेछे.—

अडिल्ल छंद —अविनाशी अविकार, परम रसधाम है, समाधान सरवग, सहज अभिरामहै, शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध अनादि अनंत है, जगत शिरोमनि सिद्ध सदा जयवत है ॥ ४ ॥

अर्थ·— जेनोविनाश नथी, अने जेने कोई विकार लागे नही एवो परम रस एटले कोई केवलीगम्य जे सहजानद उत्कृष्ट सांतरस, तेना जे धाम एटले घर छे, माटे सरवगने विषे सहजनी जे अनंत सुखरूप समाधी तेणेकरी जे अभिराम एटले अति मनोज्ञछे चौदराजलोकनी उपर विराजमान होवाथी सर्व दोषथी रहित शुद्धछे सर्वज्ञता पाम्याथी बुद्ध छे अने सर्वना ईश्वर माटे अविरोधछे, एहवी अवस्थाए करी ते अनादि अनंत छे अने चउद राजलोकना उपर बिराजमान छे तेथी जगतना शिरोमणि छे एवा जे श्रीसिद्ध भगवान ते सदासर्वदा जयवत थाओ ॥ ४ ॥

साधुरूप भगवाननी स्तुति करेछे —

सवैया इकतिसा —ज्ञानके उजागर सहज सुख सागर सुगुण रतनागर वैराग रस भर्यो है, सरनकी रीत हरै मरनको भै न करै करनसों पीठ दे चरण अनुसर्यो है, धरमको मडन भरमको विहंडन जु, परम नरम व्हे के करमसों लर्यो हैं, ऐसो मुनिराज भुअ लोकमें विराजमान निरखि बनारसी नमसकार कर्यो है ॥५॥

अर्थ — जे ज्ञानना उद्योत करनार छे. आत्मद्रव्यनु जे सहजसुख तेना जे समुद्र छे अने सुगुनजे ज्ञान, दर्शन अने चारित्ररूप रत्नत्रयीनी आकर एटले जे खाण छे पांच इंद्रियोना विषयनेविषे जे वैराग्य ते रूप रसेकरी जे परिपूर्ण थयाछे. कोई परिसह आवीने प्राप्तथयाथी गृहस्थनीपरे शरणनी रीति राखे नही आत्माने शाश्वतद्रव्य जाणीने जेणे मरणनो भयमुकी दीधो छे. पाच इंद्रियोने

पूठ आपी तेना विषयोथी विमुख थयाथकी जे चारित्रने अनुसऱ्या छे, वली जेनो आश्रय लेवाथी धर्मपदार्थ बिराजमान थाय माटे धर्मना मंमन करनाराछे. मिथ्यामतिरूप जे नरम तेनुं विशेषेकरीने जे खंमन करनारा छे, जे परम दयावान थईने कर्मोनीसाथे युद्ध करेछे. दयावानने युद्धकरवुं संजवे नही तेम छतां कह्यु ते माटे विरोधालंकार जाणी लेवो. एवी विशेषताने लीधे जे मुनिराज एटले ऋषीश्वर जुअलोकमा पिसतालीश लाख मनुष्य क्षेत्रनेविषे विराजमान छे तेने हृदय कमलथी जोईने बनारसीदास नमस्कार करेछे ॥ ५ ॥

हवे पाच अनुव्रत लीधा छे जेमणे एवा समकितीनी स्तुति करेछे.

सवैया तेईसा -- नेद विज्ञान जग्यो जिनके घट, शीतल चित्त नयो जिम चंदन; केलि करै शिव मारगमे जगमांहि जिनेश्वरके लघु नंदन, सत्य स्वरूप सदा जिन्हके प्रगटयो अवदात मिथ्यात निकंदन, संत दशा तिन्हके पहिचान करै कर जोरि बनारसि बंदन. ॥ ६ ॥

अर्थः-- जे मंदबुद्धि छे ते जीव अने शरीरने एक करी जाणेछे, नेद जाणता नथी पण जेणे समकित पाम्यो छे, तेना हृदयमा जड अने चेतननुं निन्न निन्न ज्ञान थयुं छे, एवु तेने नेदविज्ञान जागृत थयो, तेथी तेनुं चित्त चंदननी पठे शीतल थयु छे. जे मुक्ति मारगमां केलि करे एटले खेल करी रह्या छे, आ जगतमां श्री जिनेश्वरना जे न्हाना पुत्रछे अने साधुजे छे ते सर्वज्ञपुत्र कहेवायछे माटे ते मोटा पुत्र छे वली आत्मा सदा निश्चयेकरी सत्यरूपमांज छे, पण मिथ्यातवडे मलिन थईरह्योछे. ते फरी सत्यस्वरूप जेनुं निर्मल प्रगटताने पाम्युंछे, अने मिथ्यात्वनुं निकंदन थयुछे, एटले मिथ्यात्व रह्यु नथी चार अनंतानुबंधीनी जड तुटी गईछे. एवी तेमनी शुद्धदशा उलखीने बनारसीदास बन्ने हाथजोडी वदना करेछे ए सवैयामां सम्यक्तनी दृढता बतावीछे. ॥ ६ ॥

पूर्ण सम्यक्तता दर्शाववानेअर्थे फरी तेनीज स्तुति करेछे.

सवैया इकतीसा --स्वारथके साचे परमारथके साचे चित्त साचे साचे बैन कहै साचे जैनमती हैं, काहूके विरोधी नांहि परजायबुद्धि नांहि, आतम गवेषी न ग्रहस्थहै न यती है, सिद्धि रिद्धि वृद्धि दीसै घटमें प्रगट सदा, अंतरकी लक्ष्सों अजाची लक्ष्पती है, दास नगवतके उदास रहै जगतसों, सुखिया सदीव ऐसे जीव समकिती हैं ॥७॥

अर्थ -- जेनी स्वार्थ एटले आत्मा पदार्थनेविषे साची प्रतीति छे. तथा परमार्थ ते मोक्ष पदार्थनेविषे साची प्रतीति छे. जेनुं चित्त निर्मल छे जे सत्यवचनना बोल

नारा छे जे साचा जिनमतने ग्रहण करी रह्याछे. जेनुं मन कल्पना करतु नथी. केम के, ते साते नयनुं शुद्धस्वरूप जाणेछे तेथी कोईना दर्शनना विरोधी नथी जेम बौध मतानुसारी पर्याय बुद्धिवाला छे पण द्रव्य बुद्धिवाला नथी. तेथी जीवने क्षणभंगुर मानेछे तेम समकितीपर्याय बुद्धिवत नथी पण आत्मद्रव्यनी गवेषना करनार छे तेथी तेने पर वस्तुमां मोह नथी माटे गृहस्थ पण नथी अने महा व्रत लीधा नथी, तेथी यति पण नथी पोताना घटनेविषे शुद्ध आत्म द्रव्यने सिद्धसमानज जुएछे तेथी घटमाज प्रगट सिद्धि देखेछे अने ज्ञान दर्शन चारित्ररूप रिद्धिनी वृद्धि जेना घटमां सदा प्रगट देखायछे जे अतर परमात्मा देव छे तेनुं जेने लक्ष थयु छे, तेथी अयाची एटले कोईनी पासे काई मागे नही एवा लक्षपति छे वळीजे ए पूर्वोक्त प्रकारना प्रगट स्वरूपने पामेला श्री वीतराग भगवतने पामीने तेना दास थयाछे, अने जगतथी उदास रहेछे. जे आर्त्त अने रौद्र ए बे ध्यानथी विमुख थयाछे, तेथी सदीव सुखनी सन्मुख थयाछे, एवा समकिती जीव महा सुखमयी छे ॥७॥

फरी पोताना उल्लासथी समकितीनी स्तुति करेछे –

सवैया इकतीसा – जाके घट प्रगट विवेक गनधरकोसो, हिरदे हरख महा मोहको हरतु है, साचो सुख मानै निज महिमा अमोल जानै,अपुहीमे आपनो सुभावले धरतु है जैसे जल कर्दम कतक फल भिन्न करै, तैसे जीव अजीव विलछन करतु है, आतम सगति साधै ज्ञानको उदौ आराधै, सोई समकिती भवसागर तरतु है ॥ ८॥

अर्थ – एवी रीते "उप्पनेवा, विगमेवा, धूवेवा," ए त्रण पद सांभळीने गणधरना हृदयमां प्रगट विवेक उत्पन्न थायछे, अने अर्थनेविषे कोई संदेह रहे नहीं. तेवी रीतेज समकितीना घटमां विवेक प्रगट थयोछे, तेणेकरी स्वस्थ थई पोताना हृदयमा आनंदने पामी महा मोहने हरण करेछे पोतानुं मिथ्यात दूर करीने सम्यक्त करेछे हवे सम्यक्तनी व्यवस्था कहेछे – जे विषय सुख छे ते तो अनित्य छे, माटे जूठा छे, अने सहज समाधि सुख जे छे ते शाश्वता छे तेथी ते सुखनेज साचु मानेछे अने पोतानी ज्ञातारूप महिमा अमोल जाणेछे तथा ज्ञान दर्शन अने चारित्र जे छे ते पोतानो स्वभाव छे, तेने पोतामांज धारेछे पहेला जीव मिथ्यात्वदशामा जीव अने शरीरने एक करी जाणतो हतो, अने हमणा जीव अने अजीवने भिन्नभिन्न लक्षणे करी जाणेछे जेम पाणी अने चीकळ एकठा थईगया होय, तेने कतकफलनिर्मळीनुं चूर्ण नाखवाथी पाणी तथा कादवने ते रेणु भिन्नभिन्न करी नाखेछे, तेम जीव अने अजीवने जुदो जुदो ल

खेछे. चारित्रमां आत्मानी शक्तिने साधे, अने मतिज्ञान तथा श्रुतज्ञाननो उदय थवानी इछा करेछे. मतिअज्ञान तथा श्रुतअज्ञानने गमावी दियेछे. ते समकिती जीव जवसमुद्रनो तरनार कहेवायछे, ए रहस्य छे ॥ ८ ॥

हवे समकेत पाम्या छतां मिथ्यात्वदृष्टिमांज रहेछे, तेनुं वर्णन करेछे.

सवैया इकतीसा — धरम न जानत बखानत जरमरूप, ठौर ठौर ठानत लराई पक्षपातकी जूल्यो अजिमानमे न पाउं धरे धरनीमें, हिरदेमे करनी बिचारै उतपा तकी, फिरेडावाडोलसो करमके कलोलनमे, वैरही अवस्यासों वघूलाकेसे पात की, जाकी छाती ताती कारी कुटिल कुवाती जारी, ऐसो ब्रह्मघाती है मिथ्याती महापातकी. ॥ ९ ॥

अर्थ.— जे वस्तुना स्वजावरूप धर्मने जाणे नही, अने जमरूप मिथ्यावाणीने वखाणे, तथा ठेकाणे ठेकाणे, पोतानुं मत स्थापवाने पक्षपातनी लडाई करे अने पोताना अजिमाने जूल्यो थको धरती उपर पग राखे नही, पोतानेज तत्ववेत्ता जाणे, एमां अधर पगवडेकरी उत्प्रेक्षालंकार जाणवो. अने हृदयामा जेथी उत पात उपजे एवीज करणीनो विचार करे, अने आ संसाररूप समुद्रनेविषे कर्मरूप, कलोलोना धकाये करी चारे गतिमां डामाडोल करतो फरेछे, जेम वटोलिया वा युमां आवीगएलुं पानडुं आकाशमां उडीने जम्या करेछे, पण कोई ठेकाणे स्थिर थई रहेतु नथी, तेवीज एनी अवस्था थई रहीछे. जेनी छाती रागद्वेषवमें तप्त थई रेहेछे, ते तापे करी काली एटले माया तेने राखवाथी कुटिल थइ रहेछे. अने कुवाती एटले जे माठी वातोनुंज चितवनकरी रहेछे, तथा पापेकरी जरेली छे माटे जारी जाणवी एवी जेनी छाती छे, एहवो ब्रह्मघाती एटले आत्मघातनो करनार मिथ्यात्वी जीव महापातकयुक्त छे ॥ ९ ॥

दोहरा — वदो शिव अवगाहना, अरु वदों शिवपंथ, जसु प्रसाद जाषा करो, नाटक नामे गरथ ॥ १० ॥

अर्थ — जिहां सिद्धनो अवगाह थई रह्योछे, ते क्षेत्रने हुं वदन करुंछुं, अने ज्ञान दर्शन चारित्र ए मोक्षनो पंथके० मार्ग छे, तेने हुं वदन करुंछुं ए मंगलाचरण करी हवे पोतानुं प्रयोजन कहेछे — जेना प्रसाद थकी समय सार नाटक ग्रंथ संस्कृतमां हतो ते प्राकृत जाषारूप करुंछु ए प्रयोजन कह्यो. ॥ १० ॥

हवे आ ग्रंथना अधिकारी बनारसीदास पोतेज छे, अने एमा कहेवा लायक पोतानुं आत्मद्रव्य छे तेनुं वर्णन करेछे.—कविवर्णनं

हवे आ ग्रंथनो महिमा वर्णवेछे. अथ नाटक वर्णन –

सवैया इकतीसा – मोख चलवेकों सोन करमको करै बोन, जाको रस नौन बुधलौन ज्यों घुलति है, गुनको गरथ निरगुनको सुगम पथ, जाको जस कहत सुरेश अकुलित है; याहीके जु पछी सो उडत ज्ञान गगनमेऽ याहीके विपछी जग जालमे रुलत है, हाटकसो विमल विराटकसो बिसतार, नाटक सुनत हीय फाटक खुलत है ॥ १५ ॥

अर्थ – जेम नला सुकनवडे कार्य सिद्धि थायछे, तेम आ ग्रंथपण मोक्षमार्गे चालनारने कार्यसिद्धिनो करनार छे, तथा आ ग्रंथ कर्मरूप केफनी जाल काढवाने वमन करवानुं औषध छे, अने जैन ग्रथनो रस छे ते रस नौन के० पामिने तेमा पंमित लोक लौननीपरे गर्क थईरह्याछे वली जेमा गुणजे ज्ञान दर्शन चारित्र तेनी ग्रंथ के० रचनाछे, परमतिनी अपेक्षाये निर्गुण जे मोक्षपद तेनो सुगम पंथ छे ते निर्गुण कहेवो छे, जेनो यश अक्षय सुख छे, जेने कहेवाने इंद्र पण अकलायछे अने आ ग्रंथनो जेणे पक्ष लीधो छे, ते तो आ ग्रंथरूप पांखना प्रभावथी ज्ञानरूप आकाशमा पक्षीनी परे उडी रह्याछे अने जे आ ग्रंथना विपक्षिउ छे ते पाखरहित पक्षीनी परे जगतरूप पराधीनी जालमा रुली रह्याछे तेमाटे आ नाटकनामा ग्रंथ ते हाटक एटले सुवर्णसमान छे अने जेम गीता ग्रंथमा श्रीकृष्णे वैराटरूप महोटा विस्तारे करी देखाड्युं तेवो आ ग्रंथ पण विस्तारवत छे एवा आ नाटक ग्रंथने श्रवण करतामा हैयाना कमाड ते फाटक के० खुली जायछे ॥ १५ ॥

दोहरा – कहो शुद्ध निहचै कथा, कहो शुद्ध विवहार, मुक्ति पंथ कारन कहो, अनुभौको अधिकार ॥ १६ ॥

अर्थ – जे शुद्ध निश्चयरूप कथाछे ते कहीश. अने शुद्ध व्यवहार जे छे ते पण कहीश अने मुक्ति पथनुं कारण जे छे ते पण कहीश अने अनुभवनो जे अधिकार छे ते पण हु कहीश ॥ १६ ॥

अनुभव पदार्थनु लक्षण कहेछे – अनुभव वर्णन

॥ दोहा ॥ वस्तुविचारत ध्यावतै, मन पावै विश्राम; रस स्वादन सुख ऊपजे, अनुभौ याको नाम ॥ १७ ॥

अर्थ – अजाणीवस्तु जाणवाने मनमां विचार कखाथी तथा तेनुं चिंतन कखाथी एम खोजतां खोजतां ज्यारे मनमां ठीक ठरे त्यारे सत्य समज्याना रसनो स्वाद प्राप्त थाय ने तेथी सुख उपजे तेनुं नाम अनुभव छे ॥ १७ ॥

दोहरा:— अनुभौ चिंतामनि रतन, अनुभौ है रसकूप, अनुभौ मारग मोखको, अनुभौ मोख सरूप ॥ १८ ॥

अर्थ ॥ अनुभव जेछे तेज चिंतामनी रत्न छे, अने तेज अनुभव रसायननी कुपी छे, अनुभव तेज मोक्षनो मारग छे अने अनुभवज मोक्ष सरूप छे ॥ १८ ॥

अनुभव महिमा.

सवैया इकतीसा:— अनुभौके रसकों रसायन कहत जग, अनुभौ अभ्यास यहै तीरथकी ठौर है, अनुभौकी जो रसा कहावै सोई पोरसा सु, अनुभौ अधोरसा सु उरधकी दौर है, अनुभौकी केली यहै कामधेनु चित्रावेली, अनुभौको स्वाद पंच अमृतकौ कौर है, अनुभौ करम तोरै परमसों प्रीति जोरै अनुभौ समान न धरम कोउ और है ॥ १९ ॥

अर्थ.— जगतवासी लोक अनुभवना रसने रसायन केहेछे, केमके जेम रसायन लोढानुं सुवर्ण करेछे, तेम अनुभव जेछे ते मिथ्यात्वने फेडीने सम्यक्ति करे छे, जेम तीर्थनी ठोर जवाथी अपावन होय ते पावन थायछे. तेम ग्रंथविषे अनुभवनो अभ्यास ते अजाणने जाण करेछे. अने अनुभवनी जे रसा के० पृथवी ते हज सुवर्ण पोरसा छे, एटले अनुभवनी उत्पती छे ते सोवन पोरसानी परे वृद्धि पामेछे अने अधोरसा के० पाताल लोक, ते पण अनुभव रूपमां छे, अने उर्ध्व लोकनी दोर ते पण अनुभवरूपमांज छे, एटले अनुभवमांज स्वर्ग नरक छे, अने अनुभवनी केली के० रमत ते कामधेनुरूप छे, ते आपणीऋद्धिने वधारनारी छे, अने ते अनुभवनी जे केली छे ते अक्षय ऋद्धि करवाने चित्रावेली छे, अने अनुभवनोस्वाद ते पंचामृतना कौर के० ग्रास जेवो छे. अनुभव करमने तोडेछे, ने परमात्मानी प्राप्ति जोडे छे, एटले अनुभवथी खोजतां परमात्मानी प्राप्ति थायछे, तेथी सर्व धर्म धारण करवामा अनुभव जेवो बीजो कोई धर्म नथी. एटले अनुभव ज्ञान जाणवाथीज मोक्ष मार्ग नजीक छे ॥ १९ ॥

हवे अनुभव साधवाने छ द्रव्यनुं वर्णन करेछे. तेमां प्रथम जीव द्रव्य वर्णन —

दोहरा ॥ चेतनवंत अनंत गुन, पर्यय सकति अनंत; अलख अखंडित सर्वगत, जीव दरवविरतंत ॥ २० ॥

अर्थ.— जाणवा मात्रने चेतन कहेछे तद्रूप शक्तीवान छे, जेना अनंत गुण छे जेमा पर्याय के० नामांतरपणु पामवानी अनंत शक्ती छे, इंद्रिय अगोचर

छे, तेथी अलक्ष छे, देहना खंम थाय पण आत्मा अखंमित छे, सर्व लोकमां नखो छे तेथी सर्व गत छे, एवु जीव द्रव्यनुं स्वरूप छे ते कह्यो. ॥ २० ॥

हवे पुद्गल द्रव्यनुं लक्षण कहेछे. अथ पुद्गल द्रव्य यथा –

दोहरा – फरस वर्न रस गंधमय, नरद फास संगाण, अनुरूपी पुद्गल दरब, नन्न प्रदेश परवान ॥ २१ ॥

अर्थ –स्पर्श वर्ण रस गंध ए गुणमय सदा रहे,नरद जे सोगठीरूप राग तेना पासा मां सूक्ष्म, वृत्त, अस्त्र, चतुरस्त्र, आयत्त ए पाच संस्थान छे , तेथी एनुं नाम संस्थान छे. पोत पोतानी वर्गणा योग्यरूप ग्रहण करे, तेथी ए पुद्गल द्रव्य अनुरूपी अथवा पर माणुंरूपी छे जेम आकाश प्रदेश अनंत छे, तेम ए पण अनंत प्रमाण छे ॥२१॥

हवे धर्म द्रव्यनुं लक्षण कहेछे धर्म द्रव्य यथा.

दोहरा – जैसें सलिल समूहमें, करै मीन गति कर्म , तैसैं पुद्गल जीवको, चल न सहाई धर्म ॥ २२ ॥

अर्थ –जेम पाणीना जरावमा माछलुं गमन क्रिया करेछे, तहा क्रियानो कर्त्ता माछलुं छे, अने सलिल समूह जे पाणीनो जराव ते क्रियानो साधक छे तेम पुद्गलद्रव्यनी तथा जीवद्रव्यनी चलन क्रियानो साधक धर्मास्तिकाय द्रव्य छे ॥ २२ ॥

हवे अधर्मास्तिकाय द्रव्यनुं लक्षण कहेछे अधर्म द्रव्य यथा

दोहरा – ज्यों पंथिक ग्रीषमसमै, वैठे छाया माहि, त्यों अधर्मकी भूमिमें, जड चेतन ठहराहि ॥ २३ ॥

अर्थ – जेम कोई वटेमार्गु वेसवानो क्रियानो कर्त्ताछे, ने क्रियानी साधक छाया छे, तेम अधर्मास्तिकायनी भूमि के० अवगाहना तेमा जड जे पुद्गल ने चेतन जे जीव ते वने स्थिर थायछे, तेथी अधर्मास्तिकाय द्रव्य स्थिरतानुं कारणछे. ॥ २३ ॥

हवे आकाश द्रव्यनुं लक्षण कहेछे आकाश द्रव्य यथा.

दोहरा – संतत जाके उदरमें, सकल पदारथ वास , जो भाजन सब जगत को, सोइ दरब आकाश ॥ २४ ॥

अर्थ – संतत के० निरंतर जेना उदरमा समस्त पदार्थ रहाछे, अने जे सर्व जगतनु भाजन भूत छे, ते आकाश द्रव्य ॥ २४ ॥

हवे काल द्रव्यनुं लक्षण कहेछे काल

दोहरा -- जो नवजीरन करै, सकल वस्तु थिति ठान, परावर्तवर्तन करै, काल दरव सो जान ॥

अर्थः-- जे द्रव्य वडे सघला वस्तुनी स्थिति बंधाय एटले पेलां सकल वस्तुने नवी बतावे, ने पछवाडेथी ते सघलीने जुनी करी देखाडे, अने वलट पालट वर्त्ता ववानी दशाधरे ते कालद्रव्य जाणवु ॥ २५ ॥

हवे आ ग्रंथमां केहेवा लायक नव तत्व छे तेनुं वर्णन करेछे:-- तेमां प्रथम जीवतत्वनी समज पाडेछे नवतत्व वर्णनं, जीवतत्व यथा

दोहरा:-- समता रमता ऊरधता, ज्ञायकता सुखभास, वेदकता चैतन्यता, ए सब जीव विलास. ॥ २६ ॥

अर्थः-- सर्व जीव बराबर छे ए समता, घटघटमां रमी रेहेछे ए रमता, ऊर्ध्व दिशे गमन करवुं ए ऊरधता, सर्व पदार्थनो जाणनार ते ज्ञायकता सुखमय भासे छे तेथी सुखभास, सुखदु:ख वेदे ए वेदकता, अने चेतना गुणथी चैतन्यता ए सघलो जीव तत्वनो विलासछे. ॥ २६ ॥

अथ अजीवतत्व यथा.

दोहाः-- तनता मनता वचनता, जडता जड संमेल, लघुता गुरुता गमनता, ए अजीवके खेल. ॥ २७ ॥

अर्थः-- शरीरपणुं, मनपणुं, वचनपणुं, जडवस्तुमा भेलभेल थवापणुं, लघुपणुं, गुरुपणुं, गमनपणुं ए सर्व अजीवतत्वना खेलछे. ॥ २७ ॥

अथपुन्यतत्व यथा.

दोहरा:-- जो विशुद्ध भावनि बधे, अरु ऊरध मुख होय, जो सुखदायक जगतमें, पुन्य पदार्थ सोय. ॥ २८ ॥

अर्थः-- जे पदार्थ विशुद्ध परिणामथी वधे, अने जेनुं ऊर्ध्वमुखछे, ऊर्ध्वगति एज चडेछे, जे पदार्थ जगतमां सुखदायकछे, ते पुन्य पदार्थ जाणवो ॥ २८ ॥

अथ पाप तत्व यथा.

दोहरा:-- संकिलेसि भावनि बधे, सहिज अधोमुख होय; दुखदायक संसारमें, पाप पदारथ सोय. ॥ २९ ॥

अर्थ:-- जे पदार्थ संकलेश भाव वडे कषायनीवृद्धीथी वधे, सेहजे जेनी गती नीची छे अधोमुखछे, अने जगतमा दु:खदायक छे तेज पाप पदार्थ केवायछे. २९

अथ आश्रव तत्व यथा

दोहराः-- जोई करम उद्योत धरि, होइ क्रिया रस रत्त; करषै नूतन करम कों, सोई आश्रव तत्त. ॥ ३० ॥

अर्थ — जे कर्मनो उदय धरीने शुभ तथा अशुभ क्रियाना रसमां रत थई रहे, त्यारे नवां करमनुं करखे के० खेचवु करे ते आश्रव तत्व केवाय ॥ ३० ॥

अथ संवर तत्व यथा

दोरा.— जो उपयोग सरूप धरि, वरतै जोग विरत्त; रौके आवत करमकों, सो है सवर तत्त ॥ ३१ ॥

अर्थः— जे शुद्ध उपयोग स्वरूपनें धारीने मन वचन काया जोगथी विरक्त थको वर्त्ते अने नवां करम आवताने रोकी राखे ते संवर तत्व कहिये. ॥ ३१ ॥

अथ निर्झरा तत्व यथा.

दोहा.— जो पूरव सत्ता करम, करि थिति पूरण आउ, खिरवैकों उद्यत भयो, सो निर्झरा लखाउ ॥ ३२ ॥

अर्थ — जे पूर्वे कालनेविषे आयुविना सात कर्म सत्तारूप हतां अने आयु कर्म वर्त्तमान कालमां सत्तारूप छे तेनी स्थिति पूर्ण करीने पछी नीरस कर्मने विखेरवामां जे जीव उद्यमवत थयो ए निर्जरानुं लक्षण जाणवु ॥ ३२ ॥

अथ बंध तत्व यथा

दोहा.—जो नव कर्म्म पुरानसों, मिलें गंठि मिढ होइ, सकति वढावे वसकी, बंध पदारथ सोइ ॥ ३३ ॥

अर्थ — जे नवां कर्म जूना कर्म साथे आवी मले, अने तेनी गाठ दृढ बंधाय, अने आगल जता ते कर्मना वसनी शक्ती चढती थाय, ते बंध पदारथ केवाय ३३

अथ मोक्ष तत्व यथा.

दोहा —थिति पूरन करि जो करम, षिरे बंध पद भानि, हंस अस उज्वल करै, मोक्ष तत्व सो जानि. ॥ ३४ ॥

अर्थ — जे कर्मनी स्थितिने पूर्ण करीने कर्मने खेरे के० क्षयकरी नाखे अने बंध पद के० सत्तावन प्रकारें बंधस्थान तेने भानि के० भांगीने हंस के० परमात्माना अंसने क्रमे उज्वल करे तेज मोक्ष तत्व जाणवु ॥ ३४ ॥

हवे कवित्त छंदमा पदार्थनी नाममाला एटले प्रयोजनवाला नामनी नाममाला लखी जणावेछे

अथ नाम माला सूचनिका मात्र लिख्यते अथ समुच्चय वस्तुके नाम

दोहरा.—भाव पदारथ समय धन, तत्व वित्त वसु दर्व, द्रविन अर्थ इत्यादि बहु, वस्तु नाम ए सर्व ॥ ३५ ॥

अर्थ.–प्रथम सामान्यपणे वस्तुना नाम कहेछे. भाव, पदारथ, समय, धन, तत्व, वित्त, वस्तु, द्रव्य, द्रविण, अर्थ, इत्यादि घणां वस्तुनां नाम छे ॥ ३५ ॥

अथ शुद्ध जीव द्रव्यके नाम.–

सवैया इकतीसा.–परमपुरुष परमेसुर परमज्योति, परब्रह्म पूरन परम परधान है, अनादि अनंत अविगत अविनाशि अज, निरद्वंद मुकत मुकुंद अमलान है; निराबाध निगम निरंजन निरविकार, निराकार संसार सिरोमनि सुजान है, सरव दरसी सरवज्ञ सिद्ध साई शिव, धनी नाथ ईश जगदीश भगवान है ॥ ३६ ॥

अर्थ –परमपुरुष, परमेश्वर, परमज्योति, परब्रह्म, पूर्ण, परमप्रधान, अनादिअनंत, अव्यक्त, अविनाशी, अज, निर्द्वंद्व, मुक्ति, मुकुंद, अम्लान, निराबाध, निगम, निरंजन, निर्विकार, निराकार, संसारसिरोमनि, सुजान, सर्वदर्शी, सर्वज्ञ, सिद्ध, स्वामी, शिव, धनी, नाथ, ईश, जगदीश, भगवान, कहीये. ॥ ३६ ॥

हवे कर्म व्याप्त अशुद्ध जीव द्रव्यना नाम कहेछे.–संसारी जीव द्रव्यके नाम

चिदानंद चेतन अलख जीव समैसार, बुद्धरूप अबुद्ध अशुद्ध उपयोगी है, चिद्रूप स्वयंभू चिन्मूरत्ति धरमवंत, प्रानवत प्रानि जंतु भूत भव भोगी है, गुनधारी कलाधारी भेषधारी विद्याधारी, अंगधारी संगधारी जोगधारी जोगी है, चिन्मय अखंड हंस अषर आतमराम, करमको करतार परम विजोगी है ॥ ३७ ॥

अर्थ –चिदानंद, चेतन, अलख, जीव, समयसार, बुद्धरूप, अबुद्ध, अशुद्धोपयोगी, चिद्रूप, स्वयंभू, चिन्मूर्ति, धर्मवंत, प्राणवत, प्राणी, जंतु, भूत, भवभोगी, गुणधारी, कलाधारी, भेषधारी, विद्याधारी, अंगधारी, संगधारी, योगधारी, योगी, चिन्मय अखंड, हंस, अक्षर, आत्मराम, कर्मकर्त्ता, परमवियोगी कहिये. ॥ ३७ ॥

अथ आकासके नाम.–

दोहराः– खं विहाय अंबर गगन, अंतरिक्ष जगधाम, व्योम वियत नभ मेघपथ, ए अकाशके नाम ॥ ३८ ॥

अर्थः–ख, विहाय, अंबर, गगन, अंतरिक्ष, जगधाम, व्योम, वियत, नभ, मेघपथ, ए आकाशनां नाम. ॥ ३८ ॥

अथ कालके नाम.

दोहा.–यम, कतांत, अंतक, त्रिदस, आवर्त्ती मृतथान; प्रानहरन, आदित तनय, कालनाम परमान. ॥ ३९ ॥

अर्थ---यम, कृतांत, अंतक, त्रिदश, आवर्त्तीक, मृतस्थान, प्राणहरण, आदित्य तनय, एवा काळनां नाम छे. ॥ ३९ ॥

पुन्यके नाम यथा

दोहा --पुन्य सुकृत ऊरधवदन, अकर रोग शुभ कर्म, सुखदायक संसारफल, भागबहिर्मुख धर्म. ॥ ४० ॥

अर्थ---पुन्य, सुकृत, उर्ध्ववदन, अकररोग, शुभकर्म, सुखदायक, संसार फल, भाग, बहिर्मुख, धर्म,ए पुन्यना नाम छे. ॥ ४० ॥

अथ पापके नाम यथा

दोहा -- पाप अधोमुख एन अघ, कंप रोग दुखधाम, कलिल कलुष किलवि ष दुरित, अशुभ कर्मके नाम ॥ ४१ ॥

अर्थ -- पाप, अधोमुख, एन, अध, कंप, रोग, दु खधाम, कलिल, कलुष. किल्विष, अने दुरित, ए अशुभ कर्मना नाम जाणवा ॥ ४१ ॥

अथ मोक्षके नाम

दोहा --सिद्धक्षेत्र त्रिभुवन मुकुट, शिवमग अविचल थान, मोषमुगति वैकुंठ शिव, पचम गति निरवान ॥ ४२ ॥

अर्थ --सिद्धक्षेत्र, त्रिभुवनमुकुट, शिवमार्ग, अविचलस्थान, मोक्ष, मुक्ति, वैकुं ठ, शिव, पंचमगति अने निर्वाण ॥ ४२ ॥

अथ बुद्धिके नाम यथा

दोहा --प्रज्ञा धिषना सेमुखी, धी मेधा मति बुद्धि, सुरति मनीषा चेतना, आ य असविशुद्धि ॥ ४३ ॥

अर्थ -- प्रज्ञा, धिषना, सेमुषी, धी, मेधा, मति, बुद्धि, सुरति, मनीषा, चे तना, आसय, असविशुद्धि कहिये ॥ ४३ ॥

अथ विचक्षण पुरुषके नाम --

दोहा -निपुन विचक्षन विबुध बुध, विद्याधर विद्वान, पटु प्रवीन पंडित चतुर, सुधी सुजन मतिमान ॥ ४४ ॥ कलावंत कोविद कुशल, सुमन दक्ष धीमंत, ज्ञाता सज्जन ब्रह्मविद, तज्ञ गुनीजन संत. ॥ ४५ ॥

अर्थ --निपुण, विचक्षण, विबुध, बुध, विद्याधर, विद्वान, पटु, प्रवीण, पंडित, चतुर, सुधी, सुजन अने मतिमान ॥ ४४ ॥ कलावान, कोविद, कुशल, सुमन, दक्ष, धीमंत, ज्ञाता, सज्जन, ब्रह्मविद, तज्ञ, गुणीजन अने संत ॥ ४५ ॥

अथ मुनीश्वरके नामः—

दोहा —मुनि महंत तापस तपी, भिक्षुक चारितधाम; यती तपोधन संयमी, व्रती साधु रिषि नाम ॥ ४६ ॥

अर्थ —मुनी, महंत, तापस, तपी, भिक्षुक, चारित्रधाम, यति, तपोधन, संयमी, व्रती, साधु ए ऋषिना नाम जाणवां ॥ ४६ ॥

दरसनके नाम —

दोहा —दरस विलोकन देखनो, अवलोकन दिगचाल; लखन दृष्टि निरखन जुवन, चितवन चाहन भाल ॥ ४७ ॥

अर्थ.—दर्शन, विलोकन, देखवु, अवलोकन, दृगचालन, लखवुं, दृष्टी, निरक्षण, जोवु, चितवन, चाहन, ने भालवुं ॥ ४७ ॥

अथ ज्ञान तथा चारित्रके नाम —

दोहा --ज्ञान बोध अवगम मनन, जगतभान जगजान, संयम चारित आचरण, चरन वृत्ति थिरवान ॥ ४८ ॥

अर्थ —ज्ञान, बोध, अवगम, मनन, जगज्ञातु, जगजान, संयम, चारित्र, आचरण, चरण, वृत्ती, धैर्यवान ॥ ४८ ॥

अथ साचके नाम --

दोहा —सम्यक् सत्य अमोघ सत, निसंदेह निरधार; ठीक यथारथ उचित तथ, मिथ्या आदिअकार ॥ ४९ ॥

अर्थ.—सम्यक्, सत्य, अमोघ, सत्, नि संदेह, निर्धार, ठीक, यथार्थ, उचित, तथ्य, मिथ्या शब्दने आदि अकार लगाडीने बोलीये तो अमिथ्या शब्दथाय ते पण एनुं नाम जाणवुं ॥ ४९ ॥

अथ जूठके नाम.—

दोहा.—अजथारथ मिथ्या मृषा, वृथा असत्य अलीक; मुधा मोघ निष्फल वितथ, अनुचित असत्त अठीक ॥ ५० ॥

अर्थ —अयथार्थ, मिथ्या, मृषा, वृथा, असत्य, अलीक, मुधा, मोघ, निष्फल वितथ, अनुचित, असत्य, अने, अठीक. ॥ ५० ॥ इति नाममाला समाप्त

अथ समयसारके द्वादश द्वार वर्णन —

सवैया इकतीसा—जीव निरजीव करता करम पुण्य पाप, आश्रव संवर निरजरा बंध मोष है, सरव विशुद्धि स्यादवाद साधिसाधक इआसद दुवार धरे समंसा

र कोप है; दरवानुयोग दरवानुयोग दूरि करै, निगमको नाटक परम रस पोप है, ऐसो परमागम बनारसी बखाने यामे, ज्ञानको निदान शुद्ध चारितकी चोप है॥५१॥

अर्थ – जीवद्वार, अजीवद्वार, कर्त्ता कर्म क्रियाद्वार, पुन्यपाप द्वार, आश्रवद्वा संवरद्वार, निर्जराद्वार, बंधद्वार, मोक्षद्वार, सर्व विशुद्धिद्वार, स्याद्वादद्वार, साध्य साधकद्वार, आसमय सारना ए बारद्वाररूप कोप के॰ कोठार छे, आ ग्रंथमा द्रव्यानुयोग के॰ द्रव्यनो विचारकरवो, पछी द्रव्यानुयोग दूर करवो, ने शुद्ध आत्म सत्तानोज विचार करवानुं अने निगमके॰ परमात्मानु नाटक एमां परम शांतरसनो पोप छे, ए परम सिद्धातने बणारसीदास वखाणेछे वली आ ग्रंथमा ज्ञाननुं निदानके॰ मूलविवरो तथा शुद्ध चारित्रनी चोख के॰ चोखी क्रिया कही बतावबानीछे॥५१

अथ ग्रंथारंनको नमस्कार मंगलाचरण रूप

दोहरा – शोनित निजअनुजूतियुत, चिदानंद जगवान, सार पथारथ आतमा, सकल पदारथ जान ॥ ५२ ॥

अर्थ – जे पदार्थ पोताना अनुनव युक्त शोनित छे, चितके॰ चेतना अने आनंदित तेचिदानंद कहिये, तथा जगवानके॰ ज्ञानवंत छे, एवो साररूप पदार्थ संसारमां आत्मा छे, जे समस्त पदार्थनो जाणनार महोटो ज्ञाता छे ॥ ५२ ॥

अथ आत्मानुं वर्णन करी नमस्कार करेछे –

सवैया – तेईसा – जो अपनी द्रुति आपु विराजत, है परधान पदारथ नामी, चेतन अंक सदा निकलंक महासुखसागरको विसरामी, जीव अजीव जिते जगमे तिनको गुन ज्ञायक अंतरजामी, सो शिवरूप बसै शिवथानक, ताहि विलोकनमें शिवगामी ॥ ५३ ॥

अर्थ ॥ जे पोतानी द्युतिवडेज पोते विराजमान छे, एटले पोताथी पोते नासी रह्यो छे, पण बीजा पदार्थवडे जेनो नास थतो नथी एवो कोई प्रधान पदार्थ नामी प्रसिद्ध छे जेनुं चेतनरूप अंक के॰ लक्षण छे ते सदा निकलंक छे, निरजन छे, महोटा सुखसमुद्रमा जेनो विश्राम थई रह्योछे, एटले एकाग्रचित्तें जे सहेजे समाधिसुखमा रमी रह्योछे, जगतमा जेटला जीव अजीव पदार्थ छे, ते सर्वना गुणनो ग्राहक छे अने अंतरजामी छे, जे घटघटमा विराजमान छे तेहज शिवरूप के॰ सिद्धस्वरूप थयो थको लोकाग्रजागे सिद्धावस्थामां वसेछे, जेने ज्ञान दृष्टिवडे जोईने मुक्ति गामी जीव नमस्कार करेछे ॥ ५३ ॥

हवे नगवाननी वाणीने नमस्कार करेछे अथ जिनवाणी वर्णनं

सवेया तेइसा.—जोग धरँ रहि जोगसुं निन्न अनंत गुनातम केवल ज्ञानी; तासहदे इहसो निकसी सरिता सम व्है श्रुत सिंधु समानी याते अनत नयातम लछन, सत्य सरूप सिद्धांत वखानी, बुद्धलखै न लखै डुरबुद्धि सदा जगमांहि जगे जिनबानी५४

अर्थ — जे त्रण योगने धारेछे तथापि ते मन वचन कायना जोगथी प्रथक रहे अलिप्त रहेछे, अने अनत गुण प्रगटताने लीधे जेनो आत्मा कोई केवल ज्ञानी पुरुष छे ते केवल ज्ञानीना हृदय रूप इह छे, तेमांथी जे नदीरूप थईने निकली ते शास्त्ररूप समुद्रमा जई नली छे, ज्याथी अनंता नय स्वरूप लक्षण सत्य स्वरूपे जिनजीये सिद्धांतमां वखाणी छे, एवी जे वाणी ते तो बुद्धिवत तत्व दर्शी होय तेज लखे, अने डुर्बुद्धि मिथ्यामति होय ते लखे नही, जाणे नही, एवी जिनेश्वरनी वाणी जगतमां सदा जागृत थई रही छे ॥ ५४ ॥

हवे जीव द्वारनु विचार लखेछे ते जीव कवीश्वर पोतेज छे माटे पोतानी व्यवस्था कहेछे अथ जीव द्वार कवि व्यवस्था कथन —

छप्पय छंद -- हो निहचैं तिहुं काल, शुद्ध चेननमय मूरति, पर परिनति संयोग, नई जडता विस्फुरति, मोह कर्म पर हेतु, पाइ चेतन पर रचै; ज्यौ धतूर रस पान, करत नर बहु विध नचै, अब समय सार बर्नन करत, परम शुद्धता होव मुझ; अनयास बनारसि दास कहि, मिटौ सहज भ्रमकी अरुझ ॥ ५५ ॥

अर्थ — शुद्ध निश्चयनयवमे अतीत अनागत वर्त्तमान कालमां हुं शुद्ध चेतनामय पिंम छुं, एहिज मारी मुरति छे, ते एवी छे तारे शुद्ध स्वनाव छांमीने विनावमां केम परिणम्यो छे ? एनो उत्तर कहेछे जे, कर्मादिक परवस्तु छे तेनुं अहीं परिणमन थयु तेथी तेनी जडता अहीं विस्फुरति थई एटले जडता फेली शिष्य पूछे छे के, एवो शुद्ध स्वनाव हतो त्यारें परपरिणति केम ग्रहण करी? तेनो उतर, मोह कर्म राग द्वेष रूप जे छे तेज परहेतु उत्कृष्ट कारण पामीने चेतन आत्मा परनी साथे मोहित थयो छे, तेनो दृष्टांत कहेछे - जेम धतुरानो रस पान करी माणस तरेवार रीते नाचवा लागे, तेम अनादीनो मोह कारण पामीने चेतन जे छे ते पोतानो शुद्ध स्वनाव छांमीने विनावथी मूर्छा पामी रह्योछे हवे समयसार के० आत्मानुं वर्णन करताज मुझने परम शुद्धताना स्वनावनी ओलखाणथई एटले शुद्ध स्वनावनी खवर पमी तेथी विनावपणुं नाश पाम्युं. तेथी अनायास के० घणा ग्रंथ वाचवानो प्रयास कीधा विनाज वणारसी दास

ज्ञाता कहेछे. के सहज के० आत्माने सगे अनादीथी भ्रमनी अरुक ते मिथ्या मत मग्नता लागी रहीछे ते मारी मिथ्यामत मटी जाओ ॥ ५५ ॥

हवे आ जीवनी शुद्धता ते आगमथी पामीये माटे आगम वर्णवे छे अथ आगम व्यवस्था कथन.

सवैया इकतीसा — निहचैमें रूप एक विवहारमें अनेक, याही नै विरोधमें जगत भरमायो है, जगके विवाद नासिबेकों जिन आगम है, जामे स्यादवाद नाम लछन सुहायो है, दरसन मोह जाको गयो है सहजरूप, आगम प्रवान जाके हिरदेमें आयो है, अनैसो अखंडित अनूतन अनंत तेज, ऐसो पद पूरन तुरत तिन पायो है ॥५६॥

अर्थ — सर्व आगम ज्ञानरूप निश्चयनयमा एकरूप देखाय छे, अने व्यवहार नयनी अपेक्षावडे अनेक रूप देखाय छे, पण व्यवहार नयमा नयनो विरोध म होटो छे, एज नय विरोधमा जगत भरमायु छे, अने एज भरमवडे जगतमा वाद विवाद उपज्यो छे, माटे जगतनो विवाद मटाडवाने वचमा प्रमाणिक साक्षी रूप जिनेश्वरनो आगम छे, जे आगममां स्याद्वाद नाम लेवाथी सर्वपदार्थनु ल क्षण सर्वने सोहावे छे, स्यात् एटले किवारेक द्रव्य दृष्टीए देखीए त्यारे ए नय साचो ने केवारेक पर्याय दृष्टीए जोइये त्यारे ए नय साचो, एवु कहे थके शिष्य पूछेछे के एवो स्याद्वाद सहित जिन आगम प्रमाण छे, त्यारे सर्वना हृदयामां केम आवतो नथी? जे पुरुषनो अनादि कालनो मिथ्या दर्शन मोह गयो छे, तेना हृदयामां ए जिन आगम प्रमाणरूप आव्योछे, पण मिथ्या दर्शन मोह वालाना हृदयमां ए आवे नही, हवे स्याद्वादना जाणनारने केवु फल मळे ते केहेछे -- जे पद नय रहित छे, एटले नयनी पछे नथी, केमके, नयतो एकांत ग्राही छे, ते पूर्ण पदने केम ग्रहण करी शके? अने पूर्ण पद अखंडितछे, ने ते वली अनादि कालथी छे, माटे अनूतन के० पुरातन छे एवु अनंत तेजवालु पूर्ण पद तेने ते तुरत पाम्यो छे५६

हवे निश्चय अने व्यवहार नयने लीधे आगम कह्यो तेवारे शिष्य पुछेछे के ए बे नयमां कार्य सिद्धिकारी नय कयो छे? तेनो उत्तर गुरु आपे छे

अथ निश्चय व्यवहार कथन

सवैया तेईसा — ज्यों नर कोउ गिरे गिरिसो तिहि, सोइ हितू जु गहै दिढ बांही, त्यों बुधकों विवहार भलो तबलों जबलों शिव प्रापति नाही, यद्यपि यो परवान तथापि सधै परमारथ चेतनमाही, जीव अव्यापक है परसों विवहार सुतौ परकी परछाही ॥ ५७ ॥

अर्थः-- जेम कोई पुरुष पाहाडनी उपरथी नीचे पडतो होय ने बीजो पुरुष तेनो हाथ मजबुत झाली रही तेने पडतो अटकावी राखे, ते तेनो हीत करनार केहेवाय, तेम पण्डितोने ज्यां सुधी शिवसुखनी प्राप्ति नथी थई, त्यां सुधी व्यवहार जलो छे, एटले चोथा गुणठाणाथी लईने चौदमां सैलेसीकरण गुणठाणासुधी व्यवहारनुं आलंबन छे, यद्यपि ए रीते व्यववहार आलबन प्रमाण छे. तथापि पर्मार्थे ज्ञान दर्शन चारित्रनु शुद्धपणुं चेतन मात्र सधाय, बीजाथी न सधाय, अने जीव जे छे ते पोताना गुणमयी छे, पोताना गुणमा व्यापी रह्योछे, परंतु पर के० कर्मादिक जडजीव सत्ताथी न्यारा, ते साथे जीव अव्यापक छे. अने व्यवहार छे तेतो परनी छायामां रहेछे, एटले परनी निश्राविना व्यवहार न होय माटे व्यवहार करता निश्चयनय शुद्ध छे ॥ ५७ ॥

हवे शुद्धनिश्चयनयथी जे सम्यक् दर्शन प्रगटे छे तेनी व्यवस्था विशेषपणे जाणवाने अर्थे कहेछे अथ सम्यक दर्शन व्यवस्था कथन

सवैया इकतीसा.-- शुद्ध नय निहचै अकेलो आपु चिदानंद, अपनेही गुण पर जायको गहतु है; पूरन विज्ञान घन सोहै विवहार मांहि, नवतत्वरूपी पंच द्रव्यमें रहतु है, पंच द्रव्यनवतत्व न्यारे जीव न्यारो लखै, सम्यक दरस यहै उर तैनग हतु है, सम्यक दरस जोई आतमसरूप सोई, मेरे घट प्रगटचो बनारसी कहतु है ॥५८॥

अर्थः-- शुद्ध निश्चय नयनी अपेक्षा लेवाथी चेतनामय जे पदार्थ छे, ते पोतानी सत्ताये पोते एकलोज छे, अने पोतानाज ज्ञानादिक गुणना पर्यायना अवस्था भेदने ते ग्रही रह्योछे. अने तेज सामान्य ज्ञानने शोधो जे घट द्रव्यादिक विशेष ज्ञान तेने विज्ञान कहीये, अने तेनुं पूर्ण घन के० पिंड ते ए व्यवहार नय मांज देखायछे, अने एज व्यवहार नयथी नवतत्वरूप लई धर्मादिक पाच द्रव्य मां एकत्र थई रहेछे अने एवाज व्यवहारमां शुद्ध निश्चय केवलना पांच द्रव्य न्यारा छे एम जाणवुं अने नवतत्वने पण न्यारा जाणवा, एवी द्रव्य दृष्टीथी अन्य उपाधिनो आश्रय ग्रहण करे नही, तेनेज सम्यक्दर्शनी कहीये, अने जे सम्यक् दर्शन छे, तेज आत्मस्वरूप मारा घटमां प्रगटचुं एवु वणारसीदास कहेछे ॥५८॥

शिष्ये पुछयुं के जीव द्रव्यथी नव तत्व अने पंच द्रव्य जुदा केम जाणीए तेनो उत्तर गुरु कहेछे.-- अथ जीवद्रव्य व्यवस्था अग्नि दृष्टांत.

सवैया इकतीसा --जैसै तृन काठ बास आरनै इत्यादि और, इंधन अनेक विध

पावकमें दहिये, आकृति बिलोकत कहावै आगि नानारूप, दीशै एक दाहक सुनाउ जब गहिये तैसै नव तत्वमें जयो है वहु जेखी जीव, शुद्धरूप मिश्रित अशुद्धरूप कहिये, जाही छिन चेतना शकतिको बिचार कीजें, ताही छिन अलख अजेदरूप लहिये ॥ ५ए ॥

जेम अग्निमा तृण, काठ, वास अने आरने के० वननो बीजो कचरो इत्यादिक अनेक तरेना इंधण बालीये छइये ने जेवी जेवी इंधणनी आकृतीएटले (आकार) तेवी तेवी आकृतीनो अग्नी देखाय, ए रीते अग्नी नाना प्रकारनारूपनी कहेवायछे, पण ते बधा अग्नीनो स्वजाव एक सरखो दाहक छे, एम जो ग्रहण करिये तो बधो अग्नी एकरूप छे तेमज नव तत्वमा जीव जेछे ते जातजातनो जेप धारी रह्यो छे, माटे जीव पण बहु वेशी के० नाना प्रकारनो थयो एटले शुद्धरूप जीव छे, ते मिश्रित थयो, त्यारे ए जीवने अशुद्धरूप कह्यो एवुं नाम व्यवहार नय छे, अने जे क्षणमा नवे तत्वमा एक चेतना शक्ति विचारिये, ते वखते शुद्ध निश्चयनये केवलीवडे नव तत्वनो प्रपच अस्तु ख्य राखीने अलक्षरूप जीव छे, ते सर्वत्र अजेदरूप पामिये शुद्ध निश्चय नय जाणवु ५ए

फरी बीजी रीते शुद्ध जीव व्यवस्था कहेछे अथ जीव व्यवस्था बनवारी दृष्टांत —

सवैया इकतीसा —जैसै बनबारीमे कुधातुके मिलाप हेम, नाना जांति जयो पै तथापि एक नाम है, कसिके कसोटी लीक निरखै सराफ तांही, बानके प्रमान करि लेतु देतु दाम है, तैसैही अनादि पुजलसो सयोगी जीव, नव तत्वरूपमे अरूपी महा धाम है, दीशे उनमानसौ उद्योत बान गेर गैर, दूसरो न औंर एक आतमाहि राम है ॥ ६० ॥

अर्थ —जेम सोनानी मूसमा चोखु सोनुं गाल्यु अने सोनाथी हीण धातु ते कुधातु कहिये, तेना नाम कहेछे —रूपु, त्राबुं, सीसुं, जसत, कथीर. इत्यादि वस्तुनो जुदोजुदो हेमनी साथे मिलाप थयो तेथी जुदी जुदी जातनुं सोनुं थयु, ते छतां एक सोनाने नामे ओलखायछे, अने तेअशुद्ध सोनाने सराफ कसोटी पथ्थर उपर कसीने तेनी लकीर जुये ने तेउपरथी सोनुं केवु छे ते प्रमाण करे, जेम आ दस रुपीयाना जावनुं छे ने आ अगीयार रुपीयाना जावनुं छे, ने ते माफक तेना दाम आपे लिए छे. तेमज अनादि कालथी ए जीव पुजल इव्यनो संयोगी माटे ए जीवे नव तत्वरूप व्यवस्था धारी, गतीपणे स्थितिपणे जाजनपणे वर्त्तमानपणे, आधारपणे, ए पाचे इव्य ग्रहण कीधा अने नवतत्वरूप धारण कर्या पण एमा कोई अरूपी महा तेजवत इव्य छे ते तो कोई प्रत्यक्ष प्रमाणे ग्रहण थतु नथी, अने अनुमान

वडे लइये ठइये, तेवारे शिष्ये पुछ्युंके, अनुमान केवुं करीये ठइये? त्यारे गुरु कहेछे गोरगोर उद्योतवान प्रकाशवान द्रव्य देखाय, तेतो बीजुं कोई द्रव्य नही पण एक आत्मारामज जाणवो, ए अशुद्ध निश्चय नयथी जीव कह्यो ॥ ६० ॥

हवे एवी रीते जे खोजना करीने परिचय पामिये तेने अनुभव कहिये, ते अनुभवनुं स्वरूप केवी रीते छे? एवुं शिष्ये पूछे थके गुरु सूर्यना दृष्टांते कहेछे:—

अथ अनुभव व्यवस्था सूर्य दृष्टांत

सवैया इकतीसाः— जैसे रविमंडलके उदै महिमंडलमें, आतप अटल तम पटल बिलातु है; तैसै परमातमाको अनुभौ रहत जो लों, तो लों कहूं दुविधा न कहू पक्ष पातु है; नयको न लेश परवानकोन परवेश, निछेपके वसको विधंस होतु जातु है, जे जे वस्तु साधक है तेउ तहां बाधक है, बाकी रागदोषकी दशाकी कौन बातु है६१

अर्थः—जेम सूर्यमंडलना उदयथी पृथ्वीमंडलमां आतप के० तावरो अटल थई जाय, अने तम के० अंधकारना पडल नासी जाय, प्रकाश उद्योत थाय, तेमज शुद्ध निश्चयनयना बलवडे ज्यांसुधी अंतरात्मानेविषे परमात्मानो अनुभव रहेछे, त्या सुधी कांई पण द्विविधता न देखाय, पोतपोताना मतनो पक्षपात न रहे अने अहीं नयनो लेश के० अंश न पामिये नय तो ते छे के, जेणेकरीने वस्तुनुं साधन कराय अने अनुभव तो सिद्ध वस्तुनो होय माटे अही अनुभवमां नयनो लेश नथी अने एमा प्रत्यक्ष परोक्षादिक प्रमाणनो पण प्रवेश नथी, केमके जे प्रमाण होय ते तो असिद्धनुं साधन करे पण सिद्ध वस्तुने सुं साधशे? अने नाम स्थापना द्रव्य भाव ए चार निक्षेपा छे, तेपण असिद्ध वस्तुनुं साधन करे छे, ते तो जेवारें परमात्मानो अनुभव सिद्ध थयो त्यारे निक्षेपाना बलनो विध्वसज थयो जेम सूर्यना प्रकाशवडे अंधकारनो नाश थायछे. तेम ए सर्व विलय थाय छे आ परमात्माने नयप्रमाण निक्षेपादिक वस्तु जे जे साधक छे ते सर्व वस्तु परमात्माना अनुभवमां बाधक छे; ज्यासुधी नयप्रमाण अने निक्षेपानो परिवार होय त्या सुधी शुद्ध अनुभव न होय एटलासारु ए बाधक छे. बाकी राग द्वेष दशानी शु वात केवी! तिहा तो नयादिक कहेवाज जोइये ॥ ६१ ॥

हवे अनुभवमां शुद्ध रूप जीवज लख्यो तेनी व्यवस्था वचन गोचर जेवी होय तेवी केहेछे — अथ जीव व्यवस्था विवरन द्वार.

अडिल छंद— आदि अंत पूरन सुभाव संयुक्त है; पर स्वरूप परजोग कलपना मुक्त है; सदा एक रस प्रगट कही है जैनमें, शुद्ध नयातमवस्तु विराजे वैनमें॥६२॥

अर्थ – आदि निगोद अने अंत सिद्ध अवस्था, तेनी वचे चेतना रुप पोताना पूर्ण स्वभावेकरी संयुक्त छे, अने ए चेतनामा पर स्वरूप जे जड स्वरुप, अने पर जोग जे पुद्गल संयोग, तेनी दशा कल्पना विचारणा तेणेकरी मुक्त छे आदि अंत सुधी एकज स्वभाव छे सदा एक चेतना रसमय प्रगट वस्तु छे, ते शुद्ध निश्चय नयनुं आलंबन लईने जैन आगममा कही ने जेवी कही तेवी वचन व्यवहारमा पण विराजमान छे ॥ ६१ ॥

हवे एवुज स्वरूप वचन द्वारवडे गुरु हितोपदेश रुप केहेछे --अथ हितोपदेश.

कवित छंद – सतगुरु कहे भव्य जीवनिसो, तोरहु तुरत मोहकी जेल, समकित रुप गहो अपनो गुन, करहु शुद्ध अनुभवको खेल, पुदगल पिंड भाव रागादिक, इनसो नही तुमारो मेल, ए जड प्रगट गुपत तुम चेतन, जैसै भिन्न तोय अरु तेल ६२

अर्थ.– अहो भव्यलोक वेला थाउं, मोहनो बंध तोडो, अने तमारो पोतानो समकित गुण छे, ते ग्रहण करो; अने ते लईने पोताना शुद्ध अनुभवनो खेल खेलो अने देखवामा जे आ शरीर छे ते पुदगल पिंड छे अने कर्म पण पुद्गल पिंड छे अने आ पुदगल पिंडनो राग द्वेषादिक भाव ते स्वभाव छे, पण ए वस्तु साथे तहारो मिलाप नथी केमके, ए वस्तु तो जडछे, ने प्रगट छे, एटले देखवामां आवेछे, ने तमे तो चेतन छो तथा गुप्त छो त्यारे ते पुदगल पिंडनी ने तमारी भिन्नता छेरी, जेम पाणीने तेल भिन्न छे, तेनीपरे जाणी लेवु. ॥ ६२ ॥

हवे एवो उपदेश सांभलीने ते ज्ञाता पुरुष थयो तेनो विलास कहेछे अथ ज्ञाताविलास

सवैया इकतीसा -- कोउ बुद्धिवंत नर निरखै शरीर घर, भेद ज्ञान द्रिष्टिसो विचारि वस्तु वासतो, अतीत अनागत वरतमान मोहरस, भिग्यो चिदानद लखै बंधमे विलासतो; बंधको बिदारि महा मोहको सुभाव डारि, आतमको ध्यान करी देखो पर गासतो, करम कलंक पंक रहित प्रगटरूप अचल अबाधित विलोकै देव सासतो ॥ ६४ ॥

अर्थ --कोई बुद्धिवंत सम्यक्दृष्टि मनुष्य होय ते पोताना शरीरमा घरने जुये, अने जड चेतननो भिन्न भिन्न स्वभाव जाणवो ते भेद ज्ञान कह्यो, तेमां द्रष्टी आपीने वस्तु वासतो क० वस्तु स्वभावनो विचार करे अतीतकाल अनागतकाल ने वर्तमान कालमां मोहरसविषे भीनो थको, कर्मबंधमा विलास करतो थको पोताना चिदानंद परमात्माने लखे ते पछी क्रमेक्रमे बंधने विदारतोज जाय एवु कार्यकरी मोह

ना स्वभावने मूकतो जाय अने पोताना आत्मानुं ध्यान करे, अने अनुभवमां प्रकाशरूप देखे तारे कर्म कलंक तेहिज पंक के० कादव तेथी रहित प्रगटरूप अचल अबाधित सर्व बाध रहित एवो शाश्वत निरंजन देव परमात्मा पोते छे, एवु देखे

अथ गुन गुनी अभेद कथन व्यवस्था

सवैया तेईसा - शुद्ध नयातम आतमकी अनुभूति विज्ञान विभूतिहि सोई, वस्तु विचारत एक पदारथ नामक भेद कहावत दोई, यो सरवग सदा लखि आपुहि, आतमध्यान करे जब कोई; मेटि अशुद्धि विभावदशा तब सिद्ध सरूपकि प्रापतिहोई६५

अर्थ – हवे शुद्ध अनुभव जे छे ते गुण छे, एक आतमां गुणी छे, तेनुं जेवुं अभेद स्वरूप छे तेवी अभेद अवस्था कही बतावेछेः– शुद्ध निश्चय स्वरुपी आत्मानो अनुभूति के० जे अनुभव छे, तेज विज्ञान विभूती के० विशेष रूप ज्ञान संपदा छे अही आत्मा गुणी छे ने अनुभवज्ञान गुण छे. हवे ए बे वस्तु शुं छे? एवो जो विचार करीये तो एकज आत्म पदार्थ भासेछे एकज पदार्थमां आ गुण अने आ गुणी एवां बे नाम छे तेज भेद केवायछे एम सरवग के० सर्व प्रकारे पोतानेज गुणगुणी रूप लखीने जारे कोई आत्मध्यान करे, तारे अशुद्धविभाव दशा मटीने सिद्धस्वरूपनी प्राप्ति थाय ॥ ६५ ॥

अथ ज्ञाता चितवन स्वरूप कथन

सवैया इकतीसा – अपनेही गुन परजायसो प्रवाहरूप, परिनयो तिहूं काल अपने आधारसों, अंतर बाहिर परकासवान एक रस, खिन्नता न गहे भिन्न रहे भौ विकार सो, चेतनाके रस सरवग भरि रह्यो जीव, जैसे लोंन काकर भर्यो है रस खारसों, पूरन सरूप अति उज्वल विज्ञान घन, मोकों होहु प्रगट विशेष निरवारसो ॥६६॥

अर्थ.– हवे एज वातने जेम ज्ञाता लोक पोताना चित्तमां चितवे तेवुज स्वरुप कही देखाडे छेः– आ जे कोई आत्मा केवायछे, ते तो विज्ञान घन छे; विशेष ज्ञानमय एक पिंड छे, ते अतीत अनागत ने वर्त्तमान ए त्रणे कालमा प्रवाह रुप कत्थायी अविछिन्न धाराये पोतानाज गुण पर्याये करीने पोतानाज ज्ञानादिक गुणनी अवस्था भेदने लीधे अने पोताना आधारथी परना आश्रयविना परिणम्यो रहे छे. अने ए विज्ञान घननी एवी महिमा छे के तेथी मांहे अने बाहिर एक चित्त चेतना रसवडे प्रकाशवान थयो जे पोताने जाणे ते अंतर प्रकाश अने बाह्य वस्तुने जाणे ते बाहिर प्रकाश एवा कार्यमा खिन्नता ग्रहण न करे; अने भव विकारथी न्यारो रही सर्व प्रदेशविषे चेतनना रसे करी जीव भरपूर थई रह्यो

छे ए उपर दृष्टांत कहे छे के, जेम लुणना कांकरा खार रसथी नरेला छे, तेम चेतना रसथी जीव नरपूर थई रह्यो छे एवुं पूर्ण स्वरूप ते अखंमित पणुंज उ ज्वल जे विज्ञान घन पूर्वे वखाण्युं ते मने प्रगट थाओ निःशेष निरवार ते सम विनाव दशानु निवारण करीने पछी ए रीते ज्ञाता पुरुष मनमा चितवे अने ए मांज स्थिर रहे ॥ ६६ ॥

अथ द्रव्य पर्याय अनेद कथन व्यवस्था

कवित्त छंद – जहँ ध्रुव धर्म कर्म छय लछन, सिद्ध समाधि साध्य पद सो इ, सुधोपयोग जोग महि मंमित, साधक ताहि कहे सब कोइ, यों परतछ परोछ स्वरूप सु, साधक साध्य अवस्था दोइ, दुहुको एक ज्ञान संचय करि, सेवे शिव वछक थिर होइ ॥ ६७ ॥

अर्थ – विज्ञान घन छे ते द्रव्य छे, अने ज्ञाता केवाय ते पर्याय छे, एम वि ज्ञान अने ज्ञाता एकज छे, तेथी द्रव्य पर्यायनुं अनेदपणुं बतावे छे – जहां सक ल कर्मनो क्षय लखिये एवो ध्रुव धर्म जे निश्चल स्वनाव छे, एवु कोइक सिद्धप णानुं थवु ते तो पद साध्य केवाय छे, अने शुद्ध उपयोग लेता थका ए मन व चन काय योगमा मंमित थका तिर्थंकर साधु प्रमुख पर्याय लई रह्या छे, तेमने सहु कोई साधु कहेछे एवु साधुपणुं ते प्रत्यक्ष स्वरूप छे, अने साध्यपणुं ते प रोक्ष स्वरूप छे ए बन्ने अवस्था लईने एक विज्ञान घन छे. मोक्षने इछनार साध साध्य बन्नेने एक ज्ञान सचयवडे सेवे, ते बन्ने पदमा विज्ञान घन एक छे, अने ए बन्ने पदनी सेवामा स्थिर थई रहेछे ॥ ६७ ॥

अथ द्रव्य गुण पर्याय नेद व्यवस्था कथन

कवित्त छंद – दर्शन ज्ञान चरन त्रिगुनातम, समल रूप कहिये विवहार; नि हचे दृष्टि एकरस चेतन, नेद रहित अविचल अविकार, सम्यक् दशा प्रमाण उ नें नय, निर्मल समल एकही वार, यों समकाल जीवकी परिनति, कहे जिनंद गहे गनधार ॥ ६८ ॥

अर्थ – शिष्य पूछे छे के स्वामी तमे अनेद व्यवस्था कही ते कया नयना ब ल वडे कही? गुरु केहेछे के व्यवहार नय वडे द्रव्य गुण पर्यायनी नेद अवस्था छे ते कहु हुं --ज्ञान दर्शन चारित्र ए त्रणे आत्माना गुण छे, ए स्वरूपथी जे व्य वहार कहीए ते समल रूप छे, अने एज निश्चय दृष्टीथी जोइये तो दर्शन ज्ञान चारित्र एक चेतना रसमय देखाय छे, अने चेतनाज चेतन छे, तेणे करीने नेदरहि

त अविचल अविकार निर्मल रूप छे. निश्चय नय ने व्यवहार नय ए बन्ने छे ते सम्यक् दशामां प्रमाण छे, जे नय छे ते तो अभिप्राय विशेष छे, माटे एकज अ व्यक्त रूप निर्मल तथा समल रूप जाणिये. एम समकाले निर्मल अने समल जीवनी परिणति थई रही छे, ते श्री जिन देव कहे छे अने गणधर देव सर्दहे छे. ॥६८॥

अथ व्यवहार कथनं.

दोहरा — एक रूप आतम दरव, ज्ञान चरन दृग तीन; भेद भाव परिनाम सों, विवहारे सु मलीन. ॥ ६९ ॥

अर्थः— हवे ज्ञान दर्शन चारित्रनो त्रिक छे ते व्यवहार नयथी थाय छे, ते कहे छे —आत्म द्रव्य जे छे ते एकरूप छे, ने ज्ञान दर्शन चारित्र ए त्रण जे छे ते भेद भाव परिणाम छे; त्यारे एकविषे त्रण भेद थया तेथी ए व्यवहार नयवडे समल रूप थयुं ॥ ६९ ॥

अथ निह्चै स्वरूप कथन.

दोहरा.— यदपि समल विवहारसों, पर्यय शक्ति अनेक; तदपि नियत नय देखिये, शुद्ध निरंजन एक ॥ ७० ॥

अर्थः—निश्चयनयेकरी निर्मल स्वरूपमांज ध्यावबुं भलुं छे ते केहेछेः—यद्यपि व्यवहारनयनी अपेक्षाथी आत्मानेविषे अनेक शक्ति अनेक पर्याय देखायछे, माटे ते समल छे, तोपण निश्चय नयनी अपेक्षाथी शुद्ध निरंजन एकज जाणवामां आवेछे. ७०

अथ शुद्ध कथन.

दोहरा.— एक देखिये जानिये, रमि रहिये इक ठौर; समल विमल न विचारिये, यहे सिद्धि नहि और. ॥ ७१ ॥

अर्थः— हवे शुद्धरूपीज उपादेय छे एवुं केहेछेः— जे एक शुद्ध चेतनामय रूपज देखवु ते दर्शन, तेमज जाणवुं ते ज्ञान; अने तेमां जे रमि रहेवुं ते चारित्र छे, ते नयनी अपेक्षावडे समल अथवा विमल रूप विचारवुं नही. एहिज सिद्ध कहिये, पण बीजा स्वरूपमां सिद्ध नथी. ॥ ७१ ॥

अथ शुद्ध अनुभव प्रशंसा.

सवैया इकतीसा.— जाके पद सोहत सुलछन अनंत ज्ञान, विमल विकासवंत ज्योति लहलही है, यद्यपि त्रिविध रूप व्यवहारमे तथापि, एकता न तजे यों नियत अंग कही है; सो है जीव कैसीहू जुगतिके सदीव ताके, ध्यान करिवेको

मेरी मनसा उमही है, जाते अविचल सिद्धि होतु और नांति सिद्ध, नाहि नाहि नाहि यामें धोखो नाहि सही है ॥ ७१ ॥

अर्थ — हवे एवा स्वरूपनो अनुभव स्थिर रहेवो ते दुर्लभ छे, माटे सर्व ज्ञाता एनो मनोरथ करे छे. जेनेविषे अनंत ज्ञानरूप सुलक्षण शोभेछे, अने विमल प्रकाशवत के० पोतानो तथा परनुं जाणवु एवी ज्योति जेनेविषे लहलही छे अने यद्यपि व्यवहारनयमा बाह्यात्मा, अंतरात्मा, तथा परमात्मा ए त्रिविध रूप छे, तथापि निश्चयनयनी अपेक्षाथी एकताने त्यजे नही एवुं एकरूपी कह्यु छे; ते एवो पदार्थतो जीव छे हवे ते युक्तिथी करी आगल केहेशे ते युक्तियेकरी निरंतर तेनु ध्यान करवाने मारी होस मनमा उमगी रहीछे जेना ध्यानथी पोतानी ज्ञान दर्शन चारित्ररूप रुद्धि अविचल थायछे, एज रीते सिद्ध छे पण बीजे कोई प्रकारे सिद्धि नथी एमां कई धोखो नथी एटजे जूठुं नथी एज वात साची छे

अथ ज्ञाताकी व्यवस्था वर्णन

सवैया तेईसा -- के अपनो पद आपु संभारत, के गुरुके मुखकी सुनि वानी, भेद विज्ञान जग्यो जिनके प्रगटे सु विवेक कला रज धानी, भाव अनत भये प्रतिबिंबत, जीवन मोष दशा ठहरानी, ते नर दर्पनज्यो अविकार रहे थिर रूप सदा सुखदानी ॥ ७२ ॥

अर्थ -- हवे भेद विज्ञानवडे एनो अनुभव थाय छे तेथी मुक्ति मले तेज परमार्थ केहेछे — कोई तो पोतानुं पद जे पोतानु निरालंब स्वरूप, ते पोतेज संभारीने पोतावडे ग्रंथी भेदकरी पोताने उलखेछे कोई तो गुरुना मुखनी वाणी शांभली ने पोताने उलखेछे. अने जेना घटमां जड चेतननुं भेद विज्ञान जाग्युं, तेणे करी पोताना चेतन रुपनी जे न्यारी कला छे, तेनी राजधानी जे तेनुं ईश्वरपणुं जेना घटमा प्रगटयुं, अने एज राजधानीमां अनंत भाव पदार्थ प्रतिबिंबित थया तेना ज्ञायक थया एटले जीवता थकाज मोक्ष दशा ठरी मुक्त स्वरूपी थया अने एमा अनंतभाव प्रतिबिंबित थया तोपण समलरूप न थया, तेथी ते मनुष्य दर्पण एटले आरीसानीपरे विकार रहित थया, स्थिररूप थया, अने सुखदायक थयाछे ७२

अथ भेद ज्ञान प्रशंसा कथन

सवैया इकतीसा --याही वर्त्तमान समै भव्यनिको मिट्यो मोह, लग्यो है अनादिको पग्यो हे कर्म मलसों, उदो करे भेदज्ञान महारुचिको निधान, उरको उजारो भारो न्यारो दुंद दलसों, याते थिर रहे अनुभौ विलास गहे फिरि कबहो

अपनपो न कहै पुदगलसों; यहै करतूति यों जुदाइ करै जगतसों, पावकज्यो भिन्न करै कंचन उपलसों ॥ ७४ ॥

अर्थः— हवे भेदविज्ञाननी उत्पत्ति अने महिमा कहेछे— आ वर्त्तमानकाल विषे भव्यलोकनो मोह भ्रम टली जाय जे मोह कर्म आत्माने अनादिकालथी लाग्युं छे; अने कर्ममलमां व्यापी रह्योछे, ते मोह भ्रम मटवाथी भेद विज्ञाननो उदय थाय, ते भेद विज्ञान केवुंछे ? महारुचिनुं निधान छे. ए भेद विज्ञानमां महोटी रुचि पामीये छिये एटले महारुचिनुं कारण छे. भेद विज्ञानथी गरिष्ट उरुं अजवालुं प्रगट थायछे, ते अजवालु केवुंछे ?

एटले महा धाम धुमथी न्यारोछे द्वंद्व दशाथी नीकली स्थिरतामां रहे, अने पोताना अनुभवनो विलास ग्रहण करे, पोताने सत्यार्थ पणे जाणे, पछी ए भेद विज्ञान पाम्या थकी शरीर कर्मादि पुद्गल रूपी जाणीने पोतानुं न कहे आत्मारूप न कहे करतूति के० ए जे भेदविज्ञाननी क्रिया तेज जगतथी जुदाईने करे, पांच द्रव्यथी जुदाई करे, अही दृष्टांत बतावेछे.— जेम अग्नी माटी पाषाणने कंचनथी जुदी करे छे तेम जाणी लेवु ॥ ७४ ॥

अथ परमार्थ शिक्षा कथन.

सवैया इकतीसाः— बानारसी कहै भैया भव्य सुनो मेरी शीख, केहू भांति कैसेहूके ऐसो काज कीजिए, एकहू मुहूरत मिथ्यातको विध्वस होइ, ज्ञानको जगाइ अंस हंस खोजि लीजिये, वाहीको विचार वाको ध्यान यहै कोतुहल, योंही भरि जनम परम रस पीजिए, तजी भववासको विलास सविकासरूप, अंतकरि मोहको अनंत काल जीजिए ॥ ७५ ॥

अर्थ.—हवे शुद्ध जीवद्रव्यमा रहेवुं तेज परमार्थ छे तेनी शिक्षा कहेछे— बणारसीदास केहेछे.— अहो भाई भव्य जीवो, मारी शीक्षा सांभलो केवी पण रीतेथी कोई द्रव्य क्षेत्र काल भाव पामीने एवु काम करवु के जेणे करीने एक मुहुर्तमात्रमां मिथ्यात मोहनो विध्वस थाय अने ज्ञाननो अंस जगावी लेवो, अने सोहं हंसो एवी ध्वनि करतो हंस जे आत्मा तेने खोजी लइये पछी तेनुं लक्षण विचारवु पछी तेने ओलखीने तेनुं ध्यान करवु. एवी एनी कला खोजीने कुतोहल जे खेल ते कर्या करियें, अने तेज जनम परियंत परम रस पीवो. एरीते सविकार रूपथी फेली रह्यो एवो भववासनो विलास तेने तजीने तथा मोहनो अंत आणीने अनंत कालसुधी जीवीए एटला प्रकारे सिद्ध थवायछे ॥ ७५ ॥

अथ तीर्थंकरकी स्तुति बाह्यरूप कथनः-

सवैया इकतीसा.—जाकी देहद्युतिसों दसो दिशा पवित्र भई, जाके तेज आगे सब तेजवंत रुके है, जाको रूप निरखी थकित महारूपवंत, जाकी वपुवाससों सुवास और लुके है, जाकी दिव्य धुनी सुनि श्रवनकों सुख होत, जाके तन लछन अनेक आइ ढूके है, तेई जिनराज जाके कहे विवहार गुन, निहचै निरखि सुद्ध चेतनसों चुके है ॥ ७६ ॥

अर्थ – हवे चेतन महिमावान थयाथी पुद्गलपण महिमावान थाय माटे कविराज तीर्थंकरना बाह्य शरीररूप पुद्गलनो महिमा कहेछे – जेनी देहनी द्युति एवी पसरी रहीछे के जेथी दसे दिशा पवित्र थई जायछे, एटले शोभायमान थायछे अने जेना तेज आगल सर्व तेजवाला छुपी जायछे एटले सर्व देवता मंद तेजवंत थायछे अने जेनुं रूप जोईने महारूपवंत पंच अनुत्तरवासी देवता पण चकित थई रहेछे अने जेना शरीरनी सुवासथी अन्य सुवासी वस्तु सर्व लुकी जायछे अने जेनी दिव्य ध्वनि सांभलीने श्रवणने सुख थायछे एटले भव्य अभव्य सर्वने ते वाणी मीठी लागेछे अने जेना शरीरमा अनेक शुभ लक्षण आवी ढुकी रह्याछे एवा श्री जिनराज देव छे तेमना एटला गुण कह्या ते अशुद्ध व्यवहार नयनो आश्रय लईने कह्या पण, निश्चयनयथी ए कहेला गुण सर्व शुद्ध चेतननी भिन्नता दर्शावेछे ७६

अथ जिन स्तुति व्यवहाररूप पुन -

सवैया इकतीसा —जामे बालपनो तरुनपो वृद्धपनो नांहि, आयु परजंत महारूप महा बल है, बिनाहि जतन जाके तनमे अनेक गुन, अतिसै विराजमान काया निरमल है, जैसैं बिनुपवन समुद्र अविचलरूप, तैसैं जाको मन अरु आसन अचलहै, ऐसो जिनराज जयवंत होउ जगतमे, जाकी शुभगति महा सुकृतिको फल हैं ॥ ७७॥

अर्थ.--हवे फरी व्यवहारनय वडे जिन सुति करेछे -- जेमा जन्मथी मांडीने मरण पर्यंत महारूप अने महाबल समान रहेछे, पण बालपणु तरुणपणु वृद्धपणु ए त्रण जे अवस्थाना भेद तेमा रूपमा अने बलमां भेद न पामे, जेना सहज स्वभावे जतनविना शरीरमा अनेक गुण आवी रहेछे, अने जेनेविषे चोत्रीस अतिशय गुण विराजमान थई रह्याछे, अने जेनी काया प्रस्वेदरहित निर्मल रहेछे. जेम पवननी लहेर विना समुद्र अचलरूप थई रहेछे तेम जेनुं मन अचल छे, ने आसनपण अचल छे, अहीं गतिनी अपेक्षाविना आस

न अचल कहुछे, पण निरंतर अचल आसन संभवे नही एवा जिनराजदेव जग तमां जयवंत थाओ जेनी रूडी भक्ति करवाथी महामुक्ति फलनी प्राप्ती थायछे.

यथार्थ कथन –

दोहरा.– जिन पद नाहि शरीरकों, जिन पद चेतन मांहि; जिन बर्नन कछु और है, यह जिन बर्नन नांहि. ॥ ७८ ॥

अर्थ·–एटली व्यवहार स्तुति करीने हवे सत्यार्थ वात कहे छेः–ए जे जिन नाम छे ते जीव विपाकी छे पण पुद्गल विपाकी नथी, तेथी जिनपद ते शरीरनो नथी, जिनपद तो चेतननो छे, तेथी जिनेश्वरनी स्तुति कोई औरज छे पण पूर्वे जे जिनेश्वरनी स्तुति करी ते जिन स्तुति नथी. इहां शरीर जड छे अने आत्मा चेतन छे ए बने भाव भिन्न स्वभावमां छे तेनुं दृष्टांत आपेछे. ॥ ७८ ॥

अथ जड चेतन भिन्नभाव दृष्टांत कथनः–

सवैया इकतीसाः–ऊंचे ऊंचे गढके कंगुरे यों विराजत है, मानो नभ लोक गीलवेको दांत दियो है, सोहे चिहोंउर उपवनकी सघनताई, घेरा करि मानो भूमि लोक घेरि लियो है; गहरी गंभीर खाई ताकी उपमा बनाई, नीचो करि आनन पताल जल पियो है, ऐसो है नगर यामे नृपको न अंगकोउ, योही चिदानंदसों शरीर भिन्न कियो है ॥ ७९ ॥

अर्थ·– जेम कोई गढना ऊंचा ऊंचा कांगरा बीराजे छे (आहि कवि उत्प्रेक्षणा करे छे.) पण ते कांगरा नथी पण मानुं छुं जे आ नगरमां स्वर्गलोकने गली जवाने दांत आप्यां छे, एटले जाणे स्वर्ग लोकने गली जशे. अने एनी चारे तरफ उपवन एटले बाग वाडीनी सघनता एवी शोभी रही छे के जाणे भूमिलोक एटले मनुष्य लोक तेणे घेरी लीधो छे अने ए नगरनी चारे बाजुए ऊंडी खाही बनी ते जाणे नीचुं आनन एटले मुख करीने पातालज पाणी पातो होयनी ए रीते जेणे त्रणे लोक जीत्या छे एवुं नगरनुं वर्णन कीधुं पण ए नगरमां कोई राजाना अंगनुं कांई वर्णन कीधुं नथी. मतलब के चिदानंदथकी शरीरने भिन्न करी बताव्युं. ॥ ७९ ॥

अथ तिर्थंकरकी निश्चे स्तुति सरूप कथन वस्तु वर्णनं.

सवैया इकतीसा·– जामें लोकालोकके सुभाव प्रतिभासे सब, जगी ज्ञान सगति विमल जैसी आरसी, दर्शन उदोत लियो अंतराय अंतकीउ, गयो महामोह भयो परम महारसी, सन्यासी सहज जोगी जोगसो उदासी जामें, प्रकृति पंचाशी ल

गि रहि जरि ढारसी, सोहै घटमंदिरमे चेतन प्रगटरूप, ऐसो जिन राज तांहि वंदत बनारशी ॥ ८० ॥

अर्थ – हवे तीर्थंकरपदने लेई रहेली जे वस्तु छे तेना स्वरूपनुं वर्णन करेछेः- जेमां लोक अने अलोकनो स्वभाव एटले खट द्रव्य भाव प्रतिभासी रहे, एवी ज्ञान शक्ति निर्मल प्रगटी छे जेम आरीसामां पदार्थना भाव भासेछे, एवी रीते जेना ज्ञानमा सर्व भाव भासेछे, एटले ज्ञानावरण गयुं, अने दर्शनावरणना नाश थवा थी केवल दर्शन उद्योत थयु अने अंतराय नाश कर्यो, तेथी अनंतवीर्य धैर्यवत थयो, अने महा मोह कर्म जे छे ते नाश पाम्यो, तेथी परम उत्कृष्ट महाऋषी थयो, तेणे करी यथाख्यात चारित्रनो संन्यास एटले तेनो धारण करनार ज्ञान दर्शन चारित्र आदि जे सहजयोग छे तेनो धरनार, मन वचन कायना योगथी उदास थईने अघातिक चार कर्मनी पंच्यासी प्रकृती सत्ताये रहि छे, ते पण बलीने खाखजेवी थई रही छे, अने जेना घटमंदिरमां चेतन देव छे ते प्रगटपणे शाक्षी रह्योछे. एवा श्री जिन राज देव तेने वणारसीदास वदन करेछे ए निश्चय स्तुति कही॥८०॥

हवे एवा शुद्ध चेतननी स्तुतिनुं दृष्टांत देखाडीने हवे निश्चय व्यवहारनो निर्णय करेछे अथ श्री निश्चय व्यवहार तीर्थंकर स्तुति कथन –

कवित्त छंद –तनु चेतन विवहार एकसे, निहचे भिन्न भिन्न है दोइ, तनु सुती विवहार जीव श्रुति, नियत दृष्टि मिथ्या श्रुति सोइ, जिन सो जीव जीव सो जिनवर, तनु जिन एक न माने कोइ, ता कारन तनकी अस्तुतिसों, जिनवर कीअस्तुति नहि होइ ॥ ८१ ॥

अर्थ –शरीर अने आत्मा ए बने व्यवहारमां एक सरखा छे, अने निश्चयथी जोइये तो बने जुदा जुदा छे एमाटे तननी स्तुति करतां जीवनी स्तुति करिये ए व्यवहार छे. अने निश्चे दृष्टीथी जोता ते मिथ्या स्तुतिछे जिनपद कर्म जे छे ते जीव विपाकी छे, पण पुद्गल विपाकी नथी, तेथी जिन ते जीव छे, अने जीव ते जिन छे, पण शरीर अने जिन एक करी न मानीए, ते कारणे तननी स्तुति करी ते जिनवरनी स्तुति थई नही ॥ ८१ ॥

अथ वस्तु स्वरूप कथन दृष्टांत करी दिढाइयतु है·–

सवैया तेईसा – ज्यों चिरकाल गडी वसुधा महि, भूरि महानिधि अंतर गूझी; कोउ उखारि धरै महि ऊपरि, जो दृगवंत तिन्है सब सूझी; त्यों यह आतमकी

अनुभूति पगी जड भाव अनादि अरुझी, नैजुगतागम साधि कही गुरु, लछन वेदि विचछन बूझी. ॥ ७२ ॥

अर्थ—शिष्य पुछेछे के एवो अनूपम महिमानो धारक जीव आ शरीरमा केम पामिये ? त्यारे गुरु दृष्टांत आपी न्यारी अद्भूत स्वरूप वस्तु आ शरीरमा दृढावे छे— जेम कोई महानिधी घणा काल सूधी धरतीनी अंदर दटाई रही होय, ते अंतर गुप्त थई रहेली लक्ष्मीने कोई खोदी काढी जमीन उपर मूके त्यारे जे नेत्रवत पुरुष छे तेने बधी देखाई आवेछे तेम आ आत्मानो अनुभव अनादि कालथी जड एटले पुद्गल द्रव्यमां दटाई रह्यो छे, तेने नयसहित आगम जे सिद्धांत तेणेकरी गुरुए साध्य एटले साधने करी सिद्ध करी दीधाथी विचक्षण पुरुष तेने सारी पठे जाणी लियेछे. ॥ ७२ ॥

हवे तेनो भेद ज्ञान पाम्याथी उपादेय वस्तुनुं उपादान करवाथी आवे ते उपर धोबीनुं दृष्टांत बतावे छे — अथ भेदज्ञान स्वरूप कथन धोबीको दृष्टांत —

सवैया इकतीसा — जैसैं कोउ जन गयो धोबीके सदन तिन्ह, पहिर्यो परायो वस्त्र मेरो मानि रह्यो है, धनी देखि कह्यो भैया यहु तो हमारो वस्त्र, चीन्ह्यो पहिचानतही त्याग भाव लह्यो है, तैसैंही अनादि पुदगलसों सयोगी जीव, संगके ममत्वसों विभावतामें वह्यो है भेद ज्ञान भयो जब आपो पर जान्यो तब, न्यारो परभावसों स्वभाव निज गह्यो है ॥ ७३ ॥

अर्थ— जेम कोई मनुष्य धोबीने घेर गयो अने पारकु वस्त्र पोतानुं मानी भूलमां लईने पेहेर्युं, एटलामां ते वस्त्रनो खरो मालक मल्यो, तेणे जोईने कह्यु के, भाई, आ वस्त्र जे ते पेहेर्यु छे, ते महारो छे ते वखते पेला मनुष्ये ते वस्त्र जोयुं ने परायुज छे एवु जाण्युं, तेवारे ते वस्त्रनो त्याग भाव उपज्यो, ने तेणे ते वस्त्र तेना धणीने हवाले कीधुं. तेमज जीवने अनादि कालथी पुद्गलनो संयोग थयो छे, एटले शरीर तथा कर्मनो संयोगी जीव अनादि कालनो छे, तें सगना ममत्वथी विभावता एटले उलटा भावमां वही रह्यो हतो ते ज्यारे जड चेतननी भिन्नतानुं ज्ञान थयु त्यारे ते पोताना स्वरूपने तथा परना स्वरूपने समज्यो, अने ते पररुपथी जुदो थयो ने पोताना स्वरूपनुं ग्रहण कीधुं. ॥ ७३ ॥

ज्यारे निश्चय पोतानुं स्वरूप जाण्युं त्यारे ज्ञाता एवो विचार करवा लागे ते कहेछे—

अथ निश्चय स्वरूप कथन —

अडिल छंद — कहै विचछन पुरुष सदा हो एकहो, अपने रससो भर्यो आ

पनी टेकहो, मोह कर्म मम नांहि नांहि भ्रम कूप है, शुद्ध चेतना सिंधु ह मारो रूप है. ॥ ७४ ॥

अर्थ — विचक्षण पुरुष केहेछे के, हुं सदा एक पणे रहु छुं, चेतना रस वडे भरपूर छुं, अने पोताना आधारथी रहुं छुं, मने बीजानो आश्रय नथी अने जे भात भातनो मोह कर्मनो प्रपंच छे ते महारुं स्वरूप नथी, ए भ्रम रूप कूप छे ते मारुं स्वरूप नथी, पण शुद्ध चेतनानो सिंधु के० समुद्र ते मारु रूप छे. ॥ ७४ ॥

हवे एवा पोताना स्वरूपने जाण्याथकी केवी अवस्था प्राप्त थई ते केहेछे —

अथ ज्ञान व्यवस्था कथन —

सवैया इकतीसा — तत्वकी प्रतीतिसों लख्यो है निज पर गुन, दृग ज्ञान चरन त्रिविध परिनयो है, विसद विवेक आयो आछो विसराम पायो, आपुहीमे आपनो सहारो सोधि लयो है, कहत बनारसी गहत पुरुषारथको, सहज सुभाव सों विभाव मिटि गयो है, पन्नाके पकाय जैसै कंचन विमल होतु, तैसै शुद्ध चेतन प्रकाश रूप भयो है ॥ ७५ ॥

एवी जीव तत्वनी प्रतीति थई तेणे करीने ज्ञानादिक निजगुण अने परगुण ते बीजा द्रव्यना गुण जे गति, स्थिति, अवगाह, वर्त्तना, वर्णादिक ए सर्व लखीने दर्शन, ज्ञान अने चारित्र ए त्रणे गुणनेविषे परिणमी रह्यो छे, निर्मल विवेक आव्याथी सारो विश्राम पाम्यो ते स्थिरता पामीने पोताने विषेज पोतानो सहज स्वभाव सोधी लीधो अहीं बणारसीदास केहेछे के त्यारे आ पुरुषार्थ ते आत्मस्वरूप अर्थ तेनुं ग्रहण करीने सहज स्वभावमा राग द्वेष मोहरूपी विभाव जे अनादिकालनो हतो ते मटी गयो अहीं दृष्टांत कहेछे —जेम पाकी इटनी भठीमां गालवाथी सुवर्ण निर्मल थायछे, तेम शुद्ध चेतन निर्मलरूप थईने प्रकाश रूप थयोछे ॥ ७५ ॥

हवे विभाव टूटवाथी निज स्वरूप प्रगटताने पामे तेउपर नटी जे नाचनारी स्त्री, तेनुं दृष्टांत कही देखाडे छे —अथ वस्तु स्वरूप कथन पातरको दृष्टांत —

सवैया इकतीसा —जैसै कोउ पातर बनाय वस्त्र आभरण, आवति अखारे निशि आडो पट करिके, दुहू उर दीवटि संवारि पट दूरि कीजे, सकल सभाके लोक देखै दृष्टि धरिके, तैसे ज्ञान सागर मिथ्यात ग्रंथि भेद करि, उमग्यो प्रगट रह्यो तिहुं लोक भरिके, ऐसो उपदेस सुनि चाहिये जगत जीव, सुद्धता संभारे जग जालसों निकरिके ॥ ७६ ॥

अर्थ —जेम कोई नाचनारी स्त्री आडो पट करीने तथा वस्त्र भूषणवडे पोतानो

वेष मनोहर बनावीने रातना वखते अखाडामां आवी ऊन्नो रहे, ते आडा पटथी रात्रीनेविषे देखाय नही, ने जारे अंतरपट दूर करी बेहु तरफ हाथमां काकडा सलगावी परिचय दूर करे त्यारे सर्व सन्नाना लोक दृष्टी धरीने तेना रूप सणगार वगेरेनी शोन्ना प्रगट जोई रीझे छे, तेम ज्ञाननो सागर एवो जे आत्मा, ते मिथ्यातरूप आडा पटथी प्रछन्न रह्यो हतो, ते कोई समे मिथ्यात ग्रंथी रूप पटने नेदीने प्रगट थयो, ते ज्ञान समुद्र त्रण लोके नरी रह्यो छे, एटले त्रणे लोक ए आत्माने विषे नासी रह्या छे हवे गुरु केहेछे के अहो जगतवासी जीव, में जे पूर्वे उपदेश दीधो एवा उपदेशनुं श्रवण करवुं तारे जरूरनुं छे, ते सांनली जगत जाल मांथी निकलीने तारी शुद्ध दशाने सन्नारी लेईस. ॥ ८६ ॥

इति श्रीनाटिक समयसारना प्रथम जीव द्वारनुं निरूपण वालबोध सहित समाप्त थयुं.

दोहरा.--जीव तत्व अधिकार यह, कह्यो प्रगट समुझाइ; अब अधिकार अजीवको, सुनो चतुर मन लाइ ॥ ८७ ॥

अर्थ.--जीवतत्वनुं जेवुं स्वरूप छे तेनो ए अधिकार एटले स्वरूप, लक्षण, गुण, प्रगट समजाव्यो. हवे बीजो जे अजीव द्वारछे, तेमां अजीवनो अधिकार मुख्यपणे करीने कहुंछुं, ते चतुर लोको चित्त दईने सांनलजो ॥ ८७ ॥

हवे अजीवने पण ज्ञानवडेज जाणवानुं बनेछे अने आ ग्रंथमां अनिध्येय ज्ञानछे माटे संपूर्ण ज्ञाननी अवस्था निरूपण करेछेः—अथ ज्ञानकी व्यवस्था कथनः—

सवैया इकतीसा --परम प्रतीति उपजाइ गनधरकीसी, अंतर अनादिकी विनावता बिदारी है, नेदज्ञान दृष्टिसों बिवेककी सकति साधि, चेतन अचेतनकी दशा निरवारी है; करमको नासकरी अनुनौ अन्यास धारी, हियेमें हरख निज शुद्धता संनारी है; अतराय नास गयो शुद्ध परकास नयो, ज्ञानको विलास ताको बंदना हमारी है. ॥ ८८ ॥

अर्थ.--प्रथमथी जे ज्ञानवडे नव्य लोकना आत्मामां गणधरनी माफक तत्वनी परम प्रतीति उपजावी, अने समकालपणे अंतरात्मानेविषे अंतरनी जे अनादीनी विनावता (मूढता) तेने विमारीछे, अने जड चेतन ए बने निन्न छे एवु नेदज्ञान प्रगटयुं तेनी दृष्टी तेज विवेकनी शकति ते साधि एटले जुदा जुदा गुण पर्याय जाण्या, अने जुदा जुदा जाणीने चेतन तथा जड तेनी दशा ठीक कीधी; ते पछी गुण श्रेणीने धरीने क्षणेक्षणे कर्मनी निर्जरा करवा लाग्यो, ते करी

अनुनव अभ्यास कीधो, एटले सत्य प्रत्ययमा पेठो, अने हृदयानेविषे हर्ष पाम्यो. अने पोतानी शक्ति उत्कृष्ट कीधी. ए कार्य थता अंतराय कर्म नाग्युं. अने केवल रूप प्रकाश पाम्यु, एवो कोई क्रमे क्रमे करी ज्ञाननो विलास उत्पन्न थयो, तेने अमारी वदनाछे ॥ ८८ ॥

शिष्य पूछे छे के स्वामी, तमे जे ज्ञान विलास कह्यो, तेतो तेवोज-छे, पण ते पामवु दूर्लन छे, ते उपर गुरु परमार्थनी शिक्षा दिये छे.-- अथ परमार्थ शिक्षा कथन --

सवैया इकतीसा -- नैया जगवासी तूं उदासी व्हैके जगतसों, एक छ महीना उपदेस मेरो मानु रे, औंर संकलप विकलपके विकार तजि, बैठके एकत मन एक ठोर आनु रे, तेरो घट सर तामे तुही है कमल ताको तूही मधुकर है सुवास पहचानु रे, प्रापति न व्है है कछु ऐसो तू विचारतु है सही व्हैहे प्रापति सरूप याही जानुरे॥८९॥

अर्थ -- अरे जीव जगतवासी नाई तु जगत के० नव भ्रमण तेनु कारण (शब्द, स्पर्श, रूप, रसने गंध,) एने आचाराग सूत्रना वचनथी जगत कहिये तेथी उदास थईने, एक छ महिना सूधी अखंड धाराए मारो उपदेश शांनल एटले मान्य कर एमा छ महीना कह्या ते उपलक्षणथी जाणवा, पण नियम नथी, अने आर्त्तरौद्रध्यानथी अज्ञान दशामां सकल्प विकल्प घणा कठे छे, तेथी आत्मानेविषे विकार उपजे छे, माटे तेना विकारने तजीदे, अने एकात आसने बेसी मनने एक ठेकाणे परिणामथी राख, तारो घट के० शरीर तेनेज सरोवर जेवो देख, अने तेमा एक उज्वल कमल जोइये. ते कमल तूज छे अने तूज उज्वल रूपने लीधे मधुकर रूपे था, एम करवाथी तू सहस्र दल कमलमां विलास कर, ए पिंडस्थ ध्यान लगाव्युं एटलुं कार्य करवाथी पोताना स्वरूपनी प्राप्ति न थशे एवु तू क्यारे पण विचारीश नही एवा प्राणायामवडे कमल कोष खुलशे ने पोताना रूपनी प्राप्ति थशे, एज रीते गुणज्ञान खुलशे ॥ ८९ ॥

हवे जीवने अजीव एक सरखा थई रह्याछे, ते जुदा जुदा लक्षणवडे देखाडेछे.

अथ वस्तु व्यवस्था वर्णनं --

दोहरा -- चेतनवत अनंत गुण, सहित सु आतमराम, याते अनमिल और सव, पुद्गलके परिणाम ॥ ९० ॥

अर्थ -- चेतनावत छे अने अनंत गुणसहित जे पदार्थ छे ते तो आत्माराम

जाणवो; अने जे एटलां लक्षणोथी मलेला नथी ते सर्व अपर पुद्गलना परिणाम जाणवा. ॥ ९० ॥

हवे एवी पिछान अनुभवविना न होय माटे अनुभवनी प्रशंसा केहेछेः—

अथ अनुभव प्रशंसा—

कवित्त छंद.—जब चेतन सँभारि निज पौरुष, निरखै निज दृगसो निज मर्म, तब सुखरूप विमल अविनाशक, जानै जगत शिरोमनि धर्म, अनुभौ करै शुद्ध चेतनको, रमै सुभाउ वमै सब कर्म, इहि बिधि सधै मुक्तिको मारग, अरु समीप आवै शिव सर्म. ॥ ९१ ॥

अर्थ.—ए चेतन जे छे, ते ज्यारे पोतानुं पुरुष के० पराक्रम संभारे, ने पछे पोतानी दृष्टी करी पोतानुं मर्म जे चेतनपणुं छे ते निरखे, त्यारे पोतानो धर्म के० स्वभाव सुख रूप जे निर्मल पणुं, अविनाशी पणुं, जगत शिरोमणी पणुं, सहज स्वरूप तेने जाणे एज अनुभव एटले जे निःसंदेह यथार्थ ज्ञान छे तेज चेतनने शुद्ध करेछे, अने एज अनुभव जे छे ते पोताना स्वभावमा रमे अने सर्व कर्मने दूर करे, एरीते अनुभववडे मुक्ति मार्ग सिद्ध थायछे, अने शिवशर्म के० मोक्षनुं सुखते पामेछे९१

हवे ए अनुभवथकी चेतनविषे पोतानुं अस्तित्व साधीने परनुं नास्तित्व साधेछेः—

अथ अनुभव प्रशंसाः—

दोहरा—बरनादिक रागादि जड, रूप हमारो नांहि; एक ब्रह्म नहि दूसरो, दीसे अनुभव मांहि ॥ ९२ ॥

अर्थ—आ शरीरमां जे वर्ण गंध रस स्पर्श राग द्वेषादिक पदार्थनेविषे मोह छे ते मारुं आत्मरूप नथी, अने अनुभवविषे पोतानुं एकज जाणपणानुं रूप अमे जोइये छइये. पण बीजुं रूप जोता नथी. ॥ ९२ ॥

हवे जीव अजीव एक क्षेत्रावगाही थया ते जुदा केम केहेवाय? ते उपर दृष्टांत केहेछेः— अथ वस्तु विचार.—

दोहरा— खाडो कहिये कनकको, कनक म्यान संयोग, न्यारो निरखत म्यान सो, लोह कहैं सब लोग. ॥ ९३ ॥

अर्थः— जे सोनानी म्यानमां राखेली तलवार लोक भाषामां सोनेरी केहेवायछे, ते सोनेरीनो योगतो म्यान उपर छे, ज्यारे तरवारने सोनेरी म्यानमाथी बार काहाडी जोइये त्यारे तरवार लोढानी जणाय, पण सोनेरी नही जणाय. तेम अंतरात्मा माहे जाणवो ॥ ९३ ॥

कोतुक, सो जलिये बरनादि पसारो, मोहसुं भिन्न जुदो जडसो चिन, मूरति नाटक देखनहारो ॥ ९९ ॥

अर्थ – आ घटमा अनादि कालनो विस्तारवत भ्रमरूप महा अविवेकनो अखाडो मचाई रह्यो छे, ते अखाडामा बीजो कोई शुद्ध स्वरूप तो देखातो नथी, अने पुद्गल द्रव्य जे छे ते अत्यत महोटो नृत्य करी रह्योछे, एज अविवेकनी आज्ञा ते अजीव पुद्गल द्रव्य छे तेहिज एकेंद्रियादिकना वेषमां लेवरावी फेरवी फेरवी वर्णादिकना पसारनी सामग्री लेवरावी कौतुक देखाडी रह्यो छे. हवे इहा विवेकरूप जे छे ते मोहथी जे पुद्गल जड तेथी जूदो छे तेहिज चिन्मूर्त्ति एटले चेतन राजाछे ते तो इहा नाटिकनो देखनारो छे ॥ ९९ ॥

हवे जे जीव अने अजीवनुं एकतापणुं मिथ्या ज्ञानमां भासेछे, तेतो ज्ञानदृष्टिथी भिन्न भिन्न रुप देखायछे, ते कहेछे –अथ ज्ञान विलास कथन –

सवैया इकतीसा – जैसे करवत्त एक काठ वीचि खम करै, जैसे राजहस निरवारे दूध जलको; तैसे भेदज्ञान निज भेदक शकतिसेति, भिन्न भिन्न करै चिदानद पुदगलको, अवधिको ध्यावै मनपर्येकी अवस्था पावै, उमगिके आवे परमावधि केवलको, याही भांति पूरन सरूपको उद्योत धरै, करै प्रतिविंवत पदारथ सकलको ॥ १०० ॥

अर्थ – जेम एक लाकडाने करवती वेहेरीने बे भाग करेछे ने जेम राजहस दूधने पाणी एकठा होय तेने जुदा जुदा करी नाखे छे तेम जेने भवितव्य परिपाके भेदज्ञान प्रगटे ते पोतानी भेदक शक्तिवडे चिदानद तथा पुद्गल एकमेक होय तेने जुदा जुदा करेछे अने तेज भेदज्ञान पोताना क्षयोपशम माफक पोतानी अवधिने ध्यावे एटले पोतानी अवधि ज्ञानरूप पर्यायने पामे, पछी तेहिज भेदज्ञानथी विशुद्ध थयेलुं मनपर्याय अवस्थाने पामे, अने तेथी विशुद्ध थईने परमावधि सुधी पोचे, एम वधते वधते भेदज्ञान थकी पोतानुं पूर्ण स्वरूप उद्योतवत धारण करे, एटले केवल अवस्था धारे, अने सर्व पदार्थने प्रतिबिंबित करे॥१००॥

इती श्री समयसार नाटकनो बीजो अजीवद्वार बालावबोध सहित समाप्त थयो.

दोहरा – यह अजीव अधिकारको, प्रगट बखान्यो मर्म, अब सुनु जीव अजीवके, करता किरिया कर्म ॥ १०१ ॥

अर्थ –अजीव द्वार एरीते समजावीने कह्यो अने एनुं रहस्य ए छे के अजीव पदार्थ जाणीने तेथकी जीव पदार्थ जुदो जाणवो; तेनुं वर्णन कर्युंछे. हवे जीव

नेविषे कर्त्ताकर्मक्रियानो विचार अने अजीवनेविषे पण कर्त्ताकर्मक्रियानो विचार गुरु कहेछे ने शिष्य शाम्भलेछे ॥ १०१ ॥

हवे कर्त्तापणामां जीवनी मिथ्या दृष्टि छे ते भेदज्ञानथी छुटे. माटे भेदज्ञाननुं माहात्म्य कहेछे.—अथ भेद ज्ञान माहात्म्य बर्नन.-

सवैया इकतीसा.—प्रथम अज्ञानी जीव कहै में सदीव एक, दूसरो न और में ही करता करमको, अंतर बिबेक आयो आपापर भेद पायो, भयो बोध गयो मिटी भारत भम्मको; भासै छहो दरबके गुण पर्जाय सब, नासे दुख लख्यो मुख पूरन परमको; करमको करतार मान्यो पुदगल पिंम, आपु करतार भयो आतम धरमको. ॥ १ ॥ जाहि समै जीव देहबुद्धिको विकार तजै, वेदत सरूप निज भेदत भरमको; महा परचंम मति मंमन अखंम रस, अनुभौ अभ्यास परकासत परमको, ताही समै घटमें न रहै विपरीत भाव, जैसे तम नासै भानु प्रगट धरमको; ऐसी दशा आवै जब साधक कहावै तब, करता व्है कैसे करे पुग्गल करमको ॥२॥

अर्थ —प्रथमथी अज्ञानी जीव जे छे, ते पोताना रूपनी भूलवडे एमज कहेछे के निरतर कर्मनो कर्त्ता हुंज छुं, बीजो कोई नथी एरीते जीवनी अपेक्षा लईने कर्मनो कर्त्ता बनेछे पछी जारे घटमां विवेक प्राप्त थाय, त्यारे निजरूपनो भेद समज्यो एटले बोध थयो, अने भ्रम के० मिथ्यातनो खेल मटी गयो, ने भ्रम नाश थता छए द्रव्यना गुण पर्याय आत्मानेविषे भासवा लाग्या, क्षण क्षण अवस्था भेद ते पर्याय कहीए अने पूर्णपुरुष जे छे तेनुं मुख दीठुं, तेणे करीने कर्मनो कर्त्ता पुग्गलपिंम मान्यो अने पोते अकर्त्ता थयो अने आत्मिक धर्म जे ज्ञायकता, वेदकता, तथा चेतनता इत्यादिक स्वभावनो हुं पोते कर्त्ता छु एम मान्युं, एटले कर्मनो अकर्त्ता अने पोताना स्वभावनो कर्त्ता एम केहेवा लाग्यो ॥ १ ॥

जे प्रस्तावे जीव छे, ते श्रेणीनुं आरोहण करे, अप्रमत्तता पामे, देहबुद्धिनो विकार तजे, एटले बाह्यात्माने पोतापणे जाणवो ए विकार छांमे, ने पोतानुं स्वरूप शुद्धज वेदे, अने भ्रमनो भेद करे, घणी तीक्ष्णबुद्धिनी शोभानुं करनार, अने जेनो रस अखंम छे, पूर्ण रसस्वाद छे, एवो जे शुद्धात्मानो अनुभव छे, तेनो अभ्यास करी अंते परमात्मानो प्रकाश करे तेज प्रस्तावे घटपिंममां विपरीत भाव रहे नही, एटले अहंबुद्धि वडे जे अकर्त्ताने कर्मनो कर्त्ता करी मान्यो. ए विपरीत भाव हतो ते रहे नही. ते उपर दृष्टांत कहेछे.—जेम भानुधर्म के० सूर्यना तीक्ष्ण तेजना प्रकाशवाथी तम जे अंधकार ते सर्व नाश पामेछे; तेम एवी अप्र

मत्त दशा ज्यारे प्राप्त थाय, त्यारे ते आत्मस्वभावनो साधक थयो, ते वखत कर्म नो कर्त्ता केम थाय ! अने पुद्गलरूपी कर्मने केवी रीते करे ! एनो अहीं उपयोग नथी. ॥ ३ ॥

हवे अहीं प्रथम आत्माने कर्मनो कर्त्ता मानीने पछी तेने अकर्त्ता मानवो ते ज्ञानना सामर्थ्य वडे बनेछे ते कहेछे.—अथ ज्ञानसामर्थ्यवर्णनं —

सवैया इकतीसा — जगमें अनादिको अज्ञानी कहै मेरो कर्म, करता में याको किरियाको प्रतिपाखी है, अंतर सुमति जासी जोगसों भयो उदासी, ममता मिटाय परजाय बुद्धि नाखी है; निरभै सुभाउ लीनो अनुभौके रस भीनो, कीनो व्यवहार दृष्टि निहचैमे राखी है; भरमकी डोरी तोरी धरमको भयो धोरी, परमसों प्रीति जोरी करमको साखी है ॥ ४ ॥

अर्थ — संसारनेविषे जीव अनादिकालथी अज्ञानीज छे, ते कहेछे के शुभ अने अशुभ कर्मनो कर्त्ता हुंज छुं क्रियानो प्रतिपक्षी के० कर्मनी क्रियानो पक्षराखनारो छुं, पछी ज्यारे अंतरमां सुमतीनो भास थयो, अने मन वचन तथा काया ना योगथी उदास थयो, एटले ए योगने पररूप समज्यो, तथा ए योगनी ममता मटी गई अने परजाय बुद्धि के० मन वचन अने कायाना योगनी जे बुद्धि ते नाखी दीधी, अने द्रव्यबुद्धि राखीने आत्मानो जे निर्भय स्वभाव छे, तेनुं ग्रहण कीधुं अने ए स्वभावनो जे अनुभव रस तेमां भीनो के० मग्न थई रह्यो अने सर्व व्यवहारमां प्रवृत्ति करी रह्योछे पण दृष्टिमां श्रद्धा तो निश्चयमां राखी छे, एम करता भरमनी दोरी तोडी नाखी, एवु छद्मस्थपणु मूकी दीधु, अने आत्मिक धर्म जे पोतानो स्वभाव तेनो धोरी के० धरनारो थयो, परम साथे प्रीति जोडी, एटले सिद्धपदमां प्रीति राखीने कर्मनो साखी थयो; एटले पुद्गलकर्मने करे तेनो साक्षी थयो छे ॥४॥

शिष्य पूछेछे के, चेतन तथा अचेतन एकक्षेत्रमां रहेछे, अने कर्म करेछे, तदा चेतनने कर्मनो अकर्त्ता केम मनाय ? गुरु कहेछे के, ज्ञानशक्तिवडे अकर्त्ता मनाय ते कहेछे — अथ भेदज्ञानको सामर्थपनो कथन —

सवैया इकतीसा — जैसो जो दरब ताके तैसे गुन परजाय, ताहुसों मिलत पै मिले न काहु आनसों, जीव वस्तु चेतन करम जड जाति भेद, अमिल मिलाप ज्यों नितंब जुरे कानसों, एसो सुविवेक जाके हिरदे प्रगट भयो, ताको भ्रम गयो ज्यों तिमिर भग्यो भानसों, सोइ जीव करमको करतासो दीसे पै अकरता कह्योहै शुद्धताके परवानसों. ॥ ५ ॥

अर्थः– जे जेवुं इव्य होय तेना तेवा गुणपर्याय होय छे, ते तेज इव्यसाथे मलेछे, पण बीजा इव्यसाथे मलता नथी, जेम कोई स्निग्धगुणवडे घृतादिक इव्य पोताना पर्यायथी स्निग्ध गुणवाळा इव्यसाथे मळे, पण रुक्ष गुणवाळासाथे मळे नही, तेम ए जीव वस्तु चेतनजाति छे, अने कर्म जे छे ते जडजाति छे, एवो जातिभेद छे. तेथी चेतन तथा जडने अमिलनता छे, पण कांई युक्ति मिळाप नथी. जेम केडना भागनी नीचे पश्चिम प्रदेश नितब छे, ते उपर रहेला कानसाथे केम मळे? एवो गुणपर्यायनो विवेक जेना हैयामां प्रगट थयोछे, तेना हैयामां पूर्वनो उपजेलो भ्रम नाश पाम्यो, ते उपर दृष्टांत केहेछे के, जेम सूर्यनो उदय थवाथी अंधकार नासेछे, तेम नाश पामेछे, एवा विवेकवाळो जीव जे छे ते कर्मनो कर्त्ता तो देखायछे पण शुद्धता जे पोतपोताना इव्यनी गुण परिणति तेना प्रमाणथी जीवने कर्मनो अकर्त्ताज कह्यो ॥ ५ ॥

हवे जीव अने पुद्गलना लक्षणना भेद देखाडीने एज वात दृढ करेछे.–

अथ जीवपुद्गललक्षणभेदकथन.–

छप्पय छंद –जीव ज्ञानगुनसहित, आपगुन परगुन ज्ञायक; आपा परगुन लखै, नाहि पुद्गल इहि लायक, जीवरूप चिद्रूप, सहज पुदगल अचेत जड, जीव अमूरति मूरतीक पुदगल अंतर वड, जबलग न होइ अनुभौ प्रगट, तबलग मिथ्यामति लसै; करतार जीव जड करमको, सुबुधि विकाशक भ्रम नसै ॥६॥

अर्थः–जीवजे छे ते ज्ञानगुणसहित छे, अने जेम पोताना गुणनो ग्राहक छे तेमज पारका गुणनो पण ग्राहक छे. अने एज गुणना भेदे करीने पोताने तथा परने लखे के० जुएछे; एवी कळा शक्ति लायक पुद्गल क्यारे पण बनी शके नही. जीवनुं स्वरूप चिद्रूप के० चेतनारूप छे, अने पुद्गलतो सेहेज भावे अचेतनारूप छे; एटले जडछे. वळी जीव अमूर्त्ति छे अने पुद्गल मूर्त्ति छे, ए मोटुं अंतर ए बंने वच्चेछे. ज्यांसुधी शुद्धचेतननो अनुभव प्रगट न थाय, त्यांहासुधी मिथ्यामति लसे के० दीसिवत होयछे अने जडस्वरूपी कर्मनो कर्त्ता जीव छे, ते भ्रमबुद्धि छे; पण ए अनादिकाळनो भ्रम ते सुबुद्धिना विकाश थवाथी नाश पामेछे. ॥ ६ ॥

हवे कर्त्ता कर्म अने क्रिया ए त्रणे स्वरूप कहेछे.–अथ कर्त्ताकर्मक्रियास्वरूपकथन.–

दोहरा.–करता परिनामी दरव, करमरूप परिनाम; किरिया परजैकी फिरनि, वस्तु एक त्रय नाम. ॥ ७ ॥

अर्थ –रूपांतरने भजे ते परिणामी केहेवाय, एवुं जे इव्य, ते कर्त्ता कहिये, रूपां

तर थावुं ते परिणाम, अने कर्मनुं स्वरूप कहियें, अने पर्यायनुं क्रमे क्रमे फरवुं तेने क्रिया कहिये. ए रीते कर्त्ता कर्मने क्रिया एवा त्रण नाम छे पण वस्तु तो एकज छे ७

हवे कर्त्ता, कर्म, ने क्रिया ते केहेवामा नाम भिन्न भिन्न छे पण वस्तु एकज छे ते कहेछे -अथ कर्त्ताकर्मक्रियैकत्वकथन –

दोहरा.–कर्त्ता कर्म क्रिया करे, क्रिया कर्म करतार, नाउ भेद बहु विधि भयो, वस्तु एक निरधार ॥ ८ ॥

अर्थ --कर्त्ता त्यारे केहेवाय के ज्यारे क्रिया करे, अने क्रिया त्यारे केहेवाय के ज्यारे कर्म करे, एम नाम भेद भातभातनो पड्यो पण करवाथी कर्त्ता, करवाथी कर्म ने करवाथी क्रिया ए त्रणे एकज वस्तु छे ॥ ८ ॥

हवे एक कर्म क्रियानो कर्त्ता एकज होयछे, ते स्थापन करेछे --अथ कर्त्ता कर्मक्रियाप्रतिस्थापना --

दोहा –एक कर्म कर्तव्यता, करे न कर्त्ता दोय, दुधा दरब सत्ता सु तो, एक भाव क्यों होय ॥ ए ॥

अर्थ –ए वात तो खुल्ली छे के, एक कर्मनी कर्तव्यता के० क्रिया ते एकज होयछे अने तेनो कर्त्ता पण एकज होयछे, पण बे कर्त्ता एकज क्रियाना करनार न होय. अही चेतन द्रव्यसत्ता अने पुद्गलद्रव्यसत्ता ते तो दुधा के० बे प्रकारें जुदी जुदी छे, ते माटे एक भाव एक कर्म केम बने ? ॥ ए ॥

हवे कर्त्ता कर्म ने क्रियानो विचार कहेछे. अथ कर्त्ताकर्मक्रियाविवरण –

सवैया इकतीसा -- एक परिनामके न करता दरब दोय, दोय परिनाम एक दर्व न धरतु है एक करतूति दोइ दर्व कबहो न करे, दोई करतूति एक दर्व न करतु है, जीव पुदगल एक खेत अवगाही दोई, अपने अपने रूप कोउ न टरतु है, जड परिनामनिको करता है पुदगल, चिदानंद चेतन सुभाउ आचरतु है॥१०

अर्थ --एक परिणामना बे द्रव्य कर्त्ता न होय, अने एक द्रव्य जे छे ते बे परिणाम धारण करे नही, ए रीते बे द्रव्य मलीने एक करतूती के० क्रिया क्यारे पण नज करे तेमज एक द्रव्य बे क्रिया पण नहीज करे, ए व्यवस्था बुद्धि कहेवालायक कहेछे के, जीव अने पुदगल एकमेक थई रह्या छे; तेथी ए बंने एक क्षेत्रावगाही थया पण पोत पोताना स्वभावथी कोई टले नही, तेथी पुद्गल जे छे ते जड छे ते जडपरिणामनोज कर्त्ता थाय, अने चिदानंद चेतन छे ते चेतन स्वभावने आचरे ॥ १० ॥

हवे सम्यक्तअवस्थामां कर्मनो अकर्त्ता अने मिथ्यात्वअवस्थानेविषे कर्मनो कर्त्ता छे एम कहेछे.—अथ सम्यक्तमिथ्याकथनं—

सवैया इकतीसा—महा ढीठ दुःखको वसीठ पर दर्वरूप, अंध कूप काहुपे निवार्यो नहि गयो है; ऐसो मिथ्याभाव लग्यो, जीवको अनादिहीको, याही अहं बुद्धि लिये नाना भांति भयो है, काहू समै काहूको मिथ्यात अंधकार भेद, मम ता उछेदि शुद्ध भाव परिनयो है, तिनही विवेक धारि बंधको विलास डारि, आतम सकतिसो जगत जीति लयो है.॥ ११ ॥

अर्थः— महाधृष्ट अने दुःखनो पढु आत्मद्रव्य ते परद्रव्य के० पुद्गलद्रव्य जेनुं रूप छे, पिंड छे, अने जेमां लक्ष्य दृष्टि पोची शकती नथी, तेमाटे अंधकूप समान छे, अने कोईथी निवारण नथी थतो, एवो मिथ्याभाव जे मिथ्यात्व मोह कर्म ते जीवने अनादि काल थकी लागेलु छे, एथी परद्रव्य तरफ जीवनी अहंबुद्धि लागी, तेथी जीव नाना प्रकारनो थयो. अने कोई समये यथाप्रवृत्तिकरणना वखते कोई भव्यजीवनो मिथ्यात अंधकार भेदायो, ते मिथ्यात्वग्रंथि भेदीने अने सर्व कार्यनेविषे जे अहंबुद्धिवडे रहेली ममता हती, तेने छेदीने शुद्ध चिदानंद भावमांज परिणमी रह्यो, ते समये ते भव्यजीव भेदविज्ञान के० जड चेतननो विवेक धारण करीने अविरति, कषाय, योग तथा प्रमाद ए जे बंधनाहेतु हता, तेनो विलास छोडीने आत्मशक्तिवडे एटले पोताना वीर्यबलवडे जगतने जीति लीयेछे; जगतथी निरालो थाय छे. ॥ ११ ॥

हवे जेम कर्मनो कर्त्ता आत्मा नथी तेम ए कर्म आत्माना करेलां नथी; अने कर्त्ता ने कर्म एक रूपज छे ते केहेछे.— अथ यथा कर्म तथा कर्त्ता एकरूपकथन —

सवैया इकतीसा—शुद्धभाव चेतन अशुद्धभाव चेतन दुहूको करतार जीव और नही मानीये, कर्मपिंडको विलास वर्न रस गंध फास, करता दुहूको पुदगल पर मानिये, ताते वरनादि गुन ज्ञानावरनादि कर्म, नाना परकार पुद्गलरूप जानिये; समल विमल परिनाम जे जे चेतनके, ते ते सब अलख पुरुष यों वखानिये १२

अर्थ — चेतनानेविषे शुद्ध भाव तथा अशुद्ध भाव जे जाणवामां आवेछे, ते तो परिणामरूप कर्म छे; तेथी ते बनेनो कर्त्ता जीवज छे बीजो कोई कर्त्ता मानवो नही. अने ज्ञानने ढांकवुं दर्शनने ढांकवु इत्यादि कर्म पिंडनो विलास छे; अने वर्ण गंध रस स्पर्श इत्यादि जे कार्य अने कर्म छे, ए बनेनो कर्त्ता पुदगलद्रव्यनेज प्रमाण राखिये, तेणे करीने वर्णादि के० वर्ण रस गंध स्पर्श गुण छे ते

अने ज्ञानावरण दर्शनावरण प्रमुख जे कर्म छे, ते, सर्व नाना प्रकारना पुद्गलरुप जाणवा, जेम कह्यु छे के, जोगापयडिपयेसा के० जोगवडे प्रकृतिप्रदेशबंध थाय ने तेनेविषे चेतनना समलपरिणाम के० अशुद्ध परिणाम अने विमलपरिणाम के० शुद्ध परिणाम ए जे कर्मरूपक छे ते ते सर्व अलक्ष पुरुषरुप छे, माटे कर्त्ता कर्मने एकज वखाणीए ॥ १२ ॥

हवे, ए वातना रहस्यने मिथ्यादृष्टि जाणे नही, तेना उपर हस्तिनो दृष्टांत.–

अथ मिथ्यादृष्टि बर्नन हस्तिको दृष्टांत -

सवैया इकतीसाः–जैसै गजराज नाज घासके गरास करि, भक्षत सुभाय नहि भिन्न रस लियो है, जैसै मतवारो नहि जानै सिखरनि स्वाद, जुंगमें मगन कहै गऊ दूध पियो है, तैसै मिथ्यामति जीव ज्ञान रुपी है सदीव, पग्यो पाप पुन्य सो सहज सुन्न हियो है, चेतन अचेतन दुहूकों मिश्र पिंड लखि, एकमेक मानै न विवेक कछु कियो है ॥ १३ ॥

अर्थ –जेम हाथीने अनाज साथे घास भेलवीने ग्रास आपेछे ते खायछे हाथीनो स्वभाव एवोछे के, घासने अनाजनो जुदो स्वाद लेतो नथी. वली कोई माणस मद्य पीने मतवारो थयो होयने तेने दहीने खांडथी बनेलुं शीखरण जमवाने आपीये ने पुछीये के एनो स्वाद केवोछे तो ते केहेशे, के गायनुं दूध पीये तेवोछे पण तेने दारूनी धुममां जुदा स्वादनी खबर पडती नथी, तेम जीव मिथ्यामतिवालो थईने जोपण अनादि कालनो ज्ञानरूपी छे एटले ज्ञानमय छे तो पण पापकर्म अने पुन्यकर्ममा लीन थई रह्योछे, माटे सहज भावे शून्यहृदय थयोछे त्यारे चेतन अने अचेतन जे पुद्गल, ते बेउने मिश्र के० एक पिंड जोईने एकमेक मानेछे, पुद्गलना भेलथी चेतनने पण पुद्गलकर्मनो कर्त्ता मानेछे पण कदी विवेकनी नजरथी जोतो नथी. ॥ १३ ॥

हवे जीवने कर्मनो कर्त्ता मानवो ए भ्रमवडे मनायछे, ते उपर दृष्टांत आपेछे

अथ भ्रमस्वरूपकथनदृष्टांत–

सवैया इकतीसा –जैसै महाधूपकी तपतिमें तिसीयो मृग, भरमसों मिथ्याजल पीवनकों धायो है, जैसै अंधकारमांहि जेवरी निरखी नर, भरमसों डरपी सरप मानि आयो है, अपने सुभाय जैसे सागर सुथिर सदा, पवन संजोगसो उछरि अकुलायो है, तैसै जीव जडसों अव्यापक सहजरूप, भरमसों करमको करता कहायो है. ॥ १४ ॥

अर्थ.—जेम वैशाक ने जेठना घणा सख्त तापनी गरमीवडे मृग तरस्यो थईने मृग तृषाने जोई तेने जल भरेलुं तलाव मानी ते मिथ्या जलने पीवाने दोडेछे, तथा जेम अंधारे पडेली दोरडीने जोईने कोई मनुष्य भरमवडे तेने साप जाणी मरी जायछे; वली जेम समुद्रनो स्वभाव स्थिर छे पण पवनना संजोग थकी उछलतो देखायछे, तेम जीव निश्चय थकी जोता जड वस्तुथी अव्यापक छे, पण अनादि कालनो सहज रुपी भ्रम तेणे करीने ते जीवने कर्मनो कर्ता कहेछे. ॥ १४ ॥

हवे जे सम्यक् दृष्टि थाय ते सम्यक् स्वभावे करीने भ्रम दूर करे, अने जुदो जुदोज भाव जाणे, ते उपर राजहंसपक्षीनो दृष्टांत आपेछे. अथ सम्यक् दृष्टिस्वभाववर्णनं, राजहंसके दृष्टांतः—

सवैया इकतीसा— जैसै राजहंसके वदनके सपरसत, देखिये प्रगट न्यारो छीर न्यारो नीर है, तैसै समकितीकी सुदृष्टिमें सहजरूप, न्यारो जीव न्यारो कर्म न्यारोई शरीर है, जब शुद्ध चेतनाको अनुभौ अभ्यासे तब, भासै आपु अचल न दूजो ओर सीरहै, पूरव करम उदै आइके दिखाई देहि, करता न होइ तिन्हको तमासगीर है ॥ १५ ॥

अर्थ— जेम राजहंसनुं वदन के० मुखनी अंदरनी जीभ, तेना अडकवाथी दूधने पाणी एकमेक होय ते फाटीने दुध जुडुं ने पाणी जुडुं थाय छे; तेमज सम्यक्दृष्टिवडे सहजरुपे जीव छे ते जुदोज जणाय ने कर्म पण जुडुंज जणाय, अने शरीर पण जुडुंज जणाय, एटले बाह्यात्मा, अंतरात्मा ने परमात्मा ए त्रणे जुदा जणाय. ज्यारे शुद्ध चेतन अनुभवनो अभ्यास करे त्यारे पोतेज देखाय कर्मादिकनो बीजा कोई साथे भेल नथी. पूर्व संचित कर्म जे छे ते निज स्थिति पूर्ण थये अथवा उदीरणा करी के० कर्म उदे आव्याथी देखाय; पण जीव काई कर्मनो कर्त्ता नथी, पण ते कर्मना उदयनो तमासो जुएछे ॥ १५ ॥

हवे शिष्य पूछे छे के, हे स्वामी जीव तथा पुद्गल एकमेक थई रह्या छे, त्यारे ते उनेविषे एवो जुदो जुदो स्वभाव केम जाणीये? त्यारे गुरु तेनो उत्तर आपतां पाणिनुं तथा शाकनुं दृष्टांत आपेछे. अथ कर्तृत्व स्वभाव उसनोदक तथा व्यंजनको दृष्टांत

सवैया इकतीसाः— जैसे उसनोदकमें उदक सुभाउ सीरो, आगिकी उसनता फरस ज्ञान लखिये, जैसे स्वाद व्यंजनमे दीसत विविध रूप, लोनको सवाद खारो जीभ ज्ञान चखिये, तैसे यादि पिंडमें विभावता अज्ञानरूप, ज्ञानरूप जी

व नेद ज्ञानसो परखिये, नरमसो करमको करता है चिदानंद, दरव विचार करतार नाव नखिये ॥ १६ ॥

अर्थ — जेम उलोदक के० उनुं पाणी ते पाणीनो पोतानो स्वनाव तो सीरो के० शीतलज ठे, पण तेनो स्पर्श करता गरम लागेठे ते गरमी आगनी ठे. अने स्वादिष्ट व्यंजन के० शाकमां नात नातनो स्वाद होय ठे अने लोन के० निमकनो खारो स्वाद जुदोज जणाय ठे, ते जीन ज्ञानवडे जणाय ठे; तेमज घटपिंममां विनावता जे कर्मनी साथे चेतननुं मलवु तेतो जेम में आ कीं उं एम मानवु एतो अज्ञानरूप ठे अने जीव ठे ते शुद्ध ज्ञानरूपी ठे, एनेतो शुद्ध जाणवो एज एनुं कार्य ठे ए वात नेदज्ञान वडे जणाय ठे ए चिदानंद जे ठे तेने कर्मनो कर्ता मानवो ते भ्रमवमे मनाय ठे। पण द्रव्यनो विचार करतां एनो कर्त्ता नाव बने नहीं पण ज्ञाता नावज बने ए रहस्य ठे ॥ १६ ॥

हवे निश्चय प्रमाणवडे जे जेनो कर्त्ता ठे तेने जुदो बतावेठे. अथ कर्तृत्वविवरनं.

दोहा — ज्ञाननाव ज्ञानी करै, अज्ञानी अज्ञान, दरब करम पुदगल करै, यह निहचै परवान ॥ १७ ॥

अर्थ — ज्ञानी होय तेतो ज्ञाननाव करे एटले जाणवारूपजे कार्य ठे ते करे ठे, अने अज्ञानी होय ते हुं कर्त्ता डुं एम मानी अज्ञाननाव करेठे, द्रव्यरूप जे कर्म ठे तेने पुजलज करेठे, निश्चेप्रमाणमां एवु स्पष्ट ठे ॥ १७ ॥

शिष्य पूठेठे के हे स्वामी ज्ञाननाव ज्ञानी करे ए वात केहेतां ज्ञाननो कर्ता जीव ठरेठे, ते कया नयथी ठरेठे? तेनो उत्तर गुरु आपेठे —अथ व्यवहार कर्तृत्वकथन

दोहा — ज्ञानसरूपी आतमा, करे ज्ञान नहि और, दर्व कर्म चेतन करै, यह विवहारी दौर ॥ १८ ॥

अर्थ — आत्मा ज्ञानस्वरूपी ठे माटे ज्ञानने तो तेज करे, पण बीजो नहीं ए निश्चय अने जे एम कहेठे के, द्रव्यकर्मनो करता पण चेतन ठे तेतो व्यवहारमां कहेवाय. ॥ १८ ॥

हवे शिष्य प्रश्न — कर्तृत्वकथन —

सवैया तेईसा —पुदगल कर्म करै नहि जीव कही तुम में समुझी नहि तैसी; कौन करै यहु रूप कहो अब, को करता करनी कहु कैसी; आपुहि आपु मिले बिछुरै जड क्यों करि मोमन संशय ऐसी, शिष्य सदेह निवारन कारन बात कहै गुरु है कछु जैसी ॥ १९ ॥

अर्थ:--हवे शिष्य पूछे छे के, जीवने निश्चयनयथी ज्ञाननो कर्त्ता कह्यो ने कर्मनो अकर्त्ता कह्यो, तेनुं शुं कारण? हे गुरु पुद्गल द्रव्यरूप कर्मने जीव करे नही एवी जे वात तमे कही, ते वात हुं यथार्थ समज्यो नही. ए पुद्गलरूपी कर्मनो स्वभाव करे? इहां कर्त्ता तो ठरावता नथी अने तेनी क्रिया केवी छे ते कहो वली पुद्गल कर्मनो कर्त्ता पुद्गलनेज बनावोछो त्यारे कर्ता कर्म बंने जड थया, ते पोतानी मेले मलवु छूटा थावुं केम बनी शके? ए मारा मनमां संदेह छे. शिष्यना संदेह निवारवाने आ प्रश्ननो यथार्थ उत्तर गुरु हवे कहेछे:— ॥ ११ए ॥

अथ गुरु उत्तर कथन:—

दोहा:— पुदगल परिनामी दरब, सदा परिनमै सोय; याते पुंदगल करमको, पुदगल कर्त्ता होय ॥ २० ॥

अर्थ.— हे शिष्य, पुदगल जे छे ते परिणामी द्रव्य छे क्षण क्षणमां तरेहवार बनी जायछे तेमाटे सदा परिणमी रह्यो छे ते युक्तिथी पुद्गलिक कर्मनो कर्ता पुद्गलज थई शकेछे. ॥ २० ॥

अथ पुन शिष्य प्रश्न:—

अडिल छंद:—ज्ञानवतको भोग निर्जरा हेतु है, अज्ञानीको भोग बंध फल देतु है, यह अचरजकी बात हिये नहि आवही, बूझे कोऊ शिष्य गुरू समुझावही. ॥ २१ ॥

अर्थ:—हवे शिष्य पूछेछे के, ज्ञानभाव ज्ञानी करे एवु कहेवाथी भोग निर्जरारूपी थाय छे ते केम? ज्ञानी भोग भोगवे ते कर्मनी निर्जरा करेछे, त्यारे तो ज्ञानीनो भोग निर्जरानो हेतु छे अने अज्ञानी जे भोग भोगवे ते कर्म बंधन करेछे, त्यारे तो अज्ञानीनेज भोग बध फलदाई कह्यो एतो अचरजनी वातछे, केमके भोग भोगववामां समान होय ने एकनो भोग निर्जरानो कारक अने बीजानो भोग बंधनो कारक एम केम बने? अने ए वात हृदयमां ठसती नथी. आवुं शिष्यनुं केहेवु सांभलीने गुरु तेनो उत्तर कहेछे:— ॥ २१ ॥

अथ गुरु उत्तर कथन:—

सवैया इकतीसा:—दया दान पूजादिक विषय कषायादिक, दोहू कर्म भोग पै दुहूको एक खेतु है; ज्ञानी मूढ करम करत दीसे एकसे पें, परिनाम भेद न्यारो न्यारो फल देतु है, ज्ञानवत करनी करै पें उदासीन रूप, ममता न धरै ताते निर्जराको हेतु है, वहै करतूति मूढ करै पै मगन रूप, अंध भयो ममता सो बंध फल लेतु है. ॥ २२ ॥

अर्थ --दया पालवी, दान देवुं, पूजा प्रमुख करवी, एक एवी रीतना कर्मछे, अने पांच इंद्रिओना विषयनुं सेवन करवु, कषायनुं सेवन करवुं, एक एवी रीतना कर्म छे, ए बंने कर्मनो संसारमा जोग छे, पण क्षेत्र एक छे, तेथी बने बंधरूप छे अने ज्ञानी पण ए बे कर्म करे छे, तथा अज्ञानी पण करे छे, अने ए कर्म करता तो ज्ञानी अज्ञानी एक सरखाज देखाय छे, पण एना परिणाम भेद जुदां जुदा छे माटे ए कर्मनुं फल जुदो जुदो आपे छे. ज्ञानवान जे कर्म क्रिया करेछे, ते उदासीन रूप थईने करे छे, एटले एनी मेले उदय आवेलु कर्म करेछे, पण ममता धरतो नथी, ए माटे निर्जरानो हेतु छे अने एज कर्म क्रिया मूढ करे छे, पण ए क्रिया करवामा आनंद रूप रहे छे, ने निजात्म शुद्धीने विसरी जाय छे, एटले अंध जेवो बनी जाय छे, अने ममता धारण करे छे, तेथी बंध फलने लिये छे; एज माटे अज्ञानी अज्ञाननो करता ठरे छे. ॥ २१ ॥

हवे कुंभारनुं दृष्टांत आपीने मूढनुं कर्तापणुं शिद्ध करेछे --

अथ मूढ कर्तृत्व कथन कुलाल दृष्टांत --

छप्पय छंद --ज्यों माटीमहि कलस, होनकी शक्ति रहै ध्रुव, दंड चक्र चीवर कुलाल बाहिज निमित्त हुव; त्यों पुदगल परवानु, पुंज बरगना भेष धरि; ज्ञानी बरनादिक सरूप विचरत विविध परि, बाहिज निमित्त बहिरातमा, गहि संसै अज्ञान मति, जगमाहि अहंकृत भावसों, करम रूप व्है परिनमति ॥ २२ ॥

अर्थ --जेम कलसरूप कार्य थवामा माटी द्रव्यनी शक्ति ध्रुव के० निश्चय छे अने ते कार्यनेविषे तेने फेरववानो दंड अने चक्र के० चाकने चीवर उतारवानी दोरी ने कुंभार ए सर्व बाह्य निमित्त थया तेम परमाणु पुद्गलनो पुंज ते बंधपणुं धरीने कार्मणवर्गणानो भेष धरीने ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, मोहनीय आउषो नामकर्म गोत्रकर्म अंतराय ए स्वरूपे विविध के० भात भातनो पुद्गल खध विचर्यो अही बहिरात्मा एटले देव मनुष्यादिरूपी बाह्यात्मा बाह्यनिमित्त थईने, भ्रम रूपी अज्ञान ग्रहीने अंही कारण बन्यो; त्यारे जगतमा अहंकारबुद्धिनी संगति तेहिज पुद्गलखंध कर्मरूप बनीने परिणम्यो छे ॥ २३ ॥

हवे निश्चे जीवनुं अकर्त्तापणुं मानीने एना अनुभवमा रेहेवुं तेनुं माहात्म्य कहेछे --

अथ शुद्धानुभव महात्म्य कथन --

सवैया तेईसा -- जे न करै नयपक्ष विवाद धरै न विषाद अलीक न भाखै, जे उदवेग तजै घट अंतर, शीतलभाव निरंतर राखै; जे न गुनी गुन भेद बिचारत,

आकुलता मनकी सब नाखै, ते जगमें धरि आतमध्यान अखंमित ज्ञानसुधारस चाखै

अर्थ.–जेम मिथ्याती लोक पोतपोताना नयनो पक्ष धरीने पोतपोतामां विवाद करेछे तेम न करतां जे सहज आनंदमां रहेछे, ने विषाद धरता नथी, अने कूडुं बोलता नथी, अने डुष्ट ध्यान धरता नथी एटले उदवेगनो त्याग करेछे, अने हमेश पोताना हृदयनेविषे शीतल नाव राखेछे, ने एवा शुद्ध आत्माना अनुनवमा मलेछे. जेथी आत्मा गुणी छे ने ज्ञानगुण छे, एवो जेने नेद विचार रह्योज नथी, अने विकल्प के० व्याकुलताने मनमांथी काढी नाखे, एवा जे शुद्ध अनुनवी थाय, तेज आत्मध्यान धरीने जगतनेविषे संपूर्ण केवल ज्ञानरूप अमृत रस तेने चाखेछे. २४

हवे निश्चय नय थकी अकर्त्तापणानी स्थापना अने व्यवहार नयवडे कर्त्तापणानी स्थापना प्रमाण करी बतावे छेः–अथ निश्चय व्यवहारनय प्रमाण स्थापनाः-

सवैया इकतीसा.– विवहार दृष्टिसों विलोकत बंध्योसो दीसे, निहचे निहारत न बांध्यो यह किनही; एक पक्ष बंध्यो एक पक्षसों अबंध सदा, दोउ पक्ष अपने अनादि धरे इनही; कोउ कहै समल विमल रूप कोउ कहै, चिदानंद तैसोई बखान्यो जैसो जिनही, बंध्यो मानै खुल्यो मानै डुहुनको नेद जानै, सोई ज्ञानवत जीव तत्व पायो तिनही ॥ २५ ॥

अर्थ.– चतुर्गतिरूप संसारमां ब्रमण करवानो आत्मानो व्यवहार जोइए तो आत्मा कर्त्ताज देखाय ने बंधमां पण जणाय, अने निश्चयनयवमे ज्ञाननोज कर्त्ता अने ज्ञानस्वरुपी जोइये तो एज आत्मा कर्शामां बंधायलो नही जणाय; तेथी एकलो व्यवहार पक्ष ग्रहीये तो आत्मा बंधमां छे, ने एकलो निश्चयपक्ष ग्रहीये तो आत्मा सदा अबंध जणाय, एवा बंने पक्ष अनादिकालना ग्रहण कीधा छे कोई व्यवहारनयवालो होय ते जीवने समल कहेछे, ने कोई निश्चयनयवालो होय ते एने विमल कहेछे. पण जेणे जेवुं पोतानी बुद्धिथी चिदानंदने वखाण्यो तेवोज चिदानंदछे. हवे जे सम्यक्दृष्टि होय तेतो आत्माने बंधायलो पण माने, अने अबंधपण माने, पण ए मानवामां बेहुनयनो नेद जे जाणे तेज ज्ञानी केहेवाय, अने तेणेज जीव तत्वनुं स्वरूप उलख्युंछे ॥ २५ ॥

हवे बेउ नयने समान राखीने समकित राखेथी समरस नावमां रहे तेनी प्रशंसा करेछे–अथ समरसी नाव प्रशंसा कथनः–

सवैया इकतीसा –प्रथम नियत नय दूजो विवहार नय, डुहुकों फलावत अनंत नेद फलै है; ज्यों ज्यों नय फलै त्यों त्यों मनके कलोल फलै, चंचल सुनाय

लोका लोकलौ वढलै है; ऐसी नय कक्ष ताको पक्ष तजि ज्ञानी जीव, समरसी नये एकतासों नही टलै है: महा मोह नासै शुद्ध अनुभो अभ्यासै निज, बल परगा सै सुख रासि माहिं रलै है ॥ २६ ॥

अर्थ—पहेलोतो निश्चय नय छे, अने बीजो व्यवहार नय छे, ए बेउ नयने एक एक द्रव्य साथे फलाविये त्यारे अनंत द्रव्यनी अपेक्षाने लीधे नयना अनंत भेद फले छे हवे ए नयना अनत भेद मननाज विचारथी फले छे, तेथी जे म जेम नयनुं फलाव थाय तेम तेम मनना तरग पण अनत भेदे फलेछे, अने म नना कलोल जेटला होय तेटला चचल स्वभावमनना थई जाय, एनुं प्रमाण षट् गुणी हानी वृद्धि लेखे लोका लोक प्रदेश परिमाण होय एवी जे नय कक्षा के० नय ने अंगीकार करी तेनो पक्षपात त्यजीने जे ज्ञानी जीव समरसी भावमा रह्या अने सघला नयना विस्तारमा चेतनानी एकता होय तेथी टले नही ते तो समरसी भा व वाला महा मोह के० भ्रमनो नाश करीने अने शुद्ध चिदानंदना अनुभवनो अ भ्यास करीने, एटले क्षपकश्रेणी आरोहण करीने परमात्मानुं जे बल छे तेनो प्र काश करीने सुख राशी जे मोक्ष पद छे तेनेविषे मली जायछे ॥ २६ ॥

हवे निश्चय व्यवहार बतावीने पोतपोतानुं जे सत्य स्वरूप लक्षण छे ते हिज कहेछे—अथ सम्यक् स्वरूप लक्षन कथन—

सवैया इकतीसा—जैसे काहु बाजीगर चौहटे बजाई ढोल, नाना रूप धरी के भगल विद्या ठानी है, तैसे में अनादिको मिथ्यातके तरंगनिसों भरममे धाइ वहु काइ निज मानी है, अब ज्ञान कला जागी भरमकी दृष्टि भागी, अपनी प राई सबसों जु पहिचानी है, जाके उदे होत परवान एसी भांति भई, निहचे ह मारी ज्योति सोई हम जानी है. ॥ २७ ॥

अर्थ.—जेम कोई बाजीगर चोटामां ढोल वगाडीने भात भातना रूप धरीने पोतानी भगल विद्या प्रसारे छे, ने तेने लोको साची मानेछे, ते रीते हुं अनादी कालथी मिथ्यात तरग के० लहेरोमा मगन बनी रह्यो तेथी भगलविद्या जो भाराने न्याये भर्ममा धायो थको घणी कायाउ पामीने पोतानी मानी लीधी हती, ते हाल मने ज्ञान कला प्राप्त थवाथी भरमनी दृष्टि दूर थई गई, त्यारे पोतानी त था पारकी सोंज के० सामग्री ते सर्वेने ओलखी लीधी, जे ज्ञान कलाना उदय थवाथी वस्तुनुं परमाण थायछे ,एवी रीत थई तेथी पोतानी परपरानी शुद्धि आवी, एवा निश्चयथी अमारी ज्योति जे अमारुं स्वरूप तेने अमे ओलखी लीधुं २७

हवे जे ज्ञाता होय ते सम्यक् स्वरूपने शुद्ध अनुभवनेविषे विचारी लिये ते कहे छे –अथ शुद्धानुभव चितन ज्ञान विलास.–

सवैया इकतीसा.–जैसैं महा रतनकी ज्योतिमें लहरि उठे, जलकी तरंग जैसैं लीन होइ जलमें, तैसें शुद्ध आतम दरवपरजाय करी, उपजे बिनसे थिर रहे निज थलमें; ऐसे अविकलपी अजलपी आनंद रूपी, अनादि अनत गहि लीजे एक पलमे; ताको अनुभव कीजे परम पियूष पीजे, बंधको विलास मारि दीजे पुद्गलमें॥ १८॥

अर्थ.–जेम हीरा लाल पन्ना अने रत्ननी ज्योतिमां लहरी उठे, ने ज्योतिमांज समाई जायछे, वली जेम पाणीना मोजां पाणीमांज समाई जाय, तेम शुद्ध आत्म द्रव्यना जे ज्ञान प्रमुख गुणना पर्यायछे ते समये समये उपजे छे ने वणसेछे, अने द्रव्य पोताना द्रव्य स्थानने विषेज रहेछे उपजवु ने वणसवु ए विकल्प पर्यायने आश्रये थाय छे, पण द्रव्यमां तो थिरता रही छे द्रव्यमां विकल्प नथी माटे जे अविकल्पक अने अजल्पी के० स्थिरछे सर्वथा वचन गोचर नथी, अने आनंदरूपी छे, तेथी सहज समाधि मईछे, एवुं कोई आत्म द्रव्यछे तेनुं अनादि अनंत काल सुधी एक रूपमा ग्रहण करवुं, अने तेज द्रव्यनो अनुभव करवो, एटले तेने विषेज उपयोग राखवो, ए अनुभवमां परम पियूष के० परम अमृतरस उपजे छे ते पीवो. अने जे आश्रव बंधनो विलास आत्मामां छे तेने पुद्गलनी सामग्रीमां नाखी देवो, एटले पुद्गलरूप जूडुंज छे ॥ १८ ॥

हवे आत्मानो शुद्ध अनुभव परम पदार्थ छे, तेनी प्रशंसा करेछेः-अथ अनुभव प्रशंसाः-

.सवैया इकतीसा –दरवकी नय परजाय नय दोउ नय, श्रुत ज्ञानरूप श्रुतज्ञान तो परोष है; शुद्ध परमातमाको अनुभौ प्रगट ताते, अनुभौ विराजमान अनुभौ अदोष है; अनुभौ प्रवान भगवान पुरुष पुरान, ज्ञान औ विज्ञानघन महासुखपोष है; परम पवित्र योंही अनुभौ अनंत नाम, अनुभोविना न कहो उर ठोर मोष है॥ १९॥

अर्थ.–पदार्थने उलखवाने बेज नय प्रवर्ते छे; एक द्रव्यार्थिक नय वडे द्रव्यनो विवरो अने पर्यायार्थिक नयवडे पर्यायनो विवरो थाय छे, ए बंने नय श्रुतज्ञानरूप छे, अने श्रुतज्ञान जे छे ते परोक्ष ज्ञान छे, अने शुद्ध परमात्मानो अनुभव जे छे तेतो प्रगट के० प्रत्यक्ष प्रमाणमां आवेछे, तेथी अनुभवज महा बलवान थको विराजमान थई रह्योछे, एथी अनुभव ते अदोष के० शुद्धछे हवे अनुभवना नाम कहे छे अनुभव कहिये प्रमाण कहियें भगवान कहीये, एनेज पुराण पुरुष कहीये, एनेज ज्ञान कहीये, एनेज विज्ञानघन कहीये, एनेज महा सुखनुं पोष कहीये, अने एनेज प

रम पवित्र कहियें, एवां अनुनवना अनंत नाम ठे. अने ए शुद्ध अनुनव शिवा य बीजे कोई स्थानके मोक्ष नथी ॥ २ए ॥

हवे शुद्ध अनुनवविना संसारमां नमे अने शुद्ध अनुनव प्राप्त थये मोक्ष पामे ते कहे ठे अथ अनुनव साम्यर्थ जलको दृष्टांत --

सवैया इकतीसा -- जैसे एक जल नाना रूप दरबानुयोग, नयो बहु नाति प हिचान्यो न परतु है, फिरि काल पाई दरवानुयोग दूरि होतु, अपने सहज नीचे मारग ढरतु है, तैसे यह चेतन पदारथ विनावतासों, गति योनि नेप नव नावर नरतु है, सम्यक सुनाइ पाइ अनुनौके पंथ धाइ, बंधकी जुगती जानि मुगति करतु है ॥३०॥

अर्थ.- जेम पाणी एक रूप ठे तथापि तेनेविषे नाना प्रकारनी माटी प्रमुख द्रव्यनो मिलाप थये पाणी पण तरेवार जातनुं थाय ठे, हवे देखवामां तो माटी प्रमुख देखाय ठे पण पाणी ओलखातो नथी फरी कोई औषधादिकथी ते द्रव्य नो मिलाप दूर थयो अने पाणी तरी आव्युं त्यारे पोतानुं सहज रूप लईने नी चाण तरफ ढलवा लाग्युं; ते रीते जे चेतन पदार्थ ठे ते विनावतासो के० पो तानी नूल थकी चार गतीमां चोरासी लाख जीव योनिनेविषे नेप के० एक क्रोड साडासत्ताणुंलाखं कुलकोडीमां नांतनांतना नवकरतो नावरी के० फरी रेहे ठे, एज जीव कोई अवसर सम्यक् नाव पामीने पोताना अनुनवना मारगमां दोडीने अने बंधनना विलासने तोडीने कर्मनी मुक्ति करे ठे. ॥ ३० ॥

हवे मिथ्यादृष्टि होय ते अनुनव शिवाय कर्मनो कर्त्ता होयज ते कहे ठे.-- अ थ मिथ्यादृष्टि कर्तृत्व कथन --

दोहा --निशिदिन मिथ्या नाव बहु, धरै मिथ्याती जीव, ताते नावित कर मको, करता कह्यो सदीव ॥ ३१ ॥

अर्थ -- रात ने दिवस पोतानी नूलनेविषे मिथ्याती जीव होय ते फलाणुं में कीधुं मे लीधुं अमहारो इत्यादिक मिथ्या नाव धारे ते माटे अशुद्ध चेतनाजेठे ते विनावित कर्मठे तेनो कर्त्ता सदीव के० निरतर कह्यो. ॥ ३१ ॥

हवे ज्ञानी अने मूढ करम करे ठे, ते एक सरखा देखाय ठे, तथापि मूढ जीवने कर्मनो कर्त्ता कह्यो ने ज्ञानी जीवने कर्मनो अकर्त्ता कह्यो तेनुं कारण कहे ठेः--अथ मूढ कर्मको कर्त्ता ज्ञाता अकर्त्ता यह कथन --

चोपाई -- करै करम सोई करतारा; जो जानै सो जाननहारा, जो कर्त्ता न हि जानै सोई, जानै सो करता नहि होई ॥ ३२ ॥

अर्थः-- जे कर्मने करे तेज कर्त्ता केवाय अने जे जाणेछे तेने तो जाणनार कहीये जे कर्त्ता छे तेज जाणनार नथी अने जे जाणनार छे ते कर्त्ता नथी ॥३२॥

हवे जे जाणनार छे ते अकर्त्ता छे ते समजावे छेः--अथ ज्ञाता अकर्त्ता कथनं--

सोरठा.-- ज्ञान मिथ्यात न एक, नहि रागादिक ज्ञानमहि, ज्ञान करम अतिरेक, जो ज्ञाता करता नही. ॥ ३३ ॥

अर्थः--ज्ञान जाव अने मिथ्यात जाव एक केवाय नही, अने रागादिक जे राग द्वेष मोह इत्यादिक जाव ज्ञानमां होय नही, एथी ज्ञान जे छे ते कर्मथी अतिरेक के० जुदो छे, तेमाटे जे ज्ञाता होय ते कर्त्ता न होय ॥ ३३ ॥

हवे जे मिथ्यात्वी जीव छे ते पुजलद्रव्य रूप कर्मनो अकर्त्ताज छे अने जाव कर्मनो कर्त्ता छे ते कहेछेः— अथ जीवद्रव्य कर्मको अकर्त्ता यहु कथनः—

छप्पयछंदः— करम पिंम अरु राग, जाव मिलि एक होहि नहि, दोक जिन्न स्वरूप, वसहि दोक न जीवमहि, करम पिंम पुजल बिजाव रागादि मूढ ज्रम, अलख एक पुग्गल अनंत किम धरहि प्रकृति सम, निज निज विलास जुत जगत महि, जथा सहज परिनमहि तिम, करतार जीवजम करमको, मोह विकल जन कहहि इम ॥ ३४ ॥

अर्थ — पुजल द्रव्य रूप कर्म पिंम अने राग द्वेषादिक जाव ए बंने मलीने एक रूप थाय नही, ए बंने जाव जिन्न स्वरूपमां छे, पण ए बेउ जाव जीवमां रेता नथी. एनो विवरो कहेछेः--कर्मपिंम छे तेतो पुजलरूपी छे अने जे रागादिक विजाव छे तेतो मूढ जीवनो ज्रम छे अलख जीव छे तेतो एकता लीधो रह्यो छे अने पुजल अनंतताने लेई रह्याछे तो कर्मनुं कर्त्तापणु एवी सम प्रकृति बेउ केम धारण करशे. जगतमां सर्व कोई पोतपोताना स्वजाव विलासमा युक्त थई रह्याछे, जेवो पोतानो सहज स्वजाव छे तेवोज परिणमी रह्यो छे ए न्यायनी वात छे, तेथी जड रूपी कर्मनो कर्ता जीव छे, एवुं वचन जे जीव मोहथी विकल होय छे ते केहेछे ॥३४

हवे सम्यक् प्रकारे करीने सिद्धांत समजावेछे. अथ सम्यक्त प्रजाव कथनः—

छप्पयछंद — जीव मिथ्यात न करैं, जाव नहि धरैं जरम मल, ज्ञान ज्ञान रस रमैं, होइ करमादिक पुजल, असंख्यात परदेश, सकति जगमें प्रगटे अति, चिद विलास गंजीर, धीर थिर रहै विमल मति; जब लगि प्रबोध घटमहि उदित, तब लग अनय न पेखियै; जिम धरमराज वरतंतपुर, जह तह नीति परेखियै॥ ३५॥

अर्थ.— जीव छे ते मिथ्यारूपी कर्म करे नही, एनो हेतु कहेछे के, ज्रम मल रू

पी जे नार छे तेने ए जीव धारण करे नही अने ज्ञान ज्ञाननाज रसमां रमे ए टले ज्ञाता पणामां रहे अने कर्मादिक जे ज्ञानावरणादिक राग द्वेषादिक तेतो पुज्ञलसामग्रीछे अने ए जीवना तो असंख्यात प्रदेशनेविषे एवी शक्ति अति प्रगट पणे जगमगी रही छे ते कहीये छइये के, चिदविलास के० ज्ञान विलासनेविषे गंजीरछे धीर ने विमल मतिवत थको स्थिरता थई रह्यो छे, एवुं प्रबोध सम्यक् ज्ञान जासुधी घट पिम्मां प्रकाशमान थई रह्यो छे त्यांसुधी अनय के० अन्याय स्वरूपने देखीये नही, ते उपर दृष्टांत केहेछे जेम पुर नगरमां धर्मराज वर्तता थका जहां तहां नीतीज जोवामां आवे ॥ ३५ ॥

इतिश्री नाटक समैसार कर्त्ता कर्म क्रिया द्वार तृतीय बालबोध सहित समाप्तं

दोहरा — करता किरिया करमको, प्रगट वखान्यो मूल, अब बरनौ अधिकार यह, पाप पुन्य समतूल ॥ ३६ ॥

अर्थ — कर्त्ता क्रिया अने कर्म एउनुं मूल के० रहस्य ते प्रगट करी वखाएयुं हवे पाप अने पुन्य ए बने बराबर छे तेनो अधिकार वर्णन करुं छुं ॥ ३६ ॥

हवे पाप पुन्य द्वार विषे प्रथम ज्ञान चंद्रनी कलाने नमस्कार करेछे —

अथ ज्ञानचंद्र कला वर्णनं —

कवित्तछंद --जाके उदै होत घटअंतर, विनसै मोह महातम रोक, सुन अरु असुन करमकी डुविधा, मिटे सहज दीसे इक थोक, जाकी कला होतु सपूरन, प्रतिनासै सब लोक अलोक, सो प्रबोध शशि निरखि बनारसि, सीश नमाइ देतु पग धोक॥

अर्थ -- जे प्रबोध चंद्रना प्रकाशथाथी समान घटमा जे मोहरूप महातम के० घोर अंधकारनुं रोक जे अटकाव ते नाश पामे, अने जेम अधकार गयाथी एक कर्म शुन अने एक कर्म अशुन एवी जे कर्मने विषे द्विविधा छे ते मटी जाय, अने सहज नावे कर्म बंधरूप छे एवुं एक थोक देखाय अने जेने प्रबोध चंद्रनी सर्व संपूर्ण कला प्रगट थयेथके सर्व लोका लोकनु प्रतिनास थाय ते प्रबोधरूपी चंद्रकलाने निरखीने बनारसीदास माथुं नमावीने पगधोकदेतुहे के० प्रणाम करेछे. ॥३७॥

हवे मोहेमां शुन अशुन कर्मनी द्विविधता देखायछे ते एक रूप पणे देखाडेछे.—

अथ शुनाशुन एकत्वी करन —

सवैया इकतीसा — जैसे काहु चमाली जुगल पुत्र जने तिन्ह, एक दियो बामन कूं एक घर राख्यो है, बामन कहायो तिन्ह मद्य मांस त्याग कीनो, चंडाल क

छायो तिन मद्य मांस चाख्यो है, तैसे एक वेदनी करमके जुगल पुत्र, एक पाप एक पुण्य नांउ भिन्न भाख्यो है; दुहो माहिं दोरधूप दोउ कर्म बंधरूप, याते ज्ञानवंतने न कोउ अभिलाख्यो है. ॥ ३८ ॥

अर्थः-- जेम कोई चमालनी स्त्री जुगल पुत्र के० बे पुत्र जणे ने पछी एक छोकरो ब्राह्मणने आपे, ने एक छोकरो पोताना घरमा राखे, हवे जे छोकरो ब्राह्मणना घरमां उछरे ते ब्राह्मण केहेवाय, ने ते मद्य मांसनो त्याग करे, जे चमालना घरमां रहे ते चमाल केहेवाय, ने ते मद्य मांस पण चाखे, ते रीते एक वेदनीय कर्मनां बे पुत्र छे, एक पाप ने बीजो पुण्य, एवां जुदा जुदा नाम कह्यांछे, पण बंनेनो स्वभाव एक छे एटले बेउने विषे दोरधूप के० वेदवानी सत्ता छे. एटले खेदसंताप छे वली पापने पुण्यए बेउ कर्म बंधरूप छे, एटला वासते ज्ञानीजने ए बेउमांथी कोइनो पण अभिलाप कीधो नथी. ॥ ३८ ॥

हवे पाप तथा पुण्य ए बेउने समान कह्या तेउपर शिष्य प्रश्न पूछेछे --

अथ शिष्य प्रश्नः--

चोपाई -- कोऊ शिष्य कहै गुरु पांही; पाप पुण्य दोऊ सम नांही; कारन रस सुभाव फल न्यारे, एक अनिष्ट लगे इक प्यारे ॥ ३९ ॥

अर्थ --कोई शिष्य गुरुनी पासे आवी कहे के, स्वामी पाप ने पुण्य ए बेने समान कह्या पण ते समान देखाता नथी केमके, ए बेना कारण रस स्वभाव तथा फल ते तो जुदां जुदां छे वली एमाथी एक प्रिय लागे छे ने एक अप्रिय लागे छे ॥३९॥

हवे शिष्य ए बेउना कारण प्रमुख जुदा जुदा कहे छे.-- अथ शिष्य कथन --

सवैया इकतीसा.-- संकिलेस परिनामनिसो पाप बंध होइ, विशुद्धसो, पुन्य बंधु हेतु भेद मानिये, पापके उदे असाता ताको है कटुक स्वाद, पुन्य उदे साता मिष्ट रस भेद जानिये, पाप सकिलेस रूप पुन्यहि विशुद्ध रूप, दुहूंको सुभाउ भिन्न भेद यो बखानिये; पापसों कुगति होय पुन्यसो सुगति होय, ऐसो फल भेद परतछ परमानिये. ॥ ४० ॥

अर्थ -- तीव्र कषायमय जे परिणामछे तेनुं नाम संक्लेश परिणाम, तेणे करीने पापनुं बंध थायछे, अने कषायनुं जे मंदपणुं तेने विशुद्ध कहिये, तेवमे पुन्यनो बंध थाय, एवा हेतु एटले कारण भेद मानिये छइये. अने पापना उदयथी अशाता थाय छे, तेनो स्वादतो कटुक होय छे. ने पुन्यना उदयवडे शाता उपजे छे तेनो मिष्ट स्वाद होय छे. एटले पाप ने पुन्य ए बेउने विषे रसभेद थयो, वली

पापकर्म क्लेश रूप छे, तीव्र कषायरूप छे; अने पुण्य कर्म विशुद्ध रूप छे मंद कशायरूप छे, ए बंने कर्मनो जिन्न जिन्न स्वनाव थयो, ते एज उपरथी ए बंने कर्मनो नेद वखाणीये छइये, अने पापथी कुगति के० नर्क गती तिर्यंच गती थाय छे, अने पुण्यवगे मनुष्यगति देवगति एवी सुगति थाय छे, ए रीते पाप पुण्यरूप कर्मनेविषे फलनो नेद प्रत्यक्ष प्रमाणथी छे ॥ ४० ॥

हवे शिष्यना प्रश्ननो गुरु उत्तर करे छे -- अथ गुरु उत्तर वचन यथा -

सवैया इकतीसा -- पाप बंध पुन्य बंध डुहूमे मुगति नांहि, कटुक मधुर स्वाद पुग्गलको पेखिये, सकिलेस विशुद्धि सहज दोउ कर्म चालि, कुगति सुगति जग जालमे विशेखिये, कारनादि नेद तोहि सूजत मिथ्यातमांहि, ऐसो द्वैत नाव ज्ञान दृष्टिमे न लेखिये, दोउ महा अंधकूप दोउ कर्म बंध रूप, डुहू को विनास मोष मारगमें देखिये ॥ ४१ ॥

अर्थ - पापनो पण बंध थाय ने पुण्यनो पण बंध थायछे ने ज्यां बंध होय त्यां मुक्ति न होय, एटले बेउथी मुक्ति नही ते माटे बेउ समान छे, अने जे कटुक रसमा पाप छे ने मधुर रसमा पुण्य छे ए बेउ रस पुदगलना छे तेथी पापने पुण्य समानज छे वली जे सक्लेश स्वनावने लीधे पाप छे, ने विशुद्ध स्वनावथी पुण्य छे; पण ए बेउ स्वनाव जे छे ते कर्मनी चाल छे अने कुगति तथा सुगति ते पाप पुण्यना फल छे, ते नेदवडे जगत जालनी विशेष ता छे, तेथी पाप पुण्य समानज छे अरे शिष्य तने जे पाप पुण्यना कारणादि नेद तेणे करीने पाप पुण्यनो द्वैत नाव के० द्विविध नाव सूजे छे, ते तो मिथ्यामतिमा सूजे छे, पण ज्ञान दृष्टि करी जोतां तो ए द्वैतनाव देखाशे नही ए बेनेविषे आत्मानु अवलोकन नथी, तेथी ए बेउ महा अंधकूप छे, अने ए बेउ कर्म छे, ते बंधरूप छे अने मोक्षमार्गने विषे ए बेउनो विनाश देखीये छे, तेथीए बेउ समान छे ॥ ४१ ॥

हवे मोक्ष मार्गनेविषे बेउनो विनाश बतावे छे - अथ मोक्ष पद्धति कथन -

सवैया इकतीसा -- सील तप संजम विरति दान पूजादिक, अथवा असंजम कषाय विषै नोग है, कोउ शुनरूप कोउ अशुन सरूप मूल, वस्तुके विचारत डुविध कर्म रोग है, ऐसी बंध पद्धति वखानी वीतराग देव, आतम धरममे करम त्याग जोग है, नौजल तरैया राग दोषको हरैया महा मोषको करैया एक शुद्ध उपयोग है ॥ ४२ ॥

अर्थ -- ब्रह्मचर्य तप, पचेंद्रिय निग्रह, सवर दान पूजाप्रमुख क्रिया, ए पुण्य बंध

ना कारण कर्म छे. अथवा पापना कारण असंयम कषाय अने विषय नो ग छे. ए बेउमां कोई शुभरूप कार्य छे, अने कोई अशुभरूप कार्य छे, पण वस्तुनुं मूल विचारतां तो बेउए कर्म रोग छे; एटले बेउ प्रकारनो कर्म रोग छे; एवी बंधनी पद्धति के० एक मंडी ते वीतराग देवे वखाणी; पण आत्मिक धर्ममां एटले आत्मानो स्वभाव जोतां कर्म क्रिया त्यागवा योग्य छे, एवा पापपुण्यने हेय कहेनार, अने भवजल ने तरनार, राग द्वेषने हरनार तथा महा मोक्षनो करनार एक शुद्ध उपयोग उपदेश छे. ॥ ४२ ॥

हवे अर्धा सवैयामां शिष्य प्रश्न करेछे, ने अर्धा सवैयामां गुरु तेनो उतर वालेछे.—अथ शिष्य प्रश्न गुरु उत्तर कथन. -

सवैया इकतीसाः--शिष्य कहे स्वामी तुम करनी शुभ अशुभ, कीनी हे निषिद्ध मेरे ससो मनमांहि है, मोषके सधैया ज्ञाता देसविरती मुनीस, तिन्हकी अवस्था तो निरावलंब नांहि हैं, कहे गुरु करमको न्यास अनुभौ अभ्यास ऐसो अवलब उन्हहीको उनमांहि है; निरुपाधि आतम समाधि सोइ शिवरूप, औँर दौर धूप पुदगल परछांहि हैं. ॥ ४३ ॥

अर्थः--शिष्य पूछेछे हे स्वामी, तमे तो मोक्ष मार्गमां शुभने अशुभ करणी बेउनो निषेध कीधो, तेनो मारा मनमां संदेह पडेछे; केमके मोक्षमार्गना साधक ज्ञाता देश विरती पंचम गुण स्थान वर्त्ति थया अने मुनीश के० षष्ट सप्तम गुणस्थानवर्त्ति सर्व विरती थया, तेमनी अवस्था तो निरालंबननथी एटलेपोतपोतानी शुद्ध क्रियाना आलंब ने लेईने देश विरती सर्व विरती केवायछे, त्यारे करणी निषिद्ध केम थई? हवे गुरु कहेछे.—जेवो अक्षरनो न्यास मांड्यो तेवो श्रुत ज्ञाननुं आलंब न होय तेम शुभ कर्मनो न्यास तेतो जोवामा छे पण ते अनुभवनोज अभ्यासछे ते अनुभव अभ्यासरूप आलंबन ते तो ज्ञातानुं ज्ञाता पासेज छे, अने तेमां निरुपाधि के० राग द्वेष कषाय इछादिकविना आत्मानी जे समाधीछे, एटले जे पर रूपने विषे निरुपयोगीपणे रहेवु तेज शिवरूप, के० मोक्षरूपछे अने जे दोरधूप के० खेद संतापजेछे ते तो पुद्गलनी परिछांही के० छांयाछे ॥ ४३ ॥

हवे एज शुभ क्रियाविषे बंध अने एज शुभ क्रियाविषे मोक्ष ए बेउ स्वरूप कही बतावेछे.- अथ बंध मोक्ष स्वरूप कथन.--

सवैया तेईसा.—मोछसरूप सदा चिनमूरति बंधमई करतूति कही हें, जावतकाल वसे जड चेतन, तावत सो रसरीति गही हे, आतमको अनुभौ जबलों तबलो शिव

रूप दसा निर्वही है, अथ नयो करनी जब गनत, बंधविधा तब फेलि रही है ४४

अर्थ –चिन्मूर्त्ति के० चिदानद छे ते तो सदा मोक्ष स्वरुप छे, अने करतूती के० क्रिया तेतो सदा बंधमयछे. यावत् काल के० जेटला काल सुधी चेतन जहां वसे तावतकाल के० तेटला काल सुधी तेज रसरीति ग्रहण कीधी छे, एटले तेज रसमा रहेछे, एटले ज्यासुधी आत्मानो अनुभव रहे त्यां सुधी शुभ क्रिया करता छता शिवपद दशा निवही एटले मोक्ष स्वरूपमा रहे,अप्रमतता केहेवाय, अने पोतानुं स्वरुप भुलीने अथ थयो थको ज्यारे करणीनोज रस दरावे त्यारे तो बंधनाज कष्ट रोग फेलावेछे॥ ४४

हवे मोक्षप्राप्तिनुं कारण कहेछे – अथ मोक्ष मार्ग निरूपण –

सोरठा –अतर दृष्टि लखाउ, अरु सरूपको आचरण, ए परमा तमभाउ, शिवकारन एई सदा ॥ ४५ ॥

अर्थ –बाह्य दृष्टि छांमीने अतर दृष्टि आपीने अलक्षनो जापकरवो, अने तेना स्वरुपनुं आचरण करवु, एटले ज्ञान दर्शन चारित्रने आचरिये, तेथकी परमात्मा भावसिद्ध थाय, सदाकालनेविषे एज मोक्षनु कारण छे ॥ ४५ ॥

हवे बाह्य दृष्टिवडे बंध पद्धति थाय ते कहे छे –अथ बंध मार्ग निरूपण –

सोरठा -करम शुभाशुभ दोइ, पुद्गल पिंम विभाव मल, इनसों मुगति न होइ, नाही केवल पाइए ॥ ४६ ॥

अर्थ –शुभकर्म ते पुन्य ने अशुभ कर्म ते पाप ए बेउ कर्मछे पुद्गलना पिंम छे, अने विभाव जे राग द्वेषादिक मलरूप छे ए बेउनेविषे दृष्टि रहेवाथी मुक्ति थाय नही, अने केवलज्ञाननुं पद पामीये नही ॥ ४६ ॥

ए वात उपर शिष्य प्रश्न करे छे ने तेनो उत्तर गुरु दिये छे –

अथ शिष्य प्रश्न गुरु उत्तर कथन –

सवैया इकतीसा – कोउ शिष्य कहे स्वामी अशुभ क्रिया अशुद्ध, शुभ क्रिया शुद्ध तुम ऐसी क्यों न बरनी ? गुरु कहे जबलो क्रियाको परिणाम रहे, तवलो चपल उपयोग योग धरनी, थिरता न आवै तोलो शुद्ध अनुभो न होइ, याते दोऊ क्रिया मोष पथकी कतरनी, बंधकी करैया दोऊ दुहूमे न भली कोऊ, बाधक विचारमें निषिद्ध कीनी करनी ॥ ४७ ॥

अर्थ –कोई शिष्य पूछे छे के हे स्वामी, तमे एवु वर्णन केम करता नथीके अशुभ क्रिया जे हिंसादिक ते अशुद्ध छे अने शुभ क्रिया जे दया दानादिक ते शुद्धछे त्यारे गुरु उत्तर आपेछे के अहो शिष्य, ज्यांसुधी क्रियाना परिणाम रहे छे त्या

सुधी उपयोगनी धरनी के० क्षेत्री एटले उपयोगवत आत्मा चंचल रहे छे. ज्यांसुधी क्रियामां उपयोग रहे त्यांसुधी आत्मानी स्थिरता थाय नही, अने आत्मानो शुद्ध अनुभव होय नही, ए उपरथी ए पुण्य पापनी बेउ क्रिया छे ते मोक्षमार्गनी कतरणी समान छे. बंधनी करनारछे एथी बेउ क्रियामां एक पण भली नथी ज्यां मुक्तिमार्गनो बाधक विचारे त्यां बेउ क्रिया निषिद्ध कीधी छे ॥ ४७ ॥

हवे मात्र ज्ञान मोक्षनो मार्ग छे ते कहे छे —अथ ज्ञान मोक्ष मार्ग यह कथनः—

सवैया इकतीसा – मुकतिके साधकको बाधक करम सब, आतमा अनादिको करममाहि लुक्यो है, एते परि कहै जो कि पाप बुरो पुण्य भलो, सोइ महा मूढ मोक्षमारगसों चुक्यो है, सम्यक सुभाउ लिये हियेमें प्रगटयो ज्ञान, उरध उमगि चल्यो काहूपे न रुक्योहै, आरसीसो उज्वल बनारसी कहत आपु, कारन सरुप व्हैके कारजकों ढुक्यो है ॥ ४८ ॥

अर्थ– जे आत्मा मुक्तिनो साधक छे, तेने सर्व कर्म बाधक छे, एथीज अनादि कालनो आत्मा कर्ममां लुक्यो एटले दबाई रह्यो छे; एम छतां पण जो कोई एवुं कहे के, पाप कर्म नठारुं छे, ने पुण्य कर्म सारुं छे, तेने महा मूढ जाणवो ; ने ते मोक्ष मार्गथी चुक्यो छे, एम जाणवुं एवामां कोईने भवत्व परिपाक थकी सम्यक् स्वभावनी प्राप्ति थइ तेवारे हीयामां ज्ञान प्रगटयुं तो ते उर्ध्व दशा तरफ उमगे करीने चाल्यो, पण कोई कर्मथी रोकायो रह्यो नही. ते आरीसानी पठे उज्वल थईने निज ज्ञानोपयोगी पणे कारण सुरूपी थईने पोताना मुक्तिरूप कार्यने पोतेज ढुके छे एवुं बनारसी दास कहे छे ॥ ४८ ॥

हवे ज्ञाननो तथा कर्मनो विवरो बतावेछे -- अथ ज्ञान तथा कर्म विवरन –

सवैया इकतीसा -- जोलों अष्ट कर्मको विनास नाही सरवथा, तोलों अंतरातमामें धारा दोई वरनी, एक ज्ञानधारा एक शुभाशुभ कर्मधारा, दुहूकी प्रकृति न्यारी न्यारी न्यारी धरनी, ग्यान धारा मोक्षरूप मोक्षकी करन हार, दोषकी हरन हार भौ समुद्र तरनी, इतनो विशेष जु करमधारा बंधरूप, पराधीन सकति विविध बंध करनी ॥ ४९ ॥

अर्थ – ज्या सुधी आठ कर्मनो सर्वथा विनाश थतो नथी एटलासुधी मुक्ति न होय त्यांसुधी अंतरात्मा थकी बे धारा वहेछे, तेमां एक ज्ञाननी धाराने बीजी शुभाशुभ कर्मनी धारा ए बंनेनी प्रकृती जुदी जुदी छे; अने धरनी के० क्षेत्र ते पण जुडुं जुडुं छे एमां एटलुं विशेष छे के जे कर्मधारा छे ते बंधरूप छे; अने ज

डपणाने लीधे एनी शक्ति पराधीनरूपछे अने प्रकृतिबंध स्थितिबंध तथा रसबंध एवा जात जातना बंधनी करनारीछे अने ज्ञानधारा मोक्षस्वरूप छे मोक्षनी करनारी छे ने दोष मात्रनी हरनारी छे अने भवसमुद्र तरवाने तरनी के० नाव समान छे ॥४९॥

हवे मोक्ष कर्त्ता जे ज्ञान क्रिया एवो जे स्याद्वाद तेनी प्रशंसा करेछे —

अथ स्याद्वाद प्रशंसा —

सवैया इकतीसा — समुझे न ज्ञान कहै करम कियेसो मोक्ष, ऐसे जीव विकल मिथ्यातकी गहलमे, ज्ञान पक्ष गहै कहै आतमा अबंध सदा, वरते सुछंद तेउ बूडे है चहलमे, जथाजोग करम करे पै ममता न धरै, रहै सावधान ज्ञान ध्यानकी टहलमे, तेई भवसागरके उपर व्है तरै जीव, जिन्हको निवास स्यादवादके महलमें॥५०॥

अर्थ —क्रियावादी कहेछे के, "न ज्ञान श्रेय" एनो अर्थ एछे के ज्ञान भलुं नथी जेमा संशय उपजे छे अने संशय थया थकी जीव अहींनो नही ने तहींनो पण नही एवो थाय छे माटे क्रिया कर्म करवाथीज मोक्षछे एम विकल थयलो जीव मिथ्यातनी गहलमा कहेछे हवे जे ज्ञानवादी सांख्यमती छे ते ज्ञाननोज पक्ष ग्रहीने रहेछे ने एवुं कहेछे के बंधने मोक्ष प्रकृतिने विषेज छे पण आत्मा तो सदा अबंध पणे वर्त्ते छे, एवी श्रद्धावडे स्वछंद के० पोतानी मरजीमा आवे तेम चालेछे तेउ चहल के० कर्दममा बूडेला छे. अने जे स्याद्वादी छे ते कोईनो विरोधी नथी, तेथी यथायोग्य एटले गुण ठाणा माफक कर्म क्रिया करेछे, पण कर्मने उदय दशामा राखे छे, अने ममताने धरता नथी, ज्ञान ध्याननी सेवामां सावधान रहे छे, एवा स्याद्वादी जीव उपर थइ रह्या थका भवसागर तरेछे, जेनो निवास स्याद्वाद रुप महेलमाछे ५०

हवे मूढनी तथा विचक्षणनीक्रियानुंवर्णनकरेछे -अथ मूढविचक्षण क्रिया वर्णन -

सवैया इकतीसा -जैसे मतवारो कोउ कहै और करै और तैसे मूढ प्रानी विपरीतता धरतु है, अशुभ करम बंध कारन बखाने मानै, मुकतिके हेतु शुभ रीति आचरतु है, अंतर सुदृष्टि भई मूढता बिसरि गई, ज्ञानको उद्योत भ्रम तिमिर हरतु है, करनसों भिन्न रहै आतम सरूप गहै, अनुभौ आरंभि रस कौतुक करतु है ॥ ५१ ॥

अर्थ —जेम कोई मतवारो पुरुष कहे कइ अने करे कइ तेम मूढ प्राणी उलटोज भाव धारे छे, एटले अशुभ कर्मने बंधनुं कारण समजे अने मुक्तिनो हेतु शुभरीत के० शुभ क्रियाने आचरेछे हवे ज्ञानीने अंतर सुदृष्टि थई तेथी मूढता मटी गई ने ज्ञाननो उद्योत थयो तेणे करीने भ्रमरूप तिमिरनो नाश थयो, त्यारे मुक्तिनुं

कारण जे शुभ क्रियाछे तेथी ते ज्ञानी भिन्न रहे,ममता न धरे, अने आत्मानुंज स्वरूप ग्रही आत्माना अनुभवना आरंभना रसनुं कोतुक करे छे ॥ ५१ ॥

इति श्री नाटक समयसारको पुन्य पाप एकत्व कथन चतुर्थ द्वार संपूर्ण

दोहरा —पुन्य पापकी एकता, बरनी अगम अनूप , अब आश्रव अधिकार कछु, कहों अध्यातम रूप. ॥ ५२ ॥

अर्थ·—पाप पुण्यनी एकता तो अगम छे अने अनुपम छे तेनुं वर्णन कीधुं, हवे कइंक आश्रवनो अधिकारछे ते कहुंछुं अने अध्यात्मनु स्वरूप कहुछुं ॥ ५२ ॥

आश्रव सुभटनोनाशकरनारज्ञानसुभटनेनमस्कारकरेछे —अथज्ञान बल वर्णनं.—

सवैया इकतीसा·—जे जे जगवासी जीव थावर जंगम रूप, ते ते निज वस करी राखे बल तोरिके; महा अभिमानी ऐसो आश्रव अगाध जोधो रोपि रनथंभ ठाढो भयो मूछ मोरिके; आयो तिहि थानक अचानक परमधाम, ज्ञान नाम सुभट सवायो बल फोरिके , आश्रव पछार्यो रनथंभ तोरि मार्यो ताहि, निरखी बनारसी नमत कर जोरिके ॥ ५३ ॥

अर्थ --जे जे थावर जंगमरूप जगतवासी जीव छे, तेना सहजबल ने तोडीने ते ते जीवोने आश्रव जोधाए पोताने वस करी राख्याछे एवुं महा अभिमानी जगतमां आश्रवरूपी अगाध जोद्धो रहेछे, ते रणथंभ रोपीने मूछमरोडीने ठाढो थयो छे ते एम कहेछे के, जगतमां मने जीते एवो कोइ नथी ते स्थले अचानक परम धाम के० अती तेजस्वी ज्ञान नामनो सुभट उपलो आश्रव जोद्धानो प्रतिपक्षी ते सवायोबल फोरवीने लडवा ने आव्यो तेणे आश्रव सुभटने पछाड्यो अने तेनो रणथंभ तोडी नाख्यो एवा ज्ञान सुभटने निरखीने बनारसी दास हाथ जोडी नमस्कार करेछे ॥ ५३ ॥

हवे द्रव्यरूपी आश्रव अने भावरूपी आश्रवना लक्षण कहेछे·— अने सम्यक् ज्ञाननुं लक्षण पण कहेछे·—अथ द्विविध आश्रव लछन तथा ज्ञान लछन वर्ननं —

सवया तेइसा·— दर्वित आश्रव सो कहिये जहिं पुग्गल जीव प्रदेस गरासै , भावित आश्रव सो कहिए जहिं राग विरोध विमोह विकासै ; सम्यकपद्धति सो कहिये जहिं दर्वित भावित आश्रव नासै ; ज्ञानकला प्रगटै तिहि थानक, अंतर बाहरि और न भासै ॥ ५४ ॥

अर्थ —जांहां पुग्गल द्रव्य छे ते जीवना सर्व प्रदेशने ग्रासेछे के० गळी जायछे, ते

द्रवित आश्रव जाणीये अने ज्यांहां द्रवित आश्रवना प्रसंग थकी आत्मानेविषे रा गद्वेष विमोहनो विकाश थाय त्यां भावित आश्रव कहीये, अने ज्यां आत्मानेविषे सम्यक् पद्धति के० सम्यक् स्वरूप कहिये त्यांहां तेने द्रवित आश्रव अने भावित आश्रवनो नाश थाय, एटले सम्यक् पद्धतिनेविषे ज्ञान कला प्रगटे तेथी अंतरना वाश्रवमां बाहिर द्रव्याश्रवमां बीजूं भासे नही, सम्यक्ज दीठमां आवे ॥ ५४ ॥

हवे सम्यक् स्वरूपनो धणी जे ज्ञाता तेनुं लक्षण कहेछे अथ ज्ञाता लक्षणं

चोपाई छंद.—जो दरवाश्रवरूप न होई, जहं भावाश्रव भाव न कोई, जाकी दशा ज्ञानमय लहिये, सो ज्ञातार निराश्रव कहिये ॥ ५५ ॥

अर्थः—जे द्रव्याश्रवना स्वरूपमां होय नही, अने ज्यांहां भावाश्रवनुं पण भाव कोई नथी,अने जेनी दशा ज्ञानमय होय,तेज जीव ज्ञानी अने आश्रवरहित कहिये

हवे ज्ञातानी समर्थाईथी निराश्रवपणुं देखाडे छे.—अथज्ञाताकोसमर्थपणोवर्णनः—

सवैया इकतीसा -जेते मन गोचर प्रगट बुद्धि पूरवक, तिन परिनामनकी ममता हरतु है, मनसा अगोचर अबुद्धि पूरवक भाव, तिन्हिके विनासवेको उद्यम धरतु है, याहि भांति परपरिनतिको पतन करे, मोखको जतन करे भौजल तरतु है, ऐसे ज्ञानवंत ते निराश्रव कहावे सदा, जिन्हको सुजस सु विचक्षण करतु है॥५६॥

अर्थ —जेटला परिणाम प्रगट मनगोचर छे, एटला जिन परिणामने मनमां संभारेछे जाणे छे, अने बुद्धिपूर्वक के० पोतानी अहं बुद्धिवडे जे अशुद्ध परिणाम उपजेछे, ते परिणामनी ममता छांडे छे, अने जे भाव मनथी अगोचर के० जेनु स्वरुप मनवडे देखाय नही, अने अबुद्धि पूर्वक के० जेने बुद्धिनो प्रचार लागे नही, एवा अनागत कालना जे अशुद्ध परिणाम, तेनो विनाश करवाने उद्यम करे छे, ए रीते परपरिनति के० पर वस्तुनो जे परिणाम जे अतीत कालमां थयो छे वर्त्तमान कालमा छे, अनागत कालमां थशे, तेनुं पतन करे. अने मोक्ष के० तेथी छुटवु तेनुं जतन करे ते भवसागरथी तरे, एवा जे ज्ञानवान प्राणी छे तेतो सदा निराश्रव केवाय जेनी सुजश ने स्तुती ते पंडित पुरुषो गायछे ॥५६॥

ज्ञानीने निराश्रव कह्या तेउपर शिष्य प्रश्न करेछे:—अथ शिष्य प्रश्न कथन.—

सवैया इकतीसा —ज्यों जगमे विचरै मतिमंद सुछंद सदा वरते बुध तैसे, चंचल चित्त असंजत बैन सरीर सनेह जथावत जैसे, भोग संजोग परिग्रह संग्रह मोह विलास करे जहाँ ऐसे, पूछत शिष्य आचारजसों यह, सम्यकवंत निराश्रव कैसे ? ५७

अर्थ — जेम मतिमंद के० अज्ञानी जन जगतमां स्वछंद के० मरजी मुजब वर्त्ते, तेम पंमित पण सदा तेवीरीते वर्त्ते, ते आवीरीते चचल चित्तवाला रहे, असंजत वेन के० विचारविना वचन बोले, अने शरीर स्नेहने प्रवर्त्तावे, अने अज्ञानीनी माफक जोगसंयोग राखे, परिग्रहनो संग्रह करे, अने ज्ञान अवस्थामां मोहविलास ए वोज करे, ए रीते अज्ञानीनी अने ज्ञानीनी एक सरखी रीति जोईने शिष्य आचार्यने पूछेछे के, एने सम्यक्वत निराश्रव केम कहिये ? ॥ ५७ ॥

हवे ए प्रश्ननुं उत्तर गुरु आपेछे —अथ गुरु उत्तर कथन —

सवैया इकतीसा —पूरव अवस्था जे करमबंध कीने अब, तेई उदे आई नाना नांति रस देत है, केई शुन शाता केई अशुन असातारूप, डहुसो न राग न विरोध सम चेत है, यथायोग क्रिया करै फलकी न इछा धरै, जीवन मुगतिको बिरुद गहिलेत है, यातें ज्ञानवतको न आश्रव कहत कोउ, मुड्तासो न्यारे नये सुद्धता समेत है. ५७

अर्थ.—पूर्वकालमां अज्ञानअवस्थानेविषे जे जे कर्मबंध कीधेलां होय तेज कर्मो वर्त्तमानकालमां उदय आवीने नाना प्रकारनो रस आपेछे तेमा केटला एक शुनकर्म ते शातारूप छे, अने केटलाएक अशुन कर्म अशातारूप छे; एवा बेउ जातना कर्मनेविषे ज्ञानीने राग अने विरोध नथी, एथी ज्ञानी समचित्त छे. अने यथायोग्य के० उदयमाफक क्रिया करे, पण फलनी इछा राखे नही. ने जीवता ज मुक्त थयाछे, तेथी जीवन्मुक्तिनो विरुद धारेछे, ए रीते ज्ञानवत मनुष्यने कोई आश्रव केहेतु नथी ते मूढताथी न्यारो थयो अने शुद्धता समेत छे ॥ ५७ ॥

हवे राग द्वेष मोह अने ज्ञानना लक्षण कहेछे —अथ राग द्वेष मोहज्ञान लक्षण —

दोहरा — जो हितनाव सु राग है, अनहितनाव विरोध, भ्रामकनाव विमोह है, निर्मलनाव सु बोध ॥ ५९ ॥

अर्थ —जे हितनाव छे ते राग छे, अने अनहितनाव ते विरोध छे, अने भ्रामकनाव छे तेने विमोह कहिये, अने निर्मलनाव ते बोध एटले ज्ञान कहिये ॥५९

हवे राग द्वेषनुं स्वरूप कहेछे — अथ राग द्वेष कथन —

दोहा.—राग विरोध विमोह मल, एई आश्रव मूल, एई कर्म वढाइके, करै धरमकी नूल ॥ ६० ॥

अर्थ —राग द्वेष ने विमोह जे छे ते आत्माने मल छे, अने एज दोष आश्रवना मूल छे. अने एज रागद्वेष अने मोह छे ते करमने वधारीने धरमने नुलावी दिएछे ६०

हवे ज्ञाताने निराश्रव कहेछे.— अथ ज्ञातानिराश्रव कथन.—

दोहा -- जहा न रागादिक दसा, सो सम्यक परिनाम; याते सम्यकवतको, कह्यो निराश्रव नाम ॥ ६१ ॥

अर्थ – जहा राग द्वेष मोहनी दशा न मले तेने सम्यक परिणाम कहिये, ए उपरथी सम्यकवत पुरुषने निराश्रवी नाम आप्युं ॥ ६१ ॥

हवे ज्ञाता जे छे ते निराश्रवपणामा विलास करेछे –अथ ज्ञाता कथन –

सवैया इकतीसा – जे कोई निकट भव्य रासी जगवासी जीव, मिथ्या मतभेद ज्ञान भाव परिनये है, जिन्हकी सुदिष्टिमें न राग दोष मोह कहूं, विमल विलोकनिमे तीनो जीति लये है, तजि परमाद घट सोधि जे निरोधि जोग, शुद्ध उपयोगकी दशामे मिलिगये है, तेई बंध पद्धति विमारि पर सग मारि आपुमे मगन व्हैके आपरूप भये है ॥ ६२ ॥

अर्थ.– जे कोई भव्य राशीमां जगतवासी जीव छे, ते भव्यत्व परिपाकने लीधे निकट के० पासे थया; ने मिथ्यामतिने भेदीने पोतानुं स्वरूप जे ज्ञान भाव तेनेविषे परिणमी रहेछे, जेनी ज्ञानरूपी दृष्टिमा राग द्वेषने मोह कंई पामिये नही, अने निर्मल निज स्वभावनी विलोकतामा राग द्वेष ने मोह ए त्रणेने जीती लीधाछे, अने पाचे प्रमाद तजी पोताना शरीरने साधीने मन वचन अने कायाने शैलेशीकरणमां निरोध करीने शुद्ध उपयोग दशा जे केवल दशा तेनेविषे मली गया तेवा ज्ञानी बंधनो मार्ग विमारी अने परवस्तुनो सग छोडीने आत्मानेविषे मगन थई आपरूपे थया ॥ ६२ ॥

शिष्य पूछेछे के, एम ज्ञातानेविषे निराश्रवपणुं थशे तो आयुष्यपर्यत ज्ञाता निराश्रवी थशे गुरु उत्तर आपेछे के, ज्ञातापणु तो उपशमभावने क्षयोपशम भाव वडे चचल छे ते कहेछे.–अथ उपशमी क्षयोपशमी व्यवस्था कथन. -

*सवैया इकतीसा –*जेते जीव पंडित खयोपशमी उपशमी, तिन्हकी अवस्था ज्यो लुहारकी समासी है, छिन आगमाहि छिन पानिमाहि तैसे एउ, छिनमे मिथ्यात छिनु ज्ञान कला भासी है, जोलो ज्ञान रहै तोलो सिथिल चरन मोह जैसे कीले नगकी सगति गति नासी है, आवत मिथ्यात तब नानारूप बंध करै जो उकीले नागकी प्रकृति परगासी है ॥ ६३ ॥

अर्थ - मिथ्यात्वनी गाठभेद कीधा पछी जे मिथ्यात्वनो अश उदय आवेछे ते जेनो खपीजाय अने मिथ्यातपुज उपशम्यो रहे ते जीव क्षयोपशमी कहिये अने जेने अतर मुहूर्तलगी उपशम्योज रहे तेने उपशमी कहीये एवा बेउ भाव

ते जे जीव पंमित्त छे तेनी अवस्था ते लुहारनी साणसी समान छे, जेम साणसी घडीमां लोहने ग्रहण करी आगमां होयछे, ने घडीमा तेहज साणसी लोखंमने वम्रो करवा सारु पाणीनेविषे होयछे; तेम ए क्षयोपशमी अने उपशमी जीव क्षण एकमां मिथ्यात नावमां आवे ने क्षणनेविषे ज्ञानकलाना प्रकाशमां रहेछे एवी अवस्थानेविषे जांहांसुधी ज्ञानकला रहेछे तासुधी चारित्र मोहनीनी पचीस प्रकृति शिथिल के० ढीली थई रहेछे; जेम मंत्रनी जडीए करीने सर्पनी शक्ति गति शिथिल थई जायछे. तेम ए पण जाणवुं, हवे ए जीवने फरी मिथ्यात्व उदय आवेछे त्यारे तो नाना प्रकारना कर्मबंध करेछे, जेम नागनी उकीलनी करवाथी नागनी पोतानी प्रकृति फरीथी प्रगटे ते रीते जाणवुं ॥ ६३ ॥

हवे ज्ञानना शुद्धपणानी प्रशंसा कहेछे.–अथ शुद्धनय प्रशंसाः–

दोहा.–यह निचोर या ग्रंथको, कहै परम रस पोप, तजै शुद्धनय बंध है, गहै शुद्धनय मोप ॥ ६४ ॥

अर्थ–आ समयसारग्रंथनु रहस्य एज छे अने एज उत्कृष्ट रसनो पोषकछे के जे शुद्धतानी नयरीती गमी तो बंध छे अने शुद्धतानी नयरीति ग्रही तो मोक्ष छे ६४

हवे बे नयनेविषे जीवनो विलास कही बतावे छे –अथ जीव विलास वर्ननं –

सवैया इकतीसा – करमके चक्रमें फिरत जगवासी जीव, व्है रह्यो बहिर मुख व्यापत विपमता, अंतर सुमति आई विमल वडाई पाई, पुद्गलसों प्रीति टूटी छूटी माया ममता, सुद्ध नै निवास कीन्हो अनुनौ अन्यास लीन्हो, ज्रमनाव छांमिदीनो निनो चित्त समता, अनादि अनंत अविकलप अचल ऐसो, पद अवलंबी अवलोके राम रमता ॥ ६५ ॥

अर्थ –चौदराजलोकमां कर्मनुं चक्र के० कटक फरी रह्यु छे, तेमा जगतवासी जीव पण फरी रह्यो छे, अने ए फरवामा जीव विपमताए युक्त थयो थको क्यारे इष्ट संयोगी ने क्यारे अनिष्ट संयोगी थई ने तेमां बहिर्मुख थई रह्यो, एटले बाह्य विषय नोगनोज ग्राहक थयो, अने अंतरदृष्टिथकी आत्मा न जाण्यो एटलामा अंतरनेविषे सुमति उपजी, तेणे करीने पोतानी निर्मल प्रज्जुताने पाम्यो, त्यारे परवस्तु जे पुद्गल तेनी प्रीति टूटी, एटला कालसुधी पुद्गलनी माया ममता जे नही छूटी हती ते छूटी. जेम शुद्धनयवडे आत्मानुं स्वरूप कह्यु, तेवा शुद्धनयमां पोते निवास कीधो, अने आत्मस्वरूपमां उपयोग राखीने अनुनवनो अन्यास लीधो एथी ज्रमनावनो त्याग थयो अने मन जे छे ते समाधिनेविषे लीन थयुं. त्या

रथी अनादि अनंत कालसुधी जे स्वरूपमां कंई बीजां विकल्प न पामियें एवुं पोतानुं अचल पद अवलंबीने पोतानुं जे रमता रामपणुं छे तेने अवलोके ॥ ६५ ॥

हवे आत्मानु शुद्धपणुं सम्यक दर्शन छे, तेनी प्रशंसा करेछे --अथसम्यक्तप्रशसा

सवैया इकतीसा -- जाके परगासमे न दीसे राग दोष मोह, आश्रव मिटत न हि बंधको तरस है, तिहु काल जामे प्रतिबिंबित अनतरूप, आपु हू अनत सत्ता नततें सरस है, नाव श्रुत ज्ञान परवान जो विचारि वस्तु, अनुनो करे जहा न वानीको परस है, अतुल अखम्ड अविचल अविनासी धाम, चिदानंद नाम ऐसो सम्यक दरस है ॥ ६६ ॥

अर्थ -- जे शुद्ध आत्माना प्रकाशमां राग द्वेष मोह न देखाय, अने आश्रव न होय; तेमा बंधनो तरस के० लागवु ते पण न होय, अने जे शुद्ध आत्माना प्रकाशमा त्रणे काळे अनंतरूप प्रतिबिंबित थाय छे, अने निजस्वरूप पण अनत छे, अने सत्तानतमां सरस छे, ते सत्तास्वरूपी अनंत पदार्थ छे, तेथी सरस छे, एटले जेना अनंतपर्याय सर्वे तेहिज धर्म कहे, अने नावश्रुत ज्ञानने प्रमाण करी वस्तुनो विचार अनुनव करे, अने ज्यां वाणीनो स्पर्श नही, एटले जे वचन गोचर नथी, अनक्षररूपनो अनुनव पोते करे, ए संयोगीगुणस्थानकनी दशा छे जेनी तुलना नथी एटले अतुल, वली जेनी खम्डना नथी माटे अखंम, एवु अचल ने अविनाशी धाम के० तेजोमय तेहिज चिदानद स्वरूप छे, एवु ईश्वररूप सम्यक् दर्शननुं स्वरूप कहिये ॥ ६६ ॥

इतीश्री नाटक समयसारविषे बालावोधरूप आश्रवद्वार पचम सपूर्ण.

दोहा -- आश्रवको अधिकार यह, कह्यो यथावत जेम, अब सवर वरनन करों, सुनों नविक धरि प्रेम. ॥ ६७ ॥

अर्थ -- ए रीते आश्रवनो अधिकार कह्यो हवे सवरतत्वनुं वर्णन करुं; अहो नविक के० नव्य प्राणीओ प्रेम धरीने ते सांजलो ॥ ६७ ॥

हवे संवरनु आदी ज्ञानवस्तु तेने नमस्कार करेछे --अथ ज्ञान वर्णनं --

सवैया इकतीसा --आतमको अहित अध्यातमरहित ऐसो, आश्रव महातम अखंम अंमवत है, ताको विसतार गिलिवेकों परगट नयो, ब्रह्मंमको विकासी ब्रह्मंमवत है, जामें सवरूप जो सवमें सवरूपसो पे सवनि सो अलिप्त अकाशखमवत है, सो है ज्ञान नानु शुद्ध संवरको चेष धरे, ताकी रुचि रेखको अमारे दमवत है ६८

अर्थ -- आत्मानुं अहित करता अने अध्यात्मस्वरूपथी रहित एवुं आश्रव

रूप महातम के० महा अंधकार अखंमपणे अंमवत के० सर्व लोकने ढांकी रह्यो छे, तेनो विस्तार गळवाने जे ज्ञानसूर्य प्रगट थयो ते ब्रह्मांम जेवो सर्व लोकालोकने विकाशनो करनारो थयो, अने ब्रह्मांमनुं मंमन जेथकी थायछे, अने जेने विषे सर्व रूप नासे छे; अने जे सर्वरूपे सर्वमां पामिये छे, अने जे सर्व मूर्तिक वस्तुथी आकाशखंमनीपरे अलिप्त छे, ते ज्ञानरूपी सूर्य तथा जे शुद्द संवरनो नेप धरी रह्या छे; तेनी रुचि रेखाने एटले तेना उदयने अमारो दमवत के०नमस्कार छे.६७

हवे जड चेतनना नेदज्ञानथकीज संवररूपी परमात्माने उंलखाय छे, ते समजावेछे:– अथ नेदज्ञान महिमा कथनः–

सवैया तेइसाः–शुद्ध सुछेद अनेद अबाधित, नेद विज्ञान सु तीछन आरा; अंतर नेद सुनाव विनाव करे जड चेतनरूप डुफारा; सो जिन्हके उरमे उप ज्यो न रुचै तिन्हको परसंग सहारा; आतमको अनुनौ करि ते हरखे परखे परमातम धारा. ॥ ६९ ॥

अर्थ:– शुद्धपणे स्वछेद के० पोतपोताना न्यारा स्वरूपने बतावनार अनेद के० एक स्वरूप अबाधित एटले कोई प्रमाणांतरे अखंमित एवुं नेदज्ञान ते तीक्ष्ण सुलाख छे, ते सुलाखथी अंतरात्मामां नेदन करीने स्वनाव अने विनावने जुदा जुदा करे ने जमरूप तथा चेतनरूपने डुफार के० न्यारा करी बतावे एवुं नेदज्ञान जेना हृदयनेविषे उपज्युं छे, तेज जीवने परवस्तुनो संग ते सहारा के० रुचे नही. अने तेज जीव पोताना स्वरूपनो अनुनव करी यथार्थपणे अंतरात्मानेविषे जे परमात्मानी धारा छे तेने पारखे. ॥ ६९ ॥

हवे नेदविज्ञान जे छे, ते सम्यक्त ज्ञान छे, तेनी समर्थाइ थकी स्वरूपनी प्राप्ति थाय छे; ते कहेछे:– अथ सम्यक्त सामर्थता कथन.–

सवैया तेइसा –जो कबहूं यह जीव पदारथ, औसर पाइ मिथ्यात मिटावे; सम्यक धार प्रवाह वहे गुन ज्ञान उदे मुख ऊरध धावे; तो अनिअंतर दर्वित नावित कर्म कि लेश प्रवेश न पावे; आतम साधि अध्यातमको पथ पूरण व्है परब्रह्मकहावे ॥ ७० ॥

अर्थ.– जो कोई आ जीव पदार्थ छे, ते यथाप्रवृत्तिकरणरूप अवसर पामीने मिथ्यात्वग्रंथि नेदीने मिथ्यात्वने मिटावे शुद्द सम्यक अने स्वरूप जलधारानो प्रवाह वहे अने ज्ञानगुणना उदय वडे उर्ध्व मुख थईने मुक्ति सनमुख दोडे त्यारे अन्यंतर जे द्रवित कर्म अने नावित कर्म तेना क्लेसनो प्रवेश ते न

थाय. जे प्रकृति प्रदेशरूप कर्म ते द्रवित कर्म अने राग द्वेषादिक ते नावित कर्म ए बंने प्रवेश नही करी शके, अने अध्यात्मना पथ सेलीमां आवीने आत्मा ने साधीने पोताना रूपमा पूर्ण थईने परब्रह्म केहेवाय ॥ ७० ॥

हवे संवरनुं कारण सम्यक दृष्टिछे,तेनो महिमा कहे छेः—अथ सम्यक दृष्टि महिमा.—

सवैया तेइसा —नेद मिथ्यात सु वेद महारस नेद विज्ञान कला जिन पाई; जो अपनी महिमा अवधारत, त्याग करे उरसो ज पराई, उद्धतरीति वसे जिनके घट होतु निरंतर ज्योति सवाई, ते मतिमान सुवर्ण समान लगे तिनकों न शुनाशुनकाई ७१

अर्थ -मिथ्यातग्रंथि नेदीने तथा उपशमरूप महारस वेदीने जे बुद्धिवंते नेद विज्ञाननी कला पामीछे, अने जे ए नेदविज्ञान वडे पोताना स्वरूपनी प्राप्ति करीने पोताना ज्ञान दर्शन चारित्ररूप महिमाने अवधारे, उर के० हैया थकी पराई सोज के०सामग्री तेनो त्याग करे अने जेना घटमा उद्धतरीति के० देशविरति तथा सर्व विरतीनी रीत फुरी अने निरंतर तप थकी जेनी सवाई ज्योति थाय छे तेने बुद्धिमान कहिये ते सुवर्णसमान छे तेमने शुनाशुन कर्मरूप काट लागी शकतो नथी ॥७१॥

हवे सवरनु मूल नेदविज्ञान छे ते मोक्षनुं कारण कही समजावेछे—

अथ नेदज्ञान महिमा कथन —

अडिल्ल छंद —नेदज्ञान संवरनिदान निरदोष है; सवरसो निरजरा अनुक्रम मोष है, नेदज्ञान शिवमूल जगतमहि मानिये, यदपि हेय है तदपि उपादय जानिये ॥ ७२ ॥

अर्थ —नेदज्ञान जेछे ते निरदोष संवरनुं निदान के० मूलकारण छे अने निर्जरानुं कारण संवर छे अने निर्जराजेछे ते मोक्षनुं कारण छे. ए अनुक्रम प्रमाणे मोक्षनुं कारण परपराथी नेदविज्ञानज छे. अगर जो शुद्धस्वरूपनी अपेक्षाने लीधे नेदज्ञान त्याग जोगछे तो पण नयोनुं उपादेय ते आदरवा जोग्य जानिये ॥७२॥

हवे स्वरूपनी प्राप्ति थया पछी नेदज्ञाननु हेयपणु देखाडेछे —स्वरूप कथन —,

दोहा— नेदज्ञान तबलों नलो, जबलों मुक्ति न होय, परम ज्योति परगट जहा, तहा विकल्प न कोय ॥ ७३ ॥

अर्थ.—नेदज्ञान त्यासुधी नलुछे ज्यांसुधी मुक्ति थई नथी जहा परम ज्योति प्रगट थाय त्या विकल्प कोई रहे नही तो नेदज्ञान केम करीने रही शके ॥ ७३ ॥

नेदज्ञान मुक्तिनो उपाय छे ते कहेछे -अथ नेदज्ञानमहिमा कथन —

चोपाई –भेदज्ञान संवर जिन्हि पायो, सो चेतन शिवरूप कहायो, भेदज्ञान जिनके घट नांही, ते जडजीव बंधे घटमांही ॥ ७४ ॥

अर्थ –जे जीवने भेदज्ञानरूप संवरनी प्राप्ति थई तेज चेतन शिवरूप कहियें जेना हृयनेविषे भेदज्ञान नथी ते मूर्ख घटपिंमनेविषे बंधायलो रहेछे ॥ ७४ ॥
हवे भेदविज्ञानवडे आत्मानो महिमा वधेछे ते कहेछे–अथ भेदज्ञानकी महात्म्य.-

दोहरा–भेदज्ञान साबू भयो, समरस निर्मल नीर, धोबी अंतर आतमा, धोवै नीज गुन चीर. ॥ ७५ ॥

अर्थ -- भेदज्ञान जे छे ते साबुरूप जाणवुं, अने उपशम रस ते निर्मल पाणी छे ने अंतर आत्माने धोबी मानवो, ते धोबी पोताना गुणरूपवस्त्रने धुवेछे ॥ ७५ ॥
हवे भेदविज्ञाननी जे क्रिया छे ते कहेछे.-अथ भेदज्ञानकी कर्तव्यता महात्म्य -

सवैया इकतीसा -जैसै रजसोधा रज सोधिके दरब काढे, पावक कनक काढी दाहत उपलको, पंकके गरभमे ज्यो डारिये कतक फल, नीर करे उज्वल नितारि डारे मलको, दधिको मथैया मथि काढे जैसै माखनको, राजहंस जैसै दूध पीवै त्यागि जलको; तैसैं ज्ञानवंत भेदज्ञानकी सकति साधि, वेदे निज संपति उछेदे परदलकों. ॥ ७६ ॥

अर्थ –जेम कोई रज सोधा के० जोनारो रजने सोधीने एटले सोना रूपा प्रमुख द्रव्यने काढवाने पावक के० अग्निने लगाडेछे, ने सोनुं काढीलई पथरा धूल वगेरेने बाली नाखेछे. वली जेम कतकफलने पंकना गर्भनेविषे नाखीयें तो ते फल जलने मेलथी जूदुं करेछे, वली जेम दधीनुं मथनद्दार दधीनुं मथन करी माखणने जूदुं करेछे ने राजहंस पाणी दूध भेगा होय तेमांथी मात्र दूध पीई जायछे पाणीने जूदुं करेछे-तेम ज्ञानवंत प्राणी भेदविज्ञाननी शक्ति साधीने पोतानी ज्ञानसंपत्तिने वेदे अने परदल के० पुद्गलनुं कटक जे राग द्वेषादिक तेने कापी नाखेछे ॥ ७६ ॥

अथ भेदज्ञान मोक्षमूल यह कथन –

छप्पय छंद.--प्रगट भेद विज्ञान, आपगुण परगुणजानै; परपरिनति परि त्यागि, शुद्ध अनुभव थिति ठानै, करि अनुभव अभ्यास, सहज संवर परगासै, आश्रव द्वार निरोध, कर्म घनतिमिर विनासै, छय करिविभाव समभाव भजि, निरविकल्पनिज पद गहै, निर्मल विशुद्ध सासुत सुथिर, परम अतिंद्रिय सुख लहै ७७

अर्थ — ज्ञेद ज्ञान जे ठे ते प्रगटपणे पोताना तेम परका गुणने जाणेठे, तेथी परवस्तुमा जे परिनमन ठे तेनुं ज्ञान करे, पोताना शुद्ध अनुज्ञवनो ठराव राखे, ने ते अनुज्ञवनो अज्ञ्यास करीने सहज संकरना रूपनो प्रकाश करे, आश्रव द्वारनो विरोध करीने कर्मरूप मेघ अंधकारनो नाश करे, अने विज्ञाव के० मोह दशानो क्षय करीने समज्ञाव के० समाधिने ज्ञजे, तेणे करीने जहा कांई विकल्प नथी एवु पोतानुं निर्विकल्प पद तेने पामे एटले जे सुखनेविषे मल नथी एअपरथी ते विशुद्ध अनंत कालसुधी एकरूप तेथी शाश्वत स्थिर एवु अतींद्रिय के० इंद्रियगोचर नही एवु सुख पामे ॥ ३७ ॥

इति श्री नाटक समयसारको बालाबोधरूप संवर द्वार ठगे संपूर्ण

दोहा — बरनी संवरकी दसा, जथा जुगति परमान ; मुक्ति वितरनी निर्जरा सुनहु ज्ञविक धरि कान ॥ ३८ ॥

अर्थ — संवररूपनी दशा कही ते युक्ति तथा प्रमाणे करी कहीठे, हवे मुक्तिनी वितरणी के० आपनारी एवी जे निर्जरा ठे तेनु वर्णन करुं — ते अहो ज्ञव्य लोको तमे कान दईने सांज्ञलो. ॥ ३८ ॥

हवे निर्जरानुं केवुं स्वरूप ठे ते कहेठे — अथ निर्जरास्वरूप कथन —

चौपाई — जो संवर पद पाइ अनंदे, जो पूरव कृत कर्म निकंदे, जो अफंद व्है बहुरि न फंदे, सो निरजरा बनारसि बंदे ॥ ३९ ॥

अर्थ — पोतानुं जे शुद्ध स्वरूप राखवु तेनु नाम संवर कहिये, तेनुं पद पामीने संवर आनंद करे, अने पूर्व कालनेविषे जे कर्म कीधाठे, तेने जडथी उखेडी नाखे, अने जे पूर्व कर्मना फंद तेथकी ठूटीने पाठुं ते फंदमा सपडाय नही तेनुं नाम आत्मानी निर्जरा कहिये ते निर्जराने बनारसीदास वंदन करेठे ॥ ३९ ॥

निर्जरानुं कारण सम्यक्त ठे माटे सम्यक्तनो महिमा वखाणे ठे.—

अथ सम्यक्त महिमा कथन —

दोहा — महिमा सम्यक् ज्ञानकी, अरु विराग बल जोइ, क्रिया करत फल ज्ञुंजते, करमबंध नहि होइ ॥ ४० ॥

अर्थ — जे कर्म ठूटे तेनुं फरीने बंधन थई शके, नही ए सम्यक् ज्ञाननो महिमा ठे. वली ए सम्यक्ज्ञान साथे वैराग बलनो जोग ठे, तेथी शुज्ञाशुज्ञ क्रिया करता थका ने तेनुं फल ज्ञोगता थका शृंखला बंधनवा कर्मनो बंध थतो नथी. ॥ ४० ॥

हवे सम्यक्‌नी महिमामां क्रिया करतांज कर्मनी निर्जरा थाय छे ते दृष्टांते कहेछेः--

सवैया इकतीसा.—जैसे नृप कौतुक सरूप करै नीच कर्म, कौतुकी कहावै तासो कौन कहै रक है, जैसे विभचारिनी विचारै विभिचार वाको, जारहीसो प्रेम भर तासो चित्त वक है, जैसे धाइ बालक चुधाइ करै लालि पालि, जानै तांहि औरको जदपि वाके अंक है, तैसै ज्ञानवत नानाजाति करतूति ठानै, किरियाको भिन्न मानै यातें निकलक है ॥ ८१ ॥

पुनः—जैसै निशिवासर कमल रहै पंकहिमें, पंकज कहावै पै न याके ढिग पंक है, जैसै मंत्रवादी विषधरसों गहावे गात, मंत्रकी सकति वाके विना विषमंक है, जैसै जीभ गहै चिकनाइ रहै रूख अंग, पानीमे कनक जैसै कांइसो अटंक है, तैसै ज्ञान वंत नानाभांति करतूति ठानै, किरियाकों भिन्न मानै याते निकलंक है ॥ ८२ ॥

अर्थ — जेम कोई नृप के० राजा होय ने ते पोताना कौतुके करीने गमे तेवुं नीच कर्म करे ते क्रिया करवाने लीधे ते कौतुकी केहेवाय पण कोई ते रा जाने रक नही कहे; जेम कोई कुलटा व्यभिचारिणी स्त्री होय ते यद्यपि पोताना धणीनी साथे रहे खरी, तोपण धणीनी साथे तेनुं चित्त लुब्ध होतु नथी, चित्तने विषे तो व्यभिचारनोज विचार थाय, के जो वखत मले तो नीकली जाउं ने यारने मलुं, जेम कोई धाव होय ने ते पारका बालकने धवरावे, अने रमाडे लाल न पालन करे, अने अंक के० पोताना खोलामां लईने वेसे यद्यपि एवी क्रिया तो करे खरी, पण मनमां एम जाणेछे के आ बालक पारकुं छे, तेवीज रीते जे स म्यक् ज्ञानी छे ते नाना प्रकारनी शुभाशुभ क्रिया, राजा श्रेणिक तथा भरत चक्र वर्त्ति अने बीजा साधुनी माफक करे छे, पण ए क्रियाने पुद्गल रूप जाणेछे, पो ताना सरूपथी भिन्न मानेछे एथी बंधननुं कलंक लागतु नथी ॥ ८१ ॥

एज उपर बीजा दृष्टांत कहेछे के, जेम कमल छे ते रात्र दिवस पक के० क र्दमनेविषे रहे छे तेथकीज उत्पन थयुंछे, तेथी पंकज केवाय छे, तोपण कमलने पंकनो स्पर्श नथी होतो. जेम कोई गारूडी मंत्रवादी होय ते पोता ना गात के० शरीरने सर्प पासे पकडावे करडावे पण ते मंत्रवादीना मत्रनी श क्तिवडे सर्पनो मंख विषसंजोगरहित होयछे, जेम जिव्हा इंद्रिय घी वही प्रमु खनी चीकणाई ग्रहण करेछे, पण पोताना अंगने ते चिकाशनो लेश रेवा देती नथी, किंतु लूखीज रहेछे. जेम सोनुं पाणीनेविषे रेहेता थका काटवालुं थतु नथी,

तेवी रीते ज्ञानवत प्राणी नाना प्रकारनी क्रिया करेछे, पण क्रियाने पुद्गल संयोग वाली जाणी आत्मस्वरूपथी भिन्न माने छे तेथीज कर्म बंध कलंकथी जुदो रहेछे ८१

हवे विषय भोगवता थका कर्म बंध न थाय एवी ज्ञानवैराग्यनी शक्ति बतावे छे — अथ ज्ञान वैराग शक्ति वर्णनं —

सोरठाः— पूर्व उदय संबंध, विषय भोगवै समकिती; करै न नूतन बंध, महिमा ज्ञान विरागकी ॥ ८२ ॥

अर्थ — पूर्व संचित कर्म उदय आव्याथी तेना संबंधे सम्यक्ती जीव विषय भोग भोगवे छे, पण नवां कर्मबंध करतो नथी, ए सम्यक् ज्ञान तथा वैरागनी शक्ति छे ८२

हवे जे ज्ञाता होय छे ते सम्यक् ज्ञान अने विषयनी अरुची ए बेउने साधेछे ते कहेछे — अथ ज्ञाताकी व्यवस्था कथन —

सवैया तेइसा — सम्यकवत सदा उर अतर, ज्ञान विराग उभै गुन धारै, जासु प्रभाव लखै निज लछन, जीव अजीव दशा निरवारै, आतमको अनुभौ करि व्है थिर, आपु तरै अरु औरनि तारै, साधि सुदर्व लहै शिवसर्म सुकर्म उपाधि व्यथा वमिझारै. ॥ ८४ ॥

अर्थ — जे समकिती होय ते सदा पोताना अंत करणनेविषे ज्ञान अने वैराग ए बे गुणने धारे जे गुणना प्रभाववडे पोतानुं ज्ञातापणुं लक्षण जोईने जीव अजीव दशा एटले जीव अजीवनुं स्वरूप निरवारे के० जुडुं जुडुं जाणे, ते पछी आत्माने यथार्थपणे वेदीने आत्मिक स्वभावमा स्थिरता थई रहेछे, ते पोते पण तरे अने सत्यउपदेश आपी बीजाने पण तारेछे, ए रीते पोताना आत्मद्रव्यने साधीने मोक्षसुखने पामे, अने कर्मउपाधि सहित जे व्यथा तेनुं वमन करेछे ॥ ८४ ॥

हवे विषयनी अरुचिविना ज्ञाननुं बल निष्फल छे, अने एवा ज्ञानीने एकात पक्षनेविषे रहेवाथी मिथ्या दृष्टि ठेरावे छे — अथ मिथ्यादृष्टि व्यवस्था कथन —

सवैया तेइसा — जो नर सम्यकवत कहावत, सम्यक ज्ञान कला नहि जागी, आतमअंग अबंध विचारत, धारत संग कहै हम त्यागी, भेष धरै मुनिराज पटंतर, मोह महानल अंतर दागी, सून्य हिये करतूति करै परि,सो सठ जीव न होइ विरागी ॥ ८५ ॥

अर्थ —जे मनुष्य पोते सम्यकवंत केहेवाय अने सम्यक् ज्ञाननी कला न जागी, एटले सम्यक् ज्ञाननी प्राप्ति न थई तेथी आत्माना अंगविषे बंधविचारे नही, आत्मा अबंध छे एम माने, ने तेथी ते अभ्यंतर संयोग धारे छे वली कोई नि

अर्थ नयनो पक्ष लईने पोते त्यागी छे एम कहे, मुनिराजनी पठे पटंतर के० जेप धरे, पण अंतरनेविषे मोहमहानल के० मोहरूप अग्नि बलगी रही होय, विषय थकी वैरागी न थयो, तेथी हिया सून्य थको मुनिराजनी पठे क्रिया करे, पण ते जीव मूर्खज केहेवायछे पण वेरागी कहेवाय नही ॥ ७५ ॥

हवे जे सर्व क्रिया करता थका पण मूढ केवाय छे ते कहे छे.—

अथ मूढ क्रिया वर्णनं.—

सवैया तेइसाः— ग्रंथ रचै चरचै शुभ पंथ लखै जगमें व्यवहार सुपत्ता, साधि सँतोष अराधि निरंजन, देइ सुसीख न लेइ अदत्ता, नंग धरग फिरै तजि संग छके सरवग सुधारस मत्ता; ए करतूति करै सठ पैं समुझै न अनातम आतम सत्ता ॥७६॥ ध्यान धरै करि इंद्रिय निग्रह, विग्रहसौं न गिनै निज नत्ता; त्यागि विभूति विभूति मिटै तन जोग गहै भवभोग विरत्ता, मौन रहै लहि मंद कषाय सहै वध बंधन होइ न तत्ता, ए करतूति करै सठ पै समुझै न अनातम आतम सत्ता ॥७७॥

अर्थ.— ग्रंथ रचना करे, भला मार्गनी चरचा करे, भला मार्गने लखे, जगतमा व्यवहार मार्गमां प्राप्तियको रहे, संतोषी थईने निरंजनने आराधे, लोकोने सारी शीखामण आपे, अदत्तदान ले नही, परिग्रह संग त्यागीने नंग धरंग फिरे के० दिगंबर थई फरे, अने सुधा के० शुध्धपणे पोताना रसमा मातो थको सर्वांगे छक्यो रहे, एवी एवी क्रिया मूर्ख होय ते करेछे पण अनातम सत्ता के० आत्माथी पृथक जे मोहनी गहलता छे तेने, अने आत्मसत्ता के० शुध्द जाणपणानी जे सत्ता छे, तेने जुदी जुदी जाणे नही तेमने मूर्ख केहेवा ॥ ७६ ॥

वली मूढनी क्रिया केहेछे के, ध्यान धरे, इंद्रिय दमन करे, विग्रह करेछे ते शरीरनी साथे पोताना आत्मानो संबंध गणे नही. विभूति के० संपत्तिनो त्याग करी विभूति के० भस्म शरीर उपर लगाडे, योग मार्ग ग्रहे, अने संसारना भोगथी विरक्त रहे, मौनपणे रहे, कषायनुं मंदपणुं समजे, वध बंधन सहेतो थको पण तातो नही थाय, क्रोधादिक न करे, एवी क्रिया सठ मूढ होय ते करे छे, पण अनातम सत्ता एटले कर्मादिक प्रभावनी सत्ता अने आत्मसत्ता एटले आत्मानुं सत्य स्वरूप तेने समजे नही माटे तेने मूर्ख समजवो. ॥ ७७ ॥

हवे फरी मूढपणानुं स्वरूप बतावेछे — पुनः मूढ वर्ननंः—

चौपाई.— जो बिनुज्ञान क्रिया अवगाहै, जो बिनु क्रिया मोख पद चाहै, जो बिनु मोख कहै मैं सुखिया, सो अजान मूढनिमें मुखिया ॥ ७८ ॥

अर्थ -- जे जन ज्ञानविना क्रिया अवगाहे अने क्रियाविना मोक्ष पद वाछे, वली जे मोक्ष पाम्या शिवाय कहे के हुं सुखी छुं, तेने अजाण मूर्खनो शिरोमणी जाणवो. ॥ ७७ ॥

हवे जेने कर्मसत्ता तथा आत्मसत्तानी भिन्नता भासती नथी तेने महामूढ कहिये तेनुं विवेचन करेछे -- अथ महामूढ व्यवस्थाकथन.--

सवैया इकतीसा -- जगवासी जीवनिसों गुरु उपदेश कहे, तुम्हे इहा सोवत अनंत काल वीते है, जागो व्है सुचेत चित समता समेत सुनो, केवल वचन जामे अक्षर सजीते है, आउ मेरे निकट बताउं में तुह्मारे गुन, परम सुरस भरे करमसो रीते है; ऐसे बैन कहै गुरु तउ ते न धरे उर, मित्रकेसे पुत्र किधों चित्रकेसे चीते है ॥ ७९ ॥

अर्थ -- सर्व जगवासी जीवना हित वाछ्यने अर्थे गुरु एवो उपदेश करेछे के, अहो भव्य प्राणी जीव तमे आ जगतमां मोहनिद्रानेविषे सूता रह्या थकाज अनादि अनतकाल तमोने वीत्यो छे, माटे हवे तो चित्तमां सचेत थईने जागो, अने समता सहित थका केवलीना वचन सांभलो, जे केवलीना वचनमा अक्षर रस के० इंद्रियना विषय रस तेने जीतेला छे, अने तमे मारी पासे आवो तो तमारा गुण बतावु; ते गुण केवा छे, परम एटले उत्कृष्ट सुरसे करी भरेला छे, अने कर्मथकी रीते के० न्यारा छे, एवा वचन गुरु कहेछे ते जे प्राणी हैयामा धरता नथी ते मित्रना पुत्र जेवाछे, केमके मित्रना पुत्रवडे पोतानुं घर वधारु रेतु नथी अने तेने शीखामण शी देवी! अने चित्रामण जेवा छे कारण के चित्रामण थकी काई सत्य क्रिया थती नथी ॥ ७९ ॥

दोहा -- एते पर बहुरों सुगुरु, बोले वचन रसाल, सेन दशा जागृत दशा, कहे दुहूंकी चाल ॥ ८० ॥

अर्थ -- ए प्रमाणे सद्गुरु छे ते फरी सरस वचन बोले छे, के जीवने एक सयनदशा ने बीजी जागृतदशा एवी बे दशा छे तेनी चाल शांभलो ॥ ८० ॥

हवे सैन दशानुं वर्णन करेछे.-- अथ शयन दशा वर्णन --

सवैया इकतीसा.-- काया चित्र सारीमे करम परजक भारी, मायाकी सँवारी सेज चादर कलपना, सैन करै चेतन अचेतनता नींद लिए, मोहकी मरोर यहै लोचनको ढपना, उदै बलजोर यहे श्वासको सबद घोर, विषे सुख कारजकी दोर यहे सुपना, ऐसी मूढ दसामे मगन रहै तिहू काल, धावे भ्रमजालमे न पावे रूप अपना.

अर्थः– कायारूप चित्र साली छे, तेमां कर्मरूप पर्यंक छे, तेउपर मायानी सेज संवारी छे, कल्पना के० मननी विकल्पनारूप चादर छे, अचेतनानी कंघ लईने एवी सामग्रीमां चेतन शयन करी रह्यो छे, मोहनी मरोम तेणे करीने लोचन ढंकाया छे, उदय बल जोर जे छे, ते श्वासनो घोर शब्द छे, अने विषय सुख कार्य नी दोड एटले करणी करवी ते स्वप्नावस्था छे, अने एनुंज नाम मूढदशा तथा शयन दशा कहिये. अने ए दशानेविषे जे मूढ जन होय, ते त्रणे काल मगन थको धावे छे, एटले भ्रमजालमां दोडेछे, पण पोतानुं रूप पामतो नथी. ॥ ए१ ॥

हवे जीवनी जागृतदशानुं वर्णन करेछे.–अथ जागृतदशा वर्णनः–

सवैया इकतीसा.–चित्र सारी न्यारी परजंक न्यारो सेज न्यारी, चादर भी न्यारी इहां जूठी मेरी थपना, अतीत अवस्था सैन निद्रा वही कोउ पैन विद्यमान पलक न यामें अब छपना; श्वास औ सुपन दोउ निद्राकी अलंग बूझे, सूझै सब अंग लखि आतम दरपना, त्यागी भयो चेतन अचेतनता भाव त्यागी, भाले दृष्टि खोलिके संभाले रूप अपना. ॥ ए२ ॥

अर्थः–आत्मज्ञान पाम्याथकी कायारूप चित्रसारी जुदी जुए, अने कर्मरूप पलंगने पण न्यारो देखे; मायारूप सेज पण जुदी जुए, कल्पनारूप चादरने न्यारी जुए, मतलबके ए ठेकाणे मारी स्थापना जूठी छे एम समजे. अतीत अवस्थानेविषे एटले सयनदशामां निद्रा लेनार पण कोई बीजा रूपे हुंजहुं, विद्यमान कालमां ते अवस्था नथी, हवे पलकमात्र पण आ अवस्थामां मारो अनाव थनार नथी. श्वास अने स्वप्न ए बे निद्रानी अलंगना संयोगे बूझे, अने आत्मारूप आरिसामां आत्मानुंज सर्व अंग सूझे एवी रीते अचेतनतारूप निद्रानो त्याग करीने चेतन त्यागी थयो त्यारे पोतानी दृष्टि खोलीने जूए, अने पोतानुं रूप संभाले. ॥ ए२ ॥

वली सद्गुरु शिक्षानां वचन कहेछे.–अथ पुनः सद्गुरु शिक्षा कथनः–

दोहा.–इहि विधि जे जागे पुरुष, ते शिवरूप सदीव; जे सोवहि संसारमें, ते जगवासी जीव ॥ ए३ ॥

अर्थ.–ए रीते जे पुरुष जागे छे, तेतो सर्व कालनेविषे शिवरूप के० मोक्षरूप जाणवा. अने जेटला संसारनेविषे सूता छे, तेटला तो जगतवासी जीव समजवा. ॥ ए३ ॥

हवे मोक्षपद उपादेयरूप कहीने स्तुति करेछे.–अथ आत्मद्रव्य स्तुतिकथन.

दोहा.–जो पद भोपद भय हरै, सोपद सेउ अनूप, जिहि पद परसत और पद, लगै आपदारूप ॥ ए४ ॥

अर्थ—जे पद के० जे स्थानक अवस्थानकनो नय हरे छे, तेनेज पद कहेवुं, तथा अनूप स्थानक केहेवुं, अने जे पदनो स्पर्श थतांज अन्य पद जे कर्म पद छे, ते आपदारूप लागे छे ॥ ९४ ॥

हवे नव जे संसार पद तेनो नय बतावे छे.—अथ संसार वर्ननं.—

सवैया इकतीसा—जब जीव सोवै तब समुझे सुपन सत्य, वहि झूठ लागे जब जागे नींद खोइके, जागे कहै यह मेरो तन यह मेरी सोज ताहू झूठ मानत मरणथिति जोइके, जाने निज मरम मरन तब सूझे झूठ, बूझे जब और अवताररूप होइके, वाहु अवतारकी दशामें फिरि यहे पेच, याहि भांति झूठो जग देख्यो हम ढोइके ॥ ९५ ॥

अर्थ—ज्यारे जीव सयन दशामां सूतो होय छे, त्यारे स्वप्नने सत्य करी माने छे. अने तेज स्वप्न रूपने ज्यारे निद्रा मूकी जागीने जुए छे, त्यारे झूठुं जाणेछे, जागीने कहे के आ मारु शरीर तो आई छे, आ सोज के० सामग्री सर्व मारी छे; ने ज्यारे पोतानी मर्ण स्थितिनो विचार करे छे, त्यारे तो वर्तमान शरीर तथा सामग्री सर्वने झूठी माने छे, अने ज्यारे पोताना मर्मनी वात जाणे एटले पोताना स्वरूपनी वातने जाणे, त्यारे तो मरणने पण झूठुं जाणे, एमज वली बीजो अवतार ले त्यारे बीजा रूपे थईने बीजी वात जाणे, फरी तेज अवतारमा सूता जागा झूठा साचानुं पेच आगलीज रीते लागो रहे ए रीते वारे वारे अवतार लेवा ने वली सामग्रीने पोतानी समजवी ने वली मरवु, ए रीते सर्व संसारने ढोई के० देखीने अमे सर्व संसारने झूठोज जाण्यो ॥ ९५ ॥

हवे ज्ञाता केवी क्रिया करे ते समजावे छे — अथ ज्ञाताकी क्रिया कथनं —

सवैया इकतीसा — पण्डित विवेक लहि एकताकी टेक गहि दुंदज अवस्थाकी अनेकता हरतु है, मति श्रुत अवधि इत्यादि विकलप मेटी, निरविकलप ज्ञान मनमें धरतु है, इन्द्रियजनित सुख दुखसों विमुख व्हैके, परमको रूप व्है करम निर्जरतु है, सहज समाधि साधि त्यागी परकी उपाधि, आतम आराधि परमातम करतु है ॥ ९६ ॥

अर्थ—जे पण्डित जन होय ते विवेकनो भेद एटले विज्ञान लहीने पोतानी एकतानी टेक राखीने प्रथमनी दुंदअवस्था जे भ्रम अवस्थामां अनेकता हती तेने हरे छे अने मति श्रुति अवधि इत्यादि ज्ञानस्वरूपना विकल्पने मटाडीने निर्विकल्प ज्ञान जे केवल ज्ञान तेने मनमां धरेछे. अने इंद्रियजनित जे सुख दु

स्व तेथी विमुख थई परमात्मारूप थईने कर्मनी निर्जरा करे छे, एटले निर्जरा थायछे तेथी पोतानी सहज समाधिसाधिने पर जे कर्मपुद्गलादिकनी उपाधि जे राग द्वेषादिक, तेनो त्याग करीने आत्माने आराधी परमात्मा पणु करेछे ॥९६॥

हवे जे ज्ञान समुद्र परमात्मानी प्राप्ति थाय छे, ते ज्ञाननी प्रशंसा करेछेः–

अथ ज्ञान समुद्रवर्णनं.–

सवैया इकतीसाः–जाके उरअंतर निरंतर अनंत दर्व, नाव नासि रहे पें सुनाउ न टरतु है, निर्मलसौं निर्मल सु जीवन प्रगट जाके, घटमें अघट रस कौतुक करतु है, जानें मति श्रुत औधि मनपर्यै केवल सु, पंचधा तरगनि उमंग उछरतु है; सो है ज्ञानउदधि उदार महिमा अपार, निराधार एकमें अनेकता धरतु है ॥ ९७ ॥

अर्थ – जे ज्ञान सागरना मध्यनागनेविषे निरंतर अनंत द्रव्य पदार्थ नासी रह्या छे, पण ते द्रव्यनो स्वनाव पोते पामतो नथी, निर्मलमां निर्मल एवुं सुजीवन के० जीवितव्य अने समुद्र, पक्षे सुजीवन के० पाणी ते, जेनुं प्रगटछे, अने घटमें के० हृदयनेविषे अघट के० अक्षणरस कौतुक के० सत्यार्थ वेदननुं जे रस तेनुज कुतोहल करे छे, एटले ए समुद्रनेविषे रस कुतोहल घणा छे, अने जे ज्ञान समुद्रनेविषे मतिज्ञान श्रुतज्ञान अवधिज्ञान मनपर्यवज्ञान ने केवल ज्ञान ए पांचे ज्ञान तरंगरूप छे. उमंग के० पोतपोताने ठेकाणे प्रगट थई रह्यां छे एवो ज्ञानसमुद्र ते उदार प्रधान छे, एनो अपार महिमा छे, एनेविषे सर्व पदार्थ नासे छे तेथी पोते निराधार अने एक स्वरूप छता ज्ञातापणामां अनेकता धरे छे॥९७

हवे ज्ञानविना मात्र क्रियावडेज मोक्षनी प्राप्ति नथी तेनुं वर्णन करेछेः–

अथ मोक्षमार्ग अप्राप्ति कथनं–

सवैया इकतीसा – केई क्रूर कष्ट सहै तपसौं शरीर दहै, धूम्रपान करै अधो मुख व्हैकें फूले है, केई महा व्रत गहै क्रियामे मगन रहै, वहे मुनि नारमें पयारकेसे पूले है;इत्यादिक जीवनको सर्वथा मुगति नांहि, फिरे जगमांहि ज्यों वयारके बघूले है, जिनके हियेमें ज्ञान तिन्हहीको निरबान, करमके करतार नरममें नूले है॥९८

अर्थः– कोई अज्ञानी क्रूर कष्ट सहन करेछे अने पंचाग्नि प्रमुख तप करीने शरीरने बालेछे, कईक अज्ञानी अग्निना धुमाडानुं पान करेछे, नीचुं मुख राखी उंचा पग करीने फूलेछे. केटला अज्ञानी जैन लिंग लईने पांच महाव्रत द्रव्यथी ग्रहण करेछे, अने क्रियामां मग्न रहेछे, एरीतें मुनिराज पणानो नार वहेछे, पण ते पयारना जेवा पूलेछे, देश नाषाये पयार एटले पलाल, जेना फूलनेविषे कण

होता नथी तेवी रीते निराश जाणवा, इत्यादि केवल क्रिया कलापवडे जीवने स र्वथा मुक्ति थती नथी, ते जगतनेविषे वयारना बघूल जेम ऊंचा नीचा फरी रहे छे, पण एक ठेकाणे वरता नथी, तेवा समजवा, अने जेना हृदयनेविषे ज्ञान कला जागृतरूप थईछे, तेमने निरवाण के० मोक्ष छे, अने जे कर्मना करतार एट ले केवल क्रियानाज करनारा छे तेतो भर्मनेविषेज भूली रह्याछे ॥ ९८ ॥

हवे जे मूढ जन छे तेनी दृष्टि निश्चयमां नथी, पण व्यवहारने विषे छे, तेथी तेनेविषे अज्ञान छे ते कहेछे – अथ मूढ व्यवस्था वर्णनं --

दोहा.–लीन नयो विवहारमें, उकति न उपजे कोइ, दीन नयो प्रभु पद जपै, मुकति कहासो होइ ॥ ९९ ॥

अर्थ -- जे व्यवहारमा लीन थई रह्यो होय एटले मगन थई रह्यो होय, तेने कोई उकति के तत्वदृष्टि उपजे नही, अने पोते अनाथ थईने पोताना नाथना पदने भजे, ए रीते पोतानु निश्चयरूप जाण्याविना मुक्ति क्याथी थाय ॥ ९९ ॥

दोहा –प्रभु समरो पूजो पढो, करो विविध विवहार, मोक्ष सरूपी आतमा, ज्ञानगम्य निरधार ॥ १०० ॥

अर्थः-- प्रभुने समरो, भावे पूजो, ने भावसहित पढो इत्यादि व्यवहार करो पण मोक्ष स्वरूपी आत्माछे तेतो निरधार के० निश्चय ज्ञान गम्य छे ॥ १०० ॥

हवे निश्चय स्वरूपनेविषे ज्ञान पर्याय रूपी अर्थनुं निरूपण करेछे –

अथ पर्यायार्थ निरूपन –

सवैया तेईसा –काज विना न करे जिय उद्यम, लाज विना रनमांहि न जूझे, सीलविना न सधे परमारथ, सीलविना सतसों न अरूझे, नेम विना न लहे निहचे पद, प्रेमविना रस रीति न बूझे, ध्यानविना न थभे मनकी गति, ज्ञान विना शिवपंथ न सूझे. ॥ १ ॥

अर्थ – अही अर्थांतर बतावेछे के, जेम जीव पोताना काम विना उद्यम क रतो नथी. जेम लाज विना रणसंग्रामने विषे झूझतो नथी वली जेम देह ध र्याविना परमार्थ थतो नथी, अने शील धारण कीधाविना सत्व साथे मलातु न थी वली नियम धर्या शिवाय निश्चय पद मलतु नथी, अने जेम प्रेमनी प्रीत विना रसरीत जणाती नथी, तथा ध्यानविना मननी गति थोभाती नथी, तेम ज्ञानविना शिवपंथ के० मुक्तिमार्ग ते सूजतो नथी. ॥ १ ॥

हवे ज्ञानवंतनो महिमा देखाडीने तेनी व्यवस्था कहेछेः—

अथ ज्ञानमहिमा धारक व्यवस्था कथनं —

सवैया तेईसाः— ज्ञान उदै जिनके घट अंतर, ज्योति जगी मति होति न मैली, बाहिज दृष्टि मिटी जिन्हके हिय, आतम ध्यान कला विधि फैली; जे जड चेतन भिन्न लखे सु विवेक लिये परखै गुन थैली; ते जगमें परमारथ जानि गहै रुचि मानि अध्यातम सैली ॥ १ ॥

अर्थः— जेना हृदयनेविषे ज्ञाननो उदय थवाथी पोतानी ज्योति जागृत थईने तेथी मति जे बुद्धि ते उज्वल थई पण मेली नथी, अने पोताना बाह्य शरीरने आत्मा करी माने एवी बाह्य दृष्टी ते मटी गई, अने हृदयनेविषे आत्मध्याननी कला तेनी विधि जे यमनियमादिक ते विधि फेली एटले पसरी, ते वखतथी जड चेतनने भिन्न भिन्न लखे, अने पोतानो विवेक के० भेदविज्ञान तेणेकरी पोताना गुणनी थेली पारखी लीधी एवा जे जीव तेज जगतमां परमार्थने जाणी तेने रुचिये करी ग्रहण करे, ए रीते अध्यात्मसेली मान्य करीने परमार्थने जाणे. ॥ १ ॥

हवे मोक्षनी सुगम प्राप्ति देखाडेछेः— अथ मोक्षप्राप्ति कथनः—

दोहा.— बहु विधि क्रिया कलेससों, शिवपद लहै न कोइ, ज्ञान कला परकाशसों, सहज मोक्ष पद होइ ॥ ३ ॥ ज्ञान कला घट घट वसे, योग युगतिके पार, निज निज कला उद्योत करि, मुक्त होइ संसार. ॥ ४ ॥

अर्थ — भात भातनी क्रियाने निमित्ते क्लेश करवो, तेथी मोक्षपद मले नही. पण ज्ञानकलानो प्रकाश थवाथी सेहेज मोक्षपद प्राप्त थायछे ॥३॥ ज्ञानकला तो घट घटनेविषे वसी रहेली छे, पण मन वचन अने कायाना योगनी युक्तिथी पार रहेली छे, माटे पोत पोतानी कलाने प्रकाश करवाथी संसारथी मुक्त थवाय छे, एवो सर्वेने सद्गुरुनो आशीर्वाद छे ॥ ४ ॥

हवे मुक्तपणुं अनुभव थकी थायछे माटे अनुभवनी प्रशंसा करेछे —

अथ अनुभव प्रशंसा—

कुंमलियाछंद —अनुभव चितामनिरत्तन, जाके हिय परगास, सो पुनीत शिवपद लहै, दहै चतुर्गतिवास; दहै चतुर्गतिवास, आस धरि क्रिया न मंडै, नूतन बंध निरोध, पूर्वकृत कर्म विहंडै; ताके न गनु विकार, न गनु बहु भार न गनु भौ, जाके हिरदेमांहि, रतनचितामनि अनुभौ ॥ ५ ॥

अर्थ —अनुभवरूपी चितामणिरत्न जेना हृदयनेविषे प्रकाशमान थई रह्योछे

ते जीव पुनीत के० पवित्र थईने शिवपदने पामेछे, ने चतुर्गतिना जे वास तेने द हन करेछे, एटले देवगति, मनुष्यगति, तिर्यंचगति ने नरकगति ए चारे गतिना वास ने बाली नाखेछे अनुनवी जननी रीत एछे के ते आशा धरीने क्रिया मांमे नही. नूतन बंध के० नवा कर्मना बंधने निरोधीने संवर धारण करे, तथा पूर्वकृत कर्म ने विहंमी नाखीने तेनी निर्जरा करेछे, तेना विकारने अहो नव्य जीव तु गणीस नही, अने तेना अतिचारने तु गणीस नही, अने तेना नयने पण गणीस नही, जेना हृदयमां अनुनवरूपी चिंतामणीरत्न प्रकाशी रह्युछे ॥ ५ ॥

हवे अनुनवीनी ज्ञानदृष्टीनु सामर्थ्य वखाणेछे — अथ ज्ञानदृष्टि सामर्थ्य कथनं —

सवैया इकतीसा —जिनके हियेमें सत्य सूरज उदोत नयो, फेलि मति किरन मिथ्यात तम नष्ट है, जिनकी सुदृष्टिमे न परचै विषमतासों समतासों प्रीति मम तासों लष्ट पुष्ट है, जिन्हके कटाक्षमे सहज मोष पथ सधै, साधन निरोध जाके तनको न कष्ट है, तिन्हिको करमकी किलोल यह है समाधि, मोले यह जोगा सन बोले यह मष्ट है ॥ ६ ॥

अर्थ — जेना हियानेविषे सत्य सूर्यनो उद्योत थई रह्योछे, अने सत्य सूर्यना मतिरूप किर्ण फेली रह्याछे, तेथी मिथ्यात रूप अंधकार ते नाश पाम्यो वली जे जीवनी सुदृष्टिमा विषमतानो परिचय नथी, एटले समतासाथे प्रीति बंधाणी छे, ने ममतासाथे तथा मोहसाथे लष्ट पुष्ट के० चित्तविनानी प्रीति राखेछे, ने जे ना कटाक्षनेविषे एटले थोडा विलोकनमा सहज स्वनावे मोक्षमार्ग सिद्ध थायछे साधन के० मनोयोगादिक त्रण योगनो निरोध एटले निग्रह कर्योछे अने जेना शरीरने कष्ट नथी, एवा ज्ञानधारीने जे कर्म बाहेर आवेछे तेने गणतीमां समाधी ना वज जाणेछे, जो कदी गती कर्मना उदयवशे मोलेछे तोपण ते जोगासन धारीछे अने जो बोलेछे तोपण मष्ट के० मौनव्रतिछे ॥ ६ ॥

हवे ज्ञानीने परवस्तुनो त्याग कह्यो अने विशेषपणे तेनोज त्याग वखाणेछे —

अथ परवस्तुको त्याग ताको विशेष वर्ननं —

सवैया इकतीसा — आतम सुनाव परनावकी न सुद्धि ताकों, जाको मन गमन परिग्रहमें रह्यो है, ऐसो अविवेकको निधान परिग्रह राग, ताको त्याग इ हालो समुच्चैरूप कह्यो है; अब निज परे भ्रम दूरि करिबेके काज बहुरो सुगु रु उपदेशको उमह्यो है, परिग्रह अरु परिग्रहको विशेष अंग, कहिवेको उद्यम उदीरि लह लह्यो है ॥ ७ ॥

अर्थ.--जेनुं मन परिग्रहनेविषे मगन थई रह्युं छे, ते जीवने पोताना तथा पारका स्वभावनी शुद्धता थती नथी परिग्रहनो राग तेतो अविवेकनुं निधान कह्यु छे, जे परिग्रहना रागनेविषे पोताना ने पारका स्वभावनी शुद्धता नथी, ते परिग्रह रागने त्याग, अहींसुधी सामान्य मात्र कह्यो हवे निजस्वरूपनो भ्रम ने पर स्वरूपनो भ्रम तेने दूर करवाना कार्यने घणा प्रकारें सद्गुरू उपदेश करवाने उद्यंगवत थया छे. हवे इहां परिग्रह तथा ते परिग्रहनुं विशेष अग केहेवाने सद्गुरु जे छे ते उद्यम उदीरणा करीने लह लह्यो के० सचेत थया छे ॥ ७ ॥

हवे सामान्यरूप परिग्रहनो राग अने विशेषरूप परिग्रहनो राग तेनो विवरो कहे छे.--अथ सामान्यविशेष कथनंः--

दोहा --त्याग जोग परवस्त सब, यह सामान्य विचार; विविध वस्तु नाना विरति, यह विशेष विस्तार ॥ ८ ॥

अर्थ--जेटली परवस्तु छे तेटली बधी त्याग जोग छे. एतो सामान्यपणे परिग्रहना त्यागनो विचार जाणीये; अने ते परवस्तु भात भातनी छे, अने तेना उपर विचार पण भातभातनो छे एने विशेषपणे परिग्रह त्यागनो विस्तार जाणवो. ८

हवे परिग्रह छतां ज्ञातानी परिग्रह उपर अलिप्त दशा कहे छे.-

अथ ज्ञाता अलिप्त कथनं.--

चोपाईः--पूरव कर्म उदै रस भुंजे, ज्ञान मगन ममता न प्रयुंजे; उरमें उदासीनता लहिये, यों बुध परिगह वंत न कहिये ॥ ९ ॥

अर्थ--पूर्व कर्मना उदयथकी जे शुभाशुभ रस उपजे ते भोगवे पण ते रस भोगनेविषे ममता प्रयुंजे नही, मात्र ज्ञाननेविषेज मग्न रहे, पण परिग्रहना संयोग वियोगनेविषे हर्ष विषाद उपजे नही, एवीरीतें जेना मनमा उदासीनता पामीये छइयें एवा बुध के० पंम्तिने परिग्रहवत कहेवाय नही ॥ ९॥

हवे ज्ञानीनी निस्पृह दशा वखाणे छे.--अथ ज्ञानी अवांछक कथनं--

सवैया इकतीसा--जे जे मनवछित विलास भोग जगतमें, तेते विनासिक सब राखे न रहत है; और जे जे भोग अभिलाष चित्त परिणाम, तेते विनासीक धर्मरूप व्है वहत हैं; एकता न दुहों मांहि ताते वांछा फुरे नांही, ऐसे भ्रम कारजको मूरख चहत है; संतत रहे सचेत परसो न करे हेत याते ज्ञानवतकों अवछक कहत है॥१०

अर्थ--मनना मानी लीधेला जे जे जगतना भोग विलास छे, ते ते नाश रूप छे, आपणा राख्या रेहेता नथी. वली जे जे भोग अभिलापरूप चित्त परिणाम रहेने

ते ते चित्त परिणाम चंचलपणें विनासी धर्म रूपने विषे थई रह्या छे. एवा भोग नेविषे तथा भोग अभिलापनेविषे अनेकता छे, पण एकता नथी वळी विनश्वर पणुं छे तेथी एना उपर ज्ञानीनी वांछा फुरती नथी. एवा भ्रम कार्यने मूर्ख होय तेज चाहे छे, जे सतत के० निरतर सावधान रहे अने परवस्तु साथे हेत करे नही, एज माटे ज्ञानवतने अवचक निस्पृही कहेछे ॥ १० ॥

हवे परिग्रहमां रेहेता छता ज्ञाताने अलिप्तपणुं केवी रीते केहेवाय ते दृष्टात आपीने समजावे छे – अथ ज्ञाता अलिप्त दृष्टांत कथनं –

सवैया इकतीसा.– जैसे फिटकडी लोद्र हरडेकी पुटविना स्वेत वस्त्र डारिये मजीठ रग नीरमे, भीग्यो रहै चिरकाल सर्वथा न होइ लाल, भेदे नही अंतर स पेती रहे चीरमें, तैसे समकितवत राग दोष मोह बिनु, रहे निशिवासर परिग्रहकी भीरमें, पूरव करम हरे नूतन न बंध करे जाचे न जगत सुख राचे न शरीरमे॥ ११॥

अर्थ.– जेम कोई स्वेत वस्त्र होय तेने फटकडी लोदर तथा हरडानी पुट के० पट दीधा शिवाय मजीठना लाल रगना पाणीमा चिरकाल के० घणाकाल सुधी भी नावी राखे तोपण ते वस्त्र सर्वथा प्रकारे लाल थाय नही, अंतर रग भेदे नही तेथी ते चीरमां सफेती रहेज, तेमज समकितवत जे जीव होय ते राग द्वेप मोह ना पटविना निशिवासर के० रात दिवस परिग्रहनी भीडमां रहेछे. तोपण पूर्व कर्मना भोगनी निर्जरा करेछे, अने नवां कर्मनुं बंधन करे नही, अने जगतना सु खने जाचे नही वळी शरीरने जोईने राचे नही ॥ ११ ॥

हवे परिग्रहने विषे रेहता छता ज्ञाताने उद्वेग रहितपणुं होय छे ते दृष्टांत वडे दृढ करावे छे – अथ ज्ञाता अनुद्वेग कथनं.–

सवैया इकतीसाः– जैसे काहु देसको वसैया बलवत नर, जगलमे जाई मधु छत्ताकों गहतु है, वाकों लपटाय चहु ओर मधुमक्षिका पे, कंबलीकी ओटसों अडंकित रहतु है, तैसे समकिती शिव सत्ताको सरूप साधे, उदेकी उपाधिको समाधिसी क हतु है; पहिरे सहज को सनाह मनमे उछाह, ठाने सुखराह उदवेग न लहतु है.१२

अर्थ – जेम कोईक देशनो रेहेवासी भील वगेरे बलवत नर जगलमा जईने म धपुडाने ग्रहण करे छे, ते वखत ते पुरुषने चारे तरफ मधु मक्षिका के० मध माखीउ लपटाई जाय छे, पण ते पुरुषना शरीर पर कामळी होयछे, तेथी अडं कित के० डंखविना अडंख रहेछे; तेमज समकिती जीव शिव के० परमात्मानी सत्ता के० सतभूतपणुं तेनुं स्वरूप जे एक विज्ञानघनपणु तेने साधे छे, अने कर्म

उदयनी जे आत्माने उपाधि लागी रहीछे, तेने ते समाधि करी जाणे छे. सहज गुण जे ज्ञान दर्शन चारित्र तद्रूप जे सनाह् के० बख्तर ते पेहेरी राखेछे, अने ए रीते जे कर्मनिर्जरा तेनो उगाह् मनमां धारण करे एवा अनत सुखना राह् के० मार्गनेविषे रेहेतो थको उद्वेग दशाने पामतो नथी. ॥ १२ ॥

हवे ए रीतमां ज्ञातानो अवंधकपणुं बतावेछेः-- अथ ज्ञाता अवंध कथनं.--

दोहराः-- ज्ञानी ज्ञान मगन रहे, रागादिक मल खोइ, चित उदास करनी करे, करम बंध नहि होइ ॥ १३ ॥ मोह महातम मल हरे, धरे सुमति परगास; मुगति पंथ परगट करे, दीपक ज्ञान विलास. ॥ १४ ॥

अर्थ.--ज्ञानी पुरुष तो ज्ञानमा मगन रहेछे, अने रमेछे, अने राग द्वेष मोहरूपी जे मल छे, तेने खोइ दिएछे, अने जे क्रिया करेछे ते पण उदासीनरूप करेछे, माटे एवा ज्ञानीने कर्म बंधन थतो नथी. ॥ १३ ॥ वली मोहरूपी महातम के० घोर अंधकाररूप जे मल तेने हरे, अने सुमतिना प्रकाशनार दीपकने धरे, ए रीते मुक्ति पंथने प्रगट करी बतावे, एवोज ज्ञाननो विलास ते दीपकरूप जाणवो ॥ १४ ॥

हवे ज्ञानदीपकनुं स्वरूप कही देखाडेछे - अथ ज्ञान दीपक वर्ननं --

सवैया इकतीसा.-- जामें धूमको न लेस बातको न परवेस, करम पतंगनिको नाश करें पलमें; दसाको न जोग न सनेहको संयोग जामे, मोह अंधकारको विजोग जाके थलमें, जामें नतताइ नही रागरंक ताइ रंच, लह लहे समता समाधि जोग जलमें; ऐसी ज्ञानदीपकी सिखा जगी अभंगरूप, निराधार फुरी पे डुरी है पुदगलमें ॥ १५ ॥

अर्थ -- जे ज्ञान दीपकमां धुमाडानो लेश नथी ने जेमां वायुनो पण प्रवेश नथी अने जे कर्मरूपी पतंग जीवनो पलकमा नाश करे छे, ने जेमां दशा के० दीवेटनो जोग नथी, बीजो अर्थ-- कोई विकल्प दशा नथी अने जेने सनेह के० घृत तेलनो संयोग नथी वली जेना प्रकाशमां मोहरूप अंधकारनो वियोग थयुं छे वली जे दीपकमां तप्ततापणुं नथी, वली जेमां लालरगनी रंचमात्र लाला श नथी, अने जे समता समाधिनो जोग ते रूप जे जल तेनेविषे लहलहायमान थई रह्यो छे, एवो जे ज्ञानदीपक छे, तेनी शिखा सदा अभंगरूप जागी रही छे, अने ए शिखा सर्व पदार्थनुं ज्ञान करवानी आधार छे, अने पोते निराधार फुरी रही छे, अने पुद्गलमां डुरी के० छुपी रही छे ॥ १५ ॥

हवे ज्ञानना स्वनावमां खंमना नथी ते उपर दृष्टांत आपेछे.—

अथ ज्ञान स्वनाव अखंमित दृष्टांत कथन.—

सवैया इकतीसा — जैसो जो दरब तामें तैसोही सुनाव सधे, कोउ दर्व काहु को सुनाव न गहतु है, जैसे संख उज्वल विविध वर्ण माटी नखे, माटीसो न दीसे नित उज्वल रहतु है, तैसे ज्ञानवंत नाना नोग परिगह जोग, करत विलास न अज्ञानता लहतु है, ज्ञानकला दूनी होइ ढंददशा सूनी होइ, ऊनी होइ नौ थिति बनारसी कहतु है ॥ १६ ॥

अर्थ — जे जेवु द्रव्य छे, तेमां तेवोज स्वनाव सिद्ध छे, पण कोई द्रव्य अन्य द्रव्यनो स्वनाव ग्रहण करे नही जेम कोई जलाशयमा संख बेइंद्रीजीव होय ते सरूपमां उज्वल होय छे, पण नात नातनी माटी खाय छे, तेमछता माटीनो रंग तेना स्वरूपमां देखातो नथी, तेतो नित्य उज्वलज देखाय छे, तेम ज्ञानवंत प्राणी परिग्रहना जोगथकी नाना प्रकारना नोग नोगवतो छता अने विलास करतो छता अज्ञानता पामतो नथी अने ज्ञाननी कला बमणी थाय छे, अने द्वंद्व दशा के० ज्रमदशा ते शून्य थाय छे, अने नवस्थिति के० संसार स्थिति ते उणी के० उंछी थाय छे, एवी रीते बनारसीदासनुं केहेवु छे ॥ १६ ॥

हवे सम्यक् ज्ञाननी साथे सम्यक् क्रिया स्याद्वाद मतने आश्रयी कहे छे —

अथ स्याद्वाद प्ररूपन कथनं —

सवैया इकतीसा — जोलों ज्ञानको उदोत तोलो नही बंध होतु, बरते मिथ्यात तब नाना बंध होहि है, ऐसो नेद सुनिके लग्यो तूं विषै नोगनिसों, जोगनिसों उद्यमकी रीतिते विछोहि है, सुनो नैया संतत कहे में समकितवंत, यहुतो एकंत परमेसरको दोहि है, विषेसों विमुख होइ अनुनो दशा आरोहि, मोख सुख ढोहि ऐसी तोहि मति सोहि है॥ १७ ॥

अर्थ — ज्यां सुधी ज्ञाननो उद्योत छे, त्यांसुधी बंध थतो नथी, अने ज्यारे मिथ्यात्व दशावंत छे, त्यारे तो नाना प्रकारनो बंध थाय छे, कोई एकंतवादीये एवो ज्ञान माहात्म्यनो नेद सांजलीने एवु कह्यु के तूं विषय नोगववा लाग्यो छे, अने मन वचन कायाना योगथकी उद्यमनी रीति जे क्रिया, तेने तें छोडी दीधी छे, तेने कहेछे के हे सतपुरुष सांनल तु जे कहे छे, के हुं समकितवंत छुं, पण ए एकतमत जे

ईने अनुभव दशामां गुणश्रेणी धरी आरोहण करी अने मोक्षना सुखने ढोही के० जो, तो एवीज बुद्धी थकी शोभे छे ॥ १७ ॥

हवे ज्ञाननुं तथा विषय विमुखतानुं सहचारपणुं बतावेछे.—

अथ ज्ञान वैराग्य युगपत वर्णनं:—

चोपाई — ज्ञानकला जिनके घट जागी, ते जगमांहि सहज वैरागी; ज्ञानी मगन विषे सुखमांही; यह विपरीत संभवे नांही ॥१८॥ दोहा:— ज्ञान सहित वैराग्य बल, शिव साधै समकाल, ज्यो लोचन न्यारे रहै, निरखै दोऊ नाल ॥ १९॥

अर्थ.—जेना घटनेविषे ज्ञानरूपी कला जागी छे, तेतो जगतनेविषे सहेजे वैरागी रहे छे ज्ञानी थईने विषयसुखमा मग्न होय ए विपरीत वात संभवती नथी ॥१८॥ वली ज्ञाननी संगति ने वैरागनी संगति ए बंने चीज समकाल मलीने मोक्षने साधे, जेम बे आखो जुदी रहीछे, पण नाल के० साथे बेउ नेत्र पदार्थने जुएछे.॥१९॥

हवे मूर्खने कर्मनुं कर्त्तापणुं अने ज्ञानीनें निर्जरानुं कर्त्तापणुं ए बेनुं स्वरूप कहेछे.— अथ मूढ कर्त्ता कर्मको यह कथन.—

चौपाई— मूढ कर्मको कर्त्ता होवै, फलअभिलाप धरै फल जोवै, ज्ञानी क्रिया करै फल सूनी; लगै न लेप निर्जरा दूनी ॥ २० ॥ दोहा:—बधे कर्मसों मूढज्यो, पाट कीट तन पेम; खुलै कर्मसों समकिती, गोरख धंधा जेम ॥ २१ ॥

अर्थ — मूढ जे छे ते कर्मनो कर्ता बने छे, केमके ते क्रियाना फलनो अभिलाप धरे छे, अने फलने जोई रहेछे; ने जे ज्ञानी होय ते क्रिया तो करे पण फल शून्य करे, तेथी ज्ञानीने कर्मनो लेप लागतो नथी; एथी बमणी निर्जरा थायछे॥

वली जे मूढ छे ते कर्मनेविषे बंधाइ रहेछे, जेम रेशिमनो किडो पोताना शरीरना प्रेमवडे पोतानी जालथकी पोतेज बंधायछे. अने जे समकिती होय तेतो कर्मनी जालथी खुलेलो रहे छे, कोनी पठे? जेम गोरखधंधो पोतानी जालथी खुली जायछे तेम जाणवु ॥ २१ ॥

हवे ज्ञानी जीवने कर्मनुं अकर्त्तापणुं तथा निर्जरारूप ठरावे छे —

अथ ज्ञानीको अकर्तृत्व कथन—

सवैया तेईसा:— जे निज पूरव कर्म उदै सुख भुंजत भोग उदास रहेंगे; जे दुख्में न विलाप करै निरवैर हिये तन ताप सहेंगे; है जिनके दृढ आतम ज्ञान क्रिया करिके फलकों न चहेंगे, ते सुविचक्षन ज्ञायक है तिनकों करत्ता हम तो न कहेंगे ॥ २२ ॥

अर्थ — जे जीव पोताना पूर्व संचित शुभ कर्मना उदय वडे सुख भोगवतो थको पण भोगथी उदास रहे छे, अने जे जीवने असाता वेदनीयना उदयथी दुःख उप जे तो पण विलाप करे नही, अरतिनो विभाग करे नही, अंतरमा कोई चिंता न ही राखे, अने शरीरनो संताप सहन करे, वली जेनीपासे आत्मज्ञान छे, तेतो क्रिया करीने फलने इछे नही, तेज उत्कृष्ट विचक्षण ज्ञानी केहवायछे, अने तेने कर्म करता थका कर्मना कर्त्ता एम तो अमे कही सकशु नही॥ २२॥

हवे एवा ज्ञानीनी व्यवस्था कहे छे. ज्ञाता वर्णनं —.

सवैया इकतीसा — जिनकी सुदृष्टिमें अनिष्ट इष्ट दोउ सम, जिनको आचार सु विचार शुभ ध्यान है; स्वारथको त्यागी जे लगेहै परमारथकों, जिनके वनिजमें नफा न है न ज्यान है, जिनकी समुझमे शरीर ऐसो मानीयतु, धानकोसो छीलक कृपानकोसो म्यान है, पारखी पदारथके साखी भ्रम भारथके तेई साधु ति नहीको जथारथ ज्ञान है॥ २३॥

अर्थ — जे ज्ञातानी सुदृष्टि एवी छे के, जेनेविषे इष्ट वस्तु तथा अनिष्ट वस्तु बेउ बराबर छे, अने जेनो आचार एवो छे के जे भला विचारथी शुभ ध्यानमाज रहे, अ ने विषय सुख प्रमुख स्वार्थने त्यागीने जे अध्यात्मरूप परमार्थ तेनेविषे लागी रहे छे, वली जेनां वचन एवा छे के, जेमा नफो नथी तेम टोटो पण नथी, एटले कोई ने सुसीख किंवा कुसीख देता नथी मौन वृतिज रहेछे वली जेनी समज एवी हो य के शरीरने धाननी छील के० तुस जेवु अने कृपान के० तरवार तेना म्यान जे वु माने छे, मतलब के आत्माने शरीरथी जुदो जाणे छे वली जे जेवो पदार्थ होय तेवी तेनी परिक्षा करे छे, अने जेम नय ज्ञानविना पाच दर्शनमा जे भ्रम नुं भारथ चाली रह्यु छे, तेनो साक्षी छे, पूछवानुं थानक छे, तेहिज साधु केवाय छे, अने तेने यथार्थ ज्ञानी कहिये॥॥ २३॥

हवे समकितनुं साहसपणुं वर्णन करेछे -- अथ सम्यक्त्वतको साहसकथन.—

सवैया इकतीसा — जमकोसो भ्राता दुःखदाता है असाता कर्म, ताके उदै मू रख न साहस गहतु है, सुरग निवासी भूमिवासी औ पतालवासी, सबहीको तन मन कंपत रहतु है, उरको उजारो न्यारो देखिये सपत भैसों, डोलतु निशंक भ यो आनंद लहतु है, सहज सुवीर जाको सासुतो शरीर ऐसो, ज्ञानी जीव आर ज आचारज कहतु है॥ २४॥

अर्थ -- अहि संसारनेविषे जे असाता वेदनीय कर्म छे; ते केवां दुःखदाता छे?

अहिं उत्प्रेक्षा करे छे --जमकोसो भ्राता के० यमना भाई छे, तेनो उदय थता मूरख जन जे छे, तेतो साहस ग्रही शके नही. सुरगनिवासी के० देवता भूमिवासी के० मनुष्य तिर्यंच अने पातालवासी देवता नारकी एवा सर्व त्रिलोकवासी जीवोनां तन मन असातावेदनीय थकी कांपता रहेछे, हवे ज्ञानी जीवना उरनुं अजवालुं जे छे ते अंतरना चांदरणां जेवु छे, ते केवु छे ? ते समजावे छे के, ते सात भय थकी जुडुंज छे, जे अजवालाथी साते भय प्राप्त थतां नथी, अने ए प्रभावथी निःशंक थई भोले छे, अने आनंद पामे छे सहज सुवीर के० महोटो साहसीक सुभट, जेनुं ज्ञानरूपी शरीर शाश्वत छे, एवा ज्ञानी जीवो आचार्य के० महा पुरुष पूज्य जाणवा, एवुं आचार्य कहेछे ॥ २४ ॥

हवे साते भयना नाम कहेछे-- अथ सप्त भयनाम --

दोहा.-- इह भव भय परलोक भय, मरन वेदना जात; अनरक्षा अनगुप्त भय, अकस्मात भय सात ॥ २५ ॥

अर्थ -- आ भवनुं भय, परलोकनुं भय, मर्ण भय, वेदना उपजवानुं भय, अनरक्षानुं भय, अनगुप्त भय, अने अकस्मात भय ए सात भय जाणवा ॥ २५ ॥

हवे साते भयना लक्षण कही जुदां जुदां उलखावेछे--अथ सप्त भय लक्षन कथनं --

सवैया इकतीसा -- दसधा परिग्रह वियोगचिंता इह भव, दुर्गति गमन परलोक भय मानिये; प्राननिको हरन मरन भै कहावे सोई, रोगादिक कष्ट यह वेदना वखानिये, रक्षक हमारो कोउ नाही अनरक्षा भय, चौर भै विचार अनगुप्त मन आनिये अनचित्यो अबहि अचानक कहाधों होइ, ऐसो भय अकस्मात जगतमें जानिये २६

अर्थ -- शास्त्रमा जे दस भांतिनो परिग्रह कह्यो छे तेना विजोगनी चिंता रहे तेज आ भवनुं भय जाणवु. दुर्गतिगमननुं जे भय ते परलोकनुं भय कहिये, प्राण छूटवानुं जे भय ते मर्ण भय, रोग प्रमुखथकी जे कष्ट उपजे ते वेदना भय वखाणिये, अमारी रक्षा करनार कोई नथी देखातो ए अनरक्षा भय, चोर अथवा दुश्मण आव्याथी हुं शुं यत्न करी शकीश एवो जे भय तेने अनगुप्त जाणिये. अणचित्युं शु थशे एवु जे भय मननेविषे रहे तेनुं नाम अकस्मात् भय जाणवु ॥ २६ ॥

हवे आ भवनुं भय निवारण रूप मंत्र कहेछे.--अथ इह भव भय निवारण कथन.-

छप्पय छंद -- नख शिख मित परवान, ज्ञान अवगाह निरखत; आतम अंग अभंग, संग परधन इम अखत; छिनभंगुर संसार, विभव परिवार भारज सु,

जहॉ उतपति तहॉ प्रलय, जासु संयोग विरह तसु, परिग्रह प्रपंच परगट परखि, इह नव नय उपजै न चित, ज्ञानी निशंक निकलंक निज, ज्ञानरूप निरखंतनित २७

अर्थ -पगेना नखथी ते माथानी सिखासुधी एटले सर्व शरीर प्रमाण आत्मानो गुण जे ज्ञान ते अवगाह के० व्याप्ति तेने जुए, एवां नख सिख सहित ज्ञानमय आत्मानुं अंग अभंग रहे, तेनी साथे जे पुद्गलछे तेने परधन के० परद्रव्य कहेछे, अने सर्व संसार क्षणभंगुर छे, ने तेनेविषे जे विभव परिवाररूप भार छे, ते पण क्षणभंगुर छे, अने जेनी उत्पत्ती तेनुं विनाश छे, जेनो संयोग तेनो वियोग पण थायछे, एवो परिग्रहनो प्रपंच प्रगट परखीएं तो आ भवनुं भय चित्तमां उपजे नही एरीते जे ज्ञानी होय ते परिग्रहना वियोगनी चिंता न राखे, ने निसंक रहे, पोतानु निस्कलंक स्वरूप ज्ञानमय सदा जुए ॥ २७ ॥

हवे परलोकभय निवारणनुं मंत्र कहेछे – अथ परलोक भय निवारण मंत्र –

छप्पयछंद – ज्ञान चक्र मम लोक, जासु अवलोक मोख सुख, इतरलोक मम नाहि, नाहि जिसमांहि दोष दुख, पुन्न सुगति दातार, पाप दुरगति पद दायक, दो खंडित खानिमें, अखंडित है शिवनायक, इह विधि विचार परलोक भय, नहि व्यापक वरते सुखित, ज्ञानी निसंकनिकलंक निज, ज्ञानरूप निरखंतनित ॥ २८॥

अर्थ – ज्ञान चक्र के० ज्ञान विस्तार तेतो ममलोक के० मारो लोक छे, महारो प्रचार छे, तेने प्रत्यक्ष जोवो, अने मोक्ष सुख बन्ने रुप छे, अने इतर लोक के० तेविना अन्य लोक ते मारो नथी, महारो ज्ञान लोक मारी साथे छे, जेनेविषे दोष दुःख नथी परलोकमा सुगतिनुं देनार पुन्य छे, अने परलोकमा कुगतिनुं आपनार पाप छे ए बे पुन्य पाप आत्मानी खंडनानी खाणी छे अने हुं अखंडित रूप छु शिवनायक के० सिद्धरूपी छुं एवा विचारथी परलोक भय व्यापे नही, अने सुखित के० सदा सुखवत वर्त्ते, ए प्रमाणे परलोक भय छांडिने ज्ञानी पुरुष निसंक थको निकलंक एवु जे निजज्ञानरूप तेने सदा निरखे ॥ २८ ॥

हवे मरणभय निवारणनो मंत्र कहे छे – अथ मरन भय निवारण मंत्र –

छप्पयछंद.– फरस जीभ नाशिका, नैन अरु श्रवन अक्ष इति, मन वच तन बल तीन, सास उस्सास आउ थिति, ए दस प्राणविनाश, ताहि जग मरण कहीजे, ज्ञान प्राण संयुक्त, जीव तिहु काल न छीजे, यह चित करत नहि मरण भय, नय प्रमाण जिनवर कथित, ज्ञानी निसक निकलंक निज, ज्ञानरूप निरखंतनित ॥२९

अर्थ –स्पर्श, रसना, घ्राण, चक्षु, श्रोत्र, ए पाचे इंद्रिय; मनोबल, वचनबल, ने

कायबल ए त्रण, स्वासोस्वास आयुस्थिति, ए दस प्राण आदिनो विनाश थाय, तेने जगतमां मर्णनय कहे छे, पण जीव पदार्थ छे ते ज्ञानरूपी नाव प्राण सयुक्त छे, तेतो जीवने ज्ञान प्राण त्रणे काळनेविषे त्रूटे नही, एवो विचार मनमां करवाथी मर्णनय उपजे नही नय-प्रमाण वडे एवु जिनेश्वरनुं कथन छे, ज्ञानी लोक निसंक पणे पोताना निकलंक स्वरूप ज्ञानरूपने सदा निरंतर निरखत के० सत्यपणे जुए छे ॥ २९ ॥

हवे वेदना नय निवारणरूप मंत्र कहे छे·— अथ वेदना नय निवारण मंत्र –

छप्पय छंद·— वेदनवारो जीव, जांहि वेदंत सोउ जिय, यह वेदना अनंग, सुतो मम अंग नांहि व्यय; करम वेदना द्विविध, एक सुखमय दुतीय दुख, दोक मोह विकार, पुग्गलाकार बहिरमुख, जब यह विवेक मनमहिं धरत, तब न वेदना नय विदित, ज्ञानी निसंक निकलंक निज, ज्ञानरूप निरखंत नित ॥ ३० ॥

अर्थ·— वेदनावारो एटले जाणनारो तेतो जीव छे, अने जेने जाणवुं छे, तेपण जीवज छे एटले वेदनावत ते ज्ञानी जीवए ज्ञानरूप वेदन जे अनंग रूप छे तेतो मारुं अंग छे, अने कर्म वेदना जे छे ते मारी नथी अने ते कर्मरूप वेदना बे प्रकारनी छे, एक सुखमय वेदना ने बीजी दुःखमय वेदना छे, ए बेउ मोह विकार छे, एवी सुख दुःखनी वेदना पुग्गलाकार छे, पुग्गलनी छाया बाह्यरूप छे, ज्यारे एवो विवेक विचार मनमां धरे छे, त्यारे वेदनानुं नय वेदी सकतुं नथी. ज्ञानी लोक होय तेतो वेदना नयथी निसंक रहे अने निकलंक एवु पोतानुं ज्ञान स्वरूप तेने सदा जोतो रहे ॥ ३० ॥

हवे अनरक्षानय निवारणरूप मंत्र कहे छे·— अथ अनरछा नय निवारण मंत्र·—

छप्पय छंद·— जो स्ववस्तु सत्ता सरूप जगमहि त्रिकाल गत, तास विनास न होइ, सहज निहचै प्रमाण मत, सो मम आतम दरब, सरवथा नहि सहाय धर, तिहिं कारन रछक न, होइ नछक न कोइ पर, जब यहि प्रकार निरधार किय, तब अनरछा नय नसित, ज्ञानी निसंक निकलंक निज, ज्ञानरूप निरखत नित ३१

अर्थ -- स्ववस्तु के० निज आत्मरूप वस्तु, सत्तास्वरूप के० द्रव्यपणे छतु केहेवाय ते जगतमां त्रणे काळनेविषे पामिये, तेनो क्यारे पण विनाश नथी थतो, एवु सहज स्वरूप निश्चयनयना प्रमाणवडे जाणवु; एज मारुं आत्मद्रव्य जे छे, तेतो सर्वथा प्रकारे कोईनो सहाय धरतु नथी, तेमाटे ए आत्मद्रव्यनो कोई रक्षक नथी. तेमज कोई पर के० बीजो एनो नंक्षक पण नथी जेवारे एवो विचार

| नकी करी राखे, त्यारे अनरक्षा नय नाश पामे, एवा ज्ञानी होय ते अन
यथी निसंक थको पोताना निकलंक ज्ञानस्वरूपने सदा निरखे छे ॥३१॥

चौरनय निवारण रूप मंत्र कहे छेः-- अथ चौरनय निवारन मत्र --

ाय छंद -- परम रूप परतक्ष, जासु लक्षन चिन मंडित, पर प्रवेश तहाँ ना
हिं महि अगम अखंडित, सो मम रूप अनूप, अकृत अनमित अकूट
ांहि चोर किम गहे, ठौर नहि लहे और जन, चिंतवत एम धरि ध्यान जब,
गुप्त नय उपसमित, ज्ञानी निसंक निकलंक निज, ज्ञानरूप निरखंत नित

ः-- जे परम स्वरूप केहेवाय छे, अने मान सन्मानवडे प्रत्यक्ष छे, चिनमं
० चिन्मय एवु जेनुं लक्षण छे, अने जेना स्वरूपनेविषे परस्वरूपनो प्रवे
, मांहिमही के० पृथ्वीना वचमा अगम्य छे, अने अखंडित छे, एवु तो
। मारुं रूप छे, ते कोईनुं कीधेलुं नथी, अनमित के० प्रमाणविना, एवु अखु
छे, ते धनने चोर केम हरी शके! अने और के० बीजा कोई लोक तेनी ज
ी शके नही ज्यारे ध्यान धरीने एवुं चिंतवन करे त्यारे अगुप्त नय के० उ
ानतुं जे नय ते उपशमी जाय अने एवा ज्ञानी होय ते अगुप्त नयथी नि
ंका पोताना निष्कलंक ज्ञान स्वरूपने सदा निरखता रहेछे ॥ ३२ ॥

कस्मातनय निवारण रूप मंत्र कहेछे --अब अकस्मातनय निवारण मत्र --

ाय छंद -- शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध, सहज सु समृद्ध सिद्ध सम, अलख अना
त, अतुल अविचल सरूप मम, चिद विलास परगास, वीत विकलप सुख
जहाँ दुविधा नहि कोइ, होइ तहाँ कछु न अचानक, जब यह विचार
तब, अकस्मात नय नहि उदित, ज्ञानी निसंक निक्लंक निज, ज्ञान
खत नित ॥ ३३ ॥

-- जे वस्तु शुद्ध छे, केवल पोताना स्वरूपनेविषेज छे, बुद्ध के० ज्ञानम
रोधी छे, सिद्धसमान ऋद्धिवत छे, अलक्ष छे, आदिरहित छे, अने अंत
, जेनी तुलना कोईथी न थाय माटे अतुल छे, एवु अविचल मारुं रूप छे
ास के० ज्ञानविलासनो जेने प्रकाश छे वीतविकलप के० अवस्था भेद
, अने समाधि सुखनुं थानक छे ज्यां कोई विजातीय न पामिये त्या कोई

प छे ते अकस्मात नयथी निशंक थको पोताना निष्कलंक ज्ञान स्वरूपने सदा जोतो रहेछे. ॥ ३३ ॥

हवे निर्जराना करनार ज्ञानीनी व्यवस्था कहेछे --अथ ज्ञानी व्यवस्था कथन --

छप्पय छंद.-- जो परगुन त्यागंत, शुद्ध निजगुन गहंत ध्रुव, विमल ज्ञान अंकूर, जासु घट मह्हि प्रकास हुव ; जो पूरव कृतकर्म, निर्जरा धार वहावत ; जो नव बंध निरोध, मोष मारग मुख धावत, निःसंकतादि जस अष्ट गुन, अष्ट कर्म अरि संहरत ; सो पुरुष विचछन तासु पद, बनारसी वंदन करत. ॥ ३४ ॥

अर्थ-- जे कोई पुद्गलादि गुणनो त्याग करे, अने ध्रुव के० निश्चयरूप एवा शुद्ध पोताना गुणनुं ग्रहण करे; निर्मल ज्ञाननो अंकुर के० उदय जेना घटमां प्रकाशित थयो, अने जे पूर्वकृत कर्मने निर्जरानी धर के० श्रेणिविषे वहावि दिये वली जे नवा बंधनो निरोध करीने एटले निराश्रव थईने मोक्षमार्गने सन्मुख दोडेछे, गुण श्रेणिमां दोडेछे, निशंकित प्रमुख जेना आठ गुण छे, ते आठे कर्मरूप शत्रुनो संहार करे, तेज विचक्षण पुरुष केहेवाय, अने तेना चरनकमलने वणारसी दास वंदन करेछे ॥ ३४ ॥

हवे आठ अंगनां नाम कहेछे.--अथ अष्टांगके नाम कथनः--

सोरठाः-- प्रथम निसंसैजानि, डुतिय अवछित परिनमन, तृतिय अंग अगिलान, निर्मल दृष्टि चतुर्थ गुन ॥ ३५ ॥ पंच अकथ परदोष, थिरी करन छठम सहज ; सत्तम वछल पोप, अष्टम अंग प्रभावन ॥ ३६ ॥

अर्थः-- पेलुं निरंशय के० निःशंकित, बीजुं समकितनो गुण जे अवांछक पणारूप मननो परिणाम, त्रीजुं अंग अग्लान, चोथुं गुण निर्मल दृष्टि एटले मूढ दृष्टि नही ते, ॥ ३५ ॥ पांचमुं परदोष अकथन, छठुं अंग समकित स्थिर करवाना स्वभावरूप, सातमुं सर्व साथे वाछलपणुं अध्यात्मक पोषक, अने आठमुं अंग प्रभावना गुणरूप ॥ ३६ ॥

हवे अंगना लक्षण कहे छेः-- अथ अंग लक्षण.--

सवैया इकतीसा-- धर्ममें न संसै शुभकर्म फलकी न इछा, अशुभको देखि न गिलानि आनै चित्तमे, साचि दृष्टि राखै काहू प्रानीको न दोष भाखै, चचलता भानि थिति ठानै बोध चित्तमे ; प्यारे निजरूपसों उछाहके तरग उठे, एइ आठो अंग जब जागे समकितमे, तांहि समकितकों धरे सो समकितवत, वहे मोषपावे ठ न आवै फिर इतमें ॥ ३७ ॥

अर्थ — धर्मनेविषे संदेह न होय ते निःशंकित गुण, शुभ कर्मना फलनी इच्छा न होय ते निस्पृही गुण, अनिष्ट वस्तुने जोइने चित्तमा ग्लानी न लाववी ते अग्लान गुण, कोईना भगाव्या भगवुं नही ने साचनेविषे दृष्टि राखवी ते अमूढ दृष्टिगुण, कोई प्राणीनो दोष केहेवो नही ते दोषाकथन गुण; चचलता त्यागीने ज्ञानरूप चित्तनेविषे स्थिरता राखवी ते थिरीकरण गुण, आत्म स्वरूपमा प्रेम राखवो ते वत्सल गुण; अने आत्मस्वरूप साधननेविषे उत्साह लहरी के० तरग उठवापणुं लीधो रहे ते प्रभावना गुण, एम एक समकेतना आठे अग ज्यारे जागे, अने ते आठ गुणे सहित सम्यक्तनुं धारण करे, ते समकितवत्त केहेवाय ने तेवाज समकिती मोक्ष पामे, ने फरीथी आ ससारमा आवे नही ॥ ३७ ॥

हवे निर्जराधारी चैतन्यनुं नाटक कहे छे -- अथ चैतन्य नाटक कथन --

सवैया इकतीसा — पूर्व बंध नासे सोतो संगित कला प्रकाशे, नव बंध रुंधी ताल तोरत उछरिके, निसंकित आदि अष्ट अग संग सखा जोरी, समता अलाप चारि करे सुख भरिके, निरजरा नाद गाजे ध्यान मिरदिंग बाजे, छक्यो महानंदमे समाधि रीझि करिके, सत्तारग भूमिमे मुकत भयो तिहूं काल, नाचे शुद्ध दृष्टि नट ज्ञान स्वाग धरिके ॥ ३८ ॥

अर्थ — जेम पूर्वकालनेविषे उत्कृष्ट स्थीतियकी बंध करतो हतो तेवी रीते न करता अनुत्कृष्ट स्थितियकी करवो एम पूर्व बंध नासे, तेतो संगित कला आलाप चारी प्रकाशे, अने नवा बंधने रोधवु ते रूपताल उछले छे तालतोर छे, निशंकित प्रमुख जे समकितना आठ अग कह्या, ते सहाय जोडी समता समाधि धारी तद्रूप स्वर बाधीने आलाप करे छे, अंही कर्मनी निर्जरा हेतु छे, एटले कर्मना स करवारूप कार्यनुं निर्जरा कारण छे, ते ध्याननेविषे एक स्वरूपनाद गाजे छे, अने सोहं धुनी छे तेरूप मृदग वाजे छे, अही जे महानदमय थईने छक्यो तेतो सुखी थयो, ते जाणिये रीझ थई, ने पोतानी आत्मसत्ता तेज कोई रगभूमि छे एटले रग मंडप थयो, तेनेविषे त्रणे कालमा शुद्ध दृष्टीसहित ज्ञानरूप वेष स्वांग पहेरी धरीने नटरूप चैतन्य मुक्त थईने नाचे छे ॥ ३८ ॥

इतीश्री समयसार नाटकविषे बालबोधरूप निर्जराद्वार सप्तम संपूर्ण.

दोहा — कही निर्जराकी कथा, शिवपथ साधनहार, अब कछु बंध प्रबंधको, कहुं अल्प विस्तार ॥ ३९ ॥

अर्थ.– मोक्ष मार्गनी साधनकार जे निर्जरा तेनी कथा हती ते कही, हवे जे बंध थाय छे तेना अधिकारनो अल्प विचार कहेछे ॥ ३९ ॥

हवे बंध जे छे ते छांडवा योग्य छे, माटे ते बंधनो विदारणहार जे समकित तेने नमस्कार करेछे·– अथ बंध विदारन सम्यक्त वर्णनं –

सवैया इकतीसा·– मोह मद पाई जिन संसारी विकल कीने, याहिते अजानु बाहु विरद वहतु है; ऐसो बंध वीर विकराल महाजाल सम, ज्ञान मंद करे चंद राहु ज्यों गहतु है, ताको बल भंजिबेको घटमे प्रगट भयो, उद्धत उदार जाको उ छेस महतु है; सो है समकित सूर आनंद अंकूर ताही, निरखी बनारसी नमो नमो कहतु है. ॥ ४० ॥

अर्थ·– जे बंधरूप सुभट छे ते मोहरूप मदिरा पाईने सर्व संसारी जीवने विकल करेछे, एथी ए बंधरूप वीर छे ते आजानुबाहुनुं बीरुद वहावेछे के० सार्व भोम थई रहेला छे, एवो विकराल ए बंधरूप वीर सुभट छे, वली ए महाजाल समान छे, अने एज ज्ञान प्रकाशने मंद करेछे, कोनी पठे जेम राहु चंद्रने मंद करेछे तेनी पठे जाणी लेवुं; हवे एवा बंधरूप वीरनो प्रतिपक्षी जे छे, ते एनुं बल तोडवाने घटनेविषेज प्रगट थयो छे, जेनो उद्यम उद्धत छे, एटले कोईथी रोक्यो रेहे एवो नथी, अने उदार छे के० श्रेष्ट छे तथा महत के० मोटो छे, तेतो समकितरूप शूरवीर जाणवो, ते आनंद अंकूर लईने उदय थयो छे, ते सम्यक्त शूरवीरने जोईने पोताना अंग उल्लसित थको बनारसीदास नमो नमो कहेछे ॥ ४० ॥

हवे चेतनाविना कर्म बंध नथी थतां, माटे ज्ञानचेतना तथा कर्म चेतना ए बेउनी समज पाडेछेः– अथ कर्मचेतना ज्ञानचेतना वर्णन –

सवैया इकतीसा – जहां परमातम कलाको परगास तहा, धरम धरामें सत्य सूरजको धूप है, जहां सुभ असुभ करमको गढास तहां, मोहके विलासमे महा अंधेर कूप है, फेली फिरै घटासी छटासी घट घन बीच, चेतनकी चेतना दुहोधा गुपचूप है, बुध्दिसो न गही जाय बेनसों न कही जाय, पानीकी तरग जैसे पानीमे गुडुप है ॥ ४१ ॥

अर्थ – जे चेतनामां परमात्मानी कलानो प्रकाश थाय छे, ते धर्म धरती छे; ते धरतीमां सत्यरूप सूर्यनो तडको छे, एटले उजली जगा छे. वली जे चेतनानेविषे शुभ अशुभ कर्मना रसनी गढास छे, एटले शुभाशुभ कर्मना रस वडे जे चेतना घोलाइ रही छे, त्यां मोहराजा विलास करे छे, तेतो घोर अंधकार छे,

ए रीते चेतन पुरुषनी जे चेतना के० संज्ञा छे, तेतो घटाघनबीच के० शरीररूप मे घचचे छटानी माफक फेली रही छे, अने घटानी माफक फेलीथकी फरे छे, अने ए चेतना ते परमात्मानी कलाना प्रकाशमा तथा मोहविलासमां ए बेउ तरफ गुपचुप छे, एटले चुप थई रही छे, एवी ए चेतना बे तरफ प्रवेश करे छे, ए वात बुद्धीथी ग्रहण थाय छे, पण वचनथी कही जाय एवी नथी, जेम पाणीना तरंग पाणीमां गुरुप्प छे तेम चेतना बेउ तरफ गुरुप्प छे. ॥ ४१ ॥

हवे बंधद्वारनेविषे बंधनो हेतु कहे छे – अथ बंधनिदान कथन –

सवैया इकतीसा – कर्मजाल वर्गनासो जगमें न बंधे जीव, बंधे न कदापि मन वच काय जोगसों, चेतन अचेतनकी हिंसासो न बंधे जीव, बंधे न अलख पंचविषे विखरोगसों, कर्मसो अबंध सिद्ध जोगसौ अबंध जिन हिंसासौ अबंध साधु ज्ञाता विषै नोगसो, इत्यादिक वस्तुके मिलापसो न बंधे जीव, बंधे एक रागादि अशुद्ध उपजोगसो ॥ ४२ ॥

अर्थ – कोई कहे छे के कर्मजाल वर्गणा थकी जगतमां जीव बंधाय छे, ते वात खोटी एटले कर्म वर्गना जीवना बंधनो हेतु नथी, एवी रीते कदाचित मनवचन कायाना योगथी पण जीव बंधातो नथी, चेतन तथा अचेतननी हिंसाथकी पण जीवने बंध थतो नथी अलक्ष पती छे, तथा अलक्षरूपी छे, ते पंचेंद्रियना विषयरूप विषरोग वडे पण बंधातो नथी कर्म वर्गनाथी सिद्धना जीव बधाता नथी, वली जिनेश्वर देव छे तेतो त्रणे योगमा छे तोपण अबंध छे, साधुजे छे, ते अनाभोग पणे हिंसा करे छे, तोपण अबंध छे, ज्ञाता विषय नोगवेछे, तो पण ते अबंध छे, एरीते कर्म वर्गना प्रमुख वस्तुना मिलापथी जीव बंधातो नथी पण मात्र एक राग द्वेषने मोह अने जीव बंधरूप अशुद्ध उपयोग थीज जीव बंधाय छे ॥ ४२ ॥

हवे राग द्वेष अने मोहनेज दृढपणे बंधना हेतु ठरावे छे –

अथ बंधनिदानदृष्टी करन व्यवस्था –

सवैया इकतीसा – कर्मजाल वर्गनाको वास लोकाकाश माहि, मन वच कायाको निवास गति आउमे, चेतन अचेतनकी हिंसा वसै पुद्गलमें, विषे नोग वरते उदेके उरजाउमे, रागादिक शुद्धता अशुद्धता है अलखकी. यहे उपादान हेतु बंधके वढाउमें, याहिते विचछन अबंध कह्यो तिहू काल, राग दोष मोहनादि सम्यक् सुनाउमें, ॥ ४३ ॥

अर्थः—कर्म जाल वर्गणानो वास तो लोकाकाशमांज छे, केवल कर्म वर्गणा कारण थकीज जो अमूर्त्ति चेतनद्रव्य बंधनावने पामे, तो लोकाकाशनो बंध केम नही थाय? तेमज मन वचन अने कायाना योगनो वास तो चारे गतिनेविषे छे, अने चारे आ उघामा छे, त्यारे योग ते आत्माना बंधना हेतु केम थाय? चेतननां प्राण हर्णथी हिंसा थाय छे; ते पुद्गल बंधरूप प्राणमांज हिसा थाय छे, एमज अचेतननी हिंसा पण पुद्गलमां छे, ते आत्मासाथे स्पर्शती नथी,तो बंध केम थाय? अने विषय जोग जे वरते छे, तेतो कर्मना उदयमां छे, अरुजी रह्या छे, अने आत्मा तो तेथी निरालो छे, ते बंधाय केम? माटे राग द्वेषने मोहथकी जे अशुद्धता के० मुग्धता थाय ने परवस्तुने पोतानी करी मानवी ते अलख पुरुषनी अशुद्धता छे. अने एज अशुद्ध ता बंधने वधारे छे, ए माटे विचक्षण पुरुषने त्रण कालविषे अबंध कह्यो, केमके, तेने सम्यक् स्वभावमां राग द्वेष अने मोह नथी ॥ ४३ ॥

हवे ज्ञाताने अबंध कह्यो तोपण उद्यमी थईने क्रिया करवी ते समजावेछे—

अथ उद्यम प्रशंसा —

सवैया इकतीसाः— कर्मजाल जोग हिंसा भोगसौं न बंधे पै तथापि ज्ञाता उद्यमी बखान्यो जिन बैनमें, ज्ञानदृष्टि देतु विषै भोगनिसौं हेतु दोउ, क्रिया एक खेत यो तौं बनै नांहि जैनमें, उदै बल उद्यम गहै पै फलकौं न चहै निरदै दसा न होइ हिरदेके नैनमे, आलस निरुद्यमकी भूमिका मिथ्यात मांहि, जहा न संभरै जीव मोहनींद सैनमें ॥ ४४ ॥

अर्थ — जीव छे ते कदापी कर्मजालथी बंधाय नही, अने जोगथकी पण बंधाय नही, अने हिंसाथकी पण न बंधाय, भोगवडे न बंधाय, तोपण जिनेश्वरना वचनथकी ज्ञाता जीवने उद्यमीज वखाण्युं छे. ज्ञाननेविषे दृष्टि पण आपेछे, अने विषयभोगमां प्यार पण राखेछे, एवी बे क्रिया एक खेत के० एक आत्माविषे एक स्थानकविषे करेछे, एवु तो जैनवाणीमां बने नही, अने जे ज्ञानी होय ते एटलुं तो करेके जे संहनन के० संघयण प्रमुख कर्मनो उदय बल छे, तेथी यथायोग्य ते क्रियाविषे उद्यमवंत थाय, अने तेना फलने इच्छे नही, ने हृदयरूप नेत्रनेविषे निर्दय दशावंत न थाय, अने आलस निरुद्यम तो मिथ्यात्वमाज पामिये, एथी आलस ने निरुद्यमनी मिथ्यात्व भूमिका छे, जे भूमिकानेविषे जीव मोहनिद्रा लेतो थको सयनदिशामा रहेछे, अने पोताना स्वरूपने संभारतो नथी ॥ ४४ ॥

हवे जे उदय माफक क्रिया कही तेथी उदय बलनी व्यवस्था कहेछे —
अथ उदै व्यवस्था वर्णनं —

दोहा — जब जाकौ जैसे उदै, तब सो है तिहि थान। सकति मरोरै जीवकी, उदै महा बलवान ॥ ४५ ॥

अर्थ — जे काळनेविषे जेनो जेवो उदय थाय ते काळनेविषे ते स्थान के० ते स्वरूपमां जीव रहे छे, ते जीवनी शक्ति मरोडीने पोतानी शक्ति प्रगट करे, एथी कर्म उदय महा बलवान छे ॥ ४५ ॥

हवे उदय बल उपर दृष्टांत आपेछे —अथ उदै बल वर्नन —

सवैया इकतीसा —जैसे गजराज पर्यो कर्दमके कुंमवीच उद्यम अरूढे न पै छूटै दुख दंदसों, जैसे लोह कटककी कोरसों उरझ्यो मीन, चेतन असाता लहै साता लहै संदसों, जैसे महाताप सिरवाहिसो गरास्यो नर, तकै निजकाज उठी सकै न सुछंदसों, तैसे ज्ञानवंत सब जानै न वसाई कछु, बंध्यो फिरै पूरव करम फल फंदसो ॥ ४६ ॥

अर्थ — जेम हाथी कर्दमना कुंममां पडयो पछे तेमांथी निकळवाने उद्यम अरूढे के० करेछे, पण ते दुखदमथी छूटी शक्तो नथी, जेम हृदयमा लोह कटकी के० लोढाना कांटानी अणीमा जरायो एवो मछ छूटो थई शकतो नथी, तेथी मत्स्यनुं चेतन अशाता पामे, अने संद के० छूटे तो शाता लहे पण छूटे नही, वळी कोई माणस तापज्वर अने माथाना दरदथी हेरान थतो पथारीमा पडी रह्यो होय अने ते मनुष्य पोताना कार्य करवाने वास्ते तेहांथी उठवाना अनेक उपाय करतो छता पोताना स्वछंदथी उठी शकतो नथी, तेमज ज्ञानवंत जीवतो सर्व हेय उपादेय जाणे छे पण कोई पोतानुं बल चाले नही पूर्व संचित कर्मना फळना फंदथी एटले कर्मना उदयथी बांध्यो फिरे छे॥ ४६ ॥

हवे आळसीने निरुद्यमीनी जेवी अवस्थाछे तेवी बतावे छे —अथ यथावस्था वर्ननं:—

चौपाई —जे जिय मोहनीदमें सोवै, ते आलसी निरुद्यमि होवै, दृष्टिखोलि जे जगै प्रवीना, तिन्हि आलस तजि उद्यम कीना ॥ ४७ ॥

अर्थ — जे जीव मोहरूप निद्रानेविषे सुई रह्या छे, ते जीवने आळसु कहीए ने तेज निरुद्यमी केहेवाय अने जे प्रवीण जीव ज्ञानदृष्टि खोली जागृत छे, ते आळस तजीने उद्यम करे छे ॥ ४७ ॥

हवे आळसु ने उद्यमीनी क्रियानुं वर्णन करे छे —अथ यथावस्थातथा क्रिया कथनं —

सवैया इकतीसा.— काच बांधे सिरसों सुमनी बांधे पायनिसो, जानै न गवार कैसी मनी कैसो काच है, योंही मूढ जूठमें मगन जूठहिकों दौरे, जूठ बात मानै पै न जानै कहा साच है; मनीकों परखि जानै जोहरी जगत माहि, साचकी समुझी ज्ञान लोचनकी जाच है, जहांको जु वासी सो तो तहांको मरम जानै, जाको जैसो स्वांग ताको तैसेरूप नाच हैं ॥ ४८ ॥

अर्थः— काचने माथाउपर बाधे अने मणीने पगे बाधे, एवा गमार लोकने खबर नथी होती के काचशी वस्तु छे, अने मणी शी वस्तु छे, एम मूढ अज्ञानी जीव जूठी वातमां मग्न रहे, जूठा कार्यमां दोडे, अने जूठी वात माने, पण एम न जाणे के एमां साच केटलुं छे, मणी रत्ननी तो जे झवेरी होय तेज जगतमां परिक्षा करीशके, तेमज साचानी समज पण तेनेंज पडे, जेने ज्ञानरूपी लोचननी उत्पत्ति थई होय केमके, जे जिहांनो वासी होय ते तिहांनो मरम जाणे, एटले मिथ्यात भूमिकानो वासी मिथ्यातनेज ग्रहे अने सम्यक्त भूमीकानो वासी ते समकितनेज साचुं माने, मतलब जे जेवो वेष धरी आवे ते तेवोज नाच नाचेछे. ॥ ४८ ॥

हवे जे जेवी क्रियाकरे ते तेवु फल पामे ते कहेछेः--अथ यथाक्रिया तथा फलकथनं

दोहा.— बंध बधावे अंध व्है, ते आलसी अजान, मुक्ति हेतु करनी करे, ते नर उद्यमवान. ॥ ४९ ॥

अर्थः— जे भाव अंध थईने बंधने वधारे, ते अजाण आलशी केहेवायछे अने जे मुक्ति हेतुने अर्थे क्रिया करेछे, ते मनुष्य उद्यमवंत केहेवाय छे ॥ ४९ ॥

हवे जो ज्ञानहोय तो वैराग्यपण होय अने जो वैराग्य न होयतो ज्ञान पण न होय तेथीज्ञान वैराग्यनुं सहचारपणुं कहेछेः—अथज्ञानवैराग्य सहचारत्ववर्णनं —

सवैया इकतीसा.—जवलगु जीव शुद्ध वस्तुकों विचारै ध्यावै तवलगु भोगसों उदासी सरवंग है, भोगमें मगन तव ज्ञानकी जगन नाहिं, भोग अभिलाषकी दशा मिथ्यात अंग है; तातें विषै भोगमें मगन सो मिथ्याति जीव, भोगसों उदासि सो समकिति अभंग है; ऐसी जानि भोगसो उदासि व्है मुगति साधे, यहै मन चंग तो कठौत मांहि गंग है. ॥ ५० ॥

अर्थः— ज्यांसुधी जीव शुद्ध वस्तुना विचारमां दोडतो होय, त्यांसुधी सर्वे अंगनेविषे भोगथी उदासीनपणुं जोवामां आवे; अने ज्यारे भोगमां मगन रेहेतो होय, त्यारे तो ज्ञाननी जगन के० जागृती न होय, केमके भोग अभिलापनी दशामां वर्त्तवुं तेतो मिथ्यातनुं अंग छे, तेथी विषयभोगमां मगन रहे ते जीव मिथ्या

ती केहेवाय, अने जे विषय नोगथी उदासी रहे ते तो अनंग समकेती ठे. एवुं जाणीने अहो नव्यलोको नोगथी उदास थई, ने मुक्तिने साधो ते उपर दृष्टांत कहे ठे के, जेनुं मन चगुठे तेने कथरोटमाज गंगा ठे, मतलब के कथरोटमां नाता थका गंगा स्नाननु फल पामेठे ॥ ५० ॥

हवे मोक्षना अधिकारनेविषे चार पदार्थनुं स्वरुप कहे ठे –

अथ पदार्थ चतुष्क कथन –

दोहा – धरम अरथ अरु काम सिव, पुरुषारथ चतुरंग ; कुधी कलपना गहि रहै, सुधी गहै सरवंग ॥ ५१ ॥

अर्थ – धर्म, अर्थ, काम, ने मोक्ष, पुरुषार्थना ए चार अंग ठे, ए पुरुषार्थ विषे कुधी के० कुमतिवालो पोतानी मति कल्पनाने जालीने बेसे ठे, अने सुधी के० पंमित पुरुष ठे ते सर्वांगनुं ग्रहण करे ठे ॥ ५१ ॥

हवे चारे पदार्थनी न्यारी न्यारी व्यवस्था सुमति अनेकुमतिना मन आश्री कहे ठे – अथ पदार्थ व्यवस्था कथन–

सवैया इकतीसा – कुलको आचार ताहि मूरख धरम कहै, पंमित धरम कहै वस्तुके सुनाउकों, खेहको खजानो ताहि अज्ञानी अरथ कहै, ज्ञानी कहै अरथ दरव दरसाउको, दंपतिको नोग ताहि डरबुद्धि काम कहै, सुधी काम कहै अनिलाप चित आउको, इंद्रलोक थानकों अजान लोक कहै मोक्ष, मतिमान मोक्ष कहै बंधके अनाउकों ॥ ५२ ॥

अर्थ.– जे मूर्ख जन होय ते पोताना कुलना आचारने धर्म कहे ठे, अने पंडितजन तो वस्तुना स्वनावने धर्म कहे ठे, अज्ञानी जन होय ते खेहना खजाना जे सोनुं रुपु जवाहिर वगैरे ठे तेने अर्थ के० द्रव्य कहि बतावे ठे, अने ज्ञानी जन होय ते द्रव्यना दरशावने अर्थ कहे ठे, एटले षट्द्रव्यने अर्थ कहे ठे. डर्बुद्धि जन स्त्री नरतारना नोग संयोगने काम कहे ठे, पण सुधी के० पंमित जन तो चित्तनी इब्ना अनिलापने काम कहे ठे, अने जे इंद्रनो स्थानक ठे, तेने अजाण लोक मोक्ष कहे ठे, अने जे मतिमान् एटले पंमित लोक ठे तेतोजे थकी बंधनो अनाव थाय ठे, एटले बंधना नाशने मोक्ष कहे ठे ॥ ५२ ॥

हवे चारे पुरुषार्थने अध्यात्मरूप कहे ठे –अथ पुरुषार्थ चतुष्क अध्यात्मरूपकथन -

सवैया इकतीसा – धरमको साधन [illegible] सुनाउ साधै, अरथको साधन विलेठ दर्व पटमें, यहै काम साधना [illegible] पद, सहज [illegible] मोप सु

द्धता प्रगटमें, अंतर सुदृष्टिसो निरंतर विलोकै बुध, धरम अरथ काम मोख निज घटमें, साधन आराधनकी सोज रहै जाके संग, भूलो फिरै मूरख मिथ्यातकी अलटमें॥५३॥

अर्थः—धर्मनुं साधन तो तेने कहीये के जे वस्तुना स्वभावने साधवो एटले वस्तुना स्वभावने यथार्थ जाणवो, अर्थनुं साधन तेने कहीये के जे षट् द्रव्यने विलक्षण के० जुदां जुदां जाणवां, काम साधन तेनुं नाम छे के, जे निरास पदनो संग्रह करवो, एटले निस्पृह दशामां रेहेवु, मोक्षनुं साधन ते छे, के जेवडे पोतानी सहज स्वरूप शुद्धता प्रगट भावमां करवी, ए रीते अतरदृष्टि वडे एटले ज्ञान दृष्टि थकी बुद्धिमान पुरुष धर्म अर्थ काम ने मोक्ष ए चारपुरुषार्थने निरंतर पोताना घटमां देखे; एम चारे पुरुषार्थ साधवानी जेना संघाते सोज के० सामग्री रहे छे, तोपण मूर्ख जे छे ते मिथ्यातनी अटलमा भूल्या फिरे छे ॥५३॥

हवे शुद्ध व्यवहार नये करी वस्तुनुं सत्य स्वरूप कहेछेः -

अथ शुद्ध नय वस्तु स्वरूप कथनं.—

सवैया इकतीसा.— तिहूं लोकमाहि तिहूं काल सब जीवनिको, पूरव करम उदै आइ रस देतु है, कोउ दीरघाउ धरै कोउ अलपाउ मरै, कोउ दुखी कोउ सुखी कोउ समचेतु है, याहीमें जीवायो याही मार्यो याहि सुखी कर्यो दुखी कर्यो एसी मूढ आपु मानी लेतु है, याही अहं बुद्धिसो न विनसै भरम मूल यहै मिथ्या धरम करम बंध हेतु है ॥ ५४ ॥

अर्थ — त्रणे लोक तथा त्रणे काल तेनेविषे जगतवासी सर्व जीवने पूर्व संचित कर्म उदय आवेछे, ने ते पोतानो कडवो तथा मीठो रस आपेछे, तेणे करीने कोई दीर्घ आयुष्य भोगवी मरेछे, ने कोई अल्प आयुष्यमांज मरेछे, कोई दुःखी छे, अने कोई सुखी होयछे, कोई समचित के० सम भावमां रहेछे, एम पोत पोतानी कमाईथी सर्व जीव सुखी अथवा दुःखी छे. तेने मूढ प्राणी जे छे ते पोताना साधन मानेछे के, जो में फलाणाने जीवाड्यो, फलाणाने मारी नाख्यो, फलाणाने दुःखी कीधो, ने फलाणाने सुख आप्युं. एवो मूढ अहं बुधीथी भर्ममां भुल्यो फरेछे, अने ए भूल एनी मटती नथी, एज मिथ्या धर्म मूढने कर्मबंधनो हेतु थायछे॥५४॥

हवे फरी मूढनीज व्यवस्था कहेछेः— अथ मूढता कथनं.—

सवैया इकतीसाः— जहांलों जगतके निवासी जीव जगतमे, सबै असहाय कोऊ काहुको न धनी है, जैसी जैसी पूरव करम सत्ता बांधि जिन, तैसी तैसी उदैमें अवस्था आइ बनी है, एते परि जो कोउ कहै कि में जीवावो मारो इत्यादि अने

क विकलप वात घनी है, सो तो अहं बुद्धिसो विकल भयो तिहूं काल, मोले निज आतम सकति तिन्ह हनी है. ॥ ५५ ॥

अर्थ — जांहांसुधी जीव जगतमा निवास करेछे तांहांसुधी एक बीजाने असहाय पणे रहेछे, कोई कोईनो सहायकारी नथी, तेम कोई कोईनो धणी नथी, अने जेवी जेवी पूर्व काळनेविषे कर्मसत्ता बांधी राखीछे, तेवी तेवी उदय काळनेविषे जीवनी अवस्था बनेछे, एटला उपर जे कोई कहे के मे आने जीवाड्यो ने अने मार्यो, इत्यादि अनेक मनना विकल्पनी वातो घणी छे, ते सघळी अहंबुद्धि थकी थाय छे, अने ते जीव त्रणे काळने विषे अहंकार बुद्धिमा मोले छे, तेणे शुद्ध ज्ञानशक्तीने हणी छे, अने ते जीवनी ए मूढ अवस्था केहेवाय छे ए रहस्य छे ॥ ५५ ॥

हवे चार प्रकारे करीने जीवनी व्यवस्था उपर चार दृष्टांत आपेछे.—

अथ चार प्रकार जीव व्यवस्था कथनं.—

सवैया इकतीसा — उत्तम पुरुषकी दशा ज्यों किसमिस द्राख, बाहिज अभिंतर विरागी मृदु अंग है, मध्यम पुरुष नारीयर केसी भाति लिये, बाहिज कठिन हिय कोमल तरग है, अधम पुरुष बदरीफल समान जाके बाहिरसो दिसे नरमाइ दिल संग है, अधमसो अधम पुरुष पुगीफल सम, अंतरग बाहिर कठोर सरवग है॥

अर्थ — उत्तम पुरुषनी दशा किसमिस द्राक्ष जेवी छे, जेम किसमिस द्राक्ष बाहिरथी ने अंदरथी कोमल छे, तेमज उत्तम पुरुष बाह्य व्यवहार अने अभ्यंतर व्यवहारमा पण मृदु अंग के० कोमल छे, मध्यम पुरुष नारीयल सरीखो छे, जेम नारीयल बाह्य व्यवहारमा कठोर अने अभ्यंतर कोमल छे, तेम मध्यम पुरुष पण बाहारथी कठण अने हृदयामा कोमल होय छे, अधम पुरुष बोर समान छे, जेम बोर बाह्य व्यवहारनेविषे नरम देखायछे, ने माहेथी कठोर छे, तेम अधम पुरुष बाहार नरमाइ राखे पण अंतरमा संग के० पाषाण जेवो कठण होयछे, अने अधमाधम पुरुष पुगी फल के० सोपारी जेवोछे, जेम सोपारी बाहरने अंदर सर्वांगमा कठोर छे, तेम अधमाधम पुरुष माहे अने बाहार सघळे कठोर होयछे ॥ ५६ ॥

हवे उत्तम पुरुषनी दशा कही बतावेछे — अथ उत्तम पुरुष कथन —

सवैया इकतीसा — कीचसो कनक जाके नीचसो नरेसपद, मीचसी मित्ताई गरवाई जाके गारसी, जहरसी जोग जानि कहरसी करामाति हहरसी हौस पुदगल छबि छारसी, जालसो जग विलास भालसो भुवन वास, कालसो कुटब का

ज लोक लाज लारसी; सीठसो सुजस जानै वीठसो वखत मानै, ऐसी जाकी री ति ताही वदत बनारसी. ॥ ५७ ॥

अर्थ – जे पोताना हैयानेविषे सुवर्णने कादव सरखुं जाणे, अने नरेश पद के० राज्य गादीने नीच सरखी जाणे, मित्राईने मीचसी के० मर्ण जेवी जाणे, ने गरवाई के० वडाई ते लीपवानी गार जेवी जाणे, रसायन प्रमुख द्रव्यजोगनी जातीने ते झेर सरिखी जाणे, मंत्र शक्तीवडे जे करामत थाय तेने कहर सरखी जाणे, देशी नापानेविषे हहर के० अनर्थ ते सरखी होस छे, अने पुद्गलनी छवी ते राख समान जाणे, माया रूप जाल तथा जगतनो विलास तेने जाल जेवो जाणे, जुवनवास के० घरवास ने तीरना नाल समान जाणे, कुटुंब कार्यने काल समान करी जाणेछे, लोकलाज राखवी ते मोहडानी लाल जेवी जाणेछे, सुयशने सीठ के० नाकना मेल समान जाणे, नाग्योदयने विष्टासमान जाणे, एवी जेनी रीत होय तेने बनारसीदास वदना करेछे ॥ ५७ ॥

हवे मध्यम पुरुषनी दशा बतावे छे·– अथ मध्यम पुरुष यथाः–

सवैया इकतीसाः– जैसे कोउ सुनट सुनाय ठग मूरखाय, चेरा नयो ठगनीके घेरामें रहतु है; ठगोरी उतरि गई तब ताहि सुधि नई, पखो परवस नाना संकट सहतु है तैसेही अनादिको मिथ्याति जीव जगतमें, मोले आठों जाम विसराम न गहतु है, ज्ञान कला नासी नयो अंतर उदासी पें तथापी उदै व्याधिसो समाधि न सहतु है ॥ ५८ ॥

अर्थ – जेम कोई स्वनावे सुनट होय ने तेने कोई ठग मले ने ते सुनटने कोई जडी मूली खवरावे, तेथी ते सुनट ठगनो चेलो थई जाय, अने ठगना घेरामां पड्यो रहे, पछी ते सुनटे जे मूली खाधेली तेनो असर नीकली जाय ने पाछो पोतानी शुद्धिमां आवे, तेवारे ते ठगने डुर्जन करी जाणे, पण पोते परवश पड्यो तेथी नाना प्रकारना संकट सहन कर्या करे छे, तेम अनादि कालनो मिथ्यात्वी जीव परवस पडेलो नाना प्रकारना संकट सहन करेछे, ने आठ प्रहर संसारमां विकल थई ने मोले, पण विश्राम लिये नही, एटलामां ज्ञान कलानो नास थयो, तेवारें अंतरमां उदासी थयो तो पण कर्मना उदयरूप व्याधी चडे समाधि लहेतो नथी, आश्रवमांज रहेछे ॥ ५८ ॥

हवे अधम पुरुषनी दशा दृष्टांत दईने दृढावे छे –अथ अधम पुरुष यथाः–

सवैया इकतीसाः– जैसें रांक पुरुषके नाये कानी कोडी धन, उलूवाके नाय

जैसे संझाई विहान है, कूकरके जाये ज्यो पिमोर जिरवानी मठा, सूकरके जाय ज्यो पुरीष पकवान है, वायसके जाये जैसे नींबकी निबोरी दाख, बालकके जाये दंत कथा ज्यों पुरान है; हिंसकके जाये जैसे हिंसामें धरम तैसे, मूरखके जाये सुन बंध निरवान है ॥ ५९ ॥

अर्थ – जेम रांक पुरुषने काणी कोडी छे तेहीज धन मनाय छे, अने जेम घुवडने सध्याकाळ प्रभात मनाय छे, अने कुकडाने पिंमोर जीरवानी के० गाय नें सतुं पाणी ते दहीनो घडो मनाय छे, अने सूकर के० सूअरने पुरीष के० विष्टा तेज पकवान मनायछे, अने कागडाने लींबोळी तेज द्राक्ष जेवी मनायछे, अने बाळकने दंत कथा के० लोकनी कथा छे तेज पुराण मनाय छे, ने हिंसकने हिंसा मांज धरम मनाय छे तेमज मूर्खने पुन्यबंध ते निरवाण के० मोक्षपद मनाय छे, ए अधम पुरुषनी दशा जाणवी ॥ ५९ ॥

हवे अधमाधम पुरुषनी दशा दृष्टांतेकरी देखाडेछे –अथ अधमाधम पुरुष यथा –

सवैया इकतीसा.– कुजरको देखि जैसे रोष करी भुंसे स्वान, रोष करे निर्धन विलोकि धनवंतको, रैनके जगैयाको विलोकि चोर रोष करे मिथ्यमति रोस करे सुनत सिद्धतको, हंसको विलोकी जैसे काग मनि रोष करे, अभिमानी रोष करै देखत महंतकों, सुकविकों देखि ज्यों कुकवि मन रोष करे त्योंही दुरजन रोष करै देखि संतको ॥ ६० ॥

अर्थ – जेम हाथी जोईने कुतरा रीशे भराईने भुकेछे, जेम निर्धन पुरुष धनवानने जोईने रीशे भराय छे, जेम राते जागनार पुरुषने जोईने चोर रीशे भराय छे, जेम मिथ्याती सिद्धांतने शांभळी रीशे भराय छे, जेम हंसने जोईने कागडो रीशे भराय छे, जेम महंतने जोईने अभिमानी रीश करे छे, जेम सुकवि के० सारा कविने जोईने कुकवि के० नठारो कवि रीशे बळे छे तेम अधमाधम पुरुष साधुने जोईने दुष्ट मन वडे रीशे भराय छे ॥ ६० ॥

हवे वळी अधमाधम पुरुषनी चाल कहेछे –अथ पुनः अधमाधम पुरुष वर्णनं.–

सवैया इकतीसा –सरलको सठ कहै वकताकों धींठ कहै, विनो करे तासो कहै धनको अधीन है, छमीको निबल कहै दमीको अदत्ती कहै, मधुर वचन बोलै तासो कहै दीन है, धरमीकों दभी निसप्रेहीकों गुमानी कहै, तिशना घटावै तासों कहै भागहीन है, जहा साधु गुण देखै तिन्हकों लगावै दोष, ऐसो कछु दुर्जनको हिरदो मलीन है ॥ ६१ ॥

अर्थ – सरल चित्तवालाने शठ के० मूर्ख कहे, वक्ता के० कथा कीर्तन वाच नारने धीठ कहे, विनय करनारने कहेके एतो धननी आधीनताथी करेछे, क्षमाव तने निरवल कहे, इंद्रिय दमन करनारने अदाता कहे, अने मधुर नाषण करना रने कहे एतो गरीब बीहामणो छे, धरमीने दंनी कहे, अने निस्प्रहीने अहंकारी कहे छे, तृष्णा छोडनारने नाग्यहीन कहे, ज्या एवां सरलतादिक गुण देखे त्यां दूषण लगाडे, एवुं डुर्जननुं हृदयु मलीन के०मेलुं होय छे. अने एवा डुर्जननेज अधमाधम पुरुषनी प्रकृति जाणवी ॥ ६१ ॥

हवे मिथ्यादृष्टीनी अहंबुद्धिनुं वर्णन करे छे – अथ मिथ्यादृष्टी वर्णनं –

चोपाई – में करता में कीन्ही कैसी; अब यो करो कहौ जो ऐसी, ए विपरीत नाव है जामें; सो वरते मिथ्यात दसामें ॥ ६२ ॥ दोहरा – अहं बुद्धि मिथ्या दसा, धरे सु मिथ्यावत; विकल नयो संसारमें, करे विलाप अनंत ॥ ६३ ॥

अर्थ.– हुं कर्त्ता छुं, आ वर्त्तमान कालमां केवी वात करुंछुं, नविष्य कालमां जेवी कहीस तेवी करीश, एवी अहं बुद्धी ए विपरीत नाव छे, अने ए नाव मिथ्या त दशाना छे ॥६२॥ जे एवी अहंबुद्धि छे तेज मिथ्यात दशा छे, अने ए मिथ्यातद शाने धारण करे, तेज मिथ्यावत केहेवाय छे, अने एवा पुरुषोज संसारनेविषे वि कल थका संसारमां नटकता डुःख सहता अनंत विलाप करेछे. ॥ ६३ ॥

हवे मूढ प्राणीनी व्यवस्था कही देखाडे छे – अथ मूढ व्यवस्था कथनः–

सवैया इकतीसा.–रविके उदोत अस्तहोत दिनदिन प्रति, अंजुलीके जीवन ज्यो जीवन घटतु है, कालके ग्रसत छिनछिन होत छीन तन, आरकेचलत मानो कावसो क टतु है, एते परि मूरख न खोजे परमारथको, स्वारथके हेतु भ्रम नारथ ठटतु है, लग्यो फिरे लोगनिसो पग्यो परजोगनिसो, विषे रस नोगनिसों नेकु न हटतु है ६४

जैसे मृग मत्त वृषादित्यकी तपतिमांहि तृषावत मृषा जल कारण अटतु है, तैसे नववासी मायाहीसो हित मानिमानि ठानिठानि भ्रमनूमि नाटक नटतु है; आगे को ढुकत धाय पाछे वछरा चराय, जैसे दृग हीन नर जेवरी वटतु है, तैसे मूढ चेतन सुकृत करतूति करै, रोवत हसत फल खोवत खटतु है. ॥ ६५ ॥

अर्थ.– सूर्यना उदयथी ते अस्तसुधीमां अंजुलीना पाणीनी परें आयुष्य घटतु जायछे, अने क्षण क्षणविषे काल जे छे ते शरीरने ग्रासेछे, तेथी शरीर क्षीण थायछे, ए रीते तन आर के० शरीर तरफ काल ग्रसी रह्योछे, एटले जेम शस्त्र कोई वस्तुने कापे छे तेम कालरूपी शस्त्र शरीरने कापेछे. एवु कार्य थई रह्युछे तोपण मूर्खजन जे छे

ते परमार्थने खोजतो नथी, पण पोताना स्वार्थने माटेज भ्रमना भारथने खेंची रहे छे, जोग केº परवस्तु जे काम क्रोधादिक ते साथे लागो फिरेछे, अने परपुद्गलजोग तेथी पग्यो केºहलि मली रहेछे, तेथी विषयरसने भोगवतां जरा पण हटतो नथी.

अर्थ.—वली जेम कोई जबरो मृग होयछे ते वृषादित्य केºवृषसक्रांतनो सूर्य एटलेजे छमास तेना तापनेविषे अती तृषावत थयो थको मृषा केºजूठी इच्छा थकी पाणीने माटे अटतु हे केºभटकेछे, तेवी रीते संसारी जीव परस्वरूप मायाजालनेविषे हेत राखीने एटले तेने हितकारी मानीने भ्रमरूपी भूमीनेविषे ठराव करी नटनी पेठे नाची रह्यो छे ते केहेवो छे तो जेवो कोई द्दगहीन केº आंखविनानो पुरुष होय ने ते दोरी वाटतो होय त्यां पासे वाछडुं होय ते दोरीने चावी नाखतो होय तेने ते जाणी शकतो नथी तेथी तेनी मेहनत व्यर्थ जायछे तेम मूढ प्राणी जे छे ते सुकृतनी क्रिया करेछे त्यारे रोवत हसत केº अरति अने रतियें करी क्रियाकरेछे तेथी ते करेली क्रियाना परम फलने खोई देयछे ॥ ६५ ॥

हवे फरी बंधना करनार मूढ विषयिनी अवस्था कहेछे —अथ मूढ विषयी वर्ननं —

सवैया इकतीसा -- लिये द्रिढ पेच फिरे लोटन कबूतरसो, उलटो अनादिको न कहो छुलटतु है, जाको फल दुःख ताही सातासो कहत सुख, सहित लपेटी असी धारासी चटतु है, ऐसे मूढ जन निज सपती न लखे क्योंही, मेरी मेरी मेरी निशिवासर रटतु है, याही ममतासों परमारथ विनसी जाइ, कांजीको फ़रस पाई दूध ज्यों फटतु है ॥ ६६ ॥

अर्थ — जेम लोटण खबुतर होय ते जो पांख बंध करीने पंच लाग्यो तेथी उलट पालट फरेछे, तेम मूढ प्राणी अनादि कालना कर्मबंध पेचमां पडेलोछे माटे अवलो मार्ग धरेछे, पण कोई रीते सवलो मार्ग धरतो नथी. अने जेनु फल दुःख छे एवा विषय भोगवडे जे कईक साता उपजे, तेने सुख मानेछे, जेम कोई मधे लपेटी तरवारनी धारने चाटे, जेमा मधनी मीठास थोडी होय ने तरवारनी धार ते मीठास चाखवा जतां जीभने छेदी नाखे तेनुं दुःख बहु थाय, तेम मूर्ख प्राणी पोतानी ज्ञानादिक सपतीने कदी ओलखतो नथी, पण परवस्तुने रात दिवस मारी मारी मानी रह्योछे, एज जूठी ममतावडे परमार्थ जाणवानुं विनास थई जायछे, जेम कांजीना पाणीना स्पर्शथी दूध फाटी जायछे, तेम ममताथी परमारथ बगडी जायछे. ॥ ६६ ॥

हवे मूढनी अहबुद्धिनी अवस्था कही बतावेछे —अथ पुन मूढ व्यवस्था —

सवैया इकतीसाः—रूपकी न झांक हिये करमको झांक पिये, ज्ञान दबि रह्यो मिर गांक जैसे घनमें, लोचनकी ढांकसों न मानै सदगुरु हांक, झोलै पराधीन मूढ रांक तिहूं पनमें, टांक इक मांसकी डलीसी तामें तीन फांक, तीनि कोसो श्रंक लिखि राख्यो काहु तनमें, तासों कहै नाक ताके राखिवेको करे कांक, लांकसो खरग बांधि बांक धरै मनमें. ॥ ६७ ॥

अर्थ—आत्मानुं रूप हृदयामां नथी दीठुं. तेथी कर्मनो झांक पीधो, एटले कर्मनो रस व्यापी गयो, तेणे करी आत्मानुं स्वरूप जे शुद्ध ज्ञान ते दबाई रह्यु, कोनी पेठे जेम घन के० मेघरूप वादळानेविषे चन्द्र ढंकाई रहेछे. तेम तथा ज्ञानरूप लोचन उपर मिथ्यात्वनी ढांक पडी तेथी सदगुरुनी हांक के० आज्ञा तेने मानतो नथी, अने मूर्ख पराधिन थको रांक वचन बोलेछे, अने त्रणे काळनेविषे निशंक रहेछे. हवे मूढता प्रगट करी बतावेछे जे नाकछे ते टांक के० एक मांसनी लीमरी छे ते नेविषे त्रण फांक छे ते प्रत्यक्ष प्रमाणे देखियें छैये, ते त्रण फांक केवा देखायछे ते कहेछे, ते जाणे त्रणनो आंक त्रण फांकवाळो कोइए शरीरमाज लखी राख्योछे, ते औदारिक अवयवने नाक कहेछे, अने ते नाकने राखवाने कांक के० लडाई करे ने विचारे जे मरीजईश तो पण नाक तो रहेसे एवा विचारथी लडाई करेछे खड्ग धरेछे अने मनमां वांक धरीज राखेछे. ॥ ६७ ॥

हवे मूढना विषय रागीपणानी दशा कहे छे—अथ मूढ विषय वरननं:—

सवैया इकतीसा—जैसे कोउ कूकर क्षुधित सूके हाड चावे, हाडनिकी कोर चिहूं ओर चुभे मुखमें; गाल तालू रस मांस मूढनिको मांस फाटे चाटे निज रुधिर मगन स्वादसुखमे, तैसे मूढ विषयी पुरुष रति रीत ठाने, तामें चित साने हित माने खेद दुखमें, देखै परतछ बल हानी मल मूत खानी गहे न गिलानि पगी रहे रागरु खमे॥६८

अर्थ—जेम कोई कुतरो भुख्यो थको हाडकाने चावे छे, ते हाडकुं सूकुं होय छे, तो पण तेने चारे तरफ फेरवीने ते चाटे छे, ने तेम चाटतां तेना गाल जीभ ने तालवानी चामडी फाटे छे, अने तेथी लोही नीकले छे ने तेज पोताना लोहीना स्वादथी मगन थई जाय छे, तेमज जे मूढ विषयी पुरुष छे, ते रती के० स्त्री पुरुष संयोगनी रीति जे श्रृंगार रस तेनेविषे मगन रहे छे, अने तेथी खेद दुःख उपजे छे, तो पण तेमां सुख माने छे, अने ते कार्यथी प्रत्यक्ष पणे बळनी हाणी थती जाणे छे, तथा तेने मल मूत्रनी खाण जुए छे. तेम छतां तेमां गि

ज्ञानपणुं ग्रहण करतो नथी, डुगंछा पामतो नथी, अने रागरूप रुख के० वृक्षमां मली रहेछे, तेनो शोक आणतो नथी, उलटो तेमां चित लगावी आनंद मानेछे॥ ६८॥

हवे ससारीनी विकलता कहीने साधु जननी व्यवस्था कहे छे

अथ संसारी तथा मुनी व्यवस्था कथन –

अडिल्ल छंद – सदा करमसो भिन्न सहज चेतन कह्यो, मोह विकलता मानि मिथ्याती व्है रह्यो, करै विकल्प अनत, अहमति धारिके, सो मुनि जो थिर होइ ममत्त निवारि के ॥ ६९ ॥

अर्थ – निश्चयनय वडे सहजरूपे चेतन छे, ते सदा कर्मथी भिन्न कह्यु छे, पण व्यवहारमा पडीने मोहनुं विकलपणु मानीने मिथ्यामती थई रह्यो छे, तेथी मन मा अनत विकल्प धरीने अहबुद्धि धारी रह्यो छे, अने जेणे ममत्व निवारण कीधुं ने स्थिरता पाम्यो तेज साधु थयो ॥ ६९ ॥

हवे मिथ्यात भावथकी व्यवहारनु असंख्यातपणुं कहे छे –

अथ मिथ्यात्वभाव व्यवहार एकत्व कथन –

सवैया इकतीसा – असंख्यात लोक परवान जो मिथ्यात भाव तेई, व्यवहार भाव केवली उकत है, जिन्हके मिथ्यात गयो सम्यक दरस भयो, ते नियत लीन विवहारसो मुकत है, निरविकलप निरुपाधि आतम समाधि, साधि जे सगुन मो ख पथको ढुकत है, तेई जीव परम दशामें थिररूप व्है के, धरममे ढुके न करम सो रुकत है ॥ ७० ॥

अर्थ – एक लोकाकाश छे, तेनी असख्यातपणे कल्पना करीये, तेना प्रदेश असंख्यात छे, तेप्रमाणेज मिथ्यात भाव छे जीवना अध्यवसाय स्थान छे, ए व्य वहारभावे केवलीनुं केहेवु छे, अने जेनुं मिथ्यात गयु सम्यक् दर्शन थयु निश्चय लीन थयो, अने व्यवहारथी मुक्त थाय जेमा विकल्प नथी ते निरविकल्प, अने जेमा उपाधि नही ते निरुपाधि, एवी समाधिथी जे सगुण थईने एटले ज्ञानादिक गुणमय थईने मोक्ष मार्गने जुए छे ते जीव परम दशामा स्थिर रूप थईने आ त्मिक धर्ममा ढुके पण कर्मथी रोकाय नही॥ ७० ॥

हवे गुरुने शिष्य प्रश्न पूछे छे – अथ शिष्य प्रश्न कथन –

कवित्तछंद – जे जे मोह करमकी परिनति, बंध निदान कही तुम सब, संतत भिन्न शुद्ध चेतनसो, तिन्हिको मूल हेतु कहु अब्ब, कै यह सहज जीवको कौतुक, कै नि मित्त है पुग्गल दब, सीस नवाइ शिष्य इम पूछत, कहै सुगुरु उत्तर सुनु भव॥७१॥

अर्थः– मोह कर्मनी जे जे परिनति छे, एटले राग द्वेषादिक छे, ते तो तमे सर्व बंधनुं निदान कह्यु, अने एतो निरंतर शुद्ध चेतन थकी भिन्न छे, ते माटे ए बंधनो हवे मूल हेतु कहो; ए बंध थाय छे ते शुं जीवने सहज कौतुक छे, के एने पुद्गल द्रव्य निमित्त छे ते कहो एम शिष्य माथुं नमावीने गुरुने पूछे छे हवे गुरु उत्तर आपे छे के हे भव्य प्राणी एनु उत्तर सांभलो ॥ ७१ ॥

अथ गुरु वचनः–

सवैया इकतीसाः– जैसे नाना वरन पुरी बनाइ दीजे हेठि उज्जल विमल मनु सूरज करांति है, उज्जलता भासै जब वस्तुको विचार कीजे, पुरीकी झलकसो वरन भांति भांति है; तैसे जीव दरवको पुग्गल निमित्त रूप, ताकी ममता सो मोह मदिराकी भांति है, भेद ज्ञान दृष्टिसो सुभाव साधि लीजे तहां, साचि शुद्ध चेतना अवाची सुख शांति है ॥ ७२ ॥

अर्थ.– जेम सूर्यकांति मणी छे तेम बीजो काश्मिरी पाषाण तेवोज छे, ने ते महा उज्वल छे, ने तेनी नीचे तरेतरेना रंगनी पुरी बनावी आपिये त्यारे तेमां भात भातनो रंग देखाय, पण ज्यारे ते सूर्यकांति मणीना स्वभावनो विचार करिये, तारे तो तेनी कांति जे उज्वल छे, तेज मनमां आवे, अने दीठामां तो नीचेनी बनावेली रंगनी पुरणीनी झलक पडेछे तेथीज तरेवार रंग वरण देखायछे, तेरीते जीव द्रव्यनी अशुद्ध दशानुं निमित्त कारण पुद्गल द्रव्य छे, तेनी ममताथी मोह रूप मदिरानुं उन्मत्तपणुं छे, अने ज्यारे जड चेतननी भेद ज्ञान दृष्टीवडे चेतननो स्वभाव साधीये, त्यारे साची शुद्ध चेतनाज भासे. अने अवाच के० वचन गोचर नही, एवी रीतनी सुख शांति छे तेज भासे ॥ ७२ ॥

हवे वस्तुना संयोगथी स्वभावमां भेद पडेछे, ते उपर दृष्टांत आपेछे.–

अथ संयोगिका स्वभाव वर्णन –

सवैया इकतीसाः– जैसे महिमंडलमें नदीको प्रवाह एक ताहीमें अनेक भांति नीरकी ढरनि है, पाथरको जोर तहां धारकी मरोरि होति काकरिकी खानि तहां झागकी झरनि है, पौनकी झकोर तहां चंचल तरंग उठे, भूमिकी निचानि तहां भौरकी परनि है; तैसे एक आतमा अनंत रस पुदगल दुहूकी संयोगमें विभावकी भरनि है ॥ ७३ ॥

अर्थः– जेम पृथ्वी मंडल उपर नदीनो प्रवाह एकरूप छे, अने तेज नदीना प्रवाहमां पाणीनुं व्हेवुं अनेक तरेनुं छे, जे ठेकाणे नदीना प्रवाहमां मोटा मोटा

पथरा आवी अडेला होय त्यां धार मरडाईने पडे छे, अने जांहां कांकरी घणी हो य तां झागनी झरनी के० झाग एटले पाणीना जरा ननकी उठेछे अने जांहां पव ननी झकोर चालती होय तांहां चचल तरंग उठेछे, अने जे ठेकाणे जमीन नीची होयछे तांहा नोर पडेछे वमल थायछे, तेम आत्मद्रव्य छे, तेने पुद्गल द्रव्यनो सं योग छे अने रस जे छे ते पट गुणी हानी वृद्धीथी अनत छे, तेनो सयोग थये आ त्मानेविषे विनावनी नरणी थायछे ॥ ३३ ॥

हवे आत्मा अने शरीर एक मेक बंधाई रह्या छे पण लक्षण नेद जुदा जुदाछे ते बतावे छे -- अथ आत्मशरीर लछन निन्न कथन --

दोहरा -- चेतन लछन आतमा, जड लछन तन जाल, तनकी ममता त्या गि के, लीजें चेतन चाल ॥ ३४ ॥

अर्थ.-- आत्मानुं चेतन लक्षण छे शरीरनुं जड लक्षण छे, तेथी शरीरनी म मता गोमीने चेतननुं शुद्ध ज्ञानपणुं तेनुं ग्रहण करी लेवु ॥ ३४ ॥

हवे नि.केवल आत्मानी शुद्ध चाल कहेछे -- अथ आत्मा यथा.--

सवैया तेईसा -- जो जगकी करनी सब ठानत, जो जग जानत जोवत जोई, देह प्रमान पे देहसुं दूसरो देह अचेतन चेतन सोई, देह धरे प्रच्छु देहसुं निन्न रहे पर छन्न लखै नहि कोई, लछन वेदि विचछन बूझत अछनिसो परतछ न होई ॥३५॥

अर्थ -- जे पदार्थ सर्व जगतनी करणी करेछे, एटले चतुर्गति गमन करेछे, अ ने जे जगतने जाणेछे, अने जोवत के० देखेछे, पोतानी देहने प्रमाणे छे, पण देहथी ते जुदो छे. देह अचेतन पिंड छे, अने आत्मा चेतनपिंड छे देहधारी छे, प्रच्छु छे पण देहथी मिन्न छे देहनेविषे प्रछन्न के० ढकाई रह्यो छे, एने कोई ल खतो नथी, पण एना जे लक्षण छे तेने वेदी के० जाणीने विचक्षण पुरुष एने उ लखेछे एवो ए आत्मा अक्ष के० इंद्रियथी प्रत्यक्ष नथी ॥ ३५ ॥

हवे देहनी चाली कहेछे -- अथ देह यथा --

सवैया तेईसा -- देह अचेतन प्रेत दरी रज रेत नरी मल खेतकी क्यारी; व्याधिकी पोट अराधिकी उट उपाधिकी जोट समाधिसों न्यारी, रे जिय देह करे सुख हानि इते परि तोहि तु लागत प्यारी, देह तु तोहि तजेगि निदान पि तूंहि त जे क्युं न देहकि यारी ॥ ३६ ॥

अर्थ -- देह अचेतन छे, प्रेत दरी के० जमतारूप प्रेतनी गुंफा छे रज के० लोही, रेत के० वीर्य ते थकी नरेली छे, अने मलरूप खेतरनी क्यारी छे. व्याधी

रोगनी पोट छे, आराध के० आत्माने ढुपावाने उंट छे अने उपाधिनी जोट के० मेलारूप छे, एने विषे असमाधिज रहेछे, समाधि रेती नथी माटे अरे जीव ए देह ते सुखनो नाश करे छे एवी छे, तोपण तने ए देह प्यारी लागेछे. अरे जीव तूं समज के ए देह निदान तनेज तजशे पण तु ए देहनी यारीनो त्याग करतो नथी.

दोहरा:— सुनु प्रानी सदगुरु कहै, देह खेदकी खानि; धरै सहज डुख दोष कों, करै मोछकी हानि. ॥ ७७ ॥

अर्थः-- सदगुरु कहेछे के अरे प्राणी सांजलो देह छे ते खेद के० धुःखनी खाण छे. एनो सहज स्वजाव वात पित्त कफ रूप डु ख दोषने धरनारो छे. अने मोक्षनी हाणी करे छे. ॥ ७७ ॥

हवे देहनुं वर्णन करेछेः-- अथ देह वर्णनंः--

सवैया इकतीसा:— रेतकीसी गढी किधों मढी है मसान केसी अंदर अंधेरी जैसी कंदरा है सैलकी, ऊपरकी चमक दमक पट नूखनकी, धोखे लागे नली जैसी कली है कनैलकी; औगुनकी ओंडी महा नोंडी मोहकी कनोंडी, मायाकी मसूरति है मूरति है मैलकी, ऐसी देह याहिके सनेह याकी संगतिसो व्है रही हमारी मति कोलू केसे बैलकी ॥७८॥ गैर गैर रकतके कुंम केसनिके कूंम, हाम निसों नरी जैसे थरी है चुरेलकी, थोरेसे धकाके लगे ऐसे फट जाइ मानो, कागदकी पुरी किधों चादर है चैलकी; सूचै भ्रम वानि गनि मूढनिसों पहिचानि करै सुखहानि अरुखानि वदफैलकी, ऐसी देह याहिके सनेह याकी संगतिसों व्हैं रही हमारी मति कोलू केसे बैलकी. ॥ ७९ ॥

अर्थ — जाणे रेतीनी गढी बाधी होय के मसाणनी मढी एटले अपवित्र ठेकाणे हाड मासनुं एक घरुं कर्युं होय, वली जेनी अंदर सेल के० पहाडनी कदर के० गुफा जेवुं अंधारूं छे, एवा अपवित्र देहरूप स्थानछे तेउपर नूषणना चमक दमकथी शोने छे, धोखे के० फूग नजकाथी देह नली लागे छे. ते उपर दृष्टांत छे के, जेम कनेरनी कली उपरथी सुंदर देखाय छे, पण तेमां अंदर बिलकुल सुवास होती नथी; तेथी उचाटकारी लागे छे, अवगुणनी उंडी छे महाजुंडी छे, अने मोहनी कनोडी के० मोहनी काणी आंख छे, तेथी सूजतुं नथी, अने मायानी मसूरति के० मायानो समुदाय छे; एवी मेलनी मूरती ए देह छे, एना स्नेहथी अने सगतथी अमारी मति शेलडी पीलवानुं कोल्हु तेना बलद सरखी बनी गई छे॥७८॥

वली ए देहनेविषे ठेकाणे ठेकाणे लोहीनां कुंमला छे, ने अपवित्र केशनी कुंम

छे, तेमा हाम्फां नरेला छे जेम चुडेल व्यंतरीनुं स्थानक होय तेवी ए देह छे. थोडो धको लागवाथी ए देह एवी फुटी जाय छे के, जेम कागलनी पुडी अने जुं नी मेली चादर छे, ते जेम जरा टकोराथी फाटी जाय, तेम देह फाटी जाय छे, एवी ए देहनी ममताथी भ्रम वाणी के० मिथ्यावाणी सुचे के० कहे, अने मूढ लोक एनी पिछान राखे छे, अने ए देह सुखनी हानी करता छे, अने बदफेलीनी खाण छे. एवी ए देहना स्नेह तथा एनी सोबत थकी अमारी बुद्धि शेलडी पीलवा ना कोल्हाना बलदनी गति जेवी थई गई छे ॥ ७९ ॥

हवे कोल्हुना बलदनी अवस्था अने तेनी बराबर संसारी जीवनी गती छे, एवु स्पष्ट करी बतावे छे, अथ कोल्हुका बैलकी अरु संसारी जीव समानरूप कथन –

सवैया इकतीसा –पाटी बंधे लोचनसो सकुचे दबोचनिसो कोचनिकोसोचसोनि वेदे खेद तनको, धाइवोही धंधा अरु कंधा माहि लग्यो जोत, वार वार आरस है कायर है मनको, भूखसहे प्यास सहे दुर्जनको त्रास सहे, थिरता न गहे न उ सास लहे छिनको, पराधीन घूमे जैसो कोल्हुको कमेरो बैल तैसोइ स्वभाव भै या जगवासी जनको ॥ ८० ॥

अर्थ – जेनी आख उपर पाटी बाधी छे दबोच के० पगथी ठेलवुं, तेथी संको चाय छे, अने परोणानी आरना धोंच वागे छे, तेनी सोचनाथी शरीरने खंचवा दे न ही, ने दोडतो फिरे पोताना धधामा धावतोज रहे, ने खांधे जोतर लागो रहे छे, वार वार आरनो मार पडे छे, ते सहन कर्या करे, अने मननो कायर छे, भूखने पण वेठे छे, अने दुर्जननो त्रासपण खमे छे, अने स्थिरता पकडतो नथी, क्षण वार पण सुखे मोढेथी स्वास लई शकतो नथी, एरीते पराधीन थको जेम कोल्हुनो कमेरो, के० काम करनारो बलद घुमेछे, तेम जगत वासी लोक घुमे छे, अर्थात हे भाई कोल्हुना बलद सरखो तेमनो पण स्वभाव छे ॥ ८० ॥

हवे जगतवासी जीवनी व्यवस्था कहे छे – अथ जगतवासी यथा –

सवैया इकतीसा – जगतमें डोले जगतवासी नर रूप धरी, प्रेतकैसे दीप किधो रेत केसे धुहे है, दीसे पटभूखन आडंबरसो निके फिरे फीके छिनमाझि सांझी अवर ज्यो सुहे है, मोह के अनल दगे मायाकी मनीसो पगे दाभकी अनीसों लगे ओसकेसे फुहे है, धरमकी बुझि नाही उरझे भरम माहि नाचि नाचि मर जाहि मरीकेसे चुहे है ॥ ८१ ॥

अर्थ.– जगतवासी जीव मनुष्यरूप धरीने डोली रह्या छे, ए केवा छे जाणियें

प्रेतना दीप छे, ते जेम जलदी मटी जाय छे, तेम ए पण समजवा. वली रेति ना घुमाडा जेवा छे, तथा वस्त्र नूपणना आडंबरथी शोजायमान देखाय छे, अने कृणेकमां फीका थई जाय छे, जेम सांज समे आकाशमां वादल रंग वदले छे, तेम जाणवा वली मोहनी अगनीथी दाजे छे, ने मायानी मनी के० पोतापणुं तेथी पगे के० व्यापी रह्या छे, जाणिये डाजनी अणीउपर लागेला पाणीना बिंदु सर खा छे, गारना बिंदु जेवा छे धरमनी ओलखाण जेने नथी अने भ्रमनेविषे अरुजी रह्या छे, जेम मरी उलपादनां उदरडा नाची नाची ने मरी जाय छे. तेम ए सं सारी जीव नाची नाचीने मरण पामेछे ॥ ७१ ॥

हवे जगतवासीनी मोह व्यवस्था कहेछे·— अथ जगत व्यवस्था कथन·—

सवैया इकतीसा·— जासो तूं कहत यह संपदा हमारी सोतो, साधनि अमारी ऐसे जैसे नाक सिनकी; जासो तूं कहत हम पुन्य जोग पाई सोतो, नरककी साई है बमाई वेढ दिनकी, घेरा मांहि पर्यो तू विचारे सुख आखिन्हिको, माखि नके चूंटत मिठाई जैसे जिनकी; एते परि होहि न उदासी जगवासी जीव, जगमें असाता है न साता एक छिनकी ॥ ७२ ॥

अर्थ — अरे प्राणी जेने तूं कहेछे के आ मारी संपत्ति छे, तेने तो साधु लोके एवी रीते नाखी दीधीछे, के जेम नाकना मेलने नाखी देयछे. अने जे बडाईने तु क हेछे के पुन्यना जोगथी हुं पाम्यो छु ते तो नरकनी सहायी छे, जे राजादिकनी साहेबीछे. ते दोड दिवसनी छे ए परीवारना घेरामां तु पड्यो थको आंखनुं सुख समजे छे, पण ते मिठाईनी उपर माखीनी पेठे-टोलानो नणनणाट थई रहे तेम परीवारनो घेरोछे एवुं छतां जगवासी जीव उदास थतो नथी साचु जो जोइये तो जगतनेविषे असाताज छे, एक कृणमात्र पण शाता नथी. ॥ ७२ ॥

दोहरा·— यह जगवासी यह जगत, इनसो तोहि न काज; तेरे घटमें जग व सैं, तामें तेरो राज ॥ ७३ ॥

अर्थ — ए जे पुर्वे वखाण्या एवा जगतवासी लोक छे, अने ए लोकोनो ज्या वास छे, तेने जगत जाणवु, ए साथे संबंध राखवानुं तारुं काम नथी, पण तारा घटनेविषेज जगतनो वास छे, अने ते जगतमां तारुं राज्य छे ॥ ७३ ॥

हवे जे पिंडे ते ब्रह्मांडे ए वात साची छे, एवुं सिद्ध करी आपेछे —

अथ पिंड ब्रह्मांड वर्नन.—

सवैया इकतीसा·— याही नर पिंडमे विराजे त्रिभुवन थिति, याहिमें त्रिविध प

रिणाम रूप सृष्टि है, याहिमे करमकी उपाधि दुःख दावानल, याहिमे समाधि सुख वारिदकी वृष्टि है, यामे करतार करतूति याहिमें विभूति, यामें भोग याहीमे वियोग यामें घृष्टि है, याहिमें विलास सब गर्भित गुपतरूप, ताहिको प्रगट जाके अंतर सु दृष्टि है ॥ ७४ ॥

अर्थ.—मनुष्य पिंडनेविषे कटीनी नीचे पाताल लोकछे, नाभि ते तिर्यक लोकछे, ते उपर उर्ध्व लोकछे, एवी त्रिभुवननी स्थिति जाणवी, अने एनेविषेज कईक परिणाम उपजे छे, ने कईक नाश पामे छे, ने कई स्थिर छे, एवी त्रिविध सृष्टि बनी रही छे, अने एज पिंडमा आत्माने कर्मनी उपाधि वलगी छे, तेज दुखकारी दावानल के० अग्निनो समुद्र लाग्यो छे, अने एज पिंडमां कोईवारे समाधि सुख आवेछे तेज वादलनी वृष्टी जाणवी, ते दावानल उपर मेघनी वृष्टी छे, एज पिंडमा कर्मनो कर्त्ता पुरुष छे, एज पिंडमा कर्त्तानी क्रिया छे, ए पिंडमांज विभूति के० ज्ञानादिक संपत्ति छे, एज पिंडमा कर्मनो भोग ने कर्मनो वियोग छे, अने एज पिंडमा आत्मानु घृष्ट के० वलन जे शुभाशुभ गुणोमां घमडाई रहेवुं ते छे, ए रीते ए पिंडमा गर्भित के० मध्यभागमा गुप्तरूपे सर्व विलास छे पण जेवा अंतरमा सुदृष्टीनो प्रकाश छे, तेने सर्व विलास प्रत्यक्षपणे जणाय छे ॥ ७४ ॥

हवे ए वातनो उपदेश गुरु कहे छे — अथ गुरूपदेश कथन.—

सवैया तेईसा — रे रुचिवंत पचारि कहे गुरु, तू अपनो पद बूझत नाही, खोज हिये निज चेतन लछन है निजमे निज गूझत नाही, सिद्ध सुछंद सदा अति उज्जल, मायके फंद अरूझत नांही, तोर सरूप न दुंदकि दोहिमें तोहिमें है तुहि सूझत नाही ॥ ७५ ॥

अर्थ — पचारी के० बोलावीने गुरु कहे छे, के रे रुचिवंत भव्य, तू पोतानुं पद के० स्थान तेने जाणतो नथी पोतानुं चेतन लक्षण हृदयामा खोज, ए पोतानुं लक्षण पोताने विषे छे ते गूझत के० गुप्त नथी, तारू स्वरूप सिद्ध समान छे स्वछंद के० निज आधीन छे, सदा अति निर्मल छे, पण मायानी जालना फंदमा पड्यु छे, तेमांथी छूटी शकतो [illegible] स्वरूप द्वंद्वनेविषे नथी एटले भ्रम जालनी द्विविध दशामा नथी, तार[illegible] तने सूजतुं [illegible] ॥ ७५ ॥

हवे [illegible] वडे [illegible] ते समा[illegible]

ज्ञान [illegible] —

सवैया ते[illegible] [illegible] के, के

इ प्रनाम करै गढि मूरति, केइ पहार चढे चढि छींके, केइ कहे असमान कैं ऊपरि, केइ कहे प्रभु हेटि जमींके; मेरो धनी नहि दूरदिशांतर मोमहि है मुहि सूजतनीके.

अर्थ – कोई पोताना परमेश्वरने ओळखवाने उदासी थई बेसी रहे छे, कोई कई क्षेत्रनेविषे जतो रहे छे, कोई परमेश्वरनी घडेली मूरतिने प्रणाम करे छे, कोई परमेश्वरने पामवाने छीकामां बेसी पर्वतने उपर चढे छे, कोई परमेश्वरने आस्मान उपर छे एवु कहे छे, कोई कहे छे के, परमेश्वर जमीननी नीचे छे, ए कुरानवाळानी श्रद्धा छे, पण एविषे मारो निश्चय तो ए छे के मारो धणी तो काई दूर देश नथी, पण माराविषेज छे. एम अनुभवथी मने सारुं मालम पडे छे ॥ ७६॥

दोहराः– कहै सुगुरु जो समकिती, परम उदासी होइ, सुथिर चित्त अनुभौ करै, यह पद परसै सोइ ॥ ७७ ॥

अर्थ– सद्गुरु कहे छे के जे समकिती होय ते परम उदासी रूप थई चित्तने स्थिर राखीने निज अनुभव अभ्यासथी पोताना पदने पामे ॥ ७७ ॥

हवे मननी चंचळता दर्शावी तेने स्थिर केम राखवु ते उपदेशे छे.–

अथ मन स्वरूप कथन–

सवैया इकतीसा – छिनमें प्रवीन छिनहीमें मायासौं मलीन, छिनकमें दीन छिन मांहि जेसो शक्र है, लिये दोर धूप छिन छिनमें अनंतरूप कोलाहल ठानत मथानकोसो तक्र है, नट कोसो थार किधों हार है रहट कोसो नदी कोसो भौर कि कुंभार कोसो चक्र है, ऐसो मन भ्रामक सुथिर आजु केसो होइ ओरहिको चचल अनादिहीको वक्र है. ॥ ७८ ॥ धायो सदा काल पै न पायो कहू साचो सुख रूपसो विमुख दुख कूपवास वसा है, धरमको घाती अधरमको संघाती महा, कुरफाती जाकी संनिपातीकीसी दसा है, मायाको ऊपटि गहै कायासो लपटि रहै, भूल्यो भ्रम भीरमें बहीरकोसो ससा है, ऐसो मन चचल पताका कोसो अंचल सु ज्ञानके जगेसे निरवान पथ धसा है. ॥ ७९ ॥

अर्थ – आ मन क्षणमां प्रवीण थायछे, क्षणमां मायानेविषे मलीन थायछे, क्षणमा दीन दशा धरेछे, क्षणमा शक्र के० इंद्र जेवुं बनेछे, क्षणमा दोड धाम करेछे, क्षणमां अनंतरूप धरे छे, जेम दहीने वलोवता कुलाहल थायछे, तेवु कुलाहल ए मन करेछे, वळी नट जे नाचनार घुमे तवुं, के अरहटनी माळा घुमे तेवुं, के नदीनो वमळ घुमेछे तेवुं, अथवा कुंभारनुं चक्र फरेछे तेवुं कहुं, एवो सदा काळ मननो भ्रामक स्वभाव छे, एवु ए मन आज केम स्थिर थाय? जाले चच

ल अने अनादि कालथी वाकुं चालनारुं मन छे वली केवुं छे? ॥८८॥ हमेशा दोडतु फरेछे, पण एने किहाय साचु सुख प्राप्त थतु नथी, पोताना समाधिसुखथी विमुख थयुछे, अने दु खरूप कूप वासमा वस्युं छे, वली ए मन धर्मनुं घाती छे, अने अधर्मनुं संघाती छे, एवुं महा कुराफाती छे, ए मननी दशा तो जेम कोई पुरुषने सनेपात थयो होय तेना सरखी छे. द्रोह तथा वचनाने जट ग्रही लिये ने कायाना मोहथी मगन रहे, ने भ्रम जालमां पक्षी गुलुंज फरे, जेम कटकनी जीममां ससलु आवी पडे ने जमतु फरे, तेवुं मन छे ने पताका के० ध्वजा तेना अंचल के० छेडानी परे जाणवु. ते ज्यारे ज्ञान प्रगटे त्यारे निरवाण के० मोक्ष मार्ग तेने विषे गमन करे एवु छे ॥ ८९ ॥

दोहरा.— जो मन विषय कषायमे, वरते चचल सोइ, जो मन ध्यान विचार सो, रुके सु अविचल होइ ॥ ९० ॥ ताते विषय कषायसो, फेरि सु मनकी वानि, शुद्धातम अनुभोविषे, कीजे अविचल आनि ॥ ९१ ॥

अर्थ·— जो मन विषय कषायरूप राग द्वेषमां वर्त्ते तो चचल जाणवु अने जो ए मन राग द्वेष छांडी ध्यान विचारथी रोक्युं रहे तो अविचल जाणवु ॥ ९० ॥ माटे विषय कषायमा मननी लागणीछे तेने काढी निज शुद्धात्मना अनुभवमा लगाडीने आ मनने अविचल करियें ॥ ९१ ॥

हवे मन स्थिर करवाने आत्मानो विचार करवो ते कहेछे —

अथ विचार शिक्षा कथनं —

सवैया इकतीसा —अलख अमूरति अरूपी अविनासी अज, निराधार निगम निरजन निरंध है, नानारूप भेप धरे भेप को न लेस धरे, चेतन प्रदेस धरे चेतनाको पंध है, मोह धरे मोहीसो विराजे तोमे तोहीसो न तोहिसो न मोहीसो निरागी निरबंध है, ऐसो चिदानद याही घटमे निकट तेरे, ताही तू विचार मन और सर्व धंध है ॥ ९२ ॥

अर्थ.— ए आत्मा अलक्ष छे, अमूरति छे, अरूपी छे, अविनाशीछे अज के० जन्म्यो नही एवो छे, अने जेने कोईनो आधार नही, ज्ञानरूपी छे, तथा रंगविनानो छे, ने छिद्र विनानो छे, व्यवहारमा जोईये तो नाना प्रकारना वेष धरनारो छे, निश्चयमा जोईये तो वेपनो लेश धरे नही मात्र चेतनाना प्रदेशनुं धारण करनारो छे, अने चेतनानो पंध के० पुजरूप छे, ए उपदेश मनने बाह्यात्मानो छे, ते बाह्यात्मा मनने कहे छे के, ए चिदानद जेछे ते राजाछे, ने आ पिंडनो मोह धरेछे, अने हे मन ए चिदानंद

तारामां ताराजेवो विराजे छे, पण निश्चेनयथकी तारेविषे ने मारेविषे एने मोह नथी, एवुं निरागी निरबंध छे, एवो जे चिदानंद जगवान छे, ते अरे मन जे घट मांहे जिहां तु वसेछे तेज घटमां ते पण वसेछे माटे ते ईश्वरनोज विचार तुं कर, बीजो विचार सर्व दंद रूपछे. ॥ ए२ ॥

हवे ए चिदानंदनो जे रीते शुद्धानुजव थाय, ते रीते मनने उपदेश करेछे.—

अथ शुद्धानुजव शिक्षा कथनः—

सवैया इकतीसा.— प्रथम सु दृष्टिसो सरीररूप कीजे निन्न तामें और सूछम शरीर निन्न मानियें, अष्ट कर्मजावकी उपाधि सोई किजे निन्न ताहुमें सुबुद्धिको विलास निन्न जानिये; तामें प्रज्ञु चेतन विराजित अखंमरूप, वहे श्रुत ज्ञानके प्रवान ठीक आनिये, वाहिको विचार करि वाहिमें मगन हुजे, वाको पद साधिवेकों ऐसी विधि गनिये ॥ ए३ ॥

अर्थः—प्रथम सम्यक् दृष्टिवडे शरीररूप बाह्यात्मा निन्न राखवो, ते बाह्यात्मा नेविषे बीजुं सूक्ष्म शरीर कर्म संबंधी अंतरात्मा छे ते पण निन्न जाणवो, ते अंतरात्माथी परमात्माना ज्ञान दर्शनतुं आछादन थायछे. एवु अष्ट प्रकारनुं कर्म तेना जावनी उपाधि ते पण निन्न जाणवी, अने ते अंतरात्मानेविषे सुबुद्धिनो विलास जे नेद ज्ञानादिक ते पण निन्न जाणीये, अने ते सुबुद्धि विलासमा चेतनरूपी प्रज्ञु जे छे ते अखंमरूपे विराजे छे, अने ते चेतन श्रुत ज्ञानना प्रमाणथी हृदयमां सारीपठे ठराविये, ए रीते हे मन तुं तेनाज विचारमां मग्न रेजे, ने ते चेतननुं पद साधवाने एटले मोक्ष मार्ग मेहवाने एज विधी युक्त छे एम जाणजे ॥ ए३ ॥

हवे ज्ञाता जीवनुं सरूप वर्णवे छे.— अथ ज्ञानी जीव कथन —

चोपाई.— इहि विधि वस्तु व्यवस्था जाने, रागादिक निजरूप न माने; तातें ज्ञानवंत जगमांही, करम बंधको करता नाही. ॥ ए४ ॥

अर्थ.— ए रीते वस्तुनी व्यवस्था जाणे अने राग द्वेषादिक जे जाव छे, तेने पोतानु रूप न माने, तेणे करीने ज्ञानवतने जगतमां कर्म बंधनो कर्त्ता कह्यो नथी आठ कर्म तेने बंध करी शकता नथी ॥ ए४ ॥

हवे ज्ञातानी क्रिया कहे छे.— अथ ज्ञाताकी क्रिया कथनं.—

सवैया इकतीसा.—ज्ञानी जेद ज्ञानसों विलेछि पुदगल कर्म, आतमाके धर्मसों निरालो करि मानतो; ताको मूल कारन अशुद्ध राग जाव ताके, नासिवेको शुद्ध अनुजौ अज्यास गनतो, याही अनुक्रम पररूप निन्न बंध त्यागि, आपुमाहि अ

पनो सुनाच गहि आनतो, साधि शिवचाल निरबंध होतु तिहू काल, केवल विलोक पाई लोकालोक जानतो ॥ ९५ ॥

अर्थ – ज्ञाता होय ते भेद ज्ञानवडे पुदगलिक कर्मनुं विलक्षण केम करे ते कहे छे आत्मिक धर्मथी पुदगलिक धर्मने जूदो करी जाणे, एम विलक्षण करे, अने ते पुदगल धर्मनु मूल कारण अशुद्ध रागद्वेषादिक भाव छे, तेनो नाश करवाने शुद्ध अनुभव अभ्यास जे रीते पूर्वे कह्यो ते प्रमाणे अवस्था देखी अभ्यास राखे, ए रीते अनुक्रमे प्रथम सुदृष्टिथी शरीररूप भिन्न करवु, ए अनुक्रमे पूर्व संबंधथी अनादि कर्म बंधने त्यागीने पोतानेविषे पोतानोज ज्ञानादिक स्वभाव ग्रहण करे, एम शिव पदनी साधना करीने त्रणे काल निर्बंध थाय, तेवो थई केवल ज्ञान पामीने लोकालोकने जाणनार थाय ॥ ९५ ॥

हवे सम्यक्त धारीनुं पराक्रम कही बतावे छे.–अथ सम्यक्तधारी वैभव वर्णन –

सवैया इकतीसा – जैसे कोउ हिसक अजान महा बलवान, खोदि मूल विरख उखारे गहि बाहुसो, तैसे मतिमान दर्वकर्म भावकर्म त्यागि, व्है रहै अतीत मति ज्ञानकी दसाहुसो, याहि क्रिया अनुसार मिटे मोह अंधकार, जगे ज्योति केवल प्रधान सवि ताहुसों, चुके न सकतिसो लुके न पुदगलमाहि, ढुके मोपथलको रुके न फिरि काहुसो ॥ ९६ ॥

अर्थ – जेम हिसक पुरुष भील प्रमुख जे हिसाना फलथी अजाण छे, अने महा बलवान छे, ते वृक्षना मूलने खोदीने पछी पोताना भुजना बले करी तेने उखेडी नाखे छे, तेम मतिमान के० सम्यक्ती पंडित जे छे, ते पुदगल स्वरूपी द्रव्य कर्मने, अने ज्ञानावरणी दर्शनावरणी इत्यादि आठ भाव कर्मने त्यागीने ज्ञान दशावडे अतीत के० कर्मरहित थई रह्यो छे, अने क्षण क्षणमा ए क्रियाना अनुसारे मोह अंधकारने मटावे छे, अने तेथी केवल ज्ञाननी ज्योति उदय थाय, ते ज्योति मति ज्ञान प्रमुख सर्व ज्ञानोमा प्रधान छे, अने एथी अनंत वीर्य प्रगटे, ने फिरि ए शक्ती ते चुके नही, अने मोक्ष स्थानने जई ढुके, अने कोईथी रोकाय नही॥९६॥

इतिश्री नाटक समयसारविषे बंधद्वार बालावबोध रूप अष्टम समास

दोहरा.– बंध द्वार पूरन भयो, जो दुख दोष निदान, अब बरनों संछेपसों, मोक्ष द्वार सुखखान ॥ ९७ ॥

अर्थ – दुखने दोषनु निदान जे बंध तेनो द्वार संपूर्ण थयुं हवे सुखनुं स्थान जे मोक्ष तेनो द्वार संक्षेपथी वरणवु छुं. ॥ ९७ ॥

हवे मोक्षद्वारने आदि ज्ञान विलासने नमस्कार करे छे.– अथ ज्ञान विलास वर्णनं.–

सवैया इकतीसा – भेद ज्ञान आरासो दुफारा करै ज्ञानी जीव; आतम करम धारा भिन्न भिन्न चरचै, अनुभौ अभ्यास लहै परम धरम गहै, करम भरमको खजानो खोलि खरचै, योंही मोखमुख धावै केवल निकट आवै, पूरन समाधि लहै पूरनके परचै, भयो निरदोर याहि करनो न कछु और, ऐसो विश्वनाथ ताहि बानारसी अरचै ॥ ९८ ॥

अर्थ – जेम कोई परिक्षानुं करनार पुरुष सुद्रा प्रमुख द्रव्यने सुलाकनी आर वडे भेदी सुधातु छे, के कुधातु छे, तेनो निश्चय करे छे, तेम ज्ञानी जीव छे, ते भेद ज्ञानरूपी आर वडे आत्मा तथा कर्म ए बेउने जुदां करे छे, अने ते बेउने जुदा जुदा चरचे के० तेमां आत्मिक धारानेविषे तो अनुभवनो अभ्यास धारण करे, तेथी परम धरम के० शुद्ध समाधि तेनुं ग्रहण करे, अने कर्मजालने जुदी जाणी छे, तेने सत्ता कर्मरूप खजानो खोलि खरचे के० विखेरी नाखे, तिहा निर्जरा थाय, एवी क्षपक श्रेणीने लीधे मोक्षना सुखने धाय, त्यां केवल ज्ञान ढुकडो आवे, अने पूर्ण आत्म स्वरूपना परिचय थकी पूर्ण समाधि पामे, पछी भव भ्रमणनी दोर छांडीने निरदोर थाय ते पछी तेने कइ बीजुंकृत्य करवानुं बाकी रहे नही, ने तेथी ते विश्वनो नाथ थयो, तेने बनारसी दास पूजे छे ॥ ९८ ॥

हवे सुबुद्धि विलास वडे आत्मस्वरूप सधाय ते अधिकार कहेछे –

अथ सुबुद्धि विलास वर्नन.–

सवैया इकतीसा.– काहु एक जैनी सावधान व्है परम पैनी, ऐसी बुद्धि छैनी घटमांहि डारि दीनी है, पैठी नौ करम भेदि दरब करम छेदि, सुभाउ विभाउ ताकी संधि सोधि लीनी है, तहां मध्य पाती होइ लखी तिन्हि धारा दोइ, एक मुधामई एक सुधारस भीनी है, मुधासो विरचि सुधा सिंधूमें मगन भई, ए ती सब क्रिया एक समै बीच कीनी है ॥ ९९ ॥ दोहरा – जैसी छैनी लोहकी, करै एकसो दोइ, जड चेतनकी भिन्नता, त्यो सुबुद्धिसो होइ ॥ १०० ॥

अर्थ–कोई एक जैनी जैन आगमना जाणनारे सावधान थईने परमपैनी के० अति तीक्ष्ण एवी बुद्धिरूप छैनी के० सोनीनी छीणी ते शस्त्र विशेष, पोताना घटमा नाखी दीधी, पछी ते सुबुद्धिरूप छीनी नौ कर्म के० आत्म प्रदेशनेविषे

श्लेष्म रूप जे राग द्वेष परिणाम छे, ते नौ करमना भेद तेना पुद्गलरूपी द्रव्य कर्म ने छेदीने स्वभाव अने विभावतानी संधी सोधी लीधी छे, तहा सांधनेविषे मध्य पाती के० त्रिद्वाईत बनीने ते पुरुषे बे धारा लखी, तेमा एक तो सुधामइ के० अ ज्ञान मय छे, ने बीजी सुधारस भीनी के अमृत रस भीनी ज्ञान समाधिमय छे, अही राग द्वेषादिकनी दशा छे, ते सुधा दशा छे, तेथी विरचि के० वैराग धारीने सुधा सिंधुमा मग्न थवु, ज्ञान समाधिरूप सुधा समुद्रमां मग्न रेवुं, ए जे क्रिया क ही ते सर्व क्रियानो विचार एक समयमा करे ॥ ९९ ॥ जेम लोढानी छीणी एक ना बे भाग करे छे, तेम जड चेतननी एकता भागीने भिन्नता करवी ते सुबुद्धिथ कीज थाय छे ॥ ३०० ॥

हवे जेवुं सुबुद्धिनुं विलास छे, तेवु कहे छेः— अथ सुबुद्धि विलास कथन'—

सवैया इकतीसा — (सर्व ह्रस्वक्षर चित्रालकार) धरति धरम फलहरति कर म मल, मन वच तन बल करत समरपन, भखति असन सित चखति रसन रित, लखति अमित वित करि चित दरपन, कहति मरम धुर दहति भरमपुर, ग हति परम गुर उर उपसरपन, रहति जगत हित लहति भगति रति, चहति अग ति गति यह मति परपन ॥ १ ॥

अर्थ —सुबुद्धि जे छे ते धरम रूप फलने धारेछे, कर्मरूप मलने हरे छे, अने ए क्रिया नेविषे मन बल वचनबल अने कायानुं बल तेने समरपण करे एटले ए त्रणे बल ते क्रियामा कामे लगाडे भखति के० खाय छे, सित के० शीतल भोजन ते र सनरित के० जीभनना स्वादविना भोजन जमे, अमित वितके० परिमाण विनानुं पोतानुं ज्ञानादिक धन चित्तरूप दर्पण वडे जुए, मर्म धुर के० मर्मनी वात जे जीवनुं स्वरूप ते कहे, भ्रम पुर के० मिथ्या नगर तेने बाले, अने अंतरनेविषे उ त्कृष्ट गुरुना वचनने ग्रहण करे, अने हृदयनेविषे उपसरपन के० स्थिरता धारे अने जगतनो हितकारी थको रहे, त्रणे लोकनी भक्ति अने रति के० सुख तेने लहे, एटले सर्व लोकने पूजनीक थाय होई अगति गति के० जेनेविषे बीजा सा मान्यनी गति थती नथी, तेवी मोक्षगति चाहे, एवो सुमतिनो उत्कृष्ट विलास छे.

हवे ज्ञातानो विलास कहे छे — अथ ज्ञाता वर्ननं —

सवैया इकतीसा — (सर्व गुरु अक्षर चित्रालकार) रानाकोसो बाना लीने आपा साधे थाना चीने, दाना अंगी नानारंगी खाना जंगी जोधा है ; माया वेली जेती तेती रेतेमे धारेती सेती, फंदाहीको कंदा खोदे खेतीकोसो लोधा है , बाधा

सेती हांता जोरे राधासेती तांता जोरे बादी सेती नांता तोरै चांदी कोसो सोधा है; जानै जाही ताही नीके मानै राही पाही पीके, गनै बाते माही ऐसो धारावाही बोधा है ॥ २ ॥

अर्थ – जे बुध के० ज्ञानी छे, ते राणा के० राजा जे पातसाहनुं स्वांग लेतो थको रहे छे. जेम राजा पोताना आत्मानुं साधन करे, अने पोताना मफलनो साज राखे, पोताना थाणाने चीन्हे के० नीघेबानी राखे, दानाइ राखे पण नादानी नही राखे, ए चारे उपाय वडे नाना रग करे, खाना जंगी के० लडाईनेविषे जोधा थई रहे, तेम ज्ञानी पुरुष आतम साधन करे, गुणगणा चिन्हे अने त्यागी थको कर्म निर्जरानेविषे नाना प्रकारना रग धारे, राग द्वेष दुर्जन साथे जमी हटावी देय, एवी रीते एक पदना बे अर्थ थाय छे, जेम लुहार रेतरमीवडे लोढाने घसी नाखे छे. तेम जेटली जेटली माया वेली के० कर्मजाल तथा गजवेल जे क्रोध तेने मेधा के० सुबुद्धि तेरूप रेतरमी वडे घसी नाखे; अने फंदना कदने खोवेछे जेम लोधा के० खेडुत खेतरनी धरतीने कद के० मूलथी खोदी नाखे छे, तेम बाधा के० कर्मबंध तेथी हाताजोरे के० जुदाई करे, अने राधा के० सुबुद्धि ते साथे नातो जोडे, बादीके० कुबुद्धि तेनो नांतो के० संबंध ते तोडे, जेम सोना रूपानी चादी सोधनार वस्तु उज्वल करेछे, तेम जे जेने तेने जाणे, हेय जे छांडवा योग्य वस्तु अने उपादेय जे आदरवा योग्य वस्तु तेने पण नीके के० ठीक जाणे, पण हेयाने राहीपाही के० फुल समान पीकसमान जाणे नीनासथी खीलावेछे, ए रीते माही वातो ठरावे एवो सम्यक्त धारानो वेदनार अबोधा के० पंडित ने ज्ञानी कहीये ॥ २ ॥

हवे ज्ञाताने चक्रवर्त्ति समान कही बतावेछेः—अथ ज्ञाता चक्रवर्त्ति समान कथन·—

सवैया इकतीसा·— जिन्हिके दरब मिति साधत छ खंम थिति, विनसै विभाव अरिपंकति पतन है; जिन्हिके भगतिको विधान पईनो निधान, त्रिगुनके भेदमान चौदह रतन है, जिन्हिके सुबुद्धि रानी चूरि महा मोह वज्र, पूरें मगलीक जे जे मोखके जतन है; जिन्हिके प्रमान अंग सोहै चमू चतुरग, तेई चक्रवर्त्ति तनु धरै पे अतन है. ॥ ३ ॥

अर्थ.— जेणे छए द्रव्य प्रमाण करी साध्या तेज जाणे छये खंम साधी लीधा, अने जेना रागद्वेषादि विभावदिशा वणसी जाए तेज जाणिये शत्रुनी पंक्तिनुं पतन के० नाश थयो, अने तेने नव प्रकारनी भक्तिनुं विधान के० करवु तेज तेने नव निधान छे, ज्ञान दर्शन ने चारित्ररूप जे त्रण गुण छे, अने तेना क्षयोपशम

माफक जे भेद उपजेछे, ते जेना चौद रतन प्रगटमान छे, अने जेम चक्रवर्त्तिने स्त्रीर त्न होयछे, ते तेना छ खम साधवाना राज्याभिषेक समय होय त्यारे वज्र रत्न हाथवडे चूरीने, मुख आगल मंगलीक पूरे तेम जेने सुबुद्धिरूप स्त्री रत्न छे, ते महा मोहरूप वज्रने चूरीने मोक्षना जतनने माटे मगलीक पूरे छे, एटले मगल कार्य करे; अने जे प्रत्यक्ष प्रमाणे करीने अर्थनुं ग्रहण करेछे, तथा परोक्ष प्रमा णे करीने पण अर्थने ग्रहेछे, एवा जेना प्रमाणरूप अंग छे, तेज तेनी चतुरगी सेना थई एम जाणवुं, ए रीते ज्ञाता पुरुषे चक्रवर्त्तिनी देह धारी छे, तेम छता पण ज्ञाता अतनके० अशरीरी जेवु छे ॥ ३ ॥

पूर्वे कही जे नवधा भक्ति तेनुं हवे वर्णन करेछे —अथ नवधा भक्ति वर्णनं.—

दोहा — श्रवन कीरतन चितवन, सेवन वंदन ध्यान; लघुता समता एकता, नौधा भक्ति प्रमान ॥ ४ ॥

अर्थ — उपादेय स्वरूपने शांभलवु, किरतन करवुं, चितवन करवुं, सेवा पूजा करवी, वंदन स्तुति करवी, ध्यान धरवु, तन्मयता करवी, समाधि करवी, एकमेकप णु, ए नोधा के० नव भेदवडे भक्ति प्रमाण थायछे. ॥ ४ ॥

हवे जे ज्ञाता मोक्ष सन्मुख थयो तेनी अनुभव दशा कहे छे —

अथ अनुभवी वचन —

सवैया इकतीसा — कोई अनुभवी जीव कहै मेरे अनुभौमे, लछन विभेद भि न्न करमको जाल है, जानै आप आपुको जु आपु करी आपुविषे, उतपति नास ध्रुव धारा असराल है, सारे विकलप मोसो न्यारे सरवथा मेरो निह्चै सुभाव यह विवहार चाल है, मै तो शुद्ध चेतन अनत चिन मुद्रा धारी, प्रभुता हमारी एक रूप तिहू काल है ॥ ५ ॥

अर्थ — जे आत्मानो अनुभव पाम्यो तेज अनुभवी जीव एवु कहे छे, के मा रा अनुभवमा लक्षण भेदथकी कर्म जाल हवे भिन्न दीसवा लागी. अने आ त्माज कर्त्ता कारक आत्माज करण कारक आत्माज आधार कारकविषे आत्मा ज कर्म कारकने जाणे. अने अही कोई पर्यायनी उत्पत्ति अने नाश छे, अने द्र व्य ध्रुवता पणे छे, ए त्रणे धारा अही असराल पणे वही रही छे, तो पण ए त्र णे धारा विकल्परूप छे, अने मारेथी तो सर्व विकल्प सर्वथा जुदाज छे, विक ल्पमा तो कही निश्चय नथी अने मारो तो चेतना स्वरूप निश्चे स्वभाव छे, अने आगल कही जे त्रण धारा तेतो व्यवहार नयनी चालमां छे. आ जे सिद्धांत वचन

कहुं बुं. तेणे करीने हुंतो शुद्ध चेतना स्वरूपी बुं, अनंत चिन मुद्रा धारी के० अनं त ज्ञाननो धरवा वाळो बुं, एहवी महारी प्रभुता त्रणे काळने विषे एक रूपेछे॥५

हवे चेतनानुंज स्वरूप बतावे छे — अथ चेतना वर्ननं·—

सवैया इकतीसा·— निराकार चेतना कहावे दरसन गुन साकार चेतना शुद्ध ज्ञान गुण सार है; चेतना अद्वैत दोउ चेतन दरबमाहि, सामान विशेष सत्ताही को विसतारहे, कोउ कहै चेतना चिनह नाही आत्मामें, चेतनाके नास होत त्रि विध विकार है; लछनको नास सत्ता नास मूल वस्तु नास, तातें जीव दरवको चेतना आधार है॥ ६ ॥ दोहरा — चेतन लछन आतमा, आतम सत्ता मांहि, सत्ता परिमित वस्तु है, भेद तिहूमें नांहि ॥ ७ ॥

अर्थ.— आत्मानो दर्शन गुण जे निराकार कहीये छइये तेतो निराकार चेत ना थई, अने जे आत्माने शुद्ध ज्ञान गुण सारभूत कहीये छइये तेतो साकार चे तना थई, विशेषताने लीधो रह्यो छे माटे साकार कहिये, ए रीते निराकार अने साका रपणे दर्शन तथा ज्ञाननेविषे द्वैत भाव थयो, पण चेतनानेविषे तो अद्वैत भाव ज रह्यो छे, अने चेतनागुण थकी चेतन द्रव्य छे, तेथी चेतन द्रव्यमां बेउ समाई गयां. वळी निराकार ने साकारपणुं सामान्य ने विशेषपणाथकी छे, ते तो सामा न्यता अने विशेषता चेतना द्रव्यनी सत्तानो विस्तार छे; कोई मूढमति वैशिषिक प्रमुख दर्शन वाळा कहे छे, के, आत्मानेविषे चेतन चिन्ह नथी, चेतना लक्षण नथी, तेने केवुं के, अरे मूढ, जो चेतन चिन्ह न कहिये तो चेतनानो नाश थवाथी त्रिविध विकार उपजशे, ते कया तो मन वचन ने कायाना विकार जाणवा, माटे लक्षणनो नाश थवाथी वस्तुनी सत्तानो नाश थशे अने वस्तुनी सत्तानो नाश थवाथी मूळ रूप वस्तुनो पण नाश थशे, माटे जीवने जाणवानो तो एक आधार चेतनानोजछे ॥६॥ आत्मानुं चेतना लक्षण छे, सत्ता धर्मविना आत्मा ठरे नही तेथी आत्मा स त्ताने विषेज छे, अने पोतपोतानी सत्ता प्रमाणेज सर्व वस्तु छे, वस्तु द्रव्य विचारी जोइये त्यारे उत्पादादि त्रणे वस्तुमां भेद कोई नथी ॥ ७ ॥

हवे चेतना लक्षणनुं शाश्वत तथा अविनाशीपणुं दृढ करावेछे —

अथ चेतना अविनासी यह कथनः—

सवैया तेईसा·— ज्यों कलधौत सुनारकि संगति, भूषन नांउ कहै सब कोई; कं चनता न मिटी तिहिं हेतु वहै फिरि औटि तु कंचन होई; त्यों यह जीव अजीव संयोग भयो बहु रूप भयो नहि दोई; चेतनता न गई कबहू तिहिं, कारन ब्रह्म

कहावत सोई. ॥ ७ ॥ देखु सखी यह आपु विराजत याकि दसा सब याहिकुँ सोहै, एकमें एक अनेक अनेकमें, द्वंद लिये दुविधामहि दो है; आपु संभारि लखै अपनो पद, आपु विसारकें आपुहि मोहै, व्यापक रूप यहै घट अंतर, ज्ञान मे कौन अज्ञानमें कोहै ! ॥ ए ॥ ज्यो नट एक धरै बहु भेष कला प्रगटै जग कौतुक देखे, आपु लखै अपनी करतूति वहै नट भिन्न विलोकत पेखै, त्यों घटमें नट चेतन राउ विभाउ दसा धरि रूप विसेखै, खोलि सुदृष्टि लखै अपनो पद, द्वंद विचार दसा नहि लेखै, ॥ १० ॥

अर्थ — जेम कलधोत के० सोनुं तेने सोनी घडीने भूषण बनावेछे, त्यारे ते घाटना संयोगथी लोको तेने भूषण केहेवा लागेछे पण मूल वस्तु जे कंचन ते कांई जतु रह्यु नथी, केमके, ज्यारे ते घाटने अग्नीमा गाली नाखे त्यारे पाछुं ते सोनु केवाय, तेम आ जीव जे छे, ते अजीवरूप कर्म पुदगल इत्यादिक बीजा पण पुद्गलना संयोगथी एक कोडी शाडी सताएं लाख कुल कोडीमा बहुरूपे थयो, तो पण द्विविध नथी थयो, केमके, चेतनता कई गई नथी, तेमाटे ते स्वरूपमां जीव ब्रह्मज केवाय छे, जेनो विस्तार मोटो तेने ब्रह्म कहीये ॥ ७ ॥ आत्मानी अनुभूति ते सुबुद्धि सखीने कहेछे, हे सखी, जो आ आपणो ईश्वर विराजे छे, अने ए ईश्वरनी दशा सर्व एनेज शोभेछे, एवी विरुद्धता बीजे ठेकाणे न शोभे लक्षण वडे एकतामा जोईये तो एक रूप छे, अने अपर सत्ताए देखीये तो अनेकरूप छे, अने द्वंद दशामा देखीये एटले अज्ञान दशामा देखीये अने ज्ञान दशामां देखीये तो द्विविध रूप छे, ते द्विविधपणु कहेछे — क्यारे तो पोतानुं पद जे पोतानु स्वरूप तेने संभारीने जुए, अने क्यारेक तो पोताने विसरीने पोते मोहमां पडे हे सखी, एहिज ईश्वर घटने अंतर व्यापक रूप छे, तेथी जे जे अवस्थामां व्यापे छे. तेवारे ज्ञाननेविषे पण बीजो कोइ नथी अने अज्ञाननेविषे पण बीजो कोइ नथी ॥ए॥ हवे एना उपर दृष्टांत कहेछे —जेम कोई नट होय ते बहु वेष धरेछे, ने तेते वेषनी कला प्रगट करेछे त्यारे जगत तेने कुतुहल समजे, पण नट पोते पोतानी क्रिया जाणेछे, ने तेणे धरेला वेषथी पोते जुदोछे, एवु जाणेछे तेम घटनेविषे चेतन राजा रूप नट छे, ते विभाव दशा धरीने रूप विशेष करेछे, पण ज्यारे सुदृष्टि खोली जुए त्यारे तो पोतानुं पद ओळखे अने द्वंद विचारनी दशाने पोते लेखामा गणे नही ॥ १० ॥ हवे चेतन नटनी सघली चेतना एक छे, ते कहेछे —अथ चेतनाउपादेय यह कथन —

अडिल्ल छंद — जाके चेतनभाव चिदातम सोइ है, और भाव जो धरे सु औरो

कोइ है, यो चिनमंमित नाव, उपादे जानते; त्याग जोग परनाव पराये मानते ॥
अर्थः—जेनेविषे चेतन नाव छे, तेने चिदात्मा अथवाचिद्रूप कहिये छे, अने ए चेतनानावथी बीजो नाव जे धारेछे, तेतो कोई बीजो छे, एथी चेतना मंमित जे नाव छे तेतो उपादेय रूप जाणवो, अर्थात् पोतानो करी जाणवो, अने चेतना नावथी जे परनाव छे, ते सघलो त्यागवा योग्यछे ने तेने पारको करी मानी लेवो॥ ११॥
हवे जे सम्यक् दृष्टि चेतना उपादेय राखीने मोक्ष मार्गना साधक थया तेनी अवस्था कहेछे.— अथ सम्यक्दृष्टि मोक्ष मारगको साधक कथन.—
सवैया इकतीसा.— जिन्हके सुमति जागी नोगसो नये विरागी, परसंग त्यागी जे पुरुष त्रिभुवनमें; रागादिक नावनिसों जिन्हकी रहनि न्यारी, कबहू मगन व्है न रहे धाम धनमें, जे सदीव आपको विचारे सरवग सुद्ध, जिन्हके विकल ता न व्यापे कब मनमें, तेई मोक्ष मारगके साधक कहावे जीव, नावे रहो मंदि रमें नावे रहो बनमें ॥ १२ ॥
अर्थः— जेना हृदयामां सुबुद्धि जागी, अने विषय नोगथी जे वैरागी थया, अने जे रागद्वेषादिक परनाव छे, तेनो सेवना संग के० त्रण लोकनेविषे तेनो त्यागी जे पुरुष छे, अने जे रागद्वेषादिक नाव पदार्थ छे ते थकी जेनी रेहेणी न्यारी छे, तेथी धाम के० घर अने धन तेनेविषे मग्न थई न रहे, अने जे सदा निश्चय दृष्टीए देखीने आत्माने सर्वांग शुद्ध विचारे छे, तेथी जेना मननेविषे विकलता नही व्यापे, एवी दशा लईने जे जीव रह्या छे, तेज जीव मोक्ष मार्गना साधक केहेवाय, पछी ते नावे तो मंदिरमां रहे, ने नावे तो वनमां रहे, पण तेनी दशा सर्व स्थानके एकज होय छे. ॥ १२ ॥
हवे मोक्षगामी जीव विचक्षण पुरुषनी दशा कहेछे.—अथ विचक्षणदशा वर्णनः—
सवैया तेईसाः— चेतन मंमित अंग अखंमित शुद्ध पवित्र पदारथ मेरो, राग विरोध विमोह दशा समुझे भ्रम नाटिक पुग्गल केरो; नोग सँयोग वियोग व्यथा अविलोकि कहे यह कर्मज घेरो, है जिन्हकों अनुनौ इहि नांति सदा तिन्हिको परमारथ नेरो. ॥ १३ ॥
अर्थ.— जे परमात्मानेविषे दृष्टि दैने एवो विचार करे के, जे मारो पदार्थ छे, ते चेतन मंमित छे, अने अखंमित छे, अछेद्य छे, अनेद्य छे, अने शुद्ध छे, पवित्र छे, अने एथी जुदी जे राग द्वेषने मोहनी दशा थई रहीछे, तेने तो भ्रमरूप मिथ्याजाल पुदगलनुं नाटक करी समझे छे, अने पंचेंद्रियना नोगसंयोग ने वियोग एवी बाह्य

त्माने विषे व्यथा अवलोकी ने एवुं कहे के. एतो कर्मनो पेरो छे, कर्मनो उदय छे, एवो अनुभव जेने नित्य रहे, तेने परमार्थरूप मोक्ष ते सदा नेरो के० नजीकछे. १३

हवे जे मोक्षथी दूर ते चोर, ने मोक्षथी निकट ते साहुकार एवु कहेछे —

अब चोर तथा साहुकार वर्णन.—

दोहरा — जो पुमान परधन हरै, सो अपराधी अज्ञ, जो अपनो धन विवहरै, सो धनपति धरमज्ञ. ॥ १४ ॥ परकी संगति जो रचै, बंध बढावे सोइ; जो निजसत्तामे मगन, सहज मुक्त सो होइ ॥ १५ ॥

अर्थ—जे पुमान के० पुरुष परधनने हरे, ते अपराधी जीव अज्ञ के० अजाण कहीये, ने जे पोतानाज धनना व्यवहार राखे, ते धनपती कहिये, धर्मज्ञ के० धर्मने जाणनार कहिये ॥ १४ ॥ तेम जे परवस्तुनी संगतीए राचे ते चोर केहेवाय, ने तेज पोताना बंधने वधारे, अने पोतानी सत्तामा सदाकाल मगन रहे तेज मुक्तरूप थाय ॥ १५ ॥

हवे वस्तु कोने कहिये अने सत्ता कोने कहिये ते बतावेछे —अथवस्तुसत्तावर्णनं

दोहरा — उपजे विनसे थिर रहे, यह तो वस्तु वखान, जो मरजादा वस्तुकी, सो सत्ता परवान ॥ १६ ॥

अर्थ — उत्पत्तिवत, विनाशवत, स्थिरतावत एतो वस्तुनुं वखाण छे, अने जे वस्तुनी मरयादा जे परिमाण ते धर्म ने सत्ता कहीये, ए अनुभव प्रमाण ग्राह्य छे १६

हवे केवा केवा द्रव्यनी केवी केवी सत्ता छे ते कहेछे —

अथ सत्ता व्यवस्था वर्नन.—

सवैया इकतीसा— लोकालोक मान एक सत्ता है आकाश दर्व, धर्म दर्व एक सत्ता लोक परिमिति है, लोक परवान एक सत्ता है अधर्म दर्व, कालके अणु असंख सत्ता अगनिति है, पुदगल शुद्ध परवानकी अनंत सत्ता, जीवकी अनंत सत्ता न्यारी न्यारी थिति है, कोउ सत्ता काहुसों न मिलै एकमेक होई, सबै असहाय यों अनादिहीकी थिति है ॥ १७ ॥

अर्थ — आकाश द्रव्यनी मर्यादा लोकालोक लगे एक छे, तेथी आकाश द्रव्यनी एक सत्ता छे, अने धर्मास्तिकाय द्रव्य लोकप्रमाण एक रूप छे तेथी धर्म द्रव्यनी एक सत्ता छे, अने अधर्मास्तिकाय द्रव्य पण लोक प्रमाण एक रूप छे तेथी अधर्म द्रव्यनी एक सत्ता छे, अने कालना द्रव्यना अणु छे ते लोकाकाश प्रदेश परिमाणे असंख्यात छे, तेथी काल अणुनी असंख्यात सत्ता छे ए कहेवुं दिगंबर संप्रदायनुं

छे, अने योग शास्त्रमां पण कह्यु छे, अने लोकविषे पुद्गलरूपी शुद्ध परमाणुनी पण अनंत सत्ता छे. अने लोकविषे जीव अनंत छे, तेथी जीवनी पण अनंत सत्ता छे, तेथीज जीवाजीवनी जुदी जुदी क्षेत्रावगाहना छे, जे द्रव्यनी जे सत्ता होय ते बीजी कोई द्रव्यनी सत्ता साथे मळे नही, जो एकमेक थई जाय तो सर्व सत्ता असहाय पणे वर्त्ते, माटे एकमेक न थाय एवी अनादि काळनी स्थितिछे. ॥१७॥

हवे चेतन द्रव्यनी सत्तानुं वर्णन करेछे – अथ चेतन सत्ता वर्ननं –

सवैया इकतीसाः– एड छहो द्रव्य इन्दहीको है जगतजाल, तामें पांच जड एक चेतन सुजान है, काहुकी अनंत सत्ता काहुसों न मिले कोई, एक एक सत्ता में अनंत गुन गान है; एक एक सत्तामें अनंत परजाय फिरे, एकमें अनेक इह भांति परवान है; यहे स्यादवाद यहै संतनिकी मरजाद, यहे सुख पोष यहै मोक्षको निदान है ॥ १८ ॥

अर्थ.– ए छए द्रव्ये करी एथीज जगतजाळ वर्त्तेछे, ते छनेविषे पांच द्रव्य जडरूपी छे, ने एक चेतनरूपी द्रव्य छे ते जाणनार छे, अंही पुदगळनी अनंत सत्ता कही, अने जीवनी अनंत सत्ता कही, एवा अनंतपणे करीने कोईनी सत्ता कोई साथे मळे नही, एटले जुदी जुदी अनंत सत्ता छे, अने प्रत्येक सत्तामां अनंत गुणनुं ज्ञान छे, अने एक एक सत्तामां अनंत पर्याय अनंत अवस्था भेदफिरे तेथी जे पूर्वे एकमा अनेक कह्यु ते एरिते छे, स्याद्वाद मतमा ए वात प्रमाण छे, अने सतपुरुषना वचननी पण एज मरियादा छे, तथा एज मत सुखनुं पोषण करनार छे, अने मोक्षनुं निदान एटले मूळ कारण छे. ॥ १८ ॥

हवे ए वचन थकी जे वस्तुनो धर्म ग्रह्यो जाय तेज सत्ताधर्म कहीये तेथी एक जीव द्रव्यनी सत्ता कहेछेः– अथ एक जीव द्रव्यसत्ता वर्ननं –

सवैया इकतीसा – साधि दधि मथनि अराधि रसपंथनिमें, जहां तहां ग्रंथ निमे सत्ताहीको सोर है, ज्ञान भानु सत्तामे सुधा निधान सत्ताहीमे सत्ताकी दुर नि सांजि सत्तासुख भोर है, सत्ताको सरूप मोख सत्ता भूलै यहै दोष, सत्ताके उलंघ धूम धाम चिहू ओर है; सत्ताकी समाधिमें विराजि रहे सोई साहु सत्तातें निकसि और गहे सोई चोर है. ॥ १९ ॥

अर्थ.–जे वस्तुनेविषे छती देखाय,जेम दहीना मंथनमां घीनी सत्ता साधिये,जे औषधमां मधुर रस छे. तो तेथी वस्तु नीपजे छे, माटे रस मार्गमां सत्ताविना सिद्ध नथी जे वस्तुमां छतापणुंछे तेने सत्ता कहियें,शास्त्रमां ज्या त्यां ग्रंथोनेविषे सत्तानोजसोरछे

शब्दछे ज्ञान रूपी नानुनो उदय जीवनी सत्तामां निपजे, वली सुधा के० अमृत ते पण सत्तामाज पामिये, निधान पण सत्तामाज पामिये जे सत्तानुं ढुरनि के० छुपाववु ते संध्या रुपछे, अने जे सत्तानी मुख्यताछे तेज जोर के० प्रजात रुपछे. जीवनी सत्तानुं जे स्वरूप छे तेज मोक्ष छे, अने सत्ताने जुली जवुं एज दोषरूप छे सत्तानुं उलंघन करवाथी चौद्योउर के० चारे तरफ धामधुम नीपजे, जे पोतानी सत्ता सद्भूतपणुंछे, तेमां विराजमान थई रहे तेने साहुकार कहिये, अने जे पोतानी सत्ताथी नीकलीने अन्यनी सत्ताने ग्रहे तेने चोर कहीये ॥ १९ ॥

ह्वे सत्तानी समाधिनुं वर्णन करेछे —अथ समाधि वर्ननं —

सवैया ३१सा — जामे लोक वेद नाहि थापना उछेद नाहि पाप पुन्य खेद नांहि क्रिया नाहि करनी, जामे राग दोष नाहि जामें बंध मोष नांहि, जामे प्रभु दास न आकास नाहि धरनी, जामे कुलरीत नाहि जामे हारजीत नाहि जामें गुरु शिख नांहि विष नाहि जरनी, आश्रम वरन नाहि काहुकी सरनि नाहि ऐसी सुद्ध सत्ताकी समाधि भूमि वरनी ॥ २० ॥

अर्थ — जेमां लौकिक वेदवु नथी, अने जेमां स्थापनानो उच्छेद नथी, जेमा पाप पुन्यनो खेद नथी, जेमां कोई क्रिया करणी नथी, जेमा राग द्वेष नथी, जेमा बंध मोक्ष नथी, जेमा प्रभुताने दासपणु नथी, जेमा आकाश अने धरती नथी, जेमां कुलनी रीत नथी, जेमा हारने जीत नथी, जेमां गुरु अने शिष्य नथी, जेमा विष जरनी एटले चालवुं हालवु नथी, जेमां कोई आश्रम व्यवहार नथी, तथा वर्ण व्यवहार नथी, जे कोईनी शरण रूप नथी एवी शुद्ध सत्तानी भुमी ते समाधिरूप वरणवी छे एटले स्वरूपनी शुद्ध समाधिने विषेज शुद्ध सत्ता पामीये.२०

ह्वे मिथ्यादृष्टिने चोर अने अपराधी कही देखडावेछे —

अथ मिथ्यादृष्टि अपराधि यद्द कथन.—

दोहराः— जाके घट समता नही. ममता मगन सदीव, रमता राम न जानही, सो अपराधी जीव ॥ २१ ॥ अपराधी मिथ्यामती. निरदै हिरदै अंध, परकों माने आतमा, करे करमको बंध ॥ २२ ॥ झूठी करनी आचरे, झूठे सुखकी आस; झूठी जगती हिय धरे, झूठो प्रभुको दास ॥ २३ ॥

अर्थ — जेने केवल जाणपणुं जे समता ने समाधि ते नथी अने जे सदा पर वस्तुनी ममताविषे मगन थई रहे, ने निज घट अथवा स्वरूपनेविषे रमी रह्यो एवो जे आत्मराम तेने जेणे जाण्यो नथी तेनेज अपराधी चोर जीव कहीये॥२१॥

अर्थ — जे पर वस्तु लेय ते अपराधी ने तेज मिथ्यामति, तेज निरदय ने तेज हैयानो अंधकहिये, एटले जे पररूप पुद्गलने आतमा माने ते कर्मनो बंध करेछे २२

जाहांसुधी पोतानी वस्तुने न जाणे त्यांसुधी तो जे क्रिया आचरे ते सर्व जूठी छे, अने तेने जे मोक्ष सुखनी आशा छे, ते सर्व जूठी छे. पोताना प्रभु जाण्या विनानो जे भक्ति हियामां धरे छे, ते सर्व जूठी जाणवी, अने परमेश्वरने ओलख्याविना दासपणुं राखवुं ते पण सघलुं जूठुं छे ॥ २३ ॥

हवे मूढ लोकना जूठपणानी व्यवस्था कहे छेः— अथ मूढ व्यवस्था यथा—

सवैया इकतीसाः— माटी भूमी सैलकी सु संपदा बखाने निज, कर्ममें अमृत जाने ज्ञानमें जहर है; अपनोन रूप गहै ओरहीसो आपु कहै, साता तो समाधि जाके असाता कहर हैं, कोपको कृपान लिये मान मदपान किये, मायाकी मरोरि हिये लोभकी लहर है, याही भांति चेतन अचेतनकी संगतिसो, साचसों विमुख भयो जूठमे बहर है ॥ २४ ॥ तीन काल अतीत अनागत वरतमान, जगमें अखंडित प्रवाहको डहर है, तासो कहै यह मेरो दिन यह मेरी घरी, यह मेरोई परोई मेरोई पहर है, पेहको खजानो जोरे तासो कहे मेरो गेह, जहां वसे तासों कहे मेरोई सहर है; याहि भांति चेतन अचेतनकी संगतिसो, साचसो विमुख भयो जूठमें वहर है ॥ २५ ॥

अर्थ — सात धातु जे छे पहाडनी धरतीनी माटी जेवी छे, तेने संपत्ति करी वखाणे छे. पोतानी अशुद्ध क्रियामा अमृत जाणे छे, अने ज्ञानमां जेर समजे छे, एटले क्रिया थकी सिद्धि जाणे, ने ज्ञान थकी नही जाणे. जे पोतानुं चिदानंद स्वरूप छे तेने ग्रहे नही, पण शरीरादिक जे छे तेने आत्मारूप जाणेछे. अने जे साता वेदनीय उपजे छे. तेने तो समाधि करी जाणे छे, असाता वेदनीयने कहर के० उपद्रव माने छे, कोपनुं कृपान जे खड्ग ते लईने रहे छे, मान ने अहंकार रूप मद पीइने रहेछे, हैयानेविषे मायानो मरोड राखेछे, लोभनी फेर खाया करे छे, एवी रीते अचेतननी संगती थकी एटले जड पुद्गलनी संगतीथी साच थकी विमुख थयोछे, ने जूठमां बहर हे के० तत्पर थई रह्योछे, ॥२४॥ अर्थ स्पष्ठ. २५

हवे सम्यक् दृष्टि साहुकारनी व्यवस्था कहे छेः— अथ सम्यक्दृष्टि व्यवस्थाकथन—

दोहरा— जिन्हके मिथ्या मति नही, ज्ञान कला घटमाहि; परचे आतम रामसों, ते अपराधी नाहि ॥ २६ ॥

अर्थ — जेनी मिथ्यामति नाश पामीने घटनेविषे ज्ञान कला प्रगटी छे, जेणे आत्मारामने उंळख्यो छे, ते लोक अपराधी नथी साहुकार छे ॥ २६ ॥

हवे ज्ञानीनी व्यवस्था कहे छे — अथ ज्ञानी यथा —

सवैया इकतीसा — जिन्हके धरम ध्यान पावक प्रगट भयो, संसे मोह विभ्रम विरष तीन्यो वढे है, जिन्हकी चितौनि आगे उदे स्वान भूसि भागे लागे न करमरज ज्ञान गज चढे है, जिन्हिकी समुझिकी तरंग अग अगममे, आगममे निपुन अध्या तममे कढे है; तेई परमारथी पुनित नर आठों जाम, राम रस गाढ करे यहै पाठ पढे हैं ॥२७॥ जिन्हको चिहुंटी चिमटासी गुन चूनवेको कुकथाके सुनवेको दोउ कान मढे है, जिन्हको सरल चित्त कोमल वचन बोले, सोम दृष्टि लिये भोले मोम कैसे गढे है; जिन्हिके सगति जगि अलख अराधिबेको परम समाधि साधिवेगो मन बढे है, तेई परमारथी पुनित नर आठो जाम, राम रस गाढ करे यहे पाठ पढे है २८

अर्थः— जेना हैयामा धर्म ध्यानरूप पावक के० अग्नि प्रगट थयो, तेथी संशय मोह अने विभ्रम ए त्रणे वृक्षरूप छे, ते वढे के० बळी गया छे, जेनी चितौनी के० ज्ञानदृष्टि आगळ उदयरूप कुतरो भसीने भागी जाय छे, अने ज्ञानरूपी गजराज उपर चढी रहेछे, तेथी कर्मरूप रज लागती नथी, बीजानु जे अगम अग छे, तेमां जेनी समजना तरग उठी रह्या छे एवा आगम के० जैन वाणीमा निपुण थयो, अने अध्यात्म ज्ञानमा पूर्ण थयो छे, तेनेज सम्यक्दृष्टि कहिये, परमार्थने पामनार पुनित के० पवित्र रूप थयो जाणवो आत्मारामना अनुभव रसमा आठे प्रहर गढे के० संपूर्ण मग्न थई, एज पाठ पढे छे, एटले भणे छे, ॥ २७ ॥ वळी जेम चीमटी के० हाथनी चिमटी अथवा चिपीयो तेवडे कई नानी वस्तुने पकडी लइये छइये; तेम पारका गुण चुटी लेवाने जेनी एवी चपटी छे, अने विकथा सांभळवाने जेने कानने बंध करी राखे छे, जेनुं चित्त सरल ने निष्कपटी छे, जे निरहकारीपणे कोमळ वचन बोले छे काम क्रोधादिक विकारविना सौम्य दृष्टी राखे छे, वळी जे मोम केसेगढेहे के० मीणना घडाजेवु हृदय कोमळ राखे छे, अने पोताना अलख समाधि स्वरूपने साधवाने जेनी सुमति जागी छे, अयोगी अवस्थामा जेनी परम समाधि थई छे; तेने साधवाने जेनो मन वध्यो छे तेज सम्यक दृष्टि परमार्थना पामनार पुनीत के० पवित्र रूप थई रह्या छे, ने तेज आत्मारामना अनुभव रसमा आठे पहोर दृढ मग्न थई एज पाठ पढे छे. ॥ २८ ॥

हवे समाधिनुं स्वरूप कहे छे -- अथ समाधि वर्णनं.-

दोहरा.- राम रसिक अरु रामरस, कहन सुननकों दोइ; जब समाधि परगट भई, तब दुविधा नहि कोइ ॥२९॥ नंदन वदन थुति करन, श्रवन चितवन जाप; पढन पढावन उपदिसन, बहुविध क्रिया कलाप. ॥ ३० ॥ शुद्धातम अनुभो जहां, सुभाचार तिहि नाहि, करम करम मारगविशे, शिव मारग शिवमांहि. ॥ ३१ ॥

अर्थ.- आत्माराम जे छे ते रसिक के० रस भोक्ता छे, अने राम के० रमवुं ते रसरूप छे, केवांने सांभळवाने रसिकने रस बेउ छे, पण जेवारें एनेविषे समाधि प्रगट थाय छे त्यारे बे पणुं नथी रेतु त्यारे तो रसिक अने रस ए बे एकज वस्तु छे ॥२९॥राम के० रसिक अवस्था धारतो एटली क्रिया करे छे के, नंदन के० आनंद पामे छे, वदन के० प्रणाम करे, थुती के० भात भातना गुणनी स्तुती करे छे, अने एवाज गुण सांभळी एनुंज चिंतवन करे, एनोज जाप जपे छे, भणे भणावे उपदेशे, एवी रीते रसिक अवस्थामां भात भातना क्रिया कलाप छे ॥ ३० ॥

पूर्वे कही जे क्रिया तेने करता करतां जहां शुद्ध आत्मानो अनुभव थाय त्यां शुभाचार छुटीजाय, कृत कृत्यपणे ते अयोगी दशामां छे, कर्म जे छे ते कर्म मार्गमांज रहे, एटले संसार मार्गनेविषेज रहे, शुभ कर्म पण संसार मार्गमा छे अने शिव मार्ग ते शिवमांहे एटले शुद्ध आत्माने विषेज छे. ॥ ३१ ॥

चोपाई.- इहि विध वस्तु व्यवस्था जैसी, कही जिनिंद कही में तैसी; जे प्रमाद संयति मुनि राजा, तिन्हिको शुभाचारसो काजा. ॥ ३२ ॥ जहां प्रमाद दसा नहिं व्यापे, तहाँ अवलंब आपनो आपे, ता कारन प्रमाद उतपाती, प्रगट मोक्ष मारगको घाती ॥ ३३ ॥ जे प्रमाद संयुक्त गुसांई, उठहि गिरिहि गिडककी नांई, जे प्रमाद तजि उद्धत होही, तिन्हिको मोष निकट दृग सोही ॥ ३४ ॥ घटमें है प्रमाद जबतांई, पराधीन प्रानी तबताई; जब प्रमादकी प्रभुता नासै तब प्रधान अनुभो परगासे ॥ ३५ ॥

अर्थ.- ए रीते श्री जिनेंद्र देवे वस्तुनी व्यवस्था कही छे, ने तेवीज आज्ञा प्रमाणथी में पण कही छे, अने जे मुनिराज प्रमाद दशामां छे, तेने तो शुभाचार एटले शुभ क्रियानुं आलंबन लीधाथीज कार्य सिद्धि थाय ॥ ३२ ॥

अने जे मुनिराजने आत्माना अधिक वीर्यांशने लीधे प्रमाद दशा न व्यापे त्यां पोतानुं आलंबन पोते लिये, तेमाटे प्रमाद तो उतपाती छे, अने प्रगट रीते मोक्ष मार्गनो घात करनार छे, अने अंतरायनो करनार छे. ॥ ३३ ॥

गुसांई देशी नापानो शब्द छे, एनो अर्थ मुनिराज थाय छे, जे मुनिराज प्रमाद संयुक्त छे ते तो गिडक के० दडानी रीते उठे छे, ने पडे छे, पण स्वस्थताने पामे नही अने जे प्रमाद छोडीने अप्रमादपणे उठीने उना रहे छे, तेने पोतानी दृष्टी नजीक मोक्ष छे ॥ ३४ ॥ जांहां सुधी घटमा प्रमाद छे, त्यांसुधी ते पराधीन छे, अने ज्यारे आत्मानी शक्ती जागे छे, त्यारे प्रमादनी प्रभुता नाश पामे छे, त्यारे तो पोताना प्रधान अनुभवनो प्रकाश थाय छे ॥ ३५ ॥

दोहरा.— ता कारन जग पथ इत, उत शिव मारग जोर, परमादी जगकों दूके, अपरमाद सिव ओर ॥ ३६ ॥ जे परमादी आलसी, जिनके विकलप भूरि, होहि सिथिल अनुभौ विषे, तिन्हिको सिवपथ दूरि ॥ ३७ ॥ जे अविकलपी अनुभवी, शुद्ध चेतना युक्त, ते मुनिवर लघु कालमे, होहि करमसों मुक्त ॥ ३८ ॥ जे परमादी आलसी, ते अभिमानी जीव, जे अविकलपी अनुभवी, ते समरसी सदीव॥३९॥

अर्थ.— तेमाटे जगतनो मार्ग प्रमादीनी तरफ छे, अने अप्रमादीनी तरफ मोक्ष मार्ग छे, केमके, जे प्रमादी होय ते जगतने जुए अने अप्रमादी मुक्ती तरफ जुए छे ॥ ३६ ॥ जे प्रमादी छे, ते आलशी छे तेने भूरि के० घणा विकल्प उठे छे, अने पोताना अनुभवमा तेने शिथिलपणुं रहे छे, अने तेने मुक्ति मार्गरूप स्वरूपाचरण दूर छे ॥ ३७ ॥ अने जे विकल्पविना अनुभवमा वसे छे, ने शुद्ध चेतना युक्त छे, ते मुनीश्वर थोडा कालमां कर्मथी मुक्त थाय छे ॥ ३८ ॥ जे प्रमादी अने आलशी छे तेने अहंबुद्धिथी अभिमानी कहियें. ने जे विकल्प रहित पोताना अनुभवमां छे, तेने तो सदाय समरसी कहिये ॥ ३९ ॥

हवे अभिमानी तथा ज्ञानीनी अवस्था उपर दृष्टांत आपेछे.—

अथ अभिमानी तथा ज्ञानी व्यवस्था कथन —

कवित्त छंद.—जैसे पुरुष लखे पहार अढि, भूचर पुरुष ताहि लघु लग्ग, भूचर पुरुष लखे ताकों लघु, उतर मिलै दुहुको भ्रम भग्ग, तैसे अभिमानी उन्नतगल, और जीवकों लघुपद दग्ग, अभिमानीकों कहे तुछ सब, ज्ञान जगे समतारसजग्ग॥४०॥

अर्थ.— जेम कोई माणस पहाड उपर चड्यो होय तेने भूचर के० तलोटीपरना माणसो न्हानोछे एम जुए, अने तलोटी वाला माणसने पहाड उपर चडेलो न्हानो जुए, अने पछी पहाड उपर चडेलो हेठे उतरी तलोटी वालाने मले त्यारे बेउनो भ्रम नाना पणानो दूर थाय; तेम अभिमानी पुरुष उंची गरदन राखनारो अन्य जीवने नाना जुए, तुछ जाणे, अने बीजा पुरुषो ते अभिमानी पुरुषने तुछ जाणे,

एम अरपरस विचारमां विषमता रहे छे. ते ज्यारे ज्ञान जागे त्यारे बेउना मनमां विषमता मटीने समपणुं आवी जाय ॥ ४० ॥

हवे एकला अभिमानीनी व्यवस्था कहे छे.— अथ अभिमानी यथा.—

सवैया इकतीसा.— करमके भारी समुझे न गुनको मरम, परम अनीति अधरम रीति गहे हैं, होहि न नरम चितगरम घरमहुते, चरमकी दृष्टिसों भरम भूली रहे है; आसन न खोले मुख वचन न बोले सिर नाएहू न मोले मानो पाथरके चहे हैं; देखनके हाउ भव पंथके बटाउ ऐसें, मायाके खटाउ अभिमानी जीव कहे हैं ४१

अर्थ.—जे करम बंधथी अती भारी छे. केपने गुण जाणेछे, पण गुणनो मर्म जाणतो नथी अने परम अन्याय तथा अधर्मनी रीत ग्रही राखेछे. चित्तनेविषे नरमास तथा दया परिणाम नथी. केपनो अती घर्म ताप छे, तेथी गरम रहेछे, ज्ञान दृष्टी नथी अने चर्मरूप दृष्टीवडे भरममां भूल्यो फरे छे. कोई विकट आसन बांधे तेने खोले नही, ने मोढेथी वचन बोले नही, मौन व्रती रहे, तेने ज्ञानी महा पुरुष जाणीने कोई माथुं नमावे, तो तेनो सत्कार ने अंग चेष्टा पण न करे, जाणियें पथर थवानीज इछा करतो होय नीवली जेम बालकने भरावबाने हाउ कहीये छइये तेम लोकोने भरावबाने वेष धरी हाउ बनीने बेसे, अने भव भ्रमणना मार्गमां वटाउना सरखो चाले, एरीते माया जालना खाटनारा अभिमानी जीवने ओलखीये ॥ ४१ ॥

हवे ज्ञानी जीवनी व्यवस्था कहे छेः— अथ ज्ञानी यथा —

सवैया इकतीसाः— धीरके धरैया भवनीरके तरैया भयभीरके हरैया वर वीर ज्यों उमहे हैं; मारके मरैया सुवीचारके करैया सुख ढारके ढरैया गुनलोसों लह लहे है; रूपके रीझैया सवनैके समुझैया सवहीके लघुभैया सबके कुबोल सहेहै वामके वमैया दुखदामके दमैया ऐसे रामके रमैया नर ज्ञानी जीव कहे है ॥४२॥

अर्थ.—धीरजने धरनार, संसार सागरने तरनार, भवभीडने हरनार, मोटा सूर वीरनी परे पोताने साह्य आपवाने उमंगी रह्याछे, कंदर्पने मारनार, भला विचारनुं करनार, सुख समाधिना टालामा ढलनार, आत्माना गुणनो लव एटले अंस तेमां लहलहि रह्या छे, आत्मरूपना रीझनार, सर्व नयना सारनो रस समजनार, निरहंकारी पणे सर्वेना नाना भाई थई रह्याछे क्षमावतपणे सर्वेना दुष्ट वचन सहेछे. वाम के० स्त्रीने वमैया के० छोडनार, दुःखनी परपराना दमनार, एवा आत्मारांमने विषे रमनारा मनुष्यने ज्ञानी जीव कहीये ॥ ४२ ॥

हवे शुद्धात्मना अनुनवनी प्रशंसा करेछे –अथ शुद्धात्म अनुनव प्रसंसा–

चोपाई – जे समकिती जीव समचेती, तिन्हिकी कथा कहों तुमसेती, जहां प्रमाद क्रिया नहि कोई, निर्विकल्प अनुनो पद सोई ॥४३॥ परग्रिह त्याग जोग थिर तीनो, करम बंध नहि होइ नवीनो, जहा न राग दोष रस मोहे, प्रगट मोषमारग सुख सोहे ॥ ४४ ॥ पूरव बंध उदे नहि व्यापे, जहा न नेद पुन्न अरु पापे, दरब नाव गुन निर्मल धारा, बोधविधान विविध विस्तारा ॥ ४५ ॥ जिन्हिके सहज अवस्था ऐसी, तिन्हिके हिरदे डुविधा केसी, जे मुनिषिपक श्रेणि चढि धाये, ते केवलि नगवान कहाये ॥४६॥ दोहरा – इहिविधि जे पूरन नये, अष्ट करम वनदाहि, तिन्हिकी महिमा जो लखे, नमे बनारसि ताहि ॥ ४७ ॥

अर्थ – जे समकिती जीव छे ते समचेती के० वीतरागपणे समतावंत छे, अहो नव्य प्राणी, तेनी कथा हु तमने कहुछुं जाहा कोई प्रमादनी क्रिया नथी, तेने निर्विकार निर्विकल्प अनुनव पद कहीये, एटले अनुनवमा विकल्प नथी ॥४३॥ जहां परिग्रहनो त्याग छे, अने त्रणे जोग स्थिर छे, त्या नवीन कर्मनो बंध नथी थतो, वली जहां जीवने राग द्वेष रस मोह नथी, तेज प्रगटपणे मोक्ष मार्गनुं सुख के० प्रारन छे ॥४४॥ वली जहा पुर्वे जे कर्मबंध छे, तेनो उदय नथी, अने जाहा पुन्य पापना नेदनो विचार नथी, अने जाहा साधुना सतावीस गुण द्रव्यपणे नावपणे निर्मल धाराये वही रह्याछे वली जाहा बोधविधान के० ज्ञानना प्रकार नात नातना विस्तारमां छे ॥४५॥ जेनी एवी सहज अवस्था थई होय तेना हृदयमा आत्म ओलखवानी डुविधा केम रहे ! अने एज अवस्थामा जे मुनिराज क्षपक श्रेणी चढी उन्मुख धाये तेनो केवली नगवत जाणवा ॥ ४६ ॥

अर्थ – ए रीते व[illegible]ष्ट कर्मरूप वनने बालीने पूर्ण आत्मारूपमा जे थयाछे अने तेना महिमाने जे संत पुरुष होय तेहिज जुएछे, एटले सत्य पणे जाणेछे तेने वणारसीदास नमस्कार करेछे ॥ ४७ ॥

हवे मोक्ष पदार्थनी उत्पत्तिनो क्रम कहेछे – अथ मोक्ष उत्पत्ति वर्ननं –

छप्पय छंद –नयो शुद्ध अकूर, गयो मिथ्यात् मूर नशि, क्रमक्रम होत उदोत, सहज जिम शुक्लपक्ष शशि, केवल रूप प्रकासि, नासि सुख रासि धरम ध्रुव, करि पूरन थिति आउ, त्यागि गतनाव परम हुव, इह विधि अनन्य प्रनुता धरत, प्रगटि बूंद सागर नयो, अविचल अखंड अनन्य अखय, जीव दरब जगमहि जयो ॥४८॥

अर्थ –शुद्धतानो अंकुर प्रगट थता मिथ्यात मूलथी नाश पाम्युं, तेवारे जेम अ

जवालीया पखवाडीयामां चंद्रमां क्रमे क्रमे उद्योतवत थायछे, एरीते आत्मापण क्रमे क्रमे उद्योत थतां केवल ज्ञान रूपनो प्रकाश थाय, अने आत्मानो निश्चल ध्रुव धर्म सुख समुद्र ते जासे, ते पछी आयुष्य कर्मनी स्थिती पूर्ण करीने अने मनुष्य गतिनो जाव छोडीने परमात्मारूपें थाय, एरीते अनन्य प्रजुता एटले सर्वथी श्रेष्ट ता धारण करे, कोनी पेठे तो जेम पाणीनी बुंद बुंद एकठी मली समुद्र थायछे तेम आत्मा गुणना अंस क्रमे क्रमे प्रगट करतो पूर्ण थयो, ते पछी अविचल अखंम अजय ने अक्षय एवुं जीव द्रव्य जगतनेविषे सदा जयवत थायछे. ॥ ४८ ॥

हवे अष्ट कर्मनो नाश थयेथी जे आत्माना सहज आठ गुण प्रगट थायछे ते कहेछे.— अथ अष्ट कर्म नागतें अष्ट गुन प्रकाश वर्ननं.—

सवैया इकतीसाः— ज्ञानावरनीके गये जानिये जु है सु सब, दंसनावरनके गयेतें सब देखिये, वेदनी करमके गयेते निराबाध रस, मोहनीके गये शुद्ध चारित विसेखिये; आउ कर्म गये अवगाहन अटल होइ, नाम कर्म गयेते अमूरतीक पेखिये, अगुरुलघुरूप होई गोत कर्म गये, अंतराय गयेते अनंत बल लेखिये. ४९

अर्थ —ज्ञानावरणीय कर्म नाश थता लोकालोकमांजे वस्तु छे, ते सर्व जणाय, एटले, केवल ज्ञान प्रकाश थाय, अने दर्शनावरणीय कर्मनो क्षय थवाथी लोकालोकना जाव ने सामान्यपणे जोईये, एटले केवल दर्शनगुण प्रगट थाय, अने वेदनीय कर्मना क्षय थी निराबाध रस उपजे एटले आत्मा बाधपणाथी मुक्त थाय, ते अबाधपणे अनंत सुखरूप गुण उपजे, वली मोहनीय कर्मनो नाश थयेथी विशेषपणे शुद्ध चारित्र प्रगट थाय, एटले यथाख्यात चारित्र स्पष्ट गुण होय, आयु कर्मनाश थयेथी अवगाहनानी सादि अनंत स्थिति थाय, (आयुकर्मगते निश्चला स्थितिर्नवति) नाम कर्म नाश थयेथी अमूर्त्तिकपणुं जीवनुं शुद्ध स्वरूप उपजे, गोत्र कर्मनो क्षय थयेथी अगुरुलघु गुण उपजे, जेथी जीवमां लघुपणु तथा गुरुपणु न होय, अने अंतराय कर्मनो नाश थयेथी अनंत बल उपजे, एटले अनत वीर्यपणानो गुण उपजे छे. ए आठ गुण उपजे. ॥ ४९ ॥

इति श्री नाटक समयसारनो बालबोधरूप नवमो मोक्ष द्वार समाप्त.

दोहराः— इति श्रि नाटिक ग्रथमें, कह्यो मोक्ष अधिकार; अब बरनो संक्षेपसों, सरब विशुद्धीद्वार. ॥ ५० ॥

अर्थ — इति के० संपूर्ण नाटक समये सारविषे मोक्ष द्वारनो अर्थ कह्यो ने हवे दसमुं संक्षेपथी सर्व विशुद्धि द्वारनुं वर्णन करुं छुं ॥ ५० ॥

हवे अंही सर्व उपाधि रहित शुद्ध आत्म स्वरूपनुं वर्नन करे छे —

सवैया इकतीसा — करमको करता है भोगनिको भोगता है, जाकी प्रभुतामें ऐसो कथन अहित है, जामे एक इंद्रियादि पंचधा कथन नांहि, सदा निरदोष बंध मोक्षसो रहित हैं, ज्ञानको समूह ज्ञान गम्य है सुभाव जाको, लोक व्यापी लोकातीत लोकमे महित है, शुद्ध वस शुद्ध चेतनाके रस अंश भर्यो, ऐसो हंस परम पुनीतता सहित हैं ॥ ५१ ॥ दोहरा — जो निहचे निरमल सदा, आदि मध्य अरु अंत, सो चिद्रूप बनारसी, जगतमाहि जयवंत ॥ ५२ ॥

अर्थ — कर्मनुं कर्त्तापणु अने सुखदुःखनुं भोगतापणुं एवु जे लोक व्यवहारमां केवाय छे ते जेनी प्रभुतामा ईश्वरताई छे तेमा अहितकारी छे, वली जेनी प्रभुतामां एकेंद्रिय प्रमुख पांच भेदनुं केवु ते पण अहितकारी छे, सत्य नथी केमके जे सदा निर्दोष छे, तेना निश्चय स्वभावमा बंध नथी अने मोक्ष पण नथी, एवो बंध मोक्ष रहित छे त्यारे ए द्रव्य शुं छे, एवो प्रश्न थवे तेनो खुलासो करे छे के, ए ज्ञाननो समूह जे पुजतेरूप छे जेनो स्वभाव ज्ञान गम्य छे, ज्ञान वडे जाणवामां आवे एवो छे, लोकमा सघले स्थले व्यापी रह्यो छे, लोकातीत के० क्षेत्र लोकथी जुदो छे ने लोकमा महित के० पूजनीक उपादेय छे, अनादि कालनो एवोज चाल्यो आवेछे तेथी जेनो शुद्ध अवतंश छे अने शुद्ध चेतनाना रस प्रदेशथी भरपूर छे, एवा जे हंस छे ते परम पुनीतता सहित एटले उत्कृष्ट शुद्धता सहित छे ॥५१॥ जे निश्चय स्वरुपमा सदा निर्मल छे, आदि मध्यने अंत्य अवस्थाने विषे एक रूप छे, ने तेज चिद्रूप छे तेनी वणारसी स्तुती करेछे के एवा भगवान जगतमां जयवंत थाओ.५२

हवे जीवनुं अभोक्ता पणुने अकर्त्ता पणु ठरावे छे — अथ जीव अकर्त्ता वर्नन —

चोपाई — जीव करम करता नहि ऐसो, रस भोगता सुभाव न जैसो, मिथ्यामतिसों करता होई, गये अज्ञान अकरता सोई ॥ ५३ ॥

अर्थ — जेम जीवने कर्मनो कर्त्ता न कहिये तेम रसनो भोक्ता पण न कहियें; जीव ज्यासुधी मिथ्यामति वालो छे, त्यासुधी तो कर्त्तापणु केवलमा साचो छे. पण ज्यारे ए अज्ञान जायछे. त्यारे जीव अकर्त्तापणे छे एवु स्पष्ट जणाय छे ॥५३॥

हवे आत्मानो शुद्ध स्वभाव तथा विभावनुं वर्णन — अथ स्वभाव विभाव वर्ननं.—

सवैया इकतीसा — निहचे निहारत सुभाव जाहि आतमाको, आतमीक धर

म परम परगासना, अतीत अनागत वरतमान काल जाको, केवल सरूप गुन लोकालोक नासना; सोई जीव संसार अवस्थामांहि करमको, करतासो दीसे लिये नरम उपासना; यहे महा मोहके पसार यहे मिथ्याचार, यहे नौ विकार यहे व्यवहार वासना ॥ ५४ ॥

अर्थ — निश्चय दृष्टिए जोतां जे आत्मानो आत्मिक धर्म परम प्रकाशरूप सदा स्वनाव छे. एटले निश्चनयथी अतीत अनागत तथा वर्त्तमान कालमां लोकालोक नासननो करनार केवल स्वरूप गुण छे तेज आत्मा संसार अवस्थानेविषे न्रम उपासनावडे एटले मिथ्यात अज्ञानीनी सेवाने लीधे कर्मना कर्त्तानी पठे देखाय छे एम मिथ्यातनी सेवामां जे रेवुं ते मोहनो पसार छे, एज मिथ्याचार छे जीवने नव न्रमणनो एज विकार छे. तथा एज व्यवहार वासना छे ॥ ५४ ॥

हवे जीवनी अनोक्ता अवस्थानुं वर्णन करेछेः—अथ जीव अनोक्ता वर्ननं —

चोपाई— जथा जीव करता न कहावै; तथा नोगता नाउ न पावै; है नोगी मिथ्यामति माही, मिथ्यामती गयेते ते नाही ॥ ५५ ॥

अर्थ.— जेम जीव कर्त्ता नथी तेम नोक्ता पण नथी, मात्र मिथ्यातमां कर्त्ता जीव छे, ने नोक्ता पण जीव छे, पण मिथ्यात नाश थाय त्यारे जीव कर्त्ता अने नोक्ता नाम धरावतो नथी ॥ ५५ ॥

हवे नय स्वरूपमा नोक्ता अनोक्ता पणाना लक्षण बतावेछे—

अथ नोगतापना अनोगतापनाको लक्षनः—

सवैया इकतीसा— जगवासी अज्ञानी त्रिकाल परजाय बुद्धी, सोतो विषे नोग निको नोगता कहायो है; समकिती जीव जोग नोगसो उदासी ताते सहज अनोगता गरथनिमे गायो है, याही नाति वस्तुकी व्यवस्था अवधारे बुध, परनाउ त्यागि अपनो सुनाउ आयो है, निरविकलप निरुपाधि आतमा अराधि, साधि जोग जुगति समाधिमें समायो है ॥ ५६ ॥

अर्थ — जगतवासी जे अज्ञानी छे, त्रणे कालविषे परजाय बुद्धि छे, एटले द्रव्यबुद्धि नथी, ने हुं सुखी-हुं दुःखी एवी पर्याय बुद्धि करेछे, पण निश्चपणे शुद्ध आत्म द्रव्यने नहीं जाणे, एवो अज्ञानी जीव तो विषय नोगनो नोक्ता केवायछे, अने समकिती जीव मनवचनने कायाना योगथी तथा विषय नोगथी उदासीपणे रहेछे,अने शुद्ध आत्म द्रव्यना अनुनवमां मग्न छे, तेथी समकितीने शास्त्रमां सहज अनोक्तापणे गायलो छे, एरीते पंमित छे ते वस्तुनी व्यवस्था अवधारीने ए

टले वस्तुनो स्वनाव विचारीने परजावने त्यागीने पोताना सहज स्वनावमां आवे छे, तेथी सुखी दुःखी इत्यादि विकल्पविना कर्म संयोगरूप उपाधिविना, एवा आत्माने आराधीने ज्ञान दर्शन चारित्ररूप जोगनी जुगति साधी समाधि एटले सहज स्वरूपमां समायछे ॥ ५६ ॥

हवे अनोक्ता जीवनी अवस्थानुं वर्णन करेछे —अथ जीव अनोक्ता वर्ननं —

सवैया इकतीसा — चिनमुद्रा धारी ध्रुव धर्म अधिकारी गुन, रतन नंमारि अप हारी कर्म रोगको, प्यारो पंमितनिको हुस्यारो मोख मारगमे न्यारो पुदगलसो उजियारो उपयोगको, जाने निजपर तत्त रहे जगमे विरत्त गहे न ममत्त मन वच काय जोगको, ता कारन ज्ञानी ज्ञानावरनादि करमको, करता न होइ नोगता न होइ नोगको ॥ ५७ ॥ दोहराः— निरजिलाष करनी करे, नोग अरुचि घट मांहि, तातें साधक सिद्ध सम, करता जुगता नाहि. ॥ ५८ ॥

अर्थ — चेतना चिन्हनो धरनार, निश्चल स्वनाव ज्ञातापणुं तेनो अधिकारी, ज्ञानादिक गुणरूप रत्नना नंमारनो नमारी छे, कर्मरूप रोगनो विनाश करनार, पंमितनो प्यारो एटले तत्व ज्ञानीने वल्लन, मोक्षमार्गमा हुशीयार के० सावधान, पुद्गलिक धर्मथी जुदो रेनार, मतिश्रुत प्रमुख उपयोगनुं अजवालुं जेना हृदयमां थयुंछे, पोताना अने परका सर्व तत्वनो जाणनार, जगतमा विरक्तपणे रेनार, एटले वेरागी, मन वचन ने कायाना योगनी ममता नही राखनार माटे ज्ञानी जीव ज्ञानावरणी प्रमुख कर्मनो कर्त्तापण नथी, अने दुःख सुखना नोगनो नोक्तापण नथी ॥ ५७ ॥ इछाविना क्रिया करवी, अने घटपिंममा नोगनी रुची नही राखवी, तेथी मुक्तिनो साधक पुरुष सिद्ध समान कह्यो, अने ते कर्त्ता तथा नोक्ता नथी ॥५८॥

हवे अहंबुद्धि थकी कर्त्तापणु थायछे ते कहेछे — अथ अहंबुद्धि वर्ननं —

कवित्तछंद — ज्यों हिय अंध विकल मिथ्यात धर मृषा सकल विकलप उपजावत, गहि एकत पछ आतमको, करता मानि अधोमुख धावत, त्यों जिनमती दरब चारित कर, करनी करि करतार कहावत, वंछित मुक्ति तथापि मूढमति, विनु समकित नवपार न पावत ॥ ५९ ॥ चोपाई — चेतन अंक जीव लखि लीन्हा, पुद्गल करम अचेतन चीन्हा; वासी एक खेतके दोऊ, यदपि तथापि मिले नहि कोऊ. ॥ ६० ॥ दोहरा— निजनिज नाउ क्रिया सहित, व्यापक व्यापि न कोइ, करता पुद्गल करमको, जीव कहासों होइ. ॥ ६१ ॥

अर्थ — जेम कोइ हृदय अधपुरुष विकल मिथ्याधारीने हैयामा विकल्प उप

ज्ञावे, ते सर्व फूगा छे ते क्रियावादीनो एकांत पक्ष ग्रहीने आत्माने कर्त्ता मानीने अधोमुख के० नीची गतीने पकडी रह्योछे, एवो जे जिनमती छे ते जाव चारित्र विना अने द्रव्य चारित्रयुक्त करणी करेछे, ने क्रिया करण एटले शुन क्रियानो कर्त्ता पोते केहेवायछे, ते मुक्तिने वांछे तोपण मूढमतिछे, नवनो पार समकित विना पामतो नथी. ॥ ५९ ॥ अने जीवनो अंक के० चिन्ह चेतना जाणवी; अने पुज्ञल तथा कर्म ए बेउने जड जाणवा. चेतन अने अचेतन बेउ एक क्षेत्रा वगाहीछे एटले एक क्षेत्रवासी छे, तथापि कोई कोईथी मले एवा नथी. ॥६०॥ जे पदार्थ छे ते पोतपोताना जावनी क्रिया सहित रहे छे, जेमां व्यापी रहे ते वस्तुने व्याप्य कहीये अने व्यापी रहेनार पदार्थने व्यापक कहीये तेथी पुज्ञल व्याप्यमां जीवनुं व्यापकपणुं नथी, माटे पुज्ञलीक कर्मनो कर्त्ता जीव क्यांथी थाय अर्थात् न ज थाय. ॥ ६१ ॥

हवे व्यवहारमां जे रीतें जीवनुं कर्त्तापणुं ठरेछे ते जाणवेछेः—अथ कर्त्ता कथनः—

सवैया इकतीसाः—जीव अरु पुज्ञल करम रहे एक खेत, जद्यपि तथापि सत्ता न्यारी न्यारी कही है, लछन सरूप गुन परजे प्रकृति जेद, दुहूमें अनादिहीकी दुविधा व्हैरही है, एते परि जिन्नता न जासे जीव करमकी, जौलों मिथ्या जाव तोलों ओंधी वाउ वही है; ज्ञानके उदोत होत ऐसी सूधी दृष्टि जई, जीव कर्म पिंमको अकरतार सही है. ॥ ६२ ॥ दोहरा.— एक वस्तु जेसी जु है, तासों मिले न आन; जीव अकर्त्ता करमको,यह अनुजो परवान. ॥ ६३ ॥

अर्थ — जेम आकाश प्रदेशमां पुदगल कर्म अवगाहि रहे छे; तेज आकाश प्रदेशमां जीव प्रदेश पण अवगाहि रहे छे. एम जीव अने पुज्ञल एक क्षेत्रना वासी छे, तथापि चेतननी सत्ता अने जडनी सत्ता ए बे जुदी छे अनादि कालनी लक्षण जेदवडे स्वरूप जेदवडे गुणपर्यायवडे ने प्रकृति जेदवडे ए बेउनेविषे द्विविधता चाली आवेछे तेम छतां लक्षण प्रमुखनी जिन्नता मिथ्यात्व जावने लीधे जीव अने कर्मनी ज्या सुधी जासे नही, त्यां सुधी उंधोवायु वहे छे एटले जीवने कर्त्ता मानीये छैये अने ज्ञाननुं उद्योत थवाथी सम्यकनी एवी शुद्धता थई के तेथी कर्म पिंमनो अकर्त्ता जीव सही थयो छे. एम जाणवुं ॥ ६२ ॥ जे वस्तु जेवीरीते छे ते साथे आनके० बीजा स्वरूप वाली वस्तु मलती नथी. एकमेक थती नथी एथी जीव कर्मनो अकर्त्ता छे ए अर्थ अनुजव प्रमाणथी समजाय छे ॥ ६३ ॥

हवे मूढ जीव कर्मनो कर्त्ता मानी लेय छे ते कहे छे.—अथ मूढकर्त्तायत्कथन.-

चोपाई — जेडरमती विकल अज्ञानी, जिन्हि सुरीति पररीति न जानी, माया मगन नरमके नरता; ते जिय नाव करमके करता ॥ ६४ ॥ दोहरा — जे मिथ्यामति तिमरसो, लखे न जीव अजीव, तेई नावित करमके, करता होइ सदीव ॥ ६५ ॥ जे अशुद्ध परिनति धरे, करे अह परवान, ते अशुद्ध परिनाम के, करता होइ अजान ॥ ६६ ॥

अर्थ.— जे जीव डुष्ट बुद्धिवडे विकल छे, अज्ञानी छे, जे पोतानी ने पारकी रीत जाणता नथी माया जालमा मग्न छे, न्रमनाजरता के० धणी छे, ते जीव नाव कर्मना करनारा छे ॥ ६४ ॥ जे जीव मिथ्यामति अंधकारथी जीव अजीवने निन्न पणे जाणता नथी, ते जीव सदाकाल नावित कर्मना कर्त्ता छे, एटले पोतपोताना कर्मनो जे स्वनाव तेनेज नावित कर्म कहिये ॥ ६५ ॥ जे जीव अशुद्ध परिणतिने धरेछे, सर्व क्रियामा अहंकार बुद्धिथी अहं कर्त्ता एवु प्रमाण करछे, ते जीव अजाण थका अशुद्ध परिणामना कर्त्ता थायछे ॥ ६६ ॥

अथ शिष्य प्रश्न —

दोहरा.— शिष्य कहे प्रनु तुह्म कह्यो, डुविध करमको रूप; दर्व कर्म पुदगल मई, नाव कर्म चिडूप ॥ ६७ ॥ करता दरवित करमको, जीवन होइ त्रिकाल, अब इह नावित करम तुम, कहो कौनकी चाल ॥ ६८ ॥ करता याको कौन है, कोन करै फल नोग, के पुदगल के आतमा, के डुहुको सयोग ॥ ६९ ॥

अर्थ — हवे शिष्य प्रश्न पुछे छे के, हे प्रनु तमे कह्यु छे के, कर्मनुं स्वरूप बे प्रकारनुं छे, एकतो पुदगलमय ते पुदगल पिंमरूप इव्य कर्म छे, अने बीजु नाव कर्म छे ते चिद्रूप के० चेतनाविकार रूप छे ॥ ६७ ॥ वली स्वामी तमे एवु कह्यु के इव्य कर्मनो करनार जीव त्रणे कालमा नथी, त्यारे नावित कर्म तमे कोनी चाल कहो छो ? ॥ ६८ ॥ ए नावित कर्मनो कर्त्ता कोण छे, ने एना कर्म फलनो नोक्ता कोण छे ? पुजल कर्त्ता नोक्ता छे ? के आत्मा कर्त्ता,नोक्ता छे ? किंवा पुजल अने आत्मा ए बेहुनो संयोग कर्त्ता नोक्ता छे ॥ ६९ ॥

हवे आ प्रश्ननो गुरु उत्तर आपेछे — अथ गुरु उत्तर कथन —

दोहरा — क्रिया एक करता जुगल, यों न जिनागम माहि, अथवा करनी औरकी, और करै यो नाहि ॥ ७० ॥ करे और फल नोगवे, और बने नहि एम,

जो करतासो भोगता, यहे यथावत जेम॥७१॥ भाव कर्म कर्त्तव्यता, स्वयं सिद्ध न हि होइ, जो जगकी करनी करे, जग वासी जिय सोइ ॥७२॥ जिय करता जिय भोगता, भाव कर्म जिय चालि, पुदगल करे न भोगवे,दुविधा मिथ्या जालि॥७३॥तातें भावित करमको, करे मिथ्याती जीव, सुख दुख आपद संपदा,भूजे सहजसदीव॥७४॥

अर्थ.— क्रिया करणी एक होय अने तेना करनारा जुगल के० वे एवी वात जिनेश्वरना आगममां नथी कही, तेम पुद्गल अने जीव ए वेउ एक क्रिया करे नही, अथवा बीजानी क्रिया छे अने करनार वली बीजोज छे, एवुं पण छे नही, एटले पुदगलनी क्रिया जीव न करे अने जीवनी क्रिया पुदगल न करे॥७०॥ए रीते करे एक अने तेनुं फल भोगवनार बीजोज होय एवुं बने नही, एवु जिनेश्वरना आगममां नथी कह्यु, एटले पुद्गलनी क्रियानुं फल जीव भोगवे नही, केमके जे कर्त्ता तेहिज भोगता, जे कर्म करे तेज फल भोगवे, ए वात केवत प्रमाणे खरीछे ॥७१

भाव कर्मनी कर्त्तव्यता के० क्रिया तेतो स्वयं सिद्ध न थाय, एटले भाव कर्म पोतानी मेले सिद्ध नही थाय तेथी एवुं ठरे छे के जे जगतनी क्रिया करे ते भाव कर्मनो कर्त्ता छे; एटले गमनागमन क्रिया करे तेज भाव कर्मनो कर्त्ता जगत वासी जीव छे॥७२॥जीवज कर्त्ता अने जीवज भोक्ता छे, जीवनी चल विचलताथी भाव कर्म उपजे छे, एथी भावित कर्म जीवनी चाल छे. ए भावित कर्मने पुद्गल करे नही, तेम भोगवे पण नही, एमां जे अद्वैत मतवाला द्विधा राखे छे. ते मिथ्या जाल छे ॥ ७३ ॥ तेमाटे जे मिथ्याती जीव छे, ते भावित कर्मने करे छे तेणे करी सुख दु:ख आपदा संपदा सदा सहजे भोगवे छे ॥ ७४ ॥

हवे एकात वादिसांख्यमतना वचननुं वर्णन करे छे.— अथ एकात वादी वर्ननं —

सवैया इकतीसा— केई मूढ विकल एकंत पक्ष गहै कहै आतमा अकरतार पूरन परम है, तिन्हसों जु कोउकहै जीउ करता है तासो, फेरी कहै करमको करता करम है, ऐसे मिथ्यामगन मिथ्याती ब्रह्म घाती जीव, जिन्हेके हिये अनादि मोहको भरम हैं; तिन्हको मिथ्यात दूरि करिबेको कहै गुरु स्यादवाद परवान आतम धरम है ॥ ७५ ॥

अर्थः— कोई मोह मूढ जीव ज्ञानवडे विकल एकांत पक्ष ग्रहीने एम कहे छे के, आत्मा अकर्त्ता छे, परम पूर्ण छे, ते एकांत वादीने कोई एवु कहे के, आत्मा कर्त्ता छे, तेने सांख्यमति प्रमुख एकांत वादी कहे छे के, कर्मनुं कर्त्ता कर्मज छे. एवा मिथ्यातमां मग्न मिथ्याती जीव ब्रह्म घाती छे. तेमना हैयामां अनादि का

ळथी मोह कर्म लाग्युं रहे छे, ते मिथ्याती जीवनुं मिथ्यात दूर करवाने स्याद्वाद रूप जे आत्म धर्म छे. ते धर्मज बधी रीत प्रमाण करी कहे छे ॥ ७५ ॥

हवे जेम स्याद्वाद वस्तु स्वरूप छे तेम कहे छे —अथ स्याद्वाद कथन.—

दोहा.— चेतन करता जोगता, मिथ्या मगन अजान, नहि करता नहि जोग ता, निहचे सम्यकवान ॥ ७६ ॥ सवैया इकतीसा — जैसे सांख्यमति कहै अलख अकरता है सर्वथा प्रकार करता न होइ कब ही, तैसे जिनमति गुरु मुख एक पक्ष सुनि, याही जाति मानै सो एकत तजो अबही, जोलों डुरमति तोलो करमको कर ता है, सुमती सदा अकरतार कह्यो सब ही, जाके घट ज्ञायक सुनाव जग्यो जब ही सो, सोतो जग जालसों निराळो जयो तबही ॥ ७७ ॥

अर्थ — मिथ्यातमा मग्न अजाण थको चेतन कर्त्ता छे अने जोगता पण छे अने समकेति जीव निश्चेथी कर्त्ता पण नथी अने जोक्ता पण नथी ॥ ७६ ॥

जेम सांख्यमति पोताना मतमा एवी प्ररूपणा करेछे के, जे अलक्षरूप छे ते स र्वथा अकर्त्ता छे, पण क्यारे कर्त्ता थतो नथी, अने सत्व रज तम गुण प्रकृति क र्त्ता छे, एरीते जे सांख्यमतिवाळा कहे छे, तेम कोई जिनमती पण कोई गुरुना मुखथी निश्चे नयनो एक पक्ष सांजळीने एमज माने, एटले जीवने अकर्त्ता माने छे पण श्री जिनेश्वरना मतमा स्याद्वाद पक्ष छे ते एवु ठरावे छे के ज्यांहां सुधी डुट बुद्धि मिथ्यामती अह बुद्धिमां छे, ज्यांहा सुधी जीव कर्मनो कर्त्ता छे, अने सुम ती आवेथी सदा अकर्त्ता छे, जेवु छे तेवुज अकर्त्ता कह्यो, जेना घटमा पोतानो ज्ञायक स्वजाव ज्यारे जाग्यो ते वखतथीज ते जगजालथी निराळो थयो, तेणे अर्ध पुद्गल परावर्त्तमा ससार जावी मुक्यो ॥ ७७ ॥

हवे एकांत वादी बोधमतीनि बुद्धिनु वर्णन करेछे — अथ बोध मति. वर्णनं

दोहरा — बोध छिनक वादी कहै, छिनु जंगुर तनुमाहि, प्रथम समे जो जीव है, डुतिय समे सो नाहि ॥ ७८ ॥ ताते मेरे मतविषे, करे करमजो कोइ; सो न जोग वे सरवथा, और जोगता होइ ॥ ७९ ॥

अर्थ — बोध क्षणिक वादी छे, ते एवु कहे छे के शरीरमां रेहेनारो जे पदार्थ छे ते क्षणजंगुर छे एटले प्रथम समयमां जे जीव पदार्थ शरीरने विषे छे, ते बी जा समयमा न पामिये, एथी सर्व क्षणजगुर छे ॥ ७८ ॥ वळी बोध कहे छे के मारा मनमा एवी श्रद्धा ठरी छे, के जे कोई कर्म करेछे, ते तो कर्मना फळनो जो गता नथी क्षणजगुर पणाने लीधे बीजोज जोगता थाय छे ॥ ७९ ॥

हवे एकांत वादी बोधमतीना खंमननो उपदेश करछेः—अथ मतखंमन उपदेश·—

दोहरा.—यह एकंत मिथ्यात पप, दूरि करनके काज, चिद विलास अविचल कथा, नाषै श्री जिनराज ॥ ८० ॥ बालापन काहू पुरुप, देख्यो पुर कइ कोइ, तरुन नये फिरिके लख्यो, कहे नगर यह सोइ ॥ ८१ ॥ जो डुहु पनमें एक थो, तो तिन्हि सुमिरन कीय; और पुरुषको अनुनव्यो, और न जाने जीय. ॥ ८२ ॥ जब यह वचन प्रगट सुन्यो, सुन्यो जेनमत शुद्ध, तब इकांत वादी पुरुप, जैन नयो प्रति बुद्ध ॥ ८३ ॥

अर्थः— ए जे एकांत क्षणनंगुरपणुं ते मिथ्यात पक्ष छे, तेने दूर करवाने चिदविलास अविचल कथा के० जीवना अचल पदनी वात सामान्य केवलीना राजा श्री जिनेश्वर देव कहेछे. ॥ ८० ॥ कोईक पुरुपे बाल्यावस्थामां एक नगर दीठुं होय ने ते पछी ज्यारे जुवानीमां आव्यो त्यारे फरीथी तेज नगरने तेणे जोयु त्यारे तेने रेतां रेतां स्मृती आवी के, आ नगर तो में बालपणामां जोयुं हतु तेज छे. ॥ ८१ ॥ हवे अंही जीवना अचलपणानो संनव देखाडेछे — के, बेहु कालमां जो ते एकज हतो, तेवारे ते पुरुपे बालपणामां ते नगर जोयुं हतु त्यारे तेने जुवानीमां तेनुं स्मरण थयु ए वात सत्य छे, एटले बने वखतमां नगर तेज खरुं छे, तेम एक पुरुषनो अनुनव के० नोगवेलुं कार्य तेने बीजो पुरुप जाणी शके नही. ॥ ८२ ॥ ज्यारे आ वात प्रगट सांनली अने जैनना शुद्ध मतनी वात सांनली त्यारे एकांतवादी पुरुपें प्रतिबोध पामीने जैनमत ग्रहण कीधो अने बोधमतने छोडी दीधो. ॥ ८३ ॥

हवे बोधमतीना क्षणनंगुरपणामां सद्दहणा केम थई ते कहे छे —

अथ बोध मतीकी सद्दहना कथनः—

सवैया इकतीसा·— एक परजाय एक समैमें विनसि जाइ, दूजी परजाय दूजे समैं उपजति है, ताको छल पकरिके बोध कहे समै समैं, नवो जीव उपजे पुरातनकी पति है; ताते मानै करमको करता है और जीव, नोगता है और वाके हिए ऐसी मति है, परजै प्रवानको सरवथा दरव जाने, ऐसे डुरबुद्धिको अवश्य डुरगति है ॥ ८४ ॥

अर्थ·— हर कोई इव्यनो एक समयमां जे एक पर्याय छे, इव्य क्षेत्र काल नावने लीधे अवस्था नेद छे, तेतो पर्याय ते समयमाज विनाश पामे छे, अने बीजा समयमां बीजो पर्याय उपजे छे, एवी जैननी वाणी छे ते वातनेज बोध

मतीवाला निश्चलपणे पकडी राखीने कहे छे के, समय समय नवो नवो जीव उपजे छे, अने पाछला जूना जीवनी हाणी थायछे, वली आम मानेछे के कर्मनो कर्त्ता कोई बीजो जीवछे अने कर्मनो भोगता कोई बीजोज जीव छे एम बौधमति क हेछे, द्रव्यना पर्यायतो समयमां फरे छे, तेने बोधमति पर्याय प्रमाणने सर्वथा प्रकारे द्रव्यज जाणे छे एवा दुर्बुद्धिने अवश्य दुर्गतीज प्राप्त थाय छे ॥ ८४ ॥

हवे दुर्बुद्धि अने दुर्गतीनु लक्षण कहे छे.—अथ दुर्गति स्थिति लक्षण —

दोहरा — दुर्बुद्धी मिथ्यामती, दुर्गति मिथ्या चाल, गहि एकंत दुर्बुद्धिसों, सुगति न होइ त्रिकाल ॥ ८५ ॥ कहे अनातमकी कथा, चहै न आतम शुद्धि, रहै अध्यातमसो विमुख, दुराराधि दुर्बुद्धि ॥ ८६ ॥ सवैया इकतीसा — कायासे विचारि प्रीति मायाहिमे हारि जीति, लिये हठरीति जैसे हारिलकी लकरी, चूंगुल के जोर जैसे गोह गहि रहै भूमि, त्योंहि पाई गाडे पें न छाडे टेक पकरी; मोहकी मरोरसों भरमको न छोर पावे, धावै चिहु ओर ज्यों वढावे जाल मकरी, ऐसी दुर्बुद्धि भूलि झूठके झरोखे झूली, फूली फिरे ममता जजीरनिसों जकरी ॥८७॥ वात सुनि चौक उठे वातहिसों भौकी उठे, वातसों नरम होइ वातहीसो अकरी; निंदा करे साधुकी प्रशंसा करे हिंसककी, साता माने प्रभुता असाता माने फकरी; मोख न सुहाइ दोख देखै तहा पैठि जाई, कालसो मराई जैसे नाहरसो बकरी, ए सी दुरबुद्धि भूली झूठके झरोखे झुली, फूली फिरे ममता जजीरनिसो जकरी॥८८

अर्थ — मिथ्यामतिने दुर्बुद्धि कहिये, अने मिथ्या चालने दुर्गति कहिये, जे दु ष्ट बुद्धि छे, ते एकात मतीने ग्रहणकरी रहेछे, तेने त्रणे कालमां मुक्ति न थाय. ॥ ८५ ॥ हवे दुर्बद्धिनी व्यवस्था कहेछे — जे आत्माथी भिन्न होय ते अनात्मा कहिये तेअनात्मानी कथा करे आत्मानी शुद्धता न जाणे, अने जे आत्मने आ श्रय विचार छे तेने अध्यात्म कहिये, ते तेनाथी दुराराध्य के० दु खे समजायो जाय तेनाथी दुर्बुद्धि जीव विमुख रहे छे ॥ ८६ ॥ दुर्बुद्धिनो विचार कहेछे.—कायासाथे प्रीति विचारे हार जीत करी मायामा गही रहे, हठ पकडी रहे, जेम हारल प क्षी पोताना पगमां लाकडी पकडीज राखे छोडे नही वली बीजो दृष्टात एक छे; जेम कोई एक चोर चुगलीना बंध देई करी गोहने मेहल अथवा हवेली उपर चडावे छे, ते बंधना जोरथी गोह भुमीने पकडी राखे, ने त्या पोताना पग घटी राखे, पण जे टेक पकडी ते मूके नही, तेम मोह कर्मनी मरोड लागी तेथी भ्र मनुं ठेकाणु पामे नही, एटले भ्रम छोडे नही जेम मकडी जाल वधारती पसार

ती चारे तरफ दोडे छे, तेम चारे तरफ दोडतो फरे, ए रीते दुर्बुद्धिये नूली जुवने फरुखे फुली रहेछे, ने ममतारूप दुर्बुद्धिना जजीरनी वेडीने जकमी रह्यो छे, ॥८७॥

वली एवाने कोई अध्यात्मनी वात कहे त्यारे चोकी उठे, ने नों नो करी उठे, कदाग्रह करे अने पोताना मनने रुचती वातथी नरम थाय ने मनमानती वात न थाय तो प्रकृति आकरी करे, मोक्षमार्गना साधकनी निंदा करे, अने जे हिंसक अधर्म कहेछे, तेनी प्रशंसा करे, पोतानी मोटाईने साता सुख समजे असाताने फकीरी जाणे, मोक्षनी वात सुहाय नही, ज्यां कोई दोष जुए त्यां चतुराईनुं अभिमान वतावे, अने मृत्युथी एवो मरे के, जेम नाहीरथी वकरी मरे, ए रीते मरतो रहे एम दुर्बुद्धि जीव नूल्यो फरेछे, ने जूवने फरुखे जुलतो ममतारूप वेडीमां वंधाई रह्योछे. ८८

हवे एकांत पक्षीना मतनी स्थापनाउपर अनेकांत स्याद्वादी मतनी प्रशंसा करेछेः—

अथ अनेकांत श्लाघा कथन.—

कवित्त छंदः— केई कहे जीव छिन भंगुर, केई कहै करम करतार ; केई कर्म रहित नित जंपहि, नय अनंत नाना परकार; जे एकंत गहै ते मूरख, पंमित अनेकांत पखधार ; जैसे भिन्न भिन्न मुगतागन, गुनसों गहत कहावे हार. ॥ ८९ ॥

दोहरा.— जथा सूतसंग्रहविना, मुक्तमाल नहि होइ, तथा स्याद्वादी विना मोख न सधे कोई. ॥ ९० ॥

अर्थ — कोई वोध मती जेवा तो जीवने क्षण भंगुर कहे छे, कोई मीमांसक सरखा कर्मने कर्त्ता मानेछे, कोई सांख्यमती सरखा तो सदा जीवने कर्मरहित कहे छे, एरीते अनंत नय नाना प्रकार कहे छे, एमाथी जे एकात पक्षज ग्रही रहेछे ते तो मूर्ख छे अने पंमित जन जे छे, ते अनेकात पक्ष ग्रहेछे, जेम एक माला मां मोतीनो समुदाय आपणी आपणी सत्तामां सउ जुदा जुदा छे पण ते सुतरमा परोव्याथी सर्वेनुं एक हार नाम पडे छे,॥८९॥ तेवो अनेकांत मत छे, केम के, सूतरना संगविना मोतीनी माला वने नही, तेम स्याद्वादमत धारण कीधा शिवाय मोक्षनो साधनहार थाय नही ॥ ९० ॥

हवे मत भेदनुं कारण पांच नय छे तेनुं वर्णन करेछे.— अथ पंच नय वर्ननंः—

दोहरा.— पद सुभाउ पूरवउदे, निहचे उद्दिम काल; पक्षपात मिथ्यात पथ, सरवंगी सिव चाल. ॥ ९१ ॥

अर्थ.— कोई पद वस्तु स्वभाव माने कोई पूर्व-कर्मनो उदय माने, कोई निश्चय

माने, कोई उद्यम माने, अने कोई काल माने एमां पक्षपात करी जे एकनेज माने ते मिथ्यात्व मार्ग केहेवाय ॥ ए१ ॥

हवे जुदा जुदा मतनी व्यवस्था कहे छे – अथ मतव्यवस्था कथन –

सवैया इकतीसा –एक जीव वस्तुके अनेक रुप गुन नाम, निरजोग शुद्ध पर जोगसो अशुद्ध हे, वेद पाठी ब्रह्म कहै मीमांसक कर्म कहै सिवमति शिव कहै बोध कहे बुद्ध हे, जैनी कहे जिन न्याय वादी करतार कहै, छहो दरसनमे वचनको विरुद्ध है, वस्तुको सरूप पहिचाने सोइ परवीन, वचनके भेद भेद माने सोई शुद्ध हे॥

अर्थ – जीव वस्तु एक अने तेना गुण अनेक छे,रूप अनेक छे, अने नाम अनेक छे, निरजोग छे एटले परसंयोग विना पोताना स्वभावमां रह्यो शुद्ध छे, अने परना सयोगथी अशुद्ध छे वली वेद पाठी प्रभावे करी एने ब्रह्म कहेछे मीमासक जैमिनीय एने कर्म कहेछे, शिवमती एटले वैशेषिक एने शिव कहेछे, बौधमती एने बुद्ध कहेछे, अने जैनी एने जिन कहेछे, न्यायवादी नैयायकादिक एने कर्त्ता कहेछे, एरीते छए दर्शनमां शुद्ध जीवने कहेवामां एकएकथी वचननुं विरूद्ध छे ए छए दर्शनमा जे वस्तुनुं स्वरूप उलखे तेज प्रवीण केहेवाय, अने वचनना भेद प्रमाणे समभिरूढ नयनिमत्ते वस्तुमां भेद प्रवीण माने तेज शुद्ध वात छे ए२

हवे छए दर्शनना मत स्थापन करे छे – अथ मतस्थापना कथन

सवैया इकतीसा – वेदपाठी ब्रह्म मानै निह्चै स्वरूप गहै, मीमांसक कर्म माने उदैमे रहतु है, बोधमति बुद्ध मानै सूछम सुभाव साधै शिवमती शिवरूप कालको हरतु है, न्याय ग्रंथके पढैया थापे करतार रूप, उद्दिम उदीरी उर आनद लहतु है, पाचो दरसनी तेतो पोषे एकएक अंग, जैनी जिनपंथी सरवंगी नै गहतुहै ए३

अर्थ –वेद पाठी के० वेदांती जीव वस्तुने ब्रह्म मानीने निश्चे स्वरूपने ग्रहेछे एटले एक अद्वैत मत धारेछे मीमांसक के० यज्ञना करनार जीवने कर्मरूप मानेछे, तेथी उदयरूप थया जे संस्कार तेनुं ग्रहण करेछे बौधमती जीवने बुद्धमानीने क्षणभंगुरपणाथी सूक्ष्म स्वभाव साधेछे, तेथी वस्तुना स्वभावनेज कर्त्ता मानेछे शिवमती जे वैशेषिक ते जीवने कालरूप मानेछे अने शिवने कर्त्ता मानेछे, न्याय ग्रंथना भणनारा प्रमाणादिक सोल पदार्थने मानेछे, शुद्ध जीवनेज कर्त्ता मानीने उद्यमनी उदीरणामां चित्तने आनंद करी मग्न रहेछे, एम ए पाचे दर्शन वस्तु स्वभावादिक पांच नयना एक एक अंग पोषेछे, एटले एकांत पक्ष ग्रहेछे अने जे जैन मार्ग केहेवाए छे, तेतो सर्वांगी सर्व नय ग्रहण करेछे ए३

हवे जे मत स्थापनामां जुदी जुदी बुद्धि कही ते सर्व एक छे, एवुं जणावेछे.—

अथ मत स्थापना एकत्वी करन.—

सवैया इकतीसा — निहचै अभेद अंग उदै गुनकी तरंग उद्यमकी रीति लिये उद्दता सकति है; परजायरूपको प्रवान सूछम सुभाउ कालकीसी ढाल परिनाम चक्र गति है, याही भांति आतम दरवके अनेक अंग, एक माने एककों न माने सो कुमति है, टेक डारि एकमें अनेक खोजे सो सुबुद्धि, खोजी जीवे वादी मरे साची कहवति है ॥ ९४ ॥

अर्थ — सर्व जीवमां लक्षण भेद नथी एवुं निश्चय अंग ते साचो तरतम योगें गुणना तरंग उठी रह्या छे तेथी उदय अंग साचो छे, अने जीवनी उद्दत शक्ति छे. त्यां ते प्रवर्त्ते छे, तेथी उद्यम अंगवडे कर्त्तापणुं साचु छे, अने पर्याय क्षण क्षणमां जुदा जुदा छे, तेनारूपनुं प्रमाण सूक्ष्म छे. तेथी बोध सूक्ष्म स्वभावने साधेछे, ते पण साचुं अने परिणामनी गति छे, ते फरता चक्रनी शक्ति छे, ते काल द्रव्यनी ढाल छे तेथी इहां कालने कर्त्ता कह्यो ते पण साचो छे, एरीते आत्मद्रव्यमा अनेक अंग पामीये पण एमांथी एकज अंग माने अथवा एक अंग न माने तेनुं नाम कुमति छे, जे एकांत पक्ष छोडीने एक वस्तुमां अनेक अंग खोजे तेनुं नाम सुबुद्धि कहीए, जेम के खोजी जीवे ने वादी मरे ए केवत छे, ते साची छे ॥ ९४ ॥

हवे स्याद्वादनुं रूप कहेछे.— अथ स्याद्वाद स्वरूप कथन.—

सवैया इकतीसा — एकमे अनेक है अनेकहीमे एक है सु, एक न अनेक कछु कह्यो न परतु है; करता अकरता है भोगता अभोगता है उपजे न उपजिति मूए न मरतु है, बोलत विचारत न बोले न विचारे कछु, भेषको न भाजन पै भेखसो धरतु है, ऐसो प्रभु चेतन अचेतनकी संगतीसो उलट पलट नट बाजीसी करतु है ॥९५॥

अर्थ.— एक द्रव्यमां अनेक पर्याय छे, अने अनेक पर्यायमां एक द्रव्य छे, एथी हर कोई वस्तु एकज छे, अथवा अनेकज छे, एम काई केहेवातु नथी व्यवहारमा कर्त्ता छे, निश्चयमां अकर्त्ता छे, व्यवहारथी भोक्ता छे, निश्चयथी अभोक्ता छे, व्यवहारथी उपजे छे, निश्चयथी उत्पत्ति नथी व्यवहारथी मुओ, ने निश्चयथी नथी मुओ, व्यवहारथी बोलेछे, विचारेछे, ने निश्चयनयथी कांइ बोले पण नही, ने विचारे पण नही, अविकल्पी छे, निश्चयथी भेषनुं भाजन के० स्थानक नथी, व्यवहारथी भेषनो धरनार छे. एवो चेतनवत जे ईश्वर छे, ते पुदगलीक अचेतन

नी संगतीथी उलट पालट थई रह्योछे, जाणे नटनी बाजीनो खेल करतो होय नी तेम खेल करेछे. ॥ एप ॥

अथ अनुनव व्यवस्था कथन.

दोहरा.– नट बाजी विकलप दसा, नाही अनुनौ जोग; केवल अनुनौ करन को, निर विकलप उपयोग ॥ एद ॥

अर्थ.– अनुनवमा आत्मद्रव्यनी जे अवस्था पामिये ते कहेछे पूर्वे कही जे नट सरखी जीवनी उलट पालट बाजी छे, ते तो विकल्प दशा छे ए दशा अनुनवमां योग्य नथी नि.केवल अनुनव करवाने निर्विकल्प उपयोग आपवो तेज सत्य छे ॥ एद ॥

हवे अनुनवमां निर्विकल्प उपयोग आपवुं तेनु दृष्टात कहेछे.–

अथ अनुनौ दृष्टांत कथन.–

सवैया इकतीसा – जेसे काहु चतुर संवारी हे मुगतमाल मालाकी क्रियामें नाना नांतिको विज्ञान है, क्रियाको विकलप न देखे पहिरन वालो, मोतीनकी शोनमें मगन सुखवान है; तेसे न करे न नुजे अथवा करे सु नुजे, ओर करे ओर नुजे सब नै प्रवान है, यद्यपि तथापि विकलप विधि त्याग जोग निरविकलप अनुनो अमृत पान है. ॥ एउ ॥

अर्थ – जेम कोई चतुर पुरुषे मोतीनी माला समारीने बनावी ने तेमां नात नातनुं विज्ञान छे, पण ते मालानो पहेरनारो तेनी क्रियानो विकल्प जोतो नथी, पण मोतीनी शोनाथी मगन ने सुखवान थई रहे छे, जेम मोतीनी मालामां अनेक विज्ञान छे, तेम अही पण अनेक विकल्प छे, आत्मा कर्त्ता नथी, नोक्ता नथी, अथवा कर्त्ता छे, नोक्ता छे, अथवा राग द्वेषादिक करनारा बीजा छे, अने नोगवनारा बीजा छे, ए सर्व नय प्रमाण छे. यद्यपि ए सर्व नय प्रमाण छे, तथापि ए सर्व विकल्प विधि त्यागवा योग्य छे. केमके अनुनव जे छे तेतो निर्विकल्प छे अने अमृतपान समान छे उपादेय छे ॥ एउ ॥

हवे स्याद्वादी आत्माने कर्मनो कर्त्ता जे नयथी मानेछे ते कहेछे.–अथ कर्त्ताकथनः–

दोहरा.– दरब करम करता अलख, यह विवहार कहाउ, निहचे जोजे सो दरब, तेसो ताको नाउ ॥ एए ॥

अर्थ – पु[illegible] कर्मनो कर्त्त[illegible] पुरुष आत्मा छे, ए व्यवहार

मां केवाई शके छे, निश्चय नयमां तो ए वात छे के जेवुं जे द्रव्य होय तेवुं तेनुं नाव स्वरूप होय, एथी पुदगल द्रव्यनी क्रिया पुद्गलवडेज बनेछे ॥ ए८ ॥

हवे जेवुं विपरीतपणुं बुद्धिमां जासेछे, तेवुं कहेछेः–अथ विपरीत बुद्धिकथनंः–

सवैया इकतीसाः– ज्ञानको सहज ज्ञेयाकाररूप परिनमे यद्यपि तथापि ज्ञान ज्ञान रूप कह्यो है, ज्ञेयज्ञय रूप यो अनादिहीकी मरजाद, काहु वस्तु काहुको सुनाव नहि गह्यो है, एते परि कोउ मिथ्या मति कहे ज्ञेयाकार प्रति नासनिसों ज्ञान अशुद्ध व्हे रह्यो है, याहि डरबुद्धिसो विकल नयो मोलत हे समुजे न धरम यो नर्ममाहि वह्यो है ॥ एए ॥

अर्थः– ज्ञाननो ए सहज स्वनाव छे के, घट पट प्रमुख ज्ञेय के० जाणवाजोग जे पदार्थ छे, तेनो जे आकार छे, तेजरूपे आत्मानुं ज्ञान परिणमे, यद्यपि ए वात प्रमाण छे तो पण ज्ञान जे छे, ते ज्ञानरूपज कहेवाय पण ज्ञेयरूप न कहेवाय अने जे ज्ञय पदार्थ छे ते ज्ञानमां परिणम्यो छे तोपण ज्ञेयरूपज केवाय, पण ज्ञानरूप न केवाय एवी अनादि कालनी मर्यादा छे, कोई वस्तु बीजी वस्तुनो स्वनाव ग्रहण करे नही, तेम जुदो जुदो स्वनावपण धारण करे नही, एवी मर्यादा बंध वातछे, तेम छतां कोई वैशेषिक प्रमुख मिथ्यामति कहेछे. के ज्ञेय पदार्थना आकार प्रति जासे छे, तेथी ज्ञान पदार्थ अशुद्ध थई रह्योछे, ज्यारे ए अशुद्धपणुं मटी जशे तारे मुक्तिथशे, एज डष्ट बुद्धिथी मिथ्यात्व मोहनो विकल्प थयो, तेथी अंहि तहिं विकल थईने मोले छे, अने धर्म के० वस्तुनो स्वनाव जाणतो नथी. तेथी भ्रममां वह्यो फिरे छे. एए

हवे सर्व पदार्थ पोताना स्वनावमां व्यापीरह्याछे ते कहेछे –अथव्यापकताकथनंः–

चोपाई.– सकल वस्तु जगमे असुहाई, वस्तु वस्तुसो मिले न काई; जीव वस्तु जाने जग जेती, सोक निन्न रहे सबसेती ॥ ४०० ॥

अर्थ.– जगतनेविषे सर्व नाव असहाय पणे वर्त्ते छे. कोई कोईनो सहाय कारी नथी, एज अर्थ प्रगट पणे कहे छे, के एक वस्तु बीजी विलक्षण वस्तु साथे मले नही जगतमां जेटली वस्तु छे, तेटलीने जीव जाणे छे. एटले सर्व ज्ञेय वस्तु जीवना ज्ञानमां परिणमे छे, तोपण जीव सर्व वस्तुथी जुदोज रहे छे, एम पोतपोताना जुदा लक्षण छे तेथी जुदा रहेछे ॥ ४०० ॥

हवे व्यवहारनी केवत देखाडेछे·– अथ व्यवहार कथनं·–

दोहरा·– करम करे फल नोगवै, जीव अज्ञानी कोई, यह कथनी व्यवहार की वस्तु स्वरूप न होइ ॥ ४०१ ॥

अर्थ -- कोई अज्ञानी जीव छे, ते कर्मने करेछे अने तेनुं फल पण भोगवेछे, ए केवल व्यवहारमां छे पण जेवुं वस्तुनुं स्वरूप छे, तेवी केवल नथी ॥ ४०१ ॥

हवे व्यवहारने प्रमाण करे एवी विपरीत बुद्धिनुं वर्णन करे छे -

अथ विपरीत बुद्धि वर्णनं -

कवित्त छंद - ज्ञेयाकार ज्ञानकी परिनति, पै वह ज्ञान ज्ञेय नहि होइ, ज्ञेय रूप खट दरव भिन्न पद, ज्ञानरूप आतम पदसोइ, जाने भेद भाव सुविचछन गुन लछन सम्यक दृग जोइ, मूरख कहे ज्ञान महि आकृति, प्रगट कलंक लखे नहिकोइ २

अर्थ - जेवो ज्ञेय वस्तुनो आकार छे, तेवी ज्ञाननी परिणती छे एटले ज्ञान घट पटादिक ज्ञेयना आकार परिणाम छे, पण ज्ञान छे ते ज्ञेय रूप न थाय. जगतमा जे ज्ञेय वस्तु छे ते छ द्रव्य छे तेतो भिन्न पद के० जूदा जूदा स्वभावथी केवा योग्य छे, अने जे आत्मापणुं कहियें तेतो ज्ञानरूप छे एवो भावनो भेद छे, ते गुण लक्षण ओलखीने जे भलो विचक्षण अध्यात्मनो वेत्ता सम्यक दृष्टी होय तेज जाणे पण वैशेषिक मति जेवो मूर्ख होय ते ज्ञानमां आकार विकल्प जोईने कहे अहो आ ज्ञानमां आकार भासे छे तेतो प्रगट कलंक छे तेने कोई केम लखे नही ॥ २ ॥

हवे मिथ्यामति जीव पोतानी मतीने दृढ करेछे - अथ मिथ्यामति कथन.-

चोपाई -निराकार जो ब्रह्म कहावे, सो साकार नाम क्यों पावे, ज्ञयाकार ज्ञान जबताई, पूरन ब्रह्म नाहि तबताई ॥३ ॥ ज्ञेयाकार ब्रह्म मल माने, नास करनको उदिम ठाने, वस्तु सुभाव मिटे नहि क्योंही, ताते पेद करे सठयोंही ॥४॥ दोहरा.- मूढ मरम जाने नही, गहे इकांत कुपक्ष, स्यादवाद सरवंगमें, माने दक्ष प्रत्यक्ष५

अर्थ.- ब्रह्मतो निराकारज छे, ते साकार नाम केम धारण करे, जो ब्रह्मने आकार मानीये तो साकार केवुं जोये, ते केम बने, ज्यासुधी ज्ञेयनो आकार ज्ञानमा प्रति भासे छे, तहा सुधी पूर्ण ब्रह्म न केवाय ॥३॥ ज्ञेय वस्तुनो जे आकार के०प्रतिभासछे ते ब्रह्मने मलरूप माने छे, ते मलनो नाश करवाने उद्यम करे, जे वस्तुनो जेवो स्वभाव होय तेवोज रहे पण कदी मटे नही, तेथी मूर्खजे सठ लोकछे ते अमथो जूठो खेद करे छे ॥४॥ जे मूर्ख छे ते मर्मनी वातने न ओलखे ने एकांत पक्ष जे जे कुपक्ष छे तेनेग्रहे अने जे माह्यो पुरुष छे, ते स्याद्वाद मतना आश्रयथी सर्वांगमय प्रत्यक्ष पणे माने, एटले निराकार साकार सर्व नय माने ॥ ५ ॥

हवे स्याद्वादने ग्रहण करनार जेसम्यक्ति छे तेनी स्तुती करे छेः—अथसम्यक्त स्तुती —

दोहरा — शुद्ध दरब अनुभौ करे, शुद्ध दृष्टि घटमांहि, ताते सम्यक् वंतनर, सहज उछेदक नाहि ॥ ६ ॥

अर्थः— सम्यक्तिना हृदयमां जे अनुभव छे, तेज शुद्ध द्रव्यने शुद्ध करे छे केमके, हृदयमां वस्तु स्वभाव जाणवाथी शुद्ध दृष्टी छे, तेथी जे सम्यक्तवत पुरुष छे, ते सहज स्वभावनो उछेदक थतो नथी, एटले सहज भावनो उछेद मानतो नथी

हवे परवस्तुमां परद्रव्यनुं अव्यापक पणुं दृष्टांतवडे दृढ करेछे.—

अथ अव्यापक द्रव्य कथन.—

सवैया इकतीसाः— जैसे चदकीरन प्रगटि भूमि सेत करे, भूमिसीत होति सदा जोतिसी रहती है, तैसें ज्ञान सकति प्रकासे हेय उपादेय, ज्ञेयाकार दीसे पे न ज्ञेयकों गहती है, शुद्ध वस्तु शुद्ध परजायरूप परिनमै, सत्ता परवान मांहि ढाहे न ढहती है, सोतो औररूप कबहो न होई सरब था निह्चे अनादि जिनवानी यो कहती है ॥ ७ ॥

अर्थ.— जेम शरदपुनमनी रात्री समे चंद्रना किरण प्रकाश वडे पृथ्विने श्वेत रूप करेछे, पण ते चंद्रमानी ज्योती कई पृथ्वी बनती नथी, सदा ज्योतीरूप रहेछे, तेम ज्ञान शक्ती एहवी छे के जे हेय उपादेय वस्तुने प्रकाशे त्यारे ज्ञान, ज्ञेय वस्तुने आकारे देखायछे पण ज्ञय वस्तुनुं स्वरूप ग्रहण करे नही. केमके, जे शुद्ध वस्तु छे ते शुद्ध पर्यायरूप पणेज परिणमे अने जेनी पोतानी सत्ताछे ते जेटलामा वस्तुनुं सद्रूप पणुं छे, तेटला प्रमाण मांहे शुद्ध पर्यायनेज परिणमे छे, पण ए वस्तुनुं स्वरूप ढांक्युं रहे नही, तेतो शुद्ध वस्तु कोईनी संगतीथी सर्व प्रकारे बीजे रूपे न थाय ए वात निश्चयमा छे, एवी अनादि काळनी जिनवाणी कहेछे॥७॥

हवे वस्तुनुं यथार्थ स्वरूप कहे छे — अथ जथा स्वरूप कथन.—

सवैया तेईसा.— राग विरोध उदे तबलो जबलों यह जीव म्रपा मग धावे; ज्ञान जग्यो जब चेतनको तब कर्म दशा पररुप कहावे, कर्म विलेछि करे अनुभो तब मोह मिथ्यात प्रवेश न पावे, मोह गये उपजे सुख केवल सिद्ध भयो जगमाहि न आवे ॥ ८ ॥

अर्थ — ज्यासुधी आ जीव मिथ्यात मार्गमां दोडे छे. त्यां सुधी राग द्वेषनो उदय छे, अने तेथी सत्य मार्गने पामतो नथी. ज्यारे शुद्ध चेतन वस्तुनुं ज्ञान जाग्यो त्यारे तो कर्म दशा जे छे ते पररूप जणाय, अने आत्मा तेथी जुदो जोवामां

आवे ज्या चेतननो अनुनव छे त्यां सत्यार्थ पणे जाणवुं होय ते कर्मनुं विलक्षण पणुं करे. एटले नेद विज्ञानवडे निन्न लक्षण पणे जाणे, अने त्यां मोहरूप मिथ्यात प्रवेश करी शके नही. मोह गयाथी सुख समाधिमां केवल ज्ञान प्रगटे अने त्यारे जीव सिद्ध थाय अने फरीथी जगतने विषे आवे नही ॥ ए ॥

हवे जेम अनुक्रमें वस्तु सरूपने प्रगट पणे स्वनावने वधारे ते कहेछे.—

अथ अनुक्रम वस्तु स्वरूप वर्द्धमानता कथन—

बपय बंद — जीव करम सयोग, सहज मिथ्यात रूप धर, राग दोष परिनति, प्रनाव जाने न आपापर, तम मिथ्यात मिटिगयो, नयो समकित उद्योत सति; राग दोष कछु वस्तु, नाहि छिनु माहि गये नसि, अनुनो अन्यासि सुखराशी रमि, नयो निपुन तारन तरन, पूरन प्रकाशनिहचलि निरखी, बनारसी वंदत चरन ॥ ए ॥

अर्थ — अनादि कालनो जीवने कर्म साथे संयोग छे. तेथी सहज संबंधे मिथ्यात स्थिति रुपी धारी जीव छे, अने क्यारेक जीव रागमां परिणम्यो रहेछे, अने क्यारेक द्वेषनी परिणतिना प्रनावथी पोताने तथा परने जाणतो नथी. एवामां क्यारेक मिथ्यातरूप अंधकार मटी गयुं ने समकितरूप चङमानो प्रकाश थयो तेथी खबर पमीके रागद्वेष कई वस्तु नथी, एटले नली वस्तु नथी, एम जाणी एना अनादरथी राग द्वेष क्षणमा नाश पाम्या अने ते पछी पोताना अनुनवनो अन्यास कीधो तिवारे तो सहज समाधिरूप सुखराशीमा रमी रह्यो एरीते निपुण सर्व ज्ञानी, तरण तारण समर्थ प्रनु थयो हवे ए पूर्ण प्रकाश अनत काल लगी निश्चल थयो तेना ध्यानने निरखी बनारसी दास ते प्रनुना चरणने नित्य प्रतें वदेछे. ॥ ए ॥

रागद्वेषना हेतुनु शिष्य प्रश्न करछे गुरु उत्तर आपेछे —अथ प्रश्नोत्तर कथनः—

सवैया इकतीसा.— कोउ शिष्य कहे स्वामी राग दोष परिनाम ताको मूल प्रेरक कहहु तुम कोनहै, पुग्गल करमजोग किधों इंद्रिनिको नोग, किधे धन किधो परिजन किधो नोन है, गुरु कहे बहो दर्व अपने अपनेरूप, सवनिको सदा असहाई परीनोन है, कोउ दर्व काहु को न प्रेरक कदाचि ताते, राग दोष मोह मृषामदिरा अचोन है ॥ ए ॥

अर्थ — कोइ शिष्य आचार्यने विनय पुर्वक पुबवा लाग्यो के अहो स्वामी, आत्माने राग द्वेष परिणाम उपजे छे. तेनो प्रेरक निश्चय पणे तमे कोने वेरावो छे एटले आत्माने पुजलिक कर्मनो योग छे, तेज इहां हेतु छे, के पंचेंद्रियनो नोग

हेतुछे के धन हेतु छे, के परिवार हेतु छे, अथवा मंदीर हेतु छे? इत्यादिकोमांथी राग द्वेष परिणामनो हेतु कोण छे, ते कहो गुरु कहे छे, हे शिष्य ए पुद्गल संबंध हेतु नथी, तेम द्रव्य इंद्रिय छे, तेतो पोतपोताने रूपे पोतपोतानी सत्तामां रहे छे, अने सर्व द्रव्योनुं परिणमन सदा असहाई छे, कोई कोईनुं सहाय करतु नथी. तेथी कोई काले कोई द्रव्य कोईनुं प्रेरक नथी एटले हेतु नथी, माटे राग द्वेष परिणामनो हेतु तो मिथ्यात्व मोहकर्मरूप मदिरानी अचौन के० उन्मत्तपणुं छे॥१०॥

हवे कोई मूर्ख राग द्वेष परिणामनुं प्रेरक पुद्गलनुं बल छे एम कहेछे, तेने गुरु समजावे छे.— अथ शिष्य प्रश्न गुरु उत्तर कथनं.—

दोहराः— कोऊ मूरख यो कहै, राग दोष परिनाम; पुग्गलकी जोरावरी, वरते आतम राम ॥ ११ ॥ ज्यों ज्यों पुग्गल बल करे, धरि धरि कर्मज भेष; राग दोषको परिनमन, त्यों त्यों होइ विशेष ॥१२॥ इहविधि जो विपरीत पख, गहे स दहे कोई, सो नर राग विरोधसों, कबहू भिन्न न होइ॥१३॥सुगुरु कहै जगमें रहै, पुग्गल संग सदीव, सहज शुद्ध परिनमनको, औसर लहे न जीव ॥१४॥ ताते चिदभावनविषे, समरथ चेतन राउ, राग विरोध मिथ्यातमे, सम्यकमेंसिव भाउ॥१५॥

अर्थ.— कोई मूर्ख लोक एम कहेछे के, आत्मारामविषे जे राग द्वेष परिणाम छे, ते पुद्गलनी जोरावरीथी छे, एटले एज पुद्गलनुं जोर छे ॥ ११ ॥ जेम जेम कर्म भेख धारीने एटले कर्म वर्गनारूप धारीने पुद्गल द्रव्य आपणुं बल विस्तारेछे, तेम तेम रागद्वेषनुं परिणाम विशेषरूपे थाय छे, एम आत्मानेविषे देखाय छे, ए सांख्यमतिनुं केहेवुं छे ॥ १२ ॥ ए रीते जे सांख्यमतिवाला आवुं विपरीत ग्रहण करेछे, अने सर्दहेछे, ते पुरुष राग द्वेषथी एवी श्रद्धावडे पण कदी जुदो थाय नही ॥१३॥ हवे सतगुरु कहेछे, अरे प्राणी जगतमा पुद्गलना संगमा जीव सदा रहेछे अनादीथी ए पुद्गलने जीवनुं संश्लेषपणुं छे, तेथी सहज शुद्ध परिणामवालो जीव अवसर न पामे, एटले पोतानुं शुद्ध परिणाम ग्रहि शके नही ॥ १४ ॥ चेतनराय जे छे ते चिदभावने विषे एटले ज्ञान भावविषे समरथ छे, एटले जाणपणाना कार्यमां समर्थ छे. अने मिथ्यामति निमग्नताथी जाणपणामां राग द्वेष परिणाम देखाय छे, अने जीव सम्यक्त भावमां रहेछे, त्यारे शिव भाव उपजेछे ॥ १५ ॥

हवे ज्ञान भावमां पुद्गलनो भाव व्यापी शकतो नथी तेथी परभावनुं अव्यापक पणुं कहेछे.— अथ अव्यापकता कथन.—

दोहरा — ज्यो दीपक रजनी समै, चिहु दिसि करे उदोत, प्रगटे घट पट रूप मे, घट पट रूप न होत ॥ १६ ॥ त्यो सु ज्ञान जाने सकल, ज्ञेय वस्तुको मर्म, ज्ञेयाकृति परिनमन पे, तजे न आतम धर्म ॥ १७ ॥ ज्ञान धर्म अविचल सदा, गहे विकार न कोइ, राग विरोध विमोह मय, कबहू भूलि न होइ ॥ १८ ॥ ऐसी महिमा ज्ञानकी, निहचे है घटमाहि, मूरख मिथ्या दृष्टिसो, सहज विलोके नांहि ॥ १९ ॥

अर्थ — जेम दीवो रात्रे चारे दिशाने प्रकाशमान करेछे, अने तेथी घटपटादिक पदार्थ प्रगटेछे, पण दीपकनो प्रकाश घटपटरूप थतो नथी ॥१६॥ तेमसुज्ञान जे छे, ते सर्व ज्ञेय वस्तुनो मर्म जाणेछे, तेना ज्ञानमा ज्ञेय पदार्थनो आकार पण परिणमेछे तो पण ज्ञान जे छे ते आत्म धर्म शुद्ध पणुं छांमतु नथी॥१७॥ ज्ञान धर्मेथी जाणपणु ते सदा अविचल छे ए जाणपणामां कोई विकार प्रवेश करे नही. राग द्वेषमोहमां जीव वहेछे खरो, तोपण जाणपणाने कदी भूल तो नथी ॥ १८ ॥ एवो ज्ञाननो महिमा निश्चे स्वरूपे घटमा छे पण मूरख मिथ्या दृष्टीथी सहज स्वरूपने विलोकतो नथी ॥ १९ ॥

हवे अनादिकालथी जीवनो मूढ स्वनाव छे ते कहेछे —अथ मूढ स्वनाव कथन.

दोहरा — परसुनावमे मगन व्है, ठाने राग विरोध, धरै परिग्रह धारना, करे न आतम सोध ॥ २० ॥

अर्थ — शुद्ध चेतन स्वनावथी बीजा स्वनाव जे छे ते पर स्वनाव छे, तेमां मग्न थईने राग द्वेषमा तेरी रह्योछे, अने एज राग द्वेषथी परिग्रहनी धारणा धरेछे पण आत्मद्रव्यनो सोध करे नही ॥ २० ॥

हवे मूढने कुबुद्धि अने पंमितने सुबुद्धि होयते कहेछे -अथ कुबुद्धि तथासुबुद्धि विवरन -

चोपाई — मूरखके घट डुरमति नासी, पंमित हिए सुमति परगासी, डुरमति कुबजा करम कमावे, सुमति राधिका राम रमावे ॥२१॥ दोहरा —कुबजा कारी कूबरी, करे जगतमे खेद, अलख अराधे राधिका, जाने निज पर नेद ॥ २२ ॥

अर्थ — मूर्ख प्राणीना घटमा डुर्मति नासी रहीछे, अने पंमितना हैयामा सुबुद्धि प्रकाश थई रही छे डुर्बुद्धि जे छे ते कसराजानी दासी जे कुबजा तेना सरखी छे ते कर्मनी कमाई करेछे, अने सुबुद्धि जे छे ते राधिका सरखी छे ते आत्माराम नायकने रमाडनारी छे ॥ २१ ॥ कुबजा दासी काली अने कुबडी छे, ते जगतमां खेद प्रयास उपजावे एवा काम करनारी छे, अने सुबुद्धि राधिका

जे छे, तेतो अलख नायकनेज आराधे छे. अने एज माहारो श्रेष्ट इष्ट नायक छे, अने बीजा सर्व पर छे, एवो भेद जाणे छे ॥ २२ ॥

हवे कुबुद्धि अने कुबजानुं एकसरखुं वर्णन करेछेः— अथ कुबुद्धि यथा —

सवैया इकतीसा — कुटिल कुरूप अंग लगी है पराए संग, अपनो प्रवान करि आपुहि बिकाई है; गहे गति अंधकीसी सकती कमंधकीसी, बंधको बढाउ करे धंधहीमें धाई है; रांडकीसी रीतिलि ए मांड कीसी मतवारी सांड ज्यों सुछंद डोले भांडकीसी जाई है, घरको न जाने भेद करे पराधिन खेद, याते दुर्बुद्धि दासी कुबजा कहाई है. ॥ २३ ॥

अर्थः—जे कुबुद्धि छे ते मायाथी कुटील छे, तेज कुबजा कुरूप अंग वालीछे, अने कुबुद्धि पारका संगमां लागी रहेछे, तेम कुबजा पण एवीछे कुबुद्धि पोताना अशुद्ध प्रमाण वडे पोतेज परवस थईछे, अने कुबजा पण तेम वेचाईछे कबंध एटले मस्तकविना लडाई करे तेनी शक्ती बेफाम होयछे, ते आंधलानी माफक गति लई डोलतो फिरेछे तेम कुबुद्धिने कुबजापण माथा विनानी फिरेछे अने दुर्बुद्धि छे ते कर्मना बंधने वधारेछे, ने धंध के० राग द्वेष विग्रहमां दोडेछे, तेम दासी पण पारका घर धंधामा दोडती फरेछे कुबुद्धि पोताना नायकने ओलखती नथी, तेथी रांड जेवी रीती राखेछे, तेम दासीपण नायकविना रांडनी रीतेछे वली सोहागननी रीते मतवारी थकी फरेछे जेम सांढ जनावर स्वछंदे डोलेछे, अने भांडनी छोकरी लाज विनानी होयछे, तेवी ए कुबजा दासी छे. जेम कुबुद्धि पोताना घरनो भेद जे ज्ञानादिक वित्त छे ते जाणे नही, तेम दासी पण घरनो भेद जाणे नही, ने पराधीन थकी खेद कर्या करे माटे दुर्बुद्धिरूप दासी ते कुबजा दासी सरखीछे॥२३

हवे सुबुद्धि अने राधिका ए बेनुं एक स्वरूप कही देखाडेछे—अथ सुबुद्धि यथा—

सवैया इकतीसा — रूपकी रसीली भ्रम कुलफकी कीली सील सुधाके समुद्र झीली सीली सुखदाई है, प्राची ज्ञान भानकी अजाची है निदानकी सुराची नरवाची ठोर साची ठकुराई है; धामकी खबर दार रामकी रमन हार राधा रस पंथनिमें ग्रंथनि मेगाई है, संतनिकी मानी निरवानी नूरकी निसानी याते सदबुद्धि रानी राधिका कहाई है. ॥ २४ ॥ दोहरा.— वह कुबजा वह राधिका, दोउ गती मति मान; वह अधिकारनि करमकी, यह विवेककी खान. ॥ २५ ॥ दरव करम पुजल दसा, भाव कर्म मति वक्र, जो सुज्ञानको परि नमन, सो विवेक गुनचक्र. २६

अर्थ.— सुबुद्धि आत्मारूपनी रसीली छे, अने राधा पण रूपनी रसीली छे, अने

भ्रमरूप तालाने खोलवानी कुची छे सुबुद्धि शील रूप सुधा समुद्रमा झली रहेछे अने राधा पण तेवी छे, एम ए बेउ शील प्रकृतीयेकरी महा सुखदायी छे, ज्ञानरूप भानुनो उदय करवाने प्राची के० पूर्व दिशा जेवीछे, निदाननी जाचनारी नथी, एटले निस्ने हीपणे सुबुद्धि अने राधिका छे निरवाची के० वचन गोचर नथी, एवे ठेकाणे राची रहेछे, जेनी साची ईश्वरता छे धाम के० जे पोतानुं आत्म घर तेनी खबरदार छे, जेनी साथे रमी रहीछे ते राम एटले पोताना इष्टनी साथे रमनारी छे राधा रस पंथ एटले राधावल्लभीना मार्गना रसग्रंथमां राधानामे ईश्वरनी प्यारी छे, तेवीज सुबुद्धि पण छे एवी संतजननी मानेती छे अने स्वस्थपणे रेनारी अने नूर के० शोभानी निशाणी छे एवी सुबुद्धि वर्त्तेछे, माटे सुबुद्धिने राधिका राणी कहेवी ॥ २४ ॥ ए रीते कुबुद्धि कुबजा थई अने सुबुद्धि राधिका थई ए बे पोतपोतानी गति अने मति लीधी रहेछे ते कुबुद्धि जे कुबजा तेतो करम बधनी अधिकारणी छे, अने सुबुद्धि राधिका तो विवेकनी खाण छे ॥ २५ ॥ ज्ञानावरणीय आदिक द्रव्य कर्म छे, ते पुद्गलरूप छे अने मतिनी वक्रता छे ते भाव कर्म जाणीए, जे सुज्ञाननो परिणमन होय तेने विवेक गुणनुं चक्र कहीए ॥ २६ ॥

हवे भाव कर्मना चक्रनी उपर दृष्टांत कहेछे – अथ कर्म चक्र यथा –

कवित्त छंद – जैसे नर खेलार चोपरको, लाभ विचार करैं चित चाव, धरि स वारि सा बुद्धी बलासौं, पासाको कुछु परे सु दाव, तैसे जगत जीव स्वारथको करि उद्यम चितवे उपाव, लिख्यो ललाट होइ सोई फल, कर्म चक्रको यही सुभाव ॥२७॥

अर्थ –जेम कोई चोपटनो खेल करे, ते पुरुष चित्तमा लाभ विचारी खेलवानो चाह राखे, एटले होंस राखे, पोतानी बुद्धि बलने जुग प्रमुखनो यत्न राखीने त्रिक चोक प्रमुख दाव उपर सारी संभाल राखीने रमे, पण दाव तो पासाने आधीन छे तेम जगतनो जीव उद्यम करीने पोताना स्वारथनो उपाय चितवे, पण पोताना ललाटमा लख्युं होय तेज फल थाय, कर्म चक्र उदय माफक थाय एनो एज स्वभाव छे २७

हवे विवेक चक्र उपर दृष्टांत कहे छे – अथ विवेक चक्र यथा –

कवित्त छंद – जैसे नर खिलार सतरंजको, समुझे सब सतरजकी घात, चले चाल निरखै दोउ दल, मोह राग न विचारे मात, तैसे साधु निपुन शिव पथमें लक्षन लखे तजे उतपात, साधे पुन्य चितवे अभे पद, यह सुविवेक चक्रकी वात ॥ २८ ॥ दोहरा – सतरंज खेले राधिका, कुबजा खेले सारि, याके निसिदिन

जीतवो, वाके निसिदिन हारि ॥ २९ ॥ दोहरा·— जाके उर कुबजा वसे, सोई अलख अजान; जाके हिरदे राधिका, सो बुध सम्यक वान ॥ ३० ॥

अर्थ·— जेम कोईमाणस सेतरजनो रमनार सेतरजना खेलनी सर्व घात के० युक्ति अने दाव समजेछे पोताना पराया दल उपर नजर राखी चाल चाले, पोताना पारका वजीर हाथी प्रमुख मोहोरा गणतिमां राखी मनमां परने मांत करवो विचारेछे तेम साधु लोक पंमित छे, ते मोक्ष मार्गमा खेले. लक्षणथी वस्तुने जोय तेमां उत्पातरूप कार्य होय ते छांमी दे, अने पोतानुं साधन करे, चित्तमां अनेद पद विचारे ए विवेक चक्रनी वात छे ॥ २८ ॥ सुबुद्धि राधिका ते सेतरंज खेली रही छे, अने कुमति कुबजा पासा सरखो खेल खेलेछे. तेमां आ सुमती राधिका तेनुं विवेक चक्रमां रातदिन जीतवुं थायछे. अने कुमति कुबजा ते कर्म चक्रमां रातदिन हारेछे ॥ २९ ॥ जेना हैयामा कुमति कुबजा वसे, तेतो अलख आत्माना अजाण छे. अने जेना हैयामां सुमति राधिका वसेछे. तेज समकेतवत बुद्ध कहेतां ज्ञाता कहिये ॥ ३० ॥

हवे ज्यां शुद्धज्ञान छे त्यां शुद्धक्रिया थाय ते कहेछे —अथ ज्ञानक्रिया सहकार कथन

सवैया इकतीसा — जहां शुद्ध ज्ञानकी कला उद्योत दीसे तहां सुद्ध परवान शुद्ध चारित्रको अंस है; ता कारन ज्ञानी सब जाने ज्ञेय वस्तु मर्म, वैराग विलास धर्म वाको सरवस है, राग दोष मोहकी दसासों निन्न रहे याते, सर्वथा त्रिकाल कर्मजालको विध्वस है, निरुपाधि आतम समाधिमें विराजे ताते, कहिये प्रगट पूरन परमहंस है, ॥ ३१ ॥ दोहरा —ज्ञायक नाव जहां तहा, शुद्ध चरनकी चाल, ताते ज्ञान विराग मल, सिव साधे सम काल ॥ ३१ ॥

अर्थ.— जे प्राणीविषे जे शुद्ध ज्ञाननी कलानो उद्योत देखायछे, ते प्राणीविषे तेज वखतमां आत्मानी शुद्धता प्रमाण करीने शुद्ध चारित्रनो पण अंस थाय ते कारणथी जे ज्ञाता होय तेतो ज्ञेय के० हेय उपादेयरूप सर्व जाणवा योग्य वस्तुनो मर्म जाणे, त्यारे ते हेयने छांमे अने उपादेय रूप सर्व जाणवु तेने ग्रहे छे, एवो वैराग्यना विलासनो स्वनाव सर्व अंसे करी प्रगट थाय. अने वैराग्य आव्याथी राग द्वेष मोहनी दशाथी प्राणी निन्न रहेछे, तेथी पूर्वकृत कर्मनी निर्जरा थायछे, अने वर्तमानकालमा कर्म न बांधे, जे प्रकृति छुटी गई ते आगामिक कालमां बांधे नही, एम सर्वथाप्रकारे कर्मजालनो विध्वस थाय. तेवारे राग द्वेषादिक उपाधि रहित आत्म समाधिमां बिराजे तेथी तेने पूरण परमहंस प्रगटपणे क

हिये ॥ ३१ ॥ जिहा ज्ञायक नाव छे तिहा शुध्द चारित्रनी चाल पामिये तेथी ज्ञान अने वैराग्य मलीने समकालें शिवमार्ग साधेछे ॥ ३२ ॥

हवे ज्ञानक्रिया उपर अंध पगुनुं दृष्टांत देछे – अथ ज्ञान क्रियाको दृष्टांत --

दोहरा – यथा अंधके कध परि, चढै पगु नर कोइ, वाके दृग वाके चरण, होहि पथिक मिलि दोइ, ॥ ३३ ॥ जहा ज्ञान किरिया मिले, तहा मोक्ष मग सोइ, वह जानै पदको मरम, वह पदमे थिर होइ ॥ ३४ ॥

अर्थ – कोई पागलो नर जेम कोई आंधलाना खना उपर चढवाथी, पागला नी आख अने ते आधलाना पगथी चाले, त्यारे पंथ मार्ग होय तो बनेना मल वा थी गमन थाय हालवु चालवु बने, तेम ज्ञान वैराग्य मलेथी मोक्षमार्गे चलाय ३३ ज्या ज्ञान अने क्रिया ए बे एकठा थई रहे त्या मोक्षनो मार्ग थाय एटले ज्ञानथी वस्तुनो मर्म जाणे अने क्रियाथी पोताना वस्तुस्वनावमां स्थिर थाय ॥ ३४ ॥

हवे ज्ञान अने क्रियानुं जेवुं स्वरूप छे तेवुं कहेछे – अथ ज्ञानक्रियाको स्वरुप

दोहरा – ज्ञान जीवकी सजगता, करम जीवकी नूल, ज्ञान मोक्ष अकूर है, करम जगतको मूल ॥ ३५ ॥ ज्ञान चेतनाके जगे, प्रगटे केवल राम, कर्म चेत नामे वसे, कर्म बंध परिनाम ॥ ३६ ॥

अर्थ – ज्ञान छे ते जीवनी सजगतता छे एटले जीवने जगावे छे, कर्म के० क्रिया कार्य करवो ते जीवनी नूल छे, त्यां ज्ञान छे ते मोक्षनो अंकुर छे, एटले मोक्षनो हेतु छे, क्रिया कार्य करवो तेतो नवच्रमणनुं मूल छे ॥ ३५ ॥ चेतना बे प्रकारनी पूर्वे कही छे, तेमा ज्ञानचेतनाना जागवाथी केवल राम प्रगटे ते शुध्द पर मात्मा प्रगटे छे,अने बीजी कर्मचेतना कहिए तेमा आत्मानो बंधपरिणाम उपजेछे

हवे ज्ञाननो प्रनाव अने क्रियानो प्रनाव निन्न निन्न कही देखाडे छे.–

अथ ज्ञानक्रियाको प्रनाव निन्न कथन.–

चोपाई–जबलग ज्ञान चेतना नारी, तब लगु जीव विकल संसारी, जब घट ज्ञान चेतना जागी, तब समकिती सहज वैरागी ॥ ३७ ॥ सिध्द समान रूप नि ज जाने, पर सजोग नाव परमाने, सुध्दातम अनुनो अन्यासे, त्रिविध करमकी ममता नासे ॥ ३८ ॥

अर्थ – ज्यालगी क्रिया परिणामे करीने ज्ञान चेतना नारी थई एटले चेतना कर्मरुप थई, त्यांलगी तो ससारी जीव विकलरुप थई रह्योछे अने ज्यारे घटमां ज्ञान चेतना जागृतरुप थई, त्यारे ते समकिती कहेवायछे, तेने सहज वैरागी

कहिए ॥३७॥ अने ज्ञान चेतनाना जाणवाथी पोताना रूपने निश्चय सिद्धसमान जाणे, अने पर पुद्गलना संयोगथी जे भाव उपजे, तेने तो पररूप माने, शुद्धात्म ना अनुभवनो अभ्यास राखे, द्रव्यकर्म, भावकर्म, नोकर्म, एवी त्रण जातिना कर्मनी ममता गमावे. ॥ ३८ ॥

हवे ज्ञाता थईने जे पूर्वकालविषे कर्म कीधांछे तेनी आलोयणाले, अने पोतानी विगतवार कहेछेः— अथ ज्ञाता पूर्व कृत कर्म आलोचन कथन—

दोहरा —ज्ञानवत अपनी कथा, कहै आपसो आप, में मिथ्यात दसाविषे, कीने बहु विधि पाप. ॥३९॥ सवैया इकतीसा—हिरदे हमारे महा मोहकी विकलताही ताते हम करुना न कीनी जीव घातकी, आप पाप कीने ओरनको उपदेश दीने हूती अनमोदना हमारे याही बातकी, मन वच कायमे मगन व्है कमाए कर्म, धाए भ्रम जालमें कहाए हम पातकी, ज्ञानके उदे भए हमारी दशा ऐसी भई, जेसी भान भासत अवस्था होत प्रातकी. ॥ ४० ॥

अर्थ — ज्ञान चेतना जागे ते ज्ञानवंत पोतानी कथा पोतानी मेळे करे, के में पूर्वकालमां मिथ्यात दशामा बहु जातनां पाप कीधां छे. ॥ ३९ ॥ हमारा हैया मां पूर्वकालविषे महामोहनी विकलता थई, तेथी अमें जीव घातनी करुणा न कीधी, ने निर्दयदशा राखी, पोतानी कायाथी तो पोतेज पाप कीधां अने बीजा ने वचने करी पापनो उपदेश दीधो, अथवा कोईने पाप करतो देखीने में तेनी अनुमोदना करी एवी रीते मन वचन कायाना अशुद्ध व्यवहारमा मगन थईने कर्मनी कमाणी करी मिथ्या जालमा एवी रीते दोडया, तेथी अमे पातकी के हेवाइए छैये, हवे ज्ञाननो उदयथता हमारी दिशा एवी थई के जेम सूर्यना भास वाथी प्रभात कालनी अवस्था उद्योतवंत थाय, तेम हमारी पण एवी अवस्था थई४०

हवे ज्ञाता ज्ञानना प्रभावथी जेवी आपणी अवस्था जाणे तेवी कहेछे

अथ ज्ञाता ज्ञान प्रभाव कथन —

सवैया इकतीसाः— ज्ञान भान भासत प्रवान ज्ञानवान कहे, करुना निधान अमलान मेरो रूप है; कालसो अतीत कर्म चालसो अभीत जोग जालसो अ जीत जाकी महिमा अनूप है; मोहको विलास यहु जगतको वास मेंतो जगत सो शुन्य पाप पुन्य अंध कूप है, पाप किन कियो कौन करे करिहै सु कोन, क्रि याको विचार सुपनेकी धोर धूप है. ॥ ४१ ॥

अर्थ —ज्ञानरूप सूर्यनो प्रकाश होवाथी प्रमाण ज्ञानवान केंं ज्ञाता पुरुष एम

कहेछे के, माहारुं स्वरूप करुणा निधान छे. तथा सर्वनो पोतानाजेवुंस्वरूप जाणीने सर्वनो हित वत्सल छे अने अम्लान कहेता निर्मल छे कालने वश नथी एटले शाश्वत छे कर्म चालनो तेने भय नथी, एटले कर्म जेना स्वभावनो नाश करी शके नही, मन वचन अने कायना योगनी जाल तेथी अजीत छे, अने आ जगतनो वास छे, तेतो मोहनो विलास छे, पण माहारो विलास नथी, जगत कहीए भव भ्रमण तेथी हुं शून्य छुं, गति कर्म जगत करेछे, तेतो मारा स्वरूपमां पाप पुन्य अधकूप समान छे, एथी पाप कोणे कीधुं, हवे कोण करेछे, आगल कोण करशे, आ जे क्रियानोविचार दीठामा आवेछे तेतो स्वप्नानी दोरधाव समान मिथ्या व्यवहार छे ॥ ४१ ॥

हवे मिथ्या परिणामनुं वरणन करेछे — अथ मिथ्यात परिनाम वर्णन.—

दोहरा — मै यौ कीनौ यौ करौ, अब यह मेरो काम, मन वच कायामे वसे, ए मिथ्यात परिनाम, ॥ ४२ ॥ मन वच काया करम फल, करम दशा जड अंग ; दरवित पुग्गल पिंडमे, भावित भरम तरग ॥ ४३ ॥ ताते भावित धरमसो, करम सुभाव अपूठ , कोन करावे को करे, कोसर लहे सब जूठ ॥ ४४ ॥

अर्थ — मै आवु कीधुं आम करुछुं, हवे आ माहारुं काम छे, ते कहुछुं, एरीते ज्ञान चेतना जाग्याविना मन वचन कायामा मिथ्या परिणाम वसेछे,॥४२॥ आ जे मन वचन कायाना जोग छे, ते कर्मनुं फल छे, अने कर्मनी दशा जडरूप अंग छे, ए जे मन वचन काया छे, ते पुग्गल द्रव्यनो पिण्ड छे, तेथी आ मिथ्या तरग भाव उपजेछे, ॥ ४३ ॥ तेमाटे आत्मानो भावित धर्म एटले शुद्ध जाणपणुं, तेथी मिथ्या तरगरूप कर्म स्वभाव विपरीत छे, तेने करावे कोण-अने करे कोण? अने सरल कोण छे, एटले अनुमोदे कोण ए प्रपंच सर्व जुठोछे, ॥ ४४ ॥

हवे आ जोगथी क्रिया होय तेनी निंदा करेछे — अथ क्रियाकी निंदा कथनः—

दोहरा — करनी हित हरनी सदा, मुकति वितरनी नाहि , गनी बंध पद्धति विषे, सनी महा दुख माहि, ॥ ४५ ॥ सवैया एकतीसा — करनीकी धरनीमें माहा मोह राजा वसे, करनी अज्ञानभाव राकसकी पुरीहे, करनी करम काया पुग्गल की प्रती छाया करनी प्रगट, माया मिसरीकी छुरी है, करनीके जालमे उरझि रह्यो चिदानंद करनीकी ओट ज्ञान भान दुति दुरी हे, आचारज कहे करनीसो विवहारी जीव करनी सदीव निहचै सरूप बुरी हे. ॥ ४६ ॥

अर्थ — करणी जे क्रिया छे ते सदा अहितनी करनारी छे, मुक्तिने देवा वाली

नथी, आ क्रियाने आगममां तो बंध पद्धतिमांज गणी छे, तेथी क्रिया महा दुःख सहित छे. ॥ ४५ ॥ क्रियानी भूमिमां महा मोह राजा वसेछे, अने क्रिया छे ते तो अज्ञान भाव राक्षसनी नगरी छे एटले क्रियामां अज्ञान राक्षस रही शकेछे. अने ए क्रिया छे ते तो कर्मनो पडछायो छे, अने काय योगनो पडछायो छे. अने पुद्गलनो पडछायो छे क्रिया छे ते प्रगट माया जाल छे, तथा ते साकरनी छरी छे, मीठास आपी मारेछे. आ करणीनी जालमां चिदानंद परमात्मा डरजो के० मग्न थई रह्यो छे, अने क्रियाना ओथे ज्ञानरूप सूर्यनी ज्योति छपी रही छे. श्री आचार्य कहेछे के क्रिया करतो थको जीव व्यवहारीज कहिए. पण निश्चल रूप देखवाथी क्रिया सदा सर्वदा बुरी छे, एटले खोटी छे ॥ ४६ ॥

हवे पोतानी समज पामे तेने ज्ञाता कहेछे – अथ ज्ञाता कथन:–

चोपाई.– मृषा मोहकी परिनति फैली, तातें करम चेतना मैली ; ज्ञान होत हम समुझी एती, जीव सदीव भिन्न परसेती ॥ ४७ ॥ दोहरा –जीव अनादि सरूप मम, करम रहित निरुपाधि , अविनाशी अशरन सदा, सुखमय सिद्ध समाधि ॥४८॥

अर्थ:– अमारामां पहेला मिथ्या मोहनी परिनति फेलाई छे, एटले मोहथी अशुद्ध थई, त्यारे फेलाणी. तेनो उदय गाढो थयो, तेथी चेतना शुद्ध हती पण अशुद्ध थई, कर्मसहीत चेतना मलीन थई हवे ज्ञान चेतना प्रगट थतां अमे एटली वात जाणी, के जे जीव छे ते निश्चे परजोगथी न्यारो छे ॥४७॥ अनादि कालथी जे जीव प्राणधारी केहेवायछे. ते मारुं स्वरूप छे ते स्वरूप केवुं छे ते कहेछे. कर्म रहित छे अने संयोगादिक उपाधि रहित छे. वली विनाश न पामे, सदा ईश्वर छे ; कोईनुं शरण न राखे, अने आ स्वरूप सिद्धसमाधिना सुखमय छे ॥ ४८ ॥

हवे ज्ञानस्वरूप कर्म उपाधिथी भिन्नछे ते कहेछे:– अथ ज्ञान स्वरूपी कथन:–

चोपाई – में त्रिकाल करणीसों न्यारा, चिदविलास पद जगत उज्यारा ; राग विरोध मोह मम नांही, मेरो अवलंबन मुझमांही ॥ ४९ ॥ सवैया तेइसा:– सम्यकवंत कहे अपने गुनमे नित राग विरोधसुं रीतो , मे करतूति करो निरवंछक, मोह विपे रस लागत तीतो , सुद्ध सुचेतनको अनुभौ करि, में जग मोह महा भड जीतो, मोष समीप भयो अब मो कहुं काल अनंत इही विधि वीतो ॥५०॥ दोहरा.– कहे विचछन मे सदा, रह्यो ज्ञान रस राचि ; सुद्धातम अनुभूति सों, खलित न होइ कदाचि ॥ ५१ ॥ पूर्व करम विष तरु भए, उदे भोग फल फूल , में इन्हको नहिं भोगता, सहज होहुं निरमूल ॥ ५२ ॥

कहेछे के, माहारुं स्वरूप करुणा निधान छे तथा सर्वनो पोतानाजेवुंस्वरूप जाणीने सर्वनो हित वत्सल छे अने अम्लान कहेता निर्मल छे कालने वश नथी एटले शाश्वत छे कर्म चालनो तेने भय नथी, एटले कर्म जेना स्वभावनो नाश करी शके नही, मन वचन अने कायना योगनी जाल तेथी अजीत छे, अने आ जगतनो वास छे, तेतो मोहनो विलास छे, पण माहारो विलास नथी, जगत कहीए भव भ्रमण तेथी हुं शून्य छु, गति कर्म जगत करेछे, तेतो मारा स्वरूपमा पाप पुन्य अधकूप समान छे, एथी पाप कोणे कीधुं, हवे कोण करेछे, आगल कोण करशे, आ जे क्रियानोविचार दीलमा आवेछे तेतो स्वप्नानी दोरधाव समान मिथ्या व्यवहार छे ॥ ४१ ॥

हवे मिथ्या परिणामनुं वरणन करेछे.— अथ मिथ्यात परिनाम वर्णन —

दोहरा·— मै यौ कीनौ यौ करौ, अब यह मेरो काम, मन वच कायामें वसे, ए मिथ्यात परिनाम, ॥ ४२ ॥ मन वच काया करम फल, करम दशा जड अंग, दरवित पुग्गल पिंडमे, भावित भरम तरग ॥ ४३ ॥ ताते भावित धरमसो, करम सुभाव अपूठ, कोन करावे को करे, कोसर लहे सब जूठ ॥ ४४ ॥

अर्थ — मे आवु कीधुं आम करुछुं, हवे आ माहारुं काम छे, ते कहुछुं, एरीते ज्ञान चेतना जाग्याविना मन वचन कायामा मिथ्या परिणाम वसेछे,॥४२॥ आ जे मन वचन कायाना जोग छे, ते कर्मनुं फल छे, अने कर्मनी दशा जडरूप अंग छे, ए जे मन वचन काया छे, ते पुग्गल द्रव्यनो पिंड छे, तेथी आ मिथ्या तरग भाव उपजेछे, ॥ ४३ ॥ तेमाटे आत्मानो भावित धर्म एटले शुद्ध जाणपणुं, तेथी मिथ्या तरगरूप कर्म स्वभाव विपरीत छे, तेने करावे कोण अने करे कोण? अने सरल कोण छे, एटले अनुमोदे कोण ए प्रपच सर्व जुगोछे, ॥ ४४ ॥

हवे आ जोगथी क्रिया होय तेनी निंदा करेछे.— अथ क्रियाकी निंदा कथन —

दोहरा — करनी हित हरनी सदा, मुकति वितरनी नाहि, गनी बंध पद्धति विषे, सनी महा दुख माहि, ॥ ४५ ॥ सवैया इकतीसा —.करनीकी धरनीमे माहा मोह राजा बसे, करनी अज्ञानभाव राकसकी पुरीहे, करनी करम काया पुग्गल की प्रती छाया करनी प्रगट, माया मिसरीकी छुरी है, करनीके जालमे उरझि रह्यो चिदानद करनीकी उट ज्ञान भान दुति दुरी है, आचारज कहे करनीसों विवहारी जीव करनी सदीव निहचे सरूप बुरी है ॥ ४६ ॥

अर्थ — करणी जे क्रिया छे ते सदा अहितनी करनारी छे, मुक्तिने देवा वाली

नथी, आ क्रियाने आगममां तो बंध पद्धतिमांज गणी छे, तेथी क्रिया महा दुःख सहित छे ॥ ४५ ॥ क्रियानी भूमिमां महा मोह राजा वसेछे, अने क्रिया छे ते तो अज्ञान भाव राक्षसनी नगरी छे एटले क्रियामां अज्ञान राक्षस रही शकेछे. अने ए क्रिया छे ते तो कर्मनो पडछायो छे, अने काय योगनो पडछायो छे अने पुद्गलनो पडछायो छे क्रिया छे ते प्रगट माया जाल छे, तथा ते साकरनी छरी छे, मीठास आपी मारेछे. आ करणीनी जालमां चिदानंद परमात्मा उरजी के० मग्न थई रह्यो छे, अने क्रियाना ओथे ज्ञानरूप सूर्यनी ज्योति छपी रही छे. श्री आचार्य कहेछे के क्रिया करतो थको जीव व्यवहारीज कहिए पण निश्चल रूप देखवाथी क्रिया सदा सर्वदा बुरी छे, एटले खोटी छे ॥ ४६ ॥

हवे पोतानी समज पामे तेने ज्ञाता कहेछे.— अथ ज्ञाता कथन.—

चोपाई.— मृषा मोहकी परिनति फैली, तातें करम चेतना मैली; ज्ञान होत हम समुझी एती, जीव सदीव भिन्न परसेती ॥ ४७ ॥ दोहरा —जीव अनादि सरूप मम, करम रहित निरुपाधि; अविनाशी अशरन सदा, सुखमय सिद्ध समाधि ॥४८॥

अर्थ.— अमारामां पहेला मिथ्या मोहनी परिनति फेलाई छे, एटले मोहथी अशुद्ध थई, त्यारे फेलाणी तेनो उदय गाढो थयो, तेथी चेतना शुद्ध हती पण अशुद्ध थई, कर्मसहीत चेतना मलीन थई. हवे ज्ञान चेतना प्रगट थता अमे एटली वात जाणी, के जे जीव छे ते निश्चे परजोगथी न्यारो छे ॥४७॥ अनादि कालथी जे जीव प्राणधारी केहेवायछे ते मारुं स्वरूप छे ते स्वरूप केवु छे ते कहेछे कर्म रहित छे अने संयोगादिक उपाधि रहित छे. वली विनाश न पामे, सदा ईश्वर छे; कोईनुं शरण न राखे, अने आ स्वरूप सिद्धसमाधिना सुखमय छे ॥ ४८ ॥

हवे ज्ञानस्वरूप कर्म उपाधिथी भिन्नछे ते कहेछे:— अथ ज्ञान स्वरूपी कथनः—

चोपाई.— में त्रिकाल करणीसों न्यारा, चिदविलास पद जगत उज्यारा; राग विरोध मोह मम नांही, मेरो अवलंबन मुझमांही ॥ ४९ ॥ सवैया तेइसाः— सम्यकवंत कहे अपने गुनमें नित्त राग विरोधसुं रीतो, मे करतूति करो निरवं छक, मोह विपे रस लागत तीतो, सुद्ध सुचेतनको अनुभौ करि, में जग मोह महा भड जीतो, मोप समीप भयो अब मो कहुं काल अनंत इही विधि वीतो ॥५०॥ दोहरा — कहे विचछन मे सदा, रह्यो ज्ञान रस राचि; सुद्धातम अनुभूति सों, खलित न होइ कदाचि ॥ ५१ ॥ पूर्व करम विष तरु भए, उदे भोग फल फूल; में इन्हको नहिं भोगता, सहज होहुं निरमूल ॥ ५२ ॥

अर्थ — हुं त्रणे कालमां क्रिया करणीथी न्यारो छुं माहारे कर्मथी संगनथी तो क्रीयाथी संग केम थाय माहारुं पद के० स्वरूप, चिदविलास के० ज्ञानविलास छे, ते जगतमां अजवालु छे. अने राग द्वेष मोहभाव वर्त्ते छे तेतो माहारुं स्वरूप नथी माहारो अवलंब आधार माहारा स्वरूपमा छे ॥ ४९ ॥ समकेती जीव पोताना गुण कहेछे. हुं नित्य प्रत्ये राग द्वेष मोहथी, रीतो के० रक्त एटले रहित छुं. हुं जे क्रिया करुछु ते राग द्वेष विना वांछारहित करुछुं अने जे ए विषय रस छे ते, मोहतीतो के० मने तिक्त लागेछे एटले कडवां लागेछे शुद्ध पोतानी चेतननानो अनुभव करीने हुं जगतमां मोहरूप महासुभट जीत्यों, माहारु एवु स्वरूप पामीने हुं मोक्षने सन्मुख थयो, हवे मने एवी रीतथीज अनंत काल वीतो एटले अनंत काल लगे एवोज रहु ए आशंसा छे ॥ ५० ॥ विचक्षण ज्ञानी पुरुष आशंसा करीने कहे के हुं सदा ज्ञान रसमा राची रहुं अने हुं शुद्ध आत्माना अनुभवथी कोइ पण कालमा खलित न थाउं ए आशंसा छे॥५१॥ए पूर्व कृत पुन्यपापरूप जे कर्म छे, ते विष वृक्ष जाणवा अने ते कर्मना उदयनो जे भोग छे ते विष वृक्षना फल फुल छे हुं आ उदय भोगनो भोक्ता नथी राग द्वेषथी रहित छुं अनादिकालना साथे लागेला विषय भोग छे तेसहज निर्मूलथाय ५२ हवे उदासीनताने वैराग्य कहिये तेनो महिमा कहेछे —अथ वैराग्यमहिमाकथन —

दोहरा —जो पूरव कृत कर्म फल, रुचिसों भुंजे नाहि, मगन रहे आठो पहुर, शुद्धातम पदमाहि. ॥ ५३ ॥ सो बुध कर्मदसा रहित, पावे मोष तुरंत, भुंजे परम समाधि सुख, आगम काल अनंत ॥ ५४ ॥

अर्थ — जे पूर्वकालमां कर्म कर्युं तेनुं फल उदय थयुं ते फलथी रुचि लगाडी भोगवे नही अने आठ प्रहर शुद्ध आत्मपदमा मगन रहे ॥ ५३ ॥ तेज पंमित कर्मदशा रहित थईने तरत मोक्षपद पामे, ते पछी आगमिक कालमां अनंत काल लगे परम समाधिनुं सुख भोगवे ॥ ५४ ॥

हवे ज्ञानि पुरुषनो क्रमे क्रमे महिमा वधे ते कहेछे — ज्ञानी पुरुष महिमा कथन.—

छप्पय छंद.— जो पूरव कृतकर्म, विरष विष फल नहि भुंजे, जोग जुगतिकारज करंत ममता न प्रजुंजे, राग विरोध, निरोध संग विकलप सबि छंडे, शुद्धातम अनुभौ अभ्यासि सिव नाटक मंडे, जो ज्ञानवंत इह मग चलत, पूरन व्है केवल लहे; सो परम अतींद्रिय सुखविषे, मगन रूप संतत रहे ॥ ५५ ॥

अर्थ — जो ज्ञाता थईने पूर्व कृतकर्म रूप वृक्षना विष फलने भोगवे नही

एटले इष्ट फलथी रतिन उपजे अनिष्ट फलथी अरति न उपजे एवो ज्ञाता जे छे ते मन वचन कायाना योगे करी युक्त छे तेथी जोगनी गति के० प्रवृत्तिये कार्य करेछे, पण कार्यविषे ममता प्रजुंजे नही एरीतें राग द्वेषनो विरोध करीने योग ना संगथी जे विकल्प उठेछे, ते सर्व छांडे. शुद्ध आत्माना अनुभवनो अभ्यास करीने शिवनाटक के० जे थकी जीवन्मुक्ति होय एवो नाटक मांडे जो ज्ञानवत पुरुष एहिज मार्गे चाले तो पूरण स्वभाव पामीने केवल ज्ञान पामे पछी केवल ज्ञान पामीने उत्कृष्ट अतींद्रिय सुखनेविषे निरतर मगन रहे. ॥ ५५ ॥

हवे शुद्ध आत्मा द्रव्य छे तेनुं वर्णन करेछेः—अथ शुद्ध आत्मदर्वेवर्नन –

सवैया इकतीसा – निरभै निराकुल निगम वेद निरभेद, जाके परगासमें जग त माईयतु है, रूप रस गंध फास पुदगलको विलास, तासों उदवश जाको ज श गाइयतु है, विग्रहसो विरत परिग्रहसे न्यारो सदा, जामें जोग निग्रहको चिन्ह पाइयतु है; सो है ज्ञान परवान चेतन निधान ताहि, अविनाशी ईश मानी सीस नाइयतु है, ॥ ५६ ॥ जैसो नर भेदरूप निह्चें अतीत हुंतो, तेसो नि रभेद अब भेदको न गहेगो, ढीसे कर्म रहित सहित सुख समाधान, पायो नि ज थान फिरि बाहिर न वहेगो, कबहु कदाचि अपनो सुभाव त्यागि करि, राग रस राचिके न परवस्तु गहेगो, अमलान ज्ञान विद्यमान परगट भयो, याही भांति आगम अनंत काल रहेगो ॥ ५७ ॥ जबहिते चेतन विभावसो उल टि आपु समै पाइ अपनो सुभाव गहि लीनो है, तबहीते जोजो लेन जोग सो से सब लीनो, जो जो त्याग जोग सो सो सब छांडि दीनो है, लेवेकौ न र ही ठोर त्यागिवेकों नांही और, बाकी कहा उबर्यो जु कारज नवीनो है, संग त्यागि अंग त्यागि वचन तरग त्यागि, मन त्यागि बुद्धि त्यागि आपा सुद्ध कीनो है ॥ ५८ ॥

अर्थ – जे निर्भय केवाय छे, निराकुल केवाय छे. निगम के० उत्कृष्ट अर्थ के हेवाय छे. वेद के० ज्ञानरूप केहेवाय छे जेनो भेद नथी एवो प्रकाशवत पदा र्थ छे जेमा सर्व जगत समाय छे अने जे ए रूप रस गंध स्पर्श जे विनाशी पदा र्थो छे, तेतो पुद्गलनो विलास छे, तेना उदवस के० तेथी रहित जे छे तेनो जसगा इए छे वली जे विग्रह के० शरीर तेथी विरत के० रहित्त अने द्रव्यभावरूप प रिग्रह तेथी जुदो छे जेमां सदाय त्रणे योगथी रहित पणानुं चिन्ह के० लक्ष ण पामीए छे एवुं पदार्थ तो ज्यां ज्ञान छे त्यां ते पदार्थ छे तेथी ज्ञान प्रमा ण छे. अने चेतनानो निधान छे. तेने अविनाशी ईश्वर मानीने मस्तक नमावीए

छे ॥५६॥ हवे बीजुं पण शुद्धात्म द्रव्य सिद्धनुं वर्णन करेछे – अतीत कालमां पण शुद्धात्म द्रव्य निश्चेय नयथी अभेद रूप हतो अने व्यहारनये भेदरूप हतो हवे केवल रूप पामिने निर्भेद के० भेद रहित जाणीए हवे एवी दशामां कोण मूर्ख भेद ठरावसे नैयायिक लोक जे पोतानी परूपणामा समाधि योग आत्माने कर्म रहित मानीने फरी ससारमां अवतार मानीने छे तेने नमस्कार करेछे पण जे कर्म रहित थयो सुख समाधान सहित थयो. पोतानुं स्थानक पाम्यो ते पाछो बाह्य संकटमा केम पडशे जेम धरतीनो भार उतारवा ईश्वर अवतार लेइने दुःख पामेछे एवु मिथ्यादृष्टिनी केवतमांछे पण जीव शुद्ध थईने फरी राग रसमां राचि ने कोई कालमा आपणु स्वभाव त्याग करीने पर वस्तुने ग्रहे नही केमके अम्ला न ज्ञान के० जे ज्ञान फरी करमाय नही एवु ज्ञान विद्यमान कालविषे प्रगट थयुं तेतो आगमिक कालमां अनत काल लगी रहेशे ॥ ५७ ॥ हवे फरीथी अवतार लेवाना कारणनो अभाव कहेछे – अनादिकालथी चेतन मिथ्यात भावरूप विभावमां रमि रह्यो हतो ते समयप्रस्ताव पामीने, विभावथी उपरागो थई पोतानो शुद्ध स्वभाव हतो ते पोतेज लइ लीधो, तेथी ज्ञान दर्शनादिक भाव लेवा योग्य हतो ते लीधो, अने राग द्वेषादिक भाव त्यागवाजोग हतो ते सर्व त्यागी दीधो ते लेवानुं बीजु ठेकाणुं रह्यु नही, अने त्यागवानुं पण बीजुं ठेकाणुं रह्यु नही हवे इहा बाकी नवु कार्य करवानुं क्यो रह्योछे जे कार्य करवाने फरी अव तार लेवु पडे जे उपाधिसंग हतो तेतो सर्व त्यजी ने एटले अंग त्याग के० काय योग त्यागिने वचन तरग त्याग के० वचन योग त्यागीने तथा मनो योग त्यागिने बुद्धि त्याग के० विकल्प त्यागीने आत्माने शुद्ध करी लीधो ॥ ५८ ॥

हवे बाह्य भेष धरवो ते द्रव्यलिंग कहिए ते एकांतपणे मोक्षनुं कारण नथी ते कहेछे – अथ एकांत द्रव्यलिंगीकी निंदा –

दोहरा – शुद्ध ज्ञानके देह नहि, मुद्रा भेष न कोइ, ताते कारन मोषको, दर वलिंगि नहि होइ ॥ ५९ ॥ द्रव्य लिंग न्यारो प्रगट, कला वचन विन्यान, अष्ट महारिधि अष्ट सिधि, एऊ होहि न ज्ञान ॥ ६० ॥

अर्थ –आत्मा तो शुद्ध ज्ञानमय छे अने शुद्ध ज्ञानने देह नथी, अने ज्यारे देह नथी त्यारे ज्ञान ने मुद्रा भेष पण कोइ नथी तेथी मोक्षनुंकारण द्रव्य लिंगहोय नही. एटले भेष लीधे मुक्ति नथी ॥ ५९ ॥ ज्ञानथी द्रव्यलिंग तो प्रगट पणे जुदोज छे. कलाविज्ञान, वचन विज्ञान, ते ज्ञानथी न्यारो छे. तथा आचार, श्रुत शरीर,

वचन, वाचना, बुद्धि, उपयोग, संग्रह संलीनता, ए अष्ट महा रिद्धि ठे. अने अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्रकाम्य, इशित्व, वशित्व, ए अष्टमहा सिद्धि ठे ते पण ज्ञान नथी ॥ ६० ॥

हवे एटला महिमावत्त स्थानक ठे, तो पण ए ज्ञानना स्थानक नथी ते कहेछेः-

अथ ज्ञान अभाव स्थानक कथन—

सवैया इकतीसा— भेषमें न ज्ञान नहि ज्ञान गुरु वर्त्तनमें, मंत्र जंत्र तंत्रमें न ज्ञानकी कहानी है, ग्रंथमे न ज्ञान नहिं ज्ञान कवि चातुरीमें वातनिमें ज्ञान नही ज्ञान कहा वानी है, ताते भेष गुरुता कवित्त ग्रंथ मंत्र वात, इनतें अतीत ज्ञान चेतना निसानी है, ज्ञानहीमें ज्ञाननही ज्ञान उरठोर कहू, जाके घट ज्ञान सोइ ज्ञानको निदानी है ॥ ६१ ॥

अर्थः— भेषमां ज्ञान न पामीए अने गुरुवाई के० गर्वपणुं महोटाइ पणुं ते मां पण ज्ञाननुं स्थानक नथी अने मंत्र तंत्र यंत्रमां ज्ञाननी कहेणी नथी तथा ग्रंथ शास्त्र पढवाथी पण ज्ञान प्राप्त थतु नथी कवितामां चातुर्यतामां ज्ञान नथी. वातनी चतुराइमा ज्ञान नथी अने जे वाणी ठे ते सुं ज्ञान ठे, अर्थात् वाणी पण ज्ञान नथी माटे भेख गुरु वाइ कविताई, ग्रंथ मंत्र यंत्र तंत्र वात ए सर्वथी अतीत के० जुदोज ज्ञान वस्तु ठे, ते चेतननी सहिनाणी ठे. ज्ञानतो क्यारे जाणवुं के जे अशुद्ध पणे होय तेतो ज्ञान न कहेवाय, माटे पूर्वे जे स्थानक कह्या तेथी जूदोज कोइ ज्ञान वस्तु ठे माटे जेना घटमां ज्ञान प्रगटयुं, तेज ज्ञाननुं मूलकारण ठे ॥ ६१ ॥

हवे जे पूर्वे भेष प्रमुखना धारक कह्या तेनी मूढता कहि देखाडे ठेः—

अथ भेषादि धारक मूढ थद्दु कथन.—

सवैया इकतीसा — भेष धरे लोगनिको वचे सो धरम ठग, गुरुसो कहावे गुरु वाई जाते चहिये, मंत्र तंत्र साधक कहावे गुनी जादूगर, पंडित कहावे पंडिताई जामें लहिये, कवित्तकी कलामें प्रवीन सो कहावे कवि, वात कही जाने सो पवार गीर कहिये, ए तो सब विषेके भिखारी मायाधारी जीव, इन्हकों विलोकिके दयाल रूप रहिये ॥ ६२ ॥

अर्थ.— भेष धरीने लोकोने, ठगे भरमावे ते धर्म ठग कहेवाय, एटले तेने गुरुतानी चाहना होय ते गुरु केवाय. मंत्र यंत्र तंत्रादिक गुणनुं जे साधक होय ते जादूगर केवाय. अने जेमा पंडिताई रही ठे. ते पंडित केवाय, कवित चातुरिनी

कलामां जे प्रवीण होय तेतो कवि केवाय, वातो बनावी बनावीने कही जाणे ते पवारगर केवाय एटली अवस्थाना धरनारा छे. ते सर्व इंद्रियविपयना याचक मायाधारी जीव छे. तेने जोईने मनमां एवु विचारिये के अहो इति आश्चर्य ए, वापडा केम पोतानो स्वार्थ खोयछे एवी रीते तेना उपर दयाळरूप थई रहेवु

हवे जीवना अनुजवनी योग्य दशा कहे छे.— अथ अनुजो जोगता कथन —

दोहरा.— जो दयाळता जाव सो, प्रगट ज्ञानको अंग, पै तथापि अनुजो दशा, वरतै विगत तरंग ॥ ६३ ॥ दरशन ज्ञान चरण दशा, करे एक जो कोइ, थिर व्है साधे मोप मग, सुधी अनुजवी सोइ ॥ ६४ ॥

अर्थ — जे आत्माने शुद्ध दयाळता जाव प्रगटेछे तेतो ज्ञाननुं अंग प्रगट थयुं एम जाणीए पण अनुजव दशा जे छे. ते तो विगततरंग के० विकल्प रहित वर्ते ॥ ६३ ॥ वळी दर्शन ज्ञान चारितनी दशाने विकल्प रहित एकपणे आत्माने जुएछे, एज रीते स्थिररूप थईने मोक्ष मार्गने साधे छे तेनेज सुधी के० सुबुद्धिवत अनुजववत केहिये ॥ ६४ ॥

हवे नि संदेह शुद्ध स्वरूप पामवु तेनो महिमा कहे छे —अथ अनुजो महिमाकथन·—

सवैया इकतीसा — जोइ दृग ज्ञान चरणातममे वटि ठोर जयो, निरदोर परवस्तुको न परसे, सुद्धता विचारे ध्यावे शुद्धतामे केळि करे, सुद्धतामें थिर व्है अमृत धारा वरसै, त्यागी तन कष्ट व्है सपष्ट अष्ट करमको, करे थान नष्ट नष्ट करे ओर करसे, सोई विकळप विजई अळप काळमाहि, त्यागि जो विधान निरवान पद दरसे॥६५॥

अर्थ — जे कोई दर्शन ज्ञान चारित्ररूपी आत्मानेविषे ज्ञानने ठेकाणे ठेरावीने वाट बाधे, त्या निरठोर के० संशय रहित थईने परवस्तुनो स्पर्श न करे त्या निश्चेनय ग्रहण करीने शुद्धताज विचारे, शुद्धताज ध्यावे अप्रमादि थईने शुद्धतामां केळि करे शुक्ल ध्यानना प्रथम पायामा प्रवेशकरी शुद्धतामां थिर थईने महा आनंदरूप अमृतनी धारा वरषावे, आही अवयवरूप लक्षण छे तेथी शरीरना कष्टने त्यागेछे लीनताथी शरीर कष्ट न जाणे त्यारे स्पष्ट थईने एटले वीर्य फोरवीने आठे कर्मनो स्थान नष्ट करे एटले कर्मोने सत्ता थकी चलायमान करे अने नष्ट करे के० निर्जरा करे ऐसे औरढुंकेसे के० ते जीव कर्मोने आकर्षिने निर्जरावे ते जीव विकल्प जाळनो विजय करीने अल्प काळमाज विधान के० जवे श्रेणिने त्यागी मोक्ष पद देखे एटले पामे ॥ ६५ ॥

हवे शिष्य पुछे छे के ए अनुभव पामवो महा विषम छे ते उपर गुरु शिक्षादे छे.–

अथ अनुभो शिक्षा कथनः–

चोपाई – गुन परजैमें दृष्टि न दीजे, निरविकलप अनुभौ रस पीजे, आप समाइ आपमें लीजे, तनपा मेटि अपनपो कीजे ॥ ६६ ॥ दोहरा – तजि विभाव हुइजे मगन, सुद्धातम पदमांहि, एक मोष मारग यहै, और दूसरो नाहि ॥ ६७॥

अर्थ – आत्माना गुण पर्याय अनेक छे. पण तेमां दृष्टि न देवी. मात्र निर्विकल्प द्रव्यनो अनुभव रस पीवो. आत्मा आधारमा आत्मानो समास करी लेवो एटले लय लगाडवो, एटले आपणे शरीर धारी छीए, ते दशानो काय योग पणुं छे ते मटावी आत्म स्वरूप करीए ॥ ६६ ॥ आत्माना मूल स्वभाव विना बीजो सर्व विभाव पणुं छे, तेहने त्यजीने शुद्ध आत्माना चिदानंद स्वभावमाज मगन थइये, एक अद्वितीय मोक्षनो मार्ग एज छे तेथी बीजो कोइ मोक्षनो मार्ग नथी॥ ६७

हवे शुद्ध आत्मस्वरूपना अनुभवविना महाव्रत्तिपण द्रव्यलिंगी जाणवा ते कहेछे –

अथ द्रव्यलिंगी व्यवस्था कथन –

सवैया इकतीसा.– कइ मिथ्या दृष्टि जीव धारे जिन मुद्रा भेष, क्रियामें मगन रहे कहे हम जती है, अतुल अखंड मलरहित सदा उदोत, ऐसे ज्ञान भावसो विमुख मूढमति है, आगम संभाले दोष टाले विवहार भाले, पाले वृत्त यद्यपि तथापि अविरती है, आपुको कहवे मोष मारगके अधिकारी मोषसों सदीव रुष्ट दुष्ट दुरगति है॥ ६८ ॥ दोहरा.– जे विवहारी मूढ नर, परजे बुद्धी जीव, तिनको बाहिज क्रीयको, हे अवलंब सदीव ॥ ६९ ॥

अर्थ – कंक जीव मिथ्या दृष्टि छे अने आचार्य उपदेश रसथी जिन मुद्राभेष धारी छे अने साधुनी क्रियामां मगन रहेछे, अने पोताना मनथी अथवा कोईना पूछवाथी अमे जती छइये एम कहेछे एटले महाव्रत्ति छैये अने जेनी तुलना नथी एवुं अखंड के० संपूर्ण विभाव मलरहित सदा प्रकाशवत पोतानुं अनुभवरूप जे ज्ञान भाव छे तेथी विमुख छे माटे मूढमती छे जोपण ते क्रिया करेछे आगम सिद्धांत संभारेछे अने आहारादिकना दोष टाली व्यवहारमा दृष्टि राखेछे एम जद्यपि महावृत्त पाले छे तो पण निश्चे नयथी ए अविरतीज कहीए एवा जे जीवछे ते पोते मोक्ष मार्गना अधिकारी लोकमां कहेवायछे पण मोक्षथी ए सदा रुठयाज रहेछे एटले अभव्यने पण क्रिया केवल नवमा ग्रैव्यकशुद्धि गति कही छे पाछो ए दुष्ट दुर्गतिमां पडेछे. ॥ ६८ ॥ जे कोइ मूर्ख मनुष्य व्यवहार

माज रहे अने जे जीव पर्याय बुद्धिवत छे ते सुनगतियो जीव होय तो नजो एवी पर्याय बुद्धि धारेछे तेने तो बाह्य क्रियानो अवलंबन सदाय कह्योछे ॥६९॥

हवे व्यवहारे महामूढ छे तेनुं वर्णन करेछे.— अथ महामूढ वर्नन —

चोपाई —जेसे मुगध धान पहिचाने, तुष तंडुलको भेद न जाने, तैसे मूढमती व्यवहारी, लखे न बंध मोष विधि न्यारी.॥७०॥दोहरा —कुमती बाहिज दिष्टिसों, बाहिज क्रिया करत, माने मोष परंपरा, मनमे हरष धरत ॥ ७१ ॥- शुद्धात्तम अनुभो कथा, कहे समकिती कोइ, सो सुनिके तासो कहे, यह सिवपंथ न होइ७२

अर्थ —जेम कोइ मननो भोळो पुरुष छे ते धानने तो ओळखे पण तूस अने तंडुल मां भिन्नता छे ते न जाणे तेम जे व्यवहारी मूढमती छे तेतो बंधविधि अने मोक्षविधि जूदी जूदी लखी शके नही केवल विधिज जाणे ॥७०॥ जे कुमती होय ते पर्याय बुद्धिथी शाता वेदनी पणे समाधि सुख जाणीने बाह्य दृष्टिथी तेनी हेतुरूप बाह्यक्रिया करे अने बाह्यक्रियामां मगन होय तो तेथी तेने निर्जरा मानीने मोक्ष परंपरा माने अने मनमा आनंद पामे ॥ ७१ ॥ ते मूढने कोइ समकिती जीव शुद्ध आत्मानी अनुभव दशाने मोक्षनुं कारण कहे तो तेनुं वचन सांभळीने तेने एवुं कहे के ए रीतेतो मोक्षमार्ग थाय नही ॥ ७२ ॥

हवे मूढ तथा ज्ञानीनुं लक्षण कहेछे —अथ मूढ तथा ज्ञानी लक्षण कथन —

कवित — जिन्हके देह बुद्धि घट अंतर, मुनि मुद्रा धरि क्रिया प्रवानहि, ते हिय अंध बंधके करता, परम तत्वको भेद न जानहि, जिन्हके हिये सुमतिकी कनिका, बाहिज क्रिया भेप परमानहि, ते समकिती मोष मारग मुष, करि प्रस्थान भव स्थिति भानहि ॥ ७३ ॥

अर्थ — जेना हीयामा देह बुद्धि रहेछे एटले देहधारी ने पण भिन्नपणे जाणतो नथी अने मुनीश्वरनी मुद्रा धारिने क्रियानेज प्रमाण करेछे तेतो हीयानो अंध छे अने बंधनो करनार छे अने परम तत्वके० मोक्ष तत्वना भेद ने जाणतो नथी अने जेना हीयामा सम्यग दृष्टिने लीधे सुबुद्धिनी करणीका जागी तेतो बाह्य क्रियाने भेप रूप प्रमाण करेछे तेनेतो समकिती कहीए ते जीव मोक्ष मार्ग ने सन्मुख प्रस्थान के० प्रयाण करी करीने भवस्थितिने निश्चेनाजे छे ॥ ७३ ॥

हवे संक्षेपथी नि केवल उपादेयरूप मोक्ष मार्गनो उपदेश दे छे.—

अथ मोक्षको उपदेश संक्षेप मात्र कथन—

सवैया इकतीसा — आचारिज कहे जिन वचनको विसतार, अगम अपार है

कहेंगे हम कितनो! बहुत बोलवेसों न मकसूद चुप नली, बोलीए सु वचन प्रयोजन है जितनो, नाना रूप जलपसों नाना विकलप उठे, ताते जेतो कारिज कथन नलो तितनो, शुद्ध परमातमको अनुनौ अन्यास कीजे, यहे मोष पंथ परमारथ हे इतनो ॥ ७४ ॥ दोहराः— सुद्धातम अनुनोक्रिया, सुद्ध ज्ञान दृग दौर, मुकति पंथ साधन वहै, वाग जाल सब और ॥ ७५ ॥

अर्थ.— आचार्यजी शिष्यने कहे ले अहो शिष्य जिनेश्वरनां वचननो विस्तार तो नय प्रमाण करीने अगम अपार ले. अमे केटलोक कहीए, आहिं बहु बोलवुं ते अमारे मकसुद नथी तेथी चुप रहेवु तेज ठीक ले, अने जेटलुं प्रयोजन ले. तेटलुंज बोलवुं पण नाना प्रकारनु जल्प के० बोलवुं कहियें तो नाना प्रकारना विकल्प उठेले तेथी जे एक कार्य ले तेपुरतुज बोलवुं बस ले, शुद्ध परमात्म द्रव्यना अनुनव योगनुं अन्यास करीए एज मोक्ष मार्ग जाणीए, बधी वातमां एटलोज परमार्थ ले ॥ ७४ ॥ जे क्रियाथी शुद्ध आत्मानो अनुनव थाय तेज क्रियाले अने शुद्ध ज्ञान दृष्टिनी दोर तेज मुक्ति पंथनुं कारण ले. बीजु सर्व वचनामंबरले ॥७५॥

हवे शुद्ध जीव द्रव्यनुं वर्णन करेलेः— अथ शुद्ध जीव द्रव्य वर्नन —

दोहरा.— जगत चक्षु आनंदमय, ज्ञान चेतना नास, निर्विकल्प साश्वत सुथिर, कीजे अनुनौ तास. ॥ ७६ ॥ अचल अखंमित ज्ञानमय, पूरन वीत ममत्व, ज्ञानगम्य बाधा रहित, सो है आतम तत्व. ॥ ७७ ॥

अर्थ.— जे पदार्थ जगतमां चक्षूजेवुं ले अने आनंदमय ले. जेनी ज्योति ज्ञान अने चेतना ले. जेमां कोई विकल्प नथी नेद नथी अने शाश्वतो ले तथा स्थिर ले जे पदार्थनो अनुनव करीए तो मुक्ति पामीए ॥ ७६ ॥ जे कोईकाले पोताना स्वनावथी चलायमान थाय नही एवो अखंमित ज्ञानमयले. संपूर्ण समाधिवत अने ममत्व रहित, इंद्रिय ग्राह्य नही तेथी ज्ञान गम्य ले अने अलेय अनेयपणाथी बाधा रहित ले तेज आत्म तत्व कहीए ॥ ७७ ॥

इति श्री नाटक समयसार ग्रंथनो दशम सरव विसुद्धि नामा द्वार बालाबोधरूप संपूर्ण थयो

दोहरा.—सरव विसुद्धी द्वार यह, कह्यो प्रगट शिवपंथ; कुंद कुंद मुनिराजकृत, पूरन नयो गरथ. ॥ ७८ ॥

अर्थः— जे द्वारमां आत्मानी सर्व विशुद्धि पामिये तेज द्वार कह्यो ते प्रगटप

ऐ मोक्षनो मार्ग कह्यो छे, श्री मधर स्वामीनी वाणी सांजलीने श्री कुंदकुंदाचार्ये आ ग्रंथ कीधो एवी संप्रदाय वातछे, ते ग्रंथ संपूर्ण थयो ॥ ७८ ॥

हवे ग्रंथ कर्तानुं नाम अने ग्रंथनो महिमा कहेछे.– अथ ग्रंथ व्यवस्था कथन –

चोपाई – कुंद कुंद मुनिराज प्रवीना; तिन्ह यह ग्रंथ इहालो कीना, गाथा बद्ध सु प्राकृतवानी, गुरु परंपरा रीति बखानी. ॥ ७९ ॥ जयो ग्रंथ जगमें विख्याता; सुनत महा सुख पावहि ज्ञाता, जे नव रस जगमांहि बखाने; ते सब रसमें सार समाने. ॥ ८० ॥ दोहरा – प्रगट रूप संसारमें, नव रस नाटक होइ, नव रस गर्भित ज्ञानमें, विरला जानै कोइ ॥ ८१ ॥

अर्थ – कुंद कुंद नामे मुनिराज ते अध्यात्ममां प्रवीण थया, ते आचार्ये आ सर्व विशुद्धिनामा द्वार लगि आ ग्रंथ कीधो ते ग्रंथ प्राकृत गाथाबद्ध जलीवाणी प्रकाशी आ वाणीने गुरु संप्रदायथी अमृत चंद आचार्ये वखाणी ॥ ७९ ॥ आ ग्रंथनी टीका व्याख्यान करवाथी कुंद कुंदाचार्यनो करेलो ग्रंथ जगतमां विख्यात थयो, तेने सांजली ज्ञाता होय ते महा सुख पामे, जगतमा जे नव रस वखाण्या छे, ते सर्व रसमां सार रस ते ए समयसार नाटकमा समाई रह्याछे ॥ ८० ॥ संसारमा ए वात प्रगट छे के जे नाटक होय ते नव रसमय होय, पण शांतरसमां जे ज्ञान छे. तेमा नवे रस गर्भित छे तेने तो कोई विरलाज जाणेछे ॥ ८१ ॥

हवे नव रसनुं वर्णन करतां नव रसना नाम कहेछे –अथ प्रथम नव रसके नाम

कवित्त छंद –प्रथम शृंगार वीर दूजो रस, करुना तृतिय जगत सुखदायक, हास्य चतुर्थ रुद्र रस पंचम, छठ्ठम सुरस बिभत्स विभायक, सप्तम भय अष्टम रस अद्भुत, नवमो शांत रसनिको नायक, ए नव रस एई नव नाटक, जो जहाँ मगन सोइ तहाँ लायक ८२

अर्थ – प्रथम शृंगार रस, बीजो वीर रस, त्रीजो करुणा रस, ते जगतमा सुखदायक छे. चोथो हास्य रस, पांचमो रौद्र रस, छठो बिभत्स रस, ते विभायक कहेला चित्तनो भंग करनार छे सातमो भय रस, आठमो अद्भुत रस, नवमो शांत रस छे, ते सर्व रसनो नायक छे, ए नव रस कहिए. ते नव रस नाटक रूप होय जे प्राणी जे रसमा मगन थई रह्यो छे तेने ते रस लायक छे. ॥ ८२ ॥

हवे नव रसना स्थाई भाव कहेछे.– अथ रस अवस्था कथन –

सवैया इकतीसा – सोभामे सिंगार बसै वीर पुरुषारथमें, हियेमे कोमल करुना रस बखानिये, आनंदमे हास्य रुंड मुंडमे बिराजे रुद्र, बीभछ तहा जहां गिलान मन आनिये, चितामें भयानक अथाहतामे अदभुत, मायाकी अरुचि ता

में शांत रस मानिये , एई नव रस नवरूप एई भावरूप, इन्हको विलेछन सुद्द ष्टि जग जानिये. ॥ ७३ ॥

अर्थः— शोभामां शृंगार रसनो निवास छे अर्थ साधन रूप पुरुषार्थमां वीर रसनो वास छे. हृदयना कोमलता पणामां करुणा रसनो वास छे. आनंदनी प्राप्तिमां हास्य रसनो वास छे. रण संग्राममां रूंझ मूंझपडेलां होय, त्यां रौद्र रस नो वास छे. कोई सुगामणु स्थानक जोई मनमां ग्लानी आवे, त्यां बिभत्स रस नो वास छे. चितामां भय रसनो वास छे. जे कोई अथाग अघटमान वस्तु जाणिए त्यां अद्भुत रसनो वास छे. ज्यां मायानी अरुचि होय तहां शांत रसनो वास प्रमाण कहिए ए नव रस छे ते नवरूप के० संसार रूप पण छे, अने एहिज नव रस भाव के० उत्तम भावरूप पण छे, ए नव रसनो विलेछन के० विवेक जे छे ते तो जगतमां सुदृष्टिथी जाणीए ॥ ७३ ॥

हवे एज नव रस भावरूप ज्ञानमां गर्भित छे ते एकज ठेकाणे देखाडे छेः—

अथ नव रस ज्ञान गर्भित एकीभूत कथन.—

छपय छंदः— गुन विचार सिंगार, वीर उद्दिम उदार रुप; करुना सम रसरीति, हासहिरदे उछाह सुख; अष्ट करम दल मलन, रुद्र वरते तिहि थानक; तन विलेछ बीभछ, दुंद दुखदसा भयानक, अदभुत अनंत बल चितवत, शांत सहज वैराग ध्रुव, नव रस विलास परगास तब, जब सुबोध घट प्रगट हुव. ॥ ७४ ॥

अर्थ.— ज्ञानादिक गुणेकरी आत्म विभूषित देखिये त्यांतो शृंगार रस उपज्यो १ अने आत्मानेविषे निर्जरा प्रमुखनो उद्यम देखिये त्यांतो उदार प्रधान वीर रस छे २; ज्यारे आत्माने उपशम रसनी रीते देखिये त्यारे करुणा रस जाणीए ३, ज्यारे एने अनुभवमां उत्साह अने सुखउपजे छे ते तो हैयामां हास्य रस उपजे छे ४, महा बलवान आठ कर्मना अनंत प्रदेशी दल छे तेनो दलन करतां देखीए तो तहां आत्मा रौद्र रसमयि थई रह्यो छे ५, ज्यारे पुद्गलनुं स्वरूप विचारीये छीए त्यारे बिभत्स रस छे ६, ज्यारे आत्मा पोतानुं स्वरूप न जाणे अने दुंद दुःखदशामां पड्यो छे, त्यारे तो भय रसमां देखीए ७, अनंत वीर्यनुं ज्यारे चितवन करीए त्यारे तो आत्मा अदभुत रस पामे ८, ज्यारे राग द्वेष निवारीने सहज वैराग्यने ध्रुव के० निश्चल धारे छे, त्यारे आत्मा शांत रसमय पामीए ९, ए नव प्रकारना भाव रसना विलास नो प्रकाशतो ज्यारे घटमां सुबुद्धि प्रगट थाय त्यारेज थाय. ॥ ७४ ॥

हवे कुंद कुंदाचार्यकृत आ ग्रंथ छे तेनी स्तुति करेछेः— अथ ग्रंथ स्तुतिः—

चोपाई — जब सुबोध घटमे परगासे, तब रस विरस विषमता नासे, नव रस लखे एक रसमांही, तातें विरस नाव मिटि जांही ॥७५॥ दोहरा—सब रस गर्भित मूल रस, नाटक नाम गरथ, जाके सुनत प्रवान जिय, समुझे पंथ कुपथ ॥ ७६ ॥ चोपाई — वरते ग्रंथ जगत हित काजा, प्रगटे अमृतचद मुनि राजा, तब तिन्ह ग्रंथ जानि अति नीका, रची बनाइ संसकृत टीका ॥७७॥ दोहराः— सर्व विशुद्धि द्वारलों, आए करत बखान, तब आचारज नक्तिसों, करे ग्रंथ गुन ज्ञान. ॥ ७८ ॥ चोपाई —अदनुत ग्रंथ अध्यातम वांनी, समुझे कोक विरला ज्ञानी, यामें स्यादवाद अधिकारा, ताको जो कीजे विसतारा ॥ ७९ ॥ तो गरथ अति शोना पावे वह मदिर यह कलस कहावे, तवचित अमृत वचन गढखोले, अमृत चद आचारज बोले ॥८०॥ दोहरा— कुदकुद नाटकविषे, कह्यो दरव अधिकार, स्यादवादनें साधि में, कहों अवस्था द्वार ॥ ८१ ॥ कहों मुकति पदकी कथा, कहो मुक्तिको पंथ, जैसे घृत कारज जहा, तहाँ कारन दधिपथ ॥ ८२ ॥ अर्थ स्पष्ट ॥ चोपाई— अमृत चद बोले मृडुबानी, स्यादवादकी सुनो कहानी, कोक कहे जीव जगमांहीं, कोक कहे जीव है नाही ॥ ८३ ॥ दोहरा — एक रूप कोक कहे, कोक अगनित अंग; छिन नंगुर कोक कहे, कोक कहे अनंग ॥ ८४ ॥ नय अनत इह विधि कही, मिले न काहू कोइ, जो सब नय साधन करे. स्यादवाद है सोइ ॥ ८५ ॥ स्यादवाद अधिकार अब, कहों जैनको मूल, जाके जाने जगत जन, लहे जगत जल कूल ॥ ८६ ॥

अर्थ — हवे संगतनी वात कहेछे — ज्यारे घटमां सुबोध प्रकाशे छे, त्यारे ए रसस हित छे अने ए विरस छे एवो विषय ममता नाव छे ते सर्व नाश पामेछे एनो हेतु ए छे के जे नव रस छे तेने एक नाव रसमांज लखे के० जुवे, तेथी विरस नाव मटीने एकज रसमां आत्मानुं रहेवुं थाय. ॥ ७५ ॥ एम सर्व रसोमां गर्भित एक रसमय थयलुं एवु आ समयसार नाटक नामे ग्रंथ श्री कुंद कुंदाचार्यजीए कह्यो, जेना अर्थ नावने सांनलता प्रमाणिक जीव छे ते मारग कुमारगनो विचार समजे. ॥७६॥ प्रथम जगत वासी जीवोने हितकारी कार्यनो ग्रंथ प्रवर्त्तमान थयो ते पछी अमृतचद नामा आचार्य प्रगट्या तेऐ आ ग्रंथ अति श्रेष्ठ जाणीने आ ग्रंथनी टीका बनावी, गाथानुं रहस्य लइने काव्य बंध कह्यो ते कहीए छीए. ॥ ७७ ॥ श्री अमृतचदजी एज ग्रंथनुं व्याख्यान करतां सर्व विशुद्धि द्वार

सुधी आव्या. आंही ग्रंथ संपूर्ण थयो जाणी श्री अमृतचंद्र आचार्य नंक्तिना वश थी ग्रंथनुं गुण ज्ञान करे छे. ॥ ८८ ॥ आ ग्रंथ अध्यात्म वाणीमां अद्भुत थयो, पण आ ग्रंथने कोई विरला ज्ञानवत पुरुष समजे, आ ग्रंथमां स्याद्वादनो अधिकार छे ते अल्प बुद्धि स्थूलमतिने समजवो मुशकेल छे तेथी ते स्याद्वादनो जो विस्तार करीये तो सारुं ॥ ८९ ॥ जेथकी आ ग्रंथ अति शोभा पामे एम विचारी आ ग्रंथरूप मंदिर तेना उपर स्याद्वादनो विस्तार करियें तो ते कलशरूप थाय. त्यारे म्हारा चित्तमां अमृत जेवा वचन गढी के० धारण थइने खुले एम दोष रहितनी परे श्री अमृतचद आचार्य बोले छे के ॥ ९० ॥ श्री कुंद कुंदाचार्यना करेला नाटक ग्रंथमां जीव अजीव द्रव्यनो अधिकार कह्यो. हवे हुं स्याद्वाद नयनो अवस्थानो द्वार कहुंछुं. अने साध्य वस्तुनी अवस्थानो द्वार कहुंछुं ॥ ९१ ॥ वाणुमां दोहरानो अर्थ सुलभ छे ॥ ९२ ॥ अमृतचंद आचार्य एवी कोमल वाणी बोल्या के अहो शिष्य स्याद्वादनी कथा हुं कहुंछुं ते सांभलो कोई अस्तिवादि तो एम कहे छे के जगतमां जीव वस्तु छे, अने कोई नास्तिवादी कहे छे के, जगतमां जीव वस्तु नथी. ॥ ९३ ॥ कोई अद्वैतवादी ब्रह्मने एकरूप कहेछे. कोई नैयायिक वैशेषिक जीवने अगणितपणे कहेछे कोई बौध मतीने लीधे जीवने क्षणभंगुर कहेछे, कोई सांख्य मतीने लीधे जीवने अभंगज कहेछे ॥ ९४ ॥ अर्थ समजवाना मार्गने नय कहिए, ते समजवाना मार्ग अनंत छे; तेने लीधे नय पण अनंत कहिये; तेमां कोई नय कोई नयने मले नही, विरोधी छे. हवे आंही जे सर्व नयनुं साधन करे, एटले सर्व नयने साचा साधिने देखाडे, तेने स्याद्वादि जाणीए ॥ ९५ ॥ ते स्याद्वादनो अधिकार हवे हुं सर्व कहुंछुं. एज स्याद्वाद आगमनुं मूल छे. जे स्याद्वादना जाण प्रवीण जगतवासी लोक छे ते संसार जलधिनो कांठो पामेछे. ॥ ९६ ॥

हवे नयजालथी शिष्यने संदेह उपज्यो त्यारे प्रश्न करेछेः– अथ शिष्यप्रश्न गुरु उत्तर कथन –

सवैया इकतीसा.– शिष्य कहे स्वामी जीव स्वाधीन के पराधीन, जीव एक है किधौं अनेक मानि लीजिये, जीव है सदीव किधौ नाहि है जगतमांहि? जीव अविनस्वर के नस्वर कहीजिये, सतगुरु कहे जीव है सदीव निजाधीन, एक अविनस्वर दरव दृष्टि दीजिये, जीव पराधीन छिन भंगुर अनेकरूप, नांहि तहां जहां परजे प्रवान कीजीए. ॥ ९७ ॥

अर्थ— प्रथम शिष्य पुछेछे, स्वामी जीव स्वाधिन छे के पराधिन छे? जीव एक छे के गणतिमां अनेक छे? ए केम मनमा जाणवुं अने जीव कहेवाय छे तो जगतमा सदायछे के नथी, ए अस्तिपणानो संदेह छे, अने जीव अस्ति के॰ अविनासी छे के विनाशी छे हवे आवी रीतना प्रश्न उपर सद्गुरु कहेछे के हे शिष्य जीव वस्तु जगतमां छे, पण नास्ति न कहीए, अने ते जीव आपणे स्वाधिन छे अने एक छे यद्यपि गिणतीयें अनेक छे, तो पण लक्षणथी एक छे. अविनाशी द्रव्य दृष्टि दीजे तो एमज छे, अने जो पर्याय नय प्रमाण करीये तो जीव पराधीन छे, कर्माधीन छे. अने अवचित मरण देखतां क्षणभंगुर छे गत्यादिक देखता अनेकरूप छे वली अजीव पदार्थ स्थापनानी अपेक्षाये नथी अने जहा पर्याय प्रमाण छे तिहा एछे ॥ ५७ ॥

हवे द्रव्य क्षेत्र काल भावे करीने सर्व वस्तुनुं अस्तिनास्तिपणुं कहेछे —

अथ दरव क्षेत्र काल भाव अस्तिनास्ति कथन —

सवैया इकतीसा —दर्व खेत्र काल भाव चारो भेद वस्तुहीमें, अपने चतुष्क वस्तु अस्तिरूप मानिये, परके चतुष्क वस्तु नासति नियत अग, ताको भेद दर्व परजाय मध्य जानिये, दरवतो वस्तु खेत्र सत्ता भूमिकाल चाल, सुभाव सहज मूल सकति वखानिये, याही भाती परविकलप बुद्धि कलपना, विवहार दृष्टि अंशभेद परवानिये. ॥ ५८ ॥ दोहरा — हे नाही नाही सु है, हे है नाही नाहि, यह सरवगी नयधनी, सबमाने सब माहि. ॥ ५९ ॥

अर्थ —द्रव्य क्षेत्र काल भाव ए चारें भेद वस्तुमां विचारीए, ज्यांही आपणे वस्तु छे, ते अस्तिरूप मानीए, एटले स्वद्रव्य स्वक्षेत्र स्वकाल स्वभावथी विचारीए त्यारे तो सर्व वस्तु अस्तिरूपें छे, अने जो परवस्तुथी ए चारने विचारिये तो वस्तुनुं नास्तिस्वरूप नीपजे छे एटले परद्रव्य परक्षेत्र परकाल परभावथी सर्व वस्तु नास्तिरूपे छे नियत अंग के निश्चेनयथी. अस्ति छे तेनो भेद द्रव्य पर्यायथी जाणवो. ए चार भेदमा द्रव्यथी वस्तु कहीए, वस्तुनी सत्तानी भूमिने क्षेत्र कहियें, वस्तुनी परिणाम चालथी काल कहीए, सहजनी मूलशक्तिने स्वभाव कहीए ए रीते बुद्धिनी कल्पना करीने परद्रव्य क्षेत्रादिकना जो विकल्प ग्रहण करियें जेम के घट वस्तु ग्रहण करवाथी परद्रव्य परक्षेत्र परकाल परभावनी कल्पनाथी नास्ति छे ए व्यवहार दृष्टिथी वस्तुना अश भेद प्रमाण थाय. ॥ ५८ ॥ अने ए नथी एवु कहेवामा स्वद्रव्यादिकनुं अस्तिपणुं लईने परद्रव्यादिकथी नास्तिपणुं लईए तथा नही ते छे एम

कहेवामां प्रथम परद्रव्यादिकनुं अस्तिपणुं ग्रहीए, छे अने नथीज एम केहेवामां फरी परद्रव्यादिकनुं केवल नास्तिपणुज ग्रहण करियें छे, एथी सात भांगा उपजे छे, आंही सर्वांग नयना धणी स्याद्वादी सर्व वस्तुमा सर्व भांगा माने छे ॥ ९९ ॥

हवे चौद नयना भेदथी एकेक भेदे एकांत पक्षीनी जेवी केहेणी छे तेवी कहेछे —

अथ चतुर्दश नय भेद एकांत पक्ष कथन नाम स्थापन:—

सवैया इकतीसा:— ज्ञानको कारन ज्ञेय आतमा त्रिलोक मेय, ज्ञेयसो अनेक ज्ञान मेल ज्ञेय छाही है, जोलो ज्ञेय तोलों ज्ञान सर्व दर्वमें विनाज्ञेय छेत्र ज्ञान जीव वस्तु नांही है, देह नसे जीव नसे देह उपजत लसे, आतमा अचेतन है सत्ताअंसमांही है, जीव छिन भंगुर अज्ञायक सरूपी ज्ञान, ऐसी ऐसी एकंत अवस्था मूढ पाही है ॥ ५०० ॥

अर्थ — प्रथम चउद नयना नाम स्थापना कहेछे — जे ज्ञेय वस्तुमां ज्ञान उपजेछे, तेथी ज्ञाननुं कारण ज्ञेय छे ए नाम छे, १ त्रण लोक प्रमाणे आत्मा छे, तेथी त्रिलोकमय एवु नाम छे, २ जेम अनेक ज्ञेय छे, तेम ज्ञान पण अनेक छे. ते अनेक ज्ञान ए नामछे. ३ ज्ञानमां ज्ञेयनी छाया छे ते मेलवु छे तेथी मेलन ज्ञेय ए नाम छे. ४ ज्यां सुधी ज्ञेय छे त्या सुधी ज्ञान छे. ज्ञेय उपरांत ज्ञान नथी तेथी ज्या लगी ज्ञेय ए नामछे ५ सर्व दर्व मयी विज्ञान छे तेवु तेज नामछे. ६ ज्ञेय क्षेत्रने प्रमाणेज ज्ञान छे, तेथी ज्ञेय क्षेत्रमान ए नाम छे. ७ जीव वस्तु जगतमां नथी. तेथीनास्ति जीव ए नाम छे, ८ देहनो नाश थवाथी जीवनो पण नाश, तेथी जीव नाश ए नामछे ए, देह उपजवाथी जीव विराजे छे, तेथी देह त्यां जीवोत्पाद ए नामछे १० आत्मा छे ते अचेतन पदार्थ छे तेथी अचेतन ज्ञाता ए नाम छे ११ सत्ताना अंस ते जीव कहिए छे, पण आत्मा अंस मात्रछे ए नाम छे १२ जीव छे, ते क्षणभंगुर छे तेथी एज नामछे १३, ज्ञान छे ते ज्ञायक स्वरूपमा नथी तेथी अज्ञायक ज्ञान ए नाम छे १४ एवी एवी एकांत अवस्था मूढ लोको पामे छे, ए नयना भेद जाणवा ॥ ५०० ॥

हवे ज्ञाननुं कारण ज्ञेय. एजे प्रथम नय कह्यु तेनो प्रपंच करी देखाडेछे —

अथ ज्ञानको कारन ज्ञेय प्रथम नय पक्ष-कथनः—

सवैया इकतीसा:— कोउ मूढ कहे जैसे प्रथम समारि भीति, पीछे ताके उपर सु चित्र आछो लेखिये, तैसे मूल कारन प्रगट घट पट जैसो, तैसो तहा ज्ञान रूप कारज विशेषिये, ज्ञानी कहे जैसी वस्तु तैसोई सुभाव ताको, ताते ज्ञान ज्ञेय भिन्न

भिन्न पद पेखिये, कारन कारज दोउ एकहीमें निहचे पे, तेरो मत साचो विवहार दृष्टि देखीये ॥ ५०१ ॥

अर्थ — कोई मूढ मीमांसक ते शिष्य लोकने एम समजावे छे के, जेम प्रथम भिंतने समारी होय तोपछी तेना उपर चित्र सारुं थाय, अने नरसी उपर नरसुं चित्र थाय, तेम ज्ञाननी उत्पत्तिनुं कारण मन छे, पण जेवो घटपट प्रमुख पदार्थ होय तेवुज तिहांज्ञानरूप कार्य विशेष थाय छे, जो घटपदार्थ जाणवा योग्य होय तो घट ज्ञान होय, अने पट पदार्थमां पट ज्ञान होय, तेथी ज्ञाननुं कारण ज्ञेय छे, हवे तेने स्याद्वाद ज्ञानी एम कहेछे के, अहो नाई, जे जेवी वस्तु छे तेनो स्वभाव पण तेवोज छे, जे ज्ञानपदार्थ छे तेनो स्वभाव जाणवानोज छे, अने जे ज्ञेयपदार्थ छे ते जाणवा योग्यज छे, आ अर्थ भेदथी ज्ञान अने ज्ञेय ए बने जुदा पद जाणवा अहीं जे ज्ञेय कारण पणे कह्यो तेज ज्ञान विकल्पे कह्यु, तेथी घटपटादि जगत छे ते जड पदार्थ दूर रह्या,अने ज्ञान छे तेज सामान्य पणे छे तेथी निश्चे नयथी तो ज्ञानमां ज्ञेय पामिये,पण व्यवहार दृष्टि आपता तो ताहारुं मत पण साचुछे ५०१

हवे बीजा एकांत नय आत्मा त्रिलोकमय छे तेनो प्रपच देखाडे छे —

अथ द्वतिय नय आतमा त्रिलोक प्रमानयक्त कथनं.—

सवैया इकतीसा — कोउ मिथ्यामति लोकालोक व्यापि ज्ञान मानि, समुझे त्रिलोक पिंम आतम दरव है, याहितें सुछंद भयो मोले मुष हू न बोले कहे याजगतमें हमारोई खरव है, तासों ज्ञाता कहे जीव जगतसों भिन्न पै जगतको विकासी तोहि याहीते गरव है, जो वस्तु सो वस्तु पररूपसो निराली सदा, निहचे प्रमान स्यादवादमें सरव है, ॥ ५०२ ॥

अर्थ — कोई नैयायिक वैशेषिक मिथ्याति छे ते ज्ञानने लोकालोक व्यापी मानीने एवु समजे छे के जीवछे ते विज्ञाननो पिंम छे अने विज्ञान छे ते लोकालोक व्यापी छे तेथी आत्मद्रव्य त्रण लोक प्रमाण छे तेथी पोताने सर्व व्यापी ईश्वर मानीने स्वछंद थयो मोले छे अभिमानमां चढयो थको बीजाने मूर्ख मानीने कोईनी साथे मुखथी न बोले जो बोले तो एम कहे के आ जगतमां हमारीज खरब के० सर्व रचना छे हवे तेने साद्वाद ज्ञानी कहे छे के अहो भाई जीव जे छे ते जगतथी भिन्न छे पण तेना ज्ञानमां जगतनो विकास छे तेथी ईश्वरपणानो गर्व चढयोछे पण जे वस्तु छे तेतो पोताना स्वरूपमाज रहे छे अने परस्वरूपथी सदा जुदी रहे छे तेथी जगत अने आत्माने निश्चे नयना प्रमाणथी स्याद्वादमा सर्वथा विवरोध पामिए.५०२

हवे त्रीजो एकांत नय ते ज्ञेयथी ज्ञाननो अनेक प्रपंच कहि देखाडेछेः—

अथ त्रितीय ज्ञेयसो अनेक ज्ञान कथनः—

सवैया इकतीसाः— कोउ पक्षु ज्ञानकी अनंत विचित्राई देखे, ज्ञेयको आकार नाना रूप विसतर्यो है; ताहीकों विचारी कहे ज्ञानकी अनेक सत्ता, गहिके एकंत पक्ष लोकनिसों लर्यो है; ताको भ्रम भंजवेकों ज्ञानवत कहे ज्ञान, अगम अगाध निराबाध रस भर्यो है; ज्ञायक सु भाई परजाईसों अनेक भयो, जद्यपि तथापि एकतासों नहिं टर्यो है; ॥ ५०३ ॥

अर्थः— कोई पक्षु के० मूर्ख ज्ञाननी अनंत विचित्रता देखेछे. तेनो हेतु कहे छे. जगतमां ज्ञेय वस्तु अनंत छे, तेना आकार अनंत छे ते ज्ञानमां परणमे छे तेथी ज्ञानपण नानाप्रकारथी विस्तरे छे, अने तेना नाना रूप विस्तारने विचारीने ज्ञाननी अनंत सत्ता माने छे. एवो एकांत पक्ष लईने प्रतिवादी लोकथी लडे छे. हवे स्याद्वादी ज्ञानवत ते एकान्तपक्षीना भ्रम भांजवाने एम कहेछे के, अहो भाई तुं ज्ञानने ज्ञेयनो आकार परणम्यो जाणीने केम भूले छे? ज्ञान छे ते अगम्य वस्तु छे. निराबाध रसथी भर्यो छे. ज्ञाननो ज्ञायक स्वभाव छे, तेथी यद्यपि पर्याय शक्तिथी ज्ञान अनेकरूप थयुं छे तथापि ज्ञायक स्वभावथी ज्ञाननी एकताज छे. पण ते एकताथी ज्ञान टलतुं नथी. ॥ ५०३ ॥

हवे चोथा नयमां ज्ञाननेविषे ज्ञेयनी छायानो प्रपंच देखाडे छेः—

अथ चतुर्थ ज्ञेय छाया पक्ष कथनः—

सवैया इकतीसाः— कोउ कुधी कहे ज्ञानमांहि ज्ञेयको आकार, प्रतिभासि रह्यो है कलंक ताहि धोइए; जब ध्यान जलसों पखारिके धवल कीजे, तब निराकार शुद्ध ज्ञानमई होइए; तासों स्याद्वादी कहे ज्ञानको सुभाउ यहे, ज्ञेयको आकार वस्तु नांहि कहा खोइए, जैसे नाना रूप प्रतिबिंबकी झलक दीसे, जदपि तथापि आरसी विमल जोइए. ॥ ५०४ ॥

अर्थः—कोई कुधी के० कुबुद्धि वैशेषिक मतवालो एम कहे छे के, जो जगत वासी जीवना ज्ञानमांज ज्ञेयनो आकार प्रतिभासे छे, ते आकार तो निराकार ज्ञाननुं कलंक उपजेछे. तेने धोई नाखवो जोइए, तेथी निराकारनुं ध्यान लगाडवुं तेतो जल थयुं, ते जलथी प्रक्षालीने ते ज्ञानने उज्वल करियें तेवारें निराकार शुद्ध ज्ञानमय थवाय छे, हवे आही स्याद्वादी तेने कहे छे. अरे भाई ज्ञाननो एज स्वभाव छे,

के ज्ञेयनो आकार वस्तुमां भासे तो आंही आकार गमावी नाखवानी छुं मतलब छे जेम आरसीमां नाना रूप प्रति बिंबनो झलकाट देखाय छे तो पण आरसी निर्मल जोइए पण तेने प्रतिबिंबनुं कलंक कोई न कहे. ॥ ५०४ ॥

हवे पांचमो एकांतनय ते ज्यां लगें ज्ञेय त्यां लगें ज्ञान तेनो प्रपंच कही देखाडेछे

अथ पंचम जौलों ज्ञेय तौलों ज्ञान यह कथन.–

सवैया इकतीसा – कोउ अज्ञ कहे ज्ञेयाकार ज्ञान परिनाम जोलों विद्यमान तौलों ज्ञान परगट है, ज्ञेयके विनाश होत ज्ञानको विनास होइ, ऐसी वाके हिरदे मिथ्यातकी अलट है, तासों समकितवंत कहे अनुभौ कहान, परजे प्रवान ज्ञान नानाकार नट है, निरविकलप अविनस्वर दरव रूप, ज्ञानज्ञेय वस्तुसों अव्यापक अघट है. ॥ ५०५ ॥

अर्थ – कोई अजाण पुरुष एवुं कहेछे के जेवो ज्ञेयनो आकार तेवुं ज्ञाननुं परिणाम थायछे, तेथी ज्ञेय विद्यमान ज्यां लगी होय, त्यां लगी ज्ञान प्रगट रहेछे अने ज्ञेयनो विनाश थये ज्ञाननो पण विनाश थायछे, एवी वात मिथ्यामतीना हृदयमां मिथ्यानी अलट लागी रहेछे, हवे तेनाथी सम्यकवंत स्याद्वादी अनुभव नी कथा कहेछे अरे भाई, जेम कोई नट पुरुष छे ते नाना प्रकारना भेष धारीने नाना प्रकारनां नाम धरावेछे, तेम ज्ञानरूप नट छे, ते नाना आकार धरीने पर्याय प्रमाणे बहुरूपी थायछे पण जेवु नट द्रव्य एक छे तेवुं ज्ञान वस्तु पण निर्विकल्प एक छे, द्रव्यपणे अविनस्वर छे अने ज्ञान वस्तु ते ज्ञेय वस्तुथी अव्यापक छे, एटले ज्ञेयवस्तु ज्ञान वस्तुमा एक मेक न थाय तेथी ज्ञान ज्ञेयनी एकता अघटती छे ॥ ५०५ ॥

हवे छठा एकांतनय सर्व द्रव्यमयी आत्मानो प्रपच कही देखाडे छे.–

अथ षष्ठम सर्व दर्वमय आतमा यह कथन.–

सवैया इकतीसा – कोउ मंद कहे धर्म अधर्म आकास काल, पुद्गल जीव सब मेरो रूप जगमें, जाने न मरम निज मानें आपा परवस्तु बंधे दिढ करम धरम खोवे डगमे, समकिती जीव सुद्ध अनुभो अभ्यासे तातें परको ममत्व त्याग करे पग पगमें, अपने सुभावमें मगन रहे आठों जाम, धारा वाही पंथिक करावे मोष मगमे ॥ ५०६ ॥

अर्थ.– कोई मूर्ख ब्रह्मादैतवादी एवु कहे छे के जो कोईनां मतमां धर्म अधर्म आकाश काल जीव पुद्गल ए छ द्रव्य कहेवाय छे ते सर्व ब्रह्म छे तेथी मारु पणरूप सर्व जगतमा विस्तरि रह्यु छे बीजो पदार्थ कोई नथी आंही गुरु शि

थने कहे छे. अहो शिष्य एतो ब्रह्मा द्वैतवादी मूढ मती छे, ते पोतानो मर्म जाए तो नथी; अने पर वस्तु छे तेने आत्मा जाणे छे. एवा मिथ्यात्वथी ए दृढ कर्म बांधे छे. अने जगतमां पोतानो धर्म खोवे छे पोतानो स्वनाव गमावे छे. जे समकेती जीव होय तेतो सोहं बीजना ध्यानथी शुद्ध अनुनवनो अन्यास करे, तेथी आत्मतत्व शुद्धंज पामे अने पगले पगले परवस्तुनो त्याग करे, अने पोताना शुद्ध स्वनावमां आवे प्रहर मगन रहे, तेथी ज्ञान धारामां वहेनारो मोक्ष मार्गमां चालनारो कहेवाय छे ॥ ५०६ ॥

हवे सातमो एकांत नय जे ज्ञेय क्षेत्र प्रमाण ज्ञान तेनो प्रपंच कहि देखाडेछे

अथ सप्तम ज्ञेय क्षेत्र प्रमाण ज्ञान यह कथन:—

सवैया इकतीसा:— कोउ सठ कहे जेतो ज्ञेयरूप परवान, तेतो ज्ञान तातें कहुं अधिक न और है; तिहूं काल पर छेत्र व्यापी परनयो माने, आपा न पिछाने ऐसी मिथ्या दृग दौर है, जैन मती कहे जीव सत्ता परवान ज्ञान, ज्ञेयसों अव्यापक जगत सिर मोर है; ज्ञानकी प्रनामें प्रतिबिंबित विविध ज्ञेय, जदपि तथापि थिति न्यारी न्यारी ठौर है ॥ ५०७ ॥

अर्थः— कोई मूर्ख एम कहे छे के जेटलुं ज्ञेय वस्तुनो आकाररूपनुं प्रमाण छे एटले ज्ञेयनो जेटलुं एक नाहानुं मोहोटुं प्रमाण छे. तेटलुं ज्ञाननुं प्रमाण छे तेथी कोई वधारे बीजो प्रमाण नथी. एम ज्ञानने त्रणे कालमां परक्षेत्र व्यापी अने पर वस्तुथी परिणम्यो, एटले ज्ञेयथी एक मेक थयो ज्ञानने माने छे. पण ज्ञानने आत्मारूप जाणे नही, एवी मिथ्या दृष्टिनी दोर छे. हवे तेने जैनमती स्याद्वादी कहे छे. अहो नाई, जेटलां आकाश क्षेत्रमां जीव सत्ता छे तेटलाज प्रमाण ज्ञान छे अने ज्ञान छे ते घट पटादिक ज्ञेय पदार्थथी अव्यापक छे एज जगतना मस्तके मुगट समान छे. जो पण ए ज्ञाननी प्रनामां नाना प्रकारना ज्ञेय पदार्थ प्रतिबिंबित थई रह्याछे, तोपण ज्ञानना स्थिति जूदीज छे. अने ज्ञेयनी स्थिति पण जुदीज छे. अने ज्ञाननुंठेकाणुं आत्मा छे ते पण जुदोज छे, अने ज्ञयना पृथिवी प्रमुख जे ठेकाणा छे ते पण जुदाज छे ॥ ५०७ ॥

हवे आठमो नय नास्तिकवादी एम कहे छे के वस्तु नथी एज एकांत नय छे. तेनो प्रपंच कही देखाडे छे.— अथ अष्टम नास्तिकवादी वस्तु नाही यह कथन:—

सवैया इकतीसा —कोउ शून्यवादी कहे ज्ञेयके विनास होत, ज्ञानको विनाश होइ कहो केसे जीजियें; तातें जीवितव्यताकी थिरता निमित्त अब, ज्ञयाकार परि

नामनिको नास कीजियें, सत्यवादी कहे नैया दूजें नाही पेद खिनज्ञेयसों विरचि ज्ञान भिन्न मानी लीजीयें; ज्ञानकी शकती साधि अनुनो दशा अराधि, करमको त्यागिके परम रस पीजियें ॥ ८ ॥

अर्थः—कोई बौध मतिनो नेद शुन्यवादी एम कहे ठे के, ज्ञेय ठते ज्ञान उपजे ठे, अने ज्ञेयनो विनाश थए ज्ञाननो पण विनाश थाय ठे. अहो प्रतिवादी तमेज कहोठो के ज्ञान ते जीववुं रूप ठे तो ज्ञाननो विनाश थएथी जीव पण विणसी जाय. तो जीववुं केम होय? तेनो उत्तर के जीवितव्यनी स्थिरताने कारण एटले शाश्वत जीव राखवा निमित्त ज्ञानमां जे ज्ञयाकार परिणाम उपजे ठे, तेनुं नाश करिये तो जीवनी स्थिरता थाय, हवे ते उपर सत्यवादी जैनी कहे ठे. अहो नाई एम खेदमां खिन्न के० आकुलव्याकुल न थावु. ज्ञेयथी विरचिने उदासीन थईने ज्ञान वस्तु भिन्नज मानी लइयें ए ज्ञाननी ज्ञायक शकती ठे ते शक्तिनुं साधन करीने अनुनव दशामां ए ज्ञायकने आराधिने कर्मने त्यागी परम रस पीजीए॥ ८ ॥

हवे नवमो एकांत नय देहनो नाश थातां जीवनो नाश-तेनो प्रपंच कही देखाडेठे

अथ नवम देहके नाश होत जीवको नाश यह कथन:—

सवै इकतीसा.— कोउ क्रूर कहे काया जीव दोउ एक पिंम, जब देह नसैगी तबहीं जीव मरेगो, ठायाको सो ठल किधों मायाकोसो परपच, कायामे समाइ फिरि कायाको न धरेगो, सुधी कहे देहसों अव्यापक सदीव जीव, समोपाइ परको ममत्व परिहरेगो, अपने सुनाव आइ धारना धरामे धाइ, आपुमें मगन व्हेके आपा शुद्ध करेगो ॥ ए ॥ दोहरा.— ज्यों तन कंचुकि त्यागसों, विनसे नांहि नुयंग; त्यों शरीरके नासतें, अलख अखंमित अग ॥ १० ॥

अर्थ — कोई चारवाक मती क्रूर एम कहे ठे के, काया अने जीव बने एक पिंम ठे, तेथी ज्यारे देह नाश पामसे त्यारे जीव पण नाश पामशे. जेम वृक्षनो विनास थये तेनी ठाया पण विनाश पामे ठे, तेम काया अने जीवनी ठायानो ठल बनी रह्यो ठे अथवा इंद्र जालनी मायानो प्रपंच बनी रह्यो ठे, तेथी ते कायामां समाइने एटले दीपकनी परे ओलवाइने पाठो कायाने धरशे नही हवे तेने सुधि के० पंमित स्याद्वादी कहेठे. अहो नाई जीव ठे ते देहथी, सदा अव्यापक ठे. एटले जीव देह पणे परिणम्यो नथी. आ जीव पोतानो समय प्रस्ताव पामीने परनो ममत्व ठोडशे. त्यारे पोताना शुद्ध स्वनावमां आवीने, धारनाधरामेधाइके एटले स्थिरता रूप नूमिमां रहीने आप स्वरूपमां आपज मगन थईने आत्मानी शु

द्ता करशे. ॥ ए ॥ जेम सर्पना शरीर उपर कांचली आवे, ते कांचलीना त जवाथी भुजंग विणशे नही. तेमज शरीरनो त्याग थातां अलप जीव छे ते अखं भित अंगे रहेछे पण जीवनुं विनाश थतुं नथी. ॥ १० ॥

हवे दशमो एकांत नय देह उपजवाथी जीव उपजे तेनो प्रपंच कही देखाडेछेः—

अथ दशम देह उपजत जीव उपजे यह कथनः—

सवैया इकतीसाः— कोउ कुबुद्धि कहे पहिले न हूतो जीव, देह उपजत उ पज्यो हे अब आइके, जोलों देह तोलों देहधारी फिर देह नसे, रहेगो अलप ज्योति ज्योतिमें समाइके, सदबुद्धी कहे जीव अनादिको देह धारी, जब ज्ञान, होइगो कवहीं काल पाइके; तबही सो पर तजि अपनो सरूप भजि, पावेगो परम पद करम नसाइके. ॥ ११ ॥

अर्थः— कोई दुष्ट बुद्धि धरनार एक ममत्व वालो एम कहेछे के, पेहेलो जीव हू तो नही. अने पृथवी, जल, तेज, वायु, ए चार भूतना मिलापथी देह उपज्यो ते मां ज्ञान शक्तिरूप जीव पण आवी उपज्यो. हवे ज्यांसुधी देह वर्ते त्यांसुधी देह धारी नाम धरावे छे अने पाछो देहनो नाश थशे त्यारे अलख पुरुष ज्योति रू पी छे, ते ज्योतिमां समाइ जाशे. हवे सद्बुद्धि स्याद्वादी कहेछे, अहो भाई जीव अना दि कालथी देह धारी मूर्त्तिक छे एटले नवो उपनु नथी. अने ए जीव कोई काले काल लब्धी पामीने ज्ञानी थाशे. त्यारे देहादिक पर वस्तुने त्यागिनें पोताना स्व रूपने भजसे. पछी कर्मोनो नाश करीने परम पदने पामशे. ॥ ११ ॥

हवे अग्यारमो एकांत नय आत्मा अचेतन तेनो प्रपंच विस्तारथी कहे छे.—

अथ एकादशम आतमा अचेतन यह कथन —

सवैया इकतीसाः— कोउ पक्षपाती जीव कहे ज्ञेयके आकार परिनयो ज्ञान ता तें चेतना असत हे, ज्ञेय के नसत चेतनाकौ नास ता कारन, आतमा अचेतन त्रिकाल मेरे मत हे; पंडित कहत ज्ञान सहज अखंडित हे, ज्ञेयको आकार धरे ज्ञेयसों विरत हे; चेतनाके नाश होत सत्ताको विनाश होय, याते ज्ञान चेतना प्रवान जीव तत हे ॥ १२ ॥

अर्थः— कोई पक्षपाती हठवादी जीव कहेछे. ज्ञान छे ते ज्ञेयनो आकार परिण म्यो होय, अने आकार परिणाम असत छे, तेथी चेतना पण असत छे. तेनो हे तु कहे छे, जुओ ज्ञेयनो नाश थाय तेवारें चेतनानो नाश थाय छे. जे सत् वस्तु होय तेनो तो विनाश किवारे पण न थाय. ते कारणथी चेतना असत् थई तेथी

त्रणे कालमां आत्मा अचेतन थय. एवु माहारो मत छे हवे पंमित स्याद्वादी क
हे छे अहो नाई ज्ञान वस्तु सहज स्वनावे अखंमित छे, अने ज्ञेयनो आकार धरेछे
तोपण ज्ञेयथी विरक्त छे जेम आरसीमां आकार नासे तोपण ते आकाररूप आर
सी न थाय, जो चेतना लक्षणनोपण नाश मानीए तो जीवनी सत्तानो पण ना
श थाय, त्यारे जीव वस्तु पण असत् थाय, तेथी जीव तत्व जे छे ते ज्ञान चेतनाना
प्रमाणथीज मानीए ॥ १२ ॥

हवे बारमो एकांत नय अंसप्रमाण जीव सत्तानो प्रपंच कही बतावे छे.—

अथ द्वादशम अंस प्रमान सत्ता पद कथन —

सवैया इकतीसा — कोउ महा मूरख कहत एक पिंममांहि, जहांलों अचित
चित अंग लहलहे हे; जोगरूप नोग रूप नाना कार ज्ञेय रूप, जेते नेद करम
के तेते जीव कहे हे; मतिमान कहे एक पिंममाहि एक जीव, ताहीके अनंत
नाव अंस फेलि रहे हे; पुग्गलसों निन्न कर्म जोगसों अखिन्न सदा, उपजे विन
से थिरता सुनाव गहे है ॥ १३ ॥

अर्थ —कोई बौधमती महा मूर्ख एम कहेछे के, एक शरीरमां ज्यां लगी अचि
त चित अंग के० घटपटादिक अचेतन विकल्प अथवा नर अमर तिर्यंचादि चेतन अं
ग ते सचित विकल्प चकचकी रह्याछे, योगपरिणामथी योगरूप नोगपरिणामथी
नोगरूप एम ज्ञेयनां नानाप्रकार रूप जेटलां कर्म के० क्रियाना नेद थायछे. ते
टलाने जीव संख्या कहेछे, एटले जीव सत्ता अंसप्रमाण थई, हवे बुद्धिवंत स्याद्वा
दी एम कहेछे के, अहो नाई एक पिंममा एक जीव छे अने ते जीवना ज्ञान परि
णामे करीने अनत नाव नासनरूप अंस फेली रह्या छे पण जीव छे ते पुद्गल
थी निन्न छे, अने कर्मयोगथी अनिन्न के० निराकुल छे, तेमां नाव अंस अनत उ
पजेछे अने अनत विणसे छे पण जीवतो स्थिरतारूपज रही रह्यो छे ॥ १३ ॥

हवे तेरमो एकातनय क्षणनंगुर जीवनो प्रपंच कही देखाडे छे —

अथ त्रयोदशम छिननंगुर जीव पद कथन.—

सवैया इकतीसा — कोउ एक छिनवादी कहे एक पिंममांहि, एक जीव उपजत
एक विनसतु है, जाही समै अंतर नवीन उतपति हुइ ताही समै प्रथम पुरातन
वसतु हे; सरवंग वादी कहे जेसे जलवस्तु एक, सोइ जलविविध तरगनि लसतु है
तेसे एक आतम दरव गुनपरजेसों अनेक नयो पें एक रूप दरसतु है ॥ १४ ॥

अर्थ — कोई एक क्षणवादी बौध एम कहेछे के एक पिंममां एक जीव उपजे

छे. एक जीव विणसे छे. जे समे पिंममां नवा जीवनी उत्पत्ति न थाय ते समे पेहलो पुराणो जीव छे ते वसे छे, पछी ते विणसेछे एम शृंखला बंध उपजे विणसे छे, तेने सर्वांगवादी जैनमती एम कहेछे के अहो जाई, जेम तलाव प्रमुख जलाश्रयमां जल वस्तु एक छे तेज जल विविध तरंगे करी लसित के० भिन्न भिन्न देखाय छे, तेम एक आत्मा द्रव्य छे ते गुण पर्यायथी अनेक रूप थयो छे तोपण द्रव्यार्थिक नये एक रूपेंज देखीए छे. ॥ १४ ॥

हवे चउदमो एकांतनय ज्ञायक अज्ञायकनो प्रपंच कही बतावे छे.—

अथ चतुर्दशम अज्ञायक ज्ञायक नय यह कथनः—

सवैया इकतीसा.— कोउ बाल बुद्धि कहे ज्ञायक सकति जोलों, तोलों ज्ञान अशुद्ध जगत मध्य जानिये; ज्ञायक सकति काल पाई मिटि जाई जब, तब अविरोध बोध विमल वखानिये; परम प्रवीन कहे ऐसी तो न बने बाही, जैसे बिनुं परगास सूरजन मानिये, तेसें बिनुं ज्ञायक सकति न कहावे ज्ञान, यहतो न पक्ष परतक्ष परवानिये. ॥ १५ ॥

अर्थ.— जेनी बालकना जेवी तुछ बुद्धि छे. एवो कोई शुन्य वादी तथागत कहेछे के, ज्या लगे ज्ञानमां ज्ञायक शक्ति छे, त्यां लगें जगतमां ज्ञान अशुद्ध कहेवायछे; तेनो एज परमार्थ छे, के जे ज्ञायकपणुं छे ते विकल्परूप छे. अने विकल्पथी ज्ञान अशुद्ध थाय छे, तेथी निर्विकल्प ज्ञान शुद्ध छे ज्यारे नवितव्यताने वशथी पोतानो समय प्रस्ताव पामीने ज्ञायक शक्ति छे ते मटी जाय, त्यारेज विकल्पना विरोधथी रहित एवुं बोध के० ज्ञान ते विमल के० शुद्ध वखाणीए. हवे एने परम प्रवीण स्याद्वादी कहेछे.— अरे जाई जे तुं ज्ञायक एकतामां विकल्प मानीने शंका पामेछे, अने ज्ञायक पणुं अशुद्ध मानेछे, ए वात्त बने नही. जेम प्रकाशविना सूर्य मान्यो न जाय, अने प्रकाशथीज सूर्य मान्यो जाय, तेम ज्ञायक शक्तिविना ज्ञानपण कहेवाय नही, जो तमे अनुमानप्रमाणथी तमारो पक्ष साधन करता नथी, तो प्रत्यक्ष प्रमाणथी पण तमारो पक्ष प्रमाण कीधो न जाय, तेथी तमारो पक्ष छे ते पक्षानास छे. ॥ १५ ॥

हवे जेणे चउद एकात नय हटावी दीधा एवो जे स्याद्वाद तेनी स्तुतिकरेछेः-

अथ स्यादवाद प्रशंसा कथन.—

दोहराः— इह विधि आतम ज्ञान हित, स्यादवाद परवान, जाके वचन विचारसो, मूरख होइ सुजान ॥ १६ ॥ स्यादवाद आतम सदा, ता कारन बल

न जाति न पाति न वसकि वेली न अंसकि कांई; दासि किए बिनु लातनि मारत, एसि अनीति न कीजे गुसांई ॥ २४ ॥ दोहरा — माया गया एक हे, घटे बढे छिनमाहि, इन्हकी संगति जे लगे, तिनहि कहुं सुख नाहि ॥२५॥ सवैया तेईसा — लोगनिसों कछु नातों न तेरों न तोसों कछू इह लोगकों नातो; ए तौ रहेरमि स्वारथके रस, तूं परमारथके रस मातो; ए तनसों तनमे तनसे जड, चेतन तू त नसो नित हातो, होहि सुखी अपनो बल तोरिकें राग विराग विरोधकों तातो. ॥ २६ ॥ सोरठा — जे दुरबुद्धीजीव, ते उतंग पदवी चहे, जे समरसी सदीव, तिन्हको कछू न चाहिए ॥ २७ ॥ सवैया इकतीसा — हांसीमें विषाद बसे विद्यामें विवाद बसे, कायामे मरन गुरुवर्त्तनमे हीनता; शुचिमे गिलान बसे प्रापतिमे हानि वसे, जैमे हारि सुंदर दशामे छबि छीनता, रोग बसे भोगमे संयोगमें वियोग बसे, गु नमे गरव बसे सेवामाहि दीनता, और जगरीति जेती गर्भित असाता सेती, साताकी सहेलीहै अकेली उदासीनता॥ २८ ॥ दोहरा — जिहि उतंग चढि फिरि पतन, नहि उतंग बहिकूप, जिहि सुख अंतर भयवसे, सो सुख है दुखरूप ॥ २९ ॥ जो विलसे सुप सपदा, गये ताहि दुख होइ, जो धरती बहु त्रिणवती, जरे अगनि सों सोई ॥ ३० ॥ इति गुरुउपदेस समाप्त. दोहरा — सबदमांहि सतगुरु कहै, प्रगटरूप जिन धर्म, सुनत विचक्षण सद्दहै. मूढन जानै मर्म ॥ ३१ ॥

अर्थ — अहो जीव चेतन, तमे मोह निद्रा तजीने जागो, अने सत्य स्वरूप देखीने मायारूप सपदाने शुं वलगी रह्याछो, पृथिवी प्रमुख अढार भाराबीक जे छे तेमा तमें क्याथी आव्या छो ? अने कही दशामा जाशो ?, अने जेनी साथे तमे राची रह्याछो, तेतो मायाजाल संपदा ज्यांनी त्यां रहेशे. ए मायाजाल तमारी जाती नथी, तथा पाली नथी अने माया तमारा वंसनी वेली नथी; अने तमारा अंश-के० एक देशनी पण काई नथी; तेथी तमारे अने मायाने संबंध तो कोई पण नथी अने तमे पोतानी करीने जाणोछो. तेथी ए कहेवत साची करो छो, के दासी कर्या वगर लात मारो छो, तेथी उतपात थाशे माटे हे महंत पुरुषो एवी अनीति न करवी ॥ २४ ॥ माया अने छाया एक सरखीज छे. क्षणमां वधे छे अने क्षणमा घटे छे तेथी ए मायानी संगते जे लागी रहेछे, तेने क्यारे पण सुख थातु नथी ॥ २५ ॥ आ जे पुत्र कलत्रादिक तु पोताना जाणे छे तेतो पारका लोको जेवा छे, ए लोकोनी साथे तारो काई नातो नथी, अने ए लोकोने पण ताहरी साथे कोई प्रकारनो नातो नथी ; ए जे पुत्रकलत्रादि लोको छे तेतो पोता

ना स्वारथना रसथी ताह्री साथे रमी रह्या छे, अने अरे चेतन तु तो पोतानी चेतना रूप परमारथना रसमां राची रह्यो छुं. वली ए जे लोको छे ते तारा तनथी तनमय थई रह्या छे, एटले ताहारा शरीरथी मोहीत छे, अने ए शरीर तो जड छे अने तु तो चेतन छे. तेथी ते जडथी ताहारी सदा भिन्नता छे. माटे राग अने द्वेष रूप मोह कर्मनो नांतो तोमी पोतानुं बल फोरवीने सुखी था॥ २६ ॥ जे जीव राग द्वेषथी दुष्ट बुद्धि थई रह्यो छे. तेतो इंद्रादिकनी उंची पदवी चाहे छे, अने जे जीव सदाई समरसी भावमां रहे छे. तेने कोई उंच पदवीनी चाहना याती नथी. ॥ २७ ॥ हांसीने सारी मानीए छे पण तेमा विषवाद वसे छे, विद्याने सारी जाणीए छीए पण तेमा विवाद जगडो वसे छे, कायाने सारी जाणीए छीए पण तेमां मरणदोष छे, गुरुताई के० वडाईने सारी जांणीए छीए, पण तेमा कोईकवारें हीणता छे, पवित्राई सारी जाणीए छीए, पण एने आदि के० अंते दुगछा उपजे छे, प्राप्ति सारी जाणीए छीए पण तेनी साथे हाणी लागी रही छे, जीतवु भलुं छे पण तेनी साथे हारवु लाग्युंज छे, ज्ञानीनी सुंदर दशा भली छे पण अंते काली क्षीण थई जाय छे, भोगनुं सुख सारुं छे, पण तेमां रोगनी उत्पत्ति छे, इष्ट संयोग भलो छे पण तेनी साथे वियोगपण तैयार थई रहे छे, प्रीती भली छे पण तेनीसाथे अप्रीति पण उपजे छे, औदार्यादिक गुणमां गर्व अहंकार वसे छे, राज सेवा सारी छे, पण तेमां दीन पणुं वसे छे, अने बीजी जेटली जगतवासी जीवोनी रीत सारी जाणीए छे, तेतो सर्व अंतर गर्भित अशाता सहित छे. तेथी एकली उदासीनताज शातानी साहेली छे. माटे समरस भावज श्रेष्ट छे ॥ २८ ॥ जे उंचे ठेकाणे चढीने पछी नीचे पडवु थाय, ते उतंग ठेकाणुं न कहेवाय. पण ते ठेकाणु कुवा जेवु कहेवाय, तेम जे सुखना अंदर दुःख वसे छे ते सुख पण दुःखरूप कहेवाय छे॥ २९ केमके सुख संपदा विलसे छे पण पछी तेना नाशथी दुःख थाय छे. जेम तृणोवाली धरती अग्निथी बली जाय छे. पण तृणविनानी धरती कोई रीते बलती नथी, ए दृष्टाते जाणी लेवुं ॥ ३० ॥ एरीते गुरु उपदेश सुचनीकामात्र संपूर्ण थयुं, सदगुरु जे छे ते जिनधर्मने प्रगट रूप शब्दमांज कहे छे. एटले वचनमां वखाणे छे. ते जिन धर्मने सांभली विचक्षण पुरुष होय ते सर्दहे छे, अने मूर्ख होय ते तेनो मर्म जाणे नही ३१

हवे कोईकने उपदेशनी रुचिछे, अने कोईकने नथी तेनुं स्वरूप कहे छेः—

अथ उपदेश रुचि अरुचि कथन—

सवैया तेइसा.— जेसे काहू नगरके वासी द्वे पुरुष भूले, तामें एक नर सुष्ट ए

क दुष्ट उरको, दोउ फिरे पुरके समीप परे कुवटमें, काहू ओर पंथिककों पूछे पंथ पुरको; सोतो कहे तुह्मारो नगर हे तुमारे ढिग, मारग दिखावे समुझावे खोजपुरको, एते पर सुष्ट पहिचाने पें न माने दुष्ट, हिरदे प्रवान तेसे उपदेश गुरुको ॥३२॥ सवैया इकतीसा — जेसे काहू जगलमे पावसको समो पाई अपने सुभाई महा मेघ वरषतु हे, आमल कषाय कटु तीषन मधूर षार, तेसो रस वाढें जहां जेसो दरषतु है, तेसो ज्ञानवत नर ज्ञानकौ बखान करे, रसको उमाहो है न काहू परषतु है, वहे धुनि सुनि कोउ गहे कोउ रहें सोई, काहूकों विषाद होई कोउ हरषतु है॥ ३३ ॥ दोहरा — गुरु उपदेश कहा करे, दुराराधि ससार, वसे सदा जाके उदर, जीव पंच परकार ॥ ३४ ॥

अर्थः—जेम कोई नगरना वासी बे पुरुष नगरमांथी निकलीने दिशा भूली गया, ते बे पुरुषमा एक तो सुष्ट के० हैयाना सरल स्वभावनो हतो, अने एक हैयानो दुष्ट हतो, पछी ते बने पुरुष नगरनी समीपज फरवा लाग्या पछी कोई बीजा वाटमार्गुने नगरनो मारग पूछवा लाग्या, त्यारे ते कहेवा लागो जे तमारुं गाम तो तमारी समीप छे, एम कही ते बेनेने मारग देखाडे, अने रुडी रीते पुर के० नगरने खोज करी समजावे, पण बतावे तेमां जे सरल हैयानो छे, तेतो सात्युं माने, पण दुष्ट हैयानो छे ते माने नही, तेम गुरुनो उपदेश छे तेपण पुरुषना हैया प्रमाणे छे ॥ ३२ ॥ जेम कोई अरण्यमां वरसाद पोतानो समय पामीने स्वभावथी महा मेघ वरषे छे त्यारे आंवली प्रमुख खाटा रसवाला तथा बावल प्रमुख कसाएल रसवाला, अने लिंबडा प्रमुख कडवा रसवाला, जाल प्रमुख तीव्र रसवाला, जेठी मध प्रमुख मधुर रसवाला, अने लोण प्रमुख क्षार रस वाला झाडोमां तेउना गुण प्रमाणे रस वृद्धि थाय छे, तेम ज्ञानी आचार्य प्रमुख पोताना वचन वर्गणा वचन योगे खिरे के० प्रकाशे छे, ते ज्ञाननुं वखाण करतां पोताना अनुभव रसमां उमग थई रह्या छे, पण ते वखते कोई योग्य अयोग्य श्रोतानी परिक्षा करता नथी, पछी ते श्रोता पुरुषोमां ते ज्ञाननी ध्वनि सान्भलीने कोई तेनी वाणीने ग्रहे छे, कोई सुई रहेछे, निद्रा करे छे, कोई मिथ्यादृष्टिने विषादपण थाय छे, अने कोई सम्यक् दृष्टि छे ते हर्ष पण पामे छे ॥ ३३ ॥ माटे गुरुनो उपदेश शुं करे आ संसारी लोक दुराराध्य छे, समजाववा कठण छे, जे संसारना उदरमा पाच प्रकारनी श्रद्धावाला जीवो छे, ते सदा वसीज रह्या छे. ॥ ३४ ॥

हवे पांच प्रकारना जीवनां नाम कहे छेः— अथ पंच प्रकार यथाः—

दोहरा.—मूंघा प्रभु चूंघा चतुर, सूंघा रोचक सुध्ध, ऊंघा डुरबुध्धी विकल, घूंघा घोर अबुध्ध ॥ ३५ ॥

अर्थः—एक तो रुंधा तेतो प्रभु स्वामी छे, बीजा चुंघा के० चतुर छे, त्रीजा सुंघा के० रुचिवत छे, चोथो ऊंघाके० डुष्ट डुरबुध्धि छे, अने विकल छे पांचमा घूंघा के० घोर कुबुध्धि छे ॥ ३५ ॥

हवे मूंघानुं लक्षण कहे छे — अथ मूंघा यथा —

दोहरा.— जाकी परम दशाविषे, करम कलंक न होइ; मूंघा अगम अगाध पद, वचन अगोचर सोइ ॥ ३६ ॥

अर्थः— जेनी उत्कृष्ट दशा वर्णवेली छे, जेमां कोई कर्मरूप कलंक देखाय नही, एवो जे अगम तथा अगाध पद छे एटले सिध्ध पद छे जे वचननो विषय थई शके नही तेने मूंघा कहिये ॥ ३६ ॥

हवे चुंघानुं लक्षण कहेछे.— अथ चुंघा यथाः—

दोहराः—जे उदास व्है जगतसों, गहे परम रस पेम ; सो चूंघा गुरुके वचन, चूंघे बालक जेम. ॥ ३७ ॥

अर्थः— जे जीव जगतथी उदासी थई रहे छे, अने जे परम दशामां रही तेना प्रेम स्वादने ग्रहे छे एटले उत्कृष्ट दशा जावे छे, तेतो गुरुना वचनने बालकनी परे चुंपे छे. अने पुष्ट थाय छे, ते चुंघा कहेवायछे. ॥ ३७ ॥

हवे सुंघानुं लक्षण कहेछे— अथ सुंघा यथा.—

दोहरा.— जो सु वचन रुचिसों सुने, हिए डुष्टता नांहि; परमारथ समुझे नही, सो सुंघा जगमांहि. ॥ ३८ ॥

अर्थ.—जे रुचियें करी आगमना अंग जे सु वचन तेने सांभले छे. जेना हृदयमां डुष्टता नथी, पण सूक्ष्म तत्वने समजे नही तेने जगतमां सुंघा पुरुष कहीये.॥ ३८

हवे ऊंघानुं लक्षण कहेछे.— अथ ऊंघा यथाः—

दोहरा— जाकों विकथा हित लगे, आगम अंग अनिष्ट ; सो ऊंघा विषई विकल, डुष्ट रिष्ट पापिष्ट. ॥ ३९ ॥

अर्थ —जेने विकथानां वचन हितकारी लागे छे, अने आगम अंग अनिष्ट लागे छे. तेतो विकल विषयी जीव ऊंघा कहेवाय, दोषवत रोसवंत पापकर्मी थई रहेछे.

हवे घूंघानुं लक्षण कहेछे.— अथ घूंघा यथाः—

दोहरा.— जाके श्रवन वचन नही, नहि मन सुरति विराम, जडता सो जड वत नयो, घूंघा ताको नाम ॥ ४० ॥ चोपाई— मूंघा सिद्ध कहे सब कोऊ, सुंघा ऊंघा मूरख दोउ, घूंघा घोर विकल संसारी, चुंघा जीव मोष अधिकारी ॥ ४१ ॥ दोहरा — चूंघा साधक मोषको, करे दोष दुःख नास, लहे पोष संतोष सों, वरनों लछन तास ॥ ४२ ॥

अर्थ — जेने वचन नथी एटले एकेंद्रिय छे अने जेने श्रवण नथी एटले बेरिंद्रिय तेरिंद्रिय, चोरिंद्रिय छे. अने जेने मननी सुरता नथी एटले असंज्ञी छे, वली जे विराम के० विरती नथी अज्ञानरूप जडताथी जडरूप थई रह्या छे तेने घुंघा कहीए ॥ ४० ॥ डुंघा पुरुषने तो सहु कोई सिद्ध कहे छे, सूंघा अने ऊघा ए बने मूर्ख छे, अने घूंघा होय तेतो अघोर अंधारामा विकल संसारी जीव छे अने चुंघा जीव छे तेतो मोक्षना अधिकारी होय, अने मोक्षना वाछक होय ॥ ४१ ॥ चूंघो छे तेतो मोक्षनो साधक छे, दोष अने दुःखनो नाश करे छे, अने संतोषथी पुष्टता पामे छे, तेनुं लक्षण वरणुं छुं ॥ ४२ ॥

हवे मोक्ष साधननु उदाहरण कहेछे.— अथ साधक लक्षण —

दोहरा — कृपा प्रसम संवेग दम, अस्ति भाव वैराग, ए लछन जाके हिये, सप्त व्यसनको त्याग ॥ ४३ ॥

अर्थ.—कृपा जे दया, तथा जे कषायना उदयनुं दबाववुं ते, प्रसम अने संवेग ते मोक्षना अभिलाषनु पद के० स्थानक छे, तथा दम ते इंद्रियदमन, आस्ति एटले जिनोक्त वचन उपर श्रद्धा, एहवो वैरागीभाव छे एटला लक्षण जेना हृदयमां रहे छे अने सातं व्यसननु त्याग करे तेज साधक होय ॥ ४३ ॥

हवे साते व्यवसनना नाम कहेछे.— अथ सप्त व्यसन नाम.—

चोपाई — जूवा आमिष मदिरा दारी, आपेटक चोरी परनारी, एई सात व्यसन दुख दाई, दुरित मूल दुर्गतिके भाई ॥ ४४ ॥ दोहरा —दर्वित ए सातों व्यसन, दुरा चार दुख धाम, भावित अंतर कलपना, मृषा मोह परिनाम. ॥ ४५ ॥

अर्थ — जुगार १, मांस भक्षण २, मदिरापान ३, वेश्या गमन ४ आखेटक के० शिकार खेलवो ५, चोरी करवी ६, परस्त्री गमन ७, ए सात व्यसन कहेवाय छे, ते संसारमां दुःखदाई छे पापना मूल छे अने दुर्गतिना भाई छे. ॥ ४४ ॥ ए जे क्रियारूप साते व्यसन छे ते द्रव्यरूप छे. ए दुष्ट आचाररूप दुःख धाम

के० डुखनुं घरछे. अने जेना अंतरमां वृथा के० फूग मोह परिणामनी कल्पना के० विचारणा ध्यावना थाय छे. ते नावित व्यसन कहीए. ॥४५॥

हवे नावित सात व्यसननी व्यवस्था कहेछे —अथ नावित व्यसन व्यवस्था कथन —

सवैया इकतीसाः— अशुजमें हारि शुन जीति यहे दूत कर्म देहकी मगनताई यहे मांस नषिवो, मोहकी गहलसों अजाने यहे सुरापान, कुमतिकी रीति गनिका को रस चाखिवो; निरदे व्हे प्राण घात करिवो यहे सिकार, परनारी संग परबुद्धिको परषिवो; प्यारसों पराई सोज गहीवेकी चाह चोरी, एई सातों व्यसन विमारि ब्रह्म लखिवो. ॥ ४६ ॥

अर्थ — अशुन कर्मना उदयथी हार मानिये अने शुन कर्मना उदयथी जीत मानिये तेतो जुगार खेलवो छे, देह उपर मगनता रहे तेतो मांस नक्षण जाणवो, मोह कर्मथी मूर्छित थई रह्याथी अजाण थई रह्यो होय तेज सुरापान व्यसन छे, कुबुद्धिनी रीते चालवुं तेतो वेश्याना रसनु चाखवुं छे, निर्दय परिणाम राखीने प्राणघात करवो, तेज शिकार खेलवो छे. पररूप जे पुजलादिक तेनी बुद्धिने परखवी तेतो परनारी सेवा व्यसन छे, पारकी सोंज सामग्री उपर प्रीत राखीने प्यार मेळववानो चाह राखे तेज चोरी छे, ए नावित सात व्यसनतुं विदारण करवाथी ब्रह्म लख्यो जाय छे. ॥ ४६ ॥

हवे मोक्षना साधकनी व्यवस्था कहेछे — अथ साधक व्यवस्था.—

दोहराः— विसन नाव जामे नही, पौरुष अगम अपार; किये प्रगट घट सिंधु मथि, चौदह रतन उदार. ॥ ४७ ॥

अर्थ.— जेना चित्तमां व्यसननाव पामिए नही, अने अगम अपार पुरुषातन पामिए, तेणे घटरूप समुड् मंथन करीने उदार के० अमुल्य चौदे रत्न प्रगट कीधां४७

हवे नावित चौद रत्ननुं वर्णन करेछे.—अथ नावित चौदे रतनको बरननः—

सवैया इकतीसा — लछमी, सुबुद्धि, अनूनूति, कउस्तुनमनि, वैराग कलपवृक्ष, संत सुवचन है, ऐरावत उद्यिम प्रतीतिरंना, उदैविष कामधेनु निर्झरा सुधा प्रमोद धन है; ध्यान चाप प्रेमरीति मदिरा विवेक वैद्य शुद्धनाव चंड्मा तुरगरूप मन है; चौदह रतन ए प्रगट होइ जहां तहां, ज्ञानके उदोत घट सिंधुको मथन है ॥ ४८ ॥

दोहरा.— किए अवस्थामें प्रगट, चौदह रतन रसाल; कछु त्यागे कछु संग्रहे, विधि निषेधकी चाल. ॥ ४९ ॥

अर्थः— सुबुद्धि उपनी तेतो लक्षी उपनी १, आत्मानो अनुनव उपनुं तेतो

कौस्तुनमणि उपनुं २, वैराग उपज्यो तेतो कल्पवृक्ष उग्युं ३, नाषा सुमति उप जी तेतो संख उपज्यो ४, उद्यम उपज्यो तेतो ऐरावत हाथी उपज्यो ५, प्रतीत उपजी तेतो रंना उपजी ६, कर्मनो उदय तेतो विषय उपज्युं ७, कर्म निर्जरा थइ तेतो कामधेनुं उपजी ८, आनंद उपज्यो तेतो अमृतघन उपज्युं. ९, ध्यान उपज्युं तेतो चाप के० सारंग धनुष उपज्युं १०, प्रेमरीत के० प्रेमनी लय उपनी तेतो मदीरा उपनी ११, विवेक उपनो तेतो धनवतरि वैद्य उपनुं १२, शुद्धनाव उप नो तेतो चंद्रमा उपनुं १३, मन शुद्ध थयुं तेतो सात मुखो अश्व उपनु. १४, एच उद रत्नतो त्यां प्रगट थाय छे ज्यां ज्ञाननो उदय थवाथी पोताना ज्ञानरूप घट समुद्रनुं मंथन थाय छे तिहां उपजे छे एम जाणवुं ॥ ४८ ॥ साधनी अवस्थामां ए चौदे रत्न रसाल हतां ते प्रगट कीधा, ए चौद रत्नमां विधि निषेधनी चालमां एटले हेय, उपादेयनी चालमां कंइक त्यागे छे अने कइक संग्रह करेछे ॥ ४९ ॥ हवे नावित चउद रत्न तेमां आठ रत्न त्यागवा योग्यछे अने छ रत्न ग्रहण कर वा योग्य छे ते कहेछे — अथ अष्ट रतनषट उपादेय कथन —

दोहरा.— रमा, संष विष धनु सुरा, वेद धेनुं हय हेय, नति रंना गज कल्पत रु, सुधा सोम आदेय ॥ ५० ॥ इह विधिजो परनाव विष, वमे रमे निजरूप, सो साधक शिवपंथको, चिदविवेक चिद्रूप, ॥ ५१ ॥

अर्थ — रमाके० लक्ष्मि तेतो सुबुद्धि १ सुवचनशंष २, उदय विषय, ३ ध्यान धनुष, ४ प्रेम रीत मदिरा, ५ विवेक वैद्य ६ निर्जरा काम धेनुं, ७ मन शुद्धते घोडो, ८ ए आठ अथिर छे तेमाटे छांमवा योग्य छे अने अनुनव मणि, १ प्रति ति रंना, २ उद्यमहाथी, ३ वैराग्य कल्पवृक्ष, ४ आनंद सुधा, ५ शुद्ध नाव च द्रमा, ६ ए छ रत्न गृहण करवा योग्य छे ॥ ५० ॥ आ रीतिथी पररूप जे क र्माविक नाव छे तेज विष थयुं. तेनो जे वमन करे छे अने पोताना स्वरूपमां रमे छे तेज पुरुष मोक्ष मार्गनो साधक जाणीये जे ज्ञान नावनो जाणनार अने ज्ञान स्वरूपी तेज साधक कहीए ॥ ५१ ॥

हवे मोक्षपदना साधकनी व्यवस्था कहे छे — अथ साधक व्यवस्था कथन —

कवित्त छंद — ज्ञानदृष्टि जिन्हके घट अंतर निरखेदरव सुगुन परजाइ, जिन्हके स हजरूप दिन दिन प्रति, स्यादवाद साधन अधिकाइ, जे केवल प्रतीत मारग मुखचिते चरन राषे ठहराइ, ते प्रविण करिछिन मोह मल अविचल होइ परमपद पाइ ॥५२॥

अर्थ — जेने घट अतरमा ज्ञाननी दृष्टि जागी तेथी द्रव्यने देखे जाणे ते द

व्यना गुण जाणे. गुणना पर्याय जाणे अने जेने सहज रूपेज एटले जवतव्यताना प रिपाकथी दिन दिन प्रत्ये स्याद्वादनुं साधन अधिक थई रह्यो छे. अने जे केवलीना कहेला मारगने सन्मुख थई रहे. एज चित राखे अने एज मारगविषे चरण ठरावी राखे, ते प्रवीण पुरुष मोहरूप मलने क्षीण करी परम पद पामी अविचल थायछे॥५१॥

हवे सम्यक् दृष्टिनी व्यवस्था अने मिथ्यात्व दृष्टिनी व्यवस्था कहेछे'—

अथ सम्यक् दृष्टि मिथ्या दृष्टि व्यवस्था —

सवैया इकतीसा — चाकसो फिरत जाको संसार निकट आयो, पायो जिनि सम्यक मिथ्यात नाश करिके; निरद्वंद मनसा सुजूमि साधि लीनी जिनि, कीनी मोष कारन अवस्था ध्यान धरिके; सोई शुद्ध अनुजो अन्यासी अविनाशी जयो, गयो ताको करम जरम रोग गरिके; मिथ्यामति आपनो सरूप न पिछाने तामें, मोले जग जालमें अनंत काल जरिके. ॥ ५२ ॥

अर्थ.— जेम रात्रिनेविषे चकवो फिरतो फरतो रहे छे, तेम संसारमा फिरतां फिरतां जेनो अंत निकट आव्यो, सम्यक पाम्यो, मिथ्यात्वनो नाश करीने राग द्वेषादिक रहित एवी मनसारूप जली जूमिका जेणे साधि लीधी, अने ध्यान धरिने पोतानी अवस्था मोक्षपदना कारणरूपी कीधी, तेज सम्यक दृष्टि शुद्ध अनुजवनो अन्यासी थयो, एम कर्म रोगने गमावीने अविनासी थयो एटले जन्म मर्ण टल्यो सिद्ध थयो, एवी सम्यक दृष्टि पाम्याविना मिथ्याती पोतानुं स्वरूप ओळखे नही. तेथी अनंतकाळ जरिके के० लगी जगतनी जालमां मोले ॥ ५२ ॥

हवे जे आत्मानो अनुजव पाम्यो तेनो विलास कहेछे — अथ अनुजव विलास —

सवैया इकतीसा — जे जीव दरवरूप तथा परजायरूप, दोउ नै प्रवान वस्तु सुद्धता गहत है, जे अशुद्धजावनिके त्यागी जए सरवथा विषेसों विमुख व्है विरागता चहत है; जो ग्राहजजाव त्यागजाव इहूं जावनिको, अनुजो अन्यासविषे एकता कहत है; तेई ज्ञान क्रियाके आराधक सहज मोष, मारगके साधक अवाधक महत है ॥ ५४ ॥

अर्थ — जे कोई जीव द्रव्यार्थिक अने पर्यायार्थिक ए बे नय प्रमाण करीने वस्तुनी शुद्धताने ग्रहेछे, जे जीव राग द्वेष मोहथी आत्मामां जे अशुद्ध जाव छे तेना सर्वथा त्यागी थया छे, तेथी पांच इंद्रियोना विषयथी विमुख थईने वैरागतामां वर्त्तवा लागेछे, अने जे जावित चौदे रत्नमां छ जाव रत्न ग्रहण करवा योग्य छे. अने आठ जाव रत्न त्यागवा योग्य छे, एटले आठ हेयने छ उपादेय छे, ते अ

नुनवना अन्यासविषे बंने नावनी एकता करेछे, एटले जे इव्यमां दृष्टि रहे अने पर्यायमा दृष्टी न रहे, तेने एकता कहेछे. ते जीव ज्ञान क्रिया जे मोक्ष मार्गनुं कारण कह्यु छे तेना आराधक थया. अने सहजरूपमां मोक्ष मार्गना साधक थया, फरी तेने कर्म बाधा न होय, तेथी अबाधक थया महिमावत थया पुजनीक थया ५४

हवे जे ज्ञान अने क्रियाने निन्ननावे माने छे तेने एनी एकता कही देखाडे छे.—

अथ ज्ञान क्रिया एकता कथन —

दोहरा —विनसि अनादि अशुद्धता, होइ शुद्धता पोष, ता परनतिकों बुध कहे, ज्ञान क्रियासो मोष. ॥ ५५ ॥

अर्थ — अनादि कालनी जे अशुद्धता छे तेनु जिहा विनाश थायछे त्यां शुद्धतानुं पोषण थायछे. एवी जे आत्मानी परिणति थाय तेज ज्ञाननी क्रिया कहेवायछे तेने बुध के० पंमित पुरुष एवु कहेछे के ए ज्ञान क्रियाथी मोक्ष थाय, आही ज्ञान तथा क्रियानी जे छुविधा लखेछे ते शब्दनयथी जाणवी. ॥ ५५ ॥

हवे ज्ञाननी व्यवहार नयथी थापना देखाडे छे — अथ ज्ञान इव्य स्थापना

दोहरा — जगी शुद्ध समकित कला, वगी मोषमग जोइ, वहे करम चूरन करैं, क्रम क्रम पूरन होइ ॥ ५६ ॥ जाके घट ऐसी दशा, साधक ताको नाम, जेसे दीपक जो धरे, सो उजियारो धाम ॥ ५७ ॥

अर्थ — जेणे शुद्ध समकेतनी कला जाणी अने जे कला मोक्षना सुखमां जावा लागी ते पुरुष कर्मने चूरण करीने क्रमे क्रमे पूरण थाय ॥ ५६ ॥ जेना घटमां एवी दशा थई रही छे ते पुरुषनुं साधक नाम केहेवाय जेम दीवानुं अजवाळुं थएथी घरमा पण अजवाळुं थाय, तेम ज्ञानक्रिया तो मोक्ष साधक छे, पण ज्ञानक्रियाने धरता पुरुष पण साधक थाय ॥ ५७ ॥

हवे ज्ञाननुं फल कहेछे — अथ ज्ञानकला वर्नन —

सवैया इकतीसा — जाके घट अंतर मिथ्यात अधकार गयो नयो परगास शुद्ध समकित नानको, जाकी मोह निद्रा घटी ममता पलक फटी, जान्यो जिन मरम अवासी नगवानको, जाको ज्ञान तेज वग्यो उदिम उदार जग्यो, लग्यो सुख पोष समरस सुधा पानको, ताही सु विचक्षन को संसार निकट आयो, पायो तिनि मारग सुगम निरवानको ॥ ५८ ॥ जाके हिरदेमें स्यादवाद साधना करत, शुद्ध आतमाको अनुनौ प्रगट नयो है, जाको संकलप विकलपके विकार मिटि, सदा काल एकी नाव रस परिनयो है, जिनि बंध विधि परिहार मोष अंगी

कार, ऐसो सुविचार पक्ष सोउ छांमि दयो है, जाकी ज्ञानमहिमा उदोत दिनदि न प्रति, सोइ नवसागर उलंघि पार गयो है ॥ ५९ ॥

अर्थः— जेना घटमां अनादिकालनो मिथ्यात्व अंधकार हतो ते गयो, अने शुद्ध सम्यक् रूप सूर्यनो प्रकाश थयो राग द्वेष मोह निद्रा जेनी घटी गई, ममता रूप पलक लागी हती ते फिटि गई. तेथी जिन अवाची नगवाननो एटले सिद्ध स्वरूपनो मर्म पाम्यो, जेनुं ज्ञान तेज वध्युं एटले प्रकाश थयुं प्रधान उद्यम जाग्यो अने उपशम रस रूप अमृत पानना सुखनो पोष थयो, ते सु विचक्षण पुरुषने संसार निकट आव्यो. तेणे तो सुगम वातमां मुक्तिनो मारग पाम्यो ॥ ५८ ॥

जेना हृदयमां स्याद्वाद स्वरूपनी साधनाथी शुद्ध आत्मानो अनुनव प्रगट थयो अने जेने संकल्प विकल्पनो विकार बहु जातनो हतो ते मटीने सदा कालमां एक चेतना रस जे एकी नावपणुं छे ते पणे परिणम्यो, तेणे करीने बंध विधिनो परिहार जे संवरनुं धरवो ते थयुछे अने निस्पृह दशाथी मोक्षनो जे अंगीकार तेना विचारनो पक्ष धार्यो छे ते पक्ष छांमी दीधोछे, जेना ज्ञाननो महिमा दिन दिन प्रते उद्योत थयोछे. तेज जीव नव समुद्र उतरीने पार पहोच्यो एम जाणवु ॥५९॥

हवे अनुनवीनी व्यवस्था तेज उपादेय छे ते कहे छे.—अथ अनुनो व्यवस्था कथन

सवैया इकतीसाः—अस्तिरूप नासति अनेक एक थिररूप, अथिर इत्यादि नानारूप जीव कहिये; दीसे एक नैकी प्रतिक्षनी अपर दूजी नैकों नै दिषाइ वाद विवादमें रहिये, थिरता न होइ विकलपकी तरगनिमें, चचलता बढे अनुनौ दशा न लहिये, तातें जीव अचल अबाधित अपंम एक, ऐसो पद साधिके समाधि सुख गहिये ॥ ६० ॥

अर्थ.— कोई नयथी अस्तिरूप छे, कोई नयथी नास्तिरूप छे. कोई नयथी अनेक कोइ नयथी एक. कोई नयथी स्थिररूप कोई नयथी अस्थिररूप, इत्यादि नाना प्रकार स्वरूपथी जीव कहीए. अहीं एक नय जे स्वरूप साधे छे, त्यां ते नयनो प्रतिपक्षी के० उलटी रीते बीजो नय देखाय छे, तेतो पेला नयथी विपरीतपणुं साधे छे, तेथी जो एकांतनयपणुंज ग्रहीए अने ते उपर बीजो नय नदेखामीये तो वादविवाद थई जाय तेथी नय नेद करणीथी कुविकल्पना तरग उठेते तरगथी चेतन स्थिर न थाय, अने चचलतापणु वधे तेथी अनुनव दशाग्रही न जाय. माटे नय पक्ष तजीने अनुनव अन्यासने कारणे जीव द्रव्य अचल छे. अबाधित छे, अखम छे, एक छे एवा स्वरूपनो स्थानक साधिने समाधि सुख ग्रहण करिये ॥ ६० ॥

हवे द्रव्य क्षेत्र काल भावे करीने आत्मानुं अखंमितपणुं कहे छे –
अथ द्रव्य क्षेत्र काल भाव कथन –

सवैया इकतीसा –जेसे एक पाको आंबफल ताके चारि अंस, रसजाली गुठली छीलक जब मानिये, यो तो न बनें पे एसे बने जेसे वहेफल रूपरस गंध फास अखंम प्रवानिये, तेसे एक जीवको दरव पेत्र कालभाव, अंस भेद करि भिन्न भिन्न न वषानि ये, दर्व रूप पेतरूप कालरूप भावरूप, चारों रूप अलख अखंम सत्ता मानिये॥६१

अर्थ – शिष्य कहेछे हे स्वामी द्रव्य क्षेत्र काल भावरूप वस्तुना चार अशत मे कह्यो छो, त्या एवु दृष्टात आपवु के, एक आबफल छे तेना रस, जाली एट ले रेसो गोटली अने छाल ए चार अंस छे, तेमज वस्तुना द्रव्य क्षेत्र काल भाव ए अंश होय के न होय, हवे गुरु कहे छे हे शिष्य आही तु अशके० खंम समज्यो ते थी ए दृष्टात दीधुं तेतो बने नही पण आही अखमपणामा चार अंस लाववा तेनुं दृष्टात ए छे के तेज आब फल छे तेमां रूप, रस, गंध ने स्पर्श ए चारे अखंमप णे प्रमाण करिए ए चार रस छे, तेम एक जीवनुं द्रव्य क्षेत्र काल भावरूप अंस भेद करीने रस जाली गोठलीने छाल ए खम खम वखाणीये नही आही जे सा ध्यरूप आत्म सत्ता छे ते द्रव्यथी अखमितपणे, आत्मा द्रव्यरूप छे अने क्षेत्रथी अखंमपणे असख्यात प्रदेशाअवगाहपणे छे, कालथी अखंम त्रिकाल वर्तिछे भा वथी अखंम ज्ञायक भावपणे छे, एम जीवना चार अंश अखंमपणे मानीये॥६१॥

हवे साध्यपदमा ज्ञान ज्ञेयनुं विशेष पणु अने अविशेष पणुं कहेछे.–
अथ ज्ञान ज्ञेय विशेष कथन –

सवैया इकतीसा –कोउ ज्ञान वान कहे ज्ञान तो हमारो रूप, ज्ञेय षटदर्व सो हमारो रूप नाही हे, एक नै प्रवान एसे दूजी अब कहो जेसे, सरस्वती अक्षर अरथ एक ठाही हे, तेसे ज्ञाता मेरो नाम ज्ञान चेतना विराम, ज्ञेयरूप सकति अनंत मुज पाही है, ताकारण वचनके भेद भेद कहो कोउ, ज्ञाता ज्ञान ज्ञेयको विलास सत्ता माही हे ॥ ६२ ॥ चोपाई –स्वपर प्रकाशक सकति हमारी, तार्थे व चन भेद भ्रम भारी, ज्ञेय दसा द्विविधा परगासी, निज रूपा पररूपा भासी, ॥ ॥ ६३ ॥ दोहरा– निजरूपा आतम सकति, पररूपा परवस्त, जिनि लखि लीनो पेच यह, तिनि लिख लियो समस्त ॥ ६४ ॥

अर्थ - कोई ज्ञानवत प्राणी पोताना अनुभव प्रमाणथी एम कहेछे के जे ज्ञा न छे तेतो अमारुं रूप छे अने जे षट द्रव्य ज्ञेयछे तेतो अमारुं रूप नथी तेथी

ज्ञान अने ज्ञेय विशेष पणामां छे. गुरु कहे छे, एतो एकज नय प्रमाण छे. हवे बीजा नयथी जेम अविशेष पणुं थाय छे. तेम कहुं छुं. जेम सरस्वती के० विद्यारूप अर्थ छे तेम अक्षर के० विद्यारूप अर्थ एकठो रहे, तेम ज्ञाता ते तो माहारुं नाम थयुं. अने जे ज्ञान छे तेतो चेतनानो विराम के० प्रकार छे. अने जे ज्ञान ज्ञेय पणे परिणम्यो छे. ते तो ज्ञेयरूप शक्ति छे एवी अनंत शक्ति माहारीज पासे छे. ते कारणथी वचन भेद करीने ज्ञान अने ज्ञेयनो भेद कोई नले कह्यो पण बीजो नय देखवाथी ज्ञाननो ने ज्ञेयनो विलास आत्म सत्तामांज छे. तेथी अविशेष पणुं छे. ॥ ६२॥ जेथी हमारी शक्ति एवी छे जे पोतानो प्रकाश करे अने परनो पण प्रकाश करे तेथी स्व पर प्रकासक छे, तेथी ज्ञान अने ज्ञेय ए वचन भेदे जे भेद छे, तेज भारी भ्रम उपजावेछे पण वस्तु एक छे. ज्ञेय के० जे जाणवा योग्य तेतो दशा बे प्रकारे करीने कही एक तो निजरूपा बीजी पर रूपा कही छे॥६३ आंही जे निजरूप ज्ञेय दशा कहीए ते तो स्वरूप प्रकाशक आत्म शक्ति छे, अने जे बीजी पर रूप ज्ञेय दशा ते परवस्तु छे जेणे एवातनो पेच जाण्युं तेणे तो समस्त जाण्युं६४

हवे एज पेच स्याद्वादमां जोडए ते स्याद्वादरूप वस्तुनुं वर्णन करेछे.—

अथ स्याद्वाद रूप वस्तु वर्नन

सवैया इकतीसा.— करम अवस्थामें अशुद्धसो विलोकियत, करम कलंकसों रहित शुद्ध अंग है, उभे नै प्रवान समकाल शुद्धाशुद्धरूप, एसो परजाइ धारी जीव नाना रंग है; एकही समेमें त्रिधारूप पे तथापि याकी, अखंडित चेतना सकति सरवग है, यहे स्याद्वाद याको भेद स्याद्वादी जानै, मूरख न माने जाको हियो दग भंग है. ॥ ६५ ॥ निहचे दरव द्रिष्टि दीजें तब एकरूप, गुन परनति भेद भावसों बहुत है, असख प्रदेश संयुगत सत्ता परवान, ज्ञानकी प्रभासो लोकालोकमान जुत है, परजे तरगनिके अंग छिनभगुर है, चेतना सकति सो अखंडित अचुत है, सोहै जीव जगति विनायक जगत सार, जाकी मौज महिमा अपार अदभुत है, ॥ ६६ ॥ विभाव सकति परिनतिसो विकल दीसें, सुद्ध चेतना विचारते सहज संत है, करम संयोग सो कहावे गतिको निवासी निहचें सरूप सदा मुकत महंत है ज्ञायक सुभाउ धरे लोकालोक परगासी सत्ता परवान सत्ता परगास वत है; सोहै जीव जानत जहां न कौतुको महान जाके कीरति कहान अनादि अनत है ॥ ६७ ॥

अर्थः— कार्मण शरीर सहित आत्मानी कर्म अवस्थामां दृष्टि दईए तो आत्माने अशुद्ध देखीए छीए अने कर्म कलंक रहित केवल आत्मामाज दृष्टि द

इए तो जो शुद्ध अंग छे. अने ए बेउनय समकालेज प्रमाण करीए तो शुद्धाशु द्धरूप कह्यु जाय. एमा पर्यायनी धाराये करीने जीवना विचित्र प्रकार छे. शुद्ध अशु द्ध अने शुद्धाशुद्ध ए त्रणरूप आत्माना एकज समे पामीए, यद्यपि एम छे तथा पि त्रणेरुपमां आत्मानी अखंडित चेतना शकति सर्व अगमा नरि रहि छे, तेज स्याद्वाद कहीए, तेनो नेद जे स्याद्वादी होय, तेज जाणे पण जेनुं हृदयुं हगनग के० सम्यक दृष्टि रहित छे. ते मूर्ख एनो नेद न जाणे ॥ ६५ ॥ निश्चयनयथी द्रव्य उपर दृष्टी आपिये तो आत्म द्रव्य एकरूप छे अने ए आत्म द्रव्यना गुण परिणतिरूप नेद नावथी जोइये तो आत्मा बहुरूपे छे अने आत्मानी सत्ता अ संख्यात आकाश प्रदेश सयुक्त छे, अने ते सत्ताने प्रमाण आत्मा कह्यो जायछे अने ज्ञाननी प्रना विचारीएतो लोकालोक प्रमाण क्षेत्रथी संयुक्त आत्मा कह्यो जायछे, तथा क्षणक्षणमा पर्याय रूप तरगना अग विचारीएतो जीव क्षणनगुरज कहेवाय छे, अने तेने चेतना शक्तिथी विचारीए तो सदा सर्वदा अखंमज कहेवा य, अने अच्युत कहेवाय छे तेज जीव जगतनो विनायक के० धणी अने जगत मां सारनूत पदार्थ छे. जेनी मोज अने महिमा अपार छे अने अनूत छे ॥ ६६ ॥ हवे बीजुं पण स्यादवाद कहेछे —रागद्वेपादिक विनाव शक्तिथी परिणम्यो देखीए तो आत्मा विकल देखाय छे, अने तेनी शुद्ध चेतनाज विचारीएतो सहज सतरूप दीसे छे, कर्म संजोग सहित आत्मा विचारीये तो चारे गतिनो वासी अने चोरा सी लाख योनीनो वासी कहेवाय छे, अने निश्चयनयथी एवुं स्वरूप जो विचारी ए तो सदा सर्वदा मुक्तिरूप महत छे, अने जो एने ज्ञायक स्वनाव धारी विचारीए तो लोकालोक प्रकाशक अमेय कहेवाय, अने जोए आत्मानी प्रकाशवत सत्ता वि चारिये तो पोतानी सत्ता प्रमाण आत्मा होय, ते जीव वस्तु साध्य छे. जे जहांन के० जगतने जाणेछे, जे महोटो कौतुकी पुरुष छे, जेनी कीर्ति अने कथा अनादि अनंत काल लगी एवीज चालती आवेछे ॥ ६७ ॥

हवे साध्यरुप केवल दशानु वर्णन करे छे — अथ केवल दशा वर्नन —

सवैया इकतीसा — पंच परकार ज्ञानावरनको नास करि, प्रगटी प्रसिद्ध जग माहि जगमगी है, ज्ञायक प्रनामे नाना ज्ञेयकी अवस्था धरि, अनेक नई पें एकता मे रसपगी है, याही नाति रहेगी अनत काल परजंत, अनत शकति फोरि अनंत सों लगी है, नरदेह देवलमे केवलमे सरूप सुद्ध, ऐसी ज्ञान ज्योतिकी सि षा समाधि जगी है ॥ ६८ ॥

अर्थः— मति ज्ञानावरण प्रमुख पांच प्रकारना ज्ञानावरणीय कर्मनो नाश करीने प्रसिद्ध के० प्रत्यक्षपणे प्रगटी एवी जे ज्ञान ज्योतिनी सिषा जगतमां जगमगी रही छे ते ज्ञान ज्योतिनी शिषा पोताना ज्ञायकपणारूप प्रजामां नाना प्रकारना ज्ञेयनी अवस्था धरीनें अनेक रूप थई छे, तेपण ज्ञायक पणानी जे एकता छे तेना रसथी मली रही छे तेज रीते अनंत काल पर्यंत रहेशे. अने अनंत वीर्य फोरवीने अनंत पदथी लागी रहे शे जेवारे मनुष्यना देहरूप देवलमां शुद्ध केवल ज्ञान स्वरूपे एवी ज्ञान ज्योतिनी सिखा जेवी समाधि छे, ते जागृत थई एटले सर्व विषमता नाव मटि गयो ॥ ६७ ॥

हवे अमृतचद आचार्य छे ते चंद्रमां छे अने तेनी कलारूपि त्रण धारा छे, तेनुं जुदा जुदा अर्थेथी वर्णन करे छे —अथ अमृत चद्र कलाके तीन अर्थ कथन —

सवैया इकतीसा — अक्षर अरथमें मगन रहे सदा काल, महा सुख देवा जैसी सेवा काम गविकी; अमल अबाधित अलष गुन गावना है, पावना परम शुद्ध नावना हे नविकी, मिथ्यात तिमर अपहार वर्द्धमान धारा, जैसी उने जाम लों किरन दीपे रविकी; ऐसी है अमृत चदकला त्रिधारूप धरे, अनुनो दशा गरंथ टीका बुद्धि कविकी ॥ ६९ ॥ दोहराः— नाम साधि साधक कह्यो, द्वार द्वादशम ठीक, समय सार नाटक सकल, पूरन नयो सटीक ॥ ७० ॥

अर्थः— अमृतचदनी अनुनव दशारूप कला छे तेतो अक्षर अर्थमां के० मोक्ष पदार्थमां सदाकाल मगन रहे छे, अने जेवी कामधेनुंनी सेवा सुखदायक थाय तेवी सुखदायक छे, अने अमृत चदनीग्रंथ टीकारूप कला छे तेज पाछला वर्णने करी युक्तछे, अने अमृतचद कविनी बुद्धि छे, तेतो अक्षर अर्थ के० शब्दार्थ तेमां मगन रहे छे, आगल बीजु वर्णन पूर्वली रीते जेम अमृत चदनी अनुनव दशानी कला अने ग्रंथनी टीकानी कला अने कवीकला ए त्रणें कला अमल छे, अबाधित छे, अलख पुरुषना गुणनो गायन करतीज रहे छे तेथी पावन छे, नव्यत्व पणानी परम शुद्ध नावना छे,अने ए त्रणेकला, मिथ्यात्वरूप अंधकारनी अपहरण करनार छे, अने चडते परिणामे छे, जेम चढता वे पोहोर लगी सूर्यना किरण चढता चढता दीपे छे, तेम ए कलापण वधती वधती दीपे छे, एवी अमृतचंद आचार्यनी कला छे ते त्रण प्रकारनुं रूप धारण करे छे, एक तो अनुनव दशा बीजी ग्रंथनी टीका करी ते अने त्रीजी काव्य बंध करतां कविकला कीधी॥६९

साध्य साधीक नामे बारमो द्वार टीक कह्यो, अमृतचद आचार्यनुं करेलुं कलस रूप समयसार नाटक ग्रंथ टीका समेत संपूर्ण थयु ॥ ७० ॥

इतिश्री नाटक समयसारनो साध्य साधकनामा बारमु द्वार बालाबोधरूप संपूर्ण थयो. ग्रंथाग्रंथ ८००० मान छे

हवे ग्रंथनी अते अमृतचद्र आचार्य कवि आलोचनाकरेछे.—अथ कविआलोचन.—

दोहरा — अब कविजन पूरव दशा, कहे आपसो आप, सहज हरप मनमें धरे, करे न पश्चाताप ॥७१॥ सवैया इकतिसा — जो में आप छाम्हि दीनो पररूप गही लीनो, कीनो न वसेरो तहा जहां मेरो थल है, जोगनिको जोगी रहि करमको कर्ता जयो, हिरदे हमारे राग दोप मोह मल है, ऐसी विपरीति चाल जई जो अतीत काल, सो तो मेरी क्रियाकी ममताताको फल है, ज्ञान दृष्टि जासी जयो क्रिया सों उदासी वह, मिथ्या मोह निद्रामें सुपनको सो छल है ॥७२॥ दोहरा.—अमृत चंद्रमुनिराज कृत, पूरन जयो गरथ, समयसार नाटक प्रगट, पंचमगतिकोपंथ ७३

अर्थ — हवे कलसनो करनार कविछे ते पोतानेज पोतानी पूर्वदशा कहेछे पोताना मर्म जाणवाथी सहज हर्प उपज्यो छे ते आलोचनामा धारे छे, पण प स्तावो करतो नथी ॥७१॥ अतीत काले जे महारुं आत्मानुं स्वभाव हतो ते मे छाम्हि दीधो, अने पर जे कर्मादिक पररूप हतो ते मे लई लीधो, अने ज्या समा धिविषे माहारो निवास हतो, त्या मे वास न कीधो पाच इंद्रियोना विपय जोग नो जोगी थईने कर्मनो कर्त्ता थयो, अमारा हैयामा राग द्वेपरूप महा मोह मल हतो एवी उलटी चाले चाल्यो तेतो अतीत कालमा वात वीती एवुं जे कार्य थयु तेतो मारी क्रियामा ममता राखी तेनु फल थयु हवे तो ज्ञान दृष्टि जासी तेथी क्रियाथी उदासी थयो, अने जे अतीत कालमा अवस्था थई तेतो मोह मिथ्यात निद्रामा स्वपना जेवो खेल थयो ॥७२॥अमृत चद आचार्यनो करेलो ग्रंथ सपूर्ण थयो, आ समयसार नाटक जे ग्रथ छे ते प्रगट पणे पचम गतिके० मुक्तिनो पथ छे ॥७३॥ इति श्री समयसार नाटक ग्रंथ अमृतचद आचार्यकृत संपूर्णम् ॥

हवे बणारसीदाश कहेछे — दोहरा — जाकी जगति प्रजावसो, कीनो ग्रंथ निवाहि, जिन प्रतिमा जिन सारपी, नमे बनारसी ताहि ॥ ७४ ॥

अर्थ — जेनी जक्तिना प्रजावे करीने गहनाथी ग्रंथहतो ते निर्वाहकीधो. एवी आ कालमा जिन प्रतिमा छे ते श्रीजिनेश्वर सरषी छे. तेने बणारसीदास नमेछे

हवे जेवा श्री जिनेश्वर देव महात्म्यवत छे, तेवी जिन प्रतिमा पण महात्म वत छे ते कहेछेः— अथ जिन प्रतिमा महात्म्य कथन·—

सवैया इकतीसा – जाके मुख दरससो नगतके नैननिकों थिरताकी वानी चढी चचलता विनसी, मुद्रा देखे केवलीकी मुद्रा यादि आवे जहां, जाके आगें इंद्रकी विभूति दिसे तिनसी; जाको जस जपत प्रकास जगे हिरदेमे, सोई सुद्ध मती होइ हुती जो मलिनसी, कहत बनारसी सु महिमा प्रगट जाकी, सोहे जिनकी सबी हे विद्यमान जिनसी ॥ ७५ ॥

अर्थ.— श्री जिन प्रतिमाना मुख दर्शन थवाथी जे तेना नक्तजन छे तेना नयनने कंइ आगल सम्यक् दशा के० संवर दिशा पामेली होय तेनी स्थिरतानी वाणी वधे, अने जे नावपदार्थमा चचलता होय तेनो नाश थाय. अने पद्मासन स्थित मुद्रा आकार ज्यां देखे, त्यां केवलीनी मुद्रा याद आवे छे. ते केवलीनी मुद्रा एम संनारवामां आवे छे के, जेनी आगल इंद्रनी संपदा छे ते त्रण समान देखायछे, एटले चोसठ इंद्र महिमा करेछे, अने ते दशा सान्नलवामा आवे तेवारे त्या जे केवलीना जश कहेवायछे, तेना गुणनो प्रकाश हैयामां जागेछे, अने त्यां जे पहेली मति सम्यक् दशामां मेली जेवी हती ते शुद्ध थई, तेथी वणारसीदास कहेछे के जिन प्रतिमानी एवी प्रगट महिमा छे के ते विद्यमानजिनेश्वर समानज मानवी ॥७५॥

हवे जिन प्रतिमानो नक्तिवत छे तेनुं वर्णन करेछे —अथ प्रतिमा माने ताको वर्णन

सवैया इकतीसा.—जाके उर अंतर सुदृष्टिकी लहरि लसी, विनसी मिथ्यात मोह निद्राकी समारषी, सैली जिन सासनकी फैली जाके घट नयो, गरवको त्यागी षट दरवको पारषी; आगमके अक्षर परे हे जाके श्रवनमे, हिरदे नंमारमें समानी वानी आरषी, कहत बनारसी अलप नवस्थिति जाकी, सोइ जिन प्रतिमा प्रवाने जिन सारषी ॥ ७६ ॥

अर्थ·— जेना हीयामा सम्यक् दर्शनंनी लेहेर बिराजमान थई रही छे., अने मिथ्यात मोहनीय रूप निद्रानी मुर्छा ते विनास पामी छे, तथा जेना घटमांथी जिन शासननी सेली के० तत्व समजवामा अने तत्व समजणमा अहं बुद्धिरूप अनिमाननो त्याग थयोछे, अने जे छ ए द्रव्यने परखनारो छे जेना श्रवणमा आगमना अक्षर पडे छे. एटले सिद्धांत सांनले छे, वली ऋषेरिय आर्ष आर्षित ऋषि संबंधी वाणी ते जिनवाणी कहिये, ते जेना हृदयरूप नंमारमां समाणी छे.

एटले नरी छे, वणारसी दास कहे छे के जेनी नवस्थिति श्रल्प श्रावी रही छे, तेज पुरुष जिन प्रतिमाने जिन सरिषी प्रमाण करेछे ॥ ३६ ॥

हवे वणारसी दास पोतानी कथनी कहेछे — श्रथ वणारसी कथन·—

चोपाई — जिन प्रतिमा जन दोप निकदे, सीस नमाइ वनारसिवदे, फिरि म नमांहि विचारे ऐसा, नाटक ग्रंथ परम पद जैसा ॥ ३७ ॥ परम तत्व परचे इ समांही, गुन थानककी रचना नांही, यामे गुनथानक रस श्रावे, तो गरथ श्रति शोजा पावे ॥ ३८ ॥ दोहरा — यह बिचारि संक्षेपसो, गुनथानक रस योज, वरनन करे बनारसी, कारन सिव पथ खोज ॥ ३९ ॥

श्रर्थ — जिन प्रतिमां छे तेज मनुष्यना राग द्वेष मिथ्यातनुं निकंदन करनार छे, तेथी वणारसीदास मस्तक नमावीने तेने वदे छे पछी वनारसीदास मनमा एम विचारे छे के, श्रा नाटक ग्रंथमां जेवु परमपद छे तेवुं श्राही कहेछे ॥३७॥

श्रा ग्रंथमा उपादेयरूप परम तत्व, श्रात्म तत्वनो परिचय छे पण गुणस्था नकनी रचना श्रा ग्रंथमां नथी. हवे जो श्रा ग्रंथमा गुणस्थानकनो रस श्रावे तो श्रा ग्रंथ सारी शोजा पामे ॥ ३८ ॥ ए प्रमाणे विचारीने सक्षेप मात्र गुण स्थानकना रसनी योजनो वणारसी दास वर्णन करे छे ते वर्णन शिवपथनुं कारण छे श्रने शिवपंथनी खोजना छे ॥ ३९ ॥

हवे गुणस्थानकनुं स्वरूप छे तेवु कहेछे — श्रथ गुनथानक सरूप कथन —

दोहरा·— नियत एक विवहारसों, जीव चतुर्दश नेद, रंग जोग बहु विधि नयो, ज्युं पट सहज सुपेद. ॥ ८० ॥

श्रर्थ — निश्चे जीव एकरूप छे श्रने व्यवहारनयथी जीव चौद नेदे छे श्रा हीं दृष्टांत श्रापेछे, जेम वस्त्र सहज रगमा सफेद छे पण रगना जोगथी विचि त्र प्रकारना रगनो थाय तेम गुणस्थानकथी जीवनो तेवो नेद छे.॥ ८० ॥

हवे चौद गुण स्थानना नाम कहेछे — श्रथ चतुर्दश गुनथानक कथन —

सवैया इकतीसा — प्रथम मिथ्यात दूजो सासादन तीजो मिश्र, चतुरथो श्रव्रत पंचमो व्रतरंच है, छगो परमत्त सातमो श्रपरमतनाम, श्राठमो श्र पूरव करन सुख सच है, नौमो श्रनिवर्त्तनाव दशमो सूछमलोन, एकादशमो सु वपसत मोह वच है, द्वादशमो छीन मोह तेरहो सजोगी जिन, चौदहों श्रजोगी जाकी थिति श्रंक पंच है. ॥ ८१ ॥ दोहरा — वरने सब गुन थानके, नाम चतुर्दश सार, श्रब बरनों मिथ्यातके, नेद पंच परकार. ॥ ८२ ॥

अर्थः— प्रथम मिथ्यात, बीजो सास्वादन, त्रीजो मिश्र, चोथो अविरत, पांच मो रच मात्र व्रत एटले देशव्रती, छठो प्रमत्त, सातमो अप्रमत्त. एवा नाम छे. आठमो अपूर्वकरण अथवा निवृत्ति बादर, ए बे नाम छे तें आंही सुखनो संच के० मिलाप छे, नवमो अनिवृत्ति बादर, दशमो सूक्ष्म लोभ, अग्यारमो उपसांत मोह, आंही मोहनी वचना छे एटले मोहथी छुटयु छे. बारमो क्षीण मोह क्षीण, तेरमो सयोगी जिन, ते केवली थयो, चौदमो अजोगी जिन, जेनी स्थिति अ इ उ ऋ लृ ए ह्रस्व पांच अक्षर जेटली छे. ॥७१॥ एम सर्व चउदे गुण स्थान ना नामनु सत्यार्थ वर्णन कीधुं ते शोभे छे. हवे अनुक्रमें पहेला मिथ्यात गुणठा णाना पांच प्रकारथी पांच भेद छे ते कहुंछुं. ॥ ७२ ॥

हवे पांच मिथ्यात्वना नाम कहेछे — अथ पंच मिथ्यातके नाम कथन.—

सवैया इकतीसा.— प्रथम एकंत नाम मिथ्यात अभिग्रहीक, दूजो विपरित अ भिनिवेसिक गोत है; तीजो विनै मिथ्यात अनाभिग्रह नाम जाको, चोथो संसे जहां चित भोरकोसो पोत हे; पंचमो अज्ञान अनाभोगिक गहलरूप, जाके उदे चेतन अचेतनसो होत है, ए पांचो मिथ्यात भ्रमावे जीवको जगतमें, इन्हके वि नास समकितको उदोत है ॥ ७३ ॥

अर्थ.— पांच मिथ्यात्वमां पेहेलो एकांत पक्षना ग्राही अभिग्रहिक नामे मिथ्या त्व छे. बीजो मिथ्यात पेहेला मिथ्यातथी विपरित छे. तेनुं अभिनिवेसिक एवुं गो त के० नाम छे, त्रीजो विनय मिथ्यात सर्वनो पूजनार छे जेनुं नाम अनाभिग्र हिक छे, चोथो संसयिक मिथ्यात ज्यां चित्त छे ते भ्रमण करतुं रहे भमराना बचानी माफक, पांचमो अज्ञान मिथ्यात, ए अनाभोगीक पणाथी अजाणपणे एकेंद्रिया दिकमा गहलरुपी छे. निद्रानी छाकनुं स्वरूपी छे. जेना उदयथी चेतन छे ते अ चेतन थई रहुछे. जेना नाम लीधा ते एज पांचे मिथ्यात जीवने जगतमा भमा वेछे. ए पांचे मिथ्यात्वनुं विनाश थएथी समकेतनो उद्योत थायछे ॥ ७३ ॥

हवे एकांतवादी अभिग्रहीक मिथ्यातनुं लक्षण कहेछेः— अथ एकांत यथाः—

दोहरा — जो इकंत नय पक्ष गहि, छके कहावे दक्ष, सो इकत वादी पुरुष, मृषावत परतक्ष. ॥ ७४ ॥

अर्थः— सातेनयमां हर कोई एक नयनो पक्ष ग्रहीने पोताना जाणपणामां छ की जायछे, अने दक्ष के० तत्ववेत्ता कहेवाय, ते एकांत मतनो स्थापक मीमांसक नैयायक प्रमुख पुरुष छे ते प्रत्यक्षपणे अभिग्रहीक मिथ्याती छे ॥ ७४ ॥

हवे जाणपणामा तो काईक अनेकांतपणुं छे पण हठथकी विपरीत कहेछे माटे तेनुं लक्षण कहेछे — अथ विपरीत यथा.—

दोहरा — ग्रंथ उकति पथ उछपे, थापे कुमत सुकीय, सुजस हेत गुरुता ग्रहे, सो विपरीती जीय ॥ ७५ ॥

अर्थ — ग्रंथमां जे कह्यो एवो मार्ग तेने उथापीने नन्हवादिक पोतानी कुमति थापे पोतानी प्रसिद्धि थवाने माटे गुरुता के० आचार्यपणो ग्रहेछे, ते जीव अनेकांतताथी विपरीत थयो तेने आभिनिवेसिक मिथ्यामती कहीए ॥ ७५ ॥

हवे जेनो विनय मिथ्यात छे एवा अनभिग्रहिक मिथ्यातीनुं लक्षण कहेछे अथ विनय मिथ्यात यथा —

दोहरा— देव कुदेव सु गुरु कु गुरु, गिनें समान जु कोइ, नमे भगतिसो सबनिको, विनय मिथ्याती सोइ ॥ ७६ ॥

अर्थ.— सु देवने अने कुदेवने सु गुरुने अने कु गुरुने जे कोइ समानज गणे छे, अने तामली तापसनीपरे परिणाम प्रवर्ज्या लेइने भक्तिथी सर्वेने नमेछे, पण गुणदोषनी खबर न होय ते विनय मिथ्यात्व कहिये ॥ ७६ ॥

हवे जेना जाणपणामा संदेह छे, ते संशय मिथ्याती कहिये तेनुं लक्षण कहेछे अथ संसय यथा —

दोहरा — जो नाना विकलप गहे, रहे हिए हेरान, थिर व्है तत्व न सद्दहे, सो जिय संसयवान ॥ ७७ ॥

अर्थ — जे अपार नय जाल देखिने जीवमां संशय राखे, नानाप्रकारना चित्त विकल्प ग्रहे अने हेरान थई रहेछे. स्थिरता राखीने तत्वने सद्दे नही तेज जीव संशयवत मिथ्याती कहीये ॥ ७७ ॥

हवे पाचमा अज्ञान मिथ्यातीनु लक्षण कहेछे.— अथ अज्ञान यथा —

- दोहरा — जाको तन दुख दहलसों, सुरति होति नहिं रच, गहल रूप वरते सदा, सो अज्ञान तिरयंच ॥ ७८ ॥ पंच भेद मिथ्यातके, कहे जिनागम जोइ, सादि अनादि सरूप अब, कहों अवस्था दोइ ॥ ७९ ॥

अर्थ — शरीरमा दुखना दहेलथी जेने हेय उपादेयनी, रचमात्र सुरता रेती नथी, मुर्छित रूपे जे सदा वर्त्ते छे ते एकेंद्रियादिक तिर्यंच अज्ञान मिथ्याती कहिये ॥७८॥ श्री जिनेश्वरना आगम सिद्धांत जोईने मिथ्यातना पाच भेद कहेछेः— जे

नी आदि पामीए तेतो आदि मिथ्यात्व कहीए, अने जेनी आदि न पामीए तेतो अनादि मिथ्यात्व कहिये, एवी एवी मिथ्यात्वनी अवस्थानुं स्वरूप हवे कहेछे॥८९॥

प्रथम सादि मिथ्यात्वनुं लक्षण कहेछे.– अथ सादि यथाः–

दोहरा – जो मिथ्या दल उपसमे, ग्रंथ भेद बुधि होइ,
फिरि आवे मिथ्यातमें, सादि मिथ्याती सोइ ॥ ९० ॥

अर्थः– जे मिथ्यात मोहनीयना दलने उपसमावीने मिथ्यात्व ग्रंथी भेदीने ज्ञाता समकेती थईने पाछा मिथ्यातमां आवे ते सादि मिथ्यात्व कहीए एना मिथ्यातमां हवे आदि थई तेथी सादि मिथ्याती कहिये ॥ ९० ॥

हवे बीजो अनादि मिथ्यातनुं लक्षण कहेछे– अथ अनादि यथा कथनः–

दोहरा.– जिनि गरथि भेदी नही, ममता मगन सदीव, सो अनादि मिथ्या मती, विकल बहिर्मुख जीव. ॥ ९१ ॥

अर्थ.– जे जीवे मिथ्यात्व ग्रंथी भेदी नथी अने सदासर्वदा काल लगण ममता मांज मगन रहे, ते जीव अनादि मिथ्याती कहीए, अने जे बहिर्मुख रहे जेने परमात्मा द्रव्यनी दृष्टि नथी, ते बहिर्मुख जीव कहीए ॥ ९१ ॥ इति श्री बणारसीदास कृत नाटक समयसारनेविषे प्रथम गुनस्थानकनो अधिकार संपूर्ण थयो.

दोहरा– कह्यो प्रथम गुण थान यह, मिथ्या मत अभिधान, अलप रूप अब बरनवु, सासादन गुन थान. ॥ ९२ ॥ सवैया इकतीसा – जैसे कोउ क्षुधित पुरुष खाइ खीर खांम, वोन करे पीछे के लगार स्वाद पावे हे, तैसे चढि चोथे पांचएके छठे गुनथान काहु उपसमीको कषाइ उदे आवे हे, ताहि समे तहां गिरें परधान दशा त्यागी, मिथ्यात अवस्थाको अधोमुख व्है धावे हे, बीच एक समे वा छ आवली प्रमान रहे, सोइ सासादन गुनथानक कहावे हे. ॥ ९३ ॥

अर्थ.– जेनुं मिथ्यात एवुं नाम छे, ते पेहेलुं गुणस्थानक सूचना मात्र कह्यु, हवे संक्षेप मात्र सास्वादन गुन स्थाननुं स्वरूप कहुंछुं. ॥ ९२ ॥

अर्थ.– जेम कोइ क्षुधावत पुरुष छे ते खीरखांम खाय पछी तेने वमन करेछे ते वमननी पछी पण खीरखांमना भोजननो लगारेक स्वाद पामेछे तेम कोइ जीव उपशम सम्यक पामीने चोथे अविरत गुनस्थाने रह्यो छे अथवा उपशम सम्यक पांमताज सरखो समान पांचमा गुणठाणे अथवा छठे गुणठाणे चढयो त्यां समकेतनी उज्वलाता न थई, अने अनंतानुबंधी उपशमि कषाय हतो ते उदय थयो, ते समयमा ते त्रणे गुण ठाणाथकी ते उपशम सम्यक्ती प्रधान

दशा जे श्रेष्ट दशा तेने त्यागीने फरी मिथ्यात दशाने उंधे मुखे उलटो रहेछे, एटले मिथ्यात्व पामतामां अने सम्यक्त छूटतामां वचे एक समयकाल प्रमाणे अथवा उत्कृष्ट छ आवलिका प्रमाणे जे सम्यक अंश रहेछे तेनेज सास्वादन गुन स्थानक कहिए ॥ ९३ ॥ इति द्वितीय गुन थानक समाप्त

दोहरा.– सासादन गुन थान यह, जयो समापत बीय, मिश्र नाम गुन थान अब, बरनन करो त्रितीय ॥ ९४ ॥ सवैया इकतीसा.– उपसमी समकिती केतो सादि मिथ्यामती, दुहूनिको मिश्रित मिथ्यात आइ गहे हे, अनंतानुबंधी चोकरीको उदे नांही जामे, मिथ्यात समे प्रकृति मिथ्यात न रहेहे, जहा सदहन सत्यासत्यरूप समकाल, ज्ञान भाव मिथ्या भाव मिश्र धारा वहे हें, जाकी थिति अतर मुहूरत वा एक समे, एसो मिश्र गुन थान आचारज कहे हे

अर्थ'– आ बीजो सास्वादन नामे गुणस्थान संपूर्ण थयुं हवे त्रीजु मिश्र-गुनथाननुं वर्णन करुंछुं ॥ ९४ ॥

अर्थ.– उपशम सम्यक्ति मिथ्यात मिश्र अने सम्यक्त रूप त्रण पुज करीने ज्यारे मिश्र पुजमा जीव वर्त्ते, अथवा सम्यक्तथी पडीने फरी मिथ्यात्वमा आवी सादि मिथ्यात्वी थईने मिश्र पुज उदय थयाथी मिश्रमा वर्त्ते, ए बेउने मिश्र गुण स्थानक कहिये, केमके मिथ्यात्व सम्यक्त थको वर्त्ते छे जेथी ससार अनतो वधे ते अनंतानुबधीनी चोकडी कहिए, तेनो जेमा उदय नथी अने मिथ्यातपणुं शमे तथा उपशमेछे, त्या मिथ्यात्वनी प्रकृतिनो उदय रहेतो नथी ज्यां समकाले सत्यासत्य रूप श्रद्धा छे एटले श्रद्धामा साचु खोटुं बेउ छे तिहा ज्ञान भाव छे, ते मिश्र धारामा वहेछे. अने मिथ्यात्व भाव पण सम्यक्त धाराथी मिश्रित धारा थकी वहेछे जेनी उत्कृष्टि स्थित अतर्मुहूर्त कालनीछे, अथवा जघन्य एक समयनी छे एवुं नाम त्रीजुं मिश्र नामे गुणठाणु आचार्यजी कहेछे इति तृतीय गुनस्थान समाप्त ९५॥

दोहरा – मिश्र दशा पूरन भई, कही यथा मति भाषि, अथ चतुर्थ गुनथान विधि, कहों जिनागम साषि, ॥ ९६ ॥

अर्थ – मिश्र गुणठाणानी जेवी दशा छे, ते जेवी पोतानी बुद्धि छे तेवी रीतें भाषारूप कही ते संपूर्ण थई, हवे श्री जिनागमनी शाष लईने चोथा सम्यक्त गुणठाणानी विधि कहुंछुं ॥ ९६ ॥

हवे चोथा सम्यक्त गुणठाणानु वर्णन करेछें –अथ सम्यक वर्णन –

सवैया इकतीसा'– केई जीव समकित पाइ अर्ध पुदगल, परावर्त्त काल तांई

चोखे होई चित्तके, कोई एक अंतर मुहूरतमें ग्रंथि नेदि, मारग उलंघि सुख वेदे मोप वितके, तातें अंतरमुहूरतसो अर्द्ध पुग्गलों, जेते समें होही तेते नेद समकितके, जाही समे जाको जब समकित होई सोई, तबहीसो गुन गहे दोप दहे इतके. ॥ ५७ ॥ दोहरा – अथ अपूर्व अनवर्त्ति त्रिक, करन करे जो कोड; मिथ्या ग्रंथि विदार गुन, प्रगटे समकित सोइ ॥ ५८ ॥

अर्थ – सम्यक्त पामीने चित्तनो चोखो थईने अर्द्ध पुदगल परावर्त्त काल ल गण संसारमां रहेछे, अने कोईक जीव तो एकज अंतमुहूर्त्त कालमां मिथ्यात ग्रंथी नेदी समक्त पामीने चारे गतिनो मार्ग उलंघन करी मोक्षरूप वित्तना सुख वेदे, पण संसारमा रहे नही तेथी सम्यक्त पामीने जघन्य संसार स्थित एक अंतर मुहूर्तनी छे अने उत्कृष्टि संसार स्थित अर्द्ध पुदगल परावर्त्तनी थायछे, हवे एटली ससार स्थितिनी वचमा एक एक समयनी वृद्धि करता जेटला ते स्थितिना नेद थाय तेटला सम्यक्तना नेद पामीए ए रीते सम्यक्तना घणा नेद पामिये, जे समे जेने सम्यक्तनु उदय होय ते समे ते जीव त्यारथी पोताना गुण ग्रहेछे, अने इतके के० ते संसार अवस्थाना दोषनुं दहन करेछे ॥ ५७ ॥ अथ के० यथाप्रवृत्ति करण, अपूर्व करण, अनिवृत्ति करण ते त्रणे करण जे कोई नव्यजीव करे छे त्यां कोईक वरवते एक, आयुकर्मविना शाते कर्मनी स्थिति अंत कोडा कोमी सागरोपम प्रमाण रहे, त्यारे यथाप्रवृत्ति करण थाय पछी मिथ्यात ग्रंथी नेदवाथी अपूर्वकरण थाय, अने सम्यक्त प्रगटवाथी अनिवृत्तिकरण थाय, जे कोई ए त्रणे करणे करी मिथ्यात ग्रंथी विदारीने सम्यक्त स्वरूप पामे तेज सम्यक्त कहिये

हवे अष्ट प्रकारथी सम्यक्त विवरण करे छेः– अथ अष्टरूप कथनः–

दोहराः– समकित उतपति चिन्ह गुन, नूषन दोष विनास, अतीचार जुत अष्ट विधि, बरनो बिबरन तास ॥ ५५ ॥

अर्थ – सम्यक्तनुं सरूप, १ सम्यक्तनी उत्पत्ति, २ सम्यक्तनुं चिन्ह, ३ सम्यक्तनो गुण, ४ सम्यक्तनुं नूषण, ५ सम्यक्तना दोष, ६ सम्यक्तनो विनाश, ७ सम्यक्तना अविचार, ८ ए सर्व आठ प्रकार यथा, तेनो विवरो करुंछुं ॥ ५५ ॥

हवे प्रथम सम्यक्तनुं सरूप कहेछे – अथ सम्यक्त यथाः–

चोपाईः– सत्य प्रतीति अवस्था जाकी, दिन दिन रीति गहे समताकी; छिन छिन करे सत्यको साको; समकित नांउ कहावे ताको ॥ ६०० ॥

अर्थः– सत्यमा जेनी प्रतीत छे ते साचानेज सरदहेछे, एवी जेनी अवस्थाछे

अने दिवसे दिवसे वधती वधती क्षमा निर्लोभता प्रमुख समतानी रीत ग्रहण करेछे एवु सत्य कार्य पहेलां कदीन कर्युं, तेथी हवे क्षण क्षणमां सत्यनो सा को के० महा कार्य करेछे ते नावनुं नाम सम्यक्त कहीए ॥ ६०० ॥

हवे सम्यक्तनी उत्पत्ति कहेछे.— अथ उत्पत्ति यथा.—

दोहरा — केतो सहज सुनावको, उपदेशे गुरु कोइ, चिहुं गतिसेती जीवकों, सम्यक् दरशन होइ, ॥ ६०१ ॥

अर्थ — नदीने किनारे उना पाणीना कल्लोल आवता जाताना न्यायथी एट ले सरिडुपल घोलना न्यायथी कोइने सहज स्वनावमाज समकित उपजे, 'कोई गु रुना उपदेश थकी सम्यक्त उपजे, जे जीव चारे गतिमां सयन निद्रा करी रह्यो हतो तेने जे सम्यक्त उपजे छे ते एवा एवा प्रकारथी उपजेछे ॥ ६०१ ॥

हवे जेथी सम्यक्त उपज्युं जाणीए ते सम्यक्तना लक्षण कहे छे —अथ लछन यथा

दोहरा — आपा पर परचेविषे, उपजे नहि संदेह, सहज प्रपंच रहित दशा समकित लक्षण एह ॥ ६०२

अर्थ — आत्मा अने आत्माथी बीजा जे कर्मादिकना पुजल छे, एटले बीजा पाचे इव्य तेना परिचय प्रतीतिमा, संदेह उपजे नही अने सहज स्वनावमा आ त्मदशा ते मायानी प्रपच रहितथाय ए सम्यक्तना लक्षण कहिये ॥ ६०२

हवे सम्यक्तना गुण कहेछे — अथ गुन यथा —

दोहरा — करुना वछल सुजनता, आतमनिंदा पाठ, समता नगति विरागता, धरम राग गुन आठ ॥ ६०३ ॥

अर्थ.— दया तथा सर्वनु हित वाछक पणुं सर्व साथे मैत्री नाव राखवुं आत्मनिं दानुं पठन करवु, इष्ट अनिष्ट उपर समनावे रहेवो, देव गुरुनी नक्ति, वैरागरस माज निज्यो थको रहेवु धर्मथी राग राखवो. ए सम्यक्तना आठ गुण छे ॥६०३॥

हवे सम्यक्तना पांच नूपण कहे छे — अथ पच नूपण यथा —

दोहरा — चित प्रनावना नावजुत, हेय उपादयवानि, धीरज हरप प्रवीनता नूपन पंच बखानि ॥ ६०४ ॥

अर्थ — चित के० ज्ञान एटले जिन शासननो जेवी रीते प्रनाव वधे तेवा ना वमां रहेवु हेय उपादेयनु ज्ञानवत थई, धैर्यमा रहेवु, सम्यक्तपामीने हर्ष राखवुं, तत्वविचारमा प्रवीणता राखवी, ए पांच सम्यक्तना नूपण वखाणिए ॥ ६०४ ॥

हवे सम्यक्तना पचीस दोष कहेछे'-- अथ पंचवीस दोष यथाः--

दोहरा -- अष्ट महामद अष्ट मल, षट आयतन विशेष; तीन मूढता संजुगत, दोष पचीसी एष. ॥ ६०५ ॥

अर्थः-- अष्ट महामद छे, अने आठ मल छे, छ आयतन विशेष छे, अने त्रण मूढता छे; ए सर्व एकठा करीए तो पचीस दोष थाय. ॥ ६०५ ॥

हवे आठ जातना मद कहेछेः-- अथ अष्ट मद यथाः--

दोहरा.-- जाति लाभ कुल रूप तप, बल विद्या अधिकार, इन्हको गरव जु कीजिये, यह मद अष्ट प्रकार. ॥ ६०६ ॥

अर्थ-- जातिमद, लाभमद, कुलमद, रूपमद, तपमद, बलमद, विद्यामद, तथा अधिकार के० ऐश्वर्यमद ए आठ वस्तुनो जे गर्व करवो तेज आठ प्रकारना मद कह्याछे. ॥ ६०६ ॥

हवे आठ प्रकारना मल कहे छे -- अथ अष्ट मल कथन.--

चोपाई.-- आसंका अस्थिरता वांछा, ममता दृष्टि दशा दुरगंछा, वत्सल रहित दोष परभापे, चित्त प्रभावना मांहि न राखे ॥ ७ ॥

अर्थ -- धर्म उपर अने जिनशासन वचन उपर शंका राखे, धर्ममा स्थिरता नही स्वर्गादिकनी वांछा धरे, कुटुंबादिकविषे ममत्व भाव राखे, ए धर्म मलीन छे एवी दुगंछा करे, स्वामी वत्सल न करे, पारका दोष प्रकाशे, ज्ञान प्रमुख विविध प्रकारनी प्रभावनामां चित्त न राखे ए आठ मल जाणवा ॥ ७ ॥

हवे छ आयतन दोष कहेछे ते छ स्थान मिथ्यात्वना कहेछे --अथ षडायतनयथाः--

दोहरा-- कुगुरु कुदेव कुधर्म धर, कुगुरु कुदेव कुधर्म, इनकी करे सराहना, यह षडायतन कर्म ॥ ८ ॥

अर्थ.-- कुगुरुने माननार, कुदेवने सेवनार, कुधर्मने माननार, कुगुरु प्रशंसा, कुदेव प्रशंसा, कुधर्म प्रशंसा, ए छएनी प्रशंसा करे ते आयतन कर्म दोष छे ॥ ८ ॥

हवे त्रण मूढता दोष कहेछे-- अथ मूढत्रय यथा कथन.--

दोहरा-- देव मूढ गुरु मूढता, धर्म मूढता पोष, आठ आठ षट तीनि मिलि, ए पचीस सब दोष. ॥ ९ ॥

अर्थ -- सुदेव समजे नही ए पेली मूढता, सुगुरुने समजे नही ए बीजी गुरु मूढता सुधर्मने समजे नही ए त्रीजी धर्म मूढता ए अविद्यानो पोषक छे ए रीतें आठ मद, आठ मल, छ आयतन, त्रण मूढता, सर्व मली पचीस दोष थया ए

हवे पाच प्रकार सम्यक्तनो नाश करे ते कहेछे:-- अथ नाश पचक यथा –

दोहरा.– ज्ञान गर्व मतिमदता, निठुर वचन उदगार, रुद्रभाव आलस द सा, नास पंच परकार. ॥ १० ॥

अर्थ.-- ज्ञानना गर्वथी, बुद्धिनी मंदताथी, कठण वचनना उदगार के० कहेवाथी, रौद्र भाव धरवाथी, आलसु पणाथी, एवी रीते पाच प्रकारे सम्यक्तनो नाश थायछे.

हवे दिगंबर संप्रदायथी सम्यक्तना पाच अतिचार कहेछे –अथ अतीचारपंचकयथा -

दोहराः– लोग हास भय भोग रुचि, अग्रसोच थिति चेव, मिथ्या आगमकी भगति, मृषा दरसनी सेव॥११॥चोपाई –अतीचार ए पच प्रकारा, समल करहिं स मकितकी धारा, दूषन भूषन गति अनुसरनी, दसा आठ समकितकी बरनी॥१२॥

अर्थ – सम्यक्तनी क्रियाथी मने लोक हससे एवो मनमां भय राखे, पाच इ ड्रियना विषयभोगनी रुचि राखे, आगल माहारुं शुं थाशे एवी पोतानी स्थितिनु चिन्तन करतो रहे, मिथ्यात दर्शनना जे आगम सिद्धांत छे तेनी भक्ति करे, पाच सुं मिथ्या दर्शननी सेवा करे ॥ ११ ॥ ए पाच प्रकारना अतीचार ते सम्यक्त नी उज्वल धाराने मल सहित करेछे, एवी दूषण गतिनी पाछल लागी अने भूष ण गतिने पाछल लागी रहे ए समकितनी आठ दशाने वरणी ॥ १२ ॥

हवे जे सात प्रकृतिना क्षय अथवा उपशमथी सम्यक्त उपजे ते कहेछे.–

अथ सम प्रकृति यथा –

दोहराः– प्रकृति सात अब मोहकी, कहों जिनागम जोइ, जिन्हको उदै नि वारिके, सम्यक दरशन होइ ॥ १३ ॥ सवैया इकतीसा – चारित मोहकी चारि मिथ्यातकी तीनि तामे, प्रथम प्रकृति अनतानुबंधी कोहनी, बीजी महामान रस भीजी माया मई तीजी, चोथी महालोभ दसा परिगह पोहनी; पांचइ मिथ्यात म ति छठी मिश्र परनति, सातई समे प्रकृति समकित मोहनी, एई षट विंशवनि तासी एक कुतियासी, सातो मोहप्रकृति कहावे सत्ता रोहनी ॥ १४ ॥

अर्थ – हवे मोहनीयनी सात प्रकृति श्री जिनेश्वरना आगम जोई कहुंछु जे सात प्रकृतिनो उदय निवारवाथी सम्यक्त दर्शन प्रगट थायछे ॥ १३ ॥ मोहनी कर्मना बे भेद छे –एकतो चारित्र मोहनी, बीजी मिथ्यादर्शन मोहनी, तेमा चारित्र मोहनीयनी चार प्रकृति, अने मिथ्या दर्शन मोहनीनी त्रण प्रकृति मली सात प्रकृति छे, तेमा प्रथम प्रकृति अनतानु बंधी कोहनी के० क्रोधनी, बीजी प्रकृति म हा अभिमानना रसमा भीनो थको रहे ते अनतानुबंधी मान, अने त्रीजी प्र

कृति महामायामय ते अनंतानुबंधी माया, चोथी प्रकृति मंहालोभ दशामां परिग्रहनी पोषण करनार ए अनतानुबंधी लोभ, पांचमी प्रकृति मिथ्यात मोहनी, छठी प्रकृति मिश्रपरिणाम एटले मिश्र मोहनी, सातमी प्रकृति जे छे ते पहेली छए प्रकृतिनुं सम थयो एटले दबाई गई ते सातमी सम्यक्त मोहनी जाणवी, एमां धुरली छ प्रकृतितो विगवनितासी के० वाघणी जेवी छे एनी गैल लागी तो कांइ छूटती नथी, अने एक सातमी प्रकृति कुतियासी के० कुनार्या जेवी छे तेनोपण भरोसो नथी ए साते मोहनीयनी प्रकृति ते जीवना सद्भावनी रोकनार छे.॥१४॥

हवे साते प्रकृतिथी सम्यक्तना भेद उपजे ते कहे छेः—अथ सम्यक्त भेद कथन

छप्पय छंद — सात प्रकृति उपसमहि, जासु सो उपसम मंमित ; सात प्रकृति छय करन, हार छायकी अखंमित, सातमांहि कछु षिपहि, कछुक उपसम करि रक्खे, सो छय उपसमवंत, मिश्र समकित रस चक्खे; षट प्रकृति उपशमइ वा षिपइ, अथवा छय उपशम करे; सातई प्रकृति जाके उदय, सो वेदक समकित धरे ॥ १५॥

अर्थ.— जेने ए सात प्रकृति उपसमी जाय तेतो उपसमी, पंमित के० ज्ञाता होय तेनुं नाम उपशम सम्यक्त कहीए, अने जे ए साते प्रकृतिनो क्षय करनार होय तेने क्षायकी कहीए, ते अखंमित ज्ञायक सम्यक्त होय, वली ए साते प्रकृतिमां कंई खपावे, कंई उपशमावी राखे, तेतो उपशम लक्षण सहित, तेमां मिश्ररूप सम्यक्त रसने चाखे, ए सातो प्रकृतिमा छ प्रकृति उपशमे अने सातमी सम्यक्त मोहनीय तो प्रकृति उदय आवी वेदे छे. अथवा छ प्रकृति क्षय थईछे अने सातमी वेदे छे अथवा छ प्रकृतिमा कोई प्रकृतिनो क्षय थयो छे. अने कोइनो उपशम थयोछे, अने सातमी प्रकृति वेदे छे ते वेदक सम्यक्त धारी कहीए ॥ १५ ॥

हवे सर्वे सम्यक्तना नव भेद कहे छे.— अथ नवविधि सम्यक्त वर्ननंः

दोहरा.— छय उपसम वरते त्रिविध, वेदक चार प्रकार, छायक उपशम जुगलजुत, नौधा समकित धार ॥ १६ ॥

अर्थ.— क्षयोपशमसमकित त्रण प्रकारनो वर्ते छे वेदक सम्यक्तना चार प्रकार छे, क्षायक सम्यक्तनो एक प्रकार छे अने उपशम सम्यक्तनो एक प्रकार, ए क्षायकने उपशम बेहुना मलवाथी सर्वे मली नव प्रकारनो सम्यक्तधारी थाय ॥ १६ ॥

हवे क्षयोपशम सम्यक्तना त्रण प्रकार कहेछे.— अथ क्षयोपशम त्रई यथाः—

दोहराः— चारि षिपहि त्रय उपसमहि, पण षय उपसम दोइ; पै षट उपसम एक यों, षय उपसम त्रिक होइ ॥ १७ ॥

अर्थ:—साते प्रकृतिमां अनंतानुबंधीनी चोकडी खपी गइछे, अने त्रण दर्शन मोह्नी उपसमी छे, तेने क्षयोपशम सम्यक्त कहिए. अथवा चार अनतानुबंधी अने मिथ्यात मोह्नी ए पाच प्रकृति क्षय गईछे, अने बे उपशमी छे, तेने पण क्षयोपशम सम्यक्त कहीए, अथवा मिश्र मोह्नी लगण छ प्रकृति क्षय गई, अने सातमी उपशमावी छे, तोपण क्षयोपशम सम्यक्त कहीए, एम त्रण प्रकारे क्षयोपशम सम्यक्त थाय हवे क्षयोपशम सहित सम्यक्त मोह्नी वेदवाथी जे क्षयोपसम वेदक नीपजे छे तेना बे प्रकार छे -- अथ क्षयोपशम वेदक द्विक यथा कथन --

दोहरा.— जहा चारि प्रकरती पिपहिं, द्वे उपसम इक वेद, षय उपसम वेदक दशा, तासु प्रथम यह भेद ॥ १८ ॥ पंच पिपे इक उपसमै, इक वेदे जिहि ठौर, सो पयउपसम वेदकी, दशा डुतिय यह ओर ॥ १९ ॥

अर्थ — ज्या अनतानुबधी चार प्रकृति क्षय थाय छे अने मिथ्यात मिश्र ए बेउ प्रकृति उपशमेछे. अने एक सम्यक्त मोह्नी वेदेछे आवी दशामा जे क्षयोपशम सहित वेदक समकित थयोछे तेनो आ प्रथम भेद छे ॥ १८ ॥ वली ज्या चार अनतानुबंधी अने मिथ्यात मोह्नी ए पांच प्रकृति खपीछे, अने एक मिश्र मोह्नी उपशमी छे. अने एक सम्यक मोह्नी वेदे छे. त्यारे क्षयोपशम सहित वेदक समकितनी आ बीजी दशा थई ॥ १९ ॥

हवे जे क्षायिक सहित वेदकछे --अने उपसमसहित वेदक छे तेनो प्रकार कहे छे.—

अथ क्षायक वेदक उपशम वेदक यथा कथन -

दोहरा:— पय पट वेदे एक जो, प्यायक वेदक सोइ, षट उपसम इक प्रकृति विद, उपसम वेदक होइ ॥ २० ॥ खायक उपसमकी दशा, पूरव षट पद मांहि, कही प्रगट अब पुनरुकति, कारन वरनी नाहि ॥ २१ ॥

अर्थ — ज्या चारे अनतानुबंधि अने मिथ्यात मोह्नी मिश्र मोह्नी ए छ प्रकृति खपी छे. अने एक सम्यक्त मोह्नी वेदे छे, त्यारे क्षायिक वेदक सम्यक्त कहिये, अने ए जे पूर्वे छ प्रकृति कही ते जेणे उपशमावी छे, अने एक सम्यक्त मोह्नीय वेदे छे, त्यारे उपशम वेदक सम्यक्त कहिये ॥ २० ॥ क्षयोपशम नामे जे सम्यक्त कहीए, तेनी दशा तो पाछला षटपद के० छपय छंदमा कही छे, तेहा ए सातमा कईक उपशम करी राखे, एवु प्रगट कहेलु छे तेथी आंहि फरी कहेवाया थी पुनरुक्ति दोष लागे ते कारणथी फरी वरणवी नथी ॥ २१ ॥

हवे सम्यक्तना मूल भेद चार अने उत्तर भेद नव छे ते कहेछेः— अथ भेद विवरन.—

- दोहरा.— षय उपसम वेदक पिपक, उपसम समकित च्यारि; तीन च्यारि इक इक मिलत, सब नव भेद विचारि. ॥ २२ ॥

अर्थ.—क्षयोपशम सम्यक्त, वेदक सम्यक्त, क्षायक सम्यक्त, उपशम सम्यक्त एवा मूल चार भेद समकितना थया. वली क्षयोपशमना त्रण भेद वेदकना चार भेद अने क्षायकनो एक भेद, उपशमनो एक भेद, ए सर्व मली समकितना नव उत्तर भेद थया हवे निश्चयादिक सम्यक्तनी व्यवस्था कहेछे —अथ निश्चे व्यवहार सामान्यविशेष.—

सोरठा.— अब निहचे विवहार, अरु सामान्य विशेष विधि, कहो च्यारि परकारि, रचना समकित भूमिकी ॥ २३ ॥ सवैया इकतीसा – मिथ्या मति गांठि भेद जगी निरमल ज्योति, जोगसों अतीत सोतो निहचे प्रवानिये, वहे दुंद दसासों कहावे जोग मुद्रा धरे, मति श्रुति ज्ञान भेद विवहार मानिये, चेतना चिह्न पहिचान आपपर वेदे, पौरुष अलप ताते समान वखानिये, करे भेदाभेदको विचार विसताररूप हेय गेय उपादेयसो विशेष जानिये. ॥ २४ ॥ सोरठा – थिति सागर ते तीस, अंतर मुहुरत एक वा, अविरति समकिति रीस, यह चतुर्थ गुन थान इति २५

अर्थ – हवे निश्चेथी अने व्यवहारथी सामान्य विशेषपणे कहेछे सम्यक्तनी भूमिनी चार प्रकारनी रचना छे ते कहेछे. ॥२३॥ प्रथम मिथ्यात ग्रंथी भेदिने जे आत्मानी निर्मल ज्योति जागी छे. अने जे ज्योति मन, वचन, कायाना जोगथी अतीत छे तेतो सम्यक निश्चेनयथी प्रमाण करीए बीजुं ते सम्यक द्वंद्व दशाथी वर्तमान थाय छे एटले बहु विकल्पथी धामधूम दशाथी वर्त्ते छे त्यारे तो एवुं कहेवाय छे के ए जोग मुद्रा धारी छे आ मति ज्ञानी छे आ श्रुत ज्ञानी छे. एवा भेद व्यवहारनयथी मानिये छे त्रीजुं ए आत्माना चेतनारूप चिन्ह के० लक्षण जाणीने आत्म द्रव्य अने परद्रव्यने वेदे छे परतु अंतरायना उदयथी पुरुष पराक्रम अल्प छे. एटले अविरति छे. तेथी ए सामान्यपणे सम्यक्त कहीए, चोथुं गुण अने गुणिनो भेदाभेद विचार विस्ताररूप करे जेम आत्मा गुणिछे ज्ञानादिक गुण छे. तेना भेदाभेदनो विचार करवो एवा हेय ज्ञेय उपादयनो विचार राखवो ए विशेषपणे सम्यक्त जाणिए ॥ २४ ॥ अविरत सम्यकतनी उत्कृष्टि तेत्रीस सागरोपम स्थिति अथवा जघन्यथी एक अंतर मुहूर्तनी स्थिति होय, अविरति सम्यक्तनी रहस्य मर्यादा ए वे प्रकारे होय, ए चोथुं गुणस्थानक समाप्त थयुं.॥२५॥

हवे पांचमां गुणस्थानकना विवरणनो आरंभ करेछेः—अथ पंचमगुनथानक आरंभ

दोहरा.— अब बरनो इकवीस गुन; अरु बावीस अभष्य; जिन्हके संग्रह त्यागसों, सोहे श्रावक पष्य ॥ २६ ॥

अर्थ — तेमा प्रथम पांचमा गुणस्थानक जायक श्रावकना एकवीस गुण कहुंछुं अने बावीस अभक्ष छे ते कहुंछुं जे गुणने संग्रह करवाथी अने जे अभक्षने त्यागवाथी श्रावकनो पक्ष गुणसग्रहीत शोभायमान थाय ते कहुंछुं ॥ २६ ॥

हवे श्रावकना एकवीस गुणना नाम कहेछे —अथ श्रावक इकवीसगुन कथन —

सवैया इकतीसा — लज्जावत दयावत प्रसंत प्रतीतवत परदोषकों ढकैया पर उपगारी है, सोम दृष्टि गुन ग्राही गरिष्ट सबकों इष्ट सीष्ट पक्षी मिष्टवादी दीरघ विचारी है, विशेषज्ञ रसज्ञ कृतज्ञ तज्ञ धरमज्ञ, नदीन न अभिमानी मध्य विवहारी है; सहजे विनीत पाप क्रियासो अतीत एसो, श्रावक पुनीत इकवील गुन धारी है॥२७॥

अर्थ — लज्जावत १, दयावत२, संतमूर्ति ३, प्रतीतवत ४, परदोषनो ढांकनार ५, परउपकारी ६, सोमदृष्टि ७, गुणग्राहक ८, गुरुवाई ९, सर्वनो वल्लभ १०, सिष्टाचारनुं पक्षी ११, मिष्टवचन बोलनार १२, ऊंडो विचार विचारे १३, विशेष ज्ञाननो जाणनार १४, शास्त्ररस जाणनार १५, करेला उपकारने जाणे १६, ते उपकारने जाणे १७, धर्मने जाणनार १८, अदीनपणुं ग्रहे अभिमानी रहे नही १९, एवा मध्यम वेहेवारमां रहे के जेथी सहज स्वभावे विनयवत होय २०, अने पापक्रियाथी रहित होय २१, एवा पवित्र श्रावक एकवीश गुणना धरनार थाय. ॥ २७ ॥

हवे जघन्य श्रावकने बावीस वस्तु अभक्ष छे —अथ बावीसअभक्ष वर्नन.—

कवित्त छंद —ओरा घोरवरा निसभोजन, बहु बीजा वेगन सधान, पीपर वर ऊंबरि कठूंबरी, पाकर जोफल होइ अजान, कंद मूल माटी विष आमिष, मधु माषन अरु मदिरापान, फल अति तुछ तुसार चलित रस, जिनमत ए बावीस अषान ॥ २८॥

अर्थ.— गमोरा हेमा करहा १, काचा घोलना वमा २, रात्री भोजन ३, बहु बीज फल ते दाडम प्रमुख ४, वेगण ५, अथाणुं पाणीमाहेलो ६, पीपलनी पीपी ७, वमदृक्षना फल ८, घोलरना फल ९, कठुंबरना फल १०, पाकरीनां फल ११, अजाण्यांफल १२; कदमूलनी जाति सर्व १३, माटीनीजाति १४, अफीमप्रमुख १५ मास १६ मधु १७, माखण १८, मदिरापान १९, बहु तुछ फल काचुं फल २०, हीम २१, जेनो वर्ण. रस, गंध, स्पर्श फरी गयो होय ते चलित रस २२, ए बावीस वस्तु श्री जिनेश्वरमा मत धारीने अभक्ष छे ते खावी नही ॥ २८ ॥

दोहरा.– अब पंचम गुन थानकी, रचना बरनो अल्प;
जामे एकादश दशा, प्रतिमा नाम विकल्प ॥ २९ ॥

अर्थः–हवे देशविरतीनामें पांचमा गुनथाननी रचना अल्पमात्र वर्णवुं छुं संक्षेपमात्र करीने ते गुणथानमां अग्यार प्रतिमा धारी छे प्रतिमा एवुं नाम चारित्र विकल्पनुं छे २९

हवे अगीआर प्रतिमाना यथार्थनाम कहेछे.–अथ एकादश प्रतिमा नामकथन

सवैया इकतीसा.– दंसन विशुद्धकारी बारह विरतधारी सामायक चारी पर्व पोसह विधि वहे, सचित्तको परिहारी दिवा अपरस नारी, आठो जाम ब्रह्मचारी निरारंभी व्है रहे; पाप परिग्रह छंडे पापकी न शिक्षा मंडे, कोउ याके निमित्त करे सो वस्त न गहे, एते देस व्रतके धरैया समकिती जीव, ग्यारह प्रतिमा तिन्हे भगवतजी कहे ॥ ३० ॥

अर्थः– दर्शन विशुद्धनी करनारी दर्शन प्रतिमा १, बारे व्रतनी धरनारी विरति प्रतिमा. २, जहा सामायकनो उच्चार छे ते सामायक प्रतिमा ३ जहां पर्व आव्याथी पोसह करवो ते पोसहप्रतिमा. ४, जहा सचित्त वस्तुनो परिहार कहिये ते सचित्त परिहार प्रतिमा ५, ज्या दीवसे स्त्री स्पर्श न करवो ते दिवस अस्पर्श प्रतिमा. ६, आठे प्रहर ब्रह्मचर्यमां रहेवुं ते ब्रह्मचर्य प्रतिमा ७, सर्व आरंभनो जिहां त्याग करवो ते निरारंभी प्रतिमा ८, परिग्रहने त्यागवो ते परिग्रह त्याग प्रतिमा, ९, ज्यां पापोपदेश न देवुं ते पापोपदेश त्याग प्रतिमा १०, कोई आपणा निमित्त आहारादिक वस्तु करे तेले नही ते उद्देशिक त्याग प्रतिमा ११, ए अगीयारे प्रकारे करीने देश विरत धारी सम्यक्ति जीव कह्या छे तेनी आ इग्यार प्रतिमारूप प्रतिज्ञा भगवतजी कहे छे ॥ ३० ॥

हवे ए प्रतिमानो अर्थ कहेछे – अथ प्रतिमा कथन–

दोहरा.– संयम अंस जग्यो जहां, भोग अरुचि परिनाम; उदे प्रतिज्ञाको भयो, प्रतिमा ताको नाम. ॥ ३१ ॥

अर्थ.– जहा संयम चारित्रनो अंस जाग्यो, अने भोग अरूचिना परिणाम थया, त्यां कोई प्रतिज्ञानो उदय थयो तेनुं नाम प्रतिमां कहीए. ॥ ३१ ॥

हवे प्रथम दर्शन प्रतिमानुं विवरण करेछे – अथ प्रथम प्रतिमा यथाः–

दोहरा – आठ मूलगुण संग्रहे, कुवसन क्रिया न कोइ; दर्शन गुन निर्मल करे; दर्शन प्रतिमा सोइ ॥ ३२ ॥

अर्थ.–आंही पेहेला कह्या छे करुणा वत्सल सुजनता इत्यादिक सम्यक्तना आठ मूल

गुण छे तेनो संग्रह करे, ज्यां साते व्यसननी क्रिया नथी एवा सम्यक्त दर्शनना गुण निर्मल करे, तेज दर्शन प्रतिमा कही इहा व्रत नथी एनो काल एक मासनो छे ॥३२॥

हवे बीजी प्रतिमानो विवरो कहेछे —अथ द्वितीय प्रतिमा यथा —

दोहरा.— पंच अनुव्रत आदरे, तीन गुण व्रत पाल, सिक्षा व्रत च्यारो धरे, यह व्रत प्रतिमा चाल ॥ ३३ ॥

अर्थ.— पांच अणुव्रत, त्रण गुणव्रत अने सामायक धारे १, पोसह धारे २, देशावगासग करे ३, अतिथ सविभाग करे तथा चार शिक्षाव्रत धारे, ते व्रत प्रतिमा जाणवी तेनो काल बे महीनानो छे ॥ ३३ ॥

हवे त्रीजी सामायक प्रतिमानो विवरो कहेछे -- अथ तृतिय प्रतिमा यथा.—

दोहरा -- दर्वभाव विधि संजुगत, हिये प्रतिज्ञा टेक, तजि ममता समता गहे, अंतर मुहुरत एक ॥ ३४ ॥ चोपाई -- जो अरिमित्र समान विचारे, आरत रूद्र कुध्यान निवारें, संजमसहित भावना भावे, सो सामायकवत कहावे ॥ ३५ ॥

अर्थ.— दश दोष वचनना टालवा, बार दोष कायाना टालवा, ए द्रव्यविधि अने दश दोष मनना टालवा ते भावविधि जाणवी, तेणे करीने संयुक्त, अने हैयामा एक शो आठ पंचपरमेष्टी मत्रनो स्मरण लागो रहे, एम बीजी पण कोई प्रतिज्ञानी टेक राखीने, ममता तजीने, समता ग्रहण करवी, एम एक अतरमुहूर्त काल पर्यंत सामायक चारित्र थाय ॥ ३४ ॥ जे कोई शत्रु मित्रने समान विचारे, आर्त्तध्यान रौद्रध्याननुं निवारण करे, पच सवर सहित थाय बार भावना भावे, तेज सामायकधारी श्रावक कहिए, ए त्रीजी प्रतिमा त्रण मासनी होय ॥ ३५ ॥

हवे चोथी पोसह प्रतिमानो विवरो कहेछे.— अथ चतुर्थ प्रतिमा यथाः—

दोहरा.— सामायक कीसी दसा, चार पहर लो होइ,
अथवा आठ पहर रहे, पोसह प्रतिमा सोइ ॥ ३६ ॥

अर्थ — जे पूर्वे सामायकनी दशा कहीछे तेवी दशा चार प्रहर लगी होय, अथवा तेवी दशा आठ प्रहर लगे रहे, तेज पोसह प्रतिमा धारी श्रावक कहीए, ए चार मासनी प्रतिमा जाणवी इहा आठम चउदश अमास पूनमने दहाडे तथा पर्वदिन आवेथी पोसह करे ॥ ३६ ॥

हवे पांचमी सचित्त परिहार प्रतिमानो विवरो कहेछे —अथ पंचमी प्रतिमायथा.—

दोहरा — जो सचित्त भोजन तजे, पीवे प्रासुक नीर,
सो सचित्त त्यागी पुरुष, पच प्रतिज्ञागीर ॥ ३७ ॥

अर्थ — जे सचित्त भोजननो त्याग करे अने फासु जल पीए, ए रीते जे पुरुष सचित्त वस्तुनो त्याग करे ए पेहेली प्रतिमाथी एटली वधती क्रिया करे तेतो पांचमी प्रतिमानो धरनार जाणवुं ए प्रतिमा पाच मास सुधी रहे ॥ ३७ ॥

हवे छठी ब्रह्मचर्यप्रतिमानो विवरो कहेछे — अथ षष्टी प्रतिमा यथा —

चोपाई — जो दिन ब्रह्मचर्यव्रत पाले, तिथि आए निसि दीस संभाले,
गहि नौवाम्नी करे व्रत रक्षा, सो षट प्रतिमा साधक अक्षा ॥ ३८ ॥

अर्थ — सचित्तनो परिहारि तो प्रथमनीज रीते छे. अने दिवसे ब्रह्मचर्य व्रत धारे पाले अने पंचमी पर्व आवे दीवसरात्रमां एटले आठ प्रहर ब्रह्मचर्य पाले तिहां नववाडे करीने ब्रह्मचर्यवृत्तनी रक्षा करे ते पुरुष छठी प्रतिमानो साधनहार होय ते छमास लगणनी जाणवी ॥ ३८ ॥

हवे सातमी ब्रह्मचर्य प्रतिमानो विवरो कहे छेः— अथ सप्तमी प्रतिमा यथा —

चोपाई.— जो नववाडि सहित विधि साधे, निशिदिन ब्रह्मचर्य आराधे, सो सप्तम प्रतिमाधर ज्ञाता, शील शिरोमनि जगत विख्याता ॥ ३९ ॥

अर्थ.—जे श्रावक नववाड सहित जे ब्रह्मचर्यवृत्तनी विधि छे, ते विधियें ज रात दिवस ब्रह्मचर्यने आराधतो रहे . अने जे आगल छ प्रतिमानी क्रिया कही छे तेने तो लीधोज रह्यो छे. एवो जे श्रावक छे, तेतो सातमी ब्रह्मचर्य प्रतिमानो धरनार ज्ञानी पुरुष शील शिरोमणि जगतमां प्रख्याति पामेलो जाणवो ॥ ३९ ॥

हवे आंही प्रसंगथी नव वाडनो विवरो कहे छे — अथनौवाडि यथा —

कवित्तछंद.— तियथलवास प्रेमरुचि निरषन, देपरीछ भाषन मधुवेन, पूरवभोगकेलि रसचिंतन, गुरु आहार लेत चितचेन, करि सुचि तन सिंगार बनावत, तियपरजंक मध्यसुखसेन; मनमथ कथा उदरि भरि भोजन, ए नववाम्नि जान मतजेन ४०

अर्थ — ज्यां स्त्रीउ वसे त्यां वासन करवो, प्रेमरुचि राखीने स्त्रीना अंगोपाग देखवानही, दृष्टिदोषनुं निवारण करीने आडुं पडदुं आपीने स्त्रीना मधुर वचन सांभले नही, पूर्व कालमा जे भोग क्रीडा करी होय तेनो रस चितवे नही, चितना चेनने अर्थे घृतादिक सहित गरिष्ट आहार लेनही, स्नान मजनथी शरीरने पवित्र करीने शृंगार शोभा सजे नही, स्त्रीने सुवाना पलंगमां सुखसेन करे नही, मनमथ जे कंदर्प तेनी कथा कहे नही, पेट भरीने भोजन न करे, ए नव वाडो जैन मतमा जाणवी ए बहुज आनद कारी छे ॥ ४० ॥

हवे आठमी निरारंभ प्रतिमानो विवरो कहे छे.— अथ अष्टमी प्रतिमा यथा:—

दोहरा — जो विवेक विधि आदरे, करे न पापारंभ, सो अष्टम प्रतिमा धनी, कुगति विजे रन थंभ ॥ ४१ ॥

अर्थ — जे कोई श्रावक पाछली सर्व क्रिया करतो थको विवेक सहित विधि विशेष आदरे, अने पापनो आरंभ पोताना हाथे न करे तेतो आठमी निरारंभ प्रतिमानो धरनार श्रावक कुगतिना विजयनो रणथंभ रूप थई रह्यो छे ॥ ४१ ॥

हवे नवमी परिग्रह प्रतिमानो विवरो कहे छे — अथ नवमी प्रतिमा यथा —

चोपाई — जो दसधा परिग्रहको त्यागी, सुख संतोष सहज वैरागी, समरस चिंतित किंचित ग्राही, सो श्रावक नौ प्रतिमा वाही ॥ ४२ ॥

अर्थ —जे नवविध परिग्रहनो त्यागी होय, सुख संतोष सहित वेरागी होय, उपशमरसथी भीज्यो रहेतो होय, किंचित ग्राही कहेतां कईएक असन वशननु ग्रहण करनारो होय अने बीजी क्रिया सर्वे आठमी प्रतिमानी परे होय, ते श्रावक नवमी प्रतिमानो धरनार होय ए प्रतिमा नवमास लगी रहे ॥ ४२ ॥

हवे दसमी पापोपदेश त्याग प्रतिमा कहेछे— अथ दसमी प्रतिमा यथा —

दोहरा — परको पापारंभको, जो न देइ उपदेश, सो दशमी प्रतिमासहित, श्रावक विगत कलेश ॥ ४३ ॥

अर्थ — नवमी प्रतिमा लगण गृह कुटुंब परिवारने पापनो उपदेशआपे पण आहीं पापारंभनो उपदेश त्यागे ते श्रावकने दशमी प्रतिमासहित जाणिये तेज श्रावक क्लेश रहित थयो एम जाणवु ॥ ४३ ॥

हवे अग्यारमी उचितग्राही प्रतिमानो विवरो कहेछे —अथ अग्यारमी प्रतिमा यथा

चोपाई — जो सुछंद वरतें तजि डेरा, मठमंडपमहि करे वसेरा, उचित अहार उदंड विहारी, सो एकादश प्रतिमा धारी ॥ ४४ ॥

अर्थ — जे आपणां घर बार डेरा छांडीने स्वछंद वर्त्ते, अने मठ मंडपमा वास करे, आधाकर्मि आहार त्यागे, योग्य आहार ले अने उदंड व्यवहारी थइ साधु जेवु थाय, ते अगीआरमी प्रतिमनो धरनार थाय ए श्रावकनी करणी छे. ॥ ४४ ॥

हवे अग्यारमी प्रतिमानी व्यवस्था कहेछे —अथ एकादश प्रतिमा यथा —

दोहरा — एकादश प्रतिमा दशा, कही देशव्रत माहि, वही अनुक्रममूलसों, गही सु छूटी नांहि ॥ ४५ ॥

अर्थ — ए अगीआर प्रतिमानी दशा पाचमां देशविरति गुणस्थानकमांहे क

ही हवे प्रथमथी जे आगलनी प्रतिमाओ ग्रहण करेली छे तेतो अनुक्रमे ग्रहीज रह्यो छे पण तेथी छुटो नथी अने चढति चढति क्रिया करतो रहेछे४५॥

हवे अग्यार प्रतिमा धारीमां जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट, दशा कहेछेः—

अथ जघन मध्यम उत्कृष्ट कथनः—

दोहरा — षट प्रतिमा ताईं जघन, मध्यम नव परजंत, उत्तम दशमी ग्यार मी, इति प्रतिमा विरतंत ॥ ४६ ॥

अर्थ — छठी दिवश ब्रह्मचर्य प्रतिमा लगण जघन्य श्रावक होय, अने नवमी परिग्रह त्याग प्रतिमा लगण मध्यस्थ श्रावक थाय, दशमी अगीआरमी प्रतिमानो धणी उत्तम श्रावक होय एटले प्रतिमानुं वृत्तांत कह्युं इति प्रतिमा अधिकार समाप्त

हवे पांचमां गुणस्थाननी स्थिति कहेछे — अथ पंचम गुनस्थानक स्थिति.—

चोपाई — एक कोटि पूरव गनिलीजें; तामें आठ वरप घट कीजे, यह उत्कृ ष्ट काल थिति जाकी, अंत मुहुर्त्त जघन्य दसाकी ॥ ४७ ॥

अर्थ.— एक कोटि पूर्ववर्षनी संख्या कीजे तेमां आठ वर्ष घटाडीए पछी जे वर्ष रहे ते देश व्रति गुणस्थानकनी उत्कृष्टि कालस्थिति जाणवी, अने आदेशव्र त्ति गुणस्थाननी जघन्यदशानी स्थिति एक अंतर्मुहूर्त्त कालमांन होय ॥ ४७ ॥

हवे एक पूर्वकालनी वर्षसंख्या कहेछे.— अथ पूर्वसंख्या कथन.—

दोहरा — सत्तरि लाख करोड मिति, छप्पन सहस करोडि ; एते वरष मिलाइ करि, पूरव संख्या जोडि ॥ ४८ ॥

अर्थ —सितेरलाख कोटि वर्ष एटली मिती के० प्रमाणता उपर छपन हजार कोटि वर्ष मेलवीये तेवारे पूर्वकालनी जोमिना वर्ष संख्या थाय तेना७०५६००००००००००. एटला अंक थाय, लोक वेहेवारमा सात लक्ष पांचननीक्ष साव अर्ब कहिए ॥४८॥

हवे अंतर्मुहूर्त्त कालनो जघन्य उत्कृष्ट प्रमाण कहुंछुं.—अथ अंतमुहुरतप्रमान

दोहरा — अतर मुहुरत द्वै घडी, कछुक घाटि उतकृष्ट, एक समे एकावली, अं त मुहूर्त्त कनिष्ट ॥ ४९ ॥ यह पंचम गुनथानकी, रचना कही विचित्र ; अब छठम गुनथानकी, दसा कहुं सुनु मित्र ॥ ५० ॥

अर्थ.— बे घडीमा एक समय ओछो थाय, त्यारेतो उत्कृष्ट अंतर्मुहुर्त्त थाय अने एक आवलीने एक समय ते कनिष्ट के० जघन्य अंतर्मुहूर्त्त काल होय ए दिगंबर सप्रदायथी छे ॥ ४९ ॥ एम देशव्रति पांचमां गुणस्थाननी विचित्र पुरुपे रचना कहीछे हवे हे मित्र छठा गुणस्थाननी दशा कहुंछुं ते सांभलो ॥ ५० ॥

हवे प्रमत्तनामे छठा गुणठाणानी अवस्था कहुंछुं.—अथ प्रमत्तगुनस्थानक.—

दोहरा — पंचप्रमाद दशा धरे, अठाइस गुनवान, थविर कल्प जिन कल्प जुत, हे प्रमत्त गुनथान. ॥ ५१ ॥

अर्थ —धर्मरागादि पांच प्रमादनी दशा धारेछे. अने साधुना अठ्यावीस गुण धारे छे आही अठ्यावीस गुण कह्या ते दिगंबर संप्रदायथी थिवर कल्पथी थिवरनो आचार अने जिनकल्पथी जिननो आचार तेणेकरी युक्त छे एम प्रमत गुण स्थान होय

हवे पाच प्रमादना नामनी गणती करेछे — अथ पच प्रमाद यथा —

दोहरा — धरमराग विकथा वचन, निद्राविषय कषाइ, पंच प्रमाद दसासहित, परमादी मुनि राइ ॥ ५२ ॥

अर्थ —धर्मउपर राग राखे, विकथा वचन बोले, निद्रासेवे, रस ते इंद्रिप्रमुखना विषय सेवे, कषाय सेवे, ए दशासहित जे मुनिराज होय ते प्रमादी कहीए ॥ ५२ ॥

हवे श्री मुनिराजना अठावीस मूल गुण कहेछे —अथ अठाइस मूलगुन कथन

सवैया इकतीसा — पंच महाव्रत पाले पंच सुमती सभाले, पच इंद्रि जीति नयो भोगी चित चेनको, पट आवशक क्रिया दर्वित भावित साधे, प्रासुक धरामे एक आसन है सेनको, मजन न करे केसलुंचे तन वस्त्र लुंचे, त्यागे दतवन पे सुगध स्वास चेनको, ठाढो करपे अहार लघु भुजी एकवार, अठाइस मूल गुन धारी जती जैनको ॥ ५३ ॥

अर्थ — सवाउ पाणाइ वायाउवेरमण इत्यादिक पच महाव्रत पाळे इर्यासुमति प्रमुख पाच सुमति संभाळीने करे अने पाच इंद्रिनो जीतनार एटले जेने इंद्रियोनाविषय सेवता चित्तमा चेन नउपजे, तेथी विपयोनो त्यागी थाय सामायक प्रमुख छ आवश्यकक्रिया छे, ते द्रव्यथी पण साधे अने भावथी पण साधे ए २१ गुण थया फासू पृथ्वी प्रमुख सय्यामा प्रमाणोपेत एक शयन आसन राखे ए २२ गुण थया स्नान न करे केश लोच करे शरीरविषे वस्त्रनो त्याग करे दांतण नकरे स्वासवदननो सुगध मूखसुण प्रमुख नले, उभो उभो अहारकरे लघुता के० अंतप्रात आहार भुजे तेपण एक टेक खाय ए अठावीस मूल गुणनो धरनार जैन दर्शनी जती होय ॥ ५३ ॥ ए दिगमबर सप्रदायथी गुण कह्या छे.

हवे पाच महाव्रत कहेछे — अथ पच महाव्रत यथा —

दोहरा — हिंसा मृषा अदत्त धन, मैथुन परिग्रह साज,
किंचित त्यागी अनुव्रती, सवि त्यागी मुनिराज. ॥ ५४ ॥

अर्थ — जीवघात असत्य चोरी मैथुन परिग्रहसामग्री ए पांचे आश्रवने किंचित त्यागे ते अणुव्रती श्रावक कहिए अने सर्वथा त्यागे ते मुनिराज कहिए॥५४॥
हवे पाच प्रकारनी समिति एटले सावधानपणुं कहेछे —अथ पंच सुमति यथा.—

दोहरा — चले निरखि भाषे उचित, भखे अदोष अहार,
लेइ निरखि मारे निरखि, सुमति पंच परकार ॥ ५५ ॥

अर्थः— जोईने चाले ते इर्या सुमति, योग्य वचन बोले ते भाषा सुमति, दूषणरहित आहार लीए ते एषणा सुमति, वस्त्र पात्र निरखीने ले ते अदान सुमति मलमुत्रादिक जोइने परठवे ते पारीठावणीया सुमति, ए पांच प्रकारे सुमति॥५५॥
हवे जे अवश्य करीए ते आवश्यक कहीए तेना नाम कहेछे, अथषमावश्यकयथा

दोहरा — समता वंदन थुति करन, पडिकमनो सज्झाउ, काउसग्ग मुद्राधरन ए षडावसिक भाउ ॥ ५६ ॥

अर्थ.— सामायक धरवी १ गुरुवंदना करवी २ चोवीशजिनेश्वरनी स्तुति करवी ३ अतिचारथी निवर्त्तनाते पडिकमना ४ स्वाध्याय करवी ५ काउसग्गमुद्रा धरवी ए छ आवश्यक कहीए. ॥ ५६ ॥
हवे थिवर कल्प अने जिनकल्पनो भेद कहेछे —अथ स्थविर कल्पी जिनकल्पी —

सवैया इकतीसा — थविर कलपी जिनकलपी दुविध मुनि, दोउ वनवासी दोउ नगन रहत है, दोउ अठाईस मूल गुन के धरैया दोउ सरव तियागी व्हे विरागता गहत हैं, थविर कलपिते जिन्हके सिष्य साषा होई,बेठके सभामें धर्म देसना कहत है, एकाकी सहज जिन कलपी तपस्वी घोर, उदेकी मरोरसुं परिसह सहत है ॥ ५७ ॥

अर्थ.— थिवर कल्पी अने जिन कल्पी ए बे प्रकारना मुनिश्वर होय ए बे वनवासमां रहे. अने बेहु नागारहे ए बे अठावीस मूल गुणना धारनार ए बे सर्वस्व के० सर्व परिग्रहना त्यागी थईने वैराग्भाव धरे एवा कह्या पण ते बेमां स्थिवर कल्पी ते कहीए जेने शिष्य शाषा होय, अने सभामा बेसिने धर्म देशना करे अने जे जिन कल्पी होय ते एकाकी होय घोरतपस्वी होय अने कर्म उदयनी मरोरथी जे परिसह उपजे छे ते सहन करे ए दिगमबर सप्रदायिक वचनो छे ॥५७॥
हवे प्रसंगथी बावीस परिसह साधुने सहेवा योग्य तेना नाम कहेछेः—

अथ बावीस परीसह यथा कथनः—

सवैया इकतीसा —ग्रीषममे धूप थिति सीतमे अंक पचीत, भूपेधरेधीर प्यासे नीर न चहतु है, दंस मसकादिसों न डरे भूमि सैन करे,वध बंध वियामें अडोल व्हे र

हतु है, चर्या दुख जरे तिन फासनसों न थरहरे, मल दुरगंधकी गिलान न गहतु है, रोगनको न करे इलाज एसो मुनिराज, वेदनीके उदे ए परीसह सहतु है ॥ ५८ ॥

अर्थ:— उष्ण कालमां तडकामां आताप सहे, शीत कालमां शीत सहेवाथी चित्तमा कपे नही, जुख्यो छतां धीरज राखे अनेपणी ग्रहे नही प्यासवत थको स दोष पाणीनी चाहना करे नही नागा शरीरने मांस मसकादि करडे तोपण मरे नही धरतिये सय्या करे मरणांत कष्ट आवे जातजातना वध बंधनादिक कष्ट तेथी अमोल रहे पण चलायमान न थाय चर्या के० विहारनुं दुःख जरे तहरीले विहारमा तथा सयनासनमा कठोर त्रण स्पर्शथी थरहरे नही मेलनी जे दुर्गंध छे तेथी तेनी दुगंछा न करे रोगनी वेदना सहे पण तेनो इलाज न करे एवा मुनिराज होय ते वेदनीय कर्मना उदयथी ए इग्यार परिसह उपजे छे तेने सहे छे ॥ ५८ ॥

कुंडलीया — एते संकट मुनि लहे, चारित मोह उदोत ; लज्जा संकुच दुःख धरे, नगन दिगंबर होत, नगन दिगंबर होत, श्रोत रति स्वाद न सेवे, त्रियसनमुख हग रोकि, मान अपमान न वेवे, थिर व्हे निर्जय रहे, सहे कुवचन जग जेते, जिक्षुक पद संग्रहे, लहे मुनि संकट एते ॥५९॥ दोहरा —अल्प ज्ञान लघुता लखे मति उतकरप विलोइ, ज्ञानावरन उदोत मुनि, सहे परीसह दोइ ॥ ६० ॥ सहे अदरसन दुरदसा, दरसन मोह उदोत, रोके उमग अलानकी, अंतरायके होत.

अर्थ — हवे चारित मोहनीना उदय थवाथी मुनिराज संकट सहेछे ते संकटनी गणतरी कहेछे नगन दिगंबर थई जे लज्जाथी संकोच दुःख उपजे छे तेने धरे एटले संकटथी न जागे १ वली नगन दिगंबर थइ श्रोत के० इंद्रीयना रति स्वादने न सेवे, २ स्त्रीना हाव जावथी चुके नही ३ कोइ सत्कार करे कोइ असत्कार करे तेउपर विषम जाव लावे नही ४ कोइ जयथी जागे नही स्थिर रहे निर्जय रहे ५ जगतमा जे कइ कुवचन छे आक्रोसना वचन छे ते सर्व सहन करे ६ जिक्षा ग्रहणथी जिक्षुक पद संग्रहे पण ते संकटथी लाजे नही ए सात संकट चारित्र मोहनीना उदयथी मुनि लहेछे ते सहन करे छे ॥ ५९ ॥ हवे जणाविना अल्पज्ञानथी सर्वमा पोतानी लघुता थाय ते सहन करे पोताना मतिना उत्कर्षथी उत्कृष्टपणु जोइने गुरुता सहे; एवी ज्ञानावरणी कर्मनो उदय थातां अज्ञान परिसह अने प्रज्ञापरिसह ए बे परिसह उपजे छे ते सहन करे ॥६०॥ दर्शन मोहनीयना उदय थवाथी सम्यक् दर्शननी मलिनता उपजे तेनी दुष्ट दशा सहे पण सम्यक् दर्शनथी न जागे अंतराय कर्मनो उदय थवाथी जे

लाजनो उमंग रोकी रहे तेथी अलाजने सहन करे ए बावीस परिसह कह्या॥६१॥
हवे जे कर्मथी जे परिसह उपजे ते कहे छे अथ बावीस परिसह विवरनन.—

सवैया इकतीसा.— एकादश वेदनीकी चारित मोहकी सात, ज्ञानाबरनीकी दोइ एक अंतरायकी; दंसन मोहकी एक द्वाविसति बाधा सब, केई मनसाकी केइ वाकी केई कायकी, काहुकों अलप काहूसो बहोत उनी साता, एकही समेमें उठे आवे असहायकी, चर्याथित सज्जामांहि एक सीत उस्नमांहि, एक दोइहोहि तीनि नांही समुदायकी ॥ ६२ ॥ दोहरा — नानाविध संकटदशा, सहिसाधे शिव पंथ, थिविरकल्प जिन कल्पधर, दोऊ सम निगरथ ॥ ६३ ॥

अर्थ.— अग्याआर संकट तो वेदनी कर्मना उदयथी उपजे छे चारित्र मोहनीय कर्मथी सात बाधा उपजे छे ज्ञानावरणनी करेली वे बाधा उपजे छे अंतरायनी कीधी एक बाधा उपजेछे दर्शन मोहनीनी करेली एक बाधा उपजे छे, सर्वे मली बावीस बाधा थइ ते बावीसने परिसह कहीए बावीस बाधामां कोई मननी छे कोइ वचननी छे कोइ कायानी छे आ बावीस बाधामाहेली कोइने अल्प एक वे उपजे कोइने बहु उपजे तो एकज समे ओगणीस बाधानुं उदय थाय तेमा असहायनी के० जे बाधा बाधासाथेज बोलेछे पण साथे बने नही त्यारे तेमां एकज बाधा एक समे थई ते असहायनी कहीए. जेम चर्यापरिसह चालवाथी उपजे छे निषेद्या परिसह रहेवाथी उपजेछे शय्या परिसह रहेवाथी उपजे छे. अने शितबाधा तथा उष्ण बाधामा एक समयमा एकज बाधा उपजे तेथी आ पांच परिसहमां एक अथवा वे अथवा त्रण एक समयमा थाय पण समुदायरूप पांचे न थाय. ॥ इति परिसह अधिकार समाप्त थयो इति परिसह अधिकार.—

अर्थ.— एवां नाना प्रकारना संकट छे तेनी दशा सहन करीने मुक्तिमार्ग साधे, तेथी थिविर कल्पना धरनार अने जिन कल्पना धरनार ए बेहु निग्रंथ समान छे

हवे थिवर कल्पमा अने जिनकल्पमां कंइ तफावत छे ते कहेछे.—

अथ स्थिवरकल्प जिनकल्प तारतम्य कथन.—

दोहराः— जो मुनि संगतिमें रहे, थविरकल्पि सो जानि; एकाकी जाकी दसा, सो जिनकल्प बपानि ॥ ६४ ॥ चोपाई—थविर कलप मुनि कछुक सरागी, जिन कलपी महांत विरागी, इति प्रमत्त गुनथानक धरनी, पूरन भई जथारथ वरनी.६५

अर्थ.— जे मुनीश्वर गछना गणनी संगतमां रहेछे, तेतो थिवरकल्पी जाणीए जेने गणनी निश्रा नथी जेनी एकाकी दशा छे तेतो जिनकल्पी कहिए ॥ ६४ ॥

ए वेउ निर्ग्रंथमा थिवरकल्पनो धरनार कइक सराग दशामा छे, अने जे जिनक ल्पी छे ते महावैरागी छे एटले प्रमत्त गुणठाणानो जे जूमिका बाधी अने यथार्थ साचपणे वरणी ते पूर्ण थई ॥ ६५ ॥

हवे सातमा गुणस्थाननु वर्णन करेछे — अथ सप्तम गुनथानक वर्ननं —

चोपाई — अब बरनो सत्तम विसरामा, अप्रमत्त गुनथानक नामा, जहा प्रमाद क्रिया विधि नासे, धर्मध्यान थिरता परगासे ॥ ६६ ॥ दोहरा —प्रथम करनचारित्रको, जासु अंत पद होइ, जहा अहार विहार नंहि, अप्रमत्त है सोइ ॥ ६७ ॥

अर्थ -- मुक्तिरूप मंदिरमा चढतां ते सातमो विसामो छे, अने अप्रमत्त गुणस्थानक जेनुं नाम छे ते हवे वखाणे छे जे गुणस्थानमा धर्मरागादिकेकरी प्रमादनी विधि नासेछे, जे पूर्वला गुणस्थानकमां धर्मध्यान चचल हतो ते आंही स्थिरपणे प्रकाश करेछे ॥ ६६ ॥ प्रथम गुणस्थानना अंतपदमा एटले छेला समयमा चारित्रमोहनी कर्मने जेदवानो यथा प्रवृत्तिनामे प्रथम करण थयुं, आंही धर्मध्याननी स्थिरता एवी छे के ज्या अहार विहार क्रिया नथी ते अप्रमत्त गुणस्थानक होय ए वचन दिगंबर सप्रदायनुं छे. ॥ ६७ ॥

हवे आठमा गुणस्थानकनुं वर्णन कहेछे -- अथ अष्टम गुनस्थानक वर्नन --

चोपाई -- अब बरनो अष्टम गुनथाना, नाम अपूरव करन वखाना, कछुक मोह उपसम करि राखे, अथवा किंचित क्षयकरि नाखे ॥ ६८ ॥ जो परिनाम न ये नहि कबही, तिन्हको उदो देखिये जबही, तब अष्टम गुनथानक होई, चारित करन दूसरो सोई ॥ ६९ ॥

अर्थ — जेनु नाम अपूर्व करण वखाणीए छीए, हवे आंही श्रेणी चढवामा जे उपशमीक थको चढेछे तेतो आंही कइक मोहने उपशमावी राखेछे, अथवा जे क्षपक थको चढे छे तेतो आंही चारित्र मोहनो कंइक क्षय करि नांखेछे ॥ ६८ ॥ एवु जे परिणाम पेहेलां कोइ कालमा थयु नथी ते परिणामनुं ज्यारे प्रगट पणुं देखियेछीए, त्यारेतो आठमुं गुणस्थानक होय तेने छेले समय चारित्र मोहनीय कर्म जेदवाने अपूर्व करण नामे बीजुं करण होय तेनुं नाम निवृत्ति पण छे ॥६९॥

हवे नवमा गुणस्थाननु वर्णन करेछे — अथ नवम गुणस्थानक वर्णन —

चोपाई — अब अनवर्त्ति करन सुनु भाई, जहा भाव थिरता अधिकाई, पूरव भाव चलाचल जेते, सहज अमोल भए सब तेते ॥ ७० ॥ जहा न भा

व चलटि अध आवे; सो नवमो गुनथान कहावे, चारित मोह जहां बहु छीजा; सो है चरन करन पद तीजा ॥ ३१ ॥

अर्थ – प्रथम अनिवृत्ति करण गुणस्थाननो व्यवहार कहुं छुं ते सांभळो. जे गुणस्थाननेविषे स्थिरता भावनी अधिकाई छे. अने पूर्वभाव कषायना उदयथी जेटला चलाचल भाव होय तेवा सर्वे आंही सहज अभोल थया छे ॥ ३० ॥ ज्यां भावथी चढीने फरी तिहांथी पडी नीचेना गुणस्थानके न आवे एवो अनिवृत्ति कहेवाय, आंही अनिवृत्तिनो परमार्थ सिद्धांतमां बीजीरीते छे, ते तो नवमुं गुणस्थान कहेवाय, ज्यां चारित्र मोहनीय कर्म घणुंज त्रुटी गयो छे तेज ए चारित्र मोहनीय कर्म भेदवानो त्रीजो अनिवृत्ति करण थयो. ॥ ३१ ॥

हवे दशमु गुन स्थानक कहु छुंः– अथ दशम गुनथानक वर्ननं –

चोपाईः–कहौं दशम गुन थान दुसाखा, जहां सूछम शिवकी अभिलाषा, सूछम लोभ दसा जहाँ लहिए, सूछम संपराय सो कहिए. ॥ ३२ ॥

अर्थ – जिहां उपशम्यक अने क्षपक एवी बे शाखा वर्ते छे जे गुण स्थानमां सूक्ष्म शिव पदवीनी अभिलाषा छे. एवी ज्यां सूक्ष्म लोभ दशा पामिये, ते सूक्ष्म संपराय कहीए, संपराय एवु कषायनुं नाम छे ॥ ३२ ॥

हवे अग्यारमुं उपसंत मोह नामे गुणथान कहुंछुं –अने तेनी प्रभुतानुं प्रमाण कहुंछु अथ एकादशम गुनथान वर्नन –

चोपाईः--अब उपसंतमोह गुनथाना, कहो तासु प्रभुता परवाना, जहां मोह उपसमे न भासे, जथाख्यात चारित परगासे ॥ ३३ ॥ दोहरा.-- जाहि फरसके जीव गिरि, परे करे गुन रद्द, सो एकादसमी दसा, उपसमकी सरहद्द ॥ ३४ ॥

अर्थ.– जे गुणस्थानमां मोहनीय कर्म सर्वे उपशमी जाय पण उदयमां भासे नही अने यथाख्यात चारित्रनो प्रकाश थईने जेवुं निसंग आत्मानु सहज रूप छे तेवु प्रगटेछे ॥ ३३ ॥ जे उपशम श्रेणि चढिने अने जे गुणस्थानने फरसीने अवश्यज जीव तिहांथी पडे अने जे गुण प्रगटे ते सर्व रद करे, ए अगीयारमी दशा थई, एटले उपसंत मोह गुणस्थान थयु एटले उपशमनी मर्यादा थई ३४॥

हवे बारमा क्षीणमोह गुनस्थाननुं वर्णन करुंछुं--अथ द्वादशम गुनथानक वर्ननं.–

चोपाईः– केवल ज्ञान निकट जहाँ आवे, तहां जीव सब मोह षिपावे, प्रगटे यथाख्यात परधाना, सो द्वादशम छीन गुन थाना ॥ ३५ ॥

अर्थः-- जे गुणस्थानने केवल ज्ञान निकट आवे छे. अने त्यां जीव सर्व मो

हनीय कर्म खपावीने बीजा पण घाती कर्म सर्व खपावे, अने ज्यां प्रधान उत्कृष्ट यथाख्यात चारित्र प्रगटे एवा प्रकारथी जे छे ते बारमो क्षीण मोह गुणस्थानक कहीए॥७५
हवे आंही लगण पाछला छगथी मांमी सात गुणस्थानमां उपशम श्रेणीनी अपेक्षाये जेकाल स्थिति छे ते कहेछे -अथ षट गुनथानक स्थितिकथन उपशम श्रेणिक अपेक्षा

दोहरा -- षट सत्तम अठम नवम, दश एकादश बार, अंतर मुहुरत एक वा, एक समे थिति धार. ॥ ७६ ॥ छीन मोह पूरन नयो, करि चूरन चित चाल; अब सजोग गुण थानकी, बरनो दसा रसाल ॥ ७७ ॥

अर्थ --छठुं, सातमु, आठमु, नवमु दशमु, अग्यारमु, बारमु, ए सात जे गुणस्थान छे तेनी स्थिति एक अंतर मुहूर्त्तनी छे अथवा सात गुनस्थाननी जघन्य एक समयनी स्थिति धारो ॥७६॥ मोहमय जे चित्तनी चाल हती तेनुं चूर्ण करीने क्षीण मोह गुण स्थानक पूरण थयु हवे सजोगीगुन थानकनी रसाल दशानुं वर्णन करुंछुं ॥७७॥

हवे तेरमा गुणथाननुं वर्णन करुंछुं— अथ त्रयोदशम गुन स्थानक वर्नन -

सवैया इकतीसा -- जाकी दुख दाता घाती चोकरी विनसगई चोकरी अघाती जरी जेवरी समान है, प्रगट नयो अनंत दसन अनत ज्ञान, वीरज अनत सुख सत्ता समाधान है, जामें आउ नाम गोत वेदनी प्रकृति ऐसी एक्यासी चोरासी वा पंचासी परवान है, सो है जिन केवली जगत वासी नगवान, ताकी जो अवस्था सो सजोगी गुन थान है ॥ ७८ ॥

अर्थ— जे आत्म गुणना घातना करनार एवा ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी, मोहनीय, अंतराय, ए घाती कर्मनी चोकडी दुख दाता हती ते जेनी विनाश थई गई, अने जे आत्माना गुणनो घात न करे एवा वेदनी, आयु, नाम, गोत्र, ए चार अघाति कर्मनी चोकडी रही ते बलेली दोरी समान रही छे. दर्शनावरणीय कर्मक्षय थयाथी जिहा अनत केवल दर्शन प्रगट थयो अने ज्ञानावरणी क्षय थयाथी जिहा केवल ज्ञान प्रगट्युं. अतराय कर्म क्षय थयाथी अनंत वीर्य प्रगटथो: मोहनीय कर्म क्षय थयाथी अनत सुखसत्तामय अने समाधि प्रगटी अने जेमा आयु कर्म,नामकर्म, गोत्रकर्म, वेदनीकर्म, एचारनी सर्व ८५ प्रकृति रही छे तेमां कोईना आहारिक शरीर आहारक अगोपाग, आहारक संघातन, आहारक बधन,तथा जिननामविना,ऐसी प्रकृती रही छे अने कोईने जिननाम सहित छे तेथी (८१) रही छे तथा काईने अहारक चतुष्कछे अने जिननामनथी माटे ८४ छे तथा कोईने जिननाम सहित पचासी प्रकृतिनुं प्रमान छे. एवी दशानो भरनार जे छे ते

जिन होय केवली होय जगतनुं भगवान होय तेनी जे अवस्था छे तेनेज सयोगी गुणस्थानक कहीए. ॥ ७८ ॥

हवे सजोगी गुणस्थानकवालानी मुद्रा देखाडेछे:—

सवैया इकतीसा.-जो अडोल परजंक मुद्रा धारी सरवथा अथवा सुकाउसग्ग मुद्रा थिरपाल है; खेत सपरस कर्म प्रकृतिके उदे आए, बिना डग भरे अंतरिक्ष जाकी चाल है; जाकी थिति पूरव करोडि आठवर्ष घाट, अंतरमुहुरति जघन्य जग जाल है, सो है देव अठारह दूषन रहित ताको बनारसी कहे मेरी वंदना त्रिकाल है.७७

अर्थ.— जे अडोलपणे सर्वथा प्रकारे पर्यंक मुद्रा धारी होय एटले पद्मासनवालीने सदा सर्वदा बेसेछे, अथवा काउसग्गमुद्रा स्थिरपणे पाले ए वचन दिगंबर संप्रदायनुं छे, अने क्षेत्र, स्पर्श रूप जे कर्म प्रकृति छे तेनो उदय थयाथी केवली विहार करेछे पण बीजा पुरुषनीपठे चाले नही पण केवली भगवुं भलाविनाज आकाशमां अधर चाले चाले ए परूपणा दिगंबर संप्रदायनी छे; जे सयोगी गुण स्थाननी स्थिति आठ वर्षे न्यून पूर्वकोटी वर्षनी थाय केमके जन्मथी आठ वर्षलगी केवलज्ञान उपजतो नथी,अने आ गुनथानानी जघन्यस्थिति एक अंतरमुहूर्त्तनी थाय जगतजालमा एटलुंज रहेवु होय आंही जे एवी अवस्थानो धरनार होय तेतो अढार दूषण रहित देवाधिदेव थाय बनारसीदास कहेछे के तेने मारी त्रिकाल वंदना छे॥७७

हवे अढार दूषणनां नाम कहेछेः— अथ अठारस दोष कथनः—

कुंडलीयाः—दूषन अठारह रहित, सो केवलि संजोग; जनम मरण जाके नहीं, नहिं निंद्रा भय रोग, नहिं निंद्रा भय रोग, सोग विस्मय न मोहमति; जरा खेद परस्वेद, नाहिं मद वैर विषे रति; चिंता नांही सनेह, नाहिं जह प्यास न भूषन, थिर समाधि सुख सहित, रहित अठारह दूषन ॥ ८० ॥ कुंडलीया.— बानी ज हा निरक्षरी, सप्तधातु मल नांहि, केस रोम नख नहि बढे, परम उदारिक मांहि, परम उदारिक मांहि, जांहि इंद्रिय विकार नसि, जथाख्यात चारित प्रधान थिर सुकल ध्यान ससि ; लोकालोक प्रकास, करन केवल रजधानी, सो तेरम गुनथान, जहां अतिशय मयवानी. ॥ ८१ ॥ दोहरा.—यह सजोग गुनथानकी, रचना कही अनूप, अब अयोग केवल कथा, कहों यथारथ रूप ॥ ८२ ॥

अर्थ.— जे अढार दूषणथी रहित ते सजोगी केवली कहिए जेने जन्म नथी मरण नथी, निद्रा नथी, भय नथी, रोग नथी, सोग नथी, विस्मय नथी, मोहमति नथी, जरानो खेद नथी, परसेवो नथी १० मद नथी ११ वैर नथी १२ विषय

उपरति नथी १३ चिंता नथी १४ स्नेह नथी१ ५ जेने तरस लागे नही१६ भूप लागे नही १७ अस्थिरपणुं नथी १८ तेथी समाधिसुख सहित स्थिररूप थायछे, एवा अढार दूषण रहित छे. ए अढार दोष दिगंबर संप्रदायथी छे सिद्धांत संप्रदायमा १८ दूषण जुदा कह्या छे. ॥ ८० ॥ आ गुणस्थाननी अवस्थामां निरक्षरी वाणी होय ने मस्तकमा अहंकार ध्वनीरूप होयछे, अने शरीरमा सात धातु अने सात धातुना मल थता नथी. ए दिगंबर संप्रदायथी कहेलुं छे अने जेना शरीरमां केश, रोम, नखनी वृद्धि थती नथी, एतो उदारीक शरीरमा पण एटला दोष नथी, तेथी देवाधिदेव परम उदारीक शरीरमाज कहिए, ज्यां जेने इंद्रियविकार नासी गयाछे, ने ज्यां प्रधान उत्कृष्ट यथाख्यात चारित्र प्रगट थयुं छे, ज्या शुक्ल ध्यानरूप चद्रमा स्थिररूप थयोछे. अने ज्यां लोकालोकना प्रकाशनी करनारी केवल ज्ञानरूप राजधानी बिराजी रही छे, ते तेरमुं संयोगी गुणस्थानक कहिए, ज्या पातरीश अतिशय मयवाणी छे ॥८१॥ए सयोगी गुणथाननी सर्वथी अधिक अनूप रचना कहीछे हवे अयोगी केवलीनी दशा यथार्थरूप के० जेवीरीते बनीछे तेवी रीतनी कहुंछुं ८२ हवे चौदमा अयोगी गुणस्थाननुं वर्णन करुंछुं अथ चतुर्दश गुनस्थानक वर्ननं

सवैया इकतीसा – जहां काहू जीवको असाता उदे साता नाहि, काहूको असाता नांहि साता उदे पाइये, मन वच कायसों अतीत भयो जहां जीव जाको जस गीत जग जीत रूप गाइये, जामें कर्म प्रकृतिकी सत्ता जागी जिनकीसी, अंतकाल देसमेमें सकल खिपाइये, जाकी थिति पंच लघु अक्षर प्रवान सोइ, चौदहो अयोगी गुन थाना ठहराइये ॥ ८३ ॥

अर्थ – जे गुणस्थानमा कोई जीवने अशाता वेदनीनो उदय छे अने शाता वेदनीयनो उदय नथी, एटले शाता वेदनी सत्तारूप छे. अने कोइने शाता वेदनीनो उदय छे, अने अशाता इ स्वरूप उदयमां नथी, एटले सत्तामा छे अने ज्या सैलेसी करण करीने मनोयोग, वचनयोग, काया जोगथी जीव अतीत एटले रहित थयो. जेना जशनु वर्णन जगतने जीतवा रूप गाइए छीए एटलो छे अने जेमा जोगी जन केसी के० सजोगी केवलीनी रीते कर्म प्रकृतिनी सत्ता रहिछे. ते अतकालमा अंतना बे समयमा समस्त खपावेछे अने जे गुणस्थानकनी स्थिति पंच लघु अक्षर अ, इ, उ, ऋ, लृ ए अक्षर कहेतां जेटलो काल प्रमाण होय एटलो काल प्रमाण स्थिति छे तेज चौदमुं अयोगी ठेरावीए. ॥ ८३ ॥ इति श्री चतुर्दश गुणस्थानक अधिकार बालावबोधरूप समाप्त

दोहरा:— चौदह्गुनथानक दशा, जगवासी जियभूल; आश्रव संवर भाव हे, बंध मोक्षके मूल. ॥ ७४ ॥

अर्थ.— जगतवासी जीव अशुद्ध थको भूलमां पड्यो छे तेनी ए चौद गुण स्थानकथी चौद दशा थाय छे. आंही तत्व दृष्टिमा जोतां जे आश्रव संवर भाव छे तेज बंध मोक्षना मूल छे; एटले आश्रव बंधनु मूल छे अने संवर मोक्षनुं. मूलछे हवे आश्रव संवरनी जुदी जुदी अवस्था कहेछे. अथ आश्रव संवर व्यवस्था कथन.

चोपाई— आश्रव संवर परनति जोलों, जगत निवासि चेतना तोलों; आश्रव संवर विधि विवहारा; दोऊ भवपथ शिवपथ धारा.॥७५॥आश्रव रूप बंध उतपाता, संवर ज्ञान मोष पद दाता, जा संवरसों आश्रव छीजे, ताकों नमस्कार अब कीजे.७६

अर्थः— ज्यां सुधी आश्रव संवरनुं परिणाम परिणमे छे, त्यासुधी चेतन रूप ईश्वर जगत निवासी थई रह्योछे. आंही आश्रवनी विधि छे ते व्यवहारमां छे. अने संवरनी विधि छे ते पण व्यवहारमा छे ए बन्नां के०बे व्यवहार पंथ ते संसार मार्गनी धारा अने मोक्ष मार्गनी धारा पण छे. ॥७५॥संसारमा जे बंधरूप उत्पात छे ते तो आश्रवरूप छे. अने जे मोक्षपदनो दाता ज्ञान छे ते संवर रुप छे. जे संवरथी आश्रव क्षय थयो होय तेने हवे नमस्कार करीए छीए. ॥ ७६ ॥

हवे ग्रंथनी अंते मंगलाचरण रूप संवर रूपी ज्ञानने नमस्कार करेछेः—

सवैया इकतीसा:—जगतके प्रानी जीतरह्यो गुमानी एसो, आश्रव असुर दुःख दानी महा भीम हे; ताको परताप खंडिवेको परगट भयो, धर्मको धरैया कर्म रोगको हकीम हे; जाके परभाव आगे भागे परभाव सब, नागर नवल सुख सागरकी सीम हे; संवरको रूप धरे साधे शिवराह एसो, ज्ञानी पातसाह ताकों मेरी तसलीम हे ७७

अर्थः— जगतना वासी जेटला प्राणी छे. ते सर्वेने जीतीने जे गुमानी थई रह्यो, एवो आश्रवरुप जे असुर छे. ते महा दुःखदायक छे. तेनो प्रताप खंडवा ने जे ज्ञानरूप वादशाह प्रगट थयो छे ते केवो छे के धर्मनो धारण करनारो छे. अने कर्मरूप रोग गमाववानो हकीम छे जे ज्ञान वादशाहनां प्रभाव आगळ काम क्रोधादिक राग द्वेषरुप पुद्गलना भाव छे ते सर्व नाशी जाय छे; अने नागर के०च तुर छे, जे पेहेलां कोइ वारे न पामेलो एवो जे नवो सुख समुद्र ते लगण जेनी सीम छे. संवररूपनो धरनार अने मुक्तिमार्गनो साधनार एवो जे ज्ञानरूपी वादशाह छे. तेने माहारी सलाम छे. एटले नाटक करीने ज्ञान बादशाहने मुजरो कीधो छे. ॥ ७७ ॥

इति श्री समयसार नाटक बालावबोधरूप अर्थ सहीत समाप्त थयां.

चोपई –नयो ग्रंथ संपूरन नाषा, बरनी गुनथानककी साषा; बरनन और कहां लौ कहिये, जथा सकति कही चुप व्हे रहीये ॥७७॥ लिहए अरन ग्रंथ उदधि का; ज्यो ज्यो कहिये त्यो त्यो अधिका, ताते नाटक अगम अपारा; अलप कवीसुरकी मतिधारा ॥ ७९ ॥ दोहरा – समयसार नाटक अकथ, कविकी मति लघु होइ, ताते कहत बनारसी, पूरन कथे न कोइ ॥ ८० ॥

सवैया इकतीसा –जेसे कोउ एकाकी सुभट पराक्रम करि जीते केही भांतिचक्री कटक सो लरनो, जेसे कोउ परविन तारू भुज भारु नर, तरे केसे स्वयंभूरमन सिधु तरनो, जेसे कोउ उद्दिमी उछाह मनमाहि धरे, करे केसें कारज विधाताको सो करनो; तेसे तुछ मती मोरी तामें कविकला थोरी, नाटक अपारमे कहांलो याहि बरनो ? ८१

अथ जीव महिमा कथन --

सवैया इकतीसा -- जेसे वटवृक्ष एक तामें फल हे अनेक फल फल बहू बीज बीज बीज वट है, वटमांहि फल फलमाहि बीज तामे वट कीजे जो विचार तो अनतता अघट है, तेसे एक सत्तामे अनंत गुण प्रजा प्रजामे अनंत नृत्य नृत्यमें अनंत ठट है, ठटमे अनत कला कलामें अनंत रूप, रूपमे अनंत सत्ता एलो जीव नट है ॥ ८२ ॥ दोहरा – ब्रह्म ज्ञान आकाशमे, उडे समति षग होइ, जथा सकति उद्दिम धरे, पार न पावे कोइ ॥ ८३ ॥ चोपाई.-- ब्रह्म ज्ञान नभ अंत न पावे, सुमति परोछ कहालो धावे, जिहि विधि समयसार जिनि कीनो, तिन्हके नाम धरे अब तीनो ॥ ८४ ॥

अथ कवि त्रयी कथन नाम --

सवैया इकतीसा -- कुदकुदाचारज प्रथम गाथा बद्ध करे, समेसार नाटक विचारी नाम दयो है, ताहीके परपरा अमृतचद भये तिन्ह, संसकृत कलस समारि सुख लयो है, प्रगटयो बनारसी गृहस्थ सिरीमाल अबकिये हें कवित्त हिए बोध बीज वयो है; शबद अनादि तामे अरथ अनादि जीव, नाटक अनादियो अनादिहिको भयो है

अथ कविव्यवस्या कथन -

चोपाई – अब कछु कहुं यथारथ वानी, सुकवि कुकविकी कथा कहानी ; प्रथम सुकवी कहावे सोई, परमारथ रस वरने जोई ॥ ८६ ॥ कलपित वात हिए नहिं आने, गुरु परपरा रीति बखाने, सत्यारथ सेली नहि छंडे, मृषा वादसों प्रीति न मंडे ॥८७॥ दोहरा – छंद सबद अक्षर अरथ, कहे सिद्धात प्रवान, जो इहि विधि रचना रचे सो हे सुकवि सुजान ॥ ८८ ॥

चोपाईः-- अब सुनु कुकवि कहूं हे जेसा; अपराधी हिय अंध अनेसा, मृषा भाव रस बरने हितसों, नई उकति नहि उपजे चितसों ॥ ९९ ॥ ख्याति लाभ पूजा मन आने; परमारथ पथ भेद न जाने; बानी जीव एक करि बूझे, जाको चित जड ग्रंथि न सुझे ॥ १०० ॥ बानी लीन भयो जग डोले, बानी ममता त्यागि न बोले, हे अनादि बानी जगमांही, कुकवि बात यह समुझे नांही. ॥ १०१ ॥

अथ बानी व्यवस्था कथन –

सवैया इकतीसाः– जेसे काहू देसमें सलिलधार कारंजकी, नदीसों निकसि फिरि नदीमें समानी हे, नगरमें ठौर ठौर फेली रही चहूं ओर, जाके ढिग बहे सोई कहे मेरो पानी हे, त्योंही घट सदन सदनमें अनादि ब्रह्म, बदन बदनमें अनादिहींकी बानी हे; करम कलोलसों उसासकी बयारि बाजे, तासो कहे मेरी धुनि एसो मूढ प्रानी हे. ॥ १०२ ॥ दोहरा.– एसे मूढ कुकवि कुधी, गहे मृषा पथ दोर ; रहे मगन अभिमानमें, कहे ओरकी ओर. ॥ १०३ ॥ वस्तु सरूप लखे नही, बाहिज दृष्टि प्रमान; मृषा विलास विलोकके, करे मृषा गुन ज्ञान. ॥ १०४ ॥

अथ मृषा गुन ज्ञान यथाः–

सवैया इकतीसाः-- मांसकी गरंथि कुच कंचन कलस कहे, कहे मुख चंद जो सलेखमाको घरु हे, हाडके दशन आहि हीरा मोती कहे ताहि, मांसके अधर ओठ कहे बिंब फरु है, हाड दंभ भुजा कहे कौलनाल काम जुधा, हाडहीके थंभा जघा कहे रंभा तरु हे, योंही झूठी जुगति बनावे औ कहावे कवि, एते पर कहे हम सारदाको वरु हे ॥ १०५ ॥ चोपाई·– मिथ्यावत कुकवि जे प्रानी, मिथ्या तिनकी भाषित बानी, मिथ्यावत सुकवि जो होई, वचन प्रवान करे सब कोई १०६ दोहरा·-- वचन प्रवान करे सुकवि, पुरुष हदे परवान, दोऊ अंग प्रवान जो, सोहे सहज सुजान· ॥ १०७ ॥ अथ नाटक समयसार व्यवस्था कथनः–

चोपाईः– अब यह बात कहो हे जेसे, नाटक भाषा भयो सु एसे, कुंद कुंद मुनि मूल उधरता, अमृतचद टीकाके करता ॥ १०८ ॥ समेसार नाटक सुख दानी, टीका सहित संसकृत बानी, पंडित पढे दृढमती बूझे. अलपमतीकों अरथ न सूझे· ॥ १०९ ॥ पांडे राजमल्ल जिनधर्मी, समयसार नाटकके मर्मी, तिन्ह गरंथकी टीका कीनी. बालाबोध सुगम करि दीनी. ॥११०॥ इहि विधि बोधवचनिका फैली, समैंपाइ अध्यातम सेली, प्रकटी जगतमांहि जिनवानी, घर घर नाटक कथा बखानी ॥ १११ ॥ नगर आगरामांहि विख्याता, कारन पाइ भए बहुज्ञाता,

पच पुरुप अति निपुन प्रवीने, निसिदिन ज्ञानकथा रस नीने ॥ ७१२ ॥ दोहरा— रूपचद पंडित प्रथम, डुतिय चतुर्नुज नाम, तृतिय नगौती दासनर, कौरपाल गुनधाम ॥ ७१३ ॥ धर्मदास ए पच जन, मिलि बेसे इक गेर, परमारथ चरचा करे, इन्हके कथा न और ॥ ७१४ ॥ कवहूं नाटक रस सुने, कवहूं और सिद्धांत, कवहूं विग बनाइके, कहे बोध विरतत ॥ ७१५ ॥ अथ विगयथा—

दोहरा— चित चकोर करु धरम धरु, सुमति नगौती दास, चतुर नाव थिरता नए, रूपचद परगास ॥ ७१६ ॥ इहि विधि ज्ञान प्रगट नयो, नगर आगरे माहि; देसदेस महि विस्तर्यो, मृपा देश महि नांहि. ॥ ७१७ ॥ चोपई — जहां तहा जिनवानी फेली, लपे न सो जाकी मति मेली, जाके सहज बोध उतपाता, सो ततकाल लखे यह वाता ॥ ७१८॥ दोहरा — घटघट अंतर जिन वसे, घटघट अंतर जैन, मत मदिराके पानसो, मतवाला समुझे न ॥ ७१९ ॥

चोपाई-बहुत बढाउ कहालो कीजे, कारजरूप वात कहि लीजे, नगर आगरा माहे विष्याता, बनारसी नामे लघु ज्ञाता ॥७२०॥ तामें कवित कला चतुराई, कृपा करे ए पंचो नाई, ए परपंच रहित हिय खोले, ते वनारसीसो हसि बोले ॥७२१॥ नाटक समैसार हित जीका, सुगमरूप राजमली टीका, कवित बद्ध रचना जो होई, नापा ग्रथ पढे सब कोई ॥ ७२२ ॥ तब बनारसी मनमहि आनी, कीजे तो प्रगटे जिनवानी, पंच पुरुपकी आज्ञा लीनी, कवित बंधकी रचना कीनी ॥७२३ सोरहसे तिरानवे विते, आसुमास सित पक्ष वितीते, तिथि तेरसि रविवार प्रवीना, तादिन ग्रंथ समापत कीना ॥७२४ ॥ दोहरा॥ सुख निधान सकबंध नर, साहिब साहि किरान, सहस साहि सिर मुकुटमनि, साह जहां सुलतान ॥ ७२५ ॥ जाके राज सुचेनसो, कीनो आगम सार, इति नीती व्यापी नही, यह उनको उपगार ॥ ७२६ ॥ अब सबका ठीक कथन —

सवैया इकतीसा -- तीनसे दसोत्तर सोरठा दोहा छंद दोउ, जुगलसे तेतालीस इकतीसा आने हे, ठासी सु चोपईये सेतीस तेइसे सवैये, वीस छप्पे अठारह कवित्त वपाने हे, सात फुनिही अडिल्ल चारि कुंमलीए मिले, सकल सातसे सत्ताईस ठीकठाने हे, वत्तीस अक्षरके सलोक कीने ताके लेखे ग्रंथ संख्या सत्रहसें साठ अधिकाने हे ॥ ७२७ ॥ दोहरा -- समयसार आतम दरव, नाटक नाव अनंत; सोहे आगम नाममे, परमारथ विरतंत ॥ ७२८ ॥

॥ इति परमागम समयसारनाटक नाम सिद्धांत संपूर्णम् श्री रस्तु ॥

॥ श्रीपार्श्वजिनायनमः ॥

अथ

॥ श्री सम्यक्त्व स्वरूपस्तव बालावबोध सहित प्रारंभः ॥

प्रथम अर्थकर्त्तानुं मंगलाचरण.

श्रीमद्वीरजिनं नत्वा, गुरुश्रीज्ञानसागरं ॥ श्रीसम्यक्त्वस्तवस्या र्थो,- लिखामि लोकभापया ॥ १ ॥ गुरुपदेशतः सम्यग्किंचित शास्त्रानुसारतः ॥ वृद्धपरंपराज्ञात्वा, क्रियतेवोधिसंग्रहं ॥ २ ॥

अर्थ.– श्रीमद्वीरपरमात्माने नमस्कार करीने तथा ज्ञानदृष्टिना दाता परमोपकारी श्रीगुरुना चरणारविंदने नमस्कार करीने पौद्गलिकसुख तथा आत्मिकसुखनो एक अवंध्यहेतु एटले पौद्गलिकसुख तथा आत्मिकसुखने निन्न निन्न दर्शावनारो एहवो श्रीसम्यक्त्वगुण, तेनी मूलोत्पत्ति सप्रन्नेद कहेनारुं सम्यक्त्व पंचवीसीनामे प्रकरण, तेनो अर्थ श्रीगुरु उपदेशथकी तथा कांईक शास्त्रानुसारथकी तथा कांईक वृद्ध परंपराथकी एटले बहुश्रुतोनी वातो शांनलीने मारी बुद्धिने अनुसारे किंचित्‌मात्र संक्षेपथकी लोकनापामां वार्तिकरूपे कहुंछुं.

प्रथम सूत्रकारनी गाथा लिखेछेः—

जह सम्मत्त सरूवं, परूविअं वीरजिणवरिंदेण ॥
तह कित्तणेण तमहं, थुणामि सम्मत्त सुद्धिकए ॥ १ ॥

अर्थ – जह के० जेम उपशम क्षायोपशमादि प्रकारे सम्यक्त्वनु स्वरूप श्रीवीरजिनवरेंद्रे परुप्युंछे, गणधरादिकने उपदेस्युंछे, तहकित्तणेण के० तेम किर्तनकरवेकरीने एटले जेरीते श्रीवीरपरमेश्वरें सम्यक्त्व प्राप्तिनी प्रनालिका उपदेशी, तमहंथुणामि के० तेज प्रनालिका गर्नित वीनतिये करीने श्रीवीरपरमात्मानें स्तवीश, एरीतें प्रकरण कर्त्तायें वस्तुनिर्देसात्मकरूप मंगल कर्युं, हवे प्रकरण करवानुं प्रयोजन कहे छेः—ए प्रकरण शावास्ते करेछे के सम्मत्तसुद्धिकए के० सम्यक्त्वनी शुद्धिथवाने अर्थे एटले क्षायिकनावे सम्यक्त्व सुद्धि पामवाने अर्थे करेछे. यदुक्तं आगमे.—थयथुईम

गलेणं नंतेकिजणइ? गोयमा, नाण दंसण चारित्त बोहिलानं जणइ व्याख्या–श्री गौतमे वीरपरमेश्वरने पूछ्युं जे थय के० स्तोत्र अने थुई के० चार गाथारूप एट ले परमेश्वरनुं स्तवन तथा थुई करता केवो लान थाय? तेवारे परमेश्वरे कह्युके हे गौतम, ज्ञान दर्शन चारित्ररूप बोधलाननथाय एटले रत्नत्रयी पामवानो हेतु थाय केमके निश्चयनये ज्ञान दर्शन अने चारित्र ते अप्रमतनावे होय, तिहाज संपूर्ण सम्यक्त्व कहिये जंसम्मंतिपासहा तमोणतिपासहा जंमोणति इत्यादि आगमनेविषे कह्युछे, एरीतें सम्यक्त्व शुद्ध करवारूप प्रयोजनने अर्थे एप्रकरण करेछे ए ग्रंथकरवा नुं प्रयोजन कह्यु ॥ १ ॥ इति प्रथमगाथार्थ ॥

हवे सम्यक्त्व प्राप्तिनी अगाउ जेवी जीवनी अवस्था होय ते व्यतिकरगर्नित बीजी गाथाये स्तुति करेछे –

सामि अणाइ अणंते, चउगइ संसारघोरकातारे ॥
मोहाइ कम्मगुरुठिइ, विवागवसउ नमइ जीवो ॥ २ ॥

अर्थ – हेस्वामि, मारासरिखा संसारीजीव, ते जेनी आदिपण नपामिये अने अंत पण नपामिये तेने अनादि अनंत कहिये, एटले जेनी आदि अंतनथी एवो चतुर्गति भ्रमणरूप संसार, तेहिज जाणिये एक घोर कांतार एटले नयानक अटवी, तेहने विषे मोहाइकम्म गुरुठिई के० मोहनीयादिक आठ कर्मनी उत्कृष्टस्थितिना वि वागवसओ के० विपाक वेदवाना परवशपणाथकी नमइजीवो के० एजीवन्रमणक करेछे सर्व जीवोनी मूलस्थिति एहवीछे के अनादि निगोदजे सूक्ष्मवनस्पतिकाय जा ति निगोद, तेमा खाणसंपन्न कनकोपल न्याये अनादिना रहेछे, एसर्वजीवोनी मू लस्थितिछे, तेमा अंगुलने असंख्यातमे नागें शरीरहोय, अने बशोछपन्न आवलिका नुं आयुहोय, एटले रोगरहित मनुष्यना एक श्वासो श्वासमाहे सत्तरनव फाफेरा करे, एम केवल तुच्छ आयुष्यवेदता खुलकनवरूपे अनादि निगोदमा चय उपचय एटले तिहाज जन्म मरण करता रहेछे, एरीते सर्वे संसारीजीवोने निगोदमां न टकतां अनतानंत पुद्गलपरावर्त्त वीतिगया ॥ २ ॥

तिहा रहेताथका कोई घुणाक्षरन्याये नियतकारणना परिपाक थवाथी कोई सम ये एकादिकम वे स अध्यवसायना तरतमयोगथी, तत्तुल्यहलुकर्मि थाय एटले जेम अ क्षर गुणता गुणता कोई समये अचानक काई नियम सिद्ध थईजाय छे, एम नियत कारणना परिपाकथवाथी ते जीव एक बे इत्यादिक आत्माना अध्यवसायनी तारत

म्यता सहित थयो थको ते अध्यवसायना जेवा परिणाम होय तत्तुल्य के० तेवा परिणामतुल्य हलुकर्मि थायछे (ए रीते मने उपजा न्यायनो खोलासो सुज्यो ते लखी जणाव्यो छे.) ते लघुकर्मिपणानायोगे सूक्ष्म निगोदथी निकलीने बादर निगोदमां आवे तिहां आयुकर्म स्थित्यादिकनी वृद्धिथाय, कोईकरीते बीजाजीवोने दृष्टिगोचर पण आवे, एहवोथाय, बादर शरीर छे माटे स्वकाय परकाय शस्त्रथी छेदन भेदन योगे जो अकाम निर्जराथवा लागी तो तेना योगथी बेइंद्रीयादिकमां आवे, तिहांव ली प्राण अने पर्याप्ति तथा इंद्रीय अने शरीरनी वृद्धिथाय इहां कर्मबंध वधतुंथाय केमके जिव्हा इंद्रिय तथा भाषा अने शरीरादिक अधिकरणनी वृद्धिथई राग द्वेष ज नोत्पादक भाषा अनेकरस आस्वादनानिजाणी जिव्हाथाय, वलीअनेक जीवने दु ख दायी महोटामां महोटुं बारयोजननुं शरीरथाय, उत्कृष्टआयु बारवर्षनुंथाय, तेणेकरी शुभाशुभ अध्यवसायनी पण तरतमता थाय, तो तिहांपण अकाम निर्जरानी बहुलता होय तो, उंचो तेंद्रियादिकमा आवे, अनेजो अधिकरणनायोगे हिंसादिकदोष नी बहुलता थाय, तो फरी एकेंद्रीयमा पण जाय, तिहां वली एकेंद्रियमां उत्कृष्टो अनंत कालरही फरीकोईकवारे कोईक अकाम निर्जराना योगथी विकलेंद्रियमां आवे तिहां बेइंद्री तेइंद्री चौरेंद्री एत्रणे विकलेंद्रीय कहिये इहां जेम जेम इंद्री प्राण अने पर्याप्ति वधे तेम तेम अधिकरण पण वधे

हवे तिहां जो हिंसादिक कारणोनी वृद्धिथाय तो पाछो पभी एकेंद्रियादिकमां आवीजाय, अनेजो सामान्य रहे तो पोतानी कायस्थितिप्रमाण द्वींद्रियादिकमांवेज रहे, अनेजो छेदन भेदनरूप अकामनिर्जरा थायतो तेनेयोगे उंचोपण आवे, इहां विकलेंद्रियथी एकेंद्रियमांजाय अने एकेंद्रियथी विकलेंद्रियमांजाय, एरीतें अनंता फेराथाय, तिहां एकेका फेरामां प्राये अनंतकालपण वहीजाय.

एरीते करता विकलेंद्रियथी अकामनिर्जराने योगे प्रायें तिर्यंच पंचेंद्रीयथाय, ते तिर्यंच पचेंद्रिना बेभेदछे, एक गर्भज अने बीजा समूर्छिम. तेमां समूर्छिम ने मन न होय तोपण तेमा शरीर प्राण पर्याप्ति आयुप्रमुख अधिकरणनी वृद्धिथाय, तेथी जो हिंसादिक अधिकरणनी बहुलता थई तो पहेली नरके जवुं पडे, अथवा पाछो पभी एकेंद्रियादिकमा पण जाय, जो नरकेजाय तो उत्कृष्ट असंख्यात कालसुधी क्षेत्रवेदना परमाधार्मिकृत तीव्रदु.ख तथा परस्परकृत तीव्रदु.ख अनुभवे, तथा एकेंद्रियमां गयोतो फरी छेदनादिक अनेक दु.ख सहन करे फरी अनंतकाल भमे.

कदाचजो समूर्छिम पंचेंद्रियमा छेदन भेदन सीत तापादिक महादु.ख सहन

थी अकाम निर्जराने योगे गर्नज मनुष्य थाय, अथवा गर्नज तिर्यंच पचेंड्रिय था य, ते जेवारे गर्नज पचेंड्रितीर्यंच अथवा गर्नज मनुष्य थाय, तेवारे प्रबल अ धिकरणी थयो, तिहां पांचे आश्रव प्रबलपणे सेवे. तिहां प्राण तथा पर्याप्ति पूरणहोय तेनेलीधे त्रिकाल वेदन स्वकीय परकीयना विकल्पजालमां पडे, तेथी उत्कृष्ट कर्मस्थितिनुं धणी थाय, आर्त्त रौद्र ध्याननी प्रबलता थाय, ते दुर्ध्या ननायोगे कर्मस्थिति दीर्घकरे, इहां कोइकजीव प्रबल हिंसादिक कारणनेयोगें सातेनरकोने विषे जाय, अथवा किवारेक मुर्छादिक अधिकरण योगे पाछो एके ड्रियमां पण जाय, तिहां अनंतकाल रुले

अथवा किवारेक छेदन नेदन ताडन तर्जन शीत तापादिक सहनकरतो जा ति शरलपरिणामी माटे तीव्रसंक्लेश न करे तो अकामनिर्जराकरी कोइकजीव देवगति पामे, अथवा कोईजीव मनुष्यथाय तेमाजो देव थयोतो अतिशय विषयाशक्तमा माचीने तीव्रसंक्लेशे विषयाशक्त थको मरीने प्राये तिर्यंच पचेंड्री गर्नजथाय, तिहां बहुल हिंसादिक सेवनकरी नरकेजाय, अथवा पाछोपडी एकेंड्रियचक्रमा जाय, फ री तिहाथी निकली पंचेंड्रियपणुं पामता उत्कृष्ट कायस्थिति योगे असरव्य पुजल परावर्त्त वीतीजाय.

अथवा कोईदेवमरी मनुष्यथाय, तिहां कारण अपरिपाकपणाथी बहुलतायें अनार्यक्षेत्र अनार्यकुलमा उपजे, तिहा प्रबल कषाय विषयादिक अशुन्नहेतुना योगे अढारे पापस्थानकसेवी, किवारे सातेनरकोनेविषे जेवा जेवा कर्म बांधे तेवा तेवां कर्मानुसारे ते ते नरकमा जई उपजवुथाय, एम यथाबंधी उपजे, तिहां नरक संबंधी आकरादुःख असंख्यकाल पर्यंत सहन करे, ते नरकदुःखना विपाक नव नावनादिक ग्रंथथी जाणवा.

अथवाकोई तो मनुष्यनवपामी घरकुटंबनी तीव्र मूर्छामा मूर्छितथको अज्ञान योगे परिणम्यो तो फरी तिर्यंचगति यावत् एकेंड्रिय चक्रमांपडे, वली ते दशापाम ता अनंतानंत काल व्यतिक्रमीजाय, तथा कोईमनुष्य विशिष्टज्ञानविना मूढचेतना वंत प्रकृतियें सरलथको सहेजे कषायनी मंदताये मनुष्यपण थाय, तिहावली का लपरिपाकविना अशुन्नकारणनी बहुलतानेयोगे मिथ्यात्वादिक अशुन्नहेतुनी पुष्ट ताये कर्मस्थिति उत्कृष्टिकरे, ते उत्कृष्टकर्मस्थिति लखियेंछेये ॥ गाथा ॥ मोहेको डाकोडी, सत्तरिवीसचनामगोयाण ॥ तीसायराणि चउन्न, तित्तीसायराइ आ

त्कृष्ट ॥ १ ॥ अर्थ ॥ तेकर्मबंध बांधवाना चारहेतुले, मिथ्यात्व अविरति कषाय अने योग, ए चारहेतुनी प्रबलताये कर्मस्थिति उत्कृष्टी बांधेछे.

तिहां सर्वकर्मनो उत्पादकपोषक मोहनीय कर्म छे, जेम इंमाथी मुरगी अने मुरगीथी इंडुं तेम मोहनीयकर्मथी आठेकर्मबांधे, आठे मली मोहनीयकर्मनी पुष्टीकरे, माटे मोहनीयकर्मनी मुख्यताकही, मोहनीयकर्मने राजपदनी उपमाकही, ते मोहनीयकर्मनी अठ्ठावीस प्रकृतिमां मिथ्यात्व मुख्य कर्मप्रकृतिछे, समस्त संसारमां सर्वजीवोने समस्त दुःखनोहेतु एकमिथ्यात्वछे ते मिथ्यात्वमोहनीय एकवारनुंबांध्युं उत्कृष्टो सित्तेरकोडाकोडी सागरोपमसुधी विपाकआपे, तेहनो विपाक अत्यंत मदिरापाननी घुमि सरिखोछे, जेम मदिरानुं पानकरनार पुरुष मित्रने शत्रुनी बुद्धियें मारवादोडे अने शत्रुने हंसीहंसी मलवादोडे

तेम तीव्रमोहना उदयथी जीवने अजीवजाणे अने अजीवने जीवजाणे तथा धर्मने अधर्मजाणे, अधर्मने धर्मजाणे, मार्गने उन्मार्गजाणे, उन्मार्गने मार्गजाणे, साधुने असाधुजाणे, असाधुने साधुजाणे, मुक्तने अमुक्तजाणे, अमुक्तने मुक्तजाणे, ए दशप्रकारे मिथ्यात्व विपाक आपे.

तथा नामकर्म अने गोत्रकर्म एकवारनुंबांध्युं उत्कृष्टो वीसकोडाकोडी सागरोपम स्थितिरहे, ते नामकर्मनो विपाक चित्रकार सरिखो विचित्रपणे छे केमके जे वर्णरहित गंधरहित स्पर्शरहित रूपरहित रसरहित अने समस्तदोष रहित, असंख्यातप्रदेशी लोकप्रमाण अखंम अनंत ज्ञान दर्शन चारित्र स्वरूपी संघयण संस्थान रहित, एवा अरूपी आत्माने एकेंद्रिय बेंद्रिय कुरूपी सुरूपी ठीगणो कुबमो कालो धोलो अतिमहोटो तो हजारयोजनप्रमाण अति सूक्ष्म तो वालनी अणीउपरे असंख्यगोला गोलेगोले असंख्य निगोद निगोदे निगोदे अनंत जीव, इत्यादिक जीवने अन्याख्यान रूपे विपाकआपे एवु ए नामकर्मछे.

गोत्रकर्मनो विपाक कुंभारना भांमा सरखो छे, केमके एजीव जगत् शिरोमणी सिद्धसमान जगतने वंदनीय स्वरूपी छे, तेज जीवने चमाल मातंग हलालखोर जेने कोई अडके नही कदापि अडके तो जलादिके स्नानकरी शुद्ध थाय, जो विष्टा चर्म हामनुं भक्षण करनारो स्वान घरमां आवे, अथवा तेनो स्पर्श थाय तो तेनी कांई शंका न आणे, शोचपण न करे, अने पंचेंद्रिय केवली मनुष्य दश प्राणनो धारक तत्वातत्व सर्व उचित्त वस्तुनो जाण, सर्व मनुष्य जेहवो मनुष्य छुना छुने करणी करवा समर्थ, तेहनुं दर्शन स्पर्श अथवा निकट रहेवानी कोई चाह

ना करेनही, तेथी तेने वस्ति बाहिर रहेवु पडे, ए सर्व विपाक नीच गोत्रना जाण वा तथा उंच गोत्रना विपाक ते जे कोई जीव मूर्ख जड दुष्ट निर्धन निर्गुण कुरूपो कुत्सित होय, अने कुकर्मनो कर्त्ता होय, कर्म चमाल होय, एवु छता पण महोटा कुलमा अवतार लीधो होय, तो दोषे नथो पण लोकमा आदर सन्मान सत्कार पामे, जो अशुद्धाचरण देखी निंदा थाय, तोपण अवशर उपर तेहने सव कोई तेडीने विनयकरे, जे ए महोटा छे, महोटा कुलना छे, ओलादीछे, केटलाक दोष ढाक्या जाय इति गोत्र कर्मविपाक

ज्ञानावरणी अने दर्शनावरणी तथा वेदनीय अने अंतराय एचारेकर्मनी स्थि ति एकवार बाध्या त्रीसकोडाकोडी सागरोपम पर्यंत विपाकआपे.

तेमा ज्ञानावरणीकर्म आंखनापाटा समानछे, जेने एकर्मनो तीव्रोदयहोय ते प्राणी काईज जाणेनही, केमके जीवना सर्व आकाश तथा काल प्रमुख द्रव्यप र्यायथी अनंतगुणा ज्ञानगुणना पर्यायछे, ते सर्वपर्याय ए ज्ञानावरणीकर्म आव र्याछे, एक अक्षरना अनतपर्यायछे, तेमांहेलो एकपर्यायनु ज्ञान निगोदिआ जीव ने उपजतांहोय, बाकी सर्वपर्यायनु ज्ञान ढाक्युछे, एक अक्षरनो अनंतमो भाग उ घाडोरहे, तेपण द्रव्यस्वभावेरहे, पण कर्मनी रायतिनथी, एक जीवद्रव्य ते बीजा स र्वद्रव्यना द्रव्य गुण पर्यायना त्रिकालिक उत्पाद व्ययनो एकसमयमा ज्ञायक चिदा नदघनरूपी एहवु चेतनराजछे तेने ए ज्ञानावरणीकर्म जडरूप अतिगुप्तकरीनाखे, पण तेहना उपर कोईरीते अनुकपाकरेनही, काष्टप्रायकरे, चेतनना मुख्य ज्ञानगुण ने आवरे, ए ज्ञानावरणीय कर्मना विपाक जाणवा.

दर्शनावरणीयकर्म वैत्रीसरिखुं दरवान दोढीदार सरिखुं छे, जेम राजाप्रसन्न थ योछता दरवान खुसी नहोयतो ते अटकावी राखे, पण राजानी भेटकरवानआपे तेम एकर्मनो विपाक जे पूर्वोक्त स्वरूप जीवने अधकरे, न्यूनइद्रीय शून्यइद्रीयकरे बधिर करे सर्व सुनकरणीआदरे, ते अवसरे सर्वघाती निद्रा आवी तेनो शुभनिमित्त व्यर्थकरी नाखे, ए दर्शनावरणीय कर्मनो विपाक जाणवो

वेदनीयकर्म मधुलिप्त तरवारनी धारा समानछे तेमा मधुना आस्वाद सरिखी शातावेदनीयछे अने जीभ छेदायाना दुःख सरिखी अशाता वेदनीयछे एकर्मना विपाक गर्भगतदुःख जन्मसमयना दुःख समस्त रोगोत्पत्तिनादुःख मरण समय नादुःख वियोगोदयनादुःख विषय अप्राप्तिनादुःख आठ महाभयनादुःख शीतदुःख तापदुःख तथा तिर्यचना भवमा वध बंधन भारवहन शकटवहन कृषिक्रियागत दुः

ख खासीक्रियादुःख नासावेधदुःख क्षुधादुःख प्यासादुःख मृगयादुःख असवारी नादुःख दूरपंथ गमनदुःख जातिवैरीनादुःख धर्मबुद्धिये हनन समयनादुःख पिंजरामा पडवानादुःख इत्यादिक अनेकदुःख तिर्यंचगतिमांछे, तथा नरकगतिमां क्षेत्रवेदना शरीरगत अनेक रोगजन्यदुःख परमाधामिकृतदुःख अन्योन्य प्रहरण प्रहार दुःख ए सर्वे अशातोदय वेदनीयना विपाकजाणवा, तथा शातावेदनीयोद यथी सर्वइच्छित खावा पीवानाजोग वली खेलवुं स्त्रीविलास राग रंग सुख सध्या मान महत्व राजलीला कामनासिद्धि निरोगता इत्यादिक सर्वे शातावेदनीयना विपाक छे एकर्म जीवना अव्याबाधगुणने बाधकरनारुंछे समस्त देव मनुष्यना त्रिकालिक पुद्गलिकसुख एकठाकरीने तुल्यनाकरिये तो सिद्धनासुखने अनंतमे भागे पण न आवे, एहवा सहजानंदी जीवने एकर्म शुभाशुभ पुद्गलपिंडमा रखडावे ए वेदनीयकर्मनो विपाककह्यो.

अंतरायकर्म राजाना भंडारीशरिखुंछे जेम राजा सुप्रशन्नथई कोईने द्रव्य आपवानो आदेशकरे, पण जो भंडारी अनुकूल न होय, तोकोईपण निमित्ते विलंबकरीआपे, धकाखवरावे, पण द्रव्य आपेनही, तेम ए कर्मनाविपाके दान शक्ति न पामे कदापि दानइच्छा न करे अने इच्छाकरेतो उलटो कोई एहवो विकल्पउठे के, जेथकी दानआपवानी बुद्धिज भूलीजाय, पण आपीशकेनही, तेमज लाभ मेलववाने अर्थे पण घणीज पोतानी बुद्धि केलवी चतुराईथी उद्यमकरे, सर्ववाते खबरदारीराखे, अने कार्यपण सनुखाईमा आवे, जेथकी एवी आशा थायके आ उद्यममां रूडीप्राप्ति अवश्यथशे तेथी हर्षवंत पण थाय एटलामा कोईलाभांतराय कर्मना उदयथी एहवा कारणो आवी बने के जेथकी लाभने ठेकाणे उलटो त्रोटोथईपडे, ते लाभांतराय कर्मनो विपाक जाणवो तेमज भोगांतरायकर्मना विपाके भोग न पामे,कदापि पामे तो रोग शोग भयादिक कारणे भोगवी शकेनही एमज उपभोग वस्तुपण एना उदयथी न पामे, कदापिपामे तो तेनो कोईपण हरकतनेलीधे उपभोग करीशके नही, तेमज वीर्यांतरायना उदयथी शरीर निर्बलतापामे, अनेक औषध रसायन खाय तोपण उलटो कोई कुपथ्यादिकने योगे रोग थाय, दुर्बलतानी वृद्धि थाय, परवसादिकने योगे मननीहोंस मनमांसमें पण चिंतितकार्य करी शकेनही, एरीतें अंतरायकर्मनो विपाक जाणवो

आयुकर्मनी उत्कृष्टीस्थिति तेत्रीस सागरोपमनीछे, ते एक शुभायु बीजुं अशुभायु ए बे प्रकारेछे, ए कर्म हेड शरिखुंछे, जेम ज्यां लगण हेडमा पग प

उर्युंहोय त्यांनगण किहांपण जवाई शकायनही, तेम आयुकर्म बांध्यापछी गमे एटली धर्मकरणीकरे क्षायिक सम्यक्त्वादिक उपार्जे.तोपण बाधेलीगती अवश्य नो गववीपडे, पण छूटेनही, बीजा कर्मोनोउदय तोअपवर्त्तन संक्रमणादि करण योगे नि फलकरे, पण ए कर्मतो नोगव्याविना छूटेजनही बीजा शुनाशुनकर्म उंच नी च परिणाम योगें दल वृद्धि हानीथाय,-पण एकर्मतो यथाबंधें अवश्य नोगव्युंज जोय, जोपण नरकादिकना छुःखघणाय अनिष्ट लागे, तोपण छुटेनही, एरीते आयुकर्मनो विपाक जाणवो

एरीते आठेकर्मनी प्रकृति स्थिति रस अने प्रदेशबंधना परवशपणे अनंतानंत पुजलपरावर्त्त थया जन्ममरणादिरूप, नीषण कांतारमां नम्यो; एम नमतां नमतां कोईकवारे छुर्लन मनुष्यनवादि सामग्रीयोग मल्यो, पण मिथ्यात्वनी प्रबलता हे तुये अथवा पांचकारणना परिपाकविना किहांपण सम्यक्त्वनी प्राप्ति नथई, केवल नवपूर्णथयो इहां प्रसगे योगबिंछुग्रंथमा कहेली सम्यक्त्व प्राप्तिनी शैली लखियेंछइये -

जे नव्यजीवछे तेने नव्यताना उदयेकरी अकाम निर्जरायें कर्मखपावतां पांच कारणनी अनुकूलतायेकरी बे पुजलपरावर्त्त शेष संसार रहे, तेवारे धर्मशब्द सामा न्ये सदहे, जे धर्मशब्द सांनलवा सन्मुख निर्विवेकपणेहोय तेने श्रवणसन्मुखी ना वकहिये, पण तथाविध आदरपीपासाकाईहोयनही पण सहज मिलेतो विमुखनही

पछे तिहांथी संसार परिभ्रमणकरतो जीव उच्च नावमां आवे, तेवारें दोढपुज ल परावर्त्तरहे मार्गगवेषणा मार्गश्रवण मार्गसन्मुख मार्गानुसारी मार्गप्राप्ति इत्यादि कनाम इहांथी आगेंथाय, धर्मनणीधसे जिनोक्तमार्गनुं श्रवणहोय कोइकरीतें रुचि थाय पण तीव्रनावे ,गवेषणानहोय, एने मार्गपतित कहियें, एटले मार्गेपड्यो कोइ नवे एवीरुचीथईपमी, संसारपरिभ्रमणकरतां एकपुजल परावर्त्तरहे तेवारे जिनमा र्गानुसारीपणुं शुद्धाशुद्धनी गवेषणामात्रहोय, एरीतेकरता इहा धर्मयौवनकालआ वे न्यायसंपन्न विनवप्रमुख पात्रीसगुणपामे, मित्रादिकदृष्टी पामवानो अवशर होय, एहने मार्गानुसारी कहिये, इहां षटदर्शननी निन्नताजाणे, जिनोक्तमार्ग व्यव हारें प्रवर्त्ते,इहाथी मिथ्यात्वमदपड्यु, तेथी व्यवहारे द्रव्यधर्मपणपामे, पण सम्यक्त्व प्राप्ति न थाय, इहा पहेला त्रण अनुष्टाननी प्रबलता होय, सर्वक्रियाकरे तेदेखी बी जा अनेकजीव धर्मपामे, पण पोताने नहोय तेक्रियानुफल स्वर्गादिकथाय, पण नि र्जरा अर्थे नथाय ॥ २ ॥ इतिद्वितीय गाथार्थ

हवे सम्यक्त्व प्राप्तिनो उपायकहेछेः—

पल्लोवलमाइअद्दा, पवत्तिकरणेणकोविजइकुणई ॥
पलिआ असंखज्जागुण, कोडिकोडि-अरठिइ सेसं॥ ३ ॥

अर्थ ॥ इहां चरम पुद्गलपरावर्तमा मिथ्यात्वनी मंदताथाय तिवारें सम्यक्त्व पामवाना कारण त्रण करणछे, तेनानाम एक यथाप्रवृत्ति बीजोअपूर्व त्रीजोअनिवृत्ति, तेमां इहांप्रथमकरणनो अवसरछे तेकहेछे, ए सम्यक्त्वगुण पामतां सुधीमां सर्वसाधारण आठ दृष्टांतकह्यांछे तेमां यथाप्रवृत्तिकरणकरतां बे दृष्टांतलागे-ते दृष्टांतनी आवश्यकोक्त गाथा लिखुंछुं.

"पल्लयगिरि सरिउवला, पिवीलिआ पुरिसपह जरगहीआ ॥कोद्दव जल वत्था णिअ सामाइयलाभदिठंता ॥ १ ॥ एगाथानोअर्थकहेछे एक पालानुंदृष्टांत, बीजुं पर्वतथी नदिप्रपातस्थानेरहेला पाषाणनुं दृष्टांत, त्रीजुं पीपीलिका ते कीडीनुंदृष्टांत, चोथुं त्रणपंथीपुरुषनुं दृष्टांत. पांचमु ज्वरग्रहीतनुं दृष्टांत, छठुं मदनकोद्रवनुं दृष्टांत, सातमुं मलिनजल दृष्टांत, आठमुं समलवस्त्रदृष्टांत, ए आठ दृष्टांत सर्वे सम्यक्त्वनो लाभ थतांसुधीमां लागे, ते यथा स्थानके लखीशुं, पण इहांतो यथा प्रवृत्तिकरणे बे दृष्टांतलागेछे ते कहियेछैये

तिहां सम्यक्त्वपामता करण त्रणछे १ यथाप्रवृत्तिकरण २ अपूर्वकरण ३ अनिवृत्तिकरण; तेमां यथाप्रवृत्तिते 'अनतिक्रम्यकरोतीति' यथाप्रवृत्ति, ए व्युत्पत्तिनो अर्थ —यथाके० जेम अनादिनी चालछे तेमनीतेम प्रवृत्तिनुं करणके० जीवपरिणामनुं प्रवर्तनछे जिहां, तेने यथाप्रवृत्तिकरणकहियें, एटले अनादिनुंजे चाल परिणामछे ते प्रवर्तन फरखुंनथी, अनादिचालें प्रवर्तेछे पण कारणपरिपाकना जोरथी मिथ्यात्वनी मंदताथाय, तेथी पालाने दृष्टांते जेम पूर्वे भर्यो धाननोपालो तेमां थोडुंधाननाखिये अने घणुं धानकाढीये तेवारे तेपालो कालांतरे खालीथाय तेम कर्मरूप धानेकरी समस्त आत्मप्रदेशरूप पालोभर्योछे तेपालो जीवने अनाभोगथी एटले इछाविना सहजें अकामनिर्जराथी छेदनभेदनादिकथी अशुभविपाकावशरें मिथ्यात्व तथा अनंतानुबंधी कषायनी मंदतानायोगे कर्मविपाके बहु व्यापक न होय तेवारे कष्टमाफक निर्जराघणीथाय, अने मिथ्यात्व कषायनी मंदता माटे नवाकर्मपण घणाबांधेनही, मदवीर्यमाटे प्रदेशरश पण थोडुंग्रहणकरे एटले घणी निर्जरा थाय अने बंध अल्पथाय तेथी कर्मस्थिति रूपधान्यनुं पालो घटाडे.

तथा बीजुंदृष्टांत नदीना पाषाणनुं, जेम पर्वतथी नदीमांपडे तिहां नीचेरहे लुं पाषाण तेनदीनी जलधारा पडवाथी अरहो परहो घोलाय अथडाय, ते पाषा ण घोलना घचनानेयोगें घसाईने घोलघाटमांआवे, फरसमां सुहालोथाय एरीते स हेज स्वभावेकोईक घाटमांआवे पण कोइए एनो विचारपूर्वक घाट कर्योनथी.

तेम जीवते पाषाणरूप, नदीप्रवाह ते कर्मोदय प्रवाहें पचतो अकाम निर्जराथी पूर्वोक्तन्याये निर्जरायेकरी कोइक धर्मप्रवृत्तियोग्य घाटमांआवे. (आकारमांआवे) ए बेदृष्टांतेकरी एकआयुकर्मवर्जिने बाकीसातेकर्मनी उत्कृष्टिस्थितियोग्य बंधप रिणामने घटाडे, तथा पूर्वबंधहोय तेपण निर्जरे, तेवारें सित्तेरकोडाकोडी मिथ्या त्व बांधतोहतो ते परिणाम टलीने पल्योपमने असंख्यातमें भागें न्यून एक को डाकोडीनी स्थितिबंधना परिणाम राखे, तथा पूर्वबंधहोय तेपण सर्व स्थिति घटीने एक कोडाकोडीनी स्थिति सेषरहे, एरीतें एक आयुकर्म मूकी बाकी सा ते कर्मनी स्थितिघटाडीनाखे एटले त्रीसकोडाकोडी स्थितिवाला कर्मोनी ओगण त्रीस कोडाकोडि घटाडी पल्योपमने असंख्यातमेभागें न्यून एक कोडाकोडी सागरोपम राखे, ज्ञानावरण दर्शनावरण वेदनीय अने अंतराय ए चार कर्मनी एटली स्थितिराखे, तथा नाम अने गोत्र ए बेकर्मनी उत्कृष्टी वीसकोडाकोडी साग रोपमनी स्थितिमांथी ओगणीस कोडाकोडीघटाडीने पल्योपमने असंख्यातमे भा गे न्यून एक कोडाकोडिराखे, एटलासुधी जे जीवना परिणामनी योग्यताथयी एनुं नाम यथाप्रवृत्तिकरण कहिये, ए करण जीव संसारमां भमता भमता अनंतिवार करे, पल्योपमने असंख्यातमेभागे उंछी एककोडाकोडी सागरोपमनी सातकर्मनी से षस्थितिरही तिहांसुधी यथाप्रवृत्तिकरण कहिये, आगले ग्रंथीदेशआव्यो खरो पण ए करणयोग्य परिणामे आगल न जवाय इति प्रथमकरण

बीजुं अपूर्वकरण ते जे पहेलां संसार परिभ्रमण करतां कदापि एवुं करण जे जीवपरिणाम विशेष ते पाम्योनथी माटे अपूर्वकरण कहिये, ए अपूर्वकरण परि णामे घन निबड रागद्वेष परिणतीमयी जे ग्रंथी तेने भेदवामांडे, जे भेदे तेह अध्य वसायने अपूर्वकरण कहिये

त्रीजुं अनिवृत्तिकरण ते जे अध्यवसाय फल प्राप्तिविनानिवर्त्ते पडेनही, एटले पूर्वे आव्योजे अपूर्वकरणरूप परिणाम ते पाछो जायनही तेने अनिवृत्तिकरण कहियें, ते अनिवृत्तिकरणरूप परिणामेकरी जीव सम्यक्त्व पामे ते त्रीजुकरण इ हां ए त्रण करणनी साखआपवाने कल्पभाष्यनी गाथा लिखेछे " अंतिमकोडा

कोडी, सव्वंकम्माण आउवज्जाणं ॥ पलियाअसंखिज्जइ, नागेखीणेहुवइगंठी ॥ १ ॥ गंठित्तिसुडुब्नेउ, कक्कडघणरूढमूढगंठीव ॥ जीवस्सकम्मजणिउ, घणरागदोसपरिणामो ॥ २ ॥ जागंठीतापढमं, गंठीसमइच्छउनवेबीयं ॥अनियट्टी करणपुण, सम्मत्तपुरक्कडे जीवे ॥ ३ ॥ ए त्रणगाथानो अर्थ लेशमात्र लखियेछे.

आयुवर्जीने सातेकर्मनी अंतिम के० छहेली कोडाकोडिस्थिति पल्योपमने असंख्यातमेनागे न्यूनरहे बाकीसर्वेखपीजाय एहवे इहां गंठी कठणस्थानकछे ॥ १ ॥ गंठीकहेवीछे सुडुब्नेउ के० अत्यंतडःखें नेदवायोग्य कर्कश वक्र गूढ गुप्त कोइ खदिरादि कठीण काष्टनागांठनीपरे जेवीतेवीरीते नेदाय छेदायनही ए उपमाये अनादिनुं जीवने कर्मजनित घन के० निवड राग द्वेष परिणति संचयरूप ग्रंथी ते वज्रवत् डुर्नेद्यछे ॥ २ ॥ जिहांगंठीछे तिहांसुधीआवे तेने पढम के० प्रथम यथाप्रवृत्तिकरण होय, पछी गंठीसमइछउ के० ग्रंथी समर्थनकरता साम्यर्थवतथई ग्रंथी नेदतां बीजुं अपूर्वकरण होय; तथा पुण के० वली अनियटीकरण के० अनिवृत्तिकरण ते सम्मत्तपुरक्कडे के० सम्यक्त्व अवश्यप्राप्त नव्यपणे आगलकर्युं जेणे जीवे, एटले सम्यक्त्व अवश्यपामवु जेना मुखआगल रह्युछे तेजीवने त्रीजुंकरण होय॥३॥

एरीतें धाननोपालो तथा नदीनुपछर ए बे दृष्टातें कोइकजीवे यथाप्रवृत्तिकरणें पल्योपमने असंख्यातमेंनागें न्यून एककोडाकोडि सागरोपमनी सातेकर्मनी शेष स्थिति कीधी, एटले सम्यक्त्व प्राप्तिनो निश्रेणयो एरीतें शिष्यबोल्यो तेवारें गुरुकहेछे इहां सम्यक्त्व प्राप्तिनुं निश्रेणयोनथी ते गाथाये करीकहेछे.

तहविगंठीघणरागदोसपरिणाइमयं अन्निदितो ॥
गंठियजीवो विहहा, नलहइ तुह दंसणं नाह ॥ ४ ॥

अर्थः— तहविके० तिहापण कांइकउणी एककोडाकोडी स्थिति शेप सातकर्मनी कीधी तोपण अनव्य अथवा डुर्नव्यत्वादिक दूपण ने लीधे हाहाइतिखेदे रागद्वेपपरिणाममईग्रंथीदेशगत जीवपण ग्रथीने अणनेदतोथको हे नाथ ताहरुं दर्शनजे श्रीमुखे कहेलुं सम्यक्त्वते पामीशकेनही? केमके ए यथाप्रवृत्ति करणसुधीतो अनव्यपण आवे एवु आवश्यक वृत्तिमां कह्युछे के अनव्यपण कोइक अकामनिर्जराकरतो ग्रंथीदेशसुधीआवे तिहां अरिहंतनी रूद्धीदेखीने अथवा अन्यकोई पुजनीकरूद्धीनी इछायें प्रवर्त्तमानथको चारित्रलीये तिहामात्र श्रुतसामायकनो लान्न तेने होय, पण शेप दर्शन सामायिकादिक पामेनही, एम संसारमां नमतायका व्यव

हार रासियाजीवप्राये जिहांसुधी चरमावर्त्त चरमकरण न पामे तिहांसुधी अनंतिवार ग्रंथीदेशसुधीआवी पाछापडे ॥ ४ ॥ इतिचतुर्थगाथार्थ.

हवे जीव जे रीते ग्रंथीनेदे ते रीत कहेले.—

पल्लिय पविलिय नाएण, कोविपज्जत्त सन्निपंचिंदी॥
नवो अवड्ढपुग्गल, परियट्टवसेस संसारो ॥ ५ ॥

अर्थ.—पल्लियपिविलियनाएणके० इहां ग्रंथीदेशपाम्यापछी कोइकजीव अपूर्वकरणकरे ते पंथीजे वाटमार्गु तथा पिपिलीकाजे कीडी तेने नायण के० न्याये दृष्टांतेंकरे तेदृष्टांत देखाडवाने नाष्यनी गाथाउ लिखुंठुं

जहइहतिन्निमणुस्सा, जंतडविपहंसहावगमणेण ॥ कालाइक्कमनीया, तुरतिपत्तायदोचोरा ॥ १ ॥ दट्ठुंमग्गतडब्छे, तेएगोमग्गउपडिनियत्तो ॥ बीउगहियोतइउ, समइक्कतोपुरपत्तो ॥ २ ॥ अडवीनवोमणुस्सा, जीवोकम्मठिईपहोदीहो ॥ गठीयनयहाण, रागद्दोसायदोचोरा ॥ ३ ॥ नग्गोठिइपरिवुड्ढी, गहियोपुणगठिउगउतइउ ॥ समत्तपुरएव,-जोइज्ञा तिन्निकरणाइ ॥ ४॥ खिईसहावियगमण, थापूसरण तउसम्मुप्पयणं ॥ ठाणथापुसिरेवा उहरणंवामुअंगीण ॥ ५ ॥ खिइगमणपिवपढम ॥ थापूसरणचकरणमप्पुव्वं ॥ उप्पयणपिवतत्तो, जीवाणकरणमनियहि ॥ ६ ॥ थाणुवगठिदेसो, गंठियसत्तस्सतब्बवठाण ॥ उत्तरणपिवतत्तो, पुणोविकम्मठिइविवड्ढि ॥ ७ ॥

हवे ए सातगाथानो अर्थ किंचितमात्र लिखुंठुं जहइह के० जेमइहां कोइक तिन्निमणुस्सा के० त्रणमनुष्यछे, ते सहावगमणेण के० स्वनावगमनेकरी सहेजे निप्रयोजने जतिपहं के० अटवीपंथेजायछे ते जाताजातां घणी अटवी उलंघीगया पछी कालाइक्कमनीया के० कालअतिक्रमवेकरी नयपाम्या, एटले असूरवखतें अटवीनो पंथ तेथी मरवालागा, एटलामा तुरति के० तुरत पत्तायदोचोरा के० बेचोर आवी लागा. ॥ १ ॥ पछी ते त्रणमनुष्ये दिठुंमग्गतडछे के० मार्गनेतटछे एटले मार्गनेमुखें ढुकडा बे चोरोदेखीने ते के० ते त्रणमांथी एगोमग्गाउ के० एकतो मार्गथकी पाछो निवर्त्यो, एटले पाछोनासीगयो तथा बीउगहियो के० बीजानेतो ते चोरलोकोये ग्रहणकीधो एटले पकडीलीधो, अने तइयोसमइक्कंतो के० त्रीजोमनुष्यते चोरोने सम्यक्प्रकारें अतिक्रम्यो, एटले पोतानुं बलवीर्यफोरवी चोरोने हतप्रहतकरी पुरपत्तो के० पुरप्रतेपहोतो एटले इछितस्थानके निर्नयपणे पहोतो ॥२॥ ए दृष्टांत सम्यक्त्व प्राप्तिमां उपनयजावे छतारेछे.—

अडविन्नवो के० नवभ्रमणरूप तो अटवीकहियें, तेमां मणुस्साजीवो के० मनुष्य ते त्रण उत्कृष्ट जातना संसारी जीव कहिये, अने कम्मठिईपहोदीहो के० कर्मस्थितिते महोटो दीर्घ मार्गकहिये, तथा गंठियभयठाण के० ग्रंथीदेश ते भयनुं स्थानक कहियें, वली रागदोसायदोचोरा के० राग अने द्वेषरूप बे चोरजाणवा ॥ ३ ॥ तेत्रणमांथी दुर्भव्य अथवा अभव्यजीव तेतो भग्गो के० पाछो भागो (नासीगयो) तथा अचरमकरणी अथवा अपरिपक्क कारणीतो ग्रंथीदेशेंजरह्यो, इहां ग्रंथीदेशे भव्य अथवा अभव्य उत्कृष्टो संख्यात असंख्यात कालसुधीरहे पछी भव्यने शेष अर्द्धपुद्गलपरावर्त्त संसाररह्योहोयतो ग्रंथीभेदे अधिक ससारीपाछोफिरे इहां ग्रंथीदेशें भव्य अथवा अभव्य रह्यांथका द्रव्यश्रुत भिन्न दशपूर्वसुधी पामे द्रव्यचारित्रपामे

अभव्य पूर्वश्रुत न पामें, केटलाक ग्रंथोने अनुसारें तथा वृद्ध परंपरायेपण अभव्यने पूर्वश्रुत न होय, तथा कोइक ग्रंथने अनुसारे लब्धिदशपूर्वसपूर्णने पूर्वलब्धिक हिये, ते अभव्यने न होय पण शेषहोय, पछी बहुश्रुतकहेतेखरुं पुरेपुरा दशपूर्व तथा अधिक यावत् चउदपूर्वसुधि जे भणे ते नियमा सम्यक्त्वीहोय केमके कल्प भाष्यमां कह्युंछे यत' चउदस दसय अभिन्ने, नियमासम्मत्तसेसएभयणा ॥ इति तेमाटे उत्कट कारणयोगे बीजो पुरुषतो ग्रंथीदेशेज टकीरह्यो, तथा त्रीजो चरमकरणी प्राप्त भव्य सम्यक्त्ववत वीर्योल्लासवधते राग द्वेष परिणतिरूप ग्रंथीभेदी ने सम्यक्दर्शन रूप नगरेंज पहोचे एम त्रणेकरणनो उपनय जोईआ के० जोडवो॥४॥

हवे त्रणगाथायें पीपीलिकानुं दृष्टांत समजावेछे.— खिइसहाव के० जेमक्षिति जे पृथ्वी तेनाउपरे सहजस्वभावें कीडीफिरेछे गमनकरेछे पण तेमा कोइनी प्रेरणानथी, हवे तेमा एक कीडीतो फरती फरती थाणुजे खीलो अथवा भीतप्रमुख तिहांसुधी आविने वली पाछीफरीजाय, तथा कोइक कीडीतो थाणुजे खीलो भीतते उपरें चढवामांमे तेचढीने थाणुना उपर बेसी रहे, तथा वली कोइक कीडी थाणु उपरें चढीने उडीजाय, तथा कोइक कीडी खिलाथी अथवच पाछीउतरे ए मूछगीण के० मृदंगीजे कीडी तेनुं दृष्टांत जाणवुं ॥ ५ ॥

हवे एनो उपनय उपमान देखाडेछे, खिइगमणंके० क्षितिगमन एटले कीडीनुं पृथवी उपरें फरवुं खीलाना मूलसुधी आववुं ते पढमंके० प्रथमना यथा प्रवृत्तिकरण सरिखुंछे, तथा कोइक कीडी थाणुंसरणचके० खीलेचढी ते सरिखुं बीजुं

मपुव्वंके० अपूर्वकरणछे, तथा कोइक कीडी खीलेचढीने तेखीलाथी उपयणके० उ डीगई ते सरिखु जीवने त्रीजुं अनिवृत्तिकरण कहिये ॥ ६ ॥

याणुंवगंठिदेसोके० याणुंजे खीलो तिहाज टकीरहेवु ते ग्रंथीदेशें रहेवुं एटले गंठीयसत्तस्सतञ्चवणके० ग्रथीगतजीवनुं कोइकालसुधी तिहा रहेवुहोय, ते सरि खुंछे, तथा उसरणपिवतत्तोके० ते खीलारूप गंठीदेशथी ओसरे एटले पाछुफिरे ते पुणोवि के० फरी कर्मस्थितिनी वृध्दिकरे फरी उत्कृष्टी कर्मस्थितिवधारे ॥ ७ ॥

ए सातगाथाये वे दृष्टातकह्या तेणेकरी कोइ सञीपर्याप्तो पचेंद्री नव्यजीव मु क्तिजावा योग्यहोय, जेने अवढ्ढपुग्गलपरियट्ट के० अर्द्धमात्र पुजलपरावर्त्त शेष संसार बाकी रह्यो होय, एहवो एटले लक्षणेपूरण जे जीव होय ते जीव जे करे ते आगली गाथाये कहेछे ॥ ५ ॥ इति पचमगाथार्थ

अपुव्वकरणमुग्गर, घायविहिय झ्ढगठिन्नेउसो ॥
अतमुहुत्तेणगउ, नियट्टिकरणे वि सुज्झतो ॥ ६ ॥

अर्थ — हवेपूर्वोक्त लक्षणवत जीव ते ग्रंथीदेशसुधीआवे, तिहा परिणाम निर्म लतानी वृध्दिहोय ते कहेछे, अपुव्वके० पूर्वेकोइवारे पाम्योनही, एहवुजे परिणाम तेने अपूर्वकरण कहिये, ते अपूर्वकरण कहेवुछे जे निवड आकरी अत्यंतकठिण एवी पूर्वोक्तरूपजे ग्रंथी तेने नेदवाने मुग्गरके० वज्र सरिखु छे तेने घायके० घायेंकरीने विहियके० विहित एटले कर्योछे डढग्रंथीनुं नेदजेणे, सोके० तथानूत ते जीव प्रतिक्षणे विशुध्दमान परिणामनी निर्मलता वधते थके अंतर मुहूर्त मात्रमा पूर्वोक्त अनीवृत्ति करणेगयो एटले ग्रथीनेदकरता अंतर मूहूर्तलागे तिहां चढते परिणामे ग्रंथीनेदकरी अनिवृत्तिकरणे जाय, इहां अपूर्वकरणनी विशुध्दता थकी अनिवृत्तिकरणनी निर्मलता वशुध्दतरछे, माटे अपूर्वकरण अने अनिवृत्तिक रणनी निन्नता थई ॥ ६ ॥ इतिपष्टिगाथार्थ

हवे ते अनिवृत्तिकरणे गयोथको जीव जे करे ते कहेछे

सो तछरणे सुहमोव, वयरी जय जणियपरमआनंदं ॥
सम्मत्तंलहइजीवो, सामन्नेणं तुह पसाया ॥ ७ ॥

अर्थ — ॥ सोतछके० तेजीवने तिहां अनिवृत्तिकरणे अती विशुध्द परिणाम ना जोरथी मिथ्यात्व मोहनीयना पुजलनीस्थिति वे थाय, तेमा पहेली स्थिति अं तरमुहूर्तवेद्य एटले एक अतरमुहूर्तमा खपीजाय, एटली स्थितिना मिथ्यात्व मो

ह्नीय नामा कर्मनादलीया ते महोटीस्थितिजे कोडाकोडी सागरोपममां पल्योपमना असंख्यातमा जागे न्यूनछे ते स्थितिमांथी नजीकखेंचीले, एटले बीजी पल्योपमने असंख्यातमेंनागे न्यून एककोडाकोडी सागरोपम प्रमाणहती तेमाथी अंतर मूहुर्तप्रमाण वेद्य नीची खेंचीने जूदीकीधी, बाकी शेषरही तेनुं महोटो पुज अलगोराख्यो एटले न्हानीस्थिति तथा महोटीस्थितिने वचमां आंतरोपडयो ते वारे ए बेहुस्थितिनी वचमां जे खाली जगारही तेनेअंतरकरणकहिये एम इहां अनिवृत्तिकरणना जोरथी अंतरकरण करे.

अने प्रथम स्थितिगत दलियाने अंतरमूहूर्तमां खेपवे अने महोटीस्थितिमांथी आवता दलियाने उपशमावे विष्कंभित उदयकरे अंतरमुहूर्त उदयनआवे एवाकरे एटले अनिवृत्तिकरणे बे कार्यकरे एकतो मिथ्यात्वस्थितिना बेनागकरी अंतरकरणकरे अने बीजुं अंतरमुहूर्तवेद्य प्रथम लघुस्थितिने खपावे एटले अनिवृत्तिकरणनो कालपूरोथाय तेवारे आगल अंतरकरणमां धसे दोडे जाय प्रवेशकरे, तेवारे तिहां अंतरकरणने प्रथमसमये हेनाथ तमारे प्रसादे क्षायिकादिकनीपरे विशिष्टतो नही पण सामान्यपणे अल्पकालीन उपशमनामा समकितपामे, ते सीरीतेपामें तेनी उपमाकहेछे,रणेसुहमोव्ववैरि जयजणियपरमआणदंके० जेमसुजटहोय ते रणने विषे वैरीने जीतवाथी परमानंदपामे, तेम अनादिनाजे राग द्वेषरूप महोटाशत्रु तज्जनित गुरुकर्मस्थित्यादि अनंतानुबंधिया चार वैरीने जीतवाथी परमानंद सरिखुं सम्यक्त्व जीवपामे यदुक्तं आवश्यकादिग्रंथे

पावति खवेऊणं, कम्माइ अहा पवत्ति करणेण ॥ उवलनाएण कहमवि, अनिन्नपुवि तउगवि ॥ १ ॥ तगिरिवरंच नेतु, अपुव्वकरणुग्गवज्जधाराए ॥ अंतोमुहुत्तकालं, गंतुमनियट्टिकरणम्मि ॥ २ ॥ पइसमयंसुप्पंतो, खविऊ कम्माइ तव्वहुआई ॥ मिच्छतं मिउईणे, खीणेणुइयंमिउवसते ॥ ३ ॥ संसारगिम्मतवियो ॥ तत्तोगोसीसचंदणरसोव, अईपरमनिवुइकर, तस्संतेलहइसम्मत्तं ॥ ४ ॥

हवे ए चारगाथाओनो अर्थ लिखेछे अनादिकालनुं संसारचक्रमां नमतोथकोजीव पावतिके० पामे, मिथ्यात्वमोहनीयादिक कम्माइके० कर्म्मोने खवेऊणंके० खपावीने ते अहापवत्ति करेऊणके० यथाप्रवृत्तिकरणेकरीने कर्मा खेपवे, तेनुंदृष्टांत उवलनाएणके० उपलजे पूर्वोक्त नदीना प्रवाहनो पाखाण, तेना दृष्टांतेखेपवे, पछी अनिन्नपुविके० पूर्वेकोइवारे नेदीनथी एवीजे रागद्वेष परिणतिमई मिथ्यात्वग्रंथीतं के० ते ग्रंथीने शीरीतेनेदे के गिरिवरंके० गिरवरजे पर्वतते नेतु के० नेदयाने जेम व

त्र बलवानछे, तेम अपूर्वकरण परिणामरूप उग्र वज्रधाराये करीने जीव ग्रंथी नें दतो अंतर मुहूर्तकालमां अनिवृत्तिकरणेगयो, पछीते अनिवृत्तिकरणे गयोथको शुं करे तेआगली गाथाये कहेछे ॥ २ ॥

पइसमयंके० प्रतिसमये एटले समय समयप्रते विशुद्धमान परिणामिथको ति हां बहुलाकर्मोने खेपवे, तेवखते जे मिथ्यात्वना दलियां उदयआव्या, तेने क्षयकरे अने जे उदय न आव्या उदयाभिमुख न थया ते दलियाने उपशमावे, एटले उदी रणादिक करणवलें पण विपाकोदय अथवा प्रदेशोदय जे थईशकेनही तेने उपश माव्या कहिये, एम इहा अनिवृत्तिकरणे केटलाक मिथ्यात्वना दलियाखेपव्या, अने केटलाक उपशमाव्या, अने मिथ्यात्व स्थितिना बे भागकरी विचमां अंतरकरण कर्युं ॥ ३॥ हवे ते अंतरकरण करता जे थयु ते आगली गाथाये कहेछे.

संसारगिम्मके० जेम कोईक पंथी जन ग्रीष्मकालमा मध्यान समये निर्जलव नमा सूर्यनापडेला किरणने परितापें पडेला लूना अजडतापेकरी अतिव्याकुल थयो होय, तेने कोई शीतल स्थानकमले वली तिहाकोई बावनाचदननुं रसछांटे तेवारे ते पंथी साताथामे केवो आनदमग्न होय

तेम इहां भव्यजीव रूप पंथी अनादिकालनुं संसाररूप उग्र गीष्म कालें जन्म मरणादिकरूप निर्जलवनमां कषायरूप उग्रतापे पीडयो रोगशोगादिरूप लू अजड एटले लुख तेणेकरी अलुज्यो (दग्धथयेलु) अने तृष्णारूप महोटी पीपासा ते णेकरी पराभव्यो थको एवो भव्यपथी ते अनिवृत्तिकरणरूप शुद्ध शरलमार्गे पा मि दूरथी अतरकरणरूप शीतलस्थानकदेखी हर्षवतथको धसीतिहां पहोतो, एटले गोशीर्षजे बावनाचदन तेहनोजे रस तेहनीपरें शीतल अईपरमके० अतिशय परम उत्कृष्ट अनिवृत्तिकरण परम सुखसाताकरण एहवु तस्सतेके० ते अनिवृत्तिकरणने अंते अने अतरकरणने प्रथमसमये घनसारवत् शीतल सम्यक्त्वपामे तेवारें अनंतानु बंधी तथा मिथ्यात्वकृत परिताप सर्व मटीजाय गाढ तृष्णा पीपासा मटीजाय॥४॥

इहां अनादिकालनुं परमशत्रु परम दुःखदातारूप एहवा मिथ्यात्वनुं दुःख अं तर मुहूर्त्तसुधी दफेथाय (दूरथाय) अनादिनो प्रथम दुःखांत इहांथयो इहां सि द्धांत सैलीमां कालनिष्टाये गुणदोष प्राप्ति तथा विरह आश्री. चारभांगा कह्यांछे तेना नामकहेछे १ अनादिअनत २ अनादिसांत ३ सादिसांत ४ सादिअनंत ए चारभांगानुं अर्थकहेछे जेने मिथ्यात्वादिक अनादिनुंछे अने ते किवारें मट से पण नही एवा अभव्यादिकने अनादिअनंत प्रथमभागोछे अने जे भव्यजीवें

प्रथम सम्यक्त्वपाम्युं तेवारे ते जीवें अनादिना मिथ्यात्वनुं अंतआएयुं तेमाटे तेने अनादिसांत बीजोनांगो जाणवो, तथा जे जीव सम्यक्त्वपामी वली सम्यक्त्व वमन करी मिथ्यात्वे गया तेवारे मिथ्यात्वनी आदिथयी, पढी केटलोक काल मिथ्यात्वे रह्यो वली शुनसामग्रीना योगथी फरी सम्यक्त्व पाम्यो तेवारे मिथ्यात्वनो अंतथयो ए त्रीजो सादिसांतनामा नांगोथयो, तथा चोथो सादिअनंतनामा नांगो तेक्षायिक सम्यक्त्वादि क्षायकनावे जेने जे गुण प्रगट थया तेगुण तेने होय पण मिथ्यात्वीने न होय, केमके ग्रंथी नेद कखापढी जे मिथ्यात्व होय, ते तो सादिसांत नागे ज होय, माटे जेने सम्यक्त्वादिक क्षायकगुण प्रगट्या ते सादि, अने ते गुणआव्या जाय नही ते अनंत, एटले नव्य मिथ्यात्वीने त्रणे नांगाहोय, अने अनव्य मिथ्यात्वीने एकज अनादिअनंत नांगोहोय, यडुक्तः—मिन्नत्तमनवाण, तमणाइमणंत येमुणेयवं॥ नवाण तमणाइ, सपज्यवसियंतु सम्मत्ते॥ १॥ अर्थ.—अनव्यने मिथ्यात्व अनादि अनंत नागेहोय, अने नव्यने अनादि सपर्यवसित नागें मिथ्यात्वहोय इति॥ १॥ ७॥

हवे सम्यक्त्व केटले नेदेंहोय ते आगमनी गाथायें कहेछे.—

तंचेगविहंडुविहं, तिविहं तह चउविहंच पंचविहं ॥
तछेगविहं जंतुह, पणीय नावे सु तत्तरुई ॥ ८ ॥

अर्थ.—एक प्रकारे बे प्रकारे त्रण प्रकारें चारप्रकारे अने पांचप्रकारे पण आगममां सम्यक्त्व कह्युंछे, ते नेदोना स्वरूप विवरीने कहेछे.—तछेगविहंके० तिहां एकविध सम्यक्त्व ते जके० जे हे परमेश्वर तुह्के० ताह्रा पणियंके० प्रकास्या जे जीवादिकनाव पदार्थ तेनेविषे तत्वरुचिहोय अर्थात् परमार्थ बुद्धिहोय, शकल दोषरहित अने शकलगुणे संपन्न एहवा अरिहंतदेवे नाष्युंजे तत्वते सत्यछे एहवी रुचि परमार्थबुद्धि, तद्रूप आगममां कह्युछे. 'तमेवसच्चनिस्संकं जजिणेहिपवेइयं' इत्यादि रुचिरूप; यडुक्तं योगशास्त्रेः—रुचिजिनोक्ततत्वेषु सम्यक्श्रद्धानमुच्यते जायतेतन्निसर्गेण गुरोरधिगमेनय १

ए उपला श्लोकनो अर्थ करेछे —श्री जिनेश्वर नाषित जीवाजीवादिक तत्वनेविषे जे सम्यक्श्रद्धान के० निश्चल प्रतीत तेने तत्वरुचि कहियें, ते तत्वरुचि श्रद्धान मिथ्यात्वदलना रसनी मंदताये जातिस्मरणादिक निमित्ते ईहापोह करता करतां सहेजे पोतानीमेलें तत्वश्रद्धान पामे ते निसर्ग सम्यक्त्व कहेवाय, अथवा छानगुरुनी उपाशना करतां सिद्धांतवाणी सांजलतां जे पामे ते उपदेसिक श्रद्धान कहिये ॥ १ ॥ इत्यादिक लक्षण जे तत्वरुचि ते एकविध सम्यक्त्व कहिये ॥ ८ ॥

हवे द्विविध सम्यक्त्व त्रणप्रकारें कहेछे —

डुविहंतु दव्व जावा, निछय ववहारउवि अहवावि ॥
निस्सग्गुवएसाउ, तुहवयण विऊहिंनिद्दिठं ॥ ए ॥

अर्थ — हे जिनेश्वर ताहरा जाष्याजे द्वादशांग तेना जाण एहवाजे प्रवीण पुरुष तेणे एक द्रव्य सम्यक्त्व अने बीजुं जाव सम्यक्त्व ए बेप्रकारें सम्यक्त्व कह्युछे, अथवा एक निश्चयसम्यक्त्व अने बीजुं व्यवहारसम्यक्त्व एरीते पण बे प्रकारकह्याछे. तथा वली एक निसर्गसम्यक्त्व अने बीजुं उपदेश सम्यक्त्व ए पण बे प्रकार कह्याछे. एम त्रण प्रकार द्विविध सम्यक्त्वना ते तुहवयण के० ताहरां वचनना विऊहिके० वेत्ता एटले आगमार्थना जाण पुरुषे निद्दिठंके० देखाड्याछे ए

हवे त्रणप्रकारे द्विविधसम्यक्त्वकह्यु तेनालक्षण कहेछे —

तुह वयणे तत्तरुइ, परमठ मजाणउवि दव्वगयं ॥
सम्मं जावगयं पुण, परमठ वियाणउ होई ॥ १० ॥

अर्थ — हेप्रजु तुह के० ताहरां वयण के० वचननो परमठ के० परमार्थ जे रहस्य तेनो मजाणउवि के० अजाणछे, पण ताहरा वचननेविषे तत्तरुइ के० तत्त्वरुचिछे, केमके जे राग द्वेष अज्ञान ए त्रण दोषनो नाशथवाथी वीतरागथयाते असत्य जाषण करेनही, माटे श्रीजिन जाषित वचन सर्व सत्यछे, एम ते जाणेछे तो एवीजे तत्वरुचि ते दव्वगय के० द्रव्यगत सम्यक्त्व कहिये यडुक्तं सिद्धांते —जावे एसहहंतो अयाणमाणेविसम्मत्त, इतिवचनात् जे सूक्ष्म अर्थने नथीजाणतो एहवा अजाणनेपण जो जावे सहहणाछे के जे अरिहंत ते शुद्ध जाषण करनाराज छे एहवी उंचे प्रतीतछे तो अजाणपुरुषने पण द्रव्यथी सम्यक्त्वछे.

बीजु जावगयं के०जावगत सम्म के० सम्यक्त्व ते पुण के० वली परमठवि याणउ के० परमार्थना जाणपुरुषने होई के०होय. यडुक्तं सिद्धाते —जीवाइ नव पयछे, जो जाणइ तस्स होइ संमत्त इतिवचनात् माटे जे जव्यजीव जीवादिक नवेपदार्थने समस्त नय गंम जंग प्रमाण निक्षेप प्रमुख स्याद्वाद सैलीपूर्वकजाणे, सहहे, ते जव्य जीवने जावगत सम्यक्त्व कहिये ॥१०॥ एमद्रव्यसम्यक्त्व तथा जावसम्यक्त्व कह्युं

हवे निश्चयव्यवहार रीतें बेप्रकारनासम्यक्त्वनु लक्षण कहेछे —

निछयउसम्मत्तं, नाणाइमयप्प स्सुहपरिणामो ॥ इ
यरंपुण तुहसमए, जणियंसम्मत्तहेऊहि ॥ ११ ॥

अर्थ.— ज्ञान दर्शन चारित्ररूप शुद्ध श्रद्धा जासन रमणता पूर्वक रत्नत्रयीरूप आत्मानुंजे शुभपरिणाम तेने निश्चयउसमम्मत्तंके० निश्चय सम्यक्त्व कहिये, एटले आत्मानेज निश्चय सम्यक्त्व कहिये, केमके आत्मा ने आत्माना गुण ते कांईजूदानथी परिणामे अनन्यछे एकछे गुण गुणी जावें अजेदेज रह्याछे केमके अजेदपरिणामे परिणम्योजे आत्मा ते तजुणरूपज कहेवाय. यदुक्तं योगशास्त्रेः— *आत्मेवदर्शनज्ञान चारित्राण्यथवायते ॥ यत्तदात्मैवस्वगुणैः शरीरमधितिष्टति॥१॥*

प्रायें अप्रमत्तसाधुने निश्चयनय सम्यक्त्व पूर्णकहेवायछे केमके जेवुं जाण्युं ते वोज त्यागनावछे अने श्रद्धापण तदनुरूपछे माटे स्वरूपोपयोगी जीवने आत्मा तेहिज ज्ञान दर्शन चारित्रछे कारणके आत्मा रत्नत्रयात्मक अजेदजावें शरीरमां रह्योछे, माटे रत्नत्रयीने शुद्धोपयोगे वर्त्ततजीवने निश्चय सम्यक्त्व कहिये

तथा इयरके० इतर ते बीजुं व्यवहारसम्यक्त्वछे. ते हे प्रजु तह्मारा सिद्धांतने विषे सम्यक्त्वना हेतुजे मिथ्यात्वीनु संस्तव परिचय प्रमुख जे अतिचारादिक दोषछे तेना त्यागथी थाय तथा देव गुरु जक्ति बहुमान योगे शासनोन्नति हेकहिं के० हेतुयें थाय यदुक्त गुणस्थानक विचारग्रंथे — देवेगुरुचसंघेच सद्भक्तिशासनोन्नति॥ अव्रतो पिकरोत्येव स्थितिस्तूर्येगुणालये ॥ १ ॥ अर्थः— देव गुरु तथा श्री संघ तेनी बहुमान सहित जक्तिकरे शासनोन्नतिकरे अविरति गुणठाणे रह्योथको पण आगमोक्त विधिमार्गे निरतिचार सम्यक्त्वप्रवृत्ति सहितहोयतेने व्यवहार सम्यक्त्व कहियें ॥ ११ ॥

हवे त्रीजा बे प्रकारे सम्यक्त्व कहेछे तेमा एक निसर्गे सम्यक्त्व प्राप्ति अने बीजी उपदेशजन्य सम्यक्त्व प्राप्ति. इहां शिष्यपूछेछेके निसर्गके० सहेजे सम्यक्त्वनी प्राप्ति केवीरीतेथाय? तेवारे गुरु दृष्टांत गर्जित सम्यक्त्व प्राप्तिनो उपाय कहेछे·—

जल वछ मग्ग कुद्दव, जराइ नाएण जेणपन्नत्तं॥ नि
स्सग्गुवएसजवं ॥ समत्तं तस्स तुम्न नमो ॥ १२ ॥

अर्थः— ए गाथामां पांच दृष्टांत कह्याछे, तेमां जलनो तथा वस्त्रनो अने कोद्रवनो ए त्रणदृष्टांत आगल पुंज त्रय जावनावसरे कहीबतावसे. अने मार्गनो तथा ज्वरनो ए बे प्रस्तुतछे ते कहेछे·—जेमकोईक पंथी मार्गथी ज्रष्टथयो पछी बीजाकोईना उपदेश पाम्याविनाज जमतो जमतो पोतानीमेले सहेजे मार्गेचढे, अने कोईक पंथ ज्रष्ट थयलो पंथी तथाविध पापना उदयथी कोई सज्ञाननो योग न मलवाथी मार्ग पामेजनही. तिहांनुंतिहांजरहे अनेत्रीजोपुरुष बीजानेपूछीमार्गपामे

, तेमज वली ज्वरनो दृष्टांत कहेछे-- जेम कोईकने तापज्वर थाव्यो ते कोईने औषध कर्याविनाज पोतानी मेले जतोरहे, अने कोईकने तो औषध चूर्ण धागादि (दोरादिक) प्रयोगकरवाथी ज्वरजायछे, तथा कोईकनेतो असाध्यज्वर कोईरीतें जायजनही एरीते ए बे दृष्टांत सम्यक्त्व प्राप्तिविषे जोडवा ते आवीरीते –

कोईक शुक्लपक्षी कालादिक कारण परिपाकवंत चरमावर्त्ति चरमकरणी एवो जव्य जीव ते सहेजे आपे आप विचारतेथके सम्यक्त्वपामे ते निसर्ग सम्यक्त्व कहिये, तथा कोईक जीव पूर्वोक्त कालादिक योग्यतावंत होय पण सद्गुरुने योगे उपदेश सांजली अनादिनी मूलमटाडी देव गुरु धर्म सद्दहणारूप सम्यक्त्वपामे तेने उपदेश सम्यक्त्व कहिये एरीते नाएणके० ए न्याये (दृष्टांत) द्वाराये निसर्गोद्भव सम्यक्त्व तथा उपदेशोद्भव सम्यक्त्व ते हे प्रजु तुमे कह्यु परूप्युं तेमाटे परमोपकारी एहवा तुजने माहरो नमस्कार थाओ ॥ १२ ॥ एम बेप्रकारनुं सम्यक्त्व त्रण रीते कह्यु.

हवे त्रणप्रकारे सम्यक्त्व कहेछे --

तिविहं कारग रोअग, दीवग नेएहिं तुह मय विऊहिं ॥
खाउवसमोवसमिय, खाइय नेएहिं वा कहियं ॥ १३ ॥

अर्थ --हेनाथ तुहमय के० तहारा मतना विऊहिं के० वेत्ता जे गणधरादिक, तेणे कारक रोचक अने दीपक एम तिविहं के० त्रण नेएहिं के० प्रकारें सम्यक्त्व कह्युछे, वा के० अथवा क्षायोपशमिक उपशमिक अने क्षायिक एरीते पण त्रणनेदें सम्यक्त्व कहियंके० कह्युछे ॥ १३ ॥

हवे कारकादिक सम्यक्त्वना लक्षण कहेछे –

जं जह नणियं तुमए, तं तह करणं मि कारगो होइ ॥
रोअग सम्मत्तं पुण, रुइमित्त करंतु तुह धम्मे ॥ १४ ॥

अर्थ – हेनाथ जे जेम यथार्थनावे विधिमार्ग तुमे नणियं के० प्रकाश्यो ते तेमज आज्ञाने अनतिक्रमतोथको एटले तुमारी आज्ञासहित आगमोक्त शैलीपूर्वक यथाशक्तिये दान पूजा व्रत नियमादिक करे तेने कारक सम्यक्त्व कहिये, तथा पुन के० वली बीजुं रोचक सम्यक्त्व, ते तुहधम्मेके० तहारा धर्मनेविषे रुईमित्तकरतुके० रुचिमात्रकरे, श्रीजिनोक्त धर्मकरवानी इछारहे शुद्धश्रद्धाराखे कोईने धर्म प्रवृत्ति करतोदेखीने रूडुंमाने परतु पोते नारीकर्मी माटे क्रियानुष्ठानादिक करी शके नही तेने रोचक सम्यक्त्व कहिये ॥ १४ ॥

हवे दीपक सम्यक्त्व कहेछेः—

सयमिह मिच्छद्दिठ्ठी, धम्मकहाईहिं दीवइ परस्स ॥
दीवग सम्मत्तमिणं, नणंति तुह संमय मईणो॥ १५ ॥

अर्थः— सयमिह के० स्वयं पोतेतो मिथ्यादृष्टी अनव्य दुर्नव्य होय, पण अंगारमर्दकाचार्यनी परे धम्मकहाईहिंके० धर्मकथादिकेकरी आदिशब्दथी सामायिकाणना अनुष्ठानना अतिशयेकरीने एटले दंनरचना विशेषेकरी, पर जे बीजा नव्य नद्रक जीवोहोय तेने धर्मकरी दीपावे, एटले आगला जीवोना घटमां प्रकाशक रावे परंतु पोताने अंतरंगपरिणामें श्रद्धानहोय एहवाने हे प्रनु तहारा समयजे सिद्धांत तेना जाणपुरुषो दीपक सम्यक्त्व कहेछे

इहां शिष्यें प्रश्नकर्युंजे पोते मिथ्यात्वी मिथ्यात्वे वासित अंत करण वालाने सम्यक्त्वी केमकहोछो ? तेवारे गुरुकहेछे हे शिष्य, जो मिथ्यापरिणामीछे तोपण आगला प्राणीर्डने धर्म पमाम्वानो हेतुथायछे, अथवा शासनोन्नतिकरेछे, माटे कारणे कार्यनो उपचारकरी सम्यक्त्व कहिये, सम्यक्त्वनो हेतुछे माटे सम्यक्त्व कहिये, यडुक्तं सिद्धांते.—विहियाणुठाण पुण, कारग मिहरोयगं तु सद्दहणं॥मिछदिठीदीवइ, जत नेदीवगं ततु ॥१॥ अर्थ —विहियाणुठाण के० विहित एटले नीपजाव्युंछे कर्युंछे आगमानुसारें धर्मानुष्ठानजेणे ते कारक सम्यक्त्व कहिये, अने रोयगं के० रोचक सम्यक्त्व ते शुद्धसद्दहणारूप रुचिथाय तेने कहिये, वली मिछदिठी के० पोतें मिथ्यादृष्टीथको परने तत्वदीपावे, परने सम्यक्त्व प्रकाशकरे तेने दीपक सम्यक्त्व उपचारें कहिये॥१५

हवे बीजीरीतें प्रकारांतरे त्रणनेद सम्यक्त्वना कहेछे.—

अपुव्वकय तिपुंजो, मिछ मुइन्नं खवित्तुअणुइन्नं ॥
उवसामिय अनियट्टि, करणाउ परं खउवसमी ॥ १६ ॥

अर्थ·— इहां त्रण सम्यक्त्वनी विगत ए प्रकरणनेविषे प्रकरणकारना आशयथी अवचूरिकारनो आशय जिन्नपणेछे. पण टीक शब्दार्थ मलतोनथी. माटे आवश्यक विशेषावश्यक अर्थदीपिका सुदर्शनाचरित्र कल्पनाष्य प्रमुखग्रंथोने सम्मत प्रकरणकारनो आशयछे ते विगत लखियेछे —प्रकरणकारें सिद्धांत तथा कर्मग्रंथिक ए बेहुना अनिप्राय ग्रहणकरी प्रकरण रचनाकरीछे तेमां सिद्धांतकारनो ए आशय छे जे अनादि मिथ्यादृष्टीने कोई तथाविध सामग्रीनो सद्नाव एटले प्राप्तिथई यथाप्रवृत्तिप्रमुख त्रणकरण करता अपूर्वकरणना अध्यवसायथी ग्रंथी नेदी उपमि

थ्यात्व स्थितिना त्रण पुंज करी प्रथम शुद्धपुंजजनेवेदे ए त्रणपुंजनी स्थापना करियेछैये.—(○ शुद्धपुंज ⊛ मिश्रपुंज ● अशुद्धपुंज) ते कारणथी उपशम सम्यक्त्वपाम्याविनाज प्रथम क्षयोपशम सम्यक्त्वपामे, तथा वली कोईक नव्यजीव यथाप्रवृत्यादिक करणत्रय अनुक्रमे पूर्वोक्तविधियेंकरी अंतरकरणने प्रथम समये उपशम सम्यक्त्वपामे पण उपशमें रह्यो पुंजत्रण करेजनही, अंतरमुहूर्त काल प्रमाण शुद्धनिर्मल अपौद्गलिक उपशमजाववेदी तिहांथी चलायमान थयोथको अवश्य मिथ्यात्वेंजाय, अपरपुंजतो छेनही माटे इलिकाने दृष्टांतेफरीपाछो संवाएजे मिथ्यात्व स्थानकथी आव्यो तेफरी मिथ्यात्वेज जाय, जेम इलिजे कोईजातनी लट इयल एककाष्ठादिक पदार्थथी आगल जावाने चाहनाकरे त्यारे आगलागात्रनु विक्षेप के० विस्तारवुकरे, आगला शरीरनाजागने चारेतरफविस्तारता स्थानक अणपामता पाछीपूर्वस्थानके जिहांथी सरीर उपाड्युंहतु तिहाजआवे यडुक्तं कल्पनाप्ये·— आलंबणमलहंति जहसछाणनमुचएइलिया ॥ एवअकयतिपुंजो मिछंचियउवसमीएइ ॥ १ ॥ ए गाथानो अर्थ सुगम प्रथम लखाइजगयोछे

एम स्थानांतरगमनना जाव माटे उपशम सम्यक्त्वी मिथ्यात्वेंज जाय ए सिद्धांतिकनो अनिप्रायछे, तथा कर्मग्रंथ वाला एममानेछे के जेकोई अनादि मिथ्यादृष्टी संसारीजीव जेवारे चरमावर्त तथा चरमकरण करवाने अवसरे पहेला सम्यक्त्व प्राप्तिकालेज यथा प्रवृत्त्यादि करणत्रय करवा पूर्वकज अंतरकरणकरे, तिहां उपशम सम्यक्त्वपामी अवश्य त्रणपुंज करे, एटले यथाप्रवृत्तिकरणे ग्रंथीदेशेआवे, तथा अपूर्वकरणे ग्रंथीजेदकरे, तथा अनिवृत्तिकरणे मिथ्यात्वस्थितिना बेजागकरे, एकअंतरमुहूर्तवेद्य न्हानीस्थितिकरे, बीजी देसूणी कोमाकोडी प्रमाण मह्योटी स्थितिकरे एवी बे स्थितिकरे

एरीतें बे स्थितिकरी तेमांथी न्हानीस्थिति खेंचीलेई नेवचमां अंतरकरे एटले बे स्थितिनीवचमां खाली जायगारहे एमकरे, पछी न्हानीस्थितिने अनिवृत्तिकरणना अध्यवसायेकरी खपावीने, पछी अंतरकरण जे बे स्थितीनावचें खाली जायगारहीछे, तेमां प्रवेशकरे, त्या अंतरकरणमां प्रवेशकरवाने पहेले समयेज उपशम सम्यक्त्व पामे, ते अंतरकरणओलंघता अंतर मुहूर्त प्रमाण कालजाय तेनेज उपशम सम्यक्त्व कहिये.

हवे अंतरकरणमा वर्त्ततो औषधसरिखु जे उपशम सम्यक्त्व, ते सम्यक्त्वेंकरीने कोदरावा धान अथवा मलीनजल अथवा मलीनवस्त्र ए त्रणेना सरिखुंजे मिथ्यात्व मोहनीयकर्म तेने सोधीने त्रणेजागे वेचीनाखे, तेमां पहेलो जागतो शुद्ध

निर्विष तथा स्वछ निर्मल जाणवो अने बीजोजाग अर्द्धशुद्ध तथा थोडोक गदलुं अने थोडोमलीन जाणवो वली त्रीजो जाग संपूर्ण अशुद्ध यथास्थित तथा कलुष अतिमोहोलो तथा मलीन गलीच जाणवो हवे ए त्रणे वस्तुना दृष्टांते विवरीने विषदरीतें देखाडेछेः—

जिम मीणसहीत कोद्रव धानने ठ्ठसजलादिक औषधनायोगे एकजाग मीणरहीतकस्यो, बीजोजाग अर्द्धशुद्ध कस्यो, अने त्रीजोजाग जेमहतो तेमनोतेमरह्यो, ते अशुद्धछे, तथा जेम कोईक वस्त्रमलीनहतुं ते क्षारादिक औषधनायोगे अतिस्वछ निर्मल थाय, बीजुं थोडाऔषधानो प्रयत्नमाटे थोडुंनिर्मलथाय अने त्रीजुं मलीनज रहे, तथामलीन जलजेमनिर्मल फलादिकनायोगे अतीस्वछथाय, बीजुं थोडुंनिर्मल थाय त्रीजुं मलीनज रहे, एम त्रण दृष्टांतें अंतरकरण गत उपशमसम्यक्त्वरूप औषधनायोगे करी मिथ्यात्वमोहनीयना दलियां मिथ्यात्वरूप मीणमां जस्यांहतां तेनो एक जागतो शुद्धकस्यो मीणरहीत कस्यो, अने बीजोजाग अर्द्धमीणरहीत थयो, एटलामां अंतरमुहूर्तना कालनीसमाप्ति थई तेथीते बीजो जागतो अर्द्धशुद्धथयो अने त्रीजोजाग शुद्धकरवानेतो पोची शक्योज नही तेथी ते त्रीजो जागतो संपूर्ण मिथ्यात्वरूप मीणसहित विषथी जरेलोज रहिगयो.

हवे ते त्रणपुजनां त्रण नामथयां, तेमां पहेलो शुद्धपुजते दर्शनमोहनीयकहिये, हवे ते जीव अंतरकरण गत उपशम काल, पूरोथयेथके एटले जेटलोवखत अंतरकरणनो तेटलोज वखत उपशम सम्यक्त्वनोछे ते उपशम सम्यक्त्वनोकाल अंतरमुहूर्त्तप्रमाण पूरोथयेथके जो परिणामनी विशुद्धीरहे तो शुद्धपुंजनो उदयथाय, तेनुंनाम क्षयोपशम सम्यक्त्व कहिये, एटले मिथ्यात्वरूप मीणामां जरेलां दलियांजे शुद्धकस्यां तेहनो उदय क्षयोपशम सम्यक्त्वकहियें.

इहां शिष्य प्रश्नकरेछे के जो निर्विषदलियांकस्यां तोपण जातेंते दलियांपोते मिथ्यात्वनांछे, निर्विषथीतो रस रूप गंधादिक गयुं पण गुणने आवरणकरनारां दलियांतो तेमना तेमजछे, तो सम्यक्त्वश्रद्धा जासना केमथाय ? तेवारें गुरुकहेछे के जेमकोई अभ्रक अथवा अपर पाषाणादिक ते जातेंमलीनहोय तेनेकोई औषधादिक योगेकरी ते पाषाणादिकमांथी कालासरूप कलुषता काढीनाखे तेवारे ते दलनिर्मलथाय, पछीतेने आतरेजे वस्तुरहीहोय ते सर्वदीठामांआवे, पण ढांनीरहेनही तेमज इहां दर्शनमोहनीयकर्मना दलमध्ये अशुद्धपरिणतिरूप मिथ्यात्व विषेकरी मलीनथयेलुं अत्यंतकालासपणुं जरेलुंहतुं ते उपशम सम्यक्त्वरूप औषधनी

मह्वीमाथी दूरथाय, पछी निर्विपदलियांरह्या ते स्वछ अभ्रपटल सरिखांछे ते निर्मे लदलिया काईअद्धा नासनमा विपरिणाम करेनही, तेथी जो जाते मिथ्यात्वदलि याछे तोपण निर्विपछे (निर्मलछे) तेथी तेने क्षयोपशम सम्यक्त्व कहिये

यदुक्तं विशेषावश्यकवृत्तौ --तद्यथेसुप्रदीपस्य स्वछाभ्रपटलेगृहं ॥ नकरो त्यावृति काचि देवमेतद्रुवेरपि ॥१॥ एकपुंजी द्विपुजी च त्रीपुजी वानुक्रमात्; एने पश्चानुपूर्वेलेवु एटले त्रीपुजी द्वीपुंजी एकपुजी दर्शन्युनयवाश्चेव मिथ्यादृष्टिश्चकीर्त्तित ॥ २ ॥ इहा लोकनेविषे जेम अभ्रखना पडातरे रहेलुंदीपक सर्वस्थानके उद्योतकरे, पण तिहां अभ्रक जोआडोछे तोपण काई न्यून प्रकाश दीपकनुं करीशकेनही, ते वीजरीते सोधेला मिथ्यात्वदल तेपण काई न्यून श्रद्धाकरेनही.

तिहा त्रिपुजी ते सम्यक्दर्शनी द्विपुंजी ते मिश्रदर्शनी अने एक पुंजी मिथ्या दृष्टिहोय, तथा उपशम सम्यक्त्वथी आगलें जो काईक उज्वल काईकमलीन एह वा मिश्रपरिणामथाय तो मिश्रमोहनीयनो उदयथाय, एटले मिश्रपुजनो उदय आवे अनेजो अनतानुबंधीना उदय बलथकी अतिमलिन परिणामथया तो मि थ्यात्व मोहनीयनो उदयथाय एटले अशुद्धपुंजनो उदयआवे

एरीते संसारमा केटलाक त्रीपुजी केटलाक द्विपुजी केटलाक एकपुंजी, तेमां क्षयोपशमी त्रिपुजीहोय तथा मिथ्यात्व क्षय करवाने सम्यक्त्व मोहनीयनी उज्व लताकरे तेवारे द्विपुजीहोय, अथवा अपुंजी एटले पुंजरहित पण क्षायक सम्य क्त्वीहोय तथा जिवारे मिश्रव्हेलन करे अथवा क्षेपवे तेवारे एकपुंजीज होय इहा पुंजत्रयनो संक्रम कल्पनाप्ये एमकह्योछे प्रवर्द्धमान परिणामी जे सम्यक्त्वीहोय ते मिथ्यात्व दलिक पुजलने आकर्षीने सम्यक्त्वपुंजमा अथवा मिश्रपुंजमा सक्र मावे तथा मिश्रपुजलने सम्यक्त्वी सम्यक्त्वमा सक्रमावे.

तथा मिथ्यादृष्टी मिश्रपुजलने मिथ्यात्व पुंजमांनाखे अने सम्यक्त्व पुजल मि थ्यात्वपुजमां सक्रमावे, पण मिश्रपुजमा न नाखे, तथाचोक्तं--मिछत्तंमिअखीणे ति पुंजीसम्मदीट्ठिणोनियमा ॥ खीणमिउमिछत्तं डुएगपुंजीवखवगोवा ॥ १ ॥ एरीते कर्मग्रंथिकमतें प्रथम उपशम सम्यक्त्वजपामे अने ते उपशमि नीयमा त्रणपुंजकरे, उक्तंच कर्मग्रंथे.-कम्मगंथेसुधुव पढमोवसमी करेइ पुज तियं ॥ तवडिउपुणगछइ स म्मेमीसमिमिछेवा॥१॥ अर्थ सुगमछे एरीते सिद्धांतिकमार्गे तथा कर्मग्रंथिकमार्गे भिन्न भिन्न आशय छे ते प्रकरणकरनारे तो वेहुना आशयलेई प्रकरणनी रचना करीछे.

तिहा सिद्धांतकारना आशये कोई मिथ्यादृष्टी यथाप्रवर्त्त्यादि करणत्रये करी

अंतरकरणकरे तिहां अंतरकरणमां उपशम सम्यक्त्वपामे पण पुंजत्रय करेनही अंतरमुहूर्त्त उपशम सम्यक्त्ववेदीने पछी मिथ्यात्वेंजाय ए आशय प्रकरणकारे सातमी गाथामां अनिवृत्तिकरणे अंतर करणकरी सामान्ये मात्र उपशम सम्यक्त्वपामे पण पुंजत्रण न कर्यां एमकह्युछे, वली कोईजीव यथाप्रवृत्तिकरण करी पछी अपूर्वकरणे ग्रंथीनेदी पुंजत्रयकरी अनिवृत्तिकरणे क्षयोपशम सम्यक्त्वपामे ए आशय अपुव्वक यत्तिपुंजो एम सोलमी गाथामां कह्योछे, एटले अनादि मिथ्यादृष्टी प्रथम क्षयोपशम सम्यक्त्वजपामे ए सिद्धांतसैलीछे

तथा कर्मग्रंथाभिप्राये तो अनादि मिथ्यादृष्टी जीव पहेलां करणत्रयपूर्वक अंतरकरणे उपशम सम्यक्त्वीथईने त्रणपुंजअवश्यकरे. पछी जे पुंजनो उदयथाय तिहांजाय एटले कोई शुद्धपुंजेजायतो क्षयोपशम सम्यक्त्वीथाय तथा जो मिश्रपुंजनो उदय थायतो मिश्रगुणठाणेजाय अने अशुद्धपुंजेगयो तो मिथ्यात्वीथाय ए अभिप्राय कर्मग्रंथसेलीनो छे, ते ग्रंथकारें सत्तरमीगाथाये अकयतिपुंजोउस्सर इत्यादि आशयकह्यो, एरीते सिद्धांतिक तथा कर्मग्रंथिक बेहुएमली उपशम सम्यक्त्व पामवाना बे मार्गकह्या तथा क्षयोपशम सम्यक्त्वपामवाना पण बे मार्गकह्या, एटलीवात प्रसंगथी कही हवे मूलगाथानो शब्दार्थ लिखियेछे.

अपुव्वकयत्तिपुंजो इत्यादिक अपूर्वकरणे कर्याछे त्रणपुंजजेणे मिच्छजे मिथ्यात्व तेनादल उइस्स के० उदयआव्या तेने क्षेपवीने क्षयकरीने अने अणुइन्नं के० उदय न आव्या जे मिथ्यात्वनादल तेने उपशमावीने अनियट्टीकरणाउ परस्वउवसमी के० अनिवृत्तिकरणथी आगल क्षयोपशम सम्यक्त्व पामे ॥ १६ ॥

हवे कर्मग्रंथनी सेलीये उपशम सम्यक्त्व प्राप्तिनो उपाय कहेछे.–

अकय ति पुंजो ऊसर, दव इलिय दड्ढ रुक्ख नाएण ॥
अंतरकरणुवसमिउ, उवसमियोवासससेणि गउ ॥ १७ ॥

अर्थः– अकयतिपुंजोत्ति के० जेणे त्रणपुंज पूर्वेकर्यानथी एटले पुंजकर्याथी आगल जेम वनमां दावानल बलतो ऊसरके० उखरखेत्र एटले जिहां खारीजमीन रणरूपहोय अथवा केवल वेलुएटले रेतिनीभूमिहोय सुकी नदीप्रमुखनी, तेने ऊखरभूमिकहिये; तथा जेभूमिउपर पूर्वेदवलागी गयोहोय अने घासलाकडी तथा रुख्य के० जाडप्रमुख बली साफथई गयाहोय ते दवदग्ध भूमिकहिये एटले एक ऊखरभूमि अने बीजी दवदग्धभूमि ए बे ठेकाणां जो बलती इलियके० अग्नीपामें

तो पोतानीमेळे उल्रवाइजाय नाएणके० एन्याये मिथ्यात्व वेदनरूप जे दावानल ते अंतरकरणरूप ऊखरखेत्रपामीने सहेजे पोतानीमेळे उवसमिउके० उपशमि जाय उल्रवाईजाय तेथी जीव उवसमिउके० उपसम्यक्त्व पामे.

केमके पूर्वे अनिवृत्तिकरणना जोरथी जे जे मिथ्यात्वना दलिया उदयआ व्याते क्षयकीया अने जे उदयनथी आव्या ते उपशमाव्या, एटले आवता रोकी राख्यां तथा विष्कंभित, उदयकखा अने वली दूरेराख्यां एम विचमां अंतरमुहूर्त गम्य निर्मल, प्रदेशोदीरणादि करण ने अयोग्य एहवु अंतरकरणकीधुं

इहां शिष्य प्रश्नकरेछे के पूर्वे क्षयोपशम सम्यक्त्व पामवाने अवसरे एम कह्यु हतुं जे उदयआव्या मिथ्यात्वदल ते क्षयकीधां अने उदय न आव्या ते उपशमा व्या ए लक्षणकह्यु हतुं अने वली उपशम सम्यक्त्व काले पण एमजकहोछो तो क्षयोपशम तथा उपशममा कांई, फेरपडयोनही तेमछता गणतिमां जूदाकेम कहोछो?

हवे गुरु उत्तर कहेछे के क्षयोपशममा तो शुद्धदलियानो उदयछे तेमां कोई मिथ्यात्व पुंजमाथी दलियुंनलीने उदय आवे ते प्रदेशोदयछे इतितत्व.

हवे ते अनिवृत्तिकरणना बलथी मिथ्यात्वनी एक न्हानी अने एक महोटी एवी वे स्थितिकरी तेमां पेली लघुस्थितिने क्षेपवी अने बीजी महोटी स्थितिने दूरथंभावी विचमां अंतरकखो, तेमां प्रवेशकरे तेने पहेलेसमयें उपशम सम्यक्त्व होय, पछीते उपशम सम्यक्त्वना जोरथी अंतरमुहूर्त्तमां शेष विष्कंभितउदय मि थ्यात्व स्थिति, तेना शुद्ध अर्द्धशुद्ध अने अशुद्ध एवा त्रणपुंजकरे एटले उपशम सम्यक्त्वनो कालपूरोथयो कहेवाय पछीते जीवना जहेवा परिणामरहे तेवा पुंज नो उदयथाय ए उपशम सम्यक्त्व एकजवार होय अने ए सहज मोक्षनुंबीजछे.

इहां प्रथम सम्यक्त्व पामतां कोईक जीवतो एकलुं सम्यक्त्वज पामीने रहि जाय अने कोईक जीव सम्यक्त्वसाथें देशविरतिपणुं पण पामे अथवा सर्वविरति पणुपण साथेंज पामे, यडुक्तं वृहत्शतकचूर्णौ — उवसमसम्मद्दिठी अंतरकरणे ठिओ कोई देस विरयंपि लभेइ कोई पमत्तापमत्तभावंपि सासायणो पुण न कि पि लहेइ इति एनोअर्थ सुगमछे

इहा उपशमकाल पूर्णथयाथी परिणामनी निर्मलतायें शुद्धपुंजनो उदयआ वे तेथी क्षयोपशम सम्यक्त्वथाय ते वली कालांतरें सका कंखा कुतीर्थसंसर्ग कु शास्त्र श्रवणादिक अतिचारनी प्रबलताथी मिथ्यात्वदलनी उदीरणताथी मिथ्या त्वे मिश्रितथाय तो तत्काल मिथ्यात्वगुणठाणेजाय मिथ्यात्वीथाय ते वली सं

ख्यात् असंख्यात कालांतरे शुनिमित्ते करी, प्रपतित सम्यक्त्वीजीव फरी सम्यक्त्व पामे तेवारेपण अपूर्वकरणे त्रणपुंजकरी अनिवृत्तिकरणे शुद्धपुंजोदय क्षयोपशम सम्यक्त्वपामे. इहां शिष्यपुछेछे जे पहेला सम्यक्त्व लाभकाले तो किवारे प्रथम न पाम्या तेमाटे अपूर्वकरणकह्यो पण हमणा तो जे पूर्वेपाम्युं हतु तेनोज फरीलाभ थयो तो तेने शीरीतें अपूर्व कहिये?

हवे गुरुकहेछे अपूर्वसरिखुं अपूर्व एटले जे वस्तुने थोमाज वखतपामियें पण घणावखत नपामियें तेने अपूर्वजकहिये केमके संसारसंबंधी अन्यपर्याय प्राप्तिनी संख्याआगल ए सोगणतिमांछे माटे एने अपूर्वज कहिये एरीतें वृद्धवचनछे सिद्धांतिक नो ए अभिप्रायछे.

तथा फरी सम्यक्त्वनी प्राप्तिनीपरे देशविरति अथवा सर्वविरति नी प्राप्तिना वखतेपण यथाप्रवृत्ति तथा अपूर्वकरण ए बन्नेकरे पण अनिवृत्तिकरण न करे.मात्र अपूर्वकाल समाप्ति समयेज देशविरति अथवा सर्वविरतिपणुंपामे जेवारे देशविरति अथवा सर्व विरतिपणुंपामे तेवारे यावत् अंतरमूहुर्त्त लगे तो अवश्य ते जीवना प्रवर्द्धमान परिणामहोय अने अंतमुहूर्त्त वीत्यापछी कोईना प्रवर्द्धमान परिणामथाय अथवा कोईना हीन हीन थाय अने कोई स्वभावस्थजरहे

तथावली जे उपयोगविना सहेजे परिणामनी मलिनताये देशविरतिथी पड्यो अथवा सर्वविरतिथी पड्यो ते फरी परिणामनी निर्मलताने योगें करणकर्याविनाज देशविरति अथवा सर्वविरतिपणुं पामे, वलीजे उपयोगेपड्या,एटले उपयोगीतोहोय पण पोताना,कुमत कदाग्रहादिक दोपेकरी विपर्याशथई कुविकल्प,पूर्वक पड्याथका मिथ्यात्वेंगया ते जघन्यथी अंतरमुहूर्त तथा उत्कृष्टो प्रभूत्‍ घणोकाल गये थके फरी देशविरति अथवा सर्वविरतिपणु,पामे ते पूर्वोक्त करण कर्याथीज पामे एम कम्मपयमीग्रंथे टीकामा कह्युछे तथा सिद्धांतिक,ने मतें तो विराधित सम्यक्त्वी गृहित सम्यक्त्वथकोपण कदाचकोईक छठीनरकपृथ्वी सुधीपणजायखरो, अने कर्मग्रंथिक मतेतो वैमानिक विना अन्यस्थानके न उपजे तेमाटे गृहीत सम्यक्त्ववत छे एहवुं प्रवचन सारोद्धार वृत्तिमांकह्युंछे.

तथा आवाप्त सम्यक्त्वगुणथी पड्योथको कर्मग्रंथिकना मतेतो उत्कृष्टस्थितिक कर्मप्रकृतिबांधे अने सिद्धांतने अभिप्रायेंतो भिन्न ग्रथिक उत्कृष्टस्थितें कर्मप्रकृति बांधेजनही ए सर्व प्रसंगेंकह्युछे एटले अंतरकरणगत उपशम सम्यक्त्वकह्युं.

तथा उवसमियो वा स सेणिगउ के० अथवा उपशम सम्यक्त्व स्वश्रेणीयेहोय

एटले स्वश्रेणिते उपशमश्रेणि चढतांपण होय, यडुक्तः—उवसमसेढिगयस्सय, होइ उवसामिउंवसम्मत्त, जोवा अकय तिपुंजो, अखविद्दमिछ्रो लहइसम्म ॥ १ ॥ ए गाथानो अर्थ सुगमछे

हवे स्वश्रेणिजे उपशमश्रेणी तेनी विधि अनुक्रमे लिखेछे, तिहां प्रथम उपशम श्रेणि चढवायोग्यना लक्षण गुणस्थान क्रमारोह ग्रंथथीलिखिये छैये —पूर्वज्ञ शुद्धिमान् युक्तो, ह्याद्यैसंहननैस्त्रिभि संध्यायन्नाद्यशुक्लांशं स्वाश्रेणीश्रयतेक्रमात् ॥ १ ॥

अर्थ — पूर्वगत श्रुतनो धरनारहोय शुद्धिमान् के० नित्य अप्रमत्त निरतिचारवत चारित्रियो होय, वली केटलाकने मतेतो अविरत्यादिक चारगुणठाणावाला पण उपशमश्रेणीना प्रारंभक होय, तथा आद्यसंहनन के० वज्रऋषभनाराच ऋषभनाराच नाराच ए आद्यना त्रण संघयणमांथी अन्यतर संघयणी अने ध्यायनाद्यशुक्लांशं के० शुक्लध्याननो प्रथम पाद ध्यातोथको एवोते उपशमश्रेणी मांडवायोग्य तिहां अप्रमत्त गुणठाणे अनंतानुबंधी कषायनी चोकडी तथा मिथ्यात्व मिश्र अने सम्यक्त्व ए त्रणमोहनी मली साते प्रकृति उपशमावीने संज्वलननो लोभवर्जित वीस मोहनीय कर्मनीप्रकृति ते अपूर्वकरण गुणठाणे तथा अनिवृत्तिकरण गुणठाणे उपशमावीने पछी सूक्ष्मसंपराय गुणठाणेलोभमोहनीय प्रकृतिने अणु अणु करी पछी उपशांत मोह गुणठाणे तेहिज अणुरूप लोभप्रकृतिने उपशमावे एम सर्वोपशमकरे यडुक्त गुणस्थान क्रमारोहग्रंथे — अपूर्वादि द्वएकैक गुणेषु समकक्रमात् करोतिविंशतेशांति लोभाणुत्वचतत्सम ॥ १ ॥ अर्थ सुगमछे.

तथा इहां उपशमश्रेणीकारक बेप्रकारेहोय एक स्वल्पायु बीजो दीर्घायु तिहां अल्पायुवत तो श्रेणीसमाप्ति अवसरे मरणपाम्यो थको अहमेंद्रपणे उपजे सरवार्थसिद्धि पर्यंत देवताथाय यडुक्त — श्रेण्यारूढकृतेकाले ह्यमेंद्रेष्वेवगछति पुष्टायुस्तुपशांतांत नयेचारित्रमोहन ॥ १ ॥ अर्थ — जे स्वल्पायुहोय अने प्रथम संघयणीहोय ते सरवार्थसिद्धिपर्यंत जाय, अहमेंद्रते जेनाउपर कोइनुं हुकमनही एहवा कल्पातीत देवतामा उपजे अने बीजा तथा त्रीजा संघयणवालाते अच्युतांत बारमा देवलोकपर्यंत उपजे पण आगल न जाय

तथा पुष्टायु सम्यक्त्वी तो उपशांतमोह गुणठाणापर्यंत मोहनीयकर्मनुं पूर्ण उपशमकरे तेवारे उपशम सम्यक्त्व होय, यडुक्त —शांतिदृग्वृत्तमोहत्वा दत्रोपकम्यैकानि गौ स्यातांसम्यक्त्वचारित्रे भावश्चोपशमात्मक ॥ १ ॥ अर्थ —इहा उपशांत मोह गुणस्थानके दर्शनमोहनीय चारित्रमोहनीय उपशमावशरे सम्यक्त्व चारि

त्रते उपशम नावमांहोय तथा नावपण उपशमहोय तथा जेने तद्भवे मोक्षजवुं होय तेने क्षायिक सम्यक्त्व पणहोय, तेने उपशांतमोह गुणठाणे पांचेनाव होय पणतेजुदा जाणवा पण इहांतो केवल उपशमनीज विवक्षाछे तथा इहां उपशांतमोह गुणठाणे चढ्यो ते अवश्यपडेज. यदुक्तंः—वृत्तमोहोदयंप्राप्यो पशमीच्यवतेततः ॥ अयकृतमलंतोयं पुनर्मालिन्यमस्नुते ॥ १ ॥ अर्थः— उपशमी चारित्रमोहनीयनो उदयपामीने उपशांतमोह थकी पडे फरी मोहजनित प्रमादनी कलुपता मापडे ए एमजघटमानछे केमके जेम मोहोलुं गदलुप्राणी होय तेने कोई औषधनेजोरे मेलहेठोकरिये तेवारें निर्मलजल उपर तरतुरहे तेपाणी कोई वायुप्रमुखनी प्रेरणानिमित्त पामी फरी गदलुं (मेलुथाय) ए प्रनाव प्रमादोदयनाछे. यदुक्तंः—सुअकेवलीआहारग उजुमइउवसंतगाविउपमाया॥ हिंमंतिनवमणंत तयणंतरमेव चउगइया ॥ १ ॥ अर्थ.— श्रुतकेवलीजे चउदपूर्वि तथा आहारक शरीरनाधणी वली उजुमईजे मनपर्यवज्ञानी ऋजुमतीवाला पण विपुलमतीना धणीनही तथा उपशांतमोह इग्यारमां गुणठाणावाला ए सर्वप्रमादना योगथी तेहिजनवने अनंतर अनंतानवभ्रमण चारेगतिमां वासोकरे तेमाटे मोक्षने वांछनार प्राणीये सर्वथा प्रमाद नहीजकरवो.

इहां शिष्यपूछेछे के उपशमीतो अवश्यपडे तो उपशमीने मुक्तिनी योग्यता छे के नथी? गुरुकहेछे सातलव प्रमाण अवशेष आयुवालो उपशमी स्वंभश्रेणीक थको अधुरीश्रेणीथकोज पाछोफिरे ते सातमें गुणठाणेआवी फरी क्षपकश्रेणीचढे ते सातलवने निंतर क्षीणमोह बारमें गुणठाणेथई अंतगड केवली थको मोक्षे जाय, इहां सातलवते मुहूर्त्तनो इग्यारमो नागकहिये जेप्राणी तद्भवमोक्षगामी होय ते एकजवार उपशमश्रेणीमांहें उपशमथी उतरी क्षपकश्रेणीयेचढे अनेजे, तद्भव मोक्षगामी नहोय ते एकनवमा बेवारपण कोईकजीवश्रेणीकरे पण तद्भवें सिद्धि वरे नही यदुक्तं सिद्धांते.—जीवोहुइक्क जम्मंमि, इक्कसेढी करेइ उवसमगो ॥ खयंपिकज्जा नोकज्जा दोवारेउवसामगो ॥१॥ अर्थ.— जे जीव एक जन्ममा एकवार उपशमश्रेणी करे ते मोक्षपणपामे अने जे बे वारकरे तेने क्षपकश्रेणीनहोय इहां अचरम शरीरी उपशमी पमयाथका प्रथम गुणस्थानके मिथ्यात्वें जाय यदुक्तं गुणस्थानक्रमारोहेः—अपूर्वाद्यास्त्रयोप्युर्ध. मेकंयांतिसमोद्यता, चत्वारोपिच्युतायाद्यं सप्तमंचांत्यदेहिनः ॥ १ ॥ अर्थः—उपशमश्रेणीचढतां अपूर्वाद्याके० अपूर्व अनिवृत्तिने सूक्ष्मसंपराय ए त्रणगुणठाणावाला उंचाचढतां एकेक गुणठाणो चढे एटले अपूर्वगुणथी अनिवृ

त्तिवादरे जाय अने अनिवृत्तिबादरथी सूक्ष्मसंपराये जाय अने सूक्ष्मसंपरायथी उप शांतमोह गुणेगाणे जाय एम एकेकगुणगणेचढे तथा उपशमथी पडता अपूर्वादिक चारगुणगणाथीपडता मिथ्यात्वेंजाय अथवा अंतदेहीजे चरमशरीरीहोय ते पडतां सातमें गुणगाणे आवी अटके, तेवली सातमागुणगणाथी फरी क्षपकश्रेणीयेचढे परंतु जे एकवार उपशमीहोय ते क्षपकश्रेणीकरे पण वेवार उपशमी होयते क्षप कश्रेणी न करे यडुक्तः—उवसमसेणिचउक्कं जाईजीवस्स आजव नूण; तापुणदोएगज वे खवगसेणीपुणोएगा ॥ १ ॥ आ ससारमा रहेतोथको जीव मोक्षपामे तिहासुधी चारवखत उपशमश्रेणीकरे तेवली एकजवमां वेवारकरे अने क्षपकश्रेणीतो आखा ससारमां एकजवारकरे इतिगाथार्थ ॥ एवात प्रसंगेथई ॥ १७ ॥

हवे क्षपकश्रेणीनुं स्वरूपकहेछे प्रथम क्षायकनी अनुक्रमणिका कहेछे —

मिहाइखएखइउ सोसत्तगिखीणिगइबद्धाऊ ॥
चउतिजवजाविमुक्खो तज्ञवसिद्धीविइयरोवा ॥ १८ ॥

अर्थ — पूर्वे सिद्धांताजिप्राये अपूर्वकरणेकस्याछे त्रणपुजजेणे ते जीव शुद्ध पुजोदये वर्त्ततो यथा कर्मग्रंथाजिप्राये अंतरकरणगत उपशमवर्त्ते कस्याछे त्रणपुज जेणे ते जीव जेवारे शुद्धविपाकोदय वेदतो एटले क्षायोपशमसम्यक्त्वें वर्त्ते तो चोथागुणगणाथी मांमीने क्षायिकप्रारंजे तिहा प्रथम अनंतानुबंधी चार क पाय तथा मिथ्यात्वमोहनीयपुज मिश्रमोहनीयपुज अनेसम्यक्त्वमोहनीयपुज ए त्रणपुज अने पूर्वोक्त चार कषाय ए सातेप्रकृतिनो क्षयकरे तेवारे क्षायक सम्य क्त्वीथाय तेना वे जेदछे एक बद्धायुक्षायिक सम्यक्त्वी वीजो अवद्धायुक्षायिक स म्यक्त्वी तिहाजे अवद्धायु एटले जे जीवे आगलाजवनुं आयुबाध्युंनथी एवो क्षा यिक सम्यक्त्वीजीवतो तद्भवेज मोक्षेंजाय, अने जेणे आवताजवनुं आउपुंबाधीने पछी सातप्रकृति क्षयकरी क्षायक सम्यक्त्व पाम्यो ते जीव त्रणजवे अथवा चार जवे मोक्षजाय तिहाजो देवजवनुं अथवा नरकजवनुं आयु बाध्युहोय तो त्रीजे जवें मोक्षजाय, तथा असंख्यात वर्षना आउपावत युगलिया मनुष्य तिर्यचनुं आयुबांध्युहोय तो चोथेजवे मोक्षपामे, केमके युगलधर्मि अवश्य देवगतिपामे, ति हाथी चवी मनुष्यथई मोक्षजाय, माटे चारजवकरे इहां आयुबाध्यापछी कोईजी व क्षायिक सम्यक्त्वपाम्युं तो ते जीव सातप्रकृति क्षयकरीछे एटलेजरहे पण आगल क्षपकश्रेणीचढेनही ते जवेतो क्षायिक मात्रेंजरहे पछी पूर्वोक्तरीतें त्रीजेज वे अथवा चोथेजवे सिद्धिवरे ए प्रसगथी वातकही

हवे क्षपक श्रेणीनुं स्वरूपकहेछेः—अणमिछमिस्ससम्मं अठ नपुंसछिवेयछक्कंच पुमवेयंचखवेई कोहाइएयसंजलणा ॥ १ ॥ गइआणुपुविदोदो जाईनामंचजावचउरे दी आयावउज्जोयं थावरनामंचसुहुमंच ॥ २ ॥ साहारणमपज्जत्तं निद्दानिद्दंचपय लपयलंच थीणंखवेइताहे ओसंजचअरुन्नं ॥ ३ ॥ वी समिकुणनियंगो ॥ दोहेस मएहिं केवलोसेसे पढमेनिद्दंपयल नामस्स इमाइ पयडीउ ॥ ४ ॥ देवगइ आणुपुवी निकविसंघयण पढम वज्जाइ अस्सयरसंगाए तिछयराहारनामंच ॥ ५ ॥ चरिमेना णावरणं पंचविहंदसणंचउवियप्प पंचविहमंतरायं खेवित्ताकेवलीहोइ ॥ ६ ॥ इ ति श्रेणीस्वरूपं. ए त्रणप्रकारें सम्यक्त्व कह्युं. ॥ १७ ॥

हवे चार प्रकारे सम्यक्त्व कहेछेः—

चउहाउ सासाणं, गुमाइ वमणुव माल पमणुव ॥
उवसमिउ उपडंतो, सासाणो मिछ मऽपत्तो ॥ १८ ॥

अर्थः— चउहाउ के० चारप्रकारे सम्यक्त्वहोय ते आवीरीते के त्रण सम्य क्त्वतो पूर्वेकह्या अने जेवारें तेनीसाथे सासाणं के० सास्वादन नामे सम्यक्त्व नेलीयें तेवारे चारप्रकारे सम्यक्त्वथाय हवेसास्वादननुं स्वरूपकहेछे.

उपशम सम्यक्त्वनो काल अंतरमुहूर्तछे तेमांथी जेवारे कोइकजीवने नवित व्यतानायोगें मिथ्यात्वे अवश्यजावुछे तेवारे उपशमकालमां उत्कृष्ट छ आवलिका प्रमाण काल बाकी शेषरह्योहोय अने जघन्यथी एकसमय रह्योहोय अथवा तेनी वचमानो जेजेरहेते मध्यमकाल कहिये एटलो उपशम सम्यक्त्वनो काल शेषरहे तिवारें उपशमावेलाजे अनंतानुबंधी कषायनादल तेनो उदयथाय ते जीवने सम्य क्त्व थकां गोलना वमननीपरें तथा माल पतननीपरे एटले जेम गोलप्रमुख मधु ररसनुं नोजनकरी पाछुं वमनकरे तेवारे नोजन करती वखतेंजे मधुरताना स्वाद नी लेजतहोय तेवी लेजत कांई वमन करती वखते न होय पण कांईक गल च टयो अनिश्चित स्वादलागे केमके जोपण वमनतोछे तोपण मीठासनुंछे तेम उपश मथी पडयो अने हजी मिथ्यात्वे पहोतुनथी तेना विचलाकालमां सास्वादन स म्यक्त्व ते गुडवमन सरखोहोय ते वमता सम्यक्त्वनो अनुनवदेखाडयो अने मा लथकी पडवा शरिखो कालस्थिति देखाडयो, जेम मालथकी पडतां सावधानहोय तोपण बेहुक्षाइथी ते अवश्य नूमी फरसे तेम सम्यक्त्वनी श्रेणीगत सावधान होय तोपण अनंतानुबंधी दलना उदयबले टकी सकेनही इति तत्व

निवादरे जाय अने अनिवृत्तिबादरथी सूक्ष्मसंपराये जाय अने सूक्ष्मसंपरायथी उप शांतमोह गुणठाणे जाय एम एकेकगुणठाणेचढे तथा उपशमथी पडतां अपूर्वादिक चारगुणठाणाथीपडता मिथ्यात्वेजाय अथवा अतदेहीजे चरमशरीरीहोय ते पडतां सातमें गुणठाणे आवी अटके, तेवळी सातमागुणठाणाथी फरी क्षपकश्रेणीयेंचढे परंतु जे एकवार उपशमीहोय ते क्षपकश्रेणीकरे पण बेवार उपशमी होयते क्षप कश्रेणी न करे यदुक्तं.—उवसमसेणिचउक्कं जाईजीवस्स आजव नूण, तापुणदोणान वे खवगसेणीपुणोएगा ॥ १ ॥ आ संसारमा रहेतोथको जीव मोक्षपामे तिहांसुधी चारवखत उपशमश्रेणीकरे तेवळी एकनवमा बेवारकरे अने क्षपकश्रेणीतो आखा संसारमां एकजवारकरे इतिगाथार्थ ॥ एवात प्रसंगेथई. ॥ १७ ॥

हवे क्षपकश्रेणीनुं स्वरूपकहेछे प्रथम क्षायकनी अनुक्रमणिका कहेछे —

मिच्छाइखएखइउ सोसत्तगिखीणिठाइवद्धाऊ ॥
चउतिनवजाविमुक्को तब्भवसिद्धीविइयरोवा ॥ १८ ॥

अर्थ — पूर्वे सिद्धांताभिप्राये अपूर्वकरणेकस्याछे त्रणपुजजेणे ते जीव शुद्ध पुजोदये वर्त्ततो यथा कर्मग्रंथाभिप्राये अंतरकरणगत उपशमवलें कस्याछे त्रणपुज जेणे ते जीव जेवारे शुद्धविपाकोदय वेदतो एटले क्षायोपशमसम्यक्त्वे वर्त्त तो चोथागुणठाणाथी मांडीने क्षायिकप्रारंभे तिहां प्रथम अनंतानुबंधी चार क पाय तथा मिथ्यात्वमोहनीयपुज मिश्रमोहनीयपुज अनेसम्यक्त्वमोहनीयपुज ए त्रणपुज अने पूर्वोक्त चार कषाय ए सातप्रकृतिनो क्षयकरे तेवारे क्षायक सम्य क्त्वीथाय तेना बे भेदछे एक बद्धायुक्षायिक सम्यक्त्वी बीजो अबद्धायुक्षायिक स म्यक्त्वी तिहांजे अबद्धायु एटले जे जीवे आगलाभवनुं आयुबांध्युंनथी एवो क्षा यिक सम्यक्त्वीजीवतो तद्भवेज मोक्षेंजाय, अने जेणे आवताभवनुं आउपुंबांधीने पछी सातप्रकृति क्षयकरी क्षायक सम्यक्त्व पाम्यो ते जीव त्रणभवें अथवा चार भवे मोक्षजाय तिहांजो देवभवनुं अथवा नरकभवनुं आयु बांध्युहोय तो त्रीजे भवे मोक्षजाय, तथा असंख्यात वर्षना आउषावत युगलिया मनुष्य तिर्यंचनुं आयुबांध्युहोय तो चोथेभवे मोक्षपामे, केमके युगलधर्मि अवश्य देवगतिपामे, ति हांथी चवी मनुष्यथई मोक्षजाय, माटे चारभवकरे इहां आयुबांध्यापछी कोईजी व क्षायिक सम्यक्त्वपाम्युं तो ते जीव सातप्रकृति क्षयकरीने एटलेजरहे पण आगल क्षपकश्रेणीचढेनही ते भवेतो क्षायिक मात्रेंजरहे पछी पूर्वोक्तरीतें त्रीजेभ वे अथवा चोथेभवें सिद्धिवरे ए प्रसंगथी वातकही

हवे क्षपक श्रेणीनुं स्वरूपकहेछेः–अणमिछमिस्ससम्मं अठ नपुंसछिवेयछक्कंच पुमवेयंचखवेई कोहाइएयसंजलणा ॥ १ ॥ गइआणुपुविदोदो जाईनामंचजावचउरे दी आयावउज्जोयं थावरनामंचसुहुमंच ॥ २ ॥ साहारणमपज्जत्तं निद्दानिद्दंचपय लपयलंच थीणंखवेइताहे ओसंजंचअछन्नं ॥ ३ ॥ वी समिकणनियंगो ॥ दोहेस मएहिं केवलोसेसे पढमेनिद्दंपयल नामस्स इमाइ पयडीउ ॥ ४ ॥ देवगइ आणुपुवी निक्कविसंघयण पढम वज्जाइ असुयरसंगाण तिछयराहारनामच ॥ ५ ॥ चरिमेना णावरणं पंचविहंदंसणंचउवियप्प पंचविहमंतरायं खेवित्ताकेवलीहोइ ॥ ६ ॥ इ ति श्रेणीस्वरूपं. ए त्रणप्रकारे सम्यक्त्व कह्यु. ॥ १७ ॥

हवे चार प्रकारे सम्यक्त्व कहेछेः—

चउहाउ सासाणं, गुमाइ वमणुव माल पमणुव ॥
उवसमिउ उपडंतो, सासाणो मिछ मऽप्पत्तो ॥ १९ ॥

अर्थः— चउहाउ के० चारप्रकारे सम्यक्त्वहोय ते आवीरीते के त्रण सम्य क्त्वतो पूर्वेकह्या अने जेवारे तेनीसाथे सासाणं के० सास्वादन नामे सम्यक्त्व नेलीयें तेवारे चारप्रकारे सम्यक्त्वथाय हवेसास्वादननुं स्वरूपकहेछे.

उपशम सम्यक्त्वनो काल अंतरमुहूर्तछे तेमांथी जेवारे कोइकजीवने नवित व्यतानायोगें मिथ्यात्वे अवश्यजावुछे तेवारे उपशमकालमा उत्कृष्ट छ आवलिका प्रमाण काल बाकी शेपरह्योहोय अने जघन्यथी एकसमय रह्योहोय अथवा तेनी वचमानो जेजेरहेते मध्यमकाल कहिये एटलो उपशम सम्यक्त्वनो काल शेषरहे तिवारें उपशमावेलाजे अनंतानुबंधी कषायनादल तेनो उदयथाय ते जीवने सम्य क्त्व थकां गोलना वमननीपरें तथा माल पतननीपरें एटले जेम गोलप्रमुख मधु ररसनुं नोजनकरी पाछुं वमनकरे तेवारे नोजन करती वखतेंजे मधुरताना स्वाद नी लेजतहोय तेवी लेजत कांई वमन करती वखतें न होय पण कांईक गल च ट्यो अनिछित स्वादलागे केमके जोपण वमनतोछे तोपण मीठासनुंछे तेम उपश मथी पड्यो अने हजी मिथ्यात्वे पहोतुंनथी तेना विचलाकालमां सास्वादन स म्यक्त्व ते गुडवमन सरखोहोय ते वमता सम्यक्त्वनो अनुनवदेखाड्यो मा लथकी पडवा शरिखो कालस्थिति देखाड्यो, जेम मालथकी पडतां तोपण बेशुध्धाइथी ते अवश्य नूमी फरसे तेम सम्यक्त्वनी सावधान होय तोपण अनंतानुबंधी दलना उदयवले टकी सकेनही.

त्तिवादरें जाय अने अनिवृत्तिवादरथी सूक्ष्मसंपराये जाय अने सूक्ष्मसंपरायथी उप शांतमोह गुणेठाणे जाय एम एकेकगुणठाणेचढे तथा उपशमथी पडतां अपूर्वादिक चारगुणठाणाथीपडता मिथ्यात्वेजाय अथवा अंतदेहीजे चरमशरीरीहोय ते पडतां सातमें गुणठाणे आवी अटके, तेवली सातमागुणठाणाथी फरी क्षपकश्रेणीयेचढे परंतु जे एकवार उपशमीहोय ते क्षपकश्रेणीकरे पण बेवार उपशमी होयते क्षप कश्रेणी न करे यडुक्तः—उवसमसेणिचउक्कं जाईजीवस्स आनव नूण, तापुणदोणाज्न वे खवगसेणीपुणोएगा ॥ १ ॥ आ संसारमा रहेतोथको जीव मोक्षपामे तिहासुधी चारवखत उपशमश्रेणीकरे तेवली एकनवमां वेवारकरे अने क्षपकश्रेणीतो आखा ससारमां एकजवारकरे इतिगाथार्थ ॥ एवात प्रसंगेथई ॥ १७ ॥

हवे क्षपकश्रेणीनुं स्वरूपकहेछे प्रथम क्षायकनी अनुक्रमणिका कहेछे.—

मिच्छाइखएखइउ सोसत्तगिखीणिठाइवद्धाऊ ॥

चउतिन्नवन्नाविमुक्को तन्नवसिद्धीविइयरोवा ॥ १८ ॥

अर्थ — पूर्वे सिद्धांतानिप्राये अपूर्वकरणेकखाछे त्रणपुंजजेणे ते जीव शुद्ध पुजोदये वर्त्ततो यथा कर्मग्रंथानिप्राये अंतरकरणगत उपशमवलें कस्याछे त्रणपुज जेणे ते जीव जेवारे शुद्धविपाकोदय वेदतो एटले क्षायोपशमसम्यक्त्वें वर्त्त तो चोथागुणठाणाथी मांमीने क्षायिकप्रारने तिहा प्रथम अनंतानुबंधी चार क षाय तथा मिथ्यात्वमोहनीयपुज मिश्रमोहनीयपुंज अनेसम्यक्त्वमोहनीयपुज ए त्रणपुज अने पूर्वोक्त चार कषाय ए सातेप्रकृतिनो क्षयकरे तेवारे क्षायक सम्य क्त्वीथाय तेना बे नेदछे एक बद्धायुक्षायिक सम्यक्त्वी बीजो अवद्धायुक्षायिक स म्यक्त्वी तिहाजे अबद्धायु एटले जे जीवे आगलानवनुं आयुबांध्युंनथी एवो क्षा यिक सम्यक्त्वीजीवतो तन्नवेज मोक्षेंजाय, अने जेणे आवतानवनुं आउखुंबाधीने पछी सातप्रकृति क्षयकरी क्षायक सम्यक्त्व पाम्यो ते जीव त्रणनवें अथवा चार नवे मोक्षजाय तिहाजो देवनवनु अथवा नरकनवनुं आयु बांध्युंहोय तो त्रीजे नवे मोक्षजाय, तथा असंख्यात वर्षना आउखावत युगलिया मनुष्य तिर्यचनुं आयुबाध्युंहोय तो चोथेनवे मोक्षपामे, केमके युगलधर्मि अवश्य देवगतिपामे, ति हाथी चवी मनुष्यथई मोक्षजाय, माटे चारनवकरे इहा आयुबांध्यापछी कोईजी व क्षायिक सम्यक्त्वपाम्युं तो ते जीव सातप्रकृति क्षयकरीछे एटलेजरहे पण आगल क्षपकश्रेणीचढेनही ते नवेतो क्षायिक मात्रेंजरहे पछी पूर्वोक्तरीतें त्रीजेन वे अथवा चोथेनवें सिद्धिवरे ए प्रसगथी वातकही

हवे क्षपक श्रेणीनुं स्वरूपकहेछे.—अणमिछमिस्ससम्मं अठ नपुंसछिवेयछक्कंच पुमवेयंचखवेई कोहाइएयसंजलणा ॥ १ ॥ गइआणुपुव्विदोदो जाईनामंचजावचउरें दी आयावउज्जोयं थावरनामंचसुहुमंच ॥ २ ॥ साहारणमपज्जंत निद्दानिद्दंचपय लपयलंच थीणखवेइताहे श्रोसंजचग्रछन्नं ॥ ३ ॥ वी समिकणनियंगो ॥ दोहेस मएहिं केवलोसेसे पढमेनिदंपयलं नामस्स इमाइ पयडीउ ॥ ४ ॥ देवगइ आणुपुव्वी निकविसंघयण पढम वज्जाइ असुयरसंगाण तिछयराहारनामंच ॥ ५ ॥ चरिमेना णावरणं पंचविहंदंसणंचउवियप्प पंचविहमतरायं खेवित्ताकेवलीहोइ ॥ ६ ॥ इ ति श्रेणीस्वरूपं. ए त्रणप्रकारे सम्यक्त्व कह्युं ॥ १७ ॥

हवे चार प्रकारे सम्यक्त्व कहेछेः—

चउहाउ सासाणं, गुमाइ वमणुव्व माल पमणुव्व ॥
उवसमिउ उपडंतो, सासाणो मिछ मऽप्पत्तो ॥ १८ ॥

अर्थः-- चउहाउ के० चारप्रकारे सम्यक्त्वहोय ते आवीरीते के त्रण सम्य क्त्वतो पूर्वेकह्या अने जेवारें तेनीसाथें सासाणं के० सास्वादन नामे सम्यक्त्व नेलीयें तेवारे चारप्रकारें सम्यक्त्वथाय हवेसास्वादननुं स्वरूपकहेछे.

उपशम सम्यक्त्वनो काल अंतरमुहूर्तछे तेमांथी जेवारे कोइकजीवने नवित व्यतानायोगें मिथ्यात्वे अवश्यजावुछे तेवारे उपशमकालमां उत्कृष्ट ठ आवलिका प्रमाण काल बाकी शेपरह्योहोय अने जघन्यथी एकसमय रह्योहोय अथवा तेनी वचमानो जेजेरहेते मध्यमकाल कहिये एटलो उपशम सम्यक्त्वनो काल शेपरहे तेवारें उपशमावेलाजे अनंतानुबंधी कपायनादल तेनो उदयथाय ते जीवने सम्य क्त्व थकां गोलना वमननीपरें तथा माल पतननीपरें एटले जेम गोलप्रमुख मधु ररसनुं नोजनकरी पाछुं वमनकरे तेवारें नोजन करती वखतेजे मधुरताना स्वाद नी लेजतहोय तेवी लेजत काई वमन करती वखते न होय पण काईक गल च टयो अनिश्चित स्वादलागे केमके जोपण वमनतोछे तोपण मीठासनुंछे तेम उपश मथी पडयो अने हजी मिथ्यात्वे पहोतुनथी तेना विचलाकालमां सास्वादन स म्यक्त्व ते गुडवमन सरखोहोय ते वमतां सम्यक्त्वनो अनुनवदेखाडयो अने मा लथकी पडवा शरिखो कालस्थिति देखाडयो, जेम मालथकी पडता सावधानहोय तोपण वेग्रुव्हाइथी ते अवश्य नूमी फरसे तेम सम्यक्त्वनी श्रेणीगत सावधान होय तोपण अनंतानुबंधी दलना उदयबलें टकी सकेनही इति तत्त्वं.

हवे सास्वादन शब्दनो अर्थलिखेछे सहआस्वादेन वर्त्तते इति सास्वादनं सम्य क्त्वनो आस्वादमात्ररहे तेथी सास्वादनकहिये अथवा आके० समस्तपणे शातन करे पातनकरे मुक्तिमार्गथी भ्रंसकरे ते आशातनकहिये एटले अनतानुबंधी कषा यबले सम्यक्त्वगुणथी भ्रष्टकरेमाटे आशातने ते आशातनसहीत अवस्थहोय मा टे साह्वाशातन कहिये अने प्राकृतसूत्र माटे सासायणकहिये यडुक्तं विशेपाव श्यके — उवसमसम्मत्ताउ चइकंपमिछंअपावमाणस्स ॥ सासायणसम्मत्तं तय त रालमिछावलियं ॥ १ ॥ एनोअर्थ सुगमछे एरीतें चार प्रकारे सम्यक्त्वकह्यु ॥ १ए॥

हवे पांचप्रकारे सम्यक्त्व कहेछे'—

वेयग जुअ पंचविहं ॥ तंचतुडपुंजखयंमितइयस्स ॥
खयकाल चरमसमए ॥ सुधाणु वेयगो होइ ॥ २० ॥

अर्थ.— पूर्वे कह्याजे चार सम्यक्त्व तेनीसाथे वेयगके० वेदक सम्यक्त्व जु अके० युक्तकरिये तेवारे पचविहंके० पांचप्रकारे सम्यक्त्वहोय जे सम्यक्त्वना अत्यंत शुद्धपुजलने वेदीये अनुजविये ते वेदकसम्यक्त्वकहिये तेहथी शुद्धपुजल थी अनर्थांतरछे अन्नेद छे माटे ए सम्यक्त्वपण वेदक कहेवाय एटले जे क्षपकश्रे णी प्रतिपन्न तंचके० ते प्रथम अनंतानुबंधीचोकडी तथा डुपुंजखयमिके० मि थ्यात्वपुज अने मिश्रपुज ए बेपुंज क्षयथयेछते तइयस्सखयकाल चरमसमएके० शु द्ध वहेला सम्यक्त्व पुजना दलीयापण उदेरी उदेरी उदये अनुनवी अनुनवी नि र्जरा करता करता निठव्युंछे उदीरणा वल जिहा एटले चरमावलिकाये उदीरणा करण लागेनही एटले त्रीजा सम्यक्त्व पुजने क्षये करता जेवारे छेलो सर्वोदित पुजलग्रास चरम समय वेद्य शुद्धअणुतुं वेदन एटले शुद्धक्षायोपशम पुजलनेवेदे ते वेदक सम्यक्त्व कहिये यडुक्त विशेपावश्यके'—वेयगसमत्तंपुण सव्वोइय चरम पु ग्गलावत्थे ॥ खीणे दसण मोहे, तिविहंमि स्काइयंहोइ ॥ १ ॥ इहां शिष्य प्रश्नकरेछे के तुमे चरम शुद्धग्रासनुं वेदन ते वेदक कहोछो तेवारे क्षयोपशममा अने वेदक मा श्यो फेरथयो केमके शुद्धपुजनुं वेदन बे ठेकाणे सरिखुंछे तो जुडुनाम केम कहोछो? तेवारे गुरु उत्तरकहेछे के तें साचुकह्यु पण एमां विशेप एछे के ए वेदक तो अशेप समस्त पुजलानुनव वत अत्यंत शुद्धछे अने इतरजे क्षयोपशम सम्य क्त्व छे तेतो उदित अनुदित बे पुजल उदयानुनव वतछे एटलो विशेपछे. परमा र्थ जोतांतो क्षयोपशमजछे समस्त मोहनीय क्षयकरवाना कालनो जे, चरमसमय

मात्र ते वेदक सम्यक्त्व कहिये. जेम सूक्ष्मलोनना खंभ वेदवाथकी सूक्ष्मसंपराय गुणस्थानक कहिये, तेम शुद्धक्षयोपशम पुंजना वेदवाथकी वेदक सम्यक्त्व था यछे, एम वेदक सम्यक्त्व सहित सम्यक्त्वना पांचभेद थाय इति वेदकस्वरूपं२०

हवे ए पांचे सम्यक्त्वनो काल कहेछेः-

अंतमुहुत्तो वसमो, छावलिय सासण वेयगो समउ ॥
साहिय तित्तीसायर, खइउ डु गुणो खउवसमो ॥ २१ ॥

अर्थ.- उपशम सम्यक्त्वनो काल उत्कृष्टो अंतरमुहूर्तछे, अने सास्वादननो काल उत्कृष्टो उ आवलिनोछे, तथा वेदक सम्यक्त्वनो काल एक समयछे, अने क्षायिक सम्यक्त्वनो उत्कृष्टकाल सर्वार्थ सिद्धिनी अपेक्षाये साधिक तेत्रीससागरोपमनो छे, साधिककह्यातेतो मनुष्यभवनी अपेक्षायेकह्या, केमके क्षायक सम्यक्त्ववंतजीव ते त्रणभव अथवा चारभव उत्कृष्टो संसारमांरहे, उक्तंच पचसंग्रहे -तश्य चउत्थं तमि, भवंमि सिय्यंति दंसणे खीणे ॥ ज देव निरय संखाउ, चरम देहेसु ते हुंति ॥१॥ अर्थ - बद्धायु क्षायकसम्यक्त्ववतजे होय ते देवगति अथवा नरकगतिये जाय, तेवारे तद्भवातरे तृतीयभवें मोक्षजाय, तथा कोई क्षीण सप्तकी जो तिर्यंचमाउप जे तो अवश्य असंख्य वर्षना आउपावाला युगल तिर्यंचमा उपजे, पण संख्यात वर्षायु तिर्यंचमां क्षायक सम्यक्त्ववत न उपजे, पछी तिर्यंचमाथी देवथाय, अने देवमांथी मनुष्यथई मोक्षजाय, अने जे अबद्धायुवत होय तेतो तेहिजभवे क्षपक श्रेणीपुरीकरी सिद्धथाय, तथा एकजीव आश्री अथवा अनेकजीवआश्री सम्यक्त्वनो उपयोग जघन्यथी तथा उत्कृष्टथी अंतरमुहूर्तज होय. अने क्षयोपशमरूप सम्यक्त्वनी लब्धीतो एकजीवने जघन्य अंतरमुहूर्त अने उत्कृष्टीतो डुगणो के० क्षायकथकी बमणो छासठ सागरोपम अने मनुष्यभवें अधिकहोय, तेथी उपरांत सिद्धजथाय, एटले बारमादेवलोकसुधी त्रणवार गमनथाय, तिहा उत्कृष्टायु बावीस सागरोपमनुंछे, अने मनुष्यनो भव अधिकगणता छासठसागरोपम फार्शनाथाय, अने विजयविमान आश्री बे भव करवापण्मे तिहापण उत्कृष्टायु तेत्रीस सागरोपमनुंछे, अने मनुष्यभव गणता साधिक छासठसागरोपम क्षयोपशम सम्यक्त्वनो कालमानथाय, एम नानाप्रकारना जीवो आश्री सर्वकाल छाशठ सागरोपमछे, यडुक्तं सिद्धांते -दोवारे विजयाइसु, गयस्स तिन्नीअ अच्चुए अहवा ॥ तइ अइरेगं नरभविय, नाणा जीवाण सव्वद्धा ॥ १ ॥ एनोअर्थ सुगमछे ए पाचेसम्यक्त्वनो कालकह्यो

हवे संसारमांभ्रमण करता जीव ए पांचे सम्यक्त्वमां किशु किशु सम्यक्त्व केट लीवार पामे ते कहेछे --

उक्कोस सासायण, उवसमिया हुति पंचवाराउ ॥
वेयग खयग इक्कसी, असंख वारा खउवसमो ॥ २२ ॥

अर्थ --उत्कृष्टो मोक्षावधि सुधी संसारमां नमता जीव सास्वादन तथा उपशमिक सम्यक्त्व पांचवारपामे, तेमां एकतो प्रथम सम्यक्त्व लाजकाळे अंतरकरणगत उपश मिक होय, अने उपशमश्रेणी चारवखतपामे, तिहां चारवखत उपशमनो लाजहोय. तथा वेदक सम्यक्त्व अने क्षायक सम्यक्त्व ए बे एकजवार पामे अने क्षयोप शम सम्यक्त्वतो मोक्षावधि संसार नमता असंख्यातिवार पामे, एरीते सम्यक्त्व प्राप्तिनी संख्या कही, हवे एक नवमां केटलीवार आकर्षहोये ? आकर्षते गुणथी मद थईने नूमीफरसीने वली सावधानथई गुणनी प्रबलता करे, एटले मूकीने व ली ग्रहण करवुं ते आकर्षकहिये यडुक्तं आवश्यक सिद्धांते गाथा – तिन्नंसह सपुहुत्तं ॥ सयप्पुहुत्तच होइ विरईए ॥ एग नवे आगरिसा ॥ एवइया हुंति नायव्वा ॥ १ ॥ अर्थ – तिन्नत के० एक श्रुतसामायक, बीजो सम्यक्त्वसामायक, त्रीजो देशविर तिसामायक, ए त्रणनेविषे एक नवमा सहस्रपृथकत्व होय, बेहजारथी मांमीने नवहजार सुधी सहस्र पृथक्त्व संज्ञाछे, तथा सयप्पुहुत्तं के० शतपृथक्त्व आकर्ष सर्व विरतिमाहोय, बसेथीमामी नवसेंसुधी होय, एरीते एकनवमा उत्कृष्टा आकर्ष होय, अने जघन्यथीतो एकज आकर्ष होय ए एकनवना आकर्ष कह्या

हवे नानाप्रकारना नवमा नमता गुणपामी पामी पडता फरी पामता आकर्ष नी संख्या केटली थाय ते कहेछे गाथा – तिन्नं सहस मसंखा, सहस पुहुत्तंच होइ विरईए ॥ नाणा नव आगरिसा, एवइया हुंति नायव्वा ॥ २ ॥ अर्थ --श्रुत, स म्यक्त्व, अने देशविरति ए त्रणे सामायकवतने नानाप्रकारना नवभ्रमणकरतां मो क्षजाय तिहांसुधी उत्कृष्टा असंख्याताहजार आकर्ष थाय, तथा सर्वविरतिने ना नानवें मोक्षजाता सुधीमा उत्कृष्टा पृथक्त्व हजार आकर्षहोय, एरीते सम्यक्त्व प्राप्तिसंख्याने प्रसंगे आकर्ष संख्या कही ॥ २२ ॥

हवे कया गुणगणे किशुं सम्यक्त्व होय ते कहेछे –

बीयगुणे सासाणो, तुरिआइसु अडिगार चउ चउसु ॥
उवसमग खइग वेयग, खाउवसमा कमा हुंति ॥ २३ ॥

अर्थः— बीयगुणेसासाणोके० सास्वादन सम्यक्त्वते बीजा सास्वादन गुणगणा मांहेज होय, पण अन्यगुणस्थानके नहोय, अने उपशम सम्यक्त्व ते तुरियाइसु अछिगारचउचउसुके० चोथागुणगणाथीमांमी आठगुणगणासुधी होय, अर्थात् चोथागुणथीमांमी इग्यारमां उपशांत मोह नामना गुणगणासुधीहोय पण अन्य गुण स्थानके नहोय, अने क्षायक सम्यक्त्व इगारसके० इग्यारगुणगणेहोय, एट ले चोथागुणगणाथी मांमीने चउदमां अयोगी गुणगणासुधीहोय अने क्षायोपश म सम्यक्त्व तथा वेदक सम्यक्त्व ए वे सम्यक्त्व चउचउके० अनुक्रमे चार चार गुणठाणानी संख्यासुधी पामिये, अर्थात् वेदक अने क्षायोपशम ए वे चोथागुण गणाथी मांमीने सातमां अप्रमत्त गुणगणासुधीजहोय पण अन्यगुणठाणे न पा मिये एवात सत्ताआश्रीजाणवी पण परमार्थेतो वेदकसम्यक्त्व अने क्षायोपशम सम्यक्त्व ए वे एकज कह्याछे यथा षमसीतप्रकरणे —वेयग खयग उवसमे, चउरो एगार अछतुरियाई इति श्रीजिनवल्लभसूरिकृत षडसीतप्रकरणेकह्युछे, तथा बंधस्वा मित्वमा पण कह्युछे एरीतें गुणस्थानक निष्ठायें सम्यक्त्वकह्यां.

हवे सम्यक्त्व पाम्यापछी देशविरति सर्वविरति क्षायिकभाव किवारें प्राप्तथा य ते कहेछे, गाथा.— सम्मत्तंमिउलध्धे, पलिय पुहुत्तेण सावउ हुस्सा ॥ चरणोवस म खयाणं, सायर संखंतरा हुति ॥ १ ॥ अर्थ —पूर्वोक्त भव्यजीव जेवारें ग्रंथीभे दकरी सम्यक्त्वपामे तेवारपछी अंतकोडाकोडीनो स्थितिबंधछे, तेमांथी पलियपहु त्तके० पृथकत्व पल्योपम एटले बे थी मांमीने नव पल्योपम सुधी ओछीकरे, एट ले कोइक बे पल्योपम स्थितिउछीकरे, कोइ त्रण एम यावत् कोइ नव पल्योपम जेटली स्थिति अंत कोडाकोडीमाथी उछीकरे, तेवारे देशविरति गुणस्थानकनो क्षयोपशमथाय एटले भावथी देशविरति तेवारेथाय.

तथा चरणोवसमके० चरणजे सर्वविरतिपणुं तेनो क्षयोपशमतो जे स्थितियें देशविरतिगुण प्राप्तथयुंछे ते स्थितिमांथीपण सख्याता सागरोपमनी स्थिति उछी करे, एटले सर्वविरतिवत्त स्थितिबांधेतो अंतकोडाकोडी नवपल्योपमे न्यून जे देश विरतिनी स्थितिछे, तेथीपण संख्याता सागरोपम उछीबांधे, एवा अध्यवसायें कषा यनी मंदताहोय इतितत्व तेवार पछी सख्याता सागरोपम खपवाथी उपश्रमश्रेणी पडीवजे तेवारपछी पण सख्याता सागरोपमनीस्थितिखपवाथी क्षपकश्रेणी पमीवजे.

हवे जे जीव सम्यक्त्व पामीने पाछोपमी मिथ्यात्वेगयो तेफरी सम्यक्त्व कि वारेपामे ? केटलो अंतरहोय ? तेकहेछे. सम्यक्त्वनुं आंतरु जघन्यथीतो अंतरमुहूर्त

छे; केमके कोइकजीव सम्यक्त्व वमिने पाछो परिणामनी निर्मलताने योगें तदाव रण क्षयोपशमथी अंतरमुहूर्तने आंतरे फरी सम्यक्त्वपामे, तथा कोइकजीव बहु लकर्मी तीर्थंकरादिकनी प्रचुर आशातना करे ते जीव अर्द्धपुद्गल संसारमां प्रवर्ते, संसारमा जन्ममरणकरे, पछे अर्द्धपुद्गलगये फरी सम्यक्त्वपामे एटले उत्कृष्टआ तरुं अर्द्धपुद्गल परावर्तछे उक्तंच सिद्धांते:—तिथ्यर पवयण सुअ, आयरिय गणहर महद्धीयं ॥ आसायंतो बहुसो, अणंत संसारियो होइ ॥ १ ॥ तीर्थंकरनी तथा प्रव चनजे समस्त जैनशासननी अने आचार्यजे गछना अधिपति तेनी तथा गण धरजे त्रिपदी ग्राहक अथवा महोटा प्रभाविक पट्टोधर तथामहर्द्धिकते तप संय म श्रुतादिक अनेक लब्धिसंपन्न तेने ऋद्धिवंत कहिये एटला जीवोनी आसातना एटले तेमना अवर्णवाद बोले निंदाकरे अभ्याख्यानबोले ते जीव अनंतसंसारीथा य एटले प्रकरणकारे पांच सम्यक्त्वनुं स्वरूपकह्युं ॥ २३ ॥

हवे ग्रंथांतरे दशविध सम्यक्त्वरुचिरूप कह्युंछे तेपण इहां प्रसगें लखियेछइये य दुक्तंमागमे.— एगविह दुविह तिविह, चउहा पंचविह दसविह सम्मं ॥ दवाइ कारयाई, उवसमभेएहिवासम्म ॥ १ ॥ अर्थ — जे निसक तत्वरुचि श्रद्धान जि नमार्गनेविषे ते एकविध सम्यक्त्व कहिये अने दुविध सम्यक्त्वते द्रव्यथी तथा भावथी अथवा निसर्गथी अने अधिगमथी अथवा निश्चयथी अने व्यवहारथी अथवा पुद्गलिक अने अपुद्गलिक एम बे प्रकारेछे

त्रणप्रकारे सम्यक्त्वते उपशम, क्षायिक, अने क्षयोपशम अथवा कारक रोचक अने दीपक एपणत्रण जाणवा वली पूर्वोक्त त्रणमा सास्वादन भेलिये तेवारे चार प्रकारे सम्यक्त्वथाय अथवा वेदक युक्तकरिये एमपण चारप्रकारथाय तथा वेदक सास्वादन एबे पूर्वोक्त त्रणसाथे भेलिये तेवारे पांचप्रकारथायएनोविस्तार पूर्वे कह्योछे

तथा दशविध सम्यक्त्वते दशप्रकारनी रुचिवतजीव ते रुचिभेदे सम्यक्त्वनो भे दकहिये ते दशरुचि केवाने सिद्धांतोक्त गाथालिखेछे — निसग्गु वेएसरुइ, आण रुईसुत्त बीयरुइ मेव ॥ अभिगम वित्थाररुई, किरिया संखेवि धम्मरुई ॥ १ ॥ एदशे रुचिना नामकह्यां हवे प्रत्येके दशेना स्वरूप कहेछे

भूअछेणाहिगया, जीवाजीवायपुन्नपावच ॥ सहसमइआसव, संवरोय रोएउ निसग्गो ॥ १ ॥ जो जिण दिट्ठे भावे, चउविहे सद्दहाइ सयमेव ॥ एमे अनन्नह त्तिय, सनिस्सगरुइत्तिनायवो ॥ २ ॥ अर्थ — भूअछेणके० सद्भूतार्थ एटले छतो जे अर्थ तेहने सहसमइके० जातिस्मरणादिक बुद्धिविज्ञानेकरी जेजे श्रीजिनेश्वर

जीना दीठा जेजीवाजीव पुण्यपापादिकना नाव ते चउविहेके० इव्य क्षेत्र काल नाव नेदे अथवा नाम स्थापना इव्य नावनेदे एव चारेप्रकारें स्वमेव एटले पोता नीमेलेज सद्दहे जे एमजछे पण श्रीजिन नाषित अन्यथानथी एम जिनेश्वरना दीठानावते निश्चलकरे ते निश्चलरुचि निसर्गरुचि जाणवी

एएचेव नवइछे, जोपरेण सद्दहइ ॥ छउमछेणजिणेण, उवएसरुइत्तिनायवो ॥ ३ ॥ अर्थः– एएके० ए श्रीजिनोक्त सिद्धांतमां कह्याजेजे नाव ते उवइछेके० उपदेशद्वाराये परेणके० परथी एटले छद्मस्थथी अथवा जिनराजथी सांनलीने अवितथ सद्दहे तेने उपदेश रुचि कहिये.

राग, दोसो, मोहो, अन्नाणंजस्स, वग्गयं, होइ ॥ आणाए रोयंतो, सोखलु, आणारुई नाम, ॥ ४ ॥ अर्थः– जेने रागदोष द्वेषदोष मोह अने अज्ञानदोष क्षयथईगया ते असत्य नबोले केमके ए त्रणदोषछते असत्यबोलाय रागनुलीधो अथवा द्वेषनुंलीधो अथवा अज्ञानदोषे अणजाणे जुतुंबोले पण जेने त्रणदोष क्षयगया तेसावास्ते जुतुंबोले, हेतुविना कार्यथायनही एटले ए त्रणदोषरहित जे वीतरागपरमात्मा तेनी आज्ञानेविषे अत्यंत आदरहोय ते त्रीजी आज्ञारुचि कहिये.

जो सुत्तमहिज्जंतो, सुएणउ गाहई समत्तं ॥ अंगेण बाहिरेणव, सोसुत्तरुईत्ति नायवो. ॥ ५ ॥ अर्थः– सूत्रजे सिद्धांत तेने नणवा तथा सांनलवानी चाहना करे जेम जेम श्रुतअवगाहे तेमतेम सम्यक्त्वरसपामे एटले इग्यारेअंग तथा बार उपांग अने बाहिरेणवके० बाहिरते मूलसूत्रप्रमुख एम जेकाले जे सिद्धांत वर्त्त मानहोय ते सूत्राक्षरउपरे घणीचाहनारहे जे जे किरियाकरे ते सूत्राक्षरने मल तीजकरे ते चोथी सूत्ररुचि कहिये

एगेण अणेगाई, पयाई जो सरइउ सम्मत्तं ॥ उदएव तेल्लविंडु, सो बीयरुइ त्ति नायवो ॥ ६ ॥ अर्थ – जे नव्यजीव गुरुनासुखथकी एकादि जीवपदनो अर्थ सांनली अनेकपदमां मतिपसारे एटले मूलवात पामीने बीजी अणकहेलीवात पामीजाय उदकजेपाणी तेमा तेलनु बिंडु पडयो ते जेम विस्तरीजाय तेम थोडुं सानलीने घणुजाणीजाय ते पांचमी बीजरुचि कहिये.

सोहोइ अभिगमरुई, सुअनाणं जेण अछउदिठं ॥ इक्कारसमंगाइ, पइन्नगंदिठी वाउंअ ॥ ७ ॥ अर्थ – ते जीवने अभिगमरुचिहोय जेणे इग्यारअंग तथा उ पाग अने पइन्नगंके० प्रकीर्णक उत्तराध्ययन प्रमुख तथा दृष्टिवादना गनीर अ र्थजाणे वली अर्थजाणवानी चाहनाराखे ते छठी अभिगमरुचि कहिये

दव्वाण सव्वभावा, सव्वपमाणेहिं जस्सउवलध्धा ॥ सव्वाहिं नयविहीहिय, विच्चाररुइत्ति नायव्वो ॥ ८ ॥ अर्थ.— द्रव्यजे धर्मास्तिकायादिक छ तेना सर्वभाव जे द्रव्य गुण पर्याय उत्पाद व्यय ध्रौव्य तेने सर्वनय भंग प्रत्यक्ष परोक्षादिप्रमाणे स्याद्वाद सैली सहित अनेक सप्तभंगी परुपणायेजाणे ते सातमीविस्तार रुचि

दंसण नाण चरित्ते, तव विणए सच्चसमीइ गुत्तिसु ॥ जोकिरिया भावरुइ, सोखलु किरिया रुइनाम ॥ ९ ॥ अर्थ.—जेने दर्शन ज्ञान चारित्र तप विनय समिति गुप्तिप्रमुख बाह्य क्रियाथी घणु रगहोय क्रियाभावमां घणी चाहना रहे तेने आठमी क्रियारुची कहिये

अणभि गाहिय कुदिठी, संखेव रुइत्ति होइ नायव्वो ॥ अविसारउ पवयणे, अणभि गहियो असेसेसु ॥ १० ॥ अर्थ — जेप्राणी अणभिगहिय के० अनभिग्रहिक कुदृष्टीजे कुमार्ग शांख्यादिक दर्शनोनो आग्रह धरेनही थोडुं कह्याथकी घणुंजाणे कुमतिये पर्भेनही समोविचारे चिलातिपुत्रनीपरें तथा प्रवचनजे जिनागम तेनेविषे घणुं अविसारद के० निपुणतो न होय तोपण सरलगुणेकरी कदाग्रह धरेनही जिनमार्गनी प्रतीत माने तेने नवमीसंक्षेप रुचीकहिये.

जो अत्थिकाय धम्मं, सुअ धम्मंखलुचरित्तधम्मंच ॥ सद्दहइ जिणाभिहियं, सो धम्मंरुइत्ति नायव्वो ॥ ११ ॥ अर्थ — जे भव्यजीव अत्थिकायधम्म के० पंचास्तिकायनुं स्वरुप जाणे तथा श्रुतधर्म अने चारित्रधर्म ने बाह्य अंतरगभावे श्री जिनोक्तमार्ग सद्दहे सकल स्वभाव विभाव स्वरूप जाणे तेने हेयोपादेय भावे यथायोग्य सद्दहे ते दशमी धर्मरुचि कहिये ए दशरुचि ते सम्यक्त्वना भेदछे

हवे ए सम्यक्त्वगुणनी प्राप्ति ते मिथ्यात्वना त्यागथी थाय ते मिथ्यात्वना भेद पाचछे तेमाजे लौकिक प्रवाहधर्मे जेजे सारभी सपरिग्रही कुशीलसेवनादिक जे धर्म बुद्धेग्रह्यो तेहिज सारकरीजाणे तेनुं हठताणे अमारोधर्म तेज सारछे एम कदाग्रहकरे पण मध्यस्थथई परिक्षाकरी शुद्धनेग्रहेनही ते अभिग्रहिक मिथ्यात्व.

जे एम कहेके सर्व दर्शनरुडाछे सर्वने वांदिये पण नदियेनही एवी पोतानी मंदबुद्धिजे जडतापणु तेनेलीधे कांचने तथा मणीने सरखाकरे पण परिक्षाकरी शुद्धने ग्रही शकेनही ते बीजुं अनभिग्रहिक मिथ्यात्व

जे जाणीजोईने जुठुं बोले कुमति कदाग्रहना जोरथी विरुद्ध परुपणाकरी दुरत संसार वृद्धिकरे जमाली प्रमुख नन्हवनीपरे ते त्रीजुं आभिनिवेशिक मिथ्यात्व.

जे श्री जिनोक्त सिद्धांतना भाव सांभली संशय धरे जे ए केमहसे एम मगम ग्योरहे ते चोथुं सांशयिक मिथ्यात्व कहिये.

जे एकेंद्रियादिक सम्मूर्छम जीवोने अनादिनुं पडवाडे लागोरह्योछे प्रायें अस न्नीयासुधीतो अनाभोगिकज होय ते पांचमुं अनाभोगिक मिथ्यात्व जाणवुं

अथवा संसारीजीवोने वीजापण चारप्रकारें मिथ्यात्वहोय ते कहेछे एक देव गत लौकिक बीजो गुरुगत लौकिक त्रीजो लोकोत्तर देवगत चोथो लोकोत्तर गुरु गत तेमां हरी हर शक्ति प्रमुखने माने पूजे ते लौकिक देवगत मिथ्यात्व, ब्राह्मण तापसादिकने गुरुबुद्धमाने पूजे ते लौकिक गुरुगत मिथ्यात्व, वलीजे सप्रभाव जि नबिंबने इंद्रिय सुखने अर्थे माने पूजे ते लोकोत्तर देवगत मिथ्यात्व, अनेजे सुसा धुने इहलोक सुख यश मान प्रतिष्ठा अथवा धन धान्य पुत्रादिकनी आस्याधरी माने इछे दानआपे ते लोकोत्तर गुरुगत मिथ्यात्व कहिये

तथा जीवे अजीवसन्ना अजीवेजीव सन्ना मग्गे उमग्गसन्ना उमग्गेमग्गसन्ना सुदेवेअदेवसन्ना अदेवेसुदेवसन्ना सुसाहुसु असाहुसन्ना असाहुसुसाहुसन्ना धम्मे अधम्मसन्ना अधम्मेधम्मसन्ना ए दशप्रकारे विपरीत वासनारूप मिथ्यात्वछे.

तथा जे वली रक्षावंधन शंक्रांतिपूजन एम एकवर्षमा शतपर्व आराधन ते सर्व लौकिक पर्वगत मिथ्यात्वछे तथा दीवालीप्रमुख कल्याणीकना दिवशें इंद्री यसुखने साधे विशेष पूजारचनादिक करे ते लोकोत्तर पर्वगत मिथ्यात्वछे ए सर्व मली एकवीसभेदे मिथ्यात्व ते ससारीजीवोने संसारमां भमाडेछे.

तथा वली धर्मार्थिजीवने चारप्रकारे मिथ्यात्व टालवानो उपयोग राखवो ते कहेछे तेमां प्रथम प्रदेशमिथ्यात्वछे ते जे आत्मप्रदेशें पूर्वबंध मिथ्यात्वनादलियां र ह्यांछे ते सत्तागत अथवा उदयगत दलियाछे ते प्रदेशगत मिथ्यात्वछे ते जेवारे जीव जिनवाणीसांभली यथार्थभावजाणी सद्दहे सकल पुद्गलिकभावने हेयसद्दहे केवल स्वरूपलाभते यथार्थ परिणति परिणमन तेनेज सुखनुंमूलजाणी सद्दहे आदरकरे एवीवांछायें प्रदेशमिथ्यात्व टलीजाय.

बीजुं परिणाम मिथ्यात्व ते जे पोताना प्रमाददोषेकरी शुद्धश्रद्धाफरीने कुश्र द्धाथाय जेम पूर्वधरने निद्रादिक दोषेकरी पूर्वगलीतथाय मरीने निगोदादिकेजाय जेम प्रसन्नचद राजऋषी दूरवाक्य सांभली चेतनाफरीगइ ते परिणाम मिथ्यात्वक हिये ए मिथ्यात्व ते जिनवाणीनेविषे तीव्रोपयोगी रहेवाथी टलेछे.

त्रीजुं परुपणामिथ्यात्व ते उत्सूत्रभाषवाना जे महोटादोष तेने कहियें एथी अ

नंतसंसार भ्रमणकरे धर्मबीजनो ध्वंसकरे जे सद्दहणा राखीने मरणांत कष्टपडे तो पण श्रीजिनवाणी विरुद्ध प्ररुपणानकरे तेने ए मिथ्यात्वनुं दोषटले

चोथुं प्रवर्त्तिमिथ्यात्व ते जे मिथ्यात्वनी करणीकरे मिथ्यात्व प्रवर्त्तावे तेने कहिये ए मिथ्यात्व सुसाधु तथा सुश्रावकनी संगति करवाथी तथा रागद्वेषने मद करी मध्यस्थभावे थइ परिक्षाकरी शुद्धप्रवर्त्तन करवाथी टलेछे.

एमए मिथ्यात्वजेछे ते जगतमा जेटली दुःखनीजातोछे ते सर्वेनु मूलकारणछे कोप्योदुसमन कोप्योव्याल तथा वेताल जे नकरीसके ते दुःख एमिथ्यात्वआपेछे व्याधि मृत्यु दालिद्र तथा वनवासथीपण मिथ्यात्व सेवनते अनंतगुणु दुःखदाइ छे जेणे मिथ्यात्वजीत्यो तेणे सर्वजगतजीत्यो इंद्रादिकनी ऋद्धिपामवी सुलभछे पण मिथ्यात्व टालवु दुःकरछे तेमाटे आत्मसुखार्थिजीवे विशेषथकी मिथ्यात्व सोधन करवु निर्मल श्रद्धान करी आठगुणयुक्त संकादिदोष विमुक्त सम्यक्त्व दृढकरवु

हवे आठगुणेकरी सम्यक्त्वनी पुष्टीकरे ते आठगुण कहेछे गाथा ॥ निस्संकिय निकंखिय, निवित्तिगिछा अमूढदिठीय ॥ अववुह थिरीकरणे, वछलप्पभावणेअठ ॥ १ ॥ श्रीजिनागमनेविषे सूक्ष्मविचार अतिंद्रियादिक भावजेछे ते साचा सद्दहे पण संदेहसंका नआणे अने सातभय पण मनमा आणेनही ते प्रथम निसंकगुण

बीजो निकंखागुण जे अन्यदर्शनना कष्ट मंत्र चमत्कारादिक उन्नतदेखी तेनी चाहना नकरे आकंक्षाधरेनही अथवा धर्मना पुण्यरूपफलनी इछा नराखे केमके जिहा इछानी आतुरता तिहापुण्यरस ओछोथाय जिहा इछा तिहाकर्मबंधछे अने पुण्यतो धर्मक्रियानो वस्तुस्वभावछे तेतो अवश्यजथाय तेने इछारुप दोष तो सामु कमरसकरे अने जे निस्पृहपणे धर्मक्रियानुंफलछे ते निरविधिछे माटे ए निकंखागुणथी धर्मफल वृद्धिनेपामेछे

त्रीजुं निवितिगछागुण ते जे कर्मसंबंधी फलनो संदेह राखेनही जेम कोई मनुष्य धर्मकरणी करतो कोई पूर्वकृत पापप्रकृतिने उदयदुःखेपीडतो थको मंदबुद्धिनो धणी एमविचारे जे हुंधर्मकरुंछुं तोपण पीडाकेम पामुछुं ए. धर्मक्रियानुं फल थासेके नही थाय एवीसंकाधरे पण एम नविचारेजे एतोपूर्वकृत कर्मफल उदय आव्याछे पण वर्त्तमान जे धर्मक्रिया करुंछुं ते आगल अवश्य आवसेज केमके श्रीजिनेश्वरे कह्युछे कडाण कम्माण न मुक्ख अच्छि, माटे जे निवितिगछा गुणवंतहोय ते संदेह धरेनही श्रीजिनभद्रगणि खमाश्रमणे कह्यमइ, दुब्बले, तिविहाय रिद्द विरहउवावि ॥ नेयग हणत्तणेण, नाणावरणो दयेणच ॥ १

अथवा अशुनपुजल एकसरखागणे पण अशुनपुजलदेखी डुगंछा करेनही तथा पुण्योदयें शुनसंयोग मिल्यायका खुसीनथाय अहंकार करेनही पापोदयथी अशु नसंयोगमिल्या दिलगीरथायनही ते निविति्तगंछा गुणकहियें.

चोथो अमूढदृष्टीगुण ते जे श्रीआगमसिद्धांतमां निगोदप्रमुखना सूक्ष्मविचार सांनलतां मुंजायनही जे पोतानी धारणामां आवे ते धारीराखे अने जे धारणाबु द्धिये नआवे ते सद्दहे, तिहां एमविचारेजे सर्वदोषथी विमुक्त एहवा जिनेश्वरते अ न्यथा वादीनहोय. यडुक्तं आगमें.—असदस्सदुजंबुज्जिय्या, सवणुमय मवितह ॥ त हाचितएमइयं, अन्नहान वयंतिजे॥ १॥अणुवकय पराणुग्गह, परायणा जंजिणा जग प्पवरा ॥ जिय राग दोसमो हाय, नन्नहा वाइणो तेण ॥ २ ॥ अर्थ.— जेजि नवाणी सांनलतां खबर नपडे, समजवामां नआवे, तेना हेतु लिखेले. कोईक श्रो तातो पूर्वनव कृत ज्ञानविराधन कर्मोदययथेथके मतिडुर्बलताथी न समजे तिवा रें आचार्य तथा विधि उपदेशक कोई हेतु दृष्टांतादिक वचनेकरी श्रोताना चित्त मां उतारे, एहवा महापुरुषोने विरहे तथा नीतीन्यायना अणजाणवाथकी एटले अनेक नय युक्तिना ग्रहणपणाविना अथवा ज्ञानावरणीकर्मना प्रबलोदयथी न समजे, तेवारे आत्मार्थि अमूढदृष्टी जीव एवो विचारकरे जे हेतु उदाहरण अथवा अनेक युक्तिदृष्टांतें घणा वखत कहेतायकां पण मने सारीपठे समजण पडती न थी ते महारे पूर्वोक्त दोषना योग्यथी जाणवी, पण सर्वज्ञमत तो अवितह सत्य जले, एम कहे तेवारे कोई पृष्ठाकरे जे एकांते जिनोक्त रचनाज सत्यले एवु तें कि मजाण्यु ? तेवारे अमूढदृष्टी श्रोता उत्तर कहेले—अणुवकय के० जे जिनेश्वर ते केवां ले प्रत्युपकारनी चाहनाविना परने अनुग्रह उपकार करवाने तत्परले, तथा जजि णा के० जे कारणमाटे जिनेश्वरते जगतमां प्रवर के० श्रेष्ठले; रूप बल तेजकांति बुद्धि ऋद्धि सिद्धिप्रमुख गुणे सर्वोत्कृष्टले, अने वली जियराग के० जीत्याले मूलथी राग द्वेषने मोहजे अज्ञान ए त्रणदोष जेमांथी गयाले माटे जिनेश्वर अन्यथावादी होयज नही तेथी परमयथार्थवात ते आगमनीजले ए अमूढदृष्टीनामा चोथोगुण.

पाचमो अववूह गुण ते पोतानी आत्मामां अनंत ज्ञानदर्शनादिक गुणले ते लुपावेनही उदेकडुःख मेटवाने दीनतादिक न जापे शुद्धसत्ता जेवीले तेवीजकहे अने पुजलिक सुखडुःखते अज्ञानदशा कृत उपाधिले आत्मा ए रागद्वेष उपाधि थी न्यारोले, इमज परजे अन्यसाधक तेमांपणजे गुणहोय ते प्रगटकरीकहे पण लुपावेनही ते पांचमोगुण.

छठो थिरीकरणगुण ते पोताना परिणाम परनावमांथी काढी ज्ञानध्यानमां जोडे, निश्चे धर्मक्रियाकरतोहोय ते अवश्य थिरयोगवत थयोथको करे, पण चप लताना कारणमिले तोपण अथिरपणुं ग्रहेनही साध्यसाधनथी मगेनही, तथा कोई नव्यप्राणी शुनाशुन कर्मोदयनिमित्ते धर्मथी पमतोहोय तेने सडुपदेशादिक आपी अथवा तेने कोईरीते सहायीथईने तेनुं परिणाम थिरकरे, पण मगवा न आपे ते छठो स्थिरीकरण गुण जाणवो

सातमो वत्सलतागुण आ वर्त्तमान शासनमा जे नव्य धर्मरुचि जीवोसाथें सामायक पोसह परिकमण यात्रा पूजादिक धर्मकरणी करताहोय, जेहनी सद्दह णा एकहोय ते पोताना साधर्मी कहिये, तेनी नक्तिकरवी ते वत्सलताकहियें अ थवा सर्वजीव जाते आपणासाहमीजछे, एकसत्ताये सरखाछे, वास्ते सर्वजीवनी वात्सलता करवी, जीवदयापालवी, अथवा अंतरगनावे जीवना ज्ञानादिकगुण छे तेने ज्ञानध्यानेकरी पोषवा (पुष्टकरवा) एटले ज्ञान ध्याननो घणो अन्यास करवो ए स्वनिष्टा वात्सलगुण सातमोछे.

आठमो प्रनाविकगुण ते जैनशासननी उन्नतिकरवी, संघयात्रा रथयात्रा अथवा महोटा तप जप उजी उपधान प्रतिष्टा पूजादिकना घणामहोत्सवे अठलक दाना दिकनी उदारताकरी जेथी अन्यदर्शनीउपण अनुमोदनाकरे एवी धाराये धर्म स न्मुखकरे, स्वदर्शननी वृद्धिकरे, घणाजीवोने धर्मजोडावे, एवा कारण मेलवे जेथकी जैनशासनने प्रनावे (दीपावे) ए बाह्यप्रनाविकगुण अथवा पोतानी आत्माना ज्ञानादिकगुण तेने वधारवा पुष्टकरवा ते अतरप्रनाविक गुण ए प्रनावनागुण आठमो कह्यो.

हवे श्री सम्यक्त्वना सडसठनेद विशुद्ध व्यवहारथी कहेछे —

तिस्सुद्धि लिंग लरकण, दूसण नूसण पन्नावगागारा ॥
सद्दहण जयण नावण, ठाण विणय गुरु गुणाईयं ॥ २४ ॥

अर्थ — तिस्सुद्धि के० सम्यक्त्वनी त्रणसुद्धिछे, तेमा पहेली मनसुद्धिते श्रीजिन तथा जिनमत ए बे विना अपर सर्व असारछे इम चितवे ते मनशुद्धि, बीजी व चनसुद्धि ते श्रीजिनेश्वरनु आराधन करतां सर्व कार्यनी सिद्धियायज अने कोई पू र्वकृत दु कृतना उदयथी जे कार्य न थयु ते अन्य देवोथी शुंथवानुंछे, माटे अरिह तनी सेवाथी कामना सिद्धियायज, वास्ते स्वप्नमापण अन्यदेवनी प्रार्थना न करुं,

एवुंजे निसंकपणे बोलवुं ते वचनशुद्धि कहिये. त्रीजी कायशुद्धिते कोई पूर्वकृत अशुन्नोदयथी कोई मिथ्यादृष्टी डुष्टराजा अथवा चोर अथवा डुष्ट देवादिकजेछे ते णे खड्गादिके छेद्यो, निन्नादिके यंत्र घाणीप्रमुखे पील्यो, अग्नी प्रमुखे दाज्यो, एवा मह्योटा मरणांत कष्टआवे, पण एक श्रीजिनेश्वरविना अपर देवने वज्रजंघनीपरे नमेनही ते कायशुद्धि कहियें

लिंगके० लिंगत्रणछे ते कहेछेः—जे श्रीजिनागम सांनलवानी घणीज इछाराखे इंड्रियसुखना अनेककार्यमूकी आगम सांनलवाने तत्परहोय ते प्रथम सुश्रुषा लिंग कहिये बीजुंलिंगते धर्मकरणी करवाने परमरागहोय जेटला धर्मकरणीयछे तेहिजकार्यमाने बाकी सर्व नवपूरणमाने ते बीजुलिंग. त्रीजुलिंगते जे श्रीजिनेश्वर तथा जिनमार्गानुसारी गुरु तेना वैयावच्चमां यथायोग्य निश्चलानिग्रह रूप नियमें प्रवृत्ते ते त्रीजुलिंग जाणवुं.

हवे जेथकी हृदयगत सम्यक्त्व लिखियें जाणियें तेलक्षण पांचछे—ते कहेछे तेमां पहेलुं लक्षण समछे, तेजेम रागद्वेषनी मंदता, तेम समतानी वृद्धि, सुखडुःखना उदये हर्षविषाद धरेनही ते समकहिये. एटले समपणेहोय पापोदये पुण्योदये अव्यापकहोय तेसम नामा प्रथम लक्षण जाणवुं. बीजु संवेग लक्षण ते नित्ये मोक्षानिलापरहे, जे जे मोक्षना कारणछे ते ते उपरे आदर घणुंहोय, परन्नावथी विमुखरहेते बीजुं लक्षण. त्रीजु निरवेद्यलक्षणते जे सप्तांग सहित एकछत्र राज्यपाम्युंहोय तोपण एमजाणे जे ए बंदीखाने पड्योछुं. ए कारागारथी के वारें छूटीस, सर्व पुजलिकन्नाव ते बंधनरूपगणे, समस्त संसारथी उदासरहे, ते निरवेद्य लक्षण त्रीजुं जाणवु चोथुं अनुकंपनलक्षण ते जे सर्व ससारीजीव उपरे अनुकंपाधरे, एटले संसारीजीवोना इव्यडुःख देखीने तेना उपर परम मैत्रीन्नावधरी, यथा शक्तिये उपकारकरे, मनमां एवी चाहना राखेजे कोई जीव पाप नकरे कोईजीव डुःखी नथाय, सर्व संसारीजीव इव्य न्नाव डुःखथी छुटे, धर्मपामे महारी शक्तिफुरे तो सर्वने धर्मरुचिवतकरुं, जेम एना जन्ममरणना डुःखटलें, एवी वासनाते अनुकंपा लक्षण चोथुं जाणवुं. पाचमुं आस्तिक्यता लक्षणते श्रीजिनशासन तथा जिनधर्मउपरें परम आसताहोय, परमरंगहोय एरीतें धर्मरग वासीतहोय ते आस्तिक्यता लक्षण पांचमुं जाणवुं.

हवे पांच दूषण सम्यक्त्वना कहेछे—तेमां प्रथम संकादूषण ते जे जिनवाणीमां संदेहधरे ते शंकाकहिये. तेना बे न्नेदछे—एक देशविषयी बीजो सर्वविषयी. तेमां

सर्वविषयसंका ते धर्मछे के नथी अथवा जिनधर्म सत्यछे किंवा असत्यछे एवी विचारणाते सर्वथी संकाजाणवी अने जे देशसंकाते जीव सर्वगतछे के असर्वगतछे पृथ्वीमां जीवपणुं केमठेरे अथवा निगोदादि स्वरूप केम घटमानथाय? कई युक्तिए मानिये अथवा वर्तमानकालें चारित्रछे के नथी इत्यादिक देशसंका जाणवी तथा पूर्वकहीजे सर्वसंका ए बे संका सम्यक्त्वने दूखवे ते संकानामे प्रथम दूषण जाणवुं.

बीजुं कांक्षादूषण. ते जे परदर्शननो अभिलापधरे तेने आकांक्षा दूषणकहिये ते बेप्रकारेछे एक देशथी आकांक्षा बीजी सर्वथी आकांक्षा तेमा सौगतादिक एकज दर्शननो अभिलापधरे ते तो देश विषय आकंक्षा, अने जे सर्वपाखंडीधर्मनी आकांक्षाधरे ते बीजी सर्वविषय आकांक्षा, एबीजुंदूषणकह्यु. सम्यक्त्व मलीनकरे ए श्रीजिनागममां अविस्वास रूप दूषणछे.

त्रीजुं वितिगिछादूषण ते जे तपस्यादिक धर्मकरणीकरता तज्जन्यफलनो संदेह धरे, ए धर्मक्रिया फलसे के नहीफलसे, केमके क्रिया बे प्रकारनी जगतमां देखाय छे, एक फलआपे बीजी अफलपण थाय, आषाढाचार्यनी परे संदेहमांपडे, इहां कोईशिष्ये पूछ्युं जे संकाते संदेहरूपछे, अने आ विचिकछापण संदेहरूप कहोछो तो ए बेमा शोविशेषपणुंछे जेथी भिन्न भिन्नकहोछो एम शिष्ये पुछयाथी गुरुकहे छे संका दूषणते द्रव्यगुण विषेछे अने विचिकछा क्रिया विषेछे ए त्रीजुं दूषण

चोथु प्रशंसादूषण ते कलिंगी तापस सांख्यादिक देखीने अहो ए महोटा तपस्वीछे, इयादिक वर्णन ते आसंसाकहिये, ए प्रसंसाकरता असद्गुणाकरणे करी सम्यक्त्व मलीनकरे, मुग्धबुद्धि मिथ्यादृष्टी लोकने विषे, अत्यादरथाय, मिथ्याधर्मनी सदापुष्टीथाय, केमके लोककहेके जैनधर्मीपण एनी प्रसंसाकरेछे, तो ए महागुणी छे इत्यादिक दूषणोथी सम्यक्त्व मलीनथाय ए चोथुंदूषण

पाचमुं दूषणते जे कुलिंगी अन्यदर्शनी साथे संस्तव परिचयकरे, नित्य भेगार हे, तेनी क्रियाना वर्णन महिमा सांभली श्रद्धादोषर्दलीथाय, अने तेनी कुलक्षण क्रियादेखी दर्शन दृढता सिथिलथाय, माटे अन्य दर्शनीनो परिचय त्यजवो ए पांचमुं दूषणछे.

हवे पांच भूषण कहेछे—प्रथम स्थैर्यभूषणते जे श्रीजिनधर्मने विषे स्थिरताहोय, पण युक्ति कुयुक्ति सांभली चपलचित्त करेनही ते स्थैर्यभूषण. बीजुं प्रभावना भूषणते श्रीजिनशासननी अनेक संघयात्रा पूजा प्रतिष्ठादिकना महोत्सव करेते बीजुं प्रभावना भूषण जाणवु त्रीजुं भक्तिभूषणते श्रीजिनशासन उपर घणीभक्ति

राखे, जेम कोई दलिद्री रोगी अपराधी कलंकी प्रमुख दोषनिधान महादुखियो दीन हीनभिक्षाचरानुंवस्था अनुभवतो, एवा दुःखी पुरुषने कोई उपकारी सामर्थ्यवान पुरुषें करुणाभावी तेना सर्वदुःखफेडी महोटा धन धान्य राजऋद्धि समृद्धियें स हितकर्यो, हवेते दलिद्रीपुरुषने उपकारना करनार उपर केहवी भक्तिहोय तेथी अधिक भक्ति देव, गुरु, धर्म, उपरेंराखे ते त्रीजुं भक्तिभूषण कहियें. चोथुं भूषण श्रीजिनशासननेविषे कुशलता आगमसैलीयुक्ति प्रयुक्ति हेतुदृष्टांत मांहे अतिनिपु ण ए भूषणवत क्यांय खलायनही जिहांजाय तिहां आगमनी कुशलताथी अन्य दर्शनीमां जैनमार्ग दीपावे कोई स्थानके हारेनही, परिकर्म्मित बुद्धिबले प्रभुनो मार्गदीपावे घणाने जैनधर्मपमाडे ते चोथुंभूषण.

पांचमुं तीर्थसेवा भूषण ते जे द्रव्यभावथी तीर्थनी सेवामां रसीयोहोय तिहां द्रव्यथी तीर्थ ते श्रीसिद्धाचलादिक पुण्यक्षेत्र जिहां तरतमयोगें घणाजीव सिद्धि वर्या घणाजीव रत्नत्रयीपाम्या घणासम्यक्त्वदृष्टी देवनिवासि ते एवां पुण्यक्षेत्रें अनेक जनसमुदाययुक्त विधिपूर्वक जायछे तिहां ते महापुरुषोना चरित्रने बहुमा न करता पुण्यक्षेत्रना योगथी घणा कर्मोंनी निर्जराथाय, केमके बंध तथा निर्जरा ते द्रव्य क्षेत्र काल भाव ए चारने अनुकूलता माफक थायछे शुभद्रव्यादिक चा रने निमित्ते पुण्यनी वृद्धिथायछे, तेथी निकटसंसारीथायछे. वली अशुभद्रव्यादिक चारने योगे संसारदुःख दुर्गतिनी वृद्धिथायछे, माटे कर्मक्षय निमित्तें द्रव्यतीर्थभ जुं अने भावतीर्थ ते द्वादसांगी अथवा चतुर्विध संघ तेनी सेवा भक्तिबहुमान क रतां आत्मा निर्मलथाय, बीजाजीव धर्मपामे ए तीर्थसेवानामे पांचमुंभूषणकह्युंछे.

हवे आठप्रभावक कहेछे पावयणी धम्मकही, वाई निम्मित्तउ तवस्सीय ॥ वि ज्जा सिद्धो अ कवि, अठ्ठेव पभावगा भणिया ॥ १ ॥ अर्थ — पावयणीके० प्रावचनीते जिनमार्गमां कुशल जिनमार्गदीपावे, तेथी प्रभावक कहीयें. बीजुं धर्म कथामां अतिनिपुण होय ते घणा दुर्बोधजीवोने धर्मपमाडे, शासननी उन्नतिवधा रे, माटे बीजो प्रभावकजाणवुं. त्रीजो प्रभावक वादी तेएकवातने शेकडावखततथा पे, वलीतेज शेकडावखत उत्थापे पण किहां खलायनही. प्रतिज्ञा हेतु दृष्टांत यु क्ति कुयुक्तिमां निपुण, एवा तीक्ष्णबुद्धिमान वादी स्याद्वादमां निपुण ते राजद्वारे बहुजनसमक्ष जयपताकावरे, शासनने दीपावे माटे वादीप्रभावकत्रीजो जाणवो चोथो निमित्तभाषी प्रभावक ते जे पूर्व आम्नायनायोगथी भूत भविष्य वर्तमान कालनी वातकहे ते निमित्त कुशल; कोई तथाविध अवसरे राजद्वारादिकमां शा

सननी उन्नति करवा माटे कोई लाभालाभ गवेषी निमित्तकहे, सर्वप्राणीने चमत्कारपमाडी पोताने अनुकूलकरे; तेअनुकूलथयाथी धर्मनी वृद्धिथाय शासनदीपे, ए चोथो प्रभाविक जाणवो. पांचमो तपस्वी प्रभावक ते श्रीजिनागमोक्त विधिमर्यादा पूर्वकतपकरे, तेने अनेक कठिण कर्मनी निर्झराथाय, आमोसहीप्रमुख घणी लब्धि उं उपजे, तपस्याना महात्म्यथी इतिउपद्रव देवछलादिक सर्व समीजाय, उपासना कर्याविनाज तेने देवता पोतानीमेले आश्रितथई महीमावधारे, एवा शक्तिवत तपस्वी जिहांविचरे तिहां श्रीजिनशासनदीपावे, माटे प्रभावक कहिये. छठोविद्यासंपन्न प्रभावक ते आकाशगामिनी प्रमुख अनेक विद्यायें संपन्न महापुरुष कोई विषम वेलामां श्रीसंघनो उद्धारकरे, विघ्ननिवारे, दुष्टदमनकरी सघनीरक्षाकरे, शासननेदीपावे, घणाजीवोने धर्मसन्मुखकरे, माटे प्रभाविक कहिये, सातमो सिद्ध प्रभाविक ते जे पूर्व आम्नाये गुरुकृपाथी पाम्यो अंजनसिद्धि चूर्णसिद्धि मंत्रसिद्धि, कनकसिद्धि प्रमुख अनेकसिद्धि सपन्न होय, ते कोई विषमताने योगे लाभालाभदेखी कोई अद्भुत सिद्धिनावलेकरी संघनो विघ्नदूरकरे, शासननी महोटाई करी देखाडे माटे प्रभाविक कहिये. आठमो कविप्रभावक ते जे जिनमार्गधर्मने अणदूषवतो समस्त वर्त्तमात श्रुतमा निपुण स्वपर शास्त्रवेता कोई शासनोन्नतिकारणे अथवा कोई विघ्नजय निमित्ते कोई महा गंभीरार्थे अतिशयोक्ति युक्त प्रकश्वरे जे सांभलताज पंमितहोयते चमत्कारपामी अनुकूलथाय, एम ए प्रभावक चिंतितकार्य सर्वकरे शासनोन्नतिकरे माटे प्रभाविक जाणवो ए आठप्रभावक कह्या

हवे छ आगार कहेछे तेमां प्रथम आगार रायाभियोगेण एटले राजाने आदेशें कांई धर्मविरुद्ध करवुपडे तेनो आगार, बीजो गणाभियोगेण एटले घणालोक न्यात जात प्रमुखना जोरथी विरुद्ध करवुपडे तिहां प्रतिज्ञा भागेनही ते बीजो आगार, त्रीजो बलाभियोगेण ते कोई महाबलवान बलात्कारे पकडी परवशकरी जोरावरीथी अभक्ष्य प्रमुख मुखमानाखे खवरावे तेथी प्रतिज्ञा भागेनही ते त्रीजो आगार. चोथो देवाभियोगेण ते कोई दुष्ट देव पोतानी दिव्यशक्तियेकरी मनुष्यनी चेतना विकलकरे, अथवा अत्यंत मरणांत कष्ट समस्त कुटुंबने आपे ते विकलतामां अथवा कष्टनो मार्यो राजवेठ समान कांई विरुद्ध करवुपडे तिहां प्रतिज्ञा भागेनही ए चोथोआगार. पांचमो गुरुनिग्गहेण ते माता पिता वृद्धभ्राता प्रमुखना केहेवाथकी ते समजाव्या न समजे अने जो तेमनुं केहेवु न करे तो लोक निंदा करे, एम विचारी तेमना केहेवाथकी कांई विरुद्ध करवुपडे ते पांचमो आगार छठो

वित्तिकंतारेण ते वृत्ति कहेतां आजीविका तेहिज महोटा कांतार एटले अटवी ए टले कोई पापोदयथी एवु द्रव्य क्षेत्रादिक योग मलिजाय के जेथकी आजीविका नी दुर्लभतायईजाय त्रणदिवश पर्यंत जिहांसुधी शक्तिफुरे परिणामटके तिहां सु धीतो टक्योरहे पछे जाणेजे हवे टकातेनही एवुंदेखे तेवारें कोई विरुद्ध कारणे आजीविका करवीपडे ते छठो आगारजाणवो. ए छए आगारतो जे उत्सर्गें पाली शकेनही तेनेछे, पणजे दृढ परिणामी होय ते सावास्ते आलंबनलहे, जे मंदहोय ते लाकडी लेइने चाले तो तेने कोई विरुद्धपण कहे नही.

हवे चार सद्दहणा कहेछे तेमां प्रथम परमार्थजे तत्वार्थ तत्वज्ञान शास्त्ररह स्य तेनो परिचयकरे, केमके तत्वज्ञान पाम्याविना जे उद्यमछे ते कष्टरूपछे, माटे तत्वज्ञान परिचय ए प्रथम सद्दहणाकहियें. बीजी तत्वज्ञाननी सकलपरमार्थनाजा ण जे मुनिराज तेनी सेवाकरे, एवा मुनीने सेव्याविना तत्व प्राप्तिपणनथाय, माटे तत्व ज्ञाननी सेवना ते बीजी सद्दहणाजाणवी. त्रीजी व्यापन्नदर्शनी वर्जन ते व्यापन्नके० गयुंछे दर्शन जेथकी, एटले श्रद्धाभृष्ट थयेला स्वदर्शनी, तेनी संगतन करवी, हीणानी सोवतकरतां साधुजनपण हीणोकेहेवाय, वास्ते दर्शन भ्रष्टनुं संग वर्जवुं ए त्रीजी सद्दहणा जाणवी चोथी कुदृष्टी संगवर्जन ते मिथ्यात्वी ता पसादिकनी संगतनकरे, रासभसंगे गायकुटाणी माटे धर्मार्थियें कुलिंगीनुं संगवर्ज वु एचोथी सद्दहणा जाणवी

हवे छ प्रकारे जयणाकहेछे तेमां प्रथम अन्यदर्शनी जे तापसादिक तथा तेना देवजे ब्रह्मा विष्णु महेस शक्ति प्रमुख ३ तथा तेणे ग्रहणकरेलाजे अरिहं तना चैत्य प्रतिमा वड्निाथ प्रमुख एटलानी साथे छप्रकारनो व्यवहार नकरवो छ प्रकारनी जयणा कहियें तेनानाम कहेछे एक वंदननकरवुं बीजुं विशेष बहुमान पूर्वक पंचाग प्रणिपातादिक तेने नमन कहीयें ते पण नकरवुं. त्रीजुं दानजे अन्न वस्त्रादिक तेपण भक्तिपूर्वक धर्मसाधनार्थें नआपवुं. उचित अनुकंप जाणीदेवु ते नी मनाई नथी चोथुं अनुग्रह प्रदान जे वारंवार तेडीतेडीने देवुं ते पण नकरवुं पांचमुं आलाप ते बोलाव्याविना आगलथी एकवार बोलवुं तेपण नकरवुं, छठो संलापते वारंवार बोलवुं तेपण नकरवु. ए छ वाना करतां सम्यक्त्वजाय माटे छ वाना वर्जवा ए छ प्रकारनी जयणा कहियें.

हवे सम्यक्त्वनी भावना कहेछेः—समस्त धर्मनुं मूलते सम्यक्त्वछे एवुं भाववुं ते प्रथम भावना. तथा समस्त धर्मरूप नगरनो द्वार तेपण सम्यक्त्वछे एवु भाव

वु ते बीजी जावना. तथा धर्मरूप प्रासादनो पाइयो अथवा पीठते पण सम्यक्त्व जछे एवुं जाववु ते त्रीजीजावना, तथा सम्यक्त्वते आत्मार्थिकजीवोने निधान अखुट खजानोछे एवुं जाववुं ते चोथीजावना, समस्त धर्मनो आधार ते सम्यक्त्व जछे एवी वासना ते पांचमी जावना जाणवी, तथाधर्मरूप अमुल्यचीजने राखवा तुं जाजनते सम्यक्त्वछे एम जाववुं ते छट्ठी जावना जाणवी

हवे सम्यक्त्वना छ गण कहेछे शुद्धपद पणामाटे अस्ति ते जीवछे एम दृढ निश्चे जाणवु ते प्रथम गणछे. तथा सास्वत नित्यछे द्रव्यथी किवारे नाशनथी ए बीजुंगण तथा पुल्य पापनो कर्त्ता तेपण ए जीवजछे ए त्रीजुंगण. तथा वली पुल्य पापनो जोक्ता तेपण जीवजछे ए चोथुंगण. तथा निर्वाण जे मुक्ति सिद्धछे ए पांचमुंगण. तथा ते मुक्तिपामवानो उपायपणछे ते छठुंगण. ए छ गणाविशेषनी चर्च्या दर्शन सितरी प्रमुख ग्रंथथकी जाणवी ए छगणनी अप्रतीत अविश्वास ते मिथ्यात्व जाणवु माटे छ गण रुडीरीते सद्दहवा आगमरुची गुरुपासेथी धारवा.

हवे सम्यक्त्वनी निर्मलताने अर्थे दशनो विनयकरवो ते कहेछे — अरिहंत ते विचरता तीर्थंकर १ ज्योतिस्वरूपी सिद्ध २ चैत्यजे प्रजुना देरासर ३ श्रुतसिद्धांत ४ वीतरागनो धर्म ५ मोक्षमार्गना साधक साधु ६ पाचप्रकारना आचार ते पोतेपण पाले अने परने पलावे ते आचार्य ७ जे इग्यारअंग पोते जणे अने परने जणावे ते उपाध्याय ८ पवयणीते चवदपूर्वधर ९ दर्शनजे सम्यक्त्व ए दशनो विनयकरवो एदशनो यथायोग्य अनुकूलपणेथयीने विनय करतायका सम्यक्त्व अतिनिर्मल थाय

विद्वारं तुह समया, सया सरंताण जवजीवाणं ॥
सामिय तुह पसाया, हवेऊ समत्त संपत्ति ॥ २५ ॥

अर्थ —हे स्वामिन् तुहसमया के० तहारा परूप्या सिद्धांतनो विद्वारं के० विस्तार तेने सया के० सदाकाल सरंताण के० अनुसरतां अभ्यासकरतां एवा जवजीवाणं के० जव्यजीवोने तुहप्पसाया के० ताहरा पशायथी सकल सिद्धांतनोपार एवोजे समत्त के० सम्यक्त्व तेनी संपत्ति के० प्राप्ति ते सम्यक्प्रकारे निरावरणजावे हवेउ के० थाउ. ए प्रकरण करनारनी आसीसछे इति सम्यक्त्वस्तव बालावबोध संपूर्ण मगमत्.

॥ अथ प्रशस्तिलिख्यते ॥

॥ दोहरा ॥ यह विधि समकित गुणतणी ॥ प्रापति आगम मांहि ॥ जाषी नि

सुणी सद्दहे ॥ तस दो दुरगति नांहि ॥ १ ॥ सुरपति सुख लेवो सुगम ॥ सुजन रत्न इक वत्त ॥ दुर्लन नरनव जगतमें ॥ समकित गुण सपत्त ॥ २ ॥ दान दया संयम क्रिया ॥ समकित युत शिव हेत॥नहि तो मंडुक चूर्णपरि॥नव बंधन संकेत ॥ ३ ॥ विण समकित सयम क्रिया ॥ करे अनंती वार ॥ पार न पावे तेह युत ॥ अड नवमे निस्तार ॥ ४ ॥ एक सहित दश गुण वधे ॥ शुन्य अंक कहिवाय ॥ बोधियुक्त गुण सवि क्रिया ॥ नहितो कष्ट कहाय ॥५॥ पुन्यदिशी पूरव नली ॥ जिहाँ उदयाचल थान ॥ कल्याणक सवि जिनतणा ॥ तिण ए दिशि परधान ॥ ६ ॥ सुविहित सूरि गुणे नखा ॥ (श्री) पुन्यसिंधु सूरीस॥ वाचक ज्ञानसागर तणि ॥ नितु जस नामे सीस ॥ ७ ॥ तास शिष्य पूरव तणा ॥ तीरथ नेटण काज ॥ शुन सकुने सूरतथकी ॥ करि प्रयाण शुन साज ॥ ८ ॥ यमुना सुर तटनी तटे ॥ वंदन श्रीजिनपाय ॥ नगर मगसुदाबाद लगि॥ अनुक्रम पहुता जाय ॥ ९ ॥ साउसखा गोत्रे नलो ॥ साह सुगाल सु नाम ॥ दुखमां काले धर्मनो, कखो सुगाल सुगम ॥ १० ॥ समतसिखर गिरिराज पर ॥ वीसे टूंके स्तूप ॥ थापी तिम इकवीसमो ॥ कखो प्रसाद अनूप ॥ ११ ॥ पंचम आरे परगडो ॥ कखो उद्धार प्रसिद्ध ॥ मानव नव सफलो करी ॥ जगमाहे जश लीध ॥ १२ ॥ तसु सुत नागनिधी नलो ॥ दाता धर्मी दक्ष ॥ राजसना मंमन समी ॥ अनिनव अनय प्रत्यक्ष ॥ ॥१३॥साह सुला नामे निपुण ॥ आगम रुचि प्रिय धर्म ॥ तास कहणथी ए कियो ॥नापामय स्तव मर्म ॥ १४ ॥ आगे बहुश्रुते बहु लिख्या ॥ समकित नेद विशेप ॥ वाक्कु लखि नाषा लिखुं ॥ उनमे कूण विशेप ॥ १५ ॥ तोनी तस आसय अगम ॥ हुं उद्मस्थ अयाण ॥ नूल चूक जे मुझतणी ॥ बुध जन लाजो गण ॥ ॥ १६ ॥ आगम जलधि अपार हे ॥ मुझ मति नौका तुच्छ ॥ क्यो निवहे नादो नदी ॥ पकरे नेडी पुच्छ ॥१७॥ अल्पमति मे अज्ञान हुं ॥ जाणुं न बहुत रहस्य॥ कृपाकरी मोपे कृति ॥ करजो शुद्ध अवस्य ॥ १८ ॥ सज्जन मुझशिरमोर हे ॥ हुं सज्जनको दास ॥ संतकृपाथी मुझ हुसे ॥ ए सफलो सुप्रयास ॥१९॥ कुमति कदाग्रह भ्रमथकी ॥ वितथ लखाणु जेह ॥ श्रीसघ साखे मुझहुउ ॥ मिच्छादुक्कड तेह ॥ २० ॥ दूर्लन चारुं अंगमे ॥ समकित एह अमूल ॥ नविजन तस उद्यम करो ॥ जिम शिवसुख अनुकूल ॥ २१ ॥

इतिश्री सम्यक्त्व स्वरूपस्तव बालावबोध सहित समाप्त.

हे, मूढा मोहेण अन्नाणी ॥ १२ ॥ दोहा – केइ मूढ अन्याय करि, आण भंग जिम थाय ॥ तिम जिण द्रव्य वधारता, बुडे भवोदधिमांय ॥ १२ ॥ व्याख्या – केवि– केटलाएक मोहेण– मोहे करीने अन्नाणी– अज्ञानी शुद्धज्ञान विकल एह वा मूढ– मूर्ख तत्वज्ञानना अजाण जिणवरआणारहिय– जिनवरनी आज्ञायकी रहित थया थका जिणदव्वं जिनद्रव्यने– वद्धारतावि वधारता छतां पण भव समुद्दे– संसार समुद्रनेविषे बुड्डंति– बुडे छे भमेछे ॥ १२ ॥

अवतरण –अंगारकर्मादिक कर्मरूप कुव्यापार पोते कस्याथी अथवा कोईना हा थे कराव्याथी, अथवा देवद्रव्येकरी गृहादिक स्थावर मिलकत खरीद करी अथ वा करावीने भाडे आपवी तथा नीच लोकोने जिनद्रव्य व्याजनी आशाए धीरवा थी, तथा पोते बलवान छतां जोर देखाडीने जबरजस्तीथी कोईनी पासेथी काई द्रव्य लई लेवु तथा माली, सुतार, शिल्पी (कडिया) इत्यादिकनी पाशेथी वचना करीए टले ठगीने जे देव द्रव्यनी वृद्धि करवी ते जिनआज्ञाथी रहित छे ए वृद्धि जिन आज्ञा प्रमाणे कहेवाय नही पण जिनआज्ञाथी बाहेर कहेवाय ,तथा कुकला एटले नरमी कलाए करी देवद्रव्य वधारवानो शास्त्रोनेविषे निषेध कस्यो छे. घणो लाभ थतो होय तोपण ए द्रव्य कोईने अग उधार देवानो निषेध कस्यो छे सुव र्ण तथा रत्नादिकना आभूषणो राखीने तेना व्याजथी देवद्रव्यनी वृद्धिकरवी कही छे अने सुकलाएकरी तथा न्यायोपार्जित धनना भागे करी देवद्रव्यनी वृद्धि क रवी एम शास्त्रोमां कह्युछे माटेज अयोग्य मनुष्यने देशना देवी नही ते कहेछे – मूल – कुग्गह गह गहियाण, मुद्धो जो देइ धम्म उवएस ॥ सो चम्मासी कुक्कर, वयणम्मि खिवेइ कप्पूर ॥ १३ ॥ दोहा – कुग्रह ग्रह ग्रहि जीवकूं, जो कछु ध र्म सुणाय ॥ चर्मभखी कूकरमुखे, सो कर्पूर चवाय ॥ १३ ॥ व्याख्या – कुग्गह अभिनिवेश मिथ्यात्वरूप जे कुग्रह तद्रूप गह–ग्रह जे भूतादिक तेणेकरी गहिया ण–ग्रहण थएला जे लोको तेआने मुद्धो–मुग्ध जो–जे धम्मउवएसं–धर्मना उ पदेशने देइ–दिये छे, सो- ते चम्मासीकुक्करवयणम्मि–चर्मादिकने भक्षण करनार कूतराना महोमा जाणे कप्पूर–कर्पूर भोजन खिवेइ–क्षिपति एटले नाखेछे. एनो भावार्थ – जे मनुष्यो कदाग्रहरूप भूतेकरी ग्रसायला छे , तेउने शुद्ध धर्मनी देश ना देवी ते कूतराना महोडामा उत्तम भोजन आपवानी परेछे, अर्थात् योग्य अधिकारी जोईने धर्मोपदेश करवो ए तात्पर्य छे ॥ १३ ॥

सिद्धांतथी बाहेर पोतानी मतिए करी कल्पेलो पोते अंगीकार करेलो जे अस

त्य पदार्थ, तेने फूठो उपदेश देईने पुष्ट करवो ते अभिनिवेश मिथ्यात्व कहेवाय छे. अने जे हेय उपादेयना ज्ञानेकरी रहित होय तेने मुग्ध कहेछे.

अवतरणः—अयोग्य पुरुषने उपदेश देवामा रोषनो संभव छे ते कहेछेः—मूल — रोसो विखमा कोसो, सुत्तं भासंतयस्स धन्नस्स ॥ उस्सुत्तेण खमाविय, दोस महा मोह आवासो ॥ १४ ॥ दोहा·— सूत्र भाषि नर धन्य तस, रोषवि उपशम कोश उत्सूत्रीकी पिण क्षमा, महा मोह घर दोष ॥ १४ ॥ व्याख्या·—सुत्तं भासंतयस्स धन्नस्स—सूत्रनुं भाषण कर्त्ता जे धन्य पुरुष छे, तेनो रोसोवि—रोष एटले क्रोध छे ते पण खमाकोसो—क्षमानो कोश एटले भंडार छे; अने उस्सुत्तेण—उत्सूत्रेकरी खमावि य—क्षमा पण दोस—दोष अथवा द्वेषरूप छे, महामोह आवासो—ते महामोह एटले अज्ञाननो आवास एटले महेल छे एनो भावार्थ.—सूत्र भाषी शुद्ध प्ररूप क गीतार्थ पुरुषनो क्रोध पण क्षमानो भंडार छे, केमके, ते शिष्यादिकने शुभ सा धननो हेतु छे, अने उत्सूत्र भाषी अगीतार्थ पुरुषनी क्षमा पण क्रोधनो भंडार छे, केमके, ते शिष्यादिकने अशुभ साधननो हेतु छे ॥ १४ ॥

अवतरण —कोईक ठेकाणे क्रोध शुभनो हेतु थायछे अने क्षमा अशुभनो हेतु थायछे माटे जिनधर्मनुं सम्यक् जाणपणुं घणुं कठण छे ते कहेछे मूल —इक्कोवि न संदेहो, जं जिण धम्मेण अछि मुरक सुहं ॥ त पुण डुविन्नेयं, अइउक्कड पुन्न रहियाण ॥ १५ ॥ दोहा —जो शिवसुख जिणधर्मथी, एकनि नहि संदेह ॥ पुन्य हीणके जाणवो, कठिण मोक्ष सुख तेह ॥ १५ ॥ व्याख्या.— इक्कोवि—एक पण नसंदेहो—संदेह नथी, जं—जो जिणधम्मेण—जिणधर्मनुं आराधन कर्युं छतां मुरकसु हं—मोक्षसुख अछि—छे, एटले जिनधर्मना आराधनथी निश्चये करी मोक्ष थायछे एमा एके संदेह नथी पुण—वली त—ते जिनधर्म डुविन्नेय—दुःखेकरी जाणवा योग्य छे, एटले जाणवाने अशक्य छे ते कोणेजे अइउक्कड पुन्नरहियाणं—अति उत्कट ए टले अति प्रधान सम्यक्त्वरूप पुन्य थकी रहित प्राणी छे तेने; अर्थात् अभिनिवेश मिथ्यात्वीने जिनधर्मनुं सम्यक् जाणपणुं थवु घणुं कठण छे ए भाव छे ॥ १५ ॥

अवतरण·—स्त्रीनी चोसठ कला अने पुरुषनी बोतेर कला इत्यादि स्थूल पदार्थोथी जिनधर्मनुं डुर्लभपणुं देखाडे छे — मूल — सवंपि वियाणिज्जइ, लप्नइ तह चउरि माइ जणमज्झे ॥ इक्कंपि भाय डुलहं, जिण मय विहु रयण सुविन्नाण ॥ १६ ॥ दोहा·— चतुराई सबही कला, लहिये जगत सुजाण ॥ पिण डुर्लभ इक जैन मत, विधी रत्न विज्ञान ॥ १६॥ व्याख्या — सवंपि—सर्व पण वियाणिज्जइ—लोको

नेविषे जाणामा आवेछे, तह–तिम चउरिमाइ–चतुराईपणुं एटले उचित कार्यने विषे कुशलपणुं जणमज्झे–अविवेकी लोकोनेविषे पण लप्भइ दीठामा आवेछे, काई दुर्लभ नथी, केमके संसारनी चतुराई जीवे अनंत वार पामेली छे परतु भाय–हे भाई, इक्कंपि–एकज दुलह–दुर्लभ छे एटले दु खे करी पमाय एवुं छे ते जिणमय विहि रयण सुविन्नाण–जिनमत संबंधी विधि रत्ननुं भलु जाणपणु तथा करवा पणुं तेज एक दुर्लभ छे, केमके, विवेकी पुरुषने जिनशासन संबंधी विधिरत्ननुं सम्यक् जाणपणु तथा करवापणुं संभवे पण बीजाने संभवे नही ए भाव छे ॥१६॥

अवतरण --जिनमतविधिरत्नना सम्यक् जाणपणानुं दुर्लभपणुं देखाड्युं, ते जाणपणानेज सम्यक्त्व कहेछे, माटे हवे सम्यक्त्वनुं दुर्लभपणुं देखाडेछे-- मूल -- मिच्छत्त बहु लयाए, विसुद्ध सम्मत्त कहण भवि दुलहं ॥ जह वर नरवइ चरियं, पाव नरिंदस्स उदयम्मि ॥ १७ ॥ दोहा -- बहुलताय मिथ्यात्वकी, दुलभ सु समकित ध्यान ॥ जिम पापी नृपके उदै, वर नरनाथ कथान ॥१७॥ व्याख्या – मिच्छत्त बहु लयाए- मिथ्यात्व तथा मिथ्यात्वीओना बहुल पणाने लीधे, एटले वर्तमान दुषम कालमा देदीप्यमान असयतपूजा नामे दशमा अछेराना महिमाए करी द्रव्यलिंगी कुलिंगी तथा तेओना सेवको अभिनिवेशादिक मिथ्यात्वीओ घणा छे माटे विसुद्धसम्मत्तकहणमवि–अभिनिवेश मिथ्यात्व मलरहित निर्मल सम्यक्त्वनुं कथन करवु पण दुलहं--दुर्लभ छे अहीं दृष्टात कहेछे –जह– जेम पावनरिंदस्स उदयम्मि--पापी एटले अन्याई राजानो उदय थयो छता वरनरवइ चरियं--प्रधान न्यायवत नृपतिना चरित्रनुं वर्णन करवु दुर्लभ छे तेम ते पण जाणी लेवु ॥१७॥

अवतरण --विशुद्ध सम्यक्त्वनुं कथन करवु पण दुर्लभ छे, तथापि उत्सूत्र भाषी द्रव्यलिंगीनो त्यागकरवो योग्य छे ते कहेछे -- मूल - बहु गुण विज्जा निलओ, उसुत्त भासी तहा विमुत्तव्वो ॥ जह वर मणि जुत्तो विहु, विग्घ करो विसहरो लोए ॥ १८ ॥ दोहा -- बहु गुण विद्या गेहजो, तदपि उसूत्री हेय ॥ जिम वर मणिजुत विघ्न कर, विषधर लोक विधेय ॥ १८ ॥ व्याख्या -- बहु गुण–जोपण घणी आकरी क्रिया करवादिरूप घणा गुण विज्जा–चौद श्रुतरूप विद्यानुं निलओ–घर छे, अथवा बहु गुणवाली विद्यानुं घर छे, तहावि–तोपण- उस्सुअभासी–उत्सूत्र भाषण करनारा द्रव्यलिंगीनो मुत्तव्वो–त्यागकरवो योग्य छे एविषे दृष्टात कहेछे –जह–जेम वरमणिजुत्तोवि–श्रेष्ट मणि रत्नेकरी युक्त छता पण हु–निश्चय करी विग्घ करो–विघ्नने करनारो एहवो विसहरो–विषधर जे सर्प ते लोए–लोकने

विषे अथवा लोकोए छांडवा योग्य छे एनो नावार्थ –जेम सर्प अमूल्य मणिने धारण करनारो छतां विषमयी होवाथी त्याग करवा योग्य छे, तेम कोई पुरुष बहु गुणयुक्त विद्यावान छतां उत्सूत्रनापी होय तो अवश्य त्याग करवा योग्य छे.॥१८॥

अवतरण.– अतिशय करी जे मोह ते व्यामोह कहेवायछे. तेम उत्सूत्रनापी द्रव्यलिंगी जे गुरु ते, कुलक्रमथी चाल्या आवेछे, माटे तेने केम मूकाय! जो हुं त्याग करुं तो सज्जन लोको मारो त्याग करे, अथवा वमाउए अंगीकार करेलो चाल मुकी दैये तो बाप दादानुं नाम जाय, इत्यादिक जे विचार करवो ते स्वजन व्योमोह कहेवायछे, तेज दर्शावेछे – मूल –सयणाणं वामोहे, लोआ घिप्पंति अछ लोएण ॥ नो घिप्पंति सुधम्मे, रम्मेहा मोह माहप्पं ॥ १९ ॥ दोहा.– स्वजन नेह धन लोन करि, सेवै लोक मिथ्यात ॥ रम्य धर्ममें नवि रमै, है अज्ञान उतपात ॥१९॥ व्याख्या.– सयणाणवामोहे--स्वजनना व्यामोहेकरी, अछलोहे–अर्थना लोनेकरी, एटले मंत्र तंत्रादिकनुं अर्थ जे प्रयोजन अथवा अर्थ जे धन तेना लोनेकरी, लोआ -सामान्य लोक जे छे ते, घिप्पति--ग्रहण करेछे एटले पोताने वश करेछे, अने रम्मे- रमणीय जिन नाषित सुधम्मे--जे सारो धर्म छे ते नोघिप्पंति–ग्रहण करता नथी हा--मोटी खेदनी वात छे, जुवो मोहमाहप्पं--मोहनुं केटलुं माहात्म्य एटले महिमा छे एनो नावार्थ.--स्वजन अथवा धनना लोने करीने लोको मिथ्यात्वनुं सेवन करे छे, अने रम्य जे जिन धर्म तेने मूकी दिये छे ए मोहनुं महात्म्य छे ॥ १९ ॥

आशंका.--सर्व लोक मोहने वश थया थका मिथ्यात्वनी सेवना करेछे एम कह्याथी सर्वने अधर्मनो प्रसंग प्राप्त थशे! ए शंकानुं निराकरण करेछे - मूल.– गिहवावार परिस्सम, खिन्नाण नराण वीसमण ठाण ॥ एगाण होइ रमणी, अन्नेसि जिणिंद वर धम्मं ॥ २० ॥ दोहा.– गृह व्यापार परिश्रमे, खिन्न थया नर तांहि ॥ इकनारी विश्राम है, अन्य जिनागममांहि ॥ २० ॥ व्याख्या.-- स्त्री पुत्रादिक कुटुंब परिवार गिह एटले घरने अर्थे, वावार–दंत लाख रसादिक अनेक विध व्यापार करतां थयो जे परिस्सम–परिश्रम एटले खेद तेणे करी खिन्नाण–खिन्न एटले थाक लाग्याथी आकुल थयला एवा एगाण–एकेक नराण–मनुष्यने वीसमणठाण–विश्रामनु स्थान ते रमणी–स्त्री होइ–छे. केमके, तेउ नारी कर्मजीवो छे माटे. अने अन्नेसि–बीजाने एटले सुदृष्टिवत जीवोने विश्रामनुं स्थान जिणदवर धम्मं–जिनेंद्रनो नापेलो प्रधान धर्म छे अर्थात् जे नारी कर्मी माण

सो छे तेउने स्त्रीनो संग प्रीय लागेछे, अने जे हलुकर्मी माणशो छे तेओने जिन धर्म कर्त्तव्य प्रीय लागेछे ॥ २० ॥

अवतरण –मूढ तथा अमूढ पेट नरवामा सरखां छे, पण कर्मविपाकेकरी सरखा नथी ते कहेछे. मूल – तुल्लेवि उअर नरणे, मूढ अमूढाण पिछ सु विवागं ॥ एगाण नरय दुक्खं, अन्नेसिं सासय सुरक ॥ २१ ॥ दोहा.– सम पिण उदर नरे जुओ मूढ अमूढ विपाक ॥ मूढ लहै नरकादि दुख, निपुण लहै शिव नाक ॥ २१ ॥ व्याख्या – जेना अरस परस उयर नरणे–उदरनुं नरवु एटले पेट नरवु अथवा घरना व्यापार कार्यनुं करवु ते तुल्लोवि–तुल्य एटले सरखा छे तोप ण मूढ अमूढाण–मूढते अविवेकी अजाणलोक अने अमूढ ते विवेकी धर्मना जाण लोक छे, तेओना विवागं–विपाक एटले कर्मनो शुनाशुन रस ने पिछसु–हे नाई तु देख, एगाण–एक एक केटलाएक निर्विवेकी महारंनी महापरिग्रही, तथा मि थ्यादृष्टि जीवो छे तेओने नरयदुक्खं–नरकनुं दु:ख छे उपलक्षणथी तिर्यंच तथा निगोदनुं दु:ख पण जाणवु अन्नेसिं–बीजा जे सम्यक्दृष्टि देशविरति धर्मज्ञ विवे की जीवो छे तेओनें सासयंसुख मोटी स्थिति आश्री देवलोकसंबंधी शाश्वत सुख छे उपलक्षणथी परपराएकरी मोक्षना सुखनो पण संनव छे मूढ तथा अमूढ ना विपाकमां एटलु फरक छे माटे मूढपणानो त्याग करवो योग्य छे ॥ २१ ॥

अवतरण –हवे बे गाथाए करी अमूढपणानी प्राप्तिनो उपाय प्रगट करीने कहे छे – जिण मय कहा पबंधो, संवेग करो जियाण सवोवि ॥ सवेगो सम्मत्ते, स म्मत्तं सुद्द देसणया ॥२२॥ ता जिन आण परेण, धम्मोसो अव सुगुरु पासम्मि॥ अह उचियं सद्धाओ, तस्सुवएसस्स कहगाओ ॥२३॥ दोहा – जिनमत कथा प्रबंध सव, जण सवेग उपाय ॥ सवेग तु समकित छते समकित सुद्द गिराय॥२२॥ तो जिन आण परे धरम, सुणवो सुगुरु सकाश ॥ अथवा तत उपदेशको, कथ क सु श्रावक पास ॥ २३ ॥ व्याख्या.– सवोवि– सर्व जिणमय कहा पबंधो-- जिन मतनी कथानो प्रबंध अथवा निबंध ते जियाण–हलुकर्मी नव्य जीवोने संवेग करो–सवेग ते मोक्षानिलाष, तेनो करनार छे अने सवेगो सम्म त्ते–सवेग ते सम्यक्त्व छता छे एटले सम्यक्त्व छता सवेग होय छे सुद्द देस णया–उत्सूत्र मल कलंक रहित सुद्द देशनाए करी सम्मत्त–सम्यक्त्व होयछे. ए नो नावार्थ – हलु कर्मी जीवोने जिन मतनी कथाना सर्व प्रबंधो अथवा स र्व निबंधो सवेगना जनक छे ॥ २२ ॥ ता–ते कारण माटे जिनआणपरेण–

जिनराजनी आज्ञानेविषे जे तत्पर प्रधान छे ते मनुष्ये, सुगुरु पासम्मि—सारा गुरुनी पासे एटले सम्यक् ज्ञान दर्शन तथा चारित्रवान गुरुनी पाशे धम्मो—धर्म सोअव—सांजलवुं योग्य छे. अह—अथ एटले जो तेवा मुनि महाराजनो योग न थाय तो उचियं- उचित प्रमाणे तस्सुवएसस्स- ते सुगुरु जापित धर्म उपदेशनो कहगाओ--वक्ता पण पोतानी मतिथी कहेनार नही एहेवो सङ्काओ-श्रावक जे धारणादिक गुणेसहित होय तेने समीपे धर्म सांजलवो पण बीजानी पाशेथी सांजलवु नही एनो जावार्थ.--जिनाज्ञा पालनार प्राणीए सुगुरुनी पाशेथीधर्मनुं श्रवण करवुं, तेनो योग न थाय तो कोई धारणादि गुणे सहित श्रावकनी पासेथी सांजलवु पण अनेरा पासेथी कदी पण सांजलवु नही ॥ २३ ॥

अवतरण — धर्मोपदेश सांजल्याथी सम्यक्त्वादिकनुं जाणपणुं थायछे ते श्रेष्ठछे ते कहेछे'— मूलः— स कहासो उवएसो, तन्नाणं जेण जाणई जीवो ॥ सम्मत्त मिछ जाव, गुरु अगुरू धम्म लोअ ठिई ॥ २४ ॥ दोहा'— कथा ज्ञान उपदेशते जाणे जाते जीव ॥ समकित अरु मिथ्यात्वनो, जाव त्रिलोक थितीव ॥ २४ ॥ व्याख्या'— सकहा- ते कथा सो उवएसो—ते उपदेश तन्नाण- ते ज्ञान जेण—जेणे करी जीवो- जीव सम्मत्तमिछजाव--सम्यक्त्व तथा मिथ्यात्वना जाव अथवा स्वरूपने गुरुअगुरू—सुगुरु अने अगुरु एटले कुगुरुना जावने तथा धम्म—जिन धर्मनी स्थितिना जावने अने लोअठिई लोकनी स्थितिना स्वरूपने जाणइ—उपादेय तथा हेयपणे जाणे एनो जावार्थ.-- जेणेकरी जीव सम्यक्त्वादिकना स्वरूपने जाणी शके नही ते कथा पण नही ते उपदेश पण नही अने ते ज्ञानपण कहेवाय नही. ज्ञानादि रत्नत्रय संयुक्त ते सुगुरु कहेवाय छे, तेथी विपरीत ते कुगुरु कहेवायछे रात्रि जोजननी विरति प्रमुख ते धर्मस्थिति कहेवायछे, अने धन धान्यादिके करी प्राये गृहस्थ शोजेछे, अथवा लोकविरुद्ध न करवु ते लोकस्थिति कहेवायछे. ॥ २४ ॥

अवतरण -- जिन वचन सांजल्याथकी पण केटलाएक जारी कर्मी जीवोनुं मिथ्यात्व जतुं नथी ते कहेछे मूल — जिण गुण रयण महा निहि, लद्धूणवि किन जाइ मिछत्तं ॥ अह पत्तेवि निहाणे, किवणाण पुणोवि दारिद्दं ॥ २५ ॥ दोहा.— जिन गुण मणि निधि पाय कर, किम न थाय मिथ्यात ॥ निधि पाये पिण कृपणके, वलि दरिद्र विख्यात ॥ २५ ॥ व्याख्या -- जिण गुण रयण महा निहि—जिनराजना सम्यक् ज्ञान दर्शन चारित्रादिक गुणरूप रत्नना द्वादशांग सि

सो छे तेउने स्त्रीनो संग प्रीय लागेछे, अने जे हलुकर्मी माणशो छे तेओने जिन धर्म कर्त्तव्य प्रीय लागेछे ॥ २० ॥

अवतरण —मूढ तथा अमूढ पेट जरवामां सरखां छे, पण कर्मविपाकेकरी सरखा नथी ते कहेछे. मूल — तुल्लेवि उअर जरणे; मूढ अमूढाण पिछ सु विवाग ॥ एगाण नरय डुक्कं, अन्नेसि सासयं सुरक ॥ २१ ॥ दोहा.— सम पिण उदर जरे जुओ मूढ अमूढ विपाक ॥ मूढ लहे नरकादि दुख, निपुण लहे शिव नाक ॥ २१ ॥ व्याख्या.— जेना अरस परस उयर जरणे—उदरनुं जरवु एटले पेट जरवुं अथवा घरना व्यापार कार्यनुं करवु ते तुल्लोवि—तुल्य एटले सरखा छे तोप ण मूढ अमूढाण—मूढते अविवेकी अजाणलोक अने अमूढ ते विवेकी धर्मना जाण लोक छे, तेओना विवागं—विपाक एटले कर्मनो शुनाशुन रस ने पिछसु—हे जाई तु देख, एगाण—एक एक केटलाएक निर्विवेकी महारन्नी महापरिग्रही, तथा मि थ्यादृष्टि जीवो छे तेओने नरयडुक्कं—नरकनुं डुःख छे उपलक्षणथी तिर्यच तथा निगोदनुं डुःख पण जाणवु अन्नेसि—बीजा जे सम्यक्दृष्टि देशविरति धर्मज्ञ विवे की जीवो छे तेओनें सासयंसुखं मोटी स्थिति आश्री देवलोकसंबंधी शाश्वत सुख छे उपलक्षणथी परंपराएकरी मोक्षना सुखनो पण संनव छे मूढ तथा अमूढ ना विपाकमां एटलुं फरक छे माटे मूढपणानो त्याग करवो योग्य छे ॥ २१ ॥

अवतरण —हवे बे गाथाए करी अमूढपणानी प्राप्तिनो उपाय प्रगट करीने कहे छेः— जिण मय कहा पबंधो, सवेग करो जियाण सव्वोवि ॥ संवेगो सम्मत्ते, स म्मत्तं सुद्ध देसणया ॥२२॥ ता जिन आण परेण, धम्मोसो अव सुगुरु पासम्मि॥ अह उचियं सद्धाओ, तस्सुवएसस्स कहगाओ ॥२३॥ दोहा — जिनमत कथा प्रबंध सब, जण सवेग उपाय ॥ संवेग तु समकित छते समकित सुद्ध गिराय॥२२॥ तो जिन आण परे धरम, सुणवो सुगुरु सकाश ॥ अथवा तत उपदेशको, कथ क सु श्रावक पास ॥ २३ ॥ व्याख्या.— सव्वोवि— सर्वे जिणमय कहा पबंधो-- जिन मतनी कथानो प्रबंध अथवा निबंध ते जियाण—हलुकर्मी नव्य जीवोने सवेग करो—संवेग ते मोक्षानिलाष, तेनो करनार छे अने संवेगो सम्म त्ते—सवेग ते सम्यक्त्व छता छे एटले सम्यक्त्व छता सवेग होय छे सुद्ध देस णया—उत्सूत्र मल कलंक रहित सुद्ध देशनाए करी सम्मत्त—सम्यक्त्व होयछे. ए नो नावार्थ — हलु कर्मी जीवोने जिन मतनी कथाना सर्व प्रबंधो अथवा स र्व निबंधो सवेगना जनक छे ॥ २२ ॥ ता—ते कारण माटे जिनआणपरेण—

जिनराजनी आज्ञानेविषे जे तत्पर प्रधान छे ते मनुष्ये, सुगुरु पासम्मि–सारा गुरुनी पासे एटले सम्यक् ज्ञान दर्शन तथा चारित्रवान गुरुनी पाशे धम्मो–धर्म सोअव्व–सांजलवु योग्य छे. अह–अथ एटले जो तेवा मुनि महाराजनो योग न थाय तो उचियं- उचित प्रमाणे तस्सुवएसस्स- ते सुगुरु जाषित धर्म उपदेशनो कहगाओ--वक्ता पण पोतानी मतिथी कहेनार नही एहेवो सड्ढाओ-श्रावक जे धारणादिक गुणेसहित होय तेने समीपे धर्म सांजलवो पण बीजानी पाशेथी सांजलवुं नही एनो जावार्थः--जिनाज्ञा पालनार प्राणीए सुगुरुनी पाशेथीधर्मनुं श्रवण करवु, तेनो योग न थाय तो कोई धारणादि गुणे सहित श्रावकनी पासेथी सांजलवु पण अनेरा पासेथी कदी पण सांजलवुं नही ॥ २३ ॥

अवतरण – धर्मोपदेश सांजल्याथी सम्यक्त्वादिकनुं जाणपणुं थायछे ते श्रेष्ठछे ते कहेछेः-- मूल·-- स कहासो उवएसो, तन्नाण जेण जाणई जीवो ॥ सम्मत्त मिछ जाव, गुरु अगुरू धम्म लोअ ठिई ॥ २४ ॥ दोहा – कथा ज्ञान उपदेशते जाणे जाते जीव ॥ समकित अरु मिथ्यात्वनो, जाव त्रिलोक थितीव ॥ २४ ॥ व्याख्या.– सकहा- ते कथा सो उवएसो–ते उपदेश तन्नाणं- ते ज्ञान जेण–जेणे करी जीवो- जीव सम्मत्तमिछजाव--सम्यक्त्व तथा मिथ्यात्वना जाव अथवा स्वरूपने गुरुअगुरू–सुगुरु अने अगुरु एटले कुगुरुना जावने तथा धम्म–जिन धर्मनी स्थितिना जावने अने लोअठिई लोकनी स्थितिना स्वरूपने जाणइ–उपादेय तथा हेयपणे जाणे एनो जावार्थः-- जेणेकरी जीव सम्यक्त्वादिकना स्वरूपने जाणी शके नही ते कथा पण नही ते उपदेश पण नही अने ते ज्ञानपण कहेवाय नही ज्ञानादि रत्नत्रय संयुक्त ते सुगुरु कहेवाय छे, तेथी विपरीत ते कुगुरु कहेवायछे. रात्रि जोजननी विरति प्रमुख ते धर्मस्थिति कहेवायछे, अने धन धान्यादिके करी प्राये ग्रहस्थ शोजेछे, अथवा लोकविरुद्ध न करवु ते लोकस्थिति कहेवायछे. ॥ २४ ॥

अवतरण -- जिन वचन सांजल्यायकी पण केटलाएक जारी कर्मी जीवोनुं मिथ्यात्व जतुं नथी ते कहेछे. मूल – जिण गुण रयण महा निहि, लद्धूणवि किन जाइ मिछत्तं ।। अह पत्तेवि निहाणे, किवणाण पुणोवि दारिद्दं ॥ २५ ॥ दोहा·– जिन गुण मणि निधि पाय कर, किम न थाय मिथ्यात ॥ निधि पाये पिण कृपणके, वलि दरिद्र विख्यात ॥ २५ ॥ व्याख्या·-- जिण गुण रयण महा निहि–जिनराजना सम्यक् ज्ञान दर्शन चारित्रादिक गुणरूप रत्नना द्वादशांग सि

द्धांतरूप महा निधिने लद्धूणवि–पामीने पण एटले सांजलीने पण अनिनिवेश मिथ्यात्वी जीवोनुं मिछत्तं–मिथ्यात्व ते अतत्वश्रद्धानरूप किनजाइ–केम जतु नथी एवो शिष्ये प्रश्न कस्यो तेनो गुरु उत्तर आपेछे·– अह–अथ निहाणे पत्ते–रत्न तथा सुवर्णनुं निधान प्राप्त थयुं छतां पण किवणाण–कृपण पुरुषोनुं पुणोवि–तो पण दारिद्दं–दारिद्र्य केम जतु नथी, अर्थात् कृपण पुरुषने रत्न अथवा सुवर्णादि कनुं निधान मल्यु छतां पण तेनुं दारिद्र्य जतु नथी, तेम जिन गुण रत्न सिद्धांत महानिधिप्रते काने सांजलीने पण जारी कर्मी जीवोनु मिथ्यात्व जतु नथी॥२५॥

अवतरण – जेम जिनागम सम्यक्त्वादिक धर्मनु कारण छे, तेमज जिनना उप देशेला पर्यूषणादिक रूडा पर्वो पण सम्यक्त्वादिक धर्मनुं कारणछे ते कहेछे मूल – सो जयउ जेण विहिया, संवछर चाउमासिय सुपवा ॥ निद्धंधसाण जा यइ, जेसि पजावओ धम्ममई ॥ २६ दोहा – धर्म पर्व संवत्सरी, चतुर्मासि आ देय ॥ थाप्या जेणे जयतु ते, पापी सुमति धरेय ॥ २६ ॥ व्याख्या – सो–ते जिन जयउ–जयवता थायो जेण–जेणे सवछर चाउमासिय सुपवा–सावत्सरक पर्यू षणा पर्व तथा चतुर्मासिक त्रण (उपलक्षणथी चोदस पूर्णमासि अष्टम्यादि छपर्वि तथा कल्याणिक तिथि रूमा पर्वने) विहिया--उत्पन्न कस्या छे, जेसि–जे पर्वोना प जावाउ–प्रजावथकी निद्धंधसाण -निद्दस प्राणीयोनी एटले निर्दय प्राणीयोनी पण धम्ममइ–धर्म करवानी मति तथा जिन धर्म प्रशसवानी मति एटले बुद्धि जायइ–थायछे एनो जावार्थ – पर्यूषणादिक सुपर्वनेविषे चतुर्विध श्रीसघ, विशे ष पणे चतुर्विध धर्मनेविषे उद्यम करेछे , तेने जोई निर्दय प्राणीउनी पण जैन धर्म अगीकार करवानी अथवा प्रशंसवानी मति थायछे, त्यारे दयावत प्राणीयोनी थाय तेमा शु कहेवु ! माटे जेणे सुपर्व थाप्याछे ते जिनराज जयवता थाओ.॥२६॥

अवतरण –सुपर्वनेविषे कहीने हवे कुपर्वनेविषे कहेछे – मूल – नामपि तस्स असुह, जेण निदिछाइ मिछ पवाइ ॥ जेसि अणुसगाउ, धम्मीणवि होइ पाव मई ॥ २७ ॥ दोहा – पाप पर्व जेणे रच्या, अशुन नाम पण तास ॥ धर्मीने पण जेहथी, पाप मतीनो वास ॥ २७ ॥ व्याख्या – तस्स–तेनु नामंपि–नाम प ण असुह– अशुन छे, एटले पाप छे जेण–जेणे मिछ पवाइ–मिथ्यात्वना पर्व निदिछाइ–उत्पन्न कस्या छे अथवा तेनो उपदेश कस्यो छे जेसि– जे पर्वोना अ णुसंगाउ–अनुसग थकी एटले प्रसंग थकी धम्मीणवि–धर्मी लोकोनी पण पाव मई–पाप मति एटले पाप करवानी बुद्धि होइ–थायछे एनो जावार्थ –होली, धु

लेटी, विजयादशमी, गणेश चोथ, नाग पंचमी, पाप नवमी, वछ बारस, तथा धन तेरस इत्यादिक अनेक मिथ्यात्वना पर्वोने दिवसे घणा पाप, उपद्रव, हास्य कुतुहल थाय छे, जेना प्रसंगथी धर्मी पुरुषोनी पण पाप मति थाय छे त्यारे अधर्मी लोकोनी ते शी वात कहेवी ! माटे जे पुरुषे मिथ्यात्व पर्वोनी स्थापना करीछे ते पुरुष नुं नाम पण अशुभ जाणवुं, एटले तेनुं नाम लीधाथी पण पाप लागेछे ॥२७॥

अवतरण--उपरनी बे गाथाना अनुसारें तो ज्यारे सुपर्व आवे छे, त्यारे सर्वने धर्ममति उत्पन्न होवाथी बधा धर्मी थवा जोये; अने ज्यारे कुपर्व आवे छे त्यारे फरी तेओनीज पाप बुद्धि थई जवाने लीधे बधा पापी थवा जोये त्यारे कोईनो स्थायीभाव सिद्ध थशे नही एटले सर्व जन पापी अने धर्मी ठरशे. ए आशंका दूर करवाने उत्तर कहे छे -- मूल --मज्झठिइ पुण एसा, अणुसंगेण हवति गुण दोसा ॥ उक्किठ पुस पावा, अणुसंगेणं न घिप्पति ॥ २८ ॥ दोहा - ज्हेवे संगे जे हवो, ते नर मध्यम होय ॥ अति धर्मी अति पातकी, ते तो फिरे न कोय ॥२८ व्याख्या -- पुण तेमा मज्झठिइ- मध्यम पुरुषनी स्थिति एटले मर्यादा एसा-ए छे, अणुसंगेणं- अनुसगे करीने एटले परना प्रसंगे करीने गुणदोसा- गुणवान तथा दोषवान हवति-थायछे, एटले गुणीना प्रसंगथी गुणी तथा निर्गुणीना प्र संगथी गुण रहित थाय छे, ए मध्यम पुरुषनी स्थिति छे, परतु उक्किठ पुणपावा- जे उत्कृष्ट पुण्यवत धर्मी तथा जे उत्कृष्ट पापी अधर्मी छे ते अणुसंगेण- पर प्र संगेकरी न घिप्पति- ग्रहण कर्या जता नथी एनो भावार्थ - उत्कृष्ट धर्मीने पापीनो प्रसंग थाय तो पण तेनी पापमति थती नथी, अने उत्कृष्ट जे पापी होय तेने धर्मीनो प्रसंग थाय तोपण तेने धर्म मति थती नथी, अने जे मध्यम पुरुष होयछे तेजज न्यूनाधिकताने पामे छे जे अति पापी तेमज अति पुन्यवान नहोय ते मध्यम पुरुष कहेवाय छे ॥ २८ ॥

अवतरण --वली एनेज वली दृढावेछे.--मूल--अइसय पाविय पावा, धम्मिअ प व्वेसु तोवि पाव रया ॥ न चलंति सुद्ध धम्मा, धन्ना किविपाव पव्वेसु ॥२९॥दोहा -अति शय पापी पापरत, रहे सुपर्वे जेम ॥ पाप कुपर्वे धर्मथी, धन्य चले नहि तेम ॥२९॥ व्याख्या--जे माटे एम छे तो--तेमाटे अइसय पाविय पावा-अतिशय एटले उत्कृष्ट पाम्युं छे पाप जेणे, एटले जे उत्कृष्ट पापी पुरुष छे ते धम्मिअपव्वेसुवि-धर्मी पुरु षो संबंधी पर्यूषणादिक पर्वोनेविषे पण पावरया--पाप रत होयछे, एटले पाप क र्मनेविषे आसक्त रहेछे किवि- तेमज केटलाएक धन्न--धन्य एटले पुन्यवत प्राणी

वं पापपवेसु--पाप पर्वोनेविषे पण शुद्द धम्मा--शुद्द धर्मथकी नचलंति--चलायमा न थता नथी. अने नवीन धर्मी जीवोने स्थिर राखवाने अर्थे दर्शन भ्रष्ट पासछा दिकनो तथा अन्य दर्शनी कुलिंगीनो प्रसंग पण करता नथी, घणो कहेवाथी शुं

अवतरण.-- जेम सुपर्व अने कुपर्व ए बे प्रकारना पर्व कह्याछे, तेम सुलक्ष्मी तथा कुलक्ष्मी ए बे प्रकारनी लक्ष्मी छे ते बतावेछे -- मूल -- लछीवि हवइ डुविहा, एगा पुरिसाण खवइ गुण रिद्धि ॥ एगाय उल्लसंती, अपुन्न पुन्नाणु नावाउ ॥ ३० ॥ दोहा -- लक्ष्मी दोविध एक तो, नर गुण धण क्षयकार ॥ एक दिपावे पुरुषकूं, पाप पुन्य अनुसार ॥ ३० ॥ व्याख्या --लछीवि--लक्ष्मी पण डुविहा--बे प्रकारे हवइ- छे तेमा एगा--एक तो अज्ञान कष्टादिके करी प्राप्त थएली जे छे ते पुरिसाण--पुरुषोनी गुणरिद्धी--ज्ञानादिक गुणरूप रिद्धिने खवइ--क्षय करेछे, एटले नाश करेछे य--वली एगा--एक सुपात्र दानादिकेकरी प्राप्त थएली जे लक्ष्मीछे ते पुरुषोनी ज्ञानादिक गुणरुद्धिने उल्लसती--उल्लासने पमामे छे एटले वधारेछे. अपुन्न पुन्नाणु नावाउ- पाप धर्मना अनुनाव थकी एटले प्रनावथकी ते लक्ष्मी बे प्रकारे होयछे अपुन्न--पाप अज्ञान कष्टादिक, तेना प्रनावथी प्राप्त थएली जे लक्ष्मी ते गुणरुद्धिने नाश करेछे, अने पुन्न--पुन्य धर्म सुपात्र दानादिक, तेना प्रनावथकी प्राप्त थएली जे लक्ष्मी ते गुण रुद्धिनी वृद्धि करेछे ॥ ३० ॥

अवतरण -- ते लक्ष्मी लेवा देवामा जेम दोष थायछे तेम कहेछे.-- मूल -- गुरुणो नट्टा जाया, सढ्ढे थुणिऊण लिंति दाणाइ ॥ डुन्निवि अमुणिय सारा, दूसम समयम्मि बुड्डंति ॥ ३१ ॥ दोहा-- नाट थया गुरु श्राद्धने, स्तवी लेत दानादि ॥ तत्व अजाण दुए बुडे, डुसम समए प्रादि ॥ ३१ ॥ व्याख्या -- गुरुणो-- नाममात्र गुरु केवल बाह्य लिंग रजोहरण मुख वस्त्र धारीने आजीविकानो करनार, नट्टा जाया--नाट थया एटले नाटनी पठे कीर्त्ति वंचनाना बोलनार थया सढ्ढे--नाममात्र श्रावकने थुणिऊण--स्तवीने एटले अहो महानाग्य, पुन्यवत अहो कल्पवृक्ष, मनोवछित पूरक, देवगुरु नक्तिकारक. जिन आज्ञा प्रतिपालक, श्राद्धव्रत धारक, हीन दीनोद्धारक, धीर गंनीर औदार्यादि गुण गणालंकृत इत्यादिक स्तवना करीने दाणाइ--असनादि आहार वस्त्र पात्र कंबल पाद पुंछणादिक वस्तु लिंति--लियेछे. डुन्निवि--ते बन्ने एटले स्तवना सांनलीने वस्तुने देवावालो ग्रहस्थ अने स्तवना करीने वस्तने लेवावालो कुगुरु अमुणियसारा--जेउए सिद्धां

तनो सार एटले परमार्थ जाण्यो नथी, तेउ दूसमसमयम्मि—डुषम कालरूप समु इनेविषे बुड्डंति—बूमेछे, एटले नरक निगोदादिकनेविषे प्राये घणा कालसुधीनमेछे ३१

अवतरणः— गत गाथामां परमार्थने न जाणनारा बूडेछे एम कह्यु, ते परमार्थने न जाणनारा घणा छे अने परमार्थने जाणनारा थोडा छे ते कारण सहित कहेछे. मूल — मिछ पवाहे रत्तो, लोओ परमछ जाणओ थोवो ॥ गुरुणो गारव रसिआ, सुद्धं धम्मं निगूहंति ॥ ३२ ॥ दोहा— मिछ प्रवाहे रत घणा, लोक स्तोक सबुद्ध ॥ गारविरस लंपट गुरु, गोपै धर्म विसुद्ध ॥ ३२ ॥ व्याख्या — मिछपवाहे—मिथ्या एटले विचार रहित फ्गानेविषे रत्तो—रक्त एटले आसक्त एवा लोओ—जे लोक छे, ते घणा छे ते लोकोथकी तथा सम्यक्त्वना पडिवाइ थकी परमछ जाणओ—परमार्थना जाण पुरुषो हमणा घणाज थोवो—थोडा छे, कारण के गारव रसिआ—ऋद्धि रस साता गौरवनेविषे रसिक एवा गुरुणो—नाम मात्र गुरुछे, ते सुद्धं धम्मं—निर्मल जिन नाषित तपसंयमरूप धर्ममार्गने निगूहंति—गोपवेछे. केम के, शुद्ध मार्गनी प्ररूपणा करीश तो मने कोण वांदशे? तथा पूजशे? एवी स्थापना करीने शुद्ध मार्गने प्रकाश करता नथी, माटे परमार्थना जाण पुरुष थोडाछे.३२

अवतरण — वली बीजो हेतु बतावे छे मूल — सवोवि अरिह देवो, सुगुरु गुरू नणइ नाम मित्तेण ॥ तेसिं सुरूव सुहयं, पुन्न विहूणा न पावंति ॥ ३३ ॥ दोहा— अरिह देव सुगुरू गुरू, नाम मात्र सवि कहत ॥ ताके सुनग सुरूपकूं, पुन्यहीण नहि लहत ॥ ३३ ॥ व्याख्या.— परपरा गत जे श्रावक कुल, तेनेविषे उपजेला ते सवोवि—बधाउने पूछीये तो नाममित्तेण—नामात्रे करीने नणइ—एम कहेछे के, अरिह देवो—अरिहत जे वीतराग ते देव, सुगुरुगुरु—संविझ गीतार्थ ते गुरु, उपलक्षणथी श्रीवीतराग नाषित श्रुत चारित्ररूप ते धर्म, एम नाममात्रथी कहेछे, केमके, तेसिं—ते देव गुरु तथा धर्मनुं सुहयं—सुख दायक इष्टकारी एवु जे सुरूव—स्वरूप, तेने पुन्नविहूणा—रूडा पुन्यथी रहित प्राणी न पावंति— पामता नथी, माटे परमार्थना जाण वर्त्तमान कालनेविषे थोडा अथवा कोई विरला छे. ॥ ३३ ॥

अवतरण — शुद्ध मार्गना उपदेशक तो छे तोपण हमणा परमार्थना जाण पुरुष थोडा केम कहोछो? एवो शिष्यनो संशय दूर करवा निमित्त गुरु कहेछे के अहो नइ, सांनल —॥ मूल — सुद्धा जिण आण रया, केसिं पावाण हुंति सिर सूलं, जेसिं ते सिरसूलं केसिं मूढाण ते गुरुणो ॥३४॥ दोहा —शुद्ध जिनाज्ञा रत हुवे, कै खलने शिर सूल ॥ जेने ते शिरसल फुन, ते गुरु सठ अनुकूल ॥ ३४ ॥ व्याख्या —

जिण आणरया– जिन राजनी आज्ञा पालवानेविषे रक्त एटले सावधान होवाने लीधे सुद्धा– निर्मल चित्तवाला एवा जे सविज्ञ गीतार्थ शुद्ध मार्गोपदेशक ले ते केसिं पावाण–केटलाएक पापी श्रमणोना सिरसूल–माथानु सूल हुंति– थायछे, एटले शुद्ध मार्गनी देशना कोईक प्रकारे सांजलीने त्रासने पामे ले एवा जेसिं– जे पापी श्रमण केवल वेशधारी होय ले, तेउने ते शुद्ध मार्ग उपदेशक पुरुष सि रसूलं–माथाना शूलना जेवा लागे ले ते–ते पापी श्रमण नि केवल वेषधारी के सिंमूढाण– केटला एक मूढ अजाण लोकोना गुरुणो–गुरु ले, एटले पूज्य ले एनो भावार्थ.– जे पापी श्रमण पापंमी जैनाभास नि केवल वेष धारी सविज्ञ प क्षीना गुणे करीने पण रहित एवा तथा तेउना सम्यक् ज्ञान विकल एवा भक्त लोक तो घणा होय ले, पण सत्य असत्यना विवेकी परमार्थ कुशल कोई विरलाज होय ले

अवतरण – अशुद्ध मार्ग प्ररूपक कुगुरुने तथा तेना भक्त लोकोने जोईने ग्रं थकार खेद सहित वचन कहे ले ॥ मूल – हा हा गुरु अ अकज्जं, सामी न हु अह्नि कस्स पुक्करिमो ॥ कह जिण वयण कह सुगुरु, सावया कह इय अकज्जं ॥३५॥ दोहा.– गुरु अकार्य हानहि घणी, करिये कहा पुकार ॥ सुगुरु श्राद्ध जि न वचन कह, कहा अकार्य असार ॥ ३५ ॥ व्याख्या – हा हा–अति मोटो खे द थाय ले, गुरु अ अकज्जं–कुगुरुने मानवु तथा पूजवु इत्यादिरूप वर्त्तमान सम यनेविषे मोटु अकार्य थाय ले, एवी रीते दयालु सुगुरुना वचन सांभलीने कोई एक बोल्यो के त्यारे पुकार करो, एटले कोई सुधर्मी राजा प्रमुखनी पासे फिरि याद करो त्यारे गुरु कहेवा लाग्या के हे भद्र, सामी–सुराजकुलोत्पन्न लोकहि त कारक डुर्नीति निवारक कोई राजा नअह्नी–नथी तो हु–निश्चये कस्स–कोनी आगल पुक्करिमो–अमे पुकार करिये! माटे फिरियाद करवी निरर्थक ले, एवा गु रुनां वचन सांभलीने वली ते बोल्यो के, त्यारे प्रथम 'हा हा गुरु अ अकज्ज' ए वाक्य तमे केम बोल्या? गुरुए कह्यु एटला वास्ते के, कह–क्यांहां जिणवयण– सकल नय समूह, अखिल दोष रहित, एवा जिनवचन एटले सर्वज्ञ भाषित वचन, अने कह– क्याहा सुगुरु सावया– सुगुरु तथा श्रावक अने कह– क्याहा गुरु अ अकज्ज– सम्यक् ज्ञान क्रिया थकी भ्रष्ट अविधि मार्गना उपदेशक, एवा जे कुगुरु, तेउनी सेवनारूप मोटुं अकार्य जे ले ते केटलो अनर्थ कारी ले!! जिनराजना नामादिक लई, तथा अशुद्ध मार्गनी प्ररूपणा करी करीने ते

कुगुरु पोताने तथा पोताना जक्त लोकोने डुर्गतिमां नाखे ले, एवा करुणा जाव थी 'हा हा गुरु अ अकज्जं' ए वाक्य बोलवामां आव्युं ले ॥ ३५ ॥

अवतरण – पूर्व गाथामां कुगुरुनी सेवनारूप मोटुं अकार्य कह्युं ते यथार्थ जाणीने कोईक हलुकर्मी जव्यजीव ते गुरुनो त्याग करे तेने मूढ लोक डुष्ट क हेले, ते दृष्टांतेकरि कहेले –मूल.–सप्पे दिठे नासइ, लोओ न हु किंपि कोइ अरके ई ॥ जो चयई गुरु सप्पं, हा मूढा जणइ तं डुठं ॥ ३६ ॥ दोहा – साप देख नासे कुई, लोक कहै कछु नाहि ॥ कुगुरु सापथी जे नसै, मूढ कहै खल ताहि ॥ ३६ ॥ व्याख्या.–लोओ–लोक सप्पे दिठे–सर्पनेदेखीने नासइ–नाशी जाय तेने कोइ–कोई माणस किंपि–कांई अरकेइ–कहेता न–नथी हु–निश्चये, एटले तेने कोई एम कहेतो नथी के तु कायर ले, बीकण ले, अथवा नपुंसक ले इत्यादिक कोई नरसु वचन कहेता नथी, उलटुं सारुं कहेले, के तारुं मोटुं जाग्य जे तु सा पनी पासेथी नाशी गयो. अने जो–जे पुरुष कुगुरु सप्पं–कगुरुरूप सर्पने चयइ– त्याग करेले एटले तेने मूकी दियेले, हा–इतिखेदे मूढा–मूढ अज्ञानी लोक तं–ते कुगुरुरूप सर्पने मूकी देनारने डुठं–डुष्ट, जाग्यहीण, पोताना बाप दादादि पूर्वजोनी कुलमर्यादानुं उलंघन करनार ले एम जणइ–कहेले, पण सारुं कहेता नथी, एटले तु कुगुरुरूप सर्पथी बची गयो ए घणुं सारुं थयुं माटे तुं मोटो जाग्यवान ले एम क हेता नथी, केमके सर्प अने कुगुरुमा केटलुं अंतर ले ते तेओ जाणता नथी. ॥३६॥

अवतरणः– हवे सर्प अने कुगुरुमां घणो अंतरायले ते कहेले.– ॥ मूल·– सप्पो इक्कं मरणं, कुगुरु अणंताइ देइ मरणाइ ॥ तो वरिसप्पं गहियुं, मा कुगुरू सेवण जद्दं ॥ ३७ ॥ दोहा.– एक मरणकूं साप दे, कुगुरू मरण अनत ॥ श्रेष्ट सा प ग्रहवुं तदा, कगुरु सेव नहि संत ॥ ३७ ॥ व्याख्या.–सप्पो–सर्प इक्कंमरण– एकजवार मरणने दियेले, अने कुगुरु– अगीतार्थ तथा विधिमार्गना अजाण जे कुगुरु ते अनंताइ मरणाइ देइ–अनंतवार मरणने दियेले; ज्यारे अगीतार्थ कुगु रुनी एवी कथा ले त्यारे जे सर्व गुणेकरी रहित कुगुरु होय तेनुं शु कहेवुं! तो– ते माटे जद्दं–हे जइ, सप्पंगहियुं–सर्पने मणिलेवादिकने अर्थे जे ग्रहण करवुं ते वर–श्रेष्ट ले पण कुगुरुसेवण–कुगुरुनी सेवा अथवा पूजा मा- करीश मा. अर्था त् हे जइ, रखे कुगुरुनी सेवना तु करे कदापि करवी नही, तुं पोतानुं कल्याण इ छनार तथा सरल स्वजावनो होवाथी आ उत्तम सीखामण हुं तने आपुलुं॥३७॥

अवतरण –एवी रीते पूर्व गाथामां सर्पथकी पण कुगुरुने जूंमो कह्यो तेम

छता तेने लोको गुरुबुद्धिए नमेछे तेनुं कारण शुं? ते छलायाने लीधे मानेछे एम दृष्टांत सहित कहेछे. – जिण आणा विचयंता, गुरुणो भणिऊण जं न मिथ्यंति॥ ता किं कीरइ लोओ, छलिओ गडुरि पवाहेण ॥ ३७ ॥ दोहा – जिण आज्ञाथी रहितने, गुरुकहि जो शिर नाय॥ गम्मर प्रवाहे जण छल्यो, तो सुं करिये न्याय॥ ॥ ३७ ॥ व्याख्या – जिण आणा– समिति गुप्ति महाव्रतादि जिण भाषित क्रिया अनुष्ठानरूप जे जिनराजनी आज्ञा, तेने विचयंता–विशेषे करी त्याग करनार एवो जे कुगुरु, तेने गुरुणो– गुरु भणिऊण– कहीने एटले जाणीने ज– जो नमिथ्यंति–लोक नमेछे, ता–तो किंकरइ–शु करिये ! एनो कोई उपाय नथी. केम के, गडुरि पवाहेण–गाडरीना प्रवाहनी पठे विचार रहित मूर्ख लोकोनी जे चाल तेणे करीने लोओ–लोको छलिओ–छलाई गया छे ते जाणे दिग्मूढपणाने, अंधपणाने, बधिरपणाने पाम्या होयनी ! एवा ए लोक थई गया छे तथा तेओने जाणे दुष्टग्रह तथा भूत वलग्या होयनी ! तथा तेओनी ऊपर योग चूर्णादिक नाखीने जाणे कोईये वश करी लीधा होयनी ! केमके सिद्धांतथी बधुं विपरीत आचारे चालेछे, तेमज बीजाने पण चलावेछे. एवा कुगुरुने गुरु करीने मानेछे माटे ए लोक गाडरीया प्रवाहे करी छलाया छे, तेओने हवे सुधारवानो कांई उपाय विचारमां आवतो नथी ॥ ३७ ॥

अवतरण –पूर्व गाथामां कह्यु के लोको छलाई गयाछे ते ऊपर कोई एवी आशंका करेके, लोको गुरुने दाक्षिण्यताने लीधे नमता हशे ! एटले चतुराईवाला जाणीने नमता हशे ! तेने हितोपदेशक गुरु कहेछे के, भाई ए ठेकाणे लोको चतुराईथी रहितछे, ते सांभळ –मूल.–निद्दक्खिन्नो लोओ, जइ कुवि मग्गेइ रुट्टिया खंडं॥ कुगुरूण संग चयणे, दक्खिन्नंही महामोहो॥ ३८॥ दोहा:–लोक अदाक्षिण कोइ जो, मागे रुटिया भाग॥ कुगुरु संगत्यागनविषे, दाक्षणता धिग राग॥ ३८॥ व्याख्या.–निद्दक्खिन्नो–दाक्षिण्यथीरहित लोअ-आ लोको छे, केमके, जइ जो कुवि-कोई पण भूखेकरी पीडित रांक माणस रुट्टियाखंडं–रोटीनो खंड एटले रोटलीनो एक ककडो मग्गेइ–अन्नदाता, सेठ साहेब इत्यादिक चाटुक वचने करी मागेछे, तो पण तेने ते आपता नथी, उलटां दुर्वचनो बोलीने कहाडी मूकेछे अने कुगुरूण संग चयणे–कुगुरुनो संग त्यागवाने विषे दक्खिन्न–दाक्षिण्यपणुं करेछे एटले एमने मारा बाप दादादिक मानता आवेला छे; वली मारा गछना कहेवायछे, माटे केम छोडाय ! एम लोक कुगुरुनी दाक्षिण्यतामां पड्या छे, हा- मोटो खेद छे, महामोहो–ए मोटुं अज्ञान छे के,

दीन दुःखीने एक रोटीनो ककडो आपतां करुण लागेछे, अने दुर्ग–दुर्गति प्रापक जे कुगुरु, तेने अति सरस असन प्रधान वसन प्रमुखेकरी सन्मानेछे, माटे ए मोटुं अज्ञान लोकोनेविषे प्रवर्त्ते छे.. ॥ ३९ ॥

अवतरणः– पूर्व गाथामा दृष्टीरागी लोकोनुं मूढपणु कह्युं, हवे तेओना नाम मात्र गुरुनुं मूढपणुं कहेछे– मूल.– किं जणिमो किं करिमो, ताण हयासाण धिठ दुठ्ठाणं ॥ जे दंसिऊण लिंगं, खिवंति न रयम्मि मुद्ध जणं ॥ ४० ॥ दोहा – नाखै नरके मुग्ध जन, देखाडी मुनि वेष ॥ ते हताश खल धीठने, कहिये किसुं विशेष ॥ ४० ॥ व्याख्याः– हयासाण–उत्तरोत्तर कल्याणरूप हणाई छे आशा जेनी एना धिठ दुठ्ठाणं–धीठ एटले अकार्य करवामां अति चतुर अने दुष्ट एटले दोषवाला ताण– तेओने किं जणिमो– शुं कहेवु? अने किं करिमो– शुं करवुं? जो उपकार करिये तो परघातादि उपद्रव करवाने सावधान थाय; ते आंधला सिंहना नेत्र उघाडवाना दृष्टांते जाणी लेवुं, एटले कोई आंधलो सिंह जोई तेनी उपर दया आणीने कोई पुरुष कांई इलाज करीने तेने देखतो करे तो तेनाज प्राण लिये. तेम कुगुरुनी उपर उपकार कर्यो होय तो तेना बदलामां अपकार शिवाय बीजो फायदो थवानो नथी. त्यारे कोई कहेशे के तेओनी उप र अपकारज करवो तो ते पुण्यवानने अघटित छे; माटे तेओने शुं कहेवुं? अने शुं करवुं कांई कहेवुं? अथवा करवुं उचितज नथी केमके, जे–जे लिंग–रजोहरण तथा मुख वस्त्रादिक साधुनो वेष तेने दंसिऊण–देखामीने मुद्धजण–मुग्ध जन ए टले विवेक विकल लोक, तेओने नरयम्मि–नरकनेविषे खिवंति–नाखेछे. ॥ ४० ॥

अवतरण.–पूर्व गाथामां कुगुरुउनुं मूढपणुं देखाड्युं, हवे तेउनी स्तुतिने मिषे निंदा करे छेः– ॥ मूल.– कुगुरूवि संसिमोहं, जेसिं मोहाइ चंमिमा दठ्ठुं ॥ सुगुरूण उवरि नत्ती, अइ निविमा होइ नवाणं ॥ ४१ ॥ दोहाः–ते प्रसंसिये कुगुरु पण, ज सु मोहादिक देष ॥ सुगुरु परिजवी जीवके, थाए नगति विशेष ॥ ४१ ॥ व्याख्याः– कुगुरुवि- कुगुरुने पण संसिमोह- हुं- प्रशंसुं छुं; केमके, जेसिं–जेना मोहाइ चंमिमा–मोहादिके करी जे चंमपणुं अथवा, क्रूरपणुं, तेने दठ्ठुं–देखीने न व्वाण- मोक्षाभिलाषी नव्य प्राणीयोने सुगुरूण उवरि–सुगुरुनी उपर अइनिविमा- अतिदृढ नक्ति होइ–थाय छे एटला वास्ते कुगुरुनी प्रशंसा करिये छैये, परतु तेना गुणोनुं वर्णन करी प्रशंसा करता नथी. ॥ ४१ ॥

अवतरणः– पूर्व गाथामां जे नव्य जीव कह्या ते सम्यक् दृष्टि जाणवा तेउनुं

सम्यक्त्व उल्लासने पामवानुं कारण कहे छे.– मूल.– जह जह तुट्टइ धम्मो, जह जह दुठ्ठाण होइ अइ उदउ ॥ समदिठ्ठि जियाण ॥ तह तह उल्लसइ समत्तं ॥ ४१ ॥ दोहा ॥ जिम जिम खलनो अति उदे, जिम जिम तूटे धर्म ॥ तिम तिम समकित जीवको, उलसै समकित सर्म ॥ ४१ ॥ व्याख्या – जह जह–जेम जेम धम्मो–जिन भाषित धर्म तुट्टइ–तूटेछे एटले हाणीने पामे छे, वली जह जह– जेम जेम दुठ्ठाण- दर्शन भ्रष्ट, निन्हव, पासत्था, उसन्ना तथा कुशीलियादिक अने अन्य दर्शनी त्रिदंडी, परिव्राजक, तथा विप्रादिक दुष्ट लोकोनो अइ उदउ- अति उदय एटले अतिशय जोर सत्कार तथा पूजादिक होइ- थाय छे तह तह– तेम तेम समदिठ्ठि जियाण- सम्यक् दृष्टि जीवोनुं सम्मत्तं- सम्यक्त्व उल्लसइ- उल्लासने पामे छे, एटले विशेष दीपे छे ए मोटो आश्चर्य छे. शिष्यने गुरु कहे छे के, काई आश्चर्य नथी, वस्त्र, पात्र, वसति, आहार तथा पोतपोताना श्रावक इत्यादिनी ऊपर लडी मरशे, अने साधु कहेवाशे वली कलहना करनार, मारकूटना करनार गुर्वादिक मोटा सत्पुरुषने पण असमाधि उत्पन्न करनारा थशे. दुषम कालमा घणा असयति थया थका संयति कहेवाशे, अने कोईक विरला धर्मार्थी सुसाधु थशे एवा श्री महावीर स्वामीनां वचन संभारी संभारीने तथा ते पूर्वोक्त लोकोने जोई जोईने श्री वीर वचननी आस्था ते सम्यक्त्वनुं आस्तिक्यता नामे पांचमुं लक्षण दृढ थाय छे. ॥ ४१ ॥

अवतरण – पूर्वोक्त गाथामां जेम दुष्ट पापी लोकोनो हमणा अति उदय कह्यो तेम हमणा जिनमतनो अति उदय केम थतो नथी? ते प्रश्नोत्तररूप गाथा एकरी कहेछे -- मूल – जअ जतु जणणि तुल्ले, अइ उदयं ज न जिणमए होइ॥ तं किठ्ठ काल संभव, जियाण अइ पाव माहप्पं ॥ ४२ ॥ दोहा – जग जननी सम जिनमते, जो अति उदय न होय ॥ कलि कालज जणनो अति, पाप म हातम सोय ॥ ४२ ॥ व्याख्या·– जअजतुजणणितुल्ले–जगतना जीवने मातानी तुल्य, जिणमए–एवो जे जिनमत, तेनो अइ उदयं–अति उदय ज–जो न–नथी होइ–थतो त–ते किठ्ठकालसभवजियाण–क्लिष्टकाल एटले कलिकालमा उत्पन्न थएला जे जीव तेउंना अइपावमाहप्पं--उत्सूत्र देशनादिक दोषरूप अति पापनुं महात्म्य छे. एनो भावार्थ -- जिनमतनो उदय तो श्री दुप्पसह अणगारसुधी वर्त्तशे, तोपण जेवो तीर्थंकर महाराज छता जिनमतनो उदय हतो, तेवो जिन मतनो अति उदय नथी थतो तेनुं कारण दोष दुष्ट कलिष्ट पंचम कालनेविषे उ

त्पन्न थया जे जीव पासंमी लोक, तेना उत्सूत्र देशनादि महादोषरूप अति पा पनो प्रताप छे माटे जैन मतनो अति उदय केवी रीते थाय ! ॥ ४३ ॥

अवतरण – पूर्व गाथामां कह्युं के जिनमतनो अति उदय थतो नथी ते डु ष्ट लोकोना अति पापनुं महात्म्य छे, ते डुष्ट लोको पापे करीने पूर्ण होयछे ते कहेछेः– मूल – धम्मंमि जस्स माया, मिछत्त गहो उसुत्ति नोसंका ॥ कुगुरूवि करइ सुगुरू, विउसोवि स पाव पुन्नत्ति ॥ ४४ ॥ दोहा – जिसके माया धर्ममें, लागो ग्रह मिथ्यात ॥ सो उत्सूत्री नरम नह, कहे उलटि सवि वात ॥ ४४ ॥ व्याख्या – जस्स–जेने धम्मंमि–जिन धर्मनेविषे माया–कपट वर्त्तेछे, एटले पूजा धनादिक लाभ यश कीर्त्तिने अर्थे लोकनी दृष्टिए करी जे धर्म करवो ते वधी मा या जाणवी ते जेने छे, मिछत्तगहो–अतत्व श्रद्धान मिथ्यात्वनो गृह हववा द वर्त्तेछे जेने वली उसुत्ति– उत्सूत्र भाषी छे, नोसंका– उत्सूत्र भाषवा थकी नरक निगोदनेविषे अनंत कालसुधी निवास थशे एवी जेने शंका नथी, वली जे कुगुरूवि–कुगुरुप्रते पण सुगुरु–सारो गुरु करइ–करेछे, एटले आ उत्तम गुरु छे एम मानेछे, स–ते विउसोवि–विद्वान छतां पण एटले इव्यथकी घणा शास्त्रो भणेलो छता पण पाव पुन्नत्ति–हिंसादिक अढारे पापेकरी पूर्ण जाणवो॥

अवतरण·– पूर्व गाथामां कह्या प्रमाणे जे पापेकरी पूर्ण होय ते कांई पण धर्म कार्य करी शके नही, धर्म कार्य जिनाज्ञा प्रमाणे कर्याथी सुखदायक थाय छे, अन्यथा न थाय ते कहेछे – मूल – किच्चंपि धम्म किच्चं, पूया पमुहं जिणि द आणाए ॥ भूअ मणुग्ग हरइअं, आणा भंगाउ डुहदायं ॥ ४५ ॥ दोहा – जिन पूजादिक कार्य पण, सफल जिनाज्ञा थाय ॥ आणा भंगरहित दया, कार्य सवी डुखदाय ॥ ४५ ॥ व्याख्या – पूया पमुहं–पूजा प्रमुख एटले जिन पूजा, सामायक प्रतिक्रमण, शास्त्राभ्यास, तथा जिनभुवन कराववा प्रमुख धम्मकिच्चं धर्मकृत्य जे किच्चंपि–करवुं तेपण जिणिंद आणाए–जिनेंद्रनी आज्ञाए करी सुखदाई थायछे भूअमणुग्गहरहिअं–भूत अनुग्रह रहित एटले जीव दयाए करीने रहित जे जिन पूजा तथा सामायकादिक धर्म कार्य करवु ते जिन आणानो भंग कर्या जेवुं थायछे. माटे सिद्धांतमां कह्यु छे के, वीतरागनी आज्ञानो भंग करवा थकी पूर्वोक्त सर्व धर्मकार्य डुहदायं–जन्म मरणादिक डुखना देनारां छे जिन राजनी आज्ञानुं आराधन कर्याथीज मोक्ष थायछे अने जिनराजनी आज्ञा विराधवा थकी नरकादिक डुःख थायछे ए जिनागमनुं गुह्य छे. ॥ ४५ ॥

अवतरण -- जिनाज्ञाविना कष्टादिक जे करवु ते सर्व संसारनो हेतु थाय ठे ते कहे ठे – मूल·- कठं करंति अप्पं, दमंति दवं चयंति धम्मत्थी ॥ इक्कं न चयति मिछत्त विसलव जेण बुड्डंति ॥ ४६ ॥ दोहा – कष्ट करै आपा दमै, द्रव्य तजे पण जोय ॥ तजै नही मिथ्यात्व लव, बुडे जेहथी लोय ॥ ४६ ॥ व्याख्या·– कठं करंति– लोच करवो, उघाडे पगे चालवु, धरती ऊपर सुवु, तथा अणसणादि अनेक प्रकारनुं बाह्य तप, इत्यादिक कष्ट जे ठे ते मूर्ख करे ठे. अप्प–आत्माने, एटले मनने तथा इंद्रियोने दमति–मूर्ख दमे ठे, वली दवं–धनादिक द्रव्य तेने धम्मत्थि–धर्मना अर्थी थका जे मूर्ख चयंति– त्यागे ठे, पण इक्क मिछत्तविसलव–एक मिथ्यात्व उत्सूत्ररूप विपलवने न चयति– मूकी देता नथी. जेण–जे मिथ्यात्व उत्सूत्ररूप विषलवे करी मूर्ख अज्ञानी डुःख समुद्रनेविषे बुड्डति–बूडे ठे; ए मोटी खेदनी वात ठे. ॥ ४६ ॥

अवतरण -- पूर्व गाथामां उत्सूत्र जापीनु मूढपणु देखाड्युं, हवे शुद्ध पुरुषनो संग करवो अने अशुद्ध पुरुषनो संग त्यागवो ते कहे ठे ॥ मूल - सुद्ध विहि धम्म राउ, वढई सुद्धाण संगमे सुअणु ॥ सोविय असुद्ध संगे, निउणाण विगलइ अणुदियहं ॥ ४७ ॥ दोहा - वधे मीत सतसंगथी, वर विधि धरम सुराग ॥ घटे कुसंगे प्रति दिवस. विज्ञनो पण ते राग ॥ ४७ ॥ व्याख्या – सुअणु--हे सुजन, हे धर्मोपदेश योग्य, सुद्धाण--जे शुद्ध पुरुष, सुसाधु, तथा सुश्रावक होय तेनो संगमे--समागम अथवा परिचय कखाथी सुद्ध विहि धम्मराउ--शुद्ध विधि ते राग द्वेष मल रहित रत्नत्रयी मोक्ष मार्ग विधि तद्रूप जे जिन जाषित धर्म तेनेविषे राग एटले प्रीति वढइ– वधे ठे एटले वृद्धिने पामे ठे अने हे सुजन, सोविय--ते पण शुद्ध विधि धर्मनो राग, असुद्ध संगे--अशुद्ध पुरुष एटले उत्सूत्र जापी पासत्थादिकनो संग अथवा परिचय कखाथी निउणाणवि--निपुण पुरुषो पण अणुदियह- निरंतर दिन दिन प्रते गलइ–गले ठे एटले हाणीने पामे ठे त्यारे अनिपुण पुरुषोने हाणी थाय तेमां शुं कहेवु ! माटे उत्सूत्रजापी पासत्थादिकनो संग सर्वथा वर्जवो; अने शुद्ध प्ररूपक आचारवंत पुरुषनो परिचय करवो ॥ ४७ ॥

अवतरण – पूर्व गाथामा अशुद्ध पुरुषना संगनो त्याग करवो एम कह्यु, एथी एम जाणवु के जे अशुद्ध पुरुष होय ठे ते शुद्ध पुरुषनी ऊपर द्वेष करवा वाला होय ठे , माटे तेनां समीपे बलविनाना पुरुषे वसवु नहीं, ते कहे ठे – मूल – जो सेवइ सुद्ध गुरु, असुद्ध लोआण सो महा सत्तू ॥ तम्हा ताण सयासे, बल रहिओ

मा वसिय्यासु ॥ ४८ ॥ दोहा·– शुद्ध गुरू जे सेवतो, ते अशुद्ध जण शत्रु ॥ तो बल रहित वसो नही, ज्हां असुद्ध जण तत्र ॥ ४८ ॥ व्याख्याः– जो–जे लोक सुद्ध गुरु–निर्मल ज्ञान दर्शन चारित्र गुणे गुणवत गुरु प्रते सेवइ–सेवे छे, सो–ते लोक अशुद्ध लोआण–उत्सूत्र नाषी पासत्थादिकना दृष्टीरागी नक्त लोक, तेउने म हासत्तू–महा शत्रु एटले वेरीना जेवां लागे छे, तम्हा––ते कारण माटे ताण–ते असुद्ध लोकोना सयासे–समीपे बलरहिउ–धर्म आश्री निर्भय पणुं अने शरीर ध नादिक शक्ति संपन्न एम अभ्यंतर बाह्य ए बे प्रकारना बले करी, रहितजे होय तेणे मा वसिय्यासु–वसवुं नही; केमके, जे द्वेषी माणस होय ते सारा गुणने पण दूषण दिये छे, माटे अशुद्ध लोकोना समीपे वसवु तेमां घणो उपद्रव रह्यो छे; ते थी बीजे कोई ठेकाणे रहेवुं ते सारुं छे। ॥ ४८ ॥

अवतरण –– पूर्व गाथामा खल पुरुषोनी पासे रहेवानुं निवारण कर्युं तेनुं कारण कहेछे.– मूल – समय विऊ असमत्था, सुसमत्था जत्थ जिणमए अविऊं॥ तत्थ न वढइ धम्मो, पराहव लहइ गुणरागी ॥ ४९ ॥ दोहा.–– जिन मत विड असमर्थ जन, जहां समर्थ अजाण ॥ धर्म न वाधे तह लहे, गुणरागी अपमान ॥ ४९ ॥ व्याख्या.– जत्थ–जहा समयविऊ–जिन आगमना जाण पुरुष असम त्था–क्षेत्र कालादिक दोषेकरीने असमर्थ छे, अने जिणमए–जिन मतनेविषे अविऊ–जे अविद छे एटले अजाण छे, ते सुसमत्था–अति कलह, क्लेश तथा मार कूट कर वाने समर्थ छे; तत्थ–तिहां धम्मो–शुद्ध विधि धर्म नवढइ–वृद्धिने पामे नही; उ लटुं गुणरागी–गुणानुरागी पुरुष पराहव–पराभवने एटले तिरस्कारपणाने लहइ– लहे एटले पामेछे, माटे अशुद्ध पुरुषोना समीपे असमर्थ होय तेणे न वसवु ॥४९॥

अवतरण·– जे सामर्थ्यवान उन्मार्गी तथा उत्सूत्री होय तेनो जिनमार्गने विषे प्रवेश करवा देवो नही ते कहेछे·– मूल.– जं न करइ अइ भाव, अमग्ग सेवी समत्थउ धम्मे ॥ ता लठं अहकुय्या, ता पीडइ सुद्ध धम्मत्थी ॥ ५० ॥ दोहा सबल कुमार्गी धर्ममें, जो न करै अति भाव ॥ तो सुंदर अथ जो करै, तो सुध धार्मि दुख दाव ॥ ५० ॥ व्याख्या – समत्थउ–मुष्टि चपेटादिक प्रहारनी अपेक्षाए करी कुत्सित समर्थवत्त एवो जे अमग्गसेवी–अविधिमार्गी एटले उन्मार्गनो सेव नार, उत्सूत्रनो बोलनार, सम्यक्त्वरहित लिंगधारी लोक तथा तेउना नक्त लोक ते धम्मे–जिन धर्मनेविषे जं–जो अइभाव–अति भावप्रते नकरइ–करे नही, एट ले त्यां पसारो अथवा प्रवेश करे नही; ता–तो लठं–लष्ट छे एटले सुंदरछे अह–

अथ जो ते अविधि मार्गना सेवनार लोक जिनधर्मनेविषे अति जाव एटले प्रवेश कुर्या--करे ता--तो सुद्ध धम्मही--शुद्ध धर्मना अर्थी जे नव्य प्राणी छे तेउनेपी डइ--पीडे एटले अठता आल प्रदान कुर्वचन हेलनादिके करी दुःख दिये, माटे ते उन्मार्गे लोकोनो जिनधर्मनेविषे प्रसार न थाय एटले आववु न थाय तोज सारुं ५०

अवतरण -- पूर्व गाथामां कह्यु के, समर्थ उन्मार्गीनो जिनधर्मनेविषे प्रवेश थाय तो ते धमार्थीने पीडा करेछे, हवे धर्मार्थी पुरुषोनो कोई पराजव करी शके नही ते कहेछे -- मूल - जइ सव्व सावयाण, एगत्तं ज तु मिह्ववायम्मि ॥ धम्मठियाण सदर, ता कहणु पराजव कुय्या ॥ ५१ ॥ दोहा -- मिथ्या वादे होय जो, श्रावक जन सब एक ॥ धर्मी जनकूं वर तदा, किम थे दुख अविवेक ॥ ५१ ॥ व्याख्या - मिह्ववायम्मि--मिथ्यावादनेविषे सव्व सावयाण--नाम मात्र सर्व श्रावकोनु ज -जो एगत्तं--एकत्वपणु छे, तु--वली जइ--जो एकत्वपणु धर्मविधिवादनेविषे धम्मठियाण--धर्मार्थी पुरुषोनुं होय ता--तो सुंदर--हे सुंदर, हे नइ, ते नाम मात्र श्रावक लोक धर्मार्थी पुरुषोनो पराजव--पराजव अथवा तिरस्कार तु--इति वितर्के कह--केम कुय्या--करे! अपि तु नज करे धर्मार्थी पुरुषोनुं पण धर्मविधिवादनेविषे एकत्वपणुं नथी केमके, ए विषम कालनो प्रजाव छे माटे नाम मात्र जे श्रावक छे ते धर्मार्थी पुरुषोनो पराजव करेछे एनो जावार्थ आ देरासरनेविषे अमारो तथा अमारा गोत्री होय तेओनो मूल नायकनी पूजा आरती करवानो अधिकार छे, बीजानो अधिकार नथी तथा चंडिकादि गोत्र देवी देवता अमारा पूर्वज मानता आव्याछे, ते अमे तमारा कह्याथी केम मूकीये? नगरादिकनेविषे सुविहितनो प्रवेश थता पूर्वे कोई समये ओठव थयो नथी ते अमे वेगा ठता केम थाय! इत्यादिक जे मिथ्यावाद तेनेविषे नाममात्र श्रावकोनुं जे एकत्वपणु छे, तेमा विधि चैत्यादिक धर्मविधिवादनेविषे धर्मार्थी पुरुषोनु संघपट्टोक्त एकत्वपणु होय तो हे सुंदर, कोई पण धर्मार्थी पुरुषोनो पराजव करी शके नही

अवतरण -- पूर्व गाथामां धर्मार्थीनुं वर्णन कर्युं, हवे ते धमार्थीने सहाय करनारा गुणोने कहेछे -- मूल -- तं जयइ पुरिस रयण, सुगुणढं हेम गिरिवर महग्घ ॥ जस्सा सयम्मि सेवइ, सुविहिरउ सुद्ध जिण धम्म ॥५२॥ दोहाः--सुगुण महर्घ महा गिरि, जयसो पुरुष रतन्न ॥ जसु आश्रय आचार रत, करै सुधर्म जतन्न ॥ ५२ ॥ व्याख्या -- त पुरिस रयण--ते पुरुष रत्न जयइ--जयवंत छे; अथवा जयवंत थाओ, जस्स सयम्मि--जेना आश्रये एटले जेना आधारे सुविहिर

उ--सुविधिरत पुरुष एटले विधिमार्गनेविषे तत्पर पुरुष शुद्ध जिणधम्मं कदाग्रहा दिक मल कलंक रहित जिनधर्मप्रते सेवइ- सेवेछे एटले आराधेछे एवो पुरुषरत्न सुगुण इं--औदार्य, धैर्य गंभीर, क्षमा विनयादिक सुष्ट गुणरूप धनेकरीने सहित छे, वली ते पुरुष रत्न केवो छे ? हेम गिरिवर महग्घं–मेरु पर्वतनी पठे महर्घ छे एटले अति महागो अथवा अमूल्य छे. ॥ ५१ ॥

अवतरण – पूर्व गाथामां कह्यु के, धर्मने सहायता करनारो अमूल्य पुरुष छे; तेनीज फरी पुष्टी करेछे – मूलः– सुरतरु चिंतामणिणो, अग्घं न लहंति तस्स पुरिसस्स ॥ जो सुविहिय जणाणं, धम्माधार सया देई ॥ ५२ ॥ दोहा – ते सुपुरुषके मूलकूं, सुरतरु मणी न पाय ॥ विधिरत जनकूं जो दिए, धर्म सहा ह्य सदाय॥ ५२ ॥ व्याख्या – जो- जे पुरुष सुविहि रयणाणं- सुविधि रत लोको ने धम्माधार- धर्मनो आधार एटले धर्मनो अवष्टंब साह्य, देइ- दियेछे, सया- स दा सर्वदा, तस्स पुरिसस्स–ते पुरुषनो अग्घ–अर्घ एटले मूल ते सुरतरु चिंतामणि णो–कल्पवृक्ष चिंतामणिरत्न उपलक्षणथी कामधेनु कामकुंभ छे ते नलहंति–नथी पामता; केमके. ते पुरुषने शिवसुखदायक अमूलक सम्यक्त्व रत्ननी प्राप्ति छे माटे कल्पवृक्ष चिंतामणि प्रमुख छे ते ते पुरुषना मूलने नथी पामता, एटले तेनी तुलना करी शकता नथी ॥ ५२ ॥

अवतरण – पूर्व गाथामां धर्मने सहाय्य करनार पुरुषना गुणनुं कीर्त्तन थयुं ते सांभलीने ते सत्पुरुषोतो लज्जाने पामेछे, त्यारे तेनुं गुण कीर्त्तन करवामां फल शुं छे एवी शंकानुं निवारण करवानेअर्थे कहेछे – मूल.– लज्जंति जाणि मोहं, सप्पुरिसा नियय नाम गहणेण ॥ पुण तेसि कित्तणाउ अम्हाण गलंति कम्मा इ ॥ ५४ ॥ दोहा – लाजे निज नामोच्चरे, हु मानुं सत पुर्ष ॥ वजि न्हेना गुण गाय हम, कर्म टले कटु तुर्ष ॥ ५४ ॥ व्याख्या – सप्पुरिसा–सत्पुरुष जे छे ते जोपण नियय नाम गहणेणं–निजक नामनु ग्रहण कखाथी एटले आ दाता, परोपकार कर्त्ता, इत्यादिक गुणे करी सहित पोतानु नाम सांभल्याथी लज्जंति--ल ज्जाने पामेछे जाणिमोह–एम छे ते हुं जाणुंछुं, तोपण तेसि कित्तणाउ–तेना गुण कीर्त्तन कखाथी पुण--वली अम्हाण–अमारा कम्माइ--ज्ञानावरणादिक पाप कर्म गलंति–गलेछे, एटले क्षय थायछे, माटे सत्पुरुषना गुण कीर्तन निरंतर करवा.

अवतरण – पूर्व गाथामा सत्पुरुषोनेविषे रहेला गुणोनुं जे वर्णन करवुं ते निर्जरानो हेतु छे एम कह्यु, हवे आज्ञा रहित धर्म सेवनारनी वार्त्ता कहेछेः–मूल

आणा रहियं कोहाइ संजुयं अप्प ससणज्ञंच ॥ धम्मं सेव ताणं नय कित्ती नेय धम्म च ॥ ५५ ॥ दोहा -- आण जंग क्रोधादि जुत, आप प्रसंस निमित्त ॥ धर्म सेवता लोकने, नही धर्म नहि कित्त ॥ ५५ ॥ व्याख्या -- आणारहिअं--आश्रव हेय, संवर, उपादेय, ए वीतरागनी आज्ञा तेणे करी रहित, वली कोहाइ सजुयं क्रोधादि संयुक्त एटले क्रोध मान माया लोज ए चार कषाये करीने सहित, तथा अप्प संसणठं--आत्म प्रशंसाने अर्थे पोतानी शोजाने अर्थे ए प्रकारे धम्म--जिन धर्म प्रते सेवताण--सेवनारा लोकोनी नयकित्ती--कीर्त्ति नथी; एटले विवेकी पुरुष जे बे ते तेउनी श्लाघा करता नथी च--वली नेयधम्म-- ते धर्म पण नही के जे उर्गतिमां पमता प्राणीने राखे नही ॥ ५५ ॥

अवतरण -- पूर्व गाथामा कह्यु के, आज्ञारहित धर्मना सेवनारनी कर्त्ति नथी होती अने तेउने धर्म पण नथी होतो, तो पण कांईक तो कीर्त्ति तथा धर्म थतो हशे, ए आशंका दूर करवाने कहेबे — मूल — इयर जण ससणाए, हिछ उस्सुत्त जासिए न नयं ॥ ही ही ताण नराण, डुहाइ जइ मुणइ जिण नाहो॥५६॥ दोहा — नीच प्रससाए जणे, उत्सुत धीठ निलाज ॥ जो जावी डुख तेहने, सो जावे जिन राज ॥ ५६ ॥ व्याख्या — इयर जण संसणाए--जिनोक्त धर्मना अजाण इतर जन सामान्य लोकोए करेली जे प्रशंसा, तेणे करीने हिछ--न्हिष्ट थएला एटले प्रसन्न थया थका उस्सुत्त जासिए--उत्सूत्र जाषण करता न नयं--जेने नरकादिकनेविषे जमवानुं जय नथी, ही ही--मोटी खेदनी वात बे. ताण नराण--ते नरोना अनागत कालसबंधी डुहाइ--जे ड्ुःख बे, ते प्रते जइ- जो जिण नाहो--जिननाथ मुणइ--जाणे बे, तो पण ते डुःखप्रते समस्त प्रकारे कहेवाने समर्थ नथी, केमके, डुख अनत बे माटे ॥ ५६ ॥

अवतरण — पूर्व गाथामा उत्सूत्र जाषीने अनत डुःख थाय बे एम कह्यु, हवे बोधीने अनंत संसार भ्रमणनो नाश थाय बे ते कहे बे — मूल — उस्सुत्त जासगाण, बोही नासो अणत ससारो ॥ पाणच्चएवि धीरा, उस्सुत्तं ता न जासंति ॥ ५७ ॥ दोहा — बोधि नाश उत्सूत्रिके, जामण मरण अनत ॥ प्राण तजे पण धीर तत, नहि उत्सूत्र जणत ॥ ५७ ॥ व्याख्या -- उस्सुत्त जासगाण--जिन राजना वचनथी विरुद्ध ते उत्सूत्र कहेवाय बे, तेनुं जाषण करनार एटले बोलनार, तेने बोहीनासो--श्री जिन धर्मनी प्राप्ति ते बोधी सम्यक्त्व तेनो नाश थाय अने अणंत ससारो--अनत संसार थाय एटले अनत कालसुधी चार गतिमां भ्र

मवुं थाय ता–ते कारण माटे पाणच्चएवि–प्राण तज्याथी पण एटले प्राण कंठने विषे आव्या ठता पण धीरा- बुद्धिमान जे पंमित पुरुष ठे ते उस्सुत्तं–जिन वचन थी विरुद्ध न नासंति- बोलता नथी ॥ ५४ ॥

अवतरण·– पूर्व गाथामां उत्सूत्र बोलवु नही, एटले जे धीर पुरुष होयठे ते उत्सूत्रनुं बोलवुं अविधि जाणीने त्याग करेठे, हवे ते अविधिनी प्रशंसा पण न करवी ते कहेठेः– मूल – मुद्धाण रंजणठं, अविहि पसंसं कयावि न करिय्या ॥ किं कुल वहुणो कबवि, थुणति वेसाण चरियाइ ॥ ५७ ॥ दोहा.– अविधि कीर्ति न कर कदा, कुजु जन रंजन हेत ॥ शुन कुल वधु कि नी किया, वेस्या चरित थुणेत ॥ ५७ ॥ व्याख्याः– मुद्धाण रंजणठं–अजाण लोकोने रंजन करवाने अर्थे अविहि पसंसं–पोतानो गठ मूकी बीजानी पाशे जई सामायक पडिकमण शास्त्र श्रवणादिक कांई न करवु, जेम तेम पूजा सामायकादिक धर्मकृत्य करवु, विधि अविधि कांई न जोवुं, इत्यादिक जे उत्सूत्र तेरूप अविधिनी प्रशसा एटले नि कारण जे अविधि करवानी अनिलाषा जे अविधिनी प्रशसा तेने सत्पुरुष कयावि–कदापि एटले कोई काले पण न करिय्या–करे नही; एज वात दृढ करवाने वास्ते अहीं दृष्टांत कहेठेः– कि–शुं कुलवहुणो– कुलवधु एटले कुलवान स्त्रीओ कबवि– कोई ठेकाणे पण वेसाण चरियाइ– पोतानी इबाए चालवु, सरस आहार करवो. अति उद्भव वेश पहेरवो, परपुरुषने नोगववु, जोबननो लान मानवो, इत्यादिक वेस्याना जे चरित ते प्रते थुणति–स्तवे अथवा वखाणे, अपितु नहीज वखाणे केम के जो तेना वखाण करे तो कलंक लागे. तेम जे सत्पुरुष ठे ते अविधिनी श्लाघा करेज नही. केमके, जो करे तो तेने उत्सूत्रनो कलंक लागे ५७

अवतरण – पूर्व गाथामां अविधिनी प्रशंसा ते जिन आज्ञाना नंगनो हेतु होवाथी तेनो निषेध कर्यो. हवे ते जिन आज्ञाना नंगनो नय कोईने होयठे ने कोईने नथी होतो ते कहे ठे – मूल – जिण आणा नंग नयं, नवसय नीयाण होइ जीवाणं ॥ नवसय अनीरुयाणं, जिण आणा नंजणं कीडा ॥५ए॥ दोहा – नवनयथी अति नीरु जे, आण नंग नय तास ॥ नवनयथकी अनीरुनें, आणा नंग न हास ॥ ५ए ॥ व्याख्या·– नवसय नीयाण– नवसतनीत एटले नरकादिकना शेकडा नवथकी बीहीता एवा जीवाण– जीव जे ठे तेओने जिणआणा नगनयं - जिन आज्ञाना नंगनो नय होइ -थाय ठे ; केमके, ते नवसत नीत जीव एवो विचार करेठे के जो राजानी आज्ञानो नंग कर्यो होय तो वंधादिक अने

क प्रकारना दुःखनी प्राप्ति थायछे, तो जिन अज्ञानो भंग करवाथी जीव निश्चे करी नरकादि चार गतिमा प्राए अनत कालसुधी अनत दुःख भोगवे तेमा शु कहेवु! माटे जिन आज्ञाना भंगनो भय सत्पुरुष भवसतभीतने होयछे, अने भ वसय अभीरुयाए- जे नरकादिक भवना शोकडाथकी नथी बीहीता एवा जे जीव तेओने तो जिए आणाभंजर्ण कीमा- जिन आज्ञानो भंग करवो, तथा विराध वु ते क्रीमारूप छे एटले एक हासीरूप छे. ॥ ५९ ॥

अवतरण - पूर्वे गाथामां कह्यु के, जे जीवोने भवनी भीति नथी ते जिन आज्ञाने विराधे छे, एथी एम न जाणवुं के, जे शास्त्रोथी अजाण होय छे तेज विराधे छे, अने जे जाण होय ते नथी विराधता! किंतु शास्त्रना जाण होय छे ते पण कोई दुष्ट कर्मना उदयथी जिन आज्ञाने विराधे एमा कांई आश्चर्य नथी ते कहे छे - मूल - को असुआण दोसो, ज सुअ सहियाण चेयणा नठा ॥ धि द्धी कम्माणजर्ड, जिणोवि लद्धो अलद्धुत्ति ॥ ६० ॥ दोहा -जोनसि सुत युत चेतना, किसो असुतनो दोष॥ धिग् धिग् कर्मनकूं यदा, लभथ अलभ जिन पोस॥६०॥ व्याख्या - सुअ सहियाण-श्रुत सहित जे लोक छे, तेउने एटले घणा सिद्धांत ना जाण लोकोनी ज-जो चेयणनठा-चेतना नाशने पामी एटले जिन आज्ञानी श्रद्धाने अभावे अभिनिवेश मिथ्यात्वना उदये करी चेतना विपरीत पणाने पामी तो असुआण-अश्रुत लोकोनी एटले जे जिनोक्त सिद्धात भण्या नथी एवा लोक छे तेउनो को दोसो-शुं दोष कम्माण-कर्मने धिद्धि-धिक् धिक् थाउ एटले कर्मने धिकार छे जओ-जे कारण माटे जिणोवि लद्धो-जिन एटले तीर्थंकर, पाम्या छता पण अलद्धुत्ति- अण लाध्या अथवा अण पाम्या जेवुं थयु ज मानि प्रमुखने, ते सत्य छे केमके, सिद्धातमा कह्यु छे के, मनुष्य जन्म अने सि द्धात सांभळवु दुर्लभ छे ते कदाच सांभळे पण सांभळीने तेनी श्रद्धा आववी परम दुर्लभ छे केमके, मोक्ष मार्ग सांभळीने पण घणा भ्रष्ट थाय छे ॥ ६० ॥

अवतरण -- पूर्वे गाथामा कर्मने धिकार होजो एम कह्यु, माटे कोईनो उपहास करवो नही ते कहे छे - मूल -- इयराणवि उवहासं, तम जुत्त भाय कुल पसूयाण॥ एस पुण कोवि अग्गी ज हास सुद्ध धम्ममि ॥ ६१ ॥ दोहा -- करवु पर उपहास जे, ते अयुक्त जिनदास ॥ कुल प्रसूतके अगनि ले धरमविषे जो हास ॥ ६१ ॥ व्याख्या - भाय-हे भाई इयराणवि उवहास--इतर सामान्य नीच लोकोनो पण उपहास करवो त-ते कुल पसूयाण-कुल प्रसूत एटले कुलीन पुरुषोने अयुत्तं-अ

युक्त छे एटले अघटित छे पुण--तथा सुद्ध धम्मंमि--निर्मल कषाय मल रहित धर्म नेविषे तथा शुद्ध धर्म छते ज हास--अज्ञानी लोकोने जे हास्य आवे छे एस-- ए कोई अग्गी--वचनथी न कहेवाय; एवो कोईक अग्नि छे केमके, हास्य छे ते क्रोधादि कषायनुं कारण छे ते कोड पूर्व संचित तप चारित्रने बाली नस्म करी नाखे छे, ने जीवने प्राये उत्कृष्ट अनंत काल सुधी कुंनकारना चाकनी पठे संसार कांतारमां नमावे छे. माटे कोईनो उपहास करवो नही ॥ ६१ ॥

अवतरण-- पूर्व गाथामां कह्यु के जे शुद्ध धर्मनो उपहास करे ते अज्ञानी छे, तेने पण जे सुमण सुजन होय ते, परम हित देवानी इछा करे एम कहेछे -- मूल -- दोसो जिणिंद वयणे, संतोसो जाण मिछ पावम्मि ॥ ताणंपि सुद्ध हियया, परम हियं दाउ मिछंति ॥ ६२ ॥ दोहा -- मिथ्यात्वे संतोष जस, जिन वर वचने द्वेष ॥ तसु पण सुद्ध मनादिए, परम सुहित उपदेश ॥ ६२ ॥ व्याख्या -- जाण-- जेओने जिणिंद वयणे--जिनेंद्रना हास्य कषायादिक दोष वर्जित जे वचन, तेओनेविषे दोसो -द्वेष वर्त्ते छे अने मिछपावमि--हिंसा जाव मिथ्यात्व दर्शन शल्य अढार पाप तेनेविषे संतोसो--संतोष वर्त्तेछे एटले प्रसन्नता वर्त्ते छे, ताणपि--तेओने पण सुद्ध हियया--निर्मल छे हृदय जेओना एवा जे पुरुष ते परम हियं दाउं इछंति--सम्यक् ज्ञान दर्शन चारित्र मोक्षना उपायरूप परम हित देवाने इछेछे ॥६२॥

अवतरण -- पूर्व गाथामां कह्यु के, जिनधर्मनो द्वेषी अने मिथ्यात्व पापनो अति रागी होय तेनी उपर पण उपकार करवो तेनुं कारण शुं? ते कहेछे -- मूल -- अहवा सरल सहावा, सुअणा सव्वछ हुंति अवियप्पा ॥ उड्डंत विसजराणवि, कुणंति करुणं दुजीहाण ॥ ६३ ॥ दोहा -- सरल स्वनावी स्वजन व्हे निर्विकल्प नव तीर ॥ मसित साप उपर अपी, करे कृपा क्या और ॥ ६३ ॥ व्याख्या -- अहवा--अथवा सरल सहावा--सरल एटले निष्कपट स्वनाव छे जेओनो एवा जे सुअणा-- सुजन एटले सत पुरुष छे ते सव्वछ--सर्व स्थानकनेविषे अवियप्पा--दुष्ट रागद्वेष विकल्प रहित हुंति-- होयछे. एटले शत्रुमित्रनेविषे समचित्तवर्त्ती होयछे. उड्डंतविसजराणवि दुजीहाण--मूकी दीधो छे अथवा वमनकर्यो छे मुखथकी विषनो जर एटले समूह जेणे एवा जे द्विजिन एटले सर्प तेओनी उपर पण करुण--करुणा एटले दया कुणंति--करेछे, त्यारे बीजानी उपर दया करे तेमा ते शुं कहेवुं! अहो सर्प समान दुर्जन अने विष समान तेओनां दुर्व

चन जाणवा एवा डुर्जननी उपर पण जेने दयानाव वर्त्तेछे एवा सज्जन परम हित करवानी इछा केम नही करे! अपि तु करेज ॥ ६३ ॥

अवतरण – पूर्व गाथामां श्रावकनुं सम्यक्त्व दृढ करवाने कथन कर्युं पण साधुनुं सम्यक्त्व कह्यु नही तेथी एवो विचार थायछे के साधुने सम्यक्त्व हशे? ते शंका दूर करवाने कहेछे – मूल – गिहि वावार विमुक्के, बहु मुणि लोएवि न हि सम्मत्त ॥ आलंबण निरयाण, सड्डाण नाय किं नणिमो ॥ ६४ ॥ दोहा – गृह व्यापार रहित घणा, मुनि पण समकित हीन ॥ इह सालंबन श्राद्धकूं कहिये किसुं कुलीन ॥ ६४ ॥ व्याख्या – गिहि वावार विमुक्के–गृहस्थ संबधी अं गार कर्म्मादिक अनेक प्रकारना व्यापार कुव्यापार थकी विमुत्त–रहित एटले इ व्येकरी गृहस्थना व्यापारेकरी रहित एवा जे बहुमुणिलोएवि–घणा जे साधु जन तेउनेविषेपण नहि सम्मत्तं–सम्यक्त्व नथी तो आलंबण निरयाणं–माता पिता नो आग्रह, पुत्र कलत्र भ्रातादिकनो मोह, श्रेष्ठादिकनी दाक्षिणता, इत्यादिक जे आलंबन तेनेविषे निरत–तत्पर एटले पूर्वोक्त आलंबनोएकरी कुदेव कुगुरु तथा कुधर्मने सेवता एवा जे सड्डाण–नाममात्र श्रावक, तेउनेविषे सम्यक्त्वनी प्राप्ति नो नाय–हे भ्रात, किं नणिमो–शु अमे कहिये? केमके, जो गृहस्थ व्यापारआ लंबन रहित इव्य मुनिनेविषे सम्यक्त्वनी नास्ति छे, तो पुत्र कलत्रादिक अनेक आलंबनोएकरी सहित व्याकुल एवा जे नाम श्रावक तेउनेविषे सम्यक्त्व केम होय! अपि तु न होय ए नाव ॥ ६४ ॥

अवतरण – पूर्व गाथामां सम्यक्त्व पामवानो उद्यम प्रथम करवो एम देखाड्युं, हवे उत्सूत्रनो निषेध करवो ते कहेछे – मूल – नसयं न पर कोवा, जइ जीअ उसुत्त नासण विहियं ॥ ताबुड्डिसि निब्भंतं, निरत्थयं तवफडा डोव ॥ ६५ ॥ दोहा – किमहिन उत् श्रुत नाषवु, उत् श्रुत नाष्यु जोय ॥ तो सहि बूडिस नव्य तू निरर्थ जप तप होय ॥ ६५ ॥ व्याख्या – सयं–स्वयमेव एटले पोता नी बुद्धिए करीने न–उत्सूत्र न बोलवु, पर–गुर्वादिकनी अपेक्षाए करीने न–उ त्सूत्र न बोलवुं. वा–अथवा कोण जाणे केम छे केम नथी! जिनागम अति गं नीरार्थ छे, विधि जोता तो तीर्थनो उच्छेद थाय, माटे जेम चाले तेम चलाव्या जवु एम जे बोलवु ते उत्सूत्र, इत्यादिक उत्सूत्र बोलवु नही तथा कोवा–कोप थकी उपलक्षणथी मान माया लोन हास्य नयादिकथी उत्सूत्र न बोलवु जीअ– रे जीव, जइ–जो उसुत्त नासण–उत्सूत्रनुं नाषण एटले कथन विहियं–कर्युं

ता–तो संसार समुद्रनेविषे बुड्डिसि–तुं बुडीश निभ्रंत–निश्चे तवफडाडोव–तपनो फटाटोप एटले आडंबर ते उत्सूत्र बोलवाथकी निरत्थयं–निरर्थक छे, एटले फोकट छे. माटे तपक्रियाए करीने संसारथी तूं छूटवानो नथी ॥ ६५ ॥

अवतरण – पूर्वे गाथामां जेने जिनवचन परिणम्या नथी तेनुं स्वरूप कह्यु, हवे जेने जिनवचन परणम्या छे तेनुं स्वरूप कहेछे·– मूल·– जह जह जिणिंद वयण, सम्मं परिणमइ सुद्ध हिययाणं ॥ तहतह लोअ पवाहे, धम्मं पडिहाइ नड चरियं. ॥ ६६॥ दोहा.– जिम जिम जिनवच सुमनने, प्रगटे सम्यक् प्रकार॥ तिम तिम लोक प्रवाहमे, धर्म जाति नट चार ॥ ६६ ॥ व्याख्याः– जह जह–जेम जेम सुद्ध हिययाण- निर्मल हृदयवत पुरुषोने जिणिदवयण–जिनेंद्रना वचन सम्मं–सम्यक् प्रकारे परिणमइ–परिणमे छे एटले अत्यंत रुचेछे, तह तह–तेम तेम लोअपवाहे– लोक प्रवाहनेविषे धम्मं– जे आपमतिनो धर्म छे ते नडचरियं– नट चरित एटले नटना खेलनी परे तेने पडिहाइ– प्रतिभासेछे एटले देखाय छे, तेवा पुरुषोने सम्यक्त्व थाय. ॥ ६६ ॥

अवतरणः– पूर्वे गाथामां जिनेंद्र वचन आश्री कह्यु, हवे तेनुंज दृढपणे कथन करेछे – मूल – जाण जिणिदो निवसइ, सम्मं हिययम्मि सुद्धनाणेण ॥ ताण तिणं व विरायइ, समिछ धम्मो जणो सयलो ॥ ६७ ॥ दोहा – शुद्ध ज्ञान कर जसु हिये, सम्यक वशो जिनेश ॥ तसु आगे तृण जिम दिपे, मिथ्या धर्मि अशेष ॥ ६७ ॥ व्याख्याः– जाण हिययम्मि- जेना हृदयनेविषे जिणिदो–जिनेंद्र तीर्थनाथ सम्मं–सम्यक् प्रकारे सुद्ध नाणेणं–निर्मल ज्ञाने करीने निवसइ– वसे छे , ताण–तेने समिछ धम्मो–मिथ्या धर्म सहित एवा जे सयलो–सकल जणो-लोक छे ते तिणव–तृणोनी परे आकिंचित्कर एटले कांई हित बल करवा समर्थ नथी एवो ते मिथ्यात्वी लोक विरायइ–विराजे छे, भासेछे एटले देखायछे ॥६७॥

अवतरण.– पूर्वे गाथामा जेना हृदयमां सम्यक् प्रकारे जिनेंद्र देव वशेछे ते जिनधर्मथकी चलायमान थाय नही, एम देखाड्युं. हवे तेथी जे इतर छे तेनुं स्वरूप कहेछेः– मूल – लोअ पवाह समीरण, उदंम पयंम चंम लहरीए ॥ दढ सम्मत्त महाबल, रहिआ गुरुआविहल्लंति ॥ ६८ ॥ दोहाः– लोक प्रवाह पवन उदंम, चम प्रचम लहरेय ॥ दढ समकित अति बलविना, गुरुआ पण हल्लेय ॥ ६८ ॥ व्याख्या.– लोअ पवाह समीरण–लोक प्रवाहरूप पवन, तेने उदंड–आगम विरुद्ध अछता वचनरूप अति ऊंची एवी पयम–प्रचंड दुःखदायक क्रोध

ना वचनरूप माहोमाहे मलेली श्रेणी जे चम- रोइ अतिशय नयकारी एवी ल हरीए-लहेरीयोएकरी प्रेरया ठतां एवा, वली दढसम्मत्त महाबल रहिआ-दृढ स म्यक्त्वरूप महा बलेकरीने मोटा पराक्रमे करीने रहितठता एवा गुरुआवि- बा ह्य गुणेकरीने मोटा पण ते हल्लति-हालेठे एटले मोलम मोला थायठे श्रमुक एम कहेठे, अने अमुक एम कहेठे तेमां कोनुं खरुं मानिये ! आनुं के पहेलानुं ! शुं करिये ! एवी रीते मोलम मोला थायठे पण तत्व निश्चे करी शकतो नथी ॥६८॥

अवतरण:- पूर्वे गाथामा लोक प्रवाहरूप पवननी लहेरोएकरी जे प्रेरया होयठे ते अज्ञानी होयठे, एम कह्यु, हवे तेनुं स्वरुप कहेठे.- मूल - जिण मय लव हीलाहे, जं डुखं पाउणति अन्नाणी, नाणीण संजरित्ता, जएण हियय थरहरइ ॥ ६ए ॥ दोहा - जिनमतनी निंदा करी, जो अज्ञानि डुख पाय ॥ ते सान्नरि ज्ञानी तणो, नय करि कपे काय ॥ ६ए ॥ व्याख्या -जिणमय लवहीलाए-स्या द्वादनी एक लवमात्र हीलनाए करी अन्नाणी-अज्ञानी जीव ज डुरकं-जे डुःखप्र ते पाउणति-पामे ठे, ते डुखने संजरित्ता-संजारीने अथवा त संजरित्ता- ते डुख ने समरीने नाणीण-ज्ञानवान पुरुषोनुं जएण-नयेकरीने हियय-हृदय थरहरइ- थर थर कंपायमान थाय ठे, एटले ते अज्ञानी जीवनी उपर अनुकंपा आवे ठे अने पोते पण जिनमतनी हीलना थकी घणुंज बीहे ठे ए नाव ॥ ६ए ॥

अवतरण - पूर्वे गाथामा जिनमतनी हीलना करवाथी अज्ञानी जीव जे डुःखने पामे ठे, ते डुःखने याद करीने ज्ञानी पुरुषनुं हृदय नये करी थर थर कंपे ठे एम कह्यु, पण ते ज्ञानीजीव अज्ञानीना दोषने जोता नथी ते कहे ठे -मूल -रे जीव अना णीण, मिछदिहीण नियसि किं दोसे ॥ अप्पावि किं न याणेसि, नच्चंइ कठेण सम्मत्तं ॥ ७० ॥ दोहा - मिथ्यादृष्टि अज्ञानिनो, दोष जुवे शु योध ॥ नहि जा णे शु आपने, कष्टे समकित बोध ॥७०॥ व्याख्या:-रे जीव-हे नव्य जीव, अन्ना णीण मिछदिठीण-अज्ञानी जे मिथ्यादृष्टि ठे तेउना दोसे-जिनमतनी हीलनादिक दोषने किं- शुं नियसि-तु देखे ठे, तु ताहरी अप्पावि- आत्माने पण किं न या णेसि-शुं नथी जाणतो, जे अनेक वार डव्य थकी जिनमत आश्रीने जिनमतनी हीलना कीधी तेथी मे घणा डुःख पाम्या, एम शु तु नथी जाणतो? अर्थात् तु जाणे ठे, वली नच्चंइ-वीतरागना वचनथी जणाय ठे, जे सम्मत्तं-सम्यक्त्व दर्शन ते कठेण-कष्टे करी अनेकगमे उपदेश देवाथी पमाय अथवा जणाय ठे; पण स हेजे पमाय अथवा जणाय नही ॥ ७० ॥

अवतरण:— पूर्व गाथामां कष्टे करीने सम्यक्त्व जणाय छे एम कह्यु, त्यारे शिष्ये आशंका करी के, गोत्र देवतादिक तथा पासत्थादिकने पूजतां लोकवृत्तिए करीने कोईएक खशी जाय तेमां शुं दोष छे? इछा तो शुद्ध जिनधर्मनी छे? एनो उत्तर कहेछे:— मूलः— मिछत्त मायरंतवि, जे इह वछंति सुद्ध जिण धम्मं ॥ तेग छावि जरेणं, भुत्तुं इछंति खीराई ॥ ७१ ॥ दोहा — आचरता मिथ्यात्वने, जे चाहत जिन धर्म ॥ ज्वर पीडित ते पय पिवा, वांछे विकल विशर्म ॥७१॥ व्याख्याः— मिछत्त मायरतवि—कुदेव, कुगुरु, कुधर्म सेवनरूप मिथ्यात्वने आचरतां अथवा सेवतां लोकनी वृत्तिए करी कोईएक दिवसे पण जे—जे पुरुष इह—आ जगतनेविषे सुद्ध जिणधम्मं—निर्मल जिन धर्मने वछंति—वांछे छे, ते पुरुष जरेण—ज्वरे करीने एटले तापे करीने घछावि—ग्रस्त एटले पीडाता थका पण खीराइ—क्षीरादिकप्रते भुत्तुं—खावाने इछंति—इछेछे, एवा न्याय करेछे. एटले जे मिथ्यात्वप्रते सेवतो थको जिनधर्मनी इछा करेछे ते करवु तेनुं सर्व नव दुःखने अर्थे छे. ॥ ७१ ॥

अवतरण:— पूर्व गाथामां मिथ्यात्वने आचरतो छतो पण जे जिनधर्म करवानी इछा करेछे, एम कह्यु, हवे तेना दोष देखाडता छतां दृष्टांत सहित दार्ष्टांत कहेछे — मूल.— जह केइ सुकुल वहुणो, सीलं मयलंति लिंति कुल नामं ॥ मिछत्त मायरंतवि, वहंति तह सुगुरु केरत्तं. ॥ ७२ ॥ दोहा.— जिम केईक सुकुल वधू, व्रत हत लियकुल नाम ॥ आचरता मिथ्यात्व तिम, वहे सुगुरु अनुगाम.॥ ॥ ७२ ॥ व्याख्या.— जह—जेम केई—कोईएक सुकुल वहुणो—सारा कुलमां उत्पन्न थएली स्त्रीओ सीलं मयलंति— अंग उपाग गोपीने राखवां, पर पुरुषोनी साथें वातो न करवी, अति उद्भट वेष न पहेरवो, नीची दृष्टि करी चालवु, कामविकारनी कथा न करवी, घरने बारणे ऊभा न रहेवुं, बारी गोखलानी बाहर मुख कहाडीने न जोवु, लाज तथा शरमने मूकीने वातनो विस्तार न करवो. आलस न मोडवुं, जाणी जोईने बगासां न नाखवां, कडकडां न कहाडवां, पर पुरुषने प्रेम सहित न जोवु, कार्यविना कोई सगावालाने घेर पण न जावु, इत्यादिक शील आचारने मलीन करती छती लिंतिकुलनाम—सेनापति, गाथापति श्रेष्टी इत्यादि मोटाना कुलनुं नाम लेती एटले अमे मोटा कुलनी छेए, एम कहेती मोटा कुलने कलंकित करेछे तह—तेम मिछत्त मायरंतवि—कुदेव तथा कुगुरुसेवा, अने उत्सूत्रप्ररूपणादिक मिथ्यात्वने आचरतां छतां पण नामसाधु अने नामश्रावक ते सुगुरु केरत्तं—सौधर्मा स्वामी प्रमुख सुगुरुना केडवापणाप्रते वहंति— वहेछे एटले धारण

करेछे. अर्थात् पोते उत्सूत्री अनाचारी छतां संविज्ञ गीतार्थ सुगुरुना केडवापणा धारेछे ते उलटुं आचारवंत गुरुने उत्सूत्री अनाचारी लोकमांहे प्रसिद्ध करे पण ते बापडाने अज्ञानने वशे खबर पडती नथी ॥ ३२ ॥

अवतरण – पूर्व गाथामा मिथ्यात्वनु आचरण करता घणा दोष लागेछे एम कह्यु, हवे उत्सूत्रविषे वात कहेछे – मूल – उस्सुत्त मायरतवि, ठवंति अप्पं सुसाव गत्तम्मि ॥ तेरुद्दरोरघछवि, तुलंति सरिसं धनढेहिं ॥ ३३ ॥ दोहा – आचरता उत्सूत्र जे, माने आपसुमन्न ॥ रांक दरिद्र दु खि ते, तुले साथ सुधनन्न॥३३॥ व्याख्या – उस्सुत्त मायरतवि – अविधिए जिनपूजा सामायक पडिकमणादिक उत्सूत्र प्रते आचरता छता पण एटले सेवता थका अने जे सुसावगत्तम्मि – सुश्रावकपणनेविषे अप्पं – पोताने ठवंति – स्थापेछे ते – ते पुरुष शु करेछे ? रुद्दरोरगछवि – रौद्र रोरेकरी एटले अतिशय दारिद्रे करी ग्रस्तछता पण एटले पीड्या थका अने धणढेहिं सरिसं – धनाढ्यनी साथे एटले महाधनवाननी साथे तुलंति – तुलना करेछे, एटले पोतें दारीद्री छता धनाढ्यनीसाथे बरोबरीपणुं करेछे. ॥ ३३ ॥

अवतरण – पूर्व गाथामा उत्सूत्र बोले ते मूढ कहेवाय एम कह्यु, हवे जे मूढ होय ते न्याय जाणे नही ते कहेछे – मूल – किवि कुल कमम्मिरत्तो, किवि रत्ता सुद्ध जिणवर मयम्मि ॥ इय अंतरम्मि पिच्छह, मूढा नायं न जाणंति ॥ ३४ ॥ दोहा – केइ कुलाचारे रता, केइ रत जिन मतमांहि ॥ जुओ भ्रात इति अंतरे, जसे न्याय सठ नाहि ॥ ३४ ॥ व्याख्या – किवि – केटलाएक पुरुष छे ते कुलकम्ममि – कुल कर्मनेविषे एटले सत्य असत्य विचार रहित, अविधि मल कलंक सहित, लोक प्रवाहनेविषे रत्ता – रक्त छे एटले आसक्त छे, अने किवि – केटलाएक पुरुषो छे ते सुद्ध जिणवरमयम्मि – निर्मल अविधि मल कलंकरहित अनेकांत स्याद्वाद जिनवर मतनेविषे रत्ता – रक्त छे एटले सावधान छे, इय – ए प्रकारे अंतरम्मि – पुरुषोमां प्रगट अंतर छता कुलक्रम मिथ्यात्वनेविषे जे रक्त ते अविवेकी, अने शुद्ध जिनमतनेविषे जे रक्त ते विवेकी, ए प्रकारे पुरुषोमां प्रगट अतर छे ते मूढा – मूढ ज्ञान विकल प्राणी नायं – न्यायने नयाणंति – नथी जाणता एटले कुलक्रम छे ते ससारनो हेतु छे, शुद्ध जिनेंद्रमत छे ते मोक्षनो हेतु छे ए खरे खरो जे न्याय तेने नथी जाणता. पिच्छ – हे श्रोताओ तमे जुओ ए केटली आश्चर्यनी वात छे ! ॥ ३४ ॥

अवतरण – पूर्व गाथामा कह्यो जे न्याय ने विपरीतपणे जाणीने कोई एक

जीव मिथ्या दृष्टि पाखंमीउनो संगमात्र मूके पण तेऐ कहेलो धर्म मूकी दिये नही ते अयुक्तपणुं ढे एम कहे ढे.— मूल.— संगोवि जाण अहिउ, तेसिं धम्माइ जे पकुव्वंति ॥ मुत्तूण चोर संगं, करति ते चोरियं पावा ॥ ७५ ॥ दोहा·— अहितकारि जसु संग पण, जे तसु धर्म करेय ॥ चोर संग तजि चोरिने, करै पापि नर तेय ॥ ७५ ॥ व्याख्याः— जाण—जे मिथ्यादृष्टि पाषंमीउनो संगोवि—संगपण अहिओ—अहितकारी ढे, जन्म जरा मरणादिक दुःखने देवा वालो ढे, तेसिं—ते मिथ्यादृष्टि पाखंमी लोकोनुं कथन करेलुं थापेलुं जे धम्माइ—पाप नवमी चामुंडा कालिकादिक पूजना प्रमुख धर्म तेने जे— जे पुरुष पकुव्वंति—अतिशय करीने करे ढे ते पावा—पापी जुओ शुं न्याय करे ढे! चोरसंगं—चोरना संगने मुत्तूण—मूकीने एटले सूली आरोपण, कान नाशिकादिक ढेदन जेमां काईक संशय हतो ते चोरनो संग मुकीने तेना संगथी संतोष न पामीने पाप मति ते चोरीय—चोरी पणा प्रते करति— करेढे; एनो नाव—जेमां शूली देवानो अथवा कान नाशिकादिक ढेदन करवानो काई पण संशय नथी एवी जे चोरी तेने करे ढे जुवो ए केटलो अज्ञान ढे.

अवतरण —पूर्व गाथामां मिथ्यात्वीना धर्मनी स्थापना करे ते पापी कहेवाय एम कह्यु, हवे तेज वात विशेषे करी कहे ढे.— मूल.— जड पसुमहिस लरका, पव्वं होमंति पाव नवमीए ॥ पूअंति तपि सड्ढा, हा हीला वीयरायस्स ॥ ७६ ॥ दोहाः— पातक नवमी पर्वमें, पसु मरता जसु पास ॥ तेने पूजित श्राद्ध जन, हा जिन हेला हास ॥ ७६ ॥ व्याख्याः— जड—जे स्थानकनेविषे तथा जे चामुंडा कालिका ज्वाला प्रमुखनी आगल पाप नवमीए पव्वं—पाप नवमी शुक्ल आसु चैत्र संबंधी नवमी तिथी प्रमुख जे पर्व तेनेविषे पसुमहिस लरका लाखो गमे पशु ढाग बोकडा महीस पामा उपलक्षणथी मनुष्य सूकरादिक होमंति—होमाया जाय ढे, मराया जाय ढे, रुधिरना कर्दम थाय ढे तंपि—ते चामुंमादिक देवीओप्रते सड्ढा—कुल क्रमथी चालतुं आवेलुं ग्रहण कर्युं ढे जिनमत जेणे, ते श्रावक लोक पूअंति—पूजे ढे, हाथ जोडे ढे, मस्तक नमावे ढे, नैवेद्यादिक चडावे ढे, जे श्रावक नाम धरावीने एम करे ढे ते हा—इति खेदे करी वीयरायस्स—वीतराग देवनी हीला—हीलना एटले निंदा करे अथवा करावे ढे, मिथ्यात्वी लोक एम बोले ढे जे लगारेक रुधिर थकी पण जे मरे, एक कीडाना मरवाथी बीहे, एवा श्रावक लोको आवी आवीने अमारी चामुंमा देवीने पूजे ढे माटे जैनना देवथकी अमारी चामुंडादि

क देवीओ अधिक छे, इत्यादिक हीलना वचन मिथ्यात्वी लोक बोले छे, तेना क रावचा वाला ते श्रावको जाणवा ॥ ७६ ॥

अवतरण.– पूर्व गाथामां हीलनाविषे कह्यु; हीलना छे ते मिथ्यात्व छे, हवे जे मिथ्यात्वनुं आरोपण करेछे, तेणे शु कर्युं ते कहेछेः– मूल·– जो गिह कुडुंब सामी, संतो मिछत्त रोवण कुणइ ॥ तेण सयलोवि वसो, पक्खित्तो नव समुद्दम्मि ॥ ७७ ॥ दोहा – गृहकुटब स्वामी छतो, जे थापे मिथ्यात ॥ नाख्यो तेणे वश भव, भव समुद्रमें भ्रात ॥ ७७ ॥ व्याख्या.– जो–जे गिह कुडुंब सामी संतो–गृह एटले नारी, कुटुंब ते स्वजनादिक एहनो स्वामी अथवा ऊपरी छता मिछत्त रोवण– मिथ्यात्वनुं आरोपण एटले स्थापन कुणइ–करे छे; तेण–ते पुरुषे शुं कर्युं! सयलोवि वसो–सकल वस पण नव समुद्दम्मि–संसार समुद्रनेविषे पक्खित्तो प्रक्षेप्यो एटले नाखी दीधो सिद्धांतमा श्रावकने मिथ्यात्वनो त्रिविध त्रिविध त्याग करवानु कह्यु छे ए हेतु माटे घर कुटुंबनो स्वामी छता जे श्रावक ते मिथ्यात्वनुं अरोपण अथवा स्थापन केम करे! उपलक्षणथी कोईना घेरमां केम करवा दे! अपितु करे पण नही अने कोईने करवा पण दिये नही ॥ ७७ ॥

अवतरण – पूर्व गाथामां जे मिथ्यात्वनुं आरोपण करे ते पोताने तथा सकल वशने नव समुद्रमा नाखे छे एम देखाडयुं, हवे जे मिथ्यात्वने सेवे छे तेने सम्यक्त्व होतु नथी ते कहे छे – मूल – कुंम चउत्थी नवमी, बारस्सी पिंम दाण पमुहाइं ॥ मिछत्त नाव गाई, कुणंति तेसिं न सम्मत्तं ॥ ७८ ॥ दोहा – बारस नवमी चौथ मृत, पिंम प्रमुख मिथ्यात ॥ जे नर सेवे तेहने, नहि समकित अवदात ॥ ७८ ॥ व्याख्या – कुड चउत्थी– गणेश चोथ, करवा चोथ, नवमी–शुक्ल चैत्त आशोनी पाप नवमी बारस्सी– वछ बारस, पिंम दाण पमुहाइ– मुएला पित्रादिकने भोजननुं देवु इत्यादिक मिछत्त भावगाइ– मिथ्यात्वनो भाव रह्यो छे जेमा, एवा जे लौकिक देवगत तथा गुरुगत मिथ्यात्व, अने लोकोत्तर देवगत तथा गुरुगत मिथ्यात्व, एमज लौकिक पर्वगत मिथ्यात्व, तथा लोकोत्तर पर्वगत मिथ्यात्व जाणवा ते मिथ्यात्वने जे पुरुष कुणंति–करे छे एटले सेवे छे तेसिं– ते पुरुषोने न सम्मत्तं–सम्यक्त्व अथवा जिनोक्त तत्वनुं श्रद्धान नथी ॥ ७८ ॥

अवतरण – पूर्व गाथामां जे मिथ्यात्वने सेवे तेने सम्यक्त्वनी प्राप्ति थाय नही एम कह्यु, हवे ते मिथ्यात्वनेविषे पडेला जे कुटुंब तेने कोई एक धीर पुरुष कहाडेपणछे ते सर्वना हितने अर्थे दृष्टांतसहित कहेछे –मूल –जह अइरुलंमि खु

त्तं, सगमं कढ्ढंति केवि धुरि धवला ॥ तह मिच्छाउ कुडुंबं, इह विरला केवि कढ्ढंति ॥ ७९ ॥ दोहाः– जिम कादव खूतो शकट, काढे केइक धोरि ॥ तिम कुटुंब मिथ्यात्वथी, काढे केइ सजोर ॥ ७९ ॥ व्याख्याः– जह– जेम केवि केटलाएक धुरिधवला– प्रधान वृषभ छे ते अइकल्लम्मिखुत्तं– अति कादवमां खूतेलुं एवुं जे शगमं– शकट एटले गाडुं तेने कढ्ढंति- कहाडेछे : तह– तेम इह– आ दूसम आरानेविषे केविविरला– केटलाएक विरला हलुकर्मी आसन्न सिद्धि कदाग्रह रहित पुरुष छे ते मिच्छाओ– पूर्वोक्त मिथ्यात्वरूप कादवमांथी कडुबं– पोताना पुत्र कलत्रादिक कुटंब परिवारने कढ्ढंति–कहाडेछे, अने जिनभाषित धर्मनेविषे जोडेछे पण सर्व प्राणी जोडवा समर्थ नथी. ॥ ७९ ॥

अवतरण.– पूर्व गाथामां मिथ्यात्वमां पडेला जे कुटुंब तेने कोई विरला पुरुष कहाडे पण बधा कहाडी शके नही एम कह्युं, पण जिनदेवने जोवाथकी सर्व जीव सम्यक्त्व पामशे ते शंका निवारण करवाने वास्ते कहेछेः– मूल – जह वद्दलेण सूर, महियल पयडंपि नेय पिछंति ॥ मिछत्तस्स य उदए, तहेव न नियंति जिण देव ॥ ८० ॥ दोहा– जैसे महितल प्रगट भी, घन युत रवि न दिखाय ॥ तैसे उदय मिथ्यात्वके, नहि दीसत जिनराय ॥ ८० ॥ व्याख्याः– महियल पयडंपि सूरं–घट पटादिक वस्तु देखाडवाथकी महीतल पृथ्वीमंमलनेविषे प्रगट एवो जे सूर्य, तेने पण जह–जेम वद्दलेण–वादलाए करीने एटले मेघ घटाए करीने लोक नेयपिछंति–नथी देखता तहेव–तेमज मिच्छत्तस्सय उदए–पूर्वोक्त मिथ्यात्वनो उदय थयो छतां जिणदेव–जिनदेव प्रत्ये लोक न नियंति–नथी देखता, च शब्दथी सुगुरु तथा सुधर्म प्रत्ये पण नथी देखता, जेम वादलाएकरीने सूर्यनो बिंब देखाय नही, तेम मिथ्यात्वना उदयथी सुदेव सुगुरु देखाय नही वादल खशी जाय त्यारे सूर्य देखायछे, तेम मिथ्यात्व टल्याथी जिनदर्शन थाय छे. एटले तत्त्वथकी जिनदेवनुं स्वरूप उलखाय ए भाव, पण बीजी रीते नही एम जाणवुं ८०

अवतरण – हवे मिथ्यात्वनो उदय थयाथी जीव मिथ्यात्वनेविषे आसक्त थायछे, अने गुणी पुरुषनेविषे मछर करे छे, एवा जीव थायज नही तो सारुं ते कहेछे– मूल– कि सोपि जणणि जाओ, जाणो जणणीइ किं गओ विद्धिं ॥ जइ मिछरओ जाओ, गुणेसु तह मछरं वहइ ॥ ८१ ॥ दोहा – किम ते जायो जणनिये, जायो तो किं पुष्ट ॥ मिथ्या मगन थयो जदी, तिम गुण मछरि दुष्ट ॥ ॥ ८१ ॥ व्याख्या.– किं–शुं सो–ते अपिनिश्चे जणणिजाओ– माताए जन्म्यो,

जणणीऽ–जो माता ए जाओ–जन्म्यो तो ते विढ्ढिं–वृद्धिने कि–केम गओ–पा
म्यो! एटले ते पुष्ट केम थयो! एम केम कहेवुं पडयुं! जइ–जो मिच्छरओ–मि
थ्यात्वनेविषे रत एटले आसक्त एहवो जाओ–थयो वली जो गुणेसु–सम्यक्
ज्ञान दर्शन चारित्रादि गुणे युक्त जे पुरुष तेनेविषे तह–तथा समुच्चय अर्थनेविषे
मच्छर–मच्छर इर्षा एटले द्वेषभाव प्रत्ये वहइ–वहेछे, करेछे एटला वास्ते हे शिष्य,
कहेवु पडयुं जे ते माताए केम जन्म्यो! अने जो माताए जन्म्यो तो केम ते वृ
द्धिने पाम्यो! केमके पूर्वोक्त जे लोकिक लोकोत्तर मिथ्यात्व, तेनेविषे पोते प्रवृ
त्ति करवाथी परने प्रवृत्ति कराव्याथी अने गुणी पुरुषनेविषे द्वेषबुद्धि करवाथी प्राए
अनंत भवभ्रमण छे. वली कुपुत्रनी माता पण प्राए सारी होती नथी, कदाच
कोई सारी होय तो कुपुत्रने जोगे माताने मलिनता आवे माटे कुपुत्र न जन्म्योज सारुं.

अवतरण – पूर्व गाथानो अर्थसांभलीने कोई बोल्यो के, देव तथा देवी प्रमु
ख आपणने कोई उपद्रव करे नही माटे मानीए छैए ते शंका दूर करवाने कहेछे'–
मूल'– वेसाण बंदियाणय, माहण डुंबाण जक्खसिरकाण ॥ भत्तानरकठाण, वि
याण जंतिदूरेण ॥ ७२ ॥ दोहा – वेस्या ब्राह्मण भाट डुब, जक्खसिक्ख इन काय॥
भक्ष स्थान स्वजगत छे, विरतीथी अलगाय ॥ ७२ ॥ व्याख्या.– वेसाण–वेस्या
नो बंदियाण–चारण भाटादिक लोकोनो माहण डुंबाण–ब्राह्मण लोकोनो डूंबो
नो, जरक सिरकाण–जक्ष व्यंतर देव शेष गणेशादिकनो एटले मिथ्या दृष्टि देवी
देवताओनो भत्ता–भक्त अथवा सेवक छे तेज तेओनो भरकठाण–भक्षने मागवा
नुं स्थानक छे एटले वेस्या चारण भाटादिक सरिखा जे मिथ्यादृष्टि देव देवीओने
माने अथवा पूजेछे तेओनेज ते आवीने नडेछे अने दुःख दियेछे, ते तेओनीज पाशे
थी भक्ष मागेछे पण विरयाण–विरति पुरुषोथकी दूरेण–दूर जंति–जायछे. एट
ले ते मिथ्यादृष्टि देव देवीना त्यागी छे, वंदन नमस्कारादिक आदर पण कांई
करता नथी तेथकी ते देव देवीउं दूर जायछे. ॥ ७२ ॥

अवतरण – पूर्व गाथामा विरति पुरुषोथकी मिथ्यादृष्टि देवता दूर जायछे एम
कह्यु, माटे विरति पुरुष शुद्ध मार्गनेविषे सुखे चाले ते कहेछे'– मूल – सुद्धे मग्गे
जाया, सुहेण गच्छन्ति सुद्ध मग्गंमि ॥ जे पुण अमग्ग जाया, मग्गे गच्छंति तं चुय्यं ॥
॥ ७३ ॥ दोहा – सुखे सुद्ध मारग चले, थया सुद्ध मग जेय ॥ जात कुमार्गी मा
र्गमे, चाले अचरज तेय ॥ ७३ ॥ व्याख्या – सुद्धे मग्गे जाया–शुद्धमार्गनेविषे उ
त्पन्न थया एटले जे शुद्ध परपराए साधु श्रावकना कुलनेविषे उत्पन्न थया ते

जीव सुद्ध मग्गम्मि—सम्यक् ज्ञान दर्शन चारित्र रूप निर्मल जे मोक्षमार्ग तेनेविषे सुहेण—सुखे सुखे गच्छंति—गमन करेछे. एटले जायछे, एमां कांई आश्चर्य नथी. पुण—वली जे—जे प्राणी अमग्ग जाया—कुमार्गनेविषे उत्पन्न थया ते एटले अन्य दर्शननेविषे तथा उत्सूत्र भाषी उन्मार्गे चालनार जैनाभास नन्हव पासछा ओस न्नादिकना कुलनेविषे उत्पन्न थया ते जीव सुगुरुना मुखनी वाणी सांभलीनें मग्गे—मोक्षमार्गनेविषे गच्छंति—गमन करेछे अथवा जायछे. तं—ते चुज्जं—आश्चर्य छे ॥७३॥

अवतरण·— पूर्व गाथामां कह्यु जे कुमार्गनेविषे उत्पन्न थया ते मोक्षमार्गे चाले ते मोटो आश्चर्य छे. एवुं सांभलीने कोई कहेशेके एमां सुं आश्चर्य छे? ए आशंका दूर करवाने कहेछे.— मूलः— मिछत्त सेवगाणं, विग्घसयाइंपि बिंति नोपावा ॥ विग्घ लवम्मि विपडिए, दढ धम्माण पणच्चंति ॥ ७४ ॥ दोहा·— मिथ्यात्वीके विघन सत, पण बोलत नहि दुष्ट ॥ पडे विघन लव धर्मिके, तो नाचे अघ पुष्ट ॥ ७४ ॥ व्याख्या.— मिछत्त सेवगाण— मिथ्यात्वनुं सेवन करनार, एटले कुदेव कुगुरु मिथ्यादृष्टि देवी देवताना पूजनारने विग्घसयाइंपि—रोग सोग भय कष्ट मरणादिक शेकडा गमे विघ्न थायछे, पण ते शेकडा विघ्नोना समूह प्रत्ये पावा— जे पापी मिथ्यात्वी लोक छे ते नो—नथी बिंति— बोलता अने दढधम्माणं—दृढ धर्मी पुरुषोने विग्घ लवम्मि विपडिए— लवमात्र विघ्न पड्याथी पण एटले लगारेक खास श्वास ज्वरादिक थयाथी पण ते पापी मिथ्यादृष्टि लोक पणच्चंति—अतिशय करी नाचे अथवा कूदेछे, दृढ धर्मी पुरुषोनो अवर्णवाद बोलेछे माटे जे कुमार्गनेविषे उत्पन्न थईने शुद्ध मार्गनेविषे चाले ते मोटो आश्चर्य जाणवो. केम के कुमार्गमां उत्पन्न थईने सुमार्गे चाले एवो संभव थतो नथी ॥ ७४ ॥

अवतरण·— पूर्व गाथामां कह्यु के जे पापी लोक छे ते दृढ धर्मी पुरुषोने लगारेक विघ्न पडे ते जोईने नाचेछे, केमके, तेपोते उन्मार्गनेविषे उत्पन्न थया एवु जाणता नथी ते कहेछे.— मूलः—सम्मत्त संजुआण, विग्घंपि हु होइ उछव सरिछं॥ परमुछवंपि मिछ, न संजुअं अइ महाविग्घ ॥ ७५ ॥ दोहाः— समदृष्टी के विघन पण, उछव सरिखो होय ॥ अति उछव मिथ्यात्व जुत, महा विघ्न भय जोय ॥ ७५ ॥ व्याख्या·— सम्मत्त संजुआणं—सम्यक्त्व सहित पुरुषोने विग्घंपि हु—मरणादिक विघ्न पण निश्चये करी उछव सरिछं—उत्सवना जेवुं होइ—थायछे केमके सम्यक्त्ववान प्राणी आ लोकनेविषे सम संवेगादिक गुणेकरी सदानंदी होयछे ते मरीने पण प्रधान देवगतिने पामेछे. माटे तेने मरणादिक विघ्नपण उत्सववतु

त्यछे; अने जे मिछत्त संजुअ—मिथ्यात्व संयुक्त छे ते परमुछवपि—परम उत्कृष्ट उत्सव छता पण अइ महाविग्घं—अति महा विघ्नभूत छे केमके मिथ्यादृष्टि जीव महा मोह मिथ्यात्व दवानलने योगे संततात्मा होयछे माटे अहीं दुःखी थईने मरीने दुर्गतिनेविषे जायछे एवी रीते परलोकनेविषे पण दुःखी थायछे ते वात उन्मार्गीमां जे उत्पन्न थाय ते जाणता नथी. ॥ ७५ ॥

अवतरण.— पूर्व गाथामा कह्यु के, सम्यक्त्ववान प्राणीने विघ्न पण उत्सवना जेवो थायछे, ते केवी रीते ते कहेछे — मूल — इंदोवि ताण पणमइ, हीलंतो नियय रिद्धि विछार ॥ मरणते वि हु पत्ते, सम्मत्तं जे न छंडंति ॥ ७६ ॥ दोहा.— निज संपतकूं हीलतो, नमे इंद्र पण तास ॥ जे समकित छांडे नही, पडे मरणकी त्रास ॥ ७६ ॥ व्याख्या.— हु—निश्चेकरी मरणतेवि पत्ते—मरणात समय प्राप्त छतां पण एटले कंठगत प्राण थया छतां पण जे—जे पुरुष सम्मत्तं—जिनोक्त तत्व श्रद्धान सम्यक्त्वने न छंडंति—नथी मूकता ताण—ते पुरुषोने इंदोवि—देवेंद्र पण पणमइ—प्रणाम करेछे. ते शुं करतो थको प्रणाम करेछे? नियय रिद्धिविछार—निजक संबंधी एटले पोता संबंधी ऋद्धि समृद्धिनो जे विस्तार तेने हीलंतो—हीलना करतो थको एटले तृण तुल्य मानतो थको प्रणाम करेछे. ॥ ७६ ॥

अवतरण.—पूर्व गाथामां कह्यु के, कंठगत प्राण छता पण सम्यक्त्वनो त्याग करता नथी एहेवु दृढपणुं होवानुं कारण शु छे ते कहेछे.— मूल — छंडंति नियय जीयं, तिणंव मुरकछिणो न उण सम्मं ॥ लप्भइ पुणोवि जीयं, सम्मत्तं हारियं कत्तो ॥ ७७ ॥ दोहा — मोक्षार्थी तृण जिम तजे, निज जीवित न समत्त ॥ जीवित वलि पण पामिये, हर्युं न समकित कत्त ॥ ७७ ॥ व्याख्या.— मुरकछिणो—जे मोक्षनो अर्थी छे ते, नियय जीयं—पोताना जीवितने एटले आयु तथा प्राणने तिणंव—तृणनी पठे छंडंति—छांडेछे अथवा त्यागी दियेछे उण—पुन. एटले वली सम्म—सम्यक्त्वने न—नथी मूकता शु जाणीने नथी मूकता? जीयं—जीवित छे ते तो पुणोवि—वली पण लप्भइ—प्राप्त थशे, केमके, 'ज्या सुधी मोक्ष नथी' त्या सुधी जीवित तो जन्म जन्मनेविषे छे, पण सम्मत्त हारियं—सम्यक्त्व रत्न हारेलुं कत्तो—क्याथी प्राप्त थाय केमके सम्यक्त्व रत्न हारेलुं फरीने प्राप्त थवु अति दुर्लभ छे एम श्रीवीतरागे कह्यु छे. माटे पोताना जीवितनो त्याग करेछे पण मोक्षनो अर्थी सम्यक्त्वनो त्याग करतो नथी ॥ ७७ ॥

अवतरण.— पूर्व गाथामा सम्यक्त्व हारेलुं फरी प्राप्त थवु दुर्लभ कह्यु ते तो

ठीक पण ते सम्यक्त्व वडे करीने शुं धनवान नही थाय? ए शंका दूर करवाने कहेछे.— मूल — गयविहवावि सविहवा, सहिया सम्मत्त रयण राएण ॥ सम्मत्त रयण रहिया, संतेविधणे दरिद्दत्ति ॥ ८८ ॥ दोहाः— विभव रहित पण विभव जुत, समकित रत्न समेत ॥ समकित रहित छते धने, दारिद्री वनप्रेत ॥ ८८ ॥ व्याख्याः— सम्मत्त रयण राएणः— सम्यक्त्वरूप रत्न राज एटले सम्यक्त्वरूप जे चिंतामणि रत्न तेणे करीने सहिया सहित जे पुरुष ते गयविहवावि—गतविभव थई जाय. धन संपदा रहित थई जाय तो पण सविहवा—सहित विभव कहिये एटले धनसंपदाए करी सहित कहिये. केमके, सम्यक्त्वरूप चिंतामणि रत्न जे भाव लक्ष्मी, तेनी पाशे धनधान्यादि बाह्य लक्ष्मी शा हिशावमां छे! कांई पण हिसाबमां नथी. सम्यक्त्व रत्न मोक्ष सुखनो देनार छे अने बाह्य लक्ष्मी जेछे तेतो सम्यक्त्वविना पुरुषने नरकादिकनी देनार छे. माटे एम कह्युं, अने सम्मत्त रयण रहिया—सम्यक्त्व रत्न रहित जे पुरुष छे एटले जेनी पाशे सम्यक्त्वरूप रत्न नथी ते पुरुष संतेवि धणे—धन छतां पण दरिद्री छे एटले निर्धन छे. ॥ ८८ ॥

अवतरणः— पूर्व गाथामां सम्यक्त्वनुं विशेषपणुं देखाड्युं माटेज सम्यक्त्व शुद्धिना अवसरे कोई धननी कोटी आपे तोपण सम्यक्त्ववान श्रावक ते अवसरथी चूके नही; ते कहेछे.— मूलः— जिण पूअण पत्थावे, जइ कुवि सड्ढाण देइ धण कोडिं॥ मूत्तूण त असारं, सार विरअंति जिण पूअं ॥ ८९ ॥ दोहाः— पूजा अवसर श्राद्धकूं, कोइ दिए धन कोडि ॥ ते असार तजि सार जिन, पूजा रचै नि चोडि ॥ ८९ ॥ व्याख्याः— जिण पूअण पत्थावे— जिन पूजा करवाना प्रस्तावे एटले अवसरे सड्ढाण— सम्यक्त्ववान श्रावक लोको प्रत्ये जइ—जो कुवि—कोई इंद्र नरेंद्र धनवान पुरुष धण कोडिं—धननी कोटीने देइ— दिए अथवा आपे तं—ते असारं—असार अथिर धननी कोटीने मुत्तूण—मूकीने सारं—सार प्रधान एवी जे जिण पूअं—जिनराजनी पूजा तेने विरअंति—विशेष पणे विधि पूर्वक रचे एटले करे.॥८९॥

अवतरणः— पूर्व गाथामां जिन पूजा जे छे ते सार छे एम कह्युं, पण विधि पूर्वक जिनपूजा सार जाणवी अहीं शिष्य आशंका करेछे के, अविधिए केम सार नही? ते शंका दूर करवाने कहेछे — मूल.— तित्थयराणं पूआ, सम्मत्त गुणाण कारिणी भणिया ॥ साविय मिछत्तयरी, जिण समये देसिया पूआ ॥ ९० ॥ दोहाः— दर्शनादि गुण कारिणी, कहि जिनवर पूजाय ॥ वलि मिथ्यात्व करी कही, सा पूजा जिनराय ॥ ९० ॥ व्याख्या.— तित्थयराणं—तीर्थंकर एटले अरिहंतो

नी पूआ–जल पुष्प चंदन धूप दीपादिरूप विधिपूर्वक पूजा ते सम्मत्त गुणाण– सम्यक्त्व ज्ञानादिक गुणनी कारिणी– करवा वाली तथा सम्यक्त्व ज्ञानादिक गुण प्रगट करवाने कारणभूत नणिआ–जिनागममा कही छे सावि य– वली तेप ण पूआ– तीर्थंकरनी पुष्प चंदनादिरूप अविधि पूर्वक पूजा ते मिच्छत्तयरि–मिथ्यात्वनी करनारी जिण समये–जिन आगमनेविषे देखिआ–देखाभी छे. एम जाणीने अहो नइ, तीर्थंकरनी विधिपूर्वकज पूजा करवी श्रेय छे ॥ ९० ॥

अवतरण –पूर्व गाथामां जे तत्वने जाणनार होयछे ते विधिपूर्वक जिनपूजा करे एम देखाड्युं, पण एवी रीते तत्वने जाणनार कोण होय छे ते कहेछेः– मूत्र – जं जं जिण आणाए, तं चिय मन्नइ न मन्नए सेसं ॥ जाणइ लोयपवाहे, न हु तत्तं सो अ तत्तविऊ ॥ ९१ ॥ दोहा – जो जो जिन आज्ञा सहित, तेहिज माने जोय ॥ शेष न माने तत्व नह, लोकिके विद्र सोय ॥ ९१ ॥ व्याख्या – जं जं जिण आणाए–जे जे वचन जिन आज्ञाए करीने छे, तं चिय–ते वचननेज मन्नइ–जे पुरुष मानेछे सेसं–ते टाली शेष जिन आज्ञा विरुद्ध जे वचन तेने न मन्नए– नथी मानता वली जे हु–निश्चे लोयपवाहे– लोक प्रवाहनेविषे तत्तं–तत्व मोक्ष साधनरूप सार पदार्थ कांई पण न–नथी जाणइ–जाणता सो–ते पुरुष तत्तविऊ–तत्वज्ञानी जाणवो पण एथी बीजो कोई तत्वनो जाणनथी॥९१॥

अवतरण – पूर्व गाथामां कह्या जे अर्थ, ते प्रगट करवाने अर्थे उपनय सहित निगमन करतां छता एटले समाप्ति करता छता कहे छे – मूल – जिण आणाए धम्मो, आणा रहिआण फुडं अहम्मुत्ति ॥ इय मुणिऊणय तत्तं, जिण आणाए कुणहु धम्मं ॥ ९२ ॥ दोहा – आणा रहित अधर्म कुट, धर्म जिनाज्ञा तार ॥ एह तत्व जाणी करो, धर्म जिनाज्ञा सार ॥ ९२ ॥ व्याख्या – जिण आणाए– जिन आज्ञाए करीने धम्मो– क्षमा दयादिकरूप धर्म छे; आणा रहिआण– जिण आज्ञाए करी रहित जे पुरुष, तेने फुडं– प्रगटपणे अहम्मुत्ति– हिंसाक्रूव प्रकोपादिरूप अधर्म पाप व्यापार छे, इति– पद समाप्तिने अर्थे, इय– ए प्रकारे तत्तं– तत्वने एटले धर्मना स्वरूप अने अधर्मना स्वरूप एटले धर्म अधर्म बन्नेना स्वरूप प्रते मुणिऊण– जाणीने हे नइ, जिण आणाए– जिन आज्ञाए करीने सहित धम्म– क्षमा दयादिकरूप धर्म प्रत्ये कुणहु– तमे करो ॥ ९२ ॥

अवतरण – पूर्व गाथामां जिन आज्ञाएकरी धर्म करवो एम कह्यु, हवे जे तत्वज्ञानी सामग्री छता पण तत्वने नथी सांभलता, नथी जाणवानो उद्यम करता

नेने दोष देखाडतां बतां कहेछेः— मूलः— साहीणे गुरु जोगे, जे नहु निसुणंति सुद्ध धम्मत्थं ॥ ते डुठ धिठ चित्ता, अह सुहमा नवनय विहूणा ॥ए३॥ दोहाः— नवनय रहित सुनट तथा, डुष्ट धीठ नर तेय ॥ बते सुगुरु स्वाधीन जे. शुद्ध धर्म न सुणेय ॥ ए३ ॥ व्याख्या — साहीणे—स्वाधीन पणुं बतां गुरुजोगे—शुद्ध धर्मोपदेशक गुरुनो योग समागम बतां जे—जे पुरुष सुद्ध धम्मत्थं—शुद्ध धर्मार्थप्रते एटले विषय कषाय मलरहित सम्यक् ज्ञान क्रियारूप धर्म परमार्थने हु—निश्चे न नथी, निसुणति—सांनलता. ते—ते पुरुष केवा छे ? डुठधिठ चित्ता—डुष्ट धीठ चित्तवाला जाणवा एटले रागद्वेष मिथ्यात्व कदाग्रह सहित चित्त ते डुष्ट चित्त कहिये, अने वारंवार कहिये तोपण कुचाल ठोडे नही ते धीठपणुं; ते धीठपणाए करीने सहित चित्त होय ते धीठचित्त कहिये एवा चित्तवाला अह—अथवा ते केवा जाणवा ? नवनय विहूणा—संसार भ्रमणरूप संग्रामना नयथकी विहूणा—रहित एवा सुहडा—सुनट एटले योधा जाणवा ; घणुं शुं कहिये ! दश दृष्टांते दोहेलुं एवुं जे मनुष्यपणुं ते पामीने वली स्वाधीनपणुं पामीने वली तत्वज्ञान प्रकाशिक सदगुरुनो योग पामीने श्रीवीतराग नाषित निर्मल धर्मार्थने सांनालता नथी अने जे सांनलेछे तेनी उपर डुष्टनाव करेछे. माटेज कह्युं के ते नवनय रहित एवा सुनट योधाछे.

अवतरणः— हवे गुरु उपदेश सांनल्याथी शुं गुण थाय छे ते कहेछे.—मूलः—सुद्ध कुल धम्म जाइवि, गुणिणो न रमंति लिंति जिण दिख्कं ॥ तत्तोवि परम तत्तं तेठवि उवयारउ मुख्कं ॥ ए४ ॥ दोहाः— सुकुल धर्म जाती गुणी, पर नर मेलिय सम्म ॥ पछे विसुद्ध चरण पछे, उपकारे शिव रम्म ॥ ए४ ॥ व्याख्याः—सुद्ध कुल धम्म जाइवि—निर्मल कुल धर्म जातिवंत. एवा पण गुणिणो— धैर्य ; गंनीर्य, औदार्यादि गुणे सहित एवा पुरुष होय ते गुरु उपदेश सांनल्याथी नरमंति—विषय कषायमां रमता नथी जिणदिख्कं—जिन दीक्षाप्रत्ये एटले सम्यक्त्वने लिंति—ग्रहण करे छे. तत्तोवि—त्यार पछी पण परमतत्त—परम तत्वने एटले जिनोक्त चारित्र धर्मने ग्रहण करे, तठवि—त्यारपछी पण उवयारओ—उपचारथी एटले शुद्धविधि धर्मोपदेश कर्याथी मुख्कं—मोक्षने पामे छे. ॥ ए४ ॥

अवतरणः— वली सदगुरुनो उपदेश सानल्याथी निश्चे निर्वेद थाय छे ते कहेछेः— मूलः— वन्नेमि नारयाउवि, जेसिं डुख्काइ संनर ताणं ॥ नव्वाण जणइ हरिहर, रिद्धि समिद्धीवि उद्धोसं ॥ ए५ ॥ नीका नारक जेहनो, डुख सुणि नवि जण केय ॥ हरि हर रुद्धि समृद्धि पण, तनु उत्कंट जणेय ॥ ए५ ॥ व्याख्याः—

नारयाओवि–नारकी जीवोने पण वन्नेमि–हुं वर्णवुं बुं, एटले वखाणुं बुं. केमके जेसिं– जे नारकी जीवोना डुरकाइ– अनेक प्रकारनां जे डुःख; तेने संजरताणं–सं भारनार अथवा चिंतन करनार एवा जे नवाण– नव्य जीव, तेना उद्धोसं–रोम कुपने हरिहर रिद्धि समिद्धी वि–विष्णु शंकरनी ऋद्धि समृद्धि छे ते पण जणइ– उत्पन्न करे छे केमके, हरिहरादिकनी ऋद्धि समृद्धि छे ते पण नरकादिक डुःखनी हेतु छे माटे ते देखीने नव्य जीवोनां रोमाच ऊना थाय छे ॥ ए५ ॥

अवतरण – एम बे गाथाए करी संवेग निर्वेदनो स्वरूप कह्यो हवे जे ग्रंथोमां एवुं उपदेश छे, एवा उपदेश मालादिक सिद्धांत प्रकरण जे छे तेने सर्व साधु श्रावक माने छे, अने केटला एक कदाग्रही लोक मानता नथी, ते बन्नेना बे गाथाए करी स्वरूप कहेछे–मूल –सिरि धम्मदास गणिणा, रइअं उवएस माल सिद्धंत॥ सव्वेवि समण सढ्ढा, मन्नंति पढंति पाढंति॥ए६॥ दोहा–धर्मदासगणि रचित उप, देश माल सिद्धां त॥श्रमण श्राद्ध मानैसवी, पढे पाठवे ख्यात॥ए६॥ व्याख्या–सिरि धम्मदास गणिणा श्रीधर्मदास– आचार्यजीए रइअं–रच्युं छे, जे उवएसमाल सिद्धंतं–उपदेशमा ला नामे सिद्धांत प्रकरण तेने सव्वेविसमणसढ्ढा–सर्व श्रमण सुसाधु श्राध्य सुश्रा वक जे छे तेउ मन्नति माने छे, पढंति–पढेछे, अने पाढंति–नणावे छे ॥ ए६ ॥

मूल.– तं चेव केवि अहमा ठलिया अइमाण मोह नूएण ॥ किरियाए ही लंता, ही ही डुरकाइ न गणति ॥ ए७ ॥ दोहा – मान मोह नूते ठल्या, अधम केइ किरियाय ॥ तेह मालने हीलता, न गणे नव डुःख नाय ॥ ए७ ॥ व्याख्या अइ माण मोह नूएण–अनिमान मोहरूप नूतडायें करी ठलिआ–ठलाएला ए टले बेनान थएला एवा अहमा–अधम उत्सूत्र नाषी नीच माणस केवि–केटला एक चेव–निश्चे करीने तं- ते उपदेसमाला प्रकरणने किरियाए–तपादि कष्ट क्रिया ए करीने हीलंता–हीलना करे एटले एहवा प्रकरणमां शुं ज्ञान वैराग्य छे एम निंदा करेछे माटे ग्रंथकर्त्ता कहेछे के हीही–मोटी खेदनी वात्त छे के, डुरकाइ–न रकादिक जे डुःख छे तेने न गणति–नथी गणता एटले श्री धर्मदासगणि प्रमु ख महा पुरुषोना रचेला जे प्रकरण ते सिद्धांतरूप कह्यां छे, तेने जे नथी मान ता ते नरकादिकना डुःखथी नथी बीहीता. एम जाणीने मनमां एवुं थायछे के, तेओनी शी वले थशे? ॥ ए७ ॥

अवतरण.– पूर्वे गाथामां कह्युं के, उपदेशमालादिक सिद्धांततुल्य प्रकरणनी हीलना करवाथी घणुं डुःख थायछे, ते डुःख कीयुं? ते कहेछे – मूल.–इअराण

ठकुराणवि, आणा भंगेण होइ मरण डुहं ॥ किं पुण तिलोअ पहुणो, जिणिंददे वाइ देवस्स ॥ ए८ ॥ दोहाः— एक मर लघु नृपनी, आण भंगथी थाय ॥ सुंव ली त्रिभुवन नृपनी, आण हणे कहवाय ॥ ए८ ॥ व्याख्याः— इयराण ठकुराण वि—इतर बीजापण ठाकुर सामान्य राजाओनी आणा भंगेण—आज्ञाभंग कस्याथी मरण डुहं—मरणादिक डुःख होइ—होयछे. तो तिलोयपहुणो—त्रिलोकना प्रभु एटले स्वामी एवा जिणिंद देवाहिदेवस्स—जिनेंद्र देवाधिदेवनी आज्ञा भंग कस्याथी अनंत जन्म मरण थाय ते डुःखनुं किंपुण—शुं वर्णन करिये! अनंत डुःख कही शकाय नही संविज्ञ गीतार्थनी परंपराथी चालतो आवेलो जे अर्थ, तेने प्रमाण न करवुं एटले मानवुं नही ते आज्ञा भंग कहेवायछे. ॥ ए८ ॥

अवतरणः—पूर्व गाथामां जिन आज्ञानो भंग कस्याथी अनंत डुःख थायछे एम कह्यु, पण जेओ दया धर्मनेविषे उद्यमवान होयछे, तेओने जिन आज्ञाएकरी शुं थायछे ते कहेछेः— मूलः— जग गुरु जिणस्स वयण, सयलाण जिआण होइ हिय करणं॥ तातस्स विराहणया कह धम्मो कहणु जीवदया. ॥ एए ॥ दोहाः— जगहितकर जिनवर वचन, ते कारण भविलोय ॥ तास विराधे धर्म किम, जीवदया किम होय. ॥ एए ॥ व्याख्या.— जगगुरु जिणस्स—त्रण जगना गुरु एवा जे श्रीजिनवर, तेमनुं—वयणं—वचन कहेवु छे ? सयलाण जियाण— एकेंद्रियथी लईने जावत् पंचेंद्रिय सकल जीवोने हिय करणं—हित करनार एटले कल्याणनुं करनार होइ—छे. ता—ते कारणमाटे तस्स—ते जिनवचननी विराहणया—विराधना कस्याथी एटले खंडना कस्याथी नु—इति वितर्के कहधम्मो—धर्म ते क्यांथी! अने कह—क्यांथीणु जीव दया—निज परजीवनी अनुकंपा एटले करुणा अपितु कांईज नथी; जिनवचननी आराधनाएकरीनेज चारित्र धर्म अने दया प्रमाण छे, अन्यथा नथी. ॥ एए ॥

अवतरणः— पूर्व गाथामां जिन आज्ञानी विराधना कही, ते जिन आज्ञानो प्रकार देखाडतां कहेछेः— मूल — किरियाइ फमा मोव, अहियं साहंति आगम विहूणं ॥ मुद्धाण रंजणछं, सुद्धाणं हीलणछाए ॥ १०० ॥ दोहाः— सूत्र रहित दर्शी अधिक, क्रिया तणो मंमाण ॥ ऋजु रंजण मुनि हीलवा, फिरें मूढगत त्राण ॥ १०० ॥ व्याख्या — आगम विहूणं—सिद्धांतोक्त विधिये करीने रहित अने सिद्धांतमांह नथी कह्यो जे प्रकार तेणेकरीने सहित. एटले सिद्धांतमां पुष्प नैवेद्यादिक पूजा करवी, कही छे, ते न करवी एम कहे; वली जिनपूजा सामायक प्रतिक्रमणादिक धर्म कर्त्तव्य विधि पूर्वक करवुं एम कह्युं छे, ते जेम तेम करवुं;

विधि अविध प्रमुखने जोवु नही एम कहे, इत्यादिक जे उत्सूत्र प्ररूपणा ते आगम विहीण कहियें, एवु किरियाइं फडाडोव—बाह्य तप नियम व्रतादि धर्म अनुष्ठानरूप क्रियानो जे फटाटोप एटले आरंबर तेने मुनिराजथी अहियं—अधिक साहंति—साधेछे एटले करेछे, जे निन्हवादिक लिंगिया लोक छे ते, एम करेछे ते शा सारु आरंबर करेछे? मुद्धाण रंजणत्थं—मुग्ध लोक एटले जिन धर्मना अजाण भोला लोकोना चित्तने रंजन करवाने अर्थे, तथा सुद्धाणं हीलणट्ठाए—शुद्ध पुरुषोनी एटले सिद्धांत भाषित अर्थना कथनार पुरुषोनी हीलना करवाने अर्थे ते अज्ञानी मूढ सम्यक ज्ञान रहित क्रियानो आरंबर अधिकतर देखाडेछे ॥१००॥

अवतरण —पूर्व गाथामा अशुद्ध धर्म देखाडवावालाने मूढ तथा अज्ञानी कह्यु हवे जे शुद्ध धर्मनुं दान करेछे ते पुरुषो केवा होयछे ते कहेछे— मूल — जो देइ सुद्ध धम्मं, सो परमप्पा जयम्मि न हु अन्नो ॥ किं कप्पद्दुम सरिसो, इयर तरू होइ कइयावि ॥ १०१ ॥ दोहा.— शुद्ध धर्मकूं जो दिए, सो जिनराज न और॥ सुरतरु समतरु अन्य क्या? होय कहो किण ठोर ॥ १०१ ॥ व्याख्या — जो—जे साधु श्रावक सम्यक् दृष्टि कोइ सुद्धधम्म—निर्मल कषाय मल रहित श्री वीतराग भाषित धर्मप्रते देइ— दिये, सो— ते परमप्पा— परमात्मा छे एटले तीर्थंकरतुल्य छे हु— निश्चय जयम्मि— जगतनेविषे तेनी तुलना करनारो अन्नो— बीजो कोई नथी ए वातमा कोई वितर्क करे तो तेने एम कहिये के, किं—शुं कप्पद्दुमसरिसो— कल्पवृक्षना जेवो इयरतरू—कोई बीजो वृक्ष कइयावि—कोई काले होइ—थाय? ते कहो त्यारे ते वितर्क करनरो बोल्यो के कदापि न थाय माटे तमे कह्यु ते सत्यछे १०१

अवतरण —पूर्व बे गाथामां अशुद्ध धर्म प्रकाशकनी उपेक्षा अने शुद्ध धर्मदायकनी प्रशंसा करवानुं जे जणाव्युं ते तो जे वस्तुनो गुण दोष जाणे ते करे, केम के, ते मध्यस्थ पुरुष होयछे पण जे वस्तुना गुण दोषथी अजाण होय ते मध्यस्थ पुरुषमा गणाय नही ते कहेछे — मूल.—जे अमुणिअ गुण दोसा, ते कहअ बुहाण हुंति मज्झत्था ॥ अह तेवि हु मज्झत्था, ता विस अमिआण तुल्लत्तं. ॥ १०२ ॥ दोहा — जे गुण दोष अज्ञान ते,किम बुधमे बुध होय॥ अथवा ते बुध होय तो, सम विष अमृत दोय ॥ १०२ ॥ व्याख्या — जे—जे पुरुष अमुणि अगुणदोसा—वस्तुना गुण अने दोष नथी जाणता, ते—ते पुरुष बुहाण—बुध एटले पंडित पुरुषोनेविषे मज्झत्था— मध्यस्थ राग द्वेष रहित समचित्तवाला कहअ—केम हुंति— थाय? एटले जे वस्तुना गुण तथा दोषने जाणतो नथी ते बुध मध्यस्थ पुरुषने तुल्य केम गणाय!

अपितु नहीज गणाय. अह– वली तेवि–तेनेपण हु–जो मज्झ–मध्यस्थ कहिये; एटले वस्तुना अजाण जीवपण जो समचित्तवाला होय ता– तो विसअमिआण– विष अने अमृत बन्नेने तुल्लत्त– तुल्यता थाय. पण एमतो कोई प्रकारे थाय नहीं. वस्तु धर्मने जे जाणनारो होय तेनेज मध्यस्थ पंमित कहिये. अने वस्तु धर्मनो जे अजाण होय तेने अमध्यस्थ पुरुष कहिये ए जावार्थ. ॥ १०२ ॥

अवतरणः– हवे गुणनो राग अने दोष त्याग पूर्वक उपदेशना मिसे करीने कहे छेः– त्रण तत्व आराधवा योग्य छे.– मूलः– मूलं जिणिंद देवो, तव्वयणं गुरु जणं महासयणं ॥ सेसं पावठाणं, परमप्पाणं च वज्जेमि ॥ १०३ ॥ दोहा.– मूल जिनेश्वर तद्वचन, गुरु जन गाढा सैन ॥ शेष पाप थानक तजू, निज पर नो दिन रैन ॥१०३॥ व्याख्या.–मूलं–प्रथम जिणिंद देवो–जिनेंद्र देव बीजो तव्वयणं–ते जिनेंद्र देवसंबंधी वचन सिद्धांत त्रीजा महा सयण–परम हितकारी माटे मोटा स्वजन एहेवा गुरुजणं–गुरुजन एटले ते जिनेंद्र देवना साधु मुनिराज; ए त्रण तत्व सेववा योग्य छे. सेसं– शेष बीजा परमप्पाणं च–पर संबंधी एटले अन्य दर्शनी संबंधी अने पोतासंबंधी एटले लोकोत्तर मिथ्यात्व संबंधी पावठाणं-जे पाप स्थानक छे ते सर्वने वज्जेमि-हुं वर्जु छुं एटले त्याग करुं छुं ॥ १०३ ॥

अवतरण.– कोई कहेशे के, एकनो अंगीकार करवो अने बीजानो त्याग करवो; एम कह्याथी तमारामांज राग द्वेषनी प्राप्ति थशे? ते शंका दूर करवाने कहे छेः– मूलः– अम्हाण राग रोसं, कस्सुवरि नहि इह गुरु विसए॥ जिण आणरया गुरुणो, धम्मठं सेस वोसरिमो ॥ १०४ ॥ दोहा·– राग रोस किन ऊपरे, नहि हमने छे एक ॥ धर्म हेत जिन आण रत, छे गुरु और विवेक ॥ १०४ ॥ व्याख्या.– अह्मारे रागरोस–राग द्वेष कस्सुवरि–कोईनी ऊपर नहि–नथी. गुरु विसए–गुरु संबंधी वार्त्ता, इह–एम छे. जिण आणरया–जिनराजनी आज्ञामां रत अथवा तत्पर एवा गुरुणो–गुरु धम्मठं–मोक्ष साधन जे धर्म तेने अर्थे अमारे सेववा योग्य छे सेस– शेष एटले बीजा जे जिनराजनी आज्ञाथी बाहिर छे ते सर्वने वोसरिमो–अमे वोसराविए छेए, एटले त्याग करीए छेए. जे वीतरागनी आज्ञामां होय तेने गुरु मानिये छैये; अने बीजाउंनी ऊपर तो अमारे मध्यस्थ जाव वर्त्ते छे माटे हे जद्र, कोईनी ऊपर अमे राग द्वेष करता नथी ॥१०४॥

अवतरण – हवे गुरुनेविषे पण राग द्वेषनो अजाव होयछे तेज विशेष पणे कहेछेः– मूलः– नो अप्पणा पराया, गुरुणो कइयावि हुंति सुद्धाणं ॥ जिण वय

ए रयण मंमण, मम्डिय सव्वेवि ते सुगुरु ॥ १०५ ॥ दोहा.— निज पर गुरु न करे कदा, तत्व ज्ञात गत गर्व ॥ जैन वचन मणि मंमणे, मंमित ते गुरु सर्व ॥ ॥ १०५ ॥ व्याख्या — अप्पणा—ए आपणा गछना गुरुणो- गुरु छे माटे एमनेज वांदवुं अने एमनी पाशेथीज व्याख्यान सांजलवु, तथा व्रत पच्चरकाण करवा, अने पराया—ए परगछना गुरु छे माटे एने वांदवुं नही, एनी पाशेथी व्याख्यान सांजलवुं नही, व्रत पच्चस्काण काई न करवु, एवी चाल ते सुद्दाण—सम्यक्दृष्टि श्रावक लोकोनी कइयावि—कदापि नो—नही. हुंति—होय केमके, जिणवयण रयण मम्ण मडिय- जिन वचनरूप रत्नना मम्न एटले आनूषणे करी जे मम्डित विनूषित छे; ते सव्वेवि—ते सर्वेपण सुगुरु—रूडा गुरु छे, सम्यक्दृष्टि श्रावक लोकोने वांदवा पूजवा योग्य छे अने जे जिनवचनथी उपरांठा चाले छे ते वांदवा पूजवा योग्य नथी.

अवतरणः— सुगुरुनुंज शामाटे ग्रहण करवु ? ए शंका दूर करवाने कहेछे — मूल — वलि किज्ञामो सज्जण, जणस्स सुविसुद्ध पुन्नजुत्तस्स ॥ जस्स लहु संगमेवि, सुधम्म बुद्धी समुल्हसए ॥ १०६ ॥ दोहा — शुद्ध पुन्य युत सजन जन, तसु जइये बलिहार ॥ जसु लघु संगमथी हुवे, धर्म बुद्धि विस्तार ॥१०६ ॥ व्याख्या — सुविसुद्ध पुन्न जुत्तस्स—अति निर्मल श्रुत चारित्र धर्मरूप पुन्य, तेणे करी संयुक्त एवा जे सज्जण जणस्स—परम हितकारी होवाथी सज्जन जन एटले साधु जन तेनी. वलि किज्ञामो- वली पूजा तथा सेवा अमे करिये छैये, एटले अमे तेनी बलिहारीये जैये छैये जस्स- जेनो लहुसंगमेणवि- लघु एटले अल्पमात्र संगम एटले परिचय करवाथी पण सुधम्म- जिनजाषित धर्मनी बुद्धि- विचारणा समुल्हसए- अति उल्हास एटले अति आनदने अथवा अति विस्तारने पामेछे ए कारण माटे सुगुरुज ग्रहण करवा योग्य छे. ॥ १०६ ॥

अवतरण — सांप्रत सुगुरुनुं वर्णन करवाना अधिकारनेविषे स्मृतिना उपयोगमा आव्या जे श्रीजिनवल्लनसूरीजी, ते सुगुरु होवाथी तेमनी स्तवना करतां कहे छे — मूल — अज्जवि गुरुणो गुणिणो, सुद्धा दीसंति तडयडा केवि ॥ पहु जिण वल्लह सरिसो, पुणोवि जिणवल्लहो चेव ॥ १०७ ॥ दोहा — केइ आज पिण आकरा, दीसे गुणि गुरु शुद्ध ॥ प्रजु जिनवल्लन सारिखो, वलि जिनवल्लन बुद्ध ॥१०७॥ व्याख्या — अज्जवि- आजपण एटले चालता समयमा पण गुणिणो- ज्ञानादि गुणेकरीने गुणवंत एवा सुद्धा- दंजरहित अथवा निर्मल चित्तवाला एवा, तडयडा- आकरी तप क्रियाना करवावाला सुका तथा लुखा-एवा, केवि—केटलाएक गुरुणो-

गुरु एटले साधुजन दीसंती- देखीए ठैये, नजरे जोइये ठैये. उपलक्षणथी सांजली ये ठैये. पुणोव--वली पण पहुजिणवल्लह सरिसो--प्रभु जिनवल्लभ सरखोतो जिण वल्लहोचेव- जिनवल्लभज संजलायछे ; ने तेज कर्ण अचक्षुने दर्शनज थतुं होयनी!

अवतरण.--हवे जिनवल्लभ सूरिना जेवा सर्वोत्कृष्ट पुरुषोनां वचनोथी पण केटलाएकने सम्यक्त्वनी प्राप्ति थती नथी, ते दृष्टांतसहित कहेछेः-- मूल.-- वयणे वि सुगुरु जिणवल्लहस्स केसिं न उल्लसइ सम्मं ॥ अह कह दिणमणि तेयं, उलु आण हरइ अंधत्तं ॥ १०८ ॥ दोहाः-- गुरु जिनवल्लभ वचनथी, उलसै सम्मन जास ॥ हरै घूककी अंधता, कैसे जानु प्रकाश ॥ १०८ ॥ व्याख्याः-- सुगुरुजिणवल्लहस्स- सुगुरु जिनवल्लभजीना वयणेवि- वचनो छतां पण एटले उपदेश सांजलता छतां पण केसिं- केटलाएक जारीकर्मी जीवोनुं सम्मं- सम्यक्त्व ज्ञान चक्षु न उल्लसइ- उल्लासने पामता नथी एटले ऊघडता नथी अह--अथ एटले एनी ऊपर दृष्टांत कहेछे -- दिणमणितेयं- सूर्यनुं तेज सर्वत्र प्रकाश करतु छतां उलुआण- उलूक एटले घूवड पक्षीनो अंधत्तं--अंधकार कह- केम एटले कया प्रकारे हरइ- हरे एटले दूर करे, अपि तु नहीज करीशके. ॥ १०८ ॥

अवतरणः-- वली जे श्रीजिनवल्लभसूरीनां वचनोथकी जवना स्वरूपने देखता छतां सम्यक्त्वने अंगीकार करता नथी, तेवा पुरुषोना धिठपणाने धिक्कारता छतां कहेछेः-- मूल -- तिहुअण जणं मरतं, दठ्ठूण निअंति जे न अप्पाणं ॥ विरमंति न पावाउ, धिद्धी धिठत्तण ताणं ॥ १०९ ॥ दोहाः-- मरता जग जन जोइने, जे न करै वस मन्न ॥ पापथकी विरमे नही, ते नर धीठ अधन्न. ॥ १०९ ॥ व्याख्या -- मरत--मरता एवा जे, तिहुअण जणं-- त्रण जवनना जन एटले लोकने दठ्ठूण-- देखीने जे-- जे पुरुष अप्पाणं-- पोतानी आत्माने न निअंति-- नथी देखता. अने पावाओ--हिंसा तथा मृषादि पाप व्यापार थकी न विरमंति-- विराम पामता नथी. एटले निवर्त्तता नथी, ताण-- ते पुरुषोना धिठत्तणं--धीठपणाने धिद्धी--धिक् धिक् होजो, एटले धिक्कार थाउ. ॥ १०९ ॥

अवतरणः-- हवे तेनाज कुस्नेहपणाने कहेछेः-- मूलः--, सोएण कंदिऊणं, कुट्टेऊण सिरं च उअरंच ॥ अप्पं खिवंति नरए, तं पि हु धिद्धी कुनेहत्तं ॥ ११० ॥ दोहा.-- शोक विलाप करी उदर, शिर कूटी उर देह ॥ नाखे नरके जीवने, धिग् धिग् ते कुनेह ॥ ११० ॥ व्याख्या -- सोएण--शोकेकरीने कंदिऊण--आक्रंदन अथवा विलाप कर्याथी च--वली सिर--मस्तक उअरं--उदर एटले पेट च शब्दथी

उरु एटले उरादिक प्रते कुट्टकणं–कूटी पीटीनै नरए–नरकनेविषे जे अप्पं–आ त्माने खिवति–क्षेपेछे एटले नाखेछे, हु–जे कारण माटे तेनुं जे कुनेहत्तं–कुस्नेह पणुं छे, तंपि–तेने पण धिद्धी–धिक् धिक् होजो एटले धिक्कार थाओ ॥ ११० ॥

अवतरण -- हवे शोकादिक कीधाथकी उलटो अति दोष होयछे तेज कहेछे.– मूलः–एगं पिअमरणदुहं, अन्नं अप्पावि खिप्पए नरए ॥ एगंच मालपडणं, अन्नं लगुडेण सिरिघाउ ॥ १११ ॥ दोहा– प्रिय मरणनुं एक दुःख, बीजुं न रक मजार ॥ इकतो पडवुं मालथी, बीजो मंम प्रहार ॥ १११ ॥ व्याख्या – ए गं–एक पिअमरणदुहं–पुत्र कलत्रादिक प्रियजन स्वजन लोकोना मरवानुं दुःख अन्नं–बीजुं नरए–नरकनेविषे अप्पा–आत्मा विखिप्पए–विक्षेपिये छेए एटले ना खीये छेए ए मोटो आश्चर्य छे अहीं दृष्टांतकहेछे.– एगंच–एक तो मालपडणं– एकादि मालथकी पडवुं, अने अन्नं–बीजुं लगुडेण–लाकडीए करीने सिरिघाउ– माथाकपर घात करवो एटले जे पड्यो तेनुं माथुं फोडी नाखवुं ए मोटो अन्याय छे

अवतरण.– एम क्याथी करे? एवी आशंका करीने हमणा सुगुरुवादिकनुं दु र्लभपणुं प्रगटकरतां छतां कहे छे.– मूल– संपइ दूसम काले, धम्मट्ठी सुगुरु सावया दुलहा ॥ नाम गुरु नामसड्ढा, सरागदोसा बहू अत्थी ॥ ११२ ॥ दोहाः– धर्मार्थी दूषम समै, दुलभ साधुने श्राद्ध ॥ नाम साधु श्रावक बहू, दृग रागादि सबाध ॥ ११२ ॥ व्याख्याः– संपइ–सांप्रत एटले वर्त्तमान काल दूसम काले–दू सम कालनेविषे धम्मट्ठी–श्रीजिन भाषित मोक्ष पद साधक शुद्ध विधि धर्मना अर्थी अभिलाषी एवा, सुगुरु सावया–सुगुरु सु साधुने श्रावक समणोपासक दु लहा- दुर्लभ छे; अने सराग दोसा–राग द्वेषे करीने सहित एवा, नाम गुरु–स म्यग् ज्ञानादि गुणे करीने रहित केवल नाम मात्र गुरु साधु, तथा नाम सड्ढा– नाममात्र श्रावक तेतो बहु अत्थी– घणा छे ॥ ११२ ॥

अवतरण --हवे सुगुरु श्रावकपणानो हेतु कहे छे -- मूल -- कहियंपि सुद्ध धम्मं, काहिवि धन्नाण जणइ आणंदं ॥ मिच्छत्तमोहिआणं, होइ रई मिच्छ धम्मेसु ॥ ११३ ॥ दोहा -- शुद्ध धर्मनी वात पण, धनने रति उपजाय ॥ मि थ्या मोहित मूढने, मिथ्यात्वे रति थाय ॥ ११३ ॥ व्याख्या -- कहियंपि-- क ह्यो छे तोपण सुद्ध धम्म–निर्मल वीतराग भाषित धर्म एटले विस्तार सहित क हेलो जे जिन धर्म ते काहिविधन्नाण– केटलाएक धन्य पुरुषोने पण एटले थो डाकज धन्य पुन्यवंत प्राणीउने आणंद -आनंद एटले आत्मिक हर्ष जणइ–उत्प

न्न करेछे; केमके, धर्मरूप रत्ननो व्यापार करनारा थोडाज होय छे माटे; अने मिच्छ त्त मोहिआण--मिथ्यात्वनेविषे मोहेला एटले मूर्छित थएला जे लोको तेउनी र इ--रति एटले प्रीति मिच्छधम्मेसु-- मिथ्यात्व धर्मनेविषे होइ--होय छे; ते अति घ णा छे, माटे सुगुरु तथा सुश्रावकनुं डुर्लनपणुं जाणवुं ॥ ११३ ॥

अवतरणः-- हवे बीजुं आ कालनेविषे जे वर्त्तेछे ते कहेछेः— मूलः— इक्कंपि महाडुरकं, जिण वयण विऊण सुद्धहिययाणं ॥ जं मूढा पावाइं, धम्मं नणिऊ ण सेवंति ॥ ११४ ॥ दोहा.— जिन मत जाण विमल हिये, तास एक गुरु डुःख ॥ धर्म कहीने सेवतो, पापप्रते जो मुरक ॥ ११४ ॥ व्याख्याः— सुद्धहिययाणं— जेनुं निर्मल चित्त छे, एटले सर्व जीवोनेविषे जेने अनुकंपा नाव वर्त्तेछे एवा जे जिणवयणविऊण—जिनवचन एटले जिनआगमनेविषे विद्वान एटले अति कुशल पुरुषोने आ कालमां इक्कंपि महाडुरकं--एक मोटुं डुःख होयछे. जं--जे कारणमाटे मूढा- मूर्ख अज्ञानी लोक जे छे ते पावाइं- जीव वधादिक पापप्रते धम्मनणिऊ ण- धर्म कहीने एटले देवगत्यादि पुन्य कहीने सेवंति—सेवेछे, सेवीने ते बापडा डुर्गतिमां पडशे; ए एक मोटुं डुःख ज्ञानी पुरुषोना चित्तमा वर्त्तेछे. ॥ ११४ ॥

अवतरणः— त्यारे शुं बधाय मूढ पुरुषो छे, किंतु केटलाएक अमूढ पुरुषो पण छे ते कहेछेः-- मूलः— थोवा महाणुनावा, जे जिणवयणे रमंति संविग्गा ॥ तत्तो नवनयनीया, सम्मं सत्तीइ पालंति ॥ ११५ ॥ दोहाः-- महा नाग जिन व चन रत, संवेगी नव नीत ॥ विरला जे समसक्तिए, व्रत पाले श्रुत रीत ॥११५॥ व्याख्याः - जे--जे पुरुष जिणवयणे--जिन वचननेविषे रमंति--रमे छे, एटले तरु ण सुखी नारी परिवारथी परिवर्यो पुरुष जेम किन्नर देवताना गीत सांजलवाने विषे प्रेम करेछे. तेम जे पुरुष जिन आगम सांजलवानेविषे अतिज प्रेम करेछे; वली जे संविग्गा--संविज्ञ एटले मोक्षना अनिलाषी छे महाणुनावा—ते महानुनाव पराक्र मवान पुरुष थोवा—थोडाछे. तत्तो--ते पुरुषथी नवनयनीया—नरकादि चतुर्गति संसा रना नयथकी बीना जे पुरुष एवा, वली सम्म—जिनोक्त श्रद्धानरूप सम्यक्त्वप्रते सत्ती इ—यथाशक्तिएकरी पालंति--पालता—आराधता एवा पुरुषअतिशयथोडाछे. ॥११५॥

अवतरणः— पूर्व गाथाए करी सम्यक्त्वनुं डुर्लनपणुं देखाडयुं, हवे ते सम्य क्त्वविना धर्मकृत्य निष्फल छे, एम दृष्टांते करीने कहे छेः— मूलः—सव्वंगं पि हु स गडं,जह न चलइ इक्क वडहिला रहियं ॥ तह धम्म फडामोव, न चलइ सम्मत्त परिहीणं ॥ ११६ ॥ दोहा·— इक धुर विण सवांग पण, शकट जेम न चलंत ॥

तेम धर्म मम्माण सब, विन समकित न फलंत ॥ ११६ ॥ व्याख्याः— ऽक्क वड हिला रहियं--गाम्मानां पइडा रोकवानी खीलीए करी रहित, एवुं, सवंग सगडं—स र्वांग शकट बता पण एटले बीजां सर्व अंगेकरी सहित गाडुं बता पण जह्-जे म ह्र--निश्चे नचलइ—नथी चालतु तह्—तेम सम्मत्त परिहीण—सम्यक्त्व रहित, ए हेवु जे धम्मफम्माभोव—दान दया शील तपादिक धर्मनो फटाटोप एटले जे आमंब र ते न चलइ--नथी चालतो, एटले अव्याबाध अक्षय मोक्ष फल नथी आपतो, उलटुं विशेषतर डुखनुं कारण थाय छे ॥ ११६ ॥

अवतरण — शिष्य वितर्क करेछे के, जे सम्यक्त्वविना अन्य धर्म आमंबर छे, ते हितने करता नथी, एवु वाक्य मिथ्यात्वीनेविषे रोषरूप थशे? ए आशंका दूर करवाने कहेछे — मूल — न मुणंति धम्मतत्त, सत्थं परमत्थ गुणहियं अहियं॥ बालाण ताण उवरिं कह रोसो मुणिय तत्ताण ॥ ११७ ॥ दोहा -- धर्म तत्व श्रुत आत्महित, अहित न जाणे जेह ॥ ते अजाण पर रोष किम, जिनमत कुस ल करेह ॥ ११७ ॥ व्याख्या — धम्मतत्तं—जेमा जिनोक्त धर्मनुं स्वरूप रहेलुंछे, एवो जे सत्थ— शास्त्रसिद्धांत तेने जे पुरुष नमुणंति— नथी जाणता, वली जे पुरुष परम त्थ गुणहियं— परमार्थ जे मोक्षपद तेनुं साधन सम्यक् ज्ञानादिक गुण तद्रूप जे हित तेने जाणता नथी, वली जे पुरुष अहियं— अहित एटले मिथ्यात्व-अविरति कषायादि नवभ्रमणनु कारणरूप जे अहित तेने नथी जाणता, ताणबालाण— ते बाल अज्ञानी जीवोनी उवरिं—उपर मुणियतत्ताण—जेउए जिन धर्म तत्त्व एटले परमार्थ जाण्यो छे, ते पुरुषोने कहरोसो—रोष केम थाय? अपितु नज थाय केम के, जे ज्ञाता पुरुष होय छे ते द्रव्य तथा भाव ए बे अनुकंपा सहितज होय छे॥११७॥

अवतरण — हवे जे बाल अज्ञानी लोको छे तेउनुंज बालपणुं दृष्टांत सहित देखाडे छेः— मूल — अप्पावि जाण वयरी, तेसिं कह होइ परजिए करुणा॥ चो राण वद्दियाणय, दिठ्ठंतेण मुणेयव्व॥ ११८ ॥ दोहा — जसु वैरी निज आतमा, तसु परदया न होय ॥ याचक चोरतणो इहा, उदाहरण जग जोय ॥ ११८ ॥ व्याख्या — जाण—जे लोकोनो पोतानो अप्पा— आत्मा पण वयरी— वैरीछे, एट ले शत्रुनी तुल्य छे, केमके हिंसा असत्य अदत्त तथा परदारागमनादि अहित कार्य करेछे माटे, तेसि--ते बाल अज्ञानी लोकोने परजिए—पर जीवोनी उपर क रुणा—दया कह—केम होइ—थाय? अपितु नज थाय, एटले जेने पोतानो आत्मा पण शत्रुनी पठे शत्रु वर्त्ते छे, तो तेने बीजा जीवोनी उपर दया ते केम वर्त्ते! अ

पितु नहीज वर्त्ते ते चोराण–चोरने वली बंदियाण–बंदिक पुरुषोने एटले परधन अभिलाषी पुरुषोने दिठंतेण–दृष्टांते करीने मुणेयव्वं–जाणवुं एटले जेम चोरादिकने परनी दया आवती नथी, तेम दुष्टाचारी इह परलोक विरोधकारी, उत्सूत्र नाषी जे होय तेने परजीवनी दया आवे नही. ॥ ११७ ॥

अवतरणः– हवे बाल स्वभावप्रते विचार करीने ते बालना स्वरूप तथा लक्षणने कहेछेः– मूलः– जे रज्ज धणाईणं, कारणनूया हवति वावारा ॥ तेवि हु अइपावजुया, धन्ना छड्डुंति नवनीया ॥ ११९ ॥ दोहा.– जे छे राज धनादिनो. हेतुनूत व्यापार ॥ ते अति पाप वणिज तजे, उत्तम नव नीतार ॥ ११९ ॥ व्याख्या.– रज्ज धणाईणं–राज एटले राजादि पदवीनो, धणीमादि धनादिकनो आदि शब्दथी शब्दादिक इंद्रियविषयनो कारणनूया–कारणनूत एटले हेतुरूप एवो जे–जे वावारा–व्यापार हवंति–छे, एटले बाह्य व्यापार शत्रुहनन राजसेवा कृषी कर्म दंतवाणिज्यादि, अने अंतर व्यापार पंचाग्नितप अज्ञान कष्ट क्रियादिरूप तेवि–ते व्यापार पण हु–निश्चय अइपावजुया–नरक निगोदादिकना कारणमाटे अति पापसहित छे एम जाणीने ते व्यापारने धन्ना–जे धन्य पुन्यवत उत्तम पुरुष छे ते छड्डुंति–छोडेछे एटले त्याग करेछे ते उत्तम पुरुष केहेवायछे –नवनीया–नवनीत छे एटले जे संसारथकी बीहीना छे, अने उदास रहेछे तेज महा सत्विछे ११९

अवतरणः– धन्य पुन्यवत सत्ववत जे उत्तम पुरुष छे तेनुं स्वरूप कह्यु, हवे अधम पुरुष जे हीण सत्वि छे तेनुं स्वरूप कहेछे –मूल.–बिइयाय सत्तरहिया, धणसयणाईहिं मोहिया लुद्धा ॥ सेवंति पावकम्मं, वावारे उयर नरणठा ॥ १२० ॥ दोहाः– मोहित धन स्वजनादिके, लुब्ध सत्व करि हीण ॥ पाप नजे व्यापारमें, मध्यम पेटाधीन ॥ १२० ॥ व्याख्याः– बिइयाय–प्रथम उत्तम पुरुष कह्यो, तेनी अपेक्षाएकरीने बीजा जे अधम पुरुष छे ते पावकम्मं–स्वामी द्रोह, विश्वासघात, चोरी, परधन हरणादी तथा अंगार कर्मादि पंदर कम्मादान तथा हिंसादि अष्टादश पापस्थानकने सेवंति–सेवेछे, वावारे–व्यापारनेविषे उयरनरणठा–उदर एटले पेट नरवाने अर्थे, ते अधम पुरुष केवा छेः– सत्तरहिया–सत्व एटले शुन पराक्रम रहित एवा, वली ते अधम पुरुषो केवा छे.– धणसयणाईहिं धन स्वजनादिके करीने आदि शब्दथी शब्दरूपादिक इंद्रिय विषये करीने मोहिया–मोहित एटले मूढ थएला एवा, वली ते अधम पुरुष केवा छे? लुद्धा–लोनी एटले लालची अति छे एवा जाणवा. ॥ १२० ॥

अवतरण.— बीजा अधम पुरुषनुं स्वरूप कह्युं हवे त्रीजा अधमाधम पुरुषनुं स्वरूप कहेछे·— मूल.— तइया हमाण अहमा, कारणरहिया अनाणगव्वेण ॥ जे जपंति उसुत्तं, तेसिं धिध्दिछ पंमिच्चं ॥ १२१ ॥ दोहा — अधम अधम कारण विना, करि अज्ञान अभिमान ॥ जे उत्श्रुत नाषन करे, धिग धिग तेनुं ज्ञान ॥ ॥ १२१ ॥ व्याख्या — तइया—त्रीजा अहमाण—अधमोनेविषे अहमा—अधम एट ले त्रीजा अधमाधम पुरुष ते कारण रहिया—धनलाभ कुटंब पोषणादि कारण रहित छता अनाणगव्वेण—अज्ञानना गर्वे करीने जे—जे उसुत्तं— उत्सूत्रप्रते जंपंति—जंपेछे अथवा बोलेछे तेसिं—तेना पंडिच्चं—पांमित्यने धिध्दिछु—धिक्कार धिक्कार थाओ धनलाभादि कारणे जे उत्सूत्र बोलवु, ते दुर्गतिने देवावालुं छे, माटे कारणने लीधे पण उत्सूत्र बोलवानो निषेध छे त्यारे कारणविना तो विशेषपणे निषेधज जाणवो माटे कारणविना अने अज्ञान अभिमाननी बुध्दिथी जे उत्सूत्र भाषण करेछे ते अधमाऽधम पुरुष जाणवो. तेना पंडितपणाने धिक्कार धिक्कार छे. जे नीचथी पण नीच होय तेने अधमाधम कहिये ॥ १२१ ॥

अवतरण·— उत्सूत्र बोलनारने शास्त्रकारे अधमाधम कह्यो? अने तेना पंमितपणाने शास्त्रकारे धिक्कार थाओ एम कह्युं? ते देखाडता छता कहेछे·— मूल — ज वीरजिणस्स जिओ मिरई उस्सुत्त लेस देसणओ ॥ सागर कोडाकोडि, हिंमइ अइनीमनवरसे ॥ १२२ ॥ दोहाः— जीव मरीची वीरनो, उत्श्रुत लेस उच्चार॥ सागर कोडा कोडि जो, नमिओ नवकांतार ॥ १२२ ॥ व्याख्या·— ज—जे कारण माटे वीरजिणस्सजीओ—वीर जिनेश्वरनो जीव मिरई—भरत पुत्र मरीचीने भवे उस्सुत्त लेस देसणओ—कपिले ज्यारे वारवार पूछवा मांड्युं, त्यारे एम बोल्या के, हे कपिल रूपभ जिणसाधुओनेविषे पण धर्म छे अने अही अमारामा पण धर्म छे, एतद्रूप उत्सूत्रनो जे लेश, तेनी देशना थकी अइनीमनवरसे—अति भीम रौद्र भव अरण्य जे संसार कांतार तेनेविषे सागर कोडाकोडी— सागरोपमनी कोडाकोडीसुधी एटले एक कोडाकोमी सागरोपमसुधी हिंमइ—हींमेछे एटले भमेछे, एम वर्त्तमान निर्देशनी अपेक्षाए कह्युं, परमार्थे तो भम्योछे एम जाणवु. ॥ १२२ ॥

अवतरण·— हवे उत्सूत्रनुं निगमन करता छता कहेछे — मूल — ता जइ इमंपि वयणं, वारंवार सुणित्त समयम्मि ॥ दोसेण अवगणित्ता, उस्सुत्त पयाइ सेवति ॥ ॥ १२३ ॥ दोहा — वारवार ए श्रुत वचन, सांभलि जोतो देय ॥ सेवे बहु उत्सुत्र पद, दोप न माने जेय ॥ १२३ ॥ व्याख्या — ता—ते कारणमाटे जइ—जो इम—ए

प्रत्यक्ष, वयणं—मरीचिउक्त उत्सूत्र वचनो प्रत्ये समयम्मि—सिद्धांतनेविषे-वारंवारं—वारंवार सुणीत्त—सुणीने एटले सांभळीने अपि—पण दोसेण—अभिनिवेष मिथ्यात्वादिक दोषेकरी अथवा द्वेषेकरी अवगणित्ता—अवगणनाए करीने एटले अपमानताए करीने उस्सुत्तपयाइ—उत्सूत्रना पदने सेवति—जे सेवेछे एटले जे बोलेछे. ॥ १२३ ॥

मूलः—ताण कहंजिण धम्मं, कह नाणं कह दुहाण वेरग्गं ॥ कूडाभिमाण पंडिय, नडिया बुड्ढंति नरयम्मि॥१२४॥ दोहाः—तसु जिन धर्म किहां थकी, ज्ञानसु दु:ख वैराग॥ कूटमान पंडित्त नटित, नरके खेलत फाग॥१२४॥ व्याख्याः—ताण—ते पुरुषोने कह—केम जिण धम्मो—जिन धर्म थाय! कह—केम नाणं—यथार्थ ज्ञान थाय! कह—केम दुहाण—नरकादिकनां दु:ख थकी वेरग्गं—वैराग्य एटले उदासपणुं थाय! अपितु ते उत्सूत्र भाषीउंने जिनधर्मादिक कांई प्राप्तज न थाय. केमके, जिन धर्मे आज्ञाए करीने पूर्वे कह्यु छे ते कारण माटे कूडाभिमाण पंडिय—कूड अने अभिमान अथवा कूडा अभिमान अहंकारे करी सहित जे पंडित पणुं ते कूटाभिमान पंडितपणुं कहिये. तेणे करीने ते पुरुष नडिया—नडेला एटले पीडायला नरयम्मि—नरकनेविषे एटले नरकरूप अंधकूपनेविषे बुड्ढंति—बूडे छे. एम जाणीने उत्सूत्र न बोलवुं एज सार छे ॥ १२४ ॥

अवतरण:—हवे जे उत्सूत्र भाषी जीव छे, तेने हितोपदेशनुं दान देवुं नही; केमके, ते ए दान लेवाने अयोग्य छे ते कहे छे.— मूल:— मामा जंपह बहुअं, जे बद्धा चिक्कणेहिं कम्मेहिं ॥ सव्वेसि तेसि जायइ, हिउवएसो महादोसो ॥ १२५ ॥ दोहाः-जे बांध्या खळ कर्म करि, ते सबहीके थाय ॥ हित उपदेश सु दोष मय ॥ बहु मानण इण न्याय ॥ १२५ ॥ व्याख्या:— उत्सूत्र भाषी कदाग्रही अयोग्य जीवने बहुअं—घणो हितोपदेश मामा जपह—कहेवो नही. केमके, जे—जे पुरुष चिक्कणेहिं कम्मेहिं—चीकणा कर्मे एटले अति क्लिष्ट ज्ञानावरणादिक कर्मे करि बद्धा—बांधेला अथवा निगडेला छे. तेसि, सव्वेसि—ते सर्वने हिउवएसो—हितोपदेश एटले मोक्ष मार्गनो उपदेश ते महादोसो—महा दोषरूप अथवा महा द्वेषरूप जायइ—थाय छे; माटे अयोग्य जीवने घणो हितोपदेश कहेवो नही ॥ १२५ ॥

अवतरण.— धर्मने अयोग्य जीवने हितोपदेश करवाथी क्लेशमात्र थाय तेनुं कारण कहे छे — मूल — हिययम्मि जे कुसुद्धा, ते किं बुज्झंति धम्म वयणेण ॥ ताताण कए गुणिणो, निरत्थयं दमइ अप्पाणं ॥ १२६ ॥ दोहा:— जसु कुसुद्ध मन केम सो, जिन वचने बूजेय ॥ तो तेने अर्थे गुणी, फोकट आत्म दमेय॥१२६॥

व्याख्या.- हिययम्मि-हृदयनेविषे एटले चित्तनेविषे जे- जे पुरुष कुसुद्धा-कुसुद्धछे, एटले अशुद्ध छे, एटले अभिनिवेश मिथ्यात्वादिक दोषरूप कलंक पंके करीने मलिन छे, ते-ते पुरुष कि-केम धम्मवयणेण-जिनधर्मसंबंधी वचने करी बुझंति-बोध पामे! अपितु नहीज पामे, ता- ते कारण माटे ताणकए-ते दुष्ट चित्तवालाने अर्थे गुणिणो- ज्ञानादिक गुणेकरी गुणवत पुरुषछे ते निरत्थयं- निरर्थक एटले फोकट अप्पाणं-आत्माने दमइ- दमेछे, एटले क्लेश उपजावेछे, अहीं फलीतार्थ एम समजवुं के, जे गुणी पुरुष होयछे ते परने गुण करवानी बुद्धिमाटे हितोपदेश कर्त्ता काई पण पोताने क्लेश माने नही, पछी परने गुण थाओ वा न थाओ ए गुणीनो सहज स्वभावछे माटे गुणी पुरुषनो कीधेलो उपदेश फोकट नथी ते उपदेश पोताने स्वाध्याय तप छे १२६

अवतरण -- गुणी पुरुष एम कहेछे के अहो भव्य, जिनधर्म करवादिक तो दूर रहो, पण एक जिन धर्मनुं श्रद्धान छे तेपण दुःखनुं हरण करनारुं छे, तेज कहेछेः-- मूल -- दूरे करण दूरम्मि साहण तह पभावणा दूरे ॥ जिण धम्म सद्दहाण, पि तिरकदुरकाइ निठवइ ॥ १२७ ॥ दोहाः- करनो अरु साधन तथा, रहो प्रभावण दूर ॥ शुद्ध धर्म श्रद्धान पिण, हरै कठिण दुखपूर ॥ १२७ ॥ व्याख्या -- करण- विधिए करीने दान शील तप भावनारूप जिनधर्मनुं जे करवुं, तेतो दूरे-दूर रहो तथा साहण-पूर्वोक्त जिनधर्मनुं साधन एटले कथन करवु तेपिण दूरम्मि-दूर रहो, तथा पभावणा-प्रावचनी धर्मकथी प्रमुख अष्ट प्रकारना प्रभावकपणे करीने जे जिनधर्मनी प्रभावना करवी एटले जिनधर्मनो महिमा उद्योत करवो तेपण दूरे-दूर एटले छेटे रहो, मात्र जिण धम्मसद्दहाणपि-जिनभाषित धर्मनुं एक श्रद्धान रुचिपणुं पण तिरक दुरकाइ-तीक्ष्ण दारुण जे नरकादिक दुःख तेने निठवइ-निष्टापेछे एटले नसाडेछे, अथात् बीजुं काई न बने तो पण एक जैनधर्मनुं श्रद्धानकरवु १२७

अवतरण - ते श्रद्धानतुं लक्षण ए के सिद्धांतनुं सांभलवु, ते सिद्धांत सांभलवानी पोतासंबंधी इछा देखाडता छता कहेछे - मूल - कइया होही दिवसो, जइया सुगुरूण पायमूलम्मि ॥ उस्सुत्त लेस विसलव, रहिओ निसुणेसु जिण धम्म ॥ १२८ ॥ दोहा - ते दिन क्यारे आवशे, ज्यारे सदगुरु पास ॥ उत्सूत्रासे रहित जिन, धर्म सुणीसुं खास ॥ १२८ ॥ व्याख्या - दिवसो-ते दिवस दिवस कहेवाथी ते घडी ते मुहूर्त्त ते पक्ष, ते मास ते वर्ष कइया-क्यारे होही-थशे! जइया-ज्यारे सुगुरूण-सुविहित गीतार्थ धर्माचार्य सुगुरुने पायमूलम्मि-पादमूल एटले समीपे जिणधम्म-जिनभाषित धर्मने निसुणेसु-हुं सांभलीश. केवो थयो

थको हुं सांजलीश ! उस्सुत्त लेसविसलव रहिओ–उत्सूत्रना लेशरूप विषलवेकरी ने रहित ठतो एटले गुरुने समीपे सांजलवाथी मनमां रहेला जे उत्सूत्र वाक्य, तेना लेशरूप विषना लवेकरी रहीत थयो थको हुं सांजलीश. ॥ १२८ ॥

अवतरणः– ते दिवस क्यारे थशे एम शासारु कह्युं? गुरुनुं तो कांई डुर्लनप णुं नथी, केमके, गुरु तो जोवामां घणा आवेछे, ते ऊपर कहेछेः– मूलः– दिठ्ठा वि केवि गुरुणो, हियए न रमंति मुणिय तत्ताण ॥ केवि पुण अदिठ्ठच्चिय, रमंति जिणवल्लहो जेम ॥ १२ए ॥ दोहाः– दीठ पण केइक गुरु, न गमे जाण हियेय॥ केइ अदीठहि जगमें, जिम जिणवल्लन श्रेय. ॥१२ए॥ व्याख्याः– केवि–केटला एक दिठ्ठावि–नजरे जोएला पण काने सांजलेलानी शी वात करवी! गुरुणो–साधु समाचारीमांहे निपुण एषणीय आहारना लेवावाला एवा गुरु ते मुणियतत्ताणं–जेणे जिनशासननो तत्वपरमार्थ जाण्यो छे, तेना हियए–हृदयनेविषे नरमंति–रमता नथी एटले रुचता नथी, केमके तेना हृदयनेविषे तो जे सम्यक् ज्ञान क्रिया संवेग गुणे करीने सहित गुरु होय ते रुचेछे, पण एकलुं ज्ञान एकली क्रियादिक वाला रुचता नथी. पुण–वली केवि–केटलाएक अदिठ्ठच्चिय–नही दीठेला ज्ञानक्रिया संवेग सहित गुरु पण रमंति–रमेछे रुचेछे, जेम–जिम जिणवल्लहो–ज्ञान क्रिया संवेग सहित जिनवल्लन सूरि नही दीठेलो अमारा चित्तनेविषे रुचेछे; तेमना रचेला ग्रंथो जोतां तथा तेमना संतानीक साधुनी समीपे तेओना ज्ञान वैराग्य क्रियानुष्ठान सांजलतां अति प्रिय लागेछे एम नेमीचंद जंमारी कहेछे. ॥ १२ए ॥

अवतरण.– एम ठतां पण जे पुरुष कुगुरुने पण सुगुरुनी पठे माने छे, तेनुं निराकरण करता ठता कहेछे.– मूल.–अजया अइ पाविठ्ठा, सुद्ध गुरू जिण वरिंद तुल्लत्ति ॥ जो इह एवं मन्नइ, सो विमुहो सुद्ध धम्मस्स ॥ १३० ॥ दोहाः– आरंजी अति पापिने, जिनवर सुगुरु समान ॥ जे जाणे ते जीव जिन, धर्म विमुख वेनान ॥ १३० ॥ व्याख्या.– ते कुगुरु केवा छे? अजया–यत्न रहित छे, एटले षट् जीवनि कायना वध करवानेविषे जे तत्पर छे; ते कारण माटेज अइ पाविठ्ठा–अति पापिष्ठ छे; एटले पाप कर्म बांधवानेविषे प्रधान छे एटले मुख्य छे एवा जे कुगुरु छे, तेने पण सुद्ध गुरु जिणवरिंदतुल्लत्ति–निर्मल गुरु गौतम गणधरादिकने सदृश अथवा घणुं शुं कहिये जिनवरेंद्र तुल्य छे, एव–ए प्रकारे इह–जगतनेविषे जो कोई मूढ पुरुष मन्नइ–मानेछे एटले जाणे छे, सो–ते पुरुष सुद्ध

धम्मस्स--श्री वीतराग नाषित श्रुत चारित्ररूप निर्मल जे धर्म, तेने विमुहो--विमुख जाणवो एटले अवला मुखवालो जाणवो. ॥ १३० ॥

अवतरणः-- धर्मने करतो थको पण धर्मथी विमुखपणुं केम कह्युं ? ए आशंकानुं समाधान करतां कहे छे -- मूल.-- जो तं वदसि पुज्जसि, वयण हीलेसि तस्स रागेणं ॥ ता कह वदसि पुज्जसि, जणवाय ठिइंपि न मुणेसि ॥१३१॥ दोहा.-- वांदे पूजे जेहने, हीले तेनो वैण ॥ वांदे पूजे किम तदा, जन थिति जूये नैन ॥ १३१ ॥ व्याख्या -- जो--जे जिनराजप्रते तं--तु वदसि--वांदे छे, पुज्जसि--पूजे छे, अने पोतानां उत्सूत्र नाषी हीणाचार्य गुरुने रागेण--रागे करीने तस्स--ते वदनीयथी तो जिनराजनुंज वली वयणं--आगमरूप वचन हीलेसि--तेनी तु हीलना करे छे, एटले निंदा करेछे, रे मूढ, जिनराजनां वचनोनी हीलना करे छे, ता--तो कह--केम जिनराजने वदसि--तु वांदेछे, पुज्जसि--तु पूजेछे, जणवायठिइंपि--रे मूढ, तु जनवादनी लोक व्यवहारनी स्थिति एटले मर्यादाने पण नमुणेसि-- नथी जाणतो, के जेने वांदिए तेनां वचन जो न मानिये तो वांदवुं तथा पूजवुं व्यर्थ जाणवुं ए नावार्थ छे. ॥ १३१ ॥

अवतरण -- लोकव्यवहारनी जे स्थिति छे ते कहेछे -- मूल -- लोएवि इमं नणियं, जो आराहिज्ज सो न कुविज्जा ॥ मन्निज्ज तस्स वयणं, जइ इछसि इछियं काउं ॥ १३२ ॥ दोहाः-- कह जन जे आराधिए, न कोपाइये तेह ॥ मानी जो तसु वेन जो, वछित तु वाछेह. ॥ १३२ ॥ व्याख्या -- लोएवि--लोकोत्तरनी तो शी वात! लौकिक व्यवहारनेविषे पण इमं नणियं--एम कह्युं छे, जो--जे देव दानव राजादिक मोटा पुरुष आराहिज्ज--आराधिए, पूजिये, सो--ते देव दानव राजादिकने न कुविज्जा--कुपित न करिये एटले तेने जे वातथी कोप चढे ते वात न करिये तस्स--ते देव दानव राजादिकनुं वयण--वचन मानिये एटले प्रमाण करिये. इछियं काउं--इछित करवाने एटले पोताना मन वछित पूरण करवाने जइ--जो इछसि--तुं इछेछे तो ए प्रकारे पुत्र मित्रादिकने लोक व्यवहारनेविषे लोकसी खामण दीए छे, तो लोकोत्तर व्यवहारनी वात तो मोटी छे ॥ १३२ ॥

अवतरण -- एम नगवन् वचन सांजल्या छतां पण धर्म करवाने दोष कहीने हवे त्याहां जे निश्चल पुरुष छे तेनी स्तवना करतो छतो कहेछे -- मूल -- दूसम दंभे लोए, सुडरक सिद्धंमि डुरक उदयम्मि ॥ धन्नाण जाण न चलइ, सम्मत्तं ताण पणमामि ॥ १३३ ॥ दोहा -- डुष्ट उदय डुख प्रगट जन, दूसम दंढ छ

तेय ॥ तसु प्रणमुं जे धन्यनो, समकित गुण न चलेय ॥ १३३ ॥ व्याख्याः—दूसमदंभे—दूषमार्क एटले पांचमा आरारूप दंभ एटले बल मेधा सुख संपत्ति विद्या श्रुत दीर्घायु निरोगपणुं इत्यादि विसिष्ट वस्तुना नाशरूप दंभ, तेणे करीने दंभाय ला एवा, वली सुडुक सिद्धम्मि—तीक्ष्ण दुःखे करीने सिद्ध एटले निष्पन्न थएला ए टले नीपजेला एवा, वली दुःखउदयम्मि—शरीरीने मानसी दुःख अति कष्टनो छे उ दय जेने एवा, जे लोए—लोकतेनेविषे तथा ते लोकने थए छते जाणधन्नाण—जे जिन मत जावित मतिवान धन्य पुण्यवाननुं सम्मत्तं—तत्व श्रद्धान सम्यक्त्व न चलइ—नथी चालतुं, ताण—ते पुरुषोने पणमामि—मन वचन कायाए करी हुं नमस्कार करुं छुं वली हुंमाअवसर्पिणीना प्रजावे जस्मग्रहने उदये प्रगट्यो जे दुषमा आरानेविषे असंयत पूजा नामे दसमो आश्चर्य, तेणेकरी प्राए थयुं जे लोकोनुं विरूप रूप ते संगपट्टादिक बीजा शास्त्रोथी जाणवुं ॥ १३३ ॥

अवतरणः— अही कोई आशंका करेके, केटलाएक गुरुउने जोयां छतां पण विवेकी पुरुषोना मनमां रुचता नथी, अने केटलाएक नही दीठेला जिनवल्लजसूरिनी पठे लोकोना मनमां रुचेछे ते सत्य छे; पण अमे तमने पूछिए छैए के तमे कोई गुरुनी परिक्षा करीने निश्चे कर्यो अथवा जाण्यो छे ? तेने नेमीचंद प्रकरण कर्त्ता त्रण गाथाए करीने कहेछेः— मूलः— नियमइ अणुसारेण, ववहार नयेण समय सुद्धीए ॥ कालक्खित्तणुमाणेण, परिक्खिउं माणिउंअ गुरु ॥ १३४ ॥ दोहाः— समयसुद्धि व्यवहार नय, निजमतिने अनुसार ॥ काल क्षेत्र अनुमानथी, सुपरिक्षित गुरु धार ॥ १३४ ॥ व्याख्याः— नियमइ अणुसारेण—पोतानी स्वाजाविक बुद्धिना अनुसारे करीने पण अहं बुद्धिए करीने नही; ववहार नयेण—महाव्रत समिति गुप्ती प्रतिलेपणा स्वाध्याय विहारादिक साधुना जे व्यवहार तेणे करीने समयसुद्धिए—सिद्धांतनी शुद्धिए करीने कालखित्तणुमाणेण—संजम खप करता काल क्षेत्रने अनुमाने करीने उपलक्षणथी इव्य जावने पण अनुमाने करीने घणा गाम नगरादिकनेविषे खोलतां खोलतां कालने उचित जिनपतिसूरिगुरु में परक्खिउं—परिख्या छे, अ—च एटलो वली माणिउं—मान्य कर्युं छे अने सारी रीते जाणी लीधुं छे॥ १३४॥ मूल.—तहवि हु नियजडयाए, कम्म गुरु त्तस्स नेव वीससिमो ॥ धन्नाणक यन्नाणं, सुद्ध गुरु मिलइ पुन्नेण ॥ १३५ ॥ दोहा.—तो पण निज जमता करी, न गुरु कर्म विश्वास ॥ पुण्ये धन्य कृतार्थने, मिले सुगुरु गुणरास ॥ १३५॥ व्याख्याः.—जो पण एम छे तहवि—तोपण हुं—निश्चय हुंमा अवसर्पिणी कालादिकने जोगे

तादृशविशिष्ट बुद्धि नथी माटे नियजमयाए–पोतासंबंधी जडपणानो वली कम्मगु रुत्तस्स–प्रथम सुगुरु जोग न थवानी अपेक्षाए करीने कर्मना भारीपणानो नेव–न थीज वीससिमो–अमे विश्वास करता, केमके, पुन्नेण–तादृग विशिष्ट पुन्येकरीने धन्नाण–धन्य पुन्यवत प्राणीउने कयत्थाणं–जेणे अर्थ सिद्ध कस्यो छे एटले जेणे बोध बीजरूप अर्थ नीपजाव्यो छे तेने सुद्ध गुरु–बाह्य अभ्यंतर परिग्रह रहित निर्मल गुरु मिलइ–मले छे. ॥ १३५ ॥

अवतरण – वली कोई शिष्यादिक अथवा वादी वितर्क करे छे के एमां तमा रे शुं प्राप्ति थई? तेविषे कहेछेः– मूल.– अहयं पुणो अधन्नो, ता जइ पत्तो अ ह न पत्तो अ ॥ तहवि हु सो मह सरण, संपइ जो जुग पहाण गुरू ॥ १३६ ॥ दोहा – वलिहुं अपुन्य तदा जदी, लाधो नवि लाधोय॥ तेपिण ते मुज सरण अब, जुग प्रधान गुरु जोय ॥ १३६ ॥ व्याख्या – पुणो–वली अहयं अधन्नो–हुं अपु न्य छुं एटले तादृश वसिष्ट पुन्येकरी रहित छुं ता–ते कारण माटे जइ–जो पत्तो– पूर्वोक्त गुरु में पाम्यो,अह–अथवा न पत्तोअ–न पाम्यो, तहवि–तोपण हु–निश्चे संप इ–संप्रति एटले वर्त्तमानकालनेविषे जो–जे जुगपहाणगुरु–जुगप्रधान गुरु छे,सविज्ञ गीतार्थ आचार्य छे, उपलक्षणथी तेमनी निश्राए जे उपाध्याय अथवा साधु छे सो–ते मह–अमारे सरणं–शरण आधारछे आत्मगुणवृद्धिने अर्थे विश्रामनुं ठाम छे १३६

अवतरण – कोई आशंका करे के, एवी सुगुरुनी प्राप्ति थवाथी पण शुं थयुं? एवो संशय दूर करवाने कहेछे– मूल.– जिणधम्मं दुन्नेयं, अइसय नाणीहिं न ज्ञाए सम्मं ॥ तहवि हु समय ठिईए, ववहार नएण नायवं ॥ १३७ ॥ दोहा – सम्यक् जाणे केवली, जैनधर्म दुर्ज्ञेय॥ तदपि जाणणा योग्य है, श्रुत व्यवहारे तेय ॥ १३७ ॥ व्याख्या – जिणधम्मं–श्रुत चारित्र लक्षण जिनभाषित धर्म छे ते, दु न्नेयं–दुःखे जाणवा योग्य छे केमके, उत्सर्ग अपवाद निश्चय व्यवहारादिक अनेक भागमे नयोए करीने कहेलो छे माटे जिनधर्म दुःखे जाणवा योग्य छे, अइसय नाणीहिं–अवधिज्ञानी चौदपूर्वधर तथा दशपूर्वधरादि अतिशय ज्ञानीओने सम्मं– सम्यक् प्रकारे जिनभाषित धर्म नज्ञाए–जाणीए छैए पण अनिपुण बुद्धिने गम्य नथी, माटे जिनधर्म दुःखे जाणवा योग्य कह्यो, एम निश्चयनये करीने छे तहवि– तोपण हु–निश्चय समयठिईए–सिद्धातनी स्थिति मर्यादाए करीने ववहार नएण– सिद्धातोक्त साधु श्रावक सम्यक् दृष्टिना व्यवहारे एटले व्यवहार नयेकरीने जिनभा षित धर्म नायवं–जाणवा योग्यछे, विधिपूर्वक यथाशक्तिए आराधवा योग्य छे. १३७

अवतरणः— कोई आशंका करे के, एम कहेलुं छे ते केम मानवुं? तेने कहे छेः— मूळः— जम्हा जेणहिं नणियं, सुय ववहार विसोहियं तस्स ॥ जायइ विसुद्ध बोही, जिण आणाराहगत्ताओ ॥ १३७ ॥ दोहा·— शोधित श्रुत व्यवहारनें, निर्मल समकित थाय ॥ जिण आणा राधन थकी, जे कारन जिनगाय ॥१३७॥ व्याख्या·— जम्हा—जे कारणमाटे जिणेहिं—जिन तीर्थंकरोए नणियं--कह्युं छे. सुय ववहार—श्रुत व्यवहारे करीने एटले सूत्र निर्युक्ति वृत्ति नाष्य चूर्णि ए पांचने श्रुत कहिये, ते श्रुतना व्यवहारे करीने विसोहियं तस्स—चारित्रनी विशुद्धी करनार जे पुरुष, तेने विशुद्ध बोही—विशुद्धबोधी एटले अति निर्मल सम्यक्त्व जायइ—थाय. श्याथी? जिण आणा राह गत्ताओ—श्रुतव्यवहारे करीने चारित्रनी विशुद्धि करवा रूप जिन आज्ञानुं आराधकपणुं थवाथी. ॥ १३७ ॥

अवतरणः— कोई आशंका करे के, तमे कह्यु जे सिद्धांतनी स्थितिए करीने अने व्यवहार नये करीने जिनधर्म जाणवा योग्य छे; एवी रीते कहेवाथी जिन धर्म देखाडवावाला गुरु पण सिद्ध थाय छे, तेम छतां तेनेविषे शी शंका छे? तेनो उत्तर कहेछेः— मूळः— जे जे दीसंति गुरु, समय परिरकाइ ते न पुज्जंति ॥ पुणमेगं सद्दहणं, डुप्पसहंतं जउ चरणं ॥ १३९ ॥ दोहाः— जे जे गुरु अव देखिये, ते न मिले श्रुत न्याय॥ पिण श्रद्धा इक छे चरण, डुपसह अंत गवाय॥१३९ व्याख्याः— सांप्रतकाले जेजेगुरु--जे जे गुरु धर्माचार्य उपाध्याय साधु दीसंति—देखाय छे, समय परिरकाइ—सिद्धांतनी परिक्षाए करीने एटले सिद्धांत कथित-व्यवहार नयनी विचारणाए करीने जे धर्माचार्य गुरु छे ते नपुज्जंति—ते नथी पूराता एटले नथी मिलता परिक्षाने नथी सहन करी शकता, शाथी? सिद्धांत कथित अनुष्टानने यथार्थपणे न करवाथी अहीं कोई शंका करे के, एम तो चारित्रनी नास्ति थई? त्यारे ग्रंथकर्त्ता कहेछे के, पुणमेगं सद्दहणं—वळी अमारे एक जिनवचननुं श्रद्धान छे. जउ जे कारणमाटे सिद्धांतमां कह्युं छे. डुप्पसहंत—डुप्रसहआचार्य साधु अंतसुधी एटले डुप्रसह आचार्यसुधी चरणं—चारित्र वर्त्तशे. ए अमारे एक श्रद्धानछे. माटे अमे चारित्र मानिये छैए. चारित्रनो निषेध करता नथी; पण श्रुत व्यवहारे करीने प्रवर्त्ततो देखीए तो कहिये के, कुगुरुने सुगुरु केम कहेवाय.१३९

अवतरण— जे श्रद्धान छे ते शुं करवायोग्य छे ते कहेछेः— मूळः— ता एगो जुग पवरो, मज्झत्थमणेहिं समयदिठीए ॥ सम्मं परिरकियव्वो, मुत्तूण पवाहहलबोलं ॥ १४० ॥ दोहाः— तो मध्यस्थ मनेथि इक, युग प्रधान श्रुत न्याय ॥ रूढी

रीते परिखवो, तजि प्रवाह हलवाय ॥ १४० ॥ व्याख्या – ता– ते कारणमाटे पवाह हलबोलं– लोकप्रवाह संबंधी जे हलबोल विचार रहित जे कलकल तेने, मुत्तूण– मूकीने वली समयदिठीए– श्री आचारांग निसीथ व्यवहारादिक सिद्धांतनी दृष्टिए करीने मझ्झमणेहिं– मध्यस्थ राग द्वेष कदाग्रह रहित जेओनां मन छे ते पुरुषोए एगो जुगपवरो– एक जुगप्रवर एटले सम्यक् ज्ञान क्रियाएकरी सहित एक जुग प्रधान आचार्य होय ते सम्मं–सम्यक् प्रकारे परिक्खियव्वो–परखवो निश्चय करवो, पण आचार्यादिकना आचारे करि रहितने आचार्यादिक मानवु नही १४०

अवतरणः– कोई आशंका करे के, प्रवाह हलबोलने मूकीने एम कह्यु, पण लोक प्रवाहनो हलबोल जो पोते निपुण होइये तो शुं करे? एवुं निवारण करतां कहेछे.– मूल.– संपइ दसमछेरय, नामायरिएहिं जणिय जणमोहे ॥ सुह धम्मओ निऊणवि, चलंति बहु जण पवाहाओ ॥ १४१ ॥ दोहाः– अव दशम चरज नामगणि, जनित नीच जन कर्म ॥ लोक प्रवाहे निपुण पण, पडिआ तजि शुज धर्म ॥ १४१ ॥ व्यख्याः– संपइ–सांप्रत एटले वर्त्तमान दुषमा कालने विषे दसमछेरय– आरंभ परिग्रहमां आसक्त सदा ब्रह्मचारी असंयत थका संयत कहेवरावता तेओने जे पूजवुं तथा वदन नमस्कारादिक करवु, ते असंयत पूजा नामे दशमो आश्चर्यछे, वली नामायरिएहिं–नाम मात्र आचार्य केवल लिंगोपजीवि द्रव्यथकी ने भावथकी साधुनी क्रियाए करीने रहित दशमो आश्चर्य ने नामाचार्य ए बन्ने जाणिय–जाण्युं छे अथवा उपजाव्युं छे, जण–नीच पामर लोकोने उचित मोहे–मोह एटले अति राग तेने, एवा जे निऊणवि–निपुण पण एटले धर्म कर्मनेविषे चतुर पण सुहधम्माउ–शुभ शिव कल्याणकारी जिन भाषित जे धर्म तेथकी चलंति–चलेछे, भ्रष्ट थायछे, तो बीजा अनिपुण पुरुषोनी शी वार्त्ता! केमके, निपुण पुरुष पण धर्मथकी चलेछे, बहु जण पवाहाउ–घणा लोकोनो जे प्रवाह गतानुगतिक एटले विवेकरहित बोलवुं चालवुं प्रवर्त्तवुं, तेणे करीने ते निपुण पुरुष पण जिन धर्मथकी चलेछे पडेछे माटे लोक प्रवाहने मूकीने छेटे रहेवु, भ्रष्टाचार नामाचार्यनो पण परिचय न करवो जो जिनधर्म विधिमार्गनो अभिलाष राख्यो होय तो. ए भाव ॥ १४१ ॥

अवतरण – एवी रीते जेओ लोक प्रवाहमां पडेला छे तेओनुं दुष्टपणुं देखाड्युं, हवे जे जिनधर्मथी पडेलानुं आलंबन लिएछे तेनो दोष, अने जे नथी लेतां तेनो गुण बोलता छता कहेछे.– मूल – जाणिज्ज मिछदिठो, जे पडणा लंबणा

ड गिलंति ॥ जे पुण सम्मद्दिठी, तेसि मणो चडण पयडीए ॥ १४२ ॥ दोहाः— पडना लंबन आचरे, मिथ्यादृष्टि तेय ॥ जे समदृष्टि तेहनो, मनचडते पगथेय ॥ ॥ १४२ ॥ व्याख्याः— जे–जे पुरुष पडणालंबणाई–पडेला एटले जिनभाषित शुद्ध विधिमार्ग थकी भ्रष्ट थएला पासत्थादिकनी तथा तेठना श्रावक लोकोनी कुप्रवृत्तिनुं बहुमानरूप जे आलंबन तेने गिल्लंति–ग्रहण करेछे एटले एनीपासे भगवतनो वेष छे, जिनागम भणेछे भणावेछे; तथा संभळावेछे, माटे एने चैत्य वासादि कस्याथी शुं बगडेछे? इत्यादिक पडेला पुरुषोनी कुप्रवृत्तिनुं बहुमानरूप जे आलंबन तेने जे पुरुष ग्रहण करेछे, तेने मिच्छद्दिठी–मिथ्यादृष्टि जाणिय्य–अ हो भव्य, तमे जाणो. पुण–वली जे–जे पुरुष सम्मद्दिठी–सम्यकदृष्टि छे, तेसिम णो–तेनुं मन चडणपयडीए–चडती पगथीए वर्त्ते एटले चडते चडते गुणस्थान मार्गे वर्त्ते, पण पापस्थाने वर्त्ते नही; कह्यु छे के जेणे अमृत चाख्युं होय, तेने बाकस बुकसनी रुचि केम थाय? अपितु नहीज थाय. तेम जे सम्यक्त्व रसनो ज्ञाता पुरुष होय ते घणा कालथी सेवेलुं मिथ्यात्वादि पापरूप कुभोजन तेने निंदे अने त्याग करे, पूर्व कर्मना योगथी जो कांई पापरूप कुभोजन सेवेछे तो पण भावथी ते सम्यक्त्वरूप अमृत भोजननेज वांछे छे। अथवा करेछे, केमके, तेणे सम्यक्त्व अमृत प्रथम आस्वादेलुंज छे; माटे पाप कुभोजनने केम वांछे? अपि तु नहीज वांछे रूडा आलंबन आदरे, पण खोटा आलंबन आदरे नही. एवुं सम्यक्त्ववाननुं लक्षण होय छे ए भाव ॥ १४२ ॥

अवतरणः— हवे पडेला पासत्थादिक लोकोनुं बाहुल्यपणुं जोईने सुमार्ग तत्पर पुरुषोनो समागम अति दुर्लभ छे, एम देखाडता छता कहे छेः— मूलः— सव्वंपि जए सुलहं, सुवन्न रयणाइ वत्थु विछारं ॥ निच्चंचिय मेलाव. सुमग्ग निरयाण ज इ दुलहं ॥ १४३ ॥ दोहा.— सुलभ सकल पि कनकमणि, आदि वस्तु विस्तार मार्ग निपुणनो संग जग, अति दुर्लभ अवधार ॥ १४३ ॥ व्याख्याः— जए–जग तनेविषे सुवन्न रयणाइ वत्थुविछारं–सुवर्ण रत्नादिक वस्तुनो विस्तार सव्वंपि सुलहं अनंत वार पामवा माटे ते सर्व सुलभ छे, पण सुमग्ग निरयाण–सुमार्गनिरता पुरुषोनो एटले जिनभाषित विधिमार्गनेविषे जे तत्पर ते पुरुषोनो निच्चचिय–नि त्यमेव एटले निरंतरज मेलाव– मिलाप एटले समागम ते अइदुलहं– अति दुर्लभ छे; केमके, ते सद्धर्म प्राप्तिनुं कारण छे माटे. ॥ १४३ ॥

अवतरणः— हवे मार्गतत्पर पुरुषोनो समागम छतां पण जेने अभिमान ऊ

वे ठे तेनुं स्वरूप कहे ठेः-- मूल -- अहिमाणविसोपसमढ यं च थुवंति देव गु रुणो य ॥ तेहि पि जओ माणो, हीही त पुव डुचरिअं ॥ १४४ ॥ दोहा -- मा नविषोप समाववा, शुद्ध देव गुरु धर्म ॥ ते सेवे पण मद थयो, हा ते पूर्व कु कर्म ॥ १४४ ॥ व्याख्या -- देवगुरुणोय-- अढार दोष रहित, द्वादश गुण सहि त जे अरिहंत देव तेनी, तथा सत्तावीश गुणालंकृत गुरु सुसाधु तेनी, थुवंति-- स्तवनातथा उत्कीर्तना करवी, उपलक्षणथी अभ्युत्थान नक्ति बहुमान वंदन न मस्कारादिक करवां ते अहमाण विसोपसोपढ यं च-- जात्यादि अनिमानरूप विषने उपशमाववाने अर्थे ठे, च शब्द थकी मिथ्यात्वादि दोष उपशमाववाने अर्थे ठे, केम के, सुदेव सुगुरुनी स्तुति करवाथी अनिनिवेश कदाग्रह अज्ञान अ निमान टले अने शुद्ध सम्यक्त्वनी प्राप्ति थाय. एम आगममां कह्युं ठे. तेहिपि-- ते देव गुरुये करीने जओ-- जो माणो-- मान अनिमान देव गुरुविषे थयो. केम थयो ते कहे ठे -- आ चैत्य मारा पूर्वजोना ठे, एने मूकीने बीजा चैत्यमां उत्स वादिक करवाने केम जवाय? इत्यादिक देवविषे अनिमान; वली ए गुरु मारे अं गीकार करेला ठे, ए गीतार्थ क्रियावंत गुणवंत ठे. तेविना बीजा गुरुओ नले गुण वान होय तो पण तेनी ऊपर राग धरे नही, उलटुं मठर नाव आणे. इत्यादि गुरु विषे अनिमान थयो, ही ही--ए मोटी खेदनी वात ठे. तंपुवडुचरियं--तेपूर्वेनवलुं डुष्कर्म चरित ठे. एटले ते पोतानो दोष ठे एमां बीजा कोईनो दोष नथी॥१४४॥

अवतरण -- जेने खोटा अनिमानरूप धन ठे, ते सदैव असद्भुत पदार्थ ने माने ठे, तेने उपालंन सहित प्रगट दोष जणावीने निर्नत्सना करता ठता कहे ठे -- मूल -- जो जिणआयरणाए, लोओ न मिलेइ तस्स आयारे ॥ हा हा मू ढ कारिंतो, अप्पं कह नणसि जिण पणयं ॥ १४५ ॥ दोहा.-- जिन आचरण थ की जुदो, जे जण तसु आचार ॥ रे सठ करतो किम कहे, हुं जिन नगत उदार ॥ १४५ व्याख्या.-- लोलोओ-- जे पासलादिक लोक ठे ते जिण आयरणाए-- जिन नाषित आचरणानी साथे नमिलेइ-- नथी मलता, तस्स-- ते पासलादिक नो जे आयारे-- निजमति कल्पित जे आचार ठे तेने कारिंतो-- अंगीकार करतो ठतो हा हा-- मोटी खेदनी वात ठे. मूढ-- हे मूर्ख, अप्पं-- पोताने जिणपण यं-- जिनने विषे सुगुरुने विषे नमस्कार करवावालो, स्नेह करवावालो कह-- के म नणसि-- तु कहे ठे, जो जिननाषित आचरणाने आचरतो होय तो तारुं कह्यु सनवे, माटे फुव बोलीने शासारु-- फोकट आत्माने विटंबना करेठे. ॥ १४५ ॥

अवतरणः– अही कोई वितर्क करे के, जिन आचरणा मूकीने कोई पासत्था दिकनी कहेली आचरणा अंगीकार करता हशे, तेनो उत्तर कहेछेः– मूलः– जं चिअ लोओ मन्नइ, तंचिअमन्नंति सयल लोआवि ॥ जं मन्नइ जिणनाहो, तंचि अ मन्नंति किवि विरला ॥ १४६ ॥ दोहाः– जाकूं मानै लोक तस, मानै लोक अनेक ॥ मानैं जास जिनेंद्र तसु, माने कोइक छेक ॥ १४६ ॥ व्याख्याः– लोओ– पासत्थादिक लोक जंचिय- जेआचरणाने मन्नई- मानेछे सयल लोआवि–तादृशवि वेक विकल सकल लोक पण तचिअ–ते पासत्थादिकनी स्थापेली आचरणाने म न्नंति–मानेछे, जेम लींबडानो कीडो लींबडाने सारुं मानेछे, तेम,वली जिणनाहो–जि ननाथ जं–जे आचरणाने मन्नइ–मानेछे, सम्यक् जाणेछे,तेम किवि विरला–केटलाए क विरला हलुकर्मी जीव तचिअ–ते जिनभाषित आचरणनेज मन्नंति–मानेछे, यथाशक्तियें पाले, आराधे छे, जिनधर्म पालवु ते नदीना पूरनी सांबे जवा बरा बर छे. माटे कोईक हलु कर्मी जीव जिनभाषित धर्म आचरणने मानेछे किव हुणा एटले घणु कह्याथी शुं! ॥ १४६ ॥

अवतरणः– अही कोई वितर्क करे के, लोको प्रायेकरी लोकोनुंज कहेलुं मानेछे, जिनराजनुं कहेलुं मानता नथी, एवो तेओनो स्वभावज छे; ते भले पण जिनराजनुं कहेलुं न मान्या छतां अने लोकोनु कहेलुं मान्या छतां जे दोष थायछे ते कहे छे – मूलः– साहंमि आउ अहिओ, बंधसुआईसु जाण अणुराओ ॥ तेसिं नहु सम्मत्तं , विन्नेयं समयनीईये ॥ १४७ ॥ दोहा– साधर्मीथी अधिक जस, परि· जन उपर प्रेम ॥ तास न समकित मानियें, आगम नीती एम ॥ १४७ ॥ व्या ख्याः–जाण–जेने साहम्मिआउ–सम्यक्त्वादि गुणे करीने जे सरखा ते साधर्मी,कहि ये तेथीपण बंधसुआइसु–बांधव पुत्रादिकनेविषे आदि शब्दथी माता पिताभार्यादिक नेविषे अहिओ–अधिक अणुराओ–अणुराग स्नेह वर्त्ते छे. तो तेसिं–तेने नहु–नही ज सम्मत्तं–सम्यक्त्व, होय ए वात समयनीईये–सिद्धांतनीतिएकरीने विन्नेयं–विशेषप णे जाणवा योग्य छे साधर्मीनी साथें कोई प्रकारनो कलह अथवा क्लेश करवो नही वली साधर्मी सीदातो होय तो तेने सहाय करवुं, केमके, शास्त्रमां कह्यु छे के, संसारमां साधर्मीना जेवुं वीजुं कोई सगपण नथी. साधर्मीनो सेवा भक्ति वाछलताए करीने सम्यक्त्व विशेष निर्मल थाय. माटे बंधु सुतादिक सर्व स्वज ननो अनुराग ते करमबंधनुं कारण ए दोष जाणी साधर्मीनेविषे अधिकतर धर्मा नुराग निरंतर राखवो एजश्रेय गुण छे. ॥ १४७ ॥

अवतरण — एवी रीते लोकाचारने माननारनो दोष प्रगट करीने हवे ते लो काचार संबंधी निषेधनो उपदेश कहेछे.— मूल — जइ जाणिसि जिण नाहो, लो यायारा विपरकए नूओ ॥ ता त त मन्नंतो, कह मन्नसि लोअ आयार ॥१४७॥ दोहा — जिनपति लोकाचारथी, जो तु जाणे जिन्न ॥ तो किम लोकाचारने, तु माने प्रज्ञु मन्न ॥ १४७ ॥ व्याख्या — जइ—जो जाणिसि—तु जाणेछे, जिणनाहो—जिननाथ एटले जिनवरेंद्र छे ते लोआयारा—दर्शनभ्रष्ट पासत्थादिक तथा चतुर्द र्शनी ब्राह्मण परिव्राजक त्रिदंडी तापसादिक जे लोक, तेओना आचारथकी विप रकए नूओ—विपक्षनूत छे, एटले न्यारो छे अथवा ते लोकोना आचारोनो जिन नाथ विपक्ष नूत छे एटले शत्रुरूप छे एम जो हे नइ तु जाणेछे, ता—तो त— तु त—ते जिननाथने मन्नंतो—मानतो अथवा जाणतो छतो लोअआयार—लोक ना आचारने कह—केम मन्नसि—तु मानेछे ॥ १४७ ॥

अवतरण.— तु लोकाचारने केम मानेछे? एम कह्यु तेनेज फरी दृढ करेछे; तथा जिनेंद्रने मान्या थका पण जे मुग्ध लोको छे ते बीजा देवोने मानेछे ते दे खाडता छता कहेछे.—मूलः— जे मन्नेवि जिणिंदं, पुणोवि पणमंति इअर देवाण॥ मिछत्त सन्निवायग, गछाण ताण कोविज्जो ॥ १४ए ॥ दोहा.— जिनवरने प्रण मी वली, जे प्रणमे अन देव ॥ सन्निपात मिथ्यात हत, तस कुण वैद इहेव ॥१४ए॥व्याख्या — जे—जे मुग्ध तत्वना अजाण छे, ते जिणिंदं—जिनेंद्र देवने पण म न्नेवि मानेछे अने पुणोवि—वली पण इयरदेवाण—इतर जे जिनेंद्र देवथी बीजा ह रि हर ब्रह्मादिक रागी द्वेषी मिथ्यादृष्टि देव छे तेने पणमंति—प्रणमे छे एटले पूजे छे; ताण—ते मिछत्तसन्निवायगगछाण—मिथ्यात्वरूप सन्निपात रोगे करि ग्रस्त थएला गलायला अथवा व्याप्त थएलानो कोविज्जो—वैद्य कोण थाय! अपितु तेनो कोई वैद्यज नथी केमके, जेने अमृत समान जिन धर्म पुरिस विषसमान मिथ्या धर्म जेवो थयो तेनो हितोपदेशक गुरु वैद्यराज शु उपाय करे! ॥ १४ए ॥

अवतरण — हवे मिथ्यात्वरूप सन्निपात रोगेकरी ग्रस्त थएला शु करेछे ते कहेछे— मूल.— एगो अ गुरू एगो वि सावगो चेइआणि विवहाणि, ॥ तछय जं जिणदवं, परुप्पर तं न विच्चंति ॥ १५० ॥ दोहा— गुरू एक वलि श्रा द्ध इक, चैत्य विविध चित्रेव ॥ तामे जो जिनद्रव्य ते, दिए परस्पर नेव ॥१५०॥ व्याख्याः—एगोअगुरू—एकज गुरू केमके लिंग आचार एक माटे एक गुरू, एगोवि साव गो—एक पण श्रावक कारणके सर्वना देवगुरु धर्म एक माटे श्रावक पण एक चेइआणि

विवहाणि– चैत्य देहरासर अथवा जिनप्रतिमा ते विविध अनेक छे; तथापि जि नेंद्र देव सर्वे सरखा माटे चैत्य पण एकज; ए त्रणे एक एक थए थके पण त छय– त्यां एटले ते श्रावकोनी पाशे जं– जे जिणदवं– जिन द्रव्य छे; उपल क्षणथी ज्ञान द्रव्य साधारण द्रव्य छे तं–ते द्रव्य परुप्परं–परस्पर एटले माहो मांहे चैत्य ज्ञानादिक कार्य पडेछते न विक्कंति– नथी वेचता एटले नथी आप ता; ते लोनी सुखना लालची गुरु निर्मल उपदेश तेने देता नथी; पण उलटुं जेथी अहंकार ममकार पणु वधे तेवो उपदेश करे छे. ए नाव छे ॥ १५० ॥

अवतरण.– एम करता छता ते गुरु आदिक छे के नथी? ते विषे कहे छेः– मूलः– ते न गुरू नो सड्ढा, न पूइओ तेहि होइ जिणनाहो ॥ मूढाणं मोह विई, सा नज्जइ समय निउणेहि॥१५१॥ दोहा – ते गुरु नहि श्रावक नही, नहि प्रनु पूजक तेय ॥ मोह थिती मूढोतणी, जाणो श्रुत निपुणेय ॥१५१॥ व्याख्याः– ते– ते नगुरु–तेगुरु नथी केम के, सुख दाक्षिणताएं करीने जिनोक्त निर्मल उपदेश नथी देता माटे तथा नो सड्ढा–ते श्रावकपण नथी, केम के, चैत्यादि द्रव्य चैत्यादि का र्य पक्षपाथी ममताने लीधे नथी वेंची आपता माटे ते श्रावकपण नही कहेवाय वली तेहिं–तेणे जिणनाहो–जिननाथ पण नपूइओ होई–पूज्यो नथी एम छे केमके जे ममकारादिक क्लिष्टचित्तवाला यद्यपि पूजादिक करे तथापि तेने पूजादिक कर वावाला न कहिये. माटे शिष्य कहेछे तो तेने शुं कहिये? गुरु कहेछे मूढाणं–मू र्खोनी मोहविई–मोहस्थिति कहिये सा–तेवात समय निउणेहि–सिद्धांतमां जे निपुण पुरुषछे तेने नज्जइ–जणाय छे पण बीजा जाणता नथी॥ १५१ ॥

अवतरण – पूर्वे गाथामां कह्यु नथी ते गुरु तेजवात प्रगट करता छता कहे छेः–मूल.–सो न गुरू जुग पवरो, जस्स वयणंमि वट्टए नेओ ॥ चिय नवण स ड्ढगाणं, साहारण दव्वमाईणं ॥ १५२ ॥ दोहा.–चैत्य नुवन वलि श्राद्धजन, साधारण द्रव्यादि ॥ तास नेद जसु वचनमें, तेगुरु छे जगदादि ॥ १५२ ॥ व्या ख्या.– जस्स–जेगुरुना वयणंमि–वचने करीने एटले कुटिल उपदेशे करीने तथा पोतासंबंधी चैत्यादि कराववुं ते तमने प्रधान छे, एम साक्षात् उपदेश दीधाथी चियनवण–चैत्यनवनोने विषे एटले जिन प्रासादोने विषेतथा सड्ढगाणं–श्रावकोने विषे वली साहारणदव्व माईणं–साधारण द्रव्यादिकने विषे आदि शब्दथी ज्ञान द्रव्यने विषे नेओ–नेद वट्टए–वर्त्ते छे, एटले अहंकार ममकारनी बुद्धिएकरीने पोता संबंधी चैत्य तथा श्रावकादिक थापीने माहोमांहे जे जगडा करावे छे, नेद

पाडे छे ते जुग पवरो जुग प्रधान गुरु–आचार्य न–नथी केम के, प्रथम जे विशेषण कह्युं ते कुगुरुनुं छे माटे ते जुगप्रधान गुरु न जाणवो ॥ १५१ ॥

अवतरणः–अही कोई वितर्क करे के, जेनां वचन थकी चैत्य भवनादिकोनो भेद वर्ते छे, ते जुग प्रवर गुरु न होय, एम जे कह्यु, ते तो तीर्थंकरादिकवर्त्ते ते काल नेविषे युक्त छे, पण हमणा तो भेद विना कोई पण मर्यादा नहोय! ए आशंका दूर करवाने सांप्रतहमणा पण सिद्धांत कथित विधिनेविषे जे पुरुष नथी प्रवर्तता तेओना दोष देखाडता छता कहे छे– मूल – संपइ पहुवयणेणवि, जाव न उल्लसइ विहि विवेयत्तं ॥ ता निविड मोह मिच्छ त्त गंठिया दुठ माहप्पं ॥ १५२ ॥ दोहाः–प्रगटे न विधि विवेक अब, प्रभु वचने पण जाव ॥ ताव निबड मिथ्यात्वनी, गंठिणो अनुभाव ॥ १५२ ॥ व्याख्याः–संपइ–सप्रति एटले वर्त्तमान कालनेविषे पण पहु वयणेणवि–प्रभु भाषित जे वचन, आगम ते सांभल्याथी जाव–ज्या सुधी विहिविवेयत्तं–जिन द्रव्यादिकनुं जिनागम उक्त प्रकारे वधारवु, खरचवुं, रक्षण करवु, तथा द्रव्ये भावे पवित्र थईने आशातना टाली, अभिगम साचवी, जिनपूजा करवी, सुगुरु भक्ति करवी; तथा दोष रहित सामायक प्रतिक्रमण पोषध उपवास करवा, तथा निरतिचार सम्यक्त्व सहित सर्वे व्रत पालवां, इत्यादिक विधिविवेक पणुं जेने न उल्लसइ–नथी उल्लासने पामतो, ता–ते कारण माटे ए निविडमोहमिछत्तगंठिया दुठ माहप्पं–निबिड एटले अतिदृढ मोह मिथ्यात्वनी गांठनुं कोई दुष्ट माहात्म्य छे, एटले प्रभाव छे, एम जाणवुं केमके छती समर्थाईये सिद्धांतोक्त विधिनेविषे न प्रवर्त्तवु ते प्रभुना वचननी आशातना छे. ॥ १५२ ॥

अवतरणः– ते कारण माटे हवे प्रभुवचननी आशातनानुं दुष्टपणुं कथन करतां छता कहेछे– मूल – बंधण मरण भयाइ, दुहाइ तिरकाइ नेअ दुरकाइ ॥ दुरकाण दुह निहाण, पहुवयणा सायणा करण ॥ १५४ ॥ दोहा – बंधन मरण भयादि दुख, नहि तीक्ष्ण दुख जाण ॥ जे अविनय प्रभु वचननो, ते दुख दोष निधान ॥ १५४ ॥ व्याख्या – बंधन–दोरडादिके करी बांधवु, मरण–आयु अथवा प्राणनो नाश, भयाइ–इह लोकादिक सात भय इत्यादिक जे दुरकाइ–दुःख छे ते, तिरकाइ–तीक्ष्ण एटले आकरा दुरकाइ–दुःख नेअ–नथीज थोडाकाल रहेछे पण पहुवयणा सायणाकरण–प्रभुना वचननी आसातनानुं जे करवु, ते दुरकाण–जन्ममरणादिक दुःखनु दुहनिहाण–दुःख निधान छे; एना जेवु बीजुं कोई ससारमां दुःख नथी ए भाव ॥ १५४ ॥

अवतरणः— एवी रीते आशातनाना करनार संबंधी अनंत दुःख कह्यां, हवे वर्त्त मानकालादि दोष थकी यथोक्त विधि करवाने असमर्थ एवो जे पोतानो आत्मा तेने निंदतां छतां कहे छेः— मूलः— पहुवयण विहिरहस्सं, णाऊणं जाव दीसए अप्पा ॥ ता कह सुसावगत्तं, जं चिन्नं धीर पुरिसेहिं ॥ १५५ ॥ दोहाः—वीर वच न विधि सार लखि, जब निज आतम जोय ॥ तो कहँते गृहि धर्म जे, गृह्यो धीर पुरुषोय ॥ १५५ ॥ व्याख्याः— पहुवयण विहि रहस्सं—प्रभुना वचन सिद्धांत नो जे विधिनो सार तेने नाऊणं—जाणीने जाव—यावत् एटले ज्यांसुधी अमे अप्पा—पोतानो आत्मा दीसए—देखीए छैए. ता—त्यारे एम विचार थाय छे के, मारेविषे कह—क्यांथी सुसावगत्तं—सुश्रावकपणुं धीरपुरिसेहिं—कामदेव अरणक श्रावकादिक धीर पुरुषोए जं चिन्नं—जे आचर्युं ते. ॥ १५५ ॥

अवतरणः— कोई वितर्क करेछे के, जो धीर पुरुषोए अंगीकार करेलुं श्रावक पणुं नथी तो शा कारणथी देवपूजादि अनुष्ठानविधिनेविषे पोताना आत्मा ए प्रकारे पर्यासीए छैए एटले जोडिये छैए? ए आशंकाए करीने कहेछेः— मूलः— जइवि हु उत्तम सावय, पयडीए चडण करण असमत्थो ॥ तहवि पहुवयण कर णे, मणोरहो मज्झ हिययम्मि ॥ १५६ ॥ दोहा— यदपि सुश्रावक सेढिए, चढण कढण असमर्थ ॥ तदपि मनोरथ मुजहिये. कवहू करूं तदर्थ ॥१५६॥ व्याख्याः— जइवि—जोपण हु—निश्चे, उत्तम सावयपयडीए—पूर्वोक्त उत्तम श्रावकोनी पगथीए एटले श्रेणिए चडण करण असमत्थो—चडण करवाने एटले आरोहण करवाने अ समर्थ एवो हुं छुं तहवि—तथापि एटले तोपण पहुवयण करणे—प्रभुनापित वच न अंगीकार करवानेविषे एटले श्रीवीतराग कथित जे विधिनुं करवुं तेनेविषे म णोरहो—मनोरथ मज्झहिययम्मि—मारा हृदयमां वर्त्तेछे, एटले जोपण उत्तम श्राव कोनी पदवीने आरोहण करवाने हुं असमर्थ छुं तो पण प्रभुवचन अंगीकार क रवानो मनोरथ मारा हृदयमां वर्त्तेछे, अने पोतानी यथाशक्तिप्रमाणे आराधु छुं, तेमाटे सम्यक्त्व प्राप्ति योग्य कोईएक श्रावकना भेदमां छुं निश्चयतो श्रीवीत राग देव जाणे. ॥ १५६ ॥

अवतरणः— हवे वली ते जिनवचन अंगीकार करवाना मनोरथनी वांछा कर ता छतां कहेछे, जे कारण माटे प्रभुना वचन अंगीकार करवानो अमारा मनमां मनोरथ छे — मूलः— ता पहु पणमिअ चलणे, इक्कंपछेमि परम भावेण ॥ तुह व यण रयण गहणे, अइ लोहोमज्झ हुज्ज सया ॥ १५७ ॥ दोहाः— तो सुन भावे

प्रजुनमत, चरणे जाचूं एक ॥ होय सदा मुज तुम वचन, रतन लोन अतिरेक. ॥ १५७ ॥ व्याख्या.– ता–ते कारण माटेज पहु–हे प्रजो, श्रीवीतरागदेव, चरणे–तमारा चरण जुगलने पणमिअ–प्रणाम करीने परम जावेण परम उत्कृष्ट जावथी इक्क–एक वस्तु पत्थेमि–हुं प्रार्थु छुं एटले मांगु छुं, ते एक वस्तु तुहवयण रयण गहणे–तमारा वचनरूप दुःख दारिद्र दौर्जाग्यादिक दूर करवाथी रत्ननीपेरत्न, तेनुं ग्रहण करवानेविषे अइलोहो–अतिलोन एटले अति ग्रहणपणुं मज्ज–अमारे हुज्ज–होय सया–सदा ॥ १५७ ॥

अवतरणः– कोई वितर्क करे के, एवीरीते शासारु इछा करवी पडे? पोतानी मेलेज जिन वचनरूप रत्ननुं ग्रहण करवानेविषे लोन थशे ? ए आशंका करीने कहेछे.– मूल.– इह मिछवास निकिठ जावउगलिअ गुरुवि वेआण ॥ अम्हाण कह सुहाइ, संजाविज्जति सुमिणेवि ॥ १५८ ॥ दोहा – मिथ्यावास सुमलिन मन, गत विवेक हममाहि ॥ कहांथि सुख संजाविए, स्वपनविषे पण नाहि॥१५८ व्याख्या.– इह–ए पांचमा दूषम कालनेविषे मिछवास–मिथ्यात्वनी वासनाए आछाए करीने निकिठ जावउ–निक्लीष्ट एटले अति मलिन जाव परिणाम थयो तेथी गलिअ गुरुविवेआण– गलायो छे एटले नाशने पाम्योछे तत्व अतत्व संबंधी प्रथग जाव एटले न्यारा न्यारा जाव, जे मोटा विवेक विचार जेना एवा जे अम्हाण– अमे, तेने सुमिणेवि - स्वप्ननेविषे पण सुहाइ– जिनवचनरूप रत्न ग्रहण करवु ते सुख हेतु माटे सुख ते कह–शा प्रकारे करीने संजाविज्जंति–संजाविए एटले विचारिए अथवा थापिए? केमके, मिथ्यात्वे करीने वासित छे मति जेनी, अने गयो छे मोटो विवेक जेनो तेने तेवुं सुख क्यांथी थाय? ॥ १५८ ॥

अवतरण –शीरीते क्यांथी होय ते रीत कहेछे –मूल –जं जीविअमित्तंपि हु, धरेमि नामं च सावयाणपि ॥ तं पिपहु महा चुज्जं, इह विसमे दूसमे काले॥१५९॥ दोहाः– धरुं जो जीवित मात्र पण, नाम श्राद्धनो सार ॥ तेपण अति अचिरज प्रजु, दूसम काल मझार ॥ १५९ ॥ व्याख्या – इहविसमे दूसमेकाले–आ विषम दूसम कालनेविषे जं–जो जीविअ मित्तंपि–देश संयमरूप जीवितमात्रने पण कोईक प्रकारना जंगे करीने हु–प्रकटपणे सावयाणपि–सम्यक्त्व पूर्वक द्वादश व्रत धारी श्रावकोनो च–वली नामं–नाम मात्रप्रते धरेमि–हुं धारण करुंछुं; तं पि–ते पण पहु–हे प्रजु, हेनाथ महा चुज्जं–मोटो आश्चर्य छे, बीजु वधारे शु कहिये? ॥

अवतरण.–ए प्रकारे कालादिकना अनुसारे करीने पोताना स्वरूपने कहीने हवे

पोतानुं जन्म सफल करवाने अर्थे सुगुरुने विनती करता उता कहेडे — मूलः— परिन्नाविकण एवं, तइ सुगुरु करिज्ज अम्ह सामित्तं ॥पहुसामग्गि सुजोगो; जइ सहलं होइ मणुअत्तं॥१६०॥दोहाः— इम विचार करि तिम सुगुरु, हमने करो सनाथ॥सुजन होय जिम नरपणुं शिव सामग्री साथ ॥ १६० ॥ व्याख्याः— एवं—दूषमा काळनेविषे जिन नाषित धर्मनुं डुर्लनपणुं डे ए प्रकारे परिन्नाविकण—परिन्नावीने एटले वीचारीने सुगुरु—हे सुगुरु; हे शोजन आचार्य एटले हे सम्यक् ज्ञान दर्शन चारित्रादि गुण संपन्न सुगुरु तइ—तेम अथवा ते प्रकार अम्हसामित्तं—अमारा संबंधी स्वामीपणाने करिज्ज—करो एटले ते प्रकारे अमारा ऊपर तमे स्वामीपणुं धारण करो. जइ—जेम अथवा जे प्रकारे पहुसामग्गिजोगो—प्रनुदर्शनादिकनी सामग्रीनो एटले प्रनुनाषित धर्मसामग्रीनो सारो योग थाय, ते थएथके मणुअत्तं—मनुष्यपणुं सहलं— सफल होइ—थाय, केमके, संसारमां चार अंग जीवने पामवा डुर्लन डे, तेमां प्रथम मनुष्य पणुं, बीजुं सिद्धांतनुं सांनळवुं, त्रीजुं सिद्धांतने सांनळीने जिन वचननी श्रद्धा करवी, श्रद्धा थया पढी तप संयमने विषे पराक्रम फोरववो; ए चार अंग डुर्लन डे. तेमां प्रथम मनुष्य पणुं डुर्लन कह्युं, पण ते मनुष्य पणुं सफल क्यारे थाय, ज्यारे शेष त्रण अंगनी प्राप्ति थाय माटे हे सुगुरो अमारा ऊपर तमे स्वामीपणुं करो के जेम प्रनु नाषित धर्म सामग्रीनो रूमो जोग थाय, ते अवाथी मनुष्यपणुं सफल थाय? ॥ १६० ॥

अवतरण -- हवे समाप्तिने अर्थे ग्रंथकार पोतानुं नाम कथन पूर्वक तथा तेना अध्ययनादिकथी थता फलना कथन पूर्वक अने स्मरणनी उपादेयता प्रते एटले तेनुं जे अंगीकारपणुं तेने कहे डे.-- मूल — एव नंमारिअ ने, मि चंदरइआउ कइविगाहाउ ॥ विहि मग्गरया नव्वा, पढंतु जाणंतु जंतु सिवं ॥ १६१ ॥ दोहा नेमिचंद नंमारिकृत, गाथा केइक एम ॥ विधि मग मग्न नविक नणो, लखो लहो शिव क्षेम॥ १६१ ॥ षष्टि शतक प्राकृत थकी, दोधक किया सुनास ॥ दोधक शोधक बुद्धिजन, सेवक मोहन तास ॥ १६२ ॥ व्याख्याः—एवं—ए प्रकारे सज्जन नंमारीनो पुत्र अने जिनेश्वर सूरीनो पिता प्रसिद्ध एवो जे नंमारीअ नेमिचंद—एटले नंमारिक गोत्री नेमिचंद श्रावक तेणे रइआउ—रचिउ जे कइवि—केटली गाहाउ—गाथा? एकशो ने एकसठ; ते गाथाउने विहिमग्गरया—श्री वीतराग नाषित विधिमार्ग एटले मोक्षमार्गनेविषे रत एटले तत्पर एवा जे नव्वा—नव्य जीव ते पढंतु—सूत्र थकी नणो, जाणंतु—अर्थ परिज्ञानेकरी जाणो; सूत्रार्थ बेहु सम्यक् प्र

कारे अन्यासीने सिवं–शिवप्रत्ये एटले निरुपद्रव मोक्षने जाउ–पामो ए ग्रंथ न ण्याथी तथा ग्रंथनो सम्यक् प्रकारे अर्थ जाण्याथी निश्चल सम्यक्त्व थाय छे, निश्च ल सम्यक्त्वथी क्षायिक ज्ञान चारित्र थाय. ते क्षायिक ज्ञान चारित्रेकरी अनुक्रमे वछि त अर्थनी सिद्धि थाय वली वछित अर्थ छे ते नव्य जीवोने शिव प्राप्तिज जाणवी; बीजो कोई वछितार्थ नथी तथा शिव शब्द ग्रंथना अते अंगीकार कर्यो ते मगल अ थवा कल्याणने अर्थे जाणवो. इति गाथार्थ ॥ १६१ ॥ इति श्रीषष्टी शतक समाप्त

तपोरत्न श्री गुण सुंदर उपाध्यायकृत षष्टी शतकनी टीका ते श्रीशांति सागरजी महाराजजीनी समीपे श्रीराजनगरमध्ये श्री गुरु बुद्धिविजय महाराज जीनो उपासक जे वृद्ध गोत्री उसवाल मोहनलाल, तेणे सांनली धारी विचारीने ते नो किंचित् नावार्थ ग्रहण करीने षष्टी शतकनो अक्षरार्थ केवल नाषारूप बालाव बोध कर्यो; तेमां श्री वीतरागनां वचनथी जे कांई अधिकुं उंडुं विपरीत लखाणुं होय, कोई प्रकारनुं उत्सूत्र लखाई गयु होय, तथा कोई कानामात्रादि ह्रस्व दीर्घनो फरक पड्यो होय, तस्स मिच्छामि दुक्कमं एटले तेनु जे पाप मने लाग्युं होय, ते मिथ्या फोकट थाउ. वली स्याद्वाद श्री जिनमत निपुण परोपकार स्वनाववाला पुरुषोए मुज अल्पमति उपर अनुग्रह करीने आ षष्टी शतकनो बालावबोध शोधी लेवो एज विनती छे. ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥

इति श्री षष्टीशतक नामक ग्रंथ दो हा तथा बालावबोध सहित समाप्त.

॥ श्री वीरपरमात्मायनमः ॥

सकलपंमित चक्रचक्रवर्त्तिपंमित श्रीक्षमाविजयगणि शिष्यमुख्यपंमित परषद मिनीजालतिलक पंमित श्रीजिनविजयगणि गुरुन्योनमः सिद्धि बुद्धि विधायिने श्रीमत् गौतम स्वामिनेनमः

अथ श्री पंमित उत्तम विजयजीकृत संयमश्रेणीनुंस्तवन अर्थसहित प्रारंनियेछे.

श्रीवर्द्धमानंजिनंनत्वा ॥ वर्द्धमानगुणास्पदं ॥
स्वोपज्ञसंयमश्रेणी ॥ स्तवस्यार्थोवितन्यते ॥ १ ॥

॥ ढाल पहेली प्रथम गोवालातणेनवेजी एदेशी ॥

केवल ज्ञान दिवाकरूजी ॥ सिद्ध बुध सुखदाय ॥ आतम सं
पद नोगवेजी ॥ वर्द्धमान जिनराय ॥ गुणोदधि शासन ना
यक वीर ॥ मेरू महिधर धीर ॥ गुणो० ॥ शास० ॥१॥ एआंकणी

अर्थ ॥ समस्त केवलज्ञानावरणी कर्मना क्षयथकी उपनुंजे केवलज्ञान तद्रूप सूर्यछे क्षायकनावें सकलगुण निष्पन्नसिद्धछे समस्त वस्तुस्वनावनुं बुद्धके० जाण छे उपकारीपणे सर्वसुखनुं दातारछे स्याद्वादपणे परिणमित अनंतगुण पर्यायरूप आत्मसंपदाने नोगवेछे एहवो चोवीसमो तीर्थंकर सामान्य केवलीउंमां राजा सरिखो श्रीवर्द्धमानस्वामी गुणोनोसमुद्र गुणरूप रत्ननी उत्पत्तिनुं स्थानक वर्त्तमान शासननुं अधिपति श्रीवीरपरमेश्वरछे वली उपसर्ग परिसह आवेथके अमिगरह्या माटे मेरूनीपरे धीरछे ॥१॥ एटले वदनात्मक स्तवनात्मक अने वस्तुनिर्देशात्मक ए त्रणप्रकारना नमस्कारछे तेमां स्तवनात्मक इष्टसमुचित नमस्कारकस्यो ॥ १ ॥

अनुक्रमिं संयम फरसतोजी ॥ पाम्यो क्षायक नाव ॥
संयमश्रेणी फूलडेजी ॥ पूजुं पद निष्पाव ॥ गु० ॥ २ ॥

अर्थ ॥ अनुक्रमें उत्तरोत्तर प्रधान संयमस्थानक फरसतोथको यडुक्तं दशाश्रुत स्कंधे.–'तस्सणंजगवतस्स अनुत्तरेणंनाणेण अनुत्तरेणंदसणेण अनुत्तरेणचरित्तेणं अनुत्तरेणआलएण अनुत्तरेणविहारेण अनुत्तरेणवीरिएण अनुत्तरेणअज्जवेणं अनुत्तरेणमद्दवेण इत्यादिक मोहनीय कर्मनुं क्षयकरी उत्कृष्ट सयमस्थानरूप क्षीण मोह गुणस्थानक पाम्यो एहवो श्री वर्द्धमानस्वामी तेना पापरहित चरणकमल ने सयम श्रेणीरूप जावफूलेकरीने पूजुंछे० अर्चेवुं एवदनात्मक नमस्कार कर्यो॥२

वाचक जशविजये रच्योजी ॥ सखेपे सज्जाय ॥ विस्तरि
जिन गुण गावतांजी॥ जीहा पावन थाय ॥ गु० ॥३॥

अर्थ ॥ प्रथम संयमश्रेणीनुं सज्जाय तिक्ष्णबुद्धिवालाने गम्यथाय एवुंन्यायवा दिओनेविषे मुकुटमणि समान उपाध्याय श्री जशोविजय गणिये रच्युछे पण तेनी रचना शङ्क्षेपेकरीछे माटे विस्ताररुचीने अर्थ विस्तारे संयमस्थानक गर्भित जिनेश्वरना गुण गावता जीन तथा जन्म पवित्रथाय उत्तमजीवने एवोज मनोर्थ होयछे यडुक्तं चिरसंचियं पावपणासणीए नवसयसहस्समहणीए चोवीसजिनवि णि गायकहा वोलंतुमेदीहा एटले मगल अजिध्यादिककह्यां ॥ ३ ॥

वारकपाँय खय उपशमेजी ॥ सरव विरति गुण ठाण ॥
तेना आदिम ठाणमांजी ॥ पर्यवनुं परिमाण ॥गु०॥ ४ ॥

अर्थ ॥ हवे आद्यना बारकपायने क्षयोपशमे एटलेजे दलिक उदयआव्यां तेनुं क्षयकरे अनेजे उदय नथीआव्या तेने उपशमावे अने प्रदेशे उदयआव्याने वेदे एहवी अवस्थाये वर्त्ततायका अविरति देशविरतिप्रमुख बारकपायने अनावें उपजुंजे सर्वविरतिरूप छठो गुणस्थानक तेहना सर्वजघन्यमाजघन्य स्थानकमां एटले आदिमजे प्रथम स्थानक तेमा निर्विजाग जाग एटले जेना केवलीनी बुद्धियेपण एकखंडना वे अंसनथाय एवाजे चारित्रनापर्याय अथवा अंस तेनुं प्रमाण जे संख्या तेकहेछे॥४॥

सरवाकाश प्रदेशथीजी ॥ अनंत गुणा अविजाग ॥
वृहतकल्पना जाष्यमांजी ॥ जापे तुं महाँ जाग॥गु०॥५॥

अर्थ ॥ लोकालोकना आकाशप्रदेश जेटलामे अनतेछे एटले अनंतानी गणना अनंत प्रकारनीछे तेमा लोकालोकना आकाशप्रदेशनी गणनानुं जे अनंतुछे तेने अनंतगुणो करिये एटला अविजाग छगगुणस्थानकना सर्वथी जघन्यमां जघन्य

स्थानक जे पहेलुं स्थानक तेमांछे एरीतें बृहत्कल्पनाजाष्यमां हे महाजाग्य म हापूज्य तुं कहेछे यडुक्तं तेकत्तियापएसा सवागासस्समग्गणा होई, तेतत्तियापएसा अविज्ञागतउ अनंतगुणा.॥ १ ॥ इति ॥

एरीतें सर्वविरतिगुणस्थानना सर्वथी जघन्यमां जघन्य पहेला संयमस्थानमां एटला निर्विजागहोय ए निर्विजाग सर्वोत्कृष्ट विशुद्ध देशविरति गुणस्थानकना निर्विजागथी समस्त जीव जेटले अनंतेछे तेटले अनंते गुणता जेटला अनंताथा य तेटला जाणवा ग्रंथांतरे एमपण कह्युछे जे उत्कृष्ट, देशविरति विशुद्धस्थानक ना अविज्ञाग दशहजार असत्कल्पनायें कल्पियें पछी सर्वजीवतो अनंताछे तेनेप ण असत्कल्पनायें एकशत प्रमाणकल्पिये पछीते परस्पर दशहजारने सोगुणाकरि ये तेवारें दशलाखथाय एटला अविज्ञाग सर्वविरतिना प्रथम संयमस्थानकमाछे.॥५॥

जाग अनंते आदिथीजी ॥ बीजे ठाणे वृद्धि ॥ इम
अनंत जागुत्तरेजी ॥ थानकनि होय सिद्धि ॥गु०॥६ ॥

अर्थ ॥ एपहेला संयमस्थानथकी बीजा संयमस्थानकमां अनंतमें जागें वृ द्धिहोय एटले पहेला संयमस्थानकमां जेटला अविज्ञागछे ते जेटलाचवदराजलो कमां जीवछे ते सर्वजीवने सरखेजागें वहेंचीआपता एकजीवनेजागें जेटला संय मना अविज्ञागआवे तेटला अविज्ञागनी पहेला संयमस्थानना अविज्ञागकरतां बीजा संयमस्थानमां वृद्धिथाय एवीरीते बीजा संयमस्थानथी वली त्रीजा संयम स्थानमा-पण तेटलाज अविज्ञागनी वृद्धिथाय तेम त्रीजाथी चोथामां यथोत्तर अनंतजाग वृद्धिथाय तेमज आगलपण संयमस्थाननी निष्पत्तिथाय हवे एमवृ द्धि करता करता सर्व केटला संयमस्थानके एक कंमकथाय तेकहेछे. ॥ ६ ॥

अंगुल जाग असंखमांजी ॥ जे आकाश प्रदेश ॥ तेता
थानक नीपजेजी ॥ कंमक तास निवेश ॥ गु० ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ एक अंगुलमात्र आकाशक्षेत्रना असंख्यातमां जागमां जेटला आकाश प्रदेश छे तेटला अनंतजाग वृद्धिना संयम स्थानक नीपजे के० नीपजावियें एटला संयमना स्थानकनो समुदाय तेने आगम परिजापायें कंमकनी स्थापना कहियें उक्तंच कमंतिएछनन्नई अंगुलजागो असंखिज्जो. ॥ ७ ॥

बीजा कंडक गणमांजी ॥ आदि असंख्यांस जाण ॥
तदनंतरनंत नागनाजी ॥ थानक कंमक माण ॥ गु०॥८॥

अर्थ ॥ हवे पूर्वेजे अनंतनागवृद्धिना कंमकनुं स्वरूपबताव्युं ते अनंतनाग वृद्धिकंमकनी स्थापना ने अनंतर बीजो असंख्यातनाग वृद्धिना कंमकनी स्थापना थाय ते आवीरीते जे पूर्वे अनंतनागवृद्धि कंमकना चर्मस्थानकमां जेटला अविनागछे तेथकी आ बीजा कंमकना आदिस्थानकमा असंख्यातमें नागें वृद्धिजाणवी. एटले पहेला कंमकना चरमस्थानकमां जेटला अविनागछे ते असंख्याता लोकाकाश प्रदेशने वहेची आपता एकप्रदेशने नागे जेटला अविनागआवे तेटला असंख्यातनागनाअंसनी बीजाकंमकना प्रथमस्थानकमा वृद्धिथाय तेने अनंतर वली अनंतनाग वृद्धिना स्थानक कमक प्रमाणथाय ते केम असंख्यातनाग वृद्धिना प्रथमस्थानथी अनंतमो नागवधे एवु प्रथम स्थानक तेनुं अनतमोनाग वृद्धिरूप बीजुं स्थानक एम यथोत्तर कंमकप्रमाण होय एम आगलपण पाछला स्थानथी आगला स्थानमां नागवृद्धि तथा गुणवृद्धि पोतानी बुद्धेजाणवी.॥८॥

इम नंत नाग वृद्धिनेजी ॥ कंमक कंमक मध्य ॥ गण
असंख्यांस वृद्धिनाजी ॥ कंमक माने लद्ध ॥ गु० ॥ ए ॥

अर्थ ॥ एम अनंतनाग वृद्धिना कमक प्रमाणस्थानक अने असंख्यातनाग वृद्धिनुं एकस्थानक एरीते अनतनाग वृद्धि कंमक कंमकने विचालें असंख्यनागवृद्धिनुं एकेक स्थानक करता असंख्यात नाग वृद्धिना स्थानक केटलाथाय ते कहेछे कंमकमानेलद्धके० कमकप्रमाणेलाधा एटले एक कंमक प्रमाण थयां एटले पहवृद्धिमांहे असंखनाग वृद्धिरूप बीजीवृद्धि पूरीथई ॥ ए ॥

ते आगेनंत नागनाजी ॥ थानक कंमक मात ॥ तदनंतर
संख्य नागनुंजी ॥ थानक एक विख्यात ॥ गु० ॥ १० ॥

अर्थ ॥ ते असंख्यनागवृद्धि कंमकना चरम स्थानकने आगेके० आगल अनंतर अनंतनाग वृद्धिना स्थानक कंमकमात्रथाय एटले कंमक प्रमाण करिये तेवारपछी संख्यातनागवृद्धिनुं एकस्थानक प्रसिद्धहोय एटले पूर्वेपाश्चात्तपयेला कंडकना चरमस्थानकमां जेटला अविनागछे तेने उत्कृष्ट संख्यातपद सार्थे नागदेतां एकनेनागें जेटलाआवे तेटलावधे एम आगलपण स्वबुद्धे जाणीलेवु ॥ १० ॥

ते ऊपर द्वय वृद्धिनाजी ॥ जेता ठाण अतीत ॥ ते कीधे
संख्यन्नागनुंजी ॥ बीज्युं ठाण पवित्त ॥ गु० ॥ ११ ॥

अर्थः–हवेते संख्यातन्नाग वृद्धिना प्रथम स्थानकने ऊपर द्वयके० बे वृद्धिना स्थानक जेटला अतिक्रम्याछे एटले पूर्वें अनंतन्नागवृद्धि अने असंख्यातन्नागवृद्धि एरीते एबेवृद्धिना जेटला स्थानक गयांछे ते सर्वने आ पहेला संख्यातन्नाग वृद्धि नामा स्थानकने आगलकरिये ते करवापछी संख्यातन्नागवृद्धिनुं बीजुं स्थानक पवित्र संयम परिणामरूप आवे ॥ ११ ॥

इम वृद्धि द्वय अंतरेजी ॥ कंमक माने इठ ॥ असंसँ
स्यातें वृद्धिनाजी ॥ थानकजिनवर पुठ ॥ गु० ॥ १२ ॥

अर्थ ॥ एजरीते आगलपण ते अनंतन्नागवृद्धि तथा असंख्यातन्नागवृद्धि ए द्वयके० बे बे वृद्धिना स्थानकने विचमां एकेक संख्यातन्नाग वृद्धिनुं स्थानक करता कंमक प्रमाणनीपजे हेईष्ट हे प्राणवल्लन ते संख्यातन्नाग वृद्धिना स्थानक हे जिनवीर हे वीतराग तुमे फरस्या. ॥ १२ ॥

वलि पूरव द्वय वृद्धिनाजी ॥ थानक सरव करेह ॥ आग
ल गुण संख्यातनुंजी ॥ थानक एक धरेह ॥गु०॥ १३ ॥

अर्थ ॥ संख्यातन्नागवृद्धि कंमकना चरमस्थानकने आगलें पूर्वली बे - वृद्धिना जेटला स्थानकगयांछे तेटला सर्वस्थानक करवा एटले करियें तेने आगल संख्यातन्नागवृद्धिनुं कंमक पुरुंथयुं तेमाटे तेने ठेकाणे- संख्यातगुणवृद्धिनुं- एकसंयम स्थानकधरे एटले धरियें थापियें एटले पाछल अनंतन्नागवृद्धिनुं कंमक गयुंछे तेना चरम स्थानकमां जेटला अविन्नागछे तेने उत्कृष्ट संख्यात गुणाकरियें ते संख्यात गुणा करतां जेटला अविन्नागथाय तेटला अविन्नाग प्रथम संख्यातगुणवृद्धिना स्थानकमां वधे एरीते आगलपण स्वबुद्धे जाणवुं. ॥ १३ ॥

इम त्रिक वृद्धिने अंतरेजी ॥ गुण संख्यातना ठाण॥कंम
क माने नीपजेजी॥ जाणे तुं वर नाण ॥ गु० ॥ १४ ॥

अर्थ ॥ एम त्रिकवृद्धिने विचालें एटले पूर्वेजे अनंतन्नागवृद्धि असंख्यातन्नाग वृद्धि संख्यातन्नागवृद्धि ए त्रण त्रण वृद्धिना सर्व स्थानकने विचालें एक एक संख्यातगुणनुं स्थानक करिये एम करता संख्यातगुण वृद्धिना स्थानक कंमक

प्रमाण नीपजे एटले षट्वृद्धि मांहे चोथी संख्यातगुणवृद्धि पूरीथई संयम स्थानक चारित्र परिणामरूप होवाने लीधे अरूपीछे तेमाटे हे सर्वज्ञ ते सर्वेतु जाणोछे

पुनरपि त्रिक वृद्धी तणाजी ॥ पूरी थानक सर्व॥असंख्यात गुण वृद्धितुंजी ॥ थानक एक अगर्व ॥ गु० ॥ १५ ॥

अर्थ – संख्यातगुण वृद्धिकंमकना चरमास्थानकथी आगल वली त्रणवृद्धिना एटले अनंतभागवृद्धि असंख्यातभागवृद्धि अने संख्यातभागवृद्धि ए त्रणवृद्धिना स्थानक जेटला पूर्वे गयांछे ते सर्व संयमस्थानक पूरीने नीपजावीने ते पछी असंख्यातगुण वृद्धितुं एक संयमस्थानक आवे माटे हे अगर्व पाश्चात एटले पूर्वे थयला अनंतर कंमक ना चरम संयमस्थानकमां जेटला अविभागछे तेने असंख्यात लोकाकाश प्रदेश प्रमाणे गुणाकार करतां जेटला अविभागथाय तेटला अविभाग प्रथम असंख्यगुण वृद्धिना स्थानकमा वधे ॥ १५ ॥

चउरंतर चउरंतरेजी ॥ थानक कंमक मेय ॥ असंख्यात गुण वृद्धिनाजी ॥ पंमित वीर्य वरेय ॥ गु० ॥ १६ ॥

अर्थ ॥ तेवारपछी वली आगलपण चार चार वृद्धिने विचाले एकेक असंख्यातगुण वृद्धितुं संयम स्थानक नीपजे एम नीपजावता कंमक मात्र थाय ए असंख्यात गुणवृद्धिना संयम स्थानक एटले असंख्यातगुण वृद्धिना प्रथम स्थानक पछी अनंतभागवृद्धि असंख्यभागवृद्धि संख्यातभागवृद्धि संख्यात गणवृद्धि एवां चार वृद्धिना स्थानक कखापछी असंख्यगुणवृद्धितुं बीजुं स्थानक आवे एरीते चार चार वृद्धिने विचाले एकेक असंख्यातगुण वृद्धितुं स्थानक करतां कंमकमा त्रथाय एटले षट वृद्धिमांहे असंख्यगुण वृद्धिरूप पांचमी वृद्धि पूरीथइ ए सर्व संयमस्थानकरूप आत्मगुण ते हे वीर हे परमेश्वर तुमें पंमित वीर्यकरीने वरया पाम्या माटे तुमे वद्य पूज्य स्तुत्यछो तमारी स्तवना करतां एवां गुण पामिये॥ १६

उपर वली चउ वृद्धिनाजी ॥ फरसे थानक सार ॥ तदनंतरनंत गुणनुंजी॥ थानक एक उदार ॥ गु० ॥ १७ ॥

अर्थ.– हवेते असंख्यगुणवृद्धि कंमकना चरम स्थानकने उपर वली चारवृद्धिना स्थानक एटले अनंतभागवृद्धि तथा असंख्यभागवृद्धि अने संख्यातभागवृद्धि तथा संख्यातगुणवृद्धि ए चार वृद्धिना सर्व स्थानक फरसे हे सार हे जगत उत्कृष्ट प्रभु तेवार पछी वली आंतरारहित अनंतगुणवृद्धिनुं एक प्रथम स्थानक

महोटुं आवे एटले पाश्चात्य जे (पूर्वेथयला) अनंतर संयम स्थानकमां जेटला अ विभागछे ते सर्व जीवोनी संख्यारूपजे अनंतोछे ते अनंता साथे अनंतगुणकरतां जेटला अविभागथाय तेटला अविभाग अनंतगुणवृद्धिना प्रथम स्थानकमां वधे.

पंच पंच वुद्धी विचेंजी ॥ ठाण एक इक जोय ॥ इम
अनंत गुण वुद्धिनाजी॥ कंमक माने होय ॥ गु० ॥१८॥

अर्थः-- अनंतगुणवृद्धिना प्रथम स्थानक पछी अनंतर अनंतभागवृद्धि असंख्य भागवृद्धि संख्यातभागवृद्धि संख्यातगुणवृद्धि असंख्यातगुणवृद्धि एवां पांच वृद्धि रूप समस्त संयम स्थानक उपजे तेवारपछी एक अनंतगुणवृद्धिनुं बीजु संयम स्था नक आवे एरीते पांच पांच वृद्धिने विचमां एक एक अनंतगुणवृद्धिनुं स्थानक नीपजे ते ज्ञान दृष्टियें जुउ एम करतां अनंतगुणवृद्धिना संयमस्थानक केटलाथाय ते कहे छे कंमक प्रमाणेहोय एटले अंगुलना असंख्यातमां भागमां जेटला आकाश प्रदेशछे तेनाजेटला अनंतगुण वृद्धिना संयम स्थानक थाय ते कंमक थयुं ॥१८

उपर वली पंच वृद्धिनाजी ॥ फरसे संयम ठाण ॥ प्रव
चन अनुसारें कह्युंजी॥ षट थानक परिमाण ॥ गु० ॥ १९ ॥

अर्थ.-- हवे अनंतगुणवृद्धिना चरम स्थानकने उपर वली मूलथकी पाचे वृ द्धिना सर्व संयमस्थानक फरसे पण पांचवृद्धि पूरी कह्यापछी प्रसंगे आव्युंजे अ नंतगुणवृद्धिनुं स्थानक ते न करवुं केमके षट स्थानक पूरुथयुं तेमाटे, एरीते षट स्थानकना परिमाणनी परुपणा ते प्रवचनअनुसारेके० कल्पभाष्य तथा प्रवचन सारोद्धारनी टीकाने अनुसारे कही॥ १९॥

असंख्य लोकाकाशनाजी ॥ प्रदेश ने परिमाण ॥ इक षट
थानक ऊपरेंजी ॥ ऊठे वलि षट ठाण ॥ गु० ॥ २० ॥

अर्थः-- चऊदराज प्रमाण एक लोकाकाशछे एहवा असंख्याता लोकाकाश अलोकमां कल्पीयें तेना जेटला आकाश प्रदेशनुं समूहथाय तेटला प्रदेशने प्रमा णे एक प्रथमनुं मूल षट स्थानक ने ऊपर ऊपर वली बीजा षट स्थानिक ऊपजे एटले असंख्यातिवार ऊपरा ऊपर षट स्थानकथाय ऊक्तंच छठाणग अवसाणे, अन्नं छठाणयं पुनो अन्नं; एव मसंखा लोगा,छठाणाणं मुणेयव्वा ॥ १ ॥ ॥ २० ॥

ए संयम गुण ठाणमांजी ॥ जे वरते मुनि सोय ॥ वंध
अपर भजना पणेजी॥ भाष्यकल्पमां जोय॥गुण॥ २१ ॥

अर्थ ॥ ए संयमके० चारित्र गुणस्थानकमां एटले छठागुणगणाना आद्यना स्थानकथी मांमीने यथाख्यात चारित्ररूप चरम स्थानकपर्यंत तेमाजे मुनिराज वर्त्तेछे ते मुनि वांदवायोग्यछे पण वेशमात्रने वांदवातुं प्रयोजननथी कर्क्तंच वे सोवि अप्पमाणो, असंजमपएसु वट्टमाणस्स ॥ किंपरि अत्तियवेसं, विसं न मारेइ खज्जतं ॥१॥ इति माटे अपरके० बीजा जे संयमश्रेणीथी बाह्य ते नजनायें वदनीक एटले कारणे वांदवायोग्य पण कारणविना वांदवायोग्यनही ए अर्थ वृद्दल्कल्पनाष्यमा जोईलेवुं कर्क्तंच संयम गण ठियाण, किइकम्मं बाहिराणनइ यव्वं ॥ २१ ॥

इहां षटस्थानकना नामकहेछे १अनंतनागवृद्धि २ असंख्यनागवृद्धि ३ संख्यातनागवृद्धि ४ संख्यातगुणवृद्धि ५ असंख्यातगुणवृद्धि ६ अनतगुणवृद्धि एमां नाग तथा गुण वृद्धिकही ते केवी संख्याये छे ते जाणवाने आगमनी गाथाकहेछे.– सव जिएहि अनंत, नागंच गुणं असंख लोगेहि ॥ जाणअसंखं संखं, संखिक्षेणं च जिछेणं ॥ १ ॥ एनोअर्थ.– एषटवृद्धिरूप षट स्थानकनेविषे जे अनत नागतुं स्थानक तथा अनंतगुणतुं स्थानक ए बे स्थानकनी संख्या ते सर्व चऊद राजलोकमां जेटला जीवनी सख्याछे ते संख्याये नागतथा गुंणनीवृद्धि करवी अने असंख्यनागवृद्धि तथा असंख्यगुणवृद्धि ए बे स्थानक ते असंख्यात लोकाकाश प्रदेश नी जेटली संख्याछे ते संख्याये नाग तथा गुणनीवृद्धिकरवी अने सख्यात नागवृद्धि तथा संख्यातगुणवृद्धि ए बे स्थानक ते उत्कृष्ट संख्यातानी जेटली संख्याछे तेटली संख्याये नाग तथा गुणनी वृद्धिकरवी इतिनाव.

तथा जे सयमस्थानक अनतनागवृद्धिने पामे ते पाछला संयमस्थानकना जेटला अविनाग होय तेने समस्त जीवोनी जेटली संख्याछे ते संख्याये नाग आपतां जेटला अविनाग आवे तावत्प्रमाण अनतनागे अधिक जाणवु अने जे संयमस्थानक असख्यातनाग वृद्धिनेपामे ते पाछला सयमस्थानकना निर्विनाग नाग जेटलाहोय तेने असंख्य लोकाकाश प्रदेशप्रमाणे नाग आपतां जेटला अविनाग लाने तावत् प्रमाण असंख्येयनागें अधिकजाणवुं तथा जे संयमस्थानक संख्यातनाग वृद्धिने पामे ते पाछला संयमस्थानकना जेटला अविनागहोय तेने उत्कृष्ट सख्याताये नाग हरता जे अविनाग लाने तेटला संख्यातनागे अधिक जाणवुं वली जे संयम स्थानक सख्यातगुण वृद्धिनेपामे ते पाछला संयम स्थानक ना जे निर्विनागनागछे तेने उत्कृष्ट संख्यातगुणनी रासियेगुणता जे अविनागथाय तावत्प्रमाण संख्यातगुणे अधिक जाणवु तथा जे सयमस्थानक असं

ख्यात गुणवृद्धिने पामे ते पाछला संयमस्थानना जे अविनागछे तेने असं ख्यात लोकाकाशनाजे प्रदेशछे तद्गुणित करिये तावत् प्रमाण असंख्यातगुणो अ धिक जांणवुं तथा जे संयमस्थानक अनंतगुणवृद्धिने पामेछे ते पाछला संयम स्थानकना जेटला अविनागछे तेने समस्तजीवोनी अनंति संख्याये गुणतां जेटला अविनाग थाय तावत्प्रमाण अनंतगुणो अधिक जाणवुं. इतिज्ञेयं. ॥ २१ ॥

पट थानक संयम तणाजी ॥ कहेतां स्तवतां वीर ॥ क्ष
माविजय जिन नक्तिथीजी॥ उत्तम लहे नव तीर ॥ गु० ॥२२॥

अर्थ ॥ ए संयमना षटस्थानक कहेतां थकां तथा संयमश्रेणे गर्भित वीर प रमेश्वरने स्तवतां तथा वली क्षमागुणे करीने मोहनुं जेणे विजय कर्योछे, अणुत्तरा ए खंतिए इतिवचनात् एहवा जिनके० वीतराग जे श्रीवीरस्वामि तेनी नक्तिथी उत्तमजीव होय ते नवके० संसारसमुद्रनो पारपामे सिद्धपरमेश्वरथाय एटले पं मित श्री क्षमाविजयगणि तत्शिष्य पंमितश्री जिनविजयगणि तेमनी नक्तिथी मु नि उत्तमविजयजी संसारनो पारपामे एमपण जाणवुं ॥ २२ ॥

अवतरणः– पूर्वोक्त संयमस्थानक समजवाने सुगमथाय तेमाटे श्री वीरप्रनु नी स्तवनाकरतां यंत्रनो बीजोढालकहेछे इति संबंध ॥

ढाल बीजो सुरतीमहीनानीदेशी.

वस्तु स्वनाव प्रकाशक नाशित लोगालोग ॥ वीर जगत
गुरु नोगवे रत्नत्रयीनो नोग ॥ संयमना पट थानिक सूक्ष्म
बुद्धि गम्य ॥ स्व पर विबोधन हेतें थापुं यंत्र सुरम्य ॥ १ ॥

अर्थः– सदसदादिक अनंतधर्मात्मक वस्तुस्वनाव तेनुं प्रकाशक तथा केवल ज्ञानरूप आरसीमां जेने लोकालोकनुं स्वरूप नास्योछे एहवो श्रीवीरपरमेश्वर त्र णजगत्नो गुरु नावरत्नत्रयीनो आस्वाद अनुनवेछे सम्यक्ज्ञान यथार्थविबोध स म्यक्दर्शनं तत्वप्रतीति सम्यक्चारित्रं निजस्वरूप रमण स्थिरतारूप इति रत्नत्रयी स्वरूपं संयमनी षटवृद्धिना स्थानक तीक्ष्ण बुद्धिये गम्यछे तेमाटे पोताने तथा परने समजवाने अर्थे असत्कल्पनाये मनोहर यंत्रथापुं तिहां अनंत नागवृद्धि ने स्थानके मींमां अने असंख्यातनागवृद्धि स्थानके एकडा संख्यातनागवृद्धि स्था नके बगडा संख्यातगुणवृद्धि स्थानके त्रगडा असंख्यातगुण वृद्धिस्थानके चोगडा

अनंतगुण वृद्धिस्थानके पांचडा एम असत्कल्पनाये चारमीडांयें अनंतभागवृद्धि कंमक चार एकडे असंख्यभागवृद्धि कंमक इत्यादिक संज्ञा जाणवी ॥ १ ॥

भाग अनंतह वृद्धिना ठाणछे कंमक सार ॥ छे यद्यपि ते अ
संख्य ठवुं तस विंदु चार ॥ असंख्य भाग वृद्धिनुं थानक आ
गल एक ॥ तस ठामे ठवुं एको मन धरी अतिहि विवेक ॥ २ ॥

अर्थ ॥ अनंतभागवृद्धिना स्थानक जलां कंमकमात्र अगुल असंख्यभागगत आकाश प्रदेश प्रमाणछे एरीते जोपण ते अनंतभाग वृद्धिना स्थानक असंख्याताछे तोपण असत्कल्पनाये तेना चारबिंदु स्थापुवुं एटले अनंतभागवृद्धिनुं कंमक पुरुंथयुं तेथी आगल असंख्यातभागवृद्धिनुं स्थानक एक आवे तेने ठेकाणे मनमा अत्यंत विवेक धरीने एकडो थापुवुं ते पूर्वोक्त स्थानकथी भिन्न पाडवा निमित्तें थापुवुं एम सर्वत्रजाणवुं ॥ २ ॥

चउ चउ विंदु अतर इम होय एकाचार ॥ तदनंतर चउ विंदु
सघलां वीस उदार ॥ आगल भाग संख्यातह वृद्धिनो बीउ
जाण ॥ इम चउ विया ठवतां मीमां शात परिमाण ॥ ३ ॥
चउ बीआ वीस एका मीमा शात समुदाय॥भागनी वृद्धि मांहे
थयां हवे गुण वृद्धि कहाय ॥ संख्यात गुणनी वृद्धिमां तीउ
आदि उदार ॥ इम सवि मीमा अंका विच ठवि तिआ चार ॥४॥

अर्थ ॥ वली आगल अनतभाग वृद्धिना एक कंमक जेटला स्थानक थाय तेने ठेकाणे चारबिंदु थापीये आगल असंख्यभाग वृद्धिनुं एक स्थानकछे तेमाटे वली एकडो थापीये एरीते चारचार बिंदुने आतरे जेवारे चार एकडाथाय एटले असंख्य भाग वृद्धिनुं कंमक पुरुंथयु तेवारपछी आतरा रहीत छेडानुं अनंत भागवृद्धिनुं कंमक आवे तेने ठेकाणे चारबिंदुथापीये एटले सघला सरवाले चार एकडाने वीस मिमांथया,ते पछी आगल सख्यातभाग वृद्धिनुं स्थानक एक आवे तेने ठामे बगडानी थापना जाणीये एरीतें चार एकडा गर्भित वीसबिंदु अनंतर संख्यातभाग वृद्धिनुं एक एक बगडो आणतां जेवारे चार बगडाआवे तेवारे संख्यातभागवृद्धिनुं कंमक पुरुंथाय तेवारपछी वली छेडे चार एकडा गर्भित वीस मीमाआवे एम संख्यातभाग वृद्धिपर्यंत सर्व समुदाये मीडा (१००) एकडा (२०) बगडा (४)

एतावता संख्यात भागवृद्धिनुं कंडक एक असंख्यातभागवृद्धिना कंडक पांच अनंतभागवृद्धिना कंडक पचवीस एटला स्थानक असत्कल्पनायें भाग वृद्धिमांथया हवे गुणवृद्धिमांहे जे स्थानकथाय ते कहेछे हवे आगल संख्यातगुण वृद्धिनुं एक स्थानकआवे तेने ठेकाणे एक त्रगडो थापीये एटले संख्यातगुण वृद्धिमां प्रथम उत्तमस्थानकनो त्रगडोजाणवो एरीते वली पण पूर्वला चार बगडा वीस एकडा गर्भित शतमिंडा थापीने तेने अनंतर बीजो त्रगडोआवे एरीते जेवारे चार त्रगडा थाय तेवारें ते चार त्रगडे संख्यातगुण वृद्धिरूप कंडक पुरुंथयुं चोथा त्रगडाने अनंतर वली चार बगडा वीस एकडा अने शत मींडा थापीयें ॥ ३ ॥ ४ ॥

वीस बीआ शत एका पण सय बिंडु मान ॥ असंख्यात गुण
वृद्धिनो चोको धुरि मंडाण ॥ इम चउ चोका आणतां तिक वीस
बिक शत जोय ॥ पण सय एकडा मींडा पंचवीससें होय ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ इहां संख्यातगुण वृद्धिपर्यंत सर्वमली त्रगडा चार बगडा वीस अने एकडा शो तथा पांचसें मींडा एटले संख्यातगुण वृद्धिनुं कंडक एक अने संख्यात भाग वृद्धिना कंडक पांच असंख्यातभाग वृद्धिना कंडक पचीस अनंतभाग वृद्धिना कंडक एकसो ने पचीस थाय तेवार पछी असंख्यातगुण वृद्धिरूप प्रथम स्थानकनो चोगडो मांडीये फरी चार त्रगडा वीस बगडा एकसो एकडा सहीत पांचसो मींडा गयेथके वली बीजो चोगडो मांडीयें ए परीपाटीये जेवारे चार चोगडाथाय एटले असंख्यात गुण वृद्धिनुं कंडक पुरुंथयुं वली चोथा चोगडाने अनंतर चार त्रगडा वीस बगडा एकसो एकडा अने पाचसें मींडा थापीये तो सर्वमली चार चोगडा वीस त्रगडा एकसो बगडा पाचसे एकडा पचीसोमींडा थाय एटले असंख्यात गुणवृद्धिनुं कंडक एक संख्यात गुणवृद्धिना कंडक पांच संख्यात भागवृद्धिना कंडक पचीस असंख्यात भागवृद्धिना कंडक एकसोपचीस तथा अनंतभागवृद्धिना कंडक छसोने पचीस थया ॥ ५ ॥

हवे अनंत गुण वृद्धि पदे ठवि पंचक चंग ॥ पुनरपि पूरव रीतें
मींडां अंक सुरंग ॥ तिवार पछी पंचक इम पंचक चउ जव
थाय ॥ आगे पण पंचवीससें मींडां अंक कराय ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ हवे अनंतगुण वृद्धिपदेके० अनंतगुण वृद्धिरूप प्रथम स्थानकने ठेकाणे एक पांचडोथापीये पुनरपि पूर्वलीरीते चार चोगडा वीस त्रगडा एकसो बग

डा पाचसो एकमा गर्भित पचवीससो मींडायापीयें तेवारपछी बीजो पांचडो था पीयें एरीते अनुक्रमे जेवारे चार पांचडा थपाय तेवारे अनतगुण वृद्धिरूप कंडक पुरुंथाय वली आगलपण चोथा पांचडाने अनंतर चारचोगडा वीसत्रगमा एकसो बगमा पाचसो एकडाये युक्त पंचवीससो मींडांकरीये एटले एक षटस्थानक पुरुंथयुं.

पांचडा चोगडा त्रगडा बगडा एकडा बिंदु॥ षट थानकनां
यंत्रनी संख्या कहे जिनचंद ॥ चउ वीस सय पणसय पच
वीस सय सार ॥ अंका मींडा गणतां साढा बारहजार॥ ७॥

अर्थ – हवे षटस्थानक मध्ये आंक तथा मिंडानी संख्याआवी ते पश्चातुं पूर्विये कहियेछे पांचडा चोगडा त्रगडा बगडा एकडा तथा बिंदु तेना समुदायरूप षटस्थानकना यंत्रनी संख्या ते श्री जिनचंद्रके० ऋषनादिके कही तेरीते हे वीर परमेश्वर तमे फरसी ते आवीरीते चारपांचडा वीसचोगडा एकसोत्रगडा पाचसो बगडा पचवीसो एकडा अने साढाबारहजारमिंडा सरवालेथाय एटले अनंतगुण वृद्धिनुं कंडक एक असंख्यातगुण वृद्धिना कंडकपाच संख्यातगुण वृद्धिना कंडक पंचवीस संख्यातनाग वृद्धिना कंडक एकसोपंचवीस असंख्यातनाग वृद्धिना कंडक छसोनेपंचवीस अने अनतनागवृद्धिना कंडक त्रणहजार एकसोने पचवीस ए सर्वमली (३९०६) कंडक थयां ए सर्वयंत्रप्रमाणे असत्कल्पनाये लख्युंछे पण परमार्थेरीते तो आगला ढालमा कहीसुं ॥ ७ ॥

सयम श्रेणिमा श्रेणि क्षपक लहि सुक्ल ध्यान॥ घाती करमनो
क्षयकरी पाम्यो पंचम ज्ञान॥ प्रवचनसारनी वृत्तिमां यंत्रनी
ठवणा दीठ॥ क्षमाविजय जिन वयणथी उत्तम चित्त पविठ ॥८॥

अर्थ –संयमश्रेणी आरोहता अनुक्रमे क्षपकश्रेणीमां सुक्लध्यान पामीने घातियां चारकर्म क्षयकरता यथाख्यात चारित्र केवलज्ञान केवलदर्शनरूप रत्नत्रयी पाम्या तदनुक्रमो यथा अप्रमत्तगुणठाणे अनंतानुबधीनी चोकडी दर्शनमोह त्रिक एव सातप्रकृति क्षपकरी अपूर्वकरण अनिवृत्ति गुणठाणे चढ्या तिहां अनिवृत्तिना प्रथमनागने अंते सोलप्रकृति खपावे तन्नाम थावरतिरिनिरयाएव दुगथीणतिगेगविगलसाहरति इति वली बीजानागने अंते अप्रत्याख्यानी चोकडी तथा प्रत्याख्यानी चोकडी एव आठप्रकृति खपावे त्रीजेनागे नपुसकवेद खपावे चोथे नागें स्त्रीवेद खपावे पाचमेंनागे हास्यछक खपावे छठ्ठेनागे पुरुषवेद खपावे सात

मेंनागें संज्वलननुं क्रोधखपावे आठमेंनागें संज्वलननुमान खपावे अने नवमेंनागें संज्वलननी माया खपावे एरीते नवमें गुणठाणे बीजापायाथी वीसप्रकृति खपावे पठी दशमेगुणठाणे संज्वलननुं लोन खपावतो शुक्लध्याननुं प्रथक्त्व वितर्क सविचाररूप प्रथमपाद तडूप अनलेकरी सकल मोहनीय नस्म शांतकरे पठी क्षीणमोह गुण ठाणे चढे क्षायक चारित्रवतथाय तिहां एकत्व वितर्क अविचाररूप शुक्लध्याननुं बीजोपाद अनुनवी द्विचरम समय निडाडुगखपावी चरमसमये ज्ञानावरणीपांच दर्शनावरणीचार अंतरायपांच एवं चउदप्रकृति ने क्षये अनंत चतुष्टी विनूषित सिद्धवधु योग्यथाय इतिश्री सिद्धसेनदिवाकर कृत प्रवचनसारोद्धारनी वृतिमां षटस्थानकना यंत्रनीस्थापनादीठी ते क्षमायें उपलक्षित जे दशविधधर्म तेणेकरी विशेषे जयवता एवां जिनके० श्रुतकेवली अवधिजिन मनपर्यवजिन जे सुधर्मा स्वामी तेना वयणके० वर्त्तमान आगम तेथी उत्तम साधु साध्वीउने फरसनरूपे तथा उत्तम श्रावक श्राविकाने श्रद्धा मनोरथ रूपें संयमश्रेणी चित्तमांपेठी एटले पंमितश्री क्षमाविजयगणि शिष्यरत्न पंमितश्री जिनविजयगणि ना वचनथी मुनि उत्तमविजयना चित्तमां यंत्रनीस्थापना पेठी एटले स्थिरपणेरही इति ए पण सोचवुं

अवतरणः— प्रथमढाले षटस्थानक परूपणाकीधी बीजाढालें तेनायंत्रनी स्थापनाकरतां स्थूलबुद्धिनेपण सुखेसमजाय तेमकर्युं हवे एकांतरादिक मार्गणाये कोईपूछे तेने सुखे कहीसकियें तेरीते वीरप्रभुनी स्तवनाकरतां अधस्तन स्थान परूपणानो ढाल कहियेछे इति संबंध जाणवो ॥

ढाल त्रीजो एकवीसानी देशीनो.

आतम रामीरे, शिव विसरामी नित्यनमु ॥ प्रनुजी स्तवतांरे
पाप पोताना निगमु ॥ षटथानिकरे जे अह ठाण परूपणा॥
सुणो सयणारे वयणा कल्पनी नाष्यना ॥ १ ॥ त्रूटकः— आ
दि असंख अंस वृद्धिथी कही ॥ नाग अनंत अंस केटलां॥
छेठ्यानिक एम पूछत ॥ कइयें कंमक जेतलां ॥ नाग संख्या
तह गुण संख्यातें ॥ असंख अनंतह गुण वली ॥ तस प्रथ
मथी कहे अध अनंतर ॥ कंमक माने केवली ॥२॥ इत्यनंतरमार्गणा

अर्थ ॥ शुद्ध निर्मल निकलंक आत्मस्वनाव रमणशील निरुपद्रव्यस्थान क्षेत्रथी उर्ध लोकाग्रनावथी निरावरणावस्था तेनेविषे विसरामी एवा श्री वीरप्रभुने नित्य

सदा नमस्कारकरुं ए प्रभुने स्तवतां अनेकनवोपार्जित पोतानाकर्यां खीरनीरनी परे अनेदरह्या जे पापकर्म तेने निगमु के० गमावु प्रनोनेमस्कार स्तुतिफल मेतदेव संयम पट स्थानकनेविषे जे अनंतर एकांतरादिक अद्गणा परू पणाछेतेहे सम्यक्दृष्टी उत्तमसज्ञनो तमे सांजलो ए वचन श्रीबृहत्कल्पना नाष्यनाछे ॥ १ ॥

हे उत्तमजीवो तमे कहोके असंख्यात नागवृद्धिना प्रथम संयम स्थानकथी अनंतनाग वृद्धिना हेठला संयमस्थानक केटलांगया एम कोई पूछे तेने उत्तर जे अनंतनाग वृद्धिना हेठलास्थानक एक कंमक जेटला गयाछे केमके अनंतनागवृद्धि कंमकपूरुंथयुं तेने अनंतरेज असंख्यनाग वृद्धिनुं प्रथम स्थानक थयुंछे तेमाटेज एम केहुं तेमज संख्यातनाग वृद्धिना प्रथम सयम स्थानकथी असंख्यनाग वृद्धिना हेठला संयम स्थानक केटलागया तथा संख्यातगुण वृद्धिना प्रथम स्थानथी संख्यातनागवृद्धिना हेठला स्थानक तथा असंख्यातगुण वृद्धिना प्रथम स्थानकथी संख्यातगुण वृद्धिना हेठला स्थानक वली अनतगुण वृद्धिना प्रथम स्थानकथी हेठला असंख्यातगुण वृद्धिना स्थानक केटला गयां ए रीते कोइ पूछे तेवारे सर्वत्र हेठलना आंतरा रहीत मार्गणाये कंमक प्रमाणे संयम स्थानक केवलीकहे य डुक्तं पंचसंग्रहे सव्वासिं वुड्डिण कंमक मेता अनंतरा वुड्डि ॥ इत्यनंतरमार्गणा ॥ २ ॥

एकांतररे मार्गणा सुणो सवि संतरे ॥ नाग संख्यातेरे मूल था नकथी तंतरे ॥ हेठे थानिकरे नाग अनंतना नापीये ॥ एककंमकरे कमक वर्गते दापीयें ॥ ३ ॥ त्रूटक ॥ दापीये गुण संख्यातथी वली ॥ असंख अनंत गुणथी तथा ॥ पढम ठाणथी एक अतर ॥ कंमक वर्ग कंमक यथा ॥ इति एकांतर मार्गणा ॥ एक अंतर मार्गणा कही ॥ सुणो द्यंतर मार्गणा ॥ संख्यात गुण थी हेठथानक अनंत नागना सुनमना ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ हवे एकांतर मार्गणा कहेछे ते हे सर्व संतजनो उत्तम पुरुषो तमे सांनलो के एकातरमार्गणाते सुं जे एकवृद्धि विचमां पडतीमूकीने पृछाकरवी ते एकांतर मार्गणा कहेवाय ते आवीरीते जे संख्यातनाग वृद्धिना मूलके० प्रथम स्थानकथी हेठल असंख्यातनाग वृद्धिनाजे स्थानकगयां तेनी पृछानकरवी अने तेने हेठल वलीजे अनंतनाग वृद्धिना स्थानकगयांछे ते पूछवा एम कोईक एकांतरे पूछे तें

वारे एम कहियें जे एक कंम्रक अने कंम्रकवर्ग प्रमाण. जेमां केवल असंख्यातना ग वृद्धिना स्थानक कंम्रकमात्र गयांछे तेमां एकेका असंख्यातनाग वृद्धि स्थान कने केवल एकेक अनंतनाग वृद्धिनुं कंम्रकगयुंछे अने असंख्यातनाग वृद्धिना स्थानक कंम्रकमात्रछे माटे कंम्रक कंम्रक साथें गुणाकार करियें एटले कंम्रक वर्ग थाय तद्गुणोवर्ग इतिवचनात् अने असंख्यनाग वृद्धि उपरे अनंतनाग वृद्धिनुं एक कंम्रकथयुंछे तेमाटे एकतो कंम्रकवर्ग अने तेना उपर वली एक कंम्रकप्रमा ण एटला अनंतनाग वृद्धिना स्थानक गयांछे एम कहेवुं. ॥ ३ ॥

तेमज वली संख्यातगुण वृद्धिना प्रथम स्थानकथी हेठे संख्यातनाग वृद्धिना स्थानकगयां तेमूकीने असंख्यातनाग वृद्धिना स्थानक पूछवा तथा असंख्यातगु ण वृद्धिना प्रथम स्थानकथी हेठल संख्यातगुणवृद्धिना स्थानक गयां ते मूकीने संख्यातनाग वृद्धिना स्थानक पूछवा तेमज वली अनंतगुण वृद्धिना प्रथम स्था नकथी हेठल असंख्यातगुण वृद्धिनाजे स्थानकगयां ते पडतामूकीने संख्यातगुण वृद्धिना स्थानक एकांतर मार्गणाये केटला पामीयें एमकोई पूछे तेने एवुं उत्तर आपियें जे कंम्रकवर्ग अने उपर एक कंम्रक जेम पूर्वे कह्याछे तेम कहेवा इति एकांतर मार्गणा यडुक्तं पंचसंग्रहे एगंतराउवुड्ढी ॥ वग्गो कंम्रस्सकंमच इति एरीते एकातर मार्गणाकही हवे द्व्यंतर मार्गणा सांजलो जे बे वृद्धि वचमा मूकीने पूछीये ते द्व्यंतर मार्गणा कहियें ते आवीरीतें के संख्यातगुण वृद्धिना प्रथम स्थान कथी अनंतनाग वृद्धिना स्थानक केटला गयां एमपूछवाथी हे शुजमना तेकहियेछे. ॥४॥

कंडक घनरे, कंडक वर्ग छ,गुणो करो ॥ एक कंम्रकरे तस सं ख्या मनमां धरो ॥ डुग अंतररे असंख्य अनंत गुणाथी ल ह्यां ॥ अध स्थानकरे पूरव परें जाणो कह्यां ॥ ५ ॥ इति द्विकां तरमार्गणा त्रूटकः- त्रिके अंतर कोई पूछे ॥ आदि असंख्य गुण वृद्धिथी ॥ हेठें नाग अनंत केरां ॥ ठाण कहो गुरु वय णथी ॥ कंडक वर्गनुं वर्ग कीजे ॥ कंडक घन त्रिक उपरें ॥ कंडक वर्ग त्रिक एक कंडक ॥ होए ते मनमां धरे ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ कंम्रक घन एक अने कंम्रक वर्ग बे तथा ते उपर एक कंम्रक एटला स्थानक पामीयें ए सर्व नेला करतां केटली संख्याथाय ते मनमां धरोके० धारणा

सदा नमस्कारकरुं ए प्रजुने स्तवता अनेकनवोपार्जित पोतानाकर्यां खीरनीरनी परे अनेदरह्यां जे पापकर्म तेने निगमु के० गमावु प्रजोर्नमस्कार स्तुतिफल मेतदेव संयम षट स्थानकनेविषे जे अनतर एकांतरादिक अहगण परू पणाछेतेहे सम्यक्दृष्टी उत्तमसज्जनो तमे सांजलो ए वचन श्रीबृहत्कल्पना जाप्यनाछे. ॥ १ ॥

हे उत्तमजीवो तमे कहोके असंख्यात जागवृद्धिना प्रथम संयम स्थानकथी अनंतजाग वृद्धिना हेठला संयमस्थानक केटलांगयां एम कोई पूछे तेने उत्तर जे अनंतजाग वृद्धिना हेठलास्थानक एक कंमक जेटला गयाछे केमके अनंतजागवृद्धि कंमकपूरुंथयुं तेने अनंतरेज असंख्यजाग वृद्धिनुं प्रथम स्थानक थयुंछे तेमाटेज एम केवुं तेमज सख्यातजाग वृद्धिना प्रथम संयम स्थानकथी असंख्यजाग वृद्धिना हेठला संयम स्थानक केटलागया तथा संख्यातगुण वृद्धिना प्रथम स्थानथी संख्यातजागवृद्धिना हेठला स्थानक तथा असख्यातगुण वृद्धिना प्रथम स्थानकथी संख्यातगुण वृद्धिना हेठला स्थानक वली अनंतगुण वृद्धिना प्रथम स्थानकथी हेठला असंख्यातगुण वृद्धिना स्थानक केटला गयां ए रीते कोइ पूछे तेवारे सर्वत्र हेठलना आंतरा रहीत मार्गणाये कंमक प्रमाणे संयम स्थानक केवलीकहे य डुक्तं पंचसंग्रहे सव्वासिं वुढिण कंमक मेता अनंतरा वुढि ॥ इत्यनंतरमार्गणा ॥ २ ॥

एकांतररे मार्गणा सुणो सवि सतरे ॥ जाग संख्यातेरे मूल था
नकथी तंतरे ॥ हेठे थानिकरे जाग अनंतना जापीये ॥ एककं
मकरे कंमक वर्गते दापीये ॥ ३ ॥ त्रूटक ॥ दापीये गुण संख्या
तथी वली ॥ असंख अनंत गुणथी तथा ॥ पढम ठाणथी एक
अतर ॥ कंमक वर्ग कंमक यथा ॥ इति एकांतर मार्गणा ॥ एक
अंतर मार्गणा कही ॥ सुणो द्यंतर मार्गणा ॥ संख्यात गुण
थी हेठथानक अनंत जागना सुजमना ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ हवे एकांतर मार्गणा कहेछे ते हे सर्व सतजनो उत्तम पुरुषो तमे सांजलो के एकांतरमार्गणाते सुं जे एकवृद्धि विचमा पडतीमूकीने पृछाकरवी ते एकांतर मार्गणा कहेवाय ते आवीरीते जे संख्यातजाग वृद्धिना मूलके० प्रथम स्थानकथी हेठल असंख्यातजाग वृद्धिनाजे स्थानकगया तेनी पृछाकरवी अने तेने हेठल वलीजे अनंतजाग वृद्धिना स्थानकगयाछे ते पूछवा एम कोईक एकांतरे पूछे ते

वारे एम कहियें जे एक कंमक अने कंमकवर्ग प्रमाण. जेमां केवल असंख्यातनाग वृद्धिना स्थानक कंमकमात्र गयांछे तेमां एकेका असंख्यातनाग वृद्धि स्थानकने केवल एकेक अनंतनाग वृद्धिनुं कंमकगयुंछे अने असंख्यातनाग वृद्धिना स्थानक कंमकमात्रछे माटे कंमक कंमक सायें गुणाकार करिये एटले कंमक वर्ग थाय तद्गुणोवर्ग इतिवचनात् अने असंख्यनाग वृद्धि उपरे अनंतनाग वृद्धिनुं एक कंमकथयुंछे तेमाटे एकतो कंमकवर्ग अने तेना उपर वली एक कंमकप्रमाण एटला अनंतनाग वृद्धिना स्थानक गयांछे एम कहेवुं. ॥ ३ ॥

तेमज वली संख्यातगुण वृद्धिना प्रथम स्थानकथी हेठे संख्यातनाग वृद्धिना स्थानकगयां तेमूकीने असंख्यातनाग वृद्धिना स्थानक पूछवा तथा असंख्यातगुण वृद्धिना प्रथम स्थानकथी हेठल संख्यातगुणवृद्धिना स्थानक गयां ते मूकीने संख्यातनाग वृद्धिना स्थानक पूछवा तेमज वली अनंतगुण वृद्धिना प्रथम स्थानकथी हेठल असंख्यातगुण वृद्धिनाजे स्थानकगयां ते पडतामूकीने संख्यातगुण वृद्धिना स्थानक एकांतर मार्गणायें केटला पामीयें एमकोई पूछे तेने एवुं उत्तर आपिये जे कंमकवर्ग अने उपर एक कंमक जेम पूर्वें कह्याछे तेम कहेवा इति एकांतर मार्गणा यदुक्तं पंचसंग्रहे एगंतराउवुड्ढी ॥ वग्गो कंमस्सकंमच इति एरीते एकांतर मार्गणाकही हवे द्व्यंतर मार्गणा सांजलो जे बे वृद्धि वचमां मूकीने पूछीयें ते द्व्यंतर मार्गणा कहिये ते आवीरीते के संख्यातगुण वृद्धिना प्रथम स्थानकथी अनंतनाग वृद्धिना स्थानक केटला गयां एमपूछवाथी हे ज्ञजमना तेकहियेछे. ॥४॥

कंडक घनरे, कंडक वर्ग डु,गुणो करो ॥ एक कंमकरे तस संख्या मनमां धरो ॥ डुग अंतररे असंख्य अनंत गुणथी लह्यां ॥ अध स्थानकरे पूरव परें जाणो कह्यां ॥ ५ ॥ इति द्विकांतरमार्गणा त्रूटकः– त्रिकें अंतर कोई पूछे ॥ आदि असंख्य गुण वृद्धिथी ॥ हेठें नाग अनंत केरां ॥ गण कहो गुरु वयणथी ॥ कंडक वर्गनु वर्ग कीजे ॥ कंडक घन त्रिक उपरें ॥ कंडक वर्ग त्रिक एक कंडक ॥ होए ते मनमां धरे ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ कंमक घन एक अने कंमक वर्ग बे तथा ते उपर एक कंमक एटला स्थानक पामीये ए सर्व नेला करतां केटली संख्याथाय ते मनमां धरोके० धारणा

करो तेज विवरीने कहेछे इहां पहेलांतो संख्यातगुण वृद्धिना प्रथमस्थानकथी हेठ ला संख्यातनाग वृद्धिना एकेक स्थानकने हेठल प्रत्येके एकेक कंमकाधिक कंमकवर्ग एटले एक कंमकवर्ग अने एक कंमक ते अनंतनाग वृद्धिना स्थानकनु पामिये.

अने संख्यातनाग वृद्धि स्थानक कंमक प्रमाणछे माटे कंमकवर्ग जेवारे एक कंमक साथे गुणिये तेवारे कंमक घनथाय अने एक कंमकछे ते कंमक साथें गु णिये तेवारें कंमकवर्ग थाय अने संख्यातनाग वृद्धि स्थानकने हेठलें कंमकवर्ग अने एक कंमक पामिये ए सर्व नेला करतां सूत्रोक्त प्रमाणथाय

एरीते आगलपण डुगअंतर मार्गणाये असंख्यातगुण वृद्धिना प्रथम स्थानक थी तथा अनंतगुण वृद्धिना प्रथम स्थानकथी यथाक्रमे हेठली असंख्यातनाग वृ द्धिना तथा संख्यातनाग वृद्धिना सयम स्थानक पूर्वे जेम कह्याछे तेमजाणो यडुक्तं पंचसंग्रहे कंमं कंमस्स घनो वग्गो डुगुणो डुगंतरा एउ॥६॥ इतिद्विकांतर मार्गणा

हवे त्रिकांतरमार्गणाये एटले त्रणवृद्धि विचमां मूकीने कोईपूछे के प्रथमजे असंख्यगुण वृद्धिनुं स्थानक तेथी हेठला अनंतनाग वृद्धिना स्थानक केटलाग या ते सुविहित गीतारथ गुरुना वचन जाण्याहोय तो कहो. एक कंमक वर्गवर्ग एटले जेम असत्कल्पनाये चारआंकने कंमकनी स्थापना करिये तेनोवर्ग करतां चा रचोक सोलथाय वलीतेनो वर्ग करतां बशोने छपन्नथाय ते वर्गवर्ग कहिये एरीते असंख्यातनो समजवो केमके एक कंमकमा असंख्याता स्थानकछे माटे. हवे ए एकतो कंमक वर्ग वर्ग तथा तेनाउपर वली कंमक घन त्रण तथा वली कंमक वर्गत्रण अने वली उपर एक कंमक होय ते सर्व उत्तम श्रद्धा सहीत मनमां राखे

ए संख्या शीरीते जाणीये तेरीत कहेछे प्रथम असंख्यगुण वृद्धिना स्थानक थी हेठलें संख्यातगुण वृद्धिना स्थानक कंमकप्रमाण गयांछे तिहां एकेका स्थान कने हेठले प्रत्येके अनंतनाग वृद्धिना स्थानक एक कंमकघन तथा कंमकवर्गबे तथा एक कंमक प्रमाण पामिये तेमाटे ए सर्वने कंमक गुणाकरीने सरवालो करीराखि यें पछी संख्यातगुण वृद्धि कंमकने उपर एक कंमकघन कंमकवर्गबे अने एक कं मकछे ते पूर्वली रासीमा प्रक्षेपीये तेवारे यथोक्त मानथाय यडुक्तं पंचसंग्रहे कंम स्स वग्ग वग्गो घण वग्ग तिगुणिया कंमं इति ॥ ६ ॥

छठी वृद्धिनारे पहेला ठाणथी हेठला ॥ बीय वृद्धिनारे थानक
पूरव जेतलां ॥ इति त्रिकांतर मार्गणा, चउरंतररे अनंत गुणा

दिम ठाणथी ॥ हेठ थानकरे भाग अनंत ना मानथी ॥ ७ ॥
त्रूटक, परिमाणथी ते अष्ट कंडक ॥ वर्गवर्गा षट घना ॥
चार कंडक वर्ग आगल ॥ एक कंडक सोभना ॥ इति चतुरं
तर मार्गणा, पर्यवसाननी मार्गणा ते ॥ षट थानिक पूरे करे ॥
मूलथी संयम ठाण फरसी ॥ वीर विभू केवल वरे ॥ ८ ॥

अर्थ ॥ एम वली अनंतगुण वृद्धिना पहेला स्थानकथी हेठलि बीजी वृद्धिना एटले असंख्यात भागवृद्धिना स्थानक पण पूर्वे जेटलां त्रिकांतर वृद्धिना अनंत र कह्यांछे तेटला जाणवा इति त्रिकांतर मार्गणा

हवे चतुंरंतर मार्गणानेविषे अनंतगुण वृद्धिना आदिमके० प्रथम स्थानकथी हेठला स्थानक अनंतभाग वृद्धिना प्रमाणथी केटलाछे ॥ ७ ॥ तेपरिमाणथी आठ कंडकवर्गवर्ग तथा छ कंडकघन तथा चार कंडकवर्ग तथा उपरें एक कंड क शोभन संयम परिणामरूपछे ए केवीरीते जाणीयें ते समजावेछे.

अनंतगुण वृद्धिना प्रथम स्थानकथी हेठलि असंख्यगुण वृद्धिना स्थानक कं डक प्रमाण गयांछे अने असंख्यगुणना एकेक स्थानकने हेठल अनंतभाग वृद्धि ना स्थानक कंडकवर्गवर्गएक तथा कंडकघनत्रण अने कंडकवर्गत्रण वली कंडक एक प्रमाण पामिये तेमाटे ए सर्वने कंडकगुणा करिये जेथाय ते सरवालो करी राखियें तथा असंख्यातगुण वृद्धिने उपरें कंडकवर्गवर्गएक कंडकघनत्रण कंडक वर्गत्रण कंडकएक पामियेंछे ते पूर्वली राशीमां प्रक्षेपिये तेवारें यथोक्त मान थाय यदुक्तं पंचसंग्रहे, अड कंड वग्गवग्गा, चत्तारि वग्गा छ ग्घनाकंडं ॥ चउ, अंतर वुड्डीए, हेट्ठट्ठाण परूवणाए ॥१॥ इति, कंडक संज्ञा चारतेने तगुणोवर्ग सोल वर्ग. कंडकगुणो घन चोसठ वर्गवर्गो बसो छपन्न घनःकंडकगुणोपि बसो छपन्न यथो चित स्थानके संख्याकरजो इति चतुरंतरमार्गणा.

हवे पर्यवशाननी मार्गणा कहेछे पर्यवशान जे छेहडो तेनी मार्गणा ते षट स्थानक पूरेथये जाणवी ए मूलथीके० धुरथी संयमस्थान फरसीने जगतनुं नायक जे श्रीवीरपरमेश्वर ते केवलज्ञानवर्या ॥ ८ ॥

उपर मध्यथीरे संयम थानिक जे भजे॥ ते नियमारे हेठ उ
तरी पुनरपी सजे॥ अंतर्मुहूर्त्तनीरे वुद्धी हानि ठाणमां॥ होय

मुनिनेरे ज्ञानीदेखे ज्ञानमां ॥९॥ त्रूटक ॥ अप्पबहुअ विचार
करतां अनंत गुणना थोडला ॥ तेहथी गुणह असंख्य के
रा ॥ कंमक वर्ग कंमक नलां ॥ पश्चानुपूर्वि वृद्धि उत्तर एहन्यायें
नावीये ॥ क्षमाविजय जिन चरण उत्तम नक्तिनावें पावीये ॥१०॥

अर्थ ॥ जे उपरना संयमस्थानक तथा वचमांना संयमस्थानक अनुक्रमे फर से ते नियमा हेव उतरीने कालांतरे पुनरपीके० वली सजेके० सावधानथाय संयमश्रेणीपामे यडुक्तं अंतोमुहुत्त मित्तंपि, फासियं हुज्ज जेहिं संमत्तं ॥ तेसिंअवट्ठ पुग्गल, परियट्टो चेव ससारो ॥ १ ॥ जो एमठे तो संयम पाम्यानुं सुं कहेवुं इति अतरमुहुर्त्त कालप्रमाणे अधस्तन संयमस्थान थकी उपरि स्तन संयमस्थानारो हरूप वृद्धि तथा उपर स्तन स्थानथकी अधस्तन स्थानावरोहरूप हाणी मुनिने थाय ते हे ज्ञानवान वीरपरमेश्वर तमे देखोठो यडुक्तं कल्पनाष्ये गाथाहयं एयं चरित्त सेढिं, पडिवज्जइ हेठ कोइ उवरिवा ॥ जे हेठा पवम्जिइ, सिज्झइ णिय मां जहा नरहो ॥ १ मझेवा उवरिवा, नियमा गमणतु हेठिमं ठाण ॥ अंतो मुहुत्त बुढ्ढी, हाणीवि तहेव नायवा ॥ २ ॥ इति ॥ ९ ॥

हवे अल्पबहुलनो विचारकरतां अनंतगुण वृद्धिना सयमस्थानक सर्वथकी थोडा जाणवा तेथकी असंख्यातगुण वृद्धिना संयमस्थानक कंमकवर्ग अने एक कंमक जेटलां एटले परमार्थे असंख्यातगुणा पश्चानु पुर्वीयें वृद्धि आगले आगले एरीते नाविये सर्वत्र अनंतर वृद्धिस्थानक असंख्यातगुणा इतिनाव क्षमानाविजय एवा जिनके० वीरपरमेश्वर तेना चरणकमलनी उत्तमविधि युक्त नक्तिना महिमा थकी संयमश्रेणी पामिये नवनिस्तार यइयें संसार समुद्रनो पारपामिये ॥ १० ॥

ढाल चोथो रागधन्याश्री कलसरूप

गायो गायोरे नलें वीर जगतगुरू गायो ॥ एआंकणीठे
संयमश्रेणी थानक पटविधठवणा यत्र बनायो ॥ अह
ठाण परुपण करतां ॥ मनुज जनम फल पायोरे ॥ नले० ॥१॥

अर्थ ॥ जगतनागुरु जगतनापुज्य एवां श्री महावीरप्रज्ञु तेने नलेनावेकरी गायो स्तव्यो संयमश्रेणीना स्तवननी संग्रहगाथा कहेता (कहीने) कलस रचीयेठे प्रथम

ढाले संयमश्रेणीना षटस्थानपरूपणा बीजाढाले यंत्रस्थापना त्रीजाढाले अद्दग ण परूपणा करतां मनुष्य जन्मनुं फल पाम्युं ॥ १ ॥

शुद्ध निरंजन अलख अगोचर ॥ एहिज साध्य सुहायो ॥ ज्ञा
नक्रिया अवलंबी फरसो ॥ अनुनव सिद्धि उपायोरे ॥ नले० ॥२॥

अर्थ ॥ शुद्धनिरावरण निरंजन रागद्वेष अंजन रहित अलख लिपि अगोचर ते जे स्वरूप चर्म चक्षुयें जणायनही एवो परमात्मा स्वरूपानंद विलासी परनाव उ दासी तेहीज अमारो स्वरूप अमने साध्यपणे सुहायो एटले रुच्यो हे आत्मन् हे जीव सम्यक्ज्ञान सम्यक्क्रिया अवलंबीने फरसो पामो जे स्वस्वरूपना विचारमां मनविसरामपामे अने अपूर्व रसस्वादउपजे एवोजे अनुनव ते सिद्धिनुं उपायछे यदुक्तं नाणकिरियाहिंमुस्को इतिवचनात् ॥ २ ॥

श्रद्धा ज्ञान लह्यांछे तोपण ॥ जोनवि जाय पमायो ॥
वंध्य तरु उपमते पामे ॥ संयमठाणजो नायोरे नले० ॥ ३ ॥

अर्थ ॥ संयमश्रेणीनुं महीमा कहियेछे जे सम्यक्दर्शन सम्यक्ज्ञान पाम्याछे तोपण जो प्रमादस्थानक नजाय तो वांजीया फलरहीत वृक्षनी उपमापामे केम के जोसंयमस्थानक न आव्योतो राजाश्रेणीक तथा सत्यकी विद्याधरनीपरे जाणवुं;

जम खर चंदन नारनो वाहक ॥ नारनो नागी कहायो ॥ ति
णिपरें ज्ञानी संयम हीनो ॥ सदगतीयें नविजायोरे ॥ नले० ॥४॥

अर्थ ॥ जेम गर्दन बावनाचंदननो नारवहेतोथको नारनो नजनार कहेवाय पण सुगंधनो नोगी न कहेवाय तेम ज्ञानीपुरुष चारित्रविना ज्ञाननो नोगीथाय पण सद्गतीजे मोक्ष तिहांजायनही यदुक्तं जहाखरो चंदन नारवाही ॥ नारस्स नागी नहुचंदनस्स ॥ एवंखुनाणी चरणेणहीणो नाणस्सनागी नहु सुग्गईए ॥१॥

आश्रव त्यागें संवर परिणति ॥ अविरति सरव उठायो ॥ स्व
स्वरूपमां थिरता तेहिज ॥ संयम शुद्ध ठहरायोरे ॥ नले० ॥५॥

अर्थ ॥ संयमनुं मूलस्वरूप कहियेछे पंचाश्रवने त्यागे पंचसंवर परणतिरूप मनकरणानियमुत्तजीववहो ए बार अव्रतिने अनावें पोताना स्वरूपमां स्थिरता रमण निश्चनानुनव तेहीज वीतरागें आगममां शुद्धसंयम ठहरायो. ॥ ५ ॥

अनुभव सुरतरु फलने काजे ॥ कीजे आत्म अमायो ॥ सन
मुखभावें जेह प्रवर्त्तन ॥ तेह निवर्त्त निदायोरे ॥ भले० ॥ ॥६॥

अर्थ ॥ अनुभवरूपजे कल्पवृक्ष तेनुंफलजे मोक्ष ते पामवाने अर्थें आत्मा मायारहीत करवो अथवा अनुभवसुखी जीवनमुक्तछे मोक्षने सन्मुखभावें प्रभुमार्गानुसारी जे प्रवर्त्तन तेहिज निवर्त्तननुं उपायछे यडुक्तं निर्जित मदमदनानां वाक्काय मनो विकार रहितानां ॥ विनिवृत्त पराशानां मेहैव मोक्षसुविहितानां ॥१॥६॥

ज्ञानक्रिया डुग चक्रे शोभित ॥ संयम रथ सुखदायो ॥ अनुभव
धोरी युत शिव नगरे ॥ जाता विघ्ननथायोरे ॥ भले० ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ ज्ञान अने क्रियारूप बे चक्रके० पइडा तेणेकरी शोभित एवो संयमरूप रथ ते सुखदाईछे अने अनुभवरूप धोरिये जोड्यो तदारूढ आत्मा चिदानंदने शिवनगरिये जातां निरावरणथातां विघ्न अंतराय कोईनथाय ॥ ७ ॥

रायसिद्धारथ वंश विभूषण ॥ तिसलाराणीजायो ॥ अजअज
रामर सहेजानंदी॥ ध्यान भुवनमां ध्यायोरे ॥ भले० ॥ ८ ॥

अर्थ ॥ उदितोदित राजा सिद्धार्थना वंशनो शोभावनारो शील सम्यक्त्व देसविरति एवी त्रिसलाराणीयें जन्म्यो अपुनरावृत्तिये योनिनिर्गम एटले हवे सिद्धावस्था कहीछे जन्मरहित जरामरण रहीत सहेज अकृत्रम स्वस्वरूपानंदी एवो वीर परमात्मा तेने ध्यानरूप भाव घरमां ध्याव्यो चितव्यो ॥ ८ ॥

संवत नंद निधि मुनि चंदे ॥ देव दयाकर पायो ॥ प्रथम जिने
सर पारण दिवशे ॥ स्तवना कलश चढायोरे ॥ भले० ॥ ९ ॥

अर्थ ॥ नवनंद नवनिधि सातमुनि एकचंद्र अंकानावामतोगतीतिवचनात् एटले संवत् १७९९ भावरसमां देवदयानो करनार पाम्यो अथवा तेनुं सासनपाम्यो जे दिवशे प्रथम जिनेश्वर श्री आदिनाथें वरसीतपनो पारणो- इक्षुरसे श्रेयांसने हाथें कीधो ते दिवशें सयमश्रेणे गर्भित श्रीवीरप्रभुनुं स्तवनरूप प्रासादनेविषे कलसचढाव्यो एटले संपूर्णकीधो ॥ ९ ॥

विजयदेवसूरीस पटोधर ॥ विजयसिंह सवायो॥ सत्यशिष्याधर
कपूरविजयबुध ॥ क्षमाविजय पुण्य पायोरे ॥ भले० ॥ १० ॥

हवे गुरुपरंपरा लिखीयेंछे श्रीवीरस्वामिना पांचमां गणधर श्रीसुधर्मस्वामि पहेला पट्टोधरथया तिहांथी आठपाटलगे निर्ग्रंथबिरुदधारी १ नवमेंपाटे सूरिमंत्र कोटीवार जप्या माटे कोटीबिरुदधारी २ पन्नरमेंपाटें चंद्रसूरि चंद्रवत् घनुसोम्यथया माटे चंद्रगछा कहेवाणा ३ सोलमेंपाटे सामंतनद्राचार्य प्रभु निर्ममथया वनवासेरह्या माटे वनवासी बिरुदथयुं ४ छत्रीसमेंपाटे सर्वदेवसूरिथया वडतलें आचार्यपद आप्युं अने तेना शिष्यजेथया ते वडसाखानीपरे परिवारे वध्यां तेवली घणागुणे वध्या माटे वडगछाकहेवाणा ५ चुमालीसमेंपाटे आंबिल वर्द्धमान तपकीधामाटे राणाजीयें तपाबिरुददीधो तिहांथी तपाकहेवाण ६ अनुक्रमे बासठमेंपाठें आदेयनामधारी श्रीविजयदेवसूरि-तत्पटप्रनावक सवाइ विजयसिंहसूरि तेनी साची ग्रहणाशिक्षा आसेवना शिष्याधारी अर्थात् पंमित सत्यविजयगणि गछनायकनी आज्ञामागी क्रिया उद्धारकीधो श्रीआनंदघनसाथें वनवासरह्या अनेक तपकीधा अनुक्रमेंवृद्धावस्थाजाणीने अनिहलपुर पाटणमां रहेता धर्मोपदेशदेतां तेमना शिष्य पंमित कपूरविजय अने पंमित कुशलविजय थयां तेमां श्रीकपूरविजयगणितो अरिहंतप्रतिमा प्रतिष्टादिक अनेक धर्मकार्यकारी प्रनावक थया देश नगर पुर पाटणे विहार करता करतां रह्या तेमना शिष्य पंमित वृद्धविजयगणि तथा पंमित क्षमाविजयगणि थया तेमां पंमित क्षमाविजयगणि तो देशनाआपवाना गुणेकरी अनेक नव्यजीवोने उपकारी पवित्र चरण कमल धारी थया ॥ १० ॥

सूरतमांहे सूरय मंमण ॥ श्रीजिन विजय पसायो ॥ विजयद
यासूरिराजे जगपति ॥ उत्तमविजय मल्हायोरे ॥ नलेंण॥११॥

अर्थ ॥ श्रीसूरतबंदरे सूर्यमंमण पार्श्वनाथनी स्मृति प्रणति महिमायें तथा पंमित श्रीक्षमाविजयगणि शिष्य रत्न संप्रति विद्यमान चिरंजीवी परमोपकारी पंमितश्री जिनविजयगणियें उद्यमकरी मने प्रथम अन्यास कराव्यो ते जेम माता पिता पुत्रने प्रथम पगमांमवा तथा बोलवा शिखवे तेम गुर्वादिके मने उपकारकीधो ए श्री तपागछधिराज नट्टारक श्रीविजयदयासूरिश्वरना राजमां जगत्पति जगत् परमेश्वर श्रीवीरस्वामिने मुनि उत्तमविजये मल्हायो गायो स्तवनागोचरकीधो ए स्तवन अमछरी गीतार्थ पुरुषो तमे सोधजो नणावजो नणता नणावतां संयमश्रेणीयें नूपितथइ सहेजानंदपामजो ॥ ११ ॥

इतिश्री संयमश्रेणी गर्नित वीरविज्ञो स्तवनं समाप्तं श्रीरस्तु.

॥ श्री जिनेंद्राय नमः ॥

अथ श्री लोकनालद्वात्रिंशिका बालावबोध सहित प्रारंभः

प्रथम बालावबोध कर्त्तानुं मंगलाचरणः—

श्रीमदाप्तं प्रणम्यादौ, जगत स्थिति दर्शकं ॥
वक्ष्ये लोक विचारस्य, वार्त्तिकं समयानु गम् ॥ १ ॥

व्याख्याः— जगतनी स्थितिना देखाडनारा एटले जगतनी यथार्थ स्वरूप स्थितिना देखाडनारा श्रीवीतराग भगवानने प्रणाम करीने एटले नमस्कार करीने आ लोकना विचारनुं वार्त्तिक समयानुसारे एटले आगमोक्त प्रकारे हुं कहुं छुं॥१॥

जिण दंसणं विणाजं, लोअं पूरंति जम्म मरणेहिं ॥
भमइ जिअणंत भवे, तस्स सरूवं किमवि वुच्छं ॥ १ ॥

व्याख्याः— 'जिण'—जिन एटले श्रीतीर्थंकरदेव, तत्प्रणीत 'दंसण'—दर्शन एटले सम्यक्त्व, दर्शन अथवा तीर्थंकरनुं दर्शन ते मनोवचन तथा काय ए त्रिकरण भावे करी जे देखवुं ते छे. 'विण'—ते विना 'जं'—जे 'जम्ममरणेहिं'—जन्म तथा मरणे करी 'लोअ'—लोक एटले सामान्यपणे चौदराज लोकने 'पूरंति'—पूरतो थको 'अणंत भवे'—अनंत भवप्रते 'जिओ भमइ'—जीव भमेछे, 'तस्ससरूव'—ते लोकनुं स्वरूप, आकार, लांबी, पहोलाई तथा जाडाई 'किमवी'—कांईक स्तोकमात्र 'वुच्छं'—कहुं छुं ॥ १ ॥

अवतरण — अनंत प्रदेश अलोकाकाशनेविषे सामान्यपणे अल्पमात्र लोकनो आकार वखाणे छे —

वइसाह ठाण ठिय पय, कडिठ्ठ कर युग नरागिई लोगो ॥
उप्पत्ति नास धुअ गुण, धम्माइ छ दव पडिपुण्णो ॥ २ ॥

व्याख्या — 'वइसाह'—खाइओ तेना 'ठाण'—विलोववाना समयनेविषे 'ठिय'—स्थित एटले स्थाप्या छे 'पय'—पद एटले बे चरण जेणे, वली विलोवतां 'कडिठ्ठ'—कटिस्थ एटले कटीनेविषे जे 'करयुग'—हस्थ युगल एवो जे 'नरागिई'—

नराकृति एटले मनुष्यना जेवो जेनो आकार छे, एवो लोक छे. तथा विलोववाना अधिकारमाटे नर शब्देकरी प्राये स्त्री जाणी लेवी. स्त्री ज्यारे छास विलोवेछे, त्यारे बे पग मोकला राखेछे अने कटिप्रदेशनेविषे यथा बंध संकीर्ण थाय तेनी पठे लोक पण हेठल पहोलोछे तथा चढतो मध्य भागनेविषे संकीर्ण छे. वली विलोव तां बन्ने हाथ कटि देशमां राख्यामां आवेछे; त्यारे बे कोणीना वचला भागमां कटि प्रदेशथी हृदयसुधी चढतो विस्तार थायछे. अने मस्तक दिशी संकीर्ण छे. तेम लोक पण मध्य भागथी ऊपर चढतां पांचमां देव लोकसुधी विस्तार पामे लो छे. त्यांथी वली संकीर्ण थायछे. तेमाटे विलोवनारी स्त्रीना आकारनुं दृष्टांत कह्युं छे. हवे ए लोकमां कया कया पदार्थो छे? ते कहेछेः—'उप्पत्ति'—उपजवुं, 'नास'—नाशने पामवुं, 'धुअ'—ध्रुव एटले निश्चलपणुं अथवा स्थिति ए 'गुण', गुणो जेनेविषे छे, एवा 'धम्मइ'—धर्मास्तिकायादिक 'छदव'—छ द्रव्य, एटले पदा र्थ जेमां 'पडिपुन्नो'—परिपूर्ण भर्या छे. धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशा स्तिकाय पुद्गलास्तिकाय जीवास्तिकाय तथा काल ए छ द्रव्य जाणवां ॥ २ ॥

अवतरण.— केटलाएक परदर्शनी एम कहेछे के; लोक ब्रह्माए उत्पन्न कर्यो छे, विष्णु पालना करेछे, महादेव संहार करेछे, शेषनाग काछवो तथा काम धेनु धारण करी रह्यां छे, एम कहेछे तेनुं निराकरण करेछेः—

केणवि न कउ न धउ, ऽणाहारो नहठिउ सयं सिद्धो ॥
अहमुह महमल्लग लघु, तउवरि संपुड सरिछो ॥ ३ ॥

व्याख्याः— 'केणवि'—कोईए पण 'नकउ'—आ लोक उत्पन्न कर्यो नथी; 'नधउ' कोइए पण धर्यो नथी 'अणाहारो'—निराधार छे. सर्व पदार्थ लोकने आधारे छे, 'नहठिउ'—ए लोक नभजे आकाश तेनेविषे स्थित छे, 'सयंसिद्धो'— तेथी स्वयंसिद्ध छे. ए लोकनो आकार प्रकारांतरे कहेछेः— 'अहमुहं'—अधमुख एटले ऊंधो कीधेलो जे मोटो 'महमल्लग'—महत् मल्लक एटले मोटो सराव, 'त उवरि'—तेनी ऊपर 'लघु संपुड'—न्हाना सरावनो संपुट कर्यो होय तेनी 'सरि छो'—सदृश एटले तेना सरखो आ लोकनो आकार छे ॥ ३ ॥

पयतलि सग मझेगा, पण कुप्परि सिरतलेग रज्जु पिहु ॥
सो चउदस रज्जुओ, माघवइ तलाउजा सिद्धी ॥ ४ ॥

व्याख्या – 'पयतलि'–पदतले एटले पहेलां जे वैशाख स्थान स्थित मनुष्यने आकारे लोक कह्यो, ते पगना तलियाने ठेकाणे चारेदिशिए सात राज प्रमाण पोलो छे; अने मध्य भाग जे पुरुषाकारनेविषे नाभिनुं गाम छे, त्यांहां एक राज प्रमाण चारे दिशिए पोलो छे बन्ने हाथनी कोणीना गामनेविषे पांच राज प्रमाण पोलो छे; अने मस्तकने ठेकाणे एक राज प्रमाण पोलो छे; वली ते लोक हेठली माघवती सातमी नरक पृथ्वीना तलाथी ऊपर यावत् सिद्ध शिलासुधी जोतां चौद राज प्रमाण आ लोक ऊंचो छे ॥ ४ ॥

अवतरणः– हवे पहोलाणनी स्थिति कहेछे–

सगरज्जु मघवइ तला, पएस हाणीय महियले एगा ॥
तो वुड्ढि बंभजा पुण, पण हाणीजा सिवे एगा ॥ ५ ॥

व्याख्याः–माघवती जे सातमी नरक पृथ्वी, तेना तलाथी चारे दिशिनेविषे ए लोक सात राज प्रमाण पहोलो छे; त्यांथी प्रदेशनी हानी करतां ऊपर तिर्यगलोकनी मही तलनेविषे आवे त्यारे चारे दिशिनेविषे एक राज प्रमाण विस्तार छे त्यांथी वली ऊपर जातां वृद्धि थाय छे, ते पांचमो ब्रह्म नामे देवलोक छे त्यां चारे दिशाए पांच राज प्रमाण पहोलो छे. त्यांथी वली प्रदेश घटता छे ते ज्यां सिद्ध शिला छे त्यां चारे दिशिए एक राज प्रमाण पहोलो छे तथा हाणी वृद्धि जे छे ते तो प्रदेश मात्र कही छे. तो पूर्ण खांडुआ केम मांभिये छैए? त्यां ए विशेष छे – जे बन्नेपासे प्रदेशनी हाणी छे तोपण ऊतरतां तथा चढतां बन्ने पासाना बे त्रिखूणा लई, अवला सवला जोडी खांडुआमां भेलीए त्यारे खांडुआं पूरां थाय एम सर्वत्र जाणवुं. हवे विस्तारनो विवरो लखीए छैएः– सातमी नरक पृथ्वी सात राज प्रमाण, छठी साडा छ राज प्रमाण, पांचमी छ राज प्रमाण, चोथी पांच राज प्रमाण, त्रीजी चार राज प्रमाण, बीजी अढीराज प्रमाण तथा पहेली घम्मा नरक पृथ्वी एक राज प्रमाण पहोली छे. चारे दिशिछनेविषे ए विस्तार छे ऊर्ध्वलोकनो विस्तार आगल कहीशुं ए मान लोकनाल बत्रीशीने अनुसारे कह्यु छे. ग्रंथांतर नेविषे अन्यप्रकारेपण दीगमां आवेछे. निश्चयनी वार्तातो ज्ञानी जाणे. ॥ ५ ॥

अ०ः–हवे लोकनाल मांभवानो उपाय कहेता प्रथम त्रस नाडीनो विचार कहेछे.–

सगवन्न रेह तिरिच्छं, छवसु पणुड्ढं च रज्जु चउअंसे ॥
इग रज्जु विछरा यय, चउद्दस रज्जुव तसनाडी ॥ ६ ॥

व्याख्याः—सत्तावन रेषा त्रीछी स्थापीयें, वली पांच रेषा ऊन्नी मांमिए, एम करतां ऊंचपणे चउ खूणा छपन्न खंम थाय; त्रीछी सत्तावन्न रेषा छे. तेमाटे तेना छप्पन खंम थाय छे. ऊन्नी पांच रेषा छे. तेना त्रीछा चार खांमुआ थाय, चार खांमुए एक राज थाय, तथा ए त्रस नाडी पहोलाईए करी एक राज प्रमाण, अने जांव पणे चौदराज प्रमाण जाणवी. ॥ ६ ॥

अवतरणः— तथा लोकनो मध्य नाल ते त्रस नाडी तेमां बेंड्रियादिक त्रस जीव जन्ममरण पामे छे, माटे त्रस नाडी कहेवाय छे. ए त्रस नाडीनी बाहार जे लोकोनो विस्तार छे, त्यां सूक्ष्म एकेंद्रिय निगोद सर्वत्र व्यापी रह्युं छे. ते बाहारनो विस्तार अधोलोकनेविषे कह्यो हवे ऊर्ध्वलोकनेविषे खांमुआनो विस्तारकहेछेः

छङ्कं तिरिअं चउरो, डुसु छ डुसु अठ दसय इक्किक्के ॥
बारस दोसुं सोलस, दोसुं वीसाय चउसु पुढो ॥ ७ ॥

व्याख्याः—ऊर्ध्व लोकनी श्रेणीनेविषे प्रथम रत्नप्रना नरकपृथ्वी थकी ऊपर जे अावयावीश खांमुआनी श्रेणी छे. तेमां लोकना मध्यथी ऊपर पहेली बे श्रेणीनेविषे चार चार खांडुआ त्रस नाडीनाज छे. पण त्रस नाडीथी बहार नथी. त्यार पछी वली तेथी ऊपर बे श्रेणीनेविषे छ छ खांमुआ छे, एटले चार खांमुआ त्रस नाडीना अने एकेको बन्ने पासानो खांमुओ लेखवतां छ खांमुआ थाय. त्यार पछी ऊपर एक श्रेणीनेविषे आव खांमुआ छे. ते बबे खांमुआ बे पाशे तेनां चार खांमुआ अने त्रस नाडीना चार खांमुआ ए आव खांमुआ छे. वली तेनी ऊपर एक श्रेणीनेविषे दश खांमुआ छे. तेबन्ने पासे त्रण त्रणछे,अने त्रसनाडीना चार मली दश थाय छे त्यार पछी बे श्रेणीनेविषे बार बार खांमुआ छे, त्यार पछी बे श्रेणीनेविषे शोल शोल खांमुआ छे, तेमज चार श्रेणीनेविषे वीश वीश खांमुआ छे. ते बधा पृथक् एटले जुजुआ छे. ॥ ७ ॥

अवतरण—एवी रीते ऊर्ध्व लोकनेविषे प्रदेशनी वृद्धिना खांमुआ कह्या, एटले अगावोश श्रेणीमां चाद श्रेणी थई; हवे हानीना खांमुआ कहे छेः—

पुणरवि सोलस दोसुं, बारस दोसुं च तिसु दस तिसु ८ ॥
छडसु डसुं चउ खमुअ, सबे चउरुत्तरा तिसया ॥ ८ ॥

व्याख्या—वली पंदरमी तथा शोलमी ए बे श्रेणीनेविषे शोल शोल खांमुआ

छे सतरमी तथा अढारमी ए बे श्रेणीनेविषे बार बार खांडुआ छे. ओगणीशमी, वीशमी तथा एकवीशमी ए त्रण पंक्तिनेविषे दश दश खांडुआ जाणवा. बावीशमी त्रेवीसमी तथा चोवीशमी ए त्रण पंक्तिनेविषे आठ आठ खांडुआ जाणवा. पचीशमी तथा छवीशमी ए बे श्रेणीनेविषे छ छ खांडुआ छे अने सत्यावीशमी तथा अठ्यावीशमी ए बे श्रेणीनेविषे चार चार खांडुआ त्रस माहेलाज छे ॥ ८ ॥

अवतरण.—एवी रीते ऊर्ध्व लोकनी अठ्यावीश श्रेणीना खांडुआनुं मान कह्युं ए प्रमाणे सर्व ऊर्ध्व लोकना खांडुआ त्रणशेने चार थाय छे. वली पण कहेछे.—

छयरीय लोअ मज्झा, चउ चउ ठाणेसु सत्त पुढवीसु ॥
चउर दस सोल वीसा, चउवीस छवीस अडवीसा ॥९॥

व्याख्या —चौद राज प्रमाणनो मध्य एटले जे वच्चेनो प्रदेशछे, त्यांथी अधोलोक प्रते ऊतरता' सात नरक पृथ्वीनेविषे प्रत्येके प्रत्येके चार चार श्रेणीनेविषे कहे छे ते केम ? अधो लोकनी अठ्यावीश श्रेणीमा पहेली नरक पृथ्वीनी चार श्रेणीनेविषे चार खांडुआ छे. तेना शोल खांडुआ थाय छे बीजी नरक पृथ्वीनेविषे चार श्रेणीए प्रत्येके प्रत्येके दश दश खांडुआ छे तेने दश गुणा करतां चालीश खांडुआ थाय छे. त्रीजी नरक पृथ्वीए चार श्रेणीमां प्रत्येके प्रत्येके शोल शोल खांडुआ छे. तेना चोसठ थायछे, चोथी नरक पृथ्वीए चार श्रेणीमानी प्रत्येकमां वीश वीश खांडुआ छे तेना एंशी खांडुआ थायछे पांचमी नरक पृथ्वीए चार श्रेणीमां प्रत्येके चोवीश चोवीश खांडुआ छे, तेना छनु थायछे छठी नरक पृथ्वीए चार श्रेणीमां प्रत्येके छवीश छवीश खांडुआ छे, तेना एकशोने चार थायछे सातमी नरक पृथ्वीनेविषे चार श्रेणीए प्रत्येकमा अठावीश अठावीश खांडुआ छे तेना एकशोने बार थाय छे. एवी रीते शोल, चालीश, चोशठ, ऐंशी, छनु, एकशोने चार तथा एक शें ने बार ॥ ९ ॥

अड पण सय बारुत्तर, खंडुअ सोलहिय अठसय सवे ॥
घम्माइ लोकमज्झं, जोयण अस्संख कोडीहि ॥ १० ॥

व्याख्या'— अधोलोकना सर्व एकठा खांडुआ गणिए तो पांचशेने बार उपर थाय अने पूर्वे ऊर्ध्व लोकना त्रणसेने चार कह्या तेने साथें मलावीये तेवारे सर्व मली आठशेने शोल खांडुआ थायछे. हवे लोकना मध्यनुं ठाम कहे छे. घम्मा

नामनी प्रथम नरक पृथ्वीनेविषे असंख्यात योजननी कोडी मेरूना मूलनेविषे गो स्तनाकार रुचकथी हेवल लोकनो मध्यनाग जाणवो. ॥ १० ॥

अवतरणः—हवे चौद राजनेविषे अधो लोक, तिर्यक् लोक तथा ऊर्ध्व लोक मां कोण कोण रहेछे ते कहे छेः—

सग रज्जु जोयण सया, अठार सुण सगरज्जु माण इहं ॥
अह तिरिय उड्ढ लोआ, निरय नर सुराइ नावुल्ला ॥ ११ ॥

व्याख्याः—लोकना मध्यथी आठमा राजनेविषे समनूतलथी नवशें योजन ऊं चो तथा नवशें योजन हेठल ए अढारशें योजन प्रमाण तिर्यग् लोक कहे वाय छे त्यारे ऊर्ध्व लोकना सात राज छे ते अढारशें योजन ऊर्ध्व लोकमां ग ण्याथी हेठला सात राज ते अधो लोक कहेवाय; आढारशें योजन रहित सातराज प्रमाण ऊर्ध्व लोक कहेवाय छे. हवे अधो लोकनेविषे नारकी प्रमुख, तिर्यक् लोक नेविषे मनुष्यादिक, अने ऊर्ध्व लोकनेविषे देवता प्रमुख वशेछे. यद्यपि नवनपत्यादिक देवता अधोलोकमां वशेछे तथापि नारकी घणा छे, माटे तेज अधोलोके कह्याछे. ११॥

अह लोय निरय असुरा, वंतर नर तिरिअ जोइस तरुग्गी ॥
दीवु दहि तिरिअ लोए, सुर सिद्धा उड्ढ लोगम्मि ॥ १२ ॥

व्याख्या·— पाछली गाथानेविषे 'निरय नर सुराइ'—ए वाक्यमां आदि शब्द आव्यो छे माटे आदिशब्द निरयादि त्रणे शब्दोनी साथे जोडिये. त्यारे निरयादिक नारकी असुर देवता अधोलोकमां वशेछे. व्यंतर नर मनुष्यादिक तिर्यच ज्योतिषी, तरु वनस्पतिकाय अग्निकाय ए असंख्याता द्वीप समुद्ररूप तिर्यक लोकमा वशेछे. सुरादिक सुर देवता, सिद्ध कहिये मुक्त जीव ते सर्व ऊर्ध्व लोकमां रह्या छे.॥१२॥

इक्किक्क रज्जु इक्कि,क्क निरय सग पुढवि असुर पढमंतो ॥
तह वंतर तडवरि नर, गिरिमाइ अ जोइसा गयणे ॥१३॥

व्याख्याः— एकेक राज प्रमाण एकेक नरक पृथ्वी छे. एटले साते नरके सात राज थया. तथा पहेली नरक पृथ्वीमां असुर एटले नवन पति रहेछे, तथा प्र कारे व्यंतर पण पहेली नरक पृथ्विमां रहेछे. तथा प्रथम पृथ्वीनी ऊपर नर म नुष्य अनेक नगर गिरि एटले मेरु पर्वतादिक पदार्थना समूह छे. चन्द्रमा, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र तथा तारा ए पांच प्रकारना ज्योतिषी गयणेके० आकाशनेविषे रहेछे.॥१३॥

छसु खंडुगेसु अ डुगं, चउसु डुगं छसु अ कप्प चत्तारी ॥
चउसु चऊ सेसेसु अ, गेविज्ज णुत्तराय सिद्धंते ॥ १४ ॥

व्याख्या.– लोकना मध्यथी ऊपर छ खांडुआना ऊपरला भागनेविषे सौधर्म ईशान ए नामना बे देवलोक छे. एटले अही लोकना मध्यथी दोढ राज ऊंचा बे देवलोकछे वली त्यांथी चार खांडुआ ऊपरना भागनेविषे सनत्कुमार तथा माहेंद्र नामना बे देवलोक छे. त्यांथी छ खांडुआमां अनुक्रमे ब्रह्म, लांतक, शुक्र तथा सहस्रार नामना चार देवलोक छे त्यारपछी चार खांडुआनेविषे चार देवलोक आनत, प्राणत, आरण, तथा अच्युत नामना छे बाकीना आठ खांडुआनेविषे नव ग्रैवेयक तथा पांच अनुत्तर विमान छे तेमां प्रथम चार खांडुआनेविषे नवग्रैवेयकछे ने उपरना चार खांडुआनेविषे पांच अनुत्तर विमानछे अंतखांडुआना छेडानेविषे सिद्ध शिलाछे.

अवतरण – एवीरीते ऊर्ध्व लोकनेविषे देवलोकनी स्थिति कही, तेविषे आगमनी साख कहेछे तथा चागमे –

सोहम्मम्मि दिवड्ढा, अड्ढाइज्जा य रज्जु माहिंदे ॥
चत्तारी सहसारे, पणच्चुए सत्त लोगंते ॥ १५ ॥

व्याख्या – लोकना मध्यथी सौधर्म देवलोक दोढराज ऊंचो छे ; लोकना मध्यथी माहिंद्र देवलोक अढीराज ऊंचो छे , लोकना मध्यथी सहस्रार देवलोक चार राज ऊंचो छे , लोकना मध्यथी अच्युत बारमो देवलोक पांचराज ऊंचो छे; अने लोकना मध्यथी लोकांत सात राजऊंचो छे. ॥ १५ ॥

सम्मत्त चरण रहिया, सव्व लोगं फुसे निरवसेसं ॥
सत्तय चउदस भाए, पंचय सुय देस विरईए ॥ १६ ॥

व्याख्या – सम्यक्त्व एटले देवनेविषे देवनी सद्दहणा, गुरुनेविषे गुरुनी सद्दहणा, दयामूल धर्मनेविषे धर्मनी सद्दहणा, चरण एटले पंचाश्रवथी विरमण, पांच इंद्रियनो निग्रह, अनंतानुबंधिया क्रोध, मान, माया तथा लोभनो त्याग ; मनोदंड, वचन दंड. कायदंड, तेनी विरति एवा जे संयमना सत्तर भेद, तेणेकरी संयुक्त जे चारित्र तेणेकरि रहित एटले मिथ्यात्व कुगुरु, कुदेव, तथा कुधर्मना सद्दहनार अविरति एवा जे संसारी जीव तेने सम्यक्त्व चरण रहित कहिये, एवा जीवो चौद राजलोक प्रते सूक्ष्म तथा बादर जीव योनिमा फरता थका निरविशेष

पणे फरसे एटले चौदराजमां तिलमात्र नूमि पण फरसी न मूके; श्रुतज्ञानी जे यति ले ते लोकना मध्यथी ऊंचे सात राज फरसे ले; कारण के, श्रुत ज्ञानी ने उत्कृष्टी गति सर्वार्थ सिद्धि सुधी ले एवुं सिद्धांतमां कह्युं ले. ते सर्वार्थ सिद्धि लोकना मध्यथी कांई एक ऊणा सात राज ले. ते स्तोकमात्र ऊणा होवा थी. सामान्य पणे पूराज गण्यामां आव्या ले. "उवमब संजयाणं, उववाउ उ क्कोसउ असवठे" एम कह्युं ले. 'चउदस नागे पंचय, वली देशविरति बारव्रत ध र श्रावक ते चौद राजना चौद नागमांथी, पांच नाग ऊर्ध्व लोकना फरशे, केमके, श्रावकनी उत्कृष्टी गति अच्युत नामना बारमा देवलोकसुधी कही ले ते बारमो देवलोक लोकना मध्यथी पांच राज ऊंचो ले. तेमाटे पांच राज कह्या

अवतरणः— हवे प्रथम सुचिरज्जु, प्रतररज्जु, घनरज्जु, तेउना अनुक्रमे प्रमाण कहेतां प्रथम सातमी नरक पृथ्वीनी आदिथी मांमीने सुचिरज्जु कहेले.—

अडवीसा लवीसा, चउवीसा वीस सोल दस चउरो ॥ सुइ
रज्जु सत्त पुढविसु, चउ चउ नइआउ पयर घणा ॥ १७ ॥

अर्थ ॥ सातमी नरक पृथ्वीनेविषे अगावीश सुचिरज्जु ले, लठी नरक पृथ्वीने विषे लवीश सुचिरज्जु, पांचमी नरक पृथ्वीनेविषे चोवीश सुचिरज्जु, चोथी नरक पृथ्वीनेविषे वीश सुचिरज्जु, त्रीजी नरक पृथ्वीनेविषे शोल सुचिरज्जु, बीजी नरक पृथ्वीनेविषे दश सुचिरज्जु तथा पहेली नरक पृथ्वीनेविषे चार सुचीरज्जु, जे चार खंमु आ श्रेणीबंध, अने पहोलाईए एकज खंमुओ होय तेने सुचिरज्जु कहिये. सात मी नरकपृथ्वी चार खंमुआ ऊंची ले; अने अगावीश खंमुआ त्रीली ओलीए ले; ए माटे अगावीश सुचिराज जाणवा. एवी सर्वत्र नावना करवी. हवे ए साते न रकपृथ्वीना सुचिरज्जुनुं मान जे एकशोने अगावीश थायले ते चार नागे करीए तो प्रतर रज्जुनुं मान मले वली ते प्रतर रज्जुनुं आंक चारे नागे देतां जे फलितांक थाय तेटला घनरज्जु जाणवा. चार चार खांमुआ चारे दिशिए एटले अकेक राजलांबो तथा पहोलो अने पाराज जाडो होय ते प्रतररज्जु कहेवाय ले, तथा चार खांमुआ जाडापणे, लांबपणे तथा पोहोलपणे ते घनरज्जु कहिये. पहेला प्रतर रज्जुनेविषे शोल खांमुआ होय घनरज्जुनेविषे चोशठ खांमुआ होय ते आगल कहेवाशे ॥ १४ ॥

अडवीस सयं लसयरि, अठ ऊहं चउ जुया डुसय सवे ॥
सुइ रज्जु पयर रज्जु, डुतीसि गुण वीस इगवस ॥ १८ ॥

व्याख्याः— अधो लोकनेविषे पांचशेंने बार खांडुआ छे; तेना चार भाग कर तां प्रत्येक भाग एकशोने अठावीशनो थाय तेटला सुचिरज्जु जाणवा. ऊर्ध्व लोकनेविषे त्रणशेने चार खांडुआ छे तेना चार भाग करतां प्रत्येक भाग छोतेरनो थाय, तेटला सुचिरज्जु जाणवा. ते अधोलोकना एकशोने अठावीश सुचिरज्जु, तथा ऊर्ध्व लोकना छोतेर सुचिरज्जु, ए बन्ने एकठा करिये त्यारे बशोने चार सुचिरज्जु थाय अधोलोकना एकशोने अठावीश सुचिरज्जुने चार भाग दैये त्यारे बत्रीश प्रतररज्जु थाय, ऊर्ध्व लोकना छोतर सुचिरज्जुने चार भाग दैये तो ओगणीश प्रतररज्जु थाय ॥१८॥

अवतरणः— हवे घनरज्जुनुं मान कहेछेः—

घणरज्जु अठ हिठा, पऊण पणुद्धं उजे पऊण तेर ॥
घण पयर सूइ रज्जु, खंडुअ चउसठि सोल चउ ॥१९॥

व्याख्या.—अधोलोकना बत्रीश प्रतररज्जु छे, ते चार भागे देतां आठ थाय, माटे अधोलोकनेविषे आठ घनरज्जु जाणवा ऊर्ध्व लोकनेविषे ओगणीश प्रतररज्जु छे ते चार भागे देतां पोणा पांच घनरज्जु छे ते बन्ने कहेतां अध तथा ऊर्ध्व लोकना एकठा करिये तो पोणा तेर घनरज्जु थाय हवे घन प्रतर तथा सुचिरज्जुनुं मान कहेछे—चोसठ खांडुआनो एक घनरज्जु थाय, शोल खांडुआनो एक प्रतररज्जु थाय, चार खांडुआनो एक सुचिरज्जु थाय ए सामान्य प्रकारे दृष्टांत मात्र चतुरस्र लोकनुं परिणाम देखाड्युं; पण लोकनुं स्वरूप वृत्ताकार मल्लकने आकारेछे, ते वृत्ताकारना खांडुआ यंत्रमां लखाय नही, माटे चौरस कह्यो छे. ॥ १९ ॥

अवतरण.—हवे मन कल्पनाए कृत वृत्ताकार लोकनेविषे घनरज्जु, प्रतररज्जु, तथा सुचिरज्जुनुं मान कहेछे, तेमां प्रथम खांडुआनी संख्या केहेछे.—

सयवग्गु सिंगुणे पुण, विसय गुणयाल हवंति घण रज्जु ॥
सग्ग पणहत्तरि सयं, सग्ग तिसठी अद्धुद्ध कमा ॥ २० ॥

व्याख्या — पोताना वर्गेथी खांडुआ गणीए ते आ प्रमाणे — सातमी माघवती पृथ्वीनेविषे हेठली श्रेणी ए अठावीश खांडुआछे; तेने अठावीशना आंकथी गुणीए त्यारे सातशेनें चोराशी खांडुआ एक श्रेणीमा थाय एवी चार श्रेणी छे. तेथी सातशोने चोराशीने चारे गुणता त्रण हजार एकशोने छत्रीश खांडुआ थाय. एम छठी नरक पृथ्वीनेविषे हेठलनी श्रेणीए छवीश खांडुआ छे तेने छवीश

थी गुणतां छशेंने छोतेर थाय एवी चार श्रेणीउं छे. तेथी छशेंने छोतरने चार थी गुणतां बे हजार सातशोने चार घनरज्जुनां खांडुआ थाय. पांचमी नरक पृथ्वीनेविषे छेल्लनी श्रेणीए चोवीश खांडुआ छे. तेने चोवीशथी गुणतां पांचशेंने छोतेर थाय एवी चार श्रेणी छे तेथी पांचशोने छोतरने चारथी गुणतां बे हजार त्रणशेंने चार घनरज्जुना खांडुआ थाय. चोथी नरक पृथ्वीनेविषे छेल्ली श्रेणीए वीश खांडुआ छे तेने वीशथी गुणतां चारशें थाय. एवी चार श्रेणी छे तेथी चारशेने चारथी गुणतां शोलशे घनरज्जुना खांडुआ थाय. त्रीजी नरक पृथ्वीनेविषे छेल्ली श्रेणीए शोल खांडुआ छे तेने शोलथी गुणतां बशेने छप्पन थाय एवी चार श्रेणी छे. तेथी बशेने छप्पनने चारे गुणतां एक हजारने चोवीश घनरज्जुना खांडुआ थाय बीजी नरक पृथ्वीनेविषे छेल्ली श्रेणीए दश खांडुआ छे. तेने दशे गुणतां एकशो थाय. एवी चार श्रेणी छे तेथी एकशोने चारे गुणतां चारशो खांडुआ थाय. अने पेल्ली नरकपृथ्वीनेविषे छेल्ली श्रेणीए त्रस नाडीना चार खांडुआ छे. तेने चारे गुणतां शोल थाय. एवी चार श्रेणी छे तेथी शोलने चारथी गुणतां चोशठ थाय त्यारे पहेल्ली नरकपृथ्वीनेविषे घनरज्जुना चोशठ खांडुआ जाणवा एवी रीते सात नरकपृथ्वीना खांडुआनो वर्ग करी सर्व अंक एकठा करीए तो अग्यार हजार बशोने बत्रीश अधोलोकनेविषे घनरज्जुना खांडुआ थाय हवे ऊर्ध्वलोकनेविषे घनरज्जुना खांडुआनो विचार कहेछे.—ऊपर लोकना मस्तकथी आदि लेवी. ऊपरनी श्रेणीए चार खांडुआ त्रस नाडीना छे. तेने चारे गुणतां शोल थाय. एवी बे श्रेणीउं होवाथी शोलने बमणा करतां बत्रीश घनरज्जुना खांडुआ थाय तेथी हेठलनी श्रेणीनेविषे छ खांडुआ छे. तेने छ गुणा करतां-छत्रीश थाय. एवी बे श्रेणीउं होवाथी छत्रीशने बमणा करतां बोतेर थाय. पछी आठने आठ गुणा करिये त्यारे चोशठ थाय. एवी त्रण श्रेणीउं होवाथी चोशठने त्रण गुणा करतां एकशोने बाणु थाय त्यार पछी दशने दश गुणा करिये त्यारे एकशो थाय. एवी त्रण श्रेणीओ होवाथी एकशोने त्रणथी गुणतां त्रणशें थाय पछी बारने बार गुणा करिये त्यारे एकशोने चुमालीश थाय. एवी बे श्रेणीओ होवाथी एकशोने चुमालीशने बमणा करतां बशेंने अठ्याशी थाय पछी शोलने शोलथी गुणतां बशेंने छपन थाय. एवी बेश्रेणीओ होवाथी बशेंने छपनने बमणा करतां पांचशेंने बार थाय पछी वीशने वीशथी गुणतां चारशे थाय. एवी चार श्रेणीओ होवाथी चारशेने चारथी गुणतां शोलशें

थाय वली त्यांथी घटतां शोलने शोलथी गुणतां बशोने छपन थाय. एवी बे श्रेणीओ होवाथी बशोने छपनने बमणा करतांपांचशोने बार थाय त्यांथी केवल बारने बारे गुणतां एकशोने चुमालीश थाय एवी बेश्रेणीओ होवाथी एकशोने चुमालीशने बमणा करतां बशोने अगाशी थाय त्यांथी केवल दशने दशे गुणतां एकशो थाय एवी एकज श्रेणी होवाथी एकशोज गणवा. त्यांथी केवल आठने आठे गुणतां चोशठ थाय एवी एकज श्रेणी होवाथी चोशठज गणवा त्यांथी केवल छने छथी गुणतां छत्रीश थाय एवी बे श्रेणीउ होवाथी छत्रीशने बमणा करतां बोतेर थाय त्यांथी केवला चारने चारे गुणतां शोल थाय. एवी बे श्रेणीउ होवाथी शोलने बमणा करतां बत्रीश थाय. ए सर्व अंक एकठा करता ऊर्ध्वलोकनेविषे चार हजारने चोसठ घनरज्जुना खांडुआ थायछे. तेने पूर्वोक्त अधोलोकना अग्यार हजार बशो बत्रीस खाडुआनी साथें एकठा गणतां पंदर हजार बशोने छनु घनरज्जुना खांडुआ थाय एवीरीते पोताना वर्गनी साथे गणतां चोशठ खांडुए एक घनरज्जु थाय छे. माटे पंदर हजार बशोछनुने चोशठ भागे वेंचतां बशोने ओगणचालीशनो भाग आवे त्यारे ए वृत्ताकार लोकनेविषे बशेंने ओगणचालीश घनरज्जु थाय छे. हवे अधोलोकना तथा ऊर्ध्व लोकना घनरज्जुउ भिन्न भिन्न करी कहेछे – 'सड्ढ पण हुत्तरियं' अधोलोकनेविषे एकशोने साडी पचोतेर घनरज्जु थाय छे । 'सड्ढति सट्ठीअ दुड्डकमा' ऊर्ध्व लोकनेविषे साडी त्रेसठ घनरज्जु थाय छे अनुक्रमे ए मान जाणीलेवो ए बन्ने एकठा करिये त्यारे बशोने ओगणचालीश घनरज्जु थाय ॥२०॥

अवतरणः– हवे घनरज्जुना खांडुआना प्रतररज्जु कहे छे –

चउ गुणिय पयर रज्जु, सत्त डुरुत्तरय डुसय चउपणा ॥
अट्ठ उढ नव छप्पणा, सव्वे चउ गुणिय सुइ रज्जु ॥२१॥

व्याख्याः– अधोलोकनेविषे एकशोने साढी पचोतेर घनराज छे. तेने चारथी गुणतां सातशे ने बे अधोलोकनेविषे प्रतरराज थाय ऊर्ध्व लोकनेविषे साडी त्रेसठ घनराज छे, तेने चारथी गुणतां बशोने चोपन प्रतर राज थाय एम अधोलोक तथा ऊर्ध्वलोकना एकठा करिये त्यारे नवशो ने छप्पन प्रतरराज थाय. ए सर्व प्रतर राजने चोगुणा करता जे अंक आवे ते सूचीरज्जुनुं मान जाणवु. ॥ २१ ॥

अवतरण.– हवे सूचीरज्जुनुं मान गाथाए करी कहेछेः–

अडवीस सयछुत्तर, दस सोला अडतीस चोवीसा ॥
इय संवग्गिय लोए, तिह रज्जु खंडुआ नेया ॥२१॥

व्याख्याः– अधोलोकनेविषे सातशो ने बे प्रतर रज्जु छे. तेने चोगुणा करतां बे हजार आठशें ने आठसूची रज्जु थाय. ऊर्ध्वलोकनेविषे बशेने चोपन प्रतर रज्जु छे, तेने चोगुणा करतां एक हजारने शोल सूचीरज्जु थाय. तथा अधोलोक अने ऊर्ध्व लोकना एकठा करता त्रण हजार आठशे अने चोवीश सूची रज्जु थाय. पोताना वर्गे गणित लोकनेविषे त्रिक रज्जु कहिये एम घनरज्जु तथा प्रतररज्जु तथा सूचीरज्जु ए त्रण राजना खांडुआनी संख्या जाणवी. ॥ २१ ॥ हवे वर्गना अंकथी गणतां जे खांडुआनी संख्या आवे ते संग्रह गाथामां कहेछे.–

एगार सहस डुसया, बत्तीसा चउसहस्स चउसठी ॥ अ
ह उड्ढं सव्व पन्नर, सहस्स डुन्नि सय छ न्नउआ ॥ २२ ॥

व्याख्याः– अधो लोकनेविषे वर्गने अंकथी गणतां अग्यार हजार बशोने बत्रीश खांडुआ थाय ऊर्ध्व लोकनी श्रेणी वर्गना अंकथी गणतांचारहजार ने चोसठ खांडुआ थायतेबेहु एकठा करिये त्यारे पंदर हजार बशें ने छपन्न थाय॥२२

अवतरण.– हवे वर्ग करवानो विधि गाथाए करी कहेछेः–

अड छ चउवीस वीसा, सोल दस चऊ अ डुन्नु चउ छठा॥
दस बार सोल वीसा, सरिसंक गुणाउ चउहि गुणे॥२४॥

व्याख्याः– अही वीस शब्द त्रण ठेकाणे जोडवो. ते आमः– अठावीश, छवीश तथा चोवीश एम जाणवुं. तथा ए माघवती सातमी पृथ्वीथी आदि लईने जे आठवीशादिक अंक त्रीजी श्रेणीनेविषे आवे ते पोतपोतानेसरखे अंके गुणी ए अनेएकठा करिये. पछी तेने चोगुणा करतां जे अंक आवे ते खांडुआनी संख्या जाणवी ते आवी रीते·– सातमी नरक पृथ्वीने तलेथी अठावीशने अठावीसथी गुणतां सातशेने चोरासीथाय छवीसने छवीशथी गुणतां छशेनेछोतर थाय; चोवीसने चोवीसथी गुणतां पांचशोने छोतेर थाय वीशने वीशथीगुणतां चारशों थाय; शोलने शोलथी गुणतां बशें ने छपन्न थाय; दशने दशथी गुणतां एकशो थाय; अने चारने

चारथी गुणतां शोल थाय, ए साते स्थलना अंकोने एकठा करिये त्यारे बे हजार आठशो ने आठ थाय, तेने चोगुणा करता अग्यार हजार बशों ने बत्रीस थाय ए अधो लोकना खांडुआ जाणवा हवे ऊर्ध्व लोकना खाडुआ कहेछे —चार, छ, आठ, दश, बार, शोल तथा वीश ए अंकोने सरखा अकथी गुणवा, ते आवी रीते—चारने चार गुण कर्याथी शोल थाय छने छथी गुणतां छत्रीस थाय, आठने आठथी गुणता चोसठ थाय, दशने दशथी गुणतां एक शो थाय. बारने बारथी गुणता एक शोने चुमालीस थाय, शोलने शोलथी गुणतां बशोने छपन थाय, वीसने वीसथी गुणता चारशे थाय, ए सात स्थलोना अक एकठा कर्याथी एक हजारने शोल थाय तेने चारथी गुणता चार हजार ने चोसठ ऊर्ध्व लोकना खाडुआनी संख्या थाय. पछी अधोलोकना तथाऊर्ध्व लोकना खांडुआ एकठा करिये त्यारे पंदर हजार बशोने छनु थाय. ॥ २४ ॥

अवतरण— वली प्रकारातरे वर्ग करवानो विधि गाथाए करी कहेछेः—

चउ अडवीसा छप्प, सपयरसरिसंक गुणिय पिंडुमिलिए ॥
सम दीह पिहुवेहा, छहुमहो खंडुआ नेआ ॥ २५ ॥

व्याख्या — लोकना मस्तकनेविषे ऊपरली त्रीछी श्रेणीए चार खांडुआ छे सातमी नरक पृथ्वीनी छेली श्रेणी अठावीश खांडुआनी छे एम चारथी आविलइने छेली छपन्नमी श्रेणी अठावीस खांडुआनी छे एटले पुरुषाकार लोकनेविषे त्रीछी छपन प्रतरनी श्रेणी छे आदि तथा अतनी श्रेणीउनुं ग्रहण कर्याथी मध्यनी श्रेणीनुं पण ग्रहण थाय छे, माटे छपन श्रेणी छे. जे श्रेणीनेविषे त्रीछी श्रेणीना जेटला खांडुआ छे, तेटला अंकथी गुणीए, जेमके, सर्वथी ऊपरनी मस्तक श्रेणीनेविषे चार खाडुआ त्रीछा छे त्यारे चारने चारथी गुणतां शोलथाय एम छपन श्रेणीउ सरखे आके गणी एकठी करिए त्यारे पूर्वोक्त पंदर हजार बशोंने छनु खांडुवानी संख्या थाय हवे खाडुआनुं परिमाण कहे छे — लांबपणे, पोलाइए तथा जाडपणे कुनीनी पठे सरखा छे एटले पोला, लांबा तथा जाडा पा राज प्रमाण ऊर्ध्वलोक तथा अधोलोकना सर्व एवा खाडुआ जाणवा ॥२५॥

अवतरण — हवे वृत्ताकार लोक घन करवानो विधि कहेछे —

दाहिण पास डखंभा, अहु वामे ठविज्ज विवरीया ॥
नाभी सहिय ति रज्जु, पिहु जाया सत्त दीहुच्चे ॥ २६ ॥

व्याख्या.– ऊर्ध्व लोकनेविषे त्रस नाडीथकी दक्षिण बाजुए एटले जमणी बाजुना बे खंम, ते आमः–ऊर्ध्व लोकनेविषे ज्यां कोणीनी जगो छे, तेमध्यथी जोतां बारमी श्रेणी छे. ते बारमी श्रेणीथी बे खंम करिये एटले ऊपरला खंमनेविषे शोल श्रेणीओ रहे. एवी रीते दक्षिण बाजूना जे बे खंम छे ते ऊर्ध्व लोकनेविषे त्रस नाडीनी माबी बाजूनेविषे उलटा करी नाखीए. ते आमः– ऊपरना खंमनी कूर्परनी जे दिशा, ते मस्तकनी तरफ करिये, अने हेठला खंमनी कूर्परनी जे दिशा ते लोकना मध्य तरफ करिये. एटले ऊपरलो खंम ऊपरनी दिशाए तथा हेठलो खंम हेठली दिशाए थापीए. त्रस नाडी सहित माबी बाजूए त्रीछा त्रण राज थायछे ते आम.– त्रस नाडीथी बाहार कूर्परने ठेकाणे जमणी बाजूए आठ खांडुआ त्रीछा छे; तेना बे राज अने एक त्रस नाडीनुं राज, एम त्रण राज पोला ईए थायछे; अने लांबपणे तथा उंचपणे सात राज होयछे. ॥ २६ ॥

हिठाउ वाम खंमे, दाहिण पासे ठविज्ज विवरीअं ॥
उवरिम ति रज्जु खंमं, वामे ठाणे अहो दिज्जा ॥ २७ ॥

व्याख्याः– अधो लोकनी त्रस नाडीथी जे माबी बाजूनो आखो खंम छे, ते विपरीत एटले अवळो अथवा उंधो हेठली त्रस नाडीनी जमणी बाजूनेविषे थापीए. एटले अधोलोकनेविषे जमणी बाजूए त्रीछा चार राज, अने लांबपणे सात राज थया ते आ प्रमाणेः– त्रस नाडीथी जमणी बाजूमां आधोलोकनी हेठे बार खांडुआ छे; तेना त्रण राज; अने त्रस नाडीनुं एक राज, एम चार राज थाय. पछी ऊर्ध्वलोकनो माबी बाजूनो त्रीछो त्रण राज लांबो सात राज प्रमाण खंम छे. ते अधोलोकनी जे त्रस नाडी छे तेनी माबी बाजूए दैए, एटले सर्वत्र पूर्व, पश्चिम, दक्षिण तथा उत्तर दिशिओए तथा जाड पणे सातघनरज्जु प्रमाण घन लोक थयो ॥ २७ ॥

इय संवट्टिय लोउ, बुद्धि कउ सत्त रज्जु माण घणो ॥
सग रज्जु अहिय हिठा, गिएहइ पासाइ पूरिज्जा॥ २८ ॥

व्याख्याः– ए प्रकारे करी इय संवर्त्तित लोक वृत्ताकारे कीधो पण ते लोक वृत्ताकारे; ते केवी रीतेकीधोः–बुद्धिए करी, मन कल्पनाए करी सात राज प्रमाण घन कीधो, तथा सात घनरज्जु थता लांबपणे, पोलपणे तथा ऊंचपणे जे अधिक

खांडुडं थाय ते लईने हेठल जे जगोए ओछु होय ते पासूं पूरिये एवीरीते चोरस सात घनरज्जु प्रमाण लोक कह्यो पण चोरस नथी गोलाने आकारे लोक वृत्ताकार छे. पण घनलोक वृत्ताकार लखाय नही तेमाटे चोरस कीधो छे ॥२८॥

अवतरण.– हवे ए समघन लोकनेविषे घनरज्जु, प्रतररज्जु, सूचीरज्जु अने खांडुआनी संख्या कहे छे –

घण रज्जु तिसय तेया,ल तेर बावत्तरीय पयर सूइ ॥
चउपन्न डसी खंडुअ, सहसि गवीसा नवड पन्ना॥२९॥

व्याख्या – ए वृत्ताकार घनीकृत चोरस लोकनेविषे त्रणशेंने तेतालीश घनरज्जु छे एक हजार त्रणशेने बोतर प्रतर रज्जु छे. पाच हजार चारशेने अठयाशी सूची रज्जु छे खांडुआनी संख्या कहेछे – सातराज प्रमाण घनलोकना खांडुआ एकवीश हजार नवशे ने बावन जाणवा ॥ २९ ॥

अवतरण – हवे घनरज्जु, प्रतररज्जु, सूचिरज्जु अने घनलोकना खांडुआ आणवानी करणी गाथाए करी कहेछे.–

सगवग्गो सग चउ तिग, गुणिए छनयं अडुह्न खंडु घणा॥
छन्नूसउं सिआलं, चउ गुणिए पयर सुइ असा ॥ ३० ॥

व्याख्या'–ए सातघनरज्जु प्रमाण समचोरस जे लोक छे. ते सात सात वर्गथी गणिए ते सप्त वर्ग कहिये त्यारे सातने सातथी गुणिये, त्यारे ओगण पचास थाय एवी ओगणपचाश घनरज्जुनी सात श्रेणीछे. ते ओगणपचाशने सातथी गुणतां त्रणशोने तेतालीश घनरज्जुनी संख्या थाय. पछी घनरज्जुनो आंक त्रण वार चोगुणो करिये त्यारे अनुक्रमे अधोलोक तथा ऊर्ध्वलोकना प्रतररज्जु, सुचीरज्जु, तथा खांडुआनी संख्या मलेछे , ते आ प्रमाणे – त्रणशो तेताली घनरज्जुने चोगुणा करिये त्यारे एक हजार त्रणशेने बोतेर प्रतररज्जु थायछे ते प्रतररज्जुनो आंक चोगुणो करिये त्यारे पाच हजार चारशे ने अठयासी शुचिरज्जु थाय तथा सुचिरज्जुनो चोगुणो आंक करता खांडुआनी संख्या एकवीस हजार नवसेने बावन थाय. हवे अधोलोक तथा ऊर्ध्वलोकनी जुदीजुदी घनरज्जु. सुचिरज्जु प्रतररज्जु तथा खांडुआनी संख्या कहेछे – अधोलोकनेविषे एक से ने छनुं घनरज्जु छे, अने ऊर्ध्व लोकनेविषे एक शो ने सुडतालीश घनरज्जु छे, एने वली त्रण वार चोगुणा करतां अनुक्रमे प्र

तररज्जु, तथा सुचिरज्जुना अंस एटले खांडुआनो मान अधोलोक तथा ऊर्ध्वलोकनेविषे जिन्न जिन्न मिली आवेछे. ॥ ३० ॥

अवतरण — अधो लोक तथा ऊर्ध्व लोकना खांडुआनो जिन्न जिन्न प्रमाणनो संग्रह करी कहेछेः—

सग चुलसी पण अमसी, इग तीस बतीस तिविस बावन्ना ॥
पण चुअल जुआ बारस, हस्स चनुण वइसय छ हिआ॥३१॥

व्याख्याः— अधोलोकनेविषे एक शो ने छनु घनरज्जु छे; तेने चोगुणा करिये त्यारे सातशें ने चोराशी अधोलोकनेविषे प्रतररज्जु थाय. अने ऊर्ध्व लोकनेविषे एक शो ने सुडतालीश घनरज्जु छे, तेने चोगुणा करिये त्यारे ऊर्ध्व लोकनेविषे प्रतररज्जु पांच शो ने अठयाशी थाय. अने अधोलोकनेविषे त्रण हजार एक शो ने बत्रीश सुचिरज्जु थाय. ऊर्ध्व लोकनेविषे बे हजार त्रण शे ने बावन सुचिरज्जु छे हवे खांडुआनी संख्या कहेछे.— अधोलोकनेविषे पण बार हजार पांचशोने चुमालीस खांडुआछे ऊर्ध्व लोकनेविषे नवहजार चारसो ने आठ खांडुआ छे. अधोलोक तथा ऊर्ध्वलोकना एकठा खांडुआ करिये तो एकवीश हजार नवशोने बावन पूर्वोक्त संख्या मले. तथा अही त्रणशें ने तेतालीश राज कह्यां पण तेना खांडुआ नथी. मात्र बशोने उगण चालीशराजना खांडुआ छे तेथी एकशोने चार घनरज्जु अधिक छे. तेना खांडुआनो गम नथी. पण एक विशेष छे, के ए घनलोक चोरस कह्यो छे, अने लोक वृत्ताकार छे त्यारे चारे दिशिना खूणा अधिक थाय, तोपण एवडो अंतर पडे नही पण ए चोरसनुं जे परिमाण कह्युं छे ते अंतरग वृत्ताकार लोकनु मान धरीने कह्यु छे. माटे खुणानो नाग अधिक थाय नही पछी प्रकारांतरनी वात तो ज्ञानी जाणे. पण पूर्वोक्त वर्गना आंक गणतां पंदर हजार बशोने छनु खांडुआ थाय तेने चोशठ नाग देतां घनराज थाय. अधिक खांडुआ नथी त्यारे त्रणशोने तेतालीश राज केम थाय ते गीतार्थे विचारी लेवुं, असंख्यात योजननो एक राज थायछे. अथवा सहस्र नार लोहनो गोलो कोईएक महर्द्धिक देवतापोतानी शक्तिए करी तेने नीचे नाखी दिये, त्यारे ते गोलो छ मास, छ दिवस, छ पहोर; छ घडी अने छ पल जेटला काले नीचे आवीने पडे. तेटलो एक राज थाय. ए चारे दिशिउनेविषे राजनुं प्रमाण थाय ते जाणवुं. ॥ ३१ ॥

इय पयर लिहिय वग्गिय, संवट्टिय लोग सार मुवलप्प ॥
सुअ धम्म कित्तिअं तह, जय ह जहा भमह न इह भिसं ॥३१॥

व्याख्या – ए प्रकारे करी जे छपन प्रतर, ते प्रकारे लिखित वली संवर्गित एटले वर्गने आंके गणित लोक तेनो सार तत्व ज्ञानविचार यथार्थ पणे लोकस्वरूप सद गुरुथी पामीने ते प्रकारे यत्न एटले उद्यम करवो पूर्वे जे प्रकारे चौद राज लोक नुं प्रमाण कह्यु, ते लोकमा अनंत जन्ममरण पामता थका वारंवार अत्यर्थपणे मां भ्रमो, एवो तीर्थंकर सकल जीव हितकर पारग परमेश्वरनो भव्य जीवने उ पदेश छे लोकनो सार केवो छे – ते श्रुतधर्म एटले जे सिद्धांत मार्गमां ज्ञानना बले करी ज्ञानवान तीर्थंकरे कहेलुं छे ॥ ३१ ॥

श्रीमद्वाग्रोक्त विधिना, लोकनालस्य वार्त्तिकं ॥ धिमित्र धनराजस्य, गंगाख्य तनुजाकृते ॥ १ ॥ श्रीमत्सहज रत्ने न, व्याख्यात मुदयाब्धिना ॥ असंगत यदुक्तं, विशो ध्य धीधनैर्नृशं ॥ २ ॥ युग्मम् ॥

इतिश्री लोकनाल द्वात्रिंशिका बालावबोध

समाप्त

श्री कलीकुंम पार्श्वनाथायनम.

अथ

श्री सम्यक्त्व विचार गर्भित श्री महावीरजिनस्तवन.-
बालावबोध सहित प्रारंभ.

मंगलाचरण

प्रणम्य परमानंद, दायकं जिननायकं ॥ वर्द्धमान चिदानंदं, वर्द्धमान श्रिधा धरं ॥ १ ॥ श्रीसम्यक्त्वस्तवस्यास्य, बद्धस्य लोकनापया ॥ बालानामवबोधाय बालाबोधं तनोम्यहं ॥ २ ॥

दोहा.— प्रणमी पद जिनवरतणा ॥ जे जगने अनुकूल ॥ जास पसायें में लह्यु ॥ समकित रयण अमूल ॥१॥ ते जिम वीरें उपदिस्यु ॥ परखद मांहि अनूप ॥ तिम हुं वर्णवसुं हवे ॥ समकित शुद्ध स्वरूप ॥ २ ॥

अर्थ.—श्री देवाधिदेवना चरणकमल नमीने जेना चरणकमल सकल जीवने हितकारीछे अनुकूलछे जे श्रीवीरपरमात्माना चरणकमलने प्रसादे में पण अमुलक सम्यक्त्वरत्न पाम्युं ॥ १॥ ते सम्यक्त्व जेम श्रीमहावीरे बार परपदामां प्रकास्युं तेम हुं सम्यक्त्वनुं स्वरूप महारीबुद्धिप्रमाणे वर्णवीस ॥ २ ॥

ढाल पेहेली एकिमीकिहां राखी एदेशी-टीका.

इगविध दुविध त्रिविध चउविधवलि ॥ पणविध दशविधजाणो ॥ ए समकित शिवतरूनुं बीजक ॥ संप्रति परे मन आणोरे ॥ प्राणी समकित शुध आराधो ॥ जेम शिवमारग साधोरे ॥ प्राणी० ॥ सम० ॥ १ ॥ ए आंकणी ॥ इगविध तुज आणा रुची दुविहा ॥ द्रव्य भावथी कहिये ॥ निश्चयने व्यवहारे अथवा ॥ समकित दुविध सद्दहये रे ॥ प्रा० ॥ २ ॥ सद्दहणा सूधी तुज आगम ॥ परमारथ नवीजाणे ॥ समकित द्रव्यथकी तस कहिये ॥ भावथी तत्व वखाणेरे ॥ प्रा० ॥ ३ ॥ मिथ्यापुद्गल शुद्धनु वेदन ॥ समकित द्रव्य कहावे ॥ भावथि तत्व रुचिपण तिमहिज ॥ तत्व रुची परिभावेरे ॥ प्रा० ॥ ४ ॥ पुद्गलरूपी अरूपी अपुद्गल ॥ ए पण द्विविध तु देखे ॥ क्षायोपशमिक वेदक पुद्गल ॥ शेष अपुद्गल लेखेरे ॥ प्रा० ॥ ५ ॥ निश्चय समकित गुन, आतमनो ॥ ज्ञानादिक परिणाम ॥

अथवा आतम समकित कहिये ॥ गुण गुंणी नेद न गमरे ॥ प्रा० ॥ ६ ॥ मिथ्या दृष्टीतणी संस्तवना ॥ त्यागादिक व्यवहार ॥ वलिय निसर्गापर अधिगमथी॥ विहुंनेदे निरधाररे प्रा० ॥ ७ ॥ जिम कोई मारग नूलो पंथी ॥ नमतो मारग आवे ॥ कोइक उपदेशादिक योगे ॥ कोइक थाग न पावेरे ॥ प्रा० ॥ ८ ॥ ज्वर पण सहेजे ओषध योगे, जाये एक न जाय ॥ मारग ज्वर दृष्टांते समकित ॥ इणि परे द्विविधे थायरे ॥ प्रा० ॥ ए ॥ जाती समरण प्रमुख थकीजे ॥ तास निसर्ग विचारो ॥ गुरुउपदेशादिक थी आव्युं ॥ ते अधिगम चित्तधारोरे ॥ प्र०॥१०॥ कारक रोचक दीपकनेदे ॥ त्रिविधे पण ए नाख्युं ॥ अथवा उपशम क्षायोपशमिक ॥ क्षायिक नेदे दाख्युरे ॥ प्रा० ॥ ११ ॥ ते जिमनाख्यु ते तिमकीधुं ॥ ते कारक तस खास ॥ तुज धर्मोपरि रुचिथी रोचक ॥ नहि, किरिया, अन्यासरे ॥ प्रा० ॥ १२ ॥ मिथ्या दृष्टि थको पण पोते ॥ धर्मकथादिक सारे ॥ दीपक परे परने दीपावे ॥ ते दीपक उपचारेरे ॥ प्रा० ॥ १३ ॥ ते समकित जिम फरस्यु जीवे ॥ तिम तुज आगल दाखु ॥ तुज आगम नय न्याय शुधोदधि ॥ परमारथ रस चाखुंरे ॥ प्राणी समकित सुद्ध अराधो ॥ १४ ॥

अर्थ ॥ एकप्रकारनुं बेप्रकारनुं त्रणप्रकारनुं चारप्रकारनुं पांचप्रकारनुं अथवा दशप्रकारनुं सम्यक्त्वजाणवुं ए सम्यक्त्व मोक्षरूपवृक्षनु बीजनूतजाणवुं संप्रतिरा जानीपरे मनमांचितववुं यडुक्तं – एगविह डुविह तिविहं, चउहा पंचविह दसविहं सम्म ॥ मुरक तरुबीयनूयं, संपइ रायाव धारिक्का ॥ १ ॥

एकविधते तादृशी आज्ञारुचिरूप बेप्रकारनुं सम्यक्त्वते एकड्व्य सम्यक्त्व बीजुं नावसम्यक्त्व अथवा निश्चेसम्यक्त्व अने व्यवहारसम्यक्त्व एपण बेप्रकार कहियेे॥२॥

तेमांजे तमेवसच्चंनिस्संकजजिणेहिं पवेइयं इत्यादिकसद्दहणासुधीहोय पण परमार्थ काईनजाणे जीवाजीवादि स्वरूपपण नसमजे तेने ड्व्यसम्यक्त्व कहिये नावेण सद्दहतो अयाण माणेवि सम्मत्तंमितिवचनात् तथा तमेवसच्चं इत्यादिक सद्दहणासुधीहोय अने नवतत्वादिकना नेदानुनेदपण परमार्थे समजे तेने नावसम्यक्त्व कहिये जीवाइनवपयथ्ये, जोजाणइ तस्सहोइसम्मत्तमिति वचनात् ॥

अथवा रूपी ड्व्यसम्यक्त्व अने अरूपी नावसम्यक्त्व एप्रकारेपण बेनेदथाय तेज विवरीनेकहेले मिथ्यात्वना शुद्धपुजलनुंवेदन एटले मिथ्यात्वना त्रणपुज कह्या छे तेमा जे सुद्ध पुजलनुंवेदवु तेने ड्व्यसम्यक्त्व कहिये अने नावथी तत्वरुचिहोय तेने नावसम्यक्त्व कहिये ते उपशम क्षायिकादिक जाणवु ॥ ४ ॥

अथवावली बीजेप्रकारे सम्यक्त्वनुं द्विविधपणु देखाडेछे रूपी अने अरूपी ए वे नेदेजे सम्यक्त्वछे ते आवीरीतेजे एक क्षायोपशम अने बीजुंवेदक ए वे सम्यक्त्वरूपी पुग्दलरूपछे माटेएने रूपी कहिये अने शेष जे क्षायक, उपशम अने सास्वादन ए त्रण सम्यक्त्व पुजलरूपनथी माटे एने अरूपी कहियें यडुक्तं विचारपंचासिकायां धम्माधम्मा गासा, जीवाकालोय खाइमंचेव ॥ सासायण उवसमियं, अपुग्गलाई तुएयाई ॥ १ ॥ कराल्लिय वेउव्विय, आहारग तेयस रूपी मसो ॥ उस्सासंनिस्सासंकम्मण कम्माणिछायतमो ॥ २ ॥ वग्गणअणंतआयव, मिस्सखंधो अचित्त महखंधो ॥ वेयग खाउवसमं, कज्जोय पुग्गलसुएनणियं ॥ ३ ॥ ए द्विविधपणुपण साक्षात् केवलज्ञाने हे नगवन्तुं देखेछे ॥ ५ ॥

हवे निश्चेसम्यक्त्व अने व्यवहारसम्यक्त्व ए वे देखाडेछे निश्चयथी निश्चेनयें ज्ञानादिमय एटले ज्ञान दर्शन चारित्ररूप आत्मानो शुनपरिणाम तेहिज सम्यक्त्वकहिये अथवा ज्ञान दर्शन चारित्ररूप आत्मानो परिणाम ते आत्मारूपजछे तेमाटे आत्माज सम्यक्त्व कहियें इहां गुणगुणीनो अनेदोपचार लहियें गुणते ज्ञान दर्शन चारित्रादिक अने गुणीते आत्मा ए वे एकेकथी जूदानथी तेमाटे ए वे ने माहोमांहे नेदनयी अनेदरूपजछे यतः आत्मैव ज्ञानदर्शन चारित्राण्यथवा यते. यत्तदात्मकएवेष शरीरमधितिष्ठति ॥ ६ ॥

बीजुं व्यवहार सम्यक्त्वते जे मिथ्यादृष्टिसंघाते परिचयप्रमुख टाले अथवा देवगुरुनी नक्तिप्रमुख साचवे व्यवहारथी सम्यक्त्वना दूषणटाले अने सम्यक्त्वना नूषणआदरे इत्यादिक लक्षणेकरी व्यवहारथी सम्यक्त्वधारि कहियें जेमाटे गुणस्थान क्रमारोहमां कह्युंछे. देवेगुरौच संघेच, सन्नक्तिशासनोन्नति ॥ अव्रतोपि करोत्येव, स्थितिस्तूर्ये गुणालये ॥ १ ॥

अथवा निसर्ग अने अधिगम ए वेनेदपण सम्यक्त्वना कहियें ते देखाडेछे. जेम कोइकपुरुष मार्गथीनूलो कोईना उपदेशविना स्वयंनमतो पोतानीमेलेज पोते मार्गप्रतेपामें एटले पोतानीमेले मार्गआवे अने कोइकतो नूलोथको परनाउपदेशथी एटले बीजोकोई मार्गदेखाडे तेवारे मार्गआवे अने कोइकतो मूलथी मार्गपामेज नही एमज नूलोफरे अथवा ज्वरनेदृष्टांते नाववुं जेम कोइकने ताप आवतोहोय ते पण कोइकतो पोतानीमेले परीपाकेजजाय अने कोइक औषधादिकने संयोगें जाय तथा कोइकज्वरतो जायजनही ए दृष्टांते सम्यक्त्वपण कोइकजीवतो जातिस्मरणादिके पोतानीमेलेजपामे अने कोइकजीव गुरुनाउपदेशथी पामे

तथा कोइकपामेजनही इहांतो मिथ्यात्वरूपज्वरछे ते कोइकने गुरुउपदेशें अथवा सहेजेमटीजाय अने कोइक अनव्यादिकने मटेजनही अने जल वस्त्र कोद्रव दृष्टांत त्रणछे ते पुजत्रयनेविषे नावसे इहा मार्गे तथा ज्वर ए वेदृष्टांतनो प्रस्तावछे माटे वेज कह्या ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥

हवे सम्यक्त्वना त्रण नेद कहेछे तेमां एक कारक बीजुं रोचक त्रीजुं दीपक अथवा एक क्षायक बीजुं उपशमिक त्रीजुं क्षायोपशमिक ॥ ११ ॥

हवे एना लक्षण कहेछे हे नगवन् हे वीतराग ते जेम कह्युछे तेमज करवु एटले ताहरी आज्ञाप्रमाणे चालवुं तेने कारक सम्यक्त्व कहिये अने करनार ते पण कारकसम्यक्त्ववत थयो तेनेपण कारक सम्यक्त्व कहिये आधाराधेयानेदोप चारें अने रोचक सम्यक्त्व तेतो ताहरा धर्मउपर ताहरा शासनउपर रुचीमात्रनुं कर नार एटले धर्मउपर रुचीमात्र होय पण आचरी शकेनही तेमाटे रोचक कहिये॥१२॥

त्रीजु दीपकसम्यक्त्वते पोते मिथ्यादृष्टी अथवा अनव्य अंगारमर्दकादिकनी परे धर्मकथायेकरी अथवा मातृस्थानानुष्टानातिसयेकरी कोइक प्रकारें जिनोक्त तत्व परने दीपावे वीतरागना वचन परनेप्रकाशे तेथी कोइक सम्यक्त्व पामे दीप कनीपरे पोतानीपासे अंधकार अने परने प्रकाशस्थानीय सम्यक्त्व पमाडे तेमाटे दीपक सम्यक्त्व कहिये एवुं अपरनाम व्यजक सम्यक्त्वपण कहिये ते मिथ्यादृ ष्टीनेपण परिणाम परिणमन ते उपचारथी कारणनेविषे कार्यनाउपचारथी सम्य क्त्व कहिये यडुक्तं यथायथा चाचरणं जिनोदित, तथा तथा यत्र सतिप्रवर्त्तते ॥ तदंगसम्यक्त्वमिदं प्रचक्षते, तथा विशुद्धेःखलुकारकंजिना. ॥ १ ॥ विहितानुष्टानं प्रतिनावविशुद्धे रतीवविमलाया ॥ प्ररोचयतीतिकृत्वा रोचकमिदमाह सम्यक्त्वं॥२॥ स्वयंमिथ्यादृष्टि स्तदपिवजनधर्मकथयासुद्धु सम्यङ्मार्गे नयतिचहित चैववदति ॥ तडुक्तं सम्यक्त्वं ह्यु पचरितवृत्या जिनमते तथा धर्म्मादीनाप्रकटनतया व्यंजक मिति ॥ ३ ॥ पुनरप्युक्त.– विहियाणुछाण पुण, कारगमिहरोयगतु सद्दहणं ॥ मिछदिछीदीवइ, जतत्तोदीवगंततु ॥ ४ ॥ इति

ते सम्यक्त्व जेम जीवे फरस्युं अनुनव्युं पाम्युं तेम तमारा आगल वीनवुंछुं ते ताहरा आगमने अनुसारे एटले ताहरा आगमना नयजे नैगमादिकने न्याय शास्त्र समत्यादिक तद्रूपजे सुधोदधि एटले अमृतसमुद्र तेनु परमार्थजे तद्रहस्य तेहिजरसने चाखु अनुनवु एटले तहारा आगमनुं परमार्थ लेइने तेने अनुसारे कहीसुं ॥ १४ ॥ ए पहेलो ढालनु अर्थ पुरो थयुं.

ढाल बीजो देवतुज सिद्धांत मीठोएदेशी

वीरजिणेसर साहिब सुणजो ॥ निजसेवक अरदासरे ॥ दीन दयाकर ठाकुर आपो ॥ तुझचरणे मुज वासरे ॥ वी० ॥ १ ॥ लोकाकाशि रह्यो अविनाशी ॥ भाव अनादि अनंतरे ॥ ए भव चक्र तणा दुःख बहुला ॥ भोगवियां भगवंतरे ॥ वी० ॥ २ ॥ सूक्ष्मनिगोद वस्योहुं स्वामी ॥ अनादि वणस्सइ नामरे ॥ तिहांमे कीध अनंता पुद्गल ॥ परावर्त्तविण स्वामिरे ॥ वी० ॥ ३ ॥ अव्यवहाररासें इम वसिउ ॥ काल अनंतो भोगेरे ॥ कर्मपरिणाम नृपति आदेशे ॥ तादृश भव्यता योगेरे ॥ वी० ॥ ४ ॥ तिहांएकण सासोसासमें कीधां ॥ भवसतरे जाजेरारे ॥ ए दुख तुजविण कुणलोभावे ॥ स्वामी मुज भवफेरारे ॥ वी० ॥ ५ ॥ व्यवहाररासी लइ वतकर्पे ॥ काल अनंत अनंतोरे ॥ थुल निगोदने पृथवी पाणी ॥ तेज अनिल त्रस जंतोरे ॥ वी० ॥ ६ ॥ तिहांपण हु वसिउ तुमपाखें ॥ मिथ्यामतनेजोरेरे ॥ हरिहरदेवकरीमें मान्या ॥ तुं न चढ्यो मनमोरेरे ॥ वी० ॥ ७ ॥ तेण में छेद न भेदन ताडन ॥ भूष तृषा गुरु भाररे ॥ गर्भवासने जन्म जरा दुख ॥ भोगवियांनिरधाररे ॥ वी० ॥ ८ ॥ इम चउगइ भवना दुख फरसी ॥ वारअनंती अनाणीरे ॥ पालादृष्टांते इगपुद्गल ॥ परावर्त्तस्थिति आणीरे ॥ वी० ॥ ९ ॥ भव्यपणादिक ने परिपाके ॥ गिरिसरि उपल न्यायेरे ॥ अध्यवसाय विशेषकरणजे ॥ अनाभोगथी थायरे ॥ वी० ॥ १० ॥ ते त्रिविधे भाख्यु तिहां पहेलुं ॥ यथाप्रवृत्त वली बीजुंरे ॥ करण अपूरव नामे कहीये ॥ अनिवृत्त करण ते त्रीजुंरे ॥ वी० ॥ ॥ ११ ॥ यथाप्रवृत्तकरणे आयुविण ॥ सात करम करी खीणरे ॥ कोडा कोडी सायर इगपलनो ॥ असंख्यभाग तिणे हीणरे ॥ वी० ॥ १२ ॥ इहां कर्कस निविड गुपिलजिम ग्रंथी ॥ भेदन दुक्कर कामरे ॥ कर्मपरिणाम जनित घन जीवनो ॥ रागद्वेष परिणामरे ॥ वी० ॥ १३ ॥ ते ग्रंथी नवीभेदी जीवे ॥ पहेलि इणे संसाररे ॥ वार अनंति अभव्यपण आवे ॥ ग्रंथीलगें निरधाररे ॥ वी० ॥ १४ ॥ भव्य अभव्य रहे तिहा ग्रंथी ॥ संख्य असंख्योकालरे ॥ अरिहंतादिकनी ऋद्धिदेखी ॥ संयमने वजमालरे ॥ वी० ॥ १५ ॥ तिहां लहे श्रुत समायक द्रव्ये ॥ सेष ज्ञान नही तासरे ॥ तिहांथी ग्रैव्यकेपणजीवे ॥ पण नहि शिवपुर वासरे ॥ वी० ॥ १६ ॥ कोइक भव्य महातम तेहमा ॥ जेहनेभवनो पाररे ॥ निशित कुठार धारें जिम ततपिण ॥ भेदे बल मनोहाररे ॥ वी० ॥ १७ ॥ करण अपूरव परमविशुधे ॥ तिमते ग्रंथी थायरे ॥ भेदीने अंतर मूहूरतमां ॥ अनिवृत्तिकरणे जायरे ॥

वी० ॥ १८ ॥ मिथ्यामोह तणीस्थिति तेहनु ॥ अंतरमुहूरत एकोरे ॥ उदय क्ष्ण उपरे उलघी ॥ ते समरथ सुविवेकोरे ॥ वी० ॥ १९ ॥ अनिवृत्ति करण विशे पे अंतर ॥ मुहूरतकाल अनूपोरे ॥ अंतरकरण करे तिहा वेयजे ॥ दलिक अनाव सरूपोरे ॥ वी० ॥२०॥ जिमवनदवदग्धे घन उखर ॥ पामी गम उल्हायरे॥ तिम मिथ्या वेदन वनदव सम ॥ अंतरकरणे थायरे ॥ वी० ॥ २१ ॥ अतरकरण करे मिथ्यातनी ॥ थितिदुग कहे जिन ज्यानेरे ॥ अंतरकरण थकी थिति हेठी ॥ पहे ली मुहूरत मानेरे ॥ वी० ॥ २२ ॥ तेहथी उपरली थिति बीजी ॥ तिहां प्रथम स्थिति जाणोरे ॥ मिथ्यादलीकनु वेदन तेहथी ॥ मिथ्यादृष्टी वखाणोरे ॥ वी० ॥ २३ ॥ अंतरमुहूरत ते थितिनाशे ॥ नही मिछादल वेदोरे ॥ अंतरकरणनो प्र थम समय तिहा ॥ लहे उपशम निरवेदोरे ॥वी०॥२४॥ परमानंद मगन होइ जटजि म॥जीती कटक अजेपरे॥न्यायवत हरषेजिम गाढे॥न्याय धनागम पेखरे॥वी०॥२५॥

अर्थ ॥ हवे बीजाढालनी प्रथमगाथातो सुगमछे माटे बीजीगाथाथी अर्थ क हेछे — इहां सदैवलोकाकाश प्रतिष्टित अनादि अपर्यवसित जवचक्राख्य पुरोदर वर्त्ति तेमाहे वर्त्तता एवा पूर्वे सर्वप्राणी अनादिवनस्पतिमां सूक्ष्मनिगोद परपर्याय माहे अनता पुजलपरावर्त्तलगे जीव रह्यो साथे एकश्वासोश्वासमा सतरजव जाजेरा करे जन्ममरणादिक वेदनाना समूहने अनुजवे तथाविध जव्यप्राणी पण अनंतो काल अव्यवहाररासीमारही कर्मपरिणाम राजानी आज्ञाथी तथाविध जव्यपणाने नियोगेकरी व्यवहाररासीमाहे प्रवेसकरे.

व्यवहाररासीते कोनेकहिये जे बादरनिगोद पृथ्वी पाणी तेज वायु प्रत्येकवन स्पति अने त्रस तेमापण अनंतानत कालसुधीरहे एप्रमाणे सकलदुःखपादप बी जजूत जे मिथ्यात्व तेणेकरी एटला काललगें चारगतिनुं ससार संबंधी छेदन जे दन ताडन जूषातृपादिसहन गुरुजाराक्रमण गर्जवशन जन्म जरा रोग शोकइष्टवियो ग अनिष्टसयोग इर्षा विषाद मरणादिक दारुणदुःख प्राये अनतिवार अनुजवीने पालाने दृष्टाते पालुते धान्यजरवानुं जाजनविशेषजाणवु ते जेम कोइकपुरुष ते पालामां थोडुथोडु धान्यनाखे अने गणुघणुकाढे ते धान्य केटलेककाले खूटे तेम कर्मधान्यरूप पालामाहे जीव अनाजोगथी थोडा कर्मबांधे एटले थोडुंघाले अने घणाकर्मनिर्जरे एटलेघणुंकाढे एरीते छेहलो एक पुजलपरावर्त्त जेणे जवस्थिति आणीराखीछे एवुकोईक चारगति सबंधीजीव ते कथमपि महताकष्टे तथा जव्य त्व परिपाकना वशथकी गिरिसरिदुपल घोलना कल्प पर्वत नदी पथ्थर घोलना स

मान अनाभोग निर्वर्त्तित एवुं यथाप्रवर्त्तिकरण करणंपरिणामोत्रेतिवचनात् एहवुं अध्यवसायविशेषरूप तेणेकरीने एक आयुवर्जीने सर्वज्ञानावरणादिक सातेकर्म तेनी पल्योपमासंख्येयभागे न्यून एककोटीसागरोपमनी स्थितिछे जेहनी एहवांकरे ते सर्वकर्मनी उत्कृष्ट स्थितिकेटलीछे के जेमांथी बीजीन्यूनकरे ते गाथायेंकरीकहेछे मोहे कोडाकोडी, सत्तरिवीसंचनामगोयाण ॥ तीसयराणि चउह्लं, तित्तीसयराणि आउस्स ॥ १ ॥ अत्रांतरे जीवने कर्मपरिणामजनित घन राग द्वेषपरिणामरूप कर्कश निविडचिरप्ररूढ गुपिल वल्कग्रंथीनीपरे डुर्भेद अनिन्नपूर्वगांठीहोय

तडुक्तं घस्सण घोलण जोगा, जीवेणजयाहविज्ञ कम्मठिई ॥ खविया सव्वासागर, कोडाकोडी पमुत्तूणं ॥ १ ॥ तव्वियथोवमित्ते, खविये इबंतरंमि जीवस्स. हवइहु अनिन्नपुव्वो, गंठीएव जिणाविंति ॥ २ ॥ गंठित्तिसुडुप्रेउ, करकडघणरूढगूढगंठिव्व जीवस्स कम्मजणिउ, घणरागदोस परिणामो ॥ ३ ॥

ए गांठ सुधी अनव्यपण यथाप्रवर्त्तिकरणेकरी कर्मखपावी अनंतिवारआवे पणगांठने नेदेनही यडुक्तं प्रवचनसारोद्धारे करणं अहापवत्तं, अपुव्वमनियट्टिमेव नव्वाणं ॥ इयरेसिं पढमंचिय, नसइकरणंति परिणामो ॥ १ ॥

ग्रंथीदेशेंवर्त्ततो नव्य अथवा अनव्य तिहां संख्यात अथवा असंख्यातोकाल रहे तिहारह्योयको इव्यश्रुत निन्न दशपूर्वलगें अनव्यजणे ते तीर्थंकरनी ऋद्धिदेखी अथवा स्वर्गसुखादिकनो अर्थियको जेवारे दीक्षालियें तेवारे पूर्वजणे तेमाटेज निन्न दशपूर्वांतश्रुत ते मिथ्याश्रुतपणहोय मिथ्यात्वेंग्रह्यामाटे मिथ्याश्रुत कहेवाय अने जेने चउदपूर्व अथवा संपूर्ण दशपूर्वश्रुतहोय तेने. नियमा सम्यक्त्व होय पण काइकउणा दशपूर्वधरादिकनेविषे सम्यक्त्वनी नजना जाणवी यडुक्तं कल्पनाष्ये चउदस दसय अनिन्ने, नियमा सम्मत्त सेसए नयणा ॥ इति तिहांथी इव्यसंयमपाली जैननीक्रियानेबले नवग्रैव्यकेपणजाय पण मिथ्यादृष्टीमाटे संसारनो पारपामेनही यडुक्तं आवश्यकटीकायां अनव्यस्यापि कस्यचित् यथाप्रवृत्तिकरणतो ग्रंथिमासाद्यार्हदादि विनूतिदर्शनतः प्रयोजनांतरतोवा प्रवर्त्तमानस्य श्रुत सामायिक लानोनवति नशेपलानइति

एम यथाप्रवर्ति करणेकरीने ग्रंथीलगे नव्यपणआवे अने अनवपणआवे पण अपूर्वकरणादिकतो नव्यनेजहोय अपूर्वकरणे तो पथिक पिपीलिकयोज्ञात यथा,

जह इह तिन्निमणूसा, जतमविपहं सहावगमणेण ॥ वेला इक्कमनिया, तुरंति पताय दोचोरा ॥१॥ दहुंमग्ग तडडे, तन्नेगोमासउ पडिनियत्तो ॥ बीउंगहिउ तइउ,

समइक्कंतो पुरंपत्तो ॥ २ ॥ अडवी नवो मणूसा, जीवाकम्मठिइ तहोदीहो, गंठि यनयठाण ॥ राग दोसाय दो चोरा ॥ ३ ॥ नग्गोठिइ परिवुड्ढी, गहिउं पुण गंठि उं गउ तइउं ॥ सम्मत्त पुरंएव, जोइज्जा तिन्नि करणाइ ॥ ४ ॥ खिइ सानावियग मणं, थाणूसरण तउ समुप्पयणं ॥ ठाणंठाणुसिरेवा, कहरण वा मुञ्चंगीण ॥ ५ ॥ खिइगमणं पिव पढम थाणुं सरणच करण मपुवं ॥ उप्पयणपिवतत्तो, जीवाणं करण मनियट्टि ॥ ५ ॥ ठाणुव गंठिदेसो, गंठिय सत्तस्स तद्ध वठाण ॥ कपरण पिवतत्तो, पुणोविकम्मठिइविवड्ढी ॥ ७ ॥

एम ए वे दृष्टाते त्रणकरण नाववां एकआयुकम्मेवर्जिने वीजा सातकर्मनी उत्कृष्टी स्थिति खपावी बाकी एककोडाकोडी सागरोपमते पल्योपमने असंख्यातमेंनागें न्यून सातेकर्मनी स्थिति प्रत्येके आणी राखी

हवे कोइक महात्मा समासन्न परमनिर्वृत्ति सुख समुल्लसित, प्रचुरदुर्निवार वीर्यप्रसर तीक्ष्ण कुगरधारानीपरे अपूर्वकरणरूप आत्मानी परमविशुद्धे यथोक्त स्वरूप ग्रंथीनोन्नेदकरीने मिथ्यात्वमोहनीय कर्मस्थितिनु अंतरमुहूर्त्त उदयक्षणथी उपरे अतिक्रमिने अनिवृत्तिकरण संज्ञितविशुद्धि विशेषेकरीने अंतरमूहुर्त्तकाल प्रमाण वेद्यदलिका नावरूप अंतरकरणकरे इहां यथाप्रवृतिकरण अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरण नो अनुक्रम आवीरीतेजाणवु तेकहेछे यथा जागंठी तापढम, गंठीसमइच्छउं नवेवीर्य ॥ अनियट्टीकरण पुण, सम्मत्त पुरक्कडेजीवे ॥ १ ॥ गंठिस म इच्छयंत्ति ॥ ग्रंथि समतिक्रामत निवानस्येत्यर्थ सम्मत्तपुरक्कडेत्ति सम्यक्त्व पुरस्कृतं येनतस्मिन् आसन्नसम्यक्त्वे एवजीवे अनिवृत्तिकरण नवतीत्यर्थः

एटले जे करणेकरी गिरिसरि जलवेगालोड्यमान पाषाणनीपरे घंचना घोलनादि केकरीने एकआयुकर्मवर्जि शेष सातेकर्मनी काइकउणी एक कोडाकोडी सागरोप मनी स्थितिकरतो ग्रंथीदेशलगेआवे ते यथाप्रवृतिकरणकहिये अने जे अध्यवसा ये अप्राप्तपूर्वके घन रागद्वेष परिणतिरूप ग्रंथीने नेदवामाटे ते अपूर्व करण क हियें वली पूर्वप्राप्तथयाजे अध्यवसाय तेने अनिवर्तके एवां अध्यवसाये विशेषे ग्रंथीनेदकरीने सम्यक्त्वपामे ते अनिवृत्तिकरण कहिये हवे अंतरकरण करेतिवे लाये मिथ्यात्व मोहनीयकर्मनी वे स्थितिकरे एक अंतरकरणथी हेठली प्रथम स्थिति अंतरमुहूर्त्तप्रमाण वीजी तेथी उपरली बाकीरहेली पल्योपमासंख्येयनाग न्यून कोडाकोडी सागरोपमरूप स्थितिजाणवी ॥

तेमा प्रथम स्थितिनेविषे मिथ्यात्वदलिक वेदनथी ए जीवने मिथ्यादृष्टीज क

हियें अंतरमुहूर्त्त वली ते स्थितिगयेथके अंतरकरणनो प्रथम समय तिहांज सम्य क्त्वपामे मिथ्यात्वदलिक वेदनना अनावथीजेम वनमां दवलागोहोय ते जेवारे उख रनूमिपामें तेवारें पोतानीमेलें उल्हाइजाय तेम मिथ्यात्व वेदनरूप वनदव तेपण अंत रकरणरूप उखरनूमिपामिने उल्हाइजाय तेवारे तेने उपशमसम्यक्त्वनो लान थाय.

उक्तंच ऊसरदेसंदड्डिं, ल्लियं च विभ्नाइ वणदवोपप्प॥ इयमिब्रस्साणुदए, उवस मसम्मंलहइजीवो ॥ १ ॥ टीका ॥ ग्रंथिनेदोहि मनोविघातपरिश्रमादिनिर्दुःख साध्योवर्त्तते तदाहि सजीवः कर्मरिपुमध्यगतस्तं ग्रंथिप्राप्यातीव परिश्राम्यति प्रनू तकर्मारातिसैन्यांतकृत्वेन संजातखेदत्वात् संग्रामशिरसीवडर्जयापाकृतानेक श त्रुनरनरेंड्नटवत्॥ यडुक्तं सम्यक्त्वस्तवे॥सोतह्नरणे सुहमो, व वेरिजयजणियपरम आणंदो ॥ सम्मत लहइ जिउ, सामन्नेण तुह पसाया ॥ १ ॥ टीका ॥ सजीवस्त त्रानिवृत्तिकरणेकृते अंतरे हेनाथ तवप्रसादात् तवसाह्यात् सामान्यतो नतुक्षायि काद्विवहिशिष्टतया सम्यक्त्वं उपशमिकाख्यं लनतेजीवः कइवेत्याह रणे सुहमोवे त्ति वैरिजयेन जनितोयः परमानंदस्तंरणे सुनटइव॥तथाहि रणेनटो वैरिजयादानं दमश्नुते तथैव रागद्वेष कर्मस्थित्यादि वैरिजयात्परमानंद कल्पंसम्यक्त्व लनते जीव तडुक्तं पावंति खवेऊणं, कम्माइ अहापवत्त करणेण ॥ उवलनाएण कह मवि, अनिन्न पुव्वि तउगंठि ॥ १ ॥ तगिरिवरवज्जेत्तु अपुवकरणुग्गवज्ज धाराए ॥ अंतोमुहुत्तकालं ॥ गंतुअनियट्टिकरणंमि ॥ २ ॥ पइसमयंसुअंतो, खविउंकम्माइ तह बहुआइं ॥ मिह्नत्तंमिउइसे खीणेणुइयंमि उवसंते ॥३॥ संसारगिम्हतविउ, त त्तो गोसीसचंदणरसोव्व ॥ अइपरम निव्वुइ कर, तस्संते लहइसम्मत्तं ॥ ४ ॥ अत एव नव्याना मिथ्यात्वस्यानादिसातत्व ॥ तडुक्तं मिह्नत्तमनवाणं, तमणाइ मणंतयं मुणेयव्वं ॥ नव्वाणंतमणाइ, सपज्जवसियंतु सम्मत्ते॥ए बीजाढालनी सोलमीगाथाथी मांमीने चोवीसमी गाथासुधी नवगाथानो अर्थकह्यो बीजाढालनोअर्थ पूरो थयो.

॥ ढाल त्रीजो सहीरेसमाणी एदेशी. ॥

॥ इणीपरें तुजथी समकित फरस्युं ॥ जेहथी नवजल तरस्युंरे ॥ धनधन तुम सेवा ॥ एथी मन वंछीत फल लेवा ॥ तेकरवा मुज हेवारे ॥ ध० ॥ १ ॥ तिहां कोइ देश विरति तससरसी ॥ सर्व विरतिलहे हरिसीरे ॥ ध० ॥ मिछामयण कोदर वा सरिखुं ॥ उपशम ओषधपरखुंरे ॥ ध० ॥ २ ॥ जल वस्त्रादिकनेदृष्टांते ॥ तुज आगम कहेखातेरे ॥ ध० मिथ्यापुंजकरेत्रणसोधी ॥ उपशमकरीशुनबोधीरे ॥ ध० ॥ ३ ॥ शुद्धने अर्द्ध विशुद्धते बीजो ॥ अविशुद्धे मतरीजोरे ॥ ध० ॥ उपशमथी

पडिजेमनवामे ॥ क्षायोपशमिक पामेरे ॥ ध० ॥ ४ ॥ मिश्र तथा मिथ्यात्वने फरसे ॥ करममतीइम हरसेरे ॥ध० ॥वीजुंक्षायोपशमिक कहिये, उपशमपरिणल हियेरे ॥ध०॥५॥ मिछापुंजकरीत्रिण निरणे ॥ कोई अपूरवकरणेरे ॥ध०॥ शुद्धपुज तिहावेदतोज्ञानी जिनवचनामृतपानीरे ॥ ध० ॥ ६ ॥ उपशमपाम्याविण तुजनामे ॥ क्षायोपशमिकपामेरे ॥ ध० ॥ यथाप्रवृत्तिकरणत्रयक्रमथी ॥ अतरकरणेतुज थीरे ॥ ध० ॥ ७ ॥ जेलहेउपशम नवजल तरवा ॥ तसत्रणपुजन करवारे ॥ ध० आलंबन अलहंती ईयल, जिमसंगाण नमूकेरे ॥ ध०॥ ८ ॥ मिश्रपुंज अणलाभी उपशमे ॥ तिममिथ्याते हूकेरे ॥ ध० ॥ उपशमसमकितथीतिणिपडिजे ॥ जइ मिथ्या गुण अडिजेरे ॥ ध० ॥ ए ॥ इम सिद्धांतीनिज मत खोले ॥ कल्पनाप्यपण बोलेरे ॥ध०॥ ते त्रणपुजनुंसंक्रमनापुं ॥ जिनवयणेमनराखुरे ॥ ध०॥१०॥ मिथ्या दलिकथीपुद्गल खिंची ॥ समकितदृष्टीविचीरे ॥ ध० ॥ सकरमावे समकित मीसे ॥ शुभपरिणामे हिंसेरे ॥ ध० ॥ ११ ॥ समकितदृष्टी मीस आकर्षी ॥ समकितमा हेहर्षीरे ॥ ध० ॥ संकरमावे मिथ्यादृष्टी ॥ मिथ्यामांगुणदृष्टीरे ॥ ध० १२ ॥ समकित पुंगल मिथ्यामांहे ॥ पण मीसे नवि वाहेरे ॥ ध० ॥ मिछाखीण नहीछे जे हने ॥ ते त्रण पुंजछे तेहनेरे ॥ ध० ॥ १३ ॥ मिछाखीण थये दोय पुंजी ॥ मीस खये एक पुजीरे ॥ ध०॥ क्षायक समकित पुद्गल नाशे ॥ जिन आगम इम नासेरे ॥ ध० ॥ १४ ॥ सोधित मयण कोद्रवा थाने ॥ समकित पुद्गल मानेरे ॥ध०॥ तेहने विरुध तैलादिक पाशे ॥ शुद्धपणु तस नासेरे ॥ ध० ॥ १५ ॥ तिमज कुशास्त्र कुतीर्थिकसंगे ॥ तस किरिया मन रंगेरे ॥ ध० ॥ मिथ्या, मिश्रित समकित जाये ॥ ततक्षण मिथ्या थायरे ॥ ध० ॥ १६ ॥ समकितथी पडिओजो पाछुं ॥ वली समकितलहे आछुंरे ॥ ध० ॥ ते त्रण पुज करे तिहां फेरी ॥ मिछ अपूर विवेरीरे ॥ध०॥ १७ ॥ अनिवृत्तिकरण वलें ते रसीउ ॥ समकित पुजे वसीउरे ॥ ध०॥ समकित परेजिहां विरतिनेपावे ॥ आद्यकरण बे आवेरे ॥ध०॥ करण अपूरव कालने आगे ॥ विरतिलही तिहां जागेरे ॥ ध० ॥ १८ ॥ अंतर मुहुरतमा तस लाधे ॥ निज परिणामे वाधेरे ॥ ध० ॥ उंचो नियम नही तिहां कोई ॥ वृद्धि हाणी सम होईरे ॥ ध० ॥ १९ ॥ अनाभोग परिणामनी हाणे ॥ गइ विरति नवी जाणेरे ॥ ध० ॥ अकृत करण थको ते प्राणी ॥ फिरी लहे विरति सुहाणीरे ॥ ध० ॥ २० ॥ आभोगे जे विरतिथी खलिया ॥ तिमज मिथ्यागुणे वलिया रे॥ध०॥अंतरमुहूरतमा लहे आछी॥जघन्य थकी फिरी पाछीरे ॥ध०॥२१॥उत्कर्षे व

हुकालें जापी ॥ आद्य करणछे सांखीरे ॥ ध० ॥ इणीपरे कर्मप्रकृति वृत्तिमांहे ॥ तिहां जोजो उल्लाहेरे ॥ ध० ॥ २२ ॥ कोइ विराधित समकेत फेरी ॥ ते लहे मिथ्या वेरीरे ॥ ध० ॥ छठीनरक लगें ते जाय ॥ समय मतें कहेवायरे ॥ ध० ॥२३ आऊ बंधविना कल्लाहे ॥ फिरी समकित अवगाहेरे ॥ ध० ॥ वैमानिकविण आउ न बांधे ॥ कर्म मती मत सांधेरे ॥ ध० ॥ २४ ॥ समकित पतित कहे मतबांधे ॥ उत्कृष्टी स्थिती बांधेरे ॥ ध० ॥ भिन्न ग्रंथिने आगम न्याने ॥ स्थिति उत्कर्ष न मानेरे ॥ध०॥ २५ ॥ इणीपरें भेद मतांतर जाणे ॥ पण संदेह न आणेरे ॥ ध० निःशंकित तुज वयण आराधे ॥ न्यायें तस गुण वाधेरे ॥ ध० ॥ २६ ॥

अर्थ.— हवे त्रीजाढालनो अर्थ कहेछे हवे प्रथम सम्यक्त्व पामतां कोइक जीव सम्यक्त्वनी साथेंज देशविरति अथवा सर्वविरतिपणुं पामे ॥ उक्तंच शतकवृहच्चूर्णौ ॥ उवसम सम्मदिठ्ठी, अंतरकरणेठिउं कोइ ॥ देसविरयंपिलभइ, कोइपमत्ताप मत्तभावपि सासाणोनकिपिलभेइति पछी ते ओषधसमान उपशम सम्यक्त्वे करीने कोईक जल वस्त्रने दृष्टाते मिथ्यात्व मोहनीयकर्म सोधीने त्रण प्रकारेकरे ते कहेछे १ शुद्धपुज २ अर्द्धविशुद्धपुंज ३ अविशुद्धपुंज

ते त्रण पुजमांथी जेवारे शुद्ध पुंजनो उदय होय तेवारे शुद्धमिथ्यात्व पुजल वेदनथी क्षायोपशम सम्यक्त्व कहिये तेनुं लक्षण कहेछे जेम कोद्रवा धोयाथकां केटलाक मयणारहित थाय अने केटलाक लिगारेक मयणावालारहे अने केटलाक तो मयणासहीतज रहे अथवा पाणीपण केटलुक स्वछ निर्मल थाय अने केटलुक निर्मल तथा मेलुं रहे तथा केटलुकतो मेलुजरहे तेमज वस्त्रपण धोयाथकां कोइक निर्मलज थाय कोइक अर्द्ध मलीन रहे अने कोइकतो आखु मलीनजरहे.

ए पूर्वोक्त दृष्टांते त्रण पुजपण छे तेमां जेवारे शुद्धपुंजनुं उदय होय तेवारे तेना उदयना वशथकी जीवने विशुद्ध अरिहंतना तत्वनी श्रद्धाहोय तेथी ते जीव क्षायोपशमिक सम्यक्त्व पामे अने जेवारें वली अर्द्धविशुद्ध पुजनो उदय होय तेवारे ते उदयनावशथकी जीवने अर्द्धविशुद्ध अरिहंतनाप्रीतनुं तत्व श्रद्धान होय तेवारे एजीव सम्यक् मिथ्यादृष्टी एटले मिश्रदृष्टीवत कहिये अने जेवारें अशुद्धपुंजनो उदय होय तेवारे जीवने मिथ्यादृष्टीज कहियें तेवारे ते उदयनावशथकी वीतरागना शासनउपरें सर्वथा रुची नज होय.

यथाप्रवृतिकरणादिकरणत्रय अनुक्रमे अंतरकरणे उपशम सम्यक्त्वपामे त्रणपुंज तोजीव सर्वथा नजकरे तेमाटे उपशम सम्यक्त्वथी पड्यो अवश्यमिथ्यात्वेज जाय.

हवे कर्मग्रंथिकनुं मतकहेछे कर्मग्रंथवाला एममानेछे के अनादि मिथ्यादृष्टीजीव सम्यक्त्वलाभकाले यथाप्रवर्त्यादिक करणत्रय पूर्वक अंतरकरणकरे तिहां उपशम सम्यक्त्वपामे तिहांत्रणपुंज अवश्यकरे तेकारणमाटेज उपशमथी पडयोजीव क्षायोपशमिकसम्यक्त्वपामे अथवा मिश्रपुंजेजाय अथवा मिथ्यात्वेजाय एचारगाथानो अर्थछे.

हवे पांचमीगाथाथी मांडीने नवमीगाथासुधी वली सिद्धांतिकनुंमत कहेछे कोई अनादि मिथ्यादृष्टी तथाविधसामग्रीना सद्भावे अपूर्वकरणेकरी त्रणपुंजकरे पछी शुद्धपुंजना पुद्गलनेवेदतो जीव उपशम सम्यक्त्व पाम्याविना प्रथमथीज क्षायोपशमिक सम्यक्त्वपामे अने बीजा घणाजीवतो यथाप्रवर्त्यादिक करणत्रय अनुक्रमे अंतरकरणे उपशम सम्यक्त्वपामे माटे त्रणपुंजतो जीव सर्वथानजकरे उपशमथी पडयो अवश्यमिथ्यात्वेज जाय ॥ यदुक्तं कल्पभाष्ये ॥ आलंवण मलहंताजह सट्ठाण न मुंचइइलिया ॥ एव अकयतिपुंजो, मिछंचिय उवसमीएई ॥ १ ॥ जेम गात्रसमुक्षिप्तकरेथके इलिकाजे गामरते बीजास्थानकरूप आलंबनने अणपामति पोतानुं स्वस्थाननमूके गात्रसंकोची तेजस्थानके रहे तेम उपशम सम्यक्दृष्टी उपशम सम्यक्त्वथीपड्यो त्रणपुंजकरवानथी माटेमिश्रपुंज अने शुद्धपुंजलक्षण स्थानांतर अणपामतो वलीतेहीज मिथ्यात्वपुंजे आवे एसिद्धांतिकनुं मत कह्यु॥५॥६॥७॥८॥९॥

हवेपुंजत्रयनुसंक्रमण कहेछे कल्पभाष्यमा एमकह्युछे के सम्यक्दृष्टीजीव मिथ्यात्वदलिकथकी पुद्गलआकर्षि प्रवर्द्धमान परिणामथको सम्यक्त्वपुंजमाहे अथवा मिश्रपुंजमाहे संक्रमावे अने मिश्रपुद्गलने सम्यक्दृष्टी सम्यक्त्व पुंजमाहे संक्रमावे अने मिथ्यादृष्टी मिथ्यात्वपुंजमा संक्रमावे तथा सम्यक्त्वपुद्गल पण मिथ्यात्वमांहेज संक्रमावे पण मिश्रमानसंक्रमावे यदुक्तं मिछत्तासंकती अविरुद्धा होइ सम्म मीसेसु ॥ मीसाउवादोसुं, सम्मामिछन उणमीस ॥ १ ॥ जेनो मिथ्यात्वक्षयपाम्युंनथी ते सम्यक्दृष्टी नियमा त्रिपुंजीजहोय अने मिथ्यात्वक्षीणथयेथके द्विपुंजीजहोय अने मिथ्यात्व तथा मिश्रबेक्षीणथयेछते एकपुंजीजहोय अने सम्यक्त्वपुंज क्षयकरेथके क्षपक एटले त्रणेपुंजनोक्षय करवाथका क्षायिक सम्यक्त्ववंत होय ॥ यदुक्तं कल्पभाष्ये मिछत्तेमिखखीणे, तीपुंजीसम्मदिठ्ठिणोनियमा ॥ खीण मिछ मिछत्तेदुएगपुंजीवखवगोवा ॥ १ ॥ जे सम्यक्त्वपुद्गल ते सोधित मदनकोद्रवा समानजाणवा तथा जेम सोधेला कोद्रवा विरुधतैलादिके नाख्याथका फरीपाछा मयणाजाथाय तेम सम्यक्त्वपुद्गलने विरुधतैलादिक समान कुतीर्थसंसर्ग कुशास्त्रश्रवणादिक मिथ्यात्वेकरी वासीतकरवाथका ततक्षण मिथ्यात्विथाय

वलीते सम्यक्त्वथी पडवडियो फरी सम्यक्त्वपामे तेवारे शीरीते पामे तेकहे छे प्रथम पडवडिया केटलाहोय अने ते केइगतिमांजाय ते कहेछे.

अन्नविय चउछणते, पंचमए दंसणाइ परिवडिया ॥ सेसाउसिद्धिमाइ, अछम णंतंमि तेवीसं ॥ १ ॥ मतांतरेप्येव ॥ अन्नविय चउछणंते, पंचंमिसमाइ परिवडी सिद्धा ॥ सेसाअछमणंते, पक्कभूलवणाइ बावीस ॥ २ ॥ चत्तारिय वाराउ, चउदस पुव्वीकरेइआहारं ॥ संसारंमिवसंतो, एगजवे डुन्नि वाराउ ॥ ३ ॥ तिछयररिद्धिदंस ण, सुहुमपयछावगाहणाहेउं ॥ संसयवुछेयछं, गमणजिणपायमूलंमि ॥ ४ ॥ स मउजहन्नमंतर, उक्कोसेणहवति छम्मासा ॥ आहारसरीराणं, उक्कोसेणं नवसह स्सा॥५॥ जंनरए असुराई, पुढवाइसु सयल विगल तिरिएसु ॥ वतर जोइविमाणे, सुपत्तेयइमेअसंखिज्जा ॥ ६ ॥ सियसखसियमसंखा, मणुएसु अणतया वणेनवर ॥ परिवडिअगया आहा, रग्गविलप्पंति इह समए ॥ ७ ॥

जेवारेपण सम्यक्त्वथी पड्यो फरीपाछुं सम्यक्त्वपामे तेंवारें पण अपूर्वकरणेकरी पुजत्रणकरीने अनिवृत्तिकरणेकरी सम्यक्त्व पुंजेजाय एटले क्षायोपशम सम्यक्त्व पामे इहां कोई पूछेजे अपूर्वकरण तो पूर्वे केवारेपण एवो परिणाम न आव्योहोय अने प्रथम नवोआवे तेने कहिये करणंपरिणामविशेष इतिवचनात् अने अ पूर्वकरणतो ग्रंथीनेवेआव्योहतो तेहीज वली परिणामे फरी आव्यो तेवारे अपू र्वपणु केमथयुं ? तेने उत्तरकहेछे अपूर्वमिवापूर्वस्तोक वारमेवलाभादितिवृद्धाः अपूर्व नीपरे अपूर्व थोमावारज पाम्या माटे. फरीअपूर्वकहिये जेम कोइक पदार्थ पुत्र ध नरत्नादिक पूर्वेथोडुंपाम्याहोय ते फरीपामे तोपण तेने अपूर्व करीजमाने तेम अ पूर्वकरणरूप परिणामपण जीवने थोमीवारज आव्योछे तेमाटे तेपण अपूर्वज कहिये ए सिद्धांतनुं मतजाणवु

हवे सम्यक्त्वपाम्यानीपरे जेवारे कोइजीव देशविरति अथवा सर्वविरतिपणुपा मे तेवारेपण यथाप्रवृत्तिकरण अने अपूर्वकरण ए बे करणकरे पण अनिवृत्तिकर ण करेनही अपूर्वकरणनो अंतरमुहूर्त्तरूप काल समासिने अनंतर समयेज देश विरति सर्वविरति पडिवज्या, पछी अनतर अंतरमुहूर्तलगे ते जीवने अवश्य प्रव र्द्धमान परिणामहोय पछी अंतरमुहूर्त्त उपरांत नियमनही कोइप्रवर्द्धमान परिणा मियकोजरहे अने कोइ स्वभावस्थजरहे तथा कोइ हीनपरिणामिपणथाय तेवली अनाभोगे कोइक परिणामनी हाणीथकी देशविरति अथवा सर्वविरति थकी पडया ते अकृतकरणा एवतांलभंतेके० यथाप्रवृत्तिकरण अने अपूर्वकरण कस्यावि

नाज वली देशविरति अथवा सर्वविरतिपणुपामे अने जेजीव आनोगेकरी पडया अने अनोगेंकरीनेज मिथ्यात्वेगया ते जघन्यथी अंतरमुहूर्त्ते अने उत्कर्षथी घणे काले यथोक्त करणपूर्वकज एटले पूर्वोक्त बन्नेकरणोकरीनेज देशविरति अथवा सर्वविरतिपणु वली फरीथोपामे एवु कर्मप्रकृतिनी वृत्तिमा कह्युछे ए दशमीगाथाथी मांमीने बावीसमी गाथासुधी तेरगाथानुं अर्थनेलो कह्यु ॥ २२ ॥

हवे सिद्धांतनुंमत अने कर्मग्रंथनुंमत जिन्नजिन्नकहेछे तेमा प्रथम सिद्धांतिक नामतेतो विराधित सम्यक्त्वी सम्यक्त्वथी पडयो फरी सम्यक्त्व पाम्योथकोपण कोइक छठीनरकसुधीजाय अने कर्मग्रंथिकनामतेतो छते सम्यक्त्वे वैमानिकविना बीजाठेकाणानुं आयुबांधेजनही यदुक्तं सम्मत्तंमिउलद्धे, विमाणवज्जं न बंधए आउ ॥ अहवन्न समत्त जहो, अहवन बंधाउ उपुव्वि ॥ १ ॥ वली कर्मग्रंथिकनेमतेतो सम्यक्त्वपामीने पडयो तेजीव उत्कृष्टस्थितिनी कर्मप्रकृतिबांधे तथा सिद्धांतिक मतेतो जिन्नग्रंथीवालाने उत्कृष्टीस्थितिनो बंधजनहोय

यदुक्तं सैद्धांतिक मतेहि विराधित सम्यक्त्वे गृहीतेनापि सम्यक्त्वेन षष्ट पृथिवीयावत्कोप्युत्पद्यते अने कार्मग्रंथीकमतेतो वैमानिकेन्योन्यत्रनोत्पद्यते तेनगृहीतेनेत्युक्तं प्रवचनसारोद्धारवृत्तौ अवाप्तसम्यक्त्वश्चतत्परित्यागे ॥ कार्मग्रंथिकमतेतो उत्कृष्टस्थिती कर्मप्रकृतीर्बध्नाति सिद्धांतिकानिप्रायतस्तुजिन्नग्रंथेरुत्कृष्टः स्थितिबंध एवनस्यादित्यादिजेद मतांतरे जाणे पण हवताणेनही जे जेम वीतरागनी आज्ञाहोय तेम प्रमाणकरे पण संदेहनआणे तेजीव ताहरी आज्ञानु आराधक जाणवोए त्रेवीसथीमामी छवीसमीगाथासुधी त्रीजाढालनो अर्थपूरोथयो.

॥ ढालचोथो विनयवहोसुखकार अथवा सालिनइ जोगीरहो एदेशीछे ॥

॥ दर्शन मोह विनाशथीजी ॥ जेनिर्मल गुणगण ॥ ते समकित उंघे कह्युजी ॥ ते जवियण हित आणरे ॥ जिन जी तुज आणासुंरंग ॥ मुज जगमे मिथ्यासंगरे॥ जि० ॥ १ ॥ ए आकणी ॥ मिन्छा दरसण मोहनीजी ॥ उपशमि उपशमजाण ॥ धुरग्रंथी जेदे कह्युजी ॥ उपशमश्रेणी प्रमाणरे ॥ जि० ॥ २ ॥ नाश उदीरण मिश्रनोजी ॥ अनुदीरण समगाम ॥ क्षयउपशमथी उपजेजी ॥ क्षयोपशमिका नामरे ॥ जि० ॥३॥ त्रिविधि मोह विनासथीजी ॥ त्रीजुक्षायिकनाम ॥ क्षपकश्रेणी चढतांहुएजी ॥ जेहथी शिवपुर गामरे ॥ जि० ॥ ४ ॥ विपाक प्रदेशें वेदवुंजी ॥ द्विविध उदय विष्कन ॥ उपशमतु तेहने कहेजी ॥ आगममा थिरथंजरे ॥ जि० ॥ ५॥ नाश विपाकोदय थकी जी ॥ वेदन तेहनुंरे नाम ॥ उपशमि ते नवि संजवेजी ॥

क्षायोपशमिक नामरे ॥ जि० ॥ ६ ॥ मिच्छा पुज्जत्र वेदवाजी ॥ शुद्ध अशुद्ध तिहां दो य ॥ विपाक प्रदेशोदय थकीजी ॥ अनुक्रमे समजी जोयरे ॥ जि० ॥ ७ ॥ अण चउ छुग मिच्छा तणाजी ॥ पुंज खपावीरे होय ॥ शुद्धपुंज खपतां तिहांजी ॥ अंतिम पु ग्गल होयरे ॥ जि० ॥ ८ ॥ तस वेदन तेहने कह्युंजी ॥ वेदक चोथुंरे नाम ॥ उपश म वमतां पांचमुंजी ॥ सासादन गुण धामरे ॥ जि० ॥ ९ ॥ अंतरमुहूरत एकनी जी ॥ उपशम स्थिति उवेष ॥ उत्कर्षे षट आवली जी ॥ जघन्य समय होय शेषरे ॥ जि० ॥ १० ॥ अशुद्धपुंज जावा तणीजी॥ इच्छायें तिहां तास॥अण कसाय उदयें हुयेजी ॥ जेहथी उपशम नाशरे ॥ जि० ॥ ११ ॥ उपशमथी पमतांथकाजी ॥ न ग यो मिच्छारे जाव ॥ तावत सासादन कह्युंजी ॥ उपशम स्वाद सद्भावरे ॥ जि० ॥ १२ ॥ अंतरमुहूरत कालनीजी ॥ उपशम स्थिति गुणखाण ॥ सासादन षट आ वलीजी ॥ वेदक समय प्रमाणरे ॥ जि० ॥ १३ ॥ स्थिति सागर तेत्रीसनीजी ॥ सा धिक क्षायक जाण ॥ वमणी स्थिति एहथी कहीजी ॥ क्षायोपशमिक ठाणरे ॥ जि० ॥ १४ ॥ उपशम सासादन कह्युजी ॥ आजव वेलारे पंच ॥ वेदक एक वेला हुयेजी ॥ तिमहिज क्षायक संचरे ॥जि०॥१५॥ वार असंख उत्कर्षथीजी ॥ क्षायो पशमिक होय ॥ हवे तस गुण ठाणा कहुंजी ॥ सांजलजो सहु कोयरे ॥ जि० १६॥ उपशम अडगुण ठाणमांजी, अविरत गुण पदरेख ॥ क्षाइक गुण ठाणे सवेजी ॥ आदिम त्रणविणशेषरे ॥ जि० ॥ १७ ॥ अविरति गुणठाणा थकीजी ॥ जावत स प्तम ठाण ॥ एक वेदक बीजु इहांजी ॥ क्षायोपशमिक जाणरे ॥ जि० ॥ १८ ॥ सा सादन सासादनेजी ॥ जापे अंग उवग ॥ न्याये शिवसुख ते लहेजी ॥ जशवुज आ ण अभंगरे ॥ जि० ॥ १९ ॥

अर्थ.— हवे चोथा ढालनो अर्थकहेछे तेमां प्रथम वारगाथालगें उपशमादिक पांच सम्यक्त्वनुं स्वरूपकहेछे दर्शनमोहनीयना विनाशथकी जे आत्माने निर्मल गुणस्थानक उपजे ते निर्मल सम्यक्त्व कहियें ते उपशमादिक पांचप्रकारनुंछे.

हवे उपशमसम्यक्त्व ते कोने कहिये ते उंलखावेछे उदीरणामिथ्यात्वनो क्षयथ याथी अने अनुदीरणा मिथ्यात्वनो उपशमथयाथी एटले विपाकप्रदेश वेदनरूप द्विविधें उदयने विष्कंजपणे करीने नीपनुं ते उपशम सम्यक्त्व कहीये.

उदीर्णस्य मिथ्यात्वस्य क्षयेसत्यनुदीर्णस्य उपशमेविपाकप्रदेशवेदनरूपस्य द्विविधस्याप्युदयस्य विष्कंजणेन निर्वृत्तिं, उपशमिकं तदोपशमिकं सम्यक्त्वं द्वि

ग्रंथिनेदसंनव उपशमश्रेणि संनवच ग्रंथिनेदसंनवप्रसिद्धं उपशमश्रेणिसंनव
म्यक्त्व श्रीजिननद्रगणिप्रणितगाथानिरेव विनाव्यते.

उपशमसम्यक्त्व बे प्रकारनुंछे एकग्रंथीनेदेउपनुं बीजुंउपशमश्रेणीथी उपनुं तेमां
थीनेदनुं स्वरूपतो बीजाढालमां कह्युछे अने प्रसिद्धपणछे अने उपशमश्रेणीथी
पनुंजे सम्यक्त्व तेनुं स्वरूपतो श्रीजिननद्रगणि कृत गाथायेज नावियेछे.

यडुक्तं उवसामग सेढीए, पठ्ठवउ अप्पमत्तविरउत्ति ॥ पज्झवसाणे सोवा होइ
मत्तोअविरउवा ॥ १ ॥ अन्नेनणति अविरय, देसपमत्तापमत्तविरयाणं ॥ अन्नय
पडिवज्झइ, दंसण समयंमि अनियट्टी ॥ २ ॥ संजलणाईण समो ॥ जुत्तो सं
ो अणोदउजेउ ॥ तेपुवंचिय समिया ॥ नणुसम्मत्ताइ लानंमि ॥ ३ ॥ आचार्यो
ासिखउवसमोसि, समो हुणा नणइ कोविसेसोसिं, नणुखीणमि उइन्ने ॥
सोवसमे खउवसमो ॥४॥ सोचेव तणूवसमो ॥ उइए खीणमि सेसए समिए॥सु
मोदय यामीसे ॥ नतूव समिए विसेसोयं ॥ ५ ॥ वेएइ संत कम्म ॥ खउवसम्मे
नाणुनावसो ॥ उवसंत कसाउ पुण वे एइन संतकम्मपि ॥ ६ ॥ संजोअणा
याण ॥ नणूदउ सजयस्स पमिसिद्धो ॥ सच्चमिह सोणुनाव ॥ पडुच्च न पएस
म्मतु ॥७॥ नणियं च सुए जीवो ॥ वेएइ नवाणुनाव कम्मंतु ॥ ज पुण पएस
म्म ॥ नियमा वेएइ त सव्वं ॥ ८ ॥ नाणुदियं निज्झरए ॥ नासंत सुदेइ ज त
वसम्मं ॥ सव्वंपएसकम्मं ॥ वेएउं मुच्चए सव्वो ॥ ९ ॥ किह्दसणाइ घाउ ॥ न
ोइ सजोअणाइ वेययउ ॥ मदाणु नावयाए ॥ जहाणु नावपि विकह्चि॥१०॥
नच्च सुइन्नंपि जहा ॥ सयल चक नाणिणो तदावरण ॥ नविघाय मंदयाए ॥
एस कम्म तहा तेयं ॥ ११ ॥

हवे क्षायोपशमिकनुं स्वरूप कहेछे उदीरण मिथ्यात्वमोहनीयने विपाकोदयेंक
ीने वेदितपणामाटे क्षयकरेथके अने अनुदीरण मिथ्यात्व मोहनीयने उपशमावे
थके ए क्षय अने उपशमरूप ते क्षायोपशम सम्यक्त्व कहिये इहां पूर्वपक्षकरीने
वचक पूछेछे के कहोजी क्षायोपशमिक अने उपशमिक सम्यक्त्वनो शो विशेषप
णुछे केमके उदीरण मिथ्यात्वनोक्षय अने अनुदीरण मिथ्यात्वनो उपशम ए तो
बेहुनेविषे समानछे तेमछतां बेहुना जूदाजूदा नाम केम कहोछे एकनाम केम के
हेतानथी एम पूछनारने उत्तर कहेछे सानलो क्षायोपशम सम्यक्त्वनेविषे शुद्धमि
थ्यात्वपुंजना पुज्ञल विपाकोदये वेदीये छे अने अशुद्धमिथ्यात्व पुजना पुज्ञल प्रदे

शोदय वेदीयेंछे अने उपशमसम्यक्त्वनेविशेतो वली सर्वथा कांइयेंपण नथीवेदता एटलुं विशेषपणुं उपशम अने क्षायोपशमनुं जाणवुं.

यडुक्तः— आसि खउवसमोसिंसमोहुणा जणइ कोविसेसोसिं; तणु खीणंमि उइन्ने ॥ सेसोवसमे खउवसमो ॥१॥ सोचेवनणूवसमो ॥ उइए खीणंमि सेसएसमि ए॥सुहुमोदय यामीसे ॥ नतूव समिए विसेसोयं ॥२॥ वेएइ संतकम्मं खउवसम्मे सु नाणु जावंसो ॥ उवसंत कसाउ पुण ॥ वेएइन संतकम्मंपि ॥३॥ इत्याद्युक्त मस्ति.

हवे क्षायक सम्यक्त्वनुं स्वरूपकहेछे सम्यक्त्व मिश्र अने मिथ्यात्वपुंजरूप त्रिविध दर्शनमोहनीयनुं निःशेष क्षयलक्षण क्षायक सम्यक्त्वकहिये ते क्षायकसम्यक्त्व क्षपकश्रेणीपडिवजतानेहोय यडुक्तं॥ खीणे दंसण मोहे, तिविहंमि विजव नि आण जूयंमि ॥ तिप्पच्चवायमतुलं, सम्मत्तं खाइयं होइ ॥ १ ॥ ते क्षायकसम्यक्त्व क्षपकश्रेणीने विषे आवीरीतेहोय ते कहेछे

यडुक्तं॥ पढम कसाये समयं, खवेइ अंतो मुहुत्त मित्तेणं ॥ तत्तुच्चिय मिछत्तं, त उअ मीसं तउसासं ॥ १ ॥ बद्धाउ पडिवन्नो, पढम कसाय रकए जइ मरिज्जा ॥ तो मिछत्तोदयउ, विणज्ज जुज्जो न खीणंमि ॥ २ ॥ तंमिम उज्जाइ दिव, तप्परिणामो असत्तए खीणे ॥ उवरय परिणामो पुण, पन्ना नाणा मई गइउ ॥ ३ ॥ खीणमि दंसणतिए, किंहोइ तउत्ति दंसणाईउ ॥ जन्नइ सम्मद्दिठी, समत्त खए कउ सम्मं ॥ ४ ॥ निद्दलिय मयण कुद्दव, रूव मिछत्त मेव सम्मत्तं ॥ खीणं न उ जोजावो, सद्दहणा लरकणो तस्स ॥ ५ ॥ सो तस्स विसुद्धयरो, जायइ सम्मत्त पुग्गल रकयउ ॥ दिठिव सएह सुद्ध,प्र पक्ल विगमे मणूसस्स ॥ ६ ॥ जह सुद्ध जलाणुगयं, दुंडुं सुद्धं जलरकए सुतर ॥ सम्मत्त सुद्ध पुग्गल, परिरकए दंसणं एव ॥ ७ ॥ तमिअ तइय चउछे, नवमि सिझंति खइय सम्मत्ते ॥ सुर निरय जुगलि सुगई, इमंतुजिणकालिय नराण॥८॥ पडिवत्तीए अविरय, देस पमत्तापमत्तविरयाणं॥ अन्नयरो पडिवज्जइ, सुक्कझाणोव गयचित्तो ॥९॥ इति क्षायक सम्यक्त्व स्वरूप

हवे वेदकसम्यक्त्वनुं स्वरूपकहेछे वेदकसम्यक्त्वते क्षपकश्रेणी पडिवर्जनारने होय चारअनंतानुबंधीया कषाय तथा मिथ्यात्व अने मिश्र ए बे पुंज खपावेथके अने सम्यक्त्वपुज खपावतोहोय एटले सम्यक्त्वपुजना छेलापुद्गल खपाववाने उजमालथयो ते सम्यक्त्वनापुंजनुं वेदनकाल तेना चरमसमयनेविषे चरमपुद्गलनुं वेदवुं तेनुंनाम वेदक सम्यक्त्व कहिये, जेम सूक्ष्मलोजना खंम वेदनथी सूक्ष्मसंपराय कहिये तेम जाणवुं. यडुक्तं सम्मत्त चरम पुग्गल, अणुनवणावेयगंविति इति वचनात्

हवे सास्वादन सम्यक्त्वनुं स्वरुपकहेछे पूर्वोक्त परमनिधान लाभ समानजे उपशम सम्यक्त्व तेनो अंतरमुहूर्त्तजे काल ते कालमांथी उत्कृष्टथी शेष छ आवलिका प्रमाण काल रह्यो होय अने जघन्यथी एकसमय अविशेषहोय तेवारें अशुद्धपुंजे जावानी इछायें कोइकने महा विभीषिकोत्थान कल्प अनतानुबंधियानो उदयहोय ते अनंतानुबंधीने उदयें सम्यक्त्व वमतो गुलवमननीपरें अथवा मालपतननीपरे सम्यक्त्वने आस्वादे थातेथके सास्वादन सम्यक्त्वहोय एटले उपशमसम्यक्त्ववत उपशमथी पडतोथको जिहांसुधी हजी मिथ्यात्वगुणठाणो नथी पाम्यो तिहांलगें सास्वादन सम्यक्त्व कहिये तदुक्तं उवसम सम्मत्ताउ. चयउ मिछं अपाय माणस्स॥सासायण सम्मत्तं, तयतरालं मिछा वलिया ॥१॥ एणीते चोथाढालनी बारगाथासुधी पाच सम्यक्त्वनुं स्वरूपकह्युं हवे वली कांइकतेनोजविशेष कहेछे.

सम्यक्त्व ते शुं कहिये जे मिथ्यात्व विकारनुं अणउपजावनारो एहवो कोइ अतिशुद्ध अध्यवसायविशेष आत्मानुं परिणमन तेनेज सम्यक्त्व कहियें तनाभेद क्षायक वेदक उपशमिक सास्वादन क्षायोपशमिक भेदव्याख्यान गाथायेंकहेछे

खीणे दंसण मोहे, तिविहंमि वित्थाइयं नवेसम्म॥वेयग मिह सखीइय, चरमिल्लय पुग्गल ग्गासं ॥ १ ॥ उवसम सेढि गयस्सउ, होई उवसामियंतु सम्मत्तं ॥ जोवा अकयतिपुंजो,अ खविय मिछो लहइसम्मं ॥२ ॥ उवसम सम्मत्ताउ, चयउमिछं अपाव माणस्स ॥ सासायण सम्मत्त, तयं तरालं मिछा वलिया ॥ ३ ॥ मिछत्तंज मुइन्नं, तंखीणं अणुइयं च उवसंतं ॥ मीसीभावपरिणय, वेइज्जं तंखउवसम ॥ ४ ॥ इत्यादि बारगाथाउनो अर्थ कह्यो.

हवे ए पाच सम्यक्त्वनी स्थिति कालमानादिक कहेछे तेमां उपशमसम्यक्त्वनो अंतरमुहूर्त्त स्थितिकालछे सास्वादननुं उत्कृष्टो छ आवलिकानुं अथवा जघन्यथी एक समयकालछे वेदकनो एक समय क्षायकसम्यक्त्वनो साधिक तेत्रीस सागरोपमकाल क्षायोपशम सम्यक्त्वनुं साधिक छाशठसागरोपमनुं काल जाणवु.

एक सास्वादन सम्यक्त्व अने बीजुं उपशमसम्यक्त्व ए बे उत्कृष्टा पांचवार आवे तथा वेदक अने क्षायिक ए बे सम्यक्त्व एकवारज आवे अने क्षायोपशम सम्यक्त्व असख्यातिवार आवे यदुक्तं अंतमुहुत्तो वसमो, छावलि सासाण वेयगो समउ ॥ साहिय तित्ती सायर, खइउ दुगुणो खउवसमो ॥ १ ॥ उक्कोसं सासायण, उवसमिया हुंति पंचवाराउ ॥ वेयग खइगाइक्कसि, असंखवारा खउवसमो २

हवे प्रसंगागत काइ विशेषता कहेछे सामायक चार प्रकारनुंछे सम्यक्त्व सा

मायक श्रुतसामायक देशविरतिसामायक अने सर्वविरतिसामायक तेमां जे सम्य क्त्साचोन्नावते सम्यक्त्वसामायक श्रुतसिद्धांतनुं जणवुंते श्रुतसामायिक देशथकी विरमवुं ते देशविरतिसामायक सर्वथकी विरमवुं ते सर्वविरतिसामायक एरीते चार सामायक छे तेमां सम्यक्त्वसामायक श्रुतसामायक देशविरति सामायक ए त्रणने उत्कृष्ट आकर्ष एटले जे प्रथमपणे मूक्यानुं ग्रहण ते एकनवमां सहस्रपृ थक्त्व एटले बेहजारथी मांमीने नवहजारसुधी होय अने सर्वविरतिने शतपृथ क्त्व एटले बशोथी मांमीने नवसोसुधी होय ए उत्कृष्टथी कह्यु, ने जघन्यथी एक ज आकर्ष सर्वने होय ए एकनवआश्रयी कह्युं. यडुक्तं तिएह सहस पुहुत्तं, सय पुहुत्तंच होइविरईए ॥ एगनवे आगरिसा, एवइया हुंति नायवा ॥ १ ॥

हवे नानानव आश्री आकर्ष कहेछेः—ए उपरना त्रणसामायकने सर्वनवनेविषे उत्कृष्टा असंख्याता सहस्र पृथक्त्व आकर्ष थाय अने सर्व विरति सामायकने सर्व नवमां सहस्र पृथक्त्व आकर्ष होय ए सर्वनव आश्री कह्यु. यडुक्तं तिएह सहस मसंखा, सहस पहुत्तंच होइ विरईए ॥ नाणनवे आगरिसा, एवइयाहुंति नायवा ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥

हवे ए पांचसम्यक्त्वने गुणगणाकहेछे बीजे सास्वादन गुणगणे सास्वादन स म्यक्त्विवहोय अने चोथाथीमांमीने अग्यारमां गुणगणालगे आठगुणगणा उप शम सम्यक्त्वीने होय अने चोथाथीमामी चउदमांलगें इग्यारगुणगणा क्षायक सम्यक्त्विनेहोय अने चोथाथीमामी सातमांगुणगणालगे चारगुणगणा वेदक अ ने क्षायोपशमसम्यक्त्विनेहोय यडुक्तं बीयगुणे सासाणो, तुरियाइसु अहिगार चउ चउसु ॥ उवसमग खइग वेयग, खाउवसमा कमाहुंति ॥ १ ॥

हवे चउदगुणगणानोअर्थ लेशमात्र गाथायेज कहीदेखाडेछे गाहा ॥ जीवाइ पयछेसु, जिणोव इछेसु जा असद्दहणा ॥ सद्दहणावि य मिछा, विवरीय परूवणा जाय ॥ १ ॥ संसय करणं जपिअ, जतेसु अणायरो पयछेसु, तं पंचविहं मिछं, त द्दिठिमिछविठीअ ॥२॥ उवसम अद्धाइ ठिउ, मिछ पमत्तो तमेयगं तुमणो ॥ सम्मं, आसायंतो, सासायण सो मुणेयवो ॥ ३ ॥ जह गुम दहीणिवि समा,इ नाव सहि याणि हुंति मीसाणि ॥ जुंजं तस्सतहोनय, दिठीउमीस दिठीउ ॥ ४ ॥ तिविहेविहु सम्मत्ते, थेवावि नविरइजस्स कम्मवसा; सो अविरउ त्तिनन्नइ देसे पुण देसविरई उ ॥ ५ ॥ विगहा कसाय निद्दा, सद्दाइरउ नवे पमत्तुत्ति ॥ पंच समिउत्ति गुत्तो, अ पमत्त जई मुणेयवो ॥ ६ ॥ अप्पुवं अप्पुवं, जहुत्तरं जोकरेइ ठिकंमं ॥ रसकंमं म

ग्घायं, सोहोइ अपुव्व करणुत्ति ॥ ७ ॥ विनिवट्टंति विसुद्धि, सम्मग दइछवि जंमि अन्नन्नं ॥ तत्तोनियट्टिठाण, विवरीय मउवि अनियट्टी ॥ ८ ॥ थूलाए लोह खंमा ए वेअगो बायरो मुणेयव्वो ॥ सुहुमाए होइसुहुमो, उवसंतेहिं तु उवसंतो॥ए॥ खीणमि मोहणिज्जे, खीण कसाउ सजोगि जोगित्ति ॥ होइ पउत्तो अतउ, अपम त्तो होइहु अजोगी ॥ १० ॥ अविरय सासण मिछा, परभविया नउण सेस गु णठाणा ॥ मिछस्स तिन्नि भंगा, छावलियं होइ सासाण ॥ ११ ॥ तित्तीसयर च उक्कं, पुव्वाण कोडि ऊण तेरसम ॥ लहु पंचरकर चरिमं, अंतमुहू सेसगुण ठाणा ॥ १२ ॥ ए चोथाढालनो १७–१८–१ए–ए त्रण गाथानो अर्थ कह्यो.

॥ ढाल पाचमो शांतिसुधारस कुंमम़ा तुरमे मुनिवर एदेशी ॥

धन धन शासन ताहरुं ॥ माहरुं जिहांमन लीनरे ॥ क्षण पण तलविण न विरहे ॥ जिमजल नर विण मीनरे ॥ धन० ॥ १ ॥ देशविरति दरशणथकी ॥ प लिय, पुहुत्तमां जाणिरे ॥ अनुक्रमे चरणश्रेणीविहुं ॥ संख्यसायर गुण खाणिरे ॥ धन० ॥ २ ॥ तेहिज भवेंहुए तेहने ॥ जेहनेसत्तगखीणरे ॥ चउतियभव उत्कर्प थी ॥ पुंवबद्धाउने पीणरे ॥ धन० ॥ ३ ॥ बद्धाउ सुर नरगनुं ॥ तेहने तियभव तंतरे ॥ आउ असंख्यनर तिरितणु ॥ तसपण चउभवे अंतरे ॥ धन० ॥ ४ ॥ स मकित स्थितिहोए ओगथी ॥ अंतरमूहूरत एकरे ॥ साहिय खउवसमासिरी ॥ सायर छासठि छेकरे ॥ धन० ॥ ५ ॥ इग अथवा बहु आसरी ॥ दरसणनो उप योगरे ॥ जघन्य उत्कृष्ट थकी कह्यो ॥ अंतरमूहूरत भोगरे ॥ धन० ॥ ६ ॥ दरस णलब्धि शुन सुरलता ॥ क्षयोपशमादिक रूपरे ॥ अंतरमूंहुरत मानभी ॥ जघ न्यथी कहेजिनभूपरे ॥ धन० ॥ ७ ॥ छासठ सायर लविमली ॥ नरजव हिय उ तकृष्टरे ॥ तेहथी वद्धे जो नविदिए ॥ समकित रयणने घुष्टरे ॥ धन० ॥ ८ ॥ ते निश्चय शिवपदलहे ॥ ए एकजीवने योगरे ॥ जीवनानाश्रित सर्वदा ॥ दरस णनो उपयोगरे ॥ धन० ॥ ए ॥ अंतरमूहुरत एकनुं ॥ जघन्य अंतरमन आणरे॥ अर्द्ध पुग्गल परावर्त्तनुं ॥ तस उत्कृष्ट परिमाणरे ॥ धन० ॥ १० ॥ जीव नानाश्रि त नवि होए ॥ समकित अंतर लेशरे ॥ तत्र आवश्यक वृत्तिमां ॥ ए अधिकार विशेषरे ॥ धन० ॥ ११ ॥ दशविध सहज उपदेशथी ॥ उपशम प्रमुख जे पं चरे ॥ अहव निसग्ग रुइ भेदथी ॥ दशविध तस परपंचरे ॥ धन० ॥ १२ ॥ नि सग्गुवएस आणारुइ ॥ सुत्त बीयरुइ अनिरामरे ॥ अनिगमा भोग किरियारुई ॥ सखेव धम्म रुइ नामरे ॥ धन० ॥ १३ ॥ गुरुउपदेशविण सहेजथी ॥ जिनवय

णे परतीतरे ॥ जेह्ने तेह्ने जाणजो ॥ प्रथम निसर्ग रुचि रीतरे ॥ धन०॥१४॥ तेसवि गुरुउपदेशथी ॥ सद्दहे जे जण आपरे ॥ ते उपदेशरुचि नर कह्यो ॥ इम तुज आगम थापरे ॥ धन० ॥ १५ ॥ कारण प्रमुख अजाणतो ॥ मुज जिन आणाज खेमरे ॥ तस्य आणारुचि तुंकहे ॥ माष तूपादिक जेमरे ॥ धन० ॥ १६ ॥ सूत्र जणतो समकितलहे ॥ प्रसन्न प्रसन्न परिणामरे ॥ गोविद वाचकनीपरे ॥ सुत्तरुई तसनामरे ॥ धन० ॥ १७ ॥ देशरुई खउवसमथी ॥ सवरुई विस्तारिरे ॥ उदकमां तेलबिंडुपरे ॥ बीयरुइ जवतारिरे ॥ धन० ॥ १८ ॥ अभिगमरुई सुअनाणने ॥ अरथथकी अवगाहेरे ॥ अंगपइन्न प्रमुखजे ॥ शास्त्र सवेनिरवाहेरे ॥ धन०॥ ॥ १९ ॥ इव्यना जाव जाण्याजिणे ॥ सर्व प्रमाणे असेसरे ॥ सर्वनयेतिम तसकह्युं ॥ विहार रुई अकलेशरे ॥ धन० ॥ २० ॥ दंशणनाण चारित्त वली ॥ तिमतिनयो त्तमकामरे ॥ सुमति गुपतिकिरियारुचे ॥ तेकिरिया रुइनामरे ॥ धन० ॥ २१ ॥ आगम कोविद नवीहुए ॥ कुमय कुदिठीवि जुत्तरे ॥ संखेवरुई तेह्ने कह्युं ॥ जिमचिलातिय पुत्तरे ॥ धन० ॥ २२ ॥ धम्म अधम्म प्रमुख दव ॥ चरण सुय धम्मना जेदरे ॥ जेजिन जापित सद्दहे ॥ तेधम्मरुई निरवेदरे ॥ धन० ॥ २३ ॥ एदशविध दरशण कह्यु, उत्तराध्ययनमजाररे ॥ अध्ययने ते अडवीसमें ॥ न्यायसागर सुखकाररे ॥ धन० ॥ २४ ॥

अर्थ ॥ हवे पांचमा ढालनो अर्थ कहेले जेटली कर्मस्थिति छते पूर्वे सम्यक्त्वपणुं पाम्योछे तेमांहेथी पल्योपम पृथक्त्व लक्षण स्थितिनाखंम खपावेथके श्रावकपणुं देशविरतिपणुंपामे तेवारपछी ते कर्मस्थितिमांथीपण संख्यात सागरोपम कर्मस्थितिखंम खपावेथके चारित्र उदय आवे तेवारपछी पण वली संख्यात सागरोपम स्थितिखंम खपावेथके उपशमश्रेणी पडिवजे वली तेवारपछी पण संख्यातसागरोपम खपावेथके क्षपकश्रेणी थाय. तडुक्तं सम्मत्तंमि उलद्धे, पलिय पुहत्तेण सावगो हुज्जा ॥ चरणोव सम खयाणं, सायर संखंतराहुंति॥ १ ॥

हवे कांइक लेशमात्र श्रेणीस्वरूपकहेछे पूर्वनोजाण पूर्वगतश्रुतनो धरनार अप्रमत्तगुणठाणधणी आद्यनात्रण संघयणमाहेला संघयणनोधणी तेशुक्लध्याननाचारपायाछे तेनांनाम कहेछे पृथक्त्ववितर्कविचार एकत्व वितर्क विचार सूक्ष्मक्रियानिवृत्ति समुछिनक्रियानिवृत्ति तेमाहेला पृथक्त्ववितर्कविचार नामेप्रथमपायो ध्यातोउपशमश्रेणी पडिवजे. यडुक्तं पूर्वज्ञ शुद्धिमान् युक्तोह्याद्यैः संहननैस्त्रिभिः ॥संध्यायन्नाद्य शुक्लांशंस्वांश्रेणि श्रयतिक्रमात् ॥१॥ अन्यनेमतेंतो अविरतादिकपण श्रेणी आरंभकछे.

वळी तेवारपछी अप्रमत्तांतगुणगाणे अनंतानुबंधीनी चोकडी अने त्रणमोहनीय ए सातप्रकृति उपशमावी एकसंज्वलननुं लोनवर्जी बाकी मोहनीयकर्मनी जे वीसप्रकृतिरही ते आठमे अपूर्वकरण तथा नवमें अनिवृत्तिबादर गुणगाणे उपशमावे पछी सूक्ष्मसंपरायने विषे लोननुं अणुअणुकरीने उपशांतमोहनेविषे तेहिज लोनने उपशमावे तडुक्तं अपूर्वादि द्वयैकैक, गुणेषु शमक. क्रमात् ॥ करोति विंशते शांतिं लोनाणुत्वच तन्नमं ॥ १ ॥

तिहां प्रथम संघयणवालोतो उपशमश्रेणी अपरिसमाप्ते एटले श्रेणीपूरीकस्या विना मरेतो पंचानुत्तरविमानेजाय अने जो पुष्ट आउखावालोहोय तेवली उपशांतमोहगुणे मोहनीय उपशमावे तिहां उपशमसम्यक्त्वहोय अने उपशमनाव चारित्रहोय ए बे उपशमनावना होय ए उपशमिक अवश्यपडे.

तडुक्तं शांतदृग् वृत्तमोहत्वादत्रौपशमिकानिधे ॥ स्यातां सम्यक्त्वचारित्रे नावश्चोपशमात्मक ॥ १ ॥ पततिचाय मवश्यं ॥ यत्त ॥ वृत्तमोहोदयं प्राप्योपशमीच्यवते तत. ॥ अध·कृतमलंतोयं पुनर्मालिन्यमश्नुते ॥ २ ॥ अपिच ॥ सुअ केवलि आहारग, उजुमइ उवसंतगाविहुपमाया ॥ हिंमति नव मणंत, तयणंतरमेव चउगइया ॥ ३ ॥

इहां शिष्यपूछेछे स्वामी उपशमिकने तेहिजनवे मोक्षहोय किवानहोय तेवारे गुरुकहेछेके होयपणखरुं तेकेमके सातलव अवशेषायुहोय एवो कोइ उपशमिक खंमश्रेणी करीनेज पाछोवले ते सातमेगुणगाणेआवीने वळी क्षपकश्रेणीपडिवजे ते शातलवमा क्षीणमोहीथइ अंतगडकेवलीथाय पण एटलोविशेषजे एकवारज उपशमश्रेणी पडिवज्योहोय ते क्षपकश्रेणीपामे अने क्षपकश्रेणीपण पमिवजे पण जे बे वखत उपशमश्रेणी पमिवज्योहोय तेने तेहिजनवे क्षपकश्रेणी नथाय

तडुक्त जीवोहु इक्क जम्ममि, इक्कसि उवसामग्गो ॥खयंपि कुज्जा नोकुज्जा॥ दो वारे उवसामगो ॥ १ ॥ उवसमसेणि चउक्कं, जायइ जीवस्स आनव नूण ॥ ता पुण दो एगनवे, खवग स्सेणी पुणो एगा ॥ २ ॥ उक्तंच सप्ततिका चूर्णौ ॥ जोदो वारे उवसम, सेढिंपमिवज्जइ तस्स नियमात्तम्मि नवे, खवगसेढि नहिजो इक्कसिं उवसमसेढि पमिवज्जइ तस्स खवगसेढि विहुज्जत्ति

ए कार्मग्रंथिकनो अनिप्रायछे अने आगमनो अनिप्रायत्तो आवीरीतेछे जे एक नवनेविषे एकजश्रेणी पडिवजे. यडुक्तं कल्पनाष्ये॥एव अप्परि वडिए, सम्मत्ते देव मणुअज्जम्मेसु ॥ अन्नयर सेढिवज्जं, एगनवेणच सवाइ ॥ १ ॥ सव्वाइ के० सर्व

देशविरत्यादिकहोय. अन्यत्राप्युक्तं ॥ मोहोपशमएकस्मिन् नवे द्विःस्यादसंततः ॥ यस्मिन् नवे उपशमः क्षयोमोहस्य तत्रतु ॥ १ ॥

इहां शिष्य पूछेछे कहोस्वामी संयतने अनंतानुबंधियानुं उदय निषेध्योछे तो तेनुउपशम केवीरीते घटमानथाय ए संसयदूरकरो गुरु कहेछे हे माहानुनावतेतो अनुनागकर्म अंगीकारकरीने निषेध्योछे पण प्रदेशकर्मआश्रीने निषेध्योनथी तेमाटे प्रदेश कर्मोदयनुं इहां उपशम जाणवो तेवारे फरी शिष्यबोल्यो जोतमे संयतने प्रदेशकर्मोदयनो उपशमकह्यो तो अनंतानुबंधिआना उदयथी दर्शननोविघात केम नथीयतु तेवारे गुरुकहेछे एना प्रदेशकर्मना मंद अनुनवपणामाटे तेम कोइकने अनुनागकर्मनो अनुनवपण अत्यंत विघात न करे जेम संपूर्ण मत्यादिक चतुर ज्ञानीने मत्यादि ज्ञानावरणोदय अत्यंत विघात नथी करतु इत्यादिक दृष्टांते दर्शननो विघात न थाय

तथाचान्यधायि परमगुरुणाः— जीवेणंनंते सयंकंमं कम्मंवेएइ गोयमा अछेगइयं वेएइ अछेगइयं नोवेएइ सेकेणठेणंपुछा गोयमा डुविहे पन्नत्ते तजहा पएसकम्मेय अणुनागकम्मेय तिछणंजं पएस कम्म ते नियमा वेएइ तिछणं जं अणुनागकम्मं तं अछेगइयं वेएइ अछेगइयंनोवेएइ इत्यादि हवे वली विशेषथी कांइक उपशमश्रेणीनुंज स्वरूप ग्रंथांतरथी कहेछे त्यां प्रथमथी अनंतानुबंधीनी उपशमना कहियेछें.

अविरति सम्यक्त्वदृष्टी देशविरती प्रमत्त अप्रमत्त ए माहेलो अन्यतमअन्यतमयोगनेविषे वर्त्ततो तेजोलेश्या पद्मलेश्या शुक्ललेश्या मांहे अन्यतमलेश्या सहीत साकारोपयोगे उपयुक्त सागरोपम कोडाकोडीमांहे स्थितिसत्कर्मकिरणकालथी पूर्वे पण अंतरमूहुर्त्तकाललगें अवदायमान चित्तसंतति एवो अवतिष्ठेतिम अवतिष्ठतोथको वली परावर्त्तमान प्रकृतिप्रते शुनजबांधे पण अशुननबांधे वलीजे अशुन प्रकृतिनुंरस चउगणुंहोय तेने बे गणुकरे अने जे शुनप्रकृतिनुरस बे गणुहोय तेने चउगणुकरे वली स्थितिबंधनेविषे पण पूर्णपूर्णथयेथके अन्यस्थितिबंधप्रते पूर्वपूर्वेस्थितिबंधनी अपेक्षाये पल्योपमासंख्येयनाग हीणोकरे.

ए प्रकारे करणकालथीपूर्वे अंतरमूहुर्त्तकाललगे रहीने तेवारपछी अनुक्रमे त्रण करणप्रत्येके अंतरमूहूर्त्तना तेप्रते करे ते आवीरीते जेम यथाप्रवृतिकरण अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरण वली चोथो उपशांतकाल तिहां यथाप्रवृत्तिकरणनेविषे प्रवेशकरतो प्रतिसमये अनंतगुणवृद्धि विशुद्धप्रवेशकरे वली तिहांपण पूर्वोक्त शुद्ध

प्रकृतिबंधादिकजकरे पण वली स्थितिघात रसघात गुणश्रेणी गुणसंक्रमण प्र तेनकरे केमके ते प्रतिसमय योग्य विशुद्धि नथी

वली नानाजीवनी अपेक्षाये असंख्येय लोकाकाशप्रदेशमान अध्यवसाय स्था नकहोय वली ठगण वडियाहोय बीजुं वली प्रथमसमयनी अपेक्षाये बीजासम यनेविषे अध्यवशायस्थानिक विशेषाधिकहोय तिहांथीपण त्रीजासमयनेविषे वि शेषाधिकहोय ए प्रकारे जिहालगें यथाप्रवृत्तिकरणनुं चरमसमयथाय तिहांलगें केवुं एम अपूर्वकरणनेविषे पण जाणवु एटलामाटेज ए अध्यवशायस्थानक स्था पतांथकां विषम चतुरस्र क्षेत्रप्रते आस्त्रणेव्यापे तेनी स्थापना

१२०००००००००००१६. इहां कल्पनाये वे पुरुष समकालें करण पडिवज्या
१०००००००००१५. विवक्षिये तिहा एक सर्वजघन्य विशोधि श्रेणी पडि
८०००००००००१४. वज्यो अने बीजो सर्वोत्कृष्टविशोधि श्रेणी पडिव
६००००००००१३ ज्यो तिहा पहेलाजीवने प्रथम समयनेविषे जघन्य
४०००००००११. विशुद्धि सर्वेथी अल्प जाणवी तिहांथी बीजासमयने
३००००००९ विषे जघन्यविशोधि अनंतगुणी तिहांथी त्रीजा समयने
२०००००७ विषे जघन्यविशोधि अनतगुणी ए प्रकारे त्यांलगे कहेवु जि
१००००५ हांलगे यथाप्रवृत्तिकरणना कालनो संख्यातमोभाग गयोहोय

तेवारपछी संख्येयभाग गयेथके चरमसमयनी जघन्यविशुद्धिना समीपथकी प्रथम समयनेविषे बीजाजीवनी उत्कृष्टीविशुद्धी अनतगुणी तेवारपछीपण जेमाटे जघ न्यविशुद्धि स्थानकथी निवर्त्यो तेवारपछी उपरलु जघन्यविशुद्धिस्थानक अनंतगुं णो तेवार पछी द्वितीय समयनेविषे उत्कृष्टी विशुद्धी अनंतगुणी तेथी ऊपलुंज घन्यविशुद्धि स्थानक अनंतगुणुं तिहांथी तृतीय समयनेविषे उत्कृष्टविशुद्धि अनंत गुणी ए प्रकारे ऊपरनुं वली केहलु एकेकु विशुद्धिस्थानक अनंतगुणपणे वे जीव ने तिहांलगे जाणवु जिहालगे यथाप्रवृत्तिकरणना चरमसमयनेविषे जघन्यविशु द्धि स्थानक तेथी शेष उत्कृष्टा जे विशुद्धिस्थानक अनुक्तरह्याछे ते निरतर अन तवृद्धे तिहांलगे जाणवा जिहांलगें चरमसमयनेविषे उत्कृष्ट विशुद्धिस्थानक ए यथाप्रवृत्तिकरण कह्यु

हवे अपूर्वकरण कहियेछे त्यां अपूर्वकरणनेविषे प्रतिसमये असंख्येय लोकाकाश प्रदेशप्रमाण अध्यवशाय स्थानकहोय प्रतिसमयवली ठगणवलियाहोय तिहांप्रथम समयनेविषे जघन्यविशुद्धि सर्वेथीथोडी तेवली यथाप्रवृत्तिकरणना चरमसत्क उत्कृ

ष्टविशुद्धिस्थानकथी अनंतगुणी तिहांथी प्रथमसमयनेविषेज जघन्यविशुद्धि अनंतगुणी तिहांथीपण तेहिज प्रथम समयने विषेज उत्कृष्टविशुद्धि अनंतगुणी

त्यांथी पण बीजासमयनेविषे जघन्यविशुद्धि अनंतगुणी त्यांथीपण तेहिज बीजासमयनेविषे उत्कृष्टविशुद्धि अनंतगुणी त्यांथीपण वली त्रीजासमयनेविषे जघन्यविशुद्धि अनंतगुणी ए प्रकारे जघन्य अने उत्कृष्टविशुद्धिस्थानक अनंतगुणवृद्धे त्यालगेंजाणवा ज्यालगें अपूर्वकरणना चरमसमयनेविषे जघन्यथी उत्कृष्टविशुद्धि अनंतगुणी. स्थापनाचेयं एअपूर्वकरणनेविषे प्रवेशकरतोजीव स्थितिघात रस
२५०००००००००२५ घात गुणश्रेणी गुणसंक्रम अने अन्यस्थितिबंध प्रते
२३००००००००२४ समकालें आरंभे त्यांस्थितिघात कहेतांछतां कर्मना अग्रि
२१०००००००२२ मनागथकी उत्कृष्टथी प्रभूतसागरोपम शतपृथक्त्व मात्र अ
१९००००००२० ने जघन्यथी पल्योपमसंख्येयभागमात्र स्थितिखंडनादलिकप्रते
१७०००००१८ खंडे वली हेठलीजे स्थिति खंडासे नही तिहांप्रक्षेपे अंतरमुहूर्त्त
कालें उकेरे (खंडे) पूर्वोक्तप्रकारेज वली निक्षेपे ए प्रकारे अपूर्वकरणना कालनेविषे घणास्थितिखंड सहस्रव्यतिक्रमें तेमछतापण अपूर्वकरणना प्रथमसमयने विषे जे स्थिति सत्कर्महतु ते तेनाज चरमसमयनेविषे संख्येयगुणहीनथयु ए स्थितिघातकह्यु.

हवे रसघात कहेछे अशुभप्रकृतिनाजे अनुभाग सत्कर्म तेना अनंतभाग प्रते मूकीने शेषअनुभागनुं अंतरमुहूर्त्तकालमां विनासकरे खपावीनाखे त्यांथी वली पण ते पूर्वें मूक्यो जे अनंत भाग तेनो पण अनंत भाग मूकीने शेष अनुभाग प्रते अंतरमुहूर्त काले खपाडे. एरीते अनेक सहस्र अनुभाग खंड ते एकस्थितिखंडनेविषे व्यतिक्रमे उलंघेतेस्थितिखंडनेसहस्रेअपूर्वकरणपरिसमाप्ति थायएरसघातकह्यु

हवे गुणश्रेणी कहेछे अंतरमुहूर्त्तस्थितिनी उपरलीजे स्थितिवर्त्तेछे तेमांथी दलिकलेइने उदयावलिकानी ऊपरली स्थितिमां प्रतिसमये असंख्यातगुणपणे निक्षेपे तद्यथा प्रथम समयनेविषे स्तोक बीजासमयनेविषे असंख्यातगुणु त्रीजा समयनेविषे असंख्यातगुणु एप्रकारे त्यांलगेजाणवुं ज्यांलगें अंतरमुहूर्त्तनो छेलो समय आवे ते अंतरमुहूर्त्त अपूर्वकरण अने अनिवृत्तिकरणना कालथकी किंचित्मात्र अधिकजाणवु ए प्रथमसमयनेविषे लीधांजे दलिक तेनो निक्षेपविधि एप्रकारें छे के द्वितीयादी समयग्रहीत दलिकनो पण निक्षेप कहेतो बीजुं गुणश्रेणी रचनाने अर्थे प्रथम समयनेविषे जे दलिक ग्रहीये तेथोडुं तेथीपण बीजा समयनेविषे असंख्यातगुणु तेथीपण त्रीजा समयनेविषे असंख्यातगुणु एप्रकारे त्यांलगें जाणवुं

ज्यांलगे गुणश्रेणी करवानुं चरमसमय आवे त्यांलगे, अपूर्वकरणना समयनेविषे वली अनिवृत्तिकरणना समयनेविषे अनुनवतांने अनुक्रमे क्षयपामतां गुणश्रेणी दलिक निक्षेपथाकते वेहुयेवली ऊपर वधेनही ए गुणस्थान कह्यु.

हवे गुणसंक्रम कहेछे अपूर्वकरणना प्रथम समयनेविषे अनंतानुबंधियादिक अशु नप्रकृतिना जे दलिक परप्रकृतिनेविषे संक्रमावे ते स्तोक तेवार पछी बीजा समयनेविषे परप्रकृतिमां असंख्यातगुणु संक्रमावे त्यांथीपण त्रीजासमयनेविषे असंख्यातगुणुं संक्रमावे ए प्रकारें त्यांलगेकहेवु ज्यांलगे छेहलो समयआवे, तिम अन्यस्थितिबंध कहेता अपूर्वकरणना प्रथमसमयनेविषे अन्यज अपूर्वस्थितिबंध आरंभिये स्थिति बंध अने स्थितिघात ए बे समकाले जे पुराथाय ते अन्यस्थितिबध जाणवु ए प्रकारे पांच पदार्थ अपूर्वकरणमां होय प्रवर्त्ते ए अपूर्वकरण कह्यु

हवे अनिवृत्तिकरण कहियेछे जेमा प्रवेश करनार सर्व तुल्यकालना धणीनुं एकज अध्यवसायस्थानिक होय ते आवीरीते के अनिवृत्तिकरणना प्रथमसमयेजे वर्तेछे अने जे वर्त्या अनेजे वर्तसे तेसर्वेनु एकजरूप अध्यवसायस्थानक होय तेमज बीजा समयनेविषेपण जे वर्त्या वर्तेछे अने वर्तसे तेपण सर्वेनु एकजरूप अध्यवसाय स्थानकहोय पण एटलोविशेषजे प्रथम समयनावी विशोधिस्थानकनी अपेक्षाये बीजा समयमा अनतगुणहोय ए प्रकारे त्यांलगे कहेवुं ज्यांलगें अनिवृत्तिकरणनो चरमसमयआवे एटला माटेज ए करणनेविषे पेठा तुल्यकालनाधणी जेप्राणी ते सर्वंधी अध्यवसाय स्थानिकने परस्पर निवृत्ति अने व्यावृत्तिनथी तेमाटेज एनु अनिवृत्तिकरण एवु नाम कहिये

वली ए करणनेविषे जेटलासमय तेटला अध्यवसाय स्थानकहोय पहेला बे अध्यवसायस्थानकथी आगला अध्यवसायस्थानक अनतगुणवृद्धहोय ए मुक्ताव लीने स्थाने स्थापवा इहांपणप्रथमसमयथी आरंभीने पूर्वोक्त पाचपदार्थ समकाले प्रवर्त्ते ए करणनाकालना असंख्याताभाग गयेथके एकभागथाकतेथके अनंतानुबंधियानेहेतुं आवलीकामात्रमूकीने अंतरमूहुर्त्तप्रमाण अंतरकरणप्रतें अभिनवस्थिति बंधाद्धासमान अंतरमूहुर्त्तप्रमाण कालेंकरे

वली अंतरकरण सत्कदलिक उत्कीर्यमाण बंधाद्धानी परप्रकृतिमां प्रक्षेपे प्रथमस्थितिगतदलिक आवलिकामात्र वेद्यमान परप्रकृतिमाहे स्तवुक संक्रमावे अंतरकरणकरेथके द्वितीयसमयनेविषे अनंतानुबंधीयानी उपरली स्थितिनुंदलिक उपशमाववाने अर्थे आरंभे

ते आवीरीते प्रथमसमये स्तोक उपशमावे तेथी द्वितीयसमयें असंख्यातगुणु वली तृतीयसमये असंख्यातगुणु एम ज्यांलगें अंतरमूहूर्त्तनुंकाल त्यांलगेंकहेवुं एटलेकाले सर्व अनंतानुंबधिया उपशम्या उपशमिताते शुंकहियें जेमरेणुनु निकर एटले समूहते पाणीनाबिंदुआना समूहे सिंच्यो घणादिके कूटयो निस्पंदहोय तेम कर्मरेणुनुं समूहपण विशोधिरूप सलिलप्रवाहे सिंचीने अनिवृत्तिकरणरूप घणथी कूटचोथको संक्रमण उदय उदीरणा निधत्त निकाचना एटला कारणोने अयोग्यथाय एप्रकारे केटलाक अचार्योंना मते अनंतानुबंधीयानी उपशमनाकही

वली बीजातो एमपणकहेछे के अनंतानुंबंधीयानी उपशमनानहोय पण विसंयोजना एटले क्षपणाहोय ते आवीरीते इहां श्रेणी अणपडिवज्यापण अविरति तथा विरति चारेगतीवालालेवा ते आम – जेम नारकी तथा देवताते अविरतिसम्यक्दृष्टी अने तिर्यंच तथा मनुष्यतेमां अविरति सम्यक्दृष्टी तथा देशविरतिसम्यक्दृष्टी अथवा सर्वविरति ते अनतानुं बंधियानी विसंयोजनाने अर्थे यथा प्रवर्त्यादिक त्रणकरणकरेते करणीनी वक्तव्यता सर्व पाछलकह्याप्रमाणे जाणवी पण इहा एटलो विशेषजे अनिवृत्तिकरणमां प्रवेश कस्योथको अंतरकरण करेनही. उक्तंच कर्मप्रकृतौ॥चउगइया पज्जत्ता, तिन्निविसंजोयणे विसंजोयं ॥ तिकरणहित्तीहिसहिया, नंतरकरणं उव समोवा ॥ १ ॥ एनी अक्षरगमनिका चारगतीना नारकी तिर्यंच मनुष्य देवता सर्व पर्याप्तियेअपर्याप्ता एवां अविरति देशविरति अने सर्वविरतिए त्रणेमां अविरति सम्यक्दृष्टी तो चारेगतीना तथा देशविरति तिर्यंच अथवा मनुष्य अने सर्वविरति तो मनुष्यज संयोजनना अनंतानुबंधीयाप्रते विसंयोजे एटले विनाशे ते यथाप्रवृत्तिकरण, अपूर्वकरण, अनिवृत्ति बादरेसहितथको विनासे पण इहां एटलो विशेषजे एक अंतरकरण न कहेवुं अथवा उपशम न कहेवो एटले उपशम अनंतानुबंधियानो न होय पण कर्मप्रकृति अनिहित स्वरूपे उद्वलना संक्रमणे करीने हेतु आवलिकामात्र प्रते मूकीने उपर निरविशेष अनंतानुबंधियानु विनाशकरे अने आवलिकामात्रतो स्तिवुकसंक्रमे करीने वेद्यमान प्रकृतिने संक्रमावे एटले अनतानुबंधियानी विसंयोजनाकही

हवे दर्शनत्रिकनी उपशमना कहियेछे तेमां मिथ्यात्वनी उपशमना मिथ्यादृष्टीनेहोय सम्यक्त्वनी तथा मिश्रनी उपशमना वेदक सम्यक्दृष्टिनेजहोय, तेमां मिथ्यादृष्टीने मिथ्यात्वनी उपशमना प्रथम सम्यक्त्व उपजावतानेहोय ते आवीरीते.– जे संज्ञीसर्वपर्याप्तिये पर्याप्तो करणकालथीपूर्वेंपण अंतरमुहूर्त्तकालसुधि प्र

तिसमयें अनंतगुणवृद्धिविशुद्धीए प्रवर्द्धमान अनव्यसिद्धिक विशुद्धिनी अपेक्षायें अनंतगुण विशुद्धिसहीत मतिअज्ञान श्रुतअज्ञान अने विनंगज्ञान एमाहेलो अन्यतम साकारोपयोग तेनो उपयोगी अन्यतम योगनेविषे वर्त्तमान जघन्यपरिणामे तेजोलेश्यानेविषे मध्यमपरिणामे अने पद्मलेश्यानेविषे उत्कृष्टपरिणामे शुक्ललेश्यानेविषे वर्त्ततो मिथ्यादृष्टी चारेगतीमाहेलो नारकी तिर्यंच मनुष्य अथवा देवता सागरोपमकोडाकोडीमांहे जेने कर्मस्थितिनी सत्ताछे तेने मिथ्यात्वनी उपशमना प्रथमसम्यक्त्वउपजावतो होय इत्यादिक पूर्वोक्त त्यांलगेंकहेवुं ज्यालगे यथाप्रवृत्तिकरण अने अपूर्वकरण परिपूर्णहोय त्यांलगे, पण इहां एटलोविशेष जे अपूर्वकरणमां गुणसंक्रम न केवो तोसुंकेवो स्थितिघात, रसघात स्थितिबंध गुणश्रेणी एटलावानाज केवा गुणश्रेणीनी रचनापण उदय समयथी आरनीने जाणवी तेवारपछी अनिवृत्तिकरणनेविषे पण एमजकहेवु अनिवृत्तिकरणकालनां संख्यातानाग गयेथके अने एक संख्यातमनाग अवशेषरहेथके अंतरमूहुर्त्तमात्र हेतुंमूकीने मिथ्यात्वनुं अंतरकरण अंतरमूहुर्त्तमात्र प्रमाण प्रथम स्थितिथी कांइक समधिक अथवान्यून अनिनवस्थिति बंधाध्धासमान अंतरमूहुर्त्तकालेकरे अंतरकरणसत्क वली दलिकप्रतें उकेरीने प्रथमस्थिति अने द्वितीयस्थितिमा प्रक्षेपे प्रथमस्थितिनेविषे प्रवर्त्ततो उदीरणाप्रयोगेकरीने जे प्रथमस्थितिगत दलिकछे तेने समाकर्षिने उदयनेविषे प्रक्षेपे ते उदीरणा अने वलीजे द्वितीयस्थितिना पासाथी उदीरणाप्रयोगेज दलिकाकर्षिने उदयनेविषे प्रक्षेपेए उदीरणापण पूर्वसूरिये विशेषप्रतिपत्तिनेअर्थें आगालइत्युच्यते एवुकहिये

उदय उदीरणायेकरीने प्रथमस्थितिप्रतें अनुनवतो त्यांलगेंगयो ज्यांलगे आवलिकाद्यविशेषरहेछे तेरहेथके आगलव्यवछेदोये तेवारपछी केवलउदीरणाज प्रवर्त्ते तेपणत्यालगे ज्यालगें शेष आवलिकानहोय अने आवलिकाशेषहोय तेवारे उदीरणापण निवर्त्ते तेवारपछी केवल उदयआवलिकामात्र अनुनवे आवलिकामात्रना चरमसमयनेविषे वली द्वितीयस्थितिगत दलिकप्रते अनुनागनेदेकरीने सम्यक्त्व मिश्र मिथ्यात्व ए त्रणप्रकारेकरे

उक्तंच कर्म्मप्रकृतिचूर्णौ ॥ चरमसमय मिछदिठीसेकाले उवसमसम्मदिठीहोहीइ ताहेविइयविइ तिहाणुनागंकरेइ तंजहा सम्मत्तसम्मामिछत मिछत्तं चेति स्थापना एएए तिवारपछी अनतरसमयनेविषे मिथ्यात्वनाउदयना अनावथी उपशमिक सम्यक्त्व पामे

उक्तंच कर्म्मप्रकृतौ मिछ्चुदयेखीणे, जइए सम्मत्त मोवसमियंसो ॥ लंनेण ज स्स लप्नइ, आयहिय मलद्द पुवंज ॥ १ ॥ अन्यत्राप्युक्तं जात्यंधस्ययथापुंसश्चक्षु र्न्मीनेशुनोदये ॥ सद्दर्शनं तथैवास्य, सम्यक्त्वेसतिजायते, ॥१॥ आनंदो जायतेऽत्यंतं सात्विकोस्य महात्मनः ॥ स द्व्याध्यपगमेय द्व्याधितस्य सदौषधात् ॥ २ ॥ ए प्रथ म सम्यक्त्वनुं लान मिथ्यात्वना सर्वोपशमनथकी थाय उक्तच सम्मत्तपढमलंनो, सव्वोवसमाइति ए सम्यक्त्व पडिवजतो कोइकतो देशविरतिसहित पडिवजे अने कोइक सर्वविरति सहित पमिवजे.

उक्तंच पंचसंग्रहे ॥ सम्मत्तेणं समगं, सव्वंदेसंच कोविपमिवज्जे ॥ बृहछतक बृह च्चूर्णावप्युक्तं उवसम सम्मदिठी, अंतरकरणे ठिउ कोइ ॥ देसविरइं पिलहेइ, कोइ पमत्ता पमत्त नावपि ॥ १ ॥ ससाणो पुणनकिपिलहेइति तेमाटे देशविरति प्रमत्त अप्रमत्त संयतनेविषेपण मिथ्यात्व उपशांतलाने.

हवे वेदकसम्यक्दृष्टीनेविषे त्रण दर्शनमोहनीयनी उपशमना विधिकहियें ठे इहां वेदक सम्यक्त्वदृष्टीजीव संयमनेविषे प्रवर्त्ततोथको अंतरमूहुर्त्तमात्रकालें दर्शनत्रिकउपशमावे ते उपशमावताने वली करणत्रिकादिकनी विधि जेम कर्म्म प्र कृतिनीटीकामां कहीठे तेमज जाणवी

एम उपशांतदर्शनमोहनीयत्रिक चारित्रमोहनीयने उपशमाववा वांठतो वली पण यथाप्रवृत्यादिक त्रणकरणेकरी उपशमावे ते करणनुस्वरूप पूर्वनीपरेंजाणवुं पण केवल इहा यथाप्रवृत्तिकरण ते प्रमत्तगुणठाणे जाणवुं तेमज अपूर्वकरण अपूर्वगुणठाणे अने अनिवृत्तिकरण अनिवृत्तिबादरगुणठाणे तथा सूक्ष्मसंपरायगु णठाणे जाणवुं इहा पण स्थितिघातादिक पूर्वनीपरे प्रवर्त्ते पण एटलोविशेष जे इहा सर्व अशुनप्रकृति अबध्यमाननो गुणसंक्रम प्रवर्त्ते एम कहेवुं अपूर्वकरणका लनो संख्यातमोनाग गयेथके निद्राप्रचलाना बंधनो व्यवछेद होय तेवारपठी प्रनूत स्थितिखंम सहस्र गयेथके अपूर्वकरण कालना संख्यातानाग गया होय एक अवशेष रह्योहोय वली इहा अतराले देवगति देवानुपूर्वी पंचेंद्रियजाति वै क्रियशरीर वैक्रियांगोपाग अहारक शरीर अहारकांगोपाग तेजस कार्मण समचतु रस्त्र वर्णचतुष्क अगुरुलघु उपघात पराघात उश्वास त्रस बादर पर्याप्त प्रत्येक प्रशस्तविहायोगति स्थिर शुन सुनग सुस्वर आदेय निर्माण तीर्थंकर असंज्ञी ए त्रीसप्रकृतिनुं बंध व्यवछेद थाय.

तेवार पठी स्थितिखंम पृथक्त्व गयेथके अपूर्वकरण कालना चरमसमयनेविषे

हास्य रति नय जुगुप्सानो बंधव्यवछेद थाय हास्य रति अरति शोक नय जुगुप्सा नो उदय होय सर्वकर्मना देशोपशमना निधत्त निकाचनाकरणनो व्यवछेदहोय.

त्याथी अनंतर समयनेविषे अनिवृत्तिकरणमा प्रवेश करे त्यापण स्थितिघाता दिक पूर्वनीपरेकरे तेवारपछी अनिवृत्तिकरणकालना संख्याताभाग गयेथके दर्शन सप्तकविना शेष मोहनीयनी एकवीसप्रकृतिनुं अंतरकरण करे त्यां चार संज्वलन माहेलो अन्यतमवेद्यमान संज्वलननो अने त्रण वेदमाहेलो अन्यतमवेद्यमान वेदनी पहेली स्थिति स्वोदय कालप्रमाण ए बे काढतां शेष एकादश कषाय अने आठ नोकषायनी आवलिकामात्र पोताना उदयकाल प्रमाण वली चारसंज्वलना अने त्रण वेदछे तेमा स्त्रीवेद नपुंसकवेदनो उदयकाल सर्वस्तोक स्वस्थाने वली मा होमाहेतुल्य तेथी पुरुषवेदनो सख्येयगुणो तेथी संज्वलनना क्रोधनो विशेषाधिक तेथी सज्वलनना माननो विशेषाधिक तेथी सज्वलननी मायानो विशेषाधिक तेथी संज्वलनना लोभनुं विशेषाधिक एम इहा अनिवृत्तिकरणनेविषे घणु कहेवु छे ते ग्रंथगौरवना नयथी नथी कहेता केवल विशेषार्थे कर्मप्रकृतिनी टीकाजोवी

वली अंतरकरण करीने तेवारपछी नपुंसक वेदने अंतरमुहूर्तमात्रमा उपशमा वे तेवारपछी अंतरमुहूर्त्तमात्रे स्त्रीवेदने उपशमावे तेवारपछी अंतरमुहूर्तमात्रे हा स्यादिषट्क उपशमावे ते समयनेविषे पुरुषवेदनो बंध उदय उदीरणानो व्यवछेद थाय तेवारपछी समयऊण आवलिकाद्वये पुरुषवेदने उपशमावे तेवारपछी सम कालें अंतरमुहुर्त्तमात्रे अप्रत्याख्याना वरण प्रत्याख्यानावरण ए बे क्रोधने उपशमावे तेवारपछी तदुपशांतेवली ते समयेज संज्वलनना क्रोधना उदय उदीरणानो व्य वछेद होय पछी समयऊण आवलिकाद्विके सज्वलननाक्रोधने उपशमावे तेवार पछी अंतरमुहुर्त्तमात्रे अप्रत्याख्यानावरण प्रत्याख्यानावरणनुं मान समकालें उप शमावे ते उपशमेथके वलीते समयेज संज्वलनना मानना बंध उदय उदीरणा नो व्यवछेदहोय तेवारपछीवली समयऊण आवलिकाद्विके संज्वलनामानने उ पशमावे तेवारपछी समकालें अंतरमूहुर्त्तमात्रे अप्रत्याख्यानावरण प्रत्याख्यानावर ण ए बे मायाने उपशमावे तदुपशांतेवली ते समयेज सज्वलननी मायानो बंध उदय उदीरणानो व्यवछेदहोय तेवारपछीवली समयऊण आवलिका द्विके संज्वलननीमायाने उपशमावे तेवारपछी समकाले अप्रत्याख्यानावरण प्रत्याख्याना वरण ए बे लोभने उपशमावे ते समयेज सज्वलनना लोभनो बंध उदय उदीरणानो व्यवछेद थाय तेवारपछी संज्वलना लोभने उपशमावतो

तेना त्रण जाग करे तेमांथी बे जागने समकाले उपशमावे त्रीजा जागना संख्या ताखंम करे तेपण जूदे जूदे कालन्नेदें उपशमावे वली संख्याता खंमना किट्टीएवुं अपरनाम ले तेना चरमखंमना असंख्याता खंमकरी सूक्ष्मकिट्टी एवुं अपरनामकरे

तेवारपढी समय समयनेविषे एकेको खंमकरे ते उपशमावे इहांवली दर्शनस प्तक उपशमेथके निवृत्तिबादर एवुंनामकहिये त्यांथी ऊंचु अनिवृत्तिबादरकहियें ते ज्यांलगें लोजनो असंख्येय अंतिम चरमखंमआवे त्यांलगे कहिये. ए अठावीसन्नेदें जिन्नमोहनीयनी उपशमनाकही.

हवे गाथानोअर्थ विवरियेछे इहां बन्नेश्रेणीना स्वरूपमां प्रथम उपशमश्रेणीनुं स्वरूपकहेछे उपशमश्रेणीनुं प्रारंजक अप्रमत्तसंयमी ज होय अने बीजातो एमकहे छेके अविरति देशविरति प्रमत्त अप्रमत्त ए माहेलो गमेतेहोय अने श्रेणीपरिस माप्ते पण श्रेणीथी पडे तेवारे वली पाछो अविरति देशविरति प्रमत्त अप्रमत्त ए माहेलो अन्यतम गमेते होय. ते पहेलो समकाले अनंतानुबंधिया क्रोध मान माया लोजने उपशमावे तेवारपढी मिथ्यात्व तथा सम्यक्मिथ्यात्व अने संम्यक् दर्शन ए त्रण समकाले उपशमावे तेवारपढी अनुदीर्ण पण नपुसकवेद उपशमावे तेमां जो पुरुष प्रारजक होय तो प्रथम नपुंसकवेद पढी स्त्रीवेद पढी हास्यषट्क उपशमावीने पढी पुरुष वेद उपशमावे.

अने जो स्त्री प्रारंजिका होय तो प्रथम नपुंसकवेद पढी पुरुषवेद पढी हास्यादि षट्क पढी स्त्रीवेद उपशमावे अने जो नपुंसक प्रारजक होय प्रथम ए अनुदीर्ण पण स्त्रीवेद उपशमावे पढी पुरुषवेद पढी हास्यादि षट्क तेवारपढी नपुसकवेद उपश मावे पढी बे क्रोध एकांतरीत संज्वलन विशेष क्रोधांतरित सदृशतुल्य उपशमावे.

एटले एनो ए अर्थछे जे अप्रत्याख्यानावरण प्रत्याख्यानावरण ए बे क्रोध क्रोध पणे सरखा समकालें उपशमावे तेवारपढी एकलो संज्वलननोक्रोध उपशमावे प ढी अप्रत्याख्यानावरण प्रत्याख्यानावरण ए बेमान शमकालें उपशमावे पढी संज्वल ननुंमान उपशमावे पढी अप्रत्याख्यानावरण प्रत्याख्यानावरण ए बे मायाने सम काले उपशमावे पढी संज्वलनीमाया उपशमावे पढी अप्रत्याख्यानावरण प्रत्या ख्यानावरण ए बे लोज समकाले उपशमावे तेवारपढी संज्वलननुं लोज उपश मावे इहां उपशमश्रेणीनी स्थापनाकरवी.

इहां चर्चकपूछेछे के कहोजी संज्वलनादिकने उपशमघटेछे पण अनंतानुबं धियाने तो सम्यक्त्व प्राप्तिथई त्यांज उपशमाव्याछे तो इहांअनंतानुबंधियानुं उ

पशम केम घटमानथाय हवे गुरु उत्तरकहेछे दर्शनपमिवजतां त्याअनंतानुबंधिया नो क्षयोपशमहतो अने इहांतो उपशमछे तेमाटे विरोधनथी वली शिष्यबोल्यो क्षयोपशम अने उपशममा शोविशेषछे गुरुकहेछे ज्यां क्षयोपशमछे त्यांतो उदीरणानु क्षय अने अनुदीरणानु विपाकानुजवनी अपेक्षाये उपशमछे अने वली प्रदेशानुज वथीतो उदयछेज अने उपशमनेविषेतो प्रदेशानुजवपणनथी. यदाह्पीयूषपाथोधि· वेएइसंतकम्मं, खउवसमिए ब्रनाणुजावसो ॥ उवसंत कसाउ पुण, वेएइ नसत कम्मपि ॥ १ ॥ अन्यत्राप्युक्तं उवसंत कम्मज, नतउ कड्डेइ नदेइ उदएवी ॥ नय गमयई परमगइ, नचेवउकड्डएततु ॥ १ ॥ एगाथानो लेशमात्रअर्थ कहेछे सर्वोप शमेजे उपसम्युं ते मोहनीयकर्मछे बीजाकर्मने सर्वोपशमनथी सव्वोवसमो मोहस्स चेवेति वचनात् तेनुं अपकर्षण पण नथाय.

एटले मोहनीयकर्म अपवर्त्तनाकरणेकरीने स्थितिरसेकरी हीनपण कोइ करीश केनही अपिशब्दने निन्नक्रमपणामाटे उदयेपण ते दिये एटले ते वेदेपणनही उ पलक्षणथी उदयने अविनाजावी उदीरणाने विषेपण नदीये एपणजाणवु

वली बध्यमान सजातीय परप्रकृतिप्रते संक्रमणकरणेकरीने नगमें संक्रमावे प णनही वली तेकर्मउपशमाव्युंयकु उत्कर्षपणनही एटले उद्वर्त्तनाकरणेकरीने स्थि तिरसेकरी वधारेपणनही निधत्ति निकाचन तो पूर्वे अपूर्वकरणकालेज निवृत्तिछे तेमाटे इहां उपशांतपणे तेनु निषेध नकरीये इहा शिष्यपूछेछे कहोजी संयतने अ नंतानुबंधियानुं उदय निषेध्योछे तो तेनुं उपशम केवीरीते घटमानथाय? तेवारे गु रुकहेछे के तेतो निश्चे अनुनागकर्म अंगीकारकरीने तेनुं उदयनिषेध्योछे पण प्रदेश कर्मआश्रीने अनंतानुबंधियानुं उदय निषेध्योनथी तथा चान्यथापि परमगुरुणा जीवे णजते सयंकमं कम्म वेएइ गोयमा इत्यादिक पाठपूर्वे एज तवनमां कहीगया छैये

तेमाटे इहा प्रदेशकर्मानुजवना उदयनो उपशमजाणवो तेवारे वली शिष्यबो ल्यो जो एमसंयतने अनतानुबधियानो उदयहोय तो तेथी दर्शननो विघातकेमन थाय गुरुकहेछे प्रदेशकर्मनुं मद अनुजवछे तेथी दर्शननो विघातनथाय तेम कोइ कने अनुजागकर्मानुजवेपण अत्यंत विघात नकरे जेम सपूर्ण मत्यादि चतुर्ज्ञानी ने मत्यादि ज्ञानावरणोदय विघातनथी करता तेम जाणवो तेवारपछी सूक्ष्मलो न चरम किट्टिनो उपशम थयेथके सज्वलननो लोज उपशांतथाय. यडुक्तं अणदं स नपुसि छीवेय छक्कंच पुरिस वेयंच ॥ दोदोएगं तरिए, सरिसे सरिसं उवसमेइ ॥ १ ॥ ते समयेज ज्ञानावरण पंचक दर्शनावरण चतुष्क अंतराय पचक यश

कीर्त्ति उच्चैर्गोत्र एटली प्रकृतीनोबंध व्यवच्छेदथाय तेथी अनंतर समयनेविषे ए उपशांत कषाय गुण होय ते जघन्यथी एकसमयमात्र अने उत्कर्षथी अंतरमूहुर्त्तकाळ लगे. तेथी ऊर्ध्व नियमा ए उपशामक अवश्यपडे, तेपडवुं बे प्रकारेछे एक नवने क्षये बीजुं काळनेक्षये त्यांनवक्षय मरतानेहोय अने काळक्षय उपशांतनो काळ पूर्णथये होय जे काळक्षयें पडेतेतो जेम चढयो तेमजपडे ज्यांज्यां बंधउदय उदी रणा व्यवछिन्नछे त्यांत्यांपडतोथको तेपाछा आरनीयें एटलालगेपडतो थको क्यां लगेपडे ज्यांलगे प्रमत्तसंयतगुणठाणोछे त्यांलगेपडे वली कोइकतो तेथीपण हेठ ला बे गुणठाणेजाय अने कोइक सास्वादन नावपणपामे.

वली जे नवक्षयेपडे ते प्रथमसमयेज सर्व बंधनादिक करणप्रवर्त्तावे ते करणना ना मकहेछे बंधन संक्रमण उद्वर्तना अपवर्त्तना उदीरणा उपशमना निधत्ति निकाचना.

हवे ए बंधनादिक आठेना अर्थ कहेछे कम्मपुग्गलने जीवना प्रदेशसाथे अ ग्निलोह पिंमनीपरे अन्योन्य मलवुं ते बंधन कहिये वली प्रकृति स्थिति अनुनाग प्रदेशने अन्यकर्मरूपपणे रह्याछे तेने अन्यकर्मरूपे व्यवस्थापन करवुं ते संक्रमण कहिये तथा जे स्थिति अने अनुनागनुं वधारवुं ते उद्वर्त्तना कहिये अने स्थिति तथा अनुनागनुं घटाडवुं ते अपवर्त्तना कहिये तथा जे कर्म पुग्गलने अकालप्राप्त ने उदयावलिकानेविषे प्रवेश न करवु ते उदीरणा कहिये वली कम्मपुग्गलने उदी रणा निधत्ति निकाचना करणने अयोग्यपणे व्यवस्थापवुं ते उपशमना कहिये तथा उद्वर्तना अपवर्त्तना ए बे करण मूकीने बीजाकरणने अयोग्यपणे व्यव स्थापवु ते निधत्ति कहिये समस्त कर्मने अयोग्यपणे व्यवस्थापन करवु ते निका चनाकहिये एटले आठकरण माहेलो कोइ करण न लागे ते निकाचनाकहिये.

यडुक्तं कर्मप्रकृतिवृत्तौ॥बंधण संकमणु व्वट्टणाय अपवट्टणा उदीरणया ॥ उव सामणा निहत्ति, निकायणा चित्ति करणाइं ॥ १ ॥ तत्रबंधोनामकर्म पुग्गलानां जीवप्रदेशैः सहवन्ह्यस्पिंमवदन्योन्यानुगमः १ संक्रम प्रकृतिस्थित्यनुनागप्रदे शाना अन्यकर्म्मरूपतयास्थितानामन्यकर्म्मरूपेण व्यवस्थापन २ स्थित्यनुनाग योर्बृहत्करण मुद्वर्तना ३ तयोरेव न्हस्वीकरणमपवर्तना ४ कर्म्मपुग्गलानामका लप्राप्तानामुदयावलिकाया प्रवेशनमुदीरणा ५ कर्म्मपुग्गलानामुदीरणानिधत्तिनिका चनाकरणायोग्यत्वेनव्यवस्थापनमुपशमना ६ उद्वर्तनाऽपवर्तनावर्ज्जशेषकरणा योग्यत्वेन व्यवस्थापनं निधत्ति ७ समस्तकरणायोग्यत्वेन व्यवस्थापनंनि काचना ८ इति करणाष्टकस्वरूपं प्रकृतिवृत्तिगत स्थानांगवृत्तावपि संक्रमण

स्वरूपं त्वेव यांप्रकृति बध्नाति जीवस्तदनुनावेन प्रकृत्यंतरस्थं दलिकं वीर्यविशेषे ण यत्परिणमयति ससंक्रम. तत्रप्रकृतिसंक्रम' सामान्यलक्षणावगम्यः मूलप्रकृती ना मुत्तरप्रकृतीनां वास्थितेर्य्यदुत्कर्षणमपकर्षण वा प्रकृत्यंतरस्थितौवा नयनं सस्थितिसंक्रम अनुनागसंक्रमोप्येव मेव यत्कर्म्मद्रव्यमन्य प्रकृति स्वनावेन परिणामेन परिणम्यते सप्रदेशसंक्रम कर्म्मणि कर्म्मांतरानुप्रवेश. संक्रम करणात् उक्तंच मूलप्रकृत्यनिन्ना संक्रमयति गुणतउत्तरा प्रकृती' ॥ नचात्मा मूर्तत्वादध्यव सायप्रयोगेण १ तथा मतांतर ॥ मोत्तूण आउअंखलु, दंसणमोहंचरीत्तमोदंच ॥ सेसाण पयडीण, उत्तरविहिसंकमोनणिउं ॥ २ ॥

उत्कृष्टथी एक नवनेविषे बेवार उपशमश्रेणी पडिवजे तेने नियमा ते नवने विषे क्षपकश्रेणी न होय अने जे एकवार उपशमश्रेणी पडिवजे तेने क्षपकश्रेणी पण होय उक्तंच सप्ततिकाचूर्णौ जोदोवारे उवसम, सेढिपडिवज्जई तसानियमा॥तंमि नवेखवग,स्से ढीनहिजोइक्कस्सिं॥१॥उवसम सेढिंपडिवज्जइ, तस्सखवगसेढिहुज्जत्ति॥

ए कर्मग्रंथीनो अनिप्राय कह्यो अने सिद्धांतानिप्रायेतो एकनवमां एकजश्रेणी पडिवजे. उक्तंच कल्पाध्ययने॥ एव अप्पडिवडिए, सम्मत्ते देव मणुअ जम्मसुरा॥ अन्नयर सेढिवज्जं, एगनवेणंच सवाई ॥ १ ॥ इहा सवाइके० सर्वं सम्यक्त्वि देश विरत्यादिक अन्यत्राप्युक्तं मोहोपशम एकस्मिन् नवेद्वि' स्यादसंतत.॥ यस्मि न् नवेतूपशम. क्षयोमोहस्य तत्रनश्यति उपशमश्रेणि.

हवे क्षपकश्रेणीनुं स्वरूपकहेछे इहां क्षपकश्रेणीनुं पडिवजणहार मनुष्य आव वर्षथी उपरनो अविरत्त देशविरत्त प्रमत्त अप्रमत्त ए माहेलो कोइ अन्यतम अत्यं त विशुद्धपरिणामि उत्तम संघयणवालो पूर्वनोजाण अप्रमत्त शुक्लध्यानोपगते पण पडिवजे अने बीजातो धर्मध्यानोपगतेंज पडिवजे एमकहेछे पडिवजवानुं अनुक्र म कहेछे अविरति देशविरति प्रमत्तसंयत अप्रमत्तसंयत ए माहेलोकोइ अन्यतम प्रथम अंतरमूहुर्त्ते अनंतानुबंधियानी चोकडी समकाले खपावे तेनो अनंतमना ग मिथ्यात्वमांसक्षेपीने तेवारपछी मिथ्यात्व तदंशेसंघातेज समकाले खपावे जेम अतिसंभृत दावानल निश्चे अर्द्धदग्धं इंधणातरपामिने वेउनेबालेछे तेरीते ए क्षपक, पण तीव्रशुनपरिणाम पणाथी सावशेष अन्यत्र प्रक्षेपीने खपावे'एमज वली स म्यक्त्व मिथ्यात्व, पण खपावे तेवारपछी एजअनुक्रमे सम्यक्त्वनेपण खपावे वली सम्यक्त्वनो चरमस्थितिखम्ड उत्कीर्णथके ए क्षपककृतकरण एवु कहिये एकृतक रणाद्धानेविषे वर्त्ततो कोइक कालपण करीने चारगतिमाहे अन्यतमगतिये उपजे.

वली लेश्यानेविषे पण पूर्वें शुक्ललेश्यानेविषे हतो अने हमणा अन्यतम ले श्यानेविषेजाय तेमाटे प्रस्थापक मनुष्य अने निष्टापक चारेगतिनेविषेहोय. उक्तंच पठवयगोय मणुस्सो, निठवगो चउसुविगईसु, इहांजो बद्धायु क्षपकश्रेणीप्रते आ रंजे तो अनंतानुबंधियाना क्षयथी अनंतरमरण संजवतो व्युपरमेंविरमे तेवारप ठी कदाचित् मिथ्यात्वनाउदयथी वली अनंतानुबंधियाने उपचिणे पाठा आरंजे केमकेअनंतानुबंधिनुं बीजजे मिथ्यात्व ते हजी विनाश पाम्युं नथी माटे अने जेणे मिथ्यादर्शन क्षयकर्युंठे ते उपचिणेनही अनंतानुबंधिया फरीपाठा प्रारंजेनही एट ले अनंतानु बंधियानु बंधकरेनही केमके मिथ्यात्वरूप बीज नथी तेमाटे

वली क्षीणसप्तक तो अप्रतिपतित परिणाम माटे अवश्यदेवतामां उप जे अने प्रतिपतित परिणामतो वली नानापरिणाम संजवे तेमाटे जेवो परिणाम होय तेवी चारेगतिमाहेली अन्यतमगति उपजे. उक्तंच बद्धाऊ पडिवन्नो, पढम क सायरकए जइमरिज्जा ॥ तोमिछत्तोदयउ, विणिज्ज जूउन खीणमि ॥१॥ तंमिमऊजाइ दिवं, तप्परिणामोय सत्तए खीणे ॥ उवरय परिणामोपुण, पच्छानाणा मईगइउ॥२॥ बद्धायुपण जो तिवारेकालनकरे तोपण सप्तकक्षीण थयो थको नियमारहे पणव ली चारित्रमोहनीय खपाववाने यत्न नकरे उक्तंच बद्धाऊ पडिवन्नो, नियमा खीणं मि सत्तएगाइत्ति. इहां कोइपूछेजे मिथ्यादर्शनादिकनो क्षयथयो तेवारे ए क्षपकने सम्यक्त्व रहीत कहियें किंवा सम्यक्त्वसहीत कहीये त्यारेगुरुबोल्या सम्यक्दृष्टीज कहियें फरी परबोल्यो जे कहोजी सम्यक्दर्शननो परिक्षयथयो तो सम्यक्दृष्टीपणुं क्यायीहोय फरी गुरुकहेठे मयणालाटाली चोखाकर्या एवाजे कोडवा ते समान अपनीत मिथ्यात्वजाव एवा मिथ्यात्वना पुजल तेहिज सम्यक्दर्शन कहिये तेने प रिक्षयेवली तत्वश्रद्धान लक्षण परिणाम पम्योनथी तेमाटे साहमु श्लक्ष्णात्त्रप टल टलवाथी चक्षुदर्शननीपरे विशुद्धितरहोय.

यदाह जाष्यसुधांजोधिः ॥ खीणमिदंसणतिए, किहोइ तउनिदंसणाईए ॥ जन्नइ सम्मदिठी, सम्मत्तखए कउ सम्मं ॥ १ ॥ तिविलीय मयण कुद्दव, रूवंमिछत्तमेव सम्मत्तं ॥ खीण तउंजोजावो, सद्दहणा लरकणोतस्स ॥ २ ॥ यदिवा ॥ जह सुद्ध जलाणुगयं, सुद्धं सुद्धं जलरकएसुतरं ॥ सम्मत्त सुद्ध पुग्गल, परिरकए दंसणं ए व ॥ ३ तम्मिय तइय चउछे, जवमि सिऊंति खइय सम्मत्ते ॥ सुरनर जुगली सु गई, इमंतु जिण कालिय नराणं ॥ ४ ॥

ए प्रकारे क्षीणसप्तकीनेविषे सम्यक्त्व पामियें जोवली अबद्धायु क्षपकश्रेणीने

आरंभे तोसप्तकक्षीणथये नियमा अनुपरत परिणामज चारित्रमोहनीय खपाववाने यत्नप्रते आरंभे. उक्तंच चाप्यकृता ॥ इयरो अणुवरउच्चिय, सयलिसमाणेति तिहांजे सकलश्रेणीप्रतेकरे तेवा क्षपकने निजनिज भवनेविषे सुरायु नरकायु तिर्य्यगायु ए त्रण आउभाव्यवलेथाजहोय उक्तंच ॥ सुरनरय तिरिय आउ, निययभवे सव्वजी वाणमिति एहिज कहेछे देवायु नारकायु तिर्यगायु लक्षणजे आयुत्रय ते क्षपक स्वरूप सम्यक्दर्शन अवशेषछे एहवोज अप्रत्याख्यानावरण अने प्रत्याख्यानावर ण कषायरूप आठप्रकृति ते समकालें खपाववाने अर्थे आरंभे ए प्रकृति अर्द्धख पावेथकेज अंतराले नामकर्मनी तेरप्रकृति अने त्रण दर्शनावरणनी मली सोलप्र कृति खपावे तेना नाम कहेछे एकेंद्रियजाति, बेइंद्रियजाति, तेंद्रियजाति, चउरिंद्रि यजाति, स्त्यानर्द्धिकत्रिक ते निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, स्थिणद्धीए, स्त्यानर्द्धिरूप, उद्योतनाम तिर्यक्द्विक, नरकद्विक, थावरनाम, सूक्ष्मनाम, साधारण नाम, आ तप नाम, तेवारपछी आठ कषायनुं जेटलुं अवशेष रह्यु होय ते खपावे ए सर्व अंतरमूहुर्त्तमात्रे खपावे ए सूत्रादेश जाणवो.

वली बीजा एमकहेछेके प्रथम सोलप्रकृतिज खपाववानेअर्थे आरंभे केवल अपांतराले आठकषायने खपावे पछी सोलप्रकृतिखपावे पछी नपुंसकवेद पछी स्त्री वेद पछी हास्यादिषट्क पछी पुरुषवेदना त्रणखंमकरे तेमांबेखंम समकालेखपावे अने त्रीजोखंम तो संज्वलनना क्रोधमाहेप्रक्षेपे एक्रम पुरुषप्रतिपत्ति होयतेवारेजाणवो.

अने स्त्रीप्रारंभिकाहोय तो प्रथम नपुंसकवेदकखपावे पछी पुरुषवेद पछी हा स्यादिषट्क पछी स्त्रीवेदखपावे अने जेवारे नंपुसक प्रारंभकहोय तेवारे ए क्षपक अनुदीर्णपण प्रथम स्त्रीवेदखपावे पछी पुरुषवेद पछी हास्यादिषट्क पछी नपुंसक वेद खपावे तेवारपछी संज्वलनना क्रोध मान माया लोभ लक्षण प्रत्येके अंतर मूहुर्त्तमात्र कालें पूर्वोक्तरीते खपावे श्रेणी परिसमाप्ति कालपण अंतरमूहुर्त्तनोज छे अंतरमूहुर्त्तना असंख्याताभेदछे त्या लोभना चरमखंमना संख्याताखंम करी ने पृथक् कालभेदेकरी तेने खपावे वली तेनो चरमखंम तेना असंख्याताखंमक रे तेपण समयसमय एकेको खंमखपावे

इहां क्षीण दर्शन सप्तक निवृत्तिबादर कहिये त्यांथी उंचो अनिवृत्तिबादर ज्यांलगें चरमलोभखंमने खपावे त्या लगे जाणवो त्यांथी उर्ध्ववली असंख्येय खं मप्रते खपावतो सूक्ष्मसंपराय कहिये ते ज्यालगे चरमलोभनो अणुउ क्षयथाय त्यांलगेजाणवो, त्यांथी ऊर्ध्वतो यथाख्यात चारित्रियो कहिये तेवली महत्प्रतरण

परिश्रांतनीपरे मोहसमुद्रप्रतेतरीने विसामोलिये त्यारपछी छद्मस्थवीतरागगुणस्था नक आवे तेना द्विचरम समयनेविषे निद्रा तथा प्रचला ए बे खपावे पछी चरमसमयनेविषे पांच अंतराय पांच ज्ञानावरणीय चार दर्शनावरणीय खपावे तेने क्षये निर्मूलोच्छेदे केवलज्ञानीथाय केवलज्ञानपामे यदाहु श्रीमदाराध्यपादाः चरमे नाणावरणं, पंचविहं दंसणं चउवियप्पं॥पंचविह मंतरायं, खवइत्ता केवली होइ॥१॥

एटले एम कह्युजे अविरत्यादिक गुण माहेलो गमेते प्रथम संघयणी सुविशुद्ध परिणामवत क्षपकश्रेणीप्रते चढ्यो गुणगणाने अनुक्रमे अनंतानुबंधियादिकप्रते उक्तप्रकारे करीने खपावतो ज्यांलगे क्षीणमोहना चरमसमयनेविषे विघ्नपंचक ज्ञानावरण पंचक दर्शनावरण चतुष्क खपावीने सर्व संख्याये ज्ञानावरण पंचक दर्शनावरण नवक मोहनीयनी अठावीस आउखानी त्रण नामकर्मनी तेर अंतरा यपंचक ए प्रमाणे त्रेसठ प्रकृति खपावीने केवली थाय ते भगवान भवस्थकेवल लोकालोक सर्व सर्वात्माये अविकल विमल केवलज्ञानेदेखे. पणएवुं क्यारेथयुं नथी अने थातुपणनथी तथा थासेपणनही जे भगवान् नदेखे, यदाहु श्रीमदाराध्यपादाः संभिन्नं पासंतो, लोगमलोगंच सव्वउ सव्वं॥ तं नत्थिजं नपासइ,भूयं सव्वं भविस्संच॥१॥

ए प्रकारे सयोगी केवली थयो त्यां जघन्यथी अंतरमूहुर्त्त अने उत्कृष्टो देशे ऊणा पूर्वकोडीलगे विहरीने अयोगी केवली गुणठाणुंचढी तेनाद्विचरम समयने विषे बहुतेर अने चरमसमयनेविषे तेर एम पच्यासी प्रकृती खपावीने शिव अचल अरुज अक्षय अव्याबाध अमंदानंद रत्नसार पामे. यदुक्तं कर्म्मग्रंथे शतकांते॥ अ णमिच्छ मीस सम्म,त्त आउ इग विगल थीण तिगुजोयं॥ तिरि नरय थावरदुगं साहारायव अडनपुंछी॥ १ ॥ छग पुंसं संजलणा, दोनिद्दा विग्घवरण खय ना णी॥ देविंद सूरि लहियं, सयगमिणं आय सरणठा॥२॥ इति क्षपकश्रेणीसमाप्त

हवे क्षायक सम्यक्त्वनुं स्वरूप कहेछे चार अनंतानुबंधिया अने त्रण मोहनी य एसात प्रकृतिक्षयकरीने जेणे क्षायक सम्यक्त्व पाम्युं तेणे जो सम्यक्त्वपाम्या पूर्वे देवायु अथवा नरकायु बांध्युं होय तो त्रणभवे मोक्षे जाय अने जो मनुष्य अथवा तिर्यचनुं आयुबांध्युं होय तो चार भवे मोक्षे जाय केमके मनुष्य तथा ति र्यचनुं आयु बाध्युं होय तो नियमा असंख्याता आयुषावाला युगलियानुंज बांध्यु होय पण संख्याताआउषा वाला मनुष्य अथवा तिर्यंचनुं जेणे आयु बांध्यु होय तेतो सर्वथा क्षायिक सम्यक्त्व तेभवें पामेज नही.

युगलियानाभवपछी देवतानो भव तेपछी मनुष्यनो भव पामीनेत्रीजे एरीते स

म्यक्त्वपाम्याना नव सहीत चारनव करे अने जेणे कोइपण गतिनुं हजी आउ पुंबांध्युं न होय अने क्षायक सम्यक्त्वपामे तो ते जीव तेजनवे क्षपकश्रेणी पूरी करी ने सिद्ध थाय. उक्तंच पंचसंग्रहादौ तइय चउछे तम्मिय, नवमि सिझंति दंसणे खीणे ॥ जंदेव नर असंखा,उ चरम देहेसु ते हुंति ॥ १ ॥ ए त्रीजी अने चोथी गाथानो अर्थ छे

एक जीवनी अपेक्षायें अथवा नानाजीवनी अपेक्षायें सम्यक्त्वोपयोग जघन्यथी अने उत्कृष्टथी अंतरमुहूर्तज होय अने क्षायोपशमरूप सम्यक्त्व लब्धितो एक जीवने जघन्य अंतरमुहूर्त्त अने उत्कृष्टी छाशठ सागरोपम मनुष्यनवे अधिक होय ते उपरांत सम्यक्त्वथी पडेनही तो नियमासीजे ए एकजीव आश्रीने कह्यु अने नानाजीवआश्रीतो क्षायोपशम सम्यक्त्व सदासर्वदा होय. यदुक्तं दोवारे विजयाइसु, गयस्सतिन्नच्चुए अहव ताइ ॥ अइरेग नरन्नवियं, नाणा जीवाण सवद्धा ॥ १ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ एटली गाथाउनो अर्थ छे.

हवे सम्यक्त्वनुं अतरते सम्यक्त्वथीपमीने पाछुं फरी सम्यक्त्वपामे तो केटले कालें पामे इत्यादिक स्वरूप कहेछे ते अंतर जघन्यथी तो अंतर मुहूर्तछे एटले कोइकजीव सम्यक्त्व गयापछी वली पाछुं तदावरणना क्षयोपशमथी अंतरमुहूर्त्त मात्रेज सम्यक्त्व पामे अने उत्कृष्टथी आशातना प्रचुरने अर्द्धपुजलपरावर्त्तनुं अंतर पडे उक्तंच तिछयर पवयणसुअं, आयरियं गणहर महड्ढीअं ॥ आसायंतो बहुसो, अणंत संसारिउहोइ॥१॥इहा काइकन्यून अर्द्धपुजल परावर्त्तरूपअनतसंसारजाणवो.

हवे ते पुजलपरावर्त्त केतलेकालेहोय तेनुं स्वरूप कहेछे अनति अवसर्प्पिणी उत्सर्प्पिणीए एक पुजलपरावर्त्तहोय तेवा पुजल परावर्त्त अनंता अतीतथया अने अनंता अनागतथसे हवे ए पुजलपरावर्त्त इव्य क्षेत्र काल नाव नेदे चारप्रकारे थाय तेवली एकेको सूक्ष्म अने बादर एवे प्रकारे करता आठप्रकार थायते कहेछे

तेमां प्रथम इव्यथी सूक्ष्म अने बादर ए बे नेदकहेछे औदारिकपणे वैक्रियपणे तेजसपणे नाषापणे सासोश्वासपणे मनपणे कार्म्मणपणे ए सातपणे सर्वचतुर्दसरज्जु गत परमाणुउप्रते आत्मा फरसे तेवारे इव्यथी बादर पुजलपरावर्त्त थाय यदुक्तं स्तोत्रादौ औदारिक वैक्रिय ते, जस नाषाप्राणचित्तकर्म्मतया ॥ सर्वाणुपरिणतेर्म्मै, स्थूलोनूत् पुजलावर्त्त ॥ १ ॥ अन्यत्राप्युक्तं नाषोच्छ्वासमनस्तेज , कर्म्मौदारिकवैक्रिया ॥ स्पष्ट्वायत्पुजला मुक्ता, इव्यत सैष बादर. ॥ १ ॥

ए औदारिकादिक सात माहेथी एकेक औदारिक शरीरादिकपणे प्रत्येके सर्वचतु

देस रज्जुगत परमाणुउप्रते जीवफरसीने अनुक्रमेमूके तेवारे द्रव्यथी सूक्ष्म पुद्गल परावर्त्तथाय एटले चउदराजलोकमाहेला सर्वपरमाणु पुद्गलने औदारिकशरीरपणे परिणमावे पछीवली तेमज सर्वपरमाणुपुद्गल वैक्रियशरीरपणे परिणमावे एमज तेजस शरीरपणे नापापणे सासोश्वासपणे मनपणे कार्म्मणशरीरपणे प्रत्येके अनुक्रमे आत्मापरिणमावे तेवारे द्रव्यथी सूक्ष्मपुद्गल परावर्त्तथाय अने केटलाएक आचार्यने मतेंतो ए सातमाहेला औदारिक वैक्रिय तेजस ने कार्म्मण ए चारशरीर माहेलुं गमेते एकशरीरपणे सर्वपुद्गल परमाणुआ प्रते आत्मा अनुक्रमे फरसीने मूके पणइहां व्युत्क्रमे फरस्याते लेखामां गणायनही जे अनुक्रमे फरस्यातेज परमाणुआ लेखामांगणाय तेवारे द्रव्यथी सूक्ष्मपुद्गलपरावर्त्तथाय यदुक्तं तत्सप्तकैककेनच, समस्त परमाणु परिणतेर्यस्य, संसारे संसरतः सूक्ष्मोमेजिनतदावर्त्त ॥१॥ मतांतरेतु सूक्ष्मस्त्वेकेन कायेन स्पृष्टासर्वेपि पुद्गला. येनुक्रमेण मुंक्तास्तेगण्यंते व्युत्क्रमेणतुः॥१॥

हवे क्षेत्रथी सूक्ष्म अने बादर ए बे प्रकारनो पुद्गल परावर्त्त कहेछे जेटला लोकाकाशना प्रदेश छे तेटला सर्वं आकाशप्रदेशें जीवमरणपामे एटलासर्व मरणेकरीने जीव क्रमोत्क्रमे जेम तेमकरीने फरसे एटले जेटला लोकाकाशनाप्रदेशछे तेटला सर्वआकाशप्रदेश जेम तेम मरणेकरी फरसे तेवारे क्षेत्रथी स्थूल पुद्गल परावर्त्तथाय

अने जेवारें एक आकाशप्रदेशनेविषे जीवमरीने तदनंतर बीजा आकाशप्रदेशनेविषे मरे तेवारे ते मरणाश्रित आकाशप्रदेश लेखामांगणाय पण तृतीयादिक आकाशप्रदेशेमरे ते आकाशप्रदेश लेखामांगणायनही जोडना पासेना आकाशप्रदेशेमरे तेहिज आकाशप्रदेश लेखामांगणाय एम अनुक्रमें सर्वलोकाकाशना प्रदेश मरणेकरीने फरसे तेटलेकाले क्षेत्रथी सूक्ष्मपुद्गल परावर्त्तथाय यदुक्तं लोकाकाशप्रदेशाये म्रियमाणेन जतुना ॥ क्रमोत्क्रमेण संस्पृष्टा., सस्थूल क्षेत्रतोभवेत्॥ ॥१॥ मृत्वाक्षेत्रेयदेकत्र, म्रियतेतदनंतरं॥ क्रमेणजीव. सर्वत्र, क्षेत्रेसूक्ष्मः सउच्यते २

हवे कालथी सूक्ष्म अने बादर पुद्गलपरावर्त्त कहेछे जेटला उत्सर्प्पिणीनेविषे समयहोय तेटला समय क्रमे अने उत्क्रमे अनुक्रमे अने अननुक्रमे जीव मरणेकरीने व्यापे फरसे तेवारे कालथी स्थूलपुद्गल परावर्त्त थाय.

अने ते उत्सर्प्पिणीने पहेले समयेमरीने वली बीजी उत्सर्प्पिणीनाबीजे समये मरे तेवारे ते समयलेखामागणाय पण बीजी उत्सर्प्पिणीने त्रीजे अथवा पहेलेसमये मरे ते लेखामां गणाय नही वलीत्रीजी उत्सर्प्पिणीने त्रीजेसमयेमरे तो तेसमये लेखामा गणाय पण पहेले बीजे चोथे प्रमुख समयमांमरे तेलेखामां

नावे एरीते जेटला एक उत्सर्प्पिणीना समयहोय तेटलासर्वे समय अनुक्रमे मरणे करीने फरसे तेवारे तेटले काले कालथी सूक्ष्मपुजल परावर्त्तथाय यडुक्तं यावत उत्सर्प्पिण्यास्यु , समयास्तान् स्वमृत्युना ॥ क्रमोत्क्रमेणव्याप्नोति, सस्थूल कालतो नवेत् ॥ १ ॥ प्रथमे समये मृत्वोत्सर्प्पिण्यास्तदनंतर ॥ म्रियते यदि सर्वत्र, क्रमात्सूक्ष्म सकालत. ॥ २ ॥

हवे नावथी सूक्ष्म अने बादर पुज्जलपरावर्त्त कहेछे इहां जगतमां एक समयने विषे जे पृथवीकायादिकनाजीव सूक्ष्म अग्नीकायमा ऊपजेछे ते जीव केटलाऊपजेछे असख्येय लोकाकाशप्रदेश रासीप्रमाण ऊपजेछे एटले अलोकमांहे चऊदराजलोकना जेवा असंख्याता लोक कल्पीयें ते असंख्याता चऊदराजलोकना जेटला आकाशप्रदेशथाय तेटलाजीव एकसमयनेविषे पृथ्वीकायादिकमांथीचवीने सूक्ष्म अग्नीकायनेविषे ऊपजेछे ते जे पृथिव्यादिकथी अने बादर अग्निकायथी चवीने एकसमयनेविषे सूक्ष्म अग्निकायपणे ऊपजेछे ते लेवा पण जे सूक्ष्मअग्निकायपणे पूर्वेऊपनाछे वली तेहिजमरीने सूक्ष्मअग्निकायपणे ऊपजेछे ते लेवानही केमके ते तो पूर्वेज सूक्ष्मअग्निकायपणे रह्याछे ते केटलाछे एकसमयनेविषे जे सूक्ष्म अग्निकायनाजीव ऊपजेछे तेथी असख्यातगुणा पूर्वे ऊपना सूक्ष्मअग्नीकायना जीवछे तेकेमके एक सूक्ष्मअग्निकायनोजीव ऊपनोथको अंतरमूहुर्त्तसुधी जीवेछे अने अंतरमूहुर्त्तमा जेटला समयछे ते समयसमयमा प्रत्येके पूर्वोक्त असंख्येयलोकाकाशप्रदेशप्रमाण सूक्ष्म अग्निकायपणे जीवो ऊपजेछे तेमाटे एकसमयमां सूक्ष्मअग्निकायना जे जीवऊपजेछे तेथी एजकायनेविषे पूर्वे ऊपजेलाजीव असंख्यातगुणाछे.

एटले एकसमयनेविषे ऊपना ते तथा अंतरमूहूर्त्तमाहे जे पूर्वे ऊपनाछे तेसर्वे नेलाकरीये तेनीजे संख्याथाय ते सर्वसंख्याथी तेजजीवोनी कायस्थिति एटले तेहिज कायनेविषे मरीने अवतरवु तेरूप कायस्थिति असख्यातगुणीछे केमके एकेक सूक्ष्म अग्निकायनाजीवनी असंख्येय ऊत्सर्प्पिणी अवसर्प्पिणी प्रमाण काय स्थिति कहीछे माटे वलीते कायस्थितिथीपण संयमस्थानक अने अनुनागबंधस्थानक प्रत्येके असंख्यातगुणाछे एटले कायस्थितिथी संयमस्थानक असंख्यातगुणा अने अनुनागबंधस्थानकपण असंख्यातगुणाछे अने ए बे माहोमांहे तो तुल्यछे एटले जेटला सयमस्थानक तेटलाज अनुनागबंध स्थानकछे अने कायस्थितिनी परे असंख्याता स्थितिबंधछे अने एकेक स्थितिबंधनेविषे असंख्याता अनुनागबंध स्थानकछे तेनोज सरूप कहेछे

अनुभागबंध स्थानकते कोनेकहियें जे एक कषायिक अध्यवसायेंकरीने ग्रहाजे कर्मपुद्गल तेनुं विवक्षित एकसमय बंध रस समुदाय परिमाण तेने अनुभागबंध स्थानककहीये ते अनुभागबंधस्थानक केटलाछे तो के चऊदराजलोक जेवो एकलोकाकाश तेवा असंख्याता लोकाकाश अलोकमां कल्पीये तेना जेटलाप्रदेशछे तेना जेटलाछे ते अनुभागबंधस्थानकना निष्पादक एटले नीपजावनार जे कषायोदयरूप अध्यवसाय विशेष ते पण अनुभागबंध स्थानक कहिये तेपण तेटलाजछे जेटलेकाले क्रमोत्क्रमे करीने सर्व अनुभागबंधाध्यवसायनेविषे वर्त्ततोथको जीव मूर्ख होय तेवारे तेटलेकाले बादर भाव पुद्गलपरावर्त्तथाय.

कोइकजीव सर्वजघन्य कषायोदयरूप अध्यवसाय स्थानकनेविषे मरणपाम्यो तेवारपछीजो तेहिजजीव अनंताकालपछी पण ते प्रथम स्थानकथकी अनंतरबीजा अध्यवसाय स्थानकनेविषे वर्त्ततोथको मरणनेपामे ते मरणने लेखामांगणियें पण बीजा उत्क्रमभावी अनंतामरण पण लेखामां न आवे एरीते अनुक्रमे सर्व अनुभाग बंधाध्यवसाय स्थानक जेटलेकाले मरणेकरीने फरसे तेटले कालें सूक्ष्म भाव पुद्गल परावर्त्त कहिये इहां क्षेत्रथकी सूक्ष्म पुद्गलपरावर्त्त मार्गणानेविषे लेवुं ने बीजा पुद्गलपरावर्त्ततो परुपणा मात्रछे.

यदुक्तंः– एक समयंमि लोए, सुहुमगणिजिआउ जे उपविसंति ॥ तेहुंति असंखलोग, पएस तुल्ला असंखिज्जा ॥ १ ॥ तत्तो असंख गुणिया, अगणिकायाउ तेसि कायठिई ॥ तत्तो संयम अणुभा,ग बंधठाणाण संखाणि ॥ २ ॥ ताणिमंतरेण जया, पुठाणि कमुक्कमेण सवाणि ॥ भावमि बायरोसो, सुहुमो अकमेण बोधव्वो ॥ ३ ॥ अन्यत्राप्युक्तं ॥ भावेथ समये जीवाः पृथ्वीकायपुरस्सरा. ॥ सूक्ष्मेषु तेजःकायेषु यावत प्रविशंतिहि॥१॥ इहते स्युरसंख्येय लोक प्रदेशतुल्यकाः॥असंख्यातास्त त पूर्वोत्पन्ना कायस्थितिस्तत ॥ तत.स्थानान्यसंख्यानि संयमाध्यवसाययो. ॥ तानिस्पृशेयदाजीव. किलगछन् भवातरे ॥ ३ ॥ बादरोव्युत्क्रमेणायं ज्ञेयः सूक्ष्मक्रमेणतु ॥ अत्रक्षेत्र परावर्त्तेणा धिकार परैर्नतु. ॥ ४ ॥

ए प्रकारे सम्यक्त्वरहित थको एणेजीवे अव्यवहार राशीमांहे एवा पुद्गलपरावर्त्त अनंताकर्या तेहिजजीव महताकष्टे व्यवहारराशीपाम्यो त्यां व्यवहारराशीमां पण केटलाक कालसुधीरहेछे माटे हवे इहां प्रसंगे कायस्थितिनुं काइक स्वरूपकहेछे.

तिर्यंचनी गति असन्नियां एकेंद्री वनस्पति अने नपुंसक एटला मांहे एक आवलिकाने असंख्यातमेंभागें जेटलासमयहोय तेटला पुद्गलपरावर्त्त उत्कृष्टोरहे एक

आवलिकाना पण असंख्यातासमय अने आवलिकाना असंख्याताजागनापण अ संख्याता समय जाणवा कारणके असंख्यातुं असंख्याते नेदेछे

हवे व्यवहाररासीमां आव्यापछीपण सूक्ष्मपणे केटलो कालरहे ते कहेछे पृ थ्वी अप तेज वाउ अने वनस्पति ए पाच सूक्ष्ममां सामान्यपणे असंख्याता लोकाकाश प्रदेशप्रमाण उत्सर्प्पिणी अने अवसर्प्पिणी काललगे रहे एकसूक्ष्ममां रहे तोपण एटलोज काल अने पांचसूक्ष्मांरहे तोपण एटलोज कालजाणवो

हवेबादरमां सामान्यपणे रहेतो केटलो कालरहे तेकहेछे बादरमां अने बादरवनस्प तिमां अंगुलने असंख्यातमेनागे जेटलाप्रदेशहोय तेटलीउत्सर्प्पिणी अवसर्प्पिणीका ललगेरहे अनेबादरनिगोदमा अडीपुजल परावर्त्तरहे अनेपृथ्वीकाय अपकायतेउकाय वाउकाय प्रत्येक वनस्पतिकाय अने निगोदमां सितेर कोमाकोमी सागरोपम लगेरहे.

हवे विगलेंद्री अने सामान्यपणे पर्याप्तोबादर एकेंद्री एमां केटलोकालरहे ते कहेछे बेंद्री तेंद्री चोरेंद्रीमां संख्यातावरस सहस्त्रसुधीरहे अने सामान्यपणे पर्याप्तोबा दर एकेंद्री माटी पाणी वायरो प्रत्येक वनस्पति मांपण सख्यातावरस सहस्त्र सुधिरहे

हवे बादरपर्याप्ता अग्निकाय अने विगलेंदी तेनो काईक विशेषकहेछे बादर अग्निकायनी नवस्थिति उत्कृष्टीतो त्रणअहोरात्री अने कायस्थिति उत्कृष्टीतो निरतर सर्वजवकाल संकलनाये संख्याता दिवसनी जाणवी अने बेइंद्रीमांहे नव स्थिति बारवर्षनी अने कायस्थिति सर्वजव काल संकलनायें सख्याता वरस होय अने तेंद्रीमांहे उगणपचासदिवश नवस्थिति ते एकजवनो उत्कृष्टो आउपानोकाल छे अने कायस्थिति सर्वजवसंकलनाये संख्यातादिवशनी छे वली चउरंद्रीमा उत्कृ ष्टी छ महीनानी नवस्थिति एकजवआयुरूपछे अने कायस्थिति तो संख्याता महि नानी छे अने त्रस मांहेतो बे सहस्त्रसागरोपम संख्यातेवरसे अधिक कायस्थितिछे

हवे पचेंद्रीनुं सामान्य विशेषपणे कायस्थितिनुं स्वरूपकहेछे पंचेंद्रीमाहे पंचे द्रीपणेजीवरहेतो उत्कृष्ट एकहजार सागरोपम जाजेरुरहे अने देव तथा नारकी मां नवस्थिति अने कायस्थिति तेपण तेंत्रीससागरोपमज जाणवा सन्नीया अने पुरुषवेदमाहे बशे सागरोपमथी मांमीने नवशे सागरोपम जाजेरानी कायस्थिति छे सन्निया तिर्यंच सन्निया मनुष्यमाहे त्रणत्रण पल्योपम सातपूर्वकोडी सहित कायस्थितिहोय अने स्त्रीवेदमांहे एकशोदशपल्योपम अने पूर्वकोमी पृथक्त्वें अ धिक एटली कायस्थितिहोय तथा स्त्रीवेद अने नपुसकवेदमा जघन्यतो एकसम य ते उपशमश्रेणीवालाने होय अने शेषवीजायाकताने जघन्यकाल अंतरमूहुर्त्त

अपर्याप्ताने जघन्य अने उत्कृष्टो पण अंतर मुहूर्त्तकाल पर्याप्ता सूक्ष्म अने बादर अनंत कायने जघन्य अने उत्कृष्टो अंतरमुहूर्त्तज काल जाणवो.

यदुक्तं कायस्थिति विचारस्तोत्रे अववहारियमझे, नमिऊण अणंत पुग्गल परट्टे ॥ कहविववहाररासिं, संपत्तोनाहतऊविय ॥ १ ॥ ऊक्कोसंततिरियगइ, असंन्नि एगिंदिवण नपुंसेसु ॥ नमिउ आवलि असंखि, नागसमपुग्गल परट्टी ॥ २ ॥ सामन्नं सुहमत्ते, उस्सप्पिणिउ असंखलोगसमा ॥ नमिउ तहपिहुसुहमे, पुढविज लजलण पवणवणे ॥ ३ उहेण बायरत्ते, तह बायरवणस्सई सुताउ पुणो ॥ अंगु लअसंखनागो, दोसहुपरट्टयनिगोए ॥ ४ ॥ बायरपुढविजलजलण, पवणं पत्तेय वणनिगोएसु ॥ सत्तरि कोडाकोडी, अयराणनाह नमिउहं ॥ ५ ॥ संखिज्जवास स हसे, बितिचउरिंदीसुउंहउअतहा ॥ पज्जत्त बाय रेगिंदिनूजलानिल परित्तेसु ॥६॥ बायरपज्जिगबिति चउ, रिंदिसुसंखदिणवास? ठमासा; संखिज्जवास अहिया, तसे सुदोसागरसहस्से ॥ ७ ॥ अयरसहस्संअहियं, पणिंदिसुतितीसअयरसुरनिरए ॥ सन्निसुतहपुरिसेसु, अयरसयपुहुत्तमप्रहियं ॥ ८ ॥ सन्नितिरिनरेसु पुढो,पल्लतिगं सत्त पुव्व कोडिजुअं ॥ दसहिय पलिय सयं, थी सु पुव्वकोडि पुहुत्तजुअं ॥ ९ ॥ इ ि नपुंसे समउ, जहन्नो अंतो मुहुत्तसेसेसु ॥ अपज्ज सुक्कोसंपिय,पज्ज सुहम थू ल अणतेवि ॥ १० ॥ ए कायस्थितिकही

हवे प्रसंगागत नवसंबंध परस्परे नवगणनारूप कहेछेः—परनववुं अने तेनववुं उत्कृष्ट अने जघन्य आयुने नेदेकरी चारनांगाथाय तेकेवीरीतेके ज्यां अवतरे त्यां उत्कृष्ट अने परनववुंपण उत्कृष्ट, ज्यां अवतरे त्यां जघन्य अने परनववुंपण ज घन्य, ज्यां अवतरे त्यां उत्कृष्ट अने परनववुं जघन्य, ज्यां अवतरे त्यां जघन्य अने परनववु उत्कृष्ट, ए चारनांगाजीवने नवगणनाये जाणवा.

सन्निउमनुष्य अने संन्निउतिर्यंच ठ नरकमां उत्कृष्टो एकांतरित आठ नवसुधि जाय; सन्निउ मनुष्य अने सन्निउ तिर्यंच ते नवनपति व्यंतर ज्योतषी अने आ ठमां देवलोकसुधी आठनव एकांतरित उत्कृष्टोजाय अने जघन्यतो बे नवजाण वा; तिर्यंच सातमीनरके सातवारजाय अने पूरण आउपे पांचवारजाय, अने ज घन्यतो त्रणनवथाय, नवग्रैवेयक अने आनंत प्राणत आरण तथा अच्युत ए चा रेदेवलोक लगे सातनवहोय, चारअनुत्तरमां पांचनवहोय, जघन्यतो त्रणनव होय, अनेसर्वार्थसिद्धे जघन्य अने उत्कृष्ट त्रणनवहोय, सातमीपृथ्वीये बेनवजघ न्य, अने उत्कृष्टपण बे नवजहोय, इहा सर्वत्र पर्याप्ता मनुष्यजाणवा.

युगलिया तिर्यंच तथा मनुष्य ते जवनपति व्यंतर ज्योतषी अने बे देवलोकना देवतामांजाय, पण इहां उत्कृष्ट अने जघन्यबेजजवहोय, असंन्निउ पर्याप्तोतिर्यंच ते प्रथमनरके अने जवनपति तथा व्यंतरमां उत्कृष्ट तथा जघन्य वेजजवहोय.

आठदेवलोकना देवता अने ढ नरकनानारकी ते पर्याप्ता अपर्याप्ता सन्निआ तिर्यंच तथा मनुष्यमां उत्कृष्टा आठजवकरे, सातमि नरकना नारकी तिर्यंचमा ढ जवकरे अने पूरण आउपे चारजवकरे, नवग्रैवेयकना देवता अने नवमाथी बार मांदेवलोकसुधीना चार देवलोकना देवता पर्याप्ता संन्निया मनुष्यमां ढ जवकरे.

चार अनुत्तर विमानना देवता मनुष्यमा चारजवकरे अने जघन्यथी बे जवक रे, तथा सर्वार्थसिद्धिना देवताने जघन्य अने उत्कृष्ट वेज जवहोय, जवनपति व्यंतर ज्योतषी अने बे देवलोकना देवताने माटी पाणी प्रत्येक वनस्पतिमा जघ न्य अने उत्कृष्ट बे जवहोय. असंख्याता आउपावाला युगलिया तिर्यंच अने म नुष्यमाहें संन्निउ असंन्निउ तिर्यंच अने सन्निउ मनुष्य मिथ परस्परे बे जवजाणवा

माटी पाणी वायु अने अग्नि एना जीव वनस्पति पृथ्व्यादिकमांहे मिथ परस्परें असंख्यातो कालरहे, अने पृथ्व्यादिकजीव वनस्पतिमांहे असंख्यातोकालरहे अने व नस्पतिनाजीव वनस्पतिमाहे अनंतोकालरहे, विगलेंद्रीनाजीव पाचपृथ्व्यादिकमांहे संख्यातो कालरहे पांच पृथ्व्यादिकना जीव विगलेंद्रियमा संख्यातो काल रहे, विगलेंद्रीनाजीव विगलेंद्रीमांहे संख्यातो कालरहे, उत्कृष्टआउपे त्रिजागे आठ ज वजाणवा, जघन्यतो सघले बे जवजाणवा.

संन्निया असंन्निया तिर्यंच तथा मनुष्यने विगलेंद्रीअने पांच पृथ्व्यादिकमा आठजव थाय, मनुष्य अने तिर्यंचमाहे विगलेंद्रीअने पृथ्व्यादिकना जीव आठजवआवे, ए चिहुं जागें जाणवा, वली वायु अने अग्नीमा मनुष्यने उत्कृष्ट अने जघन्य तो वेज जव होय, एरीते परजव अने ते जवना आयुनो संबंध तेनी बंधस्थिति चिहुंजागे जघ न्य अने उत्कृष्ट अनुक्रमे कही

उक्तंच तत्रैव कायस्थितिविचार स्तोत्रे – परजव तप्पवआउ, लहु गुरु चउजंगि सन्निनरतिरिउ ॥ नरयढगे उक्कोसं, इक्कंतर जमइ अढजवे ॥ १ ॥ जवणवणजोइ कप्प,ढ गेविज्ज अडजवाउ डु जहन्ना, सगलत्तमीइतिरिउ, पण पुण्णासु यतिजहन्ना ॥ २ ॥ गेविज्जाणय चउगे, सग पणणुत्तर चउक्कितिजहन्ना ॥ पज्ज तरोति सवठ्ठे डुहाडुजवत मतमाइ पुणो ॥ ३ ॥ डुजुगलिय तिरियमणुआ ॥ डुजवा जवणजोइ कप्पडुगे ॥ रयणप्पह जवणवणे, डुह डुजव असन्नि पजतिरिउ ॥ ४ ॥ पज स

न्नि तिरिनरेसुय, सहसारंता सुराय व्ननिरया ॥ अडनव सत्तम निरया, तिरिये ठ नव चऊपुसा ॥ ५ ॥ पज सन्निनरे ठ नवा, गेविज्जाणय चउक्कदेवाय ॥ चउणुत्त रे चउ नवा ॥ डुजहन्न डुहावि सव्वहा ॥६॥ नूजल वणे सु डुनवा, डुहावि नवं णवण जोइस डुकप्पा ॥ उमियाउतिरि नरेतह, मिय सन्नियरति सन्निनरा ॥ ७ ॥ नूजल पवग्गि मिहवणा, ठुवाइ सुवणेसु अनवाई ॥ पूरंति असंख नवि, वेवणीणसु, अणंतनवे. ॥८॥ पण पुढवाइ सुविगला, विगलेसु अ नवाइ विगलि संखनवे ॥ गुरु आउति नंगेपुण, नवठ सव्व जहन्ना ॥ ए ॥ मिहसंन्नियर तिरिनरा, विगलत्तु वाइ सुयनर तिरिसुए ए ॥ अन्ननवा चउनंगे, डुह पवणग्गिसु नराउ नवा ॥ १० ॥ परतप्नवाउ माणा, इह पउसंवेह कणबंधठिई ॥ किंत्तिय विन्नविउमलं, चउनंगे ज हनुको सकमा ॥ ११ ॥ ए दशमीगाथानो अर्थठे नानाजीवनी अपेक्षाये अंतर नहोय इत्यादिक आवश्यकवृत्तिमां कह्युठे ए इग्यारमी गाथानो अर्थ ठे.

अथवा एहिज सम्यक्त्व अनेकविध कहियें यदाहुः एगविह डुविह तिविहं, चउहा पंचविह दसविहं सम्म ॥ दव्वा इकारगाइ, उवसम नेएहिं वासम्मं ॥१॥ एगविहं सम्मरुई, निसग्ग हिगमेहिं तं नवे डुविहं ॥ तिविहं तखइगाइ, अहवावि ढुकार गाईयं ॥ २ ॥ खइयाइ सासणजुअं, चउहा वेयग जुअं तुपंचविहं ॥ तंमिछ चरम पुग्गल, वेयणाउ दसविहंएवं ॥ ३ ॥

अथवा उत्तराध्ययनना अठावीसमां अध्ययनमां ए पण दशप्रकार कह्याठे नि सग्गुवेएसरुई, आणरुई सुत्त बीयरुइ मेव ॥ अनिगम विछाररुई, किरिया संखेव धम्मरुई ॥ १ ॥ नूअडेणा हिगया, जीवाजीवाय पुस्त पावच ॥ सहसमुइ आसव संव,रोय परोएइ उनिसग्गो ॥ २ ॥ जोजिणदिठेनावे, चउव्विहे सद्दहाइ सयमेव ॥ एमे अन्न न हत्तिअ, सनिसग्गरुइत्ति नायव्वो ॥ ३ ॥ ए ए चेवढुनावे, उवइठेजो परेण सद्दहई ॥ उउमडे णजिणेण व, उवएसरुइत्ति नायव्वो ॥ ४ ॥ रागो दोसो मोहो, अन्नाण जस्स अवगयंहोई ॥ आणाए रोयंतो, सोखलु आणारुईनाम ॥५॥ जोसुत्तमहिज्जंतो, सुएण ठंगाहईउ सम्मतं ॥ अंगेण बाहिरेणव, सोसुत्त रुइत्ति ना यव्वो ॥ ६ ॥ एगेण अणेगाई, पयाइ जो पसरेइ उसम्मत्तं ॥ उदएवतिल्लबिंदू, सो बीयरुइत्ति नायव्वो ॥ ७ ॥ सोहोइ अनिगमरुई, सुअनाणं जेण अउउदिठं ॥ इक्का रस अंगाइं ॥ पइन्नगं दिठिवाउअ ॥ ८ ॥ दव्वाण सव्वनावा ॥ सव्वपमाणेहिंजस्स उवलक्षा ॥ सव्वाहि नयविहीहि, विछाररुइत्ति नायव्वो ॥ए॥ दंसण नाण चरित्ते, तवविणए सच्चसमिइ गुत्तीसु ॥ जोकिरिया नावरुई, सोखलु किरिया रुईनाम

युगलिया तिर्यंच तथा मनुष्य ते जवनपति व्यंतर ज्योतषी अने बे देवलोकना देवतामांजाय, पण इहां उत्कृष्ट अने जघन्यबेजनवहोय, असंन्निउ पर्याप्तोतिर्यंच ते प्रथमनरके अने जवनपति तथा व्यंतरमां उत्कृष्ट तथा जघन्य वेजनवहोय

आठदेवलोकना देवता अने ठ नरकनानारकी ते पर्याप्ता अपर्याप्ता सन्निआ तिर्यंच तथा मनुष्यमा उत्कृष्टा आठनवकरे, सातमि नरकना नारकी तिर्यंचमां ठ नवकरे अने पूरण आउपे चारनवकरे, नवग्रैवेयकना देवता अने नवमांथी बार मांदेवलोकसुधीना चार देवलोकना देवता पर्याप्ता संन्निया मनुष्यमां ठ नवकरे.

चार अनुत्तर विमानना देवता मनुष्यमा चारनवकरे अने जघन्यथी बे नवकरे, तथा सर्वार्थसिद्धिना देवताने जघन्य अने उत्कृष्ट बेज नवहोय, जवनपति व्यंतर ज्योतषी अने बे देवलोकना देवताने माटी पाणी प्रत्येक वनस्पतिमा जघन्य अने उत्कृष्ट बे नवहोय असंख्याता आउपावाला युगलिया तिर्यंच अने मनुष्यमाहे संन्निउ असंन्निउ तिर्यंच अने सन्निउ मनुष्य मिथ परस्परें बेनवजाणवा

माटी पाणी वायु अने अग्नि एना जीव वनस्पति पृथ्व्यादिकमांहे मिथ परस्परे असंख्यातो कालरहे, अने पृथ्व्यादिकजीव वनस्पतिमांहे असंख्यातोकालरहे अने वनस्पतिनाजीव वनस्पतिमाहे अनंतोकालरहे, विगलेंडीनाजीव पांचपृथ्व्यादिकमांहे संख्यातो कालरहे पांच पृथ्व्यादिकना जीव विगलेंड्रियमा संख्यातो काल रहे, विगलेंडीनाजीव विगलेंडीमांहे संख्यातो कालरहे, उत्कृष्टआउपे त्रिनांगे आठ नवजाणवा, जघन्यतो सघले बे नवजाणवा.

संन्निया असंन्निया तिर्यंच तथा मनुष्यने विगलेंडीअने पांच पृथ्व्यादिकमां आठनव थाय, मनुष्य अने तिर्यंचमाहे विगलेंडीअने पृथ्व्यादिकना जीव आठनवआवे, ए चिहुं नांगे जाणवा, वली वायु अने अग्नीमां मनुष्यने उत्कृष्ट अने जघन्य तो बेज नव होय, एरीते परनव अने ते नवना आयुनो संबंध तेनी बंधस्थिति चिहुंनागे जघन्य अने उत्कृष्ट अनुक्रमे कही

उक्तंच तत्रैव कायस्थितिविचार स्तोत्रे — परनव तप्नवआउ, लहु गुरु चउनंगि सन्निनरतिरिउ ॥ नरयठगे उक्कोसं, इकंतर नमइ अठनवे ॥ १ ॥ नवणवणजोइ कप्प,ठ गेविज्य अडनवाउ ड जहन्ना , सगसत्तमीइतिरिउ, पण पुसाउ यतिजहन्ना ॥ २ ॥ गेविज्जाणय चउगे, सग पणणुत्तर चउक्कितिजहन्ना ॥ पज्ज तरोति सवठे डहाडनवत मतमाइ पुणो ॥ ३ ॥ डजुगलिय तिरियमणुआ ॥ डनवा नवणजोइ कप्पडुगे ॥ रयणप्पह नवणवणे, डह डनव असन्नि पजतिरिउ ॥ ४ ॥ पज स

न्नि तिरिनरेसुय, सहसारंता सुराय ञनिरया ॥ अडनव सत्तम निरया, तिरिये ठ नव चजपुस्सा ॥ ५ ॥ पज सन्निनरे ठ नवा, गेविज्जाणय चउक्कदेवाय ॥ चउणुत्त रे चउ नवा ॥ डुजहन्न डुहावि सव्वत्त ॥६॥ नूजल वणे सु डुनवा, डुहावि नव णवण जोइस डुकप्पा ॥ उमियाउतिरि नरेतह, मिय सन्निियरति सन्निनरा ॥ ७ ॥ नूजल पवग्गि मिहवणा, चुवाइ सुवणेसु अनवाई॥ पूरति असंख नवि, वेवणीएसु, अणंतनवे. ॥८॥ पण पुढवाइ सुविगला, विगलेसु अ नवाइ विगलि संखनवे ॥ गुरु आउति चंगेपुण, नवठ सव्वत्त जहन्ना ॥ ए ॥ मिहसंन्नियर तिरिनरा, विगलत्तु वाइ सुयनर तिरिसुए ए ॥ अमनवा चउनंगे, डुह पवणग्गिसु नराउ नवा ॥ १० ॥ परतन्नवाउ माणा, इह पउसंवेह कणबंधठिई ॥ कित्तिय विन्नविउमलं, चउनंगे ज हनुको लकमा ॥ ११ ॥ ए दशमीगाथानो अर्थछे नानाजीवनी अपेक्षाये अंतर नहोय इत्यादिक आवश्यकवृत्तिमां कह्युंछे ए इग्यारमी गाथानो अर्थ छे.

अथवा एहिज सम्यक्त्व अनेकविध कहिये यदाहु. एगविह डुविह तिविहं, चउहा पंचविह दसविहं सम्म ॥ दव्वा इकारगाइ, उवसम नेएहिं वासम्मं ॥१॥ एगविहं सम्मरुई, निसग्ग हिगमेहिं तं नवे डुविहं ॥ तिविहं तखइगाइ, अहवावि हुकार गाईयं ॥ २ ॥ खइयाइ सासणजुअं, चउहा वेयग जुअं तुपंचविहं ॥ तंमित्र वरम पुग्गल, वेयणाउ दसविहंएव ॥ ३ ॥

अथवा उत्तराध्ययनना अठावीसमां अध्ययनमां ए पण दशप्रकार कह्याछे निसग्गुवेएसरुई, आणरुई सुत्त वीयरुइ मेव ॥ अनिगम विछाररुई, किरिया संखेव धम्मरुई ॥ १ ॥ नूअछेणा हिगया, जीवाजीवाय पुन्न पावंच ॥ सहसम्मुइ आसव संव, रोय परोएइ उनिसग्गो ॥ २ ॥ जोजिणदिछेनावे, चउव्विहे सद्दहाइ सयमेव॥ एमे अन्न न हत्तिअ, सनिसग्गरुइत्ति नायव्वो ॥ ३ ॥ ए ए चेवडुनावे, उवइछेजो परेण सद्दहई ॥ छउमछे णजिणेण व, उवएसरुइत्ति नायव्वो ॥ ४ ॥ रागो दोसो मोहो, अन्नाणं जस्स अवगयंहोई ॥ आणाए रोयंतो, सोखलु आणारुईनाम॥५॥ जोसुत्तमहिज्जंतो, सुएण उंगाहईउ सम्मत्तं॥ अंगेण बाहिरेणव, सोसुत्त रुइत्ति नायव्वो ॥ ६ ॥ एगेण अणेगाई, पयाइ जो पसरेइ उसम्मत्तं ॥ उदएवतिल्लबिंदू, सो वीयरुइत्ति नायव्वो ॥ ७ ॥ सोहोइ अनिगमरुई, सुअनाणं जेण अछउदिठं ॥ इक्कारस अंगाइं ॥ पइन्नगं दिहिवाउअ ॥ ८ ॥ दव्वाण सव्वनावा ॥ सव्वपमाणेहिंजस्स उवलछा ॥ सव्वाहि नयविहीहि, विछाररुइत्ति नायव्वो ॥ ए॥ दंसण नाण चरित्ते, तवविणए सव्वसमिइ गुत्तीसु ॥ जोकिरिया नावरुई, सोखलु किरिया रुईनाम

॥१०॥ अणनिग्गहिय कुदिठी, संखेवरुइत्ति होइनायव्वो , अविसार उपवयणे, अण तिग्गहियो अ सेसेसु ॥११॥ जो अत्थिकायधम्मो, सुअखलुचरित्त धम्मच; सद्दहइ जिणानिहियं, सोधम्म रुइत्ति नायव्वो ॥ १२ ॥ हवे ए गाथानो विषमार्थ लेशमात्र कहेछे नूअत्थत्ति सद्भूताअमीअर्थाइ सद्भूतार्थत्वे न सद्दसमत्याजातिस्मृति प्रति नादिरूपया सद्भूत ए अर्थ जाणवाने प्रथम सप्तनंगीनुं स्वरूप कहेछे

सिआ अत्थि सिआ नत्थि, अत्थि नत्थि सिआ पुणो ॥ सिआ चेव अवत्तव्वो, जु ग्गंविहिनिसेहर्ड ॥ १ ॥ सिआ अत्थि अवत्तव्वो, चेवविहिनिसेवउ ॥ सिआ अ त्थिसिआणत्थि, अवतव्वो सिआ तहा ॥२॥ सत्तनंगी जिणुदिठा, सव्वनावेसुसम्मया

हवे एनो अर्थ कहेछे.– सकल पदार्थ पोतपोताना रूपे द्रव्य क्षेत्र काल अने नावेकरी छता छे जेम घट पोताने रूपे द्रव्यथकी माटीनो अथवा सोना रूपा त्रांबा प्रमुखनो छे, क्षेत्रथकी राजनगरनो उपनोछे कालथकी शीतकालनो उपनोछे नावथी स्यामरूपछे एरीतें सर्व द्रव्यपदार्थ द्रव्य क्षेत्र काल नावथी पोतपोताने रूपे छताछे ते स्यादस्तिलक्षण सप्तनंगीनो प्रथमनेद जाणवो.

अने सकलपदार्थ पररूपे द्रव्य क्षेत्र काल अने नावथी नथी जेम घटते वस्त्र रूपेनथी द्रव्यथी जलरूपेनथी क्षेत्रथी स्तंनतीर्थनो उपनोनथी कालथी उष्णकाल नो उपनोनथी नावथी रक्तरूपेनथी एम सर्वपदार्थ पररूपे द्रव्य क्षेत्र काल अने नावथी नथी, ए स्यात्नास्तिलक्षण सप्तनंगीनो बीजो नेदजाणवो

सकल पदार्थ अनुक्रमे विचारता स्वद्रव्य क्षेत्र काल नावेछताछे, अने परद्रव्य क्षेत्र काल नावे अछताजछे, जेम घट स्वद्रव्य क्षेत्र कालनावे पूर्वोक्तरीते छतोछे अने परद्रव्यादिके अछतोछे एमसर्वपदार्थ नाविये, ते स्यादस्ति स्यान्नास्ति लक्षण सप्तनंगीनो त्रीजो नेदजाणवो

तथावली सर्वपदार्थ स्वद्रव्यादिकेछता अने परद्रव्यादिके अछताछे पण ते ए केकाले विधिनिषेध वचने छतो अछतो कही सकीयेनही, केमके एवो कोईशब्दन थी जे छता अछता लक्षण बे गुणने बोले, ए युगपद्विधिनिषेधथी अवक्तव्यलक्ष ण सप्तनंगीनो चोथोनेद जाणवो

तथा सर्वपदार्थ स्वद्रव्यादिकेछता पण पर्यायथी अछता माटे समकाले विधि निषेध कल्पनायें अवक्तव्यछे जेम सुवर्णमयमेरु द्रव्यरूपे सास्वतो अने पर्यायरूपे असास्वतो पण एकेकाले सास्वतो असास्वतो कही सकिये नही. ए स्यादस्त्येव स्यादवक्तव्यमेव सप्तनंगीनो पाचमोनेद जाणवो.

सर्वपदार्थ परद्रव्यादिकेनथी पण स्वरूपे छतापणाथी एकेकाले निषेध विधि कल्पनाये अवक्तव्यजछे जेम सेलडी गोल खांड एने परस्परें यद्यपि भिन्नपणुंजछे, अने माधुर्यपणानो अंतरपणछे, अने सेलडीपणे ऐक्यछे, पण भिन्न अभिन्न एकेकही सकीयेनही, ए स्यान्नास्त्येव स्यादवक्तव्यमेव सप्तभंगीनो छठोभेद जाणवो.

सर्वपदार्थ स्वद्रव्यादिकेछताछे अने परद्रव्यादिके अछताछे पण समकाले विधि निषेध कल्पनायें अवक्तव्यजछे, जेम घट स्वद्रव्यादिके पोतानेरूपेछे अने पटादिकनी अपेक्षायेनथी, माटे एक समयेसद्रूप अने अणकहेवायोग्यपणेछे एम एकपदार्थनेविषे स्यादस्त्येव स्यान्नास्त्येव स्यादवक्तव्यमेव लक्षण सप्तभंगीनो सातमोभेदजाणवो.

एकपदार्थनेविषे ए कल्पना केमघटे? त्यांदृष्टांतः—जेम कोईकने दूधनोनियमछे ते दूधविना दधिप्रमुख सर्वजातनो गोरसलिये, अने जेने दहिनो नियम छे ते दहि विना सकल गोरस लिये. अने जेने गोरसनोनियमछे तेने दुधदहीप्रमुख समस्तगोरसकल्पेनही, तेमजे पूर्वे एकभेद स्यादस्ति स्यान्नास्ति स्यादवक्तव्यमेव लक्षण देखाड्या तेने संकलितरूप सातभांगानो अंतर जाणवो एमए सप्तभंगी श्रीजिनेंद्रदेवे उपदेशी ते सर्वपदार्थनेविषे सम्मतछे ते सप्तभंग्यादि जेने सम्यक्प्रकारेरुचे, जे जेमकह्युं ते तेम सद्दहे, सहसम्मत्या जातिस्मरणादिके स्वप्रतिभायेकरीने रुचे ते निसर्ग रुचि सम्यकत्वकहिये ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥

धर्मास्तिकायादिक षटद्रव्यना समस्तभाव एकत्व पृथक्त्वादिक अशेष पर्यायरूप ने प्रत्यक्षादिकप्रमाणे जेनो जिहांव्यापार तिहां तेजप्रमाणे प्रतीति प्रसिद्ध जेणे पाम्याछे, अनेवली सर्वनयविधियें नैगमादिकभेदे द्रव्यनासर्वभाव जाण्याछे ते विस्ताररुचि प्रमुखने धर्म धर्मीना अभेद उपचारे विस्ताररुचि सम्यक्त्व कहिये.

हवे कांईक प्रमाण अने नयनी विशेषता कहेछे.—त्यांप्रथम प्रमाण एटलेशुं? ते कहेछेः—प्रमानुंकरण ते प्रमाणकहिये जे 'यथार्थानुभव प्रमा' यथार्थज्ञान ते प्रमा कहिये ते प्रमानुं करण अतिशयितकारण ते प्रमाणकहिये ते जैनमते एकप्रत्यक्ष अने बीजो परोक्ष ए बे प्रमाणछे. अने नास्तिकमति एकप्रत्यक्षप्रमाणजमाने तथा सुगत बोध कणाद अने वैशेषिक प्रत्यक्ष ने अनुमान ए बे प्रमाणमाने पारमार्थ साख्य, प्रत्यक्ष अनुमानने शब्द ए त्रणप्रमाणमाने. अक्षपादनैयायिक प्रत्यक्ष अनुमान उपमान अने शब्द ए चारप्रमाणमाने. प्रभाकर, प्रत्यक्ष अनुमान उपमान शब्द अर्थापत्ति ए पांच प्रमाणमाने. भट्ट, प्रत्यक्ष अनुमान उपमान शब्द अर्थापत्ति अने अभाव ए छ प्रमाणमाने यदुक्तं रत्नाकरावतारिकायां चार्वाकोप्यक्षमेकं सु

गतकणत्रुजो सानुमानंसशाब्दं, तद्वैतंपारमार्षे. सहित मुपमयातत्रयं विक्रपाद.॥ अर्थापत्त्या प्रनाक्र दूवदतिचनिखिलंमन्यतेनष्ट एतत्साजावद्वे प्रमाणे जिनपति स मये स्पष्टतो स्पष्टतश्च ॥ १ ॥

वली जैनमते प्रमाणनुं लक्षणकहेले:—सम्यग्ज्ञानं प्रमाणतद्विधा प्रत्यक्षेतरने दात् अवधिमन पर्य्यायादावेक देशप्रत्यक्षौ केवलंसकलप्रत्यक्षं मतिश्रुतेपरोक्षे वली त्रीजुं प्रमाणनुं लक्षणांतरकहेले.—सकलवस्तुसाधकं प्रमाण प्रमीयते परिछियते व स्तुतत्वं जैनज्ञानेतत्प्रमाणं तद्विधा सविकल्पेतरनेदात् सविकल्पं मानसं तच्चतुर्वि धं मतिश्रुतावधिमन. पर्य्यायरूपं निर्विकल्पं मनोरहितं केवलज्ञानमिति प्रमाण स्यव्युत्पति प्रमाणेन सग्रहीतार्थेकांशोनय श्रुतविकल्पोविज्ञातुरनिप्रायोवानय. ना नास्वनावन्यो व्यावृत्तैकस्मिन् स्वनावे वस्तुनयति प्राप्नोतीतिवानय

ते नयना सातनेदले·—नैगम संग्रह व्यवहार रुजुसूत्र शब्द समनिरूढ एवनूत समस्तपदार्थ ते सामान्य विशेषोनय धर्मरूपले तेमां सामान्यते घटत्वादिक प्रमुख जात्यादिरूपले, अने विशेषते सुवर्णमयघट मृन्मयघट एमव्यक्त्यादिरूपले इत्यादि क नैगमनय वस्तुने उनयात्म सामान्यविशेषरूप मानेले जेमाटे सामान्यते विशेष विनानहोय अने विशेषते सामान्यविना नहोय

संग्रहनय तो वस्तुने सामान्यरूपज मानेले केमके सामान्यथकी व्यतिरिक्त कोइ विशेष नथी आकाशनाफूलनीपरे वनस्पतिविना कोई निंब आम्रादिकनथी देखाता अने जे देखायले ते सर्वे वनस्पतिरूपले, जेम हस्तायंतर्नावी अंगुली प्रमु ख हस्तादिकथी दूरनथी हस्तादिरूपजले

व्यवहारनयतो पदार्थने विशेषात्मकज विशेषरूपज मानेले, विशेषथकी निन्न कोइ सामान्यनथी खरविषाणनीपरे दृष्टांतदेखाडेले —कोइकहसेजे वनस्पतिलेवीहो य तेवारें निंबाम्रादिक नामलीधाविना सुं लइशकिये? अपितु काइनज लइशकाय अने नामलीधुं तेवारे तो विशेषजथयो व्रणपिम्पादलेपादिक लोकप्रयोजन त्या पण विशेषनोज उपयोगले नामलेइने कहेले के अमुक औषधकरो तेवारेज ते औषधथाय पण मात्र औषधजकरो एमकेवाथी, ओषधकोइ करतोनथी तेणेकरी विशेषथीकाइ सामान्यजुडुनथी सर्वे विशेषरूपजले.

रुजुसूत्रनयतो अतीत अनागत वस्तु नमाने, केवल वर्त्तमान स्वकीयहोय तेज माने, अतीत अनागत अने परकीय वस्तुये कार्यसिद्धिनथाय, अछतु आकाश कम ल तेनीपरे जाणीलेवु अने नाम स्थापना ड्व्य ने नाव ए चारनिक्षेपाले. तेमाहे

जो नावनिक्षेपोमाने, बीजा त्रणनिक्षेपा नमाने, तेमज आगला आगला नयपण नमाने तेपण एक नावनिक्षेपोज माने.

शब्दनयेतो अनेक पर्यायेकरी एकज अर्थमाने. जेम कुंन कलश घटादिक अनेक शब्द घटव्यक्तिरूप एक अर्थबोलेछे.

समनिरूढनयतो पर्यायनेदथी निन्न निन्न अर्थमानेछे. कुंन कलश घट एनो जुदोजुदो अर्थछे. अने घटपटादिकनीपरें जो पर्यायनेदे पण वस्तुनो नेदनहोय तो कुंन अने घटनोपण पर्यायांतर नहोय.

एव नूतनयतो एक पर्यायानिधेय वस्तुपण स्वकीय कार्य करतुं होय तो माने जो कार्य अणकरतुं पण वस्तुमानिये तो घटनेविषे पटनो व्यपदेश केम न थाय.

ए सातेनय यथोत्तर विशुद्धछे ते एकेकाना शो शो नेदछे एम सातनयना सातसो नेद थाय. एव नूत अने समनिरूढ ए बे नयोनो शब्द नयमां अंतर्नाव थाय त्यारे पांच नयना पांचशे नेद थाय. ते द्रव्यास्तिक तथा पर्यायास्तिक ए बे नयमां सर्व नयेनो अंतरनाव थायछे एटले प्रथमना चारनय द्रव्यास्तिकमां आवे अने पाछला त्रणनय पर्यायास्तिकमा आवे.

यडुक्तं श्री अनुयोगद्वारसूत्रेः—नयसरूपं सेकिंत नयेनये सत्तमूलनया पन्नत्ता णेगमे संगहे ववहारे उज्जुसूए सद्दे समनिरूढे एवनूते तत्थणेगेहि माणे, हि मिण इतिणेगमस्स नीरुत्ती ॥ सेसाणंपि नयाण लखमिणमो सुणेह्वोछं १ संगहिय पिंमियछं संगहवयणं समासर्डबिंति; वछइ विणिछियछं, ववहारो सव्वदवेसु २ पच्चुप्प न्नंगणही, उज्जुसूउनय विहिमुणेयवो ॥ इछई विसेसित्तं, पच्चुप्पन्नं नयो सद्दो ॥३॥ वछुर्ड संकमणं, होइ अवछुंनये समनिरूढे ॥ वजण अछ तडुनयं, एवं नूएविसेसेइ ॥४॥ नायंमि गिण्हियवे, अगिण्हियवंमि चेव अछंमि ॥ जइव मेव मेवइ, इनो ववएसोसोनर्ड नाम ॥ ५ ॥ सवेसिंपि नयाण, बहुविहदत्तव संनि सामित्ता ॥ तं सव नय विसुद्धं, जं चरणगुण छिर्डसाहू ॥६॥ एगं निच्चं निरवय, व मक्किर्य सव गंच सामन्नं ॥ निस्सामन्नत्ताउ, नछिविसेसो खपुप्फंच ॥ १ ॥ नेगंनिच्च मणिववि, सावयव सक्कियंच निन्नगयं ॥ तुल्लत्ता तुल्लत्तण, सवि संसंतं समासन्नं ॥२॥२०॥

ज्ञान दर्शन चारित्र तप समित्यादिक क्रियाजे सम्यक्त्वने बले रुचे ते क्रिया रुचि सम्यक्त्व कहिये ए एकवीसमीगाथानो अर्थछे.

अननिगृहीत अनंगीरुत कुदृष्टी सौगतादिक मतरूपछे जेणेवली अविशारदः प्रवचने प्रवचनानन्निज्ञोपि एटले प्रवचननेविषे माह्योनथी अने शाक्यादिक प्रवचननेविषे

चिलातीपुत्रनीपरे अनागृही के० आग्रह रहितछे ते संक्षेपथी तत्वनावतोथको तेने संक्षेपरुचि सम्यक्त्व कहिये.

कुमत ते कोने कहिये क्रियावादी अक्रियावादी अज्ञानवादी विनयवादी प्रमुखनुं जे मत तेने कुमत कहिये परपाखंमानि सर्वज्ञप्रणीत पाखंमव्यतिरिक्तानि तेषांउंघतस्त्रीणिशतानि त्रिपष्ट्यधिकानि नवतु

यडुक्तं आवश्यक बृहद्वृत्तौ.—असीइसयकिरियाणं अक्किरियाणंचहोइ चुलसीइ, अन्नाणिअसत्तठि, वेणइयाणचबत्तीसं ॥१॥ अस्याव्यारव्या असीइ सयंकिरियाणत्ति अशील्युत्तर शतंक्रियावादिनां तत्रनकर्त्तार विनाक्रियासन्नवति तामात्म समवायिनी वदंतिये तच्छीलाश्चते क्रियावादीनाछेपुनरात्माद्यस्तित्व प्रतिपत्तिलक्षणा अमुनोपायेनाशीत्यधिक शतसंज्ञाविधेया जीवाजीवाश्रव बंधसंवर निर्ज्जरा पुण्य अपुण्य मोक्षाख्या नवपदार्थान् विरचय्य परिपाटयाजीव पदार्थस्याध १ परपरन्नेदावुपन्यसनीयौतयोरधोनित्य १ अनित्य (२) न्नेदौतयोरप्यध काले १ श्वरा २ त्म ३ नियति ४ स्वनाव ५ न्नेदाः पंचन्यसनीया पुनश्चेंदंविकल्पा कर्त्तव्या॰ अस्तिजीव स्वत नित्य कालतइत्येकोविकल्प विकल्पार्थश्चायं विद्यतेखल्वयं आत्मास्वेन रूपेण नित्यश्च कालवादिन उक्ते नैवाजिलापेनह्वितीयोविकल्प ईश्वरकारिणिन तृतीयोविकल्प आत्मवादिन पुरुषएवेदं सर्वमित्यादि नियतिवादिन श्चतुर्थोविकल्प स्वनाववादिनः एवस्वतइत्यऽत्यजतालब्धा पंचविकल्पा परतइत्यऽत्यजताइत्यनेनापि पंचैव लन्यंते नित्यत्वाऽपरित्याग परित्यागेन चैतेदशविकल्पा एव अनित्यत्वेनापि दशैवएते विंशति जीवपदार्थेनलब्धा अजीवादिस्वष्वष्टसुएवमेव प्रतिपद विंशतिविकल्पाना मतो विंशतिर्नवगुणशतमशीत्युत्तर क्रियावादिनामिति अकिरियाणचहोइचुलसीइति अक्रियावादिना नवति चतुरशीतिन्नेदाइति नहिकस्यचिदवस्थितस्य पदार्थस्य क्रियासमस्ति तद्भावे एवावस्थितेरजावादित्येववादिनो अक्रियावादिनस्तथा चाहुरेके क्षणिकाः सर्वसंस्कारा अस्थितानांकुत क्रियाजूतिर्येषा क्रियासैवकारक सैवोच्यते इत्यादि एतेचात्मादि नास्तित्वप्रतिपत्तिलक्षणा अमुनोपायेन चतुरशीतिर्विकव्या एतेषा पुण्यापुण्यवार्ज्जित पदार्थ सप्तकान्यसत्तथैवजीवस्याध॰ स्वपरविकल्पन्नेदह्वयोपन्यास॰ असत्वादात्मनो नित्यानित्यत्वन्नेदौनस्त कालादीनांतुपंचाना षष्टीयदृछान्यस्यतेपश्चाह्विकल्पाजिलाप नास्तिजीव स्वत इत्येकोविकल्प एवमीश्वरादिनिरपियदृछावसाने सर्वेश्चषड्विकल्पा तथा नास्तिजीव परतः कालतइतिषडेवविकल्पा एकत्रह्वादशएवमजीवादिष्वपिषट्सुप्रतिपद ह्वादशविकल्पा॰ एकत्र सप्तह्वाद

श गुणाश्चतुरशीतिर्विकल्पा नास्तिकानामिति अन्नाणिअसत्तठित्ति अज्ञानिकानां स प्तषष्टिर्भेदाइति तत्र कुत्सितं ज्ञानमज्ञानं तदेषामस्तीत्यज्ञानिका. नन्वेवलघुत्वात्प्र क्रमस्यप्राग्वद्बहुव्रीहिणा भवितव्यं ततश्चज्ञानाइतिस्यात्नैपदोषः ज्ञानांतरमेवाज्ञा नंमिथ्यादर्शनसहचरितत्वात् ततश्चजातिशब्दत्वात् गौरखरवदरण्यमित्यादिवऽद ज्ञानिकत्वमिति अथवाऽज्ञानेनचरति तत्प्रयोजना वा अज्ञानिका· असंचित्यकृत बंधवैकल्पादिप्रतिलक्षणा अमुनोपायेन सप्तषष्टिर्ज्ञातव्या तत्रजीवादिनवपदार्थान् पूर्ववध्यवस्थाप्यपर्यंतेचोत्पत्तिमुपन्यस्याध. सप्तसदादय उपन्यसनीया सत्व? म सत्वं २ सद् असत्वं ३ अवाच्यत्वं ४ सद्वाच्यत्वं ५ असद्वाच्यस्वं ६ सदसदवाच्य त्व ७ प्रमितिर्नैकैकस्यजीवादेः सप्तविकल्पाः एतेन नवसप्तकास्त्रिपष्टि· उत्पत्तेश्चत्वा र एव विकल्पास्तेष्वसत्त्व १ असत्व २ सदसत्व ३ अवाच्यत्वं ४ चेतित्रिपष्टि मेंध्येक्षिप्ता सप्तषष्टिर्भवत्ति कोजानातिजीव. सन्नित्येकोविकल्प· ज्ञातेनवाकि एवमस दादयोपिवाच्याः उत्पत्तिरपि किसतोऽसत· सदसतो अवाच्यस्येति कोजानात्येतन्नक श्चिदपीत्यभिप्रायः वेणइयाणंच वत्तीसंति वेनयिकानां द्वात्रिंशद्भेदा विनयेनचरति विनयो वा प्रयोजनमेषामिति वैनयिका एतेच अनवधृतलिंगाचारशास्त्राविनय प्रतिपत्तिलक्षणा अमुनोपायेन द्वात्रिंशदवगंतव्या सुरनृपति ज्ञातियति स्थविरा धममातृपितॄणां प्रत्येकं कायेन वाचामनसादानेनच देशकालोत्पन्नेन कालेन विनय· कार्यइत्येतेचत्वारोभेदा सुरादिष्वष्टसुस्थानेषु एकत्र मीलिता द्वात्रिंशदिति सर्वसं ख्यापुनरेतेषां त्रीणिशतानित्रिषष्ट्यधिकानि भवति.

अन्यत्रापिउक्तं.—आस्तिकमतमात्माद्या नित्यानित्यात्मकानवपदार्थाः कालनि यतिस्वभावेश्वरात्मकृतिन· स्वपरसस्थाः १ कालयदृच्छानियतीश्वरस्वभावात्मतश्चतुर शीतिः नास्तिकवादिगणमतं नसंति सप्तस्वपरसंस्था. २ अज्ञानिकवादिमतं नवजी वादिन् सदादिसप्तविधान्, भावोत्पत्ति सदसद्द्वैतावाच्यांश्चकोवेत्ति ३ वैनयिमतं विन यश्चेतो वाक्कायदानत. कार्य्य. सुरनृपतियति ज्ञातिस्थविराधममातृपितृपुसदा ४ ए तेषां प्रशंसानकार्य्या पुण्यनाश एतेषु लब्धमेनिर्जन्मेत्यादिलक्षणा एतेषांमिथ्या दृष्टित्वात् ए बावीसमी गाथाभोअर्थेछे.

अस्तिकायतेसुं कहिये अस्तयः प्रदेशा· संति अस्येत्यस्तिकाय· धर्मास्तिकाय अधर्मा स्तिकाय आकाशास्तिकाय जीवास्तिकाय पुद्गलास्तिकाय ए पांचनेअस्तिकाय कहिये.

धर्मोगत्युपष्टंभादिस्तंश्रुत धर्म्म चवा सामायिकादिधर्म्मरुचिर्धर्म्मेषु पर्य्याय ज्येष्टधर्म्मो वा श्रुतधर्म्मादौरुचिरस्येतिरुत्वा ए दशप्रकारनुं सम्यक्त्व मोक्षतरुनुं बी

जनूतछे सप्रतिराजानेविपेजाणवु यडुक्तं एगविह डुविह तिविहं, चउहा पंचविह दसविह सम्म ॥ मुरक तरु बीय नूअं, संपइरायावधारिक्षा ॥ १ ॥ सर्व एगा थानो अर्थ विवरयोछे.

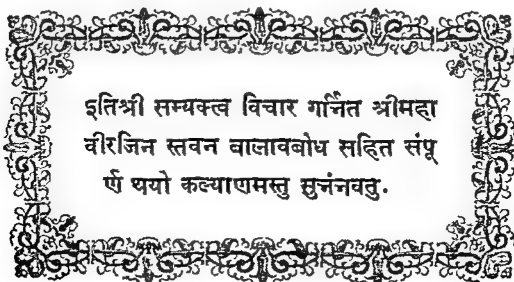
हवे शिष्यबोल्यो स्वामी एक प्रकारनुं सम्यक्त्व संप्रतिराजाने घटेछे अथवा वे प्रकारनुं संनवछे पण त्रण प्रकारनुं घटमान नथी केमके पहेलातो उपशम सम्य क्त्वनो संप्रतिराजानेविपे संदेहछे, ते उपदेश प्रथमतो ग्रंथीनेदे होय अथवा उप शमश्रेणीयेंहोय त्या प्रथमतो तेना जाननो संदेहछे एटले तेवखते संप्रतिराजाये ग्रथिनेदकरी उपशमसम्यक्त्व पाम्युं होय एवा निश्चयनुं संदेहछे अने बीजुं उपश मश्रेणीये उपशम सम्यक्त्व होय ते उपशमश्रेणीतो तेकाले विछेद पामीछे अने क्षायकपण न घटे केमके क्षपकश्रेणीपण विछेदपामिछे तेथी संप्रतिराजानेविपे क्षायोपशम सम्यक्त्वज संनवेछे परिशेषानुमानेकरीने कारकादिनेद थकीपण त्रि विधपणु इहां संनवतोनथी आद्यनेदद्वयनो संनवछे पण कारक रोचकनो संनव छते पण मिथ्यात्व सछलित दीपकाख्य तृतीयनेदनो असंनवछे अने चारप्रकारनुं पण सम्यक्त्व सर्वथा नघटे तेतो उपशम क्षयोपशम क्षायिक अने चोथुं सास्वा दनमांहे नेलिये तेवारे चारनेदथाय ते उपशमसम्यक्त्वथकी पडताथका अनंता नुवंधियाने उदयछता मिथ्यात्वप्रतें जावावाछतो एवाजीवने सास्वादन सम्यक्त्वनुं धारणहसे तेतो अनंतानुवंधियानोउदय तेणे कवलितपणामाटे कलुपपणुछे अने पांचप्रकारनुं सम्यक्त्वपण सप्रतिराजानेविपे नघटे केमके वेदकसम्यकत्वना अ नावथी एटले वेदकतो क्षायकपामति वेलाये क्षयोपशमनो चरमपुजल ग्रासवेदता ने होय तेतो संप्रतिराजानेविपे संनवियेनही वली क्षायिकसम्यक्त्वनी प्राप्तिनाअ नावथी ए दशविध निसर्गरुच्यादिक पण सर्व तिहां संप्रतिराजानेविपे घटतानथी सर्वनेद एकस्थले संनवेनही तेमछता एटला प्रकारना सम्यक्त्वनुंधारण सप्रतिराजा ना दृष्टाते तमे केमकह्यु एम शिष्यपुछयुं

हवे गुरु उत्तरकहेछे केसम्यक्त्वतो सप्रति राजानीपरे निश्चलधरवु ते वली शास्त्रनीतें परूप्पमाण परूपितोथको एकादिनेदेहोय इत्येवमेवयोज्यं एनो अर्थ एमजकरवो तथाच सर्वनिरवद्यमिति जेम सर्व समंजसहोय एगविहे इत्यादिक सम्यक्त्वनेद गाथावृत्तिनो ए सर्व अर्थजाणवो उत्तराध्ययनमापण अठावीसमें अ ध्ययने दशप्रकारनुं सम्यक्त्वकह्युछे निसग्गुवएसरुईत्यादि ए तेवीसमी तथा चोवी समी गाथानो अर्थछे.

वेदहयाद्रीड १७७४ मितेवर्षे राजादिनगरस्थेन ॥ विबुधोत्तमाब्धि शिशुना न्यायादिजलधिना नाम्ना ॥ १ ॥ सम्यक्त्वस्तवनस्या ऽस्यलोकभाषानिबद्धबंधस्य ॥ स्वपरेषाम् स्मृतिहेतो, रकारि बालावबोधोयं ॥ २ ॥ युग्मं ॥ शास्त्रविरुद्धंकिंचि द्रुपयुक्तं बुद्धिमांद्यतो मयका ॥ तत्संशोध्यं विबुधैरुपकारपरैर्महामतिभिः ॥ ३ ॥

ढालछठी माइ धन्नसुपनतुदेशी.

जडजलपणपोते सिंधुकाठनबोले ॥ तससंगतिलोहुं तेहनेपणतसतोले ॥ तेम हुं गुणहीणो तोपण दास तुमारो ॥ अवगुणभवेपी प्रभुजी पारउतारो ॥ १ ॥ तुं गुणमणि दरिउं उद्धरिउं जगजेणे ॥ मुजकाइनतार्यो तुज संगतिनही तेणे ॥ अलगो तांहिविलगो तुमुझ दिलथीदेव ॥ अविचलपदआपो ॥ ढीलतणीसीटेव ॥२॥ नहीतो मुझभावे नहीमूकुंकरुंसोर ॥ जालीदिलनीतर घालीकरसुंजोर ॥ जासोकिम दीधा, विणशिवसुखजिनराज ॥ सहेजे जो देशो तो रहेशे तुमलाज ॥ ३ ॥ अविनयमुझखमजो हुंछुं मूढअयाण ॥ करतानविआवे वीनतडीजिनभाण ॥ बालक जेमबोले कालोगहिलोबोल ॥ ते मातपितामन, लागे, अमृततोल ॥ ४ ॥ इणिपरे प्रभुस्तविउ समकितलेशविचारे ॥ आगमअनुसारे मुझमतिने अनुहारे ॥ संवतरुतुरसमुनि चइसंवत्सरजाणी ॥ १७६६ ॥ भादरवेमासे सीतपंचमीगुणखाणि॥ ॥५॥ श्रीतपगछनायक श्रीविजयरत्नसूरिंद ॥ सुरगुरुजश आगलें करजोडेमतिमंद ॥ तसराजेपंडित उत्तमसागरसीस ॥ कहेन्यायसागर प्रभु पूरोसंघजगीस ॥ ६ ॥



इतिश्री सम्यक्त्व विचार गर्भित श्रीमहावीरजिन स्तवन बालावबोध सहित संपूर्ण थयो कल्याणमस्तु सुभंभवतु.

॥ श्री तीर्थनायकाय नमः ॥

॥ अथ श्रीषड्द्रव्यस्वरूप प्रारभ्यते ॥

छ द्रव्यमां पहेलुं जीवद्रव्य छे तेमां चेतना पदार्थ छे अही चेतना ते उपयोग कहिये तेउपयोग बे प्रकारनो छे.—एक साकार ने बीजो निराकार तेमां साकार ते ज्ञान अने निराकार ते दर्शन जाणवुं ए ज्ञान तथा दर्शननो विचार जुजुवो छे, ते आगल कहेवाशे, त्यांथी जाणी लेवो ते जीव बे प्रकारना छे —एक सिद्ध अने बीजा ससारी तेमा जे अष्ट कर्म रहित थया छे ते सिद्ध जाणवा. तेना पदर नेद छे ते आप्रमाणे —

(१) तीर्थंकर विद्यमान छतां जे संसारने तरीने मुक्तिने पाम्या छे ते चतुर्विध सघ अथवा प्रवचनवक्ता प्रथम गणधरादिक जाणवा यदुक्तं सिद्धांते — "तिछं नंते तिछं तिछं करे तिछं गोयमा, अरहा ताव नियमा तिछंकरे तिछंपुणो या उवणो समण संघो पढम गणहरोवा" एवी रीते तीर्थसिद्ध जाणवा

(२) जे तीर्थ कपनाविना तथा तीर्थनो विछेद थया पछी मुक्तिने पाम्या छे, ते मरुदेवी प्रनृति, श्रीचद्र प्रनु तथा श्रीसुविधिनाथ स्वामीना मध्य समयने विषे धर्म विछेद थयो छता केटलाएके जातिस्मरणथी दीक्षा लीधी ने सिद्ध थया ते अतीर्थ सिद्ध जाणवा (३) जे अष्ट महाप्रातिहार्य चोत्रीस अतिशय पात्रीस वाणीगुणे, तीर्थंकर पद नोगवीने सिद्ध थया ते श्रीऋषन्न देव नगवान प्रमुख सर्वे तीर्थंकर सिद्ध जाणवा (४) जे तीर्थंकर पद पाम्याविना सिद्धावस्थाने पाम्या ते सामान्य केवली अतीर्थंकर सिद्ध जाणवा. (५) जातिस्मरणादिके बोध पामी मोक्षे गया ते स्वयंबुद्धि सिद्ध जाणवा. (६) जे कोई बाह्य प्रत्यय देखीने ते निमित्ते बोधने पामीने मुक्त थया ते प्रत्येकबुद्ध सिद्ध जाणवा.

आशंका —त्यारे स्वयंबुद्ध अने प्रत्येकबुद्धमा विशेषता शुं छे?

उत्तर —बोधि, श्रुति, लिंग तथा उपधि ए चार प्रकारना नेद छे. स्वयंबुद्ध ते जातिस्मरणे करी अथवा अवधि ज्ञाने करी बाह्य प्रत्यय दीठाविना बोधने पाम्या छे, ते जेम तीर्थंकर तथा अतीर्थंकरमा व्यतिरेकपणुं छे ते अधिकार अही पण जाणी लेवो तीर्थंकर साक्षात त्रीजे नामे कह्या छे माटे, अने प्रत्येकबुद्ध तो बाह्यकरण वृषन तथा इंद्रध्वजादिक देखीने बोध पाम्या छे, पण ते नियमे एकाकी

विचरे छे ए प्रथम प्रत्येक बोधिभेद छे. अने स्वयंबुद्धने पूर्वाधीत श्रुत होय तो तेने देवता लिंग आपे, अथवा गुरुनी समीपे जईने लिंग धारण करेछे. लिंग ते साधु वेष रजोहरणादिक जाणवा तथा ते जो एकाकी विचरवाने समर्थ होय तो एकाकी विचरे छे, नही तो गच्छमांज विचरे छे अने जो पूर्वाधीत श्रुत न होय तो अवश्य गुरुनी पाशे जईने वेष ग्रहण करे; अने तेनी साथे विचरे ए नियम छे. अने प्रत्येकबुद्ध तो पूर्वभवाधीत श्रुतज्ञानीज होय छे, ते जघन्यथी अग्यार अंग तथा उत्कृष्टथी कांईक न्यून दश पूर्व भणेलो जाणवो. एने लिंग देवता दिए छे; अथवा लिंगरहित पण होयछे. एम श्रुति तथा लिंग ए बे भेद मली त्रण भेद थया. अने स्वयंबुद्धने पात्रादिक दशविध उपधि होयछे एम कह्यु छे, ने प्रत्येकबुद्धने तो जघन्यथी बे प्रकारनोज उपधि कह्यो छे; तथा उत्कृष्टथी नव प्रकारनो उपधि पण कह्यो छे. ए वस्त्रविना पण उपधिना भेद जाणवा.

(७) जे बुद्ध एटले आचार्यना कहेला उपदेशथी बोधने पामीने दीक्षा लई अनुक्रमे मोक्षने पामे ते बुद्धबोधित सिद्ध जाणवा.

(८) जे स्त्रीनुं लिंग अथवा चिन्ह छतां मुक्तिलक्ष्मिवरया छे ते स्त्रीलिंग सिद्ध ते लिंग त्रण प्रकारनुं छे.–एक जेने फुंफमदाहनी परे पुरुषनी अभिलाषा होय, बीजुं शरीर निर्वृत्ति नितंब तथा स्तनभागादिक जेने होय, अने त्रीजुं नेपथ्यते तिलक, तंबोल, नेत्रांजन, वस्त्र, हार, डोर अने नूपुरादि लक्षण बाह्यकृत शृंगाररूप होय छे. ए त्रण लिंग छे तेमानुं अत्र शरीरनिर्वृत्ति लक्षण लिंग ग्रहण करवुं ते छतां चारित्रनी प्राप्ति थईने जे केवलावस्था पामीने मोक्षेजाय ते स्त्रीलिंग सिद्ध कहेवाय छे. आशंका – वेदनी वर्जना शासारु करी छे ?

उत्तर·– वेद छतां यथाख्यात चारित्र तथा केवल ज्ञाननी प्राप्ति थती नथी. माटे तेनो नवमे गुणठाणे अभाव थाय तोज उपरलां गुणठाणाप्रत्ये आरोह थई शकेछे अने त्यार पछी सर्व घातिक कर्मोनो क्षय करेछे माटे वेद लक्षण लिंग वर्ज्य छे. अने शृंगार लक्षण पण कांई प्रधान नथी केमके, शोले शृंगार सजीने सिंहासन उपर बेठेली छतां शुभ ध्याने भावना भावती थकी स्त्री केवल ज्ञान पामेछे. तेम शृंगार रहित थई थकी पूर्वोक्त अवस्थाए करीने पण केवल ज्ञान पामेछे. माटे शृंगार मोक्षनो रोधक नथी शरीरनो आकार तो विशेषेकरी रोधक होयज नही; केमके, ज्यां सुधी मनुष्य गतिनेविषे मनुष्यनुं आयुष्य होय छे, त्यां सुधीज ए चिन्ह होयछे.

आशंका'– (दिगंबरी) स्त्रीने मोक्षनी प्राप्ति थतीज नथी, केमके, मोक्ष थवुं ते चारित्रने आधीन छे, ते चारित्र स्त्रीने उदय आवे नही केमके, स्त्रीने सर्वथा पुरुषविना रहेवाई शकातु नथी स्त्रीना अंगोपाग सर्वथा पुरुषने अभिनवकारीछे, तेथी ते ऊघाडां रखाई शकातां नथी, अने ते ढांकवाने अर्थे वस्त्र धारण करवा पडेछे वस्त्र राख्याथी परिग्रह थायछे, अने परिग्रहवाळा मनुष्यने मूर्छानो सन्न व होयछे ज्यांसुधी जेने मूर्छा छे त्यांसुधी तेने संयमनी प्राप्ति थती नथी, माटे स्त्रीने चारित्रनी प्राप्ति न थाय, अने चारित्रविना मोक्षनी प्राप्ति ते केम थाय? वळी संसारमां सर्वोत्कृष्ट पदवीनी प्राप्ति सर्वोत्कृष्ट अध्यवसायथी थायछे, एवात दिगंबर तथा श्वेतांबर बधाने सम्मत छे. ते सर्वोत्कृष्ट पद बे प्रकारनुं छे'– एक सर्वोत्कृष्ट पद डुःखनुं स्थानिक छे ने बीजुं सर्वोत्कृष्ट पद सुखनुं स्थानिक छे ते मां सर्वोत्कृष्ट डुःखनुं पद सातमी नरक पृथ्वीनी प्राप्ति छे, अने सर्वोत्कृष्ट सुख ते मोक्ष पदनी प्राप्ति छे तेमा सप्तम नरक पृथ्वीनेविषे स्त्रीनुं गमन थई शके नही एम सिद्धांतोमां कह्यु छे, ज्यारे एवुं पाप उपार्जित वीर्य स्त्रीने होतु नथी त्यारे मोक्षपदनुं उपार्जन करवा जेवुं मनोवीर्य ते स्त्रीने क्यांथी होय! माटे स्त्रीने मोक्षनो संनव नथी वळी स्त्रीए पूर्व नवांतरनेविषे माया मोहनीयकर्मनुं उपार्जन कर्युं होयछे के जेथी स्त्रीवेद मळेछे, माटे स्त्री मायावीज होयछे ते कारण माटे ते स्वानावे कुटिलज होयछे एवा न्याये करीने स्त्रीने चारित्रनी प्राप्ति थाय नही वळी साधु तो वनवासी होयछे, ज्या घणा मनुष्यादिकनो संघट्ट होय, त्या साधु रहे नही. केमके, त्या ज्ञान तथा ध्याननो व्याघात थायछे अने स्त्रीथी तो एकाकी रहेवा तु नथी ज्या वसति होय त्यांज रहेवाई शकायछे. केमके, स्त्रीने एकाकी विचरतां तेना शीलमा विघ्न पडेछे, घणामा रहेता प्रतिबंध नमळे, अने राग द्वेषमां पडेछे, माटे स्त्रीने चारित्र पण नही ने ते चारित्रना अनावे मोक्ष ते क्यांथीजहोय!

उत्तर – (श्वेतांबरी) स्त्रीने वस्त्रनो परिग्रह कहेवो नही. जेनी ऊपर मूर्छा होयछे ते परिग्रह कहेवायछे, मूर्छाविना परिग्रह कहेवायनही, यत. "मुछा परि ग्गहो वुत्तो" एम श्रीसिद्धांतमा कह्युछे ते कारण माटेज नरतचक्रवर्त्ति, षट्खं मनो नोक्ता, चोसठ हजार अंतेउरी सहित दर्पण सदनमा बेठो छतां तथा सर्व अलंकारेकरी अलंकृत छतां केवळज्ञान पाम्यो छे केमके, ते वस्तुथकी मूर्छाथी रहित हतो ते माटे जीवनेमोटो परिग्रह तो ममत्वनाव छे. अने जे ममत्व ना वथकी रहित छे तेने तो धनधान्यादि संपत्ति पण बाध करी शकती नथी जो ए

म न मानिये तो संसारनेविषे सर्व दरिद्री मनुष्योने केवल ज्ञाननी प्राप्ति थईने मोक्षनो प्रसंग आवशे. केमके, तेनी पाशे कोई समये पण एक कोडीमात्रनो परिग्रह होतो नथी. तेम छतां तेवा प्राणीउतो संसारमां घणा रजडता दीठामां आवे छे, पण तेउनी पाशे मूर्छारूप मोटो परिग्रह होयछे; माटे तेउने शुद्ध दशा प्रगट थती नथी. वली श्रीवीतरागे बे कल्प कह्याछेः—एक जिन कल्पने बीजो स्थविर कल्प. तेमां जिनकल्पनो स्त्रीने संभव नथी, परंतु स्थविर कल्पनो संभव छे.

पूर्वपक्षमां कह्युं छेके, उत्कृष्ट पदनुं बाधक मनोबल छे, ते स्त्रीने होतुं नथी माटे जेम स्त्री सातमे नरकेजती नथी तेम ते मोक्षनेविषे पण न जई शके! ए युक्ति पण समीचीन नथी, एवो पण कांइ नियम नथी. केमके, केटलाएक पुरुषाविकने क्षेत्र खेडवानुं सामर्थ्य होयछे पण शस्त्राभ्यास करवानुं सामर्थ्य नथी होतुं तेथी शुं थयुं! कोईने कोईएक कर्मनी फुरणा न थयाथी शुं बीजां कर्मोनी फुरणानो पण अभाव समजवो के? एम छतां जो हठकरी बेशशो तो बीजी घणी वातोमां विरोध आवशे. जेमके वधुमां वधुपाप उपार्जिने भुजपरिसर्पनीचे बीजी नरक पृथ्वी सुधीज जायछे अने पक्षीउ त्रीजी नरकपृथ्वी सुधी जायछे. अने वधारेमां वधारे पुण्य उपार्जिने ऊपर ते बन्ने जातिवाला प्राणीउ सहस्रार देवलोकसुधी जायछे. इहां मनोबल तो बन्नेनुं सरखुं छे. त्यारे अधोगमन थोडुं अने ऊर्ध्व गमन घणुं केम थायछे! माटे एवो नियम न कहेवो एवी रीते स्त्रीजातिनो पण एवो स्वभाव छे के उत्कृष्ट पाप उपार्जन करे तो छठी नरकपृथ्वी सुधीज जाय; परंतु उत्कृष्ट संवरनी प्राप्ति थयाथी मोक्षनी प्राप्ति तो थायज.

वली पूर्वपक्षमां कह्यु के, स्त्रीने मायामोहनीय कर्मनी अधिकताने लीधे चारित्र उदय आवे नही; ए वात यद्यपि सत्य छे, तथापि स्त्रीनें मोहनीयकर्मनो उपशम तथा क्षय होयछे; एनो कोईनाथी अनंगीकार थाय नही. अने सर्वथा स्त्रीने मोहनीयकर्मनो क्षय अथवा उपशम थतोज नथी एवुं तो तमाराथी पण केवासे नही केमके, अनंतानुबंधी कषायनो उपशम अथवा क्षय थाय त्यारेज सम्यक्त्वनी प्राप्ति थायछे. अने अप्रत्याख्यानीय कषायनो उपशम अथवा क्षय थाय त्यारेजदेशविरतिपणुं प्राप्त थायछे. एम तो तमे पण अंगीकार करोछो त्यारे स्त्रीमां सर्व विरतिपणुं केम मानता नथी! तथा गोमठसारनी गाथामां स्त्रीने मोक्ष कह्योछे.— " अमयाला पुंवेया, इत्थीवेयाय हुंति चालीसा; वीसन्न पुंसग वेया, समए एगेण सिझंति. " एवो पाठ तमारा सिद्धांतोमां पण दीठामां

आवेछे तेमज कर्मग्रंथ, तथा गुणस्थान क्रमारोहनो विचार करतां प्रसिद्धपणे स्त्रीने मोक्षनो संभव थायछे जेमके, नवमा अनिवृत्तिकरण गुणस्थानकसुधी त्रणे वेदनो उदय होयछे त्यां छासठ प्रकृतिउ उदयने पामे छे. पछी सूक्ष्म संपराय दशमा गुणस्थानकमा पण छासठ प्रकृतिउंनोज उदय होयछे, एमां त्रण वेद तथा संज्वलननो क्रोध मान ने माया ए छ प्रकृतिउ होती नथी एवीरीते उदयाधिकारमा कह्यु छे ए उपरथी जाणवुं जोइये के जो सर्वविरति चारित्र स्त्रीने न होय तो नवमा गुणस्थानकसुधी केम पहोची शके, माटे स्त्रीने सर्वविरतिपणुं मानवुज जोइए छे ए विषे सारीरीते विचार करी जोजो

वळी पूर्व पक्षमां कह्यु के, स्त्रीने एकाकी विचरवानो अधिकार नथी, केम के एकाकी विचरवाथी तेना शीलमां विघ्न पमवानो संभव थाय अने जो पंचनी साथे विचरे तो ममत्वभाव थाय. ए उक्ति पण विचाररहित छे, केम के एकाकी विचरता पण जो मन शुद्ध होय तो काई पण शीलनो भंग थतो नथी. स्त्रीउने विषे तो एवु धैर्य होयछे के तेने देवो पण मोलायमान करी शकता नथी तेम पंचनेविषे विचरतां ममत्व पण संभवे नही, केमके जो तेना मनमा वीतरागावस्था होय तो संसारमा जीवने जे सरागपणुं बंधननो हेतु छे ते जो उपशमने पाम्यो तो पछी तेने वन तथा घर बन्ने सरखा छे ए काई जीवने बंधनना हेतु थता नथी बंध ते एक रागादि लक्षण अशुद्ध उपयोग छे इत्यादिक विचार करतां तथा श्रीवीतरागनी आज्ञा जोता तो स्त्रीने मोक्ष थायछे माटे एवा हठनो त्याग करवो उचित छे एवी रीते स्त्री सिद्ध जाणिये

(९) जे पुरुषना लिंगवडे सिद्धस्थाने पहोचे छे ते पुरुषलिंग सिद्ध ते लिंग पण पूर्वनी पठे त्रण प्रकारना छे – वेद, शृंगार ने आकार तेमां वेद त्याग करवा योग्य छे केम के, वेद छता निश्चेकरी मोक्षनी प्राप्ति थायज नही शृंगार छतां क्वचित् मुक्ति थायछे ने क्वचित् नथी पण थती. तथापि शृंगार अप्रधानज छे अने आकार छतां मोक्ष थाय छे माटे ते पुरुष लिंग सिद्ध कहिये

(१०) जे नपुसक लिंगे सिद्धत्व पामे छे ते नपुसक सिद्ध; ते लिंग पण पूर्वोक्त रीते त्रण प्रकारना छे –वेद, शृंगार ने आकार तेमा वेद अने शृंगार बे त्याग करवायोग्य छे अने आकारनेविषे मोक्ष थायछे माटे ते ग्रहण करवा योग्य छे ते आकार पण त्रण प्रकारनो छे – एक इंद्रिय छेदी, एटले वृषणादिक भंग करेला, बीजा इंद्रिय अवयवसहित एटले बाल्यावस्थानेविषे कामादिक कु

चेष्टायें करी इंद्रियनुं मूलथकी बल गमावीने नपुंसक थया होय ते. अने त्रीजा जे जन्मथीज नपुंसक थया होय ते ए त्रणेने लोको नपुंसक कहेछे परंतु परमार्थे जोतां पहेला बे ने नपुसकपणुं नथी. केमके, तेउनेविषे पुरुष वेदनो अभिलाष होयछे, भोगने अर्थे स्त्रीनी इच्छा करे छे, परतु पुरुषनी इच्छा करता नथी पण शुं करे के तेउनां अवयव सावचेत होतां नथी. तेथी योनि भोग न थाय. एउ नपुंसक पणाने बीजी कुचेष्टाथी पाम्या छे, माटे पुरुषवेद छे, नपुंसक वेद नथी नपुसक वेद तो जे जन्म जात होयछे तेनेज कहिये ते नपुसकने पुरुष तथा स्त्री ए बन्नेने भोगववानी अभिलाषा थायछे, माटे तेज वास्तविक नपुंसक कहेवाय. अत्रवृद्ध आचार्य एम कहेछे के, जे स्वभावे जन्मजात नपुंसक होय तेने चारित्र आवे नही, त्यारे तेने मोक्ष पदनी प्राप्ति ते केम थाय ! माटे कृत्रिम नपुंसक लेवो. अने नवीन आचार्य एम कहेछे के, जे कृत्रिम होय ते नपुंसक न कहेवाय. जेने नपुंसक वेद उदयागत होय तेनेज नपुंसक कहिये. कृत्रिमने तो पुरुष वेद उदयागत होयछे, तेथी तेने तो पुरुषवेदज कहिये. एवुं विवेचन करी लेवुं. एवा नपुंसकलिंगे जे मोक्ष थया ते नपुसक सिद्ध कहेवाय छे

(११) जे रजोहरण तथा मुखवस्त्रिका प्रमुख छतां कैवल्य पद पामे ते स्वलिंग सिद्धकहेवायछे. (१२) जे तापसादिक प्रमुख बीजा चिन्हवान छतां लोकांत स्थित थयाछे ते अन्य लिग सिद्ध जाणवा. (१३) जे भरत प्रभृति गृहस्थ वेपधारी छतां लोकना मस्तकनेविषे स्थित थएला छे ते गृहि लिंगी सिद्ध जाणिये. (१४) जे एक समयनेविषे एकलोज सर्वोत्कृष्ठ सुखना धामने पाम्यो होय ते एकाकी सिद्ध छे. (१५) अने जे एक समयनेविषे अनेक जीवो सिद्धत्व पाम्या होय ते अनेक सिद्ध कहेवाय छे. वली जे सिद्धावस्था पाम्या वच्चे बीजो कोई समय थई गयो न होय किंतु तेज समयछे ते अनंतर सिद्ध कहिये; अने जेने सिद्धावस्था पाम्याने समयथी उपरांत काल थई गयो होय ते परंपर सिद्ध कहिये. इत्यादिक सिद्ध जीवोना भेद छे.

हवे बीजा संसारी जीवोविषे आम समजवुं:—ते संसारी जीव बे प्रकारनाछे:—एक स्थावर बीजा त्रस तेमां स्थावर पांच प्रकारना छे:—पृथ्वीकाय, अपकाय, तेउकाय वाउकाय ने वनस्पतिकाय. ए पांचेना वली सूक्ष्म अने बादर ए बेबे भेद छे. अने त्रस जीवो चार प्रकारना छे:—बेंद्रिय, तेंद्रिय, चउरिंद्रियने पंचेद्रिय तेमां पचेंद्रिय चार प्रकारना छे:—देव, मनुष्य, नारक ने तिर्यच. ए बधा जीवोविषे सविस्तर जीववि

चारादि प्रकरणोमांथी जाणीलेवुं. ए जीव अनंतछे, तेहां चेतन गुणछे. तथा नारकादि पर्याय छे जे गुणवत तथा पर्यायवत होय तेने द्रव्य कहिये. गुण पर्याय द्रव्य मिति वचनात् एवी रीते जीव द्रव्य जाणवु

अजीव द्रव्यविषे विचार.

अजीव द्रव्य पांच प्रकारनुं छे.– धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय ने काल तेमां जे गतिपर्याय ने भजनारा जीव तथा पुद्गलोने सहाय्यकारी होय ते धर्मास्तिकाय ज्यां ज्यां धर्मद्रव्य छे त्यां त्यां जीव तथा पुद्गलोनी गति थायछे. जेम के, अलोकनेविषे ए द्रव्य नही होवाथी त्यां तेओनी गति थती नथी. ए विषे दृष्टांत – जेम मत्स्यनी गतिने सहाय्यकारी जल छे. एटले ज्यां ज्यां जल होय त्यां त्यां मत्स्यनी गति थई शकेछे, ते मत्स्य ज्यारे जलथी बाहार स्थलनेविषे आवे त्यारे तेनी गति थई शकती नथी केमके, त्यां जल सहायकारी नथी माटे तेम धर्मास्तिकाय, पण जीव तथा पुद्गलोनी गतिने सहायकारी छे. ए धर्म द्रव्य यद्यपि एकज छे तथापि नयना भेदेकरी एना त्रण प्रकार छे – संग्रह नयेकरी, व्यवहार नयेकरी तथा ऋजुसूत्र नयेकरी तेमां व्यवहार नये करी धर्मास्तिकाय द्रव्य असंख्यात प्रदेशात्मक धर्मास्तिकाय एक छे तेम व्यवहार नयेकरी पोतानी बुद्धिए करी परिकल्पित ते धर्मास्तिकायना बे भाग, त्रण भाग, चार भाग इत्यादि घणा देश छे अने ऋजुसूत्र नये करी असंख्यात प्रदेशना प्रत्येक प्रदेशने धर्मास्तिकाय कहिये, एटले खंध, देश तथा प्रदेश एने धर्मास्तिकाय कहिये. एनो गति लक्षण गुण छे; अने अगुरुलघु लक्षण पर्याय छे.

अधर्मास्तिकाय ते स्थितिना पर्यायने भजनारा जीव अने पुद्गलोने सहाय्यकारी जाणवुं ज्यां ज्यां अधर्मास्तिकाय होयछे, त्यां त्यां जीव तथा पुद्गलोनी स्थिति थई शके छे. जेम के, अलोकनेविषे ए द्रव्य नही होवाने लीधे जीव तथा पुद्गलोनी स्थिति थई शकती नथी एविषे दृष्टांत –स्थितिना पर्यायने सेवन करनारो जे पथिक, तेने छाया सहकारी छे. एटले आ संसारमां देशाटन करतां मार्गनेविषे थकित थई पीडाने पामेलो जे जीव, ते ज्यां वृक्षनी सारी छाया होय छे, ते स्थले विश्राम करीने साताने पामे छे. तेम ज्या अधर्मास्तिकाय द्रव्य छे, त्यां जीवो विश्रामने पामी रह्या छे. ए द्रव्य पण पूर्वोक्त रीते नयना भेदे त्रण प्रकारनुं छे –तेमां संग्रह नयेकरी असंख्य प्रदेश स्वरूप एक खंध छे, व्यवहार नयना मते ए द्रव्यनो एकज खंध छतां तेना बुद्धि परिकल्पित द्विभाग तथा त्रिभाग प्रमुख

घणा भेद थायछे. अने रुजुसूत्र नये करी एना जेटला प्रदेश छे ते प्रत्येक अधर्मास्तिकाय कहेवायछे. एनो स्थिति लक्षण गुण छे, अने अगुरु लघु लक्षणपर्याय छे.

आकाशास्तिकाय ते जीवादिक पांच द्रव्यनुं भाजन जाणवु' केम के, ए द्रव्यनेविषे पोतपोताना स्वरूपे सकल द्रव्यो व्यापी रह्यांछे. ते बे प्रकारनुं छे.—एक लोकाकाश ने बीजो अलोकाकाश तेमां चौद राज उच्छित लोक कहेवायछे. ते अनियत प्रमाण पहोलो छे. परंतु घन करिये तो लांबो तथा पहोलो देशोन सप्त रज्जु प्रमाण समान थायछे. अने अलोक अनंतो छे. ने ते गोलकाकार छे. समस्त पदार्थो लोकनेविषे होय छे, माटे अलोक शून्य छे. एना पण पूर्वनीपठे त्रण भेद थायछे'— तेमां संग्रह नयेकरी अनंत प्रदेशात्मक लोकालोक प्रमाण एक खंध छे; व्यवहार नयेकरी बुद्धिपरिकल्पित बे भाग, त्रण भाग तथाचतुर्भागादिक अनेक प्रदेश छे; अने रुजुसूत्र नयेकरी ते प्रत्येक प्रदेशरूप जाणवुं. एम एना पण खंध, देश तथा प्रदेश ए त्रण भेद थया. एनो अवकाश लक्षण गुण छे, अगुरुलघु पर्याय छे.

काल ते नव जीर्णोपादक जाणवो. ए सकल पुद्गलोनेविषे नवीनता तथा जीर्णता होयछे तेनो सहकारी कारण छे.

आशंकाः— नवीनता तथा जीर्णता थवी एतो पुदगलनो स्वभावज छे, तेमां कालनुं शुं काम छे? पुदगलो पोतानी मेलेज नवीन पर्यायोने धारण करेछे, तेमज जीर्ण पर्यायोनुं पण भजे छे. केम के, पुदगल अने जीव ए बन्ने परिणामी द्रव्य छे; एवुं श्री भगवाने कह्यु छे. जे पूर्वावस्थानो विनाश अने उत्तर अवस्थानु उत्पादन तेने परिणाम कहेछे. एटले पर्यायनो उत्पाद तथा विनाश थायछे; परंतु द्रव्यथी उत्पाद तथा विनाश कहेवाय नही. एवी रीते पुद्गलनेविषे परिणामपणुं होवाथी स्वयं उत्पाद तथा विनाशरूप नवीनता तथा जीर्णता पर्यायने पामी रह्या छे. कांई द्रव्यनो सवर्था नाश तथा उत्पाद थतो नथी त्यारे काल द्रव्यनी अधिक कल्पना ते शासारु करवी जोये?

उत्तर'— यद्यपि नवीनता तथा जीर्णता जे पुदगलना पर्याय छे ते पुदगलनेविषेज छे. तथापि त्यां निमित्त कारण काल द्रव्य छे. केमके, नियते करी होय छे. परतु अनियत पणे कही होतुं नथी जेमके, चपक, अशोक तथा सहकार प्रमुख वनस्पतिनेविषे कुसुम संपदा, काले थाय छे, महा हिमकण मिश्रित शीतल पवन काले थायछे; मेघवृष्टि, घनगर्जित, तथा विद्युत् झात्कारादिक कालेकरी थाय छे; तेमज रुतुविभाग, बाल कुमार तथा यौवनावस्था, तथा पलित गमादि

क पण काले करी थायछे इत्यादिक व्यवस्थानेविषे काल सहकारी छे अने जो काल निमित्त कारण न होय तो सर्व वस्तु व्यवस्था रहित थई जाय जेमके, वसंत ऋतु आव्या विनाज चंपक, अशोक तथा सहकार प्रमुख वनस्पतिनेविषे फल फूल आवे, ऋतुउं आगल पाठल थई जाय; बाल्यावस्थानेविषे जरा थाय, जरावस्थामा बाल्यावस्था थाय, यौवनावस्था प्राप्त थयाविना बालिकाउ गर्भ धारण करे, इत्यादिक अव्यवस्था, कालद्रव्य नही मान्याथी थई जाय एटले बधुं विपरीतज थया करे पण तेम तो कांईज थतु नथी, तेथी काल निमित्त कारणछे. केमके सर्व पोतपोतानी कालमर्यादाएकरी थायछे. माटे पुदगलतानेविषे नवजीर्णतानो आपादक काल छे ते काल एक प्रदेशी समय लक्षण छे ते समय पण जे वर्त्तमान वर्त्तेछे ते लेवो. केमके, अतीत समयनो विनाश छे अने अनागत समयनो उत्पाद थयो नथी. ते वर्त्तमान समय पण अनंतो छे जेटला पुद्गल द्रव्यना पर्याय छे ते प्रत्येकनेविषे एकेक वर्त्तमान समय छे तेमाटे यद्यपि एक छे तथापि अनंतनेविषे लागेलो होवाथी अनंतो कहेवाय छे.

आशंका:– (अन्यतीर्थी) एक छता अनंतनी साथे केम लागेछे?

उत्तर – जेम तमे सत्ताने एक मानता छता ते अनेक द्रव्यपर्यायनेविषे रहेल मानो छो! तेम ए पण मानी लेवुं जेने तमे सत्ता कहोछो तेने अमे वर्त्तमान समय कहिये छैये मात्र नामनो फेर छे.

आशंका.–समयतो एक छे अने पूर्वापर कोटी विनिर्मुक्त छे त्यारे आवलिकादि व्यवहार केम थशे? तेतो असंख्यात समय मलेछे, त्यारे एक आवलिका थायछे

उत्तर – अही बे नय छे – एक निश्चय ने बीजो व्यवहार निश्चय ते परमार्थनी साथे मलेछे अने व्यवहार ते लौकिकविषे होयछे तेमां निश्चय नये करीतो एक समय लक्षणकाल छे, अने व्यवहार नयेकरी आवलिकानी कल्पना छे. ते असद्भूत कल्पनाएकरी कहिये छैयेः– असंख्यात समय मले त्यारे एक आवलिका थायछे, तेवी एक कोडी सडसठ लाख सितोतेर हजार बशेने शोल आवलिका थाय त्यारे एक मुहूर्त्त थाय यथा समयावली मु० ए सर्व व्यवहारे करीनेज कहेवायछे. परंतु परमार्थे जोतां तो सर्व कल्पना छे ए समय लक्षण काल पिसतालीश लाख योजन प्रमाण समय क्षेत्रनेविषे छे, पण बाहार नथी. ते परमार्थे जाणीलेजो. ज्यां आदित्य गतिछे, त्यांज काल व्यवहार छे. ए अधिकार विवाह प्रज्ञप्ति सूत्रनी वृत्तिमां श्रीअभयदेवसूरिए कह्योछे. यत. "आदित्य ग

ते स्त छ्यंजकत्वात्. कालनुं व्यंजक आदित्यगमन ते ज्ञापक छे. अने बाहारना द्वी पनेविषे आदित्यनुं गमन नथी; त्यां स्थिर छे आशंका— काल तो मात्र मनुष्य क्षेत्रनेविषेज छे, तेथी बाहार नथी एवुं तमारा कहेवा उपरथी थयुं त्यारे बाहा रना द्वीपोनेविषे तथा स्वर्ग नरकनेविषे कालनी केम खबर पडे? उत्तरः— मनुष्य क्षेत्रनी अपेक्षाए करीनेज त्यां कालनो व्यवहार कहेवाय छे अत्र समय ते द्रव्य जाणवुं; द्रव्य परावर्त्तन लक्षण गुण जाणवो, अने अगुरु लघु पर्याय जाणवो.

एविषे दिगंबरी आम मानेछे.— "लोकाकाशनेविषे जेटला आकाश प्रदेश छे, तेनेविषे एकेक कालनो अणु छे. एटले असंख्यात कालना अणु छे. एवु श्री ने मीचइ सिद्धांतिए द्रव्य संग्रहमां कह्युं छे यतः लोआगास पएसे, इक्केक्के जे ठि याहु इक्किक्का; रयणाणं रासीमिव, कालाणु असंख दव्वाणि. तेवा असंख्यात का लाणुनुं संमेलन थाय त्यारे एक समय कहेवायछे. समय ते पर्याय छे ते अणु पण सूर्यमंडलभ्रमिलक्षण निमित्त कारण पामीने एकठामलेछे त्यारे समय नीप जेछे. जेम चक्रभ्रमि निमित्त कारणनी जोगवाई पामीने मृत्पिंडनो घडो नीपजे छे. तेवी रीते एपण जाणी लेवुं"

एने श्वेतांबर दूषण दियेछेः—एम जो मानिये तो छगे अस्तिकाय थशे केम के, जेने खंध, देश तथा प्रदेश होय तेने अस्तिकाय कहेछे. अही समय ते खंध द्विभाग कल्पनारूप देश तथा कालाणु ते प्रदेश ठरेछे. एम मान्याथी विपरीतता थशे. अने अस्तिकाय तो पांचज छे. अने कालने तो श्वेतांबर तथा दिगंबर को इपण अस्तिकाय कहेता नथी

पुद्गल द्रव्य जे वस्तु पूर्ण तथा गलन धर्मयुक्त होय ते जाणवुं- एटले कोइ एक खंधनेविषे पुद्गल पूराता होयछे, अने कोईएक खंधनेविषे गलन एटले वीख राईजता होयछे. एवुं कालादि कारण पामीने थायछे एवो पुद्गलोनो स्वभावज हो यछे, तेना चार भेद छेः—खंध, देश प्रदेश ने परमाणु तेमा प्रथम खंधना अनंत प्रकार छे.— बे प्रदेश एकठा थयाथी द्विप्रदेशी खंध, त्रण प्रदेशो मल्याथी त्रिप्रदे शी खंध, एम यावत् संख्यात प्रदेशी, असंख्यात प्रदेशी तथा अनंत प्रदेशी खंध जाणी लेवा:तेमज देश पण द्विभाग तथा त्रिभाग लक्षण जाणी लेवो.

आशंका—खंधमा घणा परमाणु आवी मले छे माटे त्यां देश व्यवहार संभवे छे, केम के, तेना जेटला देश करिए तेटला थई शकेछे जेम के, काईएक खंध अ र्धो अर्ध करिये तेने बे देश कहिये; एम त्रण विभाग कर्याथी त्रण देश थाय, ते

यावत् चार, पांच, संख्यात असंख्यात तथा अनंत सुधी थई शकेछे, एवी रीते जे वडो मोटो खंध होय तेना अनुसारे देशनी कल्पना थई शके छे. परंतु मात्र बे प्रदेशिउज खंध होय तेनेविषे देशविभाग केम थई शके ? केम के, तेमां तो मात्र बे परमाणुउनुंज मेलन होय छे तेने ज्यारे बे प्रदेशोनी कल्पना थाय त्यारे खंध परिणामनेविषे देश तथा प्रदेश ए बन्नेनो व्यवहार सिद्ध होवाथी तेमां देश कीयोने प्रदेश कीयो समजवो ?

उत्तर –देश अने प्रदेशमां काई सर्वथा भेद नथी केम के, खंधनेविषे द्विभाग त्रिभागादिक अवयव छे, तेने देश कहेछे. ते देश पण बे प्रकारनो छे–एक सांश छे, बीजो निरांश छे. एटले जे सांश छे तेने पण देश कहिये ने जे निरांश छे तेने पण देश कहिये तेम निरांशने प्रदेश पण कहे छे प्रकृष्ट जे देश तेने प्रदेश कहिये, एटले जेमां बीजो कोई अंश मले नही तेने प्रदेश कहेवो ए माटे बे प्रदेशीआ खंधनेविषे देश पण बे कहिये, ने प्रदेश पण बे कहिये एटले जे बे प्रदेश छे तेनेज बे देश कहिये. बे प्रदेशी खंधनेविषे सांश देश न थाय, किंतु निरंश देशज थायछे तथा त्रण प्रदेशी खंधनेविषे एक बे प्रदेशीउ खंध ते देश थाय, बीजो एक प्रदेशीयो थाय परमाणु अर्द्ध अर्द्ध न थाय केमके, श्रीवीतराग देवे परमाणुने अछेद्य तथा अभेद्य कह्यो छे माटे त्यां जे बे प्रदेशीउ देश कह्यो ते सांश जाणवो, अने जे एक प्रदेशीउ देश ते निरंश जाणवो. एम सर्व ठामे खंधनेविषे विचारी लेवुं' जेटला खंधना जे अवयवछे ते देश कह्या ने तेज प्रदेश कहिये प्रदेश ते निःप्रदेशीय अवयव जाणवा अने सप्रदेशी अवयवने देश कहेछे ने ज्यां सप्रदेशी अवयवनो संभव नहोय त्यां निःप्रदेशीय अवयवने पण देशज कहेछे ते बे प्रदेशीया खंधनेविषे प्रसिद्धपणे जाणवो. तथा एक देश प्रदेश लक्षण व्यवहार ते ज्यारे खंधरूपे परिणम्यो होय त्यारे तेने परमाणु पुंज कहिये. तथा जे खंधपणे परिणामने पाम्या नथी ने प्रत्येके प्रत्येके एकाकी रह्या छे तेने परमाणु कहिये अही प्रसंगथी कालनी स्थिति मर्यादा लिखिये छैये.–एक परमाणु बीजा परमाणुनीसाथे न मलीने खंधभावने न पाम्यो होय किंतु एकाकीज रह्यो होय, तेनो जघन्यथी एक समय काल ने उत्कृष्टथी असंख्यातो काल जाणवो. त्यार पछी वली खंधरूप परिणामने पामेछे. एम एक परमाणु आश्री समजवुं पण सर्व परमाणु आश्रीतो अनंतो काल जाणवो एवुं कोइ समये पण जणाशे नही, जे समये सर्व परिमाणुओ खंधपणे परिणामने पामेला होय, ज्यारे जोई

छुं त्यारे लोकनेविषे अनंतानंत परमाणु बूटा दीगमां आवेछे. अने जे एकाकी खंध रहेछे तेनी स्थिति जघन्यथी एक समय अने उत्कृष्टथी असंख्यात कालनी होय छे. पुजलसंयोगनी स्थिति उत्कृष्टी असंख्यात कालथी अधिक होय नही. ए पण एक काल आश्री जाणवुं सर्व काल आश्रीतो सर्व कालनुं अवस्थान जाणवुं. केमके एवो कोई पण काल होतो नथी के जे काले सर्व लोक खंधथी शून्य होय. एम विचारी लेवुं एकालनी स्थिति कही हवे कालनी मर्यादा आम छे'— परमाणु, एकाकी नावनो त्याग करीने अन्य परमाणु द्व्यणुक त्रिअणुकादि साथे मलीने खंध नावने पाम्या छे, ते पाछा पूर्वना परमाणु नावने पामे एटले एकाकी थाय तेमां जघन्यथी एक समय अने उत्कृष्टथी असंख्यातो काल जाणवो.

आशंका.— अनंत प्रदेशीया खंधनेविषे जे संयुक्त परमाणुउ छे ते असंख्यात कालसुधी उत्कृष्टपणे ते खंधनेविषे रहेछे. ते खंधनो ज्यारे नंग थायछे त्यारे ते मांथी लघु खंध निष्पन्न थायछे. तेमां पण ते परमाणुउ असंख्यात कालसुधी रहेछे. एवी रीते एक खंधना अनंत खंध थई शकेछे. ते प्रत्येक खंधमां असंख्यात कालसुधी परमाणुनी स्थिति होवाथी अनुक्रमे अनंत कालनो संनव थायछे, त्यार पछी ते एकाकी पणाने पामेछे. एवी रीते अनंत कालनो अंतर पण संनवेछे. त्यारे असंख्यात कालनोज अंतर केम कहोछो? उत्तर —अरे नाई, जो एटला कालसुधी पुजलनो संयोग रहेतो होय तो एम संनवे पण पुजलनो संयोग तो असंख्यात कालसुधीज रहेछे तदनंतर वियोग थई जायछे.

आशंका'— परमाणु खंधनी साथे मलेलछे ते खंधविनाश पामेतो असंख्यात काल उपरात विनाश पामेछे एटलेज ए सूत्र चरितार्थ थयो. पण ते विवक्षित परमाणुनुं आश्रयिनूत खंधनो वियोग थये ते परमाणुने सुं ते माटे एमके, परमाणुनो खंधने विषे अथवा अन्यपरमाणुनी साथे संयोग थयोछे तेनो पाछो वियोग पण असंख्याते काले थायछे. उपरांत रहे नही.

आशंका. एकाकी परमाणु पणे करी केवी रीते वियोग कहोछो?

उत्तर'— सूत्रना प्रमाणे करी कहिये छैए एटले श्री व्याख्यात प्रज्ञप्ति प्रमुख सूत्रनेविषे कहेलुं छे के परमाणु वली परमाणु पणे नजे तो पाछो उत्कृष्ट असंख्याते काले नजे तेमज जे बे परमाणुआ मलीने खंध थयो हतां तेनो विध्वस थया पछी फरी ते बन्नेनो संयोग जघन्यथी एक समय अने उत्कृष्टथी अनंत काले थायछे.

लोकनेविषे अनंत परमाणुउ छे, अनंत द्व्यणुक खंध छे; एम त्र्यणुक, चतुर

णुक, संख्याताणुक, असंख्याताणुक अने अनंताणुक, एटली जातिना खंध छे ते सर्व अनंत अनत प्रत्येके प्रत्येके छे. तेनी साथे प्रत्येके प्रत्येके उत्कृष्ट काल स्थितिये जो मिले, तो तेनो वियोग थतां पण अनंत काल थाय त्यारे पछी फरी ने विस्रसा परिणामे, ते पुद्गल सयोग थाय, माटे अनंत काल कह्यो छे.

हवे वली प्रसंगथी क्षेत्रस्थिति लखिये छैये —परमाणु एक आकाशना प्रदेशने रोकेछे पण बीजा प्रदेशने रोकी शके नही, एटले जेवडो आकाश प्रदेश छे तेव डो परमाणु छे, परंतु आटली विशेषता छे के, आकाशनो प्रदेश अमूर्तिक छे ने परमाणु मूर्तिक छे माटे बे प्रदेशमा पण समावेश थाय, त्रण प्रदेशमां पण स मावेश थाय एम यावत् सख्यात तथा असंख्यात प्रदेशमां पण तेउनो समावे श थई शकेछे, ते खंध पण असंख्यात प्रदेशी तथा अनंत प्रदेशी जाणवा, बे प्र देशी खंध जघन्यथी एक प्रदेशमा समाई सके, अने उत्कृष्टथी बेज प्रदेशने रोके छे, तेमज त्रिप्रदेशी उत्कृष्टथी त्रण प्रदेश रोकेछे, ए प्रमाणे जे खंध जेटला प्रदे शनो होय ते तेटलाज आकाशना प्रदेशने उत्कृष्टथी रोकेछे, तथा जघन्यथी सर्व नेविषे एकज प्रदेश कहेवो, तथा अनत प्रदेशी खंध उत्कृष्ट पणे असंख्यात प्रदेशने रोकी शकेछे पण अनतने रोके नही केम के, लोकाकाशना अनंत प्रदेश छेज नही

आशंका·—एक आकाश प्रदेशमा अनत प्रदेशीआ खंधनो समावेश केम थाय

उत्तर —आकाशनेविषे अवगाह गुणछे, तेणेकरी ज्या एक पुद्गल छे त्याज अ नत पुद्गलोनो समावेश थई शकेछे जेम एक प्रदीप प्रजानेविषे अनेक प्रदीप प्रजा नो समावेश थई जायछे, तथा जेम एक पारद कर्षनेविषे सुवर्ण शत कर्ष समाई जायछे एवो पुद्गलनो धर्म छे माटे एक आकाशना प्रदेशमा अनतपरमाणु, अनं त द्वयणुक, अनंत त्र्यणुक अनंत सख्याताणुक अनत असंख्याताणुक तथा अ नत अनताणुक खध छे, ते पोतपोताना स्वनावे करी रह्या छे

आशंका —समग्र लोकनेविषे एक खंधनी अवगह्ना केम थाय ?

उत्तर —खध द्रव्यनो विचित्र स्वनाव छे, कोई तो लोकनो संख्यातमो नाग अवगाही रहेछे, कोइ लोकनो असख्यातमो नाग अवगाहीने रहेछे, अने कोईक तो समग्र लोकने अवगाहे छे, ते पण वली असंख्य प्रदेशीउ तथा अनंत प्रदे शीउ खध जाणवो, केमके सख्यात प्रदेशीउ कोई असंख्यात प्रदेशने रोकी शके नही एम श्री प्रज्ञापना सूत्रमा कह्यु छे, कोईएक अनत प्रदेशीउ खध एक समयमा स कल लोकने अवगाही रहेछे, ते केवल समुद्घातनी पठे जाणी लेवु, ते आ प्रमा

णेः—कोईएक अचित्त महास्कंध विश्रसा परिणामेकरी पहेला समये असंख्याता योजन विस्तार सहित दंम करी बीजा समये कपाट करे, त्रीजा समये थाणु करे· चोथा समये प्रतर पूरणा करे, ते करीने समस्त लोकमां व्यापी रहे; पछी पांचमा स मये प्रतर संहरे, छवा समये थानक नाजे, सातमा समये कपाट नाजे; आठमा सम ये दंम संहरीने खंम खंम थाय, एमा चोथो एक समय कह्यो· ते सकल लोकने विषे व्यापी रहेवाविषे जाणवुं, एनुं वर्णन श्रीविशेषावश्यकमां पण विशेषे करेलुंछे.

आशंका.– (बौद्ध मतानुसारी) एक आकाश प्रदेशनेविषे रहेला एक परमा णुने बीजा छ प्रदेशनी फरसना होय छे -जे समये पूर्व दिशाने फरसे छे तेजस्व रूपे पश्चिम दिशाने फरसतो नथी तेथी अपर स्वरूपे फरसे छे एवुं जणायछे के मके, जो तेज स्वरूपे फरसे तो षट् दिग्संबंध संनवे नही. अने षट् दिग्संबंध तो लोक प्रसिद्ध छे जेम के, आ पश्चिम दिग्संबंध, आ पूर्व दिग्संबंध, तथा आ उ त्तर दिग्संबंध प्रमुख छ ए दिग्संबंध निन्न निन्न कहेवा अन्यथा षट् दिग् फरसना केम कहेवाई शकाशे? अने परमाणु तो निरश छे, माटे एक अंशनेविषे छ संबं ध निन्ननिन्न केम थाय? ए कारण माटे परमाणुने सांश कहेवुं जोये. त्यारेज निन्ननिन्न स्वरूपे षट् दिशाओनी फरसना घटमान थशे.

उत्तर.— (जैनी) परमाणु तो निरंशज छे. सांश कहेवायज नही परंतु पुद्ग ल परमाणुनेविषे अचिंत्य परिणाम शक्ति होवाथी तेणेकरी नैरंतर्यपणे छ दिशा नीसाथे रह्योछे. अने छ दिशाओनी फरसना करे छे पण अंशेकरी फरसना न समजवी (वली बौद्धने कांईक विशेष पूछेछे) तमे केम ज्ञानना संताननेविषे एकज क्षणने कारण कार्यनाव संबंध मानोछो? पूर्व ज्ञान जनक जे क्षण ते प ण निरंश छे तेम छतां तेमां बे अंशनी कल्पना करोछो, जे अंशे करी कार णसंबंध छे, तेज अंशेकरी कार्यसंबंध नथी, अने जे अंशेकरी कार्यसंबंध छे तेज अंशेकरी कारण संबंध नथी. ए तमारी युक्तिये तमाराज गलामा फासी आवे छे माटे एम मानवुं जोये छे के, क्षणतो निरश छे पण वस्तु व्यावर्त्तनेकरी कार्यका रण नाव संबंधनी कल्पना थई शके छे एम परमाणुनेविषे पण विचार करीलेवो.

हवे वली प्रसंगथी क्षेत्रअवगाहनी स्थिति लखीये छैएः—जे आकाश प्रदेशनेविषे जे पुद्गलद्रव्य रह्यु छे ते एक प्रदेशावगाढ, संख्य प्रदेशावगाढ, अथवा असंख्य प्रदे शावगाढ जघन्यथी एक समयसुधी रहे, ने त्यार पछी एक प्रदेशावगाढ ते द्विप्र देशावगाढ थायछे, अने द्विप्रदेशावगाढ ते त्रिप्रदेशावगाढ थायछे ते उत्कृष्टथी तो अ

संख्यात काल पछी थाय परंतु अनंत कालसुधी एकावगाढपणे रहे नही; एवो एनो स्वभावज छे हवे अवगाहनुं अंतर लखिये छैए.–जे परमाणु ए करीने जे आकाशनो प्रदेश अवगाहित थएलो होय तेज ठेकाणे जघन्यथी एक समय अने उत्कृष्टथी असंख्यात कालसुधी रहेछे. त्यार पछी वली बीजा प्रदेशनी अवगाहना करेछे. एम फरतो फरतो फरि तेज आकाश प्रदेशनेविषे उत्कृष्टथी असंख्यात काले आवीजाय छे. केमके, आकाशना असंख्यात प्रदेशज छे

आशंकाः– मूल प्रदेशनो त्याग करी बीजा असंख्यात आकाश प्रदेशीय अनंतवार फरसीने पछी पाछो आवीने मूलनो प्रदेश फरसतां अनंतकालनुं अंतर संभवेछे तेम छतां असंख्यात कालनुंज अंतर कहेवानुं कारणशुं?

उत्तरः– पुद्गलनो एवो स्वभावज होयछे के, ते असंख्यात कालसुधी फरीने पाछो तेज आकाश प्रदेशनी अवगाहना करेछे.

हवे पुद्गलना गुण कहिये छैएः– जेणेकरी वस्तु, अलंकृत एटले शोभायमान दीठामां आवे तेने वर्ण कहेछे. तेना पांच प्रकार छे –कृष्ण, नील, श्वेत, पीतने रक्त ए बधा पुद्गलने विषे होयछे. अही कोईक नैयायिक छठो विचित्र वर्ण पण मानेछे. ते पांच वर्णोना संयोगथी उपजे छे तेने सर्वथा भिन्नज कहेछे, पण ते भिन्न नथी

गंध बे छे – एक सुगंध बीजो दुर्गंध. अत्र कोई त्रीजो विचित्र गंध पण माने छे ते पण संयोगथी उत्पन्न थायछे परंतु भिन्न नथी

रस पांच छे – तिक्त, कटुक, कषाय, आम्ल तथा मधुर कोईक लवणने छठो रस कहेछे परंतु तेनो मधुर रसनेविषे अंतर्भाव छे ते आ प्रमाणे – सर्व भोजन तैयार कर्युंछतां तेमां यद्यपि बीजा सर्व द्रव्योनुं मेलन होय छे तथापि जो एक लवणनुं प्रक्षेपण कर्यु न होय तो ते भोजन मधुर लागतुं नथी एटला माटे लवणने पण मधुरज कहेवुं

स्पर्श आठछेः– कर्कश, मृदु, गुरु लघु, उष्ण, शीत, स्निग्ध ने रूक्ष. ए आठ फरस पुद्गलनेविषे होयछे एम सर्व मली वीश गुण पुद्गलना जाणवा तेउमांना पाच गुण एक परमाणुनेविषे मली आवेछे ते आवी रीते – पांच वर्णोमांनो गमे ते एक वर्ण, पांच रसमांनो गमे ते एक रस, बे गंधमांनो गमे ते एक गंध, अने आठ फरसमाना चार फरस नथी होता, ते आ – कर्कश, मृदु, गुरु ने लघु ए चार स्पर्श सुक्ष्म परमाणुनेविषे न होय अने शीत, उष्ण, स्निग्धने रूक्ष ए चारमां पण विरोधी बे गुण एक प्रदेशनेविषे न होय जेम के, शीतनो विरोधी उष्ण

गुण छे तथा स्निग्धनो विरोधी रुक्ष गुण छे. ते माटे अविरोधि बे गुण होय शीत स्निग्ध अथवा शीत तथा रुक्ष अथवा उष्ण स्निग्ध अथवा उष्ण ने रुक्ष, एम विपरीत पणे पण थई शकेछे. माटे परमाणु एक अंश छे तेमां अविरोधी बे फरस लेवा. एवी रीते पांच गुण एक परमाणुनेविषे जाणवा बे प्रदेशीआ खंधनेविषे उत्कृष्टथी दश गुण होयछे. केमके, तेमां भिन्न भिन्न बे वर्ण, बे रस, बे गंध तथा चार अविरोधी स्पर्श ते बे बे जूदा जूदा प्रदेशनेविषे होय ए दशगुण बे परमाणुना जाणवा. एम त्रिप्रदेशी खंधनेविषे उत्कृष्टथी बार गुण होयछे, ते आ प्रमाणे.—एक वर्णने एक रस ए बे गुण द्विप्रदेशी खंधना करतां एमां अधिक होय छे. केमके त्रण प्रदेश होवाथी गंध तो प्राये बेज छे, अने फरसतो सूक्ष्म परिणामे चारज होयछे. तथा चार प्रदेशीआ खंधनेविषे उत्कृष्टथी चौदगुण होयछे. तेमां चार वर्ण चार रस ने बाकीनासर्व पूर्वोक्त रीते जाणवा. पंच प्रदेशीआ खंधनेविषे पांच वर्ण, पांच रस, बे गंध, तथा चार फरस ए शोल गुण होयछे. एम संख्यात प्रदेशीओ खंध, असंख्यात प्रदेशीओ खंध तथा अनंत प्रदेशीओ खंध जेटली वारसुधी सूक्ष्म परिणाम पणे परिणाम्यो होय छे त्यांसुधी तेओनेविषे उत्कृष्टथी शोल गुण होयछे. अने जघन्यथी तो पूर्वे जे पांच गुण परमाणुनेविषे कहेला छे तेटलाज अनंत प्रदेशीया खंधनेविषे पण होय छे.

हवे बादर परिणाम कहियेछेएः—बादर परिणामनेविषे जघन्य तो सात गुण होय छेः—गुरु, कर्कश, अथवा मृदु. लघु, ए बे स्पर्श अविरोधी लेवा, अने पाच गुण मूलगा लेवा अने उत्कृष्टथी तो वीश गुण होयछे हवे एना पर्याय कहियें छैएः--पर्याय ते एक गुण कृष्ण तेम एक गुण नीलादिक पण जाणवा जेम के, एक परमाणुमां सर्व जघन्य पणे कृष्ण वर्ण होय तो ते एक गुण कालो कहिये पछी वली तेथी बमणो कालाश ते द्विगुण कृष्ण कहिये एम यावत संख्यात गुणो, कालो असंख्यात गुणो कालो तथा अनंत गुणो कृष्ण वर्ण होयछे; एप्रमाणे सर्व पर्यायो जाणवा. एम नील तथा पीतादिकनेविषे पण एजरीते जाणी लेवुं.

आशंकाः--गुण अने पर्यायनेविषे भेद शुं छे? जे गुण कह्या तेने पर्याय कहोछो.

उत्तर.-- गुण तथा पर्यायनेविषे कांईक भेदछे. " सह भाविनो गुणाः क्रमभाविनः पर्यायाः " जे सदैव सहवर्त्ती छे एटले वर्ण, गंध, रस तथा स्पर्श, ते गुण जाणवा ए सामान्यपणे मूर्त्तिमंत द्रव्यथी एक देश भिन्न न होय माटे गुण कहेवायछे, अने जे अनुक्रमे होय ते सदा सहभावी न होय तेने पर्याय क

ह्यिये जेम के, एक गुण कालत्वादिक ते द्विगुण कालत्वादिक अवस्थाथकी निवर्त्ते छे, तथा द्विगुण कालत्वादिक त्रिगुण कालत्वादिक अवस्थाथकी निवर्त्तनने पामे छे एम पूर्वे पूर्वे पर्यायनुं निवर्त्तन एटले नाश अने उत्तर उत्तर पर्यायोनो आविर्भाव एटले उत्पत्ति थायछे तेने पर्याय कह्यिये ए प्रमाणे एक गुण रस तथा द्विगुण रसादिक, तेमज एक गुण गंध तथा द्विगुण गंधादिक, वली एक गुण कर्कश तथा द्विगुण कर्कशादिक, अने स्पर्शना पर्याय पण जाणी लेवा.

हवे पुद्गल संस्थान कहेछे"—गोल संस्थान ते मोदकवत्, वर्त्तुल संस्थान ते वलयवत्. लंब संस्थान ते दंमवत्, अश्र संस्थान ते शृंघाटकवत्, चतुरस्र संस्थान ते अयोघनवत्, जाणी लेवां ॥ इति जीवादि षट् द्रव्यस्वरूपं ज्ञेयं ॥

अथ द्रव्य लक्षण कथ्यते—अनुष्टुप् वृत्तम् प्रणम्य परमात्मानं, कर्मक्लेशविवर्जितम् ॥ द्रव्याणां लक्षणं वक्ष्ये, जैनेंद्रमतदीपितं ॥ १ ॥

जे वस्तु कालत्रयनेविषे वर्त्ते छे तेने सत् कह्यिये ने तेज द्रव्य जाणवुं. ते सत् शब्दनुं लक्षण आवुं छे— "उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं हि सत्" जे वस्तु पर्यायनी अपेक्षाए कथंचित उपजे छे, वली कथंचित् जघन्यथी समयांतरे तथा उत्कृष्टथी असख्याता काल पछी ते वस्तु पर्यायनी अपेक्षाए विनाशने पामे छे, अने तेज वस्तु द्रव्यथी क्यारे पण उत्पन्न न थाय, तेम विनाश पण पामे नही किंतु सदा सर्वदा कायम होय तेने सत् कहेछे तदुक्तं श्रीमतिचंद्रे "ध्रौव्योत्पादव्ययोपेतं, द्रव्यं कालत्रये स्थितम्, द्रव्यतस्तत्र सत्वं हि, जन्मनाशौ च पर्ययात्." तत्र दृष्टांत जेम एक जीव द्रव्यनेविषे नारक पर्यायनो विनाश होय, अने नर पर्यायनो उत्पाद होय पण जीव द्रव्य तेज छे तेनो मूलथी उत्पाद तथा विनाश होतो नथी सदा सर्वदा शाश्वत छे तथा पुद्गल द्रव्यनेविषे मृत्पिंम, स्थास, कोश, कुशूल, शिवक, छत्र, घट तथा कपाल प्रमुख पर्यायोनो उत्पाद तथा विनाश थायछे, ते कालादिकनी जोगवाई पामीने थायछे. ते आ प्रमाणे"— प्रथम पुद्गल परमाणु विस्रसा परिणामेकरी मृद्आकारे परिणामने पामेछे, तेनो कुंनकारना योगथी मृत्पिंम थायछे, त्यार पछी ज्यारे चक्रनी उपर चडेछे त्यारे ते चक्रभ्रमि निमित्त कारणनी योगताथी स्थास परिणामने पामेछे, पछी हस्त प्रक्षेपादिक लक्षण तथा पुरुष व्यापार लक्षण निमित्त कारणनी योगताथी कोश परिणामने नजेछे, पछी तेज कुशूल तथा शिवक परिणामे थायछे ते छत्रक ज्यारे पृथु, बुध्न, कंबु, तथा ग्रीवक परिणामने पेमेछे त्यारे घट कहेवाय छे. तथा ते

वली घटनोदन मुज्ञराघनिघात थकी कपाल परिणामने पामे छे, त्यारे कपाल माला कहेवायछे. एटले पूर्व पूर्व पर्यायोनो विनाश थतो जायछे ने उत्तरोत्तर पर्यायोनो उत्पाद थतो जायछे पण पुज्ञल इव्य सदा साश्वतज छे. जो ते सत्ता पुज्ञलादिक इव्यनी न मानिये तो उत्पाद तथा विनाश निरर्थक थाय. जो वस्तु थी कांई छेज नही तो उत्पत्ति शानी थाय? अने जेनी उत्पत्ति थती नथी तेनो विनाश पण थतो नथी, यथा षड्द्रव्य. जे विनाश थायछे तेज उत्पन्न थाय छे; अने जेनो विनाश न थाय तेनी उत्पत्ति पण न थाय माटे उत्पाद, विनाश तथा सत्ता ए एकज छे. तथोक्तं श्रीमतिचडे· "उत्पाद. केवलो नास्ति, विनाशोपि न केवलः, किंतु सत्तासमाक्रांतो नापि सत्ता च तौविना, १ यडुत्पन्नं च तन्नष्टं यन्नष्टं तच्च जन्मयुक्, यच्च वस्तु नचोत्पन्नं, दृष्टं नष्टं कदापिन. २ कालादिपंच सामग्री, प्राप्य इव्येषु पर्यया·; उत्पद्यंते विपद्यंते, जलकल्लोलवज्जले ३"

आशंका·--तमे जे पूर्व पूर्व पर्यायनो विनाश मानो छो तेविनाशनुं अपर नाम अनाव छे, माटे ते सर्वथा प्रकारे नावथी निन्न छे, किवा अनिन्नछे जो सर्वथा नावथी निन्न मानिये तो अवस्तु स्वनाव थाय, अवस्तु स्वनावनी सिद्धता थयाथी कोई कार्यनी सिद्धि थशे नही, तथोक्तं श्रीमतिचडे·--तुच्छरूपोहि यो नावः सकथं कार्यसाधक·; अदारिडं नवेद्धिश्वं, सचेद्यदि फलेग्रहिः १ तथा नावनेज सर्वथा अनाव कहेशो, तो नावनी प्रतीतिनो लोप थशे, अने तेम थयाथी सर्व जगत् शून्य वरशे. त्यारे तमे अनाव ते शाने कहोछो ?

उत्तर·--नावथकी कथंचित् निन्न अनाव होयछे, जे सर्वथा निन्न कहे वाय नही. अने सर्वथा अनिन्नपण न कहेवाय ते कथंचित् निन्न कहिये ते आवी रीतेछे -समस्त वस्तुउनेविषे बे अंश होयछे --एक सदंश ने बीजो असदश तेमा पर्यायनी अपेक्षाये अतीत तथा अनागत पर्यायने असदंश कहेछे, ने वर्त्तमान पर्यायने सदंश कहे छे· ए सदंश नावरूप कहेवायछे.अने असदंश अनावरूप कहेवाय छे. अनावनुं लक्षण न्याय शास्त्रमां आवी रीते कह्युं छे·--इव्यपर्यायोनयात्मानाव इति" एटले जे अनाव ते पण इव्य अने पर्यायथी निन्न नथी जे नाव स्वनाव तेअनावछे· तेना चार प्रकार छे·--प्रागअनाव, प्रध्वसानाव, अत्यतानाव ने अन्योन्यानाव· तेमां प्रथम प्रगनावनुं लक्षण आ प्रमाणे·--यन्निवृत्तावेवकार्यस्यउत्पत्ति· सोस्यप्रागनाव· जे पर्यायनेविषे विनाशेकरीने अवश्य अपरपर्यायनी उत्पत्ति थाय छे ते उत्पद्यमान उत्तर पर्यायथी पूर्वे जे विनाशी पर्याय छे तेने प्रागनाव कहेवो. अत्र दृष्टांत.--

जेम क्षीरना विनाशथी दधिनो उत्पाद थायछे. माटे दूधनेविषे दहीनो प्रागभाव कहेवाय. जेनो पूर्वे अभाव होय तेने प्रागभाव कहेछे. ज्यांसुधी दधिरूप पर्याय थयुं नथी त्यांसुधी तेनो क्षीरनेविषे प्रागभाव छे एम मृत्पिंडने घटनो तथा तंतुपुंजने पटनो पण प्रागभाव संबंध जाणी लेवो हवे प्रध्वसाभावनुं लक्षण आ प्रमाणे.—यडुत्पत्तौ कार्यस्यावश्यं विप्रतिपत्ति सोस्यप्रध्वसा भाव. जे पर्याय उत्पन्न थयाथी जे पर्यायोनो अवश्य करी विनाश थायछे, ते विनाशी पूर्व पर्यायथी उत्तर पर्यायनेविषे प्रध्वंसाभाव कहेछे अत्र दृष्टांत. जेम दूधना विनाशथी अवश्ये करी दधिज होय छे तेथी दहीनेविषे दूधनो प्रध्वसाभाव कहेवाय तेम मृत्पिंडना विनाशथी अवश्ये करी घट, तथा तंतुपुंजना विनाशथी अवश्येकरी पटनी उत्पत्ति होयछे, तो ते घटने तथा पटने प्रध्वसाभाव कहेछे एटले जे पूर्वपूर्व पर्याय होय तेनेविषे प्रागभाव कहेछे, ने उत्तर उत्तर पर्याय होय तेनेविषे प्रध्वसाभाव कहेछे. एम वळी दधिथी तक्रनो उत्पाद होवाथी दधिने प्रागभाव कहेवाय, अने तक्रने प्रध्वसाभाव कहेवाय एटले पूर्वे क्षीररूप पर्यायनी अपेक्षाएकरी दधिने प्रध्वसाभाव कहेछे अने उत्तर तक्ररूप पर्यायनी अपेक्षाकरी दधिने प्रागभाव कहेछे

आशंका.— एक वस्तुनेविषे बे धर्म केम संभवे ?

उत्तर — वस्तु, अनंत धर्मात्मक होयछे जेम के, एक पुरुषनेविषे भ्रातृ, भर्तृ पुत्र, पौत्र, तथा दौहित्र प्रमुख घणा धर्मो होयछे एटले पुत्रनी अपेक्षाए पिता कहेवायछे, भाईनी अपेक्षाए भ्राता कहेवाय छे, स्त्रीनी अपेक्षाए भर्त्ता कहेवाय छे, मातानी अपेक्षाए पुत्र कहेवाय छे; पुत्रना पुत्रनी अपेक्षाए पौत्र कहेवायछे अने पुत्रीना पुत्रनी अपेक्षाए करी दौहित्र कहेवायछे, परन्तु पुरुष एकज होयछे तेम अत्र पण जाणवु हवे अन्योऽन्याभावनुं लक्षण आप्रमाणे.—स्वरूपांतरान्यरूप व्यावृत्तिरितरेतराभाव । तत्र दृष्टांत — जेम गाय ने अश्व ए बे पदार्थो छे; तेमा गायना स्वरूपनी नास्ति अश्वनेविषे छे, ने अश्वना स्वरूपनी नास्ति गायनेविषे छे एम अन्योन्य एटले परस्परनेविषे एकेकनो जे अभाव छे ते अन्योऽन्याभाव जाणवो एना चार नाम छे.—अन्योऽन्याभाव, इतरेतराभाव; परस्पराभाव तथा अन्यापोह भाव हवे अत्यंताभावनुं लक्षण आ प्रमाणे.— कालत्रयापेक्षणीयतादात्म्यपरिणामनिवृत्तिरत्यंताभाव एटले वस्तुनेविषे तादात्मिकपणे जे परिणामनो त्रण काळनेविषे अभाव, तेने अत्यंताभाव कहिये. तत्र दृष्टांत.— जेम एक चेतन आत्मतत्व छे ते क्यारे पण अचेतन थयो नथी; थतो नथी

ने थशे पण नही एमज जड धर्मवाला पुद्गलनेविषे क्यारे पण वस्तुत्वे चेतनपणुं संनवे नही, एटले तादात्म्य नाव थाय नही; संयोगी नावे तो ए पुद्गल अनंतिवार चेतन थया छे; थायछे, ने थशे, माटे चेतन वस्तुनेविषे तादात्मिक नावे अचेतनवस्तुनो अत्यंतानावछे. तथा अचेतनवस्तुनेविषे तादात्मिकनावे चेतनवस्तुनोअत्यंतानावछे.

आशंकाः–घट तथा पटनेविषे अत्यंतानाव मानवामां शुं हरकत छे? केमके, घट ते पटात्मा नथी ने पट ते घटात्मा नथी.

उत्तरः–ए तारुं कहेवुं यद्यपि सत्य छे. तथापि एवुं त्रणे कालनेविषे संनवे नही. केमके घटाकारे परिणामने पामेला जे पुद्गल द्रव्य ते कोई समये पटाकार परिणामने पामेछे, अने पट पुद्गलो घटाकारे परिणमे छे, माटे तेनेविषे अत्यंतानाव कहेवाय नही किंतु अन्योऽन्यानाव कहिये. एना संग्रहना श्लोक कहेछे·–क्षीरे दध्यादि यन्नास्ति प्रागनावः सउच्यते; नास्तिता पयसोदधि प्रध्वंसानावलक्षणं. १ गवि योश्वाद्यनावश्च, सोन्योन्यानाव उच्यते, शशशृंगादिरूपेणात्यंतानावस्तु नण्यते. २ नचावस्तुत एवस्युर्नेदास्ते नास्य वस्तुनि ॥ इति जैनमतेनावो, नाविनोवस्तुरूपकः ३ एटले श्रीजैनमतनेविषे नाव स्वनाव अनाव कह्यो अने नैयायिक, वैशेषिक तथा मीमांसकादिक दर्शननेविषे अनाव ते नावथी निन्न पदार्थ माने छे; ते मिथ्यावादि जाणवा चार्वाक मती तो अनाव पदार्थने मानताज नथी; तेओने पण अनिष्टनी प्राप्ति छे तथोक्तं अकलंकाचार्यैः–कार्यद्रव्यमनादि स्यात्, प्रागनावस्य निन्हवे ॥ प्रध्वंसस्यच कार्यस्य, प्रोच्यते नित्यतां व्रजेत्॥१॥एक रूपं नवेद्विश्व, मन्यापोह्व्यतिक्रमे ॥ नवेद्धानि स्वधर्मस्याऽत्यंतानावप्रलापने ॥२॥ एनो अर्थ श्री समंतनद्र स्वामीए अष्ट सहस्री टीकामां आवी रीते कह्यो छे·–ते माटे अहो चार्वाक, जो तुं प्रागनाव मानशे नही, तो कार्य द्रव्यनी अनादि थशे अने घट पटादिक जे कार्य द्रव्यछे, तेनी आदि तो बाल गोपाल सर्वने विदित छे, १ जो प्रध्वंसानाव नही मानशे; तो कार्य द्रव्यनो विनाश संनवशे नही सर्व द्रव्य नित्य ठरशे ने कार्य द्रव्यनो विनाश तो सकल लोकमां प्रसिद्ध छे, २ जो अन्यापोह नही मानशे तो समस्त वस्तुउनुं एक रूप ठरशे, अने वस्तु तो सर्व निन्न निन्न स्वनावेज दीठामां आवे छे, ३ जो अत्यंतानाव नही मानशे तो कोई स्वधर्म सिद्ध थशे नही, चेतन जे आत्मा ते कोई समय अचेतन थई जशे ने जे जडात्मक पुद्गल ते कोई समय सर्वथा चेतनात्मक थई जवानो संनव थशे ते एम तो कोई काले थायज नही. ४ माटे सर्वत्रैव अनाव मानवो. ते पण वली अनाव स्वनाव मानवो;

पण जे तुछस्वजाव मानवु ते पण अनिष्ट छे श्री चिंतामणि शास्त्रनेविषे पूर्वे प क्षीए कह्यु छे के, दृष्टस्तावदयं घटोनच पतन् दृष्ट स्तथा मुजरो दृष्टा कर्परसह तिः परमितो जावोन दृष्टोपरः स्वाधीना कलशस्य केवलमियं दृष्टा कपालावली ते नाजाव इति श्रुति क निहिता किंचात्र तत्कारणम् ' अहो नैयायको, प्रथम जूत लनेविषे जे घट दीठो, ते उपर मोगर पात दीठो, त्यार पछी खापरां दिठां, पण एटलाथी बीजो अजाव कोई दीठो न कहेवाय, तेम छता तु कहिश के, मे घटने विषे अजाव दीठो ते फूठो छे तेनी तो कपालावली दीठी कहेवाय, पण अजाव दीठो कहेवाय नही माटे अजाव एवी स्तुति ते कई रहेछे ! ते मानवानुं शुं कारण छे माटे कपालावलीनेज अजाव कहिये के जेथी सकल वात सुधरे॥ इति द्रव्यलक्षण

हवे नय स्वरूप कहेछे. तेमां नैगम नय अंशग्राही छे ए वस्तुना अंशने संपू र्ण वस्तुज मानेछे जेमके, सूक्ष्म निगोदिया जीवमां अक्षरना अनंतमा जाग जेट लुं ज्ञान, छता तेने सिद्ध समान माने छे। अने तेरमा तथा चौदमां गुणस्थानने विषे वर्त्तता सिद्ध मनुष्योने कर्मनो एक अंश छतां संसारी कहेछे.

संग्रह नयवमे सत्तानुं ग्रहण थायछे सर्वे जीव सरखा छे. सत्ता गुण घटे नही

व्यवहारनये करी जीव अने पुद्गलना जेद कहेवायछे.—जेमके, जीवना बे जेद.— सिद्धने संसारी तेमां संसारीना बेजेद— अयोगी ने सयोगी सयोगीना बे जेद — छद्मस्थने केवली छद्मस्थना बे जेद — क्षीणमोहने उपशांत मोह, उपशात मोहना बे जेद — अकषाई अने सकषाई सकषाईना बे जेद — सूक्ष्मसकषाई ने बाद र सकषाई बादर सकषाईना बे जेद —अनिवृत्ति बादर ने निवृत्ति बादर निवृ त्ति बादरना बे जेद — श्रेणी प्रतिपन्न ने श्रेणी अप्रतिपन्न श्रेणी अप्रतिपन्नना बे जेद — अप्रमत्त ने प्रमत्त. प्रमत्तना बे जेद —सर्व विरति ने देशविरति, देशविरतिना बे जेद — विरति नें अविरति अविरतिना बे जेद —सम्यक्त्वीने मिथ्यात्वी मिथ्या त्वीना बे जेद जव्यने अजव्य जव्यना बे जेद—ग्रंथि जेदीने अग्रंथि अजेदी ग्रंथी जेदीना बे जेद—परित्त ससारीने अपरित्त ससारी एम पुजलना पण बबे जेद थाय छे ते आ प्रमाणे — अणु ने स्कंध तेमा स्कधना बे जेद — सूक्ष्म स्कंध ने बादर स्कंध. ए बन्नेना वली बबे जेद छे —सचित्त खंध ने अचित्त खध ए बन्नेना पण बबे जेद छे —जीवगृहीत ने अजीवगृहीत एवी रीते अनेक जेदोनुं विवेचन करी लेवु

जे वमे वर्त्तमान काले वर्त्तमान जावनुं ग्रहण थाय ते रुजुसूत्र नय जाणवु जेम के, साधुपणे वर्त्ते ते साधु कहेवायछे, अने जे साधु छता पण ग्रहीपणे व

संतो होय तेने गृही कहेछे. जे अक्षररूप नाम मुखे कहे ते शब्द नय जाणवो. जे गुणनी उपमाने ग्रहण करे नही, पण गुण सहित अर्थांतरनी ग्रहण थती वस्तुने वस्तु पणे कहेवी ते समनिरूढ नय कहेवायछे. जेम के, केवल ज्ञानादि गुण प्राप्त थयाथी सिद्ध कहेवो, अने जे गुणपर्याय सहित संपूर्ण अवस्था प्राप्त वस्तुने वस्तु कहेवी. जेम सिद्ध स्थानिक प्राप्त जीवने सिद्ध कहेवो ते एवंभूतनय जाणवो एम छएद्रव्यने सातेनय पोताना उपयोगथी लगाडवा

हवे चार निक्षेपा कहेछे.—वस्तुना नाम मात्रनो अंगीकार ते नामनिक्षेपो. एटले निर्गुण तथा गुणसहित वस्तुनी विचारणा न करवी. अने जेवस्तुने आकार पणे अंगीकार करवी ते स्थापना निक्षेपो; उपयोगविना वस्तुनुं संपूर्ण ग्रहण करवुं ते द्रव्यनिक्षेपो अने गुण सहित वस्तु प्रमाण करवी निर्गुण वस्तुनुं ग्रहण करवुं नही ते भाव निक्षेपो इत्यादिक प्रकारे समस्त नय भंग, प्रमाण निक्षेप परक्षेप सहित, शुद्ध चेतन परमानंदमयी, महानंदी, ज्ञान ज्ञायक, सकल कर्मोपाधि रहित लोकालोक वेत्ता, स्वज्ञानादि गुण समूह कर्त्ता, अनंत अविगम अक्षय अव्यय, ध्रुव, महारसी, सर्व दर्शी, गुणवान, मोक्ष कारण, मोह महाज्ञान ज्ञायक, ध्यान ध्याता ध्येय, एक एकत्व ज्ञानगम्य, स्वल्पबुद्धिने अगोचर छे; एवो माहरो परमात्मा मुजने ध्येय, उपादेय, मोक्षनो बीज छे, बीजो जे सर्वपर वस्तुनो संयोगछे, ते माहराथी न्यारो हेय रूप संस्कार छे; संबंधछे, पण माहरो नथी एवीरीते मोक्षार्थी सम्यक्त्वीजीवे ध्याववुं.

हवे मोक्ष प्राप्तिनुं क्रम लखे छेः--सकल कर्म क्षय लक्षण मोक्ष छे ते मोक्षने अर्थे चार अघाती कर्म खपाववां. ते चार अघाती कर्म शाथी खपाववा? केवल ज्ञानादि चार गुणोथी खपाववां ते केवल ज्ञानादि गुण शाथी उपजेछे? घन घाती कर्म खपाववाथी उपजे छे ते घाती कर्म शाथी खपाववां? यथाख्यात चारित्रथी खपाववां, यथाख्यात चारित्र शाथी थाय? लोभ मोहनीयना क्षयथी थाय लोभमोहनीय शाथी खपाय? सूक्ष्मसंपरायचारित्रथी सूक्ष्मसंपराय चारित्रनुं कारण कोण छे? त्रण संज्वलननो क्षय. त्रण संज्वलना खपाववानुं कारण कोण छे? अपूर्व करण परिणाम. अपूर्व करण परिणामनुं कारण कोण? दर्शन मोहनीयनो क्षय, एम दर्शन मोहनीय खपाववानुं कारण सर्व विरति छे सर्व विरतिनुं कारण प्रत्याख्यानीय चार कषायोनुं खपवुं छे, प्रत्याख्यान खपवानुं कारण देश विरति छे; देशविरतिनुं कारण अप्रत्याख्यानीय चार कषायनुं खपवु छे, अप्रत्याख्यानीय क्षय थवानुं कारण सम्यक्त्व छे, सम्यक्त्वनी कारणोत्पत्ति सात प्रकृतिओना क्षयथी

थायछे, अथवा क्षयोपशमथी थायछे सात प्रकृतिऊंना क्षयादिकनुं कारण अपूर्व करण छे; अपूर्व करणनु कारण मुहूर्त्तस्थिति क्षय छे, मुहूर्त्तस्थिति क्षयनुं कारण यथा प्रवृत्ति करण छे; यथा प्रवृत्ति करणनुं कारण सात कर्मस्थिति घात छे, सात कर्म स्थिति घातनुं कारण मंद कषायता छे, मंद कषायतानुं कारण आत्मवीर्य गुणना पर्याय गर्जित विशुद्धता नामे पर्याय छे, एवा अनुक्रमे कर्म क्षयथी गुण प्रकाश ने गुण प्रकाशथी कर्म क्षय छे, ते कारण माटे ज्ञाता प्राणीये गुण प्रकाशनो उद्यम करवो जोइये ते उद्यम श्रुतज्ञानथी थाय छे, हेयोपादेयनी परिज्ञाने श्रुत ज्ञान कहेछे. ते श्रुतज्ञानना बे भेद छे.– एक शुद्ध श्रुतज्ञान ने बीजुं अशुद्ध श्रुत ज्ञान तेमां शुद्ध श्रुतज्ञानना बे भेद छे –स्वरूप श्रुतज्ञान ने पररूप श्रुतज्ञान वली अशुद्ध श्रुतज्ञानना पण बे भेद छे – शुभ अने अशुभ एवीरीते जीवाऽजीवादि षट् पदार्थो सदाकाल शाश्वता पोतपोताना गुणपर्यायेकरी वर्त्तेछे. इति मोक्षप्राप्तिस्वरूपं

अथ आत्मप्राप्ति विधि लिख्यते –जे कारण माटे आत्मस्वरूप प्राप्तिविना कदा काले पण मोक्ष प्राप्ति थती नथी जेम कोई पुरुष नगर नाम स्वरूप जाणतो होय तो अन्यने पूछीने ते नगर प्रत्ये पहोचे छे तेम आ जीवने मुकावनार सम्यक् ज्ञान छे. उक्तंच – " विरया सावज्जाउ, कसाय हीणा महव्वय धरावि, सम्म दिठी विहीणा, कयावि मुक्खं न पावंति." सर्व सावद्यथी विरम्या होय, कषाय क्रोधादिक रहित होय, पंच महाव्रतरूप बाह्य चारित्रेकरी सहित होय, तो पण सम्यक्दृष्टि रहित थका कदा काले पण मोक्ष पामे नही गाथा.–" नय भंग पमाणेहिं, जो अप्पा साय वाय भावेण, जाणइ मोरक सरूव, सम्मदिठीय सो णेउ " ते जीव सम्यक्दृष्टि जाणवो के जे, पोतानो आत्मा मोक्षस्वरूप मोक्षमयी परमानंदमयी अचल अविनाशी अनंत अनादि अबंध स्याद्वाद भावे, जाणे माने सद्दहे अनुभवे, ते सम्यक्दृष्टि कहिये ते सात नयेकरी जाणे. तेना मूल बे स्वभाव छे – एक द्रव्य स्वभाव ने बीजो पर्याय स्वभाव तेमां द्रव्य स्वभाव कोने कहिये ? जे गुण अने पर्यायनो आश्रय होय तेने द्रव्य कहिये ते द्रव्य बे प्रकारनुं छे.–एक साधारण ने बीजुं असाधारण तेमां अस्तित्वं, वस्तुत्वं, द्रव्यत्वं प्रमेयत्वं, तथा अगुरुलघुत्व ए सामान्य एटले साधारण गुण छे; अने बीजा असाधारण गुण ते धर्मास्तिकायने गति चालण गुण, अधर्मास्तिकायने स्थिति गुण, आकाशास्तिकायने अवगाहगुण, कालमां परावर्त्तनाना गुण, पुद्गल द्रव्यनेविषे वर्ण, गंध, रस ने स्पर्श गुण ; जीव द्रव्यनो चेतना लक्षण ज्ञान गुण, दर्शनगुण चारित्रगुण ने

वीर्यगुण ए असाधारण गुण तथा साधारण गुण ते अमूर्त्यादिक पर्यायना बे भेद छेः– एक स्वभाव पर्याय ते अगुरुलघु विकाररूप छे तेना षट्गुणी वृद्धि हाणिमय बार भेद छे. ए बारे पर्याय छए द्रव्यने समान छे. अने बीजो भेद जे विभाव पर्याय ते पुद्गल द्रव्यने तथा जीव द्रव्यनेज छे. तथा शुद्ध द्रव्यार्थिक नये करी आपणो आत्मा सिद्ध समान अष्ट गुणधारी छे. पर्यायनये स्वभावपर्यायेकरी सदासिद्धसमान छे, अने शांत पर्याये करी अज्ञान संबंध संसारी छे नैगम नयेकरी अल्पग्राही छे. जेम आठ प्रदेशे करी सर्व जीव सिद्ध छे, संग्रह नये करी सत्ताग्राही छे सर्व जीव सिद्ध स्वरूप छे. व्यवहार नयेकरी भेद विभंजना कारी जे जीवना बबे भेद छेः–एक सिद्ध बीजो संसारी संसारिना बे भेदः– एक सयोगी बीजो अयोगी. सयोगीना बे भेदः– एक छद्मस्थ बीजो केवली छद्मस्थना बे भेदः– एक क्षपक बीजो उप शामक, इत्यादि तथा ऋजुसूत्र नयेकरी तेजीव जे परिणामे परिणमतो वर्त्ते, तेसमये तेजीव तेवोज कहिए यथा ममतामयी परवस्तुमानतो चेतन अज्ञानी कहिये. सम तामयी सिद्ध समान. पोतापोतानां आत्माने ध्यावे तेसमये ते सिद्ध कहिये. शब्द नयेकरी नामादि सिद्धने पण सिद्ध कहिये. समभिरूढ नयेकरी ते पर्यायने ग्रहे एटले सिद्ध पर्यायवत सिद्ध कहिये. एवंभूत नयेकरी जे संपूर्ण गुण पर्यायने ग्रहे एटले पोतानी क्रिया करतो अचल ते लीजीये यथा सिद्ध स्थानिक प्राप्त जीवने सिद्ध कहिये. एम सर्व वस्तुनेविषे सात नय जाणवा. नय ते जे द्रव्य अनेक धर्म वचने करी सात भंग स्यादस्ति, स्वद्रव्य क्षेत्र भावत्वेन यथा स्वद्रव्य चेतन गुण अनंत छे, स्वक्षेत्र ते चरम शरीर त्रिभागन्यून अथवा असंख्यात प्रदेश समान चेतनत्व, स्वकाल ते उत्पाद व्ययस्वरूप, अगुरुलघु पर्यायनो परिणमन, स्वभाव ते ज्ञान दर्शन चारित्र वीर्य, इति एगुणेकरी जीवद्रव्य छतोछे स्यान्नास्ति परद्रव्य क्षेत्र काल भावत्वेन परद्रव्य अचेतना, परक्षेत्र पांचेद्रव्य पोतपोतानी अवगाहनासमान जडतारूप, परकाल ते पोतानो अगुरुलघु पर्याय, परभाव ते, पोतपोतानो विशेषगुण ; एवीरीते पर द्रव्या दि गुण चेतननेविषे नथी ए कारण माटे नास्ति छे. अने स्यादस्ति नास्ति ए बन्ने भाव एक समये छे. स्यादवक्तव्यते आ कारणमाटे छेः–कोईपण समये एकांत वच नेकरी कह्यो जाय नही केमके, वचन ते असंख्यात समयात्मक छे. अने आत्म द्रव्य एक समयमां अनंत गुण पर्यायमयी छे, अने स्यादस्ति अवक्तव्यं स्यादनेकां तपणे अस्ति, तेनुं अवक्तव्यपणुंछे एमज स्यादनास्ति अवक्तव्यं. तथा स्यादस्तिनास्ति युगपत् अवक्तव्यं ते स्याद्वादपणे अस्ति नास्ति समय काल एक समये वचन

अगोचर छे. एम अनेक धर्मात्मक आत्मा स्याद्वाद जावेकरी जाणे. ते स्याद्वाद ना आठ पक्ष छेः–नित्य, अनित्य, एक, अनेक, सत्, असत्, वक्तव्य तथा अवक्तव्य. पोताना चेतना गुणेकरी आत्मा नित्य छे, अगुरुलघु पर्यायेकरी आत्मा अनित्य छे; एमद्रव्यथी नित्यानित्यछे, क्षायक गुणेकरी आत्मा एकछे; असंख्यात प्रदेशपणेकरी आत्मा अनेकपणे छे, एम द्रव्यपणे एकानेक छे, स्वद्रव्य पर्यायेकरी आत्मा सत् छतो छे, परद्रव्य पर्यायेकरी आत्मा असत् अछतो छे, एम वस्तु स्वरूपे सत् असत् छे, द्रव्यपणे वक्तव्यछे एक समये एकगे कथन योग्य नथी माटे आत्मा अवक्तव्य छे, एम ए परकीय अपेक्षाए स्याद्वाद होय; अने स्वअपेक्षाएकरी चेतनता नित्यछे, अगुरुलघु पर्याये अनित्यछे चेतना एकछे. असंख्यात प्रदेश अनेकछे. नित्यत्वमां नित्यत्व सत् छे, अनित्यत्व असत् छे. अनित्यत्वमां अनित्यत्व सत् छे अने नित्यत्व असत् छे एकत्वमा एकत्व सत् छे अने अनेकत्व असत् छे. अनेकत्वमां अनेकत्व सत् छे, ने एकत्व असत् छे नित्यत्व,अनित्यत्व, एकत्व, अनेकत्व, एम भिन्न वचन व्यक्त छे. एक समये अव्यक्त छे एम वस्तु स्वरूप एक समये नित्यानित्यछे तेज समये एकछे ने तेज समये अनेक छे एम सत् ने असत् छे तेम व्यक्त ने अव्यक्त छे ए आठ पक्ष एक पक्षमा एक समये रह्या छे एवीरीते स्याद्वादपणे छ द्रव्यने जाणी, अने छ द्रव्यथी चेतन लक्षण जीव द्रव्य पोतानो ज्ञान दर्शन चारित्र वीर्यमयी अविनाशी छे अनत परमानंदमयी एवो पोतानो आत्मा उपादेयकरी ध्याववो एप्रकारे आत्मानुं मोक्ष कारण मोक्षमयी सर्दहे स्याद्वादपणे पोताना आत्माने जाणे मानेतेज सम्यक्त्वी कहेवाय तेविना मिथ्यात्वी कहेवाय.

हवे सम्यक्त्वीने आठ गुण उपजेछे ते कहेछे – प्रथम निःशंक गुण ते जेने शंका, भय तथा शोक होय नही तेने जाणवो; एटले ज्ञाताने आलोकनो भय थाय नही केमके, ते सम्यक्त्वी सुख, दुःखनेतो, पुन्य तथा पापनुं फल जाणेछे. ते आत्माने पुन्य तथा पापथी भिन्नकरी ध्यावेछे माटे आ लोक तथा परलोकनो ज्ञाताने भय नथी तथा ज्ञाताने वेदनानुं भय पण व्यापे नही ते वेदना भय कर्म गुण छे अने मारो आत्मा तो ज्ञानमयी छे, वली ज्ञाता, पोताना आत्माने अमर तथा अविनाशी करी ध्यावे छे माटे तेने मरण भय होतो नथी वली ज्ञाता, पोताना आत्माने अक्षय अनत गुणी जाणेछे माटे तेने चोरभय नथी ज्ञाता पोताना आत्माने अज्ञानतारूप दुःखनो छोमवनार एवो पोतानो शरणभूत माने छे माटे तेने अशरण भय नथी. ज्ञाता पोताना आत्माने सदा परमानंदमयी

मानेछे माटे तेने अकस्मात् नय नथी. एवी रीते ज्ञाता पोताना आत्माने ज्ञा
मय जाणीने सदा काल निर्नय रहेछे. सम्यक्त्वीनो बीजो नि·कंख गुण. ते
एटले वांछा नही ते जाणवो वर्त्तमान सुखमां मग्न थाय नही, दुःखमां वि
पात करे नही. अनागत कालना सुखनी इच्छा करे नही; दुःखथी मरे नः
ज्ञाता ज्ञानमयी पोताना आत्माने सिद्ध समान ध्यावतो अवांछक छे. सम्यक
नो त्रीजो अदुगंछा गुण ते अशुनथी ग्लानथी शुनाऽशुन सर्वने ते कर्म गुण जाणे
पोतानो आत्मा सदा ज्ञानानंदमयी छे माटे ते क्यारे पण पुज्ञलथी दुर्गछा
नही. सम्यक्त्वीनो चोथो अमूढदृष्टि गुण ते पर वस्तु तथा परपरिणतिमां मू
य नही: सर्व स्वस्वनाव तथा परनावने निन्न निन्न करी जाणे. सम्यक्त्वी
पांचमो उववूह गुण ते पोतानो वीर्य छतां अवगणना करे नही. एटले जे
एक आत्मस्वरूप शुद्ध द्रव्यार्थिक नयकरी त्रिगुणमयी छे; तेने तेवोज ओलखे
तेमां रमी रहे तेने ज्ञाता कहिये सम्यक्त्वीनो छठो थिरीकरण गुण ते पोता
आत्माने पोताना गुणे करी स्थिर करे वली ते सदा काल परपरिणतिनी चाह
करे नही सम्यक्त्वीनो सातमो वात्सल्य गुण ते पोताना साह्मी मोक्षना साध
तथा ज्ञानादिगुणवत तेउनी वात्सल्यता एटले पोषण करवुं; ते ज्ञानगुण जाणव
तेज आत्मा एम देखी स्याद्वादपणे करी, आचरवो. ए वात्सल्य गुण कह
हवे सम्यक्त्वीनो आठमो प्रनावना गुण ते बाह्य पणे तथा अंतरपणे पोता
आत्मानी प्रनावना करवी ए आठ गुण जाणवा.

हवे सम्यक्त्वी सोहं बीज पोतानो आत्मा ध्यावे तेनो अर्थ लखिये छैए:-
तीत, अनागत ने वर्त्तमान ए त्रण काल; आदि मध्य ने अंत ए त्रण अवस्था, स्व
मृत्यु पाताल ए त्रण लोक, उत्पादव्यय ने ध्रुव एत्रणपरिणाम तेने एक समय
जाणेछे, एम छ ए द्रव्यना अनंत गुण पर्यायने जाणे एवो अनंत ज्ञानमयी सो
सदा काल चेतन लक्षण सोहं, अनाकार उपयोगमयी दर्शन अनंत वत सो
समस्त परनाव, पर परिणति, परिणमनरूप परित्यागमयी स्वस्वनाव गुणनेवि
थिरतावत अनंत चारित्रमयी सोहं; अरूपी निर्मल गुणवंत लोकालोक ना
मान सोहं, सकल कर्म क्षय कारण अनंत वीर्यमयी सोहं; सदा काल बाध
पीडा रहित परमानंदमयी सोहं; लोकालोक जाण स्वअवगाहना संबंध सो
षड्गुणवृद्धि हानि परिणामी अगुरुलघुत्व शक्तिमयी सोहं, एक, अनेक, नित्य
अनित्य, सिद्ध, बुद्ध, अजर, अविनाशी, अयोगी, अनोगी, अलेशी, अबंधी, अ

वेदी, अवेदी, सकर्त्ता, अनाहारक, अशरीरी, अनादि, अनंत, अवक्तव्य, अपर एवो परमात्मा परमानंदमयी शिव शंकर नगवान अवाची अतीन्द्रिय सोद ध्यान ध्याता ध्येयमयी, ज्ञान, ज्ञाता ज्ञेयमयी, सोहं, एवो हुं परमात्मा परम ज्योति परम शक्ति पंच परमेष्ठी परम पूज्य हुं, ए आत्मा द्रव्यनयेकरी अनंत दर्शनमय छे; शुद्ध संग्रह नयेकरी सिद्ध स्वरूपी छे पंचाचारनुं निधान होवाथी आचार्यछे, स्याद्वादस्वरूपमयी तेणेकरी उपाध्याय छे, मोक्षमार्ग साधक तेणेकरी साधुछे, एवो परमात्मा ध्येय उपादेयरूप मुजने संसारमां शरण छे. एवुं जे आत्मस्वरूपने जाणवुं तेने ज्ञान कहेछे एवी आत्मस्वरूपनी प्रीतिविषे जे प्रतीति करवी तेने दर्शन कहेछे एवा आत्मस्वरूपनेविषे रमण करवुं तेने चारित्र कहेछे एम ए त्रण मोक्षना मार्ग छे बीजो सर्व अज्ञानतामयी दोष छे इति आत्म प्राप्तिविधि.

हवे ए नयने प्रमाण कहिये किंवा अप्रमाण कहिये? प्रमाण ते यथार्थनुं कहेवायछे ने अप्रमाण ते अयथार्थनुं कहेवाय छे एम कोई पुछे, तेनो आवो उत्तर देवो यत – "नाऽप्रमाणं प्रमाणं वा, प्रमाणांशस्तथैव हि, नाऽसमुद्रः समुद्रोवा, समुद्रांशो यथैव हि." अहीं नय छे ते प्रमाणनो अंश छे जे प्रमाण पण नहीं ने अप्रमाण पण नहीं तेने प्रमाणांश कहिये. कथंचित् प्रमाणने पण कहेछे. ते माटे जेम समुद्रमांथी जल पुसली नरिये तेटला जलने समुद्र न कहेवाय पुंसली नर जलने समुद्रांश कहिये तेम नयने पण प्रमाणांश कहिये तथा समस्तांश जेनेविषे रह्याछे, तेने प्रमाण कहिये प्रमाण अने नये करी सकलवस्तुनुं अधिगमछे. ए तत्वार्थ सूत्रमां छे. इति चार्चिक वस्तु षट् द्रव्य नयादि विचार संपूर्ण.

